पृष्ठ २२४७ से २७८९ ['प' से 'फ'] शब्द संख्या १०४१८

राजस्थांनी सबद कोस

[राजस्थानी हिन्दी बृहत् कोश]

[तृतीय खण्ड]
(प्रथम जिल्द)

संपादक
(संपादन, परिवर्द्धन एवं संशोधनकर्ता)
सीताराम लाळस

व्युत्पति आदि द्वारा परिष्कारक
स्व० पं० नित्यानन्द शास्त्री दाधीच
[आशुकवि, कवि भूषण, व्याकरण साहित्य कोशादि तीर्थ
श्रीरामचरिताब्धिरत्नम् महाकाव्य आदि के प्रणेता]

कर्ता
सीताराम लाळस
स्व० उदयराज उजळ

प्रकाशक
चौपासनी शिक्षा समिति द्वारा गठित
उपसमिति राजस्थांनी सबद कोस
जोधपुर

अघटित कौं सुघटित करैं, सुघटित कौं अटकाय।
अटपट गति भगवंत की, जो मन नाहिं समाय।

—अज्ञात
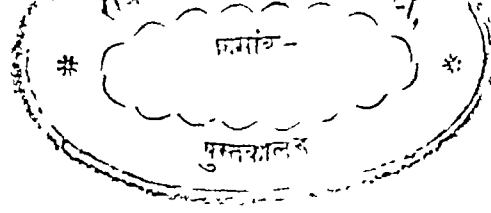
अपनी बात-

राजस्थानी शब्द-कोश का प्रकाशन जोधपुर से हो रहा है, इस बात से मैं परिचित था और इसके साथ मेरी यह धारणा भी रही कि कोश निर्माण राजस्थानी भाषा के विकास मे निश्चय ही एक अभूतपूर्व योगदान है। राजस्थानी भाषा मे अनुपम एवं विस्तृत साहित्य उपलब्ध है परन्तु इस भाषा के प्रमाणिक कोश का अभाव उपलब्ध साहित्य की एक बहुत बड़ी न्यूनता थी जो सम्भवतः दीर्घकाल से साहित्य–समाज को खल रही थी। ऐसी स्थिति में राजस्थानी शब्द-कोश निर्माण का श्री सीतारामजी लालस का यह प्रयास सराहनीय ही नही अपितु भाषा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम प्रतीत हुआ। प्रशासकीय सेवाओं मे निरत रहने के कारण साहित्यिक प्रवृतियों एवं गतिविधियों के सम्पर्क में आने का न मैं अवकाश ही निकाल पाया और न अवसर ही उपलब्ध कर सका। अनायास ही जब मुझे यह सूचना मिली की राजस्थानी शब्द-कोश, उपसमिति के भूतपूर्व अध्यक्ष माननीय ठा० श्री केसरीसिहजी के त्यागपत्र दे देने के कारण शिक्षा-समिति चौपासनी ने मुझे उक्त समिति का अध्यक्ष बनाकर कोश प्रकाशन के कार्यभार को मेरे कन्धे पर डाला है तो मुझे आश्चर्य ही हुआ कि मुझ जैसा व्यक्ति जो कभी साहित्यिक प्रवृतियो के सम्पर्क मे नही रहा और कोश जैसे महती कार्य की प्रणाली से परिचित नही हुआ, किस प्रकार इस गुरुतर भार को वहन कर पायेगा। शब्द-कोश निर्माण जैसे महत्वपूर्ण कार्य के लिए समिति का अध्यक्ष बनने की योग्यता न मुझ में पूर्व थी और न आज ही अनुभव कर रहा हूँ। हाँ, मातृभाषा राजस्थानी के प्रति विशेष अभिरुचि प्रारम्भ से ही रही है। साहित्य की सरलता और उसमे निहित आकर्षण से मैं पूर्व परिचित था। इस समय इस भाषा की सेवा के लिए प्राप्त हो रहे अवसर को उपयुक्त समझ मैंने राजस्थानी शब्द-कोश उपसमिति के अध्यक्षीय कार्यभार को वहन करना स्वीकार कर लिया।

यदि उत्तरदायित्व का निर्वाह लगन और ईमानदारी मे हो जाता है तो निश्चय ही व्यक्ति नवीन उपलब्धियां प्राप्त करने में सफल हो जाता है, मेरे अपने कार्यकाल मे मेरा यह निजी अनुभव रहा है। मेरे समस्त सेवाकाल में मेरा कार्यक्षेत्र भाषा और साहित्य आदि के कार्यक्षेत्र से सर्वथा भिन्न रहा लेकिन कोश निर्माण कार्य के साथ मेरा सम्पर्क होते ही मुझे नवीन उपलब्धि हुई। अपनी ही भाषा राजस्थानी का वास्तविक बोध तब हुआ जब मैंने निकट से राजस्थानी शब्दों के स्वरूप और उनके अर्थ-विस्तार को देखा।

राजस्थानी शब्द-कोश के प्रकाशन की व्यवस्था के लिए बनी उपसमिति के अध्यक्षीय कार्यभार को जब मैंने वहन किया था उस समय कोश अपनी प्रगति के पथ पर था। कोश का प्रथम खण्ड और द्वितीय खण्ड की प्रथम जिल्द प्रकाशित हो चुकी थी। द्वितीय जिल्द लगभग पूर्ण सी थी। शीघ्र ही उसको भी प्रकाशित कर दिया गया। अब तक के इस सुसम्पादित कार्य को देख कर मुझे अतीव प्रसन्नता की अनुभूति हुई और साथ में यह भी अनुभव हुआ कि यह कोश राजस्थानी भाषा के लिए ही नही वरन समस्त साहित्य के लिए एक अमूल्य देन है। पथ प्रशस्त था इसलिए मुझे अपने कार्य को आगे संचालित करने में विशेष कठिनाई की कोई आशका नहीं रही।

कोश निर्माण काल में ही कोश से मेरा निकट सम्पर्क होने के कारण मैं इस सत्यता से परिचित हुआ कि कोश निर्माण एवं उसके प्रकाशन का कार्य निश्चय ही समय-साध्य और साथ साथ व्यय–साध्य कार्य है। समुचित अर्थ-व्यवस्था एव उपयुक्त श्रमशील कार्यानुभव प्राप्त भाषाविदों के अभाव में यह कार्य किसी भी दशा में सम्पादित नहीं हो सकता। अब तक के किए गए कार्य में कोशकर्त्ता को निश्चय ही अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि राजस्थान शिक्षा-विभाग के भूतपूर्व निदेशक श्री अनिल बोर्डिया ने कोश निर्माण के सम्बन्ध मे कुछ अनिवार्य व्यय के लिए नियमित आर्थिक सहयोग की व्यवस्था की जो नियमित रूप से प्राप्त हो रही है। इसके लिए मैं श्री अनिल बोर्डिया तथा शिक्षा-विभाग के प्रति अपना धन्यवाद प्रकट करता हूँ। यह आर्थिक सहयोग कोश

कार्यालय में कार्य को निरन्तर रखने के लिए सहायक मात्र था। प्रकाशन के लिए पर्याप्त अर्थ - व्यवस्था की आवश्यकता रहती है; उसकी पूर्ति इससे किसी दशा में सम्भव नही थी। कोश कार्यालय के पूर्व पत्रों का अवलोकन करने से ज्ञात हुआ कि कोश प्रकाशन के लिए समय-समय पर केन्द्रीय सरकार एवं राजस्थान राज्य सरकार से आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है और श्री सीतारामजी लालस ने उसका समुचित सद्उपयोग कोश के विभिन्न खण्डों के प्रकाशन में किया है। इस प्राप्त आर्थिक सहयोग से ही तीन जिल्दों का प्रकाशन सम्भव हो सका है। राज्य सरकार से अनुदान प्राप्त करने में राज्य के शिक्षा-मंत्रालय का हमें पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है। माननीय श्री शिवचरणजी माथुर शिक्षा—मंत्री तथा श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता शिक्षा-सचिव ने कोश प्रकाशन के प्रति सद्भावनाये प्रकट कर जो हमें सम्बल और प्रेरणा दी है उसके लिए हम आप सज्जनद्वयी के प्रति आभार प्रकट करते हैं। अर्थ-व्यवस्था में जब-जब भी व्यवधान उपस्थित हुआ कार्य की गति में अवरोध आ गया। इसे मैं स्वाभाविक ही मानता हूँ और यही कारण रहा कि अन्य खण्ड शीघ्र प्रकाशित न हो सके।

साहित्यिक जिज्ञासुओं के समक्ष इस कोश के खण्डों की कड़ी में तृतीय खण्ड की यह प्रथम जिल्द प्रस्तुत की जा रही है। प्रारम्भिक योजना मे तृतीय खण्ड को एक ही जिल्द में प्रकाशित करने का विचार था लेकिन पृष्ठों की अधिक संख्या तथा द्वितीय खण्ड के पश्चात् प्रकाशन कार्य के लिए प्रेस सम्बन्धी कुछ विशेष कठिनाइयाँ उपस्थित होने के कारण इस तृतीय खण्ड को भी दो जिल्दों मे ही प्रकाशित करने का निश्चय किया गया। यह कहना उचित ही होगा कि इस प्रकाशित खण्ड मे पूर्व के खण्डो की भांति कोश निर्माण के लिए पूर्व निर्धारित सिद्धान्तों एवं नियमों का पूर्णतया निर्वाह हुआ है और साथ ही भाषाविदों तथा विशिष्ठ साहित्यकारों से प्राप्त परामर्शानुसार वांछनीय परिवर्तन भी किया गया है। प्रस्तुत जिल्द मे 'प' वर्ग के 'प' तथा 'फ' वर्ण के शब्दों को समाविष्ट किया गया है। आगे का कार्य अपनी गति पर ही है। प्रकाशन के लिए यथा समय पूर्व की भाति सरकारी आर्थिक अनुदान प्राप्त होता रहा तो कोश के अवशिष्ट भाग को अपने जिज्ञासु भाषा मर्मज्ञों एवं शोध विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करने में अधिक विलम्ब नही होगा, ऐसी मेरी मान्यता है। कोशकार श्री सीतारामजी लालस तथा कोश कार्य से सम्बन्धित उपसमिति की उत्कट अभिलाषा है कि कोश की शेष जिल्दे उचित अवधि मे प्रकाशित हो जायें। वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार मैं हमारे विज्ञ पाठको को विश्वास दिला सकता हूँ कि कोश को अन्तिम चरण तक पहुँचाने का यथा सम्भव पूरा-पूरा प्रयत्न होगा। कोश प्रकाशन की व्यवस्था मे मेरे सहयोगी बन्धु श्री गोरधनसिंहजी खानपुर सेवा निवृत I. A S. तथा केप्टिन श्री चन्दनसिंहजी एम० एससी० रोडला ने सदैव अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया है, इसके लिए उन्हे धन्यवाद अर्पित करना मेरा कर्त्तव्य समझता हूँ।

यहाँ अपनी बात कहते हुए यदि मैं स्वर्गीय (कर्नल) ठा० श्यामसिंहजी भूतपूर्व सचिव उपसमिति राजस्थानी शब्द-कोश के प्रति दो शब्द व्यक्त न करू तो मेरी यह 'अपनी बात' निश्चय ही अपूर्ण रहेगी। यदि मैं यह कहूँ कि कोश निर्माण के आज के तीस वर्ष पूर्व के विचार को मूर्तरूप प्रदान कर कोश को वर्तमान स्थिति तक पहुंचाने में स्व० कर्नल ठा० श्यामसिंहजी, रोडला का दृढ हाथ ही मूलभूत आधार था तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। कोश के निर्माण और यथा समय उसकी सम्पूर्णता के प्रति जो आपकी रुचि और उदार भावना रही है वह शब्दों मे व्यक्त नही की जा सकती है। कोश परिवार के लिए यह अपार दुख की बात हुई कि कोश की सम्पूर्णता के पूर्व ही काल की क्रूरता के प्रभाव से असमय मे ही आपके सौहार्द्र से हमे वंचित हो जाना पड़ा। कोश एवं राजस्थानी साहित्य के प्रति आपकी सद्भावनाये रही है वे इस साहित्य जगत में इस कोश के साथ चिरकाल तक विद्यमान रहेगी। मै दिवगत आत्मा के प्रति अपनी तथा उपसमिति की ओर से पावन श्रद्धांजलियां अर्पित करता हूँ।

पोष शुक्ला पूर्णिमा
संवत् २०२६
विजय विहार,
जोधपुर.

रणधीरसिंह
अध्यक्ष—उपसमिति
राजस्थानी शब्द-कोश
जोधपुर.

पूर्व प्रकाशित खण्डों के प्रति

कोश प्रत्येक भाषा की समृद्धि और सबलता का सूचक है। वह साहित्य का अनिवार्य अंग है। इसके अभाव में भाषा के साहित्य का समग्र-ज्ञान उक्त भाषा भाषियों को भी नहीं हो सकता फिर इतर भाषा-भाषियों के लिए तो कहा भी क्या जा सकता है। राजस्थानी भाषा के विशाल एवं अनुपम साहित्य से साहित्य-मर्मज्ञ पूर्णतया परिचित हैं। विगत काल में राजस्थानी भाषा में प्रचुर मात्रा में लोकप्रिय साहित्य का सृजन तो अवश्य हुआ लेकिन उक्त भाषा के शब्द-कोश का अभाव सदा ही बना रहा। मध्यकाल में कुछेक छोटे-मोटे कोशों की रचना अवश्य हुई जिनमें अवधानमाला, हमीर नाममाला, नागराज डिंगल-कोश आदि आदि उल्लेखनीय हैं लेकिन इनमें से कोई भी कोश प्रमाणिक कोश नहीं माना जा सकता। साहित्य में प्रयुक्त शब्दावली का उपयुक्त संग्रह एवं उनकी समुचित अर्थ-व्याख्या न होने के कारण ये कोश पर्यायवाची शब्दों के संग्रह मात्र ही बन कर रह गए। कालान्तर में भी उपयुक्त कोश के निर्माण के लिए कोई प्रयत्न हुआ दृष्टिगोचर नहीं होता। यह अभाव वर्तमान समय तक निरन्तर बना रहा। यह सत्य ही है कि "राजस्थानी सबद कोस" की आवश्यकता साहित्य जगत में निरन्तर अनुभव की जा रही थी। सम्भवतः इसी भावना से प्रेरित होकर श्री सीतारामजी लालस ने यह बीड़ा अपने हाथ में लिया और अपने अथक परिश्रम एवं साहित्यिक साधना के फलस्वरूप राजस्थानी शब्दों का संकलन कर वृहद् शब्द-कोश के प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ कर दिया।

"राजस्थानी सबद कोस" के प्रकाशित प्रथम खण्ड में कोशकर्त्ता और सम्पादक श्री सीतारामजी लालस द्वारा प्रस्तुत किए गए निवेदन से स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि कोश प्रकाशन का गृहीत बीज-भाव काल की गति के साथ कैसे अंकुरित होकर साहित्य सेवी सहयोगियों की सद्भावनाओं एवं सरकारी आर्थिक सहयोग को प्राप्त कर पल्लवित हुआ। अनेकानेक संघर्षपूर्ण स्थितियों के बीच एक लम्बी अवधि के पश्चात् इस वृहद् कोश का प्रथम खण्ड स्वर प्रकरण के साथ 'क' वर्ग के सभी वर्णों के लगभग २८७७१ शब्दों के संग्रह के रूप में सन् १९६२ में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुआ। इस प्रथम खण्ड में एक महत्वपूर्ण विस्तृत साहित्योपयोगी प्रस्तावना जोड़ी गई है। जिसमें राजस्थानी भाषा के उद्भव और विकास की व्याख्या करते हुए राजस्थानी साहित्य का विवेचनात्मक परिचय दिया गया है।

समग्र कोश को चार खण्डों में ही सम्पूर्ण कर प्रकाशित करने की योजना थी लेकिन प्रथम खण्ड प्रकाशित होने के पश्चात् आर्थिक संकट उपस्थित होने के कारण दूसरा खण्ड शीघ्र प्रकाशित नहीं किया जा सका। व्यवधान के कारण कुछ समय अधिक व्यतीत हो गया। अब तक प्रकाशन का कार्यभार 'राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर' पर था परन्तु इस बीच की अवधि में कोश को शीघ्र प्रकाशित करने के उद्देश्य से 'चौपासनी शिक्षा-समिति जोधपुर' के तत्त्वधान में 'उप-समिति राजस्थानी शब्द-कोश' का गठन किया गया। उप-समिति के देख-रेख में सर्वप्रथम द्वितीय खण्ड की प्रथम जिल्द जिसमें लगभग २०४२८ शब्दों का संग्रह है सन् १९६७ में जिज्ञासु पाठकों के समक्ष प्रस्तुत की गई। इस जिल्द में जिसमें ७६८ पृष्ठ हैं 'च' वर्ग और 'ट' वर्ग के वर्णों के साथ 'त' वर्ग के 'त' वर्ण शब्दों को संग्रहीत किया गया है। इसके थोड़े समय पश्चात् ही सन् १९६८ के ५ नवम्बर माह में द्वितीय खण्ड की दूसरी जिल्द भी जिसमे ६४७ पृष्ठ है प्रकाशित कर दी गई। इस जिल्द में 'त' वर्ग के 'थ' वर्ण से 'न' वर्ण तक के लगभग १६,४६५ शब्दों का संग्रह किया गया है। इस प्रकार द्वितीय खण्ड दो जिल्दों में सम्पूर्ण हुआ, जिसमें 'च' से 'त' वर्ग तक के सभी वर्णों के लगभग ३६,८९३ शब्द है।

यह कहना उचित ही होगा कि कोश निर्माण के लिए प्रारम्भ में जिन सिद्धान्तों का निर्माण कर कार्यारम्भ किया गया था उसका आज तक पूर्णतः निर्वाह हुआ है। अर्थ स्पष्टीकरण के लिए उपयुक्त उद्धरण साथ दिए गए हैं। साथ ही शब्दो से सम्बन्धित लोक व्यवहृत मुहावरों तथा लोकोक्तियों को भी यथा स्थान अकारादि क्रम से देकर उनका अर्थ भी हिन्दी में दिया गया है। शब्दों की व्युत्पत्ति भी देने की व्यवस्था रही है।

द्वितीय खण्ड को दो जिल्दों मे विभक्त कर प्रकाशित करने मे प्राप्त हुई सुविधा को देखकर तृतीय खण्ड को भी दो जिल्दों मे ही प्रकाशित करने का निर्णय किया गया। 'उप-समिति राजस्थानी शब्द कोश' के संरक्षण में ही यह प्रथम जिल्द तैयार की गयी जिसे पाठकों के समक्ष रखते हुए हमें हर्षानुभव हो रहा है। प्रसन्नता है कि कोशकार्य अपनी गति पर है और अब निकट भविष्य मे ही इसकी पूर्णता की आशा है। इस तृतीय खण्ड की प्रथम जिल्द में 'प' वर्ग के 'प' तथा 'फ' वर्ण के लगभग १०४१८ शब्दों का संकलन है।

राजस्थानी होने के नाते ही नहीं अपितु भाषा के प्रति स्वाभाविक रूचि होने के कारण भाषा सम्बन्धी कार्य के प्रति मेरा अनुराग रहा है। मैं अपने स्वर्गीय पूज्य पिताजी कर्नल ठा० श्यामसिंहजी को विशेष रूप से राजस्थानी भाषा के साहित्य अध्ययन एवं उनके विकास कार्य मे सतत संलग्न देखा। उनके द्वारा किया गया वृहद् साहित्य संग्रह, साहित्य की ओर प्रेरित करने में पर्याप्त है। पूज्य पिताजी श्री की इस कोश मे भी विशेष अभिरूचि रही है। कोश निर्माण कार्य में रुचि पूर्वक योगदान कर इसे अपने पिताजी की अभिलाषानुरूप पूर्ण कराना अपना धर्म और कर्त्तव्य समझकर अपनी ओर से यथाशक्ति प्रयत्नशील हूं। सहृदय साहित्यिक सज्जन वृन्द के सौहार्द एव राज्यीय सहयोग से पूर्ण आशवस्त हूं कि यह कोश अब शीघ्र ही सम्पूर्ण हो सकेगा। इस पुनीत कार्य के लिए सभी पाठक बन्धुओं से भी ऐसी कामना की आशा रखता हूं।

विनीत
चन्दनसिंह
सचिव
उप-समिति राजस्थानी शब्द कोश
जोधपुर.

रोडला भवन,
रिसालारोड़, जोधपुर.
२६ जनवरी १९७०

॥ श्री ॥

* निवेदन *

—: दूहा सोरठा :—

नारायण भूले नही, अपणी मायाईश। रोग पैल ग्राखद रचै, जगवाला जगदीश ॥१॥
साच न वूढो होय, साच अमर ससार में। कैतो घोवो कोय, ग्रो सेवट प्रगटै 'उदय' ॥२॥
सेवा देश समाज, घरती में साचो धरम। इण सू पूरै ग्राज, सकल मनोरथ सांवरो ॥३॥
साहित री सेवाह, सेवा देश समाज री। ग्रावे इण एवाह, ईगर कीरपा सू उदय ॥४॥
सत ऊजल संदेश, उदयराज ऊजल अखे। दीपै वांग देश, ज्यारा साहित जगमगे ॥५॥

भारत संसद में सन् १९५० रे करीब देशरी दूसरी सगला प्रान्ता री भासावां मानी गई उणां रे सामल राजस्थानी भाषा ने नहीं मानी तो कुदरती तौर सू राजस्थान में अपणी भासा राजस्थानी ने मान्यता दिरावण सारु ग्रान्दोलन पत्रों में शुरू हुवो।

राजस्थानी रो विरोध में अकसर ग्रा वात कही जाती के इण रो कोई आधुनिक कोश नही हो। ग्रो घाटो मिटावण सारु में श्री सीतारामजी लालस ने क्यो क्योकि हूं जाणता हो के डिंगल रा शब्द संग्रह रो उणां ने काफी अनुभव है। श्री सीतारामजी इणा काम सारु तैयार हो गया ने म्हें दोनु सामिल होय ने पूरा सहयोग से मैनत सूं कोश रो काम शुरू कियो ने इण में खर्च री मदत री जरुरत हुई तो उसा वावत म्हें स्वर्गीय ठाकुर श्री भवानीसिहजी साहव वार एटला पोकरण ने अरज करी। इणां कृपा करने मंजूर करी ने तारीख १–५–५१ सूं रुपीया री मदद देणी चालू कर दीवी। सीतारामजी मथाणिया में लेखक राख ने काम शब्द संग्रह री स्लिप कोपिया लिखावण रो चालू कर दियो ग्रौर म्हें दोनू तारीख १-५-५१ सूं सन् १९५२ रा आखिर तक सामिल कोम कियो जिण सू कुल शब्द ११३००० स्लिप कोपियां में लिखीजीया फेर समय रा हेरफेर सू श्री पोकरण ठाकुर साहव री सहायता वद हो गई। इण सूं सन् १९५३ लगायत सन् १९५६ तक ४ साल तक कोश रो काम वन्द रेयो।

इण कोश ने पूरो करण री म्हां दोनूं री पूरी लगन ही। म्हें करनल श्री सोमसिहजी रोडला ने जून १९५६ में कोश में सहायता देण सारु कागद लिखियो उण रो जवाव उणां तारीख २९-६-५६ रा कागद मे म्हने लिखियों के कोश सारु मावार रु० ५०), ३ या ४ साल तक या कोश पूरो होवे जठा तक दे सकूंला। परन्त उणांरा पिता करनल श्री अनोपसिहजी बीमार हो गया इण वास्ते सहायता चालू में देरी हुई। उणां रे स्वर्गवास होणे रे वाद मे मास नवम्वर रा अन्त में नें दिसम्वर रा सरु में जोधपुर में ही जद कर्नल श्री सांमसिहजी कोश री मदत वावत वातचीत करण ने दोयवार म्हारे मकान पर ग्राया ग्रौर फिर सहायता देणी चालू कर दीवी।

कोश रो काम उणां री सहायता सूं सन् १९५७ री जनवरी सूं सीतारामजी जोधपुर में चालू कर दिया क्योंकि जद उणां रो तवादला जोधपुर में हो गयो हो। जो एक लाख तेरह हजार शब्दो री स्लिप कोपिया पेल्लो वणी हुई ही। उणा री स्लिपां काट काटकर अक्षरवार अलग अलग कर दी गई ने नवा शव्द भी जो मिलिया के शामिल कर दिया गया। इणतरे सव शब्द अक्षरवार किया जाय ने उणा ने अक्षरवार रजिस्टरों में लिख लिया गया। इणतरे कोश सन् १९५८ री माह मई तक पूरो हो गयो। म्हें पैली री तरे सीतारामजी रे साथ हर तरह रो सहयोग ने मदत राखी ने काम कियो। ग्रो कोप करनल श्री सामसिंहजी री रुपीया री सहायता सूं पूरो हुवो।

इणरे वाद प्रेस कापी वणाइण रो काम चालू हुवो उणरे खरचे रो प्रवन्ध ठाकुर श्री गोरधनसिंहजी मेड़तिया खानपुर वाला श्री झालावाड़ दरवार सू श्री नीवांज ठाकुर साहव सू रुपियां री सहायता लेने करायो ने करे छपण रो प्रवन्ध राजस्थानी सोध संस्थान चोपासणी जोधपुर सू हुवो ने तारीख ११-३-१९५९ ने सीतारामजी ने इण सोध संस्थान शिक्षा विभाग सू लोन पर ले लिया जद सू वे इण संस्थान में काम करण लागा।

इण कोश ने तैयार करावण में व्युत्पति विभाग पूरो करावण में स्वर्गीय पं० नित्यानन्दजी शास्त्री जोधपुर री घणी मदत ही इण वास्ते वैकूठवासी विद्वान ने घणा धन्यवाद देवां हां। तारीख २२–५–५७ ने लिख दय्या नीचे मुजब हो:—

चांदवावड़ी

ता० २२-५-५७

सीतारामजी लालस ने राजस्थानी कोश की रचना की है। यह भारी कठिन कार्य का यन्त्र श्री उदयराजजी ऊज्जवल यन्त्री (मेकेनिक) के बल संचालित हुवा है। मैंने इसे देखा इन्होंनें प्रत्येक शब्द और धातु को जाचकर उनके प्रयोज्य सब प्रकार के प्रयोगों को प्रदर्शित किया है क्योंकि इन्होंने संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश विविध भाषाओं के वल पर यह कार्य भार उठाया है। बीच बीच में हर समय मेरे साथ विचार विमर्श करते हुए आपने पूर्ण परिश्रम करके इसे रचा है। ऐसे कठिन कार्य को पार करने में श्री सीतारामजी की ही पूर्ण कृपा ने सहायता की है। आशा है राजस्थान की जनता इससे लाभ उठाकर इस कोश की त्रुटी की पूर्ती से पूर्ण संतुष्ट होगी और श्रम को समझने वाले विद्वान कार्य प्रशंसा करेंगे। फकत नित्यानंद शास्त्री।

इणी तरे ननण विश्वविद्यालय सूं डा० डब्लू० एस० एलन जो संसार री करीब चालीस भाषाओ रो जाणकार है ने अन्तरराष्ट्रीय ख्याती रा भाषा शास्त्री है वे राजस्थानी भाषा रे ध्वनी विज्ञान संबंधी जांच वो शोध रो काम सारु सन् १९५२ में राजस्थान में आया हा ने जोधपुर में दोय मास ठहरिया हा ने भाषा रे सिलसिले में म्हारे कने घणा आता उणांने म्हे ने सीतारामजी दोनू कोश वाली स्लिप कोपिया राय रे वास्ते म्हारा मकान पर दिखाई ही उणां म्हारो उत्साह बधायो उणा री सम्मति नीचे मुजब है:—

THINITY COLLEGE CAMBRIDGE 26 Feb., 1960

It is excellent news for Indo-Aryan Linguistics that the Rajastani Dictionary of Shri Udayraj Ujjwal and Shri Sitaram Lalas is now to de published. Rajastani has long presented a serious gap in the comparative Study of the vaca-bulary of the Indo-Aryan Languages and now at last it is filled by the devoted work of two Rajasthani Scholars and the support of their distinguished Sponsors, I know well and difficulties that have beset the under taking of this task and its Completion is therefore all the more a menument to the courage of these who conceived the project and brought it to fruition. With this work added to the grammer by Shri Sitaramji, the status of the Rajasthani language can no longer be denied.

Sd.-W.S. Allen. M.A.P.H.D.
Professor of Comprative Philology
In the University of Cambridge.

कोश दोय दातार राजपूत सरदारो री रुपीया रो मदत सू शुरू होय ने पूरो बणियो, इण वास्ते पुरानी प्रथा रे माफक महे ता० २६-६-५७ ने इण बाबत काव्य गीत, कवित, रचियो ने सीतारामजी कने भेजीया वो अठे दिया जावे है इणा ने दोनूं सरदारो रो धन्यवाद रे तौर पर वण ने है। इण गीत री सीतारामजी पत्रो में तारीफ क़ी है।

"गीत" राजस्थानी में

कोम मरू बाणरो सुणे बण्यो नह किणी सू, लाख शब्दो तणे बडो लेखो गया भूपात कवराज गुण गावता, दियो नह ध्यान इण हेत देखो ।।१।।
खूटगा खजाना नरेसो देखता, गया तजमाल ठकरेत गाढा। सेव साहित्य री वणी न किणी सू, लागता पंथ वन छोड़ लाडा ।।२।।
सेव साहित्य ही रहे ससार में, सुजसफल लागवे घणी सरसे। मिले सुखलाघ हितकर नित समाजां, दिनों दिन कितां सनमान दरसै ।।३।।
पांण मरू बांन है प्रांत रो परंपर, वेण परताप राजस्थान ऊचों। रखी न पढण में भायखां प्रांत री, निरखतां जाय है प्रांत नीचो ।।४।।
वणाई चारणों व्याकरण विधोवित्र, बणेगो कोश ही लाख सबदो। सीत रो परिश्रम अघग फलियों सिरे, रेटियो 'उदय' मिल सकल सबदो ।।५।।
पोकरण भवानीसीह चापे प्रथम कोश रे हेत धन खर्च कीयो। पढंता लांच इण समेरा फेर सू, स्यामंसी रोडले कांम सीवो ।।६।।
रोडले स्यामसी सपूतो सिरोमण, कमवज आज अखियाज कीधी। वार विपरीत में हजारो खरचवे, दाद ऊजल 'उदे' देस दीधी ।।७।।
चारणा दोय मिल व्याकरण कोश रचि,बण्या नह बडो कवराज मिलियो। कमघा दोय मिल कियो सुभ कांम जो,महीयो कियो नह बीस मिलियो ।।८।।

कवित

सूर्यमल मिशण से बनाया वस भास्कर, बूदी नृपराम ने खजाना खोल करके।
सावल कविराज ने लिखाया इतिशास त्योंही, उदियापुर रान के कोष बल धरके।
सीताराम लालस ने कीन राजस्थानी कोश, उदयराज उज्जवल के योग शक्ति भरके।
पोकरण भवानीसिंह स्यामसिंह रोडला के कोश हित कोष बने दानी धनवघर के।
प्रान्त की प्रवल भाषा प्रतिष्ठित परंपर बिबुधन दीनमाल वीरपद वाला है।
शिक्षा को माध्यम निज प्रान्त हैं में रखी नही होय कोटि जनता को दास गति डाला है।
डूबत है मात्रभापा वीर राजस्थान के री, प्रान्त का भविष्य याते दर्शित विदाजा है।
जीवित उट्टेगी प्रीय राजस्थानी आशामात्र, व्याकरण कोश याके बनेगे जिशाला है।

Compared by
Sd-Bhawar Singh
Sd-लक्ष्मीप्रकाश गुप्ता

Sd-ह० उदयराज उज्वल
Sd-Nemi chand Jain
Civil Judge, Jodhpur.

संकेताक्षरों का विवरण

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	रचियता का नाम
अं०	अंग्रेजी	
अ०	अरबी	
अक०	अकर्मक	
अक० रू०	अकर्मक रूप	
अनु०	अनुकरण	
अनेक०, अनेका०	अनेकार्थी कोश	श्री उदयरांम वारहट (गूंगा)
अप०	अपभ्रंश	
अमरत	अमरत सागर	श्री महाराजा प्रतापसिंह (जयपुर)
अ० मा०	अवधांन माला	श्री उदयरांम वारहट (गूंगा)
अ० रू०		
अल्प०, अल्पा०	अल्पार्थ रूप	
अ० वचनिका	अचलदास खीची री वचनिका	सिवदास गाडण
अव्य०	अव्यय	
इव०	इवरानी	
उ०	उदाहरण	
उप०	उपसर्ग	
ऊ० र०	उक्ति रत्नाकर	
उभ० लिं०	उभयलिंग	
ऊ० का०	ऊमर काव्य	श्री ऊमरदांन लालस
एका०	एकाक्षरी नांम माला	श्री वीरमांण रतनू. श्री उदयरांम वारहट (गूंगा)
ऐ० जै० का० सं०	ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह	सपादक-अगरचंद नाहटा
क० कु० बो०	कविकुल बोध	श्री उदायरांम वारहट
क० च०	करनी चरित्र	ठा० किशोरसिंह वार्हस्पत्य
कर्म० वा०, कर्म०वा०रू०	कर्म वाच्य रूप	
कहा०	कहावत	
कां० दे० प्र०	कांन्हड़ दे प्रबंध	श्री पद्मनाभ
क्रि०	क्रिया	
क्रि० अ०	क्रिया अकर्मक	
क्रि० प्र०	क्रिया प्रयोग	
क्रि० प्रे०	क्रिया प्रेरणार्थक	
क्रि० वि०	क्रिया विशेषण	
क्रि० स०	क्रिया सकर्मक	
क्व० क्व० प्र०	क्वचित् प्रयोग	
ग० मो०	गज मोख	हरसूर वारहठ
गी० रा०	गीत रांमायण	श्री अमृतलाल माथुर (कुचेरा निवासी)
गु०	गुजराती	

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	रचयिता
गु० रू० बं०	गुण-रूपक-बंध	श्री केसोदास गाडण
गोर	गोरादि	
गो० रू०	गोगादे रूपक	श्री पहाड़ खां आढ़ौ
ची०	चीनी	
चेत मांनखा	चेतमांनखा	श्री रेवतदांन कल्पित
चौबोली	चौबोली	सम्पादक डॉ० कन्हैयालाल सहल
ज० खि०	जगा खिड़िया रा कवित	श्री जगौ खिड़ियौ
जा०	जापानी	
ज्यो०	ज्योतिष	
झूमखो	वातांरो झूमखो	सम्पादक डॉ० मनोहर शर्मा
डिं०	डिंगल	
डिं० को०	डिंगल कोश	कविराजा मुरारिदांन जी (बूंदी)
डिं० नां० मा०	डिंगल नांम माला	श्री हरराज (कवि)
ढो० मा०	ढोला मारू ?	सम्पादक श्री रामसिंह श्री सूर्य करण पारीक श्री नरोत्तमदास स्वामी
तु०	तुर्की	
द० दा०	दयालदास री ख्यात	श्री दयालदास सिंढायच
दसदेव	दसदेव	नांनूरांम संस्कर्ता
द० वि०	दलपत विलास	सम्पादक श्री रावत सारस्वत
दे०	देखो	
देवि, देवी	श्री देवियांण	श्री ईसरदास बारहठ
द्रौं० पु०	द्रोपदी पुकार	श्री रांमनाथ कवियौ
ध० व० ग्रं०	धर्म वर्धन ग्रंथावली	संपादक अगरचंद नाहटा
नां० मा०	नाम माला	अज्ञात
ना० डिं० को०	नागराज डिंगल कोस	श्री नागराज पिंगल
ना० द०	नाग दमण	श्री सांइया भूला
नी० प्र०	नीति प्रकास	श्री सगरांम सिंह मुहणोत
नैणसी	मुहणोत नैणसी री ख्यात	प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
पं०	पंजाबी	
पं० पं० च०	पंच पंडव चरित्र	सालिभद्र सूरि
प० च० चौ०	पद्मिनी चरित्र चौपाई	कविलब्धोदय
पर्या० पर्याय०	पर्यायवाची शब्द	
पा०	पाली	
पा० प्र०	पाबू प्रकास	कवि श्री मोडजी आसियौ
पिं० प्र०	पिंगल प्रकास	श्री हमीरदांन रतनू
पी० ग्रं०	पीरदान ग्रंथावली	पीरदान लालस

?. इसके अतिरिक्त हमने "ढोला मारू" की भिन्न २ लेखकों द्वारा लिखित हस्तलिखित बातों की प्रतियों में से भी शब्द लिए हैं, उनका भी संकेत चिन्ह ढो मा ही रखा गया है।

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	रचयिता
पु०	पुल्लिग	
पुर्त०	पूर्त्तगाली	
पृप०	पृपोदरादि	
पे० रू०	पेमसिंह रूपक	श्री प्रतापदांन गाडण
प्र०	प्रत्यय	
प्रा०	प्राकृत	
प्रा० प्र०	प्राचीन प्रयोग	
प्रा० रू०	प्राचीन रूप	
प्रे०	प्रेरणार्थक	
प्रे० रू०	प्रेरणार्थक रूप	
फा०	फारसी	
फ्रां०	फ्रांसिसी	
वहु०/व०व०	वहु वचन	
वां० दा०	वांकीदास ग्रथावली भाग १,२,३,	श्री वांकीदास
वां० दा० ख्या	वांकीदास री ख्यात	श्री वांकीदास
वा०दा० ख्यात		
वी० दे०	बीसल् दे रासौ	नरपति नाल्ह
भ० मा०	भक्तमाल्	श्री वह्मदास दादुपंथी
भाव०	भाव वाचक	
भाव०वा०भाव वा० रू	भाव वाच्य रूप	
भिक्खु	भिक्खु दृष्टान्त	
भि० द्र०	,, ,,	
भू०	भूतकाल	
भू० का० क्रि०	भूत कालिक क्रिया	
भू० का० कृ०	भूतकालिक कृदन्त	
भू० का० प्र०	भूत कालिक प्रयोग	
भ्रं० पु०	भ्रंगी पुरांण	श्री हरदास
म०	मराठी	
मह० रू० भे०	महत्व रूप भेद	
मह० महत्व	महत्ववाची शब्द	
मा०	मागधी	
मा० कां० प्र०	माधवानल काम कंदला प्रवंध	कवि गणपति
मा० म०	मारवाड़ मृर्दुमशुमारी रिपोर्ट	मुंशी श्री देवी प्रसाद
मा० वचनिका	माताजी री वचनिका	जती जयचंद
मि०	मिलाश्रो	
मीरा	मीरां वाई	
मु० मुहा०	मुहावरा	
मे० म०	मेहाई महिमा	श्री हिंगलाजदान कवियौ
यू०	यूनानी	
यौ०	यौगिक	
र० ज० प्र०	रघुवरजस प्रकास	श्री किसनौ श्राढो

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	रचयिता
र० रू०	रघुनाथ रूपक गीतां रौ	श्री मंछाराम, मंछकवि
र० वचनिका	रत्नसिह महेशदासोत री वचनिका	जगौ खिड़ियौ
र० हमीर	रतना हमीर री वारता	महाराजा मानसिंह जोधपुर
रा०, राज	राजस्थानी	
रा० ज० रासौ	राउ जैतसी रो रासौ	अज्ञात
रा० जै० सी०	राउ जैतसी रो छंद	श्री बीठू सूजौ नगराजोत
रात वासौ	राजस्थानी काणी संग्रह	नृसिंह राजपुरोहित
रा० दू०	राजस्थानी दूहा	सम्पादक नरोत्तमदास स्वामी
रा० प्र०	राजस्थानी प्रत्यय	
रा० रा० राम रासौ	रांम रासो	श्री माधोदास दघवाड़ियौ
रा० रू०	राज रूपक	श्री वीरभांण रतनू
रा० व० वि०	राठौड़वश री विगत	अज्ञात
रा सा० स०	राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग १	सम्पादक नरोत्तमदास स्वामी
रु० भे०	रूपभेद	
ल० पिं०	लखपति पिंगल्	श्री हमीरदांन रतनू
ला० रा०	लावा रासौ	श्री गोपालदांन कवियौ
लू०	लू	ठा० चन्द्रसिंह बीकौ
लै०	लैटिन	
लो० गी०	राजस्थानी लोक गीत	
व० भा०	वश भास्कर	श्री सूर्यमल्ल मीसण
व०	वर्तमान काल्	
व०० का कृ०	वर्तमान कालिक कृदन्त	
वचनिका	वचनिका रतनसिंह महेशदासोतरी	श्री जगौ खिड़ियो
बरसगांठ		श्री मुरलीधर व्यास
व० स०	वर्णक समुच्चय	सम्पादक भोगीलाल सांडेसरा आदि
वांणी	संत बांणी	
वादली	वादली	ठा० चन्द्रसिंह बीकौ
वि०	विशेषण	
वि० कु०	विनय कुसुमांजली	विनयचंद्र-कृति-कुसुमांजलि
विलो०	विलोम	
वि० वि	विशेष विवरण	
वि० मं०	विड़द सणगार	कविराजा करणीदान कवियौ
वी० मा०	वीरमायण	बहादुर ढाढी
वी० स०	वीर सतसई	सूर्यमल मीसण
वी० स० टी०	वीर सतसई टीका	श्री किसोरदांन बारहट
वेलि०	वेलि किसन रुकमणी री	महाराजा प्रिथीराज राठौड़
वेलि० टी०	वेलि किसन रुकमणी री टीका	अज्ञात

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	रचयिता
व्या०	व्याकरण	
शक०	शकदादि	
शा० हो०	शालि होत्र	
शि० वि०	शिखर वशोत्पत्ति पीढ़ी वार्तिक	श्री गोपाल कवियो
शि०सु०रू०	शिवदांन सुजस रूपक	श्री लालदांन बारहट
सं०	संस्कृत	
सं०उ०	सज्ञा उभय लिंग	
सं०पु०	संज्ञा पुल्लिग	
सं०स्त्री०	सज्ञा स्त्रीलिग	
स०	सकर्मक	
स०कु०	समय-सुन्दर-कृति-कुसुमांजली	महाकवि समय सुन्दर
सभा०	सभाशृंगार	
स०रू०	सकर्मक रूप	
सर्व०	सर्वनाम	
सू०प्र०	सूरज प्रकास	कविराज करणीदान कवियो
स्त्री०	स्त्रीलिग	
स्पे०	स्पेनिस	
श्री हरि पु०	श्री हरि पुरुषजी	श्री हरिपुरुषजी
ह०नां० ह०नां मा०	हमीर नांम माला	हमीरदान रतनूं
ह०पु०वां०	श्री हरि पुरुषजी की वांणी	श्री हरिपुरुषजी
ह०प्र०	हंस प्रवोध	श्री हमीरसिंहजी राठौड़
ह०र०	हरिरस	श्री ईसरदास बारहट
हा०झा०	हाला झालां रा कुण्डलिया	श्री ईसरदास बारहठ

❀ [यह सकेत इस बात को सूचित करता है कि यह शब्द केवल कविता मे ही प्रयोग होता है।

? शंकास्पद

"श्रद्धांजलि"

श्री अनोप रौ पूत, पूतळौ परमारथ रौ।
सांच झूठ परखण जिण, झाल्यौ पथ पारथ रौ ॥
महावीर रणधीर, फौज में थौ जो करनळ।
सिंधु सरिस गंभीर, नीर गंगा ज्यूं निरमळ ॥
हनुमांन आंन नै प्रांण सम, पाळी थी जो पेखलौ ।
जीवन धिन जिण रौ नांम सुभ, आदि अखर में देखलौ ॥

—संपादक

सहज सरलता की प्रति-मूर्ति, स्वाभाविक सौम्यता के प्रतिरूप भक्त-हृदय,
स्नेहसिक्त सहृदयी मृदुभाषी उदारमना परम साहित्य सेवी सुअध्येता
परहितचिंतक लोकोपकारक जनप्रिय ग्रामनायक

(कर्नल ठाकुर श्री श्यामसिंहजी रोडला)

जन्म :
संवत् १९६२
फाल्गुन शुक्ला ३

स्वर्गधाम :
संवत् २०२४
फाल्गुन शुक्ला ६

जिन्होंने कोश के निर्माण में अपूर्व सहयोग दिया
जिन्होंने आत्मभाव से साहित्योपकार किया
उन्हें
हमारी कोटि – कोटि पावन श्रद्धांजलियां

राजस्थांनी सबद कोस

[राजस्थानी हिन्दी वृहत् कोश]

[तृतीय खण्ड]

(प्रथम जिल्द)

प

प—देवनागरी वर्णमाला का इक्कीसवां व्यञ्जन जो कि विवार, श्वास, घोष और अल्पप्राण प्रयत्न लगने से तथा दोनों ओठों के मिलाने से उच्चरित होता है। अतः इसे स्पर्श व ओष्ठ्य वर्ण कहते हैं।

पंइताळीस—देखो 'पैंताळीस' (रू.भे.)
उ०—पंइताळीस धनुस नी उंची, कंचन वरणी काया रे। सुंदर रूप मनोहर मूरति, प्रणमइ सुरनर पाया रे।—स.कु.

पंक-सं०पु० [सं०] १ पाप (ह.नां., अ.मा., डिं.को.)
उ०—कट्ट कांगरे-कांगरे, पसर न दै अर-पंक। कोट भड़ां रा कांगरा, अड़ बैठा नभ अंक।—रेवतसिंह भाटी
२ कलंक, धब्बा। उ०—सोळै किरणां सरसियो, प्रगट फब्यो विण पंक। सही क सुवरण वेल सूं, मिळियो आंण मयंक।
—र. हमीर
३ कीचड़, कीच। उ०—१ वितए आसोज मिळै नभि वादळ, प्रिथी पंक जळि गुडळपण। जिम सतगुरु कळि कळुख तणा जण, दीपति ग्यांन प्रगटे दहण।—वेलि.
उ०—२ अस्ट करम मळ पंक पयोधर, सेवक सुख संपति करणं। सुर-नर-किन्नर-कोट निवेसित, समय सुंदर प्रणमति चरणं।
—स.कु.
रू०भे०—पंग।
यौ०—पंक-जणी, पंक-जनम, पंक-जात।

पंककीर-सं०पु० [सं०] टिटिहरी नामक चिड़िया।

पंकज-वि० [सं०] कीचड़ से उत्पन्न होने वाला।
सं०पु०—१ कमल (ह.नां.)
२ फूल (अ.मा.)
रू०भे०—पंकज्ज, पंकय।
यौ०—पंकज-ग्रह, पंकज-बंधु, पंकज-राग, पंकज-हती।

पंकजग्रह-सं०पु० [सं०] वरुण (नां.मा.)

पंकजणी—देखो 'पंकजिनी' (रू.भे.)

पंकजनम-सं०पु० [सं० पंकजन्मन्] कमल, पद्म।

पंकजबंधु-सं०पु० [सं०] सूर्य्य, रवि (अ.मा.)

पंकजराग-सं०पु० [सं०] पद्म-रागमणि।

पंकजहत, पंकजहती, पंकजहत्य, पंकजहत्थी, पंकजहथ, पंकजहथी-सं०पु० [सं० पङ्कजहस्त] सूर्य्य, भानु (डिं.को.)
वि०वि०—पङ्कजहस्त=कमलों का हाथ (सहारा)। यदि इसे गुण-वाची 'इन्' प्रत्यय के साथ रखें तो 'हस्ती' होगा। उसका अर्थ होगा कमलों को सहारा देने वाला।

पंकजात-सं०पु० [सं०] कमल।

पंकजासण, पंकजासन-सं०पु० [सं० पंकजासन] ब्रह्मा।

पंकजिणी—देखो 'पंकजिनी' (रू.भे.)

पंकजित-सं०पु० [सं० पंकजित्] गरुड़ का एक पुत्र।

पंकजिनी-सं०स्त्री० [सं०] कमल का पौधा जो पानी में होता है।
(डिं.को.)
रू०भे०—पंकजणी, पंकजिणी।

पंकज्ज—देखो 'पंकज' (रू.भे.)

पंकण, पंकणी-सं०स्त्री०—१ प्रत्यञ्चा। उ०—कह कवांण नैण रस, जीह पंकणी तांणेह। मारू तीर कवांण जिम, नह चूके बांणेह।
—ढो.मा.
२ देखो 'पंखणी' (रू.भे.)

पंकत, पंकति—देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)
उ०—१ चंडी सूळ पारजात मराळां पंकतां चंगी, किरमाळां मोज पंगी कोसल्या कवार।—र.रू.
उ०—२ काळी-घड़ पावस कंवळयं, बग-पंकति दीप दंतूसळयं।
—ग.रू.बं.
उ०—३ रुखमणीजी की दंति पंकति सोभित छै।—वेलि. टी.

पंकति-दूहौ-सं०पु० [सं० पंक्ति+रा० दूहौ] वह दोहा जिसमें चारों चरण मिला कर ४८ ह्रस्व वर्ण हों। इसका दूसरा नाम सर्प है।

पंकती—देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

पंकदिग्धांग-सं०पु० [सं०] कार्तिकेय का एक अनुचर।

पंकधूम-सं०पु० [सं०] एक नरक (जैन)

पंकप्पभा, पंकप्पहा, पंकप्रभा-सं०स्त्री० [सं० पंकप्रभा] एक नरक।
वि०वि०—इस नरक में कीचड़ भरा हुआ माना जाता है।

पंकय—देखो 'पंकज' (रू.भे.)
उ०—सेवइ जसु पय साध अहे, पंकय महूअर रुण उणइ ए। धन धनु जे नरनारि अहे, नित नितु प्रभु गुण गण थुणइ ए।
—ऐ.जै.का.सं.

पंकरुट-सं०पु० [सं०] कमल (डिं.को.)

पंकरुह, पंकरूह-सं०पु० [सं० पंकरुह] कमल, पद्म (डिं.को.)
रू०भे०—पंकेरुह।

पंकाउळी—देखो 'पंकावळी' (रू.भे.) (पिं.प्र.)

पंकाभा-सं०स्त्री० [सं०] चौथी नरक (जैन)

पंकावळि, पंकावळी-सं०स्त्री० [सं० पंकावलि] प्रत्येक चरण में प्रथम गुरु फिर दो नगण फिर दो भगण सहित १३ वर्ण का वर्णिक वृत्त विशेष जिसे कंजअवळी भी कहते हैं (र.ज.प्र.)
रू०भे०—पंकाउळी।

पंक्ति—देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)
उ०—सेरी सांप मोकळी वाट, नगर मांहि छोह पंक्ति हाट।
—कां.दे.प्र.

पंकेरुह—देखो 'पंकरुह' (रू.भे.)

पंक्खण—१ देखो 'पंख' (रू.भे.)

२ देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

३ देखो 'पंखी' (रू.भे.)

पंक्ति-सं०स्त्री० [सं०] १ प्रायः एक ही प्रकार की वस्तुओं का ऐसा समूह जो एक दूसरी के पश्चात् एक ही सीध में हों, कतार, पांती, लाइन, श्रेणी। उ०—किते चवदंडिय होदनि छाय, दये डगबेरनि तें खुलवाय। चले मिळि दंतिय पंक्ति समग्र, मनो बग पंक्ति उठी घन अग्र।— ला.रा.

पर्या०—तति, माळा, राजी, वीथि।

२ एक साथ बैठ कर भोजन करने वालों की कतार।

३ फौज में दस-दस योद्धाओं की कतार।

४ प्रत्येक चरण में एक भगण और अंत में दो गुरु वाला एक वर्ण-वृत्त।

५ दस की संख्या*।

रू०भे०—पंकत, पंकति, पंकती, पंकित, पंगत, पंगति, पंगती, पंत, पंति, पंती, पांत, पांति, पांती, पिंगति।

पंक्तिपावन-सं०पु० [सं०] ऐसा ब्राह्मण जिसको यज्ञ में बुलाना और दान देना श्रेष्ठ माना जाता है।

पंक्तिबद्ध-वि० [सं०] कतार में बंधा हुआ, श्रेणीबद्ध।

पंख-सं०पु० [सं० पक्ष] १ चिड़ियों, पतगों आदि पक्षियों का वह अवयव जिससे वे हवा में उड़ते हैं, पर।

उ०—१ आगै खोजां जावतां पंख पड़िया पाया।

—केसोदास गाडण

उ०—२ कुंझड़ियां कळिअळ कियउ, सुणीउ पंखड़ वाइ। ज्यांकी जोड़ी बीछड़ी, त्यां निसि नींद न आइ।—ढो.मा.

पर्या०—छद, पत्र, पिच्छ, बाज।

मुहा०—१ पंख आणा—देखो 'पंख लागणा'।

२ पंख उखलणा—असमर्थ होना।

३ पंख उखेलणा—असमर्थ करना।

४ पंख कटणा—देखो 'पंख उखलणा'।

५ पंख काटणा—देखो 'पंख उखेलणा'।

६ पंख जमणा—देखो 'पंख लागणा'।

७ पंख लगणा—देखो 'पंख लागणा'।

८ पंख लागणा—बुरे रास्ते पर जाने के रंग-ढंग दिखाई पड़ना, इधर-उधर घूमने या भटकने की इच्छा दीख पड़ना।

२ पुष्प-दल।

३ धूलि। उ०—दळ मेहळ ऊपड़ै, ममर रज अम्मर अम्मै। असंख वांण आतस्स, गयण पंखारव गम्मै। पसरि पंख है पाई, इळा उड्डै आधंतरि। जरद लाल इक स्याह, वरन वांना विः बहुथरि।

—गु.रू.बं.

रू०भे०—पंक्खण, पंखि, पंखी।

अल्पा०—पंखड़ी, पंखडी, पंखड़ो, पंखडो, पंखुड़ी।

मह०—पंखड़, पंखड, पंखांण।

४ गिद्ध, चील आदि मांसाहारी पक्षी।

५ राजा की सवारी का हाथी।

६ अश्व, घोड़ा (डि.नां.मा.)

उ०—पाखर में परचंड, पंख पाहाड़ अचग्गळ। ऊंचासो इंद्र रै, रांम रै गुरड विहंगम।—ग.रू.बं.

७ धारा, प्रवाह। उ०—मांडिया उतवंग जियइ द्रू माथइ, नांम जपंतां एक निमंख। संकरदेव पखउ कुण साहइ, पडती गंग तणा झट पंख।—महादेव पारबती री वेलि

८ देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

उ०—तांणै मीर तीर धनंख पाड़ै गयण हूंता पंख।—गु.रू.बं.

यो०—पंखपति, पंखराज, पंखराव।

९ देखो 'पखारी' (रू.भे.)

उ०—१ असिधुज सिलह पखर भिदि आवै। पंख जिका भींजण नह पावै।—सू.प्र.

उ०—२ कोमंड गरज्ज हुए हलकार, मडां मालोड़ करत भंभार। एकू की मूठ विछुट्ट असख, परै सिर फूटै कोरी पंख।—गु.रू.बं.

पंखड़, पखड—१ देखो 'पंख' (मह., रू.भे.)

पंखड़ी, पंखडी—देखो 'पंख' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—१ आडा डूंगर वन घणा, खरा पियारा मित्त। देह विधाता पंखड़ी, मिळि मिळि आवउं नित्त।—ढो मा.

उ०—२ कुंझां ! द्यउ नइ पंखडी, थांकउ विनउ वहेसि। सायर लंघी प्री मिळउं, प्री मिळि पाछी देसि।—ढो.मा.

पंखड़ो, पंखडो—१ देखो 'पंख' (अल्पा. रू.भे.)

२ देखो 'पंखी' (अल्पा., रू.भे.)

३ देखो 'पक्षी' (अल्पा., रू.भे.)

पंखण, पंखणि, पंखणी-सं०स्त्री० [सं० पक्षिणी] १ मादा पक्षी।

२ मादा गिद्ध। उ०—१ रिमसेन सगह वहिया जुध रासै। रूकां पांण कनोजै-राय। पळ भखती राती पिड पंखण। तगसंती राता गिर ताय।—धोळूजी विठू

उ०—२ वारण कारण धाव-दाव वर, भख पंखण रीझव भाराथ। बेटौ बाप दहूं रथ बैठा, सासु बहू अच्छर कर साथ।

—गोपाळदास बळरांम गौड़ रो गीत

उ०—३ झड़प्फड़ पंखणि साव्रज झूल। गुडंत गयघण गात्र सथूल।

—गु.रू.बं.

३ चील।

४ वर्तमान और आगामी दिन के बीच की रात।

५ अप्सरा।

उ०—पनंगणी कना काय पंखणी, कोण देस हूंता गवण। हूं

पुज्ज भेद जांणू नहीं, कह है तूं बाई कवरण ।—पा.प्र.

६ राठौड़ वंश की कुलदेवी, चक्रेश्वरी, नागणेची ।

उ०—चक्रेस्वरी वळे स्थांने, राटेस्वरी तथा रट। पंखणी सप्त मात्रेण, नागणेची नमस्तुते ।—पा.प्र.

रू०भे०—पंकणी, पंखयांणी, पंखायरा, पंखिरा, पंखिणि, पंखिणी, पंखीणी, पंखीनी, पांखणी ।

पंखणीग्राळौ, पंखणीयाळौ-सं०पु० [सं० पक्ष+ग्रालुच् प्र०] पक्षी, पंखेरू ।

पंखपत, पंखपति, पंखपती, पंखपत्त, पंखपत्ति, पंखपत्ती-सं०पु०यौ० [सं० पक्षी+पति] १ गरुड़, पक्षिराज (डि.को.)

उ०—परिठिवउ प्रांण पागड़इ पाउ, रेवंति चढ़िय 'जइतसी' राउ। 'चउंडाहर' चड़िवउ चक्रवति, परमेसर जांणै पंखपत्ति ।

—रा.ज.सी.

२ जटायु ।

रू०भे०—पंखीपत, पंखीपति, पंखीपती, पंखीपत्त, पंखीपत्ति, पंखीपत्ती ।

पंखयांणी—देखो 'पंखणी' (रू.भे.)

उ०—पखयांणी ग्राव पख्ख, दांन पाव भाव दख्ख । रूप वो ग्रमर रख्ख, खळां भेळि खख्ख ।—पा.प्र.

पंखराउ, पंखराऊ, पंखराज, पंखराय—देखो 'पक्षिराज' (रू.भे.)

उ०—१ वर वागू के सांचे पंखराउ सी घाव । खुरताळूं के ग्रमके सत सिपा के सिळाव ।—र.रू.

उ०—२ दक्खणियां घर वाहण ग्रादो, ग्राहनपुर ग्रायो साहिजादो । देख 'खुरम' दखणी दळ भग्गे, किरि दीठौ पंखराऊ पनग्गे ।

—गु.रू.बं.

उ०—३ तुरी झळूस साज तांम, घाव देत घारक । उडांण पंखराज एम, पांण में ग्रपारकं ।—सू.प्र.

उ०—४ जळ भीतर ग्राव मचाय महाजुध, कंटक लोघ दवाय करी । गळळावत सूंड रही दुय ग्रंगुळ, हेत घणै पंखराय हरी ।

—भगतमाळ

पंखराळ-वि० [सं० पक्ष+ग्रालुच्] १ बड़े बड़े परों वाला ।

२ देखो 'पखराळ' (रू.भे.)

उ०—वदन मजीठ रूप विकराळां । पमगां चढै पूर पंखराळां । कहि चहुवांण तणा भड़ केहा । जम हूं लड़ै चाळवंच जेहा ।—सू.प्र.

पंखराव—देखो 'पक्षिराज' (रू.भे.)

उ०—१ उरड तुटि ग्रसमांन, जुटि पंखराव जहरधर । हुवै विकट करि हाक, दैत नरसिंघ वाहादर ।—पनां वीरमदे री वात

उ०—२ सारी 'ग्रोरंग साह' सूं, दाखै दूत विगत्त । 'दुरग' 'ग्रकब्बर' जांम्य-दिस, गा पंखराव जुगत्त ।—रा.रू.

पंखवा-सं०स्त्री० [सं० पक्ष+वायु] पंखे की हवा ।

पंखवौ—देखो 'पंखारौ' (रू.भे.)

पंखांण—देखो 'पासांण' (रू.भे.)

उ०—गढ़ भंजै भीत किमाड़, उत्थापै जडां उपाडं । सातखणा मह मंडांणं, किया ढाहि पंखांण पंखांणं ।—गु.रू.ब.

२ देखो 'पंख' (मह., रू.भे.)

३ देखो 'पक्षी' (मह., रू.भे.)

पंखांराउ, पंखांराऊ, पंखांराज, पंखांराव—देखो 'पक्षिराज' (रू.भे.)

उ०—१ वेग लिए मूंठी वाऊ, राज रथां पंखांराऊ ।—गु.रु.बं.

पंखाकुळी-सं०पु०यौ० [सं० पक्ष+तु० कुली] पंखा खींचने के लिए नियत व्यक्ति ।

पंखाबरदार-सं०पु० [सं० पक्ष+फा० बरदार] पंखे से हवा करने वाला ।

रू०भे०—पंखावरदार ।

पंखाबरदारी-सं०स्त्री० [सं० पक्ष+फा० बरदार+रा.प्र.ई] पंखे से हवा करने का कार्य । उ०—लहलहतो नाचै लता, पवन सगीती पाय । पंखाबरदारो करै, रंभ बिचै वणराय ।—बां.दा.

रू०भे०—पंखावरदारी ।

पंखायण—देखो 'पंखणी' (रू.भे.)

पंखार, पंखारौ-सं०पु० [सं० पक्ष+ग्रालुच्] तीर का पीछे का वह भाग जहां से तीर प्रत्यञ्चा पर चढ़ाया जाता है ।

वि०वि०—तीर के इस स्थान पर दोनों ग्रोर छोटे छोटे पर (पंख) लगे हुए होते हैं ।

उ०—१ खतां ग्रंगि तीर फरक्कि पखार । घड़ा छत मेघ घणा छत्र-धार ।—सू.प्र.

उ०—२ ऊपर रूपै रा सांवा छै, पीतळ तांबै रा छला छै दांत री चोकड़ी छै, तिलोर रा पंखारा छै ।—रा सा.सं.

उ० —३ कुंवरसी रै हाथ रो तीर जिण रै लागै उण ही घोड़ै तक रै पार नीसर जाय । सवार रै लागै जीं मांही पंखारा मींजै तक नहीं ।—कुंवरसी सांखला री वारता

रू०भे०—पंख, पंखवौ, पंखोवौ, पुंख, पुंखौ ।

पंखाळ, पखाळौ-वि० [सं० पक्षालुः] १ जिसके पंख हों, पर वाला ।

उ०—१ मणिधर मोटा देखीइ, पंखाळा पुन्नाग । सात फणइग्री सहिस-गळ, विमणी विमणी वाग ।—मा.का.प्र.

उ०—२ चलै करण ताळ उलाळा चलावै । घरै काळ मा ग्रद्रि पंखाळा घावै ।—वं.भा.

२ पक्ष का, एक ग्रोर का । उ०—तुरग मातंग रथाळि पाळा, ते पारथ नै वारि हूंया पंखाळा ।—विराट पर्व

सं०पु०—१ पक्षो । उ०—पड़ि सोक भयकर उडि पखाळ । काळ में जांणि पण प्रळयकाळ ।—सू प्र.

२ मांसाहारी पक्षी । उ०—१ गुदाळक जे पंखाळ गजै । विकराळ बवाळ मंवाळ वजै ।—गो.रू.

उ०—२ वरंगा राळ वरमाळ सूरा वरै, त्रिपत पंखाळ दिन गुर्ने

ताळा। सवळ पड भार सिर तणावै अहेसुर, महेसुर वणावै मुंड-माळा।—र.रू.

३ पक्षिराज, गरुड़। उ०—'पातल' वग्ग पमंग री, यूं कर झली उताळ। चत्रभुज जाणै चालियो, पिड़ कज सझ पंखाळ।

—किसोरदान बारहठ

४ गिद्ध।

५ सांप, नाग। उ०—गज, डूंबी, चीतळ, गोरावा, सुज काळा, पंखाळा सेत नव-कुळ नाग म ग्रांणै नैड़ा, नव-कुळां ई टाळै नखतेत।

—ग्रासो गाडण

[सं० पक्ष सेनाका एक बाजू+आलुच्] ६ घोड़ा, अश्व (डिं.नां.मा.)

७ तीर, शर (डिं.नां.मा.)

उ०—१ पूर सोक पंखाळ अरस, छायौ आधंतरि।—गु रू.बं.

उ०—२ अखत पंखाळ अणियाळ उछाळती, सुविए ताळ विकराळ साए। दूसरा 'पाल' चुगलाळ घड़ दुलहणी, विमळ वरमाळ करमाळ धाए।—जोगीदास चांपावत रो गीत

८ डिंगल का एक गीत (छंद) विशेष जो छोटे सांणोर का एक भेद होता है। इसमें तीन द्वाले होते हैं और ह्रस्व दीर्घ का नियम नहीं होता है।

पंखावरदार—देखो 'पंखाबरदार' (रू.भे.)

पंखावरदारी—देखो 'पंखाबरदारी' (रू.भे.)

पंखासाळ-संस्त्री० [स० पक्ष+शाला] १ वह शाला जहाँ हवा के निमित्त पंखा लगा हुआ हो।

२ मकान के भीतर की वह खुली शाला जिसमें हवा सुगमता से आती हो।

३ मकान के भीतर बनी हुई वह खुली शाला जिसके दोनों पक्षों के कमरों आदि में सामान आदि रखा जाता है किन्तु शाला में प्राय: सामान आदि नहीं रखा जाता है। यह प्राय: गर्मी की ऋतु में दिन को बैठने, महमानों को ठहराने व सोने के उपयोग में ली जाती है।

पंखि—देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

उ०—१ अनि पंखि वघे चक्रवाक असंघे, निसि संधे इमि अहो-निसि। कांमिणि कांमि तणी कांमागनि, मन लाया दीपकां मिसि।

—वेलि.

उ०—२ रात सखी इणि ताल मइं, काइज कुरळी पंखि। उवै सरि हूं घरि आपणइ, विहूं न मेळी अखि।—ढो.मा.

२ देखो 'पंख' (१-३) (रू.भे.)

उ०—अर्जे जांनकी सोधवा जोध आया। गिरां 'अंगदेसं' चढ़ै रांम गाया। सुणै रांम रो नांम उच्छाह साई। उठै ग्रीध संपात रै पंखि आई।—सू प्र.

३ देखो 'पंखी' (८) (रू.भे.)

पंखिओ १—देखो 'पक्षी' (अल्पा०, रू.भे.)

२ देखो 'पंखियो' (रू.भे.)

३ देखो 'पक्ष' (अल्पा., रू.भे.)

पंखिण, पंखिणि, पंखिणी—देखो 'पंखण' (रू.भे.)

उ०—१ पखिण पंखी वीछड़ै, जिम सोकातुर थाय। तिम कुमरी नै पिउ बिना, खिण एक खिण न सुहाय।—वि.कु.

उ०—२ दुख सायर मन बेडली, कूप ते माधव नांम। कांमकंदळा पंखिणी, फिरि-फिरि एक जि ठांम।—मा.कां.प्र.

उ०—३ कोधी सांन खांनि मूंगळ नइ, सींगिणी परठघउ तीर। तांणी गयणि पंखिणी वीधी, पेखइ मोटा मीर।—कां.दे प्र.

पंखियो-संपु० [सं० पक्ष+रा०प्र० इयो] १ वह बैल जिसके पसलियों की अन्त की हड्डियां कुछ छोटी हों (अशुभ)।

रू०भे०—पंखिओ, पंखीओ, पंखीयो।

२ देखो 'पक्षी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ संकुड़ित समसमा संध्या समयै, रति वंछिति रुखमणि रमणि। पथिक वधू द्रिठि पंख पंखियां, कमळ पत्र सूरिज किरणि।

—वेलि.

३ देखो 'पंखो' (अल्पा०, रू.भे.)

पंखी-संपु० [स० पक्षी] १ गरुड़, पक्षिराज (ह.नां., अ.मा.)

२ बांण, शर (डिं.नां.मा.)

३ एक प्रकार का ऊनी कपड़ा जो पहाड़ी भेड़ के बालों से बुना जाता है। उ०—आंनन विमळ मुखोप अपारां। तांबूळादि दियै तिण वारां। एहिज सदन सिसर हिमवंतां। आसण पंखी पसम अनंतां।—सू.प्र.

[सं० पक्ष] ४ रहट चलाने वाले के लिए बैठने का स्थान जहाँ पर बैठ कर वह बैलों को हांकता है।

संस्त्री०—५ फूल का दल, पंखुरी।

६ गिद्ध, चील आदि मांसाहारी पक्षी।

७ मक्खी, मक्षिका।

८ बंदूक के अग्र भाग में उभरा हुआ वह अंश जिसकी सहायता से निशाना साधा जाता है।

९ देखो 'पक्षी' (रू.भे.) (अ.मा., ह.नां.)

उ०—१ स्रीपति कुण सुमति तूझ गुण जु तवति, ताऊ कवण गयण जु समुद्र तरै। पंखी, कवण गयण लगि पहुचै, कवण रंक करि मेरु करै।—वेलि.

उ०—२ घनवंता री 'घरमसी', आवै सहु धरि आस। सरवर भरियौ देख सहु, पंखी बैसै पास।—ध.व.ग्रं.

१० देखो 'पंख' (१-३) (रू.भे.)

११ देखो 'पखो' (अल्पा., रू.भे.)

पंखीओ—१ देखो 'पंखियो' (रू.भे.)

२ देखो 'पक्षी' (अल्पा., रू.भे.)

पंखीड़—१ देखो 'पंखो' (मह०, रू.भे.)

२ देखो 'पक्षी' (मह०, रू.भे)

पंखीड़ो—देखो 'पक्षी' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—रूड़ा पंखीड़ा, पंखीड़ां, मुन्हइ मेल्ही नइ म जाय। घुर थी प्रीती करी मइं तो सुं, तुझ विण क्षण न रहाय।—स.कु.

पंखीणी, पंखीनी—१ देखो 'पंखणी' (रू.भे.)

२ देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

उ०—ऊमर अति आरहडा खडइ, तउ ढोलउ किम ही नापडइ। पंखीनी परि ऊडचउ जाइ, करहउ मिळियौ वाउवाइ।—ढो.मा.

पंखीपत, पंखीपति, पंखीपती, पंखीपत्त, पंखीपत्ति, पंखपत्ती—देखो 'पंखपत' (रू.भे.) (ह.नां., अ.मा.)

उ०—वाहण गुरुड सयल पंखीपति, जादव करई जगीस। सुर-नर पंनग माहे मोटा, ईस्वर नउं वर ईस।—रुकमणी मंगळ

पंखीयौ—१ देखो 'पक्षी' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—भोगव्या काम भोग छोड़नें, वेहूं भव हळका थाय। बेउ सरीखा पंखीया नी परें, विचरसां इच्छा आपणी दाय।

—जयवांणी

२ देखो 'पंखियौ' (रू.भे.)

पंखीराव—देखो 'पक्षिराज' (रू.भे)

उ०—गाढा दांणवां गाळिवा गाव, भवांनी आद्र सुभाव। चहूं चक्का सीस चाव विरद्दाव, पंखीराव हूंतां पाव।—सक्ति-सुयश

पंखीस-सं०पु० [सं० पक्षी+ईश] १ गरुड़, पक्षिराज।

२ देखो 'पक्षी' (मह०, रू.भे.)

उ०—पंखीस गीध वैठा अपार, मिळ सकळ पात पळ वेसुमार। इण भांत चली सरता अभंग, जिण वार कमंध असुरांण जंग।

—शि.सु.रू.

पंखुडी—देखो 'पंख' (अल्पा., रू.भे.) (१-२-३)

उ०—आडा डूंगर भुइं घणी, सज्जण रहइ विदेस। मांगी तांगी पंखुडी, केती वार लहेस।—ढो.मा.

पंखेरुओ—देखो 'पक्षी' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—उड ज्या रे पंखेरुआ सांझ पड़ी।—मीरां

पंखेरू—देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

उ०—तरइं पंखेरू आगळि परधांनां, विवरा सुघउ कह्यउ वतकाव। वहिलउ दरसण हुवइ विसुंभर, अस इछ कहि पंखो ऊपाव।

—महादेव पारवती री वेलि

पंखेरुओ, पंखेरुवो—देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

उ०—पिया रे फिकर में भयी दिवांणी, मुसकल घड़ी से घड़ी, उड जा रे! पंखेरुवा सांझ पड़ी।—मीरां

पंखेसर-वि० [सं० पक्ष+ईश्वर] जिसके पंख हो, पंखधारी।

उ०—स्रीखंडूं का डवर समीर सें झोला खावें। मळियागिर के भोळें भूलि पंखेसर मिणधर भुजंग आवें।—सू.प्र.

सं०पु०—१ पक्षिराज, गरुड़।

२ जटायु।

३ देखो 'पक्षी' (मह०, रू.भे.)

उ०—अनेक पंखेसर नाग अनंत। मिळे सिधि साधिक संत-महंत।

—रांमरासौ

पंखो-सं०पु० [सं० पक्ष+रा.प्र. ओ] १ वह वस्तु जिसे हिला-डुला कर हवा के झोंके को किसी ओर ले जाया जाय। विजना।

वि०वि०—पहले इसे पंख से बनाते थे अथवा इसका आकार पंख जैसा होता था इसलिए इसका यह नाम पड़ा। छत में कपड़े का पंखा लगा कर डोरी से खींच कर हिलाया जाता है। छत में लटका कर चरखी द्वारा भी घुमाया जाता है। आजकल नाना प्रकार के विजली से घूमने वाले पंखों का व्यापक प्रयोग होता है, जिनसे हवा में इच्छानुसार न्यूनाधिक गति उत्पन्न की जा सकती है।

क्रि०प्र०—खींचणो, चलणो, चलाणो, झळणो, डुलाणो, हिलाणो

मुहा०—पंखो करणो—हवा में गति उत्पन्न करने के लिए पंखे को हिलाना-डुलाना।

२ सोने, चांदी, गोटे आदि की बनी एक प्रकार की झल्लरी जिसे स्त्रियों के चीर या साड़ी की किनार पर लगाया जाता है।

३ प्रायः सुनारों, लुहारों और कारखानों में आग जलाने का एक आधुनिक ढंग का उपकरण विशेष।

अल्पा०—पंखड़ी, पंखड़ो, पंखडी, पंखडो, पंखियो, पंखो।

मह०—पंखीड़, पंखीड।

पंखोवौ—देखो 'पंखारो' (रू.भे)

उ०—पिसण घणो कुवर्णत पिण, जचै न जो सर जेम। करहि पंखोवा काट दै, सखो चलै सर केम।—रेवतसिंह भाटी

पंग—१ देखो 'पंगु' (रू.भे.)

उ०—१ आज 'अभमल' भूप एहो, जुधां जोवण पंग जेहो। सांसणां गयंदां समापै, कुरंद पातां तणा कापै।—सू.प्र.

उ०—२ उदित ब्रह्म मधि ईस, पछै वध विसन प्रकासै। तम नासै जोवतां, नांम कहतां अघ नासै। अंतरीख मग उरस, चंचळ सातह-मुख चालै। सुरंग पंग सारथी, हेक चक्रह रथ हालै।—सू.प्र.

उ०—३ हाथ! भलइं रह हालता, पाउ सदैवत पंग। हाळी वाळी आपसिउ, अवरां ही मोरूं अंग।—मा.कां.प्र.

२ देखो 'पंक' (रू.भे.)

पंगत—देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

उ०—१ लूंबां झड़ नदियां लहर, बक पंगत भर बाथ। मोरां सोर ममोलियां, सांवण लायो साथ।—बां.दा.

उ०—२ जीमण रै वैं दिन राजा रा आदमी ऊंठां पर चढ़ नें आय पूग्या हा अर पंगत में भगदड़ मचणीज वाळी ही कै सेठा मुंसीजी नैं एक कांनी बुलाय नें जेव गरम कराय दी।—रातवासौ

उ०—३ सिर झुकिया सहंसाह, सीहासण जिण सामनैं। रळणो पंगत राह, फावै किम तो नें 'फता'।—केसरीसिंह बारहठ

पंगतटाळ-सं०पु०यौ० [सं० पंक्ति+राज० टाळ=पृथक] वह साधु या संन्यासी जो किसी पाप-कर्म के कारण भोजन के समय साधु-मंडली में साथ न बैठने दिया जाता हो।

पंगति, पंगती—देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

उ०—तिणरी म्राडी पंगति रौ, कोठौ म्रादि जिकोइ। ग्रांक सरव गुर एकडौ, जांणीजै विधि जोइ।—ल.पि.

पंगनृप-पंगराज सं०पु० [सं० पंगु+नृप] राजा जयचंद के लिये प्रयोग किया जाने वाला विरुद सूचकशब्द।

उ०—कीजिये इण विध कांम, निज पंग-नृप जिम नांम। विध एम करतां वात, मिळ सैद दहुवें भ्रात।—सू.प्र.

वि०वि०—महाराजा जयचन्द राठौड़ की सेना इतनी अधिक थी कि उसके कूच और पड़ाव तक के मध्य भाग में सदैव पंक्ति सी बनी रहती थी जिसे कवियों ने पंगु मनुष्य के चलने पर भूमि पर बनी घसीट से तुलना कर राजा जयचन्द का विरुद 'दळपंगुळ' दे दिया। कालान्तर में इसी विरुद के आधार पर राजा जयचन्द का एक नामान्तर ही दळ पंगुळ, दळ पांगळौ, पंग और पंगु हो गया।

पंगरण-सं०पु० [सं० उपांगवरण] १ वस्त्र।

उ०—१ विहद कोर गोटै बणै, पातर रै पोसाक। परणी फाटै पंगरण, बैठी फाड़ै बाक।—बां.दा.

उ०—२ पदमणि पुरखां रै पंगरण नह पूरा। भूखा सूतोड़ा संगरणवै भूरा।—ऊ.का.

रू०भे०—पंगुरण, पंगुरिण, पंगुरिणि, पांगरण, पांगुरण, पुंगरण, पूंगरण, पूगरण।

पंगराव, पंगराज—[सं० पंगुराज] राजा जयचन्द का एक नाम।

उ०—१ अनेक पधरणी आवास, रूप भोमि रच्चए। अनेक राग-रंग ओप, नृत्तकार नच्चए। भरै अनेक दंड भूप, केक वीनती करै। करै अनेक दांन कोड़ि, पंगराज भूप रै।—सू.प्र.

उ०—२ कहि यम हैजम करै, विखम रूपी विकराळा। चढि मदभर चालियौ, तूर वाजतां त्रंबाळा। तूटै नदी तटाक, हाक खूटै ताळोहर। पंगराव जिम प्रबळ, हलै फौजां घैंसाहर।—सू.प्र.

पंगळ—देखो 'पंगुळ' (रू.भे.)

पंगळियौ—देखो 'पंगुळ' (अल्पा., रू.भे.)

पंगळी—देखो 'पंगुळी' (रू.भे.)

पंगळौ—देखो 'पंगुळ' (अल्पा., रू.भे.)

(स्त्री० पंगळी)

पंगा—देखो 'पगां' (रू.भे.)

पंगी-सं०स्त्री० [सं० पंग्वी] कीर्ति, यश (डिं.को.)

उ०—१ पंगी गंग प्रवाह, निरमळ तन कीधौ नहीं। चित क्यूं राखै चाह, तिकै सरग पावण तणी।—बां.दा.

उ०—२ अकबर जतन अपार, रात दिवस रोकण करै। पूगी समंदां पार, पगी रांण 'प्रतापसी'।—दुरसौ आढौ

वि०स्त्री०—जो पैरों से चल न सकती हो, अपंग, लँगड़ी।

रू०भे०—पांगी।

पंगु-वि० [सं०] (स्त्री० पंगवी) जो पैरों से चल न सकता हो, लँगड़ा

उ०—मन पगु थियौ सहुसेन मुरछित, तह नह रही संपेखते। किरि नीपायी तदि निकुटी ए, मठापूतळी पाखांण में।—वेलि.

सं०पु०—१ शनिश्चर।

२ सूर्य के सारथि का एक नाम।

३ एक प्रकार का रोग जिससे मनुष्य पैरों से चल नहीं सकता।

रू०भे०—पंग, पंगू।

अल्पा०—पांगौ।

पंगु-गति-सं०स्त्री० [सं०] वर्णिक छंद का एक दोष जो लघु के स्थान पर गुरु और गुरु के स्थान पर लघु के आ जाने पर माना जाता है।

पंगु-ग्राह-सं०पु० [सं०] १ मकर राशि।

२ मगर।

पंगुरण, पंगुरिण, पंगुरिणी—देखो 'पंगरण' (रू.भे.)

उ०—दिन जेही रिणि रिणाई, दरसणि, क्रमि क्रमि लागा संकुड़िणि। नीठि छुडै आकास पोस निसि, प्रौढ़ा करखणि पंगुरिण।—वेलि.

पंगुळ-वि० [सं० पंगुलः] (स्त्री० पंगुळी) १ सफेद रंग का घोड़ा।

२ लँगड़ा, पंगु।

उ०—१ दादू विरह प्रेम की लहरि में, यहु मन पंगुळ होय। रांम नांम में गळि गया, बूझै विरळा कोय।—दादूबांणी

रू०भे०—पंगळ।

अल्पा०—पंगळियौ, पंगळौ, पांगळियौ, पांगळौ, पांगौ।

पंगुळी-सं०स्त्री० [सं० पंगुल+रा.प्र.ई] १ लंगड़ी।

२ कीर्ति। उ०—मेवाड़ ढूंढाड़ जीऊं ही हाड़ौती माळवो मोळो, दौळा काळ चक्र सो किणी न आवै दाय। झाले किसो तो विनां पयाळ जाती काळ-झांपा, लाडली पंगुळी 'चांपा' अंगुळी लगाय।

—सूरजमल मीसण

पंगुळौ—देखो 'पंगुळ' (अल्पा., रू.भे.)

(स्त्री० पंगुळी)

पंगू—देखो 'पंगु' (रू.भे.)

उ०—पगू पयादं मूक सादं ऊदमादं कढ्ढए। तेजाळ तांमं वेग कांमं नीस लांमं वढ्ढए।—प्रा.प्र.

पंगौ-वि० [देशज] (स्त्री० पगी) वह द्रव पदार्थ जो गाढा न हो और जिसमें पानी की मात्रा अधिक हो। उ०—काळीगा तूसां कुळी, हूंचा हूंत जियंत। ऊमर दिन ओछा करण, पंगी राब पियंत।

—कविराजा बांकीदास

पंघरणौ, पंघरबौ—देखो 'पांगरणौ, पांगरबौ' (रू.भे.)

उ०—हरिया तरु गिरवर हुआ, पंघरिया वन पात।

—सिवबक्स पाल्हावत

पंघरणहार, हारौ (हारी), पंघरणियौ—वि० ।
पंघरिम्रोड़ौ, पंघरियोड़ौ, पंघरयोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पंघरीजणौ, पंघरीजवौ—भाव वा० ।

पंघरियोड़ौ— देखो 'पांगरियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पंघरियोड़ी)

पंच–वि० [सं०] १ जो चार से एक अधिक हो, पांच ।
उ०—१ ग्रावरत मेघ सम म्रोवड़ै, घडी पंच वगी खड़ग । सिरदार इता भिड़िया समर, नीवड़िया जिम घाय नग ।—रा.रू.
यौ०—पंचग्रंग, पंचइंद्री, पंचकन्या, पंचकपाळ, पंचकरम, पंचकळा, पंचकवळ, पंचकसाय, पंचकांम, पंचकारण, पंचकेस, पंचकोस, पंचगीत, पंचदेव, पंचनद, पंचनाथ, पंचपिता, पंचबांण, पंचरतन, पंचवांणी, पंचसबद, पंचवाद्य, पंचहुतासण ।
२ जिसका स्थान चार के बाद पड़े, पांचवां ।
सं०पु०—१ पांच की संख्या या पांच का ग्रंक ।
२ किसी झगड़े या विवाद का निर्णय करने के लिए एकत्र एक या एक से अधिक व्यक्तियों का समूह ।
मुहा०—पंच परमेस्वर—पांच व्यक्ति मिल कर जो कहें वह परमेस्वर के कहे के समान होता है ।
३ पचायत का सदस्य ।
[ग्रं०] ४ लोहे को छेदने का ग्रौजार ।

पंचग्रंग–वि० [सं० पचाङ्ग] पांच ग्रंगों वाला ।
सं०पु०—१ कच्छप, कछुग्रा (ह. नां. मा.) ।
२ देखो 'पंचांग' (रू.भे.)
रू०भे०—पाच ग्रग ।

पच-ग्राचार–सं०पु० [सं० पंचाचार] ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चरित्राचार, तपाचार व वीर्याचार (जैन)

पंचइंद्री—देखो 'पंचेंद्रिय (रू.भे.)
उ०—सास्त्र सार बतीस जांणै, केवल-ग्यांनी का उपकारी। पंच-इद्री कूं जीत न मांनत, पाखंड साध मुनिंद सतधारी ।
—मि.द्र.

पंचइवाद्य—देखो 'पंचवाद्य' (रू.भे.)
उ०—गांन सुसर मुखि गाय करि, वायसि पचइवाद्य । तिहुग्रण ग्रिणवत लेखवउं, ग्राज्जनइ उन्मादि ।—मा.कां.प्र.

पंचक–सं०पु० [सं०] १ घनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तरा-भाद्रपदा ग्रौर रेवती इन पांचों नक्षत्रों के समूह का नाम ।
२ फलित ज्योतिष के ग्रनुशार घनिष्ठा नक्षत्र ग्रौर मकर के चंद्रमा से ग्रारम्भ होकर मीन के चंद्रमा तक चलने वाला समय जिसमें तृण, काष्ठादि का संग्रह वर्ज्य माना जाता है ।
३ पांच का समूह या संग्रह ।
४ शकुन-शास्त्र ।
रू०भे०—पचक, पिचक, पिच्चक ।

पंचकन्या–सं०स्त्री० [सं०] सदा कन्या मानी जाने वाली वे पांच स्त्रियां जो विवाहित होने पर भी वे कन्या के समान ही रहीं, उनका कौमार्य नष्ट नही हुग्रा । यथा—ग्रहिल्या, द्रौपदी, कुन्ती, तारा ग्रौर मंदोदरी (पौराणिक)

पंचकपाळ–सं०पु० [सं० पंचकपाल] पांचों कपालों में पृथक-पृथक पकाया जाने वाला पुराडोश ।

पंचकमाळा–सं०स्त्री०—प्रत्येक चरण में एक भगण, फिर एक मगण, फिर एक सगण तथा ग्रन्त में एक दीर्घ वर्ण का कुल दस वर्ण वाला एक वर्णिक छन्द विशेष (पि.प्र.) ।

पंचकरम–सं०पु० [सं० पंचकर्म] १ पांच प्रकार के कर्म—उत्क्षेपण, ग्रवक्षेपण, ग्राकुंचन, प्रसारण ग्रौर गमन—वैशेषिक ।
२ चिकित्सा की पांच क्रियाएँ—वमन, विरेचन, नस्य, निरुहवस्ति ग्रौर ग्रनुवासन, मतांतर से निरुहवस्ति ग्रौर ग्रनुवासन के स्थान पर स्नेहन ग्रौर वस्तिकरण माने जाते हैं ।
रू०भे०—पंचक्रम ।

पंचकळा–सं०स्त्री० [सं० पंचकला] गुर्ज, गुप्ति, मसकेत, ढाल ग्रौर वयोनट नामक पांच शस्त्रों के समूह से बना शस्त्र विशेष ।

पंचकलियांण—देखो 'पंचकल्यांण' (रू.भे.)

पंचकल्प–सं०पु० [सं०] एक सूत्र का नाम (जैन)
उ०—पंच-कल्प ते पंचम छेद । सवा इग्यारसैं संख्या वेद ।
—ध.व.ग्रं.

पंचकल्याण–सं०पु० [सं० पंचकल्याण] वह घोडा जिसके चारों पैर ग्रौर मस्तक श्वेत हो तथा ग्रन्य शरीर किसी ग्रन्य रंग का हो ।
(शुभ)
उ०—कासनी ताफता पंच-कल्यांण । सूलहरी चपा पट सिचांण ।
—सू.प्र.
रू०भे०—पंचकलियांण, पंचकिलियांण, पंचकिल्यांण, पंचाकिल्याण, पचकल्यांण ।

पंचकवळ–सं०पु० [सं० पंचकवल] खाने के पूर्व कुत्ते, पतित, कोढी, रोगी ग्रौर कौवे के लिए निकाले जाने वाले पांच ग्रास, ग्रग्राशन ।

पंचकविधि–स०स्त्री० [सं०] पंचक में किसी का देहावसान होने पर किया जाने वाला संस्कार ।
वि०वि०—यदि पाचों नक्षत्रों (पंचकों) में कोई मरता है तो उसके साथ चार पुतले, चार में तीन, तीन में दो व दो में एक पुतला साथ में जला कर इसका निवारण किया जाता है ।

पंचकसाय–सं०पु० [सं० पंचकषाय] पांच वृक्षों का कषाय—जामून, सेमर, खिरेंटी, मौलसिरी ग्रौर वेर ।
वि०वि०—दुर्गा पूजन के लिए यह कषाय, इन वृक्षों की छाल को पानी में भिगोकर तैयार किया जाता है ।

पंचकांम–सं०पु० [सं० पंचकाम] काम, मन्मथ, कंदर्प, मकरध्वज ग्रौर मीनकेतु नामक पांच कामदेव (तंत्रसार)

पंचकारण-सं०पु० [सं०] किसी कार्य की उत्पत्ति के पांच कारण, यथा—काल, स्वभाव, नियति, पुरुष और कर्म (जैन)

पंचकिलांण, पंचकिलियांण, पचकिल्यांण—देखो 'पचकल्यांण (रू.भे.) (शा.हो.)

उ०—कविला काळा केकांण, कमेत पंचकिल्यांण।—गु.रू.बं.

पंचकेस-सं०पु० [सं० पच:केश] यज्ञोपवीत संस्कार के समय वटुक के शिर पर रखी जाने वाली पांच शिखायें। इनको कम से कम एक वर्ष तक रखा जाता है और इस अवधि में वटुक को ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करना पड़ता है।

वि०वि०—यह प्रथा गोकुलिया गोस्वामियों में है।

पंचकेसी-सं०पु० [सं० पचकेश:] १ वह प्रथा जिसके अनुसार कोई अपने शिर, मूंछ, दाढी, बगल व गुप्तेन्द्रिय के केश न कटाए।

२ उक्त प्रथा का पालन करने वाला व्यक्ति।

पंचकोण-सं०पु० [सं०] कुण्डली में पांचवां व नवां स्थान (ज्योतिष)

पंचकोल-सं०पु० [सं०] पाचक व रुचिकर पांच वस्तुएं—यथा, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रकमूल और सोंठ। वैद्यक के अनुसार ये गुल्म और प्लीहा रोगनाशक होते हैं।

पंचकोस-सं०पु० [सं० पचकोश] १ शरीर सघठित करने वाले पांच कोश (स्तर), यथा—अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश और आनन्दमय कोश (उपनिषद् और वेदान्त)

२ पांच कोस के क्षेत्र में बसी हुई काशी।

पंचकोसी-सं०स्त्री० [स० पंचक्रोशी] १ काशी का एक नाम।

२ काशी की परिक्रमा।

३ प्रयाग की परिक्रमा।

पंचक्रम—देखो 'पंचकरम' (रू.भे)

पंचक्रत्य, पंचक्रित्य-सं०पु० [सं० पंच कृत्य] महादेव या ईश्वर के पांच प्रकार के कर्म, यथा—सृष्टि, स्थिति, ध्वंस, विधान और अनुग्रह।

पंचक्लेस-सं०पु० [सं० पचक्लेश] पांच प्रकार के क्लेश, यथा—अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश (योग शास्त्र)

पंचक्षारगण सं०पु० [सं०] पांच प्रकार के मुख्य क्षार या लवण, यथा—काचलवण, सैंधव, सामुद्र, विट और सोवर्चल (वैद्यक)

पंचगंगा-सं०स्त्री० [सं०] १ गंगा, यमुना, सरस्वती, किरणा और धूतपापा नामक पांच नदियों का समूह जिसे पंचनद भी कहते हैं।

२ काशी का वह स्थान जहां गंगा, किरणा और धूतपापा का सङ्गमस्थल था। धूतपापा और किरणा ये दोनों अब लुप्त हो गई हैं।

पंचगण-सं०पु० [सं०] पांच औषधियों का गण, यथा—विदारीगंधा, वृहती, पृश्निपर्णी, निदिग्धिका और भूकूष्मांड (वैद्यक)

पंचगव्य-सं०पु० [सं०] गाय से प्राप्त होने वाली पांच वस्तुएं जो पवित्र मानी जाती हैं यथा—दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र।

पंचगव्यघ्रत, पंचगव्यघ्रित-सं०पु० [सं० पंचगव्य घृत] अपस्मार मिरगी और उन्माद में दी जाने वाली एक आयुर्वेदिक औषधि जो पंचगव्य से बनाई जाती है।

पंचगीत-सं०पु० [सं०] श्रीमद्भागवत के दसवें स्कन्ध के पांच मुख्य प्रकरण, यथा—वेणुगीत, गोपीगीत, युगलगीत, भ्रमरगीत और महिषीगीत।

पंचगुप्त-सं०पु० [सं०] कछुआ, कच्छप।

पचगौड़-सं०पु० [सं०]—विन्ध्याचल के उत्तर में बसने वाले ब्राह्मणों के पांच भेद, यथा—सारस्वत, कान्यकुब्ज, गौड़, मैथिल और उत्कल।

पंचग्गळउ-वि० [सं० पञ्च+अग्रिलकम्] पांच अग्र है जिसके।

उ०—राधा नामिहिं तसु घररंणि करणु भरणु तसु पुत्तु सउ कूंयर पंचग्गळउ किव हरि पढिवा जाइ।—प.पं.च.

पंचग्रह-सं०पु०यो० [सं०] मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि का समूह (ज्यो०)

रू०भे०—पचग्रह।

पंचघट्टी-सं०पु० [सं० पञ्चघटिका] लगभग पांच घटी रात्रि व्यतीत होने पर सोने का समय (शेखावाटी)

पंचचकर, पंचचक्र-स०पु० [सं० पंचचक्र] पांच प्रकार के चक्र, यथा—राजचक्र, महाचक्र, देवचक्र, वीरचक्र और पशुचक्र (तंत्र)

पंचचामर-सं०पु० [सं० पंचचामर] १ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में जगण, रगण, जगण, रगण, जगण और अन्त में गुरु होता है।

पंचचूड़-सं०पु० [सं०] पांच शिखा वाला व्यक्ति।

पंचचूडा-सं०स्त्री० [सं०] एक अप्सरा (रामायण)

पचजग्य—देखो 'पंचमहाजग्य'।

पचजन-सं०पु० [सं०] १ पांच व पांच प्रकार के जनों का समूह।

२ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद।

३ पुरुष (ह.नां.)

४ मनुष्य, जीव और शरीर से सम्बन्ध रखने वाले प्राण आदि।

५ एक प्रजापति का नाम।

६ राजा सगर के पुत्र का नाम।

७ पाताल में रहने वाला एक असुर जो श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया था।

पंचजन्य-सं०पु० [सं० पांचजन्य] १ श्रीकृष्ण द्वारा बजाया जाने वाला शङ्ख जो पाताल में रहने वाले पंचजन नामक असुर की हड्डी का बना था।

रू०भे०—पंचाईण, पंचाईन, पंचायन।

पंचझारी—देखो 'पचहजारी' (रू.भे.)

पंचडोळिया-सं०पु० [सं० पच+राज० डोळिया] पांच देवताओं को सम्बोधित कर के गाए जाने वाले पांच गीत (पुष्करणा-ब्राह्मण)

पंचतंत्री-सं०स्त्री० [सं०] एक प्रकार की वीणा जिसमें पांच तार लगते हैं।

पंचतत, पंचततव, पंचतत्व-सं०पु० [सं० पंचतत्व] १ पांच प्रकार के तत्व आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी।

उ०—सावधांन गुर-ग्यांन, पाव द्रिढ सरा परट्ठै। जुग कौतग जोड़वा, पचतत पंच पइट्ठै।—जगो खिड़ियो

२ वाम मार्ग के अनुसार मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन।

३ गुरुतत्व, मंत्रतत्व, मनस्तत्व, देवतत्व और ध्यानतत्व (तंत्र)

पंचतन्मात्र-सं०पु० [सं०] पांच स्थूल महाभूतों के कारण-रूप सूक्ष्म महाभूत, यथा—शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध। ये अतींद्रिय माने गए हैं (सांख्य)।

पंचतपौ-सं०पु० [सं० पंचतपस्] पंचाग्नि तापने वाला, तपस्वी।

पंचतर, पंचतरु—देखो 'पंचदेव व्रक्ष' (रू.भे.)

पंचतव—देखो 'पंचत्व' (रू.भे.) (जैन)

पंचताळ-सं०पु० [सं० पंचताल] अष्टताल का एक भेद (संगीत)

पंचताळीस—देखो 'पैंताळीस' (रू.भे.)

पचतिक्त-स०पु० [सं०] आयुर्वेदानुसार ज्वर, कुष्ट, विसर्पादि रोगों में दी जाने वाली पांच औषधियों का समूह जो निम्न है—गिलोय, कंटकारि, सोंठ, कुट और चिरायता।

पंचतिथ, पंचतिथि-सं०स्त्री० [सं० पंचतिथि] १ कार्तिक शुक्ल एकादशी से पूर्णिमापर्यन्त पांच तिथियों का समूह।

२ वैशाख शुक्ल एकादशी से पूर्णिमापर्यंन्त पांच तिथियों का समूह।

पचतीरथ-सं०पु० [सं० पंचतीर्थं] विश्रांति, शौकर, नैमिष, प्रयाग और पुष्कर इन पंच तीर्थों के समूह का नाम।

पंचतीरथी-सं०स्त्री० [सं० पचतीर्थ+रा.प्र.ई] १ पांच (स्थापनाचार्य (अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु) की असदभूत स्थापना जो कपड़े में बंधी हुई पोटली में रहती है (जैन))

२ देखो 'पचतीरथ' (रू.भे.)

पंचत्रण-सं०पु० [स० पंचतृण] पांच तृणों का समूह, यथा—कुश, कास, शर, दर्भ और ईख।

पंचत्व-सं०पु० [सं०] १ पांच का भाव।

२ शरीर के पचभूतों (जिनसे शरीर सघठित होता है) का अलग-अलग अवस्थान, मृत्यु।

क्रि०प्र०—होणौ।

मुहा०—पंचत्व प्रापत होणौ—पंचत्व प्राप्त होना, मरना।

३ मोक्ष।

रू०भे०—पचतव।

पंचदसी-सं०स्त्री० [स० पंचदशी] १ पूर्णिमा, पूर्णमासी।

२ अमावस्या।

पंचदेव-सं०पु० [सं०] पांच प्रकार के मुख्य देवता, यथा—आदित्य, रुद्र, विष्णु, गणेश और देवी।

पचदेवव्रक्ष, पचदेवव्रख, पंचदेवव्रिक्ष, पचदेवव्रिख-सं०पु० [सं० पंचदेव-वृक्ष] पांच प्रकार के वे वृक्ष जो सुर-वृक्ष माने जाते हैं यथा—मंदार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष और हरिचंदन।

पंचद्रविड़-सं०पु० [सं०] विंध्याचल के दक्षिण में बसने वाले ब्राह्मणों के पांच भेद। यथा—महाराष्ट्र, तैलंग, कर्णाट, गुर्जर और द्रविड़।

पंचधारलपनस्त्री-सं०स्त्री० [सं० पंचधारलपनश्री] एक प्रकार की लपसी विशेष। उ०—१ रोटी बाटी, ठोठि अंगार करि वेढमी, मारवाडिनी पंचधार-लपनस्त्री, सुदलित सुललित वरनारि परोसी।
—व.स.

उ०—२ सुंहाली सांकुली सातपुडी खंडमोदक गुडमोदक दोठां दही-वडां मरकी सिहकेसर पंचधारलपनस्त्री एवं विध पक्वान्न।
—व.स.

पंचन-सं०पु०—कमल (अ.मा.)

पंचनइ—देखो 'पंचनद (रू.भे.)

उ०—पतिसाह पंचनइ लंघि पाइ, ऊतग्गिउ कोटि मरोटि आइ। सुरितांण चाचि कीयउ सहाउ, तेवाड़ि कूप भरिया तळाउ।
—रा.ज.सी.

पंचनख-सं०पु० [सं०] वह प्राणी जिसके हाथ व पैर पर पांच-पांच नाखून हों जैसे बंदर।

पचनद, पंचनदी-सं०स्त्री० [सं०] १ वह स्थान जहां पांच नदियां बहती हों।

२ पंजाब जहां रावी, सतलज, व्यास, चिनाब और झेलम ये पांच नदियां बहती हैं और सिंधु में मिलती हैं।

३ पांच नदियों का समाहार।

उ०—मीर सोराब रा मुलक सूं दिखण हैदराबाद आथमणो सिंधु री दरिया पंचनद मिळ हुवो जिकै उत्तर दाऊद पोहरा, पूरब जैसळमेर।—बां.दा.ख्यात

रू०भे०—पंचनइ।

अल्पा०—पंचनदो।

पंचनदो—देखो 'पंचनदी' (अल्पा०, रू.भे.)

पंचनाथ-सं०पु० [सं०] पांचनाथ, यथा—बदरीनाथ, द्वारकानाथ, जगन्नाथ, रंगनाथ और श्रीनाथ।

पंचनांमो-सं०पु० [सं० पंचनाम्नः] पंचों द्वारा दिए गए निर्णय का पत्र।

पंचनिंब-सं०पु० [सं०] नीम के पांच अंग, यथा—पत्ता, छाल, फूल, फल और मूल।

पंचपक्षी-सं०पु० [सं० पंचपक्षिन्] एक प्रकार का शकुन शास्त्र।

पंचपगी-सं०पु० [सं० पंच+पर्दा] एक प्रकार का अशुभ घोड़ा।

पंचपणौ-सं०पु० [सं० पंच+त्व] १ पंच का कार्य।

२ पंच का पद।

३ वाद-विवाद।

पंचपद—देखो 'नवकार'

उ०—परचक्र तिहां अतिहि स्कलइ, सत्रुवरग मोटा निरदळइ।
सैन्य सुभट लेई दवदंति, चालंतइ पंचपद समरंति।
—नळ-दवदंती रास

पचपन—देखो 'पचपन' (रू.भे.)

पंचपनमो—देखो 'पचपनमो' (रू.भे.)

पंचपरमेस्टि—देखो 'नवकार'

उ०—पंचपरमेस्टि मन सुद्ध प्रणमी करी, धरमहित आगम अरथ हीवडे धरी।—ध.व.ग्र.

पंचपातर, पंचपात्र–सं०पु० [सं० पंचपात्र] १ पूजा के पांच पात्रों का समूह। उ०—कमळा री बाप जिकै मौ'लै में रै'तो हो बो भलै मांणसां रो हो। ऊसा-रै हरख सूं हिलोळा खांवतै हिवड़ै रै अनुराग री लालाई अरुण रै दरसणां सूं बै-री आंखड़ल्यां में छळक ऊठती जणै बै मौ'लै री सांति पचपात्र आचमण्यां रै खड़कै अर भगवांन रै संकटमोचन नांव रै राग-भरियै उच्चारण रै सागै भंग हुआ करती ही।—वरसगांठ

२ पूजा के पांच पात्रों में से एक पात्र जो पांच धातु का बना चौड़े मुंह का होता है और जिससे पूजा के लिए जल भरा जाता है।

पंचपिता–सं०पु० [सं० पचपितृ] पांच प्रकार के पिता, यथा—पिता, आचार्य, श्वसुर, अन्नदाता और भय से रक्षा करने वाला।

पंचपित्त–सं०पु० [सं०] वैद्यक शास्त्रानुसार वराह, छाग, महिष, मत्स्य और मयूर का पित्ता।

पचपुसप, पंचपुसप, पंचपुस्प–स०पु० [सं० पंचपुष्प] देवताओं के प्रिय पांच फूल, यथा—चंपा, आम, शमी, कमल और कनेर।
(पौराणिक)

पचवटी—देखो 'पंचवटी' (रू.भे.)

पंचबळा–सं०स्त्री० [सं० पंचबला] वैद्यक में पांच औषधियों का समूह, यथा—बला, अतिबला, नागबला, राजबला और महाबला।

पंचबलि–सं०स्त्री० [सं०] पांच रूपों में किया जाने वाला दान या पुण्य यथा—गौ ग्रास, स्वान बलि, काक बलि, अतिथि बलि, पीपिलिका बलि।

पंचबांण–स०पु० [सं०] १ कामदेव के पांच बांण यथा—उन्मादन, तापन, शोषण, सम्मोहन तथा स्तम्भन या आकरसण, मोहण, द्रावण, उन्मादण तथा वसीकरण। (वं.भा.)

२ कामदेव के पांच पुष्प बांण यथा—अरविंद, अशोक, आम, नवमल्लिका और नीलोत्पल।

३ कामदेव। उ०—१ आगळि रितुराय मंडियौ अवसर, मंडप वन नीझरण म्रिदंग पंचबांण नायक गायक पिक, वसुह रंग मेळगर विहंग।—वेलि.

उ०—२ अन्य जिण्या! इम सूं लवइ? हूं किहां ताहरी मात?। पंचबांण-पीड़ा घणी, कइ वरि कइ करि घात।—मा.कां.प्र.

रू०भे०—पंचवांण, पांचबांण।

पंचभद्र–सं०पु० [सं०] १ वह घोड़ा जिसकी पीठ, छाती, मुंह और दोनों पार्श्व श्वेत रंग के हों (डिं.को.)

२ एक जाति विशेष का घोड़ा (शा.हो.)

३ पंचकल्याण घोड़ा।

वि०वि०—देखो 'पंचकल्यांण'।

४ गिलोय, पित्तपाड़ा, मोथा, चिरायता और सोंठयुक्त एक औषधिगण।

पंचभरतारी–सं०स्त्री० [सं० पंचभर्तृका] द्रौपदी।

पचभीख, पंचभीखण, पचभीखम—देखो 'भीखमपंचक' (रू.भे.)

पंचभूत–सं०पु० [सं०] पंचतत्व।

पंचभूतक, पंचभूतिक–वि० [सं० पंचभौतिक] पंचभौतिक।

रू०भे०—पांचभूतिक।

पंचमडळी–स०स्त्री० [सं० पंच+मंडल रा.प्र.ई.] पंचायत।

पंचम–सं०पु० [सं०] १ संगीत के सात स्वरों में पांचवां स्वर।

उ०—स्वर वाजंत्रूं का भेद कहि दिखाय सो कैसे खडज रखव गधार मधम पंचम धईवंत निखाख सप्तत सुर के अलाप करि कोकिलूं की बांणी सैं बोलते है।—सू.प्र.

२ राग विशेष (ध.व.ग्रं.)

उ०—वीणा डफ महुयरि वंस बजाए, रोरी करि मुख पंचम राग।
तरुणी तरुण विरहि-जण दुतरणि, फागुण घरि घरि खेलै फाग।
—वेलि.

वि० (स्त्री० पंचमी) पांचवां। उ०—१ भूपति पूंजतणै दुति अदभुत। सजण विनोद नांम पंचम सुत।—सू.प्र.

उ०—२ पंचमै प्रहरै दीह रै, सायधण दिये बुहारि। रिमझिम रिमझिम हुइ रही, हुइ घण श्री जोहारि।—ढो मा.

उ०—३ ससि सुत भवन पंचमै सोहै, महा सुबुध लख जगत विमोहै।
मंडळ धर मन में ग्रह मंडत, खाग जैत नित भाग अखंडत।
—रा.रू.

रू०भे०—पंचहम।

अल्पा०—पंचमौ।

पंचमकार–सं०स्त्री० [सं०] मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन।
(वाममार्ग)

पचमगति–सं०स्त्री० [सं०] मोक्ष। उ०—मन विकसै तिम विकसता, पुहप अनेक प्रकार। प्रभु पूजाए पंचमी, पंचमगति दातार।
—ध व ग्रं.

पंचमगुण–सं०पु० [सं०] मोक्ष। उ०—करम आठ मेटै कियौ, पचमगुण परवेस। थिर सिद्धाचळ थापना, आदीस्वर आदेस।—बां दा.

पंचमराग—देखो 'पंचम' (२)

उ०—फागुण-केरां फणगटां, फिरि फिरि गाई फाग। चंग वजावइ चंग परि, आलवइ पचम राग।—मा कां प्र.

पचमहायज्ञ–सं०पु० [सं० पंचमहायज्ञ] वे पांच कृत्य जिनका गृहस्थों

द्वारा नित्य करना आवश्यक बताया गया है—(स्मृतियां और गृह-सूत्रों के अनुसार)

यथा—१ अध्यापन (ब्रह्मयज्ञ)

२ पितृतर्पण (पितृयज्ञ)।

३ होम (देवयज्ञ)

४ बलिवैश्वदेव (भूतयज्ञ)

और (५) अतिथिपूजन (नृयज्ञ)

पंचमहापातक-सं०पु० [सं०] पांच प्रकार के महापाप—ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरु की स्त्री के साथ व्यभिचार तथा इन चार प्रकार के महापाप करने वाले का संसर्ग।

पंचमहाव्याधि-सं०स्त्री० [सं०] पांच प्रकार के महारोग—अर्श, यक्ष्मा, कुष्ठ, प्रमेह और उन्माद।

पंचमहाव्रत-सं०पु० [सं०] योग शास्त्र के अनुसार पांच आचरण जो जैन यतियों के लिए भी जैन शास्त्रों के अनुसार ग्रहण करना आवश्यक बतलाया गया है। वे निम्न हैं—अहिंसा, सूनृता, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

उ०—गुलाब रिसि बत्तीस सूत्र खांधै लियां फिरतो पिण सरधा खोटी। वळी पंचमहाव्रत नां द्रव्य क्षेत्र काळ भाव पूछ्या।
—भि.द्र.

रू०भे०—पांच महाव्रत।

पंचमहासवद, पंचमहासब्द-सं०पु० [सं० पंचमहाशब्द] १ पांच प्रकार के वाद्यों का समूह, यथा—शृंग, तम्मट, शंख, भेरी और जय-घंटा।

२ उक्त वाद्यों से उत्पन्न ध्वनि (मंगलसूचक)

पंचमाथ-सं०पु० [सं० पञ्च+मस्तक] महादेव, शिव।

उ०—गग के सुथांन नख करत प्रकास भान, रहत सदीव उर मधि पंचमाथ के।—र.ज.प्र.

पंचमी-सं०स्त्री० [सं०] १ चांद्रमास के किसी पक्ष की पांचवीं तिथि।

रू०भे०—पांचम, पांचिम, पांचु, पांचू, पांचै।

२ द्रौपदी।

३ अपादानकारक (व्याकरण)

४ मोक्ष, मुक्ति।

ज्यूं— गत पंचमी गया।

५ शौचादि से निवृत्त होने की क्रिया (जैन)

वि०स्त्री०—जिसका स्थान क्रमशः चार के बाद पड़े, पांचवीं।

उ०—१ संसार सुपहु करता ग्रिह संग्रिह, गिणि तिणि हीज पंचमी गाळि। मदिरा रीस हिंसा निंदा मति, च्यारे करि हिंसा निंदा मति, च्यारे करि मूं किया चंडाळि।— वेलि.

उ०—२ मुणीजै तुही पंचमी स्कंधमाता। खटी मात कात्यायणी तू विख्याता। रचै सातमो रूप तू काळरात्री। दिगी गोरि तू निध्यमी सिद्धदात्री।—मे.म.

रू०भे०—पांचमि, पांचमी, पांचवीं।

पंचमुख-सं०पु० [सं०] १ सिंह (ह.नां., ना.डि.को.)

उ०—१ जुहं जरद नह साथी जोवै, परदळ दीठां पंचमुख। वाघ न थयूं परगह बोलावै, रावत वळियो तेण रुख।
—राव कांधळजी रो गीत

उ०—२ वदळ गया भड़ देख मुरधर थंभण खाग बळ, भूप भो जोधपुर खळां भांनो। दुरद 'जगता' अगै पंचमुख डांखिओ, मेरगर डिगे नह डिगे 'मांनो'।—रतनजी बोगसो

२ नृसिंहावतार। उ०—प्रांणेस्वर जो पंचमुख, भणे पंचमुख वाह। पूज जिकां स्री पावही, दैणी असुरां दाह।—वां.दा.

३ शिव, महादेव। उ०—प्रांणेस्वर जो पंचमुख, भणे पंचमुख वाह। पूज जिकां स्री पावही, दैणी असुरां दाह।—वां.दा.

४ ब्रह्मा।

रू०भे०—पांचमुख।

पंचमुखो-वि० [सं० पंचमुखिन्] पांच मुख वाला।

सं०पु०—एक प्रकार का अशुभ रंग का घोड़ा।

पंचमुदरा—देखो 'पंचमुद्रा' (रू.भे.)

उ०—किण रो गुरुजी मैं तिलक बणाऊं, किण री माळा फेरूं रे लोय। पंचमुदरा रो चेला तिलक बणावो, निरगुण माळा फेरो रे लोय।—स्री हरिरांमजी महाराज

पंचमुद्र-सं०पु० [सं०] महादेव, शिव (नां.मा.)

पंचमुद्रा-सं०स्त्री० [सं०] १ पूजन-विधि में पांच प्रकार की मुद्रायें, यथा—आवाहनी, स्थापनी, सन्निधापनी, सम्बोधिनी और सम्मुखी करणी।

२ हठयोग में विशेष अंग-विन्यासा ये पांच मुद्रायें निम्नलिखित होती हैं—खेचरी, भूचरी, चाचरी, गोचरी और उनमनी।

रू०भे०—पंचमुदरा।

पंचमूळ-सं०पु० [सं० पंचमूल] औषधियों की जड़ लेकर बनाई जाने वाली एक प्रकार की पाचक-औषध (वैद्यक)

पंचमूळी-सं०स्त्री० [सं० पंचमूली] स्वल्प पंचमूल।

पंचमेर, पंचमेरु-सं०पु० [सं० पंच+मेरु] वैताढ्य-गिरि, हिमाचल, निषध, नीलवंत और चित्रसेन ये पांच प्रसिद्ध पर्वत।

पंचमेळ, पंचमेळो-वि० [सं० पंच+मिलन्] जिसमें पांच प्रकार की वस्तुयें मिली हुई हों।

उ०—मोठा मोठा काचरा, गवारफळी कचनार। मांठफळी चूंळा-फळी, मांय मतीरो मिळाय। यों पंचमेळा रो साग देवतड़ां नै नहीं मिळै ओ राज।—लो.गी.

पंचमेवो-सं०पु०यौ० [सं० पंच+फा० मेवा] बादाम, पिस्ता, दाख, छुहारा और नारियल की गिरी (इन पांचों का समूह)

पंचमेस-सं०पु० [सं० पंचमेश] जन्म-कुंडली में पांचवें घर का स्वामी। (फलित ज्योतिष)

पंचमौ—देखो 'पंचम' (अल्पा., रू०भे०)
(स्त्री० पंचमी)

पंचरंग–वि० [सं०] पांच रंगों वाला, पांच रंग का।

पंचरतन, पंचरत्न–सं०पु० [सं०] १ पांच प्रकार के रत्न यथा—माणिक्य, पन्ना (मरकत), पुष्पराज, हीरा व नीलम। मतान्तर—सोना, चाँदी, मोती, लाजावर्त व मूंगा। मतान्तर—सुवर्ण, हीरा, नीलम, पद्मराग व मोती। मतान्तर—नीलम, हीरा, पद्मराग, मोती व मूंगा।
२ श्रीअच्युत विरचित एक स्तोत्र का नाम।
३ अनुस्मृति, गजेन्द्रमोक्ष, गीता, भीष्मस्तव और विष्णुसहस्र-नाम—इन पांच ग्रंथों के संग्रह का नाम।
उ०—पर निंदा आठूं पहर, चाटै विख री चाठ। क्यों नंह तू प्रांणी करै, पंचरतन रौ पाठ।—बां.द.

पंचराइओ–सं०पु० [देशज] वस्त्र विशेष (व.स.)

पंचरात्र–सं०पु० [सं०] १ पांच दिन में होने वाला एक प्रकार का यज्ञ।
२ पांच रातों का समूह।

पंचरासिक–सं०पु० [सं० पचराशिक] गणित में एक प्रकार का हिसाब।

पंचरूप, पंचरूपी–सं०पु०यौ० [सं०?] सुमेरु पर्वत
(ह.नां.मा., अ.मा., नां.मा.)
उ०—१ कमधज्जं उदोतं कवट्टं, किरि कांठळ भांणं प्रगट्टं। दोळा दळ दिल्ली वाळा, पंचरूप किरि प्रव्वत माळा।—ग.रू.बं.
उ०—२ आवध्ध डाबि छतीस अंग। नोमजे भुज अडिया निहंग। गज केसर जांमळि गज विभाड़। पंचरूप जांमळि जांणै पहाड़।
—ग.रू.बं.

पंचळ–वि०—पांचाल या पंजाब देश का।
सं०पु०—द्रुपद नरेश का पुत्र धृष्टद्युम्न।
उ०—सुण भरड़ा भर व्है सबळ, रचणी छळ सूं राड़। मार्‌यौ द्रोणी रात रौ, पंचळ नै पछाड़।—पा.प्र.
वि०वि०—इसने महाभारत युद्ध में द्रोणाचार्य का वध किया था। इसका प्रतिशोध द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा (द्रोणी) ने इसे रात्रि में सोते हुए को मार कर लिया।

पंचलक्षण–सं०पु० [सं०] पुराण के पांच लक्षण या चिन्ह यथा—सृष्टि की उत्पत्ति, प्रलय, देवताओं की उत्पत्ति व वंशपरम्परा, मनवंतर मनु के वंश का विस्तार।

पंचलड़ो–वि० [सं० पच] (स्त्री० पंचलड़ी) १ पांच लड़ का।
२ पांच तह का।
रू०भे०—पांचलड़ो।
सं०पु०—गले में पहनने की पांच लड़ वाली माला या हार।

पंचलोह–सं०पु० [सं० पंचलोह] १ पांच प्रकार की धातुऐं—सोना, चाँदी, ताँबा, सीसा और रांगा। २ पांच प्रकार का लोहा— वज्र-लोह, कांतलोह, ३ क्रौंचलोह, पिंडलोह और कालिंगलोह।

पंचवटी, पंचवट्टी–सं०स्त्री० [सं० पंचवटी] दण्डकारण्य में गोदावरी के तट पर नासिक के पास का एक स्थान जहां पर श्री रामचन्द्र भगवान वनवास काल में रहे थे। यहीं से सीता हरण हुआ था।
(रामायण)
उ०—वनां दंडकारा विचै पंचवट्टी। जठै धार गोदावरी आय जट्टी।
—सू.प्र.
रू०भे०—पंचवटी।

पंचवदन–सं०पु० [सं०] १ शिव।
२ ब्रह्मा।
३ प्रत्येक चरण में प्रथम सात टगण फिर त्रिकल और अन्त में रगण कुल ४७ मात्रा का मात्रिक छंद (र.ज.प्र.)

पंचवय–सं०पु० [सं० पंचव्रत] पांच महाव्रत (जैन)

पंचवरग–सं०पु० [सं० पंचवर्ग] पांच वस्तुओं का समूह।

पंचवरण, पंचवरन–सं०पु० [सं० पंचवर्ण] १ प्रणव के पांच वर्ण—अ, उ, म, नाद और बिन्दु।
२ वस्त्र विशेष (व.स.)
३ वह घोड़ा जिसके शरीर पर पांच रंग हों।
उ०—राजलोक जोया कुंवरी, जिहां कान्हड नी अंतेउरी। कूंयरि करइ केतलउं वखांण, जोया पंचवरण केकांण।—कां.दे.प्र.
वि०—पांच रंग का। उ०—सालि प्रमुख पंचवरण तणा, घण ढोवै धांन प्रधांन। सिद्ध चक्र नी तिहां करे थापना, धारी निरमळ ध्यांन।
—स्रीपाळ रास

पंचवांण—देखो 'पंचबांण' (रू.भे.)

पंचवांणी–सं०स्त्री० [सं० पञ्च+वाणि] कबीर, दादू, हरिदास, राम-दास और दयालदास के उपदेशों का संग्रह।

पंचवाद्य–सं०पु० [स०] तंत्र, आनद्ध, सुशिर, घन और वीरों का गर्जन।
रू०भे०—पंचइवाद्य।

पंचवीस—देखो 'पचीस' (रू.भे.) (उ.र.)

पंचवौ—देखो 'पंचम' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—पंचवौ तो फेरौ वाई, लियौ राज कंवार। अन धन दीन्हा वाई नैं मोकळा।—लो.गी.

पंचसंधि–सं०स्त्री० [सं०] १ संधि के पांच भेद—स्वरसंधि, व्यञ्जन-सधि, विसर्गसधि, स्वादिसंधि और प्रकृति भाव।
२ पांच की संख्या।

पंचसद—देखो 'पंचसब्द' (रू.भे.)
उ०—धुरि देवळ धरमसाळि, पंचसद सुणिजै प्राभा। झालर रा झणकार, देवग्रिह दीपक झाभा।—ध.व.ग्रं.

पंचसदी—देखो 'पंचसद्दी' (रू.भे.)

पंचसद्द—देखो 'पंचसब्द' (रू.भे.)

पंचसदो–सं०पु० [सं० पंच+फा० सदी=१००] पांच सौ ऊंटों का स्वामी। उ०—१ चढ़े पंच हज्जारिया पंचसद्दो। चढ़े मल्ल पायक्क बगसी अहद्दी।—गु.रू.बं.

उ०—२ हजारी सदी पंचसद्दी बिसद्दी । जगज्जेठ जोधा मिळे नांम-जद्दी ।—वचनिका

पंचसबद, पंचसबदउ, पंचसबद्द, पंचसब्द-सं०पु० [सं० पचशब्द] १ पांच प्रकार के वाद्य—तंत्री, ताल, झांझ, नगारा और तुरही ।

मतान्तर के अनुसार—तंत्री, वीणा, किन्नरी, तंबूरा और निशान (नगारा) (मंगलसूचक)

उ०—१ नीसांण रोड़ि दमांम नोवति, भेरी पंचसबद्द ए । लख थाट मोगर लीण लसकर, गिगन धूळ गरद्द ए ।—गु.रू.बं.

उ०—२ आया सूर मिळे महोछव ऊपर, पंचसबदउ वाजियउ पडूर । देव तणउ मुख झांखउ दीसइ, सहस गुणउ ऊगउ जगसूर ।

—महादेव पारवती री वेलि

उ०—३ तठा उपरांति करि नै राजांन सिलांमति अनेक राग-रंग वधाई बांटीजै छै । राय अंगण धोळहरे गेहणी घणां मंगळाचार गीत नाद खंभाइची गावै छै । छत्रीस वाजा पंचसबदा वाजै छै । तांहरा नांम तती १ वीणा २ किन्नरी ३ तंबूरो ४ नीसांण ५ ऐ तो पांच सबदा आगै छत्रीस वाजां रा नांम कहै छै ।—रा.सा.सं.

उ०—४ जय-जयकार उचरइ ए, ते नगर मझारि । पंचसबद वाजित्र वाजइ, गाइ गीत नारि ।—नळ दवदंती रास

२ पांच वाद्यों की मंगल-सूचक ध्वनि ।

३ पांच प्रकार की ध्वनि, यथा—वेदध्वनि. वंदीध्वनि, जयध्वनि, शंखध्वनि और निशानध्वनि ।

व्याकरण के अनुसार—सूत्र, वार्तिक, भाष्य, कोष और महाकवियों के प्रयोग ।

रू०भे०—पंचसद, पचसद्द' पर्यंचसबद ।

पंच-समंदोय-सं०पु० [देशज] एक प्रकार का घोड़ा ।

पंचसर-सं०पु० [सं० पंचशर] १ कामदेव (ह.नां.)

उ०—दरपक कंदरप कांम कुसुमायुध, संवरारि रति-पति तनुसार । समर मनोज अनंग पंचसर, मनमथ मदन मकरध्वज मार ।

—वेलि.

२ कामदेव के पांच बाण ।

वि०वि०—देखो 'पंचबांण' ।

पंजसरधारी-सं०पु० [सं० पञ्च+शर+धारिन्] कामदेव, मनोज (डि.को.)

पंचसाख-सं०पु० [सं० पंचशाख] हाथ, हस्त, कर (ह.नां.मा)

रू०भे०—पांचूंसाख ।

पंचसिख-सं०पु० [सं० पंचशिख] सिंह (ह.नां. अ.मा.)

पचसिद्धोसद्धि-सं०स्त्री० [सं० पचसिद्धोपधि] वैद्यक में पांच सिद्धोपधियां यथा—सालिब मिस्री, वराहीकंद, रोदंती, सर्पाक्षी और सरहटी ।

पंचसूना-सं०स्त्री० [सं० पञ्चसूनः] वे पांच प्रकार के काम जिनके करने से जीव हिंसा होती है—चूल्हा जलाना, आटा आदि पीसना, झाड़ू देना, कूटना और पानी का घड़ा रखना (जैन)

पंचसो-सं०पु० [सं० पंच+शत्] देशी कपड़ा बुनने वालों का कपड़े की बुनाई में प्रयोग लिया जाने का एक औजार ।

पंचस्नेह-सं०पु० [सं०] पांच प्रकार के स्निग्ध पदार्थ—घी, तेल, चरबी, मज्जा और मोम ।

पंचस्वेद-सं०पु० [सं०] पांच स्वेद यथा—लोष्ट्र स्वेद, वालुका स्वेद, वाष्प स्वेद, घट स्वेद और ज्वाला स्वेद (वैद्यक)

पंचहजारी, पंचहज्जारी-सं०पु० [फा० पंजहजारी] १ पांच हजार की सेना का अधिपति । उ०—१ इण परवांणी साह उचारै । सुणतां सितर बहोतर सारै । इण थी जो राखै भड़ यारी । हुवै कमंध सुज पंचहजारी ।—रा.रू.

उ०—२ चढ़ै सब्बदावेष लूघा सिधांणं । चढ़ै तूणमै घातिआ भूळ वांणं । चढ़ै पंचहज्जारियां पंचसद्दी । चढ़ै मल्ल पायक्क वगसी अहद्दी ।

—गु.रू.बं.

२ मुगल साम्राज्य में बड़े बड़े लोगों को मिलने वाली एक पदवी ।

उ०—रांणी अमरसिंह नै जहांगीर पातसाह रै वात हुई । रांणो अमरो साहिजादै खुरम सूं घोघूंदै में मिळियो, तद रांणा नुं मेवाड़ ऊपर इतरी ठौड़ जागीर में दे नै पंचहजारी असवार रो मुनसब कीयो । असवार हजार १००० चाकरी थापी ।—नैणसी

उ०—२ तद बुरहांनपुर रो सूबो राव रतन नूं भोळायो । पंचहजारी मनसब दियो । तद सूं ठाकुराई बूंदी री वधी ।

—बां.दा.ख्यात

रू०भे०—पंचझारी, पंचहजारी, पांचहजारी ।

पंचहम—देखो 'पंचम' (रू.भे.)

उ०—खड़ग रिखभ गंधार, मद्धि पंचहम निखादह । सरिस कंठ सुर सपत, गीत संगीत अलापह ।—गु रू.बं.

पंचहूतासण-सं०पु० [सं० पचहुताशन] तपस्या की पांच अग्नियां ।

वि०वि०—तपस्वी अपने इर्द गिर्द चार दिशाओं में अग्नि जला देता है और पांचवीं अग्नि सूर्य की होती है ।

पंचांइण—देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

उ०—पंचांइण नइं पाखरयउ, मइगळ नइ मद कीध । मोहन-वेली मारुई, कंत पेम रस पीध ।—ढो.मा.

पंचांग-सं०पु० [सं० पञ्चांग] १ पांच अंग या पांच अंगों से युक्त वस्तु ।

२ सूर्य चन्द्र की स्थिति से बनने वाले वार, तिथि, नक्षत्र, योग और करणों के ब्योरेवार विवरण का पत्रक ।

(ज्योतिष)

३ पुरश्चरण में किए जाने वाले पांच कर्म—जप, होम, तर्पण, अभिषेक और विप्रभोजन ।

४ तांत्रिक उपासना में किसी इष्टदेव का कवच, स्तोत्र, पद्धति, पटल और सहस्रनाम ।

५ सहाय, साधन, उपाय, देश-काल-भेद और विपद-प्रतिकार ।

(राजनीति शास्त्र)

६ वृक्ष के पांच अंग—जड़, छाल, फल, पत्ती और फूल। (वैद्यक)

७ कच्छप।

८ देखो 'पंचकल्याण'

पंचांगनि, पंचांगनी, पंचांगि—देखो 'पचाग्नि' (रू.भे.)

उ०—सीआळइ जळ-मांहि सरि, उन्हाळइ पंचांगि। वरसाळइ वग-ढइ वसइ, कांमकंदळा-काजि।—मा.कां.प्र.

पंचांण—देखो 'पंचानन' (रू.भे, ना.डि.को.)

उ०—बाई आवज्यो सात ही बहनां, पाखरे पंचांण। चूकजो मती वड चारण, आज रो अवसांण।—हटूजी आढ़ो

पंचांणु, पंचांणू, पंचांणू—देखो 'पचांणु' (रू.भे.)

उ०—बाजा सहज अड़ताळीस बाजै, फरहता नेजा घरीयां। पायक कोड़ि पंचांणू आगै, नौबति बाजै घूघरियां।—वि.कु.

पंचांणूक—देखो 'पचांणूक' (रू.भे.)

पंचांणूमौं, पंचांणूवौं, पंचानमौं, पंचानवौं—देखो 'पचांणूमौ' (रू.भे.)

पंचायण, पंचाइण—देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

पंचा-अगनि—देखो 'पंचाग्नि' (रू.भे)

उ०—कांई तपसी तप करै, कांई पंचा-अगनि साझै।—गु.रू.बं.

पंचाइत—देखो 'पंचायत' (रू भे.)

पंचाइन—देखो 'पंचानन' (रू.भे.)(ह.नां.मा.)

पंचाईण, पंचाईन—१ देखो 'पंचजन्य' (रू भे.)

उ०—ओढण बाहण माथा भीडया, अंगइं आयुध झाल्या। पंचाईण पूरघउ परमेस्वर, चौपट मल चढ़ि चाल्या।—रुकमणी-मंगळ

२ देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

पंचाकिल्यांण—देखो 'पंच-कल्यांण' (रू.भे)

पंचाक्षर—वि० [सं० पंच+अक्षर] जिसमें पांच अक्षर हों, पांच अक्षर का।

सं०पु०—१ शिव का एक मंत्र जिसमें पांच अक्षर होते हैं, यथा—'ओ३म नमः शिवाय।'

पंचाक्षरी—सं०पु० [सं० पंच+अक्षर+रा० प्र०ई] १ शिव के पचाक्षर मंत्र का जाप करने वाला।

उ०—के गणीया के गारुडी, पचाक्षरी प्रमांण। को आराघइ देवता, जोसी ज़े जे जाण।—मा.कां.प्र.

२ पंचाक्षरी मंत्र।

पंचागनि, पंचागनी, पंचाग्नि—सं०स्त्री० [सं० पंचाग्नि] १ तपस्या के समय तपस्वी के चारों ओर जलाई जाने वाली चार धूणियों की अग्नि और पांचवां सूर्य का ताप।

उ०—गोदड़, कांनफाड़, जोगी, जंगम, सोफी, संन्यासी, अवधूत, पंचागनि रा झूलणहार अलमसत-फकीर जिकै संसार नूं भागा थका फिरै।—रा.सा.सं.

२ चीता, चिचड़ी, भिलावा, गधक और मदार नामक औषधियां जो बहुत उष्ण मानी जाती हैं (वैद्यक)।

वि०—१ पंचाग्नि तापने वाला।

२ पांच की संख्या✽ (डि.को.)

रू०भे०—पंचांगनि पंचांगनी, पंचांगि, पंचा-अगनि।

पंचाचार—देखो 'पंच आचार' (रू.भे.)

उ०—आचारिज पय युग नमूं, पाळै पंचाचार। गुण छत्रीस विराजता, आगम अरथ भंडार।—स्रीपाळ रास

पंचाणण, पंचाणणु—देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

उ०—१ तरण राथ थिकत घण वहै खागां अतर, अडर कर कर मरै वरण अवरी। पड़ै धड़ गजाणण कहै इम पंचाणण, गजाणण कठै रिण सोध गवरी।—पीथो सांदू

उ०—२ अमरु त जिणवरु गिर त मेरु निसियरु तद सासणु, तरु त अमरतरु धन त धनु महता पंचाणणु।—अभयतिक यती

पंचातप—सं०पु० [सं० पंच-आतप] ग्रीष्म ऋतु की धूप में चारों ओर अग्नि जला कर किया जाने वाला तप।

वि०वि०—देखो 'पंचाग्नि'।

पंचात्मा—सं०पु० [सं०] पंचप्राण।

पंचाद—सं०स्त्री० [देशज] पश्चिम और वायव्य के मध्य की दिशा जिस ओर पुष्य और विशाखा नक्षत्र अस्त होते हैं।

पंचादी—वि० [देश०] 'पंचाद' दिशा का।

उ०—पौं पंचादी अर सांझ निवासी, सो नर क्यूं कर फिरै उदासी।
—अज्ञात

वि०वि०—यात्रा के लिए प्रातःकाल रवाना होने पर यदि पंचाद दिशा में तीतर बोले तो शुभ माना जाता है।

पंचावौ—सं०पु०—प्रथम और तृतीय चरण में बारह बारह मात्रायें तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में ग्यारह ग्यारह मात्राओं का मात्रिक छंद विशेष।

पचानन—वि० [सं०] १ पांच मुंह वाला, पंचमुखी।

२ वीर, बहादुर।

सं०पु०—१ शिव, महादेव (डि.को.)

२ सिंह (अ.मा.)

३ स्वर-साधन की एक प्रणाली (संगीत)

रू०भे०—पचांण, पंचांयण, पंचाइण, पंचाइन, पंचाईण, पंचाईन, पंचाणण, पंचाणणु, पंचायण, पंचायन, पंचाहण, पंच्चांण, पांचायण।

अल्पा०—पचायणौ।

पचाननी—सं०स्त्री० [सं०] १ शिव की पत्नी।

२ दुर्गा।

पंचमरा—सं०स्त्री० [सं०] दुर्वा, विजया, विल्वपत्र, निगुंडी और काली तुलसी इन पांच का समूह (वैद्यक)

पंचाम्रत, पंचाम्रित—स०पु० [सं० पंचामृत] देवता के स्नान कराने या

चढ़ाने आदि के काम आने वाला एक स्वादिष्ट पेय जो पांच चीजों के योग से बनाया जाता है यथा—दूध, दही, घी, शक्कर और मधु ।

उ०—१ एक सीह नइ पाखरघउ, सूर सिहाइति आवसरघ, पंचाम्रित अमी परगरघउ ।—अ-वचनिका

उ०—२ पंचाम्रित पखाळ करि, पूजा सारी सार । रुद्रजाप रूडइ करिउ, संख्या सहस इग्यार ।—मा.कां.प्र.

पंचाम्ल-सं०पु० [सं०] पांच अम्ल या खट्टे पदार्थ—अमलवेद, इमली, जंभीरीनींबू, कागजी नींबू और बिजौरा नीबू ।

मतांतर से—बेर, अनार, विषांबलि (चूका) अमलवेद और बिजौरा (वैद्यक)

पंचायण—देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

उ०—१ ढेचायण पांचू खेत ढहंता वरी जो परी, कळू चंदनांमो ज्यां घरीजो जेण क्रीत । आठ दूणा वरसतां बीत रैण आंटै । राजपूतां छाडांणो करीजो ऐण रीत ।

—कावां रा भोमिया सींवल राठौड़ां री गीत

उ०—२ उलटो काय न मार ही, पंचायण मैमंत । 'कड़ तळ' दळां उपाड़ि करि, कड़काय चाळो कंत ।—हा.झा.

उ०—३ मिथ्या भ्रम रूपक द्विरद, तिहां पंचायण जेह । चिदानंद चिद्रूप सुं, निस-दिन अधिक सनेह ।—वि.कु.

उ०—४ राठोड़ सूरो खींवो, कांधळजी रा बेटा मोहिलां रा दोहिता सो वडा सूर, धीर-वीर राजपूत, चोसठ-आखड़ी-निवाहणहार खाग-त्याग पूरा, काछ-बाच निस्कळंक, सरणाई-साधार, पर-भोम पंचायण, पार की छटी जागै, इण भांत रा दातार जूंझार ।

—सूरे खीवे कांधळोत री वात

पंचायणो—देखो 'पंचानन' (अल्पा., रू.भे.)

पंचायत-सं०स्त्री० [सं०] १ विवाद, झगड़े या किसी अन्य मामले पर विचार करने वाले अधिकारियों या चुने हुए व्यक्तियों का समूह ।

२ पंचों की बैठक या सभा ।

३ कई लोगों की एक साथ बैठ कर की जाने वाली बकवाद ।

रू०भे०—पंचाइत, पंचायती ।

अल्पा०—पंचायतड़ो, पंचायतडी ।

पंचायतड़ी, पंचायतडी—देखो 'पंचायत' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—ढाळ ढोलिया लोग, ठोड़ इण ठंडी छ्या । उसणकाळ रौ ओग, गिणै ना गांवां जाया । पंचायतडी जोड़, जुड़े सै आयण तांई । नीम निरातप व्रिक्ष, संतोखै ऊपर सांई ।—दसदेव

पंचायतन-सं०पु० [सं०] पांच देवताओं की मूर्तियों का समूह, यथा—शिव, विष्णु, सूर्य, गणेश और देवी ।

पंचायती-वि —१ पंचायत का, पंचायत संबंधी ।

२ देखो 'पचायत' (रू.भे.)

उ०—कहियो वारठ 'केहरी' विध रचतां वरियांम । पाऊं बोल पंचायती, हूं लाऊं संगरांम ।—रा.रू.

पंचायन—१ देखो 'पंचजन्य' (रू.भे.)

उ०—एक दिवस स्री नेमजी रे, आया आयुध साळी पंचायन संख पूरियो रे, चाढयो धनुस कराळो ।—जयवांणी

२ देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

पंचाळ-सं०पु० सं० पंचाल] हिमालय और चंबल के बीच गंगा नदी के दोनो ओर के एक प्रदेश का प्राचीन नाम । इसकी सीमा विभिन्न कालों में भिन्न भिन्न रही है । गंगा के दोनों ओर के प्रदेशों को उत्तर-पंचाल व दक्षिण-पंचाल कहते थे । यह प्रदेश देव-पंचाल (सौराष्ट्र) से भिन्न था ।

१ उत्तर-पंचाल की राजधानी अहिच्छत्रपुर और दक्षिण की कंपिल लिखी है । पांडव काल में राजा द्रुपद से द्रोणाचार्य ने उत्तर-पचाल का प्रदेश छीन लिया था । द्रौपदी यहीं के राजा की राजकुमारी थी इसीलिए पांचाली कहलाई ।

२ गुजरात-काठियावाड़ का प्राचीन नाम जहां पर जैनियों का प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान भद्रेसर नामक ग्राम है, सौराष्ट्र देश ।

उ०—१ जोअण पंचसइ छावीस छकला, सहस छतीस देश ऊनळा पंचाळ देस भद्रिसर गांव, वावड़ी कूआ आरांम ।

उ०—२ पचासई छावीस जोअणै, छकला ऊपरि आंण । पंचाळ देस तट सोहइ, भद्रेसर ग्राम ।—झगडू शाह री रास

उ०—३ जिण 'झालै' वळ जोर जंग आहणि जाडेचां । पुहवि कछ-पंचाळ गजि लीधो पटुपेचां ।—वं भा.

वि०वि०—पुराणों के अनुसार महाराज हर्यस्व अपने भाई से लड़ कर अपनी ससुराल मधुपुरी चले गए और वहा अपने ससुर मधु की सहायता से उन्होंने अयोध्या के पश्चिम प्रदेश को अधिकृत कर लिया । इस पर अयोध्या के राजा ने उक्त प्रदेश पर आक्रमण कर दिया । जब इसकी सूचना इन्हें मिली तब उन्होंने अपने पांच पुत्रों (मुद्गल सृंजय, वृहदिषु, प्रवीर और कांपल्य) की ओर देख कर कहा कि ये पांचों हमारे राज्य की रक्षा के लिए अलम् हैं । तभी से उनके देश का नाम (पंच+अलम्) पचालम् पड़ा । चारण जाति भी प्राचीन काल में इसी सौराष्ट्र देश में निवास करती थी अतः चारण कुलो-त्पन्न देवियों को भी पंचाली पांचाली कहने की प्रसिद्धि इसी देश के कारण हुई ।

पंचाळि, पंचाळी-वि० [सं० पांचाली] पंचाल देशोत्पन्न, पंचाल देश की ।

सं०स्त्री०—१ चारण कुलोत्पन्न आवड़ देवी, वरवड़ी, राजबाई व सैणी के लिए राजस्थानी में प्रयोग किया जाने वाला शब्द ।

उ०—सांभळ वाहर साद संचाली ताळ मिळै मुझ हेकण ताळो । पीथल वाहर काछ-पंचाळी । धाइयै 'राजल' (चारण) धावल-वाली

—प्रथ्वीराज राठौड़

२ देखो 'पांचाली' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—१ एक दिवस वरण जोयती भोळाटी पंचाळी। जोई-जोई ऊसना पंडव वणि विकराळि।—पं.पं.च

उ०—२ सायर जळ कपिकेत सर, पंचाळी चय चीर। यां सूं मोजां आपरी, बधती 'जेहल' बीर।—बां.दा.

पंचावन, पंचावनइ, पंचावनि—देखो 'पचपन' (रू.भे.) (उ.र.)

पंचावनौ—देखो 'पचपनौ' (रू.भे.)

उ०—१ संवत सोळ पंचावनइ, फागुण सुदि रविवार। प्रगट थई प्रतिमा घणी, सेत्रावा सिणगार।—स.कु.

उ०—२ आयौ जाळंधर 'अजो', सुख ऊपनौ सरस्स। सुज तिण ऊपर संपनो, पंचावनौ वरस्स।—रा.रू.

पंचास—देखो 'पचास' (रू भे.)

उ०—पंचास कोस गढ़ पौळि पगार।—रांमरासौ

पंचासम—देखो 'पचासमौ, पचासवौं' (रू.भे.)

उ०—तिणि तप गणि गुणवंत्रि पाटि, 'देवसुंदर' सुखकारी जी। पचासम पाटिइं गुरु सुंदर, सोमसुंदर गणधारी जी।—कवि गुणविजय

पंचासर-सं०पु० (देशज) पार्श्वनाथ का एक नाम।

उ०—पांणि कसू एक छि जे प्रणहलपुर पाटण? सघट घाटे करी विचत्र चित्रां में करी अभिरांम महामहोछवे भलां आरांम पंचासर प्रमुख देव देवाला, जे नगर मांहइ दांनसाळा पौसधसाळा धरमसाळा।
—व.स.

वि०वि०—पार्श्वनाथ की मूर्ति पंचासर (पाटण) ग्राम से उत्थित होने के कारण पंचासर नाम पड़ा।

पंचासी—देखो 'पिचियासी' (रू.भे.) (उ.र.)

पंचाहण—देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

पंचाहर—देखो 'पजाहर' (रू.भे.)

उ०—भड खळिया भंभर वेहक वज्जर, वढ़िया पक्खर विहूंड वपै। पळ खंडिया पंजर पडै पंचाहर, जैं जैं संकर सकति जपै।
—गु.रू.बं.

पंचिंदि, पंचिंदिय, पंचिंदी—देखो 'पंचेंद्रिय' (रू.भे) (जन)

पंची—देखो 'पक्षी' (रू.भे)

पंचीकरण-सं०पु० [सं०] वेदांत में पंचभूतों का विभाग विशेष।

पंचीकृत-सं०पु० [सं० पञ्चीकृत] जिसका पंचीकरण हुआ हो।
(वेदान्त)

पंचीक्रनी-सं०पु० [सं० पंचीकरण] मनुष्य (अ.मा.)

पंचुत्तर-सं०पु० [सं०] पंच अनुत्तर।

उ०—वासिग उप्परि धरणि, धरणि उप्परि जिम गिरिवर। गिरिवर उप्परि मेह, मेहु उप्परि रवि ससिहर। ससिहर उप्परि तियस, तियस उप्परि जिम सुरवर। इंदुप्परि नवगीय गीय उप्परि पंचुत्तर।
—अभययतिक यती

वि०वि०—जिससे बढ कर दूसरी कोई वस्तु न हो अर्थात् जो सर्वश्रेष्ठ हो उसे अनुत्तर कहते हैं (जैन)

पंचेंदि, पंचेंदी, पंचेंद्रिय, पंचेंद्री, पंचेंद्री-सं०स्त्री० [सं० पञ्चेन्द्रिय]

१ शरीर के वे पांच अवयव जिनके द्वारा बाह्य जगत के भिन्न भिन्न गुणों का भिन्न भिन्न रूपों में अनुभव होता है।

यथा—कान, नाक, आंख, जिह्वा और त्वचा।

२ वह प्राणी जिसके पांच इन्द्रियें हों।

उ०—पंचेंद्री तणी छइं घणी जाति, पाप करइ इक दीह मइ राति।
—वस्तिग

रू०भे०—पंचिदि, पंचिदिय, पंचिदी, पणइंदिय, पांचिंद्रिय।

पंचेखु-सं०पु० [सं० पचेषु] कामदेव, पंचसर।

पंचेरी—देखो 'पंसेरी' (रू.भे.)

पंचेरौ—देखो 'पंसेरी' (मह., रू.भे.)

पंचेंद्रो—देखो 'पंचेंद्रिय' (रू.भे.)

उ०—केई हिंसा धरमी कहै—एकेंद्री विचै पंचेंद्री रा पुन्य घणा।
—भि.द्र.

पंचोतरौ—देखो 'पिचंतरौ' (रू.भे.)

उ०—प्रगटयौ वरस पंचोतरौ, सांवण सघण सराय। साहू करंडव पंखि पर, दुमुखि रहे चख लाय।—रा रू.

पचोळ-सं०पु० [सं० पंच+रा. प्र. ओल] पंचायत।

उ०—पुटियां टोल पंचोळ, चील चंगे चित आलां। भामर भोल तमोळ, मोळ मन मकड़ी जाळां।—दसदेव

पंचोळी-सं०पु० [सं० पंच-कुल=पंचकुलो] (स्त्री० पंचोळण) वंश परंपरा से चली आई हुई मारवाड़ के माथुर कायस्थों की एक उपाधि।
(मा.म.)

पंच्चांण—देखो 'पंचानन' (रू.भे.)

उ०—परभोम दबावै खगां पांण। परभोम जिके वाजै पंच्चांण।
—सू.प्र.

पंच्याणुं, पंच्याणु—देखो 'पंचांणु' (रू.भे.)

उ०—कुंअर कुळोधर वीनमइं जी, सांभळि भीम भुआळ। पंच्याणु क्षोहिणि मिळै जी, जेह नइं त्रीजी ताळ।—रुकमणी मंगळ

पंच्यासी, पंच्यासीइ—देखो 'पिचियासी' (रू.भे.)

उ०—सुयक्खंध दोइ जेहना रे, प्रवर अध्ययन पचीस रे। उद्देसादिक जांणियइ रे लाल, पंच्यासी सुजगीस रे।—वि.कु.

पंछि—देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

पंछियौ-सं०पु० (देशज) १ छोटी धोती।

उ०—मदरसै सूं घरै आवतै ई पंछियौ पै'र धोती रै पटल्यां घाल'र चोळै नै झड़काय'र दोयां न खूंटी ऊपर टांगदी।—वरसगांठ

२ देखो 'पक्षी' (अल्पा०, रू.भे.)

पंछी—देखो 'पक्षी' (रू भे.)

उ०—परसरांम भज चाख अम्रत-फळ, जनम सुफळ होय जासी। पाछौ वळे अमोलक पंछी। अण तरवर कद आसी।
—ओपौ आढ़ौ

पंछीड़ो—देखो 'पक्षी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—किसरा पंछीड़ा मग मांय; वटाऊ वरण रह्या भरतार। झबूके अघबिच भौंर कवळ, अधूरा कांमरिणयां सिरणगार।—सांझ

पंछीलो—देखो 'पक्षी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—गउए चरण चाली, पंछीला मारग चाल्या। नेम धरम सब साथ।—लो.गी.

पंछोलो-सं०पु० [देशज] स्वर्णकारों का ओजार विशेष।

पंज—देखो 'पंजो' (मह., रू.भे.)

उ०—दुख उपज्यौ सहदेस नैं, पड़चो काळ रौ पंज। सह्यो न जावै सज्जनां, राजमात रौ रंज।—ठा. फतैसिंह कूंपावत

पंजणो-वि० [देशज] मिटाने वाला, नाश करने वाला।

उ०—सिर जोर खग दत्त संजणा, पह रोर आमय पंजणा। भड़ जुध असंतां भंजणा, रघुराज संतां रंजणा।—र.ज.प्र.

पंजणौ, पंजबौ-क्रि०स० [देशज] मिटाना, नाश करना, ध्वंस करना।

उ०—सूरज वंस तणौ नृप सूरज, पावर आसुर पंजे रे गह गंजे।
—र.ज.प्र.

पंजणहार, हारौ (हारी), पजणियौ—वि०।

पंजिग्रोड़ो, पंजियोड़ो, पंज्योड़ो—भू०का०कृ०।

पंजीजणौ, पंजीजबौ—कर्म वा०।

पंजर-सं०पु० [सं० पञ्जरः पञ्जरं] १ शरीर, देह।

उ०—इहां सु पंजर, मन उहां, जय जांणइला लोइ। नयणां आडा वींझवन, मन नह आडौ कोइ।—ढो.मा.

२ शरीर का वह कठोर भाग जो अणु जीवों तथा बिना रीढ़के और क्षुद्र जीवों में कोश या आवरण आदि के रूप में ऊपर होता है और रीढ़वाले जीवों में कड़ी हड्डियों के रूप में भीतर होता है। हड्डियों का ठट्ठर या ढांचा जो शरीर के कोमल भागों को अपने ऊपर ठहराए रहता है।

३ ठट्ठर, अस्थि-पंजर, कंकाल।

उ०—१ ऐ जो अकबर काह, सैंधव कुंजर सांवठा। वांसै तौ बहताह, पंजर थया 'प्रतापसी'।—दुरसो आढौ

उ०—२ सज्जण ज्यूं ज्यूं संभरइ, देख्या आहीठांण। झुरि-झुरि नइ पंजर हुई, समर-समर सहिनांण।—ढो.मा.

४ शरीर का ऊपरी धड़ या हड्डियों का घेरा, पसलियों, वक्षस्थल आदि का अस्थिसमूह, पसलियों का परदा।

उ०—सखि ए साहिब आविया, जांह की हूंती चाइ। हियडउ हेमागिर भयउ, मन पंजरे न माइ।—ढो.मा.

५ देखो 'पींजरौ' (मह०, रू भे.)

उ०—अनंत मेछ उल्लटे, वहै, सुवाट उव्वटे। पमंग अंग पाखरां, परां गिरां कि पंजरा।—रा.रू.

६ भाला।

उ०—जग 'राजड़' अलंग सूं जड़ियो, पंजर कसकै पंजर पसार। हात न लागौ जठै हाडकौ, साज अलाज नहीं संसार।
—महारांणा राजसिंह रौ गीत

वि०—रक्षक।

उ०—धरा धूण धक-चाळ, कीध दहिया दह-वट्ट। सबदी सबळां साल, प्रांण मेवास पहट्ट। 'आल्हण' सुत 'विजयसी' वंसराव प्रागवड़, खाग त्याग खत्रवाट सरण त्रिजै पंजर सोहड़। चहुवांण राव चौरंग 'अचळ' नरां नाह अण-भंग नर, ध्रू मेर सेस जां लग अटळ, तांम राज साचोर धर।—नैणसी

रू०भे०—पिंजर, पींजर।

अल्पा०—पंजरि, पंजरौ, पिंजरौ।

मह०—पांजर।

पंजरविसन, पंजरविसनु—देखो 'विसनुपंजर' (रू.भे.)

उ०—१ ब्रंह्म-कवच पंजर-विसन, रक्षा-रांम उचार। वेदोक्ती सू-ब्राह्मण, आसीसै अणपार।—रा.रू.

उ०—२ ब्रंह्म-कवच पंजर-विसनु, रक्षा-रांम वचाय। ईस तणै बळ ऊठिया, अंबर सोस लगाय।—रा.रू.

पंजरि—देखो 'पंजर' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—माद्रवडा भाई भणउ, भूरि जळ भरी म भागि। पंजरि-विफुं पलेवणउ, माहरूं सकइ न मागि।—मा.कां.प्र.

पंजहजारी—देखो 'पंच-हजारी' (रू भे.)

पंजातोड़-वेठक-सं०स्त्री०यौ० [फा० पंजा+सं० वेशन=विठ्ठ=प्रा. विट्ट+सं० तुष्ठ=प्रा० तुठ्ठ] कुश्ती का एक पेच।

पंजाब-सं०स्त्री० [फा०=सं० पञ्चाप अथवा पंचाम्बु] भारत के उत्तर का एक प्रदेश जहाँ सतलज, व्यास, रावी, चिनाव और झेलम नाम की पाँच नदियां बहती है। पंचनद।

पंजावळ-सं०पु० [फा० पंजा+सं० वल] पालकी के कहारों की बोली जिसके अनुसार अगली पालकी के कहार पिछली पालकी के कहारों को यह सूचित करते हैं कि आगे भूमि ऊँची है।

पंजाबी-वि० [फा०] पंजाब का, पंजाब सम्बन्धी।

सं०स्त्री०—पंजाब की भाषा।

सं०पु०—पंजाब-निवासी।

पंजार—देखो 'पंजोळ' (रू.भे.)

पंजारी—देखो 'पंजीरी' (रू.भे.)

पंजाळी-सं०स्त्री० [फा० पंजा+सं० आलुच्] चड़स खींचते समय बैलों की गरदन पर पहनाया जाने वाला जुआ विशेष।

उ०—एक दिन प्रभात रा चढि नीसरिया। एकै ठोड़ आया। आगै देखै तौ तेवि नै घाव पायनै मरद तौ सोह गांम गया छै। एक वैर जावै छै। सु साठीकौ कोहर, तिये री वरत छै सु वरत सांवटिनै कांख मांहे घाली छै। कोस पंजाळी वांह मांहे घातिया छै। माथै बिघड़ियौ भरियौ पांणी रौ छै मर मारग चाली जाय छै।
—नैणसी

वि०वि०—यह ऊपर से जुएनुमा होता है। इसके दोनों ओर छेद होते हैं। यह जुआ बैलों की गरदन के ऊपर रहता है। इस जुए के समानान्तर इतनी ही लम्बी एक लकड़ी और जुड़ी रहती है जो बैलों की गरदन के नीचे रहती है। इसके भी दोनों ओर छेद होते हैं। जुए के छेदों में से होते हुए लकड़ी के छेदों तक (दोनों ओर) लकड़ी के पतले गोल डंडे फंसा दिए जाते हैं जो जोतों के स्थान पर होते हैं। इस प्रकार बैलों की गरदनें लकड़ी की चौखटों के बीच आ जाती हैं। नौसिखिए बैलों के लिए भी इस उपकरण का प्रयोग किया जाता है।

मुहा०—पंजाळी में आंणौ, पंजाळी में फसणौ—बंधन में आना, आफत में फंसना।

रू०भे०—पूंजाळी।

पंजाळो-वि० [फा० पंजा+सं० आलुच्] पंजे वाला (जानवर)

पंजावो-सं०पु० [सं० पंच+रा.प्र. आवो] १ प्रथम प्रसव देने वाली गाय के गर्भ रहने के बाद पांचवें मास के थन का उभार या उठाव।

२ देखो 'पचावो' (रू.भे.)

पंजाहर-सं०स्त्री०—सेना, फौज।

उ०—घड़ां तणा घुबका, जवन दळ पड़िसै जाडा। अड़यो निकळंक अलख, मुरिड़ि नांखै खळ माडा। केई गिलै भ्रम कीच, हुवै दस कोड़ि पंजाहर। जवन दळां जग-जेठ, विसन मारै वह वाहर।

—पी.ग्र.

रू०भे०—पंचाहर।

पंजियोड़ो-भू०का०कृ०—मिटाया हुआ, नाश किया हुआ, ध्वंस किया हुआ।

(स्त्री० पंजियोड़ी)

पंजियौ—देखो 'पंजो' (अल्पा०, रू.भे.)

पंजी—देखो 'पांची' (रू.भे.)

पंजीरी, पंजेरी-सं०स्त्री० [सं० पञ्च+जीरा] एक प्रकार का मिष्ठान्न जो आटे को घी में भून कर उसमें पीपरामूल, सौंठ, अजवाइन, गूंद और धनिया मिला कर बनाया जाता है। इसका उपयोग कृष्ण-जन्माष्ठमी उत्सव पर प्रसाद बांटने में किया जाता है। प्रसूता स्त्री के लिए भी पंजीरी बनाई जाती है।

उ०—१ कूड़ा पूजारी कूड़ो कथ कीन्ही। देवण कांनां में पंजीरी पीन्ही।—ऊ.का.

उ०—२ सुणो सासूजी हमारा ऐ रे बहू रा मीठा बोल। करदयो ना पंजीरी को रतन कचोळै। थां रै चढैजो बडाई हम जच्चा पच होय।—लो.गी.

पंजोळ-सं०पु० [सं० पंच+रा.प्र. ओळ] खेत में ज्वार के पौधों के सीधे खड़े पांच पयालों का समूह।

वि०वि०—केवल सूखने के लिए।

पंजो-सं०पु० [फा० पंजा] १ पांच का समूह।

२ हाथ या पैर की पांचों उंगलियों का समूह।

वि०वि०—साधारणतया हथेली सहित पांच उंगलियों या पांव के आधे तलवे सहित पांच उंगलियों का समूह।

पद—१ पंजे में—ऐसी अवस्था में जहाँ चाहे जो किया जा सके, अधिकार में, कब्जे में, वश में, पकड़ में, मुट्ठी में।

२ पंजे सूं—अधिकार से, कब्जे से, वश से, पकड़ से।

मुहा०—१ पंजो फैलांणौ—देखो 'पंजो पसारणौ'।

२ पंजो बढ़ांणौ—देखो 'पंजो पसारणौ'।

३ पंजो मारणौ—झपट्टा मारना (लेने के लिए) हाथ लपकाना, पञ्जे से प्रहार करना।

४ पंजो पसारणौ—हथियाने का उद्योग करना, लेने का प्रयत्न करना।

३ पंजा लड़ाने की कसरत या बल-परीक्षा।

उ०—अवासूं गिरंदू के बीच पड़साद फुट्टै। जाजुळमांन काळा गोरा वीर जैसे जगजेठ जुट्टै। नजरूं का निहार पञ्जूं का दाव। कदमूं का फुरत डोरयूं का घाव।—सू.प्र.

मुहा०— १ पंजो मोड़णौ—देखो 'पजो लड़ांणौ'।

२ पंजो लड़ांणौ—दो आदमियों का परस्पर उंगलियों से उंगलियां मिला कर बल-परीक्षा करने हेतु मोड़ने का प्रयत्न करना।

३ पंजो लेणौ—देखो 'पंजो लड़ांणौ'

४ बादशाह के हाथ की पांचों उंगलियों सहित वह छाप-चिन्ह जो खास-खास फरमानों पर अंकित किया जाता था।

उ०—१ वह दगे सूं खांन बहादर, आयो गढ जोवांणै ऊपर। खोलै पंजो कौल दिखायो, अब नह मिटै तुमारो भायो।—रा.रू.

उ०—२ पत कमधांगढ जोधपुर, तुम अजमेर सहाय। औ पंजो औ कौल द्रढ, विच पढ़ बोल खुदाय।—रा.रू.

५ शेर, चीता, बिल्ली आदि की जाति के पशुओं अथवा नेवला, गोह, छिपकली, चूहा आदि जाति के प्राणियों के पांव का अग्र भाग।

६ ताजिये के साथ झण्डे या निशान की तरह बांस पर बांध कर ले जाया जाने वाला टीन या धातु का बना मनुष्य के पञ्जे के आकार का पंजा।

७ जूते का अग्र भाग।

८ ताश में पांच चिन्ह या बूटियों वाला पत्ता।

९ जुए का एक दाव।

मुहा०—छक्के-पंजे सावधान रैणौ—सचेत रहना, होशियार रहना, चालबाजी से सावधान रहना।

१० पीठ खुजलाने का एक उपकरण।

अल्पा०—पंजियौ।

मह०—पंज पंजड़।

पंड–सं०पु० [सं० पिण्ड] १ आकाश, आसमान (ना.डि.को.)
२ पवन ।
[सं० पाण्डव] ३ अर्जुन । उ०—सू मघ जेठ कळाघर सारी, आयो रवि ज्यों किरण अकारी । पंड कोपियो किनां धार पण, वीरभद्र दिख ज्याग विधूंसण ।—रा.रू.
४ देखो 'पांडु' (रू.भे.)
उ०—पांचूं पूत पंड के पटकि बैठे हिम्मत को, चूकिगो छमा को भवतव्य बस चेतो ई ।—र.ज.प्र.
५ देखो 'पांडव' (रू.भे.)
उ०—'जिहंगीर' 'खुरम' जुडसी उभै, साखी चंद दुहिंद सुर। जोगणी-पीठ निहटा जवन, फिर हथणापुर पड-कुर ।—गु.रू.वं.
६ देखो 'पिंड' (रू.भे.)
उ०—१ पंड में घणो प्यार, मिळतां मन हरखे मिळै । वे हेतू लख-वार, मिळजो दिन में 'मोतिया' ।—रायसिंह सांदू
उ०—२ महोदध पूछियो कहो मो सहस-मुख, 'जमन' की नवो सण-गार जुड़ियो । 'भांण' रै लोह सुरतांण घड़ भेळियो, चळोवळ पंड मो पूर चड़ियो ।—चतरो मोतीसर

पंडग–सं०पु० [सं० पंडक] नपुंसक, हिजड़ा (जैन)

पंडत—देखो 'पंडित' (रू.भे.)
उ०—पंडत और मसालची, दोऊं उलटी रीत । और दिखावै चांनणो, आप अंधेरे बीच ।—अज्ञात
(स्त्री० पंडतण, पंडतांणी)

पंडतण, पंडतांणी—देखो 'पंडितांणी' (रू.भे.)

पडर–सं०पु० [सं० पाण्डु] १ यवन, मुसलमान ।
उ०—१ पुढि गयणाग गीध पंखारव, गोम गहै गज घाट गुड़ै । पंडर घड़ 'रतनो' परणीजे, जांगी नेवर सद्द जुड़ै ।—दूदो
उ०—२ 'सता' तणो वढ लोप न सकियो, लोपी नहीं लोह ची लीह । पै पंडर घड़ रा पाडतै, दरगै रा पड़िया तिण दीह ।
—नैणसी
२ बादशाह ।
[सं० पिण्ड] ३ पानी का बुलबुला, बुल्ला ।
उ०—सहजां सांई सिवरियै, आळस ऊंघ न आंणि । जन 'हरिया' तन पेखणो, ज्यूं जळ पंडर जांणि ।
—स्री हरिदेवदासजी महाराज
४ देखो 'पांडुर' (रू.भे.)
उ०—१ जिण घण कारण ऊमहाड, तिण घण संदावेस । तिण मारू रा तन खिस्या, पंडर हुवा जकेस ।—ढो.मा.
उ०—२ अजमेर आयो साहजादो, 'करन' सत्ये आंण ए । परवतां पासै लाल पंडर, गयण गूडर तांण ए ।—गु.रू.व.

पंडरवेस–सं०पु० [सं० पाण्डु] १ बादशाह ।
उ०—१ पांण चढै जादव राइ परणी, पंडरवेस कन्हां लै पांण । 'जैसिंघदे' ऊभै किम जायै, सोरठ वैरड़ो घरि सुरितांण ।
जैसा सरवहिया कवाटोत रो गीत
उ०—२ गढ़ गढ़ राफ राफ मेटै गह, रैण खत्रीध्रम लाज अरेस । पंडरवेस नाद अण-पीणग, सेस न आयो 'पतो' नरेस ।
—महारांणा प्रताप रो गीत
२ मुसलमान ।
उ०—१ चारहड़ां चूंडराव चवीजै, दीन्हो इम लीयो इम देस । पंडरवेस पाड़ि गढ़ पैठो, पड़ियै पैठा पंडरवेस ।
—दूदो वारहठ
उ०—२ केताइ हिंदू खेड़िया, केताइ पंडरवेस । हूवा खिडिकि हेकठा, लंक उइल्ला देस ।—गु.रू.वं.
रू०भे०—पंडरावेस ।

पंडरावेस—देखो 'पंडरवेस (रू.भे.)
उ०—ऊकरड़ अेक अेकां पड़ै ऊपरै, नारि संभार सै कंत नाया । मरण मद भलो दीधो खळां मारुवै, पंडरावेस पीठांण पाया ।
—राव जैतसी राठौड़ लूणकरणोत रो गीत

पंडरू—१ देखो 'पांडुर' (रू.भे.)
२ देखो 'पिंडरू' (रू.भे.)

पंडव—१ देखो 'पांडव' (रू.भे.)
उ०—१ पत राखै द्रोपदी, प्रभू विरदां प्रतपाळै । अ्रहम पत्त राहवी, वेद च्यारे ही गावाळै । पत राखै पंडवां, मंब कर मांझि उपाये । गज-पत पत राहवै, अनंत खगपत चढ़ आए ।—ज.खि.
उ०—२ घणी करै घणियाप, सेवक है समरथ सदा । पंडव हर परताप, भारत जीतो 'भैरिया' ।—बळवंतसिंह (रतलाम)
उ०—३ वरहास वणो पक्खर विसाळ । गज-गाह स-डंवर चमर-माळ । सिख नक्ख लगै पंडव सिंगार । आंणियो लूण ऊपरि उतार ।
—गु.रू.वं.
उ०—४ पंडवां करै साकति पमंग । स जि पाखर वादळ घड़ सुचंग ।
—सू.प्र.
२ देखो 'पांडु' (रू.भे.)
उ०—ओछा दिन आयाह, खोटै मग कैरव खड़या । जुध पंडव जायाह, साय जिताया सांवरा ।—रांमनाथ कवियो

पंडवड़ो—देखो 'पांडव' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पंचइ पंडवडा वसइं, तीछे वंमण वेसि । वात गई जण जण मिळी, दुरयोधन नइ देसि ।—पं.पं.च.

पंडव-तिलक—देखो 'पांडव-तिलक' (रू.भे.) (अ.मा.)

पंडव-नांमी—देखो 'पांडव-नांमी' (रू.भे.)
उ०—'पातल' हरा ऊपरा पराभव, खळ खूटा दूटा खड्ग । पंडव-नांमी नीठ पाड़ियो, लग ऊगमण आथमण लग ।
—खेमराज मोदी

पंडव-प्रिया—सं०स्त्री०यौ० [सं० पाण्डव-प्रिया] द्रौपदी (अ.मा.)
पंडव-मध-सं०पु०यौ० [सं० पाण्डव+मध्य] अर्जुन (अ.मा.)
पंडवेस-सं०पु० [सं० पाण्डवेश] १ राजा पाण्डु।

उ०—वंसां द्रोही छतीसां अंगेस रै कराळो वीर, रावतेस भीम······ पंडवेस रै रीसोद।—हुकमीचंद खिड़ियौ

२ युधिष्ठिर।

३ पाण्डव।

[सं० पाण्डु] ४ मुसलमान, यवन।

उ०—१ कियौ विच मोगर खैंग गरक्क, जरद्दां वाजिय धार जरक्क। पड़ै इक भाज धकै पंडवेस, मिळै पग रुंड अकुंड महेस।
—रा.रू.

उ०—२ जुध वेळ खगै रिणछोड़ जठै। तन पाथ जिसौ रुघनाथ तठै। पंडवेस पड़ै जुड़ पार पखै। लख वांह भड़ै पतसाह लखै।
—रा.रू.

५ बादशाह। उ०—१ धर काज मिसलत धार, चक्रवतिय जतन विचार। दिस मरुस्थळ-पति देस, व्रत अलख चख पंडवेस।
—रा.रू.

उ०—२ रव रथ पौहर थकत होय रह्यौ, नमो नमो [चतरंग] नरेस। जुगां न जाय नांम सस जडियां, पड़ियां तो चढ़ियौ पंडवेस।
—महाराणा बडा अड़सी रो गीत

६ ललाई लिए हुए पीला रंग।

७ श्वेत रंग।

८ श्वेत हाथी।

रू०भे०—पंडिवेश।

पंडवौ—१ देखो 'पांडव' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—प्रथीमाळ परमांण, वधै चहुवांण तणौ बळ। तेण वंस बल्लाल दांन दीपियौ दसावळ। बळ बाहड़दे जेण, जेण पंडवौ परजाळै। बाहड़दे अस चढै, वैर गंजै चौवाळै।—नैणसी

२ देखो 'पंडो' (अल्पा०, रू.भे.)

पंडसुत-सं०पु० [सं० पाण्डु+सुत] १ राजा पाण्डु के पांच पुत्रों में से कोई एक।

२ अर्जुन (अ.मा.)

पंडां—देखो 'पिंडां' (रू.भे.)

उ०—'रांम बगस' राज नखै आयौ छै, जिकौ कुरव वधारसी। अठा लायक कांम विदगी लिखावसी, अठी दसा की आप गाढी खुसियां रखायसी। खांन-पांन को पंडां को जाबतौ रखावसी।
—मयाराम दरजी री वात

पंडा-सं०स्त्री० [सं०] बुद्धि।

पंडाळ-सं०पु० [अं०पंडाल] किसी समारोह के लिए बनाया हुआ मंडप।

पंडित-सं०पु० [सं०] (स्त्री० पंडितांणी] शास्त्रों का ज्ञाता, विद्वान, ज्ञानी। उ०—भुज भिड़ज रूप सपतास भांति, कवि तेण लखण गुण वरण क्रांति। सत उकति जेण पंडित प्रमांण, जुधि जैत मरम क्रम प्रथम जांण।—रा.रू.

पर्या०—अभिरूप, आचारिज, कुसळ, कोविद, क्रती, क्रस्टी, दोख-गिन, धिखिणि, धीमांन, धीर, निपुण, नैवाइक, पात्र, पारखद, प्रयागिनी, प्रवीण, प्रायंतरु, बुधि, मतिधण, मनीखी, महाचतुर, आगमी, विचखण, विदुख, विदवांन, विधिग, विविस्चति, विसारद वेधी, सुधि, सुलखण, सूरि।

रू०भे०—पंडत, पंडिति, पंडिय, पांडिति, पिंडत, पिंडित, पिंडिति।

पंडितांणी-सं०स्त्री० [सं० पण्डित+रा०प्र० आंणी] १ पंडित की स्त्री।

२ ब्राह्मणी।

३ विदुषी।

रू०भे०—पंडतण, पंडतांणी, पिंडतण, पिंडतांणी।

पंडिताई-सं०स्त्री० [सं० पंडित+रा.प्र. आई] विद्वता, पाण्डित्य।

उ०—तिण सूं रावत धरम-सास्त्र पुरांण विद्या पंडिताई की परचा कराई।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

पंडिताउ-वि० [सं० पण्डित+रा.प्र. आऊ] पण्डितों के ढंग का।

पंडिति—देखो 'पंडित' (रू.भे.)

उ०—तिणि अवसरि बोलाविउ पंडिति, 'कहउन कांई काज'। विनय लगइ बोलइ घन सागर, 'निसुणउ पंडितराज'।
—विद्याविलास पवाड़उ

पंडिपाद-सं०पु०—एक प्रकार का वस्त्र।

उ०—छडी दो छडी नरम पडिपाव नेत्र-जादर तिलवास मंडप।
—व.स.

पंडिय—देखो 'पंडित' (रू.भे.)

उ०—महावीर जिण भवणिट्ठिय संठिउ जिण वल्लह। जिणि उज्जोयउ चंदु गच्छु पंडिय जिण वल्लह।—ऐ.जै.का.सं.

पंडिवेस—देखो 'पंडवेस' (रू.भे.)

पंडी-सं०स्त्री० [सं० पण्डा] पंडा की स्त्री।

पंडोर-सं०पु०—महादेव, शिव।—(क.कु.बो.)

पंडीस, पंडीसक—देखो 'पांडीस' (रू.भे.)

उ०—१ पंडीस बरंग करै खळ पांणि। वदै मुख हूंत हरै गंग वांणि।
—सू.प्र.

उ०—२ पंडीसक वाह करै अणपाल। 'दलावत' साहिबखांन दुफाल।
—सू.प्र.

पंडु—१ देखो 'पांडु' (रू.भे.)

उ०—सउ बेटां धयराठ घरे, पंडु तणइ घरि पंच। दुरयोधन कउतिग करए, कूडा कवडप्रपंच।—पं.पं.च.

२ देखो 'पांवडो'

उ०—बावन ह्वै बळराज पै, दुख मांगै धर का। दीध त्रलोक त्रलोक-नाथ, त्रिय पंडु भर का।—दुरगादत्त बारहठ

३ देखो 'पांडव' (रू.भे.)

४ देखो 'पांडुर' (रू.भे.) (नां मा.)

पंडुक-सं०पु० [सं० पाण्डु] (स्त्री० पंडुकी) ललाई लिए भूरे रंग का कबूतर की जाति का एक पक्षी।

पंडुर—देखो 'पांडुर' (रू.भे.) (नां.मा.)

पंडुरी-सं०स्त्री० [देश.] पंडुक नामक पक्षी, फाख्ता।

उ०—विहांगड़े ज उदाध्वयां, सर ज्यउं पंडुरियांह। कालर काम्हा कमळ ज्यउं, ढळि-ढळि ढेर थियांह।—ढो.मा.

पंडू—१ देखो 'पांडू' (रू.भे.)

२ देखो 'पांडव' (रू.भे.)

पंडूर-वि० [सं० पाण्डुर] १ उज्ज्वल, निर्मल।

उ०—सुप्रसन सांमणि सारदा, होयो मात हजूर। वुद्धि दियो मुझनें बहुत, प्रगट वचन पंडूर।—प.च.चौ.

२ देखो 'पडूर' (रू.भे.)

उ०—करसं रूप सकळ द्विवें देह, जोवन सफळ लेस्ये गुण-गेह। एहवो घर वर रिद्धि पंडूर, लहियै जो होवै पुन्य अंकुर।

—स्रीपाळ रास

३ देखो 'पांडुर' (रू.भे.)

पंडोखळी-सं०स्त्री० [देश.] गांठ बांधने का वस्त्र।

पंडो-सं०पु० [सं० पण्डावित्] १ मन्दिर का पुजारी।

उ०—दाता दें वित दांन, मौज मांणें मुरसंडा। लाखां लें धन लूट, पूतळी पूजक पंडा।—ऊ.का.

२ तीर्थ-गुरु। उ०—पंडे उच्छव धार उर, विध सम समैं विचार। पधरायो नवकोट पत, दरसण करण दुवार।—रा.रू.

अल्पा०—पंडवो, पांडियो, पांडघो।

पंत-वि० [सं० प्रान्त] तुच्छ।

उ०—अरस विरस अंत पंत लुह, ए चाल्या पंच आहार। ए जीमी जीवें मुनि, धन मोटा अणगार।—जयवांणी

सं०पु०—१ बचा हुआ आहार।

उ०—पाप निमित्त काढ्यो बाहिर, अथवा न काढ्यो बहार। तीजै खातै ऊबरै, पंत वळै लुख आहार।—जयवांणी

२ देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

उ०—१ प्रघटै जटत जवहर पंत अति आछापणैं। तोरां मांन राजै तखत परस रवि तणैं।—बां.दा

उ०—२ गज मोत्यां री दांवणी, मुखड़ै सोभा देत। जांणै तारां पंत मिळ, राख्यो चंद लपेट।—बां.दा.

३ देखो 'पांति' (रू.भे.)

पंतर, पंतरण—देखो 'पांतरण' (रू.भे.)

उ०—आंगियो द्रोह अंतहकरण, पाडो 'खुरम' पंतरण। ततकाळ 'सेर' सुरतांण रो, कीधो अज्जुगतो मरण।—गु रू.बं.

पंतरणो, पंतरबो—देखो 'पांतरणो, पांतरबो' (रू.भे.)

उ०—दुरजण केरा बोलडा, मत पंतरज्यो कोय। अणहूंती हूंती कहै, सगळो साच न होय।—ढो.मा.

पंतरणहार, हारो (हारी), पंतरणियो—वि०।

पंतरिओड़ो, पंतरियोड़ो, पंतरयोड़ो—भू०का०कृ०।

पंतरीजणो, पंतरीजबो—कर्म वा०।

पंतरियोड़ो—देखो 'पांतरियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पंतरियोड़ी)

पंतरोह-सं०स्त्री० [सं० पंक्ति=पृथ्वी+रोह=रुहं=उत्पन्न] धूलि, रज (अ.मा.)

पंताथल-सं०पु०—स्वर्ग, देवलोक (नां.मा.)

पंति, पंती—१ देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

उ०—१ जगमगत दीपक-जोत, अति जोति पंति उद्योत।

—रा.रू.

उ०—२ फबै बग्ग पंती, आगै दंत फोज्जं।—वचनिका

२ देखो 'पांति'

पंथ-स०पु० [सं० पथः] १ रास्ता, मार्ग। उ०—१ 'करनी' थारै कारणै, प्यारो थळवट पंथ। मोत्यां सूं मुहगो मिळै, हीरां पाज हरंत

—अज्ञात

उ०—२ क्रम-क्रम ढोला पंथ कर, ढांण म चूकै ढाळ। आ मारु बीजी महल, आखइ झूठ एवाळ।—ढो.मा.

मुहा०—१ पंथ दिखाणो—मार्ग बताना, रास्ता दिखाना।

२ पंथ देखणो—प्रतीक्षा करना, इन्तजार करना, खोजना।

३ पंथ निहारणो—देखो 'पंथ देखणो'।

४ पंथ पकड़णो—मार्ग पर चलना, प्रारम्भ कर देना।

५ पंथ बुहारणो—आने वाले की प्रतीक्षा में उसके स्वागत की तैयारी करना।

६ पंथ लगाणो—रास्ते पर लगाना, उपयुक्त कार्य पर लगाना, समाप्त करना।

७ पंथ लागणो—रास्ता पकड़ना, समाप्त होना।

८ पंथ हेरणो—देखो 'पंथ देखणो'।

२ सम्प्रदाय, धर्म-मार्ग, मत।

ज्यं—कबीरपंथ, दादूपंथ।

उ०—ताकहा 'अजण' 'भीमेण' ताय। खांगड़ा उरस धी भचक खाय। 'अभपती' जठी गोरक्ख एम। तेरे सख बारह पंथ तेम।

—वि.सं.

मुहा०—पंथ पकड़णो—किसी सम्प्रदाय विशेष के मत को मानना, सम्प्रदाय विशेष में सम्मिलित होना।

३ आचार पद्धति, व्यवहार का क्रम, चाल, व्यवस्था, रीति।

उ०—जोग पंथ संकर तजै, व्है गिरमेर गरक्क। करणी ऊपर नह करै, ऊगै केम अरक्क।—चोध वीठू

मुहा०—१ पंथ दिखाणो—धर्म या आचार की रीति बताना, उपदेश देना।

२ पंथ पकड़णी—विशेष प्रकार के कर्म में प्रवृत्त होना।
३ पंथ पर—आचरण विशेष में प्रवृत्त, ढंग पर।
४ पंथ लगांणो—देखो 'पंथ पर लाणो'।
५ पंथ पर लाणो—ठीक चाल-चलन पर लाना, अच्छा आचरण ग्रहण कराना, उत्तम आचरण सिखाना।
६ पंथ लागणो—देखो 'पंथ पकड़णो'।
यौ०—कुपंथ, सुपंथ।
४ मद्य, मांस, व्यभिचार आदि बातों के विधान वाला वह तान्त्रिक मत जो वेदविहित दक्षिण मार्ग के प्रतिकूल है, वाममार्ग।
मुहा०—१ पंथ बैठणो—वाम मार्ग में प्रवृत्त होना।
२ पंथ बैठांणणो—वाम मार्ग में प्रवृत्त करना।
३ पंथ में—वाममार्ग में प्रवृत्त।
४ पंथ में आंणो—वाम मार्ग में प्रवेश करना, वाम मार्ग में आना।
५ पंथ में बैठाणणो—देखो 'पंथ बैठांणणो'।
६ पंथ मे लेणो—वाम मार्ग में लेना, वाम मार्ग में प्रवृत्त करना।
७ पंथ में होणो—वाम मार्ग में होना। वाम मार्ग धारण करना।
रू०भे०—पत्थ, पत्थय, पथ, पथ्य, पाथ।
अल्पा०—पथड़ो।
मह०—पंथमांण, पंथांण।

पंथक—वि० [सं० पथ+क] राह में उत्पन्न।
सं०पु०—चोर (अ.मा.)

पंथक-पंथक—सं०पु०—शत्रु, दुश्मन (अ.मा.)

पंथग—सं०पु० [सं० पथग] अनुयायी, शिष्य।
उ०—गुरु निंदा करणी नहीं, माठो देखे मग्ग। सेलग गुरु मदवसी सूभे, पंथग चांपे पग्ग।—ध.व.ग्रं.

पंथड़ो—देखो 'पथ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—केकांणां विण पथड़ो, धण विण रैण विहाय। सो भार्या विण आणियो, यूं ही अकारथ जाय।
—जलाल बूबना री वात

पंथमांण—देखो 'पंथ' (मह०, रू.भे.)

पंथवारियो—सं०पु० [सं० पंथः+आलुच्] २ वे कच्छड़ जिनको पंथवारी हेतु स्थापित किए जाते हैं।
२ वह सुरक्षित स्थल जहाँ पर, तीर्थ यात्रा पर गये हुए के पीछे, गेहूँ या जव बोये जाकर घर की औरतों द्वारा सींचे जाते हैं।
क्रि०प्र०—पूजणी, सींचणी।
रू०भे०—पथवारियो।

पंथवारी—सं०स्त्री० [सं० पथः+आलुच्+रा.प्र.ई]
उक्त प्रकार से बोये हुए गेहूँ या जव को सींचने की प्रथा।
उ०—पंथवारी रा मारगां, फूलांरी बाड़ियां, आछा-आछा फूल दिरावो महादेव नैं, ऊठो राधा रुकमण पूजो पथवारियां। पंथवारी पूजियां कांई फळ होसी, अन होसी, धन होसी, पूतां रो परवार होसी, धीवड़ियां रो थाट होसी, ऊठो राधा रुकमण पूजो पंथवारियां।
—लो.गी.
रू०भे०—पथवारी।

पंथांण—देखो 'पंथ' (मह०, रू.भे.)
उ०—कुपिया कुटुंब कळहो, पावस पंथांण रोग प्रब्बळ ए। दुरमत्ती दुस्ट पुत्रो, दुभटियं पंच दुखाई।—गु.रू.बं.

पंथाई—वि० [सं० पथ+रा.प्र. आई] १ वाम मार्ग मतावलंबी, वाममार्गी।
२ पन्थ का, पन्थ सम्बन्धी।
सं०पु०—वाम मार्ग मतावलम्बी व्यक्ति।

पंथाळरो—सं०पु०—घोड़ा (डि.नां.मा.)

पंथिक—देखो 'पंथी' (रू.भे.)

पंथिड़ो—देखो 'पंथी' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पंथिड़ो चाल्यो परदेस में रे।—जयवांणी

पंथियो—देखो 'पंथी' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—प्यास मरतां पसू पंखियां,पंथिया, पाप व्है पावज्यो मतां पांणी। भर-मिया भला-भला लोक एहै भरम, धरम कियो तिणं धूळ-धाणी।
—ध.व.ग्रं.

पंथी—सं०पु० [सं० पंथिन्] १ राही, बटोही।
उ०—१ आज निसह म्हे चालिस्यां, बहिस्यां पंथी-वेस। जळ-जोब्बा तउ आविस्यां, मुया त उणि हिज देस।—ढो.मा.
उ०—२ जाळि मगि चढ़ि-चढ़ि पंथी जोवै, भुवणि सुतन मन तसु मिळित। लिखि राखैं कागळ नख लेखणि, मसि काजळ आंसू मिळित।—वेलि.
२ किसी सम्प्रदाय का अनुयायी।
३ वाममार्गी।
रू०भे०—पंथिक, पंथीक, पंथीय, पई।
अल्पा०—पंथिड़ो, पंथियो, पंथीड़ो, पथीडो, पंथीयो, पइयो।

पंथीक—देखो 'पंथी' (रू.भे)

पंथीड़ो, पंथीडो—देखो 'पंथी' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—१ मांगी दूं बधावणी तोनैं, पंथीड़ा लाख-पसाव हो राज। वळै संघ जोता बाटड़ी, थे तो आवी आज सुणाय हो राज।
—रसीलैराज रो गीत
उ०—२ पंथीडा अंदेसउ मिटस्यै जे दिन रे। ते तउ मुझ नइ आज वताउ रे!—वि.कु.

पंथीय—देखो 'पंथी' (रू.भे.)

पंथीयो—देखो 'पंथी' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—जीवै पंथीया तोय नाग भूंबाउं, असड़ो मन में आई। 'भगवत' मरण तणी कथ भूंडी, स्रवणां मूझ सुणाई।—ओपो आढो

पंदरमों, पंदरवों—देखो 'पनरमों' (रू.भे.)
उ०—राजा भोज फेर मुहरत धराय सिंघासण कनै आइया, जद

पंदरवीं पूतळी श्राम कहण लगी ।—सिंघासण बत्तीसी
(स्त्री० पंदरमीं, पंदरहवी)

पंदरह—देखो 'पनरै' (रू.भे.)

पदरहमों, पंदरहवों—देखो 'पंदरहवो' (रू.भे.)
(स्त्री० पंदरहमीं, पंदरहवीं)

पंदरेंक—देखो 'पनरेंक' (रू.भे)

पंवरै—देखो 'पनरै' (रू.भे.)

पंवरैंक—देखो 'पंनरेंक' (रू.भे.)

पंद्रह—देखो 'पनरै' (रू.भे.)
उ०—तद ग्रसवार दस पंद्रह साथ सूं वंघ मगरां श्राए लागिया ।
—सुंदरदास भाटी वीकूंपुरी री वारता

पंनर—देखो 'पनरै' (मह.,रू.भे.)
उ०—पंचताळीसउ पूठि वरीस, मास मागसिर पूनिम दीस । संवत पंनर बारोतरउ, तिणि दिन सोमवार विस्तरू ।—कां.दे.प्र.

पंन्नग—देखो 'पन्नग' (रू.भे.)
उ०—पंन्नग-लोक म्रित-लोक तरण प्रभु, वडा रिखोसर जोवै वाट ।
दहनांमी दीदार देखना, घडे हुवा हुवा गजथाट ।
—महादेव पारवती री वेलि

पंन्नड़ी—१ देखो 'पनड़ी' (रू.भे.)
२ देखो 'पांन' (ग्रल्पा., रू.भे.)

पंन्नड़ो—देखो 'पांन' (मह०, रू.भे.)

पंन्नडी—१ देखो 'पांन' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
२ देखो 'पनड़ी' (रू.भे.)
उ०—रायजादी ऊभी रायग्रांगण, करि सोळह सिणगार करि ।
सउणं तिह झूंटणा सोहइ, पंन्नड़ी नान्हइ नखत्र परि ।
—महादेव पारवती री वेलि

पंन्नडों—देखो 'पांन' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
उ०—तरु तरु श्रूटइ पंन्नडा, गिरि गिरि ग्रूटइ वाहु । फागुण !
कागुण ताहरू, नींगमिउ मोरू नाह ।—मा.कां.प्र.

पंप–सं०पु० [ग्रं०] १ जलादि तरल पदार्थों को ऊपर खींचने या पहुँचाने ग्रथवा इधर-उधर ले जाने हेतु बना यंत्र ।
२ टघूब ग्रादि में हवा भरने की एक प्रकार की कला ।
३ एक प्रकार के ग्रंगरेजी जूते की बनावट विशेष जिसमें पैर का ग्रगला भाग ही ढंका रहता है ग्रौर जिनमें कस्से नहीं होते ।
४ पिचकारी ।

पंपा–सं०स्त्री० [सं०] १ दक्षिरण की एक नदी का नाम जो प्राचीन काल में ऋष्य-मूक पर्वत के समीप बहता थी ।
२ इस नदी के समीप वसने वाले एक प्राचीन नगर का नाम ।
३ इस नगर के निकट के एक तालाब का नाम ।

पंपागर, पंपागिर, पंपागिरि–सं०पु०यौ० [सं० पंपागिरि] पंपा नदी से लगा हुग्रा दक्षिण का एक पर्वत ।

पंपाळ–सं०पु० [देशज] १ ग्रसत्य, झूठ (म.मा.,ह.नां.मा.)
२ ढोंग, ग्राडंबर, छल, कपट । उ०—प्रभु समरि तजि ग्राळ पंपाळ ।
—ह.नां.मा.
३ व्यर्थ का प्रलाप ?
उ०—१ कूट कपट नित केळवइ, माया नइ मोह । ग्राळ-पंपाळ मुख भखइ, हियइ वज्र कठोर ।—स.कु.
उ०—२ पाछली रात रौ वेगौ जाग, पांणी ग्रगन रौ दीसै ग्रभाग ।
मुख सूं वोलै ग्राळ-पंपाळ, बूढा तिके पण कहिये बाळ ।
—जयवांणी
४ दुनिया का जंजाळ, प्रपंच । उ०—ग्रा विन्यायकजी री खूंटी गिरस्ती री पंपाळ है, इणसूं थोड़ी घणी खोळी व्हियाई जीव ग्रागै सिरकै ।—फुलवाड़ी
वि०—जो ग्रसली न हो, खोटा, जाली, झूठा ।
उ०—हीर पनां वाळा हार, पंपाळा तज 'पत' । तैं कर चाळा ली तिका, तुकमां माळा तत ।—जुगतीदांन देथौ
यौ०—ग्राळ-पंपाळ ।
ग्रल्पा०—पंपाळो ।

पंपाळो—देखो 'पंपाळ' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
उ०—कोई साध नैं साधवी, देवै दुरासी नैं गाळो रे । भरम मोसा दाखै रीस थी, वोलै ग्राळ-पंपाळो रे ।—जयवांणी

पंपोटो–सं०पु० [देशज] बुलबुला, बुदबुदा, बुल्ला ।
उ०—खळ-हळ खळक्या लोही खाळ, पावस रित जांणै परनाळ ।
रुहिर माहिं पंपोटा थाय, दोड़ी जोगणी पात्र भराय ।—प.च.चौ.

पंपोळणो, पंपोळवो–क्रि०ग्र० [सं० पम्पस्] धीरे-धीरे किसी पर हाथ फेरना, सहलाना ।
उ०—जुष टोळी जपिया जठै, चिपि गोळी चुपचाप । वटको दोळी वांध नैं, पंपोळी न 'प्रताप' ।—जुगतीदांन देथौ
पंपोळणहार, हारौ (हारी), पपोळणियो—वि० ।
पंपोळवाड़णो, पंपोळवाड़वो, पंपोळवाणो, पंपोळवावो, पंपोळवावणो, पंपोळवावबो, पंपोळाड़णो, पंपोळाड़वो, पंपोळाणो, पंपोळावो, पंपोळावणो, पंपोळाववो—प्रे०रू० ।
पंपोळिग्रोड़ो, पंपोळियोड़ो, पंपोळयोड़ो—भू०का०कृ० ।
पंपोळीजणो, पपोळीजवो—कर्म वा० ।
पंपोळणो, पंपोळवो—कर्म वा० ।

पंपोळाड़णो, पंपोळाड़वो—देखो 'पंपोळाणो, पंपोळावो' (रू.भे.)
पंपोळाड़णहार, हारौ (हारी), पंपोळाड़णियो—वि० ।
पंपोळाड़िग्रोड़ो, पंपोळाड़ियोड़ो, पंपोळाड़्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पंपोळाड़ीजणो, पंपोळाड़ोजवो—कर्म वा० ।

पंपोळाणो, पंपोळावो–क्रि०स० [पंपळणो क्रिया का प्रे०रू०] धीरे-धीरे किसी के शरीर पर हाथ फिराना, सहलवाना ।
पंपोळाणहार, हारौ (हारी), पंपोळाणियो—वि० ।

पंपोळायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पंपोळाईजणो, पंपोळाईजबो—कर्म वा० ।

पंपोळाड़णो, पंपोळाड़बो, पंपोळावणो, पंपोळावबो—रू०भे० ।

पंपोळायोड़ो–भू०का०कृ०—धीरे-धीरे हाथ फिराया हुआ, सहलाया हुआ ।

(स्त्री० पंपोळायोड़ी)

पंपोळावणो, पंपोळावबो—देखो 'पंपोळाणो, पंपोळाबो' (रू.भे.)

पंपोळावणहार, हारो (हारी), पंपोळावणियो—वि० ।

पंपोळाविओड़ो, पंपोळावियोड़ो, पंपोळाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पंपोळावीजणो, पंपोळावीजबो—कर्म वा० ।

पंपोळावियोड़ो—देखो 'पंपोळायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पंपोळावियोड़ी)

पंपोळियोड़ो–भू०का०कृ०—धीरे-धीरे किसी पर हाथ फेरा हुआ, सहलाया हुआ ।

(स्त्री० पंपोळियोड़ी)

पंमाड, पंमाडिया—देखो 'पमाड़िया' (रू.भे.)

पंमार—देखो 'परमार' (रू.भे.)

उ०—'ऊदा' के 'वीदा' भड़ उदार, पड़ियार 'कमां' 'मंडळा' पंमार ।
—पे.रू.

पंयाळ—देखो 'पाताळ' (रू.भे.)

उ०—हुई हमस्स धमस्स, पयाळ दहलिया ।—गु.रू.बं.

पंव–सं०पु०—पांच । उ०—सुभ खिल्लत पंव वरन सुरंगी । असि खंजर सर पेच कलंगी ।—रा.रू.

पंवर, पंवरी—देखो 'पामड़ी' (रू.भे.)

उ०—ढाळो चंवर ओढ़ावो पंवर, गउ माता लाय पुजावो हो रांम ।
—लो.गी.

पंवाड़—देखो 'पंमाड़ियो' (मह०, रू.भे.)

पंवाड़ियो—देखो 'पमाड़ियो' (अल्पा०, रू.भे.)

पंवार—देखो 'परमार' (रू.भे.)

उ०—करण अखियात चढ़ियो भलां काळमी, निबाहण वैण भुज बांधियां नेत । पंवारां सदन वरमाळ सूं पूजियो, खळां करमाळ सूं पूजियो खेत ।—बां.दा.

पंसणी–वि० [सं० पांसुल] (स्त्री० पांसुणी) दुष्ट, नीच (अ.मा.)

पंसारी–सं०पु० [सं० पण्यशाली] (स्त्री० पंसारण) वह बनिया या दुकानदार जो जड़ी बूंटी औषधि तथा हल्दी धनिया आदि मसाले बेचता हो ।

रू०भे०—पनसारी पसारी ।

पंसी-उकत—पैशाची भाषा (अ.मा.)

पंसुली—देखो 'पासळी' (रू.भे.)

उ०—धीरमेर रा खड्ग प्रहार सूं कन्ह महर री अंस पंसुली सूधो झड़ियो, तो भी घणा सात्रवां री सुंदरियां रा कंकणां री कोळाहळ मिटाय पड़ियो ।—वं.भा.

पंसेरी–सं०स्त्री० [सं० पंच+सेर+रा.प्र.ई] पांच सेर का तोल ।

उ०—पंसेरी इक पालड़े, पुंगी फळ इक ओड़ । उ तोलण भ्रम कर-उभै, आ चतुराई छोड़ ।—बां.दा.

रू०भे०—पंचेरी, पनसेरी, पसेरी ।

मह०—पंचेरो, पंसेरो, पनसेरो ।

पंसेरो—देखो 'पंसेरी' (मह०, रू.भे.)

वि०—१ रक्षक (एकाक्षरी)

प–सं०पु० [सं०] १ रवि, सूर्य ।

२ पवन ।

३ वृक्ष ।

४ गुरु ।

५ राजा ।

६ सिंह ।

७ कामदेव ।

८ पीना क्रिया (एका०)

पइंठणो, पइंठबो—देखो 'पैठणो, पैठबो' (रू.भे.)

उ०—पइत समांन मच्छ एक मोटो, मुख प्रसारि नै बैठो । ततखिण तेह कुमर नैं गिळियो, वळि जळ ऊंडै पइंठो ।—वि.कु.

पइंठणहार, हारो (हारी), पइंठणियो—वि० ।

पइंठिओड़ो, पइंठियोड़ो, पइंठ्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पइठीजणो, पइंठीजबो—भाव वा० ।

पइठियोड़ो—देखो 'पइंठीयोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पइठियोड़ी)

पइंडउ—१ देखो 'पैंडो' (रू.भे.)

उ०—नदी वहइ झाबुका नांखती, घोम उदक चौ लागी धार । ईसर तणी आंण्या इसड़ी, पइंडउ वहत उतारइ पार ।
—महादेव पारवती री वेलि

२ देखो 'पैंडो' (रू.भे.)

पइंडो—१ देखो 'पैंडो' (रू.भे.)

उ०—मुरकी मैं लाडू भला, पइंडा सक्खर सवाद ।—वि.कु.

२ देखो 'पैंडो' (रू.भे.)

पइंतीस, पइंत्रीस—देखो 'पैंतीस' (रू.भे.) (उ.र.)

उ०—बांका विचित्त पाधोर बक, तांणइ कमांण पइंतीस-टंक । आयासि पंखि पाडइ अमुल्ल, माकडा-मुक्ख मुंडा मुगल्ल ।
—रा.ज.सी.

पइंसठ, पइंसठि—देखो 'पैंसठ' (रू.भे.) (उ.र.)

पइ–अव्य० [सं० प्रति, प्रा० पडि, अप० पइ] १ अधिकार में, कब्जे में, पल्ले । उ०—एक दिवस पूंगळ सहर, सउदागर आवंत । तिण पइ घोड़ा अति घणा, वेच्या लाख लहंत ।—ढो.मा.

२ पास में निकट में ।

सं०पु० [सं०पद] पैर, चरण। उ०—हठमल्लि 'जइति' मनावि हीर, हल्लावि हविक हिंदू हमीर। सत 'जइतसीहि' माया सकत्ति, पइ सेव मनाविय देसपत्ति।—रा.ज.सी.

पइड़ो—

१ देखो 'पईसो' (अल्पा०, रू.भे.)

२ देखो 'पैंड़ो' (रू.भे.)

पइज—देखो 'पैज' (रू.भे.)

पइट्ठणो, पइट्ठबो—देखो 'पैठणो, पैठबो' (रू.भे.)

उ०—१ कांमा-कांम कमंधज दीठो, पलकां अंतरि अमी पइट्ठो।
—गु.रू.वं.

उ०—२ सज्जण अळगा तां लगइ, जां लग नयणे दिट्ठ। जब नयणां हूं बीछड़ै, तब उर मंझ पइट्ठ।—ढो.मा.

पइट्ठणहार, हारो (हारी), पइट्ठणियो—वि०।

पइट्ठिग्रोड़ो, पइट्ठिवोड़ो, पइट्ठयोड़ो—भू०का०कृ०।

पइट्ठीजणो, पइट्ठीजबो—भाव वा०।

पइट्ठा—देखो 'प्रतिष्ठा' (रू.भे.) (जैन)

पइट्ठियो—वि० [सं० प्रतिस्थित] आश्रित।

उ०—आकास वायु दग प्रथ्वी तस, थावर जीव होय। अजीवा जीव पइट्ठिया जीवा, कम्म पइट्ठिया जोय।—जयवांणी

पइट्ठियोड़ो—देखो 'पैठियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पइट्ठियोड़ी)

पइठणो, पइठबो—देखो 'पैठणो, पैठबो' (रू.भे.)

उ०—पहइ त्रास भडवाय तुरक नइ, देस दहोदिसि नाठा। घणा दिवस दळ मारगि चाली, मारूग्राडि मांहि पइठा।
—कां.दे.प्र.

पइठांणी—वि०—पइठाण देश संबंधी, पइठाण देश का।

सं०स्त्री० [देशज] पइठाण प्रदेश का बुना वस्त्र विशेष (व.स.)

पइठांणो—सं०पु० [देशज] पइठाण प्रदेशोत्पन्न घोड़ा।

उ०—अरब छइ घोड़ा, हेरंमा हरीअड़ा नील नीलड़ा काळूंम्रा काजळा किहाड़ा कोसीरा अहिठांणा पइठांणा ऊजळा जीहड़ा......।
—व.स.

पइडो—देखो 'पैड़ो' (रू.भे.)

पइदिणि—सं०पु० [सं० प्रतिदिन] प्रतिदिन। उ०—राजा भीडो अवग्रह लीउ। पइदिणि नर एकेकउ दीउ।—पं.पं.च.

पइन्ना—सं०पु० [सं० प्रकीर्ण] प्रकीर्ण। उ०—छठो जीतकल्प इण नांम, इकसो पांच छ कह्या ग्रांम। दसे पइन्ना हिव इम दाखं, सूत्ररुची ते हीये राखे।—ध.व.ग्रं.

पइमाळ—देखो 'पैमाल' (रू.भे.)

उ०—कप्पिल्ल सिघ कोटां किंवाड़। मूगळे कयउ पइमाळ माड़।
—रा.ज.सी.

पइयो—१ देखो 'पैंड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)

२ देखो 'पईसो' (रू.भे.)

३ देखो 'पथिक' (अल्पा०, रू.भे.)

पइर—सं०पु० [सं० प्रकार] प्रकार, भांति, तरह।

उ०—दवदंती तिहां पितामंदिरि, संभारइ नळ गुण सदा। हवइ नल नु संबंध संभळ, पइरि हुई सी तदा।—नळदवदंती रास

पइरवो—देखो 'पेरवो' (रू.भे.)

उ०—वइरागर पुणंग पइरवां ऊपर, लहइ जिके ताइ सवालख। कुंदण रइ दळ महा काढ़िया, नहरणियां कोरण नइ नख।
—महादेव पारवती री वेलि

पइरोज, पइरोजउ, पइरोजो—देखो 'फिरोजो' (रू.भे.)

उ०—सींगी ताइ कंठ एहवी सोहइ, निमळ विप्र जोवतां निगेम। सोळह ताइ सात सोवन मइं, पइरोजइ जडिया कर प्रेम।
—महादेव पारवती री वेलि

पइलइ—देखो 'पैलै' (रू.भे.)

उ०—कूंझड़ियां कळिग्रळ कियउ, सरवर पइलइ तीर। निसि भरि सज्जण सल्लियां, नयणे वूहा नीर।—ढो.मा.

पइलउ, पइलो—देखो 'पैलो' (रू.भे.)

(स्त्री० पइली)

पइसड़ो—देखो 'पईसो' (अल्पा०, रू.भे.)

पइसणो, पइसबो—देखो 'पैसणो, पैसबो' (रू.भे.)

उ०—१ रांणी भणइ विमासउ किस्यूं, अम्हे सवे जमहरि पइसिस्यूं।—कां.दे.प्र.

उ०—२ हिवडइ भीतर पइसि करि, ऊगउ सज्जण रूंख। नित सूकइ नित पल्हवइ, नित नित नवला दूख।—ढो.मा.

उ०—३ पइसण देवै नहीं प्रतिहारा।—ध.व.ग्रं.

पइसणहार, हारो (हारी), पइसणियो—वि०।

पइसिग्रोड़ो, पइसियोड़ो, पइस्योड़ो—भू०का०कृ०।

पइसीजणो, पइसीजबो—भाव वा०।

पइसागर—देखो 'पयसागर' (रू.भे.)

पइसारउ, पइसारो—देखो 'पैसारो' (रू.भे.)

उ०—१ नयरि पइसारउ पंडु, नरिंद किरि अमराउरि अवतरी ए।
—पं.पं.च.

उ०—२ पइसारइ तणउ मांडियउ प्रारंभ, मोटइ दिख जोवतां मंडांण। घणघट घमंड जांगीए धुरते, आयो ले परिग्रह आपाण।
—महादेव पारवती री वेलि

पइसियोड़ो—देखो 'पैसियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पइसियोड़ी)

पइसो—देखो 'पईसो' (रू.भे.)

उ०—करो क्रपा करतार, इतरा चायां आपसूं। पइसन सुत परिवार, चित चरणां में चकरिया।—मोहनलाल साह

पइहरणो, पइहरबो—देखो 'पैरणो, 'पैरबो' (रू.भे.)

उ०—पाटी बैठया बीसळराइ, गढ़ अजमेरी राज यो। माणिक मोती चौक पुराई, दीया खरोदक पइहरणइ।—वी.दे.

पइहरणहार, हारो (हारी), पइहरणियो—वि०।

पइहरिओड़ो, पइहरियोड़ो, पइहर्‌योड़ो—भू०का०कृ०।

पइहरीजणो, पइहरीजबो—कर्म वा०।

पइहरियोड़ो—देखो 'पैं'रियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पइहरियोड़ी)

पइहिलो—देखो 'पैं'लो (रू.भे.)

उ०—पइहिली पोति आणि गळै बांधी, ताको द्रस्टांत जैसे कपोत कहतां केमेडा का कंठ की स्याह लोक देखीयै।—वेलि. टी.

(स्त्री० पइहिली)

पई—१ देखो 'पैंडो' (रू.भे.)

उ०—बड़के ओघण बंधिया, पैंसे पई पताळ। सोच करै नहीं सागड़ी, धवळ तणी दिस भाळ।—बां.दा.

२ देखो 'पथिक' (रू.भे.)

उ०—करतब नह राजी क्रपण, राजी रूपैयांह। कड़वी दाख कुटंबियां, प्रांमणड़ां पइयांह।—बां.दा.

पईखणो, पईखबो—देखो 'पेखणो, पेखबो' (रू.भे.)

उ०—तमासा सिध पइखै समर मारतंड। उमापत सधप तोड़ै कमळ आप।—राजा राघवदेव झाला री गीत

पईखणहार, हारो (हारी), पईखणियो—वि०।

पईखिओड़ो, पईखियोड़ो, पईख्योड़ो—भू०का०कृ०।

पईखीजणो, पईखीजबो—कर्म वा०।

पईखियोड़ो—देखो 'पेखियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पईखियोड़ी)

पईठणो, पईठबो—देखो 'पैंठणो, पैंठबो' (रू.भे.)

उ०—बिड़द विनायक दोनूं जी आया, आया पवास्या सीळै बड़ तळै। बूझत नगर पईठ्या, पोळ बतावो ल डेली रै बाप री।
—लो.गी.

पईठणहार, हारो (हारी), पईठणियो—वि०।

पईठीजणो, पईठीजबो, पईठिओड़ो, पईठियोड़ो, पईठ्योड़ो
—भू०का०कृ०।

पईठियोड़ो—देखो 'पैंठियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पईठियोड़ी)

पईडउ—१ देखो 'पैंडो' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—पोतइ तूं छइ पांगळु, खेहू खोडू जांणि। अेकइ पईडइ अे रथी, नही चालइ निखांणि।—मा.कां.प्र.

२ देखो 'पैंडो' (रू.भे.)

पईयो—१ देखो 'पैंडो' (अल्पा०, रू.भे.)

२ देखो 'पईसो' (अल्पा०, रू.भे.)

पईसड़ो—देखो 'पईसो' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—देखो कोय-नी अभै री रंग? 'कैंनै ठा' ठाकुरजी री कांई मरजी है'। किता'क पईसड़ा कमाय लेवो हो।—वरसगांठ

पईसो—सं०पु० [सं० पस्य=पाय=पई+अंश=अंश अथवा पणांश]

१ तांबे का बना एक प्रकार का सिक्का जो पहिले एक रुपए का चोसठवां भाग माना जाता था और आजकल एक रुपए का सोवां भाग माना जाता है।

वि०वि०—पहिले का पैसा आजकल के पैसे से आकार में बड़ा व वजन में भारी होता था।

२ एक प्रकार का तोल जो एक तोले से बड़ा और १॥ तोले से कुछ कम होता था।

३ उक्त तोल का बाट जो पैसे के आकार का किन्तु पैसे से वजनी होता था और जिसे 'पक्को-पईसो' भी कहते थे।

३ रुपया, पैसा, धन, दौलत। उ०—लुगाई सरमावती धीमै मधुरै सुर में बोली—'कांई बताऊं बाईजी! झगड़ो बीजोई है। जूवै में रुपिया हार'र आया है। अबै म्हारा गैणां बेचण री कैवै है। नित ऊंगरा पईसा जोयीजै। किसी खाड मांय सूं लाऊं।—वरसगांठ

मुहा०—१ पईसो आणो—धन-दौलत का आना, रुपया प्राप्त होना।

२ पईसो ऊठणो—रुपया-पैसा खर्च होना।

३ पईसो उठाणो—धन का व्यर्थ खर्च करना, धन का नष्ट करना, कर्ज लेना, उधार लेना। जमा रकम में से खर्च हेतु लेना।

४ पईसो उडणो—धन का व्यर्थ ही खर्च होना, धन का नष्ट होना।

५ पईसो उडाणो—फचूलखर्ची करना, धन को नष्ट करना।

६ पईसो कमांणो—धन-दौलत का उपार्जन करना, रुपया पैदा करना।

७ पईसो करणो—पदार्थ आदि बेच कर रुपया कमाना, धन इकट्ठा करना।

८ पईसो खाणो—रिश्वत लेना, धोखा देकर रुपया पैसा हजम कर जाना।

९ पईसो खींचणो—सब धन ले लेना, खूब उपार्जन करना। चालाकी या चतुराई से धन बटोरना।

१० पईसो घड़णो—देखो 'पईसो कमांणो'।

११ पईसो जाणो—धन का नष्ट हो जाना।

१२ पईसो जुड़णो—धन का इकट्ठा होना, रुपए का जमा होना।

१३ पईसो जोड़णो—धन का इकट्ठा करना, धन का संग्रह करना।

१४ पईसो डूबणो—किसी कार्य या स्थान में लगा हुआ धन नष्ट होना, दिया हुआ धन प्राप्त न होना।

१५ पईसो ढोणो—सम्पत्ति को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना।

१६ पईसो पईसो करणो—हर वक्त धन के विषय में ही सोचना।

१७ पईसो पैदा करणो—देखो 'पईसो कमाणो'।
१८ पईसो वटोरणो—देखो 'पईसो समेटणो'।
१९ पईसो लगाणो—व्यापार में पूंजी लगाना।
२० पईसो समेटणो—खूब कमाना, व्यापार में लगे धन को वापस इकट्ठा करना, धन इकट्ठा करना।
२१ पईसो होणो—धन का होना, रुपया पैसा इकट्ठा होना।
रू०भे०—पइसो, पीसो, पैसो।
अल्पा०—पइड़ो, पइयो, पइसड़ो, पईयो, पईसड़ो, पीसो।

पउंजणी—देखो 'पूंजणी' (रू.भे.)(उर)

पउंतार—देखो 'पूंतार' (रू.भे.)
उ०—१ अथ मदावर लोह नी सांकळ त्रोड़ि, आलानस्तंभ मोडि, हस्तिमाळ भाजि पउंतार गाजइ कमाड फाडइ, मठ मंदिर पाडिइ, हस्ति नीं यूथ स्मरइ······।—व.स.
उ०—२ नव पडिहार दस प्रति सुवरणकार इग्यार सामंत वार महामंडळेस्वर, तेर पसाइता चउद चडियात, पनर पउतार सोळ महामसांणी।—व.स.

पउ-सं०पु० [सं० वपु] शरीर। उ०—वधै पउ अधिक तेज तनु वाधइ, बाळक तणा जोवतां बंध। दिन-दिन लई अंतरा देवी, वरस मास रा किसा निबंध।—महादेव पारवती री वेलि

पउढ़णो, पउढ़बो—देखो 'पोढ़णो, पोढबो' (रू.भे.)
उ०—मंदिर महुल मझार सेज तळाई मइ पउढ़त तउजी।
—स.कु.
पउढ़णहार, हारो (हारी), पउढ़णियो—वि०।
पउढ़िओड़ो, पउढ़ियोड़ो, पउढ्योड़ो—भू०का०कृ०।
पउढ़ीजणो, पउढ़ीजबो—भाव वा०।
पउढ़ाड़णो, पउढ़ाड़बो, पउढ़ाडणो, पउढ़ाडबो—देखो 'पोढ़ाणो, पोढ़ाबो' (रू.भे.)
उ०—१ सोलइ सुर सानिध करी रे, तुरत आव्या ते हाथ। पुत्र सोनानइ पाळणइ रे, पउढ़ाड़्यउ सुख साथ।—स कु
उ० —२ इंह घरि अछइ मंत्र, लाख तणउं छइ धवळहरो। माहि पउढ़ाडउ सत्र एकसरा सवि संहरउं।—पं पं.च.
पउढ़ाड़णहार, हारो (हारी), पउढ़ाड़णियो—वि०।
पउढ़ाड़िओड़ो, पउढ़ाड़ियोड़ो, पउढ़ाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।
पउढ़ाड़ीजणो' पउढ़ाड़ीजबो—कर्म वा०।

पउढ़ाड़ियोड़ो—देखो 'पोढ़ायोड़ो (रू.भे.)
(स्त्री० पउढ़ाड़ियोड़ी)

पउढ़िम—देखो 'पोढम' (रू.भे.)
उ०—पउढ़िम परहरियाह, आरंभ करि ऊपरि असुर। देवि दुवार धियाह, वेनतियाइत वीस-हथि।—अ. वचनिका

पउढ़ियोड़ो—देखो 'पोढ़ियोड़ो (रू.भे.)
(स्त्री० पउढियोड़ी)

पउतीय, पउतीयो—देखो 'पोतियो' (रू.भे.)
उ०—आंणीजे सुहड मोळि मोळीयां, पउतीयां जिम हुइ पटउळीयां।
—सालि सूरि

पउधारणो, पउधारबो—देखो 'पधारणो, पधारबो' (रू.भे.)
उ०—रांणो आयो 'रतनसी' लोक सहु आणंद। महिलां पउधारे तरै मेटयो सगळो दंद।—पं.च.चौ.
पउधारणहार, हारो (हारी), पउधारणियो—वि०।
पउधारिओड़ो, पउधारियोड़ो, पउधार्योड़ो—भू०का०कृ०।
पउधारीजणो, पउधारीजबो—भाव वा०।

पउधारियोड़ो—देखो 'पधारियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पउधारियोड़ी)

पउम—देखो 'पदम' (रू.भे.)
उ०—जिणंदत्तसूरि जिन नमहि पय पउम, मच्चु (गच्चु) नियमणि वहहि।—कवि पल्ह

पउमा—देखो 'पदमावती' (रू.भे.)
उ०—रंभा पउमा गवर गंग इण आगळ हरी।—वृं.स्त.

पउमावइ—देखो 'पदमावती' (रू.भे.)
उ०—कला केलि वर रूववर, करुणां केरवचंद। चरणि कमल सुंदर भमर, पउमावइ धरणिंद।—स.कु.

पउर—१ देखो 'प्रचुर' (रू.भे.) (जैन)
२ देखो 'पोर' (रू.भे.)

पउरिस, पउरिस्सि—देखो 'पोरस' (रू.भे.)
उ०—पड़ियाळ धूणि पउरिस्सि पूरि। गाजणइ तणइ पइठउ गुरूरि।
—रा.ज सी.

पउळ, पउळि—देखो 'पोळ' (रू.भे.)
उ०—१ जोगी वइठो पउळइ जाई, बभूत सरी सो खोळ कराई।
—वी.दे.
उ०—२ पगि-पगि पउळि, पउळि हस्ती को गज घटा। ती ऊपरि सातसात सइ, घनकधर सांवठा।—अ. वचनिका

पउहंतणो, पउहंतबो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)
उ०—वात सुणो (नी) सुळतांण(न) एह, वे वजीर सचा कहइ। दरवेस-वेस मलावदी आय, पउहंतउ विप्र पोह।—प.च.चौ.
पउहंतणहार, हारो (हारो), पउहंतणियो—वि०।
पउहंतिओड़ो, पउहंतियोड़ो, पउहंत्योड़ो—भू०का०कृ०।
पउहंतीजणो, पउहंतीजबो—भाव वा०।

पउहंतियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पउहंतियोड़ी)

पऊर—देखो 'प्रचुर' (रू.भे.)
उ०—चाचर सूर पऊर गह, चाचर चाढ़ै तेग। नवन नदै दुइ वांह-वधि, दुइ-दुइ वधै तेग।—गु.रू.बं.

पएस—देखो 'प्रदेस' (रू.भे.) (जैन)

पएसबंध—देखो 'प्रदेसबंध' (रू.भे.) (जैन)

पएसी—देखो 'प्रदेसी' (रू.भे.) (जैन)

पम्रोहर—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)

उ०—उन्नत-पीन-पम्रोहर नारी, कडी निगोदर उर धरि हारि। इसी नारि घरि हुई दुय च्यारी, अउर किसूं छइ सरगह बारि। —लो.गी.

पकड़-सं०स्त्री० [सं० प्रकृष्ट, प्रा० पकड या पकड्ढ] १ पकड़ने की क्रिया या भाव, ग्रहण।

मुहा०—पकड़ में आणो—पकड़ा जाना, हाथ लगना, दाव में फसना या आना, घात में आना, मिलना, वश में होना।

२ पकड़ने का ढंग।

३ अशुद्धि, दोष आदि ढूंढ निकालने की क्रिया या भाव।

४ राग में आये स्वरों का एक ऐसा छोटा स्वर-समूह जो राग के पूरे रूप को प्रकट करता हो।

५ एक प्रकार की संडासी जिससे चीजें पकड़ी जाती हैं।

६ मस्तिष्क में बैठना, समझ में आना।

पकड़णो, पकड़बो-क्रि०स० [सं० प्रकृष्ट, प्रा० पकड या पकड्ढ] १ किसी पदार्थ को दृढ़ता से इस प्रकार छूना या हाथ में लेना कि वह आसानी से छूट न सके अथवा इधर-उधर न जा सके, हिल न सके, थामना, गहना, धारण करना।

उ०—१ काल न आवै कायरां, वालम विसवा-वीस। पकड़े रण घर पंथ नूं, पकड़ै नंह पांडीस।—बां.दा.

उ०—२ मन में फेर धणी री माला, पकड़ै नंह जमदूत पलो। —बां.दा.

२ अधिकार में करना, काबू में करना, दबोचना।

उ०—सफरी पकड़ण सांतरो, बैठो ढब बुगलांह। कथा-बुरी करवा तणो, चोखो ढब चुगलांह।—बां.दा.

३ बंधन में डालना, गिरफ्तार करना।

उ०—की बांधव की दीकरा, हुकम दिए जो फेर। पातसाह जां नूं पकड़, चाढ़े गढ़ ग्वाळेर।—बां.दा.

४ गलती या भूल करने पर रोकना, टोकना।

ज्यूं—थूं जठै भूल करसी उठै म्हैं थनै पकड़सूं।

५ गति या व्यापार से निवृत्त करना, कुछ करने से रोकना, ठहराना, स्थिर करना।

६ अपने स्वभाव या प्रवृत्ति के अंतर्गत करना।

उ०—दूय-धन्न-मास बादियो दिखणी, भोम गई सो लिखत भवेस। पूगो नहीं चाकरी पकड़ी, दीघो नही मड़ंठो देस।—बां.दा.

७ आक्रांत करना, ग्रसना, घेरना।

ज्यूं—बीमारी नै पकड़ लियो।

८ धारण करना, रखना। उ०—कठण पड़ै जद कांम, हांम पकड़ गाढ़ो रहै। सो मलबत ही तांम, रांम भलो हुवै राजिया। —किरपारांम

९ ऊपर का ऊपर थाम लेना, सम्हालना।

उ०—जमरांण जंजीर जिका जकड़ै, पड़तो असमांण तिका पकड़ै। —मे.म.

क्रि०अ०—१० किसी पदार्थ को अपने में व्याप्त होने देना, किसी पदार्थ में व्याप्त होना।

ज्यूं—घासलेट री आग पकड़णो, कपड़ां री रंग पकड़णो।

११ प्रगतिशील के बराबर होना।

ज्यूं—दौड़ में मो'वन आगै हो पण म्हैं उण नै पकड़'र बराबर हो गयो, म्हैं मो'वन सूं दो कक्षा लारै हो पण उणनै पकड़ लियो, हमें म्हां बराबर हां।

पकड़णहार, हारो (हारी), पकड़णियो—वि०।

पकड़वाड़णो, पकड़वाड़बो, पकड़वाणो, पकड़वाबो, पकड़वावणो, पकड़वावबो, पकड़ाड़णो, पकड़ाड़बो, पकड़ाणो, पकड़ाबो, पकड़ावणो, पकड़ावबो—प्रे०रू०।

पकड़िओड़ो, पकड़ियोड़ो, पकड़योड़ो—भू०का०कृ०।

पकड़ीजणो, पकड़ीजबो—कर्म वा०।

कपड़णो, कपड़बो, पक्कड़णो, पक्कड़बो, पाकड़णो, पाकड़बो —रू०भे०।

पकड़ाड़णो, पकड़ाड़बो—देखो 'पकड़ाणो, पकड़ाबो' (रू.भे.)

पकड़ाड़णहार, हारो (हारी), पकड़ाड़णियो—वि०।

पकड़ाड़िओड़ो, पकड़ाड़ियोड़ो, पकड़ाड़योड़ो—भू०का०कृ०।

पकड़ाड़ीजणो, पकड़ाड़ीजबो—कर्म वा०।

पकड़ाड़ियोड़ो –देखो 'पकड़ायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पकड़ाड़ियोड़ी)

पकड़ाणो, पकड़ाबो-क्रि०स० [पकड़णो क्रिया का प्रे०रू०] १ किसी पदार्थ को दृढ़तापूर्वक हाथ में पकड़ाना, रखवाना, थमाना।

२ अधिकार में करवाना, काबू में कराना, दबोचवाना।

३ बंधन में डलवाना, गिरफ्तार करवाना।

४ गलती या भूल रुकवाना।

५ गति या व्यापार से निवृत्त करवाना।

६ अपने स्वभाव या प्रवृत्ति के अन्तर्गत करवाना।

७ आक्रांत करवाना, ग्रसाना, घेराना।

८ धारण कराना, रखाना।

९ ऊपर का ऊपर थमवा लेना, सम्हलवाना।

१० किसी पदार्थ को अपने में व्याप्त करवाना।

११ प्रगतिशील की बराबरी कराना ?

पकड़ाणहार, हारो (हारी), पकड़ाणियो—वि०।

पकड़ायोड़ो—भू०का०कृ०।

पकड़ाईजणो, पकड़ाईजबो—कर्म वा०।

पकड़ाड़णो, पकड़ाड़बो, पकड़ावणो, पकड़ावबो—रू०भे०।

पकड़ायोड़ो-भू०का०कृ०—१ किसी पदार्थ को दृढ़ता से पकड़ाया हुआ,

रखवाया हुआ, थमवाया हुआ।
२ अधिकार में करवाया हुआ, काबू में करवाया हुआ।
३ बंधन में डलवाया हुआ, गिरफ्तार करवाया हुआ।
४ गलती या भूल रुकवाया हुआ।
५ गति या व्यापार से निवृत्त करवाया हुआ।
६ अपने स्वभाव या प्रवृत्ति के अन्तर्गत करवाया हुआ।
७ आक्रांत करवाया हुआ, ग्रसाया हुआ, घेराया हुआ।
८ धारण करवाया हुआ, रखवाया हुआ।
९ ऊपर का ऊपर थमवाया हुआ, सम्हलवाया हुआ।
१० किसी पदार्थ को अपने में व्याप्त करवाया हुआ।
११ प्रगतिशील की बराबरी किया हुआ।
(स्त्री० पकड़ायोड़ी)

पकड़ावणो, पकड़ावबो—देखो 'पकड़ाणो, पकड़ावो' (रू.भे.)
उ०—ओडां ऊचाळो कियो, खुलिया नाठा जाय। मेल्हि फौज पकड़ाविया, आंणि रोकाया मांय।—जसमा ओडणी री वात
पकड़ावणहार, हारो (हारी), पकड़ावणियो—वि०।
पकड़ाविओड़ो, पकड़ावियोड़ो, पकड़ाव्योड़ो—भू०का०कृ०।
पकड़ावीजणो, पकड़ावीजबो—कर्म वा०।

पकड़ावियोड़ो—देखो 'पकड़ायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पकड़ावियोड़ी)

पकड़ियोड़ो-भू०का०कृ०—१ किसी पदार्थ को दृढ़ता से पकड़ा हुआ।
२ अधिकार में किया हुआ, काबू में किया हुआ, दबोचा हुआ।
३ बंधन में डाला हुआ, गिरफ्तार किया हुआ।
४ गलती या भूल करते हुए को रोका हुआ।
५ गति या व्यापार से निवृत्त किया हुआ, कुछ करने से रोका हुआ, ठहराया हुआ।
६ अपने स्वभाव या प्रवृत्ति के अन्तर्गत किया हुआ।
७ आक्रांत किया हुआ, ग्रसा हुआ, घेरा हुआ।
८ धारण किया हुआ, रखा हुआ।
९ ऊपर का ऊपर थामा हुआ, सम्हाला हुआ।
१० किसी पदार्थ को अपने में व्याप्त किया हुआ।
११ प्रगतिशील की बराबरी किया हुआ।
(स्त्री० पकड़ियोड़ी)

पकणो, पकबो-क्रि०अ० [सं० पचप्] १ कार्य सिद्ध होना।
२ मामला तय होना, सौदा पटना।
३ चौसर की गोटियों का सभी घरों को पार कर अपने घर में आना।
४ देखो 'पाकणो, पाकबो' (रू.भे.)
पकणहार, हारो (हारी), पकणियो—वि०।
पकवाड़णो, पकवाड़बो, पकवाणो, पकवाबो, पकवावणो, पकवावबो —प्रे०रू०।
पकाड़णो, पकाड़बो, पकाणो, पकाबो, पकावणो, पकावबो—
पकिओड़ो, पकियोड़ो, पक्योड़ो—भू०का०कृ०।
पकीजणो, पकीजबो—भाव वा०।

पकरणी-सं०स्त्री० [सं०] वृक्ष विशेष।
उ०—कणवीर पकरणी केतकी, बीजोरड़ी नाळेर।
—रुकमणी-मंगळ

पकल्ल-सं०पु० [सं० पक्षल:] घोड़ा (डि.को.)

पकवांन, पकवांनु-सं०पु० [सं० पक्वान्न] घी या तेल में तल कर बनाया हुआ भोज्य पदार्थ, पकाया हुआ पौष्टिक भोजन।
उ०—१ पकवांनै पांनै फळै सुपुहपे, सुरंगे वसने दरव स्रव। पूजियै कसटि भंगि वनसपती, प्रसूतिका होळिका प्रव।—वेलि
उ०—२ धवळतणी सर धोरणि, तोरणि तरुवर पांन। गेलि गहिल्ली मोरडो, ओरडी भरइं पकवांनु।
—जयसेखर सूरि
रू०भे०—पक्वांन, पक्वांनु पक्वांन्न।

पकवासय-सं०पु० [सं० पक्वाशय] पाचन संस्थान का वह भाग जहां खाया हुआ भोजन पचता है।

पकाई-सं०स्त्री० [सं० पक्व] १ पकने या पकाने की क्रिया या भाव।
२ पकाने की मजदूरी।
३ दृढ़ता। उ०—तद पातसाहजी अरज कबूल करी। अर इसी कही जो करनसिंघ कूं यहां चूक करवाय देंगे। इसी पकाई हुयगी थी।—द.दा.
४ कठोरपन।
५ निपुणता, चतुराई।
६ सतर्कता।

पकाड़णो, पकाड़बो—देखो 'पकाणो पकाबो' (रू.भे.)
पकाड़णहार, हारो (हारी), पकाड़णियो—वि०।
पकाड़िओड़ो, पकाड़ियोड़ो, पकाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।
पकाड़ीजणो, पकाड़ीजबो—कर्म वा०।

पकाड़ियोड़ो—देखो 'पकायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पकाड़ियोड़ी)

पकाणो, पकाबो-क्रि०स० [सं० पचप्] १ अनाज, फलादि को परिपक्वावस्था प्राप्त कराना।
२ आंच या गरमी देकर गलाना या नरम करना, सिझाना, सिद्ध कराना, रिंधाना।
३ आंच देकर कड़ा या लाल करना।
४ फोड़ा, फुन्सी या घाव को मवाद भर आने की अवस्था तक पहुँचाना।
५ कार्य सिद्ध कराना, मामला तै कराना, सौदा पटाना।
पकाणहार, हारो (हारी), पकाणियो—वि०।
पकायोड़ो—भू०का०कृ०।

पकाईजणो, पकाईजबो—कर्म वा० ।

पकणो, पकबो—अक० रू० ।

पकाड़णो, पकाड़बो, पकावणो, पकावबो—रू०भे० ।

पकायोड़ो-भू०का०कृ०—१ परिपक्वावस्था को प्राप्त किया हुआ। (अनाज, फलादि)

२ आंच देकर कड़ा या लाल किया हुआ ।

३ आंच या गरमी देकर गलाया या नरम किया हुआ ।

सिझाया हुआ ।

४ फोड़ा, फुन्सी या घाव को मवाद भर आने की अवस्था में पहुंचाया हुआ ।

५ कार्य सिद्ध कराया हुआ, मामला तै कराया हुआ, सौदा पटाया हुआ ।

(स्त्री० पकायोड़ी)

पकार-सं०पु० [सं०] 'प' अक्षर ।

पकाव-सं०पु० [सं० पक्व] १ पकने की क्रिया या भाव ।

२ मवाद, पीब ।

पकावणो, पकावबो—देखो 'पकाणो, पकाबो' (रू.भे.)

पकावणहार, हारो (हारी), पकावणियो—वि० ।

पकाविग्रोड़ो, पकावियोड़ो, पकाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पकावीजणो, पकावीजबो—भाव वा० ।

पकावियोड़ो—देखो 'पकायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पकावियोड़ी)

पकियोड़ो-भू०का०कृ०—१ कार्य सिद्ध हुवा हुआ ।

२ मामला तय हुवा हुआ, सौदा पटा हुआ ।

३ चौसर की गोटियां सभी घरों को पार कर अपने घर में आई हुई ।

४ देखो 'पाकियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पकियोड़ी)

पकीनकल—देखो 'पकीरोकड़' ।

पकीरोकड़-सं०स्त्री०यौ० [सं० पचष्+राज० रोकड़] महाजनों की वह बही जिसमें कच्ची रोकड़ (दैनिक आय व्यय की पुस्तिका) की सही-सही प्रतिलिपि की जाय ।

पकोड़ी—देखो 'पकोड़ो' (अल्पा., रू.भे.)

पकोड़ो-सं०पु० [सं० पक्व+घटक] (स्त्री० पकोड़ी) १ घी या तेल में तल कर फुलाया हुआ बेसन या पीसी हुई दाल का वटक ।

२ देखो 'पक्को' (अल्पा., रू.भे.)

अल्पा०—पकोड़ी ।

पको—देखो 'पक्को' (रू.भे.)

उ०—तठै राजावां सारां मनसोभो कीयो जो किणी ही तरै साची खबर मंगावो, कांई मचकूर है। तद श्री साहबै री फकीर वडो नेक है। अरु करणसींघजी रै सागै हो सूं इण क्यो हूं परतखांन नूं पूछ'र पकी खबर लाऊं छूं ।—द.दा.

(स्त्री० पकी)

पक्कंबर—देखो 'पैगंबर' (रू.भे.)

उ०—कहै साह जिहंगीर, 'खुरम' सुरतांण सुणै-रहंत । तम सूर हम खुदाइ, पीर पक्कंबर मुद्दत ।—गु रू.ब.

पक्कढणो, पक्कढबो—देखो 'पकड़णो, पकड़बो' (रू भे.)

उ०—जिहंगीर कहै जम-रूप हुय, खुरम कहां जाइ बप्पडो। पैसे पयाळ अंबर चढ़ै, जिहां जाइ तिहां पक्कडो ।—गु रू.बं.

पक्कण-सं०पु० [सं० पक्कणः] १ एक अनार्य देश का नाम (सभा.)

२ बर्बर या चाण्डाल का झोंपड़ा ।

३ अनार्य देशवासी (व.स.)

पक्को-वि० [स० पक्व] (स्त्री० पक्की) १ फल या अनाज जो परिपक्व हो गया हो, जो कच्चा न हो ।

ज्यूं—पक्की फाकड़ी, पक्को आंबो ।

२ जिसमें किसी प्रकार का अभाव न हो, पूर्णता को प्राप्त, पूर्ण, पूरा । उ०—ज्यूं कोई रै स्रद्धा बैसांणी नै कहै, हिवै तूं गुरु कर। तब ते कहै दोय च्यार जणां नै पूछ सूं तथा आगला गुरु नै पूछ सूं । ते कहसी तौ गुरु कर सूं । जब जाणणो इण रै स्रद्धा पक्की बैठी नहीं ।—भि.द्र.

३ शिक्षित, नियंत्रित । उ०—तांहरा नरबदजी वैहलिया २ मोल लिया । सो वैहल जोड़ नै नित फेरै, भूंय चाढै । रातिब दे । यूं करतां तीस कोस जाय अर पाछा आवै । इसी भूंय चाढिया तांहरां जाणियो हमैं पक्का हुआ ।—नैणसी

४ जो प्रौढता को प्राप्त हो गया हो, जिसमें हीर पड़ गई हो, परिपुष्ट ।

ज्यूं—पक्की लकड़ी ।

५ जो आंच पाकर कड़ा और लाल हो गया ।

ज्यूं—पक्की ईंट, पक्की मटकी, पक्को माटो, पक्को हांडी ।

६ कुशल निपुण, अनुभवप्राप्त दक्ष, निष्णात ।

मुहा०—पक्को पीर—पूर्ण अनुभवी ।

७ आंच पर गलाया या नरम किया गया हो, सीझ चुका हो, पूर्ण रूप से पकाया हुआ ।

८ जिसके विरुद्ध कहा न जा सके, अखण्डनीय, अकाट्य ।

उ०—तीरां री भाथड़ो पूठै बांध जुध किया जीतै, ज्यूं भेख धारयां सूं चरचा करणी तौ पक्का जाब सीखनैं करणी, कच्चा जाब सूं न करणी ।—भी.द्र.

९ जिसका मान प्रामाणिक हो, टकसाली ।

ज्यूं—पक्को मण, पक्को सेर ।

१० जिसमें सुरखी, चूने आदि का उपयोग हो, ईंट या पत्थर का बना हुआ भवन (भवन)

उ०—वो बैठो-बैठो मन में मंनसूबा बांधण लागो कै घरे जातां ही

अेक पक्की हवेली चुणावूंला।—फुलवाड़ी
११ उबाला हुआ, औटाया हुआ (पानी)
१२ स्थिर, दृढ़, टिकाऊ।
ज्यूं०—पक्को रंग।
१३ जिसमें खालिस सोना या चांदी का तार लगा हो, जो नकली न हो।
ज्यूं—पक्को कांम।
१४ न टलने वाला, निश्चित, अटल।
ज्यूं—पक्की बात, पक्को मोरत।
उ०—१ थूं घी न लावै तौ ई म्हैं थारौ की विगाड़ नी करूंला। म्हैं थनै पक्को वचन दूं हूं।—फुलवाड़ी
उ०—२ उण रा सगरा डील में गुळी रौ एड़ौ पक्को रंग बैठो जको कदै ई मगसो नीं पड़ सकै।—फुलवाड़ी
१५ ब्राह्मणों द्वारा परिभाषित विशिष्ट भोजन।
ज्यूं—पक्को भोजन, पक्की रसोई।
वि०वि०—इस प्रकार के भोजन में घी की प्रधानता होती है और भोज्य पदार्थों को घी में तल कर उनमें से पानी का अंश समाप्त कर दिया जाता है। अतः जहां पानी की मात्रा गौण हो जाती है और घी की प्रधानता हो जाती है वह पक्का भोजन होता है।
१६ प्रामाणिक सनद।
ज्यूं—पक्को पट्टो, पक्को चिट्ठो, पक्की रसीद।
१७ देखो 'पाको' (रू.भे.)
रू०भे०—पको।
अल्पा०—पकोड़ो।

पक्कोपईसो-सं०पु०—मोटे आकार का तांबे का वजनी पैसा जो पहले तोलने के काम आता था।
वि०वि०—इस पैसे का वजन डेढ तोले से अधिक व दो तोले से कुछ कम होता था।

पक्ख—देखो 'पक्ष' (रू.भे.)
उ०—१ पित-मात तारण पक्ख। सिणगार तेरह सक्ख।
—वचनिका
उ०—२ बिहूं पक्ख ऊजळी, कमळि निकळंक कळानिधि। मांण महातम मरट, अगड सुरातन अम्बधि।—गु.रू.बं.
उ०—३ विखणाधी को फतै पंच, खट पक्खां मांही।
—गु.रू.बं.

पक्खर—देखो 'पाखर' (रू.भे.)
उ०—है थाट समंद जांण हिलोळ, पमंगां हमस पक्खर रोळ।
—गु.रू.बं.

पक्खरणौ, पक्खरबौ—देखो 'पाखरणौ, पाखरबौ' (रू.भे.)
उ०—गजसिंघ लियण जाळोर गढ़। चढ़ियौ हयि गयि पक्खरै।
—गु.रू.बं.
पक्खरणहार, हारौ (हारी), पक्खरणियौ—वि०।
पक्खरिओड़ौ, पक्खरियोड़ौ, पक्खरयोड़ौ—भू०का०कृ०।
पक्खरीजणौ, पक्खरीजबौ—कर्म वा०।

पक्खराळ—देखो 'पखराळ' (रू.भे.)
२ देखो 'पाखर' (मह०, रू.भे.)

पक्खराळौ—देखो 'पखराळ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पड़ै पखराळा, तड़प्फै उताळा। जळां तोछ जेहां, ओपै मच्छ एहा।—सू.प्र.
२ देखो 'पाखर' (अल्पा., रू.भे.)
(स्त्री० पखराळी)

पक्खरियं—देखो 'पाखर' (रू.भे.)
उ०- तरणातप टोप बगत्तरयं। प्रतबंब चमंकत पक्खरियं।
—रा.रू.

पक्खरियोड़ौ—देखो 'पाखरियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पक्खरियोड़ी)

पक्खरी—देखो 'पाखर' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—असवारी ऊपरि चढिया, परिग्रोह्यक पुंतार। सूंडा सोविन पक्खरी, करिवर अंकुस सार।—मा.कां.प्र.

पक्खरेत, पक्खरैत—देखो 'पखरैत' (रू.भे.)

पक्खी-सं०स्त्री० [सं० पक्ष+रा.प्र.ई] १ मृत व्यक्ति के मृत्यु दिन से पन्द्रह दिन तक एक ब्राह्मण नित्य जिमाने की प्रथा (कायस्थ)
२ देखो 'पक्षी' (रू.भे.)
३ देखो 'पखी' (रू.भे.)
वि०—सहायक, मददगार।
उ०—चढयौ पीरखांने बाज लक्खी। जिणूं के रहे पीर चौबीस पक्खी।—ला.रा.

पक्खै—देखो 'पखै' (रू.भे.)
उ०—पखै इंद आवध्य, कमण झेलै कर वज्जर। पक्खै खाटंगधर, जरै कुण खारौ जैहर।—गु.रू.बं.

पक्वांन, पक्वांनु, पक्वान्न—देखो 'पकवांन' (रू.भे.)
उ०—१ मनसा के पक्वांन सौ, क्यों पेट भरावै। ज्यों कहिये त्यों कीजिये, तब ही बण आवै।—दादूवांणी
उ०—२ माहि साठी चोखानउ वाकु, तीण समारी, नगर मांहि नीवेडी, लाडूआं री तेडी नीपजइं पक्वांनु पणि अति हि सुवांनु।
—व.स.
उ०—३ फग फगां फीणां दुग्ध वरण दहीथरां, घ्रत वरण घारी सुकुमाळ साकुळी, सेव साकुळी, परीसणहारी नहीं आकुळी, भखट मांही सउतळया सेवञ्यां प्रभ्रति पक्वान्न।—व.स.

पक्ष-सं०पु० [सं० १ किसी वस्तु, भवन, सेना आदि का दायां या बायां भाग, बगल, पार्श्व, ओर, तरफ।
२ हाथी, घोड़ा, ऊंट आदि का दक्षिण पार्श्व या वाम पार्श्व।
३ किसी विषय का कोई अंग, किसी प्रसंग में विचार करने को

भिन्न भिन्न बातों में से कोई एक पहलू।
४ किसी विषय के दो पहलुओं में से कोई एक जिसका खंडन या मंडन किया जाय। विचार करने योग्य विषय की कोई कोटि।
मुहा०—१ पक्ष गिरणौ—युक्तियों द्वारा मत सिद्ध न हो सकना। शास्त्रार्थ या विवाद में पराजय पाना।
२ पक्ष ढीलौ पड़णौ—मत का युक्तियों द्वारा पुष्ट न हो सकना।
३ पक्ष प्रबळ होणौ—मत का युक्तियों द्वारा पुष्ट होना।
४ पक्ष में—मत या बात के प्रमाण में।
५ किसी व्यक्ति या पदार्थ के प्रति किसी की अनुकूलता या समर्थन की स्थिति, वादी या प्रतिवादी के संबंध में अनुकूलता की स्थिति।
मुहा०—१ पक्ष करणौ—तरफदारी करना, झगड़े टंटे में किसी की ओर होना।
२ पक्ष ढीलौ पड़णौ—अपने समर्थकों में शिथिलता आना।
३ पक्ष प्रबळ होणौ—समर्थकों का प्रबल होना।
४ पक्ष में—समर्थन में, अनुकूलता में।
५ पक्ष लेणौ—देखो 'पक्ष करणौ'।
यौ०—पक्षपात।
६ चांद्रमास के दो भागों में से एक।
७ वंश, कुल।
८ निमित्त, लगाव, संबंध।
ज्यूं-औ कांम इण तरै करणौ थारा पक्ष में ठीक नहीं है।
९ वह वस्तु जिसमें साध्य की स्थिति संदिग्ध हो (न्या०)
१० किसी की ओर से लड़ने वालों का दल, सेना, फौज।
११ सहायक, सखा, साथी।
१२ सहायकों, सवर्गों का दल, साथ रहने वालों का दल।
१३ किसी विषय के संबंध में भिन्न भिन्न मत रखने वालों का विशिष्ट वर्ग या दल, वादियों या प्रतिवादियों का दल।
१४ पंख, पर, डैना।
१५ बाण में लगा पर या पंख।
१६ शरीर का दायां या बायां भाग, शरीर के एक ओर का भाग।
यौ०—पक्ष घात।
१७ मदद, सहायता। उ०—राव स्त्री जैतसिहजी राज कियौ। स्त्री भगवती, माताजी 'करणीजी' वडी पक्ष राखी।
—ठाकुर जैतसी राठौड़ री वारता
१८ पक्षी।
१९ परिस्थिति, हालत, अवस्था।
२० घोड़ा, अश्व।
२१ राजा की सवारी का हाथी, हाथी।
२२ दो की संख्या* (डिं.को.)
रू०भे०—पखिओ, पक्ख, पखउ, पखत, पखि, पखी, पखौ, पख्ख, पच्छ, पाख, पाखौ।
अल्पा०—पखड़ौ।
पक्षता-सं०स्त्री० [सं०] तरफदारी, पक्षपात।
पक्ष-धर-सं०पु० [सं० पक्षधरः या पक्षधर] १ चन्द्रमा, चांद (डिं.को.)
२ पक्षपाती।
३ पक्षी।
वि०—किसी भी पक्ष में रहने वाला, पक्ष विशेष में रहने वाला।
पक्षपात-सं०पु० [सं०] न्याय अन्याय का विचार त्याग कर किसी का पक्ष ग्रहण करना, तरफदारी। उ०—पक्षपात विन महा प्रतापी, निरभय तेज उनंगी।—ऊ.का.
रू०भे०—पखपात, पखापखि, पखापखी, पखायत।
पक्षपाती-वि० [सं०] न्यायान्याय का विचार किए बिना ही किसी की तरफदारी करने वाला, तरफदार।
रू०भे०—पक्षपाती।
पक्षवरद्धिनी-सं०स्त्री० [सं० पक्षवर्द्धिनी] सूर्योदय से लेकर अगले सूर्योदय तक रहने वाली द्वादशी।
पक्षघात-सं०पु० [सं०] एक प्रकार का वात रोग जिससे शरीर का बायां या दाहिना पार्श्व क्रियाहीन हो जाता है, फालिज।
उ०—बुरहांनपुर हाडा राव 'रतन' री हवेली कनै डेरा हुवा। वडा जेसिंघजी.रै मास दोय असमाध रही, पक्षाघात हुवौ।
—बां.दा.ख्यात
रू०भे०—पखघात, पखाघात, पख्याघात, पखवाघात।
पक्षितरथ-०पु०यौ० [सं० पक्षितीर्थ] दक्षिण भारत का एक तीर्थ।
पक्षिराज-सं०पु० [सं०] १ पक्षियों का राजा, गरुड़।
२ जटायु।
रू०भे०—पंखराउ, पंखराऊ, पंखराज, पंखराय, पंखराव, पंखाराउ, पंखाराज, पंखाराव, पंखीराव, पखीराज, पच्छीराज।
पक्षी-वि० [सं० पक्षिन्] १ परों वाला, पंखों वाला।
२ पक्षों से सम्पन्न।
सं०पु०—१ पंखों के बल उड़ने वाला प्राणी, चिड़ियादि।
पर्या०—अंडज, कळकंठी, खग, तरसंग, पतंग, पतत्री, पत्र-रथ, पत्री, पद-दरप, विहंगम, सकुनी, सजव, हरिवती।
२ मध्य ह्रस्व की पांच मात्रा का नाम ऽ।ऽ (डिं.को.)
रू०भे०—पंख, पंखि, पंखी, पंची, पंछि, पंछी, पक्खी, पच्छी, पछि, पछी।
अल्पा०—पंखिओ, पखियौ, पंखीओ, पंखीड़ौ, पंखीयौ, पंखेरुओ, पंखेरू, पंखेरूओ, पंखेरुवौ, पंछियौ, पंछीड़ौ।
मह०—पंखांण, पंखाळ, पंखाळौ, पंखोड़, पंखोस, पंखेसर।
पक्षीराज—देखो 'पक्षिराज' (रू.भे.)
पखंड—देखो 'पाखंड' (रू.भे.)
पखंडी—देखो 'पाखंडी' (रू.भे.)
पख—देखो 'पक्ष' (रू.भे.)

उ०—१ गुण गंध ग्रहित गिळि गरळ उगळित, पवण वाद ए उभय पख। स्रीखंड सैल संयोग संयोगिणि, भणि विरहिणि भुयंग मुख।
—वेलि

उ०—२ गोपाळ रौ पख ले'र एक जणौ बोलियौ। मालकां कंई रौ पलमौ नहीं गुमावणौ।—वरसगांठ

उ०—३ पाळे पख वार किता पहलाज। किया सुख सेवग सारण काज।—ह.र.

उ०—४ रितु किहि दिवस सरस राति किहि सरस, किहि रस संध्या सुकवि कहंति। बे-पख सूघति बिहूं मास बे, वसंत ताइ सारिखौ वहंति।—वेलि

उ०—५ जे दोही पख ऊजळा, जूझण पूरा जोध। सुणतां वें मइ सौ गुणा, बीर प्रकासण बोध।—वी.स.

उ०—६ देवकी'र वसुदेव, पख ऊजळ माता पिता। जिण कुळ जनम अजेय, सो किम विसरयौ सांवरा।—रांमनाथ कवियौ

उ०—७ उर दोनूं पख आंणिया, साई एकण सत्थ। 'अवरंग' तू उवेळणौ, हिंदवांणां ग्रह हत्थ।—रा.रू.

उ०—८ पढै अपढै सारसा, जो नहि आतम लक्ख। सिल कोरी सादी 'अखा', दोनां हि डूबण पक्ख।—अखौ

पखअंधियार—देखो 'अंधारोपख' (रू.भे.)

उ०—मास मिगस्सर द्वादसी, इळ पुड़ पखअंधियार। जुड़ियौ गुण-चाळै 'जगौ', अजमल छळै उदार।—रा.रू.

पखइ, पखई—देखो 'पखै' (रू.भे.)

उ०—१ चढिया जाइ पन्नंग कोप चढि, रोस सरोस थरकिया रोम। पावक धूंवइ पखइ परजळियउ, विकटी जटा विलागी वोम।
—महादेव पारवती री वेलि

उ०—२ भाद्रवडइ भागी मणा, उतपति अन्न सगाळ। कांम-कंदळा! तू पखई, माहरइ देहर दुकाळ।—मा.कां.प्र.

पखउ—१ देखो 'पक्ष' (रू.भे.)

उ०—एक पखउ मइ तो जांणियौ जी, स्वांमि सेवक व्यवहार। धवलड़ो दूध जिम देखि नै जो, हूं रच्यौ सरळ अनुहार।
—वि.कु.

२ देखो 'पखै' (रू.भे.)

उ०—१ भागीरथ भजि रे भोळी चक्रवत, आगा लगइ जोवता अथाह। संकर देव पखउ कुण साहइ, पडती गंग तणा प्रवाह।
—महादेव पारवती री वेलि

उ०—२ संकर देव झटखउ कुण साहइ, पडती गंग तणा झट पंख।
—महादेव पारवती री वेलि

पखक्रस्न—देखो क्रसणपख' (रू.भे.)

उ०—अरक दिखण मग अयन, मास अगटन गुण मंडत। क्रत-मंगळ पखक्रस्न, उदय आणंद अखंडत।—रा.रू.

पखघात—देखो 'पक्षाघात' (रू.भे.)

पखणपती-सं०पु०यौ० [सं० पक्षिपति] गरुड़।

उ०—गजराज धनुख महुरा गरळ, पखण-पती ते लोक पत। सुर नर सुरेस रव ब्रम सिव निध, विलसे मोताव......नित।—अज्ञात

पखतरणि-सं०पु०यौ० [सं० पक्ष+तरणि] शुक्ल पक्ष।

उ०—तिथ तेरस पख-तरणि, वार सुभ करण चंद्रवर। एकादस ग्रह अरक, लगन कन्या लाभंकर।—रा.रू.

पखतूट-सं०पु० [सं० पक्ष=त्रुटित] रचना में अनुप्रासों की कहीं बाहुल्यता तथा कहीं न्यूनता से होने वाला काव्य संबंधी एक दोष।

उ०—सबै दोख पखतूट, जोड़ पतळी अद जालम।—र.रू.

पखनी-सं०स्त्री० [सं० पक्षिणी] रात्रि, निशा (अ.मा.)

पखपाड़ी-सं०पु० [सं० पक्ष+पत्] हीरे की विकृति जिसमें हीरे का मूल्य घट जाता है।

उ०—साच सब हीरा खरा, राखै विरळा कोय। पखपाड़ा लागै नहीं, सो फिर हीरा होय।—ह.पु.वा.

पखपात—देखो 'पक्षपात' (रू.भे.)

उ०—गोधूळक वेळा हुई। हीरू लिखमीजी री पूजन करण बैठी कयौ—मा! तूं मा हो'र पखपात कियां करण लागगी?
—वरसगांठ

पखपाती—देखो 'पक्षपाती' (रू.भे.)

उ०—कुगुरां रा पखपाती नै साधु सुहावै नहीं।—भि.द्र.

पखर—देखो 'पाखर' (रू.भे.)

उ०—झळहळ पखर सिलह अन्न झालै, हय असवार बोय लख.हालै।
—सू.प्र.

पखरणौ, पखरबौ—देखो 'पाखरणौ, पाखरबौ' (रू.भे.)

उ०—रह सज्जिय गय गुडिय तुरिय पखरिय पलाणिये।
—अमयतिक यती

पखरणहार, हारौ (हारी), पखरणियौ—वि०।

पखरिग्रोड़ौ, पखरियोड़ौ, पखरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पखरीजणौ, पखरीजबौ—कर्म वा०।

पखरांण—देखो 'पाखर' (मह., रू.भे.)

उ०—१ सिलहांण अंगांण वेधांण सरां। पखरांण केकांण अमोच परां।—सू प्र.

उ०—२ धमंख पखरांण नीसांण वज घूमरां, परी धाक धकत होय अग पडै पास।—गु.रू.बं.

पखराड़णौ, पखराड़बौ—देखो 'पखराणौ, पखराबौ' (रू.भे.)

पखराड़णहार, हारौ (हारी), पखराड़णियौ—वि०।

पखराड़िग्रोड़ौ, पखराड़ियोड़ौ, पखराड़योड़ौ—भू०का०कृ०।

पखराड़ीजणौ, पखराड़ीजबौ—कर्म वा०।

पखराड़ियोड़ौ—देखो 'पखरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पखराड़ियोड़ी)

पखराणौ, पखराबौ-क्रि०स० [पाखरणौ क्रि० का प्रे०रू०] हाथी घोड़े

आदि को झूल या कवच से सुसज्जित करवाना ।

पखराणहार, हारौ (हारी), पखराणियौ—वि० ।

पखरायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पखराईजणौ, पखराईजबौ—कर्म वा० ।

पखराड़णौ, पखराड़बौ, पखरावणौ, पखरावबौ—रू०भे० ।

पखरायोड़ौ—भू०का०कृ०—(हाथी, घोड़े आदि) झूल या कवच से सुसज्जित करवाए हुए ।

(स्त्री० पखरायोड़ी)

पखराळ—स०पु० [सं० प्रखर: = प्रा. पक्खर = पाखर + आलुच्]

१ पाखर से सुसज्जित घोड़ा या हाथी ।

२ घोड़ा । उ०—१ हले पखराळन पंच हजार ।—वं.भा.

उ०—२ सझिया पखराळ सजावट का, नखरा कुलटा कि बटा नट का ।—मे.म.

रू०भे०—पक्खराळ ।

अल्पा०—पक्खराळौ ।

३ देखो 'पाखर' (मह.,रू.भे.)

उ०—अह-अह बाहर बाज अंवाळ, पमंगां पीठ मंडे पखराळ ।
—गो.रू.

पखराळौ—वि० [सं० प्रखर प्रा.=प्रक्खर=पाखर] (स्त्री० पखराळी)

१ पाखर सम्बन्धी । २ पाखरयुक्त, पाखर सहित ।

उ०—१ आखत पग ऊठतां पूठ साखत पखराळी । काच हुलम कोमाच नाच पातर नखराळी ।—मे.म.

उ०—२ साझंदा हुय आतसां, दुहुं दळ दुरदाळा । वहूं दळां हुय साझंदा, पमंगा पखराळा ।—सू.प्र.

२ देखो 'पखराळ' (अल्पा;रू.भे.)

पखराव—देखो 'पक्षिराज' (रू.भे.)

पखरावणौ, पखरावबौ—देखो 'पखराणौ, पखराबौ' (रू.भे.)

उ०—अलुखांनि हाथी पखराव्या, पल्लांणाव्या तोखार । हल हल करी भणी भजूयाळां, सांचरिया असवार ।—कां.दे.प्र.

पखरावणहार, हारौ (हारी), पखरावणियौ—वि० ।

पखराविओड़ौ, पखरावियोड़ौ, पखराव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पखरावीजणौ, पखरावीजबौ—कर्म वा० ।

पखरावियोड़ौ—देखो 'पखरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पखरावियोड़ी)

पखरियोड़ौ—देखो 'पाखरियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पखरियोड़ी)

पखरेत, पखरैत—वि० [सं० प्रखर:, प्रा० पक्खर=कवच+रा.प्र. एत या ऐत अथवा प्रखरेतस्] पाखर से सुसज्जित, कवचधारी ।

उ०—जळधार अग्राज चढि घोम जोर । घण-निसा अमावस तिमर घोर । पखरैत भिड़ज जरदैत पूर । संघार हुवै मणपार सूर ।
—सू.प्र.

सं०पु०—१ योद्धा, वीर, सामन्त । उ०—१ जठै गजारूढ चालुक्य-राज सांमुहौ धकाय अलाव धकतां लोयणां मिळाय आपरा पखरैतां नूं प्रेरणा रै काज अनेक प्रसंसा रा प्रपंच भणियौ ।—वं.भा.

उ०—२ अर पाछै सूं आप भी पांच हजार ५००० पखरैतां रै साथ अरबुदळ पूगण रौ प्रस्थांन करियौ ।—वं.भा.

२ घोड़ा । उ०—जिस बखत छतीसवंस राजकुळ उमराव सिलह आवधां सूं कड़ाजूड़ होयके पखरैतूं चढ़ि आए, दळां का पारंभ समंद सा दरसाए ।—सू.प्र.

रू०भे०—पाखरेत, पाखरैत ।

पखवाड़ौ, पखवारौ—सं०पु० [सं० पक्ष+पाटक:, प्रा० पक्ख+वाड]

१ चान्द्र मास का एक पक्ष ।

२ पन्द्रह दिन का समय । उ०—१ सजन फळजौ फूल ज्यूं, वाड़ जिम विस्तरजौ । मासां पखवाड़ां मिळै, इणहिज रंग रहिजौ ।
—जलाल बूबना री वात

उ०—२ उणरौ माजनौ पाडतौ वा कह्यौ—हें ओ, थांनै थोड़ी घणी सरम को मावै नीं ? थांरा सुसरौजी नै चलियां पूरौ पखवाड़ौ ई नीं बीत्यौ अर थें ढोली री गळाई रागां करौ ।—फुलवाड़ी

पखवासउ—सं०पु० [सं० पक्ष+वास:] पक्षपर्यन्त का समय, पन्द्रह दिन का समय । उ०—तप नइ अधिकारइ पखवासउ तप सार । पडिवा थी लीजइ पनरह तिथि सुविचार ।—स.कु.

पखांण—वि० पखांणा—देखो 'पासांण' (रू.भे.)

उ०—१ मगज करता जिके चत्रांमां मंडांणा । वरहर पखांणां बीच वसिया ।—नाथौ बारहठ

उ०—२ जरद् लाल सेत स्याह, जाळियां पखांण ए ।—गु.रू.बं.

पखांणभेद—देखो 'पासांणभेद' (रू.भे.)

पखांणी—देखो 'पासांणी' (रू.भे.)

पखा—क्रि०वि० [सं० पक्ष] ओर, तरफ । उ०—१ बि पखा अहंपुरस सांचरिया, क्षेत्र मूडा विउं । बिहुं गमी सन्नद्ध बद्ध नीपना ।
—व.स.

उ०—२ बिहु पखा हाकि-हाकि, हिणि-हिणि, मारि-मारि नाठउ-नाठउ, भागउ-भागउ, इणि परि सुभट सब्द नीपजावइं ।—व.स.

पखाउज—देखो 'पखावज' (रू.भे.)

पखाउजकार, पखाउजिय, पखाउजी—वि० [सं० पक्ष+वाद्य+कार]

पखावज बजाने वाला । उ०—१ आल विणिकार अलविकार कूट-कार वंसकार यंत्रकार उलकार तलकार ताळाकार भुंगळकार आउज-कार पखाउजकार गीतकार ।—व.स.

सं०पु०—पखावज बजाने वाली जाति का व्यक्ति ।

उ०—१ आल वणिकार वीणाकार वंसकार उतिकार मोन-ताळकार अडाउजिय पखाउजिय पाटलिहिक प्रमुख ।—व.स.

उ०—२ आल विणिकार वीणाकार वंसकार आउज्जी पखाउजी ।
—व.स.

पखाघात—देखो 'पक्षाघात' (रू.भे.)

पखाचळ-वि० [सं० पक्ष+अचल] पक्ष को अचल करने वाला, पक्ष को दृढ़ करने वाला।

पखापखि, पखापखी—देखो 'पक्षपात' (रू.भे.)

उ०—१ पखापखी मन छाडिए, निरपख होय सुख देख। निरपख सूं निरपख मिळै, तौ पूरण ब्रह्म अलेख।—ह.पु.वा.

उ०—२ दादू पखापखी संसार सब, निरपख विरळा कोइ। सोई निरपख होइगा, जाकै नांम निरंजन होइ।—दादूवांणी

पखाग्रत-वि० [सं० पक्ष+रा.प्र. आयत] पक्ष करने या लेने वाला, पक्षपाती। उ०—मांस मंजार नूं मुदै, वंदर भरोसै वाग। पंच पखायत परपिया, औगुण करै अथाग।—अज्ञात

पखारणौ, पखारबौ—देखो 'पखाळणौ, पखाळबौ' (रू.भे.)

पखारणहार, हारौ (हारी), पखारणियौ—वि०।

पखारिग्रोड़ौ, पखारियोड़ौ, पखारयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पखारीजणौ, पखारीजबौ—कर्म वा०।

पखारियोड़ौ—देखो 'पखाळियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पखारियोड़ी)

पखाळ-सं०पु० [सं० प्रक्षालनम्] १ विरेचन, जुलाब।

क्रि०प्र०—देणौ, लागणौ, लेणौ।

२ स्नान ? उ०—संध्या वांदी विधिकरी, संकर करीउ पखाळ। तिहां तपीउ को तप तपइ, ते बोलउ ततकाळ।—मा.कां.प्र.

पखाल-सं०स्त्री० [सं० पय=पानी=प+राज० खाल] चमड़े का बना एक प्रकार का दो छेद या मुंह का बड़ा थैला (मशक) जिसको प्रायः ऊंट या भैंसे पर लाद कर पानी ढोते हैं।

उ०—पखालां भरै जम्म भैंसा स-प्रजै। सुरां-राव सिषको छड़वकाव साजै।—सू.प्र.

रू०भे०—वखाल।

अल्पा०—पखाली।

पखाळणौ, पखाळबौ-क्रि०स० [सं० प्रक्षालनम्] धोकर साफ करना, धोना। उ०—१ वही तो आया जी ल्होड़ी के प्यारा पांमणा, धोको तो चावळां जो वही जी थांनै वैसांणै। दूध पखाळां पांव।—लो.गी.

उ०—२ तो सुरसरी तरंग, कूंचो सरग कपाट री। एथ पखाळै अंग, जग में धिन मांनव जिकै।—बां.दा.

पखाळणहार, हारौ (हारी), पखाळणियौ—वि०।

पखाळाणौ, पखाळाबौ, पखाळावणौ, पखाळावबौ—प्रे०रू०।

पखाळिग्रोड़ौ, पखाळियोड़ौ, पखाळयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पखाळीजणौ, पखाळीजबौ—कर्म वा०।

पखारणौ, पखारबौ, पखोळणौ, पखोळबौ, पाखळणौ, पाखळबौ —रू०भे०।

पखाळद-सं०स्त्री०—विचार-विमर्श ?

उ०—१ तरै वरसात रा दिन था। काचै खड़ै पखाळद थकी राव धीणोद री पाखती थो।—नैणसी

उ०—२ खंगार पण मोटो हुवो। वरस २० तथा २२ मांहे हुवो। साहवी संभाही। तरै साथ करनै रावळ नै यां विचै सीप नदी छै, तठै आयो। पैली कांनी सूं रावळ माणस हजार सात-आठ सूं आयो। हजार आठ-नवां सूं खंगार आयो। पखाळद हुई। नैड़ा आया। —नैणसी

पखाळियोड़ौ-भू०का०कृ०—धोया हुआ, साफ किया हुआ।

(स्त्री० पखाळियोड़ी)

पखालियौ—देखो 'पखाली' (अल्पा०, रू.भे.)

पखाली-सं०पु० —१ पखाल से पानी ढोने वाला व्यक्ति। भिश्ती।

(स्त्री० पखालण)

२ वह पशु (ऊंट, भैंसा आदि) जिस पर पखाल लाद कर पानी ढोते हैं।

अल्पा०—पखालियौ।

३ देखो 'पखाल' (अल्पा०, रू.भे.)

पखावज-सं०पु० [सं० पक्ष+वाद्य] मृदंग से कुछ छोटा एक वाद्य यंत्र। उ०—सांवरियो रंग राचां राणा, सांवरियो रंग राचां। ताल पखावज मिरदंग वाजा, साधां आगै नाचां।—मीरां

रू०भे०—पखाउज।

पखावजी-सं०पु० [सं०पक्षवाद्य, प्रा. पक्खवाउज्ज+रा.प्र.ई] पखावज बजाने वाला व्यक्ति।

रू०भे०—पखाउजिय, पखाउजी।

पखि, पखी-वि० [सं० पक्ष+रा.प्र.ई] १ मित्र, हितैषी, शुभेच्छु। उ०—अरि जाळंधर आवियो, मिळिया खळ अण-दाद। पखि गुण हीण निरासपण, हितू अरज्जण आद।—रा.रू.

२ रक्षक, रक्षा करने वाला।

उ०—विरदाळो जी विरदाळो, दुज गाय पखी विरदाळो। मीता चो साम सिधाळो, पोह सेवगरां प्रतपाळो। जो विरदाळो।—र.ज.प्र.

३ पक्ष करने वाला, पक्षपात करने वाला, पक्षपाती।

उ०—पंच सोइ न हुवै पखी, भड़ सोइ जुध अभीत। न्याय पखां नह नीवड़ै, रसा अनादी रीत।—अज्ञात

सं०पु०—ओर, तरफ। उ०—१ पछी भिळमळइ गातळ वदमद, बिहूं पखि चांमर ढळइ।—कां दे.प्र.

उ०—२ चांमर विजन बिहूं पखि हुइ छइ।—कां.दे.प्र.

२ बगल, पार्श्व। उ०—त्रियजीत-पति गुण परखि, पखि गुण सकस पखि जिम सुंदरी।—रा रू.

३ बढ़ई का एक औजार।

४ देखो 'पक्ष' (रू.भे.)

उ०—पखि प्रकासि फिरमास, ऊजगुण भेद पनुक्रम। पंच मास सट मास, तेज जस-वास वधै तिम।—रा.रू.

पखीइं, पखीइ—देखो 'पखै' (रू.भे.)

उ०—फळ पाखइ नवि भंजीइ व्रक्ष, विनय पाखइ नवि भंजीइ सिस्य । लावण्य पखीइ नवि भजीइ रूप, जळ पाखइ नवि भजीइ कूप ।—नळ-दवदंती रास

पखीणो–वि० [सं० पक्षिन्] (स्त्री० पखीणी) पक्ष का, पक्ष सम्बन्धी ।

उ०—एक पखीणी अंग, प्रीत कियां पछताइये । दीपक देखि पतंग, जळ-बळ राख हुए 'जसा' ।—जसराज

पखू–वि० [सं० पक्ष+रा.प्र.ऊ] पक्ष ग्रहण करने वाला, सहायक ।

उ०—आतपत्र खोस आरूढ़ कीधौ उठै, जत्र-कत्र कियौ खळ जगत जांणी । तैं जरणी उबारघो पड़चौ कस्ट तत्र-तत्र, रही पखू जैत रै राजराणी ।—बालाबख्स बारहठ

पखे–क्रि०वि० [सं० पक्ष] १ ओर, तरफ ।

उ०—चिहू पखे परिअचि अति भली, धूपघटी चिहू पासे वली । मंच महामंच कीधा घणा, पार न पांमइ कोइ तेह तणा ।

—नळ-दवदंती रास

२ देखो 'पखै' (रू.भे.)

पखैं, पखै–क्रि०वि० [सं० पक्षास्मिन्=अप० पक्खहि] १ अभाव में, बिना ।

उ०—१ रुख-रुख तीरां रूकड़ां, मुख-मुख बीरां मौळ । पूंचाळा हेकण पखैं, दळ में प्रबळ दरोळ ।—वी.स.

उ०—२ दाता पातां रसण सूं, सुण-सुण सुजस जीवंत । पातां नूं पायां पखै, पांणी ही न पीवंत ।—बां दा.

२ सिवा, अतिरिक्त ।

उ०—१ गजसिंघ कियौ गज-गाहणौ, 'भीम' मारि भागौ 'खुरम' । कमधज्ज पखै जीतौ कमण, साजै नांम संग्रांम इम ।

—गु.रू.बं.

उ०—२ सांस छतै जीवे सकळ, ऊमर रै आधार । जस सूं जीवे जगत में, सांस पखै सुदतार ।—बां दा.

उ०—३ तो पखै बीजो ठाकुर को नहीं छै । ठाकुर देस मांहे बीजा ही घणा छै ।—द.वि.

रू०भे०—पखइं, पखइ, पाखइं, पाखइ, पखे, पखौ, पाखै ।

पखैत–वि० [सं० पक्ष+रा.प्र. ऐत] पक्ष वाला ।

उ०—धुजा फरक्की धूहडां, बहरक्की गजबोह । वसु थरक्का काबळी, सुरधर छक्की मोह । सुरधर छक्की मोह, पांण 'परताप' रै । ओछ्छं दुगा आथांण, खळी बळ खापरै । ज्यांरा सोवन थाळ, भलांई वज्जिया । 'पातल' जनम पखैत, सूमीरत सज्जिया ।

—किसोरदांन बारहठ

पखैपार–वि०—असीम, अपार ।

उ०—पखैपार पिंडार था दोहूं पासै, लियां लक्कडी कंध ऊभा हूलासै ।—ना.द.

पखोळणो, पखोळबो—देखो 'पखाळणौ, पखाळबौ' (रू.भे.)

उ०—वडी तो आया जी ल्होड़ी के प्यारा पांवणा, चौकी तो चावळ जी थांनै बैठावां । दूध पखोळां ला पांव वडी तो ।

—लो.गी.

पखोळणहार, हारौ (हारी), पखोळणियौ—वि० ।

पखोळाणौ, पखोळाबौ, पखोळावणौ, पखोळाववौ—प्रे०रू० ।

पखोळिओड़ौ, पखोळियोड़ौ, पखोळ्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पखोळीजणौ, पखोळीजबौ—कर्म वा० ।

पखोळियोड़ौ—देखो 'पखाळियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पखोळियोड़ी)

पखौ—१ देखो 'पक्ष' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—१ निज पातां संतां तारै, घणनांमी, नहच्यौ ज्यां नैड़ो घणनांमी । निरपखां पखौ घणनांमी, नाथ अनाथां चौ घणनांमी ।

—र.ज.प्र.

उ०—२ लिछमीस रांम अणभंग लखौ । परमेस पाळ जन दीन पखौ ।—र.ज.प्र.

२ देखो 'पगै' (रू.भे.)

उ०—१ मदनो कुंवरजी रा हुकम पखौ हीज भूंजाई रा चाव, थाळी, मूंजाई री झिणकार, घोड़ी चहवांण रांमदास ले गयौ ।

—द.वि.

उ०—२ ठकुरांणिये बीजीये ही फूकी घणीये पीयौ छै । तो पखौ ही मौनूं ओळखसी ।—द.वि.

पख्याघात—देखो 'पक्षाघात' (रू.भे)

पख्ख—देखो पक्ष' (रू.भे.)

पख्खघात—देखो 'पक्षाघात' (रू.भे)

पग–सं०पु० [सं० पदकः, प्रा० पअक=पअग=पग] वह अवयव या अङ्ग जिस पर स्थित होने पर बदन का सम्पूर्ण वजन रहता है तथा जिसके बल प्राणी चलते-फिरते हैं (ह नां., अ.मा.) ।

उ०—पावस मास प्रगट्टियउ, पगइ विलंबइ गारि । घण की आही वीणती, पावस पंथ निवारि ।—ढो.मा.

पर्या०—अंघ्रि, ओयण, कदम, क्रमण, गतिवंत, गमण, चरण, चलण, जोमण, नग ।

मुहा०—१ ऊभा पगां—खड़े-खड़े, तुरन्त, शीघ्र ।

२ काळो मूंडौ'र नीला पग—पिंड छुड़ाना, दुर्गति ।

३ खाडा में पग पड़णौ—देखो 'पग खाडा में पड़णौ' ।

४ खोड़ा में पग पड़णौ—देखो 'पग खोड़ा में पड़णौ' ।

५ जमी माथै पग नीं मंडणौ—भूमि पर पद-चिन्ह का अङ्कित न होना, बहुत प्रसन्न होना, हर्षित होना, ऐंठना, गर्व करना ।

६ धरती माथै पग नी टिकणौ—अभिमान के कारण सीधे पैर न रखना, बहुत ऊचा होकर चलना, आनन्द के मारे उछलना, बहुत होना, इतराना ।

७ पग अड़णो—बंधन में फंसना, जाल में आना, कपट में फँसना।

८ पग अड़ाणो—अड़ंगा डालना, बाधा डालना, किसी कार्य में व्यर्थ सम्मिलित होना, व्यर्थ की अड़चन डालना, हस्तक्षेप करना।

९ पग अटकणो—देखो 'पग अड़णो'।

१० पग अटकाणो—देखो 'पग अड़ाणो'।

११ पग आंगणो करणो—अधिक आना-जाना।

१२ पग आडो देणो—बाधा डालना, अड़चन पैदा करना, विघ्न डालना, रोक लगाना।

१३ पग उखड़णा—स्थिर न हो सकना, स्थिर होकर खड़ा न रह सकना, पैर जमे न रहना, पैर हट जाना अपने पद या स्थान से डाँवाडोल हो जाना, हट जाना, ठहरने के बल या साहस का न रहना, भागने की स्थिति में आना, पलायन करना, रोजी समाप्त होना।

१४ पग उखाड़णा—पैर जमे न रहने देना, पलायन कराना, किसी बात पर स्थिर न रहने देना, स्थिरता या दृढ़ता का भंग करना।

१५ पग उठाणा—जल्दी जल्दी चलना, शीघ्रतापूर्वक चलना।

१६ पग उतरणो—पैर का संधि-स्थान से सरक जाना।

१७ पग उथल—देखो 'पगां री उथल'।

१८ पग ऊंघीजणो (ऊंघणो)—पैर सुन्न हो जाना, पैर में झुनझुनी होना, पैर झन्ना उठना, स्तब्ध हो जाना।

१९ पग ऊंचो-नीचो पड़णो—गलती करना, भूल करना, पुरुष का पर-स्त्री गमन या स्त्री का पर-पुरुष प्रसंग संबंधी त्रुटि का होना।

२० पग ऊठणा—जल्दी जल्दी पैर अग्रसर रखना, डग भरना, चलने के लिए तेज कदम बढाना, डग आगे रखना, चलना आरंभ करना।

२१ पग कट जाणा, पग कटणा—आना जाना न होना, आने जाने की शक्ति का न रहना, रोजी का छीना जाना, अन्न जल का उठ जाना, रहने या निवास करने के आश्रय का अन्त हो जाना, किसी संरक्षक या पालक का संसार मे उठ जाना।

२२ पग कांपणा—देखो 'पग थरथराणा'।

२३ पग काचा—पैर कमजोर, बुजदिल, पश्तहिम्मत, साहस-हीन।

२४ पग काटणा, पग काट देणा—असमर्थ या अयोग्य बना देना, चलने फिरने की शक्ति का न रहने देना, बेकार करना।

२५ पग कादा में पड़णो—देखो 'पग कीचड़ में पड़णो'।

२६ पग कीचड़ में पड़णो—पैर का दलदल में पड़ना, नीच संगत का होना, नीच कर्म में प्रवृत्त होना, संकट में फसना।

२७ पग कूंटाळिये पड़णो—झपट में आना, आकस्मिक रोगग्रस्त होना, संकट में फसना।

२८ पग खाडा में पड़णो—अनुचित कार्य कर बैठना, आपत्ति में पड़ना, किसी अविवाहिता अथवा विधवा का किसी के साथ अनुचित संबंध से गर्भ रह जाना।

२९ पग खोड़ा में आणो (पड़णो)—किसी प्रकार के बंधन या जाल में फंसना, बंधन में आना, कैद होना, पुरुष का विवाहित होकर गृहस्थी का उत्तरदायित्व लेना।

३० पग गडणा—चलते समय पैरों का भूमि में धंसना, भय व आतंक के कारण चलने में असमर्थ होना, घबरा जाना, भयभीत होना, अपने स्थान पर अटल होना, दृढ होना।

३१ पग गाडणो—जम जाना, अटल होना, स्थिर रहना, पलायन न करना।

३२ पग घिसणा—देखो 'पग रगड़ना'।

३३ पग घीसणा—देखो 'पग रगड़ना'।

३४ पगचंपी करणी—पैरों का दबाना, खुशामद करना, चापलूसी करना।

३५ पग चांपणा—देखो 'पगचंपी करणी'।

३६ पग चूंमणा—पैरों का चुम्बन लेना, खुशामद करना, चापलूसी करना।

३७ पग छूटणा—देखो 'पग उखड़णा'।

३८ पग छोडणा—सफलता पर फूला न समाना, घमण्ड करना, मदान्ध होना, मर्यादा का उल्लंघन करना, मर्यादा छोड़ना, स्थिर या दृढ न रहना, पलायन करना, भगना, हिम्मतविहीन होना।

३९ पग जमणा—स्थिर भाव से खड़ा होना, दृढ रहना, हटने या विचलित होने की अवस्था में न होना, संकटकाल में न घबराना, अटल रहना, रोजी लगना।

४० पग जमाणा—दृढतापूर्वक ठहरे रहना, डटा रहना, न हटना, स्थिर हो जाना, अपने ठहरने या रहने का पूर्ण प्रबंध करना, अटल हो जाना, रोजी लगाना।

४१ पग झणणाणा—भय या अन्य कारण से पैरों का सुन्न हो जाना।

४२ पग टिकणा—देखो 'पग जमणा'।

४३ पग टिकाणा—देखो 'पग जमाणा'।

४४ पगटिकाव—आश्रय, सहारा।

४५ पगटिकाव होणो—आश्रय पाना, सहारा मिलना, रोजी में लगना।

४६ पग ठरड़णा—देखो 'पग रगड़णा'।

४७ पग ठैरणा—पैर जम जाना, पैर न हटना, स्थिर हो जाना, दृढ रहना, ठहरा रहना।

४८ पगठोड़—रहने का स्थान, ठहरने का स्थान, विश्राम का स्थान।

पग डगमगाणा—देखो 'पग डिगमगाणा'।

४९ पग डाळणो—देखो 'पग फसाणो'।

५० पग डिगणो—पैर ठीक स्थान पर न रहना, इधर-उधर हो जाना, विचलित हो जाना, पथभ्रष्ट हो जाना।

५१ पग डिगमगाणा—पैर दृढतापूर्वक न जमना, पैर स्थिर न रहना, पैरों का स्थान पर ठीक न पड़ना, पैरों का इधर-उधर हो जाना, लड़खड़ाना, कर्त्तव्य निभाने में असमर्थ होना।

५२ पग तळै'री खिसकणी—ऐसी भयंकर आपत्ति या दु:ख जिसे सुन कर घबरा जाना। स्तब्ध-सा हो जाना, होश उड़ जाना, होस-हवास ठिकाने न रहना, सुन्न हो जाना, सन्नाटे में आना, पग टूटणा, चलने में बहुत थक जाना, पैरों में दर्द हो जाना, बहुत दौड़-धूप करना, बहुत हैरान होना, अथाह परिश्रम करना, रोजीहीन होना।

५३ पग तोड़णा—बहुत परिश्रम करना, बहुत दौड़-धूप करना, बहुत चलने की अवस्था में होना, बहुत गतिमान कर थकाना, तेजी से दौड़ना, बहुत दौड़-धूप करना, बेकार करना, असहाय करना, रोजीहीन करना।

५४ पग थरथराणा—भय आशंका, अशक्ति आदि के कारण पैरों का कंपायमान होना, अगवानी रहने या होने की हिम्मत न होना, साहस न होना।

५५ पग दबाणा अथवा दवाणा—थकान मिटाने हेतु जंघा से पंजा-पर्यन्त पैरों का दबाना, दबाव पहुँचाना, खुशामद करना, चापलूसी करना, पांवचंपी करना।

५६ पगदौड़ (करणी)—प्रयत्न करना, कोशिश करना।

५७ पग धरणो—कहीं पर जाना, पैर रखना, स्थान पाना।

५८ पग धूजणा—देखो 'पग थरथराणा'।

५९ पग धोणा (धोवणा)—देखो 'पग पखाळणा'।

६० पग धो'र पीणा—चरणामृत लेना, बड़े आदर भाव से पूजा करना, चापलूसी करना।

६१ पग पकड़णा—भक्ति और श्रद्धापूर्वक नमस्कार करना, बड़ी दीनता प्रकट करना, पैर छूना, अनुनय करना।

६२ पग पखाळणा—पैर धोना, खुशामद करना।

६३ पग-पग—स्थान-स्थान, जगह-जगह, पैदल, तुरन्त, अति शीघ्र, खड़े-खड़े।

६४ पग पड़णो—१ देखो 'पग कूंडाळिये पड़णो'।
२ देखो 'पग खाडा में पड़णो'।

६५ पग पटकणा—अपनी बात सिद्ध करने के लिए रौब दिखाना, जोश प्रकट करना, हट करना, दुराग्रह करना, घोर प्रयत्न करना, हैरान होना, इतराना।

६६ पग पणियारी गाणा—अत्यधिक परिश्रम से थक जाना, थकान के मारे पैर सुन्न हो जाना, पैर झन्नाना।

६७ पग पसारणा—पैरों को फैलाना, आराम के साथ पड़े रहना, या सोना, ठाट-बाट बताना, आडंबर फैलाना, अपना कार्य-भार फैलाना, मर जाना।

६८ पग पाछो दिराणो—किसी स्त्री के पति के मरने के बाद पीहर वालों द्वारा स्त्री को अपने घर लाना।

पग पीटणा—धमकी देना, रौब गालिब करना, जोश बताना।

६९ पगपीटो (करणो)—घोर परिश्रम, अथक परिश्रम, रौब गालिब करना, धमकी, घुड़की, अधिकार जमाना।

७० पग पूजणा—सेवा-सुश्रूषा करना, श्रद्धा रखना, पैरों की अर्चना करना, बड़ा आदर-सत्कार करना।

७१ पग फसणो—आफत में पड़ना, संकट में आना, बंधन में आना।

७२ पग फसाणो—देखो 'पग अड़ाणो'।

७३ पग फिसळ जाणो—देखो 'पग फिसळणो'।

७४ पग फिसळणो—पैर का जम कर न रहना, रपट जाना, सरक जाना, कर्त्तव्य से च्युत होना।

७५ पग फूंक २ कर देणो—बहुत बचा कर कार्य करना, बहुत विचार कर कार्य करना, कुछ भी करते समय इस बात का पूर्ण ध्यान रखना कि कोई ऐसी बात न हो जाय जिससे कोई हानि या निंदा हो, बहुत सतर्कतापूर्वक चलना।

७६ पग फूलणा—भय या आशका के कारण पैरों का आगे न बढ सकना, पैर आगे न उठना, पैरों में थकान आना, थकान से पैरों का दुखना, घबरा जाना।

७७ पगफेर, पगफेरो—आवागमन।

७८ पग फैलाणा—पैर पसारना, आडंबर या ठाट का बढाना, आराम से पड़े रहना, सोना, अधिक प्राप्त करने हेतु हाथ बढाना, हठ करना, जिद्द या दुराग्रह करना (बच्चों का) मचलना, मरना।

७९ पग फैला कर सोणो (सोवणो)—निश्चिंत होकर सोना, आराम से पड़े रहना।

८० पग-बंधण (होणो)—पैरों को बँधना, इधर उधर के आवा-गमन से रुकावट या बाधा होना, उत्तरदायित्वयुक्त होना।

८१ पग बढाणा—बड़े २ कदम भरना, जल्दी जल्दी चलना, अधि-कार बढाना, अतिक्रमण करना।

८२ पगबायरो—देखो 'पगां बायरो'।

८३ पग बारै होणो—व्यभिचारी होना, बदचलन होना।

८४ पगबारोळ—व्यभिचारी, चरित्रहीन, पथभ्रष्ट।

८५ पग बाल होणो—देखो 'पगांबाल होणो'।

८६ पग भारी होणा—गर्भ रहना, हमल होना, पेट होना।

८७ पग भारी होणो—देखो 'पग भारी होणा'।

८८ पग मंडणो—पैर रखने का साहस होना, अटल होना, दृढ होना।

८९ पग मण-मण रा होणा—आकस्मिक दुर्घटना, भय, आशंकादि के कारण चलने में असमर्थ होना, भयभीत होना।

९० पग मांडणा—साहस का होना, अटल रहना, दृढ रहना, विचलित न होना।

९१ पग माथै पग दे'र कराणो—किसी से जबरदस्ती काम कराना, भय दिखा कर कार्य कराना, रौब गालिब कर काम कराना।

९२ पग माथै पग दे'र लेणो—किसी को दबा कर या भयभीत कर उसका माल छीनना, बलात् छीन लेना, बलात् लेना, जबरदस्ती से लेना, ब पूर्वक लेना, रौब गालिब करना।

९३ पग माथै पग दे'र बैठणो—देखो 'पग माथै पग राख'र बैठणो'।

९४ पग माथै पग राख'र बैठणो—काम धंधा छोड़ कर आराम से बैठा रहना, हाथ पैर न हिलाना, परिश्रम न करना, चैन से पड़े रहना।

९५ पग में चकर होणो—देखो 'पगां में चकर होणो'।

९६ पग मोकळो करणो—केवल जी बहलाने के लिए धीरे-धीरे चलना या घूमना, सैर करना, हवा खाना, मंद गति से टहलना, धीरे-धीरे कदम रखते हुए चलना।

९७ पग रगडना—खूब चलना, खूब परिश्रम करना, अधिक दौड़-धूप करना, खूब प्रयत्न करना, बहुत हैरान होना, आवारा फिरना, मारा-मारा फिरना।

९८ पग राखण नैं ठिकांणो होणो—रहने या रहने का स्थान होना, निवास करने का स्थान होना।

९९ पग राखणो—पग धरना, किसी के यहाँ जाना।

१०० पगरी उथल—देखो 'पगां री उथल'।

१०१ पग री जूती—नाकुछ, तुच्छ, अत्यंत क्षुद्र, सेवक या दासी।

१०२ पग री जूती माथा में लागणी—छोटे आदमी का बड़े से मुकाबला करना, क्षुद्र या नीच का सिर चढना।

१०३ पग रैं'णा—पैरों का अशक्त हो जाना, पैरों का चलने में असमर्थ होना, अधिक चलने की थकान में पैरों का बेकार होना।

१०४ पग रोपणा—अड़ना, अटल रहना, न भगना, पलायन न करना, दृढ रहना।

१०५ पग रो खटको—चलने की आहट, चलने पर पैरों से होने वाली आवाज।

१०६ पग लड़खड़ाणा—देखो 'पग दरथराणा'।

१०७ पग लांबा करणा—पैर पसारना, पैरों को फैला कर सोना, अवसान होना, मरना।

१०८ पग लेणा—छोटे बच्चों का पैरों के बल खड़ा होना, बच्चों का पैरो से चलने का अभ्यास होना।

१०९ पग वडो—देखो 'वडो पग'।

११० पग समेटणा—पैर खींच कर मोड़ना जिससे वे दूर तक फैले न रहें, तटस्थ होना, लगाव न रखना, इधर-उधर घूमना छोड़ना।

१११ पग सूजणा—पैरों में सूजन आना, अभिमान आना, गर्व करना, चलने में असमर्थता प्रकट करना।

११२ पगां आणो—पैदल चलना।
देखो 'वात पगां आणी'।

११३ पगांऊं—पैरों से, पैदल।

११४ पगां करणो—तैयार करना, योग्य बनाना, साहस बंधाना।

११५ पगांकाचो—बुजदिल, पस्तहिम्मत, असाहसी (के प्रति)

११६ पगां चलणो या चालणो—बच्चे का पैरों के बल चलना, बच्चे का पैरों के बल चलने का अभ्यास होना।
देखो 'पगां हालणो'।

११७ पगां जनमणो—प्रसव के समय प्रथम पैरों का बाहर आना।

११८ पगां तळा री जमीं खिसकणी—देखो 'पग तळै री खिसकणी'।

११९ पगां-पगां—ठीक पीछे-पीछे, तुरंत, शीघ्र, पैदल।

१२० पगां पड़णो—पैरों में शिर रखना, नत मस्तक होना, नम्रता तथा दीनता से विनय करना, अनुनय करना, खुशामद करना।

१२१ पगां पनोती होणी—जन्म या नाम राशि से दूसरी राशि पर शनि का गोचरभ्रमण काल जो शुभ या अशुभ दोनों में से एक रहता है।

१२२ पगां पांण होणो—अपने पाँवों पर खड़ा होना, अपने बल या सामर्थ्य पर चलना, स्वावलंबी होना।

१२३ पगांवायरो—अविश्वासपात्र, असत्यभाषी, अस्तित्वहीन।

१२४ पगां वाल होणो—पैरों बहाल होना, खड़ा होना, कार्य हेतु तत्पर होना।

१२५ पगां बेड़ी घालणी—किसी प्रकार के बंधन या जाल में फंसाना, विवाहित कर देना, गृहस्थ के उत्तरदायित्व को देना।

१२६ पगां बेड़ी पड़णी—देखो 'पग खोड़ा में पड़णो'।

१२७ पगां (पगांऊं) वैंणो—देखो 'पगां हालणो'।

१२८ पगां में चकर होणो—अधिक परिभ्रमण करना, इधर-उधर घूमते रहना।

१२९ पगां में पाणी पड़णो—अत्यधिक परिश्रम करना, इतनी भागदौड़ करना कि थक जाय, पाँव दर्द करने लगे, थक कर चूर हो जाना।

१३० पगां में बेड़ी पड़णी—तेज न चल सकना।
देखो 'पग खोड़ा में पड़णो'।

१३१ पगां में माथो देणो—पैरों में शिर रखना, नत मस्तक होना, साष्टांग दण्डवत् करना, अत्यंत दीनता से विनय करना।

१३२ पगां में सनीसर होणो—देखो 'पगां पनोती होणी'।

१३३ पगां री उथल—चलते समय पैर रखने का विशेष ढंग या क्रिया जो हृदयस्थ भावों का प्रकाशन करती हो, गति, चाल।
१३४ पगां री धूड़—देखो 'पगां री रज'।
१३५ पगां री रज—नाकुछ, तुच्छ, अत्यंत क्षुद्र।
१३६ पगां रै पांखा आणी—बहुत तेज चलना।
१३७ पगां रै मैंदी लागणी—कार्य करने में टालमटोल करना, चलने में आलस्य प्रकट करना।
१३८ पगां रो धोवण (खोळण) पीणो—चरणामृत लेना, बड़े आदर भाव से सत्कार करना, खुशामद करना, चापलूसी करना।
१३९ पगां सूं बांध्यो हाथां सूं नी छूटणो—अपेक्षाकृत अधिक चतुर, प्रवीण या दक्ष के लिए प्रयोग किया जाता है।
१४० पगां लागणो—गुरुजनों, ब्राह्मणों, पंडितों आदि का अभिवादन करना, किसी वधू का अपने कुटुम्ब या पास-पड़ौस की वृद्धा के पैर छूकर आशीर्वाद प्राप्त करना, पांव छूना, प्रणाम करना, चरण स्पर्श करना, नमस्कार करना।
१४१ पगां लगाणो—किसी को मस्तक नत करना, पैर छुआना, चरण स्पर्श कराना।
१४२ पगां सनेसर होणो—देखो 'पगां पनोती होणी'।
१४३ पगां सूं—प्रताप से, प्रभाव से, बल से।
१४४ पगां (पगांऊ) हालणो—नियमपूर्वक चलना, मर्यादा निभाना, उच्छृंखलता छोड़ना, अपव्ययन करना, छोटे बच्चे का पैरों के बल चलना।
१४५ पगां होणो—पैरों से जन्म लेना, पैरों पर खड़ा होना।
१४६ पगे-पगे—देखो 'पगा पगां'।
१४७ पगे पड़णो—देखो 'पगां पड़णो'।
१४८ पगे रहणो—दृढ रहना, अटल रहना, फिसलना नहीं, धोखा न देना, सेवा में रहना, टहल में रहना।
१४९ पगे हालणो—देखो 'पगां हालणो'।
१५० फूंक फूंक'र पग दैणा—देखो 'पग फूंक फूंक'र रखणा'।
१५१ बडो पग—संबंधी, रिश्तेदार, या कुटुम्ब के व्यक्ति का आयु में छोटा किन्तु पद में बड़ा होना।
१५२ भारी पगां होणो—देखो 'पग भारी होणो'।
१५३ बात पगां (पगे) आणी—निर्णय होना, निश्चय होना, वास्तविकता प्रकट होना।
२ चलने से भूमि पर अंकित होने वाला पदचिन्ह।
मुहा०—१ पग खोजणा—भूमि पर अंकित पदचिन्हों की तलाशी करना।
२ पग जाणा—भूमि पर अंकित पदचिन्हों की गति।
३ पग टोळणा—भूमि पर अंकित पदचिन्हों का अनुसरण करते हुए चलना।
४ पग ढकणा या ढाकणा—भूमि पर अंकित पदचिन्हों को जांच हेतु ढक कर रखना।
५ पग ढूंढणा—देखो 'पग खोजणा'।
६ पग-पग—अंकित पदचिन्हों का अनुसरण।
७ पग लैणा—भूमि पर अंकित पदचिन्हों का अनुसरण करते हुए चलना।
८ पगां-पगां—देखो 'पग-पग'।
९ पगे-पगे—देखो 'पग-पग'।
१० पग मिळणा—अंकित पदचिन्हों का पता मिलना।
रू०भे०—पगि, परग, पाग।
यौ०—पगचंपी, पगडंडी, पगडांडो, पगदासी, पगपांन, पगपावटी, पगवाव।
अल्पा०—पगड़ो, पगलड़ो, पगलडो, पगलियो, पगलो, पगल्यो, पगल्लो, पागलियो।
मह०—पगड़, पघड़, पागड़, पाघड़।
पगड़—१ देखो 'पग' (मह०, रू.भे.)
२ देखो 'पाग' (मह०, रू.भे.)
पगड़ो—देखो 'पाग' (अल्पा०, रू.भे.)
पगड़ो-सं०पु० [सं० प्रगे+रा.प्र.ड़ो] १ उषाकाल, प्रातःकाल।
उ०—दीपक रो पण तेज घटण लागो, चिड़ियां चहकण लागी, इण भांत पगड़ो हुण लागो, जठै प्रेम प्रीत रो झगड़ो हुण लागो।
—र. हमीर
२ चौसर के खेल में प्रारम्भ में गोटी रखने का क्रिया।
३ देखो 'पागड़ो' (रू.भे.)
उ०—पमंगां धाह पगड़ा बात अे-घड़ा विचारी।—पा.प्र.
४ देखो 'पग' (अल्पा०, रू.भे.)
रू०भे०—पगड़ो, पुगड़ो, प्रगडउ।
पगचंपणी, पगचंपी, पागचांपणी-सं०स्त्री०यौ० [देशज] १ थकावट दूर करने या आराम पहुंचाने हेतु पैर दबाने की क्रिया।
उ०—नारायण देवां मही, ज्यूं तारायणचंद। कमळा पगचपी करै, 'बंक' संक तज बंद।—बां.दा.
२ खुशामद।
क्रि०प्र०—करणी, करवाणी, होणी।
पगछंटो-वि० (स्त्री० पगछंटी) फुर्तीला, चंचल, तेज।
उ०—पगछटा पैरू निसा, धरियां कर धांनंख। रखवाळा मेवास का, एहा भील असंक।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात
पगडंडी, पगडांडो-सं०स्त्री० [सं० पदक+दण्ड] जंगल या मैदान में मनुष्यों के चलने फिरने से बनने वाला पतला मार्ग या रास्ता।
पगडो—देखो 'पगड़ो' (रू.भे.)
पगणो, पगबो-क्रि०अ०—१ अनुरक्त होना, लीन होना।
उ०—१ अब नेम लगै इण आतम सौं। तब प्रेम पगै परमातम सौं।—ऊ.का.

उ०—२ लगी मग मांहृ जळंघर लीए, पग्यौं पुरुषारथ मेरु प्रवीए। यूंही खट चक्कर अघाव, पछे त्रिपुटी तुरिया पद पाव।
—ऊ.का.

पगणहार, हारौ (हारी), पगणियौ—वि०।

पगवाड़णौ, पगवाड़बौ, पगबाणौ, पगवाबौ, पगवावणौ, पगवावबौ, पगाड़णौ, पगाड़बौ, पगाणौ, पगावौ, पगावणौ, पगावबौ—प्रे०रू०।

पगिग्रोड़ौ, पगियोड़ौ, पग्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पगीजणौ, पगीजबौ—भाव वा०।

पगत-वि०—नित्य। उ०—ग्राप पावौ पगत वहै इळ ऊपरां। तिका गंगा सकळ जगत तारै।—र रू.

पगतरी-सं०स्त्री० [सं० पदक-तल] जूती।

पगतळ, पगतळौ-सं०पु०यौ० [सं० पदक+तल] तलवा, पादतल।

उ०—१ पगतळ थी परठी पछइ, रातडी पद्म पराग।
—मा.कां.प्र.

उ०—२ कांटौ भाजै पगतळै, ते खटके वारो-वार रे।—वि.कु.

पगतळी—देखो 'पगथळी' (रू भे.)

उ०—कुण्यां के भरमाया ग्रो चाल्या चाकरी जी म्हारा राज। वा घणा देई है सीख मिरगा-नैणी राज। थारी ए लिलाड़ी ए प्यारी की पगतळी जी म्हारा राज।—लो.गी.

पगतियौ, पगत्यौ—देखो 'पगथियौ' (रू.भे.)

पगथळी-सं०स्त्री० [सं० पदक+ताल+रा.प्र ई] पैर के नीचे का भाग जो चलने या खड़े होने पर भूमि पर टिकता है, पादतल।

उ०—१ वीकांणै मत देई म्हारा बावल, सासरियो ए लोय ए लोय, वीकांणै पांणी घोळो दूर, सासरियो ए लोय ए लोय। त्यावत घिस गई बाई री पगथळी।—लो गी.

उ०—२ मांडिया सरोज भयंग चढ़ माथइ, हरणाखौ चित लावण हरि। अति रगता विराजंइ ऊपर, पगथळियां मीमलइ परि।
—महादेव पारवती री वेलि

रू०भे०—पगतळी।

पगथिग्रौ, पगथियौ, पगथ्यौ-सं०पु० [सं० पदक+स्था] निसेनी, जीना, सीढ़ी ग्रादि में क्रम-क्रम से ऊंचे चढ़ने या नीचे उतरने के लिए एक के ऊपर एक बना हुग्रा पैर रखने का स्थान, पैड़ी।

उ०—१ पांनि तणौ परिगुरु, देहरी तणा उमहरु, चउकी चउखंडे झळहळइं, उग्रारे पांणी खळहळइं, पगथिग्रां रा सारधारा, वरंडी उदार।
—व.स.

उ०—२ जठै मांहिलो बदूकां छूटै छै। जकां येक-येक गोळी दस-दस ग्रादम्यां मैं फूटै छै। लोथ पर लोथ पड़ै छै। मोतियां की सी माळा झड़ै छै। जका लोथियां रा पगथिया कर कर घणा हेतु, भाई, भतीजा, बाप-बेटा, ऊपरा पग घरता ग्रर घणा हरख करता कोट मैं पड़ण नूं धावै छै।
—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

उ०—३ सूकडीया गवाक्ष मळयागिरी जाळी झरणागिरी थांमली मणिबंध काचबंध भूमि। उरा उरी व मी। पगथीयां रा चउकीसर चूनालूग्रां सत भूमिका सहस्र भूमिका समांनी रचना।—कां.दे.प्र.

उ०—४ तै पटकी पाताळ, ऊची ले ग्राकास तक। पगथ्यौ बण पाताळ, जीव उठूं रे जेठवा।—जेठवौ

रू०भे०—पगतियौ, पगत्यौ, पगोड़ौ, पगोठौ, पगोतियौ, पगोत्यौ, पगोथियौ, पगोथ्यौ, पागेटियौ, पागोटौ, पागोठियौ, पागोठौ, पागोतियौ, पागोतीयौ, पागोत्यौ, पागोथियौ, पागोथ्यौ।

पगदासी-सं०स्त्री० [सं० पदक+दासी] जूती (ग्र.मा.)

पगधोई-सं०स्त्री० [देशज] १ मेवाड़ की एक नदी का नाम।
(नैणसी)

२ शादी के दूसरे दिन लड़की के पिता द्वारा लड़के के पिता का पाँव धोने की प्रथा (ब्राह्मण)

क्रि०प्र०—करणौ, होणौ।

पगपड़ण, पगपडण-सं०पु० [सं० पदक+पतनम्] एक प्रकार की रस्म या प्रथा जिसके ग्रनुसार वधू को प्रथम बार ससुराल जाने पर सास ग्रादि घर की बड़ी-बूढी ग्रौरतों के चरण स्पर्श करने होते है।

उ०—पगपडणइ द्रव्य ग्रापइ हरखी सासू, ग्रा पुण्यइ रुडी बहू पामीइ ए। प्रभाति ऊठि तेह सासू ससरा नइ, चरण कमळि सीस नामीइ ए।
—नळ-दवदंती रास

पगपलोटण-सं०पु० [सं० पदकप्रलोटनम्] १ पांवों को दबाने या सहलाने वाला।

२ पावों को दबाने या सहलाने की क्रिया।

पगपांन-सं०पु०यौ० [सं० पदक+पत्रम्] स्त्रियों के पैर के ऊपर उठे हुए भाग पर धारण करने का पीपल के पत्ते के ग्राकार का एक ग्राभूषण विशेष।

उ०—वळै चूड़ौ सोने री बंगड़ीदार विराजै छै. जांणै काळी घटा में बीज चमकै छै। कट-मेखळा जड़ाव री सोहै छै, सोनै री पायल पग-पांन पोलरी ग्रणवट पगां विराजै छै।—रा.सा सं.

पगपांवडौ-सं०पु०यौ० [सं० पदक+पाद+रा.प्र ड़ौ] वह कपड़ा जो किसी के स्वागत या ग्रादर हेतु उसके चलने के रास्ते पर बिछाया जाय। उ०—पाटबर पग-पांवडै, सुंदा गांन सुवासि। मुग्ध निरखै-हरखै महल, गायण दासि खवास।—रा.रू.

पगपाखर-सं०पु०यौ० [सं० पदक+प्रखर:] पादरक्षिका, जूती।
(नां.मा.)

पगपावटी-सं०स्त्री०यौ० [सं० पदक+रा. पावटी] पैरों के बल चलाया जाने वाला रहट।

रू०भे०—पग-वावटी।

पगफूटणी-सं०स्त्री०यौ०—पैरों का एक रोग (ग्रमरत)

पगमड, पगमंडा, पगमंडणा-सं०पु०यौ० [सं० पदक+मंडनं]

१ ग्रागतुक ग्रतिथि के स्वागत हेतु उसके चलने के राह पर बिछाया जाने वाला वस्त्र, पावंडा।

उ०—मूंहगा घरण मोल रा, पड़ै पग-मंडा अपारां। पट्ट पसमी मुखमलां, तास अतळस जरतारां।—सू.प्र.

२ इस प्रकार बिछाए हुए वस्त्र पर पैर रख कर चलने की क्रिया।

३ पावंडा पर बने हुए पदचिन्ह।

पगरकियौ—देखो 'पगरखी' (अल्पा०, रू.भे.)

पगरकी—देखो 'पगरखी' (रू.भे.)

उ०—पसू खाल री वर्णं पगरकी, पै'र पै'र सुख पावै। अरथ खाल थारी नहिं आवै, लेवौ अरथ लगावै।—ऊ.का.

पगरकौ—देखो 'पगरखी' (अल्पा०, रू.भे.)

पगरखियौ—देखो 'पगरखी' (अल्पा.,रू.भे.)

पगरखी-सं०स्त्री० [सं० पदक+रक्षिका] पदत्राण, जूती।

उ०—तन मन सुरतां तुरा कलंगी, मन प्रमोद रो मोड़ बंधाय। प्रीत भई प्यारी पगरखियां, हरि चरणां हित सूं पधराय।

—गी.रां.

पर्या०—उपानह, कांटारखी, खळौ, जरबौ, जूती, जोड़ी, पग-पाखर, पगसुख, पद-पीठ, पनिया, पयचार, पहनी, पापपोस, पायत्रांण, पांव-रखणी, मोचौ, मोजौ।

रू०भे०—पगरकी।

अल्पा०—पगरकियौ, पगरकौ, पगरखियौ, पगरखौ।

मह०—पगरखीड़।

पगरखीड़—देखो 'पगरखी' (मह०, रू.भे.)

पगलड़ौ—देखो 'पग' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—माधव केरां पगलड़ा, सघळां सोंधी ल्यावि। हियडा भीतरि हूं धरी, सेवा करूं संभावि।—मा.कां.प्र.

मुहा०—कुंकु रा पगलड़ां पधारौ—पैरों पर कुंकुम लगाए हुए पधारिए (स्वागत)

पगलियौ—१ देखो 'पगल्यौ' (रू.भे.)

२ देखो 'पग' (अल्पा०, रू.भे.)

पगलौ-सं०पु० [सं० पदक+रा.प्र. लो] १ खड़ाऊ, पादुका।

उ०—म्हारी बहिन हे बहिनी हे बहिनी म्हारी, प्रणम्या स्त्री पुंडरीक हे। म्हारी बहिनी हे बहिनी म्हारी गज चढ़ो मरुदेवी माय हे। रायण तळी पगला प्रभु तणा।—स.कु.

२ देखो 'पग' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—होफरता बकंता हाकळता, दोड़ा पगला देवै। जावै ऐ कुसळै 'जालांणी', नैंडो भाखर लेवै।

—कांबा रा भोमियां रो गीत

३ देखो 'पागल' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—दुत भाव तजो दुनियां पगली, गुरु ग्यांन गहो समझो सगळी।

—ऊ.का.

(स्त्री० पगली)

पगल्भ—देखो 'प्रगल्भ' (रू.भे.)

पगल्यौ-सं०पु० [सं० पदक+रा.प्र. ल्यो] (बहु व० पगल्या) १ किसी देव विशेष की सोना, चाँदी, पत्थर या कपड़े पर बनी चरणों की आकृति जिनकी पूजा के लिए स्थापना की जाती है।

२ देखो 'पग' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—उड-उड रे म्हारा काळा काग, जे म्हारो पिवजी आवै। पगल्यां में तेरे बांधु घूघरा, गळ में हार पहराऊं रे कागा, कद म्हारा पिवजी आवै।—लो.गी.

पगल्ल, पगल्लौ—१ देखो 'पग' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—ओरी दाखवौ बाल होसी अवारो। पगल्ले पगल्ले महल्ले पधारो।—ना.द.

२ देखो 'पागल' (रू.भे.)

पगवंदण-सं०पु०यौ० [सं० पदक+वंदनम्] पैर छू कर प्रणाम करना, पैरो में नमना। उ०—जहां जादवेंद्र स्त्री क्रस्ण छै, तहां तूं जाजे। माहारै मुखि हूंता तूं, पगवंदण कहिजे।—वेलि टी.

पगवट, पगवट्ट-सं०पु०यौ० [सं० पदक+वाट:] १ चलते समय पैर रखने का ढंग या क्रिया।

२ पैदल।

उ०—पुळै पगवट्ट उजाड़ पहाड़। दहूं दिसि केई कराड़ दराड़।

—घ.व.ग्रं.

पगवाव, पगवावड़ी-सं०स्त्री० [सं० पदक+वापिका] एक प्रकार का कूप जिसमें जल भरने के लिए आने जाने हेतु जीना या पैड़ी लगी होती है।

पगवावटी—देखो 'पगपावटी' (रू.भे.)

पगवाहौ-सं०पु० [सं० पदक+वह] ······पैदल, पदाति।

उ०—वामां ली विचित्रां पगवाहां। वांसै हाक हुई खगवाहां।

—रा.रू.

पगविण-सं०पु०यौ० [सं० पदविहीन] सूर्य, भानु (अ मा.)

पगसुख-सं०पु०यौ० [सं० पदक+सुख] जूती, उपानह (अ.मा.)

पगह—देखो 'परगै' (रू.भे.)

उ०—धरमपति लखधीर हेल हमीर बावन वीर दुबाह। निरमळ मुखि नूर पगह पूर सांमंत सूर सगाह।—ल.पिं.

पगां-क्रि०वि० [देशज] लिए, वास्ते।

उ०—१ इण भांत आरोग परवारिया छै। थाळ बारियां उठाया छै। हाथां री चीकणाई उतारण रै पगां मूंगां रा थाळ मंगायजै छै। तिण मांहे हाथ मारजै। मूंगां सूं मसळ चीकणाई उतारजै छै।

—रा.सा.सं.

उ०—२ स्री अचळेसरजी रै दरसण करण रै पगां फेर अठयासी रिसी नवनाथ मेळै भरै।—ढाढाळा सूर री वात

रू०भे०—पंगा, पगा, पगि, पगे, परग, परगा।

पगांणौ, पगांतियौ, पगांतौ, पगांथ्यौ, पगाथियौ, पगांयौ, पगांस्थ्यौ-सं०पु० [सं० पदक्+स्था=पदस्थ] पलंग या चारपाई का वह

भाग जिस ओर सोते समय पैर रहते हैं (सिरांतियो का विलोम)

उ०—१ ना ए सइयां, खूंटी भंवरजी री वंदूक, ना रे विलंगणी भंवरजी रा कापड़ा। घुड़ला सइयां दीसै य न ठांण ना रे, पगांणे भंवरजी रा मोचड़ा।—लो.गी.

उ०—२ फुरमायो छै—हवी एक सुजांण नायक री, हरड़ै एक सवा सेर री, समरण एकमुखी रुद्राक्ष री, कंठी एक थांहरी इतरी वसता म्हारै महल में ढोलिये रै पगातिये आळा में कळ छै।

—पलक दरियाव री वात

उ०—३ म्हारै महल में ढोलिया रै पगांथिये आळो छै तिण मांहे छै सो जाय लेवो।—पलक दरियाव री वात

उ०—४ तिकै समईये वधाईदार आयो। आइ सिरहांणै ऊभो रह्यो, तितरै वीजी रांणी रै पुत्र हूवो। ऊवै रो वधाईदार पगांथियां ऊभो रह्यो।—जगदेव पंवार री वात

पगांम—देखो 'पैगांम' (रू.भे.)

उ०—ताहरां वीजाणंद कहियो—भलां! हिवार री वरियां वही जावै छै, सूं छै मास माहे भरि लेयीस। वाह-वाह! आरे वयण पगांम आहे।—सयणी री वात

पगा—देखो 'पगां' (रू.भे.)

उ०—१ सेखेजी पूछियो—'तूं कुण छै?' ताहरां कह्यो—'हूं राव जैतसींह छूं। ताहरां सेखे कह्यो—'रावजी! म्हैं थांहरो कासूं उजाड़ियो हुतो?' म्हे तो काको भतीजो घरती रै पगा विढता हुंता।

—नैणसी

उ०—२ इसो समइयो वण नै रह्यो छै। जिसै में पांणी में तिरता मुरगावी नजर आवै छै। तिकां रै सिकार रै। पगा वंदूकां गिलोलां मंगायजै छै।—रा.सा.सं.

पगाई—सं०स्त्री० [सं० प्रकृति] प्रकृति (जैन)

पगाड़णो, पगाड़बो—देखो 'पगाणो, पगावो' (रू.भे.)।

पगाड़णहार, हारो (हारी), पगाड़णियो—वि०।

पगाड़िग्रोड़ो, पगाड़ियोड़ो, पगाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।

पगाड़ीजणो, पगाड़ीजवो—कर्म वा०।

पगाड़ियोड़ो—देखो 'पगायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पगाड़ियोड़ी)

पगाढ—देखो 'प्रगाढ़' (रू.भे.)

पगाणो, पगावो—क्रि०स० [पगणो क्रि० का प्रे०रू०] १ अनुरक्त करना, लीन करना।

पगाणहार, हारो (हारी), पगाणियो—वि०।

पगायोड़ो—भू०का०कृ०।

पगाईजणो, पगाईजवो—कर्म वा०।

पगाड़णो, पगाड़बो, पगावणो, पगावबो—रू०भे०।

पगायोड़ो—भू०का०कृ०—१ अनुरक्त किया हुआ, लीन किया हुआ।

(स्त्री० पगायोड़ी)

पगार—सं०पु० [सं० प्राकार] १ परकोटा, शहरपनाह।

उ०—१ स्त्री नगर जाळहुर तणी रचना। गढ़-मढ़ मंदिर पोळ-पगार। अट्टाळीयां माळीयां टोडड़े विकळसां गगन चुंवित कोसीसां।

—कां दे प्र.

उ०—२ गढ़-मढ़ मंदिर नव-नवा, नव-नव पोळि-पगार। सुर-मंदिर सरवर नवां, नव-नव नृपति विचार।—मा.कां.प्र.

२ मार्ग, रास्ता। उ०—धांम-धांम मंगळ-धवळ, हूए हुंगांम हलोर। छहक पगारां नीर छित, घुरै नगारां घोर।—र.रू.

३ पराक्रम, शौर्य, वाहुवल। उ०—'माधव' वहि सांभवां मार। 'पूरणमलोत' वांहां पगार।—गु.रू.वं.

४ वह जलाशय, बांध, सागर या नदी जो पैरों से चल कर पार किया जा सके। उ०—स्त्री माहाराज ईस्वरा अवतार, कळिजुग समुद्र जाकै आगै पगार।—रा.रू.

५ गढ़, किला। उ०—लोह पगार कहे लाखावत, गंमर हैमर जेय गुड़ै। मुंह रावत जो आप न मुड़िये, मोढ़ा वेघा प्रसण मुड़ै।

—रावत चूंडा सीसोदिया रो गीत

६ रक्षा, पनाह। उ०—प्रजा प्रकार द्वार पै, पगार पावती नहीं।

—ऊ.का.

[देशज] ७ तनख्वाह, वेतन। उ०—म्हैं आप नैं म्हारा राज रा खास दीवांण बणावणा चावूं। पगार आप फरमावो जको म्हनैं मंजूर है।—फुलवाड़ी

वि०—१ रक्षा करने वाला, रक्षक। उ०—तठा उपरांति करिनै राजांन सिलांमति उम्रां गज राजां आगै गहा, चरखी दारू रा आरावा छूटिनै रहिया छै। जांणै घुंघळे पहाड़ पाखती रोही लाग रही छै। मदि वहतां मतवाळा ज्यों पग नीठ भरै छै। गटां रा तोड़णहार दरवाजां रा फोड़णहार दळां रा मोड़णहार, दळां रा पगारा फोजां रा सिणगार।—रा.सा.सं.

रू०भे०—पगार।

पगावणो, पगाववो—देखो 'पगाणो, पगावो' (रू.भे.)

पगावणहार, हारो (हारी), पगावणियो—वि०।

पगाविग्रोड़ो, पगावियोड़ो, पगाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पगावीजणो, पगावीजवो—कर्म वा०।

पगावियोड़ो—देखो 'पगायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पगावियोड़ी)

पगास—देखो 'प्रकास' (रू.भे.) (जैन)

पगि—देखो 'पग' (रू.भे.)

उ०—ज्यों रचना नृप ज्यांग री, को वरणे कवि-राय। वेदोक्त सासत्र-वचन, पगि-पगि लगन प्रभाव।—रा.रू.

पगियोड़ो—भू०का०कृ०—१ अनुरक्त हुवा हुआ, लीन हुवा हुआ।

(स्त्री० पगियोड़ी)

पगी—सं०स्त्री० [देशज] कूए के ऊपर चूनने वाले देरे 'दावड़े' में बीम

में आडी लगाई जाने वाली काष्ठ की पट्टी जिस पर माळ घूमती है।

वि०वि०—ये संख्या में सोलह होती हैं।

पगे—देखो 'पगां' (रू.भे.)

उ०—'केहर' 'बाघ' आद वड कारण। चक्रवत पगे एक सौ चारण।
—रा.रू.

पगेलो—वि० [सं० पदक+रा.प्र. इलो] १ पैरों से चलने योग्य। (बालक)

२ पैदल चलना, पैरों के बल चलने की क्रिया।

पगोड़ो, पगोठो—देखो 'पगथियो' (रू.भे.)

उ०—गूंदी रंग गिलोय, पिलूंदी पसरै चढण। ऊंट फोग जड ऊण, पगोठा देवे वढ़णे।—दसदेव

पगोडो—सं०पु० [सं० पदक+रा.प्र. डो, ड़ो] १ कांसी का बना लंबा मोटा छड़ जो सोने की गोलियां साफ करने के काम आता है।

२ देखो 'पगथियो' (रू.भे.)

पगोतियो, पगोत्यो, पगोथियो, पगोथ्यो—देखो 'पगथियो' (रू.भे.)

उ०—१ काळो गोटो ह्वै ज्यूं वो दौड़तो चिंघाड़तो आयो अर पगोतियां-पगोतियां उतर नै वो घापनै बावड़ी में पांणी पीयो।
—फुलवाड़ी

उ०—२ गोपाळ आयो-ई कै'र माळियै सूं नीचे उतरण लागो। पग जण घूलागा, माथो घूमण लागो। हीयै में हिलोड़ो ऊठियो अर आंख्यां आडी रात आयगी। ऊपरलै पगोथियै सूं पग उचकियो जको गुड़कतो-गुड़कतो आंगण में आतो ठें'रियो।—वरसगांठ

पगो—सं०पु० [देशज] १ रहट के मध्य स्तंभ के नीचे रक्खा जाने वाला पत्थर जिस पर वह स्थिर रहता है।

२ देखो 'पागो' (रू.भे.)

पग्ग—देखो 'पग' (रू.भे)

उ०—आरण भिडंत जोवंत अग्ग, 'ऊहड़' परट्ठि अहि सीस पग्ग।
—ग.रू.बं.

पग्गार—देखो 'पगार' (रू.भे.)

उ०—पच्छमांण पग्गार, हुओ राजा मंडोवर।—गु.रू.बं.

पघड़—१ देखो 'पाग' (मह०, रू.भे.)

२ देखो 'पग' (मह०, रू.भे.)

पघड़ो—देखो 'पाग' (अल्पा०, रू.भे.)

पघ्घड़—१ देखो 'पाग' (मह०, रू.भे.)

२ देखो 'पग' (मह०, रू.भे.)

पघलो—देखो 'पागल' (अल्पा०, रू.भे.)

(स्त्री० पघली)

पड़—सं०स्त्री० [सं० पट = चित्र-पट] १ कपड़े पर चित्रित किसी लोकप्रिय महापुरुष का जीवन-चरित्र।

२ देखो 'परड़' (रू.भे.)

३ देखो 'पुड़' (रू.भे.)

पड़आगळ, पड़आलग—देखो 'पड़ियालग' (रू.भे)

पड़कमणो—देखो 'पडिकमणा' (रू.भे.)

पड़काळ—देखो 'परकार' (रू.भे.)

पड़काळो—सं०पु० [देशज] १ घायलों को उठा कर ले जाने का पालकीनुमा उपकरण विशेष।

उ०—इतरै भाग फाटतै री गांव में खबर आई। जे इण तरह कजियो हुवो, सूरोजी खींवोजी दोनूं कांम आया। पोकर पोंहचो। तद लोग गांव रा पड़काळा मांचा लेय सिरदार मांणस पांच सौ हालिया।—सूरे खींवे कांधळोत री वात

२ जीना, सीढ़ी।

पड़कोट, पड़कोटो—सं०पु० [सं० परिकोट या परिकूट:] किसी नगर के चारों ओर रक्षार्थ बनाई हुई बड़ी दीवार, शहर-पनाह।

उ०—कोटरी सफील ऊंची गज १६ ओसार गढ़ रो महलायत हेठै गज २० ओर गज १० कोट अर पड़कोटै रै बीच छै।—द.दा.

अल्पा०—पड़कोटियो।

पड़कोटियो—देखो 'पड़कोटो' (अल्पा०, रू.भे.)

पड़को—सं०पु० [सं० पत्] ......प्रहार, चोट ?

उ०—रीस भरयो कोई रांक, वस्त्र-विण चल्यो वाटे। तपियो अति तावड़ो, टाळतां मुसकल टाटे। बील रूंख तळि बैसि, टाळणो मांडयो तड़को। तरु हूंती फळ त्रूटि, पड़यो सिर मांहे पड़को। आपदा साथ लागै लगी, जाय निरभागी जठै। करम-गति देख 'धरमसी' कहै, कहो नाठां छूटै कठै।—ध.व.ग्रं.

पड़क्खणो, पड़क्खबो—देखो 'पडखणो पडखबो' (रू.भे.)

उ०—सड़पफै बीजूजळां, हास मोड़ा वड़पफै सूर। सीसहार झड़पफै पड़क्खै नथी संम।—गु.रू.बं.

पड़क्खणहार, हारो (हारी), पड़क्खणियो—वि०।

पड़क्खिओड़ो, पड़क्खियोड़ो, पड़क्ख्योड़ो—भू०का०कृ०।

पड़क्खीजणो, पड़क्खीजबो—कर्म वा०।

पड़क्खियोड़ो—देखो 'पडखियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पड़क्खियोड़ी)

पड़खणो, पड़खबो—देखो 'पडखणो, पडखबो' (रू.भे.)

पड़खणहार, हारो (हारी), पड़खणियो—वि०।

पड़खिओड़ो, पड़खियोड़ो, पड़ख्योड़ो—भू०का०कृ०।

पड़खीजणो, पड़खीजबो—कर्म वा०।

पड़खियोड़ो— देखो 'पडखियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पड़खियोड़ी)

पड़खाऊ—वि० [सं० पत्+खाद्य+ऊ] बैठा-बैठा खाने वाला, निरुद्यमी, निठल्ला।

पड़गन—सं०पु० [सं० प्रतिग्रहण, प्रा० पडिग्गहण] प्रतिगृहीत कार्य का सम्पादन करना, वचनबद्धता।

उ०—सुणि सूडा सुंदरि कहय, पंखी पड़गन पाळि। प्रीतम पूंगळ पंथ सिरि, किम ही पाछउ वाळि।—ढो.मा.

रू०भे०—पडगन।

पड़गनो-सं०पु० [फा० पर्गनः] वह भू-भाग जिसके अन्तर्गत बहुत से गांव हों। उ०—पड़गनो जांगळू रो गांव ८४ सूं सांखला कना सूं लियो। नै सांखला चाकर हुवा। पड़गनै पूगळ रै मैं आण फेर सेखे वरसलोत नूं पायनांमी कियौ।—द.दा.

पड़गरणो, पड़गरबौ—देखो 'पडगरहणौ, पडगरहबौ' (रू.भे.)

पड़गणहार, हारौ (हारी), पड़गणियो—वि०।

पड़गरिम्रोड़ौ, पड़गरियोड़ौ, पड़गरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पड़गरीजणौ, पड़गरीजबौ—कर्म वा०।

पड़गरियोड़ौ—देखो 'पडगरहियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पड़गरियोड़ी)

पड़गाहणौ, पड़गाहबौ-क्रि०स० [सं० प्रतिग्रहणम्] १ पकड़कर कैद करना। उ०—वडा-वडा गढपतियां री मांन मोड़णहार गढ़पतियां री पड़गाहणहार, छत्रपतियां री नमावणहार, भाई अनंतरांम सांखला तो जिसौ अवार इण समै कोई हुवौ न होसी।

—कहवाट सरवहिया री वात

२ देखो 'पडगाहणौ, पडगाहबौ' (रू.भे.)

पड़गाहियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ पकड़ कर कैद किया हुआ।

२ देखो 'पडगाहियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पड़गाहियोडी)

पड़घारव—देखो 'पडघारव' (रू.भे.)

पड़चंदौ—देखो 'पडचंदौ' (रू.भे.)

पड़चिवौ—देखो 'पड़चौ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—वौ आपरे ई हाथां एक लांठा पड़चिया में सीरौ रांधनै रोजीना डकार जावतौ।—फुलवाड़ी

पड़चूंण, पड़चूंन, पड़चूण, पड़चून-सं०स्त्री० [सं० प्रचूर्ण] आटा-दाल, नमक-मसाला, चावल आदि फुटकर सामान।

रू०भे०—परचूंन, परचूण, परचून, परचूणि।

पड़चूणी-सं०पु०—१ पड़चून का सामान बेचने वाला।

रू०भे०—परचूनी।

पड़चौ-सं०पु०—१ लोहे की एक चद्दर का बना कटाह।

अल्पा०—पड़चियो।

२ देखो 'परचौ' (रू.भे.)

उ०—व्यापक ब्रह्म मोह नहीं माया, बेहदि पड़चा भेद मल पाया।

—ह.पु.वा.

पड़च्चौ—देखो 'पुड़छौ' (रू.भे.)

पड़च्छ—देखो 'पड़छ' (रू.भे.)

पड़च्छौ—देखो 'पुड़छौ' (रू.भे.)

पड़छंदौ—देखो 'पड़चंदौ' (रू.भे.)

पड़छ-सं०स्त्री० [देशज] १ ऊंट की चाल जो ढाण से मंद तथा चौल से तेज होती है।

२ घोड़े व बैल की चाल विशेष।

रू०भे०—पड़च्छ, पडछ।

३ देखो 'पुड़छौ' (रू.भे.)

उ०—झमरुख चमर सिलराळ झाट। सुजि ओछ पड़छ आसण सु-घाट।—सू.प्र.

पड़छणौ, पड़छबौ—देखो 'परछणौ, परछबौ' (रू.भे.)

पड़छणहार, हारौ (हारी), पड़छणियौ—वि०।

पड़छिम्रोड़ौ, पड़छियोड़ौ, पड़छयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पड़छीजणौ, पड़छीजबौ—कर्म वा०।

पड़छाय, पड़छाय-सं०स्त्री० [सं० प्रतिछाय] छाया।

उ०—जेठ महीनै घूप पड़ैली, सावड़िया री ताह। पड़छायां में पड़िया रहसां, वाह रे सांई वाह।—लो.गी.

पड़छियोड़ौ—देखो 'परछियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पड़छियोड़ी)

पड़छी-सं०स्त्री०—१ घोड़े या ऊंट की पीठ पर देशी चारजामे के नीचे लगाया जाने वाला उपकरण।

अल्पा०—पड़छियो।

२ देखो 'पुड़छौ' (रू.भे.)

उ०—१ किसाहेक घोड़ा छै? वे-पख भला ऊंचा अलला, कटोरा नखा आरसी सारीखा, ति-अंगळ-गाळा, मूठिया बील-फळा, निमंसा-नळा गोडा नाळेर-फळा......कनोती लोय-दीर्घ मगर लादक अच्छी छोटी पड़छी।—रा सा.सं.

उ०—२ आगळा कंध पड़छी अलप, मलप गुलाली मूंठियां। थक-पंख-घाव खागां थकै, ऊपडै वागां ऊठियां।—मे.म.

उ०—३ पड़छी सतुच्छ पीठै प्रचंड। खंडरइ जु आंठू मीति खंड। पूछी तउच्छ सत्थोर पग। वजिन्न विट्टोडइ मिरी वग्ग।

—रा ज.सी.

३ कुए या गहरे खड्डे से धूल निकालने के लिए किसी चादर या कपड़े का बनाया हुआ झोला।

वि०वि०—इसमें दो व्यक्ति आमने-सामने खड़े हो जाते हैं और कपड़े के चारों पल्लों को अपने हाथों में पकड़ कर धूल को ऊपर उछालते रहते हैं।

४ चादर या किसी कपड़े के एक तरफ के दोनों पल्लों को गले में बांध कर दूसरी तरफ के दोनों पल्लों को दोनों हाथों में पकड़ कर बीच में कोहनियें अड़ाकर बनाया जाने वाला झोला।

५ देखो 'पुड़छौ' (रू.भे.)

पड़छौ-सं०पु० [देशज] १ मंझले आकार का लोहे का कड़ाव।

२ देखो 'परचौ' (रू.भे.)

उ०—दीसै न न्याय भोगवि दसा, पड़छौ मुदि बदि पख रौ। देवै न

साच दाखै दुनि, छांडौ चांदौ है खरौ ।—अज्ञात

अल्पा०—पड़छी ।

पड़जन—देखो 'पड़जांन' (रू.भे.)

पड़जनियौ—देखो 'पड़जांनियौ' (रू.भे.)

पड़जांन-सं०स्त्री० [सं० प्रति+जन्यः] दुल्हे तथा बरात का वह स्वागत या अगवानी जब वह दुलहिन के पिता के गांव की सरहद में पहुचती है, सीमान्त-पूजन ।

रू०भे०—पड़जन ।

पड़जांनियौ-सं०पु० [सं० प्रतिजन्य] कन्या पक्ष की ओर से बरात का गांव की सीमा पर अगवानी करने वाला व्यक्ति ।

रू०भे०—पड़जनियौ ।

पड़णौ, पड़बौ-क्रि०अ० [सं० पतनम्, प्रा० पडन=पड़न=पड़णौ]

१ किसी ऊंचे स्थान से गिरकर, उछल कर या अन्य किसी प्रकार से नीचे के स्थान पर पहुँचना या ठहरना, पतित होना, गिरना ।

उ०—पछै गजराज मस्तक समेत दाहिमौ बाहण बिहूण हेठौ आय पड़ियौ ।—वं.भा.

२ प्रविष्ट होना, प्रवेश होना ।

उ०—वणक कहै आवै वसत, कै कूड़ कै गूंण । चेळै पड़ै सो होय सुध, सैंभर पड़ै सलूंण ।—बां.दा.

३ एक वस्तु का दूसरी वस्तु पर फैला कर रखा जाना, ढल जाना, फैलना । उ०—जिणि दीहे पाळउ पड़इ, टापर पड़ तुरियांह । तिणां दीहां री गोरड़ी, दिन-दिन लाख लहांह ।—ढो.मा.

४ प्रहार होना ।

उ०—अर केही वार बाजी नूं अठी-रो-अठी उडाय बोच दीधौ । अठी सूं कन्ह चहुवांण रौ किवांण प्रतिहार नाहरराज रा मस्तक चूकि बाम भुज रै भुज-बंध पड़ियौ ।—वं.भा.

५ छोड़ या डल जाना, पहुँचना या पहुँच जाना ।

ज्यूं-पेट में रोटी पड़णी, साग में नमक पड़णौ ।

६ पूर्व की स्थित या दशा को छोड़ कर नवीन स्थिति या दशा में होना ।

ज्यूं-ढीलौ पड़णौ, खोळौ पड़णौ, भोळौ पड़णौ, कमजोर पड़णौ, ठाढौ (ठडौ) पड़णौ ।

उ०—मतवाळौ जोवन सदा, तूझ जमाई माय । पड़ियां थण पहली पड़ै, बूढी घण न सुहाय ।—वी.स.

७ बीच में आना या जाना, हस्तक्षेप करना, दखल देना ।

ज्यूं-थे चाहो ज्यूं करौ म्है थांरै इण काम में नी पड़ूंला ।

८ किसी पदार्थ को लेने हेतु तेजी से आगे बढना, टूटना, झपटना ।

उ०—१ दूसरौ मयंक दूहवे दळां देखतां, जोटवट छड़ाळै अरुण जड़ियौ । हसत दीठां समा सीह माथा हुवौ, पनंग सिरकना घखपख पड़ियौ ।—राठोड़ बलू गोपाळदासोत चांपावत रौ गीत

उ०—२ तरै बलू कही—व्यासजी सांचो कहै छै । आंपां इसा नीसरां सो सागी हाथी जावां । ताहरां सवार मोहरे हुआ पाळा पूठे किया त्यांनूं कही—थे पाधरां तोपखाना ऊपर पड़ज्यौ ।

—अमरसिंह री वात

९ उत्पन्न होना, पैदा होना ।

ज्यूं-घांन में कीड़ा पड़णा, फळ में कीड़ा पड़णा ।

उ०—१ सूतौ थाहर नींद सुख, सादूळौ बळवंत । वन कांठै मारग वहे, पग-पग होल पड़ंत ।—बां.दा.

उ०—२ सादूळौ वन संचरै, करण गयंदां नास । प्रबळ सोच भमरां पड़ै, हंसां होय हुलास ।—बां.दा.

१० होना । उ०—सीधलां इंदां री लड़ाई हुई । सींधल २५ कांम आया । हिवै वैर पड़ियौ । भाद्राजण अर चोरासी रौ मारग भागौ। कोई मारग वहै नहीं । इसौ वैर पड़ियौ—नैणसी

११ दुखप्रद घटना का घटित होना, अनिष्टावस्था प्राप्त होना ।

ज्यूं-काळ पड़णौ, आफत पड़णी ।

उ०—'चद्रावत' तज सांम-ध्रम, विण ही पडियां ताव । 'दुरगौ' भागौ दुरग सूं, रांमपुरा रौ राव ।—बां.दा.

१२ ठहरना, डेरा डालना, टिकना, पड़ाव करना या लेना ।

उ०—या सुणतां ही अणहिलपुर रौ अघोस सेना रा संभार सूं महो रा मचोळा देतो गजनवी रौ वेग झेलण रै काज जवनेस रौ राह रोकि सोझति सहर आड़ौ आय पड़ियौ ।—वं.भा.

मुहा०—पड़चौ रै'णौ—एक ही स्थान पर बना रहना, एक ही अवस्था में रहना, रखा रहना, धरा रहना ।

१३ आराम करना, विश्राम के निमित्त सोना या लेटना ।

ज्यूं-रोटी खा'र पड़णौ सूझै है ।

मुहा०—पड्यौ रै'णौ—बिना कुछ काम किए ही पड़ रहना, लेटा रहना, सो कर बेकारी के दिन व्यतीत करना, बेकार रहना ।

१४ वीर गति प्राप्त होना, युद्ध करते मरना ।

उ०—१ पड़तै 'पदम' कमंध पाटोधर, पाड़ लियौ दिखण्यां पतसाह ।

—पदमसिंह (बीकानेर) रौ गीत

उ०—२ पाडे फिरंग नीठ रिण पड़िया, कमधां साकौ प्रबळ कियौ । दीधौ मरण 'बलू' दहबारी, सार कोट रै मरण कियौ ।

—जादूरांमजी आढौ

१५ अवसान होना, मरना (राजा महाराजाओं)

उ०—हा जसवंत ! हकबक हुओ, अकबक लोक अजांण । महपत पोतो 'मांन' रौ, पड़ियौ गुण अप्रमांण ।—ऊ.का.

१६ उपस्थित होना, प्रसंग में आना, संयोगवश होना ।

ज्यूं—मोकौ पड़णौ, पाळौ पड़णौ, पांनौ पड़णौ ।

१७ प्रबल इच्छा होना, धुन होना, चिन्ता होना ।

ज्यूं—चाहे कांम बिगड़ौ या सुधरौ, थारै तो घर जावण री पड़ी है ।

१८ त्वचा का उतरना, त्वचा का शरीर से दूर होना ।

उ०—धरती म्हांरी, म्हे धणी, ढाहण नेजा ढल्ल । किम कर पड़सी ठाकुरां, ऊभा सींहां खल्ल ।—अज्ञात

१९ पडता खाना ।

ज्यूं—भो कोट पैंतीस रुपियां में पड़ यौ है, भ्रा मेज पचीस रुपियां में पड़ी है ।

२० पकड़ में आना, पकड़ा जाना, बंधन में आना, कैद होना।

उ०—१ मरणौ लाजम मांमलै, धार अणी चढ धाप। पड़णौ सांकळ पींजरै, सिहां बडौ सराप ।—बां.दा.

उ०—२ रीझै सांभळ राग, भीजै रस नह भेंचकै । नैड़ौ प्रावै नाग, पकडीजै छाबड़ पड़ै ।—बां.दा.

२१ आय प्राप्ति आदि की औसत होना, पड़ता होना ।

ज्यूं—इण दिनां तांगा वाळां रै दस रुपया रोज पड़ जावै है ।

२२ मिलना, प्राप्त होना। उ०—मुहकम नूं रूठी महमाई, कागळ लिखिया पड़ण कमाई ।—रा.रू.

पड़णहार, हारौ (हारी), पड़णियौ—वि० ।

पड़वाड़णौ, पड़वाड़बौ, पड़वाणौ, पड़वाबौ, पड़वावणौ, पड़वावबौ, पड़ाड़णौ, पड़ाड़बौ, पड़ाणौ, पड़ाबौ, पड़ावणौ, पड़ावबौ

—प्रे०रू० ।

पड़िश्रोड़ौ, पड़ियोड़ौ, पड़योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पड़ीजणौ, पड़ीजबौ—भाव वा० ।

पटकणौ, पटकबौ, पाड़णौ, पाड़बौ—स०रू० ।

पड़त-सं०स्त्री० [सं० पत्] १ वह भूमि जो उपजाऊ करने हेतु कुछ काल न जोती गई हो ।

रू०भे०—पड़तल, पड़ती, पड़ेत ।

२ किसी पदार्थ के खरीद या तैयारी का खर्च, लागत ।

३ दर, धरह ।

[सं० प्रति] ४ एक ही प्रकार की कई वस्तुओं में से अलग-अलग एक एक वस्तु ।

उ०—एह पाठ स्वामी जी बताया । जद खंतिविजय बोल्या—इण में खोट है, त्यावरे चेला ! आंपां री पड़त पोथी खोल नै देख तो ।

—भि.द्र.

रू०भे०—परत ।

पड़तमाळ, पड़तमाळी—देखो 'प्रतिमाळ' (रू.भे)

पड़त रा खालड़ा-सं०पु०—देशी राज्यों में किसानों से लिया जाने वाला कर विशेष ।

पड़तल-वि० [देशज] कंगाल, निर्धन ।

सं०पु०—१ सामान, सामग्री ।

उ०—१ कठठ जूट रहकळां, जूट नाळियां जंबूरां । रथ वहलां रेवंत, भार पड़तल भरपूरां ।—सू.प्र.

उ०—२ पछै ऊपर सूं असाढ आयौ, ताहरां गांवां मांहे लोग प्राय वसियो । सू वांनर तेजो 'भलो' रजपूत हुतो । आपरो खासो चाकर हुतो, सोई मळ गयो हुतो सु भो पण पाछो आयौ । दोय साथे टावर एक बेटो एक बेटी । एक पड़तळ नूं बळद ।—नैणसी

२ ऊंट घोड़ा आदि के चारजामा संबंधी उपकरणसमूह ।

[सं० पट+तल] ३ लादने वाले घोड़े के चारजामा के नीचे रखा जाने वाला टाट या मोटा कपड़ा ।

[सं० परि+तल] ४ जागीरदार द्वारा अपना भाग लेने के बाद खलिहान में किसान के लिए स्वेच्छा से छोड़ा जाने वाला अन्न ।

५ वे उपकरण जो गाड़ी हल आदि जोतने के समय उपयोग लिए जाते हैं ।

६ देखो 'पड़तलौ' (मह.,रू.भे.)

७ देखो 'पड़त' (रू.भे.)

रू०भे०—परतळ ।

पड़तलौ-सं०पु० [सं० परि+तन] १ तलवार रखने के लिए चमड़े या मोटे कपड़े की पट्टी जो कंधे से लेकर कमर तक छाती और पीठ पर से तिरछी आती है ।

२ चपरास ।

रू०भे०—पड़दड़ौ, पड़दलौ, परतलौ, पुड़दड़ौ ।

अल्पा०—पड़दड़ी, पड़दली, पडदडी, पडदली, पुड़दली ।

मह०—पड़तल, परतल, पुड़दड़ ।

पड़ताळ-सं०स्त्री० [सं० प्रति+भालनम् अथवा परितोलनम्]

१ पड़तालना क्रिया का भाव, गौर के साथ की गई जाँच, भली भांति जाँच या देखभाल ।

उ०—पुलिस री जाँच-पड़ताळ सूं मालम हुयी कै भो मकांन गुंडां अर बदमासां रो खास अड्डो है ।—रातवासो

२ खोज, तलाश, ढूंढ-ढांढ । उ०—पांणी री पड़ताळ, लड़थड़ाता वेहाल । लूआं मती लड़ायज्यो, मां बारा वै लाल ।—लू

३ ध्वनि, आवाज । उ०—मोरिया झिंगोर खाय नै रह्या छै, बीजळी सिहर सिळाव करनै रही छै, परनाळां रा पड़ताळ वाजि नै रह्या छै ।—जखड़ा मुखड़ा भाटी री वात

४ बौछार । उ०—पड़ि पावस पड़ताळ, सघण घण मेह को । होसी कोण हवाल, नवला नेह को ।—पनां वीरमदे री वात

५ प्रहार, चोट । उ०—१ पड़ताळां पाताळ, वहतां तुरी वजाड़ियो । उडी रजी छायो अरस, किय झांखो किरणाळ ।—वचनिका

उ०—२ पड़ताळ पाइ पवंग है, भुग्र भारि कपि भुग्रंग ।

—गु रू.बं.

पड़ताळणौ, पड़ताळबौ-क्रि०अ० [सं० प्रताडनम्] १ जोशपूर्वक आगे की ओर बढ़ाना, झोंकना । उ०— झलण करतो छड़ा सेल रंगिये 'जसो' जुध वटे खेलतो 'गजन' जायो । पमंग पड़ताळ पंचाइण पाड़तो अफारै धकारै चाल आयो ।

—महाराजा जसवंतसिंह रौ गीत

२ ध्वंस करना, नष्ट करना ।

३ पीटना, मारना।
४ पराजित करना, हराना, भगाना।
५ तेजी से चलाना, तेजी से हांकना।
उ०—ढोलउ चढि पड़ताळिया, डूंगर दीन्हा पूठि। खोजे बावू हथ्थड़ा, धूड़ि भरेसी मूठि।—ढो.मा.
६ खोजना, तलाश करना, ढूंढना।
७ जांच करना, छान-बीन करना। उ०—उलटो रस उलाळ उण, आख बरंग उलाळ। दाख त्रिदस फिर पंचदस, तुक बिहुंवै पड़ताळ।
—र.ज.प्र.

पड़ताळणहार, हारो (हारी), पड़ताळणियो—वि०।
पड़ताळिओड़ो, पड़ताळियोड़ो, पड़ताळयोड़ो—भू०का०कृ०।
पड़ताळीजणो, पड़ताळीजबो—कर्म वा०।
पड़ताळणो, पड़ताळबो, परताळणो, परताळबो—रू०भे०।

पड़ताळियोड़ो—भू०का०कृ०—१ जोशपूर्वक आगे की ओर बढाया हुआ, झोंका हुआ।
२ ध्वंस किया हुआ, नष्ट किया हुआ।
३ पीटा हुआ, मारा हुआ।
४ तेजी से चलाया हुआ, तेजी से हांका हुआ।
५ खोजा हुआ, तलाश किया हुआ, अनुसंधान किया हुआ।
६ जांच किया हुआ, जांचा हुआ।
७ पराजित किया हुआ, भगाया हुआ।
(स्त्री० पड़ताळियोड़ी)

पड़ती—देखो 'पड़त' (रू.भे.)

पड़थम—देखो 'प्रथम' (रू.भे.)

पड़द—सं०स्त्री० [सं० पर्दः] खजूर (अ.मा.)

पड़दड़ो—सं०स्त्री०—देखो 'पड़तलो' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—मूझ री कमर में रही वा सदामद। निमक मेल हां नहीं घणो नेहा। पड़दड़ो मांय गढ केई मावै परा। जोधपुर अनै जाळोर जेहा।—ठा० सवाईसिंह चांपावत री गीत

पड़दड़ो—सं०पु०—१ तलवार की म्यान या कोश।
उ०—सुज औ म्याव संसार, वीरमदे सांभळ वचन। तीखो दो तरवार, पड़े न एकण पड़दड़।—गो.रू.
रू०भे०—पड़दलो।
२ देखो 'पड़तलो' (रू.भे.)

पड़दनी—सं०स्त्री० [देशज] चमड़े का बना उपकरण जो कुआ चलाते समय चूतड़ के नीचे रखा जाता है।

पड़दलो—देखो 'पड़तलो' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—दूजा 'क्रन' नमो पराक्रम 'दुरगा', रूक वदे थारी दोहुं राह। राजा बीया पड़दलो राखै, पड़दलियां थारै पतसाह।
—दुरगादास राठौड़ री गीत

पड़दलो—१ देखो 'पड़दड़ो' (रू.भे.)
२ देखो 'पड़तलो' (रू.भे.)

पड़दांनगी—देखो 'प्रधांनगी' (रू.भे.)

पड़दांनो—सं०स्त्री० [देशज] रहट की लम्बी भुजा पर रखी जाने वाली सिला।
रू०भे०—परदांनो।

पड़दाइत—देखो 'पड़दायत' (रू.भे.)

पड़दादो—सं०पु० [सं० प्र+राज० दादो] (स्त्री० पड़दादी)
प्रपितामह। उ०—जद स्वामीजी बोल्या—थांरा बाप दादा, पड़दादा आदि पीढ़ियां रा नांम तथा त्यांरी पुरांणी बातां जांणो हो सो किण देखी।—भि.द्र.
रू०भे०—परदादो।

पड़दादार—देखो 'परदादार' (रू.भे.)

पड़दादारी—देखो 'परदादारी' (रू.भे.)

पड़दानसीन—देखो 'परदानसीन' (रू.भे.)

पड़दापोस—देखो 'परदापोस' (रू.भे.)
उ०—सारां अदतारां मंही, आछो पड़दापोस। मुंह न बिचारै मंगणा, देणो उत्तर दोस।—बां.दा.

पड़दावेगण—सं०स्त्री० [फा० पर्दः+तु० बेगम] वह स्त्री जो राजप्रासादों में सशस्त्र होकर पहरा दे।
उ०—राज-लोक रिख दूण, बीस पड़दायत प्यारी। संग सहेली च्यार, अगन सिन्नांन उचारी। बारै गायण बळ, वळै नव पड़दावेगण। हाथळ चेरी उभै, उभै दो जणी हजूरण। पातरां पांच नाजर उभै, भल बाई अत भावियो। 'जसवंत' सुतन सतियां सहत, यों स्वरग-लोक सिधावियो।—रा.रू.
रू०भे०—पड़दाबेगण, परदाबेगण, परदावेगण।

पड़दायत, पड़दायतन—सं०स्त्री० [फा० पर्दः+रा.प्र. आयत] १ वह स्त्री जो राजा-महाराजा, सामंत तथा सम्पन्न व्यक्ति के यहां बिना विवाह किए ही स्त्री रूप से रहती हो, उपपत्नी, रखैल।
उ०—१ कुलटा छाची व्है ठुकरांणी कूड़ी। पड़दै पड़दायत रांणी सूं रूड़ी।—ऊ.का.
उ०—२ मुदै एह खट महल, सहल अत गिणै सुपावन। पड़दायत हित प्रिया, अघट सति मिळी अठावन।—रा.रू.
२ वह स्त्री जो परदा रखती है। उ०—पड़दायत नारी मंदिर माळिये रे। जोवै जाळयां में मूंडो घाल रे।—जयवांणी
सं०पु०—३ वह जिसके यहां परदा रखने की प्रथा हो।
रू०भे०—पड़दाइत, परदाइत, परदायत।

पड़दार—सं०पु० [फा० पर्दः+दार] १ एक मुसलमान जाति विशेष जो प्राचीन काल में बादशाहों तथा राजा-महाराजाओं की जनानी ड्योढ़ी पर पहरा देने का कार्य करते थे।
२ इस जाति का व्यक्ति।
उ०—'निजरू' अनै 'करीम', बिहि पड़दार बहादर। नगारची

'नाहरी', हाक करि श्रौरे हैमर ।—सू.प्र.

३ द्वारपाल; दरबान । उ०- जलाल एक दिन झरोखे रै मारग न जाय सकियौ, रेसमी रस्सौ थौ सो टूटौ थौ, तद पहलां री भांत नेत्रां खवास श्रा फूलां रै बोझै बैठांण माळण रै माथै घर भीतर नूं ले हालो । इतरै पड़ाइयै पड़दार बोझै हाथ घालियौ नै कह्यौ—हरांमजादी लौंडी ! हमेसा जलाल क्यूं ल्यावती है ।

—जलाल बूबना री वात

पड़दाखू-सं०पु० [फा० पर्दाज] चित्र की महीन रेखाए श्रादि ।

उ०—चिग पड़दाखू पाल चमंकै । दांमण जांण सिळाउ दमंकै ।

—सू.प्र.

पड़दावेगण—देखो 'पड़दावेगण' (रू.भे.)

पड़दी-सं०स्त्री० [फा० पर्दः] १ अलमारी के विभाग करने के निमित्त बीच-बीच में लगाया जाने वाला पत्थर, काष्ठ या धातु का खण्ड । [सं० परिधानी] २ श्राड़ या श्रोट के निमित्त बनाई गई पतली दीवार ।

३ वह वस्त्र या पट जो विवाह के समय वर श्रौर वधू के बीच में टांगा या लगाया जाता है, अन्तरपट ।

४ एक प्रकार का कपडे का बटुश्रा जिसमें कसीदे कढ़े हुए, रेजगारी, रुपए व मुहरें रखने के अलग अलग भाग होते हैं ।

उ०—ताहरां 'एवाळां' कह्यौ—'लीजै राज !' मेळै कह्यौ—'यूं ही नहीं ल्यूं । जो थे मोल ल्यौ तौ ल्यूं ।' ताहरां एवाळां कह्यौ—'दीजै राज !' ताहरा मेळै सेपटै नव फदिया पड़दी मांहे सूं काढ़ि नै दिया ।—नैणसी

पड़दौ, पड़द्दौ-सं०पु० [फा० पर्दः] १ किसी वस्तु, व्यक्ति आदि की दृष्टि से श्रोझल करने में प्रयोग किया जाने वाला कपड़ा, श्राड करने में प्रयोग किया जाने वाला कपड़ा, टाट चिक श्रादि ।

उ०—इतरी सुण रांणी श्राप पूछी, कासूं छै । तद भरमल री मा कही—जे भरमल बाहर खड़ी छै सो कहै छै-कपड़ा भीज डील सूं चिपक गया तीसूं लाज श्रावै छै । तौ रांणी कहो—पड़दा छोड देवौ सो भरमल नीसर जावै ।—कुंवरसी सांखला री वारता

मुहा०—१ पड़दौ खोलणौ—गुप्त बात को जाहिर करना, भेद का उद्घाटन करना ।

२ पड़दौ डाळणौ—छिपाना, गुप्त रखना, प्रकट न होने देना ।

३ पड़दौ पड़णौ—छिपाव होना, दुराव होना ।

४ पड़दौ राखणौ—किसी के अवगुणों को लोगों में प्रकट न होने देना, किसी की प्रतिष्ठा या मान को बना रहने देना ।

२ दृष्टि या गति के मध्य में इस प्रकार पड़ने वाली वस्तु कि उसके इस पार से उस पार श्राना जाना देखना श्रादि न हो सके, दृष्टि या गति में रुकावट डालने वाला पदार्थ, व्यवधान ।

३ श्राड़ या श्रोट जिससे सामने की वस्तु कोई देख न सके या उसके निकट तक न पहुच सके ।

४ लोगों की दृष्टि के सामने न होने की स्थिति, श्राड़ । श्रोट, छिपाव । उ०—कांमी फिर वांमी क्रपण, जादूगर नर प्यार । रात दिवस पड़दै रहै, पड़दा सूं हिज प्यार ।—बां.दा.

५ स्त्रियों को घर के भीतर रखने तथा बाहर निकल कर लोगों के सामने न फिरने देने की प्रथा या नियम ।

६ अन्तःपुर, जनानखाना, राजप्रासाद, हरम ।

उ०—१ पड़दै घालौ पातरां, ठावी-ठावी ठौड़ । परणी नुं नह पेटियौ, वेखौ बुध री दौड़ ।—बां.दा.

उ०—२ सूरमा लड़ै चवड़ै संभाळ । बेगमां घसै पड़दा विचाळ ।

—वि.सं.

मुहा०—१ पड़दै घालणौ—किसी स्त्री को रखैली बना कर अन्तःपुर में रखना ।

२ पड़दै बैठणौ—किसी स्त्री का किसी के यहां रखैलो होकर रहना ।

७ किसी बात को दूसरे से छिपाने का भाव, दुराव, छिपाव, भेदभाव ।

उ०—१ प्रीत जहां पड़दा नहीं, पड़दा जहां नह प्रीत । प्रीत करै पड़दा रखै, प्रीत भई विपरीत ।—श्रज्ञात

उ०—२ मितर सूं अंतर नहीं, वैरी सूं नहि नेह । प्रीतम सूं पड़दौ नही, जिण निरखी सब देह ।—अज्ञात

मुहा०—१ पड़दौ करणौ, पड़दौ राखणौ—छिपाव रखना, बात खोल कर नहीं करना, दुराव रखना, भेदभाव रखना ।

२ पड़दौ खोलणौ—भेद या रहस्य का प्रकट करना ।

३ पड़दा री पोल—गुप्त बात का प्रकटीकरण ।

९ एक प्रकार का देशी पालने (घोड़ियौ) में बांधा जाने वाला कपड़ा जिस पर बच्चे को सुला कर इधर से उधर हिलाया जाता है । उ०—जाय दरजी नै यूं कईजो, हां रै जाय दरजी नै यूं कईजो । पड़दा नै पाटी लेई श्राय जो म्हारै पाटी नै पड़दौ लै श्राईजो । पड़दै म्हारै हालरौ पोढ़सी, कांई पाटी बांधै हालरिया री माय जी ।—लो.गी.

१० तह, परत ।

ज्यूं—जमी रौ पड़दौ ।

११ वह पतली दीवार जो श्रोट या श्राड़ करने के निमित्त बनाई गई हो ।

रू०भे०—परदौ, परद्दौ ।

अल्पा०—पड़दी ।

पड़धांन—देखो 'प्रधांन' (रू.भे.)

पड़धांनगी—देखो 'प्रधांनगी' (रू.भे.)

पड़नांनौ-सं०पु० [सं० प्र+राज० नांनौ] (स्त्री० पड़नांनी) मातामह का पिता, मामा का पितामह ।

पड़नाळ—देखो 'परनाळ' (रू.भे.)

उ०—घड़ फूटत तूटत सीस धार। पड़नाळ स्रोण बभकं अपार।
—सू प्र.

पड़पंच, पड़पच—देखो 'प्रपंच' (रू.भे.)

उ०—१ क्यूं पड़पंच करै जिय कूड़ा, बिलकुल मन में धार विवेक। दाता जो बाधी लिख दीनी, आघी करणहार नह एक।
—भीखजी रतनू

उ०—२ वादी पच थाको विसनावत, पड़पंच कर उपचारपणौ। मंत्र-जंत्र आखो नह मांनै, ताखौ सालमसींग तणौ।—अज्ञात

उ०—३ अठी उठी मांग तांग नै कीकर ई पड़पंज करनै आपरो खेत बवाय दीनौ।—फुलवाड़ी

पड़पड़—देखो 'पड़ापड' (रू.भे.)

पड़पड़ाणौ, पड़पड़ाबौ–क्रि०अ०—पड़पड़ शब्द होना।

पड़पड़ाट, पड़पड़ाहट–सं०पु० [अनु०] पड़पड़ाने की क्रिया, पड़पड़ शब्द।

पड़पण–सं०पु० [सं० परिपणं, परिपनम्] १ मूल पूंजी, धनदौलत।

२ वैभव, ऐश्वर्य।

३ शक्ति, सामर्थ्य, बल। उ०—वित सारू दत बांटजो, ज्यूं पड़पण घर का।—दुरगादत्त बारहठ

४ सहायता, मदद।

उ०—मांनो वचन साह सत मेरी, तुरत करां सब कारज तेरौ। जो राजा ऊपर खड़ जाऊं, पड़पण खांन सुजायत पाऊं।—रा.रू.

५ कुए के उपकरण। उ०—पड़पण कोहिर पर कोहिर पड़ जावै। खड़ खड़ करता खर खुद घर खड़ि जावै।—ऊ.का.

रू०भे०—पड़प्पण, पड़पण, परप्पण।

पड़पड़णौ, पड़पड़वौ–क्रि०अ०—१ पार पाना, जीतना।

उ०—मिणियारो बापड़ो तौ काळीधार बूडांणौ। अबै करै तो कांई करै। इण अचपळी जात सूं बो अेकलो कीकर पड़पै।
—फुलवाड़ी

२ वश चलना। उ०—रांणां नै पड़पूं नहीं, वैहतौ देखै वाट। दोन्ही म्हारी डीकरी, घर कित कोळू घाट।—पा.प्र.

३ जैसे-तैसे वहन करना, कार्य चलाना। उ०—जे ओजो उधारो तो कठै ही क्यूं जुड़ै नहीं नै रावळी बसी मांहे इतरा मालदार वाणियां छै तिण रो आधो माल रावळै ल्यो। आधो माल रहण देज्यो। मास रो वळै, पिण आधो नीसरसी आधो छोड़तां उवै ही नीसरसी, पड़पसी।—राव मालदेव री वात

४ मुकाबला करना। उ०—बापड़ा दोनूं ई उण गोरियावर रै मारया घणा दुखी हा, पण जोर कांई करै। सांप्रत काळ सूं कीकर पड़पै।—फुलवाड़ी

पड़पियोड़ो–भू०का०कृ०—१ पार पाया हुआ, जीता हुआ।

२ वश चला हुआ।

३ जैसे-तैसे कार्य चलाया हुआ।

४ मुकाबला किया हुआ।

(स्त्री० पड़पियोड़ी)

पड़पोतरौ, पड़पोतौ, पड़पोत्र, पड़पोत्रौ—देखो 'प्रपौत्र' (रू.भे.)

उ०—इतरा थोक वेलि पढंतां वधै। परिवार पूत पोत्रां करि पड़पोतां करि।—वेलि टी.

(स्त्री० पड़पोतरी, पड़पोती, पड़पोत्री)

पड़प्पण—देखो 'पड़पन' (रू.भे.)

उ०—कोयक सकट कुसागड़ी, भार विसेस भरंत। धवळ पड़प्पण आपरै, खांधै ले निवहंत।—बां.दा.

पड़फणौ, पड़फबौ–क्रि०स० [देशज] वरण करना, वरना।

उ०—सड़फर्फ वीजूजळां हास मोहा वड़फर्फ सूर। सीस हार झड़फर्फ पड़फर्फ नथी संभ। ग्रीधणी हड़फर्फ पळां सांमळी हुड़फर्फ गूद। रुंड केई अड़फर्फ पडंफर्फ बरां रंभ।—बद्रीदांन खिड़ियो

पड़भव–सं०पु० [देशज] प्रातःकाल, सवेरा।

पड़यागळ, पड़यालग—देखो 'पडियालग' (रू.भे.)

पड़वज–सं०पु० [देशज] १ सहानुभूति, हमदर्दी। उ०—१ तूं छइ माहरइ सगुण सनेही। तउ करी पड़वज कीजै केही।—वि.कु.

उ०—२ ताहरां दीवांण आंख देख नै वडो सोच कियो। घणा पिछताया। पछै दीवांण नरबदजी रै डेरै पधारिया बडो सिसटाचार पड़वज कियो।—नैणसी

२ प्रत्येक दिन ?

उ०—तुरक सुजायतखांन री, वात करां सूं धात। दाखै लिखै 'दुरग' नूं, पड़वज संझ प्रभात।—रा.रू.

पड़वा–सं०स्त्री० [सं० प्रतिपदा] चन्द्रमास के प्रत्येक पक्ष की प्रथम तिथि, परिवा। उ०—अरिदळ निरदळिया 'अजे', सोबा गिळिया सात। दीवाळी बोली 'उदै', पड़वा हुदै प्रात।—रा.रू.

रू०भे०—पड़िवा, पडवा, पडिवा, पडोवा, परवा।

पड़वाचा, पड़वाचौ–सं०पु० [सं० प्रति-वचन] उत्तर, जवाब।

पड़वौ–सं०पु० [सं० प्रतिपस्त्य] १ घास-फूस या खपरैल की छाजन का मकान या कमरा। उ०—ओरियै-ओरियै देवर नै जेठ, पड़वै नणदां री झूलरी। वरसै-वरसै ऐ मा मोरी मेह, भीजै भाइयां री बहनड़ी।—लो.गी.

२ रंग-भवन। उ०—१ पड़वै पोढ़ंतांह, करड़ापण हरकोई करै। धारां में धसतांह, आंसू आवै 'ईलिया'।—लाखणसी चारण

उ०—२ पेटो मोड छिपाविया, जांण्यो घाव न जीव। हेली दिवलां पांवणो, पड़वै दीठो पीव।—वी.स.

मुहा०—पड़वौ ओळगणौ—शयनागार (रंग भवन) के पास रात भर जाग कर गायन करना।

३ देखो 'पड़ह' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—ताहरा खाफरै कह्यो—हूं चोर छूं, खाफरो म्हारो नांव छै, काल पड़वौ फिरतौ ताहरां मैं विचारी—मरणौ तौ एक बार छै,

जो राजाइ री हार खाधी तौ हमैं पिण—तै सूं महाराज रै मुजरौ आयौ छूं।—खापरा चोर री वात

अल्पा०—पड़ायौ।

पड़सद, पड़सद्द, पड़साद–सं०पु० [सं० प्रति-शब्द] १ प्रतिध्वनि।

उ०—१ हुय मुजरौ रावतां, होय हाका पड़सद्दां। हाक जसोळां हुई, निहस त्रंबागळ सद्दां।—सू.प्र.

उ०—२ मारु तोइ न कणमणइ, साल्हकुमर बहु साद। दासी तद दीवाधरी, सांभळिया पड़साद।—ढो.मा.

उ०—३ बागां बि-दळ बराबर वादे। पिड़ गाजियौ गयण पड़सादे। —रा.रू.

२ घोर शब्द, जोर की ध्वनि। उ०—१ तिण समीयं भांटौ भील आयौ। आगै वळै आयौ थौ, पिण जोर लागौ नहीं, तिकौ आयौ कोट सात कूदि नै मं'ल चढियौ। परनाळां रा पड़सावां थी खड़-कारौ निवै पड़ै नहीं।—जखड़ा मुखड़ा भाटी री वात

पड़साळ, पड़साळा–सं०स्त्री० [सं० प्रति-शाल] मकान के अगाड़ी की शाला ? उ०—बहदौ हुवौ ज्यो पहलां ही उठाय आया सो आदमी न्हासता-भाजता मारिया। गांव लुगाई-टाबर सारा भेळा कर कोटड़ी में पड़साळा झूंपड़ा था तिकां में दिया।

—अमरसिंह गजसिंहोत री वात

रू०भे०—पठसाळ, पठसाळा, पडसाळ, पडसाळा।

पड़सूची, पड़सूधी—देखो 'पडूदी' (रू.भे.)

पड़हड़—देखो 'पटह' (रू.भे.)

उ०—सज्जण चाल्या हे सखी, पड़हड़ वाज्यउ द्रंग। कांही रळी-बधामणां, कांही अवळउं अंग।—ढो.मा.

पड़हार—देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)

पड़ह, पड़हौ–सं०पु० [सं० पटह] १ सर्वसाधारण को ढोल बजा कर दी जाने वाली सूचना, घोषणा। उ०—१ राजा फेरावै पड़ह, नगर मांहि इण रीति। मुझ कुमरी राजी करै, द्यूं तेहनै सुख-प्रीति। —वि.कु.

उ०—२ जोधपुर में स्वामीजी पधारचा। जद···मेळा होय चरचा करवा आया। ऊंधी अंवळी चरचा करवा लागा। जीव बचायां कांईं हुवै ? विजयसिंहजी पड़हौ फेरायौ तेह नौं कांइ थयौ ? —भि.द्र.

३ देखो 'पटह' (रू.भे.)

पड़ाउ, पड़ाऊ–वि० [सं० पतित] सेना द्वारा पराजित होने पर युद्ध-स्थल में छोड़ा हुआ सामान (घोड़ा, हाथी, अस्त्र-शस्त्रादि)

उ०—१ वंधवै रै वाघेलै 'मुकुंद' सौं वेढ हुई, 'मुकंद' भागौ। हाथी घणा पड़ाऊ आया। खिड़ियै खींवराज वात कही।—नैणसी

उ०—२ घोड़ा तीन सौ पड़ाऊ आया था जिके रावजी रै नजर गुदराइया।—कुंवरसी सांखला री वारता

उ०—३ दुरंग बणहड़ा सहित सरदार अड़ते दियौ, जमी असमांन बिच सबद जड़ियौ। हाथियां तणौ 'उमेद' बड हेड़ाऊ, पड़ाऊ लियण रौ व्यसन पड़ियौ।—उमेदसिंह सीसोदिया रौ गीत

पड़ाणौ, पड़ावौ–क्रि०स० [पड़णौ क्रि० का प्रे०रू०] १ दूसरे को पटकाने में प्रवृत्त करना, गिराना।

२ किसी पदार्थ को दूसरों के अधिकार से बलात् अपने अधिकार में कर लेना, छीनना। उ०—बरछिया सूं असवार दस नांख दिया। घोड़ा पड़ायलिया।—सुंदरदास वीकूंपुरी भाटी री वारता

३ बनाना, बनवाना।

पड़ाणहार, हारौ (हारी), पड़ाणियौ—वि०।

पड़ायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पड़ाईजणौ, पड़ाईजवौ—कर्म वा०।

पड़ावणौ, पड़ाववौ—रू०भे०।

पड़ापड़, पड़ापड़ी–सं०स्त्री० [सं० पत्] (अनु०) लगातार पड़पड़ शब्द की आवृति, पड़-पड़ की ऐसी आवाज जिसमें दो ध्वनियों के मध्य इतना कम अवकाश हो कि अनुभव में न आ सके।

क्रि०वि०—निरंतर पड़पड़ ध्वनि के साथ, निरतर पड़पड़ शब्द करते हुए।

रू०भे०—पड़पड़, पटपट, पटापट।

पड़ायौ—देखो 'पड़वौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पड़ायोड़ौ–भू०का०कृ०—१ एक दूसरे को पटकाने में प्रवृत्त किया हुआ, गिराया हुआ।

२ किसी पदार्थ को दूसरों के अधिकार से बलात् अपने अधिकार में किया हुआ, छीना हुआ।

(स्त्री० पड़ायोड़ी)

पड़ाळ, पड़ाळा–सं०पु० [सं० पत् ?] टीबों के मध्य की नीची भूमि।

उ०—खेत मंढैया मंढी, हूंचियां डांमक वाजै। खाडां डांडो खिडै, पडाळां बांडी भाजै।—दसदेव

पड़ाव–सं०पु० [सं० प्रत्यावास] १ किसी सेना, यात्री-समूह या व्यापारी वर्ग का किसी स्थान पर रात्रि भर का ठहराव, यात्री-समूह का यात्रा के बीच में अवस्थान।

उ०—१ तको महा नरमोही, सकण री ऐड़ी ठकुराई जो बारा-बारा कोस ऊपर फौज रौ पड़ाव है।—कल्याणसिंह वाढेल री वात

उ०—२ लोथां पर लोथां लुढक, दे रण इम दरसाव। घण वण-जारा गूणत्यां, पटकी दैण पड़ाव।—रेवतसिंह भाटी

२ ऐसा स्थान जहाँ पर यात्री ठहरते हों। यात्रियों के यात्रा के बीच में ठहरने का निर्दिष्ट स्थान, चट्टी।

पड़ावणौ, पड़ाववौ—देखो 'पड़ाणौ, पड़ावौ' (रू.भे.)

उ०—सोने तो रूपै सायवा ईंट पड़वाय जी। जिणरा चिणाय दो महल'र माळिया।—लो.गी.

पड़ावणहार, हारौ (हारी), पड़ावणियौ—वि०।

पड़ाविओड़ौ, पड़ावियोड़ौ, पड़ाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पड़ावीजणो, पड़ावीजबो—कर्म वा०।

पड़ावियोड़ो—देखो 'पड़ायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पड़ावियोड़ी)

पड़िग्रागळ, पड़िग्रालग—देखो 'पडियालग' (रू भे.)
उ०—ग्राहवि 'मघो' ग्रगाहि, पड़िग्रालग वागे प्रवंग। जांगि खंडी-वन जाळिबा, भटकि कटकां माहि।—वचनिका

पड़िकमणउ, पड़िकमणा, पड़िक्कमणौ—देखो 'पडिकमणा' (रू.भे.)
उ०—१ अभक्ष्य न खावइ हो लहुड़ौ-बडउ, अनंत काय नउ सूंस। सांझ सवारइ हो पड़िकमणउ करइ, वलि करइ संजम हूंस।
—स.कु.

उ०—२ मरजादा बावीस बोलणी रे लाल, पनरे करमादांन सुविचारी रे। अनरथ-दंड निवारियौ रे लाल, पोसा पड़िकमणा बहुवांन सुवि।—जयवांणी

उ०—३ पौसह पड़िकमणौ करे, सीलव्रत नित्य नेम। चोखी पाले सूंस आखड़ी, देव-गुरु धरम सूं प्रेम।—जयवांणी

पड़िमा—देखो 'प्रतिमा' (रू.भे.)
उ०—सूरत सोहती ए, जन-मन मोहती ए। पीतळ पड़िमा पासि, भेटचउ अधिक उलासि।—स.कु.

पड़ियागळ—देखो 'पडियालग' (रू.भे.)
उ०—पमंग अदाग सुजळ पड़ियागळ, अकबर दळ रहि अगरा। कळंक विना 'कुंभेण' कळोधर, 'बाघ' कळोधर कळंक विण।
—दुरसौ आढ़ौ

पड़ियार—देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)

पड़ियारिया-सं०स्त्री० [देशज] एक राजपूत वंश।

पड़ियाळ, पड़ियालग—देखो 'पडियालग' (रू.भे.)
उ०—१ जोम छक हरक जड़ियाळ भंजा गजां, जेण तक बजर पड़ियाळ जांणी।—जोधसिंह राठौड़ रो गीत

उ०—२ सल्लूण तुरी सोभड सुचंग, आपड़इ तेजि तीन्हुउ तुरंग। पड़ियाळ घूणि रघुनाथ पासि, विळसी संप्रत चडियउ व्रहासि।
—रा.ज.सी.

उ०—३ वागी हाक कमंध वरदाई, लागू जळ तणी पर लाय। पड़ियालग थारै चांपावत, सुरमुख वरसै वाय सवाय।
—पहाड़ खां आढौ

उ०—४ 'मोकळ' हरा महाजुध मचतै, बचतां सर नग्रीठ बहै। 'पातल' तूझ तणौ पड़ियालग, रुधर चरचियौ सदा रहै।
—प्रथ्वीराज राठौड़

पड़ियोड़ो-भू०का०कृ०—१ किसी ऊंचे स्थान से गिर कर या उछल कर नीचे स्थान पर ठहरा हुआ, गिरा हुआ।
२ प्रविष्ट किया हुआ, प्रवेश हुवा हुआ।
३ एक पदार्थ दूसरे पदार्थ पर फैला कर रखा हुआ, फैला हुआ।
४ छोड़ा गया हुआ, डाला गया हुआ, पहुंचा हुआ।
५ पूर्व की स्थिति या दशा को छोड़ कर नवीन स्थिति या दशा में हुवा हुआ।
६ बीच में आया हुआ, हस्तक्षेप किया हुआ।
७ किसी पदार्थ को लेने हेतु तेजी से आगे बढ़ा हुआ, झपटा हुआ।
८ उत्पन्न हुवा हुआ, पैदा हुवा हुआ।
९ हुवा हुआ।
१० दुखप्रद घटित हुवा हुआ।
११ ठहरा हुआ, डेरा डाला हुआ, पड़ाव किया हुआ।
१२ आराम किया हुआ, विश्राम हेतु लेटा हुआ।
१३ वीर गति प्राप्त हुवा हुआ।
१४ अवसान हुवा हुआ, मरा हुआ।
१५ उपस्थित हुवा हुआ, प्रसंग में आया हुआ।
१६ प्रबल आकांक्षायुक्त हुवा हुआ।
१७ चमड़ा उतरा हुआ।
१८ पड़ता खाया हुआ।
१९ पकड़ में आया हुआ, पकड़ा गया हुआ।
२० पड़ता हुवा हुआ।
२१ मिला हुआ, प्राप्त हुवा हुआ।
(स्त्री० पड़ियोड़ी)

पड़िवत्ति-सं०स्त्री० [सं० प्रतिपत्तिः] १ प्राप्ति, उपलब्धि।
उ०—वेस्ट सिलोक निजुत्ति तेरे, जिनजी सहगणी पड़िवत्ति।
—वि.कु.
२ ज्ञान।

पड़िवा—देखो 'पड़वा' (रू.भे.)
उ०—१ पड़िवा पख पर सब तजी, सुतो और ही वाट। गगन-मंडळ आसण किया, लांघ्या औघट घाट।—ह.पु.वा.
उ०—२ पड़िवा थी लीजइ पनरह तिथि सुविचार।—स.कु.

पड़िहाइणो, पड़िहाइबो-क्रि०अ०—व्याकुल होना, घबराना, विह्वल होना। उ०—लक्ख एक तोखार ठिल्ल, अरियण घड़ भंजे। पाताळ सेस पड़िहाइयो, दूर देस राव डंडवै।—नैणसी

पड़िहार—देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)

पड़ूतर, पड़ूत्तर—देखो 'पडुतर' (रू.भे.)
उ०—१ कई बार डूंगरां छाया में आडा मारगां पर रात री टैम आवाज आवती—कुण है रे ऊंट वाळो ? पड़ूतर में ईंट रो जवाब पत्थर सूं मिळतो—थारो बाप भीमो'।—रातवासो
उ०—२ डूंच बिचै थारी अकल घणी मोटी है, पैला उणनै तीखी करनै लाव। पछै म्हनै मारण री जुगत कर, कागलो मींडका रो पड़ूतर सुण नै फीटो पड़ियो।—फुलवाड़ी

पड़ूवो-सं०स्त्री० [देशज] गेहूं के मेदे के साथ घी शक्कर मिला कर बनाया हुआ पौष्टिक व्यंजन। उ०—राबड़ियौ दूध पड़ूवो रोटी, मुगती साकर मीठी। देसड़ले नित की दीवाळी, 'नीवज' विना न दीठी।—अज्ञात

रू०भे०--पड़सूदी, पड़सूधी, पड़ोदी, पड़ोधी, पडसूदी, पडसूधी, पडूदी, पडूधी, पडोदी, पडोधी।

पड़ेच (पड़ेंच)-सं०स्त्री० [देशज] कनात, पर्दा।

पड़ेत--देखो 'पड़त' (१) (रू.भे.)

पड़ोज--देखो 'पडोज' (रू.भे.)

उ०--और आप आपरी तरफ सूं कागद घणा **पड़ोज** मनुहार सूं लिखियौ।--जलाल बूबना री वात

पड़ोटियौ--देखो 'परड़' (अल्पा., रू.भे.)

पड़ोदी, पड़ोंधी--देखो 'पड़ूदी' (रू.भे.)

पड़ोस--देखो 'पाड़ोस' (रू.भे.)

उ०--नहं **पड़ोस** कायर नरां, हेली बास सुहाय। बळिहारी जिण देसड़े, माथा मोल विकाय।--वी.स.

यौ०--अड़ोस-पड़ोस, पास-पड़ोस।

पड़ोसी--देखो 'पाड़ोसी' (रू.भे.)

उ०--१ एक **पड़ोसी** तिण पिण खोडा में धूळ, खात, कचरौ न्हांख नैं वर लीपनैं ऊआ साफ कियौ।--भि.द्र.

उ०--२ वरज चढो ना **पड़ोसण** को, दिवलौ जी महाराज।
--लो.गी.

(स्त्री० पड़ोसण, पड़ोसणी)

पच-सं०पु० [सं० पच्] १ पचना क्रिया का भाव।

२ देखो 'पथ्य' (रू.भे.)

उ०--१ सुणौ सासूजी म्हारा ऐ रे बहू रा मीठा बोल। करदघो पंजीरी को रतन कचोळे। थांरे पढे जी बडाई हम जच्चा पच होय।--लो.गी.

पचक--देखो 'पंचक' (रू.भे.)

पचकणो, पचकबो--देखो 'पिचकणी, पिचकबो' (रू.भे.)

पचकणहार, हारो (हारी), पचकणियौ--वि०।

पचकिओड़ो, पचकियोड़ो, पचक्योड़ो--भू०का०कृ०।

पचकीजणो, पचकीजबो--भाव वा०।

पचकल्याण--देखो 'पंचकल्याण' (रू.भे.)

उ०--मोहरी चंपा सेली समंध, **पचकल्याण** पहचांणिये।
--सू.प्र.

पचकांण--देखो 'पचखांण' (रू.भे.)

पचकाणो, पचकाबो--देखो 'पिचकाणो, पिचकाबो' (रू.भे.)

पचकाणहार, हारो (हारी), पचकाणियौ--वि०।

पचकायोड़ो--भू०का०कृ०।

पचकाईजणो, पचकाईजबो--कर्म वा०।

पचकायोड़ो--देखो 'पिचकायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पचकायोड़ी)

पचकियोड़ो--देखो 'पिचकियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पचकियोड़ी)

पचकूटो-सं०पु० [सं० पञ्च+कुट्टनम्] शमी वृक्ष की उवाली हुई कच्ची फली (सांगरी), कुम्मट के उवाले हुए बीज, करील के उवाले हुए कच्चे फल (कैर), अमचूर (अमहर), तथा गुड़ या शक्कर के साथ बनाया हुआ शाक।

पचखणो, पचखबो, पचखणो, पचखबो-क्रि०स० [सं० प्रत्याख्यानम्] छोड़ना, त्यागना, परित्याग करना।

उ०--१ सकल जीव खमाविनइ, सरण कीधा च्यार। सत्य निवारी मनथकी, पचख्या चारे अहार।--लाधौ साह

उ०--२ जयमलजी रा टोळा माहि थी संवत १८५२ रै आसरै गुमांनजी, दुरगादासजी, पेमजी, रतनजी आदि सोळै जणा नीकळ्या। थांनक, नित-पिंड कलाल रो पांणी वहिरणो आदि छोड नवो साधपणो **पचख्यो** पण सरधा तो वाहिज पुन री।--भि.द्र.

पचखांण-सं०पु० [सं० प्रत्याख्यान] १ दुष्कर्म के त्याग की प्रतिज्ञा, पापों के त्याग की प्रतिज्ञा।

उ०--जद साध बोल्या भगवांन क्यांनै मेलै। थें आगै माठा करम किया तिण सूं कसाई रै कुळ ऊपनौ। वळै इसा करम करै तो नरक में जाय पड़सी। इम भिन्न-भिन्न करनै समझायो। बकरा मारवा रा जावजीव **पचखांण** कराया।--भि.द्र.

२ छोड़ना, परित्याग, त्याग।

रू०भे०--पचकांण।

पचखाणो, पचखावो, पचखावणो, पचखावबो-क्रि०स० [पचखणो क्रि० का प्रे०रू०] छुड़ाना, परित्याग करवाना।

उ०--स्वांमीजी···मांहि थी नीकळी नवो-साधपणो **पचखावा** नै त्यार थया। जद कनै साध था ज्यांरी प्रकृती देखी।--भि.द्र.

पचखायोड़ो, पचखावियोड़ो-भू०का०कृ०--छुड़ाया हुआ, परित्याग करवाया हुआ।

(स्त्री० पचखायोड़ी, पचखावियोड़ी)

पचखियोड़ो-भू०का०कृ०--छोड़ा हुआ, परित्याग किया हुआ।

(स्त्री० पचखियोड़ी)

पचग्रह--देखो 'पंचग्रह' (रू.भे.)

पचड़ो-सं०पु० [सं० पचनम्] किसी विषय से संबंधी व्यर्थ की बातचीत, झंझट, बखेड़ा।

पचणो, पचबो-क्रि०अ० [सं० पचनम्] १ जठराग्नि के बल से खाए हुए पदार्थों का रसादि में परिणित होना, हजम होना।

उ०--पेट में आधौ पच्योड़ौ बुगलौ बोल्यो--म्हे जींक हूं, म्हैं जागूं हूं. उठ विचियां कनै जाई म्हारी बुगली।--फुलवाड़ी

२ पराया धन अन्य अधिकार में इस प्रकार आना कि वह वापिस मालिक के हाथ में न जा सके, अनुचित रूप से प्राप्त धन का अधिकार में होना।

३ एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में लीन होना।

४ अवैध रूप से प्राप्त धनादि का काम में आना।

५ अत्यधिक, शारीरिक या मानसिक परिश्रम के कारण क्षीण होना, बहुत हैरान होना, दुखी होना।

उ०—जोड़ी माया कृपण पच, रांधै सुपच अनाज। वायस संचियो मांस वप, कळ मैं नावै काज।—बां.दा.

६ पकना।

पचणहार, हारौ (हारी), पचणियौ—वि०।

पचवाड़णौ, पचवाड़बौ, पचवाणौ, पचवाबौ, पचवावणौ, पचवावबौ —प्रे०रू०।

पचाड़णौ, पचाड़बौ, पचाणौ, पचाबौ, पचावणौ, पचावबौ—स०रू०।

पचिश्रोड़ौ, पचियोड़ौ, पच्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पचीजणौ, पचीजबौ—भाव वा०।

पचतारी—देखो 'पचदारी' (रू.भे.)

पचताळीस—देखो 'पैंताळीस' (रू.भे.) (उ.र.)

पचतीरत, पचतीरथ—देखो 'पंचतीरथ' (रू.भे.)

पचदारी, पचधारी-सं०स्त्री० [देशज] १ एक प्रकार का हलवा विशेष जिसमें पानी के स्थान पर केवल दूध या दूध का बना मावा ही डाला जाता है।

रू०भे०—पचतारी।

पचपच-सं०पु० [अनु०] १ कीचड़।

२ पचपच शब्द होने की क्रिया।

पचपचौ-सं०पु० [अनु०] १ घृत की बाहुल्यता से बना व्यंजन विशेष।

२ अधपका भोजन जिसका पानी पूर्ण तरह से जला या सूखा न हो।

रू०भे०—पिचपिचौ।

पचपन-वि० [सं० पञ्चपञ्चांश] पचास और पांच का योग।

सं०पु०—पचास और पांच की संख्या या अंक ५५।

रू०भे०—पंचावन, पंचावनि, पचावन।

पचपनमौं, पचपनवौं-वि० [सं० पञ्चपञ्चाशत्] जो गिनती में चौवन के बाद पचपन के स्थान पर पड़े, क्रम में पचपन के स्थान पर पड़ने वाला।

रू०भे०—पंचपनमौं।

पचपनै'क-वि०—पचपन के करीब, पचपन के लगभग।

पचपनौ-सं०पु० [सं० पञ्चपञ्चाशत्] पचपन की संख्या का वर्ष या साल।

रू०भे०—पंचावनौ।

पचभीखम, पचभीखम—देखो 'भीखमपंचक' (रू.भे.)

पचरंग-सं०पु० [सं० पंच+फा० रंग] १ भिन्न-भिन्न प्रकार के पांच रंगों की सामग्री जो चौक-पूरण में उपयोग ली जाती है।

२ देखो 'पचरंगौ' (मह०, रू.भे.)

उ०—थारा गुरांजी नै पचरंग मोळियौ, थारी गुरांणी नै दखणी चीर।—लो.गी.

रू०भे०—पिचरंग।

पचरंगौ-वि० [सं० पंच+फा० रंग] (स्त्री० पचरंगी) भिन्न-भिन्न पांच रंग का, पांच रंग का या पांच रंगों वाला।

उ०—१ आभा चमकै बीजळी, सीकर बरसै मेह। छांटा लागै प्रेम का, भीजै सारी देह। जी उमराव वना थांरो पचरंगो पेचो भीजै म्हारा प्रांण।—लो.गी.

उ०—२ सांवरिया री मूरत-मूरत सोभै रंगी चंगी ए। पचरंगी ए। मुकट विराजे नेमने क सहिया ए।—जयवांणी

रू०भे०—पचरंग, पिचरंग, पिचरंगौ।

पचराई-सं०स्त्री० [सं० पञ्च+राजी] फाचर, ग्वारफली, टिंड, तुरई तथा बेंगन के सम्मिश्रण का बनाया हुआ शाक।

पचलड़ी-सं०स्त्री० [सं० पञ्च+राज० लड़ी] पांच लड़ियों वाली माला की तरह का स्त्रियों के कंठ में धारण करने का आभूषण।

उ०—जठै दासी पारसी में बोली। पनां नै बधाई दीनी। मनचायौ आयौ रंगभीनो। आ कही बाई थ्यै बधाई। बहोत दिन डूलै। आयौ देसोत। जठै पनां बोली। थारी जीभ रा वारणा ल्यूं। जो तूं मांगै सो बधाई द्यूं। जठै 'पनां' बी गैला ऊपरै निजर कीनी। यां नै दीठा हर। किसतूरी नै बधाई में एक पचलड़ी दीनी।

—पनां वीरमदे री वात

वि०वि०—इसकी अग्रिम लड़ी नाभि तक पहुँचती है तथा लड़ी के मध्य 'पान' या 'चौकी' लगी रहती है। इस माला के दाने सोने, मोती या अन्य किसी रत्न के होते हैं।

मह०—पचलड़ौ।

पचलड़ौ—देखो 'पचलड़ी' (मह., रू.भे.)

पचवीस—देखो 'पंचीस' (रू.भे.)

उ०—इणि लेखै आखर उगणीस, विगति मात्र पूरी पचवीस।

—ल.पि.

पचहत्तर—देखो 'पिचंतर' (रू.भे.)

पचहत्तरमौं—देखो 'पिचंतरमौं' (रू भे.)

पचहत्तरै'क—देखो 'पिचंतरै'क' (रू.भे.)

पचहत्तरौ—देखो 'पिचंतरौ' (रू.भे.)

पचांण, पचांणू-वि० [सं० पञ्चनवति, शौर. प्रा० पंचाणउइ, अप० पंचानवे] नब्बे और पांच का योग, पांच कम सौ।

सं०पु०—नब्बे से पांच अधिक की संख्या।

उ०—उगणत्रीस लख आवगा, सहस पचांणु सोइ।—ल.पि.

रू०भे०—पंचांणु, पंचांणू, पंच्यांणु, पंच्यांणू, पच्यांणु, पच्यांणू, पिच्यांणमै, पिच्यांणु।

पचांणू'क-वि०—पचानवे के लगभग।

पचांणूमौं, पंचांणूवौं-वि०—जिसका स्थान क्रमशः चौरानवे के बाद पड़े, पचानवां।

सं०पु०—पचानवे की संख्या का वर्ष।

रू०भे०—पंचांणुमों, पंचांणुवों, पंचानमों, पंचानवों।

पचाड़णो, पचाड़बो—देखो 'पचाणो, पचाबो' (रू.भे.)

पचाड़णहार, हारो (हारी), पचाड़णियो—वि०।

पचाड़िग्रोड़ो, पचाड़ियोड़ो, पचाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।

पचाड़ीजणो, पचाड़ीजबो—कर्म वा०।

पचाड़ियोड़ो—देखो 'पचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पचाड़ियोड़ी)

पचाणो, पचाबो–क्रि०स० [सं० पचष्] १ खाए हुए पदार्थों को जठराग्नि के बल हजम करना।

२ किसी का धनादि अवैध उपाय से हस्तगत करना, अपने अधिकार में करना।

३ अनुचित रूप से प्राप्त धनादि को अपने काम में लाना, उससे लाभ उठाना।

४ अत्यधिक परिश्रम लेकर या कष्ट देकर शरीर, मस्तिष्क आदि को थकित करना, तंग करना, हैरान करना।

५ एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ को अपने आप में लीन करना, खपाना।

६ पकाना।

पचाणहार, हारो (हारी), पचाणियो—वि०।

पचायोड़ो—भू०का०कृ०।

पचाईजणो, पचाईजबो—कर्म वा०।

पचणो, पचबो—अक० रू०।

पचाड़णो, पचाड़बो, पचावणो, पचावबो—रू०भे०।

पचायणोत–सं०पु०—भाटी वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

पचायोड़ो-भू०का०कृ०—जठराग्नि के बल हजम किया हुआ (खाद्य)

२ अवैध उपाय से हस्तगत किया हुआ (धनादि)

३ अनुचित रूप से प्राप्त धनादि को काम में लाया हुआ, उपयोग किया हुआ, लाभ उठाया हुआ।

४ अत्यधिक परिश्रम से शरीर, मस्तिष्क आदि को थकित किया हुआ, हैरान किया हुआ, तंग किया हुआ।

५ एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ को अपने आप में लीन किया हुआ, खपाया हुआ।

६ पकाया हुआ।

(स्त्री० पचायोड़ी)

पचारणो, पचारबो—देखो 'पछाड़णो, पछाड़बो' (रू.भे.)

उ०—जोगणी-पीठि वीकइ जुड़ेय। काढिय नाठि करवइ करेय। पाघरे खेत दूदइ पचारि। सूंडाळ लिया सिरियउ संघारि।

—रा.ज.सी.

पचारणहार, हारो (हारी), पचारणियो—वि०।

पचारियोड़ो—भू०का०कृ०।

पचारीजणो, पचारीजबो—कर्म वा०।

पचारसोत–सं०पु०—कछवाह वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

पचारियोड़ो—देखो 'पछाड़ियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पचारियोड़ी)

पचावणो, पचावबो—देखो 'पचाणो, पचावो' (रू.भे.)

पचावणहार, हारो (हारी), पचावणियो—वि०।

पचाविग्रोड़ो, पचावियोड़ो, पचाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पचावीजणो, पचावीजबो—कर्म वा०।

पचावन—देखो 'पचपन' (रू.भे.)

पचावनो–सं०पु०—पचपन की संख्या का वर्ष।

पचावियोड़ो—देखो 'पचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पचावियोड़ी)

पचावो–सं०पु० [देशज] लंबायमान ऊंचा सुव्यवस्थित जमाया हुआ घास-फूस अथवा बाजरे, ज्वार आदि के सूखे डंठलों का ढेर।

उ०—कांणिया काचर रो कैंणो व्हियो अर सगळै गुड़ै में लाय लागगी। कठीनै ढाणियां सिळगै, कठीनै चारा रा पचावा सिळगै। गुडा में हायतराय मचगी।—फुलवाड़ी

रू०भे०—पंजावो, पचासो।

पचास–वि० [सं० पञ्चशत्, प्रा० पंचासा] चालीस और दस, चालीस से दस अधिक।

सं०पु०—वह संख्या जो चालीस और दस के योग से बने।

चालीस और दस के योग से बनने वाली संख्या (५०)

रू०भे०—पंचास।

पचासमों–वि० [सं० पञ्चासमः] गिनती में पचास के स्थान पर पड़ने वाला।

पचासे'क–वि० [सं० पञ्चशत्] पचास के लगभग।

पचासो—देखो 'पचावो' (रू.भे.)

पचियासियो—देखो 'पिचियासियो' (रू.भे.)

पचियासी—देखो 'पिचियासी' (रू.भे.)

पचियोड़ो–भू०का०कृ०—१ हजम हुवा हुआ, पचा हुआ (खाद्य)

२ अवैध ढंग से हस्तगत हुवा हुआ (धनादि)

३ अनुचित उपाय से उपयोग में आया हुआ, लाभ हुवा हुआ।

४ अत्यधिक परिश्रम से थका हुआ, हैरान हुवा हुआ।

५ एक पदार्थ दूसरे पदार्थ में लीन हुवा हुआ, खपा हुआ।

५ पक्का हुवा हुआ।

पचियो—१ देखो 'पिचियो' (रू.भे.)

२ देखो 'पचीसो' (अल्पा., रू.भे.)

पचीयत–सं०पु०—पश्चात्ताप ? उ०—'पीथल' तणो म कर दुख पचीयत। द्रढ तज गया तियां कर दुख। आद जुगाद 'अखा' हर आगै। सार मरण घण घणो सुख।—प्रिथीराज जैतावत रो गीत

पचीर–सं०पु० [देशज] 'सुरणाई' नामक फूंक वाद्य के मुंह पर लगा

हुआ गोलाकार नारियल की खोपड़ी का खंड या टुकड़ा जो बजाते समय होठों को ढक लेता है।

पचीस-वि० [सं० पञ्चविंशति, प्रा० पंचवीसति, अप० पा० पचीस] पांच और वीस, वीस से पाँच अधिक या तीस से पाँच कम।

संपु०—वह संख्या या अङ्क जो पांच और वीस के योग से बने। पाँच और बीस के योग से बनी संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है (२५)।

रू०भे०—पचवीस, पच्चीस।

पचीसमों-वि० (स्त्री० पचीसमीं) जो क्रम में पचीस के स्थान पर हो, गिनती में पचीस के स्थान पर पड़ने वाला।

रू०भे०—पच्चीसमों।

पचीसिका, पचीसी-संस्त्री० [सं० पंचविंशति] १ एक प्रकार की पचीस वस्तुओं का समूह या संग्रह।

उ०—कुवचन मुख कहणौ नहीं, सुवचण कहणौ सुद्ध। वचन विवेक पचीसिका, इम आखै अविरुद्ध।—बां.दा.

२ आयु के प्रारम्भ के पचीस वर्ष।

रू०भे०—पच्चीसी।

पचीसे'क-वि० [सं० पञ्चविंशति ?] १ पचीस की, पचीस संबंधी।

उ०—दिली ए सहर से सायबा पोत मंगावो जी। तो हाथ पचीसे'क गज बीसी गाढ़ा मारूजी।—लो.गी.

२ पचीस के लगभग, करीब पचीस।

रू०भे०—पचचीसे'क।

पचीसौ-संपु० [सं० पञ्चविंशति+रा.प्र. औ] पचीस की संख्या का वर्ष।

रू०भे०—पच्चीसौ।

अल्पा०—पचियौ।

पचेटौ, पचोटौ-संपु० [सं० पञ्च+रा.प्र. एटौ] पांच गोल कंकड़ या कांच की गोलियां जिनसे छोटी छोटी लड़कियें ऊपर उछाल कर हाथ में ग्रहण करने का खेल खेलती हैं।

उ०—इतरै संख्या पड़ी, गुळगचिया आछा-आछा फूटरा सेर दोय तीन भेळा कर आडण री बांह फाटियोड़ी में घाल मूंहडौ बांध साथ लिया। विचारी छोकड़ी रै रमणै नूं पचेटा होसी।

—साह रांमदत्त री वारता

पचोतड़(ड)—देखो 'पचोतर' (रू.भे.)

पचोतड़(ड)सौ—देखो 'पचोतरसौ' (रू.भे.)

पचोतर-वि० [सं० पञ्चोतर] सौ की संख्या से पांच अधिक, पाँच ऊपर।

रू०भे०—पचतोड़(ड)।

पचोतरसौ-संपु० [सं० पञ्चतर+शत] सौ और पांच के योग की संख्या का अंक। एकसौ पांच (१०५)।

रू०भे०—पचोतड़(ड) सौ।

पचोतरी—देखो 'पिचोतरी' (रू.भे.)

पच्चंग-संपु० [सं० प्रत्यङ्ग] प्रत्यंग (जैन)।

पच्चक्ख—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू.भे.)

पच्चक्खांण, पच्चक्खांणौ—देखो 'पचखांण' (रू.भे.)

उ०—१ स्रावक स्राविका सहू को सांभळउ। तुम्हे छउ चतुर सुजांणजी। जन्म जीवित सफळउ करउ आपणउ। करउ आखड़ी पच्चक्खांणौ।—स.कु.

उ०—२ मनुस्य जन्म नवि हारौ आळ। तमे पांणी पहली बांधौ पाळ। जो करइ व्रत आखड़ी पच्चक्खांण। समयसुंदर कहइ ते चतुर सुजांण।—स.कु.

उ०—३ करम छतीसो कांने सुण नइ, करजो व्रत पच्चक्खांण जी। समयसुंदर कहइ सिव सुख लहिस्यउ, धरम तणौ परमांण जी।

—स.कु.

पच्चर—देखो 'फाच्चर' (रू.भे.)

पच्ची-संस्त्री० [सं० पचिता] १ इस प्रकार से जड़ने या जमाने का कार्य की जमाई या जड़ी हुई वस्तु उस पदार्थ के समतल हो जाय जिससे जड़ी जाती है।

२ किसी धातु-निर्मित वस्तु पर किसी अन्य धातु के पत्तर का जड़ाव।

पच्चीकारी-संस्त्री० [सं० पचिता+फा० कारी] पच्ची करने की क्रिया या भाव, जड़ने-जोड़ने की क्रिया या भाव।

पच्चीस—देखो 'पचीस' (रू.भे.)

पच्चीसमों—देखो 'पचीसमों' (रू.भे.)

(स्त्री० पच्चीसमीं)

पच्चीसी—देखो 'पचीसी' (रू.भे.)

पच्चीसौ—देखो 'पचीसौ' (रू.भे.)

पच्छ—१ देखो 'पक्ष' (रू.भे.)

उ०—१ पढै फारसी प्रथम, म्लेच्छ कुळ में मिळ जावै। अंगरेजी पढ़ अवल, होटलां मैं हिळ जावै। पच्छ ग्रहै प्रालब्ध, नहीं पुरुसारथ मैंडो। चोखैं मत नहिं चाय, भाय आवै मत भैंडो।—ऊ.का.

उ०—२ परधौ रणखेत मसूर मलेच्छ, मचविक्रंय सेन किलमनि पच्छ।—ला.रा.

२ देखो 'पछै' (रू.भे.)

उ०—पहली गाहौ पर वजै, गीत दूहौ यक पच्छ फिर गाहौ दूहौ सुफिर, गीततणौ दख दच्छ।—र.ज प्र.

पच्छम—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.) (डिं.को.)

पच्छमियौ—देखो 'पच्छमी' (अल्पा०, रू.भे.)

पच्छमी-वि०—१ पश्चिम दिशा संबंधी, पश्चिम दिशा का।

२ देखो 'पच्छिमी' (रू.भे.)

उ०—जंबू दीप मैं जांम एको जिकारौ, दिशा पच्छमी दूर प्रासाद द्वारौ।—मे.म.

रू०भे०—पच्छिमी, पछिमि, पछिमि, पछिमी।

अल्पा०—पच्छमियौ, पच्छिमियौ।

पच्छवांण—देखो 'पछमांण' (रू.भे.)

उ०—नीमडियौ भारत्थ, कथ राखी कमधज्जे। किया जोध खळहांण, भार पडती ग्रहि भुज्जे। पच्छवांण पग्गार, हुग्रौ राजा मंडोवर। रुद्दै जंत रिण तूर(फ), वडो जीतौ जुडि जागर।—गु.रू.बं.

पच्छिम-सं०स्त्री० [सं० पश्चिम] वह दिशा जिसमें कृतिका नक्षत्र अस्त होता हो, कृतिका नक्षत्र का अस्त-स्थान, पूर्व दिशा के ठीक सामने की दिशा, पश्चिम। उ०—१ अपभ्रंस भाखा प्राक्रत सो कुळ का विवहार जिस सेती प्राक्रत भाखा विस्तार करि गाई। जिसमें पूरब पच्छिम उत्तर दक्खिण की ए च्यार भाखा कहि दिखाई।

—सू.प्र.

उ०—२ सूरज ना किरण पच्छिम ढळया, पंथी सग्गां नइ मिळचा।

—रा.सा.सं.

रू०भे०—पच्छम, पच्छिव, पछम, पछमांण, पछवांण, पछि, पछिम, पछिवांण, पस्चिम, पाछिम, पीछम।

पच्छिम-घाट-सं०पु० [सं० पश्चिम+रा. घाट] बंबई प्रदेश के पश्चिम ओर की पर्वतमाला।

रू०भे०—पछमघाट, पस्चिमघाट।

पच्छिमि—१ देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

२ देखो 'पच्छमी' (रू.भे.)

उ०—तुं पच्छिमी पाट पतिसाह, तुं भेस सरब भगवंत भू। 'पीरीये' कहै परमेसरी, हींगळाज सुप्रसन्न हू।—पी.ग्रं.

पच्छिमियौ—देखो 'पच्छमी' (अल्पा०, रू.भे.)

पच्छिमी—देखो 'पच्छमी' (रू.भे)

पच्छिराज—देखो 'पक्षिराज' (रू.भे.)

पच्छिव—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

पच्छी—देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

उ०—भुकियौ बेळ भड़ ग्रांघौ-फर ग्राघौ। हाथाताळी हरिण लुकियौ नहीं लाधौ। कच्छियौ कर-कर रच्छी रुळ जावै। तड़फै मच्छी-तळ पच्छी पुळ जावै।—ऊ.का.

पच्छेवांणु-वि० [सं० पश्चात्+त्वन्] पीछे का, पीछे चलने वाला।

उ०—साधीउ पच्छेवांणु भीमि पुरोहितु लाळहरे।' मेल्हीउ दीधु पीयांणु केडइ आवी पुणु मिलए।—पं.पं.च.

पच्छोकड़ौ, पच्छोकडउ, पच्छोकडौ—देखो 'पछोकड़ौ' (रू.भे.) (उ.र.)

पच्यांणु—देखो 'पचांणु' (रू.भे.)

पच्यासियौ—देखो 'पिचियासियौ' (रू.भे.)

पच्यासी—देखो 'पिचियासी' (रू.भे.)

पच्यासी'क—देखो 'पिचियासी'क' (रू.भे.)

पच्यासीमौं—देखो 'पिचियासीमौं' (रू.भे.)

(स्त्री० पच्यासीमीं)

पछंटणौ, पछंटबौ—देखो 'पछटणौ, पछटबौ' (रू.भे.)

उ०—कर साह किरमिर सूर समहर। अडर अरिहर पछंट सिर पर।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

पछ-सं०पु० [सं० पथ्य] १ किसी कार्य की सिद्धि के हेतु उसकी पूर्ति पर्यन्त धारण किया जाने वाला व्रत, प्रण।

उ०—ए छोरी दासी तू वैरी भी लगाय, क्यांरी म्हारी जच्चा रांणी पछ लियौ हो राज। मांठां को मंडक्यौ, अळसी को तेल, बौ थारी जच्चा रांणी पछ लियौ हो राज।—लो.गी.

२ त्यागना क्रिया, त्यागना, छोड़ना।

३ देखो 'पथ्य' (रू.भे.)

उ०—रांम नांम निज मंत्र है, लीजै चित्त लगाय। ग्रौखध खावै'र पछ रखै, ज्यांरी वेदन जाय।—अज्ञात

४ देखो 'पछै' (रू.भे.)

उ०—सब लघु पय पय धरि, पछ यक गुरु करि, जळहर कळ सम लछण धरै।—र.ज.प्र.

पछइ—देखो 'पछै' (रू.भे.)

उ०—१ दउढ़ वरस री मारुवी, त्रिहूं वरसांरउ कंत। बाळपणइ परण्यां पछइ, अंतर पड़यउ अनंत।—ढो.मा.

उ०—२ सुणि सुंदरि केता कहां, मारू देस बखांण। मारवणी मिळियां पछइ, जांण्यउ जनम प्रवांण।—ढो.मा.

पछखाड़णौ, पछखाड़बौ, पछखाणौ, पछखावौ—देखो 'पचखाणौ, पचखावौ' (रू.भे.)

पछखायोड़ौ—देखो 'पचखायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पछखायोड़ी)

पछट-सं०स्त्री०—१ तलवार, खड्ग।

२ प्रहार, चोट. ३ पछाड़।

रू०भे०—पछटी, पछट्ट, पछट्ठ।

पछटणौ, पछटबौ-क्रि०स० [देशज] १ तेज हांकना, द्रुत गति से चलाना। उ०—पमंगां पछटि खेहां पूर, सूझे नहीं अवर सूर।

—गु रू.बं.

२ मैल निकालने के लिए गीले कपड़े को लंबोतरा समेट कर उसके एक छोर को हाथ में पकड़ कर दूसरे छोर को पत्थर पर मार कर धोना।

३ प्रहार करना, मारना।

उ०—अरि गज-घटा पीठि पछटै इम। जळ सिला तटा रजक दुपटा जिम।—सू.प्र.

पछटणहार, हारौ (हारी), पछटणियौ—वि०।

पछटिग्रोड़ौ, पछटियोड़ौ, पछटयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पछटीजणौ, पछटीजबौ—कर्म वा०।

पछट्टणौ, पछट्टबौ, पछठणौ, पछठबौ—रू०भे०।

पछटियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ तेज हांका हुआ, द्रुत गति से चलाया

हुआ।

२ शिल पर खड़े-खड़े पछाड़ कर घोया हुआ (वस्त्र)

३ प्रहार किया हुआ, चोट पहुंचाया हुआ, मारा हुआ।

(स्त्री० पछटियोड़ी)

पछटो, पछट्ट, पछट्ठ—देखो 'पछट' (रू.भे.)

उ०—खाय पछट्टा मीर खग, कटिया कोपट्ट।—लूणकरण कवियो

पछट्टणो, पछट्टबो—देखो 'पछटणो, पछटबो' (रू.भे.)

उ०—'हठी' रिणछोड़ तणी करि हाक। पछट्टत खाग हणै पिसणाक।
—सू प्र.

पछठणो, पछठबो—क्रि०स० [देशज] १ भेजना।

उ०—प्रीउ बालंतु पंखीउ, अहनिस रहि अगासि। वयरणि तास न नीसरइ, पछठी माहरे पासि।—मा.कां.प्र.

२ देखो 'पछटणो, पछटबो' (रू.भे.)

पछठणहार, हारो (हारी), पछठणियो—वि०।

पछठिओड़ो, पछठियोड़ो, पछठ्योड़ो—भू०का०कृ०।

पछठीजणो, पछठीजबो—कर्म वा०।

पछठियोड़ो—भू०का०कृ०—१ भेजा हुआ।

२ देखो 'पछटियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पछठियोड़ी)

पछताओ—देखो 'पछतावो' (रू.भे)

पछताणो, पछताबो—क्रि०अ० [सं० पश्चाताप, प्रा० पच्छताव] अपने द्वारा या निकटस्थ संबंधी या इष्ट मित्रों द्वारा अनुचित कार्य होने के कारण दुखी होना, खेद प्रकट होना, मनस्ताप होना, पछताना। उ०—पर नारी सूं प्रीत कर, आफू डळा अरोग। आखर पछताया अठै, लांणत दे दे लोग।—बां दा.

पछतावणहार, हारो (हारी), पछतावणियो—वि०।

पछतायोड़ो— भू०का०कृ०।

पछताईजणो, पछताईजबो—भाव वा०।

पछतावणो, पछतावबो, पछिताणो, पछिताबो, पसताणो, पसताबो, पस्ताणो, पस्ताबो, पस्तावणो, पस्तावबो, पिछताणो, पिछताबो, पिछतावणो, पिछतावबो, पिसताणो, पिसताबो, पिसतावणो, पिसतावबो, पिस्ताणो, पिस्ताबो, पिस्तावणो, पिस्तावबो।—रू०भे०।

पछताप, पछतापो—देखो 'पछतावो' (रू.भे.)

उ०—१ हा हा! वीर तइं स्यूं वस्यूं जी रे जी, गौतम करत अनेक विलाप रे जी। जेतलउ कीजइ नेहलउ जी रे, जिवड़ा तेतलउ हुयइ पछताप रे।—स.कु.

उ०—२ पस्चाताप ते करे घणो, बचन मांन्यो नहीं सजनां तणो। तेह नी परै सांभळ तूं राय रे? पछै पछतापो तो नै थाय।
—जयवांणी

पछतायोड़ो—भू०का०कृ०—मनस्ताप किया हुआ, खिन्न हुवा हुआ।

(स्त्री० पछतायोड़ी)

पछताव—देखो 'पछतावो' (रू.भे.)

पछतावणो, पछतावबो—देखो 'पछताणो, पछताबो' (रू.भे.)

उ०—१ न करवो नीच पुरुस सूं नेह, करसी ते पछतावसी जी खिण-खिण मां।—वि.कु.

उ०—२ इतरी बात देख झाली री मुंहडो सफेद पड़ गयो, अर दूर जाय नै ऊभी रही। मन में पछतावण लागी। जे ओ कासूं उपद्रव छै।—कुंवरसी सांखला री वारता

पछतावणहार, हारो (हारी), पछतावणियो—वि०।

पछताविओड़ो, पछतावियोड़ो, पछताव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पछतावीजणो, पछतावीजबो—भाव वा०।

पछतावियोड़ो—देखो 'पछतायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पछतावियोड़ी)

पछतावो—सं०पु० [सं० पश्चात्ताप, प्रा० पच्छताव] वह मनस्ताप या दुख जो अपने या अपने निकटस्थ संबंधी या इष्ट मित्रों के द्वारा किसी अनुचित कार्य होने के पश्चात् उस कार्य के औचित्य-अनौचित्य का ध्यान आने पर किया जाय, अनुताप, अफसोस, रंज। उ०—१ सुमरण का सांसा रह्या, पछतावा मन माहि। दादू मीठा रांम रस, सगळा पीया नाहि।—दादूवांणी

उ०—२ अकल रै विचार सूं कांम रै अंत नूं देखो, तिसूं कांम कियां रै पाछै पछतावो नहीं होय। पाछै पछतावै सूं कोई नफो नहीं छै।—नी.प्र.

उ०—३ कूड़ कपट नवि कीजियइ रे, पापे पिंड भराय। पहिले पुण्य न कीजियइ रे, तउ पछइ पछतावो थाय।—स कु.

रू०भे०—पछताओ, पछताप, पछतापो, पछताव, पछाताप, पछातापो, पछिताव, पछितावो, पस्चात्ताप, पस्ताव, पस्तावो, पिछताओ, पिछताप, पिछतापो, पिछताव, पिछतावो, पिसतावो, पिस्ताओ, पिस्ताप, पिस्तापो, पिस्ताव, पिस्तावो।

पछम—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

उ०—कालींझर रो पहाड़ वडे गांव सूं कोस......पछम दिसा। लांबो कोस पांच ५।—नैणसी

पछमघाट—देखो 'पच्छिमघाट' (रू.भे.)

पछमांण—वि० [सं० पश्चिम+रा.प्र. आंण] १ पश्चिम दिशा का, पश्चिम का (की)

उ०—धुकै आरांण असमांण नीसांण धुबै, ढहै मोहतांण मुगळांण ढेरी। जोड़ियां पांण सज डांण जोगणपुरी, फौज पछमांण दखणांण फेरी।—जोगीदास चांपावत रो गीत

२ देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

उ०—तूं तजै मांण दिल करय तंग। पछमांण दिसा ऊगै पतंग।
—वि.सं.

रू०भे०—पच्छवांण, पछवांण, पछिवांण।

पछलारो—वि० [सं० पश्चात्+रा.प्र. आरो] (स्त्री० पछलारी)

उ०—सीरावण जीमण दोपेरां सारो। पीसण पोवण नै भारो पछलारो। भाती भोलण नै भंबक दक भायो। छाती छोलण नै छपनो छित छायो।—ऊ.का.

पछलो—देखो 'पाछलो' (रू.भे.)

उ०—भोर सहेली, मा खिलण-मिळण नै जाय, मनै दीन्हो मा पोवणो जे। पोयी पोयी, मा रोटियां री ए जेट, पछलो पोयो, मा, मांडियो जे।—लो.गी.

(स्त्री० पछली)

पछवांण—१ देखो 'पछमांण' (रू.भे.)

उ०—गजण गरज्जै बोलियो, करि ग्रहियै केवांण। भला मिड़ंता आगळी, बाहुड़ियो पछवांण।—गु.रू.बं.

२ देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

पछवा—देखो 'पिछवा' (रू.भे.)

उ०—हां जो म्हारा सायबा, चाली है परवा पछवा पून तिवाळी तिवाळी सुंदर गिर पड़ी जी म्हारा राज तिवाळी।—लो.गी.

पछवाई-स०स्त्री० [स० पश्चात्] सेना के पीछे के भाग से युद्ध करने की क्रिया। उ०—कांधळजी घोड़ो खुरी करावता ताहरां सदा तंग पुस्तंग दुमची आगवंध तूट जावता सु तूट गया। ताहरां दीकरा-राजो सूरो, नीवो बीजो ही साथ हूतो तंनै कह्यो के थे फौज रो मुहड़ो झालो, जितरै हूं तंग सुंवार ल्यां। सु साथ ठैहराय न सक्यो। पासै सूं कर वध गयो। ताहरां कांधळजी कह्यो—जावो रे कपूतां! म्है तो थांनू बाघा रै भरोसै पछवाही रो कह्यो हूतो, कै बाघो सदाई पछवाई करतो हूतो।—नैणसी

रू०भे०—पछवाही।

पछवाड़ो-सं०पु० [सं० पश्चात्+पाट अथवा वाटः] पीछे का भाग, पीछे का प्रदेश। उ०—दिन-दिन खीची तूटता गया, हाडां रो जमाव हूतो गयो। हाडे खीची मारनै धरती भोग घाली, मुदो मऊ ऊपर सूं मऊ नू गोव १४०० लागै। गांव ७०० अगवाड़ै(रे) तिके चोड़ै गांव ७०० पछवाडै।—नैणसी

पछवाही—देखो 'पछवाई' (रू.भे.)

उ०—तद कांधळजी तंग सारण नूं ऊतरिया। भरु साथ सारो आनै है। जिसै सारंग खांन नूं कांधळजी रै साथ पर घोड़ा उठाय नांखिया। तद साथ सूं अरु कांधळ रै वेटां सूं धको झलियो नहीं, सू भाज नीसरिया। नै कांधळजी सनै आदमी पनराएक रया। पीछै कांधळजी कयो 'जावो रे कपूतां! मैं थानै वाघा रै भरोसै पछवाही रो कयो हो।' पोछै कांधळजी पाळा आदमियां पनरा सूं सारंग खांन री फौज सूं तरवारां मिळिया।—द.दा.

पछांणणो, पछांणबो—देखो 'पिछांणणो, पिछांणबो' (रू.भे.)

उ०—धरणीधर नूं जिके ध्यावइ, सरग तणै विचि तिके समायइ। उर ऊपर लिखमी पग आंणै, पारब्रह्म रा चरण पछांणै।

—पी.ग्रं.

पछांणणहार, हारो (हारी), पछांणणियो—वि०।

पछांणाणो, पछांणावो, पछांणावणो, पछाणावबो—प्रे०रू०।

पछांणिओड़ो, पछांणियोड़ो, पछांण्योड़ो—भू०का०कृ०।

पछांणीजणो, पछांणीजबो—कर्म वा०।

पछाड़-सं०स्त्री० [सं० पश्चात्+प्रहार] १ पछाड़ने की क्रिया या भाव।

२ मूर्च्छित होकर या अचेत होकर गिरने की क्रिया।

उ०—माघी सी ढळतां जी क चनणा नीसरी जी, कोई रांमूड़ो खाई छै पछाड़। खाय तिवाळो जी क रांमूड़ो गिर पड़्यो जी।

—लो.गी.

पछाड़णो, पछाड़बो-क्रि०स० [सं० पश्चात्+प्रहार] १ वध करना, हनन करना, घात करना, मारना। उ०—१ पिड़ भू 'भीम' पछाड़ियो, खुरम गयो कर खेह। गाजण-गंजण अगंजियां, वीर वणायो वेह।—बां.दा.

उ०—२ झळहळ बीज रूप खग झाडूं। पिसण घणा जरदैत पछाड़ूं।

—सू.प्र.

उ०—३ यमुना तीरे जाय नै कन्हैया, तैं नाथ्यो काळी नाग रे। कंसराजा नै पछाड़ियो, पछै खुलिया थारा भाग रे।—जयवांणी

२ पराजित करना, हराना, खदेड़ना।

उ०—१ अघळा दईत पछाड़िया, मिड़ि जीता भाराथ। ताहरो दरसण श्रीकमां, साध करै सरमाथ।—पी.ग्रं.

उ०—२ पातिसाहां रा नर हैवर-कुंजर-घड़ा पछाड़ां। चद-जस-नांमो चाडां।—वचनिका

उ०—३ महाबळवंत काळीनाग नै नाथियो। कंस नै मार जरासंघ पछाड़ियो।—जयवांणी

३ मारना, पीटना। उ०—फबै जूत सिर फूल, पत्र सोई पटक पछाड़ै। फळ ढूंणां में फाड़, तोय बांसां सूं ताड़ै।—ऊ.का.

[सं० प्रक्षालनम्] ४ धोने के निमित्त कपड़े को खड़े-खड़े पत्थर पर जोर-जोर से आछटना, पटकना।

५ कुश्ती में विपक्षी को गिराना, पटकना।

६ गिराना, पटकना। उ०—महावीर पाड़ै पछाड़ै मइंदां, ग्रहै दंत रोकै मदाळा गइंदां।—वं.भा.

पछाड़णहार, हारो (हारी), पछाड़णियो—वि०।

पछाड़ाड़णो, पछाड़ाड़बो, पछाड़ाणो, पछाड़ावो, पछाड़ावणो, पछा-ड़ावबो—प्रे०रू०।

पछाड़िओड़ो, पछाड़ियोड़ो, पछाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।

पछाड़ीजणो, पछाड़ीजबो—कर्म वा०।

पचारणो, पचारबो, पछाडणो, पछाडबो, पछारणो, पछारबो—रू०भे०

पछाड़ियोड़ो-भू०का०कृ०—१ वध किया हुआ, मारा हुआ।

२ पराजित किया हुआ, हराया हुआ, खदेड़ा हुआ।

३ गिराया हुआ, पटका हुआ।

४ (खड़े-खड़े कपड़े को) धोने हेतु जोर-जोर से पटका हुआ।
५ कुश्ती में गिराया हुआ।
६ पटका हुआ, गिराया हुआ।
(स्त्री० पछाड़ियोड़ी)

पछाड़ी-सं०स्त्री० [सं० पश्चात्+रा. प्र. आड़ी] १ पीछे का भाग, पीछे का हिस्सा, पृष्ठ भाग। उ०—१ ज्यूं जसवंतसिंहजी भागिया सो जसवंतसिंहजी कन्है आपरी चाळीस हजार फौज थी सो सारी भागी। हूरमां हाथियां चढी पछाड़ी नूं खड़ी थी सो लूट लीवी भर चलता रहिया।—पदमसिंह री वात
उ०—२ पोसाकां कर परी, बैठ सुखपाळ पछाड़ी। दो माला-बरदार, एक नीसांण अगाड़ी।—अरजुणजी बारहठ
२ घोड़े के पिछले पैर बांधने की रस्सी। उ०—राजाजी रा घोड़लिया काळा रै लारै दौड़ै ओ। आऊवै रा घोड़ा तो पछाड़ी तोड़ै ओ झगड़ो हूं ण दौ। झगड़ा में थांरी जीत व्हैला ओ झगड़ो व्हैण दौ।—लो.गी.
क्रि०प्र०—बांधणी, मारणी, लगाणी।
३ पंक्ति में सबसे अन्तिम व्यक्ति या प्राणी।
४ बंदूक छोड़ते समय सीने पर लगने वाला कुन्दे का आघात।
क्रि०प्र०—मारणी, लगाणी।
अव्य०—जिधर मुह हो उसके विरुद्ध दशा में, पीठ की ओर, पीछे।

पछाड़ीवाध-सं०स्त्री०यौ० [सं० पश्चात्+रा० वाव=प्रहार] वह बंदूक जो छूटने पर छोड़ने वाले के सीने के ऊपर कुंदे का आघात या झटका मारती हो।

पछाडणी, पछाडबौ—देखो 'पछाड़णौ, पछाड़बौ' (रू.भे.)
उ०—पाडे किय पहट मेंदानं, दरबार दीवांणह-खानं। उथ्थै पुडि दखण उपाडे, खंडे मीर खपाड पछाडे।—गु.रू.बं.

पछाडियोडौ—देखो 'पछाड़ियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पछाडियोडी)

पछाडी—देखो 'पछाड़ी' (रू.भे.)

पछाताप, पछातापौ—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)
उ०—माहो-माहे मोठे मिल्या ए, मांन महातम खोय। पछाताप ते अति करै ए, हूण-हार जिम होय।—ध.व.ग्रं.

पछिमी—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)
उ०—गुण-जांणग 'लाखो' खत्रियां-गुर, आस दातार अभिनमो आंमुर। धरती पछिमी करामति घणी, भूपां रूप लियां ग्रद भारी।
—ल.पि.

पछि—१ देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)
उ०—१ फरियो पछि वाउ उत्तर, फरहरियौ सहू ए सूहव उर सरग। भुयंग धनी प्रथमी पुड़ भेदे, विवरे पैठा वे वरग।—वेलि.
उ०—२ तठा उपरांति करि नै राजान सिलांमति हेमंतरित रौ वरणाव कीजै छै। हेमंतरित लागि पछि रौ वाउ फिरियौ, उतराधौ वाउ वाजियौ—रा.सा.सं.
२ देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

पछितांणौ, पछितावौ—देखो 'पछतांणौ, पछतावौ' (रू.भे.)

पछितायोड़ौ—देखो 'पछतायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पछितायोड़ी)

पछितावौ—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)
उ०—जिको सुणि पूरा पछितावा समेत समुद्र सिंह आपरी पत्नी इसड़ी विजयसूर री बहिणी वरजण नूं गोळ में भेजी, जिकण कहियौ—वाभी! पहिली मोनूं मारि पछै चिता री तरफ चरण दीजै।—वं.भा.

पछिम—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)
उ०—पेख उतराद दखणाद पूरब पछिम, धूज मन सरम सारी धरा की। सबळ दोय राह री साह री मांन संक, ताह री 'करन'-सुत ओट ताकी।—भोपत आसियौ

पछिमि, पछिमी—१ देखो 'पच्छमी' (रू.भे.)
२ देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

पछिलउ, पछिलौ—देखो 'पाछलौ' (रू.भे.)
उ०—एक दिन पेट नउ गरभ दीठउ, गुरुणी पूछ्युं स्युं एह रे। पतिनउ गरभ ए हूतउ, पहिलउ नहि पछिलउ निसंदेह रे।
—स.कु.
(स्त्री० पछिली)

पछिवांण—देखो 'पछमांण' (रू.भे.)
उ०—१ दळथंभ हुओ पछिवांण-दळ, आप पराक्रम अप्रभै। कमधज्ज तांम संग्रांम किय, जुड़ै जांम एकह उभै।—गु.रू.बं.
उ०—२ अगनि मैं बांण छूटा असंख, वळी वीट चिहूंवै-वळा। पछिवांण हुओ पूठीरखो, 'गजण' नांम दिल्ली दळां।
—गु.रू.बं.

पछींत—देखो 'पछीत' (रू.भे.)

पछी-क्रि०वि० [सं० पश्चात्] १ पश्चात्, बाद में, अनन्तर, पीछे।
उ०—तो वारूं राजा रे अहि डसियां पछो मांहरा साहिबा अनंगसेना इण नांम रे वेस्या विगताळी।—वि कु.
२ देखो 'पक्षी' (रू भे.)

पछीत, पछीतरा-सं०स्त्री० [सं० पश्चात् ?] मकान के अन्दर सामान रखने के निमित्त लगाया जाने वाला पड़ा और सीधा लम्बा-चौड़ा पत्थर जिसकी एक किनार दीवार में अड़ी रहती है।
उ०—एक चोरीयें तु तो क्यूं भला छै। भलो वस्त आवै हाथ अर मरीजु तो पिण भलां। आइनै पछीतरा नेचा उभो रह्यो। मांहैं खींवो सूतो जाग छै।—चौबोली
रू०भे०—पछींत, पछीतरा।

पछें, पछे—देखो 'पछै' (रू.भे.)
उ०—१ जिको सुणि पूरा पछितावा समेत समुद्रसिंह आपरी

पत्नी इसड़ो विजयसूर री बहिणी वरजण नूं गोळ में भेजी जिकण कहियो—बाभी, पहिली मोनूं मारि पछें चिता री तरफ चरण दीजो।—वं.भा.

उ०—२ पछे एकांत में बैठ'र कागद नू वाचणें लागी।

—कुंवरसी सांखला री वारता

पछेड़की—देखो 'पछेवड़ी' (अल्पा०, रू.भे.)

पछेड़लु, पछेड़लू—वि० [सं० पश्चात्+रा. प्र. लु या लू] (स्त्री० पछेड़ली)

१ पश्चात् का, बाद का. २ पीछे का।

३ देखो 'पछेवड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)

पछेड़ियो—देखो 'पछेवड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)

पछेड़ी—देखो 'पछेवड़ी' (रू.भे.)

पछेड़ो—देखो 'पछेवड़ो' (रू.भे.)

पछेडलु—देखो 'पछेड़लु' (रू.भे.)। उ०—अगीआ! एक पछेडलु, अंधारू अम्ह आपि। मंदिर जाऊं मलपतु, बइसउ थांनक थापि।

—मा.कां.प्र.

पछेडी—देखो 'पछेवड़ो' (रू.भे.)

उ०—पाघडी वींटी रेट चूनड़ी पाताळ साडी, नंदरबारी, पाघडी पांमडी लोवडी वाहण-वही लोवडी पछेडी चूनडी गजवडी।—व.स.

पछेली-सं०स्त्री० [देशज] स्त्रियों के हाथ की कलई में धारण करने का आभूषण।

पछेवड़ी-सं०स्त्री० [सं० प्रच्छदः+पटि या पटी या पश्चात्-पटी] १ मोटा सूती कपड़ा जो पहनने ओढ़ने या बिछाने के काम आता है।

उ०—१ परभात रा लाखोजी घोड़ा देखण नूं पधारिया ताहरां घोड़ो देखनै कह्यो—रे घोड़ो रे घोड़ो किणी छोड़ियो नहीं हुंतो! ताहरां साहणी कह्यो जी कुण छोडै? ताहरां लाखोजी घोड़ ऊपर पछेवड़ो फेरी। पछेवड़ी सूं घोड़ो लूह्यो—नैणसी

उ०—२ पछै खेतसीजो स्वांमी वै सुवांण नै सिरांणा माहि थी नवी पछेवड़ी काढ नै ओढाय दीधी।—भि.द्र.

२ निश्चित लम्बाई का, मोटा पूरा कपड़ा, थान।

उ०—यूं करतां हेक दिन रावजी सूं चूक कियो। पचीस गज पछेवड़ी रिणमलजी रै ढोलियै दोळी पळेटी। आप पोढिया हुता।

—नैणसी

३ सिलमा सितारे से बना लाल या श्वेत छोटे अर्ज का लम्बा कपड़ा जो दरबार में जाते समय पघड़ी पर बांधा जाता था।

(मेवाड़)

४ सिरोपाव में पगड़ी के साथ दिया जाने वाला वस्त्र (मेवाड़)

५ श्री संघ द्वारा पूज्य पाट पर आसीन करते समय ओढाया जाने वाला श्वेत वस्त्र (जैन)

उ०—पाटू नी पूजि ओढउ पछेवड़ी रे। पाटण नीपनी सखरी दोपड़ी रे।—स.कु.

मुहा०—पछेवड़ी ओढाणी—शिष्य बनाना, पूज्य पद पर आसीन करना (जैन)

६ देखो 'पछेवड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)

रू०भे०—पछेड़ी, पछेडी, पछेवडी, पछेवडी, पछोड़ी, पिछेड़ी, पिछेवड़ी, पिछोड़ी, पीछोड़ी।

अल्पा०—पछेड़की।

पछेवड़ु, पछेवडु, पछेवड़उ, पछेवड़ो, पछेवडो—सं०पु० [सं० प्रच्छदः+पटः या पटम्] १ प्रायः सफेद रंग का ओढ़ने का कपड़ा (उ.र.)

उ०—१ रांणोजी देवलोक हुवै जद पाटवी कुंवर पछेवड़ो ओढ़लै। रांणाजी नूं दाग दे पाछा आवै उमराव दरवार में जद कोठारियै रो राव कुंवर माथा सूं पछेवड़ो दूर करै।—बां.दा.ख्यात

उ०—२ तरै सोढ़ी कहै—'थांहरै डील रो पछेवड़ो मोनूं दीजै। इण पछेवड़ा रा दरसण करीस नै मोहल में बैठी रहीस।—नैणसी

उ०—३ दीनी रे वीरा! भांणजड़ा नै वाट, ऊवरती रो फाको म्है लियोजी म्हाराराज। आधी वाई भांणजड़ा रै हाथ, कोई आधी घाल पछेवड़ै जी म्हाराराज।—लो.गी.

२ जाजम, पलंग आदि पर बिछाने का सफेद रंग का कपड़ा, प्रच्छदपट।

रू०भे०—पछेडो, पछेडो, पिछेड़ो, पिछेडो, पिछेवड़ो, पिछेवडो, पिछोड़ो, पिछोवड़ो।

अल्पा०—पछेड़ियो, पछोड़ो, पछेड़लु, पछेड़लू, पछेडलु, पछेवडी, पीछोड़लु।

पछेवांणि—क्रि०वि०—पीछे की ओर। उ०—वीर पुरस महा-सुभट प्रगुण नीपना चक्रव्यूह गुरुड़-व्यूह तणी रचना नीपनी अगवांणी सींगडिया तणी स्रेणी, पछेवांणि फारक तणी पद्धति, तती हस्ती-घंटा सीत्कार करती।—व.स.

पछैं, पछै—क्रि०वि० [सं० पश्चात्] १ बाद, तदुपरांत, पीछे।

उ०—१ रांम-रांम रसणा रटै, वासर वेर अवेर। अटवयां पछैं न आवसी, रांम तणी मुख रेर।—ह.र.

उ०—२ वरस एक हुओ, ता पछै महमद हुसेन अहमदाबाद आय घेरी।—द.वि.

२ फिर। उ०—ले जाओ रै इणां नै घोड़ां री पायगा में, अर लागे जूत रांड रै। रावळा घोड़ा नै बावळा असवार। अंदाता रो हुकम लागो, पछै पूछणो ई कांई। हाजरियै आपरा हाथां रो खार पूरी काढियो।—रातवासो

३ अन्त में। उ०—पछै काबुल जातां रा। किसोरदास गोपाळ-दासोत रै चाकर मारियो।—नैणसी

रू०भे०—पछइ, पछें, पछे, पाछै।

पछोकड़ो, पछोकडउ, पछोकडो—सं०पु० [सं० पश्चादोक] पीछे का स्थान, पीठ का स्थान, आगे के विरुद्ध दिशा का स्थान।—(उ.र.)

रू०भे०—पच्छोकड़ो, पच्छोकडउ, पच्छोकडो, पिछावड़ो, पिछोकड़, पिछोकड़ो, पिछोकडउ, पिछोकडो।

पछोड़ी—देखो 'पछेवड़ी' (रू.भे.)
उ०—बारणै पिण तुटी आटि न मिळै एक, सूत नी आटी, मिळै पछोड़ी पण फाटी ।—सभा.
पछोपौ, पछोपो—देखो 'पाछोपौ' (रू.भे.)
उ०—राजा अचळसर कहइ छइ—यउ तउ बोलियउ करि विचारिजइ, एक पुरुख तउ पुरिख-कइ पछोपइ उबारिजइ ।—अ. वचनिका
पजणौ, पजबौ–क्रि०अ० [सं० प्रजुडन्] १ बंधन में आना, फँसना ।
उ०—१ गाडी वाळौ मन में सोच्यौ के किराड़ आज तौ जबरौ पजियौ । ऊमर में बळीतौ मोलावणौ नीं भुलाय दूं तौ चौधरण रा नीं चूंधिया ।—फुलवाड़ी
२ उलझन पड़ना, अड़ना । उ०—उण सांयत मल्ल कह्यौ—अपां बाथियां तौ आवां पण हार-जीत रौ साखी कुण रैवैला । कीं बात पजगी तौ उणरौ निवेड़ौ कुण करैला ।—फुलवाड़ी
३ इस प्रकार जड़ा जाना या जमाया जाना कि जमाई गई हुई वस्तु उस वस्तु के समतल बराबर हो जाय ।
ज्यूं—खाट में पट्टी पजणी, हल में कील पजणी ।
४ किसी वेश या पहिराव का अंग पर या अपने स्थान पर उपयुक्त बैठना ।
ज्यूं—पग में जूती ठीक पजी है, कोट ठीक पजतौ बणायौ है ।
५ पीटा जाना, मारा जाना ।
ज्यूं—गाय रै सींगड़ा में गवाळिया रै ठुलिया री आय ऐड़ी पजी के गाय रै माथा में भंणाट ऊठियौ ।—फुलवाड़ी
६ अधीन होना, पराजित होना, हार जाना ।
उ०—सुख हित स्याळ समाज, हिंदू अकबर बस हुवा । रोसीलौ म्रगराज, पजै न रांण प्रतापसी ।—दुरसौ आढ़ौ
७ बलात् प्रविष्ट होना, धसना, घसना । उ०—सेठ जोर सूं पूछयौ—लाडी पैला बीटी चिट्टूड़ी रै पजी के मिट्टूड़ी रै । च्यारां में ईं पैरलै ।—फुलवाड़ी
८ पूर्ण रूप से किसी कार्य में लगना, खपना ।
उ०—समर में दसकध जिण सजे, पह वडा हर चाप दळ पजे । मनव ते धन जांण सुधमता, रघुपति जस जे नित रता ।
—र.ज.प्र.
पजणहार, हारौ (हारी), पजणियौ—वि० ।
पजवाड़णौ, पजवाड़बौ, पजवाणौ, पजवाबौ, पजवावणौ, पजवावबौ —प्रे०रू०
पजाड़णौ, पजाड़बौ, पजाणौ, पजाबौ, पजावणौ, पजावबौ—क्रि०स०
पजिओड़ौ, पजियोड़ौ, पज्योड़ौ—भू०का०कृ०
पजीजणौ, पजीजबौ —भाव वा० ।
पजेमौ—देखो 'पाजामौ' (रू.भे.)
पजाग्रौ—देखो 'पजावौ' (रू.भे.)
पजाड़णौ, पजाड़बौ—देखो 'पजाणौ, पजाबौ' (रू.भे.)
पजाड़णहार, हारौ (हारी), पजाड़णियौ—वि० ।
पजाड़िओड़ौ, पजाड़ियोड़ौ, पजाड़योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पजाड़ीजणौ, पजाड़ीजबौ—कर्म वा० ।
पजाड़ियोड़ौ—देखो 'पजायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पजाड़ियोड़ी)
पजाणौ, पजाबौ–क्रि०स० [सं० प्रजोडनम्] १ बंधन में करना, फंसाना ।
२ अधिकार में करना, आधिपत्य में करना ।
उ०—१ वैरसल नरवद रावजी जोधाजी नूं आवता सुण नै आप री वसी ले नै नीसर गया । घणौ झलियौ नहीं । राव जोधोजी द्रोणपुर छापर मारियौ । सारी धरती पजाई । वडौ अमल कियौ ।
—नैणसी
उ०—२ रावजी आप द्रोणपुर पधारिया, कबीला काढ दिया । धरती सारी पजाई ।—नापे सांखले री वारता
३ उलझाना, अड़ाना, फसाना, धसाना । उ०—द्यालदास सुत रांमदास रै, परची फेर पजाई । मांनौ लाय लागी मुरधर में, ऊपर आंधी आई ।—ऊ.का.
४ पराजित करना, हटाना ।
५ तंग करना, परेशान करना, हैरान करना ।
उ०—कवि सूर रा द्रस्टांत सूं सूरवीर रौ साहस कहै छै, इण कवळै (वाराह) तूंड रे जोर हाथी पाड़िया—फेट दे घोड़ा सवार पाड़िया, डाढां (दातड़ो) सूं सूरवीरां नै ओझाड़िया, झटकौ दे हेठा न्हांकिया—देखो एकण हीज कंवळै सूर फौजां रा पाथरा कर खूंद न्हांकिया । प्रयोजन एकण हीज सूरवीर सारी फौज नै पजाय दीधी ।
वी.स.टी.
६ दण्ड देना, अधीन करना, वशीभूत करना ।
७ मजबूती से फंसाना, प्रवेश कराना, जमाना ।
८ इस प्रकार से जड़ने या जमाने का कार्य करना कि जमाई हुई वस्तु को उस वस्तु के समतल कर देना ।
९ पीटना, ठोकना, मारना ।
पजाणहार, हारौ (हारी), पजाणियौ—वि० ।
पजायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पजाईजणौ, पजाईजबौ—कर्म वा० ।
पजणौ, पजबौ—अक० रू० ।
पजाड़णौ, पजाड़बौ, पजावणौ, पजावबौ—रू०भे० ।
पजायोड़ौ–भू०का०कृ०—१ बंधन में किया हुआ, फसाया हुआ ।
२ अधिकार में किया हुआ, आधिपत्य में किया हुआ ।
३ उलझाया हुआ, फसाया हुआ, धसाया हुआ ।
४ पराजित किया हुआ ।
५ तंग किया हुआ, परेशान किया हुआ ।
६ दण्डित, अधीन ।
७ मजबूती से फसाया हुआ, जमाया हुआ ।

८ जड़ा हुआ, जमाया हुआ ।
९ पीटा हुआ, मारा हुआ, ठोका हुआ ।
(स्त्री० पजायोड़ी)

पजाव—देखो 'पजावौ' (मह०, रू.भे.)

पजावगर–सं०पु० [फा० पजावः+गर] मिट्टी की ईंट बनाने वाला व्यक्ति । उ०—पजावगर री प्रीत, खंघेड़ो खातर राखै । लाय खमोळा खूब, पीड़ पावै अंग आखै । पांणी में पिघळीज, लोय विसन री तापै । चढ कारीगर करां, कांम ईंटोडो कांपै ।
—ऊसदेव

पजावणौ, पजावबौ—देखो 'पजाणौ, पजाबौ' (रू.भे.)
उ०—१ सोझत दुंद करे 'सबळावत', ज्याहं तरफ 'विजौ' चांपावत । जोधांणां उत्तर दिस जेती, अहनिस रांम पजावै एती ।
—रा.रू.
उ०—२ कुतक खिदर घव काठ रा, विदर पजावण वेस । वौ पिण हाजर राखना, घण मेखचा हमेस ।—बां दा.
उ०—३ सिवियांणां सोनगिर जेण, एकण दिन गीता । वीर नारायण वंस, वहै वेसास वदीता । दहियावत ढूंढार, मार संग्राम मनावै । कर सह वरस कटक, पछै नाडूळ पजावै ।—मालो आसियौ
उ०—४ परजा भाडंगनेर पजावै । ऊगै दिन फरियादां आवै ।
—गो.रू.
उ०—५ जुद लीधौ जाळोर, घण साचोर पजावै—रा.वं.वि.
पजावणहार, हारौ (हारी), पजावणियौ—वि० ।
पजाविओड़ौ, पजावियोड़ौ, पजाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पजावीजणौ, पजावीजबौ—कर्म वा० ।

पजावियोड़ौ—देखो 'पजायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पजावियोड़ी)

पजावौ–सं०पु० [फा० पजावः] १ ईंटें खड्डी आदि का पकाने के लिए व्यवस्थित ढंग से बनाया हुआ ढेर ।
क्रि०प्र०—दैणौ, लगाणौ ।
रू०भे०—पजाओ ।
मह०—पजाव ।

पजियोड़ौ–भू०का०कृ०—१ बंधन में आया हुआ, फसा हुआ ।
२ उलझन में पड़ा हुआ, अड़ा हुआ ।
३ जड़ कर या जम कर किसी वस्तु के समतल हुवा हुआ ।
४ कोई वेश या पहिनाव अङ्ग पर या अपने स्थान पर उपयुक्त बैठा हुआ ।
५ पीटा गया हुआ, मारा गया हुआ ।
६ हारा हुआ, पराजित ।
७ बलात प्रविष्ट हुवा हुआ, घुसा हुआ, फसा हुआ ।
८ पूर्ण रूप से किसी कार्य में लगा हुआ, खपा हुआ ।
(स्त्री० पजियोड़ी)

पजूंण, पजूण, पजूसण—देखो 'परयूसण' (रू.भे.)
उ०—१ सीख करे मेड़ता थकी, सादड़ो पधारइ । परव पजूसण पारणइ, रांणपुर जोहारइ ।—गुणविजय
उ०—२ आया पजूसण भादव मास, छती सक्ति न करइ उपवास । चित दियौ अत रोटा दाळ ।—जयवांणी
उ०—३ पुररिणी सतरै से पचीसै, प्रगट पख पजूसणै । वाचक विजय हरस, सांनिध, 'धरमसी' मुनि इम भणै ।—ध.व.ग्रं.

पजोणौ, पजोबौ, पजोवणौ, पजोवबौ–क्रि०स०—प्राप्त करना ।
उ०—१ एक समय आखेट, वळै साळा वहणोई । आवे हुणे सस एक, प्रीति मनुहार पजोई ।—वं.भा.
उ०—२ आसी हे उदमादियौ, रळी पजोवण कंत । मो 'सुगणी री साहिबौ, मदमातौ मैमंत ।—पनां वीरमदे री वात
पजोवणहार, हारौ (हारी), पजोवणियौ—वि० ।
पजोविओड़ौ, पजोवियोड़ौ, पजोव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पजोवीजणौ, पजोवीजबौ—कर्म वा० ।

पजोयोड़ौ, पजोवियोड़ौ–भू०का०कृ०—प्राप्त किया हुआ ।
(स्त्री० पजोयोड़ी, पजोवियोड़ी)

पज्ज–सं०पु० [सं० पद्य=प्रा पज्जा] मार्ग, रास्ता ।
उ०—सज्जण चाल्या हे सखी, पाछै पीळी पज्ज । नव पाहा नगर बसइ, मो मन सूंनउ अज्ज ।—ढो मा.

पज्जण–सं०पु० [सं० पर्जन्य] वर्षा, बादल (जैन)

पजत, पज्जत्त–वि० [सं० पर्याप्त] १ पर्याप्त से युक्त, सम्पूर्ण, पूर्ण (जैन)
उ०—भगनि असख्यात गुण पज्जत बादरा, एह थी गुण असंख्यात अनुत्तर सुरा ।—ध.व.ग्रं.
२ समर्थ, शक्तिवान (जैन)
३ उतना, जिससे काम चल जाय, यथेष्ट (जैन)

पज्जता–सं०स्त्री० [सं० पर्याप्त] १ सम्पूर्णता, पूर्णता ।
उ०—सूक्ष्म पज्जता जांण सूखम सहुगिणौ भव्य सत्यासी में भणौ ए ।—ध.व.ग्रं.

पज्जत्ति–सं०स्त्री० [सं० पर्याप्ति] १ जीव की वह शक्ति जिसके द्वारा पुद्गलों को ग्रहण करने तथा उनको आहार, शरीर आदि के रूप में परिवर्तन करने का काम होता है (जैन)
२ शक्ति, सामर्थ्य (जैन)

पज्जव–सं०पु० [सं० पर्यव] १ परिच्छेद, निर्णय (जैन)
२ विशेषता (जैन)
३ द्रव्य और गुण का रूपान्तर (जैन)
४ पर्याय । उ०—एक अक्षर केवळी तणौ, कीजै पज्जव अनंत । एक पज्जवे अनंत गया, भाख्या स्री भगवंत ।—जयवांणी

पज्जूसण, पज्जोसवण, पज्जोसवणा—देखो 'परयूसण' (रू.भे.)
उ०—१ चोपरवी पज्जूसण परव, वलि कल्यांणक तिथि पण सरव ।
—स.कु.

उ०—२ संवत १८५४ स्वामीजी च्यार साधां सूं खेरवै चौमासौ कीधौ। तिहां पज्जूसण में केयक स्रावक गछ वास्यां कनै सुणवा गया।—भि.द्र.

पज्झटिका—सं०स्त्री० [सं० पद्धटिका] एक प्रकार का मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में आठ लघु, एक गुरु, चार लघु व एक गुरु कुल सोलह मात्रायें होती हैं। किसी भी चरण के अन्त में लघु नहीं होता है।

रू०भे०—पद्धटिका।

पटंगय—सं०स्त्री०—एक राग विशेष। उ०—भणंत स्त्री विनोदयं। कल्यांण केक मोदयं। खंभायची पटगयं। वगेसरी विहंगयं। —रा.रू.

पटंतर—सं०पु० [सं० पट+अन्तर] १ वह जिसका तत्व सहज में सब की समझ में न आ सके, गोप्य विषय, रहस्य।

उ०—एह पट्टंतर दाख इम, भगतां वच्छळ भ्रम्म। कीधा अम्ह के तुम किया, धुर हर पाप धरम्म।—ह.र.

२ भेदोपभेद। उ०—भूपाल आल भयंकरं, साहाय सुर सिव संकरं। सो भाग खाग 'प्रिआग', समवड वड त्याग कळप तरं। स प्रवीत चीत नरेसरं, परमांण जांण पटंतरं। उदार वसुधा वार, आंकण अनड भड भकरं।—ल.पि.

३ पार्थक्य, पृथकत्य, अलगाव। उ०—१ एक बाप नी पुत्री दोय, परतिख पुन्य पटतर जोय।—स्रीपाळ

उ०—न्याति जाति सौ सारखी, अधिको नाहीं कोय। थे राजा म्हे ओडण्यां, ओह पटंतर जोय।—जसमा ओडण री वात

४ सादृश्य कथन, उपम। उ०—कौण पटंतर दीजिये, दूजा नाही कोइ। रांम सरीखा रांम है, सुमिरे ही सुख होय।—दादूवांणी

५ समानता, सादृश्य। उ०—उचित यो राजा वचन दियो भोज सुणि बाई! वचन तै कह्या चोज। ज्यांनको लिय पटंतर। धीय तणइ सिर सोवन गोड़।—वी.दे.

६ परिवर्तन। उ०—छै अगवाळ ढळंती छाया, जको पटंतर सकळ जुए। सुवस वसावै सहर सितारो, हत्थणापुर में वेढ हुए। —ओपो आढो

रू०भे०—पट्टंतर।

अल्पा०—पटंतरौ।

पटंतरइ—सं०स्त्री०—१ पाट बैठते समय ओढाई जाने वाली चादर।

सं०पु०—२ आचार्य के पट्ट यानी गद्दी पर बैठाया जाने वाला दूसरा व्यक्ति।

उ०—हसितइ बोलइ बोल, ते बोल होते बोल, थारा मुझ नइ सांभरइ हो। एहवा चतुर सुजांण, कहउ, कुण हो कहउ, कुण हो कहियउ पूज्य पटंतरइ हो।—स.कु.

पटंतरौ—देखो 'पटंतर' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ परतख वायस पटंतरौ, बहनइ सुण बोलीह। जीहा चाखी दाख ज्यां, न रुचै नींबोळीह।—र. हमीर

उ०—२ सूरज पुत्र करन्न, पेटकुंता उतपन्नौ। पवनपुत्र हणमंत, उदर अंजनी उपन्नौ। ईसपुत्र खटमुक्ख, पुत्र जनमे रुद्रांणी। राघव दसरथ पुत्र, जणे कउसल्या रांणी। जनमियौ पुत्र कणहैगिरी, 'भ्रमर' कुंभा गजसिंघ रो। वे-पक्ख सुद्ध आदू बिरद, पुत्रां एह पटंतरौ।
—गु.रू.बं.

उ०—३ वधता विसेस 'धरमसी' वधे, वळत छांह जिम विस्तरें। द्रस्टांत एण सज्जण दुज्जण, परखि देख पटंतरें।—ध.व.ग्रं.

उ०—४ एह नो कांइ पटंतरौ, निगे लहे सू साचवै। इम चींतवी हसि हस मिळ्यौ, थाई सूं वातां राचवै।—रीसाळू री बात

पटंबर—सं०पु० [सं० पट्ट:+अम्बर] १ कौशेय, रेशमी वस्त्र।

उ०—१ आसन स्यंघ, घटातन स्यांम। पटंबर पीत, सु विद्युत है।
—र.ज.प्र.

उ०—२ वपु स्यांम सुंदर मेघ रुचि फबि तड़ित पीत-पटंबरं।
—र.ज.प्र.

२ वस्त्र, कपड़ा। उ०—जुरती नही आवण जावण की, फुरती नहीं रांड फंसावण की। परवाह न पाट पटंबर की। अब चाह सु कंवर अंवर की।—ऊ.का.

[सं० पट:=पर्दा+अंबर] ३ कपट, धूर्तता। (डि.को.)

४ गुप्त भेद।

५ गोप्य विषय।

रू०भे०—पटंवरि, पटंबरो, पाटंबर।

अल्पा०—पटंबरौ।

पटंवरि, पटंबरी—वि० [सं० पट:+अंबर+रा.प्र. ई] १ कपट करने या रचने वाला, धूर्त।

२ देखो 'पटंबर' (रू.भे.)

उ०—पांणी धांन पटंबरी, संतोखिउं सहकोय। आनंद इक मांगतां, देवा ऊठइ दोय।—मा.कां.प्र.

पटंबरौ—देखो 'पटंबर' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—झूठा पाट पटंबरा, झूठा दिखणी चीर। सांचि पियाजी री गूदड़ी, निरमळ रहे सरीर।—मीरां

पट—सं०पु० [सं० पट: या पटम्] १ वस्त्र, कपड़ा।

उ०—१ चाकर जांण चरण कमळां री। मन री ताप मटावो म्हारी। जटाजूट री भार उतारो। मुकट-माळ पट भूखण धारो।
—गी.रां.

उ०—२ परगट कट तट तड़त पट, सरस सघण तन स्यांम।
—र.ज.प्र.

२ महीन कपड़ा. ३ कपाट, किवाड़। उ०—निज मंदिर पट द्विब दरसण झत, मन आणंद माता।—जोगीदांन कवियौ

क्रि०प्र०—उघड़णौ, खुलणौ, खोलणौ, देणौ, बंध करणौ, भिड़णौ, भिड़ाणौ।

मुहा०—१ पट उघड़ना—पूजा काल में मन्दिर के कपाट खुलना।
२ पट खुलणा—देखो 'पट उघड़णा'।
३ पट मंगळ होणा—सेवा-पूजा के पश्चात् देव मन्दिर के कपाट बन्द हो जाना, दर्शन का समय बीत जाना।
४ पट बंद होणा—देखो 'पट मंगळ होणा'।
४ पर्दा।
क्रि०प्र०—उघड़णी, उघाड़णी, करणी, कराणी, खुलणी, खोलणी, खोलाणी, हटणी, हटाणी।
मुहा०—१ पट खुलणी—गुप्त बातों का प्रकट हो जाना, भेद खुल जाना।
२ पट खोलणी—छिपी बात को प्रकट करना, भेद का उद्घाटन करना।
५ पालकी के दरवाजे के कपाट।
यौ०—पटदार—वह पालकी जिसमें पट हो।
क्रि०प्र०—खुलणी, खोलणी, देणी, बंद करणी, सरकणी, सरकाणी
६ वह कागज जिस पर चित्र उतारा या खींचा जाय।
यौ०—चित्रपट।
७ जगन्नाथ, बदरिकाश्रम आदि मन्दिरों में दर्शनप्राप्त यात्रियों को दिया जाने वाला चित्र।
८ नदी का तट या किनारा।
ज्यों—नदी पूर पटां व्है है।
यौ०—पूरपटां।
९ शकट या गाड़ी के ऊपर लगाया जाने वाला सरकण्डे आदि का बना छप्पर।
यौ०—पटमंडप।
१० छत, छाजन।
यौ०—पटमंडप।
११ कुश्ती का एक पेच।
१२ किसी छोटे पदार्थ को गिरने से होने वाली आवाज।
ज्यूं—पट पट छांटा पड़ण लागा।
१३ नाश, ध्वंस।
मुहा०—१ पट करणी—बर्बाद करना, नाश करना, नष्ट करना।
२ पट होणी—नाश होना, बर्बाद होना, नष्ट होना।
क्रि०वि०—१ शीघ्र, झट। उ०—धोबौ मुट्ठी धांन, मांगं ज्यांनै ना मिळै। पट काढ़ै पकवांन, ना ना करतां नाथिया।—नाथियौ
२ देखो 'पट्ट' (रू.भे.)
३ देखो 'पाट' (रू.भे.)
४ देखो 'पटौ' (मह., रू भे.)

पटउडि, पटउडी—देखो 'पटकुटी' (रू.भे.)
उ०—पगि-पगि पउळि-पउळि हस्ती की गज-घटा। ती ऊपरि सात-सात सइ-धनक-धर सांवठा। सात-सात ओळि पाइक की वइठो सात-सात ओळि पाइक की ऊठी। खेड़ा उडण मुद फरफरी चुंह-चकि ठांइ-ठांइ ठठरी। इसी एक स्या पटउडि चत्र दिसि पड़ी।
—अ. वचनिका

पटउलउ, पटउलीय, पटउली—देखो 'पटकूल' (रू.भे.)
उ०—पाय पटउलां पाथरी, लीयउ मंदिर मांहि। अंगरखी अपछर जिसी, चिहू पखि चमर ढुळाइ।—मा.कां.प्र.
उ०—२ पहरणि सेत्र पटउलीय, ऊलीम पांन न माइ।
—जयसेखर सूरि
उ०—३ उमरगढ़ गुच्छ पटउलउं, साव पट्ट पट्टहीर। सूहवी घोपाच्छुडहूं सवाडी, चंपावती स्वेत सिलाहट्टी।—व.स.

पटऔ—देखो 'पटवौ' (रू.भे)

पटक-सं०स्त्री० [सं० पत्] १ पराजय, हार. २ पछाड़।
क्रि०प्र०—खाणी, देणी।

पटकणौ, पटकबौ-क्रि०स० [सं० पत्] १ किसी पदार्थ को ऊपर उठा कर जोर से झोंके के साथ डालना। उ०—वीरम लोपी वाग, खोटा अस ज्यूं हा खत्री। पटकी जोयां पाग, विढ़ रण वेढ वधाव सां।
—वी.म.
उ०—२ मुख ओडी रै मांहिलो, पर काचड़ा पुरीस। पटकै रोड़ी खवण पर, से चांडाळ सरीस।—बां.दा.
२ अधाधुंध दानादि में व्यय करना, झोंकना।
उ०—चाह करीर कळी नृप चटकै, भंवर छैल वेश्या-घर भटकै। पत महुआ सम दांनी पटकै, खत्रिय वंस वांस मिळ खटकै।
—ऊ का.
३ पहनाना, धारण करवाना। उ०—जिण रा कटिया सीस नूं थाळ में मंगाय जवनराज री सुता वरमाळा पटकण रो विचार कियौ।
—वं.भा.
४ किसी पदार्थ का आधार या अवरोध आदि हटाकर उसे अपने स्थान से नीचे डालना, गिराना। उ०—कहै सुगरीव सुणौ हरि वातां। हूं देखी सीता नै जातां। रांवण हर नै लेगौ स्वांमी। रथ सूं गगन पंथ रौ गांमी। भूसण सिया पटकिया केई। ए देखो प्रभु घरधा अठेई।—गी.रां.
५ व्याप्त करना, फैलाना। उ०—नागणी लेती तोप रै अभिमुख धकावै जिण तरह काळेजा करां मैं लीधा प्रांणां रो दुरभिक्ष पटकता चहुवांण रा सामंत बीच हुआ।—वं.भा.
६ अपने पास से पृथक करके दूसरे के हाथ करना, दूसरे के अधिकार में देना, सौंपना। उ०—दक्खिण में साल १ रै तथा दूसरा तीसरा कुपुत्र २ रै साथ केही जुद्ध जीति केही पुर १ दुरग २ दाबि पत्र हस्त लिख'र ७५००० रौ मुलक दिल्ली हेठै पटकियौ।
—वं.भा.
७ द्वन्द्वयुद्ध या कुश्ती में विपक्षी को पछाड़ना या गिराना, गिरा देना।

८ भीतर से वेगपूर्वक बाहर निकालना, गिराना, डालना।

उ०—गोरण दिन सूती सखी, वागा ढोल विणास। बाह उसीसो खींचियो, जागी पटक निसास।—वी.स.

पटकणहार, हारौ (हारी), पटकणियौ—वि०।

पटकवाड़णौ, पटकवाड़बौ, पटकवाणौ, पटकवाबौ, पटकवावणौ, पटकवावबौ, पटकाड़णौ, पटकाड़बौ, पटकाणौ, पटकाबौ, पटकावणौ, पटकावबौ—प्रे०रू०।

पटकिग्रोड़ौ, पटकियोड़ौ, पटक्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पटकीजणौ, पटकीजबौ—कर्म वा०।

पड़णौ, पड़बौ—अक० रू०।

पटक्कणौ, पटक्कबौ, पट्टकणौ, पट्टकबौ—रू०भे०।

पटकाड़णौ, पटकाड़बौ—देखो 'पटकाणौ, पटकाबौ' (रू.भे.)

पटकाड़णहार, हारौ (हारी), पटकाड़णियौ—वि०।

पटकाड़िग्रोड़ौ, पटकाड़ियोड़ौ, पटकाड़योड़ौ—भू०का०कृ०।

पटकाड़ीजणौ, पड़काड़ीजबौ—कर्म वा।

पटकाड़ियोड़ौ—देखो 'पटकायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पटकाड़ियोड़ी)

पटकाणौ, पटकाबौ-क्रि०स० [पटकणौ क्रि० का प्रे०रू०] १ (किसी पदार्थ को) ऊपर उठाकर जोर से झोंके के साथ नीचे गिरवाना या डलवाना।

२ अन्धाधुन्ध खर्च करवाना, खर्च करने में प्रवृत्त करवाना।

३ आधार या अवरोध हटवा कर नीचे की ओर डलाना, डलवाना, गिराना, गिरवाना।

४ पहनवाना, धारण कराना।

५ व्याप्त कराना या करवाना, फैलाना।

६ दूसरे के अधिकार में करवाना।

७ कुश्ती में गिरवाना।

८ भीतर से वेगपूर्वक बाहर निकलवाना।

पटकाणहार, हारौ (हारी), पटकाणियौ—वि०।

पटकायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पटकाईजणौ, पटकाईजबौ—कर्म वा०।

पटकायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ (पदार्थ को) ऊपर उठा कर जोर से झोंके के साथ डलवाया हुआ, गिरवाया हुआ।

२ अन्धाधुन्ध व्यय करवाया हुवा, दानादि में झोंकवाया हुआ।

३ पहनाया हुआ, धारण करवाया हुआ।

४ आधार या अवरोध को हटवा कर नीचे की ओर गिरवाया हुआ या डलवाया हुआ।

५ व्याप्त करवाया हुआ, फैलाया हुआ।

६ दूसरे के अधिकार में करवाया हुआ।

७ कुश्ती में गिरवाया हुआ।

८ भीतर से वेगपूर्वक बाहर निकलवाया हुआ।

(स्त्री० पटकायोड़ी)

पटकाय-सं०पु० [सं० पटकारः] १ कपड़ा बुनने वाला, जुलाहा, तंतुवाय. २ चित्रकार।

पटकावणौ, पटकावबौ—देखो 'पटकाणौ, पटकाबौ' (रू.भे.)

पटकावणहार, हारौ (हारी), पटकावणियौ—वि०।

पटकाविग्रोड़ौ, पटकावियोड़ौ, पटकाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पटकावीजणौ, पठकावीजबौ—कर्म वा०।

पटकावियोड़ौ—देखो 'पटकायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पटकावियोड़ी)

पटकियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ (पदार्थ को) ऊपर उठा कर जोर से झोंके के साथ डाला हुआ या गिराया हुआ।

२ अन्धाधुन्ध व्यय किया हुआ, दानादि में झोंका हुआ।

३ पहनाया हुआ, धारण कराया हुआ।

४ आधार या अवरोध हटाकर नीचे की ओर गिराया हुआ।

५ व्याप्त किया हुआ, फैलाया हुआ।

६ कुश्ती में पछाड़ा हुआ, गिराया हुआ।

७ दूसरे के अधिकार में किया हुआ या सौंपा हुआ।

८ भीतर से वेगपूर्वक बाहर निकाला हुआ।

(स्त्री० पटकियोड़ी)

पटकी-सं०स्त्री० [सं० पत्] वज्र, बिजली, विद्युत।

उ०—१ परम गुरु के सरणै जाऊं, करूं प्रणाम सिर लटकी। जेठ बहू की काण न मानूं, पड़ौ घूंघट पर पटकी।—मीरां

उ०—२ अमली ढोली एक, जको अलगूंजे गावै। सांझ वगत रै समै, आगै असवारी आवै। जिण नै जव नित सेर, करै रीझ दे चटकी। एह बैंडा, दातार पड़ै तो ऊपर पटकी।

—अरजुणजी बारहठ

उ०—३ ताकत डोलै तीसरा, साथरवाड़ा सोद। पैलां घर पटकी पड़ै, माखां रै मनमोद।—ऊ.का.

मुहा०—पटकी पड़णी—दैव से भारी दण्ड मिलना, सत्यानाश होना।

अल्पा०—पटको।

२ वज्र, इन्द्र का अस्त्र।

पटकुटी-सं०स्त्री०—छोटा तम्बू, खेमा, छोलदारी।

रू०भे०—पटउडि, पटउडी।

पटकूल-सं०पु०यौ० [सं० पट्ट+दुकूल] १ वस्त्र, कपड़ा।

उ०—तिमरी आविया, पइसारा मोटई मंडांण कराविया, ढोल जांगी झालरि संखि वादित्र वजाविया। बिहुंपासे पटकूल तणा नेजा लहकाविया।—रा.सा.सं.

२ रेशमी वस्त्र, रेशम का कपड़ा। उ०—१ मोखमल मोटा मोल रा, पंचरंग पटकूल। जरी कथीया जुगति सूं, सखर बिछावे सूल।

—प.प.च.

उ०—२ रुडी विध कीधा रातीजुगा, साहमी वच्छळ सारौ जी।
पटकूलें कीधी पहिरांवणी, सहू संघ नैं स्रीकारौ जी।—ध.व.ग्रं.
३ दुपट्टा (रेशम का)
उ०—ताहरां राजा नूं ग्रोढ़ कहै, नव सौ हाथी, एक हजार घोड़ा, हीर, चार पटकूल, राजा कह्यौ ग्रोढ मोल कर न जांणौ।
—जसमा ग्रोडणी री वात
४ देखो 'पट्टदुकूल' (रू.भे.)
रू०भे०—पटउल, पटउलीय, पटउलौ।

पटकोड़ा-सं०स्त्री०—पंवार वंश की एक शाखा।

पटकोड़ौ-सं०पु०—पंवार वंश की पटकोड़ा शाखा का व्यक्ति।

पटकौ—देखो 'पटकी' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
उ०—घुर-घुर कर-कर नर लागा धीरावण। वे सोने चांदी रौ करिग्या सीरावण। पड़जौ कुलसखिया वौ'रां पर पटकौ। गैं'णा-गांठा रौ करिग्या ठग गटकौ।—ऊ का.

पटक्कणौ, पटक्कबौ—देखो 'पटकणौ, पटकबौ' (रू.भे.)

पटक्कियोड़ौ—देखो 'पटकियोड़ौ' (रू भे.)
(स्त्री० पटक्कियोड़ी)

पटड़ियौ—१ देखो 'पटौ' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
२ देखो 'पाटौ' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
३ देखो 'पटियौ' (रू.भे.)

पटड़ी—१ देखो 'पटी' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
२ देखो 'पट्टी' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
३ देखो 'पाटी' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

पटड़ौ—१ देखो 'पटौ' (ग्रल्पा., रू.भे.)
२ देखो 'पाटौ' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

पटचर-सं०पु० [सं० पटच्चर] चोर (ह नां.मा.)

पटचार-सं०पु [सं० पट+चार:] वस्त्र, कपड़ा।
उ०—विय ग्रानूप सरूप स्यांम घट वरसणवार। कसियौ कट तट कोमळा चपळा पटचार।—र.ज.प्र.

पटझर—देखो 'पटाझर' (रू.भे.) (डिं को.)
उ०—१ चर बहूवें दिस नृपत चलावें। पटझर सेत रंग नह पावें।
—सू.प्र.
उ०—२ झिलम टोप सूधौ सिर झड़ियौ। पटझर हूं चूड़ामणि पड़ियौ।—सू.प्र.

पटण—देखो 'पट्टण' (रू.भे.)

पटणी-सं०स्त्री० [सं० पट: या पट+रा. प्र. णी] एक प्रकार का बहुमूल्य वस्त्र। उ०—दुरंग यज मांगळ रीवज गढगजी चुगजी पटणी पट-पाटू पंचवरण छींट नीलवटी चकवटी।—व.स.

पटणीतेग-सं०स्त्री०यौ०—एक प्रकार की तलवार।

पटणौ-सं०पु० [सं० पट्टन] पाटलीपुत्र।

पटणौ, पटबौ-क्रि०ग्र० [सं० पत्] १ कर्ज या उधार दिए गए धन की वसूली या प्राप्ति होना।
ज्यूं—इण दिनां सुगाळ होणै सूं सारी उधार पट गई।
२ परस्पर दो व्यक्तियों के विचार, भाव तथा स्वभावादि में समानता होना जिससे उनमें मैत्री या सहयोगिता हो सके, मन मिलना, बनना।
ज्यूं—सरदारमलजी थांनवी ग्रौर श्रीनाथजी मोदी में खूब पटै है।
३ क्रय-विक्रय, लेन-देन ग्रादि में दोनों पक्षों का मूल्य, सूद, शर्तों ग्रादि में सहमत हो जाना, तै हो जाना।
ज्यूं—सोदौ पट गयौ, मांमलौ पट गयौ।
४ किसी झील, कूप या गड्ढे ग्रादि का समीप की सतह के बराबर हो जाना, समतल होना।
ज्यूं—बाईजी री तळाव पूरौ पट गयौ, हमैं उण में पांणी कोनी।
५ स्थान विशेष में पदार्थ विशेष का इतना ग्राधिक्य होना कि उससे रिक्त स्थान न दिखाई पड़े। पूर्ण होना, परिपूर्ण होना।
ज्यूं—स्याळकोट रौ मैदांन दुसमणां री लासां सूं पट गयौ।
६ घसना, प्रवेश करना। उ०—ग्रंगोग्रंगि पटै ग्रणियाळं, प्रांण पाखर फोडइ। खांदा तणं घाइ सपरांणं, सांधिइ सांधि विछोडइ।
—कां.दे प्र.
पटणहार, हारौ (हारी), पटणियौ—वि०।
पटवाड़णौ, पटवाड़बौ, पटवाणौ, पटवाबौ, पटवावणौ, पटवावबौ, पटाड़णौ, पटाड़बौ, पटाणौ, पटाबौ, पटावणौ, पटावबौ—प्रे०रू०।
पटिग्रोड़ौ, पटियोड़ौ, पटयोड़ौ—भू०का०कृ०।
पटीजणौ, पटीजबौ—भाव वा०।

पटतर—देखो 'पटंतर' (रू.भे.)
उ०—कामधेनु के पटतरं, करं काठ की गाइ। 'दादू' दूध दूझै नहीं, मूरख देहु बहाइ।—दादूवांणी

पटताळ-सं०पु० [सं०पट्ट+ताल] एक दीर्घ ग्रौर दो ह्रस्व मात्रा का मृदंग का एक ताल।

पटधारी-वि० [सं०] जो वस्त्र धारण किए हुए हो।

पटन—देखो 'पट्टण' (रू.भे.)

पटपड़ौ-सं०पु० [देशज] १ मस्तक, सिर (व्यंग्य)
२ लकड़ी या लोहे का एक उपकरण जो राज द्वारा दीवार या फर्श के चूने या सीमेंट को समतल व चिकना बनाने के रूप में लिया जाता है।

पटपट—देखो 'पड़ापड़' (रू.भे.)

पटपाटु-सं०पु०यौ० [सं० पट:+रा. पाटू] एक प्रकार का बढिया कपड़ा। उ०—गढगजी, सवागजी, चुगजी, पटणी, पटपाटु 'पंचवरण' छींट, नीलवटी चकवटी······।—व.स.

पटपोरौ-सं०पु० [?] सूंघनी या तम्बाकू की डिब्बी को खोलने से पूर्व उंगली द्वारा डिब्बी के बाहर से सूंघनी को झाड़ने की क्रिया।
उ०—नवौ हुवोड़ा नीच, डबी भर लेवें डाकी। बैठ सभा रे बीच,

करै मनवार कजाकी। दे पटपोरा धोय, नाक मैं दावै नीका। मूंछो खांघो मोड़, छड़ा-छड़ खावै छींका। अंग में आय निसदिन अड़ै, भड़ै नही मळ भाड़ियो। जगदीस पाक कीन्हां जिकां, बिलळां नाक बिगाड़ियो।—ऊ.का.

पटमजरी-सं०स्त्री० [सं०] सम्पूर्ण जाति की एक शुद्ध रागिनी जो हिंडोला राग की स्त्री मानी जाती है (मीरां)।

पटमंडप-सं०पु० [सं०] तम्बू, खेमा।

पटरंगणा(ना)-सं०पु० [सं० पटः+फा० रङ्ग=खेलतमाशा (ब.व.)] विवाह के पश्चात वर-वधू द्वारा खेला जाने वाला खेल।

उ०—कुळ देवी आगळि छोड़ि अंचळ, जुअनो आचार। रुकमणी राम रमंतड़ां ? कुण जीपस्यंइ कुण हार। विस्वस्व ज्योति कळामति नइ, विस्व नऊं अधिकार। तुम्हे महालिखमी महा मोटा, क्रिस्ण नउं अधिकार। स्रीक्रस्ण जीता दळया दांणव रुखमणी वर कान्ह। पटरंगणा करि अंगनां हरि दिधलु निजमांन।—रुकमणी-मंगळ

पटरांणी, पटरागणि, पटरागणी—देखो 'पट्टरांणी' (रू.भे.)

उ०—१ स्रीरघुनाथ औतार निरमळा हुआ, जनक सुता पटरांणी। त्रेता लीला असी कीधी, जुग-जुग भगति बखांणी।—रुकमणी-मंगळ

उ०—२ जाळंधर राजा 'अजन', पटरागणि चहुवांण। दसरथ कौसल्या तणी, जोड़ प्रकासी जांण।—रा.रू.

पटरी—१ देखो 'पटी' (रू.भे.)

२ देखो 'पट्टी' (अल्पा०, रू.भे.)

३ देखो 'पाटी' (अल्पा०, रू.भे.)

पटळ, पटल-सं०पु० [सं० पटलम्] १ मकान की छत, छान, छप्पर।

उ०—१ १३८० संवत् समां मैं चउद्दहां १४ दिल्लीस गयासुद्दीन १४ कोई प्रासाद रा पड़ता पटल रै हेठै आइ मरियो।—वं.भा.

उ०—२ घोड़ा घर ढालां पटळ, भालां थंभ बणाय। जो ठाकुर भोगै जमीं, और किसो अपणाय।—वी.स.

२ आड़ करने या आच्छादन करने का पदार्थ पर्दा, आवरण।

उ०—धुनि उठी अनाहत सख मेरि धुनि, अरुणोदय थियौ जोग अभ्यास। माया पटळ निसा मैं मंजे, प्रांणायांमे ज्योति प्रकास।

—वेलि

३ ढेर अंबार।

उ०—एवडऊ ताप गाढउ, भावइ करवउ टाढ़उ वाइ वाजइ प्रबळ उडइ धूळि ना पटळ।—रा.सा.सं.

४ समूह, झुण्ड (ह.नां., अ.मा.)

उ०—पणिहारि पटळ दळ वरण चंपक दळ, कळस सीस करि कर कमळ। तीरथि तीरथि जंगम तीरथ, विमळ ब्राह्मण जळ विमळ।

—वेलि

५ आंख का मोतियाबिंद नामक रोग।

उ०—१ भरमल री दोनूं आंख्यां रा पटळ दूर हुय गया जिसा निरधूम दिया होय।—कुंवरसी सांखला री वारता

उ०—२ दादू सद्गुरु अंजन बाहिकर, नैण पटळ सब खोले। बहरा कांना सुणणै लागा, गूंगे मुख सूं बोले।—दादूबांणी

६ देखो 'पिटल' (रू.भे.)

पटलि-सं०स्त्री० [देशज] १ मोटाई, मोटापन। उ०—तेजइ पटलि सूरय निवारइ, स्वेत छत्र कि इंद्र ज डारइ।—शालि सूरि

२ देखो 'पटली' (रू.भे.)

पटली-सं०स्त्री० [सं० पटः+रा. प्र. ली] १ धोती की लांग का तहजमा वह भाग जो धोती के साथ नाभि के नीचे खोंसा जाता है।

उ०—अथवा दियै सुभट कोई अहोड़ो। लजहीणा ज्यां हूंत लड़ै। मूंछां दिसा हाथ न मेलै। पटली ऊपर हाथ पड़ै।

—लक्ष्मीदान बारहठ

२ 'ओढने' के वस्त्र के एक छोर को तह बना कर लहंगे या घघरी के साथ नाभि प्रदेश में खोंसा जाने वाला भाग।

उ०—इण भांत गणगोर री तयारी कर आप आप रै डेरै सणगार करवा सारी ही गई। वसन भूसण का। मुरलियां गाती हुई। जठे चीता रा सा-लंक ऊपरै लहंगा कसीजै छै। घण मही झीण चीर ओढीजै छै। चुणवट री पटल्यां बणाईजै।

—पनां वीरमदे री वात

३ देखो 'पटी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—हरस हिंडोळाणइ झूलइ, नेमि-प्रभ जिन राय। जिहां सुद्ध आसय भूमि पटली, सोहियइ थिरवाय।—वि.कु.

रू०भे०—पटलि।

पटवाद्य-सं०पु० [सं०] झांझ से मिलता-जुलता एक प्रकार का वाद्य जो ताल लगा कर बजाया जाता है।

पटवार, पटवारगिरी-सं०स्त्री० [सं० पट्ट+कार+फा० गरी]

१ पटवारी का काम।

२ पटवारी का पद।

३ पटवारी को मिलने वाला पारिश्रमिक, धन।

पटवारी-सं०पु० [सं० पट्ट+कार=राज० वार+रा०प्र० ई] वह सरकारी कर्मचारी जो गांव की जमीन और उसके लगान का हिसाब-किताब रखता है। उ०—जद गांवरा चौदरी पटवारी ओ छो थांमे जद चेला नैं हुंकारो करनैं घर हाटां रा केलू फोड़ै······।

—मि.द्र.

पटवो-सं०पु० [सं० पट्ट+रा०प्र० वो] (स्त्री० पटवी) गहनों को पिरोने व गूंथने का कार्य करने वाला व्यक्ति।

उ०—आं रे गांवां रै गोरवे पटवो बीणै छै पाट। मेरे साहब को 'पो' दै पूंचियो।—लो.गी

रू०भे०—पटओ, पटुओ, पटुवो।

पटसन-सं०पु० [देशज] एक पौधा जिसके तनों से रस्सी, टाट, बोरे आदि बुनते हैं।

पटसाळ-सं०स्त्री० [सं० पृष्ठ-शाला] मकान के पीठ से बनी शाला।

उ०—पटसाळां ओरा प्रघळ बिच चौकी विसतार।—गजउद्धार

रू०भे०—पठसाळ

पटह-सं०पु० [सं० पटह:] १ दुन्दुभी, नगाड़ा।

उ०—सांभळि पटह नी घोसणा।—वि.कु.

२ बड़ा ढोल।

रू०भे०—पड़ह, पडहउ, पड़हौ, पदह, पाड।

३ प्रथम गुरु ढगण के एक भेद का नाम ऽ। (डिं.को.)

रू०भे०—पट्टह।

पटहत्थ, पटहथ, पटहस्ती-सं०पु० [सं० पट्ट+हस्ती] १ हाथी, गज। (ह.नां., अ.मा.)

उ०—१ पटहत्थ मदोमत पक्खरियं, वन जांण वसंत गिरव्वरियं।
—गु.रू.बं.

उ०—२ पटहत्थ पतसाह मयंद मोताहळ, पै भाजतां जु भुय पड़िया, 'दूद' दीठा मैं चक्रवत चुणता, कळत रै स-आभरण किया।
—नैणसी

२ राजा की सवारी का हाथी। उ०—पटहती स्रीक्रस्ण री(नौ) रे, आय हुआ असवारी।—जयवांणी

रू०भे०—पट्टहसती, पाटहाथी।

[सं० पट्ट=तलवार+हस्त] ३ योद्धा, वीर।

उ०—काम पतसाह रै जरद झळहळ कियां, सेल सींदूरियौ सजै जगीस। पवंग सींदूर व्रन चाढ़तां पटहथां, 'सूरै' सूरमंडळ नांमियौ सीस।—मालौ सांदू

पटहोड, पटहोडउ, पटहोडौ-सं०पु० [देशज] घोड़ा, अश्व।

उ०—१ जडलग्ग फरी खड़खड़ई जोड। पटहोडा वाजिय पूरी पोड।—रा.ज.सी.

उ०—२ इळ भारति जर साकति आंणउ। पटहोडउ पंडवा पलांणउ।—रा.ज.सी.

उ०—३ आइण्यां बीजी घर आंणी, पटहोड़ा पक्खरिय पलांणी। यह केतउ केता विचि पांणी, खेड़ सिरइ खिड़िया खुरसांणी।
—रा.ज.सी.

रू०भे०—पाटहोडौ, पाटीहोडौ।

पटांतर, पटांतरूं-अव्य० [सं० प्रत्यन्तर] प्रत्यन्तर (उ.र.)

पटांसुक-सं०पु० [सं० पटांशुक] एक प्रकार का वस्त्र या पहनावा।

उ०—अथ-वस्त्र-देवांगचीर चीनांसुक पटांसुक पट्टदुकूल पट्टहरी···।
—व.स.

पटा—देखो 'पट्टा' (रू.भे.)

पटाइत—देखो 'पटायत' (रू.भे.)

पटाई-सं०स्त्री०—१ पटाने की क्रिया या भाव।

२ वसूली, प्राप्ति।

३ पाटने की क्रिया या भाव।

४ पाटने का पारिश्रमिक।

पटाक-अव्य०—१ किसी छोटे पदार्थ के गिरने का शब्द।

२ शीघ्र, जल्दी।

उ०—हिरणी फेर कह्यौ—म्हारा विचिया खाया जिण री पेट फूट ग्यौ। खोडिया ना'र री पटाक देंणी री पेट फूटग्यौ।—फुलवाड़ी

पटाकौ, पटाखौ-सं०पु० [अनु०] एक प्रकार की आतिशबाजी जो छूटते समय पटाक शब्द करती है। उ०—हीरू घर में वड़ियौ पण उदास मन सूं। टाबर बाप नैं घेर'र पटाका मांगण लागा। पण मा आधी ऊभी है आंगळी फेरी, जकैनैं देख'र सै-रा सै चुप हुयग्या।
—बरसगांठ

पटाझर-सं०पु०यौ० [सं० पट्ट=मुकुट, पगड़ी+झर=क्षरणम्]

१ मस्त हस्ती, मदोन्मत्त हाथी। उ०—१ चढतै जोवन रंग चुवै, पायल बाजै पाय। चालै सुंदर चोहटै, जांण पटाझर जाय।
—पनां वीरमदे री वात

उ०—२ पेखि रोस पतिसाह, माळ मोतियां समप्पै। वगसी भेजि सताब, आंणि माळा सुज अप्पै। मीर-तुजक मारि, धिकै जमदढ कर धारै। दुफ्रल खांन दौरांन पटाझर जिम पूंतारै। असतूत करै वहकरि अरज, जोड़ै हाथ जुहारियौ। असपती मोहर आंणै 'अभौ', इण विध क्रोध उतारियौ।—सू.प्र.

२ हस्ती, हाथी, गज (ह.नां.)

उ०—करां खग मोगर धूण करूर। पटाझर आहुडिया मदपुर।
—गो.रू.

३ सिंह, शेर।

रू०भे०—पटझर, पट्टझर, पट्टाझर।

पटाड़णौ, पटाड़बौ—देखो 'पटाणौ, पटावौ' (रू.भे.)

पटाड़ियोड़ौ—देखो 'पटायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पटाड़ियोड़ी)

पटाणौ, पटावौ-क्रि०स० ['पटणौ' क्रि० प्रे०रू०] १ वसूली कराना, प्राप्ति कराना।

२ दो व्यक्तियों के विचार, भाव, स्वभाव आदि में समानता कराना, मेल कराना।

३ क्रय-विक्रय, लेन-देन आदि में दोनों पक्षों को मूल्य, सूद, शर्तों आदि में सहमत कराना, तै कराना।

४ किसी कूप, झील, गड्ढे आदि का आसपास के स्थान के समतल कराना, बराबर कराना।

५ किसी स्थान पर पदार्थ विशेष की इतनी अधिकता करानी कि रिक्त स्थान दिखाई न पड़े।

६ ध्वंस या नष्ट कराना।

७ धसाना, प्रविष्ट कराना।

पटाणहार, हारौ (हारी), पटाणियौ—वि०।

पटायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पटाईजणौ, पटाईजबौ—कर्म वा०।

उ०—प्रतपइ तेज पडूरि।—स.कु.

रू०भे०—पंडूर।

पडेरौ-सं०पु०—डेरा, खेमा, शिविर

उ०—घेरे सिकार मांहि ससा, लूंकड़ी, सीह, रोभ, स्याळ, रींछ, अनेक हिरण आदि भेळा हुया छै। नांन्हां जीवां पडेरा मांहे आइ आइ पडै छै।—द.वि.

पडोज-सं० पु०—सहानुभूति, हमदर्दी, शिष्टाचार।

उ०—१ यूं करतां दिन नीसरता जावै छै। होळी ऊपर आदमी दस साथे देय प्रोहित नूं बेणीदास खरळ कन्है मेलियौ जे हलांणी कर दीज्यौ घणी पडोज मनहारां लिखी।

—कुंवरसी सांखला री वारता

उ०—२ प्रोहितजी नूं मेलिया घणी-घणी पडोज मनुहारां जे कराई।—कुंवरसी सांखला री वारता

पडोटियौ-सं०पु० [देशज] एक छोटा सफेद और चितकबरा सर्प।

रू०भे०—परडोटियौ।

पडोवी, पडोधौ—देखो 'पड़ूदौ' (रू.भे.)

पडोस—देखो 'पाड़ोस' (रू.भे.)

पडोसी—देखो 'पाड़ोसी' (रू.भे.)

उ०—किण ही साहूकार गोहां रा खोडा भरया। ऊपर दर लीपनै तीखा किया। एक पडोसी तिण पिण खोडा में धूल खात कचरौ न्हांख नै दर लोपनै ऊपर साफ कीधौ।—भि.द्र.

(स्त्री० पडोसण, पडोसणि, पडोसणी)

पडोसु—देखो 'पाड़ोस' (रू.भे.)

पड्डौ—देखो 'पाडौ' (रू.भे.)

पढ़णी-सं०स्त्री० [सं० पठ्] १ पढ़ने की क्रिया या ढंग।

उ०—पढणी बेळा में पग फावै, पढ्यां विचै पोमाई नै। करे दलील जिकां सूं कोई, लाधे स्यार लड़ाई नै।—ऊ.का.

२ कविता पाठ करने का उच्चारण या ढंग।

पढ़णौ, पढ़बौ-क्रि०स० [सं० पठनं] १ किन्हीं लिखे गए शब्दों या वाक्यों का अभिप्राय समझना।

२ लिखावट के शब्दों का उच्चारण करना, बांचना।

३ उच्चारण करना।

४ स्मरण रखने हेतु किसी अंश का बार-बार उच्चारण करना या रटना, पढ़ना।

५ मंत्र बोलना या कहना। उ०—प्रगटै मधु कोक संगीत प्रगटिया, सिसिर जवनिका दूरि सिरि। निज मंत्र पढै पात्र रितु नांखी, पहुपांजळि वणराय परि।—वेलि

६ अध्ययन करना। उ०—हरि समरण रस समभण हरिणाखी, चात्रण खळ खगि खेत्र चढ़ि। वैसे सभा पारकी बोलण, प्राणी वंछइ त वेलि पढ़ि।—वेलि

७ शिक्षा प्राप्त करना, पढाई करना।

उ०—पढ़ियां बिना मूढ़ पग फावै।—ऊ.का.

८ मैना तोते आदि द्वारा मनुष्यों के सिखाए हुए शब्दों का उच्चारण करना।

पढ़णहार, हारौ (हारी), पढ़णियौ—वि०।

पढ़वाड़णौ, पढ़वाड़बौ, पढ़वाणौ, पढ़वाबौ, पढ़वावणौ, पढ़वावबौ, पढ़ाड़णौ, पढ़ाड़बौ, पढ़ाणौ, पढ़ाबौ, पढ़ावणौ, पढ़ावबौ—प्रे०रू०।

पढ़िग्रोड़ौ, पढ़ियोड़ौ, पढ़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पढ़ीजणौ, पढ़ीजबौ—कर्म वा०।

पढम—देखो 'प्रथम' (रू.भे.)

उ०—पोस पढम दसमी दिन सांमी, वंस इक्ष्वाग सुहायउ। चउसठ इंद्र मिली मन रंगइ, मेरु सिखरि न्हवरायउ।—स.कु.

पढ़ाई-सं०स्त्री० [सं० पठनम्] १ अध्ययन, विद्याध्ययन।

२ पढने की क्रिया, भाव या ढंग।

३ पढने के बदले दिया जाने वाला धन।

४ पढाने का ढंग, अध्यापन की शैली।

५ पढाई के बदले दिया जाने वाला धन।

पढाड़णौ, पढाड़बौ—देखो 'पढ़ाणौ, पढाबौ' (रू.भे.)

पढ़ाड़णहार, हारौ (हारी), पढ़ाड़णियौ—वि०।

पढ़ाड़िग्रोड़ौ, पढ़ाड़ियोड़ौ, पढाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पढ़ाड़ीजणौ, पढाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पढ़ाड़ियोड़ौ—देखो 'पढायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पढ़ाड़ियोड़ी)

पढ़ाणौ, पढ़ाबौ-क्रि०स० [सं० पठ्] १ शिक्षा देना।

२ अध्ययन कराना।

३ उच्चारण करने के लिए प्रेरित करना।

४ उच्चारण कराना।

५ रटाना।

६ सिखाना, समझाना।

७ कोई कला या हुनर सिखाना।

पढ़ाणहार, हारौ (हारी), पढ़ाणियौ—वि०।

पढ़ायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पढ़ाईजणौ, पढ़ाईजबौ—कर्म वा०।

पढ़ायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ शिक्षा दिया हुआ।

२ अध्ययन कराया हुआ।

३ उच्चारण के लिए प्रेरित किया हुआ।

४ उच्चारण कराया हुआ।

५ रटाया हुआ।

६ सिखाया हुआ, समझाया हुआ।

७ कोई कला या हुनर सिखाया हुआ।

(स्त्री० पढ़ायोड़ी)

पढ़ावणौ, पढ़ावबौ—देखो 'पढ़ाणौ, पढ़ाबौ' (रू.भे.)

पढ़ावणहार, हारो (हारी), पढ़ावणियो—वि० ।
पढ़ाविश्रोड़ो, पढ़ावियोड़ो, पढ़ाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पढ़ावीजणो, पढ़ावीजबो—कर्म वा० ।

पढ़ावियोड़ो—देखो 'पढ़ायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पढ़ावियोड़ी)

पढ़ियोड़ो-भू०का०कृ०—१ लिखे हुए शब्दों या वाक्यों का अभिप्राय समझा हुआ।
२ लिखावट के शब्दों का उच्चारण किया हुआ, बांचा हुआ ।
३ उच्चारण किया हुआ।
४ स्मरण रखने के लिए बार-बार उच्चरित, रटा हुआ, पठित ।
५ मंत्र बोला हुआ या कहा हुआ ।
६ अध्ययन किया हुआ ।
७ कोई कला या हुनर सीखा हुआ ।
(स्त्री० पढ़ियोड़ी)

पढ़िवं-वि० [सं० पठितव्यम्] १ पढ़ने योग्य (उ.र.)
२ पढ़ाने योग्य ।

पढ़ू-वि० [सं० प्रति-भूः] १ जमानत देने वाला, जामिन। उ०—ताहरां राव कांनड़दे कह्यौ—'माला ! तो नूं घरती मैं तीजो हैंसो देईस।' ताहरां कह्यौ—'जी मोनूं एथ लिखाय द्यो, अर थांहरा रजपूत पढ़ू द्यो तो छोड़ूं ।' ताहरां ओथ हीज कागळ लिख दियो । रजपूत पढ़ू दिया ताहरां छोडिया ।—नैणसी
२ निष्कलंक, बेदाग। उ०—प्रथीपत बै पखां पढ़ू मोटा प्रगट, ओछवै धकै जुध भार आयैं । तोल अणियाळ जळबोळ चखता तणा, रोद हीलोळिया दईवरायैं ।—नरहरदास बारहठ
३ वीर, बहादुर। उ०—परै जोधांण बीकांण मोटा पढ़ू आज री लाज तो सूं अनाजा। राज जहांगीर री करां थिर राखियो, राव रांणो सिरै 'सूर' राजा ।—किसनो सिढ़ायच
रू०भे०—पिढ़ू ।

पढ़ोकड़ो-वि० [सं० पठ्+रा०प्र० ओकड़ो (स्त्री० पढ़ोकड़ी) १ पढ़ने वाला, अध्ययन करने वाला ।
२ विद्वान (व्यंग्य)

पणंग, पणंगियो, पणंगो-सं०पु० [सं० पानाङ्ग] १ पानी ।
—ना.डिं.को.
२ मेघ की बूंद। उ०—प्रभू तूं पांणी मांय पवन, गरज्जे गाजै मांय गगन्न । इळा तव पोढ़ण ओढ़ण अब्भ, पणंगां मेघां तूं ज प्रब्भ ।—ह.र.
रू०भे०—पणग, पुणग ।
अल्पा०—पणगो ।

पणंच—देखो 'पणच' (रू.भे.)

पण-सं०पु० [सं० प्रतिज्ञा, प्रा० पइण्णा] १ प्रतिज्ञा। उ०—औ धनुस वड़ो विकराळ रघुवर छोटो रे ! कमळ जिसो तन रांम रो, औ धनुस वजर सम जांण, रघु ! बडो कठण पण पिता कियो, कोइ रंच न कियो विचार, रघु ।—गी.रां.
यौ०—पणधर, पणधारी, पणबंद, पणबंध, पणमंड, पणवंत, पणहार, पणधारण, पणहारी ।
[सं० पर्वन् ग्रन्थि, जोड़] २ आयु के चार भागों में से एक ।
ज्यूं—बचपण, लड़कपण, चौथापण आदि ।
[सं० पानीयम्] ३ पानी, जल ।
यौ०—पणघट ।
क्रि०वि० [सं० पुनः अपि] १ भी ।
उ०—ताहरां रांणो कूंभो मांडव रै पातसाह ऊपर आयो । तद रिणमलजी पण हुतो ।—नैणसी
२ परन्तु। उ०—मुहैं रावळ रै जीव प्रांण बीजा वेटा हुता पण रायधण सूं वडो प्यार, ए अठै राज करै ।—रायधण री वारता
उ०—२ सव्वे भला मासडा, पण वइ साहम तुल्ल । जे दवि दाधा रूंखडा, तीहं माथइ कुल्ल ।—रा.सा.सं.
अव्य०—१ तो । उ०—गडवी 'गांगो' गाविजे, स्यांम न मेल्है साथ। ओढण अनिकारां नरां, हालां रा पण हाथ ।—हा. झा.
२ तो भी ।
वि० [सं० पंच] —पंच, पांच ।
यौ०—पणइंद्रिय ।
प्रत्यय—१ प्रत्ययः जिसके लगने से नामवाचक या गुणवाचक संज्ञा भाववाचक बन जाती है।
ज्यूं—गैलापण, छिछोरापण, टाबरपण, लड़कपण आदि ।
रू०भे०—पणउ, पणि, पणो, पणू, पिण, पिण, पिणि ।

पणइंद्रिय—देखो 'पंचेंद्रिय' (रू.भे.)
उ०—जल थल खचर भुयंग दुइ, पणइंद्रिय तिरि अइयाल ।
—स.कु..

पणखो-सं०पु० [देशज] छाछ से बना पेय पदार्थ विशेष । उ०—जो जीविया तो सीम फड़ीस अर पणखो छाछ पातळी रो आरोगता ।
—द.वि.

पणग-सं०स्त्री०—वर्षा की बूंद ।
उ०— पणग ते जांणे पाछणां, पवन ते लाइ लूण । पडी पडी हुं तडपडुं, पीडि निवारइ कूंण ?—मा.कां.प्र.
उ०—निसि तु थाइ तिमेस की, दियस लसीनइ जाय । परजापति ! तइं पणग की, अधिकु करिकु आय ।—मा.कां.प्र.

पणगो-देखो 'पणंग' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—मोटे पणगे मेह, आव्यो घरती धरपती । अम पांती नो एह, झाकळ न वरस्यो जेठवा ।—जेठवा

पणगो—देखो 'पांणगो' (रू.भे.)
उ०—भांति भांति रा पकवांन मांस परूसीया । हळवे-हळवे सुसते सारा आरोगै छै, दारू रो पणगो हुवै छै, तिको पांणी ज्यूं ढोळीजै

छै ।—राव रिणमल री वात

पणघट-सं०पु० [सं० पानीय+घट्ट] पानी भरने का घाट ।

उ०—हेम कळस कुच जुग हिए, नीर कळस सिर लेइ । पणघट हूं तां बाहुड़ै, कळस दुहूं कर देइ ।—बां.दा.

रू०भे०—पनघट, पिणघट ।

पणच, पणछ-सं०स्त्री० [सं० प्रतंचिका] धनुष की प्रत्यंचा (डिं.को.)

उ०—१ पह बीर हाक पनाक पणचां, बाज डाक अंबाक । असनाक पर ग्रीधाक आवध, करण वाज कजाक ।—र.ज.प्र.

उ०—२ धनुस मांनि पणछ, सरीर मांनि छाया, पग मांनि वांणही, आंखि मांनि भरण ।—व.स.

पर्या०—गुण, जीवा, द्रूणा, बांणासण, मुरवी ।

रू०भे०—पिणच, पुंणच, पुंणछ, पुणच, पुणछ ।

पणझल्ल-वि०यौ० [सं० प्रतिज्ञा+राज. झल्ल] प्रतिज्ञा का पालन करने वाला, प्रणवीर । उ०—ईंदा आहव आगळां, पड़िहारां पणझल्ल । हरधलां आगै हुवा, चढ़े अलला भल्ल ।—रा.रू.

पणणो, पणबो—देखो 'पुणणो, पुणबो' (रू.भे.)

उ०—पणै 'पीरियो' दास प्रभ पतिसाहो । भला हो, भला हो, भला हो, भला हो ।—पी.प्र.

पणधर, पणधारी-वि०यौ० [सं० प्रतिज्ञा+धारी] प्रतिज्ञा धारण करने वाला । उ०—१ ग्रोलै राखण आपरां, चोळं नै कर चाव । 'सूरज माल' समापिया, पणधर लाख पसाव ।—द.दा.

उ०—२ धन वे पुरस बडा पणधारी, खलक सिरोमण सुजस खटै । उमगे दांन ऊधमैं आचां, रांम-रांम मुख हूंत रटै ।—र.रू.

पणनडो-सं०पु० [सं० पानीय+रा. नडो] पोखर ।

उ०—पावस वरसइ पणनडे, नयणे वाली नींक । हैडइ गाढइ हुं दीउं, ढीलूं करवा ढीक ।—मा.कां.प्र.

पणपणो, पणपबो-क्रि०अ० [सं० पर्ण=पत्र व पर्णय=हरा होना]

१ पानी प्राप्त कर फिर से हरा हो जाना ।

२ फिर से तंदुरुस्त होना, रोगमुक्त होने के बाद स्वस्थ तथा हृष्ट-पुष्ट होना ।

३ वैभवयुक्त होना ।

४ प्राप्त होना, मिलना ।

रू०भे०—पनपणो, पनपबो ।

पणपाणो, पणपाबो-क्रि०स० [सं० पर्ण] १ पानी पिला कर फिर से हरा-भरा करना ।

२ रोगमुक्त करना, हृष्ट-पुष्ट करना ।

३ वैभवयुक्त करना ।

४ प्राप्त कराना, मिलाना ।

पणपायोड़ो-भू०का०कृ०—१ पानी पिला कर हरा-भरा किया हुआ ।

२ रोग मुक्त किया हुआ, हृष्ट-पुष्ट किया हुआ ।

३ वैभवयुक्त किया हुआ ।

४ प्राप्त किया हुआ, मिलाया हुआ ।

(स्त्री० पणपायोड़ी)

पणपियोड़ो-१ पानी प्राप्त कर फिर से हरा हुवा हुआ ।

२ फिर से तंदुरुस्त हुवा हुआ ।

३ प्राप्त हुवा हुआ, मिला हुआ ।

४ वैभवयुक्त हुवा हुआ ।

(स्त्री० पणपियोड़ी)

पणफर-सं०पु० [सं०] कुण्डली में लग्न से दूसरा, पांचवां, आठवां और ग्यारहवां घर ।

पणबंध, पणबंध-वि० [सं० प्रतिज्ञा+बन्ध] प्रणवीर, प्रतिज्ञावान ।

उ०—मोहकमसिंह किल्यांण तणा, मेड़तियो पणबंध । तज मनसब सुरतांण रो, मिळियो फौज कमंध ।—रा.रू.

पणमंड-वि० [सं० प्रतिज्ञा+मण्डनं] प्रतिज्ञावीर, प्रण निभाने वाला ।

उ०—वग्गा खग्गां साह दळ, माड़ेचा पणमंड । वार विखंमी झेलणा, आदूनेम अखंड ।—रा.रू.

पणमणो, पणमबो-क्रि०स० [सं० प्रणाम] प्रणाम करना, नमस्कार करना ।

उ०—कांमित संपय करणं, तम भर हरणं सहस्सकर किरणं । पणमसि सद्गुरु चरणं, वरणिस नवकार गुण वरणं ।—ध.व.ग्रं.

पणयालीस—देखो 'पैंताळीस' (रू.भे.)

उ०—सुयक्खंध एक दसमइ अंगइ पणयालीस अज्झयणा । पणयालीस उद्देश वलीपद, सहस संख्यात नीरयणा ।—वि.कु.

पणवंत-वि० [सं० प्रतिज्ञा+वान्] (स्त्री० पणवंती) प्रतिज्ञावान् ।

उ०—चालेवो चक्रवती, निजर सुरपती निहारै । भाग धन्य भूपती, एम सोभाग उचारै । पणवंता पारणी, सीळवंती सतवंती । अति मुगती हालियो, कियां साथे कुळवंती ।—रा.रू.

पणव-सं०पु० [सं० पणवः] १ छोटा नगाड़ा ।

२ छोटा ढोल ।

पणस-स०पु० [सं० पनस] १ कटहल का वृक्ष अथवा उसका फल ।

२ राम की सेना का एक बंदर । उ०—नळ नील दधमुख पणस नाहर, विहद जंबूवांन ।—र.ज.प्र.

पणसणु-वि०—नष्ट करने वाला ।

पाणसणो, पणासबो-क्रि०स० [सं० प्रनाश] १ नष्ट करना ।

उ०—तउ जिणदत्त जई सुनांमि, उव सग्ग पणासइ । रूपवंतु जिणचंद सूरि, सावय आसासय ।—कवि सारमूर्ति

क्रि०अ०—२ नष्ट होना । उ०—नामिइं लीधइ जास तणां, सवि पाप पणासइ दूरि ।—हीराणंद सूरि

पणासियोड़ो-भू०का०कृ०—१ नष्ट किया हुआ ।

२ नष्ट हुवा हुआ ।

(स्त्री० पणासियोड़ी)

पणहार, पणहारण, पणहारी-वि०यौ० [सं० प्रतिज्ञा+हारी] १ प्रतिज्ञा

को हारने वाला, प्रण में हार जाने वाला।
२ देखो 'पणिहार' (रू.भे.)
उ०—१ पणंघट पर पणहार, नीर कज नीसरी। स्रीफळ तणै प्रमांण क सोभा सीस री।—सिवबक्स पाल्हावत
उ०—२ हंसपाळ माथो पड़िये पछै घड़ गायां ले वळियो। गायां खेड़ आंणी। पणहारियां कह्यो—'देखो माथा विण धड़ आवै छै।' —नैणसी

पणि—देखो 'पण' (रू.भे.)
उ०—१ जु वेदवंत भला ब्राह्मण था। त्यां वेद रो वेदोकित विचारयो। वात पणि कही चाहीजै अर मन मांहि भय उपनो छै। —वेलि टी.
उ०—२ सेना मात कूखि मांनस सर, राजहंस लीना राजेसर। प्रकट रूप पणि तूं परमेसर, अलखरूप पणि तू अलवेसर।—स.कु.
उ०—३ तुम्हें करवउ धरम, पणि नथी जांणता मरम। —वि.कु.

पणियार, पणियारी, पणिहार, पणिहारण, पणिहारी—सं०स्त्री० [सं० पानीयहारो] १ पानी भर कर ले जाने वाली, पनिहारिन।
उ०—१ सजना बूझी पांणी री पणियार। होद बतावो ए पणियारियां हाडेराव रो।—लो.गी.
उ०—२ बूझी भंवरजी कुवे री पणियारी, पोळ बताओ रांणी सीकरी री, कुणसी जो म्हारा राज।—लो.गी.
उ०—३ पना ए भंवरजो बूझी कुवै री पणिहार।—लो.गी.
उ०—४ काळी रे कळायण ऊमड़ी ए पणिहारी ए लो। छोटोड़ा छांटां रो बरसै मेह वाला जी ओ।—लो.गी.
२ वर्षा के बहते पानी में उठने वाले बड़े-बड़े बुदबुदे (मारवाड़)
३ हल के नीचे का वह भाग जिसमें कुश या फाल लगाया जाता है। खेत जोतते समय जिससे सीता बनती है (मेवात)।
४ ऐसी 'चऊ' जिसके ऊपर हल चलाते समय फाल या कुसी लगाने की आवश्यकता नहीं रहती (शेखावाटी)।
५ एक राजस्थानी लोक गीत।
६ सारंगी में हाथी दांत से मढा वह खड्डा जिसमें से होकर मुख्य तार या दूसरा तार निकलता है।
७ गधा या गधी (ऊमरकोट, थाट)
रू०भे०—पणहार, पणहारण, पणहारी, पणीहारी, पनीहारी, पिणयार, पिणहार, पिणहारी, पिणियार, पिखियारी, पिणिहार, पिणिहारी।
अल्पा०—पीणिहारड़ी।

पणी—देखो 'पण' (रू.भे.)

पणीहारी—देखो 'पणिहार' (रू.भे.) (उ.र.)

पणू, पणो—सं०पु० [देशज] वह फलाहार जो खरबूजा, पपीता, केला, कलमी-आम में से किसी विशिष्ट फल को काट कर गिरी के टुकड़ों में शक्कर मिला कर रोटी के साथ खाया जाता है।
२ देखो 'पण' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पसू पणो पंखी पणूं, सुतर मुरग रै संग। मरद पणो मिहला पणो, मावड़िया रै अंग।—वां.दा.
रू०भे०—पांणो, पुणो, पूंणो।

पण्यांगना—सं०स्त्री० [सं० पण्य+अंगना] १ वेश्या।
उ०—१ अवसर सिउं इणि परि कहे, माधव मरण समांनि। प्रेम करी पण्यांगना, देवी जीवित दांनि।—मा.कां.प्र.
उ०—२ अथो दृष्टि जोई रह्यो पण्यांगना मां, ऊतर नापै लिगार रे। —वि.कु.

पतंग—सं०पु० [सं०] १ सूर्य, सूरज।
उ०—ऽवे पहराव कनक अरधांणं। अरघण अरक गंगाजळ आंणं। पतंग अरधि नृप सेव पधारै। धाय उठाय खड़ाऊ धारै।—सू.प्र.
यौ०—पतंगज, पतंगजा।
२ दीपक, ज्योति (अ.मा.)
३ चिनगारी।
४ खून। उ०—लड़तां अंग लोह छछोह लगै। जगि जोगिक ज्वाळ अहूति जगै। अरणांग पतंग ज ई उफणै। वप स्रोवण घाव जड़ाव वणै।—सू.प्र.
५ लाल रंग। उ०—कसीसत वांण जुवांण कबांण। विहूं वळ छूटत फूटत बांण। अठै अंग नारंग छींछ अपार। फिरगिय जांणि पतंग फुंहार।—सू.प्र.
६ हलका रंग (अ.मा.)
मुहा०—पतंग-रंग—हलका या अस्थायी स्नेह।
७
उ०—दिये कपि डांण उडांण दमंग, पड़ै उर चोट मतंग पतंग। —सू.प्र.
८ परदारकीड़ा, पतंगा।
उ०—१ दीप पतंग तणी परइ सुपियारा हो। एक पखो म्हारो नेह नेम सुपियारा हो।—स.कु.
उ०—२ जड़ियो तिलक जवाहरां, जांणं दीपक जोत। वालम चीत पतंग विधि, हित सू आसक होत।—वां.दा.
९ पक्षी (अ.मा.)
१० टिड्डी।
११ कनकौआ, किनका, गुड्डी।
उ०—रमै वसंत राजंद, पतग चरख्खा अप्पालां। केसर छोळ अबीर, गूंज डंवरां गुलालां।—सू.प्र.
क्रि०प्र०—उडाणी, कटणी, काटणी, वढाणी, लड़ाणी।
यौ०—पतंगवाज, पतंगवाजी।
१२ शरीर, अंग।
१३ एक झाड़ी विशेष जिसकी लकड़ी का रंग लाल होता है। (अमरत) (उ.र.)

१४ एक प्रकार का वृक्ष विशेष ।

१५ डिंगल का वेलिया सांणोर छंद का भेद विशेष जिसके प्रथम द्वाले में ५६ लघु ४ गुरु कुल ६४ मात्राएँ होती हैं तथा शेष द्वालों में ५६ लघु ३ गुरु कुल ६२ मात्राएँ होती हैं (पि.प्र.) ।

रू०भे०—पतग, पतिग, पतिग, पयंग, पातंग ।

अल्पा०—पतंगड़ो, पतंगियो, पतंगो, पतंगियो ।

पतंगज-सं०पु०यौ० [सं०] १ सूर्यपुत्र यमराज ।

२ सूर्यपुत्र अश्विनीकुमार ।

३ सूर्यपुत्र कर्ण ।

४ पसीना ।

पतंगजा-सं०स्त्री०यौ० [सं०] सूर्य की पुत्री यमुना ।

पतंगबाज-सं०पु०यौ० [सं० पतंग+फा० बाज] १ पतंग उड़ाने की क्रिया में निपुण ।

२ पतग उड़ाने का शौकीन ।

पतंगबाजी-सं०स्त्री०यौ० [सं० पतंग+फा० बाजी] १ पतंग उड़ाने की क्रिया या भाव ।

२ पतग उड़ाने का शौक ।

पतंगसुत—देखो 'पतंगज' ।

पतंग्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू.भे.)

उ०—भीसम सील पतंग्या भारथ । सरविद्या पारथ परसावथ ।
—ऊ.का.

पतंगियो, पतंगो—देखो 'पतंग' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ पड़िया होय पतंगिया, कोळ सूं खग काढ़ । हूतासण 'जींदं' हुवे, वेढ लियां दळ वाढ ।—पा.प्र.

उ०—२ घण बोझ उठावै सिर गधो, सबळवांन बाजै न सुण । विप धरै पतंगो आगविच, कहे सूर जिणनूं कवण ।—पा.प्र.

पतंजळि-सं०पु० [सं० पतंजलिः] १ एक ऋषि जिन्होंने योग शास्त्र की रचना की ।

२ एक मुनि जिन्होंने पाणिनीय सूत्रों पर महाभाष्य की रचना की ।

उ०—वैसेसिक में कणभुक सो बळ विस्तारयौ पातजळी पाठ पतंजळि जेम प्रचारयौ ।—ऊ.का.

पत-सं०स्त्री० [?] १ गुड़ व पानी के मिश्रण से बनाया गया द्रव पदार्थ जो किसी खाद्य पदार्थ को मीठा बनाने के काम आता है, गुड़ की चासनी ।

रू०भे०—पात ।

२ मर्यादा । उ०—माताजी मनावै मीरां थे मांनो, दूवड़ला री पत राख । भक्ति छोडो जी हरिनांम की ।—मीरां

३ प्रतिष्ठा, इज्जत, लाज । उ०—१ ऊभा पगां अनेक, केता नर सळवळ करै । पड़ियां पूठी पेख पत तूं राखै 'पातला' ।
—ऊकजी बोगसो

उ०—२ सट्ठ सभा मैं बैठतां, पत पंडत री जाय । एकण वाड़ै किम वड़ै, रोझ गधेड़ो गाय ।—अज्ञात

उ०—३ सत मत छोडो हे नरां, सत छोड्यां पत जाय । सत की बांधी लिछमी, फेर मिळेगी आय ।—अज्ञात

४ पैठ, विश्वास, भरोसा । उ०—झूठे की कुछ पत नहीं, साजन झूठ न बोल । लाखांपति का झूठ में, दो कौडी का मोल ।
—अज्ञात

रू०भे०—पति ।

५ देखो 'पति' (रू.भे.)

उ०—१ नायक है जग रांम नरेसर, ते कर लायक देवतरेसर । सीत तणो पत संत सधारण, चाव करे भज तूं धिन चारण ।
—र.ज.प्र.

उ०—२ हूं कुळ में पापी हुवो, पत नै दीन्ही पूठ । त्रिया पतिव्रत पाळ तूं, धिक धिक मत कह धीठ ।—बां.दा.

६ देखो 'पत्री' (रू.भे.)

७ देखो 'पत्र' (रू.भे.)

उ०—आंम फळै परवार सूं, महू फळै पत खोय । ताको रस जे कोई पियै, अकल कठा सूं होय ।—अज्ञात

विलो०—अपत ।

अल्पा०—पाती ।

पतउड-सं०पु०यौ० [सं० उडपति] चन्द्रमा, सोम (डिं.को.)

पतओखद-सं०पु०यौ० [सं० ओषधिपति] चन्द्रमा, सोम (डिं.को.)

पतकिरण-सं०पु०यौ० [सं० किरणपति] सूर्य, रवि ।

उ०—सह भांत विगत विवाह सुणतां, अंग प्रफुलित आंण । पतकिरण निकसै रसम परसत, जळज विकसे जांण ।—र.रू.

पतग—देखो 'पतंग' (रू.भे.)

पतगर-सं०पु० [?] विश्वास, भरोसा ।

अल्पा०—पतगरो ।

पतगरणो, पतगरबो-क्रि०अ०स० [?] १ विश्वास करना ।

उ०—कोप कळचाल जमदाढ 'झरड़ा' कहर, चाळ दुरजण तणै हिये चढियो । पोह वडा पतगरै कमंध एकावपत, जड़ाळी सुघट 'जंदराव' जड़ियो ।—झरड़ा राठोड़ री गीत

२ मानना, स्वीकार करना । उ०—पर्खं जारज न को अनेरां पतगरै, करै सोभाग आतम सकत कोड । हरै विकटोरिया रवो रची हुवो, रजै तण खूंद बळरूप राठौड़ ।—किसोरदांन बारहठ

पतगरियोड़ो—भू०का०कृ० ।

पतगरियोड़ो-भू०का०कृ०—१ विश्वास किया हुआ ।

२ स्वीकार किया हुआ ।

(स्त्री० पतगरियोड़ी)

पतगरो—देखो 'पतगर' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—पल-पल रो पतगरो, लेर दीठो लिलना रो, पोपां री पायगा, खबर न पड़ै तोखारां ।—अरजुणजी बारहठ

पतग्वाळ-सं०पु० [सं० ग्वालपति] श्रीकृष्ण (ग्र.मा.)

पतड़ी-सं०स्त्री० [सं० पत्रम्+रा.प्र.ड़ी] इष्टदेव की धातु के पत्र पर बनी मूर्ति जिसे डोरे में पिरो कर गले में धारण करते हैं।

रू०भे०—पतरी, पातड़ी।

पतड़ो-सं०पु० [सं० पत्र+रा. प्र. ड़ो] १ तिथिपत्र, पंचांग, पत्रा।

उ०—जितणा, ए गोरी, वड़ पीपळ रा पांन, इतणा दिनां में आसी सायबो। वाळूं-जाळूं, रे जोसी, पतड़ै री वेद, आक धतूरा, जोसी, थारो मुख भरूं।—लो.गी.

२ कुम्भट की फली।

रू०भे—पतरो, पातड़ो।

पतचील-सं०पु० [रा० चील=सर्प+सं० पति] शेषनाग।

उ०—पड़ी खबर नर 'पेम' नै, अड़ी मूंछ अहू आय। चढी पंख पतचील रै, घड़ी उण 'बक घुराय।—पे.रू.

पतजादव-सं०पु० [सं० यादवपति] श्रीकृष्ण (ह.नां.)

पतझड़-सं०स्त्री० [सं० पत्रम्+क्षरणम्] वह ऋतु जिसमें पेड़ों के पत्ते झड़ जाते हैं। शिशिर-ऋतु।

पतणी—देखो 'पत्नी' (रू.भे.)

उ०—द्रुपद सुता नो चीर बढायो, दुसासण मद मारण। पहळाद परतग्या राखां, हरणाकुस नो उद्र विदारण। थे रिख पतणी किरपा पायां, विप्र सुदामा विपत विडारण। मीरां रे प्रभु अरजी म्हारी, अब अबेर कुण कारण।—मीरां

पतत—देखो 'पतित' (रू.भे.)

उ०—परमेसर जं लोकपति, पतत नु तारण पारि। जगत निमंधण गुर जगत, बळ-बंधण बळिहारि।—पि.प्र.

पतत्रि-सं०पु० [सं०] पक्षी, चिड़िया (ग्र.मा.)

पतत्रिभरण-सं०पु०यौ० [सं० पतत्रि+राज. भरण] जटायु।

उ०—घणनांमी इम सुणे विगत घण, जण जटायू भर अंक जण। वण द्रिग गोद धरे पतत्रि भवण; मणधर छवरी हरख मण।—र.रू.

पतत्री-सं०पु०—पक्षी (ग्र.मा.)

पतधीर-वि०—विश्वासी। उ०—पीरां पतधीरां पैलो घर घायो। उण दिन रांमो डर सांमो नहि आयो।—ऊ.का.

पतन-सं०पु० [सं०] १ अवनति, अधोगति।

२ गिरना, पड़ना।

उ०—प्रळै व्रज करेवा नीम दांमण पतन, गयण फूटै घटा भीम गरजै। उठावै अछळतो जेम हळधर अनुज, बळ तर्क यंद्र छौ भला वरजै।—बां.दा.

३ मृत्यु, नाश।

४ देखो 'पट्टण' (रू.भे.)

पतनाळ, पतनाळो—देखो 'परनाळ' (रू.भे.)

पतनी, पतन्नी-सं०स्त्री० [सं० पत्नी] १ स्त्री, नारी (ग्र.मा., ह.नां.मा.)

२ देखो 'पत्नी' (रू.भे.)

उ०—१ व्यथा विरहाग वियोग विहाय, सवागण भाग संयोग सुहाय। अनाग्रह भुल्लित मांन उपाय, प्रफुल्लित ज्यूं पतनी पति पाय।—ऊ.का.

उ०—२ पति पूजन जीवन पतनी रो सो कई कोसो जग-जामी। सब ही विध सेवा व्रत साधूं हो संग लीजे मो नै स्वांमी।

—गी.रां.

उ०—३ बंदे भ्रात वे तिण वार, चवियो मुनि सिसटाचार। निज वह हुवी रिसपतनी स सीता मिळी नांमे सीस।—र.रू.

उ०—४ देवी बांण रै रूप अरजुण वन्नी। देवी द्रौपदी रूप पांचां पतन्नी।—देवि.

पतनीबरत, पतनीव्रत, पतनीवरत, पतनीव्रत—देखो 'पत्नीव्रत' (रू.भे.)

पतन्नी—देखो 'पथरणी' (रू भे.)

पतन्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू.भे.)

उ०—पूरउ तप हुउ पतन्या पूगी, ईसर ताई मूनव्रत लीयइ। वारां जुगां हूंती बहुनांमी, ताळी छोडी दीह तीयइ।

—महादेव पारवती री वेलि

पतपच्छी-सं०पु०यौ० सं० पक्षीपति] १ गरुड़।

२ देखो 'प्रतिपक्षी' (रू.भे.)

उ०—पतपच्छी जुग पांण, सरोरुह पल्लवां। नग-जुत वळय अमोल, दिया जे निधनवां।—बां.दा.

पतप्रीत-सं०पु०यौ० [सं० पति=स्वामी+प्रीति] १ सेवक, अनुचर (ग्र.मा.)

सं०स्त्री० [सं० पति=धव+प्रीता] २ पतिव्रता।

वि०स्त्री० [सं० पति=धव+प्रीता] पति से प्रेम करने वाली, पतिअनुरक्ता।

उ०—सुता 'दलै' रावळ तणी, पतवरतां पत-प्रीत। रांणी राजा परणियो, मिरघावती 'अजीत'।—रा.रू.

पतप्रेम-सं०स्त्री०यौ० [सं० पति+प्रेमा] १ सती, साध्वी (ग्र.मा.)

सं०पु०यौ० [सं० पति+प्रेमिन्] २ सेवक।

पतबरत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

पतबरता—देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

पतब्रत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

पतमंदोदरी-सं०स्त्री० [सं० मंदोदरीपति] रावण (ग्र.मा.)

पतमाळ—देखो 'प्रतमाळा' (रू.भे.)

पतयारो—देखो 'पतिआरो' (रू.भे.)

पतर—१ देखो 'पात्र' (रू.भे)

उ०—१ तिण आपरा गळा री कांठलो १ जड़ाव री मालदे नूं दीयो, पतर एक लोही रो भर दीयो सु मालदे पीयो नहीं।

—नैणसी

उ०—२ पुणियो यम जायल पती, रो'ड़दार सूं रीस। जोगी नैं जी मायनै, वळ दो पतर भरी'स।—पा.प्र.

२ देखो 'पत्र' (रू.भे.)
३ देखो 'पतर' (रू.भे.)

पतरण—देखो 'पथरण' (रू.भे.)

पतरणौ, पतरबौ—देखो 'पथरणौ, पथरबौ' (रू.भे.)
पतरणहार, हारौ (हारी), पतरणियौ—वि०।
पतरिश्रोड़ौ, पतरियोड़ौ, पतरयोड़ौ—भू०का०कृ०।
पतरीजणौ, पतरीजबौ—कर्म वा०।

पतराखण-वि० [राज० पत+सं० रक्षणम्] प्रतिष्ठा की रक्षा करने वाला।
सं०पु० [राज० पत+रक्षणम्] ईश्वर (नां.मा.)

पतरियोड़ौ—देखो 'पथरियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पतरियोड़ी)

पतरी—१ देखो 'पथरी' (रू.भे.)
२ देखो 'पत्र' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पतरी लिखद्यूं प्रेम की ए दीज्यौ पियाजी नैं जाय।—लो.गी.
३ देखो 'पतड़ी' (रू.भे.)

पतरूह, पतरोह-सं०स्त्री० [सं० पृथ्वी+रूह] रज, धुलि (अ.मा.)

पतळ—देखो 'पातळ' (रू.भे.)

पतलज-सं०स्त्री० [रा० पत=पति+लज=लज्जित करने वाली] कुटनी, व्यभिचारिणी। उ०—गोली गोरे गात, पर घर दीसे पदमणी। पतलज सागे पात, रती न कीजे राजिया।—किरपाराम

पतळियौ-स०पु० [सं० पत्रल] १ सोने चांदी के आभूषणों पर खुदाई के काम में तार खोदने का एक लोहे का कीला (स्वर्णकार)
२ देखो 'पतळौ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—हां ए गोरी, होठ पतळिया दांत ऊजळिया बोलण की चतराई मिरगा-नैणी।—लो.गी.

पतलून-सं०पु० [अं० पैण्टलून] बिना मियानी का मोटे वस्त्र का पाजामा।

पतलूननुमा-वि० [अं० पैंटलून+सं० नामन्] पतलून से मिलता-जुलता, पतलून के समान।

पतळोड़ौ—देखो 'पतळौ' (अल्पा०, रू.भे.)
(स्त्री० पतळोड़ी)

पतळौ-वि० [सं० पत्रल] (स्त्री० पतळी) १ तरल।
उ०—बिलळी बातां री बांणी बधरावै। पतळी झिण जिण में पांणी पधरावै।—ऊ.का.
२ अशक्त, कमजोर। उ०—१ पीहर पतळां रा सैंणां रा प्यारा। सारक तूटां रा नैणां रा तारा।—ऊ.का.
उ०—२ अपणै आसरिये असलौ दिन ऊगौ। पीहर सासरिये पतळौ पुनि पूगौ।—ऊ.का.
उ०—३ 'खीमसी' रौ 'कंवरसी', 'कंवरसी' रौ 'जैसौ', 'जैसा' रौ 'भूंजौ', 'भूंजा' रौ 'ऊदौ', 'ऊदा' सूं सांखला पतळा पड़िया।
—बां.दा.ख्यात

मुहा०—१ पतळौ दिन—दुर्दिन, दुर्दशाकाल।
२ पतळौ पड़णौ—कमजोर होना, अशक्त होना, निर्धन होना।
३ कृश, क्षीण, दुबला। उ०—१ खटकै खांवंद रै घड़ियां उर खारौ। पतळी कड़ियां री कड़ियां बिन प्यारौ।—ऊ.का.
उ०—२ पतळै सै करवै जवांई जी जिन चढी, पतळा थारी मायां री प्यारी रा होट, सुरग्यांनी जंवाई···।—लो.गी.
यौ०—पतळौ-दूबळौ।
मुहा०—पतळौ पड़णौ—कृश या क्षीण होना।
४ जो स्थूल न हो, मोटा न हो।
५ जिसका घेरा कम हो, संकड़ा, कम चौड़ा।
उ०—हां ए गोरी, पींडी पतळियां एडी उजळियां चालण की चतराई मिरगा नैणी।—लो.गी.
६ वह वस्तु जिसकी मोटाई का दल कम हो, झीना, महीन।
रू०भे०—पातळौ।
अल्पा०—पतळियौ, पतळोड़ौ. पातळड़ौ, पातळियौ।

पतधड़—देखो 'पित्तोड़' (रू.भे.)

पतवरत—१ देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)
२ देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

पतवरता—देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)
उ०—सुता 'दलै' रावळ तणी, पतवरता पत-प्रीत। रांणी राजा परणियौ, 'मिरघावती' 'अजीत'।—रा.रू.

पतवसांन-सं०पु० [सं० प्रत्यवसान] भोजन (अ.मा.)
रू०भे०—पतिवसांण।

पतवांण-सं०स्त्री० [सं० प्रत्यापन] १ जांच।
२ विश्वास।

पतवांणणौ, पतवांणबौ-क्रि०स० [सं० प्रत्यवायनम्] परीक्षा करना, जांचना। उ०—मन री तिस्णा नह मिटै, प्रगट जोइ पतवांण। लाभ थकी बहु लोभ व्हे, है त्रिस्णा हैरांण।—ध.व.ग्रं.
पतवांणणहार, हारौ (हारी), पतवांणणियौ—वि०।
पतवांणिश्रोड़ौ, पतवांणियोड़ौ, पतवांण्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पतवांणीजणौ, पतवांणीजबौ—कर्म वा०।

पतवांणियोड़ौ-भू०का०कृ०—परीक्षा किया हुआ, जांचा हुआ।
(स्त्री० पतवांणियोड़ी)

पतवार-सं०स्त्री० [सं० पत्रबाल या पात्रपाल प्रा० पात्तवाड] नाव का विशेष अंग जिसके द्वारा नाव मोड़ी या घुमाई जाती है।

पतवासत-सं०पु० [सं० वास्तोष्पति] इन्द्र (नां.मा.)

पतव्रत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

पतव्रता—देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

पतसंगम-वि० [सं० पति+संगम] शीतल*।

पतसा—देखो 'बादशाह' (रू.भे.)
उ०—हुवै न गमियां हांण, आइयां ही हरख न ऊपजै। राजा

पतसा राण, मन कांइ परवा मोतिया ।—रायसिंह सांदू

पतसाई—देखो 'बादसाही' (रू.भे.)

उ०—सील सहित सिवराज सितारे, खोस लूट घर खाई । कै ओरंग के कटक काट के, पट्ट करी पतसाई ।—ऊ.का.

पतसाय—देखो 'बादसाह' (रू.भे.)

पतसार-सं०पु० [सं० सार=लोह+पत=पिता] पहाड़ (अ.मा.)

पतसाळ-सं०स्त्री० [सं० पितृ+शाला] १ पैतृक भवन, पीहर ।

उ०—जनवास रह्यो कळ चालजती । सुपियार बळी पतसाळ सती । —पा.प्र.

पतसाह—देखो 'बादसाह' (रू.भे.)

उ०—'सोनग' बीठळदास रो, रोद्रां लग्गो राह । जोत न धारे दुंद डर, चंद्र ज्यूंही पतसाह ।—रा.रू.

पतसाहण-वि०—१ बादशाह का ।

२ देखो 'बादसाह' (रू.भे.)

पतसाही—देखो 'बादसाही' (रू.भे.)

उ०—१ पिड 'सूजो' पाधोरियो, ओरंग' लियो उबार । पतसाही राखी पगे, 'केहर' राजकुमार ।—पदमसिंह री वात

उ०—२ आगे ग्रह वाराह रै, पुहकर सांम गरज्ज । लड़िया पतसाही दळां, झड़ पड़िया कमधज्ज ।—रा.रू.

पतस्वाहा-सं०पु० [सं० स्वाहापति] अग्नि (डि.को.)

पतहीण, पतहीणो-वि० [राज० पत+सं० हीन] १ अविश्वासपात्र । २ मानहीन ।

पतांणणो, पतांणबो-क्रि०स० [सं० प्रत्यवाय:] जांच करना ।

पतांणणहार, हारो (हारी), पतांणणिओ—वि० ।

पतांणिओड़ो, पतांणियोड़ो, पतांण्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पतांणीजणो, पतांणीजबो—कर्म वा० ।

पतांणियोड़ो-भू०का०कृ०—जांचा हुआ, परखा हुआ ।

(स्त्री० पतांणियोड़ी)

पता—देखो 'पिता' (रू.भे.)

उ०—'कर्ना' हरा जुध वार करारी, जुध जीपण अवसांण जता । पता, कहै सैबास पूत नैं, पूत कहै सैवास पता ।—अज्ञात

पताक—देखो 'पताका' (रू.भे.)

उ०—व्रत सदन पीत पताक फरकत, वरण चहु खुख वेख । मध जनकपुर सुर असुर मांनव, पड़ै संभ्रत पेख ।—र.रू.

पताकणी, पताकनी-सं०स्त्री० [सं० पताकिनी] १ फौज, दल, सेना (ह.नां.मा.)

उ०—यह है न पताकणी, तस में असन तुखार । रूपे रढाळी रटण रण, हिय हिम्मत हथियार ।—रेवतसिंह भाटी

२ एक देवी ।

रू०भे०—पताकिनी, प्रताकनी ।

पताका-सं०स्त्री [सं०] १ झण्डा, झण्डी, ध्वजा (अ.मा., ह.नां.मा.)

क्रि०प्र०—उडणी, उडाणी, खड़ी करणी, खोलणी, गाडणी, गिरणी, गिराणी, पड़णी, पाड़णी, फहरणी, फहराणी, रोपणी ।

२ पिंगल के नौ प्रत्ययों में से आठवां जिसके द्वारा किसी निश्चित गुरु-लघु वर्णों के छंद या छंदों का स्थान जाना जाय ।

३ घोड़े के चारजामा का एक भाग जहां पर जल-पात्र लटकाए जाता है ।

रू०भे०—पताक, पताख, पताखा, प्रताका ।

पताकादंड-सं०पु०यौ० [सं०] १ झण्डे का डण्डा ।

२ ध्वज ।

पताकामीन-सं०पु०यौ० [सं० मीन+पताका] कामदेव (अ.मा.) ।

पताकिनी—देखो 'पताकनी' (रू.भे.)

पताकी-वि०—पताकधारी ।

सं०पु० [सं० पताकिन्] १ रथ ।

२ फलित ज्योतिष के अनुसार राशि और ग्रहों का वेध देखने का चक्र विशेष ।

पताख, पताखा—देखो 'पताका' (रू.भे.)

उ०—१ हल हल्लिय लंक गढ़ बंक सो, दस धू पैहल काहल्लिय । हल्लिय पताख गजराज पैं, विजै कटक राघव हल्लिय ।—र.ज.प्र.

उ०—२ घोडा लोह चाव रह्या छै । जीणां री साखां-जनाखां ऊंची नांखजै छै । तंग खोळा कीजै छै । तठा उपरांत पताखां सूं बादळा छोडजै छै ।—रा.सा.सं.

उ०—३ अवर वेद उणि आगळी, दूजै कोठै दाखि । महि पताखा मीढिजै, रुडो लेखो राखि ।—ल.पि.

पताम्ह—देखो 'पितामह' (रू.भे.) (डि.को.)

पताळ—देखो 'पाताळ' (रू.भे.)

उ०—परि किमि करि लागां पगे, पाउ पताळ प्रमांण । स्रमण दिसे वैकुंठ छत, राज निमो रहमांण ।—पी.ग्रं.

पताळखंड—देखो 'पाताळखंड' (रू.भे.)

पताळगारुड़ी—देखो 'पाताळ-गारुडी' (रू.भे.)

पताळदंती—देखो 'पाताळदंती' (रू.भे.)

पताळजंत्र—देखो 'पाताळजंत्र' (रू.भे.)

पताळि—देखो 'पाताळ' (रू.भे.)

उ०—सरग पताळि प्रिथी चो सांम ।—रांमरासो

पताळियो-वि०—पाताल संबंधी, पाताल का ।

सं०पु० [सं० पाताल+रा.प्र. इयो] १ नीचे की ओर झुके हुए लम्बे सींगों वाला बैल ।

२ अथाह पानी का बहुत गहरा कुआ ।

यौ०—पताळियो-वेरो ।

३ देखो 'पाताळ' (अल्पा., रू.भे.)
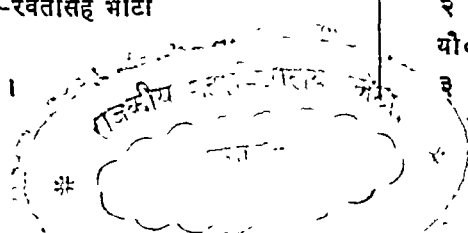
रू०भे०—पाताळियो ।

पतास—देखो 'पतासो' (मह०, रू.भे.)

उ०—१ सहुण पहुण विध्'सण देहुणी, तिणरी किसड़ी रे आस । खिण एक मांही जासी रे बिगड़ी, जिम पांणी मांहे पतास ।
—जयवांणी

उ०—२ घारां, घेवर, ससिवदन, सुहालो, ग्रतवणी, घारडी, पतास फीणी, दहीथरां, तिलसांकली···।—व.स.

पतासड़ो—देखो 'पतासो' (अल्पा.,रू.भे.)

पतासि—देखो 'पतासी' (रू.भे.)

पतासियो—देखो 'पतासो' (अल्पा०, रू.भे.)

पतासी-सं०स्त्री० (?) १ लोहे की चद्दर का तासकनुमा बना हुआ एक वर्तन विशेष जिसके एक तरफ लकड़ी का डण्डा लगा हुआ होता है ।

२ लोहे की एक ही चद्दर की बनी छिछली व कम गहरी कढाई ।

३ बढई का एक औजार विशेष, छोटी रुखाणी ।

४ एक प्रकार की आतिशबाजी जो अनार का छोटा रूप होती है ।

४ देखो 'पतासो' (अल्पा०, रू.भे.)

पतासो-सं०पु० [सं० वातास] १ चीनी की नरम चासनी को टपका कर बनाया हुआ एक पदार्थ विशेष, बताशा । उ०—मिसरी पतासा मखांणा भर नाळेरां री बिकरी घणी ही व्हैण लागी ।—फुलवाड़ी

२ पानी का बुदबुदा ।

३ मैदे का तल कर फुलाया हुआ एक गोलाकार खाद्य पदार्थ जिसमें जलजीरे का पानी भर कर खाते हैं ।

रू०भे०—बतासो ।

अल्पा०—पतासड़ो, पतासियो ।

पतिंग—देखो 'पतंग' (रू.भे.)

उ०—अला पतिंगह चदमां तणी पालो । अला झाझ नांमी, इसा बिरद झालो ।—पी.ग्रं.

पति-सं०पु० [सं०] १ किसी स्त्री का विवाहित पुरुष, भर्ता, खाविंद (ह.नां.मा.)

उ०—१ व्यथा विरहाग वियोग विहाय, सवागण भाग संयोग सुहाय । अनाग्रह मुल्लित आंन उपाय, प्रफुल्लित ज्यूं पतनी पति पाय ।—ऊ.का.

उ०—२ वांणी हर बीसार कर, बंचै आन कुबांण । नार छांड पति आपणो, जार विलग्गी जांण ।—ह.र.

पर्या०—ईस्ट, कंत, करणबिबाह, खामंद, ढोलो, धणी, धव, नाथ, नायक, पनामारू, पीतम, प्रांणेय, प्रांणेस, बर, बरयित, बालम, भरतार, भोगता, मांटी, रमण, विवोढ़, साहिब ।

२ स्वामी, प्रभु, मालिक ।

३. ईश्वर ।

४. शिव ।

५. मर्यादा, इज्जत, प्रतिष्ठा ।

६. विश्वास, प्रतीति, पत ।

उ०—साहिब, तुज्झ सनेहड़इ, प्रीति-तणी पति जाइ । जळ खिण ही जांणइ नहीं, मच्छ मरइ खिण मांइ ।—ढो.मा.

७ देखो 'पत' (रू.भे)

रू०भे०—पत, पती, पत्त, पत्ति, पत्ती ।

पतिआणो, पतिआबो-क्रि०स० [सं० प्रत्ययितम्] विश्वास करना, सच मानना ।

क्रि०अ०—विश्वास होना ।

पतियाणो, पतियाबो, पतियावणो, पतियावबो (रू०भे०)

पतिआयोड़ो-भू०का०कृ०—१ विश्वास किया हुआ, सच माना हुआ ।

२ विश्वास हुवा हुआ ।

(स्त्री० पतिआयोड़ी)

पतिआरो-सं०पु० [सं० प्रत्ययित] विश्वास, भरोसा ।

रू०भे०—पतयारो, पतियारो, पत्यारो ।

मह०—पतियार ।

पतिउत्तर-सं०पु०यो० [सं० उत्तर+पति] कुबेर (नां.मा.)

पतिग—देखो 'पातक' (रू भे)

उ०—वांणारसी तिहां परसजे, तिणि दरसण जाई पतिग न्हास ।
—वी.दे.

पतिघातण, पतिघातणी, पतिघातिण पतिघातिणी-सं०स्त्री० सं० पति-घातिनी] १ स्त्री की हथेली पर होने वाली वह रेखा जो अंगुष्ठ की जड़ के अति नीचे से कनिष्ठका अंगुली तक सीधी जाती है, वैधव्यसूचक हस्तरेखा ।

२ वह स्त्री जिसका ज्योतिष या सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार विधवा हो जाना संभव हो, वैधव्य योग या लक्षण वाली स्त्री ।

३ पति की हत्या करने वाली स्त्री ।

पतिजळ-सं०पु० [सं० जलपति] समुद्र, उदधि (ह.नां.मा.)

पतित-वि० [सं०] १ गिरा हुआ ।

(स्त्री० पतिता)

२ महापापी, अतिपातकी ।

उ०—अनंत पर आरती उतारिस, सोळ प्रकार पूज संभारिस । भाव भगत करती जग-भावन, पतित सरीर करिस मम पावन ।—ह.र.

३ आचार, नीति या धर्म से गिरा हुआ ।

रू०भे०—पतत, पतीत ।

पतितउधारण-स०पु०यो० [सं० पतित+उद्धारण] ईश्वर (नां.मा.)

पतिधरम-सं०पु०यो० [सं० पति-धर्म] पति के प्रति स्त्री का कर्त्तव्य, धर्म ।

पतिवरत—१ देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

२ देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

पतिबरता—देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

उ०—राम न छाडो मैं डरूं, ऊडै धसै बलाय । पतिबरता पति कूं

तजै, सब ही खोटा खाय ।—ह पु.वा.

पतिव्रत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

पतिमराळ-सं०पु०यो० [सं० मराल+पति] ब्रह्मा (नां.मा.)

पतियत-सं०पु० [सं० पति+रा. प्र. यत] स्वामित्व, पतित्व ।

उ०—जिको जीव नूं प्यारो राखै छै तिण नूं सरदारी, देस पतियत सूं कांई कांम छै ।—नो.प्र.

पतिया-सं०स्त्री० [सं० पत्र] देखो 'पत्र' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—तरसत अखियां हुई द्रुम पखियां। जाय मिलो पिव सूं सखियां । यदुनाथजी रे हाथ री ल्यावे कोई पतियां ।

—जयवांणी

पतियाणो, पतियाबो—देखो 'पतिग्राणो, पतिग्राबो' (रू.भे.)

उ०—माया मरे जीव सब, खंड खंड कर खाइ । दादू घट का नास कर, रोयै जग पतियाइ ।—दादूबांणी

पतियारो—देखो 'पतिग्रारो' (रू.भे.)

उ०—वा सिंघ अर चीता नै कह्यो—आप इण नकली राजा रै डर सूं मांस छोड़ दियो, थांनै लाज नीं आवै । अेकर सामनो करनै तो पतियारो लो ।—फुलवाड़ी

पतियावणो, पतियावबो—देखो 'पतिग्राणो, पतिग्राबो' (रू.भे.)

उ०—फूल न सेफ सूल होइ लागी, जागत रैणि बिहावै हो । कासूं कहूं कुण मांनै मेरी, कह्यां न को पतियावै हो ।—मीरां

पतिलोक-सं०पु०यो० [सं०] पतिव्रता स्त्री को प्राप्त होने वाला वह स्वर्ग जहाँ उसका पति रहता हो ।

पतिवती-सं०स्त्री० [सं०] सौभाग्यवती, सधवा ।

पतिवरत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

उ०—१ जळबा काज 'नरूकी' 'जादम', घर ऊठी पतिवरत तणै भ्रम । रट हरि मुखपति ध्यांन रहायो, मंजण कर सिणगार मंगायो ।

—रा.रू.

उ०—२ लाज सीळ सनेह, लाज पतिवरत न मूकै ।—रा.रू.

पतिवरता—देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

उ०—वेस्या सुख भोगै पतिवरता व्याधी । इणसूं ईस्वर री ईस्वरता आधी ।—ऊ.का.

पतिवसांण—देखो 'पतवसांन' (रू.भे.)

पतिव्रत-सं०पु० [सं०] स्त्री की अपने पति में निष्ठा, प्रीति ।

उ०—१ पत सहती पतनो सवै, दीनो वैकुंठो बास । पतिव्रत पाळयो हरि भज्यो, प्रभू निवाजै तास ।—गजउद्धार

उ०—२ हूं कुळ में पापी हुवो, पत नूं दीन्ही पीठ । थिया पतिव्रत पाळ तूं, धिक धिक मत कह धीठ ।—वां.दा.

क्रि०प्र०—धारणो, निभाणो, पाळणो, राखणो ।

रू०भे०—पतबरत, पतव्रत, पतवरत, पतव्रत, दतिवरत, पतिव्रत, पतिवरत, पतिव्रत, पतीवरत, पतीव्रत, पतीवरत, पातिव्रत, प्रतिवत ।

पतिव्रता-सं०स्त्री [सं०] पति में अनन्य अनुराग रखने वाली स्त्री, सती, साध्वी, सच्चरित्रा ।

उ०—अनुकूळ पुरुस, पतिव्रता जोय । सुभ करम करत, कुळध्रम सकोय ।—सू.प्र.

पर्या०—एकपत(ति) पतिप्रेमा, मनसमी, मनस्विनी, सती, साध्वी, सुचरुच, सुचहिय, सुभचरिता ।

रू०भे०—पतबरता, पतव्रता, पतवरता, पतव्रता, पतिबरता, पतिव्रता, पतिवरता, पतीवरता, पतीव्रता ।

पतिसाह—देखो 'बादसाह' (रू.भे.)

उ०—कूरमनाथ नबाब कै, साथ हुवै 'जैसाह' । वावीसी वेली दिया, विदा किया पतिसाह ।—रा.रू.

पतिसाही—देखो 'बादसाही' (रू.भे.)

उ०—कांम फैल मति करो, स्यांमध्रम धरो सिपाही । सराजांम दो सरब, तोपखाना पतिसाही ।—सू.प्र.

पतिस्या—देखो 'बादसाह' (रू.भे.)

पतिहथणापुर-सं०पु०यो० [सं० हस्तिनापुर+पति] युधिष्ठिर

(ह.नां.मा.)

रू०भे०—पतीहतणापुर ।

पती—१ देखो 'पति' (रू.भे.)

उ०—१ सत पाय उपाय डिगाय सती । पद गाय रिझाय छुडाय पती ।—ऊ.का.

उ०—२ नित जय स्यांन निवास, पती गणनायको । लंबोदर हर नंद, सिरोमण लायको ।—वां.दा.

२ देखो 'पत्र' (अल्पा., रू.भे.)

पतीअपार-वि० [सं० अपारपति] वह जिसके अनेक पति हो ।

सं०स्त्री०—१ पृथ्वी ।

२ वेश्या ।

३ लक्ष्मी ।

पतीग्रह-सं०पु० [सं० ग्रहपति] सूर्य (ना.डि.को.)

पतीजणो, पतीजबो-क्रि०स० [सं० प्रत्यय, प्रा० प्रतिज्ज] विश्वास करना, भरोसा करना । उ०—रीता हुवै हजारहां, कळस भरीज भरीज । रीतो हुवै निवांण नह, इण द्रस्टांत पतीज ।—वां.दा.

पतीजियोड़ो-भू०का०कृ०—विश्वास किया हुआ ।

(स्त्री० पतीजियोड़ी)

पतीत—देखो 'पतित' (रू भे.)

उ०—अो पतीत पावन प्रभु, इणि री करो उचार । इणि री नांम कल्यांण छै, अो अरिजण रो यार ।—पी.ग्र.

पतीनागराइ-सं०पु० [सं० पतिनागराज] शेषनाग ।

उ०—पतीनागराई फेण सा चौगणा आगराई पीधा, साहंसीक दीधा पाव पाघड़ै सकाज ।—महादांन महड़

पतीनि—देखो 'पत्नी' (रू.भे.) (ह.नां.)

पतीयासी—सं०स्त्री० [?] सरोवर ?

उ०—जसीया कसीयक छै, आपनै भी उधारै जसीयक छै। पतीयासी को कमळ, गंगासी विमळा, भूमळिया नैनां की भ्रमरता सा वेणां की। —मयाराम दरजी री वात

पतीव्रत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

उ० - मात पिता री मोह, कुटुंब छोडै जिण कारण। धरै पतीव्रत धरम, तेण समझै भवतारण।—ऊ.का.

पतीराखण—देखो 'पतराखण' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पतीवरत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

पतीवरता—देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

उ०—कुळवंति पतीवरता किहड़ी, उधरै पख च्यारि जिसा इहड़ी। धुरिआ घण वाजित्र घाउ घणूं, तिणि वर त्रिआं वधि रूप तणूं। —वचनिका

पतीवसंत-सं०पु०यौ० [सं० वसन्त+पति] वृक्ष (नां.मा.)

पतीव्रत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

उ०—दरसण देख करै नित दांतण, रहै पतीव्रत रंगी। पुन्य खीण तैं करत पयांणौ, धणौ छोड अरधंगी।—ऊ.का.

पतीव्रता—देखो 'पतिव्रता' (रू.भे.)

उ०—पुरस तो वीर है—अर स्त्री पतीव्रता सूरमी सती है। —वी.स.टी.

पतीहत्तणापुर—देखो 'पतिहथणापुर' (रू.भे.)

पतेरि-सं०स्त्री० [सं०पितृव्य+रा.प्र. रि] चाचा की पुत्री, चचेरी बहन।

उ०—छळ कर बळ कर धाइ कर, मारे जिहिं तिहिं फेरि। दादू ताहि न धीजिये, परणे सगी पतेरि।—दादूबांणी

पतोड़, पतोळ—देखो 'पित्तोड़' (रू.भे.)

पतोलड़ी, पतोली—देखो 'पातली' (अल्पा; रू.भे.)

पतौ-सं०पु० [सं० प्रत्यय, प्रा०पत्ताय=ख्याति] १ स्थान सूचित करने वाली वह बात जिससे उस स्थान पर पहुंचा जा सके।

क्रि०प्र०—करणौ, जांणणौ, दैणौ, पूछणौ, बताणौ, लैणौ।

२ चिट्ठी पर लिखी वह इबारत जिससे वह निर्दिस्ट स्थान पर पहुँच जावे।

क्रि०प्र०—पढ़णौ, पढ़ाणौ, लिखणौ, लिखाणा।

३ जानकारी, खबर।

उ०—१ ए इतरा मिनख कठा सूं आवै है, अर कठै जावै है, कांई पतौ ही नहीं लागै।—रातवासौ

उ०—२ छोंया देखनै म्हैं पतौ पाड़ लेवूंला के कुण पहियौ अर कुण पटकियौ।—फुलवाड़ी

क्रि०प्र०—करणौ, दैणौ, भेजणौ, लगाणौ, लागणौ, होणौ।

४ अनुसंधान, खोज, टोह, सुराग।

उ०—म्हनै राज रै दाय पड़ै ज्यूं बाढ़ौ, छूनौ, पण अेकर चोर रौ पतौ लगाय लूं तौ मरियां हूं मुगातर पावूं।—फुलवाड़ी

५. मोटे कागज का गोल या चौकोर खण्ड जो तास के खेल में काम आता है।

६ देखो 'पत्र' (रू.भे.)

७ देखो 'पत्तौ' (रू.भे.)

रू०भे०—पैंतौ।

पत्त—१ देखो 'पत्र' (रू.भे.)

यौ०—पत्तपुप्फ।

२ देखो 'पिता' (रू.भे.)

३ देखो 'पति' (रू.भे.)

उ०—साहां ऊथप थप्पणौ, पहु नरनाहां पत्त। राह दुहूं हद रक्खणौ, 'अभैसाह' छत्रपत्त।—रा.रू.

४ देखो 'पात्र' (रू.भे.)

उ०—जड़धार तार जैकार किद्ध, भरि पत्त रत्त जोगणी पिद्ध। —गु.रू.बं.

पत्तन—१ देखो 'पट्टण' (रू.भे.)

उ०—राज्य हस्ती नइ तुरंगम, हारीउ भंडार रे। नगर पुर पत्तन सवि भला, अग ओलगूं सार रे।—नळदवदंती रास

२ देखो 'पतन' (रू.भे.)

पत्तपुप्फ—देखो 'पत्रपुस्प' (रू.भे.)

पत्तर-सं०पु० [सं० पात्र] १ सन्यासियों का भिक्षा-पात्र, खप्पर, खपड़ा।

उ०—पिंड फूटै रत पड़ै, पियै चौसठि भर पत्तर। सिर तूटां, सूरिमा, सझै संकर गळि चौसर।—सू.प्र.

२ देखो 'पत्र' (रू.भे.)

३ देखो 'पात्र' (रू.भे.)

पत्तळ—देखो 'पातळ' (रू.भे.)

पत्ति, पत्ती—१ देखो 'पति' (रू.भे.)

उ०—हिंदुआं मौड राठौड़ मोटे हुसम, पुहवि पत्ति मांहि परताप प्राझौ।—ध.व.ग्रं.

२ देखो 'पत्र' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—पुरांणा प्रभु वंचांणी पत्ति, जगत्पति तूं ही सब्ब जगत्ति। —ह.र.

पत्तीजणौ, पत्तीजबौ—देखो 'पतीजणौ, पतीजबौ' (रू.भे)

उ०—फूलां फळां निघट्टियां, मेहां घर पड़ियांह। परदेसां का सज्जणां, पत्तौ जूं मिळियांह।—ढो.मा.

पत्तीसुरळियौ-सं०पु० [देशज] स्त्रियों के कान का आभूषण विशेष।

पत्तेणम—देखो 'पत्र' (रू.भे)

उ०—सिसु वै मित्ती वित्ती, उदभौ पौगंड मंह सिंगारौ। ज्यो अंद्धारक सरयं, प्रांमै ढाळ संगि पत्तेणम।—रा रू.

पत्तौ-सं०पु० [सं० पत्रक] १ कान का आभूषण विशेष।

उ०—वीरा म्हारे कानां में पत्ता लाज्यो, म्हारे कुंडळ बैठ घड़ाज्यो,

म्हारे रिमक-झिमक भाती आज्यौ ।—लो.गी.

२ देखो 'पतौ' (रू.भे.)

उ०—१ पत्ता झड़ पत्ता खत्ता खड़खावै, उड़ता ऊमर इव पत्ता नहिं पावै ।—ऊ.का.

उ० –२ चोर पत्तौ पड़ियां म्हैं अठी-उठी उण री हेरौ करूं तौ लारै राजा नै साची वात तौ बता सकै ।—फुलवाड़ी

उ०—३ ऊंट रै दूजा डील रौ तौ कीं पत्तौ नी पण भींडी रै माथा कर वधती वा गाबड़···सगळै फिरगी ।—फुलवाड़ी

पत्थ—१ देखो 'पारथ' (रू.भे.)

उ०—मरोड़े गजां कंध अोडे मरद्दं, रहच्चै जिसा सिंघ मुक्की रवद्दं, । कसीसे गुणं अोसटंकी कबांणं, बळी भीम वत्थ कळी पत्थ बाणं । —वचनिका

२ देखो 'पंथ' (रू.भे.)

उ०—पालउ जीव दया इह धरम पत्थ, भगवंत भाखइ सयत्थ सत्थ । —स.कु.

३ देखो 'पथ्य' (रू.भे.)

उ०—हाथी जनमि किसौं न व्है, वैद दिये किम पत्थ । नर आदर किम नां लहै, उत्तर तिहुं इक अत्थ ।—ध.व.ग्रं.

पत्थकळा—देखो 'पत्थरकळा' (रू.भे.)

पत्थय—१ देखो 'पंथ' (रू.भे.)

उ०—नवाब पुत्र नूरली, अनेक मीर अस्सली । सिताब सामरत्थयं, कियौ कि पार पत्थयं ।—रा.रू.

२ देखो 'पारथ' (रू.भे.)

३ देखो 'पथ्य' (रू.भे.)

पत्थर–सं०पु० [सं० प्रस्तरः, प्रा० पत्थर] पृथ्वी के बड़े स्तर का पिण्ड या खण्ड, पाषाण

उ०—स्रीहर परहर अवर नूं, मत संभरै अयांण । तरु छंडै लागी लता, पत्थर पै गळ जांण ।—ह.र.

पर्या०—असम, उपल, ग्राव, घण, द्रखद, धात, पाखांण, सिळ ।

रू०भे०—पथर, पथ्थर, पाथर ।

यौ०—पत्थरकळा, पत्थरचटी (चट्टी), पत्थरफोड़, पत्थरफोड़ौ, पत्थरबाज, पत्थरबाजी ।

पत्थरकळा–सं०स्त्री०यौ० [सं प्रस्तरकला] एक प्रकार की बन्दूक जिसके घोड़े के पास पत्थर होता था जिस पर घोड़े को चोट पड़ने से बन्दूक छूटती थी ।

रू०भे०—पत्थकळा, पत्थरकळा ।

पत्थरचटी–सं०स्त्री०यौ० [सं० प्रस्तरः+चष्ट] एक प्रकार की औषधि, पाषाणभेद ।

रू०भे०—पथरचटी, पथरचट्टी ।

पत्थरचटौ–वि० [सं० प्रस्तरः+चष्ठ] कंजूस ।

सं०पु०—१ एक प्रकार का सर्प ।

२ एक प्रकार की घास जिसकी पत्तियाँ कोमल होती हैं ।

पत्थरफोड़–सं०पु० [सं० प्रस्तरः+स्फोटनं] १ एक प्रकार का पक्षी, हुद-हुद ।

२ देखो 'पत्थरफोड़ौ' (रू.भे.)

पत्थरफोड़ी–सं०स्त्री [सं० प्रस्तरः+स्फोटनं] पत्थर को तोड़ने वाली, टाँकी ।

रू०भे०—पथरफोड़ी ।

पत्थरफोड़ौ–वि० [सं० प्रस्तरः+स्फोटनम्] (स्त्री० पत्थरफोड़ी) पत्थर तोड़ने का कार्य करने वाला, संगतरास ।

रू०भे०—पत्थरफोड़ ।

पत्थरबाज–वि० [सं० प्रस्तरः+फा०बाज] पत्थर फेंकने वाला ।

पत्थरबाजी–स० स्त्री० [सं०प्रस्तरः+फा० बाजी] पत्थर फेंकने की क्रिया या भाव ।

पत्थरी—देखो 'पथरी' (रू.भे.)

पत्थु—देखो 'पारथ' (रू.भे.)

उ०—तीणं परीक्षा गुर तणी, पूगउ एक जु पत्थु । राहा वेहु तंउ सिखवइ, मच्छइ देविणु हत्थु ।—पं.प.च.

पत्थ्या–सं०स्त्री० [सं० पथ्या] १ गली ।

उ०—वैठस वैरागी त्यागी तन तावै, वेला तेला विधि सहजां वण आवै । पत्थ्या पाटण दै भिक्ष्याटण भाजी, रत्थ्या करपट लै चरपट वत राजी ।—ऊ.का.

२ मार्ग, रास्ता ।

पत्नी–सं०स्त्री० [सं०] विधिवत् विवाहिता स्त्री, अर्धांगिनी (डिं.को.)

पर्या०—अरधांगणी, जोड़ायत, घण, प्यारी, लाडी ।

रू०भे०—पतनी, पतन्नी, पतीनि, पत्नि ।

यौ०—पत्नीदास, पत्नीप्रिय, पत्नीभक्त, पत्नीव्रत ।

पत्नीदास–सं०पु०यौ० [सं०] पत्नी का गुलाम ।

पत्नीप्रिय–सं०पु०यौ० [सं०] १ पत्नी का प्यार । ।

२ वह जिसको पत्नी प्यारी हो ।

पत्नीव्रत—देखो 'पत्नीव्रत' (रू.भे.)

पत्नीभक्त–सं०पु०यौ० [सं०] पत्नी का भक्त ।

पत्नीव्रत–सं०पु०यौ० [सं०] अपनी पत्नी के अलावा किसी अन्य से गमन न करने का संकल्प, प्रण ।

रू०भे०—पतनीबरत, पतनीव्रत, पतनीवरत, पतनीव्रत, पत्नीव्रत ।

पत्यारौ—देखो 'पतियारौ' (रू.भे.)

पत्र–सं०पु० [सं० पत्रम्] १ चिट्ठी, पत्री, खत (अनेका.)

२ लिखा हुआ कागज, दस्तावेज ।

उ०—जरै खीची रौ भय टळियां विस्वास पाइ धीजियां नूं रजपूत करण रै काज मीणां री चाल छोडण रौ पत्र कपट कर लिखांणौ । —वं.भा.

३ पन्ना, पृष्ठ, पेज (अनेका०)
४ किसी वृक्ष का पत्ता, पर्ण।
उ०—गजंद सुंड नाभ कुंड पेट पत्र-पीपळं। नितंब तंब जंघ रंभ केहरी कटी मिळं।—पा.प्र.
पर्या०—छद, छदन, दळ परण, पळाश, पांन।
५ तीर या पक्षी का पंख (अनेका०)
६ चिड़िया, पंखेरू (अनेका०)
७ प्रथम लघु ढगण के भेद का नाम (डिं.को.)
८ सवारी रथ, बहल, ऊंट, घोड़ा आदि।
९ देखो 'पात्र' (रू.भे.)
उ०—१ दीघ तिहुवर चढ पत्र पर गूंद पळ बर धपाड़ै रिण धीर। —प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात
उ०—२ विहंग खळां बह खोण वहाऊं। पत्र भरि भरि काळिका धपाऊं।—सू.प्र.
रू०भे०—पत, पतर, पतौ, पत्त, पत्तर, पतेणम, पत्रियांणि।
अल्पा०—पतरी, पतिया, पती, पति, पाती।

पत्रका—देखो 'पत्रिका' (रू.भे.)
पत्रकार-सं०पु० [सं०] किसी समाचार पत्र का सम्पादक।
पत्रच्छेद-सं०स्त्री० [सं०] पुरुषों की ७२ कलाओं में से एक कला।
पत्रज-सं०पु० [सं०] तेजपात (वृक्ष विशेष)
पत्रती-सं०पु० [सं० पतत्रि] पक्षी, पंखेरू (अ.मा.)
पत्रदूत-सं०पु० [सं० पत्र+दूत] चिट्ठीरसा, डाकिया, पत्रवाहक।
पत्रधार-सं०पु० [सं० पत्र+धार=पक्षी] पक्षी।
उ०—भुष जंतुनखी मख लेन चले, पत्रधार पळच्चर संग हूले। —ला.रा.
पत्रपुगायण-सं०पु०—पत्रवाहक (डिं.को.)
पत्रपुस्प-सं०पु० [सं०] भेंट की मामूली सामग्री।
रू०भे०—पत्त-पुष्फ।
पत्रबाह—देखो 'पत्रवाह' (रू.भे.)
पत्रभंग-सं०पु०यौ० [सं०] सौंदर्य वृद्धि के लिए माथे और गाल पर की जाने वाली चित्रकारी (मारोठ)
पत्ररथ-सं०पु०—पक्षी (अ.मा.)
पत्रवाह-सं०पु० [सं०] संदेशवाहक, पत्रवाहक।
रू०भे०—पत्रबाह।
पत्रांतुळ, पत्रातुळ-सं०पु० [सं० पत्र+तुल्य] नाश, समाप्ति।
उ०—कोस दोय दंताळा दकूळ भूल जत्रां-कत्रां, पत्रांतुळ कीधौ वत्रां बघूल पटेल।—हुकमीचंद खिड़ियौ
पत्राकार-वि० [सं० पत्र+आकार] पत्ते क आकार वाला।
उ०—पियकर परसत पीठ, घणौ सुख पाव ही। कदली पत्राकार, प्रसिद्ध कहावही।—बां.दा.
पत्राळ-सं०पु० [सं० पत्र=पक्ष, आलुच्] १ पक्षी, पंखेरू।
उ०—कई जातरा तत्र पत्राळ कूंजै, गहक्कं सिवा साद सादूळ गूंजै। —मे.म.
२ घने पत्तों वाला वृक्ष।
पत्रावळी-सं०पु० [सं० पत्र+अवली] १ एक प्रकार का हार।
उ०—एकावळी कनकावळी, रत्नावळी वज्रावळी चंद्रावळी। —व.स.
सं०स्त्री०—२ पत्तों की पंक्ति।
३ फायल।
पत्रिका-सं०स्त्री० [सं०] १ छोटा पत्र, खत। उ०—या प्रेम पत्रिका दीज्यौ हो, म्हारा मारू ने जाय कीज्यौ। आंसू टप टप अंगिया टपके, बदन गुलाबी भीज्यौ भीज्यौ।—लो.गी.
यौ०—जन्मपत्रिका, लग्नपत्रिका।
२ कोई सामयिक पत्र या पुस्तक।
३ जन्मपत्रिका।
४ लग्नपत्रिका।
रू०भे०—पत्रका।
पत्रियांणि—देखो 'पत्र' (रू.भे.)
पत्री-सं०स्त्री० [सं० पत्रिन्] १ वृक्ष (अ.मा.)
२ पक्षी (अ.मा.)
३ तीर, बाण। उ०—बळी नूप 'जंत' करां बळिहार। पत्री अण-भीज परां खळ पार।—मे.म.
४ यमराज (नां.मा.)
५ कमल (अनेका०)
[सं० पत्र+रा प्र.छ] ६ चिट्ठी, खत।
७ जन्मपत्रिका।
८ ताड़।
९ पर्वत, पहाड़।
रू०भे०—पत।
पत्रीराज-सं०पु० [सं० पत्री+राज] गरुड़ (नां.मा.)
पत्रीस-सं०पु० [सं० पत्री+ईश] १ कल्पवृक्ष, कल्पतरु (अ.मा.)
२ गरुड़।
पत्रेसुर—देखो 'पित्रेस्वर' (रू.भे.)
उ०—यों वरखा रितु ऊतरी, आवी सरद सुमाय। पत्रेसुर कीजै प्रसन, पोखीजै रिख राय।—रा.रू.
पत्रौ—देखो 'पतड़ौ' (रू.भे.)
पथ-सं०पु० [सं० पाथं] १ जल, पानी (अ.मा., डिं.को.)
२ देखो 'पथ्य' (रू.भे.)
उ०—मीठे को मंडको अळसी को तेल, बो थारी जच्चा रांणी पथ लियौ राज।—लो.गी.
३ देखो 'पारथ' रू.भे.)
उ०—भीम पथ जिम करण भारथ निवहि चाडण नीर।—ल.पिं.

४ देखो 'पंथ' (रू.भे.)

उ०—उज्जैण महाराज वीर विक्रमादित्य राज करै। तहां सकळ प्रजा धरमपथ हालै।—सिंघासण बत्तीसी

रू०भे०—पाथ।

अल्पा०—पाथू।

पथक-सं०पु० [स०] १ रास्ता चलने वाला राहगीर।

२ रास्ता बताने वाला।

पथचारी-सं०पु० [सं० पथचारिन्] राहगीर, पथिक।

पथछाया-सं०पु०यौ० [सं०पथ+राज०छाया] आकाश, आसमान (डिं.को.)

पथदरसक-वि० [सं० पथदर्शक] मार्ग बताने वाला, रास्ता दिखाने वाला।

पथर—देखो 'पत्थर' (रू.भे.)

उ०—अकबर पथर अनेक, के भूपत भेळा किया। हाथ न लागो हेक, पारस रांण 'प्रतापसी'।—दुरसौ आढ़ौ

पथरकळा—देखो 'पत्थरकळा' (रू.भे.)

पथरचटी—देखो 'पत्थरचटी' (रू.भे.)

पथरचटो—देखो 'पत्थरचटो' (रू.भे.)

पथरणउ, पथरणौ-सं०पु० [सं० प्रस्तरणम्] गद्दा, घासिया।

उ०—ऊठो म्हारा मारू बनड़ा करो नी पोढणियो, हिंगळू तो ढोळ्यो बनड़ा सिरख पथरणौ।—लो.गी.

रू०भे०—पतस्रो, पाथरणि, पाथरणौ।

अल्पा०—पथरणियो।

मह०—पाथर।

पथरणौ, पथरबौ—देखो 'पाथरणौ, पाथरबौ' (रू.भे.)

पथरणहार, हारौ (हारी), पथरणियौ—वि०।

पथरिग्रोड़ो, पथरियोड़ो, पथरयोड़ो—भू०का०कृ०।

पथरीजणौ, पथरीजबौ—कर्म०वा०।

पथरफोड़ी—देखो 'पत्थरफोड़ी' (रू.भे.)

पथरफोड़ो—देखो 'पत्थरफोड़ो' (रू.भे.)

पथराणौ, पथराबौ-क्रि०स० [सं० प्रस्तरणम्] फैलाना, बिछाना।

उ०—पछै साहां पैहली सड़ो सबळो बंधायो, हेठे हाडे सोर पथरायो, ऊपर घास पाथरियो।—नैणसी

पथराणहार, हारौ (हारी), पथराणियौ—वि०।

पथरायोड़ो—भू०का०कृ०।

पथराईजणौ, पथराईजबौ—कर्म०वा०।

पथरावणौ, पथरावबौ, पाथरणौ, पाथरबौ, पाथराणौ, पाथराबौ, पाथरावणौ, पाथरावबौ—रू०भे०।

पथरायोड़ो-भू०का०कृ०—फैलाया हुआ, बिछाया हुआ।
(स्त्री० पथरायोड़ी)

पथरावणौ, पथरावबौ—देखो 'पथराणौ, पथराबौ' (रू.भे.)

पथरावणहार, हारौ (हारी), पथरावणियौ—वि०।

पथराविप्रोड़ो, पथरावियोड़ो, पथराव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पथरावीजणौ, पथरावीजबौ।—कर्म०वा०।

पथरावियोड़ो—देखो 'पथरायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पथरावियोड़ी)

पथरी-सं० स्त्री० [सं० प्रस्तरः+रा०प्र०ई] १ पक्षियों के पेट का वह भाग जहां अन्न पचता है।

२ मूत्राशय में छोटे-छोटे पत्थर के टुकड़े हो जाने का रोग।

३ कटोरी के आकार का बना पत्थर का पात्र, कूंडी, पत्थर का प्याला।

४ चकमक पत्थर जिस पर चोट पड़ने से आग उत्पन्न होती है।

उ०—प्रीत पुराणी ना पड़ै, जो सज्जन सूं लग्ग। सो जुग जळ में रहै, पथरी तजै न अग्ग।—अज्ञात

५ पत्थर का वह टुकड़ा जिस पर रगड़ कर औजार तेज करते हैं, सिल्ली।

रू०भे०—पतरी, पत्थरी।

पथरीलौ-वि० [सं० प्रस्तरः, रा. प्र. ईलौ] पत्थरों से युक्त, पथरीला।

यौ०—पथरीलौ-मारग।

पथरोटी—देखो 'पथरोटौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पथरोटौ-सं०पु० [सं० प्रस्तरः+रा०प्र०ओटौ] पत्थर का बना बड़ा पात्र, कूंडा।

अल्पा०—पथरोटी।

पथवारियौ—देखो 'पंथवारियौ' (रू.भे.)

पथवारी—देखो 'पंथवारी' (रू.भे.)

पथारी-सं०स्त्री० [स० प्रस्तरणम्] १ बिछौना, बिस्तर (घास-फूस)

उ०—म्हारा रूंगता ऊभा व्हेग्या, अर म्हूं म्हारी पथारी सूं चार छः हाथ आघो जाय पड़यो।—रातवासो

२ झड़बेरी के सूखे पत्तों को झाड़ लेने के बाद बचे हुए कांटों से युक्त भाग का वह अंश जिसे एक आदमी सिर पर उठा कर लेजा सके।

रू०भे०—पाथारी।

पथि—देखो 'पंथ' (रू.भे.)

उ०—वांण घोरणि विहूं पथि छूटइं, नाद सींगणि तणे गुणि सूंकइं।
—पं.पं.च.

पथिक-सं०पु० [सं०] १ रास्ता चलने वाला राहगीर।

२ रास्ता बताने वाला।

रू०भे०—पई, पथिग्र, पथी, पहिय, पही।

पथिचक्र-सं०पु० [सं०] फलित ज्योतिष का एक चक्र जिससे यात्रा का शुभ या अशुभ फल जाना जाता है।

पथी—देखो 'पथिक' (रू भे.)

पथ्य—१ देखो 'पंथ' (रू भे.)

उ०—पय मिथुला पथ्थं साझ समथ्थं हण धनु हथ्थं पह पांणं। सिय परण सिधायै दुजपत आयै गरव गमाये जग जांणै।—र.ज.प्र.

२ देखो 'पारथ' (रू.भे.)

पथ्थर—देखो 'पत्थर' (रू.भे.)

पथ्य-सं०पु० [सं०] १ हलका और जल्दी पचने वाला आहार जो रोगी के लिए लाभदायक हो।

उ०—पथ्य लिये हुंता, पथ्य गोवळजी आपरै हाथि आरोगाडता।
—द.वि.

२ हित, मंगल, कल्याण।

३ हरं (हड़) का वृक्ष।

रू०भे०—पच, पछ, पत्य, पथ।

पथ्या-सं०स्त्री० [सं०] हरं, हरड़ (नां.मा., ह.नां.मा.)

पद-सं०पु० [सं०] १ पैर, चरण, पांव।

उ०—१ पह तूं सदा भेख पद पूजै, दहव बिनां उपदेस न दूजै।
—सू.प्र.

उ०—२ अनंग न भंग उमंग इलोळ, हरी-पद संगम गंग हिलोळ।
—ऊ.का.

२ योग्यता के अनुसार नियत स्थान, दर्जा।

उ०—मंडळ मांह वसाय अग, थयो कळंकी चंद। पायो सिह मयंद पद, हण हाथळ अगबंद।—बां.दा.

क्रि०प्र०—खोणौ, देणौ, पाणौ, मिळणौ, लेणौ।

३ ईश्वरभक्ति संबंधी गीत, भजन। उ०—राधिका क्रस्ण रास, व्रंदाबन ब्रजविलास। गिनका गज अजामेळ, गीध पद गाता।
—ऊ.का.

क्रि०प्र०—गाणौ, पढणौ, बोलणौ।

४ छंद श्लोकादि का चतुर्थांश, छंद का एक चरण।

उ०—सात मत्त पद प्रत पड़ै, सुगति छंद सो थाय। आठ मत्त अंतह सगण, पगण छंद कहवाय।—र.ज.प्र.

५ व्यवसाय, काम।

६ पैर का चिन्ह या निशान।

यौ०—पदचिन्ह।

७ व्याकरण में आया हुआ वह वाक्यांश या वाक्यखंड जिसका कोई अर्थ हो।

यौ०—पदच्छेद, पदव्याख्या, पदपरिचय।

८ उपाधि, पदवी। उ०—उदर भांमणी अवतरयौ, पद संन्यासी पाय। चतुर नरां चित में चढ्यौ, दयानंद गुरु दाय।—ऊ.का.

९ वह स्थान जिस पर रह कर कोई विशिष्ट कार्य करता हो, ओहदा, स्थान।

१० मोक्ष, निर्वाण।

क्रि०प्र०—पाणौ, मिळणौ।

११ पुराणानुसार दान के रूप में दी जाने वाली वस्तु। यथा—जूते, छाता, कपड़े, बर्तन, आसन आदि पद-दान।

१२ कोमल, मुलायम* (डिं.को.)

१३ देखो 'पद्य' (रू.भे.)

रू०भे०—पय, पां, पांय, पांव, पाअ, पाइ, पाऊ, पाए, पाद, पावं, पाव, पाहि।

अल्पा०—पांवळियौ, पावळौ।

पदआलय-सं०पु० [सं० पदआश्रय] घर, गृह (अ.मा.)

पदक-सं०पु० [सं०] किसी धातु का बना सिक्कानुमा गोल अथवा चौकोर टुकड़ा जो किसी व्यक्ति को विशेष अच्छा या अद्भुत कार्य करने के उपलक्ष में दिया जाता है। तुकमा, मेडल।

यौ०—रजतपदक, स्वरणपदक।

रू०भे०—पदग, पदग्ग।

पदकझरणा-सं०पु० [सं० पदक+राज० झरणौ] हीरा (अ.मा.)

पदकड़ी-सं०स्त्री० [देशज] एक आभूषण। उ०—मोती तणु हार, झूमणां तणु झमकार. कंठि कनकमय, पदकड़ी।—व.स.

पदकणौ, पदकबौ—देखो 'फुदकणौ, फुदकबौ' (रू.भे.)

पदकणहार, हारौ (हारी), पदकणियौ—वि०।

पदकिओड़ौ, पदकियोड़ौ, पदक्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पदकीजणौ, पदकीजबौ—भाव वा०।

पदकियोड़ौ—देखो 'फुदकियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पदकियोड़ी)

पदकुळक, पदकूळक—देखो 'पादाकुळक' (रू.भे.)

पदग, पदग्ग-सं०पु० [सं०पदग, पदाग्र] १ पैदल चलने वाला, प्यादा।

२ पैर का अगला भाग। उ०—विसाळ भाळ कंध रा, रसाळ छति पुरत्थरै। रहै पदग्ग रेख तें, सुखेद ते अरी डरै।—ऊ.का.

३ देखो 'पदक' (रू.भे.)

रू०भे०—पद।

पदचर-सं०पु०यौ० [सं०] पैदल चलने वाला, प्यादा।

पदचांपड़ी-सं०स्त्री० [सं० पद+राज० चांपड़ी] पगचम्पी। उ०—खाज खुरच खंखेडा थारी, पटुता सूं पदचांपड़ो। मरणै परणै विसर न करा, ऊपर देव न आपड़ी।—ऊदसदेव

पदचार, पदचारी-सं०पु० [सं० पदचारिन्] पैदल चलने वाला व्यक्ति।

उ०—रहल्यां पदचार सवार रथां, हथियार छतीस प्रकार हुआं।
—मे.म.

रू०भे०—पादचारी।

पदचिह्न-सं०पु० [सं०] १ पूजन आदि कार्यों के लिए पत्थर या धातु पर खोदे गए किसी देवता के चरणों के चिन्ह।

२ चलते समय पैरों के जमीन पर बने चिन्ह या निशान।

पदठवणउ, पदठवणौ-सं०पु० [सं० पद+स्थापनम्] पांवड़ा।

उ०—१ आचरिज पद थापियउ, सइं हथि जिणचंद सूर हो पूजजी। पदठवणउ क्रमचंद कियउ, अकबर साहि हजूर हो पूजजी।—स.कु.

उ०—२ पारिख साह भला पुण्यात्मा, सांमीदास सूरदासौ जी। पदठवणौ कीधो मन प्रेम सूं, वित्त खरच्या सुविलासौ जी।
—ध.व.ग्रं.

पदतळ-सं०पु० [सं० पद+तल] पैर का तलुवा।
रू०भे०—पयतळि, पादतळ।

पदत्याग-सं०पु० [सं०] किसी पद को छोड़ने की क्रिया।

पदत्र-सं०पु० [सं०] उपानह, जूती। उ०—तस पदत्र बिच आय छिप्यौ। उहि फन सु गरळमय पय।—वं.भा.

पदत्रभंग-सं०पु० [सं०] श्रीकृष्ण (अ.मा.)

पदद्रव-सं०पु० [सं० पदद्रवः] भागना क्रिया, पलायन।
उ०—जठै घणां रा कचरघांण में आपरा अनीक रा पदद्रव रा प्रवाह में पड़ियौ नवाब कासिमखांन १ समेत कुमार दारासाह ४०/१।२ भी ठहरण न पायौ।—वं.भा.

पदपलव, पदपल्लव-सं०पु०यौ० [सं० पदपल्लव] पैर की अंगुली।
उ०—१ ऊपरि पदपलव पुनरभव ओपति, निमळ कमळ दळ ऊपरि नीर। तेज कि रतन कि तार कि तारा, हरिहंस सावक ससिहर हीर।—वेलि
उ०—२ बणियां अणवट बोछिया, पदपल्लव छवि पूर। की कोमळता रंग कहां, चंपकळी चकचूर।—बां.दा.

पदपीठ-सं०स्त्री० [सं० पदपीठम्] पादरक्षिका, जूती (अ.मा.)

पदबंध—सं०पु० [सं०] १ वह गद्य जिसमें अनुप्रासों और समासों की अधिकता हो। २ पद्यबन्ध।

पदबी—देखो 'पदवी' (रू.भे.)

पदम-सं०पु० [सं० पद्म] (स्त्री० पदमण, पदमणी) १ कमल (डि.को.)
उ०—वदन पदम सम, कनक पदम क्रम। पदम-पांणि उपम, हुई पाय जु।—स.कु.
२ विष्णु का एक आयुध। उ०—चतुरभुज रूपं अधिक अनूपं विरद भक्तवछळंदा है। संख चक्र विराजै सोभा छाजै, गदा पदम भळकंदा है।—गजउद्धार
३ सामुद्रिक शास्त्रानुसार पैर में बना कमल का चिन्ह।
उ०—राजा वीर विक्रमादित्य आयौ छै। पद में पदम रौ चिन्ह छै।—पंचदंडी री वारता
४ नव-निधियों में से एक निधि का नाम (नां.मा.)।
यौ०—पदमनिधि।
५ गले में पहिनने का एक प्रकार का गहना।
६ हाथी के मस्तक व सूंड पर बनाए जाने वाले चित्र।
७ पदम या पदमाख वृक्ष।
८ सर्प के सिर पर बना चिन्ह।
९ बिल्ली के पंजे पर बना चिन्ह।
१० वास्तु विद्या के अनुसार एक ही कुरसी पर बना आठ हाथ का चौड़ा घर।
११ एक प्रकार के नाग की जाति, इस जाति का नाग।
१२ गणित में सोलहवें स्थान की संख्या।
उ०—दळ चढ़े पूर सांमंद्र दुति, कमंध दरगह कांमरा। किर मिळै पदम अढ्ढार कपि, रांवण मारण रांम रा।—सू.प्र.
१३ योग के अनुसार शरीर के भीतरी भाग का एक कल्पित कमल।
१४ सोलह प्रकार के रतिबन्धों में से एक।
१५ बलदेव, दाऊ।
१६ पुराणानुसार एक नरक का नाम।
१७ पुराणानुसार जम्बू द्वीप के दक्षिण पश्चिम का एक देश।
१८ जैनों के अनुसार भारत का नवां चक्रवर्ती।
१९ एक पुराण का नाम।
२० जैनों के एक तीर्थंकर, पद्मप्रभु।
उ०—*रिसभ, अजित, संभव नमूं, अभिनंदन अभिरांम। सुमति, पदम,* सुपासजी, पहुंता सिवपुर ठांम।—जयवांणी
२१ लखपत पिंगल के अनुसार दो सगण, एक जगण, एक भगण, एक रगण, एक सगण और अन्त में ह्रस्व वर्ण वाला वर्ण वृत्त।
२२ घोड़े के कंधे और बगल की भँवरी (शुभ) (शा हो.)
२३ आभूषणों पर खुदाई किया गया एक प्रकार का चिन्ह।
२४ वार व नक्षत्र संबंधी २८ योगों में से चौदहवां योग (ज्योतिष)
२५ हाथी, गज।
रू०भे०—पद्दम, पदमु, पदुम, पदम्म, पद्म।

पदमअंजणी, पदमअंजनी-सं०पु० [?] एक प्रकार का घोड़ा जिसके दाहिने अथवा बायें पसवाड़े पर लाल रंग का धब्बा होता है, यह अशुभ होता है।

पदमजूण, पदमजोणी—देखो 'पदमजोनी' (रू.भे)

पदमण—१ देखो 'पदमणी' (रू.भे.)
उ०—१ पदमण रिख असमांन पहूंती, पंखां विनां जिहांन पठीजै। केवट कुळ प्रतपाळ दया कर, चरण पखाळ जिहाज चढीजै।—र.ज.प्र.
उ०—२ एकै पदमण वासतै, सींघल गयौ 'रतन्न'। ऊमरकोट न आवियौ, मतौ कियौ की मन्न।—बां.दा.
उ०—३ अलियळ सहज सुवास वस, रहै निकट दिन रात। हिमकर वदनी हंसगत, जुवती पदमण जात।—बां.दा.
उ०—४ काळी कांणी कोभी कांमरा, अपणी परणी आछी। अवछर आभ प्रवर अरधंगा, पदमण धरिये पाछी।—ऊ का.

पदमणपती—देखो 'पदमणीपति' (रू.भे.)

पदमणि—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)
उ०—पदमणि पूंगळ री ऊगळ गळ आगै, लजा हुंजादे गंजाग्रह लागै।—ऊ का.

पदमणिपति—देखो 'पदमणीपति' (रू.भे.) (अ.मा.)

पदमणिय—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)
उ०—व्रति चलति सुगति दुति अमित विद्ध, पदमणिय हंस किरि गुरु प्रसिद्ध।—रा.रू.

पदमणी-सं०स्त्री० [सं० पद्मिनी] १ कोक शास्त्र के अनुसार स्त्रियों की चार जातियों में से सर्वश्रेष्ठ जाति की स्त्री।
उ०—१ सवाग भाग सुंदरी, अनुराग लाग खांतरी, हसतिणि, चितरणी, पदमणी घणी जणी वणी ठणी हाथां रूमाल बीड़ां सूं भरिया।—पनां वीरमदे री वात
उ०—२ गोली गोरे गात, पर घर दीसै पदमणी। पतलज सागे पात, रती न कीजै राजिया।—किरपारांम
२ चित्तौड़ के राव रत्नसिंह की रानी, पद्मिनी।
३ कमलिनी या छोटा कमल।
४ कमल से युक्त जलाशय।
५ हथिनी।
६ स्त्री। उ०—एक नहीं अपधर इसी, कैसा हम पतिसाह। याक एती पदमणी, देखत उपजै दाह।—पं.पं.चौ.
७ गाथा छंद का एक भेद जिसमें सकार नहीं आता।
८ कुमुदनी।
रू०भे०—पदमण, पदमणि, पदमणिय, पदमिण, पदमिणि, पदमिणी, पदमिनि, पदमी, पदम्मिणी, पदवन, पद्मणी, पद्मनी, पद्मिनी।

पदमणीपति, पदमणीपती-सं०पु० [सं० पद्मिनीपति] १ सूर्य, भानु।
रू०भे०—पदमणपति, पदमणिपति।
२ चन्द्रमा (नां.मा.)।

पदमणो-वि० [?] चतुर, बुद्धिमान। उ०—हूकी लेतां हाथ में, चेतो गयो चुळाय। पड़ै धमांधम पदमणां, अधमाधम अकुळाय।
—ऊ.का.

पदमधर-सं०पु० [सं० पद्म-धर] १ ईश्वर (नां.मा.)
२ विष्णु (डिं.को.)

पदमनाग—देखो 'पदम-११'।
(स्त्री० पदमनागणी)

पदमनाभ-सं०पु० [सं० पद्मनाभः] १ श्रीकृष्ण (अ.मा.)
२ ईश्वर, परमेश्वर (नां.मा.)
३ विष्णु।
रू०भे०—पदमनाभ, पद्मनाभ, पद्मनाभि।
३ ब्रह्मा (नां.मा.)
४ जैन मतानुसार भविष्यत् काल के प्रथम तीर्थंकर का नाम।
—(स.कु.)

पदमबंध-सं०पु० [सं० पद्म-बंधु] सूर्य, भानु (नां.मा.)

पदमभू—देखो 'पद्मभू' (रू.भे.)

पदमराग-सं०पु० [सं० पद्मराग] मानिक या लाल नामक रत्न।
उ०—करि ईंट नीलमणि कादो कुंदण, थंभ लाल पट पांच थिर। मंदिर गोख सु पदमरागमै, सिखरि सिखि रमै मंदिर-सिर।—वेलि
यौ०—पदमरागमणि, पदमरागमिणि।
रू०भे०—पद्मराग।

पदमरागपटळ-सं०पु० [सं० पद्मराग+पटल] एक प्रकार का वस्त्र।
उ०—मोती तणा झूंबखा उंबाव्या मांहि पदमराग पटळ लंबाव्या।
—व.स.

पदमरागमणि, पदमरागमिणि-सं० पु० [सं० पद्मराजमणि] पद्मराग जाति की मणि, लाल मणि।

पदमसिला-सं०स्त्री० [सं० पद्मसिल] कुए के ऊपरी भाग पर लम्बाई की ओर रखी जाने वाली वह पत्थर की पट्टी जो रहँट की लाट को टिकाए रखने वाले पत्थर पर दबाव का काम करती है।

पदमहत, पदमहथ-सं०पु० [सं० पद्महस्त] सूर्य।
उ०—भलो रांम 'सगरांण' इम, अघडची मुख भणै। दुजडहत दस सहंस वोल दीधो। पदमहथ मयंक चो ग्रहण न्है अधपहर, कलम चो ग्रहण दिन तीस कीधो।—महारांणा संग्रांमसिंह रो गीत

पदमा-सं०स्त्री० [सं० पद्मा] १ लक्ष्मी (डिं.को.)
२ नव निधियों में से एक निधि (ह.नां.मा)
३ रुक्मिणी। उ०—लोकमाता, सिंधुसुता स्री लिखमी, पदमा, पदमालया, पदमा प्रभा। अवर ग्रहे अस्थिरा इंदिरा रांमा हरिवल्लभा रमा।—वेलि
रू०भे०—पद्मा, पम्हा।

पदमाएकादसी—देखो 'पद्माएकादसी' (रू.भे.)

पदमाक—देखो 'पदमाक्ष' (रू.भे.)

पदमाकर—देखो 'पद्माकर' (रू.भे.)

पदमाक्ष-सं०पु० [सं०] १ फलित ज्योतिष के २८ योगों में से एक योग (ज्योतिष)
२ पद्मकाष्ठ नामक एक वृक्ष (अमरत)
३ कमलगट्टा, कमल के बीज (अमरत)
४ विष्णु।
रू०भे०—पदमाक, पदमाख।

पदमाख—देखो 'पदमाक्ष' (रू.भे.)
उ०—पीपळ पाडळ पीपळी, पीठवनी पदमाख। पारिजात पीलूवड', पीपरि पस्ता पाख।—मा.कां.प्र.

पदमापित-सं०पु० [सं० पद्मापिता] समुद्र (अ.मा.)

पदमालय—देखो 'पद्मालय' (रू.भे., अ.मा.)

पदमालया—देखो 'पद्मालया' (रू.भे.)
उ०—लोकमाता सिंधुसुता स्री लिखमी, पदमा पदमालया प्रभा। अवर ग्रहे अस्थिरा इंदिरा, रांमा हरिवल्लभा रमा।—वेलि

पदमालयापित-सं०पु० [सं० पद्मालयापिता] समुद्र।

पदमावती-सं०स्त्री० [सं० पद्मावती] १ ३२ मात्राओं वाला एक छंद जिसमें १०, ८, ६ और ८ पर यति होती है।
२ लक्ष्मी। उ०—वेद च्यारह ऐनै ब्रह्म बाखांणियो, जडाधर सरीखे प्रमेसर जाणियो। पेख पारवती अनै पदमावती, अनंत रै ऊपरा

उतारो आरती। पी.ग्रं.

३ चित्तौड़ के राव रत्नसिंह की रानी, पद्मिनी।

४ पुराणानुसार एक अप्सरा का नाम।

५ उज्जयिनी का एक प्राचीन नाम।

६ स्त्रियों की चार जातियों में से सर्वोत्तम जाति (कोक शास्त्र)

उ०—स्त्री की केती जाति, कहि न राघव सुविचारी। रूपवंत पतिव्रता, मूंघ साहइ सुपियारी। हस्तनी चित्रणी कर संखिनी, पुहवी बडी पदमावती। इम भणइ विप्र साचउ वयण, आलमसाह अलावदी। —प.च.चौ.

रू०भे०—पउमावइ, पद्मावती।

पदमासण—देखो 'पद्मासन' (रू.भे.)

उ०—पदमासण आसण जोग पूर। क्रोध में हुतासण तप करूर। —वि.सं.

पदमिण, पदमिणि पदमिणी, पदमिनि, पदमी—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)

उ०—१ पूछयां थी वादळ कहै, मेळि करण रै मेळि रे भाई। जाइ कहउ हुं आवयउ, पदमिणि तुम नइ गेलि रे भाई।—प.च.चौ.

उ०—२ जीव बिना जिम देहड़ी, वारि बिना जिमि मच्छि। पुरुस बिना तिम पदमिनी, साचूं संभलि वच्छि।—मा.कां.प्र.

उ०—३ रूप अनूपमा रंभ सम, उवा पदमी कहै याह। बार बार विह्वल थको, जपै आलिमसाह।—प.च.चौ.

पदमूळ-सं०पु० [सं० पदमूल] पैर का तलुआ।

पदम्भ—देखो 'पदम' (रू.भे.)

उ०—१ अहीखंभ जोधा पदम्भ अठारां। मिळै थाट नीसांण वाजै अठारां।—सू.प्र.

उ०—२ उभै कर दूण आवद्ध असंख। सारंग पदम्भ गदा चक्र संख। —ह.र.

उ०—३ सठिक अकूंण कर चहन सम्म। पै उरघ रेख जळहळ पदम्म।—सू.प्र.

पदम्मिणी—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)

पदम्मी-सं०पु० [सं० पद्मिन्] (स्त्री० पदमण, पदमणी) हाथी (डिं.को.)

पदर-सं०पु० [देशज] ड्योढीदारों के बैठने का स्थान।

पदराणौ, पदरावौ—देखो 'पधराणौ, पधरावौ' (रू.भे.)

पदराणहार, हारौ (हारी), पदराणियौ—वि०।

पदरायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पदराईजणौ, पदराईजबौ—कर्म वा०।

पदरायोड़ौ—देखो 'पधरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पदरायोड़ी)

पदरावणी—देखो 'पधरावणी' (रू.भे.)

पदरावणौ, पदरावबौ—देखो 'पधराणौ, पधरावौ' (रू.भे.)

पदरावणहार, हारौ (हारी), पदरावणियौ—वि०।

पदराविओड़ौ, पदरावियोड़ौ, पदराव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पदरावीजणौ, पदरावीजबौ—कर्म०वा०।

पदरावियोड़ौ—देखो 'पधरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पदरावियोड़ी)

पदरी—देखो 'पद्धरी' (रू.भे.)

पदवन—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)

उ०—अला अनरज तूं हीज भरतार ओखा, अला सहज पदवंन रा तूं ही सरीखा।—पी.ग्रं.

पदवी-सं०स्त्री० [सं०] १ मार्ग, रास्ता (डिं.को.)

२ पद, उपाधि।

उ०—गयो ग्राह वैकुंठ कूं, पूरण पदवी पाय।—गजउद्धार

रू०भे०—पद्वी।

पदांसुक-सं०पु० सं० पदांशुक] वस्त्र विशेष।

उ०—विद्यापुरीआं, देकापाटकीआं, कस्मीरीआं, घूमराई, खीरोदक, पदांसुक, चीनांसुक, खांडकी।—व.स.

पदाकांतो-सं०पु० [सं० पदक्रान्त] पदाघात, ठोकर?

उ०—पादाकांतो पदकांतो बिन पावै, आरघावरती जन अन बिन अकुळावै।—ऊ.का.

पदाघात-सं०पु० [सं०] पांव से किया गया आघात, ठोकर।

पदाणौ, पदावौ—देखो 'पिदाणौ, पिदावौ' (रू.भे.)

पदाणहार, हारौ (हारी), पदाणियौ—वि०।

पदायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पदाईजणौ, पदाईजबौ—कर्म०वा०।

पदात, पदाति-स०पु० [सं० पदातः पदातिः] १ पैदल, प्यादा।

उ०—राजति अति एण पदाति कुंजरथ, हंसमाळ बंधि लास हय। ढालि खजूरि पूठि ढळकावै, गिरिवर सिणगारिया गय।—वेलि

२ छंद शास्त्र में ठगण के चतुर्थ भेद का नाम। (डिं.को.)

रू०भे०—पदायत।

पदाधिकारी-सं०पु० [सं०] किसी पद पर रह कर अधिकारपूर्वक कार्य करने वाला व्यक्ति, ओहदेदार।

पदानुग-सं०पु० [सं०] अनुसरण करने वाला, अनुयायी।

पदायत—देखो 'पदात' (रू.भे.)

उ०—राजा मंत्री गज तुरी, ऊट पदायत दीठ। तिणकारणि मूंया वढ़ी, चढ़ी चउसठि पीठ।—मा.कां.प्र.

पदायोड़ौ—देखो 'पिदायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पदायोड़ी)

पदारथ-सं०पु० [सं० पदार्थ] १ शास्त्रानुसार मोक्ष के चार साधन—अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष में से एक।

उ०—जगदंबा आरुढ़ जस, उदा करी उपचार। काळी गुण भुजियां करग, चढ़ै पदारथ च्यार।—अ.मा.

२ चीज, वस्तु।

उ०—नये-नये पदारथांन, खांन खोजते नहीं। गुमांन मेटनें गुनी, प्रमांन सोझते नहीं।—ऊ.का.

पदारथवाद-सं०पु० [सं० पदार्थवाद] वह सिद्धांत जिसके अनुसार ईश्वर की सत्ता को न मान कर भौतिक पदार्थों को ही सब कुछ माना जावे।

पदारथवादी-सं०पु०यौ० [सं० पदार्थवादी] पदार्थवाद को मानने वाला व्यक्ति।

पदारथविज्ञान-सं०पु०यौ० [सं० पदार्थविज्ञान] पदार्थ-विज्ञान शास्त्र, भौतिकविज्ञान।

पदारथविद्या-सं०स्त्री०यौ० [सं० पदार्थविद्या] पदार्थों का ज्ञान कराने वाली विद्या।

पदारपण-सं०पु० [सं० पदार्पण] किसी स्थान पर आने या पैर रखने की क्रिया।

क्रि० प्र०—करणौ, कराणौ, होणौ।

पदारो-स०पु० [सं० पदधारणम्] शरीर में किसी देव विशेष की उपस्थिति अनुभव कर, उसके अनुसार अंग संचालन करने की क्रिया।

क्रि०प्र०—आणौ।

रू०भे०—पधारौ।

पदावळी-सं०स्त्री० [सं० पदावली] पद्यों का संग्रह।

पदुम—देखो 'पदम' (रू.भे.)

पदोड़-सं०स्त्री० [देशज] १ एक प्रकार की बकरी (शेखावाटी)

२ देखो 'पदोड़ो' (मह०, रू.भे.)

पदोड़ो-सं०पु०—अधिक पादने वाला।

मह०—पदोड़।

पदोदक-सं०पु० [सं०] चरणामृत।

रू०भे०—पादोदक।

पद्मनाभ—देखो 'पदमनाभ' (रू.भे.)

उ०—एकै खिण मांय मांजै घर आभ। निपावै एकण पद्मनाभ। —ह.र.

पद्वी—देखो 'पदवी' (रू.भे.)

पद्धड़ी देखो 'पद्धरी' (रू.भे.)

पद्धटिका—देखो 'पज्झटिका' (रू.भे.)

पद्धति, पद्धती-सं०स्त्री० [सं० पद्धति] १ मार्ग, रास्ता।

उ०—अर दाहिमा रौ तीत्र लागतां ही प्रांमार सारंग री प्रांण कढण पैंठण री पद्धति सूं डुळियौ।—वं.भा.

२ रीति, रिवाज, परम्परा।

३ कार्यप्रणाली, ढंग।

रू०भे०—पधिति।

पद्धर—१ देखो 'पाधरौ' (मह०, रू.भे.)

उ०—आईवेळ 'अभौ' नृप आयौ, करि सर पद्धर कूच करायौ। —रा.रू.

२ देखो 'पाधर' (रू.भे.)

पद्धरपति, पद्धरपती—देखो 'पाधरपतसा' (रू.भे.)

उ०—बिंटि सनाहनि अंट उर, सकल जुद्ध तन सज्जि। चढे वीर पद्धरपती, पूर नगारति वज्जि।—ला.रा.

पद्धरय—देखो 'पाधर' (रू.भे.)

उ०—गिर भंगरयं। थिय पद्धरयं। पुळि जंगमयं। रुळि कंजमयं। —गु.रू.बं.

पद्धरि, पद्धरी-सं०पु० [?] १ सोलह मात्राओं व अंत में जगण वाला मात्रिक छंद।

२ देखो 'पाधरी' (रू.भे.)

रू०भे०—पदरी, पधड़ी, पधरी, पाधड़ी, पाधरी।

पद्धरौ—देखो 'पाधरौ' (रू.भे.)

उ०—परमेसर पद्धरै, हुवै आनद घणांई। परमेसर पद्धरै, कदै नह चिंता काई। परमेसर पद्धरै, दुक्ख त्रिस भूख न आवै। परमेसर पद्धरै, आठ सिध नव निध पावै। कवि 'जगा' राखिद्रिढ़ जीव करि, मिटै न लेख करम्म रौ। ग्रह दीह सवै ही पद्धरै, ज्यां परमेसर पद्धरौ।—जग्गौ खिड़ियौ

(स्त्री० पद्धरी)

पद्म—देखो 'पदम' (रू.भे.)

उ०—साचउं कहु सुलक्षणी! छांडइ नहीं अे छद्म। संक न आणइ सुंदरी, पांच फणा सिरि पद्म।—मा.कां.प्र.

पद्मक्षेत्र-सं०पु०यौ० [सं०] उड़ीसा प्रांत के एक तीर्थ का नाम।

पद्मज-सं०पु० [सं०] ब्रह्मा।

पद्मजूण, पद्मजोण, पद्मजोणी, पद्मजोनि-सं०पु० [सं० पद्मयोनि]

१ ब्रह्मा (डि.को.)

२ बुद्ध का एक नाम।

रू०भे०—पदमजूण, पदमजोण।

पद्मणी—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)

उ०—१ अनेक पद्मणी अवास, रूप भोमि रच्च ए। अनेक राग रंग ओप, नृत्तकार नच्च ए।—सू.प्र.

उ०—२ देवी खेचरी भूचरी भद्रखेमा। देवो पद्मणी सोभणी कळह-प्रेमा।—देवि.

उ०—३ व्यास कहै सुर नर मन मोहनी रे, अदभुत रूप अनेक। है चित्तहरणी तुरणी महल में रे, पिण नहीं पद्मणी एक। —प.च.चौ.

पद्मनाभ, पद्मनाभि—देखो 'पदमनाभ' (रू.भे.) (अ.मा.)

पद्मनिधि-सं०स्त्री०यौ० [सं०] नव-निधियों में से एक।

रू०भे०—पदमनिधि।

पद्मनी—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)

उ०—१ विण तरुअर जिमि वेलड़ी, कंठ विना जिम माळ। पुरुस विहूणी पद्मनी, किणि परि ठेलिसि काळ।—मा.कां.प्र.

उ०—२ काका भत्रीजा बिहुं, गोरउ अरु बादल्ल । पद्मनी काजि भारथ कीउ, हडमत जिम सर भल्ल ।—प.च.चौ.

पदमप्रभ, पद्मप्रभु–सं०पु०यौ० [सं० पद्म+प्रभु] वर्तमान काल के छठे जैन तीर्थंकर (स.कु.)

पद्मबंध–सं०पु०यौ० [सं०] कमल का आकार बनाने वाले अक्षरों का एक चित्र काव्य ।

पद्मभास–सं०पु० [सं०] १ विष्णु । २ शिव ।

पद्मभू–सं०पु० [सं०] ब्रह्मा ।

रू०भे०—पदमभू ।

पद्ममुद्रा–सं०स्त्री० [सं०] दोनों हथेलियों को सामने करके उंगलियां नीचे कर अंगूठे मिलाने की एक मुद्रा (तांत्रिक)

पद्मराग—देखो 'पदमराग' (रू.भे.)

पद्मरेखा–सं०स्त्री०यौ० [सं०] भाग्यवान के लक्षण की एक हथेली की रेखा जो प्राकृतिक होती है ।

पद्मलांछण–सं०पु०यौ० [सं० पद्मलांछन] १ ब्रह्मा । २ कुबेर। ३ सूर्य ।

पद्मलांछणा–सं०स्त्री० [सं० पद्मलांछना] १ सरस्वती का एक नाम । २ तारा का एक नाम ।

पद्मलेस्या–सं०स्त्री० [सं० पद्मलेश्या] जैन मतानुसार छः लेश्याओं में से पांचवीं लेश्या जिसकी स्थिति में पहुँच कर मनुष्य अल्प क्रोध वाला, अल्प मान वाला, अल्प माया वाला, अल्प लोभ वाला, शान्त चित्त वाला, अपनी आत्मा का दमन करने वाला, स्वाध्यायादि करने वाला, तप करने वाला, परिमित बोलने वाला, उपशान्त और जितेन्द्रिय बन जाता है ।

रू०भे०—पम्मलेसा, पम्हलेसा ।

पद्महथ—देखो 'पदमहत' (रू.भे.) (डि.को.)

पद्मा—देखो 'पदमा' (रू.भे.)

पद्माएकादसी–सं०स्त्री०यौ० [सं०] भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की एकादसी ।

रू०भे०—पदमाएकादसी ।

पद्माकर–सं०पु० [सं०] १ तालाब, सरोवर । २ कमलयुक्त तालाव ।

रू०भे०—पदमाकर ।

पद्मालय–सं०पु० [सं०] १ समुद्र, २ ब्रह्मा ।

रू०भे०—पदमालय ।

पद्मालया–सं०स्त्री० [सं०] १ लक्ष्मी, २ रुक्मिणी, ३ लौंग ।

रू०भे०—पदमालया ।

पद्मावती—देखो 'पदमावती' (रू.भे.)

पद्मावळि, पद्मावळी–सं०पु० [सं० पद्मावलि] एक वस्त्र विशेष ।

उ०—पूतलीउं, बहूमूळ, धूणीलियं, मीणीयं, काळं, फूटडउं, रातउं, फूटडऊं, सूपडती, मेघावळि, मेघडंबर, पद्मावळि, पद्मोत्तार इत्यादि वस्त्राणि ।—व.स.

पद्मासण, पद्मासन–सं०पु० [सं० पद्मासन] १ योग के चौरासी आसनों के अन्तर्गत एक प्रसिद्ध आसन । इसके चार भेद होते हैं—

१ बद्ध पद्मासन—दाहिने पैर को बायें पैर के मूल में और बायें पैर को दाहिने पैर के मूल में स्थापित किया जाता है । फिर गरदन को नीची नमाकर ठुड्डी को हृदय पर लगाया जाता है । पश्चात् पृष्ठ भाग से दोनों हाथों को घुमाकर दाहिने हाथ से बायें पैर का और बायें हाथ से दाहिने पैर का अंगूठा पकड़ा जाता है । दृष्टि को नासिका के अग्र भाग पर ठहरा कर शरीर को सीधा और निश्चल करके बैठा जाता है ।

२ अर्ध पद्मासन—दाहिने पैर को बायें पैर के मूल में और बायें पैर को दाहिने पैर के मूल में स्थापित किया जाता है । दोनों पावों की एडियों पर बायें हाथ के पंजे को सीधा रखकर उसके ऊपर दाहिने हाथ के पंजे को रखा जाता है । चिवुक के हृदयो समीप रख कर गुदा संकोच करके अपान का ऊर्ध्व आकर्षण किया जाता है । दृष्टि को नासिका के अग्र भाग पर रखना चाहिये ।

३ ऊर्ध्व पद्मासन—प्रथम, अर्ध पद्मासन की तरह बैठकर, सिर को जमीन पर रखकर दोनों हाथों के आधार से आसन को आकाश की ओर उठा कर ऊंचा कर के स्थिर होना चाहिये ।

४ वामार्ध पद्मासन—बांये पांव को घुटने से लौटाकर दाहिने पांव की जांघ पर रखना और दाहिने पांव का पंजा बायें पांव के घुटने के नीचे पृथ्वी पर रखकर बैठना होता है । इसे प्रौढ़ासन भी कहते हैं । बड़े लोगों के सामने इस आसन से बैठना शिष्टता समझा जाता है ।

२ संभोग के चौरासी आसनों के अन्तर्गत एक आसन ।

रू०भे०—पदमासण ।

पद्मिनी, पद्मोनी—देखो 'पदमणी' (रू.भे.)

उ०—वारि वसंती पद्मनी, ससीहर सूरि आकासि । महीपति ! तिम महिला तणा, मन तो माधव पासि ।—मा.कां.प्र.

पद्मोतर–सं०पु० [सं०] एक प्रकार का वस्त्र विशेष ।

उ०—सूपडति, मेघावळि, मेघडंबर, पद्मावती, पद्मोतर इत्यादि वस्त्रादि ।—व.स.

२ एक राजा का नाम ।

उ०—नाकी राखण रे कारणे रे, 'माधव' वान की खंड में जाय रे, पद्मोत्तार री इज्जत पाड़नें रे, सूंपी द्रोपदी लाय रे ।—जयवांणी

पद्य–वि० [सं०] १ जिसमें कविता के पद या चरण हों ।

उ०—तूं ही पिंगळा डिंगळा पद्य गद्या । तूं ही वैदिका लौकिका छंद विद्या ।—मे.म.

२ पदचिन्हों से चिन्हित ।

३ चरण सम्बन्धी ।

४ पिंगल के अनुसार चार चरणों वाला नियमित मात्रा या वर्ण का छंद । उ०—गद्य-पद्य वे जगत में, जांण छद की जात । सम पद पद्य सराहजे, छुटक गद्य छ जात ।—र.ज.प्र.

क्रि०प्र०—करणौ, जोड़णौ, पढणौ, बणाणौ, रचणौ।

रू०भे०—पद।

विलो०—गद्य।

पधड़ी—देखो 'पद्धरी' (रू.भे.)

पधर—देखो 'पाधरौ' (मह.,रू.भे.)

पधराणौ, पधराबौ-क्रि०स० [सं० प्र+धारणम्]

१ आदरपूर्वक ले जाना, इज्जत से ले जाना।

उ०—१ अबदुल्लै उच्छव घरै, सांम्हौ आय वधाय। मिळ 'अगजीत' कमंध सूं, **पधरायौ** सुख पाय।—रा रू.

उ०—२ पढे उच्छव धार उर, विघ सम समै विचार। **पधरायौ** नवकोटपत, दरसण करण दुवार।—रा.रू.

२ स्थापित करना।

उ०—मिळ कूरम सांमुहे पेख सुख लहे अपंपर। **पधरायौ** तोरण सप्रेख दुति जेम दिनंकर। —रा.रू.

३ देवता की स्थापना करना। उ०—१ मकरांणा रा पाहण री मूरत नवी देवी चंडेस्वरी घळाव मूळराजजी जैसळमेर मंदिर नवै **पधरायी**।—बां.दा ख्यात

उ०—२ पीछे वरस तीन कोडमदेसर रया। बीकेजी आ जागा आछी देखी तद तळाव री पाळ माथै गोरैजी री मूरति **पधराई**। चौक करायौ।—द.दा.

४ हड़प जाना, छीन लेना। उ०—१ दो हजार रुपया एकला **पधरायगा**।—बां.दा. ख्यात

उ०—२ घोड़ा जोड़ा पागड़ी, मुळवाळीर मरोड़। पाटण में **पधरायगा**, रकम पांच राठौड़।—अज्ञात

५ डाल देना, फेंक देना। उ०—घुड़लै नै कुए में **पधरायद्यो**।

—बां.दा. ख्यात

६ आभूषण या कपड़े आदि का धारण कराना।

उ०—प्रेम प्रभा जरकस री जांमौ परम प्रभू रै अंग **पधराय**। मन-मोहण सुमनां री माळा जगजांमी रै गळ **पधराय**।—गी.रां.

७ भेंट करना। उ०—करि ओछाव कहाव करि, ऊहवि पति आंवेर। उर भायौ दूलह 'अभौ', **पधरायौ** नारेळ।—रा.रू.

८ खाना, हजम करना।

९ लाना। उ०—१ ऐरापति असवार इळ, सुजि सिंगार सिंदूर **पधरायौ** गजराज सो, स्रो महाराज हजूर।—रा.रू.

१० बैठना, विराजमान करना। उ०—वहि मिळी घड़ी जाइ घणां वांछतां, धण दीहां अंतरै धरि। अंकमाळ आपे हरि आपणि, **पधरायी** श्री सेज परि।—वेलि

उ०—२ मुहलदार मेल्हीया मुहरइं, खोजा असली जिके खरा। वर **पधरायउ** तियां भली विध, धुर मुखमुल अउछाड धरा।

—महादेव पारवती री वेलि

११ प्रवेश कराना। उ०—पोह निज रंगमहल **पधराए**। ऊपमि वीर संथानक आए।—सू.प्र.

१२ लेना।

१३ ले जाना। उ०—सतरै संमत सतावनै, मासै उत्तम माह। लाल वडै हित 'होठलू', **पधरायौ** नरनाह।—रा.रू.

१४ भेज देना। उ०—१ हुजदारां आपरां, वेग ताकीद करावौ। दखिण गुजराति दिसा, पेसखानां **पधरावौ**।—सू.प्र.

उ०—२ तो गोपाळदास कही कुंवरजी नूं बाहिर **पधरावो** सो कुंवर नूं वाहिर लेय आया।—गोपाळदास गौड़ री वारता

१५ प्रकट करना, जाहिर करना।

पधराणहार, हारौ (हारी), पधराणियौ—वि०।

पधरायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पधराईजणौ, पधराईजबौ—कर्म वा०।

पदराणौ, पदराबौ, पदरावणौ, पदराववौ, पधरावणौ, पधराववौ, पाधारणौ, पाधारबौ—रू०भे०।

पधरायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ आदरपूर्वक ले जाया हुआ।

२ स्थापित किया हुआ।

३ स्थापित किया हुआ (देवता)।

३ हड़पा हुआ, छीना हुआ।

५ डाला हुआ, फेंका हुआ।

६ आभूषण या कपड़े धारण किया हुआ।

७ भेंट किया हुआ।

८ खाया हुआ, हजम किया हुआ।

९ लाया हुआ।

१० बैठाया हुआ, विराजमान किया हुआ।

११ प्रवेश कराया हुआ।

१२ लिया हुआ।

१३ ले जाया हुआ।

१४ भेजा हुआ।

१५ प्रकट किया हुआ, जाहिर किया हुआ।

(स्त्री० पधरायोड़ी)

पधरावणी-सं०स्त्री० [सं० पद+धारणम्] गोकलिया गोस्वामी और रामावत साधुओं के महंत को घर बुला कर दी जाने वाली भेंट।

पधरावणौ, पधराववौ—देखो 'पधराणौ, पधराबौ' (रू.भे.)

उ०—१ मासोत्तम वैसाख में, गढ़ जाळंधर हूंत। रांणी **पधरावी** सहर, साथे कुंवर सपूत।—रा.रू.

उ०—२ 'दुरग' घणी **पधरावियौ**, उछव करे अतूप। सेन सवाई आवियौ, 'भीमरळाई' भूप।—रा.रू.

उ०—३ समस्त ही मंडप रा प्राघुणकां प्रामारराज री तरफ सूं बरात रै सिविर जाय दुल्लह नूं मारीच चढ़ाय अरबुद रा दुरग रै तोरण **पधरावियौ**।—वं.भा.

उ०—४ बिलळी बातां री बांणी वधरावै। पतळी झिरण जिण में पांणी पधरावै।—ऊ.का.

उ०—५ मोटा मांनूं रे रांम रा मारियां। छुपकै-छुपकै घी लोगां रौ पधरावौ भरि पारियां।—ऊ.का.

उ०—६ तीन दिनां सूं साक मिळै, तोई धोको हिए न धारौ। सूंक ले'र पधरावौ सीरौ, नहिं नीको निरधारौ।—ऊ.का.

उ०—७ आगै कंमधै आखियौ, सुण मछरीक 'मुकन्न'। अन-पांणी मन भावियां, पधरावियां 'अजन्न'।—रा.रू.

उ०—८ पाय पटूलां पाथरी, पीउ पधरावउ सेज। जंपी तू जी जी करइ, आंणी आपइ वेगि।—मा.कां.प्र.

उ०—९ पधरावण परणायबा, स्रीदूलह 'अभसाह'। मथुरा मांडह मंडियौ, जिमि कूरम 'जैसाह'।—रा.रू.

उ०—१० संसकार स्रुतिवांण सुणि, कूरम कै सक्कार। परणावै पधरावियौ, महलै राजकंवार।—रा.रू.

उ०—११ रणसिंगा रुड़ा आगै ऊड़ा, घूड़ घूड़ घूकंदा है। जाखेड़ा जोड़ी घोड़ा घोड़ी, पधरावै पुळकंदा है।—ऊ.का.

उ०—१२ साह दरगह सैव, जिकां दुय राह वखांणै। फरकसाह थप्पियौ, बाहुबळ नाह ठिकांणै। सरस प्रीत 'अभसाह', सुतौ दिन-दिन सरसावै। हुसन खांन अब्दुल्ल, दरस आवै पधरावै।—रा.रू.

उ०—१३ हुजदारां आपरां, वेग ताकीद करावौ। दखिण गुजरात दिसा, पेसखांनां पधरावौ।—सू.प्र.

पधरावणहार, हारौ (हारी), पधरावणियौ—वि०।

पधराविग्रोड़ौ, पधरावियोड़ौ, पधराव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पधरावीजणौ, पधरावीजबौ—कर्म वा०।

पधराविग्रोड़ौ—देखो 'पधरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पधराविग्रोड़ी)

पधरी—देखो 'पद्धरी' (रू.भे.)

पधारणौ, पधारबौ—क्रि०अ० [सं० पदधारणम्] १ आना, पहुंचना।

उ०—१ घर त्यागकरण परघर विधन, आहूं पहर ऊंधारिया। जीव नै देत मोता जिकै, पोतादार पधारिया।—ऊ.का.

उ०—२ पिण पंथ वीर जूजुआ पधारया, पुरि मेळा मिळि कियौ प्रवेस। जण दूजण सहि लागा जोवण, नर-नारी नागरिक नरेस।
—वेलि

२ जाना, चला जाना। उ०—१ भलां पधारौ भीचड़ा, गरक सिलह मैं गात। केहर वाळा कळह री, वळता कोजी बात।
—बां.दा.

उ०—२ पूछिया गवर तिवार प्रभु नूं, सांमि किसउ करतिग संसार। दिख रइ जगत पधारउ देखण, देव अनेक करइ दीदार।
—महादेव पारवती री वेलि

पधारणहार, हारौ (हारी), पधारणियौ—वि०।

पधारिग्रोड़ौ, पधारियोड़ौ, पधारयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पधारीजणौ, पधारीजबौ—भाव वा०।

पउधारणौ, पउधारबौ, पद्धारणौ, पद्धारबौ—रू०भे०।

पधारियोड़ौ—भू०का०कृ०—१ आया हुआ।

२ गया हुआ।

(स्त्री० पधारियोड़ी)

पधति—देखो 'पद्धति' (रू.भे. ह.नां.)

पधरि, पधिरौ—१ देखो 'पाधर' (अल्पा., रू.भे.)

२ देखो 'पद्धरी' (रू.भे.)

पधोरणौ, पधोरबौ—देखो 'पाधोरणौ, पाधोरबौ' (रू.भे.)

पधोरणहार, हारौ (हारी), पधोरणियौ—वि०।

पधोरिग्रोड़ौ, पधोरियोड़ौ, पधोरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पधोरीजणौ, पधोरीजबौ—कर्म वा०।

पधोरियोड़ौ—देखो 'पाधोरियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पधोरियोड़ी)

पध्धर—देखो 'पाधरौ' (मह०, रू.भे.)

उ०—मारू देस उपन्नियां, सर ज्यउं पध्धरियांह। कड़ुवा बोल न जांणही, मीठा बोलणियांह।—ढो.मा.

पध्धारणौ, पध्धारबौ—देखो 'पधारणौ, पधारबौ' (रू.भे.)

उ०—राजा-रांणी हुरखिया, हरिख्यउ नगर अपार। साल्ह कुंवर पध्धारियउ, हरखी मारू नार।—ढो.मा.

पनंग—देखो 'पन्नग' (रू.भे.) (डिं.को.)

उ०—जभकै नहीं अचांणक जांणै। पनंग जिकौ ग्रहियौ नृप पांणै।
—सू.प्र.

(स्त्री० पनंगण, पनंगणी)

पनंगणी—सं०स्त्री० [सं० पन्नग+रा.प्र. णी] १ नाग कन्या।

उ०—पनंगणी कना काय पंखणी, कोण देस हूंता गवण। हूं तुज्ज भेद जाणूं नहीं, कह है तूं बाई कवण।—पा.प्र.

२ नागिन।

पनंगपति—देखो 'पन्नगपति' (रू.भे.)

पनंगपाळ—सं०पु० [सं० पन्नग+पाल] चन्दन (ह.नां.)

पनंगलोक—देखो 'पन्नगलोक' (रू.भे.)

पनंगसंघार, पनंगसिंघार—सं०पु० [सं० पन्नग+संहार] मोर, मयूर
(ह.नां., अ.मा.)

पनंगांण—देखो 'पन्नग' (मह०, रू.भे.)

पनंगाराय—सं०पु० [सं० पन्नगराज] शेषनाग।

पनंगासन—देखो 'पनगासन' (रू.भे.)

पनंगेस—सं०पु० [सं० पन्नग+ईश]

उ०—कठठिया दहूं दळ काळ कीठ पनंगेस कमळ भिडि कमठ पीठ।
—सू.प्र.

पनंग्ग—देखो 'पन्नग' (रू.भे.)

पन—१ देखो 'पुण्य' (रू.भे.)

उ०—प्रथम विनायक पूजियै, अघळ हुयै कोई पन। रिधि सिधि

समपै राजियो, गुणपती देव गहन ।—पी.ग्रं.

२ देखो 'प्रण' (रू.भे.)

३ देखो 'पान' (रू.भे.)

४ देखो 'पांनो' (मह०, रू.भे.)

पनग-सं०पु०—१ देखो 'पन्नग' (रू.भे.)

उ०—पाव घाव सिर पनग रै, घाव नाव घजराज । समपै 'भारा-राव' सुत, करण चाव जस काज ।—बां.दा.

२ शेषनाग ।

पनगपति, पनगपती—देखो 'पन्नगपति' (रू.भे.)

उ०—पूरब देस नयर अंबापुर, नव दीपां चा नमइ नरेस । असुरां सुरां पनगपति नरपति, दिख राजा दीपइ दह देस ।

—महादेव पारवती री वेलि

पनगलोक-सं०पु० [सं० पन्नग+लोक] पाताल, नागलोक ।

उ०—पाळ्यो जहर पिवाय, भीम गंग पटक्यो हुतो । पनंग लोक परणाय, साथै ल्यायो सांवरा ।—रामनाथ कवियो

रू०भे०— पनंगलोक, पन्नगलोक ।

पनगहार-सं०पु० [सं० पन्नग+हार] शिव, महादेव (डिं.को.)

पनगांण—देखो 'पन्नग' (महपो., रू.भे.)

उ०—पय मिस्री पनगांण, ओखोजे आठूं पहर । जहर घणो घट जांण, मिटै सहज न मोतिया ।—रायसिंह सांदू

पनगारि—देखो 'पन्नगारि' (रू.भे.)

उ०—किधो कुळ अद्रनि इंद्र हकारी । किधो कुळ कद्रू नि पै पनगार ।

—ला.रा.

पनगासन-सं०पु० [सं० पन्नग+असन] गरुड़ । उ०—लख बटेर सिच्चांन, मनहु चीता म्रग मारन । हेरि पत्थ जयद्रथ, बाघ हेरघो मनु बारन । हर हेरघो आगस्त, पनग हेरघो पनगासन ।

—ला.रा.

रू०भे०—पनंगासन, पन्नगासन ।

पनग्ग—देखो 'पन्नग' (रू.भे.)

उ०—जरासिंघ अंग में जोर पायो । पनग्गी मनू पांय पुच्छी दबायो ।

—ला.रा.

पनग्गो—देखो 'पन्नग' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—तो पन दिव्व अवाज तें, घरनोघर घग्गो । कोळ कमट्ठ जोर परि, सिर धूनि पनग्गो ।—ला.रा.

पनघट—देखो 'पणघट' ।

पनड़ियो-सं०पु०— [?] खूबकला नामक घास (जयसलमेर)

पनड़ो-सं०स्त्री० [सं० पत्रम्] १ स्त्रियों के आभूषणों के नीचे लटकता हुआ लगाया जाने वाला पत्ते के समान पतला खण्ड ।

उ०—१ बीभलियां नैणां वणी, बंक पटा वनड़ोह । बालम रा स्रवणां वजी, पायल री पनड़ोह ।—र. हमीर

उ०—२ तेवटियो तेवटियो गोरी कांई बिलखै, मेह बिना घरती तरसै मेहड़ो हुवण दे । तेवटियो घड़ाऊं पनड़ो आळो, मेहड़ो आवण दे ।—लो.गी.

२ एक सुगंधित पत्ती विशेष जो कपड़ों में रखी जाती है ।

३ चने के पौधे के सुखाए हुए पत्ते जो साग के काम में लिए जाते हैं ।

४ देखो 'पांनड़ी' (रू.भे.)

उ०—१ ढीमड़ा वेरा माथै पनड़ो री खड़िद खड़िद री ठेको ।

—फुलवाड़ी

उ०—२ माळ फिरै ज्यूं पनड़ो बाजै, फिरै काळियो डोरो । ओढ़ पांणी भरै घड़लियां, आगै हालै धोरो । रुपल रेत रे ।

—चेत मांनखा

५ देखो 'पांन' (अल्पा०, रू.भे.)

रू०भे०—पन्नड़ो, पानड़ी ।

पनडुब्बी-सं०स्त्री०—१ एक जलपक्षी ।

२ एक प्रकार की नाव जो पानी के अंदर चलती है । इसका प्रयोग शत्रु के जहाजों को डुबोने के लिए किया जाता है ।

पनपणो, पनपबो—देखो 'पणपणो, पणपबो' (रू.भे.)

पनपणहार, हारौ (हारी), पनपणियो—वि० ।

पनपिओड़ो, पनपियोड़ो, पनप्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पनपीजणो, पनपीजबो—भाव वा० ।

पनपाणो, पनपावो—देखो 'पणपाणो, पणपावो' (रू.भे.)

पनपायोड़ो—देखो 'पणपायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पनपायोड़ी)

पनपियोड़ो—देखो 'पणपियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पनपियोड़ी)

पनर, पनरइ—देखो 'पनरह' (रू.भे.) (उ.र.)

उ०—हणु बारह मेघ नीर विरचित मास तेरह मंड । दस च्यार विद्या रतन दाखव पनर तिथि परचंड ।—र.ज.प्र.

पनरम, पनरमंइ, पनरमंउ, पनरमओ-वि० [सं० पंचदशः] पन्द्रहवां (उ.र.)

उ०—१ पनरम घरम तयालीस गणि चौसठ हजार । साहु साहुणी बासठ सहस अनै सय चार ।—ध.व.ग्रं.

उ०—२ राति दिवस करि चालीयउ । पनरमंइ दिवस पहुतो तिणी ठार ।—वी दे.

उ०—३ संवत तेर इकोतरइ; देसलहर अधिकारी जी । समरइ साह करावियउ, ए पनरमउ उद्धारो जी ।—स.कु.

पनरवाड़ियो-स०पु० [?] १ वह क्रम जिसके अनुसार किसी नक्षत्र पर १५ दिन तक सूर्य रहे ।

२ वह क्रम जिसके अनुसार कोई नक्षत्र १५ दिन तक रहे ।

पनरह-वि० [सं० पंचदश, प्रा० पण्णरह] १ जो संख्या में दस और पांच के योग के बराबर हो। उ०—पनरह दिन हूं जागती, प्री सूं प्रेम करंत। एक दिवस निद्रा सबळ, सूती जाणि निचंत।—ढो.मा.
संoपु०—२ दस और पांच के योग की संख्या (१५)
रू०भे०—पंदरह, पंदरै, पंद्रह, पनर, पनरह, पनरै।
मह०—पंनर, पन्नर।

पनरहवींविद्या-संoस्त्री०—चोरी, झूठ आदि की विद्या।
उ०—तिण राजा रै च्यारि मित्र। आगीयौ वेताळ। कवड़ियौ जुआरी। मांणिकदे मदपांण। खापरौ चोर। सु राजा भोज रै घरै आया। घणां कायदा किया। अनेक भांति री भक्ति हुई। घणां सनमांन देनै कह्यौ—पनरहवींविद्या मोनूं जिण भांत आवै तिम करौ।—चौबोली

पनराड़ी-संoस्त्री०—पंद्रह दिन का समय, पक्ष।
उ०—नौ दिन तौ मैं करथा जी नोरता, सोळा दिन गणगोर जी, बनड़ा। पनराड़ो मैं ग्यारस करती, बारा करती चौथ जी बनड़ा।
—लो.गी.

पनरै—देखो 'पनरह' (रू.भे.)
उ०—करमा दांन पनरै कह्या जी, प्रगट अठारै जी पाप। जे मंइ सेव्या ते हवइ जी, बगस बगस माइ बाप।—स.कु.

पनरै'क—पंद्रह के लगभग।
रू०भे०—पंदरै'क, पदरै'क।

पनरौ-संoपु०—पंद्रह की संख्या का वर्ष।
उ०—पांचौ आठौ दस पनरौ खू पड़िया। सतरै बीसै हुय खतरै में पड़िया।—ऊ.का.

पनरोतड़ौ—देखो 'पनरौ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—१ अवध पनरोतड़ै, समत पनरै इळा, बाघ चढणोत रै वेद वरणो। गेह बड़भाग किनियां तणौ गोत रै, कळा साजोत रै रूप करणी।—खेतसी बारहठ
उ०—२ पनरै सै समत (१५१५) पनरोतड़ै, सुदि जेठ ग्यारस सनढ। अवगाढ जोध रचियौ इसो, गाढपूर जोधाण गढ।—सू.प्र.

पनवां-संoस्त्री०—पान के आकार की हमेल आदि आभूषणों में लगी हुई बीच की चौकी, पान।

पनवाड़ि, पनवाड़ी-संoस्त्री० [सं० पर्ण+वाटिका]
१ नागरवेल का खेत।
उ०—तिण में अकालगरी, तिण री नांनी बनास पांणी पीवती नै नागरवेलरी पनवाड़ी चरनै घर आवती। तरै जखड़ै उण सांड नै सारणी मांडी।—जखड़ा मुखड़ा भाटी री वात
संoपु०—२ पान बेचने का व्यवसाय करने वाली जातिया इस जाति का व्यक्ति।
३ राजा-महाराजाओं के यहां पान के सुपारी, चूना, काथा आदि लगाकर तैयार करने वाला।
उ०—पातियां विराजे तांम पह, मह उछब पह मांनियां। पनवाड़ी पात्र थंई पवित्र, मंडे वड़ी महमांनियां।
४ एक प्रदेश विशेष का नाम जहां पर पान बढ़िया होते हैं।
उ०—उमराव बनाजी बीड़ा थे लाइजो रे नागोरी देस रा। सिरदार बना जी बीड़ा थे लाइज्यो पनवाड़ी देस रा।—लो.गी.

पनस-संoपु० [सं०] कटहल का वृक्ष या उसका फल।
रू०भे०—फणस।

पनसारी—देखो 'पंसारी' (रू.भे.)

पनसूरी-संoपु० [सं० पत्र+चूरणम्] बाजरी, ज्वार आदि के पत्तों का चूरा जो पशुओं को खिलाया जाता है (शेखावाटी)।
रू०भे०—पनहूरी, पनूरी।

पनसेरी—देखो 'पंसेरी' (रू.भे.)
उ०—उत्तम थूंक विलोवही, मध्यम मूंकी थाप। वणिक अधम चिढ़ता करै, पनसेरी सूं पाप।—बां.दा.

पनसेरौ—देखो 'पंसेरी' (मह०, रू.भे.)

पनहि, पनही-संoस्त्री० [सं० उपानह] जूतो। उ०—जनमैं बीछू जगत में, जणणी रौ लै जीव। तिण गुनाह पनही तळै, सह को हणै सदीव।—बां.दा.
रू०भे०—पांणही, पांनह, पांनही।
अल्पा०—पनियौ।

पनहूरी—देखो 'पनसूरी' (रू.भे.)

पनांग—देखो 'पिनाक' (रू.भे.)
उ०—सिव तिण वार पनांग साहियइ, वंगाळी दाखवै बळ। उण वेळा सिव रइ मुह आगळ, दूजा कुण नेठवइ दळ।
—महादेव पारवती री वेलि

पना—देखो 'पनाह' (रू.भे.)

पनाक—देखो 'पिनाक' (रू.भे.)
उ०—पह वीरहाक पनाक पणचां, बाज डाक श्रंवाक। असनाक पर ग्रीधाक आवध, करग बाज कजाक।—र.ज.प्र.

पनाकी-संoपु० [सं०] शिवजी (डिं.को.)

पनाग-संoपु० [सं० पन्नगः=नागः=हाथी] १ हाथी।
उ०—वाजै वंकी रोड कै अखाड़ै रूवो खासवाड़ै। जंगी होदां सूधा कै पनागां पाड़ै जूथ।—हुकमीचंद खिड़ियौ
रू०भे०— पैनाग।
२ देखो 'पन्नग' (रू.भे.)
३ देखो 'पिनाक' (रू.भे.)

पनामारू-संoपु०यौ० [राज० पनौ=रत्न विशेष+मारू=पति]
१ पति, प्रेमी और वल्लभ के लिए स्त्रियों द्वारा प्रयोग किया जाने वाला शब्द। उ०—१ थांरै साथ्यां नै सागै ले लौ जी मारू जी, भात भरण नै चालो रूड़ै मांणजै। नाई की नै लेस्यां जी, पनामारू, म्हें भी म्हारै साथ भात भरण नै जास्यां रूड़ै मांणजै।
—लो.गी.

उ०—२ पनामारू घणां नै घरां रा मिजमान, अजी कांई सांवलड़ा नादांन। रात अनंत प्रात म्हारै आया, तन पर केई सैनांण।
—रसीलैराज रा गीत

२ रसिक।

३ एक लोक गीत।

रू०भे०—पन्नामारू।

पनाळ—देखो 'परनाळ' (रू.भे.)

पनाह-सं०स्त्री० [फा०] १ रक्षा, शरण। उ०—१ बाहां बीस तणे भय बंधव, लुळे बभीख पनाहां लीध। रखे ओट तिणनूं फिर राजा, कनक दुरंग सकाजा कीध।—र.रू.

उ०—२ ताहरां पातसाहजी कहियौ खुदाइ पनाह दियै। एथि त्रिहाई मांहै राखौ 'भोपति' नूं।—द.वि.

क्रि०प्र०—देणी, पाणी, लैणी।

२ रक्षा पाने का स्थान।

रू०भे०—पना, पन्हा।

पनाही-वि० [फा० पनाह+रा.प्र.ई] शरण में आने वाला, पनाह लेने वाला। उ०—परस लिया पद पांनी, दाद जुनारदा। बम्भीछण बगसांणी, लंक पनाहियां।—र.ज.प्र.

पनिया—देखो 'पनही' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—भटकै कर-कर भेख, घर-घर अलख जगावही। दुनिया रा ठग देख, मिळसी पनिया 'मोतिया'।—रायसिंह सांदू

पनी-सं०स्त्री० [सं० पर्ण] १ ऐरे के पौधे का सिट्टा जो प्राय: फोड़े फुंसियों पर पीसकर लगाया जाता है।

२ देखो 'पन्नी' (रू.भे.)

पनीडौ—देखो 'परींडौ' (रू.भे.)

पनीर-सं०पु० [फा०] १ फाड़ कर जमाया हुआ दूध, छेना।

२. पानी निचोड़ा हुआ दही।

पनीहारी—देखो 'पणिहारी' (रू.भे.)

पनुंती—देखो 'पनोती' (रू.भे.)

उ०—अक्खर दीयौ पद ऊंच, पीढ्यां तोड़ पनुंती। धरै उत्तम नर धरम, पापिनै तप पर हुंती।—ध.व.ग्रं.

पनूं—देखो 'पनौ' (रू.भे.)

उ०—पनूं म्हारौ मुजरौ लीजो जी, रसराज मीठी निजरघां सुं मिळघो हुओ कर का गजरा सु०।—रसीलैराज रा गीत

पनूंतौ-वि० [राज० पुनीत=सं० पूत] पवित्र, श्रेष्ठ।

उ०—पोस पनूंता दीहड़ा, जे पीऊ साथि बात। खटरस क्षिति-मंडलि प्ररह, रंग मांहि रस सात।—मा.कां.प्र.

रू०भे०—पनोत, पनोतौ।

पनूरौ—देखो 'पनसूरौ' (रू.भे.)

पनोति, पनोती-सं०स्त्री० [सं० प्रज्ञप्ति:=प्रा० पन्नत्ती] १ शनि ग्रह की शुभाशुभ फलप्रद उस स्थिति काल का नाम जो राशि विशेष से बारहवीं, जन्म की तथा दूसरी राशिपर्यंत रहता है, महाकल्याणी।

२ कुग्रहों का योग, दुर्दशाकाल।

उ०—१ पदवी है प्रति वासुदेव नी जी, जोरावर जरासंघ। आंण पनोति दोली फिरीजी, क्रस्ण काट दियौ कंध।—जयवांणी

उ०—२ कहै दास सगरांम सुणौ सज्जन हितकारी। कर सुक्रत भज रांम, पनोति आई भारी।—सगरांमदास

रू०भे०—पनुंती।

पनोतौ—देखो 'पनूंतौ' (रू.भे.)

उ०—१ आ जोवन आ संपदा रे, आ अम अद्भुत देह। भोग पनोता भोगउ रे, निपट न दीजइ छेह।—स.कु.

उ०—२ आठ भवां री नेहज हुतौ, नव में दी छिटकाई। तुमसा पूत पनोता होयनै, जादव जांन लजाई।—जयवांणी

पनौ-सं०पु० [सं० पर्ण] १ फिरोजे से मिलता-जुलता एक प्रकार का हरे रंग का रत्न विशेष। उ०—हीर पना वाळा हरख, पंपाळा तज 'पत्त'। तैं कर घाळा लो तिका, तुकमां माळा तत्त।—जुगतीदांन देथौ

पर्या०—गरुत-मत, मरकत, हरितमणि।

२ सुकुमार, कोमलांग (अमीर)

उ०—प्रीत रीत पाळतौ विलाला साहीजादा पना औ। छांछाळा, एळा क्रीत ढाळता ऐसोत।—र. हमीर

यौ०—आलीजोपनौ, गीलीपनौ, साहजादौपनौ।

३ चौड़ाई. अरज।

रू०भे०—पणौ, पहनौ, पैनौ।

४ देखो 'पनांमारू'।

उ०—पना घर आज्यौ रे लाडली छोटी रा बना। रसराज नेह लगाय बिसर गया एकरसां मिळ जाज्यौ रे।—लो.गी.

५ देखो 'पांनौ' (रू.भे.)

६ देखो 'पण' (रू.भे.)

पन्नंग—देखो 'पन्नग' (मह०, रू.भे.)

पन्न—देखो 'पांन' (मह., रू.भे.)

उ०—१ करहा लंब कराहिआ, बे बे अंगुळ कन्न। राति ज चोन्हीं बेलड़ी, तिण लाखीणा पन्न।—ढो.मा.

उ०—२ व्है यूं कुकवी हाथ में, पोथी तणौ प्रकास। केळ पन्न जाणै कियौ, बांनर रै कर वास।—बां.दा.

उ०—३ ऊभी घूंट हेको करी जात आरा, थंभेरी महूका लहैका मथारा। जसोदा नके झंप साबी जमन्ना, पहे लाभियौ मांन हू जात पन्ना।—ना.द.

२ देखो 'पवन' (रू.भे.)

पन्नग-सं०पु० [सं०] सर्प, नाग।

२ शेषनाग।

उ०—१ चढ़िया कट्टक त्रांबक्क चाल, बेढिसी जइत न करइ विभाळ। असराळां ताजी ऊमगेहि, पन्नगां नेस बूजइ पगेहि।
—रा.ज.सी.

उ०—२ उण भवण वसण राजा 'अजन', आप सुखासण ऊतरी ।
लखि वरत सुरी अचरज लगी, नार पन्नगी किन्नरी ।—रा.रू.
(स्त्री० पन्नगी)
रू०भे०—पनंग, पनंग्ग, पनग, पनग्ग, पन्नंग, पुनांग ।
अल्पा—पनगो, पनग्गो ।
पन्नगकेसर—देखो 'नागकेसर' ।
पन्नगपति-सं०पु० [सं०] शेष नाग ।
२ नागलोक का राजा ।
रू०भे०—पनंगपति, पनगपति, पनगपती ।
पन्नगपीवण—देखो 'पंणी' ।
उ०—मारवणी मुख-ससि-तणइ, कसतूरी महकाइ । पासइ पन्नग-पीवणउ, बिळकुळियउ तिणि ठाइ ।—ढो.मा.
पन्नगलोक, पन्नगलोकि—देखो 'पनगलोक' (रू.भे.)
उ०—वेगि करी वसुधा-तलइ, पइठउ पन्नगलोकि । ततखिणि अम्रत आंणियु, राउ पडिउ जिहां सोकि ।—मा.कां.प्र.
पन्नगारि-सं०पु०यौ० [सं०] गरुड़ ।
रू०भे०—पनगारि ।
पन्नत्ता-सं०पु० [सं० प्रज्ञप्तिः] कथित, प्ररूपति । उ०—निबद्ध निकाचित जे सासय कह्या, जिन पन्नता रे भाव । भाखी रे सुंदर एह परूवणा, चरण करण नी रे जाव ।—वि कु.
पन्नर—देखो 'पनरह' (रू.भे.)
उ०—तनु तोलंतां टांक को, गुण-मणि गणित न थाइ । साढा पन्नर वरस नी, सोळ समीपि जाइ ।—मा.कां.प्र.
पन्नवणा-सं०पु० [सं० प्रज्ञापना] प्रज्ञापना नाम का सूत्र जो जैन धर्म के ३२ सूत्रों में से एक है ।
उ०—इम अल्प बहुत्व विचार चिहुं दिसि, सतर भेद जीवां तणउ । स्रीपन्नवणा सूत्र पदे तीजे, तिहां विस्तार छइ घणउ ।—स.कु.
पन्नाभंवर—देखो 'पनामारू' ।
उ०—ए जी ओ म्हारा पन्ना-भंवरजी, थाई रे कुमाई घर आव । क्या से सिंचाऊ डोडा इळायची रे म्हारा लोटण करवा, क्या से सिंचाऊ नागर बेल, एजी ओ सेजां रा सूरज मारूणी उडीके घर आव ।—लो.गी.
पन्नामारू—देखो 'पनामारू' (रू.भे.)
उ०—कुण थांने चाळा चाळिया हो, पन्नामारू जी हो, किण थांने दीवी रे ढोला सीख । सीख हो पिया प्यारी रा ढोला जी हो, हां रे सांवणियो बिलम्यो रे बीकानेर ।—लो.गी.
पन्नी-सं०स्त्री० [सं० पर्ण] रांगे, पीतल आदि के कागज की तरह के पत्तर जिन्हें काट कर अन्य वस्तुओं पर सौन्दर्य के लिए लगाते हैं ।
रू०भे०—पनी ।
यौ०—पन्नीगर, पन्नीसाज ।
पन्नीगर, पन्नीसाज-सं०पु० [सं० पर्णीकर, सं० पर्णी+फा० साज= पन्नी बनाने वाला] पन्नी बनाने का कार्य करने वाला ।
पन्नीसाजि-सं०स्त्री०—पन्नी बनाने का व्यवसाय ।
पन्नौ—देखो 'पनौ' (रू.भे.)
उ०—१ कळरंग घाट कुमाच, पन्ना-स नीलम पाच । संग रंग ढंग सुढाळ, पुखराज अन्य प्रवाळ ।—सू.प्र.
उ०—२ थारी महंदी पर वारूं पन्ना ये जवार । पेम-रस महंदी राचणी ।—लो.गी.
पन्हा—देखो 'पनाह' (रू.भे.)
पपइयौ, पपईयौ-सं०पु० [सं० बपीहा ?] एक पक्षी, चातक ।
उ०—पपइया, तूं बोल रे, जित म्हारै, पालीजे भंवर रो मुकांम ।—लो.गी.
पर्या०—चातक, नभनीरप, सारंग ।
२ एक लोक गीत ।
रू०भे०—पपय्यौ, पपियौ, पपिहियौ, पपिहौ, पपीयरो, पपीयौ, पपीहरौ, पपीहौ, पपैइयौ, पपैयौ, पपैयौ, पब्बयौ, पापइयौ, बप्पियारो, बप्पीहड़ौ, बप्पीहौ, बबैयौ, बापियउ, बापियड़ौ, बापियौ, बापीअड़ौ, बापीइड़ौ, बापीयड़ौ, बापैयो, बापैयौ, बाबहियउ, बाबहियौ, बाबीयौ, बाबीह, बाबीहडउ, बाबीहीयौ, बाबीहौ, बाबैहियौ ।
पपड़ी-सं०स्त्री० [सं० पर्पटी] १ किसी वस्तु की ऊपरी परत जो सिकुड़ी हुई हो ।
२ घाव के ऊपर का खुरण्ट ।
रू०भे०—पपरी, परपटी ।
अल्पा०—पप्पड़ौ ।
पपघनवा—देखो 'पुस्पधन्वा' (रू.भे.) (अ.मा)
पपय्यौ—देखो 'पपइयौ' (रू.भे.)
उ०—अचरा मोर छोड कन्हइया, कुंज-कुंज के मुरवा देखे, पपय्या देखे ।—रसीलैराज रा गीत
पपरी-सं०पु० [?] १ तीर, बाण (अ.मा.)
२ देखो 'पपड़ी' (रू.भे.)
पपियौ—देखो 'पपइयौ' (रू.भे.)
पपिलका—देखो 'पिपीलिका' (रू.भे.)
पपिली—देखो 'पिपीली' (रू.भे.)
पपिहियौ—देखो 'पपइयौ' (रू.भे.)
पपिहौ—देखो 'पपइयौ' (रू.भे.)
पपी-सं०पु० [सं०] १ सूर्य, रवि (डिं.को.)
२ चन्द्रमा, सोम ।
पपीतौ-सं०पु० [मला० पपाया] एक प्रसिद्ध वृक्ष एवं उसका फल ।
पपीयरो, पपीयौ—देखो 'पपइयौ' (रू.भे.)
उ०—१ उलसति हीयरो करि पपीयरो, करत प्रियु-प्रियु सोर । विरह संइ पोरी प्रति अघोरी, डरत विरहन जोर ।—वि.कु.
उ०—२ पपीया आस पजोवसी तो नेछावरूं जीव, वैरी तू पीव-पीव

न बोल ।—पनां वीरमदे री वात

पपील—१ देखो 'पिपील' (रू.भे.)

२ देखो 'पिपीलिकामारग' ।

उ०—भक्त जोग परे हठ जोग है, सांख्य जोग ता आगी । मीन पपील बिहंगम पुनि, तीहू राह चीन बडभागी ।

—स्री हरिरांमजी महाराज

पपीलिका—देखो 'पिपीलिका' (रू.भे.)

उ०—यह पत्र विचित्रित चित्र-योग्य, आरुण्य रुदन वत भो अयोग्य। प्रिय जाट पुत्रिवत प्रस्तपेस, पितु कति पपीलिका बिल प्रवेस ।

—ऊ.का.

पपीहरौ, पपीहौ, पपंइयौ, पपंयौ, पपंयौ—देखो 'पपइयौ' (रू.भे.)

उ०—१ प्यारौ लागै पपीहरौ, मुरली को मल्हार । कुहकै रहि रहि कोयली, फूल भंवर झंकार ।—अज्ञात

उ०—२ बरसा समय पर दादुर-मोर-पपीहा बोलै ।

—सिंघासण बतीसी

उ०—३ भादू वरसा भुक रही, घटा चढ़ी नभ जोर । कोयल कूक सुणावती, बोलै दादुर मोर । ए जी सिरकार पपंयौ पिव-पिव सबद सुणावै म्हारा प्रांण ।—लो.गी.

उ०—४ भवर म्हारै वागां आज्यो जी, बागां फिरू अकेली पपंयौ बोल्यौ जी ।—लो.गी.

पपोळणौ, पपोळबौ—देखो 'पंपोळणौ, पंपोळबौ (रू.भे.)

पपोळियोड़ौ—देखो 'पंपोळियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पपोळियोड़ी)

पप्पड़—देखो 'पापड़' (मह., रू.भे.)

उ०—सूकवे कप्पड़ पप्पड़ बड़ियां, नासीय छिपे नृप भय पड़ियां ।

—वृहद स्तोत्र

पप्पड़ौ—१ देखो 'पापड़' (अल्पा., रू.भे.)

२ देखो 'पपड़ी' (अल्पा., रू.भे.)

पब—१ देखो 'परवत' (रू.भे.)

उ०—जोवंतां हिक मेघ-झड़, घर में केक घुसंत । जद लागै घर त्रिजड़-झड़, पब-कंदर प्रविसंत ।—रेवतसिंह भाटी

२ देखो 'पर्व' (रू.भे.)

पबइया-सं०स्त्री—चौहान वंश की एक शाखा (बां.दा. ख्यात)

रू०भे०—पबिया, पब्बया, पब्बाया ।

पबइयौ-सं०पु०—चौहान वंश की पबइया शाखा का व्यक्ति ।

रू०भे०—पब्बयौ, पब्बायौ ।

पबंध—देखो 'प्रबंध' (रू.भे.) (जैन)

पबळ—देखो 'प्रबळ' (रू.भे.)

उ०—धवळ कमळ कळकित्ति पूर, धवळीकय महिमळ । पबळ पमायक लाव कुंभ, भंजण घण अविमळ ।—स.कु.

पबलिक-सं०स्त्री० [अं० पब्लिक] सर्वसाधारण, आम जनता ।

पबलिकवरकस-सं०पु० [अं० पब्लिक वर्क्स] सर्वसाधारण के लिये किये जाने वाले निर्माण सम्बन्धी कार्य ।

पबव—देखो 'परवत' (रू.भे.)

पबांणी-वि०—पर्वतीय, पर्वत का ।

पबासाई, पबासाही-सं०स्त्री०—एक प्रकार की तलवार ।

रू०भे०—पब्बासाही ।

पबि—देखो 'पवि' (रू.भे.)

पबिया—देखो 'पबइया' (रू.भे.)

पबे, पबै—देखो 'परवत' (रू.भे.)

उ०—१ 'अवरंग' 'तहवर' ऊपरै, फिर कोपे जगदीस । पबै मुरज्जा वज्र पर, पड़ी बुरज्जां सीस ।—रा.रू.

उ०—२ पबै तरां पाळगां, रुदन बाळक मछरीकां । सुण चमकै 'सुरतांण', हियै सालै दुख हीकां ।—सू.प्र.

पबैअस्त-सं०पु०यौ० [सं० अस्ताचळ पर्वत] अस्ताचल पर्वत ।

उ०—बहे जातरी रात री दीह बारा, थकै चाढवौ मागरौ खाग धारा । उदैअद्र जौ बारमौ भांण ऊगै, पबैअस्त सो पूगियां नीठ पूगै।

—मे.म.

पबैड़ौ-सं०पु० [देशज] हाथ में रखने का डंडा ।—ना.डिं.को.

पबैराट—देखो 'परवतराज' (रू भे.)

पबैसर—देखो 'पाबासर' (रू.भे.)

उ०—आणंद सुणि अविराज, मिळण आयै सभि घूमर । हुय सनेह बहु हरख, सुपहं इम मिळै पबैसर ।—सू.प्र.

पब्ब, पब्बय, पब्बय—देखो 'परवत' (रू.भे.)

उ०—१ ऊतग स्यांम गरिम अजब्ब, पावस जांण धोया पब्ब ।

—गु.रू.बं.

उ०—२ सेख वासग्गयं, डंबरे डंबयं, गाहीजै पब्बयं, सात सांमंदयं।

—गु.रू.बं.

पब्बयौ—१ देखो 'पबइयौ (रू.भे.)

२ देखो 'पपइयौ' (रू भे.)

पब्बाया—१ देखो 'पबइया' (रू.भे.)

२ देखो 'परवत' (रू.भे.)

पब्बायौ— देखो 'पबइयौ' (रू.भे)

पब्बासाही—देखो पबासाई' (रू.भे.)

पब्बै—देखो 'परवत' (रू.भे.)

उ०—जथा कै कड़क्कै छटा मेघ जोडां, मचै सिंधु कै मथ पबै घमोडां।

—वं.भा.

पब्बगिर-सं०पु०— पर्वत ।

उ०—ओपियं बैरकां कुंजरां ऊपरै, गुड्डियं उड्डियं जांण पब्बै-गिरै।

—गु.रू.बं.

पब्बैराट—देखो 'परवतराज' (रू.भे.)

उ०—कोड़ी ढढ्ढा फुणीझाट मोड़तौ कुमट्टां कंध, पबैराट सिंधु

बीछोडतौ भोम पाट ।—हुकमीचन्द खिड़ियौ

पव्व—देखो 'परबत' (रू.भे.)

पभंकर—देखो 'प्रभाकर' (रू.भे.)

पभणौ, पभबौ–क्रि०स० [सं० प्रभणं] कहना, बोलना ।

उ०—पणमिय वीर 'जिणदचंद', कय सुकय पवेसो । खरतर सुरतरु गच्छ स्वच्छ, गणहर पभणेसो ।—ऐ.जै.का.सं.

पभा—देखो 'प्रभा' (रू.भे.) (जैन)

पभारा–सं०स्त्री० [सं० प्राग्भारा] प्राग्भारा नामक आठवीं अवस्था जिसमें शरीर पर सलवट पड़ जाते हैं और शरीर झुक जाता है । (जैन)

पभाव—देखो 'प्रभाव' (रू.भे.) (जैन)

पभूय—देखो 'प्रभूत' (रू.भे.) (जैन)

पमंग, पमंगर, पमंगयं, पमंगह, पमंगांण–सं०पु० [सं० प्रवंग: या प्रवग: =वानर, बदर] घोड़ा, अश्व (डि.को.) ।

उ०—१ वदन मजीठ रूप विकराळा, पमंगां चढ़ै पूर पखराळां ।—सू.प्र.

उ०—२ पड़े निहाव भेरि घाव उललटा पमंगयं । महा समुद्र लोप हद्द जांण लोध मग्गयं ।—रा.रू.

रू०भे०—पमंगं, पमग, पयग, पवंग, पवगम, पवगांण, पविगि ।

मह०—पमंगेस ।

पमंगाळौ–सं०पु० [सं० प्रवंग:+आलुच्] घोड़ों का समूह ।

उ०—ओठी हालै अगं, पीठ घूमर पमंगाळौ । आसथांन री उतन, साख तेरे उजवाळौ ।—पा.प्र.

पमंगेस–सं०पु० [सं० प्रवंग:+ईश] देखो 'पमंग' (मह०, रू.भे.)

उ०—मिळयौ ब्रह्म सूं ब्रह्म सो ध्यानं मायौ । पमंगेस देवेस रौ तंत पायौ ।—पा.प्र.

पमंग्गं—देखो 'पमंग' (रू.भे.)

उ०—पमंग्गं पडताळ पंयाळ प्रमै । भर भार सिरं हरहार भ्रमै ।—गु.रू.बं.

पमग—देखो 'पमंग' (रू.भे.)

पमण—देखो 'पवन' (रू.भे.)

उ०—परठण पमण सुजळ नभ प्रियमी । लखमण बंधव समरि वर लिखमी ।—पि.प्र.

पमत—देखो 'प्रमत्त' (रू.भे.)

पमाअ—देखो 'प्रमाद' (रू.भे.) (जैन)

उ०—पमाओ अट्ठहा भवे ।—जै.त.प्र.

पमाड़ियौ, पमाडियौ—देखो 'पवाड' (अल्पा०, रू.भे)

उ०—पमाडिया ना पांन, केइ बगरो नइं कांटो । खावै खेजड़ छोड, सालितूस सबला बांटो ।—स.कु.

पमाणौ, पमाबौ—देखो 'पोमाणौ, पोमाबौ' (रू.भे.)

उ०—सिव फतै करि गाजियौ, दखणी भाज दुफ्फल्ल । पाडि पमायौ सू पछे, सोई सच्चौ मल्ल ।—गु.रू.बं.

पमाणहार, हारौ (हारी), पमाणियौ—वि० ।

पमायोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पमाईजणौ, पमाईजबौ—कर्म वा० ।

पमाय—देखो 'प्रमाद' (रू.भे.)

उ०—पवल पमाय कळाव कुंभ, भंजण घण अविभ्रल ।—स.कु.

पमायोड़ौ—देखो 'पोमायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पमायोड़ी)

पमार—देखो 'परमार' (रू.भे.)

पमावणौ, पमावबौ—देखो 'पोमाणौ, पोमाबौ' (रू.भे.) (उ.र.)

पमावणहार, हारौ (हारी), पमावणियौ—वि० ।

पमाविओड़ौ, पमावियोड़ौ, पमाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पमावीजणौ, पमावीजबौ—कर्म वा० ।

पमावियोड़ौ—देखो 'पोमायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पमावियोड़ी)

पमुंह, पमुह–सं०पु० [स० प्रतिमुख] १ उल्टा, विरुद्ध ।

उ०—आतस इंदु अरक ताड़िम अंग, सायर छंडे लहरि सुवाह । पह मेड़ता चले पारोठौ, पमुह वहे सुरसरि प्रवाह ।—रांमदास मेड़तिया रौ गीत

२ देखो—'प्रमुख' (रू.भे.)

पमुंकणौ, पमुंकबौ—देखो 'मूकणौ, मूकबौ' (रू.भे.)

उ०—पुहपवती लता न परस पमुकै, देतौ अंग आलिंगन दांन । मत-वाळौ पय ठाइ न मंडै, पवन वमन करतौ मधु पांन ।—वेलि

पमुकणहार, हारौ (हारी), पमुकणियौ—वि० ।

पमूंकिओड़ौ, पमूंकियोड़ौ, पमूंक्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पमूंकीजणौ, पमूंकीजबौ—कर्म वा० ।

पमूंकियोड़ौ—देखो 'मूकियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पमूंकियोड़ी)

पमोडी–सं०स्त्री० [सं० पद्मकर्कटी] पद्मकर्कटी (उ.र.)

पमोद—देखो 'प्रमोद' (रू.भे.) (जैन)

पम्मलेसा—देखो 'पद्मलेस्या' (रू.भे.) (जैन)

पम्ह—देखो 'पद्म' (रू.भे.) (जैन)

पम्हलेसा—देखो 'पद्मलेस्या' (रू.भे.) (जैन)

पम्हा—देखो 'पदमा' (रू.भे.) (जैन)

पयंग—१ देखो 'पतंग' (रू.भे.)

२ देखो 'पमंग' (रू.भे.)

उ०—दहलै पयंग पायळां दौड़ । परसाद थंभ पै जांण पौड़ ।—गु.रू.बं.

पयंचसवद—देखो 'पंचसवद' (रू.भे)

पयंडु, पयडौ–स०पु० [सं० प्रचण्ड] १ प्रखर, तेज ।

उ०—१ सुहगुरु सिरि जिण लवधि सूरि, पट्ट कमल मायंडु । झायडु

सिरि जिणचन्द सूरि, जो तव तेय पयंडु ।—कवि ग्यांनकलस

उ०—२ पोळि पहुतउ पंडु तेजि तरणि पयंडु ।—पं.पं.च.

२ जबरदस्त । उ०—बिहुं खवे दो माथा करयलि कोदंडो । वाळी वेसह बाळो भुयदंड पयंडो ।—पं.पं.च.

पयंद–सं०पु० [सं० पय+इन्द्र] तालाब, सरोवर (अ.मा.)

उ०—अतरै सारंग आवियो, किया पयंदा कोट । साट पड़ावण सूर री, गोठ करण मन मोट ।—पा.प्र.

पयंपणो, पयंपबो–क्रि०स० [सं० प्रजल्पनम्] कहना, कथना ।

उ०—ऊठि अचूंका बोलणा, नारि पयंपै नाह । घोड़ां पाखर घमघमी, सिषू राग हुवाह ।—हा.झा.

पयंपणहार, हारो (हारी), पयंपणियो—वि० ।

पयंपिओड़ो, पयंपियोड़ो, पयंप्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पयंपीजणो, पयंपीजबो—कर्म वा० ।

पयंपियोड़ो–भू०का०कृ०—कहा हुआ, कथा हुआ ।

(स्त्री० पयंपियोड़ी)

पय–सं०पु० [सं०] १ दूध । उ०—पय मीठा कर पाक, जो अमरत सींचीजिये । उर करड़ाई आक, रंच न मूके राजिया ।

—किरपाराम

२ पानी । उ०—भूखी की जोमें सिसकारा भरती । नांखै निसकारा धीमें पग धरती । मुखड़ो कुम्हळायो भोजन बिन भारी । पय पय कर तोड़ी पोढ़ी पियप्यारी ।—ऊ.का.

[सं० पद, प्रा० पय] ३ चरण, पंक्ति । उ०—मुहरि अंति लुघवि गुरु मभि, बार चिआर बिनांण । पय सोळह आखर परठि, आखि रूप इहनांण ।—ल.पिं.

४ पैर । उ०—रिणमाल ऊठि नरसिंघ रुख, पय ग्रहि लात पछाड़िया ।—सू.प्र.

५ तेज, कान्ति । उ०—पालर पय पिव खाग पय, पड़ै समांण प्रभाव । सफरी अर तिय चख सदा, घालै प्रजळा घाव ।

—रेवतसिंह भाटी

पयग–सं०पु० [सं० पयोग] वरुण (अ.मा.)

पयगुण–सं०पु०—शरीर (अ.मा.)

पयचार–सं०स्त्री० [सं० पदचार] १ पादरक्षिका, जूती (अ.मा.) ।

२ देखो 'पदचार' (रू.भे.)

पयठणो, पयठबो—देखो 'पैठणो, पैठबो' (रू.भे.)

उ०—आजूणउ घन दीहड़उ, साहिब कउ मुख दिट्ठ । माथा भार उळाथ्यियउ, आंस्यां अमी पयट्ठ ।—ढो.मा.

पयड, पयडउ, पयडिउ–सं०पु० [सं० प्रकट] प्रकट ।

उ०—१ गुरु तक्क कव्व नाडय पमुह, विज्जा वास पसिद्ध घर । परिहरवि आवि विहि पयड कइ, पुहवि पसंसिजइ सुपरपरि ।

—ऐ.जै.का.सं.

उ०—२ अत्थांणु पहुविरायह तण उजिणि, रंजवि जयपत्त लियउ । खरहरय सहि जगि पयडिउ, जुत पहांणु पहुविप्पयउ ।

—ऐ.जै.का.सं.

पयडिय, पयडी–सं०स्त्री० [सं० प्रकृति] प्रकृति । उ०—सिरि 'उद्योतन' 'वद्धमान सिरि सूरि' जिणेसर' । थंभणपुर सिरि 'अभयदेव', पयडीय परमेसर ।—ऐ.जै.का.सं.

पयडीबंध—देखो 'प्रकृतिबंध' (रू.भे.)

पयण–सं०पु० [सं० पद] चरण । उ०—दूजबर जगण पयेण जिण, सो करहंती सुणंत । सात गुरु पय जास मध, सीखा छंद सुमंत ।

—र.ज.प्र.

पयतळि—देखो 'पदतळ' (रू.भे.)

उ०—भूवलयंमि पसिद्ध सिद्ध, जो संकरु भणियउ । गोरी पयतळि रुलिय, सोब इणि बांणिहि हरियउ ।—अभयतिलक

पयद—देखो 'पयोद' (रू.भे.)

पयदळ—देखो 'पैदल' (रू.भे.)

पयदात–सं०पु० [सं० पदाति] पैदल, प्यादा ।

उ०—सहनाय सुर विचि सोह अति, अच्छर लेत विमोह । सब सस्त्र संजुत सूर, पयदात भूंह सपूर ।—रा.रू.

पयध—देखो 'पयोधि' (रू.भे.) (डिं.को.)

पयधर—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)

उ०—पयधर रा मथण जगत रा पाळग । सर रा अचळ संत रा साथ ।

—र.रू.

पयधि—देखो 'पयोधि' (रू.भे.)

पयनध, पयनिध, पयनिधि—देखो 'पयोनिधि' (रू.भे.)

उ०—असमांन धार मंजर उचितापति, आगर अलिम मंळै निळ आप । पाळग मीन मोर तर पातां, पयनिधि पावस बसंत 'प्रताप' ।

—महारांणा प्रताप रो गीत

पयनिरत–सं०स्त्री०यौ० [सं० पयोनृत्य] मछली (अ.मा.)

पयन्ना–सं०पु० [सं० प्रकर्ण] प्रकर्ण (जैन)

पयप–सं०पु०यौ० [सं०] वरुण (अ.मा.)

पयपान–सं०पु०यौ० [सं० पयपान] १ दुग्ध-पान ।

२ जल-पान ।

पयलु–वि० [सं० पराचीन] पराचीन (उ.र.)

पयसणो, पयसबो—देखो 'पैसणो, पैसबो' (रू.भे.)

उ०—निसुणी नारि विचारिण पयसियइ । प्रीय तणी तडि कउतिगि वयसियइ ।—सालीभद्र सूरि

पयसागर–सं०पु० [सं०] १ समुद्र ।

२ तालाब ।

३ बर्तन विशेष (दूध या जल)

रू०भे०—पइसागर ।

पयसीरा–सं०स्त्री० [सं० पयः+रा० सीर] नदी (अ.मा.)

पयस्वनी–सं०स्त्री० [सं० पयस्विनी] पानी वाली नदी ।

उ०—भीमां धुनी पयस्वनी, गोदावरी गहीर। उन्नतभद्रा पूरणा, किसना निरमळ नीर।—बां.दा.

पयहव—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)

पयहारी-सं०पु० [सं० पय+आहारी] केवल दूध पर निर्वाह करने वाला।

रू०भे०—पयारी, पैहारी।

पयांण, पयांणउ—देखो 'प्रयांण' (रू.भे.)

उ०—१ जिण परवत प्रभु पग धरै रे, सो तो करै रे पताळ पयांण। —गी.रां.

उ०—२ तइं संचलतइं सूर, घूंघळियउ धर धमधमी। खउंदाळिम खीची दिसइ, कियउ पयांणउ पूर।—अ० वचनिका

उ०—२ हिले सप हैघाट, चले बांना बदरंगी। इळ जळनिधि उल्लटे, जांण वडवानळ सगी। गिर छीजै खुरताळ, पहवि थळ सिखर पलट्टै। पड़ अपंथ पंथ, अह तुट्टै सर खुट्टै।—गु.रू.बं.

पयांणो—देखो 'प्रयांण' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—१ लीला किम ढीलो बहै, पंथ पयाणो दूर। गोख उडीकै कांमणी, जोबन में भरपूर।—अज्ञात

पयाद, पयादौ-सं०पु० [सं० पदाति] (स्त्री० पयादी) पैदल, प्यादा।

उ०—१ पंगू पयादं मूक सादं ऊदमादं कढ्ढ ए। तेजाळ तामं वेग कामं नीस लाभं वढ्ढ ए।—पा.प्र.

उ०—२ तीस हजार साथि घोड़ा रजपूत। बीस हजार फौज पयादी मजबूत।—सि.वं.

उ०—३ बादसाह इण रा वचन री धाक सूं तुरत पयादौ होय कही।—नी.प्र.

रू०भे०—पय्यादौ।

पयार-सं०पु० [सं० प्रकार] १ प्रकार। उ०—नव-नव भंगिहि पंच पयार, भोगिवि भोग वल्लह कुमार।—उपाध्याय मेरुनन्दन गणि

२ देखो 'पाताळ' (रू.भे.)

पयारी—देखो 'पयहारी' (रू.भे.)

पयाळ—१ देखो 'पाताळ'।

उ०—पैठा नाग पयाळ मैं, तर चंदण कर त्याग। चाळक चंदण लपटिया, नागा पोगर नाग।—बां.दा.

२ देख 'पलाळ' (रू.भे.)

पयाळसींगी—देखो 'पाताळसींगी' (रू.भे.)

पयाळि, पयाळु—देखो 'पाताळ' (रू.भे.)

उ०—मवसि घड़ा बळि माळि, वांमण ज्युं 'वीठळ' वधै। उतवंग जाइ ब्रह्मंडि अडै, पग सातमैं पयाळि।—वचनिका

पयालौ—देखो 'प्यालौ' (रू.भे.)

उ०—सोण चंडी पयालां नवालां ग्रीध भखै मांस।
—राजा रायसिंह झाला री गीत

पयावच्च-सं०पु० [सं० प्रजापति] ब्रह्मा (जैन)

पयावच्चथावरकाय-सं०पु० [सं० प्रजापति स्थावर काय] वनस्पति काय (जिसका मालिक प्रजापति नामक देव हो) (जैन)

पयावाळौ-वि०—पैसे वाला, धनवान।

पयावि—देखो 'प्रतापी' (रू.भे.) (जैन)

पयासणु—देखो 'प्रकासन' (रू.भे.) (जैन)

पयासणौ, पयासवौ—देखो 'प्रकासणौ, प्रकासवौ' (रू.भे.)

उ०—एकंतु करि अखीउ कन्न गुफु कुंती पयासीउ।
—पं.पं.च.

पयूख—देखो 'पीयूख' (रू.भे.)

पयै—देखो 'पय' (रू.भे.)

उ०—तास समर जिण तारिया, पयै ऊपरा पखांण।—पिं.प्र.

पयो-सं०पु०—पैसा। उ०—यदि चंदनं बहु तदा किं कपाट युग्मं कारयं यदा पयो बहु तदा किं सरवस्य क्षेपणीयं।—व.स.

पयोद-सं०पु० [सं०] बादल।

रू०भे०—पयद, पयोदु।

पयोदर—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)

पयोदु—देखो 'पयोद' (रू.भे.)

उ०—टंकार कोदंड तणु सु वाजिउं। जांणे सु कल्पांत पयोदु गाजेउ।
—विराट पर्व

पयोध—देखो 'पयोधि' (रू.भे.)

उ०—ग्राह गोह गयंदां, देख व्याघ मदंधा। पेख ग्रोध पुलिंदां, पयोध नध पार।—र.ज.प्र.

पयोधर-सं०पु० [सं०] १ समुद्र (डिं.को.)

२ तालाब।

३ बादल।

४ स्तन, कुच (ह.नां.मा.)

उ०—धरधर स्त्रिग सधर सुपीन पयोधर, घणीं खीण कटि अति सुघट।—वेलि

५ गाय का आयन।

६ सूर्य।

७ लघु, गुरु, लघु चार मात्रा के समूह का नाम (र.ज.प्र.)

८ २४ लघु, १२ गुरु कुल ३६ वर्ण और ४८ मात्रा का दोहा नामक छंद (र.ज.प्र.)

९ ४४ गुरु, ६४ लघु, १०८ वर्ण व १५२ मात्रा का छप्पय नामक छंद (र.ज.प्र.)

रू०भे०—पओहर, पयधर, पयहर, पयोदर, पयोहर, पहोधर, पुओहर, पूओहर।

पयोधार-सं०पु० [सं० पयोधर] समुद्र। उ०—सर्फं सोह मैंडांण ऊडांण सारां। पयोधार हूंता न को होय पारां।—सू.प्र.

पयोधि-सं०पु० [सं०] समुद्र। उ०—कईक तो कंस निजवंस रा कवाड़ा, पाप रा पयोधि कइक पढ़िया। समै इण मांय नीमाज 'पीथल'

सुतन, खँग मग घरम रै थँ ईज खड़िया।
—ठा उम्मेदसिंह नीमाज रौ गीत

ल०भे०—पयध, पयधि, पयोघ।

पयोनध, पयोनिध, पयोनिधि–सं०पु० [सं० पयोनिधि] समुद्र (डिं.को.)

उ०—१ इण विध आभरणांह, मनूं मुकता मिळी। छक तरुणाई छोळ, पयोनिध ज्यूं छिली।—बां.दा.

उ०—२ सुरता विकसी सर सायन में, परि प्रेम पयोनिध पायन में।—ऊ.का.

रू०भे०—पयनध, पयनिध, पयनिधि।

पयोमुख, पयोमुच–सं०पु० [सं०] बादल, मेघ।

उ०—देव अवर मीठा मुखे, हृदय कुटिळ असमांन। जांणि पयोमुख संग्रह्या, ते विस कुंभ समांन।—वि.कु.

पयोवाह–सं०पु० [सं०] बादल, मेघ।

पयोव्रत–सं०पु० [सं०] मत्स्य पुराण के अनुसार एक व्रत का नाम।

पयोहर—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)

उ०—१ पहिलौ मुखराग प्रगट थ्यौ प्राची, अरुण कि अरुणोद अंबर। पेखे किरि जागिया पयोहर, संभ्या वंदण रिखेसर।
—वेलि

उ०—२ आठ वेद मागण आंणै, मांहे तास पयोहर मांणै। वाचि छंद इम 'पदमावती', करि रुघनाथ तणी कीरत्ती।—पि.प्र.

पय्यादी—देखो 'पयादी' (रू.भे.)

उ०—घोड़ा ऊंट हाथी तौ पय्यादी फौज वैणा।—शि.वं.

परं–अव्य०—किन्तु, लेकिन। उ०—बीजे ठाकुरे वात विचारि अर राव भोज मेलियौ। कहाडियौ जु राजि पातिसाहजी सलामति रावळी साथ आइ आपड़ियौ छै। परं पहुचण दीजै।—द.वि.

परंग, परगि–सं०पु० [सं० पर+अंग] दूसरे का शरीर या अंग।

उ०—बिहुं वेवाहिय मंदिरि नंदि रमइं तणु अंगि। लेई लागवि धाविय आविय वात परंगि।—नेमिनाथ फागु

परंच–अव्य० [सं०] १ और भी।

२ तो भी।

३ परन्तु।

परंजण, परंजन—देखो 'परजन्य' (रू.भे.) (अ.मा., नां.मा.)

परंतप–वि० [सं०] १ वैरियों को दुःख देने वाला।

२ जितेन्द्रिय।

सं०पु० [सं०] चिन्तामणि।

परंतु–अव्य० [सं०] १ पर।

२ तो भी।

३ किन्तु।

४ लेकिन।

परंद, परंदौ–सं०पु० [फा० परिन्दः] चिड़िया, पक्षी।

उ०—व्रद दुधा खड़ग रव क्रपा बभंदा बरण, सवा सावक करण सुधा घर सीज। तरोहर हमाऊ परंद छाया तरंद, राजयंद नरंद कुरंभ तणी रीज।—हुकमीचंद खिड़ियौ।

परंध्री—देखो पुरंध्रि' (रू.भे.) (ह.नां., अ.मा.)

परंपर–सं०पु० [सं०] १ अविच्छिन्नक्रम, सिलसिला।

उ०—प्रकरण सिद्धांत गुरु परंपर, सुणी सहु अधिकार ए।
—स.कु.

२ पुत्र, पौत्र, बेटे-पोते।

परंपरा–सं०स्त्री० [सं०] अनुक्रम, सिलसिला।

यौ०—परंपरागत।

रू०भे०—परापर, परापरी।

पर–वि० [सं०] १ अन्य, दूसरा, पराया।

उ०—१ वाद भणी विद्या भणी, पर रंजण उपदेस।—स.कु.

उ०—२ वसा ए ना वासौ जी ल्यां, म्हारी मिरगानैणी राज। पर घर वासो ए सुंदर, ना लेवां जी म्हारा राज।—लो.गी.

यौ०—परआतमा, परउपकार, परकस्ट, परकाज, परघर, परचिंता, परदुख, परद्रोह, परधन, परनिंदा, परपीड़न, पररंजन, परसुख।

२ आगे का, पूर्व का। उ०—अणमे अणरागी, पर भव पागी, बग बागी बाजंदा है।—ऊ.का.

३ दूसरे का, पराए का। उ०—जीव दया पालउ जांण, आप समा पर प्रांण।—स.कु.

४ बाद का।

५ चोर (अ.मा.)

सं०पु० [सं०] १ शत्रु, वैरी (ह.नां.मा.)

उ०—१ नीसांणै घाव वाजिया, गाजै गहरै सद्द। आकंपे पतसाह दळ, पडहायौ पर मद्द।—नैणसी

उ०—२ सखी अमीणौ साहिबौ, सुणै नगारां घ्रोह। जावै पर दळ सौमुहौ, ज्यूं सादूळौ सीह।—बां.दा.

उ०—३ सखी अमीणौ साहिबौ, गिणै पराई देह। सर वरसै पर चक्र सिर, ज्यूं भादवड़ै मेह।—बां.दा.

यौ०—परंतप।

२ पंख, पक्ष। उ०—वहि खाळ रत्राळ भ्रिभाळ परां, वजि छाक बंबाळ लंकाळ छके।—सू.प्र.

मुहा०—१ पर आणा—पंख उगना, पंखों से युक्त होना।

२ पर उखड़णा—कमजोर हो जाना, शक्तिहीन हो जाना।

३ पर उखाड़ना—कमजोर कर देना, शक्तिहीन कर देना।

४ पर ऊगणा—शरारत आना, दुष्टता आना।

५ पर कट जाणा—अशक्त हो जाना, कुछ करने लायक न रहना।

६ पर काट देणा—अशक्त कर देना, कुछ करने लायक न रहने देना।

७ पर कँचणा—पंख काट देना (कबूतरबाज)

८ परजमणा—देखो 'परऊगणा'।

९ पर जळणा--साहस न होना, पहुंच न होना।
१० पर झाड़णा--पुराने परों को गिराना, पंख फटफटाना।
११ पर टूटणा--देखो 'पर जळणा'।
१२ पर न मारणा--पैर न रख सकना, जा न सकना।
१३ पर निकळणा--देखो 'पर आणा'।
१४ पर निकाळणा--उड़ने योग्य होना, पंखों से युक्त होना, बढ़ कर चलना, इतराना।
सं०स्त्री० [सं०] ३ प्रीति, प्रेम। उ०--१ सुसतौ सो ठाकुर हुवौ। रजपूतां परज-लोग सूं भली पर पाळी।--नैणसी
उ०--२ चीलांगण न तजै द्रुमचंदण, मांछां-गण न तजै महण। मोटा धणी अवै तो 'मांना', पर पाळै तौ वडापण।
--रिवदांन महडू
४ प्रतिज्ञा, प्रण। उ०--पर प्रहळाद तणी प्रत पाळी। वळ धू अखी कियौ वनमाळी।--र.ज.प्र.
५ मर्यादा, परम्परा। उ०--पर जूनी पाळण कब पातां, गहलां राखण कीत घणी। करणीगर भव-भव मो कीजै, धरणीवर देवड़ौ धणी।--दुरसौ आढौ
६ इतिहास, इतिवृत्त। उ०--पत हिंदू करण गुणां री पारख, पर जूनो पहचांण। भोम विलास पधारौ 'भीमा', रूपग सुणवा रांण।
--किसनौ आढौ
अव्य०--१ परन्तु, लेकिन। उ०--सर फूटै हैमरां नर दुसार। पर रुधर न भीजै होय पार।--वि.सं.
२ ऊपर, सीमा से परे। उ०--इतरे लाभ वधूळो आवै, कहर क्रोध डंडूळ कहावै। छित पर कांम धुंध नभ छावै, पात्र विवेक निजर नहिं आवै।--ऊ.का.
यौ०--परब्रह्म।
३ देखो 'प्र' (रू.भे.)
क्रि०वि०--अलग।
परइ--देखो 'परै' (रू.भे.)
उ०--ससनेही समदां परइ, वसत हिया मंझार। कुसनेही घर आंगणइ, जाण समंदां पार।--ढो.मा.
परइधत-सं०पु० सं० परैधित ?] भृत्य, दास (ह नां.मा.)
परउपकार--देखो 'परोपकार' (रू.भे.)
परउपकारी--देखो 'परोपकारी' (रू.भे.)
परउपगार--देखो 'परोपकार' (रू.भे.)
उ०--परउपगारइं थाय ते तुं पिण, जिण जी हुइ तेम रे लाल।
--वि.कु.
परउपगारी--देखो 'परोपकारी' (रू.भे.)
परकट--देखो 'प्रकट' (रू.भे.)
उ०--गोप्य गुसांई व्है रहै, अब काहे न परकट होइ। रांमसनेही संगिया, दूजा नाहीं कोय।--दादूबाणी

परकज--देखो 'परकज्ज' (रू.भे.)
परकजू-वि०यौ० [सं० पर+कार्य+रा.प्र.ऊ] दूसरे का कार्य करने वाला, परोपकारी।
रू०भे०--परगजु।
परकज्ज-सं०पु०यौ० [सं० पर+कार्य] दूसरे का कार्य, पराया कार्य।
रू०भे०--परकज।
परकत, परकत्त--देखो 'प्रकृति' (रू.भे.)
उ०--अवनी रोग अनेक, ज्यांरौ विध कीधौ जतन। इण परकत्त री एक, रचो न औखद राजिया।--किरपाराम
परकमण, परकमणा, परकमा, परकम्मा--देखो 'परिक्रमा' (रू.भे.)
उ०--१ परकमणा दे पड़ पगां, बंदन कर जिण वेर। नाथ अगाड़ी नांखियौ, नृप सिर री नाळेर।--पा.प्र.
उ०--२ सोहै सिल पर जेथ, पगलिया शिभू-केरा। करौ परकमा 'मेघ', निमौ दे मांन घणेरा।--मेघ.
उ०--३ राय देह पवराय, वार तण चेह विधंभा। झळअगी भूलिवा, करण लग्गी परकम्मा।--रा.रू.
परकर-सं०पु० [सं० परैश्वर्य] वैभव, ऐश्वर्य। उ०--अरु जिणां दिनां में माजन रा ठाकर उदैभाणजी रौ बडो परकर। घोड़ा ५०० काठी पड़ै।--द.दा.
रू०भे०--परखर, परिकर, परीकर।
परकमण, परकारमण-सं०पु० [सं० पर+कार्मण] अनुचर, नौकर।
(ह.नां.मा.)
परकरती--देखो 'प्रकृति' (रू.भे.)
परकांड--देखो 'प्रकांड' (रू.भे.)
परकार, परकाळ-सं०पु० [फा० परकार] १ वृत्त या गोलाई खींचने का एक उपकरण या औजार।
रू०भे०--पड़काल, पळकाळ।
२ देखो 'प्रकार' (रू.भे.)
उ०--महाविदेह सुदरसण मेरु तणै परकार।--स.कु.
परकास-सं०पु० [सं० प्रकाश] १ हंस (अ.मा.)
२ देखो 'प्रकास' (रू.भे.)
परकासक--देखो 'प्रकासक' (रू.भे.)
परकासण--देखो 'प्रकासण' (रू.भे.)
परकासणो, परकासबो--देखो 'प्रकासणो, प्रकासबौ' (रू.भे.)
उ०--इसड़ी वात विचारनै, कुमर बोल्यावौ पास रे लाला। रांणी जितरी मनमांहे तेवड़ी, तितरी दीधी परकास रे लाला।
--जयवांणी
परकासमांन, परकासवांन--देखो 'प्रकासवांन' (रू.भे.)
परकासियोड़ौ--देखो 'प्रकासियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परकासियोड़ी)
परकिरिया--देखो 'प्रक्रिया' (रू.भे.)

परकीय-वि० [सं०] १ दूसरे का, पराया।
२ देखो 'परकीया' (रू.भे.)
परकीया-सं०स्त्री० [सं०] १ पर पुरुष से प्रीति व संबंध रखने वाली स्त्री, एक नायिका।
२ गाथा छन्द का एक भेद जिसमें दो जगण होते हैं (र.ज.प्र.)
रू०भे०—परकीय।
परकीरण—देखो 'प्रकीरण' (रू.भे.)
परकोट, परकोटौ-सं०पु०[सं०पर+कोट:] किसी स्थान या किले की रक्षा के लिए चारों ओर उठाई गई ऊंची व दृढ़ दीवार, चहारदीवारी, प्राचीर।
उ०—१ कोट मांहे बडी इमारत कांई नहीं। कोट आगै परकोट, तिण मां बडी कोटड़ी छै।—सोजत रै मंडळ री वात
उ०—२ किला परकोटा री उण कनै इदकाई है। म्हारा विचार में गम खाणी वत्ती है।—फुलवाड़ी
परकोप—देखो 'प्रकोप' (रू.भे.)
परक्खणौ, परक्खबौ—देखो 'परखणौ, परखबौ' (रू.भे.)
उ०—गुणचाळै वद भादवै, नवमी ऊगत भांण। आवी फौज अचितियां, चोज परक्खण पांण।—रा.रू.
परक्खणहार, हारौ (हारी), परक्खणियौ—वि०।
परक्खिग्रोड़ो, परक्खियोड़ो, परक्ख्योड़ौ—भू०का०कृ०।
परक्खीजणौ, परक्खीजबौ—कर्म वा०।
परक्खियोड़ौ—देखो 'परखियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परक्खियोड़ी)
परक्रत, परक्रति, परक्रत्त, परक्रत्ती-सं०स्त्री० [सं० परकृति] १ दूसरे का किया हुआ कार्य।
२ देखो 'प्रकृति' (रू.भे.)
उ०—पुरखतौ गुणे प्रधांन, कदे नहि मन में कावळ। पिण कांइ परक्रती सांम, नहीं मन में सावळ।—घ.व.ग्रं.
परक्रमण, परक्रमा—देखो 'परिक्रमा' (रू.भे.)
उ०—परक्रमण तिण दे पग परसे, जस यम जीह अपार जपे। लेखा नर नागां नै दुरलभ, वीधौ सो मौनै दोखार।—र.रू.
परखंड-सं०पु० [सं०] विदेश, परदेश। उ०—खंडां परखंडां फिरियौ, संतां तणौ सुकाळ। तो भजियां सुख ऊपजै, सो का परदा टाळ।
—अज्ञात
परख—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—बळ खांधै जण जण वहै, कस बांधै करवाळ। परख मही अर कायरां, ग्रहग्रहियां ग्रंबाळ।—वी.स.
परखणौ, परखबौ-क्रि०स० [सं० परीक्षणम्] १ किसी वस्तु या पदार्थ की जांच करके उसके गुण-दोष, महत्व, मान आदि का ज्ञात करना।
उ०—वै एक सुनार कनै उण मोती अर उण लाल नै परखावण सारू उडिया। सुनार पैला लाल नै परखी अर पछै मोती नै परखियौ।—फुलवाड़ी
२ किसी मनुष्य अथवा प्राणी के स्वभाव तथा चरित्र की विशेषता को जानना। उ०—पारबती परमेस सरब पारवती सती। कहि हो कहि त्रिसकति जोग तु गोरख जती। सीता स्त्री सारिखी स्रीया सारंगधर सरिखी। सावतरी सुभराज प्रघळ ब्रह्माजी परखी।
—पी.ग्रं.
३ परीक्षा करना, जांच करना। उ०—सगुरा निगुरा परखिये साधु कहैं सब कोइ। सगुरा सांचा निगुरा झूठा, साहिब के दर होइ।—दादूबाणी
४ पहिचानना। उ०—१ अगम निगम दोय वाणी परखी, सूक्षम, भेद भणाया। भेदया भेद वेध नहि लागे, यूं आतम दरसाया।
—स्री हरिरांमजी महाराज
उ०—२ मैं परणंती परखियौ, सूरति पाक सनाह। घड़ि लड़िसी गुड़िसी गयंद, नीठि पड़ेसी नाह। नाह नीठि पड़िसी, खेत मांझी निवड। गयंद पड़िसी गहर, करड़ घड़ मड़ गहड़।—हा.झा.
५ जानना, परिचय प्राप्त करना। उ०—नर संपत विलसै नहीं, जाझा दुख सूं जोड़। लियौ परख लालच लहर, खरी बुरी आ खोड़।—बां.दा.
परखवाड़णौ, परखवाड़बौ, परखवाणौ, परखवाबौ, परखावणौ, परखवावबौ, परखाड़णौ, परखाड़बौ, परखाणौ, परखाबौ, परखावणौ परखावबौ—प्रे०रू०।
परखिग्रोड़ो, परखियोड़ौ, परख्योड़ौ—भू०का०कृ०।
परखीजणौ, परखीजबौ—कर्म वा०।
परक्खणौ, परक्खबौ, परिखणौ, परिखबौ, परीखणौ, परीखबौ, परीछणौ, परीछबौ, परेखणौ, परेखबौ, पारखणौ, पारखबौ।
—रू०भे०
परखत्र-वि० [सं० पर+क्षत्रम्] क्षत्रियत्व, वीरता, बहादुरी।
उ०—राव रायभांणजी राज करै। बडो सुभियांण, परखत्र प्रमांण, आचार रो करण, भीम रो सेल, साच रो जुधीस्टर"—।
—पनां वीरमदे री वात
परखद, परखदा—देखो 'परिसद' (रू.भे.)(अ.मा., ह.नां.मा.)
उ०—१ स्री महावीर धरम परकासइ, बइठी परखद बार जी। अम्रत वचन सुणत अति मीठा, पांमइ हरख अपार जी।—स.कु.
उ०—२ बार परखदा बइठी आगलि, आप आपणइ ऊलासइ रे।
—स.कु.
उ०—३ दिनें उंचा रहै। रात्रि हेटे दुकान में बसांण देवै। परखदा घणी होवै। लोक घणा समज्या।—भि.द्र.
परखर—१ देखो 'प्रखर' (रू.भे.)
२ देखो 'परकर' (रू.भे.)
परखा—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—१ प्रजाराज आणंद पूगी परखा। वधं देवतां कीध फूलां वरिखखा।—सू.प्र.

उ०—२ कर चाप अटार-टंकी करखं। परखा सर एलम की परखं।—मे.म.

परखाई-सं०स्त्री० [सं० परीक्षा] १ परखने की क्रिया।
२ इसकी मजदूरी। उ०—मिनख लुगायां होकर गेली, न्है चेली हरखाई। पांमर गुरु नै परखावण री, पले नहीं परखाई।
—ऊ.का.

परखाड़णो, परखाड़बो—देखो 'परखाणो, परखाबो' (रू.भे.)
परखाड़णहार, हारो (हारी), परखाड़िणयो—वि०।
परखाड़िग्रोड़ो, परखाड़ियोड़ो, परखाड़योड़ो—भू०का०कृ०।
परखाड़ीजणो, परखाड़ीजबो—कर्म वा०।

परखाड़ियोड़ो—देखो 'परखायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परखायोड़ी)

परखाणो, परखाबो-क्रि०स० [परखणो क्रिया का प्रे०रू०] १ किसी वस्तु या पदार्थ के गुण, दोष, महत्व, मान आदि की जांच कराना।
उ०—सराफां सुनारां नूं दिखाय देय, रुपया खरा लेय परखायजे, अर तोनूं कोई पूछै थारै तेवड़ कठा सूं आई तो कहजे म्हारा गुरु बेचण नैं दीन्ही छै।—बैताळपच्चीसी
२ किसी मनुष्य अथवा प्राणी के स्वभाव तथा चरित्र की जानकारी कराना।
३ परीक्षा कराना, जांच कराना।
४ पहिचानवाना।
५ परिचय प्राप्त कराना, जानकारी कराना।
परखाणहार, हारो (हारी), परखाणियो—वि०।
परखायोड़ो—भू०का०कृ०।
परखाईजणो, परखाईजबो—कर्म वा०।
परखाड़णो, परखाड़बो, परखावणो, परखावबो, परीछावणो, परीछावबो, पारखणो, पारखबो—रू०भे०।

परखायोड़ो-भू०का०कृ०—१ गुण-दोष, महत्व, मान आदि की जांच कराया हुआ (पदार्थ)
२ चरित्र, स्वभाव आदि की जानकारी कराया हुआ (मनुष्य)
३ परीक्षा कराया हुआ, जांच कराया हुआ।
४ पहिचान कराया हुआ।
५ परिचय प्राप्त कराया हुआ, जानकारी कराया हुआ।
(स्त्री० परखायोड़ी)

परखावणो, परखावबो—देखो 'परखाणो, परखाबो'।
उ०—१ मिनख लुगायां होकर गेली, न्है चेली हरखाई। पांमर गुरु ने परखावण री, पले नहीं परखाई।—ऊ.का.
उ०—२ वै एक सुनार कनैं उण मोती अर उण लाल नैं परखावण सारु उडिया।—फुलवाड़ी
परखावणहार, हारो (हारी), परखावणियो—वि०।
परखाविग्रोड़ो, परखावियोड़ो, परखाव्योड़ो—भू०का०कृ०।
परखावीजणो, परखावीजबो—कर्म वा०।

परखावियोड़ो—देखो 'परखायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परखावियोड़ी)

परखियोड़ो-भू०का०कृ०—१ गुण-दोष, महत्व, मान आदि की जांच किया हुआ (पदार्थ)
२ चरित्र, स्वभाव आदि की जानकारी किया हुआ (मनुष्य)
३ परीक्षा किया हुआ, जांच किया हुआ।
४ पहिचाना हुआ।
५ जाना हुआ, परिचय प्राप्त किया हुआ।
(स्त्री० परखियोड़ी)

परखी-सं०स्त्री० [सं० परीक्षणम्] एक प्रकार का लोहे का बना नुकीला लंबोतरा उपकरण जिसकी सहायता से बंद बोरियों में से नमूने के तौर पर कण या बीज निकाले जाते हैं।

परख्ख—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—झगड़त भागउ गोरियां, ढोलइ पूरी सख्ख। मारू ढळिया-इत हुई, पांमी प्रिय परख्ख।—ढो.मा.

परग-सं०पु० [देशज] पैर, चरण। उ०—सीस सरग सातमें, परग सातमें पयाळै। अरणव साते उदर, विरछ रोमांच विचाळै।—र.रु.

परगड़उ—देखो 'प्रकट' (रू.भे.)
उ०—सूरपन्नती नांमइ परगडउ रे, जेहनउ छइ उद्दांम उवंग रे।
—वि.कु.

परगड़णो, परगड़बो—देखो 'प्रकटणो, प्रकटबो' (रू.भे.)
उ०—स्री जिन मांणिक सूरि प्रथमसिस्य परगड़ा रे, विनय समुद्र बडगात।—प.प.चो.

परगजु—देखो 'परकजु' (रू.भे.)
उ०—पर उपगारी परगजु, मोटी तुमारी लाज।—धरम-पत्र

परगट—देखो 'प्रकट' (रू.भे.)
उ०—१ कांमी अरु क्रोधी वेद विरोधी, परगट नरक पड़ंदा है। भगती नहिं भोगा जुगत न जोगा, अदविच संत अड़ंदा है।
—ऊ.का.
उ०—२ कामधेन खरणै धवळ, क्यूं नह झालै भार। मरियो गाडौ भार सूं, परगट जांण पहाड़।—बां.दा.

परगटणो, परगटबो—देखो 'प्रकटणो, प्रकटबो' (रू.भे.)
उ०—परहित कारण परगटिया, थे महर करो। म्हारा जिव री जळण मिटाय, ओ उपकार करो।—गी.रां.
परगटणहार, हारो (हारी), परगटणियो—वि०।
परगटवाड़णो, परगटवाड़बो, परगटवाणो, परगटवाबो, परगटवावणो, परगटवावबो, परगटाड़णो, परगटाड़बो, परगटाणो, परगटाबो, परगटावणो, परगटावबो—प्रे०रू०।
परगटिग्रोड़ो, परगटियोड़ो, परगट्योड़ो—भू०का०कृ०।
परगटीजणो, परगटीजबो—भाव वा०।

परगटाड़णो, परगटाड़बो—देखो 'प्रकटाणो, प्रकटाबो' (रू.भे.)

परगटाड़णहार, हारो (हारी), परगटाड़णियो—वि० ।

परगटाड़िग्रोड़ो, परगटाड़ियोड़ो, परगटाड़्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परगटाड़ीजणो, परगटाड़ीजबो—कर्म वा० ।

परगटाड़ियोड़ो—देखो 'प्रकटायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परगटाड़ियोड़ी)

परगटाणो, परगटाबो—देखो 'प्रकटाणो, प्रकटाबो' (रू.भे.)

परगटाणहार, हारो (हारी), परगटाणियो—वि० ।

परगटायोड़ो—भू०का०कृ० ।

परगटाईजणो, परगटाईजबो—कर्म वा० ।

परगटायोड़ो—देखो 'प्रकटायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परगटायोड़ी)

परगटावणो, परगटावबो—देखो 'प्रकटाणो, प्रकटाबो' (रू.भे.)

परगटावणहार, हारो (हारी), परगटावणियो—वि० ।

परगटाविग्रोड़ो, परगटावियोड़ो, परगटाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परगटावीजणो, परगटावीजबो—कर्म वा० ।

परगटावियोड़ो—देखो 'प्रगटायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परगटावियोड़ी)

परगट्ट—देखो 'प्रकट' (रू.भे)

उ०—मेछ निजामळि मुलक, ग्रमल दवखण वरतायो। एण कपट ग्रापरो, जिको परगट्ट जणायो ।— रा.रू.

परगडणो, परगडबो—देखो 'प्रकटणो, प्रकटबो' (रू.भे.)

उ०—१ विण ग्रपराधइ वांधीइ, ग्रवळा सबळी ग्रंग । पछइ करत ते परगडउ, परनारी सिउं संग ।—मा.कां.प्र.

उ०—२ जुग प्रधांन जगि परगडा रे, स्त्री जिनचंद सूरिंदो रे ।
—स.कु.

परगणो—देखो 'परगनो' (रू.भे.)

परगत-सं०पु० [सं० परित्यक्त] १ परित्याग । उ०—गहमत गत ग्रसत ग्रवर तत परगत। ग्रखत दुचित रत भरथ ग्रत ।—र.रू.

२ देखो 'प्रकृति' (रू.भे.)

परगती—१ देखो 'प्रकृति' (रू.भे.)

२ देखो 'प्रगति' (रू.भे.)

परगनो-सं०पु० [फा० पर्गनः] वह भूभाग जिसके ग्रंतर्गत बहुत से ग्राम हों, परगना ।

रू०भे०—पड़गनो, पड़गणो, परगणो, पिड़गनूं, पिड़गनो ।

परगरणो, परगरबो-क्रि०ग्र० [सं० परिगलनम्] घुल जाना ।

उ०—एक सीह नइ पाखरघउ, सूर सिहाइवि ग्रावरघउ, पंचाम्रत ग्रमी परगरघउ । महादांन ग्राछइ घड़इ, दूध मांहि साकर पड़इ ।
—ग्र. वचनिका

परगळ-वि० [सं० पुष्कल] (स्त्री० परगळी) प्रचुर, ग्रधिक, पूर्ण, पूरा। उ०—घर ढांगी 'ग्रालम' धणी, परगळ लूणी पास । लिखियो जिणनें लाभसी, राड़धड़ारो वास ।—ग्रज्ञात

रू०भे०—परघळ, परिघळ, प्रगळ, प्रघळ ।

ग्रल्पा०—परगळो, परघळो, प्रग्घळो ।

परगळाण, परगळाई-सं०स्त्री० [सं० पुष्कल] १ बाहुल्यता, ग्रधिकता, ग्राधिक्य ।

२ विस्तार, फैलाव ।

रू०भे०—परघळांण, परगळाई, प्रगळांण ।

परगळो—देखो 'परगळ' (ग्रल्पा., रू.भे.)

(स्त्री० परगळी)

परगस—सं०पु०-पुष्प विशेष ?

ऊ०—डहडहत कुसम पुरत पराग, पलव दळ मिळ जेव जाग। रव-मुखी दावदी पुन पळास, नाफुरमा परगस ग्रासपास ।
—मयाराम दरजी री वात

परगह—देखो 'परिग्रह' (रू.भे.)

उ०—१ परगह ले बांधी पगां, सेंठी गूघर साथ । हूंजा री सारी हुकम, हुग्रो रंगीली हाथ ।—बां.दा.

परगहे—देखो 'परिग्रह' (रू.भे.)

उ०—इसढाई पिहुं ग्रलखांमणा, परगहे इसी सह पास ।—पा.प्र.

परगाढ—देखो 'प्रगाढ' (रू.भे.)

परगाळ—देखो 'प्रगाळ' (रू.भे.)

परगाळियो—देखो 'प्रगाळियो' (रू.भे.)

परगास—देखो 'प्रकास' (रू.भे.)

उ०—स्त्री राजा जनक घर कन्या ग्रवतारी । कोटिक भांण परगास कोटि भानूं चंद कळा उजियाळी ।—समानबाई

परगासक—देखो 'प्रकासक' (रू.भे.)

परगासणो, परगासबो—देखो 'प्रकासणो, प्रकासबो' (रू.भे.)

परगासणहार, हारो (हारी), परगासणियो—वि० ।

परगासिग्रोड़ो, परगासियोड़ो, परगास्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परगासीजणो, परगासीजबो—कर्म वा० ।

परगासियोड़ो—देखो 'प्रकासियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परगासियोड़ी)

परगाह, पर्गह, परग्गह—देखो 'परिग्रह' (रू.भे.)

उ०—१ मन मांहे मुळकेह, हय चढ 'जीदो' हालियो । परगह हूंत पुणेह, यण सिघ नं म्हैं ग्रोळख्यो ।—पा.प्र.

उ०—२ 'ग्रखौ' परग्गह ग्रागळो, जरद न मावै जोम । वाद तरस्सै साह सूं, वांह परस्सै व्योम ।—रा.रू.

परग्या—देखो 'प्रग्या' (रू.भे.)

परग्याचखू—देखो 'प्रग्याचखु' (रू.भे.)

परग्रह—देखो 'परिग्रह' (रू.भे.)

उ०—तइ दिख राजा तणइ साठ ताय पुत्री, साठ हजार कुंवर सिरदार । नवखंड रा भूपाळ नमइ जिण, परग्रह लहइ तियइ कुण पार ।—महादेव पारवती री वेलि

परघट—देखो 'प्रकट' (रू.भे.)

परघरळ, परघळ—देखो 'परगळ' (रू.भे.)

उ०—१ पिंगळ ऊचाळो कियो, आयो पुहकर सीर। खड़पांणी परघरळ तिहां, सुख पांमीयो सरीर।—ढो.मा.

उ०—२ दादो तो समरथां आवइ, दादो परघरळ लक्ष्मी लावइ हो।
—स.कु.

परघळणो, परघळबो—देखो 'पिघळणो, पिघळबो' (रू.भे.)

उ०—धरा कहतां प्रिथी गाढ पकड़ची, कठोर हुई। हेंमाचळ परवत परघळयो।—वेलि.टी.

परघळणहार, हारो (हारी), परघळणियो—वि०।

परघळिप्रोड़ो, परघळियोड़ो, परघळ्योड़ो—भू०का०कृ०।

परघळीजणो, परघळीजबो—भाव वा०।

परघळांण, परघळाई—देखो 'परगळांण' (रू.भे.)

परघळो—देखो 'परगळ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—१ सू ऊंट किण भांतरा है? थापवी तळी रा, सुपवी नळी रा, कवाडिया दांतां, उधरै पींड रा, परघळा आसणा रा, कांगरै धूव रा।—रा.सा.सं.

उ०—२ खळ दळां कंकळ सबळ खंड, वीर तंडै भुजबळी। सुज गळां समपै ग्रीध समळां, पळां भोजन परघळी।—रू.ज.प्र.

(स्त्री० परघळी)

परघु, परघू, परघे, परघै—देखो 'परिग्रह' (रू.भे.)

उ०—१ वीटिया चलहर रायनां, पायक परघू जाइ। धरम दूयारइ ऊतरइ, कोइ न साहमुं थाइ।—मा.कां.प्र.

उ०—२ इसोही कोई आपणी परघै रै मांही छै इण घोड़ी नै लेय आवै।—सूरै खींवै कांधळोत री बात

उ०—३ सारा रजपूतां सैमल लैणो भड़ घोड़ा भजको, घोड़ा ताता भड़ फुरती वाळा, इसो सरदार नै इसो परघै, होवै तो उण रो हुकुम इण जिहांन में चालै।—वी.स.टी.

परघ्घम—देखो 'परिघ' (रू.भे.)

उ०—तुपक्कनि तोप जमूर जुलाल, परघ्घन सूल गदा भिंदिपाल। गुपत्तिय खंजर धूप कटार, करत्तिय चक्र चलै चुकमार।—ला.रा

परघ्रत-सं०पु० [सं० पर+घृत] मक्खन, नवनीत (अ.मा.)

परड़-सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार का सर्प।

रू०भे०—परड, पिरड़।

अल्पा०—पडोटियो, परड़ोटियो।

परड़ोटियो—देखो 'परड़' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—स्यांत कर देखियो वंस खटतीस नै, भांत परड़ोटियां रंग भळियो। भांण हिंदवांण दुनियांण इण विचाळै, मणिधर सुपातां तूं हिज मिळियो।—ठा० उम्मेदसिंह नीमाज रो गीत

परड़ो—देखो 'प्रलय' (रू.भे.)

उ०—कहै दास सगरांम, कांम माछर रो करड़ो। मोटो हो तो करै, भो ब्रुस्ट पिरथी परड़ो। पिरथी रो परड़ो करै, एड़ो देख्यो घाट। आछो कीवी रामजी, जो नैनो कियो निराट। नैनो कियो निराट, तउ कररावै वरड़ो। कहै दास सगरांम, कांम माछर रो करड़ो।
—सगरांम

परचंड—देखो 'प्रचंड' (रू.भे.)

उ०—१ धन लूट कीधौ धांण, वधि नारनोळ विनांण। चंड-नयर रा परचंड, दो नगर भ्रं भुजदंड।—सू.प्र.

उ०—२ परचंड पटाभर पंथि पुळं। किरि जांणि परब्बत मट्ट कुळं।—गु.रू.बं.

परचइ—१ देखो 'परचो' (रू.भे.)

२ देखो 'परिचय' (रू.भे.)

परचक्कपल्ल-वि० [सं० पर+चक्र+राज० पल्ल] शत्रु दल को रोकने वाला, वीर, बहादुर। उ०—भारत्तिय चड्डिय तेजसी मल्ल। परवाड़-मल्ल परचक्कपल्ल।—रा.ज.सी.

परचणो, परचबो-क्रि०स० [सं० प्रच्छ ?] १ कहना। उ०—कागां केरी चांच ज्यूं, चुगलां केरी जीह। विसटा ज्यूं परची बुरी, चूं'थे सबही दीह।—बां.दा.

२ स्वीकार करना, मानना। उ०—१ जे मन परचसी तो कुंवर जीं नै ले आवसां, नहीं तो आंपां जाय तीरथ परस आसां।
—पलक दरियाव री बात

उ०—२ ढोलउ किम परचइ नहीं, सुहु रहिया समझाइ। पुळिया पूगळ दिसी, के कांइ कजि काइ।—ढो.मा.

३ समझना। उ०—साखी सबदी सीख कर, गावै सारी रात। आतम तो परच्या नहीं, करै विरांणी बात।
—स्री हरिरांमजी महाराज

परचणहार, हारो (हारी), परचणियो—वि०।

परचवाड़णो, परचवाड़बो, परचवाणो, परचवाबो, परचवावणो, परचवावबो, परचाड़णो, परचाड़बो, परचाणो, परचाबो, परचावणो, परचावबो—प्रे०रू०।

परचिप्रोड़ो, परचियोड़ो, परच्योड़ो—भू०का०कृ०।

परचीजणो, परचीजबो—कर्म वा०।

परचलण—देखो 'प्रचलण' (रू.भे.)

परचाड़णो, परचाड़बो—देखो 'परचाणो, परचाबो' (रू.भे.)

उ०—सुरसत गणपत दे सुमत, आखर सरस अलाप। गढ़पती गाऊं गुणां, परचाडा 'परताप'।—किसोरदांन बारहठ

परचाड़णहार, हारो (हारी), परचाड़णियो—वि०।

परचाड़िप्रोड़ो, परचाड़ियोड़ो, परचाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।

परचाड़ीजणो, परचाड़ीजबो—कर्म वा०।

परचाणो, परचाबो-क्रि०स० [परचणो क्रिया का प्रे०रू०] १ कहलाना।

२ स्वीकार कराना।

उ०—सराव पी हो तो सराव छोडो। जो कांम सारो कियो सो

छोडो, पण रिजक संभाळो। घणी ही परचाइयो पण नवाब तो मन काठो कियो।—पदमसिंह री वात

परचाणहार, हारो (हारी), परचाणियो—वि०।

परचायोड़ो—भू०का०कृ०।

परचाईजणो, परचाईजबो—कर्म वा०।

परचाड़णो, परचाड़बो, परचावणो, परचावबो—रू०भे०।

परचाधारी-सं०पु० [राज० परचौ+सं० धारिन्] सिद्ध पुरुष, महात्मा।
उ०—पंढरपुर में प्रथम परचाधारी नामदे छीपो हुवो।—बां.दा.ख्यात

परचायोड़ो-भू०का०कृ०—कहलाया हुआ।
२ स्वीकार कराया हुआ।
३ समझाया हुआ।
(स्त्री० परचायोड़ी)

परचार—देखो 'प्रचार' (रू.भे.)
उ०—पाळ तणी परचार, कीधो आगम कांम रो। बरसंता घणबार, रुकै न पाणी राजिया।—किरपारांम

परचारक—१ देखो 'परिचारक' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)
२ देखो 'प्रचारक' (रू.भे.)

परचारणो, परचारबो—देखो 'प्रचारणो, प्रचारबो' (रू.भे.)
उ०—अबळां उद्धारी, सबळां कुळ भाया। पुन परचारण रा, परमोदय पाया।—ऊ.का.

परचारणहार, हारो (हारी), परचारणियो—वि०।

परचारिओड़ो, परचारियोड़ो, परचारयोड़ो—भू०का०कृ०।

परचारीजणो, परचारीजबो—कर्म वा०।

परचारत—देखो 'प्रचारित' (रू.भे.)

परचारियोड़ो—देखो 'प्रचारियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परचारियोड़ी)

परचावणो, परचावबो—देखो 'परचाणो, परचाबो' (रू.भे.)
उ०—इण भांत कजियो हार झालो ठाकुरसिंह पाछो गयो। राजपूत दिलासा करता परचावता नीठ-नीठ जे जावै छै। ठाकुरसिंघ भागेमन उदास थकयो निसासा गेरतो जावै छै।
—डाढ़ाळा सूर री बात

परचावणहार, हारो (हारी), परचावणियो—वि०।

परचाविओड़ो, परचावियोड़ो, परचाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

परचावीजणो, परचावीजबो—कर्म वा०

परचावियोड़ो—देखो 'परचायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परचावियोड़ी)

परचासुध-वि० [राज० परचौ+सं० शुद्ध] सतर्क, होशियार (अमरत)

परची-सं०स्त्री० [सं० परिचय] वह पुस्तक जिसमें किसी महात्मा का वर्णन हो, महात्मा की जीवनी। उ०—द्याळदास सुत रांमदास रै, परची फेर पजाई। मांनो छाय लगी मुरधर में, ऊपर आंधी आई।
— ऊ.का.

परचूण, परचून—देखो 'पड़चूण' (रू.भे.)
उ०—इणां रै उपरांत आटे सीधै री, दुकानवाळै रा, पांनवाळै रा परचून। अबै तो भंवरजी री अक्कल चकराई।—वरसगांठ

परचूनियो—देखो 'पड़चूणियो' (रू.भे.)

परचूनी—देखो 'पड़चूनी' (रू.भे.)

परचूरणि—देखो 'पड़चूण' (रू.भे.) (उ.र.)

परचूरता—देखो 'प्रचुरता' (रू.भे.)

परचेतस-सं०पु० [सं०] वरुण (डिं.को.)

परचै—देखो 'परिचय' (रू.भे.)

परचौ-सं०पु०यौ० [सं० परिचय] १ चमत्कार। उ०—सुग्रीव निरबळ राखि सरणै, सबळ 'बाळ' संघार। पहु जोय 'किसना' नांम परचौ, तोय गिरवर तार।—र.ज.प्र.
क्रि०प्र०—दैणो, बताणो।
२ परिचय, पहिचान। उ०—अचंभ लख्यो परचै घट एह। बस्यो हररांम स्वदेस विदेह।—ऊ.का.
क्रि०प्र०—दैणो, लैणो, करणो, कराणो, होणो।
३ शक्ति, बल। उ०—ऐंठै चूंठै नै मोठो कर आंणै। दीठो अणदीठो दीठो कर जांणै। पोखै प्रांणां नै नीसरिग्या परचा, चोखै चींठै री वीसरिग्या चरचा।—ऊ.का.
[फा० परचः] ४ पत्र, चिट्ठी। उ०—लख पुळ 'पातल' जस परचौ लिख लीनो। दुनियां पाळण री कौसल कस कीनो।—ऊ.का.
क्रि०प्र०—बांचणो, भेजणो, मेलणो, लिखणो, लिखाणो।
५ परिणाम, फल। उ०—साहिब तूं सुंदर कहै, सुकलीणी सबजांण। परचौ सुकनो पूजवौ, भळ आया कुळ भांण।
—कल्यांणसिंघ नगराजोत वाढेल री वात
६ प्रश्न, पेपर।
क्रि०प्र०—करणो, देणो, मांगणो, लेणो।
७ देखो 'पड़छो' (रू.भे.)
रू०भे—पड़चो, परतो, परतौ, परिचो, प्रचो।

परचौवणो, परचौवबो-क्रि०स० [क्वचित्] उपदेश देना, समझाना
उ०—मांगळियांणी, सांखली, प्रीतम परचौवै। 'दल्लो' औगुण दाटवै, गुण आदू जोवै।—वी.मा.

परचौवणहार, हारो (हारी), परचौवणियो—वि०।

परचौविओड़ो, परचौवियोड़ो, परचौव्योड़ो—भू०का०कृ०।

परचौवीजणो, परचौवीजबो—कर्म वा०।

परचौवियोड़ो-भू०का०कृ०—उपदेश दिया हुआ, समझाया हुआ।
(स्त्री० परचौवियोड़ी)

परछणो, परछबो-क्रि०स० [देशज] पकड़ना। उ०—करै चाड़ पर काचड़ा, अठी उठी नूं ईख। पगबिच हाडक परछियां, तिणसूं स्वांन सरीख।—बां.दा.

परछणहार, हारो (हारी), परछणियो—वि०।

परछवाडणो, परछवाडबो, परछवाणो, परछवाबो, परछवावणो, परछवावबो, परछाड़णो, परछाड़बो, परछाणो, परछावो, परछावणो, परछावबो—प्रे०रू० ।

परछिम्रोड़ो, परछियोड़ो, परछयोड़ो—भू०का०कृ० ।

परछीजणो, परछीजबो—कर्म वा० ।

पडछणो, पडछबो—रू०भे० ।

परछन-सं०स्त्री० [सं० परि+अर्चन] वर की आरती उतारने की क्रिया, विवाह की एक रीति ।

रू०भे०—परिछन ।

परछयजार-सं०पु० [सं० परक्षयज्वाल] सुदर्शन चक्र (अ.मा.)

परछांई, परछाई-सं०स्त्री [सं० प्रतिच्छाया] प्रतिबिंब, छाया, अक्स ।

क्रि०प्र०—आणी, गिरणी, पड़णी, होणी ।

मुहा०—परछांई ऊं डरणो या भागणो—बहुत डरना, पास तक आने से डरना ।

परछाड़णो, परछाड़बो—देखो 'परछाणो, परछाबो' (रू.भे.)

परछाड़णहार, हारो (हारी), परछाड़णियो—वि० ।

परछाड़िम्रोड़ो, परछाड़ियोड़ो, परछाड़योडो—भू०का०कृ० ।

परछाड़ीजणो, परछाड़ीजबो—कर्म वा० ।

परछाड़ियोड़ो—देखो 'परछायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परछाड़ियोड़ी)

परछाणो, परछावो-क्रि०स० [परछणो क्रिया का प्रे०रू०] पकड़ाना ।

परछाणहार, हारो (हारी), परछाणियो—वि० ।

परछायोड़ो—भू०का०कृ० ।

परछाईजणो, परछाईजबो—कर्म वा० ।

परछाड़णो, परछाड़बो, परछावणो, परछावबो—रू०भे० ।

परछायोड़ो-भू०का०कृ०—पकड़ाया हुआ ।

(स्त्री० परछायोड़ी)

परछावणो, परछावबो—देखो 'परछाणो, परछाबो' (रू.भे.)

परछावणहार, हारो (हारी), परछावणियो—वि० ।

परछाविम्रोड़ो, परछावियोड़ो, परछाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परछावीजणो, परछावीजबो—कर्म वा०

परछावियोड़ो—देखो 'परछायोड़ो' (रू भे.)

(स्त्री० परछावियोड़ी)

परछेद—देखो 'परिच्छेद' (रू.भे.)

उ०—मात्रा छंद तणो अनुमान, गणताई सु न आवै गांन । पूरी हुवो परथम परछेद, भणि जिम सांभळियो भेद ।—अज्ञात

परजंक—देखो 'परयंक' (रू.भे.)

उ०—दूजां नूं सांनी दिये, एक तणे बस अंक । किण किण नंह दीधो कदम, पातर रै परजंक ।—बां.दा.

परजंग—देखो 'प्रजंघ' (रू.भे.)

परजंत—देखो 'परयंत' (रू.भे.)

उ०—च्यार ही संतांन बूंदीस बैरीसाल रै बय में पैंसठियां बरस परजंत प्रकटिया ।—वं.भा.

परज-सं०स्त्री० [सं० पराजिका] १ एक रागिनी जो गांधार, धनाश्री और मारू के मेल से बनी हुई मानी जाती है । इसमें स्वर ऋषभ कोमलधैवत तथा मध्यमतीव्र लगता है । रात के ११ दंड से लेकर १५ दंड तक इसके गाने का समय है । उ०—कलंग परज कन्नड़ां, सुरां सवाद सुग्घड़ां । निवास सात नाळियं, त्रि-ग्रांम मूळ ताळियं ।

—रा.रू.

२ देखो 'प्रजा' (रू.भे.)

उ०—१ मंढि झड़ घमंड कर ईस अहमंड रा, तुझ घर मांहि किण बात ओटा । सार इतरी गरज परज री अरज सुणि, मेह करि मेह करि घणी मोटा ।—ध.व.ग्रं.

उ०—२ रजवट सोहड़ ठिकांणै राजै, परज सदा सुख पासी । कूंपा राजस थिर नव कोठां, मुरधर अमल जमासी ।

—रतनसिंह कूंपावत री गीत

परजघण-सं०पु०यौ० [सं० प्रजा+राज० घण=अधिक] सूअर ।

(अ.मा.)

परजन, परजन्य-सं०पु० [सं० पर्जन्यः] १ मेघ, बादल (नां.मा., ना.डिं.को., ह.नां.मा.)

२ वर्षा । उ०—दरसंत जांमणि रूप दांमणि, प्रगटि मिट तम प्रगट ही । द्रग मिळत अभिळत चपळ देखत, अवनि परजन अघट ही ।

—रा.रू.

३ इन्द्र ।

४ देखो 'परिजन' (रू.भे.)

रू०भे०—परजण, परंजन, परंजिण, परजिन, परिजन ।

परजळणो, परजळबो—देखो 'प्रजळणो, प्रजळबो' (रू.भे.)

उ०—१ पंजरि पावक परजळइ, जिम जिम नाखइ वाय । मूं कि न जांणउ एतलुं तिम-तिम अधिकु थाइ ।—मा कां.प्र.

उ०—२ गया गळती राति परजळतो पाया नहीं । से सज्जण पर-भाति, खड़हड़िया खुरसांण ज्यूं ।—ढो.मा.

परजळणहार, हारो (हारी), परजळणियो—वि० ।

परजळाणो, परजळाबो—सक०रू० ।

परजळिम्रोड़ो, परजळियोड़ो, परजळ्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परजळीजणो, परजळीजबो—भाव वा० ।

परजळाणो, परजळाबो—देखो 'प्रजळाणो, प्रजळाबो' (रू.भे.)

परजळाणहार, हारो (हारी), परजळाणियो—वि० ।

परजळायोड़ो—भू०का०कृ० ।

परजळाईजणो, परजळाईजबो—कर्म वा० ।

परजळणो, परजळबो—अक०रू० ।

परजळायोड़ो—देखो 'प्रजळायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परजळायोड़ी)

परजळियोड़ो—देखो 'प्रजळियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परजळियोड़ी)

परजा—देखो 'प्रजा' (रू.भे.)
उ०—१ 'संकर' बेगो गयो सिधाई। परजाँ दुखी घणी पिछताई।
—ऊ.का.
उ०—२ चेले गुरु चलत इक चीलहै, है कळदार बटोरण हीलै। परजा को हाकम सब पीलै, बस कोल्हू कानून बसीलै।—ऊ.का.

परजाऊ—देखो 'परिजाऊ' (रू.भे.)

परजागर—देखो 'प्रजागर' (रू.भे.)

परजात-सं०पु० [सं०] १ नौकर, चाकर, सेवक (अ.मा., ह.नां.)
२ कोकिल, कोयल (ह.नां.मा.)

परजापत, परजापति, परजापती-सं०पु०—१ इन्द्र (अ.मा.)
२ देखो 'प्रजापति' (रू.भे.) (अ.मा.,डिं.को.)
उ०—१ नाळी ताइ कंठ तणी निरखंता, रची अचंभ परजापति राव।
—महादेव पारवती री वेलि
उ०—२ परजापतिया नह परजा नै पाळै। टुकड़ै टुकड़ै नै टीवै टंक टाळै।—ऊ.का.

परजापाळ—देखो 'प्रजापाळ' (रू.भे.)

परजायोक्ति—सं०पु० [सं० पर्यायोक्ति] एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें मुख्य भाव को सीधे, स्पष्ट एवं साधारण रूप से न कह कर एक विचित्र ढंग से कहा जाता है और उसे असाधारण सा बना दिया जाता है।

परजाळ-सं०पु० [सं० प्रज्वलनम्] आग की लपट, जलन।
उ०—जाळतां सहर ऊठी जिके, परजाळां असपत्ति रै। ऊफणि बराळां क्रोध उरि, वे भाळां असपत्ति रै।—सू.प्र.

परजाळणो, परजाळबो—देखो 'प्रजाळणो, प्रजाळबो' (रू.भे.)
उ०—तनु परजाळी तप करि, पोढां तणी ए युक्ति। अमरवर आवि थकां, मिथुन करंतां मुक्ति।—मा.कां.प्र.
परजाळणहार, हारो (हारी), परजाळणियो—वि०।
परजाळिओड़ो, परजाळियोड़ो, परजाळयोड़ो—भू०का०कृ०।
परजाळीजणो, परजाळीजबो—कर्म वा०।

परजाळियोड़ो—देखो 'प्रजाळियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परजाळियोड़ी)

परजाव-सं०पु० [देशज] अवसर, मौका। उ०—रे चूंडा! सुण राव, कर संजुत चढ काछियां। पोह इसड़ो परजाव, जीवसी ज्यां जुड़गी नहीं।
—गो०रू०

परजिण, परजिन—१ देखो 'परजन्य' (रू.भे.)
२ देखो 'परिजन' (रू.भे.)

परजूड़ो-सं०स्त्री० [देशज] जूआ का निम्न भाग, प्रासंग (डिं.को.)

परजूसण—देखो 'परयूसण' (रू.भे.)

परज्याद—
उ०—गोरस की उभेल जीमे परज्याद। सकरसै बोडै तरतकर का सवाद।—सू.प्र.

परट्ट, परट्ठ—देखो 'परठ' (रू.भे.)
उ०—मोद अगेती मुरधरा, रणखेती रजवट्ट। इण सेती 'पातल' उमंग, पहली वाह परट्ट।—जैतदांन बारहठ

परट्ठणो, परट्ठबो—देखो 'परठणो, परठबो' (रू.भे.)
उ०—१ आदि तणो जोतां अरथ, भगो न मूझ भरम्म। पहली जीव परट्ठिया, किया कि पहली क्रम्म।—ह.र.
उ०—२ पाय परट्ठी पावठी, जड़ी सु हीरा हेम। पाट पटंबर पाथरइ, माधव चालइ जेम।—मा.कां.प्र.

परट्ठवाणो, परट्ठवाबो, परट्ठाणो, परट्ठावो—देखो 'परठाणो, परठावो' (रू.भे.)

परट्ठियोड़ो—देखो 'परठियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परट्ठियोड़ी)

परठ-सं०स्त्री० [सं० प्रस्थं] १ समाचार, सूचना।
उ०—१ प्रोहित हाल जांगळू आयो, खींवसी जी सूं मिळियो, कागद दीन्हा। उठारी सारी परठ कही।
—कूंवरसी सांखला री वारता
उ०—२ आदमी वस्तु भार सारो घरां जाय सांपियो, परठ कही दीन्ही।—पदमसिंह री वात
२ सूची, लिस्ट। उ०—अर खरळां जाय, डेरो कर, ओठी एक सारी परठ लिख मुखात समाचार कही। ताकीद घणी देय विदा कियो।—कूंवरसी सांखला री वारता
३ निरख, भाव, रेट। उ०—दूजो सौदा में, खेती में, सौदागिरी में भांति भांति री परठ लिख दीजे छै।—नी.प्र.
सं०पु०—४ आकाश, आसमान (डिं.नां.मा.)
५ ब्रह्मा (डिं.नां.मा.)
रू०भे०—परट्ट, परट्ठ।

परठण-सं०स्त्री० [सं० पर+स्थापनम्] स्थिति।
उ०—हर कोई जीव घालियो हाळी, बास सदा जिण मांय बसै। परठण कज रोटी कपड़ां री, जितै कमावै भोग जिसै।—ओपो आढ़ो

परठणो, परठबो-क्रि०स० [सं० प्रतिष्ठापितं] १ चिन्ह बनाना, निशान बनाना। उ०—ढोलइ चलतां परिठव्यउ, अगणि मोजां सल्ल। ढोलउ मयउ न बाहुड़इ, सुया मनावण चल्ल।—ढो.मा.
२ पहिनना, धारण करना। उ०—भमुहां ऊपरि सोहली, परिठिउ जाणि क चंग। ढोला ए ही मारवी, नव नेही नवरंग।—ढो.मा.
३ भेजना, पठाना। उ०—१ महमंदखांन अमलीकमांण। परठियो विदा बगसी पठांण।—सू.प्र.
उ०—२ 'सूजा' दिसि जंसींघ सझि, दूजो 'मांन' दुबाह। पोतो साथै परठियो, पूरब घर पतिसाह।—वचनिका
४ प्रस्थान करना। उ०—केतळा लक्ख धांनंखधर, केताइ लख गैमर गुडे। जिहंगीर पयांणे परठियो, दिल्ली दिस हैमर चडे।
—गु.रू.बं.

५ पूजा करना, पूजना। उ०—परठि नागांण सभि परेच। निज नांम हुवौ जिण नागणेच।—सू.प्र.

६ स्थापित करना, सजाना। उ०—१ जोइ जळद पटळ दळ सांवळ ऊजळ, धुरै नीसांण सोइ घणघोर। प्रोळि प्रोळि तोरण परठीजै, मांडै किरि तांडव-गिरि मोर।—वेलि

७ देखना। उ०—प्रसट दीहु नरइंद, इंद जिम रहै ग्रमासां। डेरा बाहिर दिया, परठि महुरत परगासां।—सू.प्र.

८ प्रहार करना। उ०—करगे ग्रघसि होए वसि कीधी, गज दळ घाव वही गज घाव। पग 'गोपाळ' जड़ाळी परठै, पड़ियौ हुसती मरण परिजाव।—गोपाळदास चूंडावत रौ गीत

९ रखना। उ०—मुहरि ग्रंति लुघवि गुरु मझि, बार चिग्रार विनांण। पय सोळह ग्राखर परठि, ग्राखि रूप इहनांण।

—ल.पि.

१० चलना। उ०—नमते निय सेन तणी नागद्रह, मारथ भू मड़ विरती भीर। पग किम रावत परठै पाछा, जड़िया परियां तणी जंजीर।—रतनसिंह चूंडावत रौ गीत

११ बंदूक से निशान लगाना।

१२ रचाना, बनाना। उ०—१ नवग्रह निघ नवै नाथ, छत्तीस जुगांणा। चौरासी लख चार खांण, परठै परमांणा।

—केसोदास गाडण

उ०—२ वाळण सीत लियां दळ बांनर, पाज समंद परठिए पाथर।

—पि.प्र.

१३ देना। उ०—जा, ग्रह्म ग्राव्यां जांण करि, मूरख म करि विचार। पणि मांगइ ते परठस्यौ, सहि तूं सोविन-भार।

—मा.कां.प्र.

१४ देव मंदिर की स्थापना करना, प्रतिष्ठा करना।

परठणहार, हारौ (हारी), परठणियौ—वि०।

परठवाड़णौ, परठवाड़बौ, परठवाणौ, परठवाबौ, परठवावणौ, परठवावबौ, परठाड़णौ, परठाड़बौ, परठाणौ, परठाबौ, परठावणौ परठावबौ—प्रे०रू०।

परठिग्रोड़ौ, परठियोड़ौ, परठ्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परठीजणौ, परठीजबौ—कर्म वा०।

पड़ठणौ, पड़ठबौ, परठुणौ, परठुबौ, परिठणौ, परिठबौ—रू०भे०।

परठता-सं०स्त्री० [सं० प्रतिष्ठापनम्] जैनी साधुग्रों के लघुशंका करने का पात्र विशेष।

उ०—स्वांमीजी ग्रमरसींगजी रै स्थांनक गया। मांहै खेजड़ी नौ रूंख देखि स्वांमीजी बोल्या—रात्री में लघु परठता हुस्यौ जद इण री दया किम रहै?—भी.द्र.

परठाड़णौ, परठाड़बौ—देखो 'परठाणौ, परठाबौ' (रू.भे.)

परठाड़णहार, हारौ (हारी), परठाड़णियौ—वि०।

परठाड़िग्रोड़ौ, परठाड़ियोड़ौ, परठाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परठाड़ीजणौ, परठाड़ीजबौ—कर्म वा०।

परठाणौ, परठाबौ-क्रि०स० [परठणौ क्रिया का प्रे०रू०] १ चिन्ह बनवाना, निशान बनवाना।

२ पहिनाना, धारण कराना।

३ भिजवाना, पठवाना।

४ प्रस्थान कराना।

५ पूजा कराना, पुजाना।

६ बंधवाना, सजवाना।

७ दिखाना।

८ प्रहार कराना।

९ रखाना।

१० चलाना।

११ बंदूक से निशाना लगवाना।

१२ रचना कराना, बनवाना।

१३ दिलाना।

१४ देव मन्दिर की स्थापना कराना, प्रतिष्ठा कराना।

परठाणहार, हारौ (हारी), परठाणियौ—वि०।

परठायोड़ौ—भू०का०कृ०।

परठाईजणौ, परठाईजबौ—कर्म वा०।

परठुवाणौ, परठुवाबौ, परद्ठाणौ, परद्ठाबौ, परठाड़णौ, परठाड़बौ, परठावणौ, परठावबौ—रू०भे०।

परठायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ चिन्ह बनाया हुग्रा।

२ पहिनाया हुग्रा।

३ भिजवाया हुग्रा।

४ प्रस्थान कराया हुग्रा।

५ पूजा कराया हुग्रा।

६ बंधवाया हुग्रा, सजाया हुग्रा।

७ दिखाया हुग्रा।

८ प्रहार कराया हुग्रा।

९ रखाया हुग्रा।

१० चलाया हुग्रा।

११ बंदूक से निशाना लगवाया हुग्रा।

१२ बनवाया हुग्रा।

१३ दिलाया हुग्रा।

१४ देव मंदिर की स्थापना कराया हुग्रा।

(स्त्री० परठायोड़ी)

परठावणौ, परठावबौ—देखो 'परठाणौ, परठाबौ' (रू.भे.)

परठावणहार, हारौ (हारी), परठावणियौ—वि०।

परठाविग्रोड़ौ, परठावियोड़ौ, परठाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परठावीजणौ, परठावीजबौ—कर्म वा०।

परठावियोड़ौ—देखो 'परठायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परठावियोड़ी)

परठि-सं०स्त्री० [सं० पृथ्वी] १ पृथ्वी, भूमि ।

सं०पु० [?] २ समुद्र (डिं.नां.मा.)

परठो-सं०पु० [सं० प्र+स्था] सजावट । उ०—तिण वेळा तरइ फरास तेड़िया, जांणइ परठा जिके घण जांण ।—महादेव पारवती री वेलि

परड़—देखो 'परड़' (रू.भे.)

उ०—किंहि किंहि अगिर ऊंमटइ, चाकलुंडि चित्रावि । परड़ पुरांणी सींगली, धांमणि धूंसटि धावि ।—मा.कां.प्र.

परडोटियो—देखो 'परड़' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—दिन भर उणां लाटा में कांम कियो जरूर, पण उणरै मनमें तो एईज विचार परडोटिया रै ज्यूं आंटा खावता हा ।

—रातवासो

परण-सं०पु० [सं० पर्ण] १ पत्र (अ.मा.)

२ पलास (अ.मा.)

[सं० परिणयः, परिणयनं] ३ विवाह ।

परणकुटी-सं०स्त्री० [सं० पर्णकुटी] पत्तों की बनाई हुई कुटी ।

परणण-सं०पु० [सं० परिणयः] विवाह ।

परणणो, परणबो-क्रि०स० [सं० परिणयनम्] विवाह करना ।

उ०—मैं परणंती परखियो, सूरति पाक सनाह । घड़ि लड़िसी गुड़िसी गयंद, नीठि पड़ेसी नाह ।—हा.झा.

परणणहार, हारो (हारी), परणणियो—वि० ।

परणवाड़णो, परणवाड़बो, परणवाणो, परणवाबो, परणवावणो, परणवावबो, परणाड़णो, परणाड़बो, परणाणो, परणावो, परणावणो, परणावबो—प्रे०रू० ।

परणिओड़ो, परणियोड़ो, परण्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परणीजणो, परणीजबो—कर्म वा० ।

परिणणो, परिणबो, पिरणणो, पिरणबो—रू०भे०

परणशाळा-सं०स्त्री० [सं० पर्णशाला] पत्तों की बनी कुटिया ।

परणाड़णो, परणाड़बो—देखो 'परणाणो, परणाबो' (रू.भे.)

परणाड़णहार, हारो (हारी), परणाड़णियो—वि० ।

परणाड़िओड़ो, परणाड़ियोड़ो, परणाड़्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परणाड़ीजणो, परणाड़ीजबो—कर्म वा० ।

परणाणो, परणाबो-क्रि०स० [सं० परिणयनम्] विवाह कराना ।

उ०—प्रथ्वीराज नूं आप रै अंतहपुर आणि वेद मंत्रां रा विधान पूरवक अंगजा इच्छिणी परणाय दीधी ।—वं.भा.

परणाणहार, हारो (हारी), परणाणियो—वि० ।

परणायोड़ो—भू०का०कृ० ।

परणाईजणो, परणाईजबो—कर्म वा० ।

परणाड़णो, परणाड़बो, परणावणो, परणावबो, परिणाणो, परिणाबो, परिणावणो, परिणावबो, पिरणाणो, पिरणाबो—रू०भे० ।

परणाम—१ देखो 'प्रणाम' (रू.भे.)

उ०—त्रिणह प्रदक्षिण भमती देऊं, त्रिणह करूं परणांम री माई ।—स.कु.

२ देखो 'परिणाम' (रू.भे.)

परणायोड़ो-भू०का०कृ०—विवाह कराया हुआ ।

(स्त्री० परणायोड़ी)

परणाळका—देखो 'प्रणाळका' (रू.भे.)

परणाळ—देखो 'परनाळ' (रू.भे.)

उ०—विविध वस्तु हेरइ बोलव्यउ बोल फेरइ । चढ़इ माळ अटाळि, पइसइ परणाळ खाळि ।—सभा.

परणावणो, परणावबो—देखो 'परणाणो, परणावो' (रू.भे.)

उ०—मारूं त्रिहुं बरसे बडी, चंपारइ उणिहार । सा कुंमरी परणाविस्यां, बालउ राजकुमार ।—ढो.मा.

परणावणहार, हारो (हारी), परणावणियो—वि० ।

परणाविओड़ो, परणावियोड़ो, परणाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

परणावीजणो, परणावीजबो—कर्म वा० ।

परणावियोड़ो—देखो 'परणायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परणावियोड़ी)

परणाह-वि० [सं० परिणाहः या परीणाहः] दीर्घ, बड़ा (अ.मा.)

परणि, परणी-सं०स्त्री० [सं० परिणीता] १ विवाहिता स्त्री, पत्नी ।

उ०—काळी कांणी कोझी कांमण, अपणी परणी आछी । अपच्छर आभ अधर अरधंगा, पदमण धरियै पाछी ।—ऊ.का.

यौ०—परणीपाती, परणीपाती ।

रू०भे०—परणइ, पारणी ।

सं०पु०—२ वृक्ष पेड़ (डिं.को.)

परणियोड़ो-भू०का०कृ०—विवाह किया हुआ, विवाहित ।

(स्त्री० परणियोड़ी)

परणेत-वि० [सं० परणीतः] विवाहित । उ०—परणेत हुया सिग चढ़ तीयइ अब, जांगी सद गूंजिया जग ।—महादेव पारवती री वेलि

परणेता-सं०स्त्री० [सं० परिणीता] विवाहिता स्त्री । उ०—थूं जांणै हूं धरती रौ धणी हूं सो धणी री परणेता न जावै ज्यूं धरती ही न जावै ।—वी.स.टी.

परणेतू-वि० [सं० परिणयः+रा.प्र एतु] विवाह सम्बन्धी ।

परणोत्तरीजांन, परणोत्रीजांन-सं०स्त्री० [सं० प्रणयः+जन्या] विवाह के पश्चात् वधू के ननिहाल वालों की ओर से बरात को दिया जाने वाला भोज (पुष्करणा ब्राह्मण)

परणो-सं०पु० [सं० परिणयनम्] विवाह ।

उ०—मरणै परणै में गोडा खर गाळै । बनिता सुत जावो बैंती रै बाळै ।—ऊ.का.

परण्योड़ो, परण्यो-भू०का०कृ०—विवाह किया हुआ, विवाहित ।

सं०पु०—पति । उ०—ईं ईंढांणी रै कारणै म्हारो परण्यो पाळो जाय, गमगी ईंढाणी ।—लो.गी.

यौ०—परण्योपांत्यौ।
(स्त्री० परण्योड़ी, परणी)
परतंग्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू.भे.)
उ०—मन नी हे सखि मन नी हे पूगी आस। सफली हे सखि सफली परतंग्या करी जी।—प.च.चौ.
परतंचा—देखो 'प्रत्यंचा' (रू.भे.)
परतंत, परतंत्र-वि० [सं० परतंत्र] १ अधीन, वशीभूत।
उ०—१ अर दैव रै परतंत्र परतापसिंघ अरिसिंघ दो ही गइंदां रै बीच आया।—वं.भा.
उ०—२ या सुणतां ही कोपरै परतंत्र राजा भीम काका सारंगदेव रा सातूं ही पुत्रां नूं आपरा देस सूं प्रवास कियौ।—वं.भा.
२ दूसरे के सहारे रहने वाला, पराश्रित, पराधीन।
उ०—१ चरचा करतां चुगल सूं, प्रकत हुवै परतत। चुगली कांनां सुणण सूं, मैलौ व्है गुरमंत।—बां.दा.
उ०—२ पराधीन भारत हुवौ, प्यालां री मनवार। मात्र भोम परतंत्र हो, बार-बार धिक्कार।—अज्ञात
३ देखो 'परमतत्त्व' (रू.भे.)
उ०—१ निमौ देव अरिहंत, पुरुष परधांन पुरातम। परमारथ परतत, परम अणपार पराक्रम।—पी.ग्र.
उ०—२ तूं परमिति परतत, सूं तूं हीज परदेव पुणीजै। परउपगारी परम, ग्यांन पररूप गिणीजै।—पी.ग्र.
परत-सं०पु०—१ सामना, मुकाबला। उ०—जुटिया विन्हे आवरत जुंहरी, घास रीट घडह घमचाळ। उह मछा आवधां मुहडे, पाछा दियण परत री वार।—महादेव पारवती री वेलि
२ प्रण, प्रतिज्ञा।
उ०—ढाढियां कुंमारी नूं कह्यौ—बाई क ढोलाजी री हजूर मालवणी न होय जद तू म्हांनै खबर दैजे। कुंमारी बोली—मालवणी न होय जद क्यूं ? तद ढाढोयां कह्यौ—म्हे लुगाई नैं मुजरौ करण रौ परत वहां छां।—ढो.मा.
३ प्रकृति, स्वभाव (उ.र.)
सर्व०—१ परस्पर।
उ०—ताहरां मेघे नूं कहाड़ियौ—म्हारै घोड़ियां सूं कांम नहीं। माल सूं कांम नहीं। म्हारै थारै मांथै सूं कांम छै। परत री वेढ करस्यां।—नैणसी
क्रि०वि०—१ हरगिज, कदापि, कभी भी।
उ०—१ माता म्हारी ए, आया विड़ला पाछा ए फेर, परत न परणू रांणी काछवो, काछबो जी म्हारा राज।—लो.गी.
उ०—२ रिसालू तो लागैजी'क प्यारी थारो सायबो जी, कोई प्यारी रौ लणिहार, परत न भेजांजी'क प्यारी थांनै सासरै जी।
—लो.गी.
उ०—३ केहर मत बाळक कहौ, देखौ जात सुभाव। वांसै देखे बाहरा, परत न छंडै पांव।—बां.दा.
२ प्रत्यक्ष।
२ देखो 'पड़त, परस्त' (रू.भे.)
३ देखो 'प्रति' (रू.भे.)
परतक—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू.भे.)
उ०—१ ओ संसार मोहणी माया, देख रीझ मति भाया रे! म्रगजळ नीर निगे कर नांई, परतक मिथ्या थाया रे!
—स्री सुखरांमजी महाराज
उ०—२ परतक म्हैं जांण सेवियौ पारस, जग जस आखे जणोजणो। करतां रीझ 'जलावत' कीधौ, पारस हूंत सवाय पणौ।
—मांनजी लाळस
परतकाळी-सं०पु०—१ एक प्रकार का शराब विशेष जिसे पुर्तगाली शराब भी कहते हैं। उ०—सूनै रूपै के मोरियां नुं जड़ाऊ के प्याले फिरते हैं। जिस प्यालूं के बीच ही अनार दालचीनी, परतकाळी, अंगूरी गले गुलाब ऐसो भांति-भांति के फूल ऐराक भरते हैं।—सू.प्र.
२ देखो 'पुरतगाळी' (रू.भे.)
परतकूळता—देखो 'प्रतिकूळता' (रू.भे.)
परतक्ख, परतक्खि, परतक्ष, परतख, परतखि, परतखो, परतख्य, परतछ—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू.भे.)
उ०—१ घाटे सुघट्ट लिय मोळि लक्खि, परतक्खि जास रेवंत पक्खि।—रा.ज.सी.
उ०—२ परतक्ष ठगोरी पेरियौ, मनुज अहे ठग मंडळी। पेरिया मंत्र सिधुर सगह, आवै दरगह अग्गळी।—रा रू.
उ०—३ जिम सुपनंतर पांमियउ, तिम परतख पांमेसि। सज्जन मोतीहार ज्यूं, कंठाग्रहण करेसि।—ढो मा.
उ०—४ लहियै सोभा लोक मैं, तप करि कसतां तन्न। परतखि वीर प्रसंसियौ, घन्नो मुनिवर घन्न।—ध.व.ग्र.
उ०—५ एकावन लघु मुर गुरु अंत। परतख्य सिहि गाहा प्रसंग।
—ल.पिं.
परतग्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू.भे.)
उ०—कीधी परतग्या इसी, मनसेती महाराय। पदमणि परणुं तौ घर रहू, नहिं तौ गिरि वनराय।—प.च.चौ.
परतणो, परतबो-क्रि०अ०—परिवर्तित होना (उ.र.)
परतमा—देखो 'प्रतिमा' (रू.भे.)
परतमाळ, परतमाळा, परतमाळी—देखो 'प्रतिमा' (रू.भे.)
परतळ—देखो 'पड़तळ' (रू.भे.)
परतळो-सं०पु०—१ पूतला ?
उ०—सोळंकी कुमारपाळ सात वसन रा परतळा करा चढाय अठारै दिसा बाहर काढिया।—बां.दा.ख्यात
२ देखो 'पड़तलो' (रू.भे.)
३ चद्दर।

परताप-सं०पु० [देशज] १ किनारा, तट (डिं.को.)
२ देखो 'प्रताप' (रू.भे.)
उ०—१ पार पखे राजी प्रजा, पाजी न करै पाप। साजी साजी साहबी, माजी रै परताप।—बां.दा.
उ०—२ वै माटा रो पूतळियां रै उनमांन ऊभा भगती रो परताप देखता रह्या।—फुलवाड़ी
यौ०—परतापवांन।

परतापी, परतापीक—देखो 'प्रतापी, प्रतापीक' (रू.भे.)
उ०—१ सब विधि की सेवा सधी, आदर भयो अमाप। माननीय गुरु मांनियो, परतापी 'परताप'।—ऊ.का.
उ०—२ नवमैं मईनै राजा रै सूरज चांद रै उणियार परतापी कंवर जलमियो।—फुलवाड़ी
उ०—३ जो श्री जगतसिंघ रो वेटो नै बुधसिंह रो छोटो भाई, तिणसूं जैसळमेर अखैसिंघ पायो। बडो परतापीक रावळ हुवो।
—नैणसी

परताळ—देखो 'पड़ताळ' (रू.भे.)
उ०—बुझै न अगन बुझाय, पावस परताळां पड़ै। लागी मो उर लाय, जळ वरसै जिम-जिम जळै।—पा.प्र.

परताळणो, परताळबो—देखो 'पड़ताळणो, पड़ताळबो' (रू.भे.)
उ०—१ आगै सींधळां सूं वैर हुतो, हिवै साळो मारियो, हिवै वैर वधियो, ताहरां ऊदैजी तो पाछली रात रा चढ़ परताळिया सो घरे गया।—नैणसी
उ०—२ 'कांन्हियो' त्रिसूळां मार खळ कांळियो, 'कमर' परताळियो जड़ां काढी। पोखियो 'श्रीक' 'रिड़माल' नै पाळियो, दैत परजाळियो स्वेतदाढी।—खेतसी बारहठ

परताळियोड़ो—देखो 'पड़ताळियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परताळियोड़ी)

परतिग्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू भे.)
उ०—सात हूंत इधकी परतिग्या, सांभळ बात कहूं सरसाळ।
—र.रू.

परतिकूळ—देखो 'प्रतिकूळ' (रू.भे.)

परतिख—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू.भे.)
उ०—इण इळ किया किता पति आगैं, परतिख किता किता पर-पूठ। वसुधा प्रगट दीसती वेस्या, झूझै भूप भुजंग सुं झूठ।
—ध.व.ग्रं.

परतिनिधि—देखो 'प्रतिनिधि' (रू.भे.)

परतीक—देखो 'प्रतीक' (रू.भे.)

परतीत—१ देखो 'प्रतीत' (रू.भे.)
२ देखो 'प्रतीति' (रू.भे.)
उ०—१ हुवै प्रथम घन हांण, घणी तन पांण घटावै। कोई न राखे कांण, मांण परतीत मिटावै।—ऊ.का.
उ०—२ तदि घरे दिल परतीत। इम बोलियो 'जगजीत'।
—सू.प्र.

परतीति—देखो 'प्रतीति' (रू.भे.)
उ० —सावचेती राखी साची काची ना सम्हाई कहू। राची कुळ-रीति परतीति प्रगटाई तैं।—ऊ.का.

परतेंक—देखो 'प्रत्येक' (रू.भे.)
उ०—बादर प्रथिवी नैं वळि पांणी, वनसपती परतेंक जी।
—ध.व.ग्रं.

परतै-क्रि०वि०—द्वारा, से। उ०—गढ़ गिरनार रो राजा हूं सू म्हारै परतै दियो न जाइ सू बीजो कोण द्रव्य देवै ?
—सयणी चारणी री वात

परतोळी—देखो 'प्रतोळी' (रू भे.)

परतौ—देखो 'परचौ' (रू भे.)
उ०—१ लोक जायइ यात्रा घणा, पद्मावती परता पूरई रे।
—स कु.
उ०—२ परगट परता पूरवै, सुद्धै मन करतां सेव रे लाल।
—ध.व.ग्रं.

परत्त—देखो 'परत' (रू.भे.)
उ०—१ रुघपती गुणपत्त रो, प्रोहित धार परत्त। आगै वणी सूरमां, अणभाजणै वरत्त।—रा.रू.
उ०—२ सुणी कमंधां ऊधरां, उत मेवाड़ा वत्त। साथे साहस झल्लियो, घाते हात परत्त।—रा.रू.

परत्तख—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू.भे.)

परत्थी—देखो 'परत्री' (रू.भे.)
उ०—धम्म सुधम्म पहांण जत्थ, नहु चोरी किज्जइ। धम्म सुधम्म पहांण जत्थ, परत्थी न रमिज्जइ।—अभयतिक यती

परत्यक्ष—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू.भे.)
उ०—पंद्रह तत्व का स्थूल सरीरा, जाग्रत सबही जंजाळ। इंद्रियां अपणे अपणे कांमां, रही विसय रस माळ। परत्यक्ष झूठा रे, मांने मन साच करे।—स्री सुखरांमजी महाराज

परत्र-अव्य० [सं०] परलोक में, अगले जन्म में।
उ०—दरहि न किंपि परत्र, वेविसु परुघरु जुज्झहि।
—कवि पल्ह

परत्री-सं०स्त्री० [सं० पर+स्त्री] दूसरे की स्त्री, पर-स्त्री।
उ०—सदाई लपै खाग नै त्याग सूरा। पखै जै प्रथीनाथ सूपाळ पूरा। परत्री न भेटे गऊ विप्र पाळै, चले राह वेदो खित्री ध्रम्म चाळै।
—वचनिका
रू०भे०—परत्थी।

परथ-वि० [सं० परार्थ] पराधीन, परतन्त्र।
उ०—परथ जीवका पड़ी जकै दमड़ो न दिरापै।—अज्ञात

परथट्टपल्ल—वि० [सं० पर+राज. थट्ट-सेना+पल्ल=रोकने वाला] शत्रु दल को रोकने वाला, योद्धा, वीर।
उ०—'डुंगरउ' चढ़िय राहड़ दुभल्ल। प्राक्रम अपार परथट्टपल्ल।
—रा.ज.सी.

परथम—देखो 'प्रथम' (रू.भे.)

परथमी—देखो 'प्रथ्वी' (रू.भे.)

परथीवर—देखो 'प्रथ्वीवर' (रू.भे.)

परथा—देखो 'प्रथा' (रू.भे.)

परथी—देखो 'प्रथ्वी' (रू.भे.)

परथीनाथ—देखो 'प्रथ्वीनाथ' (रू.भे.)

परथु—देखो 'प्रथु' (रू.भे.)

परदकण, परदकणा, परदक्खण, परवक्खण, परदक्षण, परदक्षणा, परदखण, परदक्खणा।
देखो 'प्रदक्षिणा' (रू.भे.)
उ०—१ परदक्षण दई दक्षणा नइ, विलंब मंडइ वार। कर कनक कापई दांन, आपई सुपिक सिणगार।—रुकमणी-मंगळ
उ०—२ दीन्दी प्रभु दोळी परदक्षणा, रहस करै दीन्हउ नाळेर।
—महादेव पारवती री वेलि

परदड़ो—देखो 'पड़तलो' (अल्पा०. रू.भे.)
उ०—सो ढालां पातसाहजी सिलेहटरी ढालांरी परदडी में पटा घालनै ढाल छांने मेली।—रा.वं.वि.

परदच्छिण, परदच्छिणा, परदछ, रपदच्छण, परदच्छणा, परदछिणा—देखो 'प्रदक्षिणा' (रू भे.)
उ०—१ पाय दीधा जिकै किसन परदछ। फिर नाच राघव आगै सफळ कर तन नरा।—र.ज.प्र.
उ०—२ चोप अरच हरि चरण चोप फिर रे परदछण। चोप करे कर जोड़, जनम सरजत आगळ जण।—र.ज.प्र.
उ०—३ विधवत वेद विधांन, दंडव्रत करे करै परदछिणा। सम्भि नृप बहु सनमांन, आसण संमपि जोड़ कर अखै।—सू.प्र.

परदत—देखो 'प्रदत्त' (रू.भे.)
उ०—अपदतां परदतां लुपै अनरुद अमर, भंडाणां जुग जुग क्यूं न भाळो, लोभ काळो जिकां सांसणां लगायो, काळो लागां जिकां जनम काळो।—कविराजा बांकीदास

परदर—देखो 'प्रदर' (रू.भे.)

परदरप-स०पु० [सं० परदर्प] पक्षी (अ.मा.)

परदरसक—सं०पु०—१ गढ, किला (अ.मा.)
२ देखो 'प्रदरसक' (रू.भे.)

परदांन—देखो 'प्रदांन' (रू.भे.)
२ देखो 'प्रधान' (रू.भे.)
उ०—अनाथां कराउ नास रौ अवैतो, 'रास' री आसरो लेर रूपियो रंगगुळी तेल हुय गार लरलुजि, प्रजाने तलूंजी मेळ पीदो, सास लै भैंसरौ वासतै सळूजी, कळूजी पाप रो परदांन कीदो।
—ऊमरदांन लाळस

परदानगी—देखो 'प्रधांनगी' (रू.भे.)

परदानो—देखो 'दड़दांनो' (रू.भे.)

परदाइत—देखो 'पड़दायत' (रू.भे.)

परदाखत-सं०पु० [अ० परदाख्त] संरक्षण, देखभाल।
उ०तखत मोटै बैठणो आसांन छै। अठै घड़ी भर नूं ही चैन मत जांणजै। न्याय नै भूखां री परदाखत करणो छै।—नी.प्र.

परदाज-सं०पु० [?] सजावट, सज्जा। उ०—गिरदै उदै चहुर गहराई। अनंग जांणि परदाज बणाई।—सू.प्र.
रू०भे०—परदुज।

परदादार-वि० [फा०] वह जिसके यहाँ परदा रखने की प्रथा हो।
सं०स्त्री०—वह स्त्री जो परदे में रहती हो।
रू०भे०—पड़दादार।

परदादारी-सं०स्त्री० [फा०] १ परदा रखने की प्रथा।
२ परदे में रहने की क्रिया या भाव।
रू०भे०—पड़दादारी।

परदादो—देखो 'पड़दादो' (रू.भे.)
(स्त्री० परदादी)

परदानसीन-वि० [फा० परदानशीन] वह जाति या व्यक्ति जिसके यहां पर्दा रखने की प्रथा हो।
सं०स्त्री०—परदे में रहने वाली स्त्री, अंतःपुर में रहने वाली स्त्री।
रू०भे०—पड़दानसीन।

परदापरथा, परदाप्रथा-सं०स्त्री० [फा० पर्दः+सं० प्रथा] घूंघट या परदे में रहने की प्रथा।

परदायत—देखो 'पड़दायत' (रू.भे.)

परदक्षिण, परदक्षिणा, परदिखणा—देखो 'प्रदक्षिणा'।

परदीपत, परदीप्त—देखो 'प्रदीप्त' (रू.भे.)

परदुज—देखो 'परदाज' (रू.भे.)
उ०—परदुज वर भरपूर प्रचंडै। मुखमल तणी बिछायत मंडै।
—सू प्र.

परदे'—१ देखो 'परदेस' (रू.भे.)
उ०—कुंवरजी फुरमायो—ए मेवा, कपड़ा-वसत म्हारै पण घणा ही है। थे तो परदे' रा परखंड फिरणवार छो। कोई अपूरब वसत लावणी थी।—पलक दरियाव री वात

परदेस-सं०पु० [सं० परदेश] १ अन्य देश, विदेश।
उ०—जिण रित नाग न नीसरइ, दाझइ वनखंड दाह। जिण रित माळवणी कहइ, कुण परदेसां जाह।—ढो मा.
रू०भे०—परदे', परदेह।
अल्पा०—परदेसड़ो।

२ देखो 'प्रदेस' (रू.भे.)

परदेसड़ौ—देखो 'परदेस' (अल्पा०, रू.भे.)

परदेसी-वि० [सं० परदेशी] (स्त्री० परदेसण, परदेसणी) अन्य देस का, विदेशी। उ०—१ बाबहिया रत-पंखिया, बोलइ मधुरी बाणि। काइ लवंतउ माठि करि, परदेसी प्रिउ आंणि।—ढो.मा.

उ०—२ मत दो म्हारी बाई नं गाळ। बाई म्हारी परदेसण जी परदेसण।—लो गी.

सं०पु०—अन्य देश का निवासी, विदेश का निवासी (व्यक्ति)

अल्पा०—परदेसीड़ौ।

परदेसीड़ौ—देखो 'परदेसी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—तेरा जांनीड़ा दरबार खड़ा, परदेसीड़ा री भगत कराय, बैठावौ री सज बांन मंडप तळ।—लो.गी.

परदेह—देखो 'परदेस' (रू.भे.)

उ०—ऊनमियउ उत्तर दिसइं, काळी कंठळि मेह। हूं भीजूं घर आंगणइ, पिउ भीजहि परदेह।—ढो.मा.

परदोस—देखो 'प्रदोस' (रू.भे.)

परदौ—देखो 'पड़दौ' (रू.भे.)

परधांन—१ देखो 'प्रधांन' (रू.भे.)

उ०—१ रुखमणी राजि तणी पटरांणी, दइता हुंता सदा दुमेळ। प्रमं परधांन वात ना ब्रह्मां, मुहमद...मेळ।—पी.ग्रं.

उ०—२ हंसा उड सरवर गिया, अब काग भया परधांन। विप्र घर पधारौ आपरै, सिध किणरा जजमांन।—फुलवाड़ी

उ०—३ काचर केळौ आंमफळ, पीव मित्र परधांन। इतरा तो पाका भला, काचा कोइ न कांम।—अज्ञात

२ देखो 'परिधांन' (रू.भे.)

परधांनगी-सं०स्त्री०—देखो 'प्रधांनगी' (रू.भे.)

उ०—जैसळमेर च्यार परधांन भाटी साख-साख रा। तिणां मांहे एक परधांनगी हमीरां री भाटियां रै पोकरण हुतौ।—नैणसी

परधांम-सं०पु० [सं० परधाम] परलोक।

उ०—निमौ देव अरिहंत, पुरुस परधांम पुरातम। परमारथ परतंत परम अणपार पराक्रम।—पी.ग्रं.

परनाळ-सं०पु० [सं० प्रणाल, प्रणाली] छत का पानी नीचे गिराने के लिए बनाया जाने वाला नाला।

उ०—घण पावस नीझर गिरद घाट। परनाळ बहै मद पंच पाट।—सू.प्र.

रू०भे०—परणाळ, परिनाळ, प्रनाळ।

अल्पा०—परणाळी, परनाळि, परनाळी।

मह०—परनाळौ।

परनाळका—देखो 'प्रणाळका' (रू.भे.)

परनाळणौ, परनाळबौ-क्रि०स० [सं० प्रणालनम्] चीरना, फाड़ना (पेट)

उ०—१ कान्हड़देजी देवरा मांहे अलोप हूवा। तरै वीरमदे पेट आपरो परनाळ्यौ कटारी सूं।—वीरमदे सोनगरा री वात

उ०—२ कितरा एक दिनां पछै राजा पठावता पर चढाई करी। वडौ जुद्ध हुवौ। त्यां नूं जीतिया। पछै आप परलोक प्राप्त हुवौ। जणां उजैणी रौ राज सूनौ हुओ। धरती दुखी हुई। महाराज विक्रम बिन म्हारौ पाळण कुण करै? राजा री रांणी नूं गरभ मास सात को थौ। तद सगळा मंत्री प्रधांन मिळ रांणी रौ पेट परनाळियौ। पेट मां थी पुत्र नीसरियौ।

—सिंघासण-बत्तीसी

परनाळणहार, हारौ (हारी), परनाळणियौ—वि०।

परनाळिओड़ौ, परनाळियोड़ौ, परनाळ्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परनाळीजणौ, परनाळीजबौ—कर्म वा०

परनाळियोड़ौ-भू०का०कृ०—चीरा हुआ, फाड़ा हुआ।

(स्त्री० परनाळियोड़ी)

परनाळी—१ देखो 'परनाळ' (अल्पा०, रू.भे.)

२ देखो—'प्रणाळी' (रू.भे.)

परनाळौ—देखो 'परनाळ' (मह०, रू.भे.)

उ०—१ पड़ै प्रेम घर-घर परनाळा। जुगती जळ मेटी त्रिस ज्वाळा।—ऊ.का.

उ०—२ पड़तां ई माथा री किळी किळी बिखरगी। लोई रा जांणै परनाळा छूटण लागा।—फुलवाड़ी

परन्योड़ौ—देखो 'परण्योड़ौ' (रू.भे.)

उ०—परन्योड़ै की भैंस खो गई, म्हारौ कांई सारौ जी। पना-भंवर को तीतर खो गयौ, भीतर भिळ गयौ रे। पनजी मुखड़े बोल।

—लो.गी.

परपंच—देखो 'प्रपंच' (रू.भे.)

उ०—१ तरै राव रांणगदे री बैर राव केलहण नूं कहाड़ियौ-'मोनूं थे घर आंणौ तो हूं थानूं गढ दूं।' तरै केलहण परपंच कियौ, नै कहाड़ियौ 'भली बात'।—नैणसी

परपंचौ—देखो 'प्रपंचौ' (रू.भे.)

परपख—देखो 'परिपख' (रू.भे.)

उ०—जात पांत कुळ रौ जठै रहण न पावै नेम। रहै निरंतर एक रंग, परपख सोई प्रेम।—र. हमीर

परपचक-वि० [सं० प्रपाचक] पचाने वाला, पाचक।

उ०—करि अचवन जळ पळ करावै। भक्ष परपचक चूरण भुगतावै।

—सू.प्र.

परपट-वि० [?] पपड़ी जमा हुआ, सूखा। उ०—ताळ सूख परपट भयौ, हंसा कहूं न जाय। प्रीत पुरांणी कारणै, चुग चुग कांकर खाय।

—अज्ञात

सं०स्त्री०—१ पपड़ी।

२ पापड़। उ०—रथघटा जिम परपट चूरियइं। सुदृढ नां रणि

रोम अंकुरियइं ।—विराट पर्व

परपटी-सं०स्त्री० [सं० पर्पटी] एक प्रकार का वैद्यक का रस ।
२ पपड़ी ।

परपत्रावळि-सं०स्त्री० [सं०] खजूर (अ.मा.)

परपराट—देखो 'परपराहट' (रू.भे.)

परपराणौ, परपराबौ-क्रि०अ० [देशज] मिर्च आदि तीक्ष्ण चीजों की अधिकता से जीभ अथवा अन्य अंश पर उत्पन्न उग्र सवेदन होना, चुनचुनाना।
परपराणहार, हारौ (हारी), परपराणियौ—वि० ।
परपरायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
परपराईजणौ, परपराईजबौ—भाव वा० ।

परपरायोड़ौ-भू०का०कृ०—चुनचुनाया हुआ ।
(स्त्री० परपरायोड़ी)

परपराहट-सं०स्त्री०—परपराने का भाव, चुनचुनाहट ।
रू०भे०—परपराट ।

परपरिवाद-सं०पु० [सं०] टेढी बोली द्वारा दूसरों के दोष ढूंढ़ना (जैन)

परपलव—देखो 'पारिपलव' (रू.भे.)

परपात-सं०पु० [सं० परिपात] १ डाकू, लुटेरा (डिं.को.)
२ देखो 'प्रपात' (रू.भे.)

परपिंड, परपिंडौ-सं०पु० [सं० परपिण्ड] चाकर, दास (अ.मा., ह.नां.मा.)

परपुरुस-सं०पु०यौ० [सं० परपुरुष] पति के अतिरिक्त, दूसरा पुरुष ।

परपुस्ठ-सं०स्त्री० [सं० परपुष्ट] कोयल ।

परपूठ-क्रि०वि० [सं० परपृष्ठ] पीठ पीछे, अनुपस्थिति में ।
उ०—खागां अंग वखेरियौ, रण रौ भूखौ रूठ । बेखे साळौ बींद नूं, पछतावै परपूठ ।—वी.स.

परपूरण—देखो 'परिपूरण' (रू.भे.)

परपेंठ-सं०स्त्री०—पहली हुंडी खो जाने पर दूसरी बार लिखी गई हुण्डी (पेंठ) के भी खो जाने पर तीसरी बार लिखी जाने वाली हुण्डी ।

परपोतरौ, परपोतौ, परपोत्र, परपोत्रौ—देखो 'प्रपोत्र' (रू.भे.)
(स्त्री० परपोतरी, परपोती, परपोत्री)

परप्पण—देखो 'पड़पण' (रू.भे.)
उ०—१ सुत साह माल आपै सुतौ, मिळ लीजै छळ मंत्रणौ । कुण वाद छळै राठौड़ कुळ, आद परप्पण आपणौ ।—रा.रू.
उ०—२ 'धीर' परप्पण धारियां, 'सूजौ' वीर सुजाव । आहव जीव उजाळणा, रीत घवेचां राव ।—रा.रू.

परप्रिया-सं०स्त्री० [सं०] १ गनिका, वेश्या (अ.मा.)
२ छिनाल, कुलटा ।

परफूल्लंत—देखो 'प्रफुल्लित' (रू.भे.)
उ०—कमधज्ज मिळै सू कमधजां, हीया परफूल्लंत हुवै । वदियौ 'गजण' विय चंदबरि, तांम सुरकके हिंदवै ।—ग.रू.बं.

परफुल्ल—देखो 'प्रफुल्ल' (रू.भे.)

परबंद-सं०पु० [सं० पदबंध] नृत्य की एक गति विशेष ।

परबंध—देखो 'प्रबंध' (रू.भे.)
उ०—१ सरपां हंदी वाड़ कर, सिंहां रौ परबंध । जो जमरां णौ पोहरू, संणां मिळबौ संध ।—जलाल बूबना री वात
उ०—२ मुर भकार दीरघ विमळ, मांहे चरण निमंध । इम एका-दस आखरे, बंध छंद परबंध ।—पि.प्र.

परब—देखो 'परव' (रू.भे.)
उ०—१ 'भांण' तणौ हरनाथ महाभड़ । आयां परब उबारण अच्चड़ ।—रा.रू.
उ०—२ गया स्राद्ध तीरथ ग्रहण, सरब परब समुदाय । है सारा इण हाथ में, हलै तौ हाथ हलाय ।—ऊ.का.
उ०—३ हरणीमन हरियाळियां, उरहालियां उमंग । तीज परब रंग त्यारियां, सांवण लायौ संग ।—बां.दा.
उ०—४ सू आपां इण वदळै मरां तौ इसौ परब मिळै नहीं तरा आपणै बीकानेर रौ रिजक तौ नही है पण जोधपुर राजा छै ज्यूं ई बीकानेर रा धणी छै, अरु यांरौ पण मरण विगड़ै है सू औ वडौ परब आयौ है, अठै सारा कांम आसां ।—द.दा.

परबत—देखो 'परवत' (रू.भे.) (अ.मा., डिं.नां,मा., नां.मा.)
उ०—सांई सूं सब कुछ हुवै, बंदा सूं कुछ नांहि । राई सूं परबत हुवै, परबत राई मांहि ।—ह.र.

परबतअरि, परबतअरी—देखो 'परवतारि' (रू.भे.)

परबतजा—देखो 'परवतजा' (रू.भे.) (अ.मा., ह.नां.मा.)

परबतमाळ, परबतमाळा—देखो 'परवतमाळ' (रू.भे.)
उ०—रांणा कहां ऊभा रहै, मभि परबतमाळां ।—मालौ सांदू

परबतमेर—देखो 'मेरूपरवत' (रू.भे.)
उ०—वीटांणा जिके रहै रावत वट, मांभी परबतमेर गिरं ।
—गु.रू.बं.

परबतसुत—देखो 'परवतसुत' (रू.भे.)

परबतियौ—१ देखो 'परवतियौ' (रू.भे.)
२ देखो 'परवत' (अल्पा०, रू.भे.)

परबती—देखो 'परवंती' (रू.भे.)

परबत्त—देखो 'परवत' (रू.भे.)
उ०—हिलिया भद्रजातिय काळ वांणी पंख बांणी वोल ए । परबत्त पर जुध्ध पेरं समस्सेरं तोल ए ।—गु.रू.बं.

परबयं-सं०पु० [सं० पर्वयम] सुदर्शनचक्र (नां.मा.)

परबळ—देखो 'प्रबळ' (रू.भे)

परबस-वि० [सं० परवश] १ जो स्वतंत्रतापूर्वक आचरण न कर सकता हो, जो दूसरे के वश में हो ।

२ जो दूसरे पर निर्भर रहता हो।

उ०—जोग री बात के अेक दिन वौ ई सिंघ जाळ में फंसग्यौ। बरबस लाचार ह्वियोड़ो जाळ में बोलो बोलो बैठो।—फुलवाड़ी

परवसता, परवसताई-सं०स्त्री० [सं० परवश+रा.प्र. आई] पराधीनता, परतंत्रता।

परवात—देखो 'प्रभात' (रू.भे.)

उ०—भिळ जाय जुवां लाखां भळे, लेऊं कांइ इण लाड में। बरवात पीहर जासूं परी, खांवंद पड़ज्यौ खाड में।—ऊ.का.

परवातियौ—देखो 'प्रभातियौ' (रू.भे.)

परवाती—देखो 'प्रभाती' (रू.भे.)

परवारौ-वि० [सं० पर+द्वार] (स्त्री० परवारी) १ सीधा।

उ०—१ रुको बांच रावळो, अवस परभाते आवत। आप विनां हूं उठै, वहे परवारौ जावत।—अरजुणजी बारहठ

उ०—२ घरवाळां सूं विना मिळियां ई वौ परवारौ सिंघ री सांमी खिसक गयौ।—फुलवाड़ी

२ स्वतः ही, स्वयं ही। उ०—लूंकी ऊंचौ मूंडौ करनै कागला री टूंच में औ उम्दा बाटियौ देखियौ तौ उण री जीव डुळियौ। पूंछ उण री मतै ही परवारी हिलण ढूकी।—फुलवाड़ी

३ बिना। उ०—राजाजी कह्यौ पण म्है थारै मन परवारौ की कांम नीं करणौ चावूं।—फुलवाड़ी

क्रि०वि०—परोक्ष में, पीठ पीछे।

रू०भे०—परभारौ, परवारौ।

परवाळ-सं०पु० [सं० पर=शत्रु+बाल=केश] १ आंख की पलक का वह बाल जो आंख मे सीधा चुभता है और बहुत पीड़ा देता है।

२ देखो 'प्रवाळ' (रू.भे.)

परवाहपय—देखो 'परवाहपय' (रू.भे.)

परवीण, परबीन—देखो 'प्रवीण' (रू.भे)

परवेस—देखो 'प्रवेश' (रू.भे.)

परवोध, परबोध-सं०पु० [सं० प्रबोध] १ एक यगण, दो सगण, एक भगण और एक यगण वाला छन्द विशेष।

२ देखो 'प्रबोध' (रू.भे.)

उ०—सगुण छंद करिया करि सोध। बुधजण सांभळिजी परबोध।—ल.पिं.

परवोधक—देखो 'प्रबोधक' (रू.भे.)

परवोधणी—देखो 'प्रबोधनी' (रू.भे.)

परवोधणौ, परवोधबौ—देखो 'प्रबोधणौ, प्रबोधबौ' (रू.भे.)

उ०—मोडा एक बहुत ह्वै महिला, ज्यूं भैंसिन में सोटा। दे छोटानारी परबोधै, खसम बतावै खोटा।—ऊ.का.

परवोधणहार, हारौ(हारी), परवोधणियौ—वि०।

परवोधिप्रोड़ौ, परवोधियोड़ौ, परवोध्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परवोधीजणौ, परवोधीजबौ—कर्म वा०।

परवोधिप्रोड़ौ—देखो 'प्रबोधियोड़ौ' (रू.भे.)

परव्व—देखो 'परब' (रू.भे.)

उ०—पदारथ तूं ही सब्ब परव्व।—ह.र.

परव्वत, परव्वै—देखो 'परवत' (रू.भे.)

उ०—१ परचंड पटाझर पंथि पुळं किरि जांणि परव्वत भट्टकुळं।
—गु.रू.बं.

उ०—२ केजम जीण तुरंग में राजित, पाखरिया किरि पंख परव्वत।—गु.रू.बं.

परब्रहम, परब्रह्म, परब्रिह्म-सं०पु० [सं० परब्रह्मन्] १ शिव (डि.नां.मा.)

२ निर्गुण, निरुपाधि, परमात्मा। उ०—आखउं विगत हुय सुचित सांभळ उमा। अगम परब्रह्म गुण गत अपारै।—र.रू.

रू०भे०—परिब्रह्म, पारब्रहम, पारब्रह्म, पारब्रह्म।

परभव, परभवि-सं०पु०यौ० [सं० पर+भव] १ दूसरा लोक।

उ०—१ सिर संती जिणेसर, सेवत ही सुख खांण। इण भव लहै लीला, परभव पद निरवांण।—ध.व.ग्रं.

उ०—२ केह नो गुमांन रहै नहीं साबतो रे, गंजी नई कुण जाय। परभवि परमेसर पूज्या बिना रे, जेत कहो किम ताय।—वि.कु.

२ देखो 'परिभव' (रू.भे.)

परभव्विय—देखो 'पराभव' (रू.भे.)

उ०—पातिसाह परभव्विय, अब उतारी असंगा। कहुं गिड़ावि गोमट्ट, ताहि आठुए तुरंगा।—रा.ज.सी.

परभा—देखो 'प्रभा' (रू.भे.)

परभाकर—देखो 'प्रभाकर' (रू.भे.)

परभात—देखो 'प्रभात' (रू.भे.)

उ०—प्रेम मन धारि नित पहुर परभात रे। विविध जसवास गुणरास वाढो।—ध व.ग्रं.

परभातड़ली, परभातड़ी—१ देखो 'प्रभात' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—मोहे कहे अलमस्त दिवांनी, कहां लगाऊं वातड़ली। मीरां के प्रभु गिरधर नागर, आंन मिळो परभातड़ली।—मीरां

२ देखो 'प्रभाती' (अल्पा., रू.भे.)

परभाति—१ देखो 'प्रभात' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—पालीतांणा पाजडी ए, चडियइ ऊठि परभाती।—स.कु.

२ देखो 'प्रभाती' (रू.भे.)

परभातियौ—देखो 'प्रभातियौ' (रू.भे.)

परभातियौ-तारौ—देखो 'प्रभातियौ-तारौ' (रू.भे.)

परभाती—देखो 'प्रभाती' (रू.भे.)

परभातीतारौ—देखो 'प्रभातियौ-तारौ' (रू.भे.)

उ०—समदर देख्यौ सूरज कांनी, गरज्यौ तीर उछाळौ दै। कै दे चंदा गिगन वीचलो, कै परभातीतारौ दै।—चेतमांनखा

परभाव—देखो 'प्रभाव' (रू.भे.)

उ०—हरि दरसण मोकूं कहां, सो मैं कीयौ भाय। औ तौ फळ

पायो कहूं, पूरबले परभाव ।—गजउद्धार

परभारी—देखो 'परबारी' (रू.भे.)

उ०—१ इसड़ी कहाइ दूजै ही दिन कुमार दुरजनसाळ आखेट रा रमण हूं परभारौ ही घोड़ा रा चाकरां नूं वरजाइ दौड़ां रा साधिया । घोड़ा रा पचास ही छड़ा असवार साथ ले'र पिता रै पगै लागण नूं दिल्ली री फौज रै समीप आयौ ।—वं.भा.

उ०—२ आछी-आछी सारी चीज ऊंटां गाडां में घाल परभारी लाखेरी नूं वहिर कीनी ।—गोपाळदास गौड़ री वारता

(स्त्री० परभारी)

परभाव—देखो 'प्रभाव' (रू.भे.)

उ०—ढाल चवदमी ए कही रे, कांइ पूरण थयौ अधिकार रे । सतगुरु नै परभाव सूं रे, कांइ एह लह्यौ परणिपार रे ।—वि.कु.

परभाव-वंकणया—सं०स्त्री० [सं० प्रभाववक्रता] बुरी शिक्षा देने, खोटे माप-तौल रखने, मिलावट करने व झूठा लेखा-जोखा रखने की क्रिया । (जैन)

परभावसाळी—देखो 'प्रभावसाळी' (रू.भे.)

उ०—म्हारै खनै-ई आया हा । कैण लाग्या—थे-ई म्हारै सागै हालो, थारै जिसा परभावसाळी आगै आसी जणै गरीबां रो उपगार हुसी ।
—वरसगांठ

परभास—सं०पु० [सं० प्रभासः] सूर्य, रवि

परभासखेत्र—देखो 'प्रभासखेत्र' (रू.भे.)

परभु, परभू—देखो 'प्रभु' (रू.भे.) (डिं.को.)

परभुता—देखो 'प्रभुता' (रू.भे.)

परभेद—देखो 'प्रभेद' (रू.भे.)

परभ्रत, परभ्रित—सं०पु० [सं० परभृतः परभृत्] १ शिव, महादेव ।
(अ.मा.)

उ०—नमौ परब्रह्म नमौ परभ्रत ।—ह.र.

२ चाकर, सेवक (अ.मा.)

३ कोयल (अ.मा.) (डिं.को.)

४ स्वामी कार्तिकेय (ह.नां.मा.)

रू०भे०—परिभ्रत, प्रभ्रत ।

परम—वि० [सं०] १ अति दूरवर्ती, अन्तिम ।

२ मुख्य, प्रधान ।

३ सर्वोच्च, सर्वश्रेष्ठ ।

४ आरम्भिक ।

५ अत्यत, बहुत । उ०—पातर भगतण पेख, परम मन में सुख पाई । मिळियां मच्छी मार, करै ज्यूं मोद कसाई ।—ऊ.का.

६ महान्, बड़ा । उ०—धारण वरण चितार, कारण लख महर्मा करी । धारण कीजै धार, परम उदार 'प्रतापसी' ।—दुरसौ आढौ

सं०पु० [सं०] १ ईश्वर । उ०—चमराळ फिरै दळवळ चिहूं, दगै तोप गोळा दमंग । तिण वार भडां मुरधर तणां, परम कहे भ्रो रे पमंग ।—सू.प्र.

२ विष्णु (ह.नां.मा.)

उ०—सब लहे कुण सुकवि, स्रब सब हुंता न्यारो । ब्रह्मचारी गोविंद, परम लिखमी नां प्यारो ।—पी.ग्रं.

३ शिव (अ.मा.)

४ कामदेव (अ.मा.)

अव्य०—परसों (उ.र.)

उ०—यूं हीज करतां जासी ऊमर, परम न काल परार न पौर । आंपां बात करां अवरां री, आंपां री करसी कोइ और ।
—ओपौ आढौ

रू०भे०—परम्म, परम्य, प्रम, प्रम्म ।

परमई—देखो 'परमे' (रू.भे.)

परमकोस—सं०पु० [सं० परम+कोषः ?] कपट (अ.मा.)

परमगत, परमगति—सं०पु० [सं० परमगति] मोक्ष, मुक्ति ।

उ०—आदि पुरुस आदेस, आदि जिण स्रिस्ट उपाई । आदि पुरुस आदेस, परमगति वैकुंठ पाई ।—ह.र.

परमगुर, परमगुरु, परमगूरु—सं०पु० [सं० परमगुरु] १ ईश्वर
(अ.मा., ह.नां.मा.)

उ०—मैं दुरबळ अति ही पतित, दुरवळ दीन अनाथ । पत कुण राखै परमगुरु, राज बिनां रुघनाथ ।—गजउद्धार

२ शिव । उ०—आया सिवपुरी हुआ कारज सिध, परमगुरु चा ग्रहिया पगि । माहोमाहि करइ वातां मिळि, जनम सुकियारथ हुआ जगि ।—महादेव पारवती री वेलि

३ श्रीकृष्ण (अ.मा.)

४ चंद्र, चांद (ना.डिं.को., ह.नां मा.)

रू०भे०—प्रमगुर, प्रमगुरु, प्रम्मगुरु ।

परमचित—सं०पु० [सं० पराचित ?] चाकर, सेवक (अ.मा.)

सं०स्त्री० [देशज] संगीत की एक ताल ।

परमट—देखो 'परमिट' (रू.भे.)

परमत—देखो 'प्रमत्त' (रू.भे.)

परमतत, परमतत्व—सं०पु० [सं० परमतत्त्व] १ सम्पूर्ण विश्व के विकास का मूल तत्व ।

२ ब्रह्म, ईश्वर ।

रू०भे०—परतंत, परतत ।

परमत्थ—१ देखो 'प्रमत्त' (रू.भे.) (जैन)

२ देखो 'परमारथ' (रू.भे.) (जैन)

परमथ—देखो 'प्रमथ' (रू.भे.)

परमथनाथ—देखो 'प्रमथनाथ' (रू.भे.)

परमद—सं०पु० [सं०] एक रोग विशेष जो अधिक मात्रा में शराब का उपयोग करने के कारण उत्पन्न होता है ।

परमधाम—सं०पु० [सं० परमधाम] वैकुंठ, स्वर्ग (नां.मा.)

उ०—धरि सहस्र फरासां धारणा, खिति अनोप कीधौ खड़ो । अस-

पति सुणे अच्चजिजयो, परमधाम किर प्रगड़ो।—रा.रू.

परमनंद, परमनंदन–सं०पु० [सं० परमनंदन:] गणेश, गजानन। (ह.नां.मा.)

परमपद–सं०पु० [सं०] १ मोक्ष, मुक्ति।

उ०—संत जातरा है सुखदाई। जहां सुखरांम परमपद पाई।

—स्री सुखरां दासजी महाराज

२ ईश्वर (नां.मा.)

परमपिता–सं०पु० [सं०] परमेश्वर (डि.को.)

परमपुर–सं०पु० [सं०] १ विष्णुलोक। उ०—इंद्रपुर ब्रह्मपुर नागपुर सिवपुर, परमपुर तांई ऊपरि पार। राजा सरग सात में 'रतनो', मिळयो जोतसरूप मझार।—दूदो

२ वैकूंठ, स्वर्ग।

३ कैलाश, शिवधाम।

रू०भे०—प्रमपुर।

परमपुरायण–सं०पु० [सं० परम:परायण] ईश्वर (डि.को.)

परमपुरस–सं०पु० [सं० परमपुरुष] ईश्वर, विष्णु।

परमप्रिय–सं०पु० [सं०] दो ह्रस्व मात्राओं का नाम (डि को.)

परमफळ–सं०पु० [सं० परमफल] मोक्ष, मुक्ति।

परमब्रह्म–सं०पु० [सं०] ईश्वर।

परमब्रह्मचारिणी–सं०स्त्री० [सं०] दुर्गा।

परमर–वि०—१ श्रेष्ठ, उत्तम। उ०—नरपति पुर नागोर नूं, विदा कियो 'बखतेस'। आयो जैतारण अभो, राजा परमर वेस।

—रा.रू.

परमळ, परमळि–सं०पु० [देशज] १ मक्का के भुने हुए दाने (ढूंढ़ाड़)

२ देखो 'परिमळ' (रू.भे.)

उ०—१ अत परमळ पसर पसरिया आंबा। सुक पिक बोलै सुखद सराग।—बां.दा.

उ०—२ नासा विसन करिस इम निरमळ। प्रभु घूंटै तो चरणां परमळ।—ह.र.

परमसुख–सं०पु० [सं०] आनंद (अ मा.) (ह.नां मा.)

परमहंस–वि० [सं०] बहुत भोला-भाला, सीधा, सरल।

सं०पु०—१ परमात्मा, ईश्वर।

२ ज्ञान मार्ग में बहुत आगे बढा हुआ संन्यासी।

३ स्मृतियों के अनुसार कुटीचक्र, बहूदक, हंस और परमहंस नामक संन्यासियों के चार भेदों में सर्वश्रेष्ठ भेद।

४ उक्त सर्वश्रेष्ठ भेद का संन्यासी।

रू०भे०—परहंस, प्रमहंस।

परमांण—१ देखो 'प्रमांण' (रू.भे.)

उ०—१ केहरि छोटो बहुत गुण, मोड़ै गयंदां मांण। लोहड़ बडाई की करै, नरां नखत परमांण।—हा.झा.

उ०—२ कंवर कह्यो—स्रो इकलिंगजी री वाच बांह छै, ज्यों थे कहण वाळी कहस्यो तो परमांण छै।—राव रिणमल री वात

उ०—३ जोसी वचन परमांण करि, मांडयो राय वीवाह। परणावूं सुरसुंदरी, अधिको करी उच्छाह।—स्रीपाळ

उ०—४ देखैलो हिंदवांण, निज सूरज दिस नेह सूं। पण थारा परमांण, निरख निसासां नांखसी।—केसरीसिंह बारहठ

२ देखो 'परमांणु' (रू.भे.)

परमांणिक—देखो 'प्रमांणिक' (रू.भे.)

परमांणु–सं०पु० [सं० परमाणु] १ अत्यंत सूक्ष्म कण।

२ किसी तत्व का वह अति छोटा कण या खण्ड जिसके कण या खण्ड बन ही नहीं सकते हों।

रू०भे०—'प्रमांणु'।

परमांणुवाद–सं०पु० [सं० परमाणुवाद] १ परमाणुओं से संसार की रचना मानने वाला वाद विशेष।

परमाणुवादी–वि०—परमाणुवाद संबंधी, परमाणुवाद का।

सं०पु० [सं० परमाणुवादिन्] परमाणुवाद के सिद्धान्त को मानने वाला व्यक्ति।

परमांणो—देखो 'प्रमांण' (अल्पा., रू.भे.)

परमा—देखो 'प्रमा' (रू.भे.)

परमाइस्ट–स०पु० [सं० परमेष्टिन्] ब्रह्मा (डि.नां.मा.)

परमाणंद, परमाणंदो—देखो 'परमानन्द' (रू.भे.)

उ०—१ हरि हरख आणि मनि जाणी, इम थयो आणंद। वीर वचने सांमह्या, परवरया परमाणद।—रुकमणी-मंगळ

उ०—२ राज करइ तिहां राजियउ, पुंडरीक नांम नरिंदो जी। गुण सुंदरी तसु भारिजा, पांमइ परमाणंदो जी।—स.कु.

परमातम, परमातमा, परमात्म, परमात्मा–सं०पु० [सं० परमात्मा]

१ ईश्वर।

उ०—लिखि लापर लेख लिखावन की, दुनियां विच देख दिखावन की। परमातम को नहिं पावन की, बक-व्रत्तीय ब्रह्म बतावन की।

—ऊ.का.

२ परब्रह्म। उ०—१ घरम थी गरम क्रोध के घर में, परमति सरमति लाई। परमातम सुद्ध परम पुपुस भज, हर मतु हरम पराई।

—ध.व ग्रं.

उ०—२ परिब्रह्म पूरण, तत मग्न तूरण। परमातम प्राप्त, वह पुरुस आप्त।—ऊ का.

उ० ३ महात्मा आत्मा ए परम परमात्मा हिळमिळै। झिलै जीवोक्ष्योती झगमगत ज्योती झिळमिळै।—ऊ का.

रू०भे०—प्रमातमा।

परमाद—देखो 'प्रमाद' (रू भे)

उ०—सतगुरु संगति पायनै ए, मत कीजो परमाद। पर निंदा ईरसा तजो ए, कीजो धरम आह्लाद।—जयवांणी

परमादी—देखो 'प्रमादी' (रू.भे.)

उ०—पारब्रह्म सूं पधारिया, पीछा ताहि मिळिजे ए। अन परमादी

आतमा, ताका दरसण कीजे ए ।—स्री सुखरामजी महाराज

परमादो—देखो 'प्रमाद' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—अथिर जांणी इम आऊखूं, किम कीजइ **परमादो** जी । नरकां राज्य न वांछयइ ते, मांहि नहीं को सवादो जी ।—स.कु.

परमाद्वैत-सं०पु० [सं० परम+अद्वैतम्] १ जीव और ब्रह्म में अभेद कल्पना करने वाला वेदान्त सिद्धान्त विशेष ।

२ परब्रह्म, परमात्मा ।

परमाधामी-सं०पु० [सं० परमाधार्मिक, प्रा० परमाधम्मिग्र, परमाहम्मिग्र] नरकवासियों को दण्डित करने वाला देव ।

उ०—जइ ऊपजइं कूंभी मंझारि, धाधइ देह न माइ बारि । **परमाधामी** किलकिल करी, धाइं खंडोखडि करइं तिण ठांइ ।

—चिहुंगति चउपई

परमानंद, परमानंदो-सं०पु० [सं० परमानंद] १ आनंदस्वरूप ब्रह्म, परमात्मा । उ०—जब निराधार मन रह गया, आतम के आनंद । दादू पीवै रांम रस, भेटैं **परमानंद** ।—दादूवांणी

२ ब्रह्म के अनुभव का सुख, ब्रह्मानन्द ।

३ बहुत बड़ा सुख ।

उ०—बादळ नहीं तहं वरसत देख्या, सब्द नहीं गरजंदा । बीज नहीं तहं चमकत देख्या, 'दादू' **परमानंदा** ।—दादूवांणी

रू०भे०—परमाणंद ।

अल्पा०—परमानदो ।

परमापति-सं०पु० [सं० परम+पति] ईश्वर ।

उ०—**परमापति** सागति प्रेरक की, हहराय थके मति हेरक की । अज एक अखंडित ईस्वर को, जप जाप सदा जगदीस्वर को ।

—ऊ.का.

परमाय—देखो 'प्रमाद' (रू.भे.) (जैन)

परमायत-वि०—१ सब में दीर्घ (जैन)

२ सब काल में स्थित (जैन)

परमार-सं०पु० [सं० पर+रा० मारना] अग्नि कुल के अंतर्गत माना जाने वाला राजपूतों का एक कुल ।

उ०—लीधो दळ **परमार** दळ, आबू भोळै राव । गाजै जादव देवगिर, लीधो 'करण' सुजाव ।—बां.दा.

रू०भे०—पंमार, पंवार, पमार, पुंवार, प्रमार ।

परमारत, परमारथ-सं०पु० [सं० परमार्थ] १ परोपकार ।

उ०—१ 'जसवंत' जग में जीवड़ा, सो न लखै हिय सुम्य । स्वारथ हांती सारखो, **परमारथ** सो पुन्य ।—ऊ.का.

उ०—२ यही रुपया है अनदाता, स्वारथ **परमारथ** सुख साता ।

—ऊ.का.

२ उत्कृष्ट पदार्थ । उ०—पायउ जिम बांमण **परमारथ**, कहतउ वात निघात कहइ । जांणीयउ पारबती जांणपणउ, कोइ गहिलो सुं आखडी ग्रहइ ।—महादेव पारवती री वेलि

३ मोक्ष । उ०—**परमारथ** पंथ नाहिं पिछांण्यो, स्वारथ अपणो मांनि सधीनो ।—ध.व.ग्रं.

४ दुःख का सर्वथा अभाव रूप सुख (न्याय)

५ वास्तव सत्ता ।

रू०भे०—परमत्थ, प्रमरथ ।

परमारथता-सं०स्त्री० [सं० परमार्थता] सत्यभाव, यथार्थ ।

परमारथवादी-वि०—परमार्थवाद सम्बन्धी, परमार्थवाद का ।

सं०पु० [सं० परमार्थवादिन्] १ बहुत बड़ा ज्ञानी और तत्वज्ञ ।

२ परमार्थवाद को मानने वाला ।

परमारथी-वि० [सं० परमार्थिन्] १ परोपकारी ।

उ०—परमारथ को सब किया, आप सवारथ नांहि । परमेस्वर **परमारथी**, कै साधू कळि मांहि ।—दादूवांणी

२ मोक्ष चाहने वाला । उ०—सुखारथी, स्वारथी, जे स्वसुख दुख प्रारथी वच सदैं । बढे जी विद्यारथी विसद **परमारथी** वच वदैं ।

—ऊ.का.

परमाहमी-वि० [सं० परम+अधर्मी] परम अधर्मी, महान नीच ।

उ०—साधवी माता कहइ सांभलि, मुंडा ए कांम भोग रे । आलिंगन लोह पूतली सुं, **परमाहम्मी** प्रयोग रे ।—स.कु.

परमिट-सं०पु० [अं०] अनुमति पत्र ।

रू०भे०—परमट ।

परमिट्ठो—देखो 'परमेस्ठी' (रू.भे.)

उ०—सुभ भाव समकित ध्यांन समरण, पंच स्री **परमिट्ठो** । सो गुरु स्री जिणचंद सूरि, धन्न नयणे दिट्ठो ।—स.कु.

परमिति-सं०स्त्री० [सं०] १ परिमित ।

२ परमसीमा । उ०—निमो देव अरिहंत, पुरुस परधांम पुरातम । परमारथ परतंत, परम अणपार पराक्रम । तूं **परमिति** परतंत, तूं ही परदेव पणीजै । परउपगारी परम, ग्यांन पररूप गिणीजै ।

—पी.ग्रं.

३ मर्यादा ।

परमिस्ट-सं०पु० [सं० परमेष्ठ] ब्रह्मा । (नां.मा.)

परमुख-वि० [सं०] १ प्रतिकूल आचरण करने वाला, विरुद्ध आचरण करने वाला ।

२ जिसका मुख दूसरी ओर फिरा हुआ हो, विमुख ।

सं०स्त्री०—१ राजस्थानी साहित्य में वर्णनीय अन्य पुरुष के वचनों से वर्णन कराने की एक साहित्यिक रीति विशेष ।

२ देखो 'प्रमुख' (रू.भे.)

रू०भे०—परम्मुख ।

परमे—देखो 'परमैं' (रू.भे.)

परमेट्ठि, परमेट्ठी, परमेठि—देखो 'परमेस्ठी' (रू.भे.)

उ०—१ जपउ पंच **परमेट्ठि** परभाति जापं, हरइ दूरि सोक संताप । पापं ।—स.कु.

उ०—२ एकं पाइं दिणयर द्रंठि। हीयडइ मंत्रु पंच परमेठि।

—पं.पं.च.

परमेस—सं०पु० [सं० परमेश] १ परमेश्वर।

उ०—च्यारि वीर चत्रभुज, लाछिवर जिसौ लखमंण। भरथ आप भगवंत, समर परमेस सत्रघंण।—पी.ग्रं.

२ परब्रह्म। उ०—देस में कियौ परवेस जद दखणियौ। 'मेस' परमेस री जोत मिळियौ।—महेसदास कूंपावत रौ गीत

रू०भे०—प्रमेस।

परमेसटी—देखो 'परमेस्ठी' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

परमेसर—देखो 'परमेस्वर' (रू.भे.)

उ०—रुद्र विना सुर कमण जाप परमेसर जोहै। विण ग्रह सुख प्रीवरत त्रिपति कुण बंधं तोहै।—रा.रू.

परमेसरी—देखो 'परमेस्वरी' (रू.भे.)

उ०—करे आदेस आरोहिया केसरी, मरद अलवेस री जोग माया। दाखता विगति जंगळ धरा देस री, इंद्र परमेसरी खुड़द आया।

—मे.म.

परमेसरु, परमेसुर—देखो 'परमेस्वर' (रू.भे.)

उ०—१ तिणि पुरि हूउ संति जिणेसरु। संघह संतिकरउ परमेसरु।

—पं.पं.च.

उ०—२ बंदगी बैर भरि देत बोट। परमेसुर पै नहिं धरत पोट।

—ऊ.का.

परमेस्ट—देखो 'परमेस्ठ' (रू.भे.)

परमेस्टिनी—देखो 'परमेस्ठिनी' (रू.भे.)

परमेस्टि, परमेस्टी—देखो 'परमेस्ठी' (रू.भे.)

उ०—थ्यांन धरइ परमेस्टि रिसीसर रूड़उ रे।—स.कु.

परमेस्ट—सं०पु० [सं० परमेष्ठ] ब्रह्मा, प्रजापति।

रू०भे०—परमेस्ट।

परमेस्ठि—देखो 'परमेस्ठी' (रू.भे.)

परमेस्ठिनी—सं०स्त्री० [सं० परमेष्ठिनी] १ देवी।

२ श्री।

रू०भे०—परमेस्टिनी।

परमेस्ठी—सं०पु० [सं० परमेष्ठिन्] १ ब्रह्मा, चतुरानन।

२ अग्नि आदि देवता।

३ तत्त्व, भूत।

४ प्राचीनकाल का एक प्रकार का यज्ञ विशेष।

५ शालिग्राम की एक प्रकार की मूर्ति।

६ विराट पुरुष जो परम ब्रह्म का ही एक रूप है।

उ०—दागै सम ईरण जीरण छद दाटै। कोणप विरचीरण संकीरण काटै। वाल्हा वम्ही बिन वल्हा विसरावै। घर अंतेस्टी कर परमेस्ठी धावै।—ऊ.का.

७ अर्हन्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और मुनि (जैन)

रू०भे०—परमिट्ठग्रौ, परमेटि, परमेट्ठि, परमेट्ठि, परमेठि, परमेस्टि, परमेस्टी, परमेस्ठि।

परमेसर—सं०पु० [सं० परमेश्वर] १ संसार का परिचालक व कर्ता, ईश्वर (ह.नां.मा.)

उ०—परमेसर पाखे आ अभिलाखे, छद्मी क्यूं छूटंदा है।

—ऊ.का.

पर्या०—आदपुरस, ईसर, कंसनिकंदन, करतार, कांनड़, किल्यांण, केसव, क्रस्ण, गिरधर, गोपाळ, गोविंद, चक्रपांणि, जगदीस, त्रभुवणनाथ, दामोदर, दीनदयाळ, नारायण, निरंजन, पदमनाभ, पुरसोतम, प्रभु, बाळमुकुंद, मधुसूदन, माधव, मुरळीधर, मुरारि, रणछोड़, रांम, वासुदेव, विसंभर, वीठल।

२ विष्णु।

३ शिव।

रू०भे०—परमेसर, परमेसरु, परमेसुर, प्रमेसर, प्रमेसुर, प्रमेस्वर।

परमेस्वरी—सं०स्त्री० [सं० परमेश्वरी] दुर्गा, देवी।

रू०भे०—परमेसरी।

परमेह—देखो 'प्रमेह' (रू.भे.)

परमैं—अव्य०—परसों।

रू०भे०—परमइ, परमे।

परमोच्छव, परमोछव, परमोतसव—सं०पु० [सं० परम+उत्सव]

१ बड़ा उत्सव, महान उत्सव। उ०—मारू आयौ मधुपुरी, स्रो दूलह 'अभसाह'। परमोछव परणायवा, सुख मंडे 'जयसाह'।

—रा.रू.

परमोद—१ देखो 'प्रबोध' (रू.भे.)

उ०—बाबा सिख मिळै बाथां सूं, थळ जातां सूं हरख थुवौ। सिख वातां सूं नहीं सलूधा, हाथां सूं परमोद हुवौ।—बांकीदास बीठू

२ देखो 'प्रमोद' (रू.भे.)

परमोदय—सं०पु० [सं० परम+उदय] महान उदय, अहोभाग्य, शुभ अवसर। उ०—अबळां उद्धारी, सबळां कुळ आया। पुन परचारण रा, परमोदय पाया।—ऊ.का.

परमोध—१ देखो 'प्रबोध' (रू.भे.)

२ देखो 'प्रमोद' (रू.भे.)

परम्म—देखो 'परम' (रू.भे.)

परम्मळ—देखो 'परिमळ' (रू.भे.)

उ०—परम्मळ कम्मळ सद्रस पग्ग। निधांन परम्म निवारण नग्ग।

—ह.र.

परम्मुख—देखो 'परमुख' (रू.भे.)

उ०—तीन ही सांमंत सलेम रै साथ सांम्हैं जाइ बाणारसी रै समीप कुमार रा काका नूं कोरड़ो लोह चखायौ। जिण थी पहला ही प्रभात में परम्मुख होइ दूजौ कुंअर दूजा रौ प्रहार भी न खायौ।

—वं.भा.

परम्य—देखो 'परम' (रू.भे.)

उ०—दसा विसम्य संम्यहा ! अगम्य गम्य है नहीं। रसा **परम्य** रम्य रम्य, हा ! हरम्य है नहीं।—ऊ.का.

परयंक-सं०पु० [सं० पर्यंक] पलंग, शय्या।

उ०—जूड़ा जोड़ा **परयंक** पेसणी पात्र पुंज कटि करवाळ पुहवी में पैठी तौ भी मंतु बिहूण जनक रा मित्र नै मारण मैं म्हारौ तौ मन आघात रौ उगकरस नहीं मांनै।—वं.भा.

रू०भे०—परजंक, परिजंक, परियंका, प्रजंक, प्रयंक।

परयंत-अव्य० [सं० पर्यन्त] तक, लौ। उ०—और भी सातवाहन रा चरित्र नूं आदि लेर अस्थिवाळ वीसळदेव बल्लभाचारय रा चरित्र **परयंत** इसा ही प्रमांणिकां रै लिखिया।—वं.भा.

रू०भे०—परजंत, परियंत, परियंत, प्रयंत, प्रजंत।

परयटन-सं०पु० [सं० पर्यटन] भ्रमण, घूमना, देशाटन।

रू०भे०—परजटन, परिजटन, परियट्टन।

परयत्न—देखो 'प्रयत्न' (रू.भे.)

परयां—देखो 'परियां' (रू.भे.)

परयाग—देखो 'प्रयाग' (रू.भे.)

उ०—धवळी-धारा छांह पड़ंता इसड़ी राजै। बिन **परयागां** गंग जमुन रौ संगम साजै।—मेघ०

परयाप्त-वि० [सं० पर्याप्त] यथेष्ट, यथोचित, पूरा।

परयाय—देखो 'परयाय' (रू.भे.)

उ०—म्है ढीला पड़ गया हां तौ ही मांना एक क्षण में च्यार **परयाय** च्यार प्रांण ते खुवाया पुण्य किम हुसी अनै थे मुंहपती बांध नै क्यूं खोटी हुवा ?—भि.द्र.

परयास—देखो 'प्रयास' (रू भे.)

परयुक्षण-सं०पु० [सं० पर्युक्षणम्] पवित्र पूजा व श्राद्ध आदि के पहिले मंत्र पढ़ कर या वैसे ही पानी छिड़कने की क्रिया।

परयुक्षणी-सं०स्त्री० [सं० पर्युक्षणी] पर्युक्षण में छिड़कने के पानी का पात्र।

परयुसण, परयूसण-सं०पु० [सं० पर्युषणम] १ पूजन, अर्चन, सेवा। २ जैनियों का एक पर्व विशेष।

उ०—कितरायक दिनां बेदौ कियौ पछै वाबेचा लातर गया। **परयूसणां** में इद्रध्वज काढ्यौ। स्वामीजी रा मूंढा आगे घणी वेलां ऊभा रही गावै बजावै तांन करै।—भि.द्र.

वि०वि०—जैन सम्प्रदाय का एक महत्वशाली पर्व जो भाद्र कृष्णा द्वादशी से भाद्र शुक्ला पंचमी तक चलता है। इन आठ दिनों में इस धर्म के अनुयायी प्रातः साधुओं एवं विद्वानों के प्रवचन श्रवण करने, दोपहर को चौपाई आदि व सायं प्रतिक्रमणार्थ स्थानक में जाते हैं। श्रद्धालु लोग इन पूरे आठ दिनों तक उपवास रखते हैं जिसे अठाई कहते हैं। व्यापारी लोग इन आठ दिनों में व्यापार बंद रखते हैं और अपना समय धर्माचरण में लगाते हैं। अन्तिम समाप्ति का दिन संवत्सरी कहलाता है। मंदिरमार्गी सम्प्रदाय वाले इस दिन भगवान की धूमधाम से सवारी निकालते हैं जिसमें भजन-कीर्तन का विशेष कार्यक्रम रहता है। संवत्सरी के दूसरे दिन जैनी लोग अपने पूर्व कृत्यों के लिए परस्पर क्षमायाचना करते हैं जिसे 'खमत खांवणा' कहते हैं। दिगंबर संप्रदाय वालों में यह पर्यूसण भाद्र शुक्ला पंचमी से भाद्र शुक्ला चतुर्दशी तक चलता है।

३ एक ही स्थान में जैन साधुओं का वर्षाकाल व्यतीत करना।

रू०भे०—पजूंण, पजूण, पजूसण, पज्जूसण, पज्जोवसण, पिजूसण।

परयोग—देखो 'प्रयोग' (रू.भे.)

परयोजन—देखो 'प्रयोजन' (रू.भे.)

पररूप—देखो 'प्ररूपक' (रू.भे.)

पररूपणा—देखो 'प्ररूपणा' (रू.भे.)

परेरउ-वि०—पराया, दूसरे का। उ०—साहिब कच्छ न जाइयइ, तिहां **परेरउ** द्रंग। मीमळ नयण सुवंक घण, भूलउ जाइसि संग।—ढो.मा.

परळंब—देखो 'प्रळंब' (रू.भे.)

परळंबौ, परलबौ—देखो 'प्रळंब' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—अस्टापद जिम अरचियइ, भरत भराया बिंबो जी ! ग्वालेरइ गढयहि निलउ, बावन गज **परलंबौ** जी।—स.कु.

परळ-सं०स्त्री० [देशज] १ झूठ. २ असत्य बात, गप्प।

परळउ—देखो 'प्रळय' (रू.भे.) (उ.र.)

परळकौ-सं०पु० [देशज] चमक, प्रकाश।

परळय—देखो 'प्रळय' (रू.भे.)

परळयकरण-सं०स्त्री० [सं० प्रलय+करण] अग्नि, आग।

रू०भे०—परळैकरण।

परळाई-सं०पु० [देशज] उछलकूद। उ०—ऊठै 'मोर' करै **परळाई**। मोर जाइ पण 'सादौ' न जाई।—नैणसी

परळै—देखो 'प्रळय' (रू.भे.)

उ०—१ पिंड पड़ै, पुन ना पड़ै, **परळै** पतित न होय। रज्जब, सगी जीव का, सुकृत सिवाय न कोय।—रज्जब

उ०—२ पैला कुण रुकै ? उण सारू तौ आज ही **परळै** है। लांठा जिनावर मिळ नै दुबळां री विचार करण लागा।—फुलवाड़ी

परलै-क्रि०वि० [सं० पर=दूसरा+राज० लै] उस ओर, दूसरी ओर

उ०—इतरे पेमसिंह चांपावत बरछी री दोन्ही सो सक्तिसिंह रै **परलै** पासै नीसरी।—मारवाड़ रा अमरावां री वारता

परळैकरण—देखो 'परळयकरण' (रू.भे.) (डि को.)

परलैदिन—देखो 'पैलैदिन' (रू.भे.)

उ०—आज कालै पिरसूं और **परलैदिन** करतां कीं महीनां फेर गुड़ गया।—फुलवाड़ी

परलोक-सं०पु० [सं०] १ शरीर छोड़ने पर आत्मा को मिलने वाला लोक, वैकुण्ठ। उ०—'जसवंत' जुवति जे जहंहि जीव, दहनोदय

दहूंही प्रथक पीव । निस्चित पतिव्रत लोक नेम, प्रत्येक करहिं परलोक प्रेम ।—ऊ.का.

२ दूसरा लोक ।

यौ०—परलोकगमन, परलोकप्राप्ति, परलोकवास ।

मुहा०—१ परलोकगांमी होणौ—मरना ।

२ परलोक सिधारणा—मरना ।

रू०भे०—परलोय, प्रलोक ।

परलोभ—देखो 'प्रलोभ' (रू.भे.)

परलोभन—देखो 'प्रलोभन' (रू.भे.)

परलोय—देखो 'परलोक' (रू.भे.) (जैन)

परळौ—देखो 'प्रळय' (अल्पा० रू.भे.)

उ०—१ उत्पत्ति मांह उपज्या नहिं चेतन, नहिं थिति माए वो थिति रे ! परळा में कबहूं नहिं पलटे, नित निरलेप चेतन रे !

—स्रो सुखरांमजी महाराज

उ०—२ एक पूरब दसा महीथळ परीपार ऐसे नांम नगर, तठै राजा मुकनसेण ऐसे नांम राज करै । तको महा निरमोही । तिकण री ऐड़ी ठकुराई जो बारा बारा कोस ऊपर फौज री पड़ाव रहै । महा सिकार रौ जीव । तको चढ़ै जद जीवां जीवन रौ परळौ होऐ ।

—कल्यांणसिंघ नगराजोत बाढेल री वात

परलौ—वि० [सं० पर+रा०प्र० लौ] (स्त्री० परली) १ उस ओर का, दूसरी ओर का । उ०—दुह दुह कोठो हेंठि दिवारि, सही इमि कीजै आक संचारि । ऊपरि एक एकड़ौ अंति, इम परलै कोठे आवंति ।—ल.पिं.

मुहा०—१ परलै दरजै रौ—हर दर्जे का, बहुत, अत्यन्त ।

२ परलै पार होणौ—अंत तक पहुंचना, बहुत दूर तक जाना ।

३ परलै सिरै रौ—देखो 'परलै दरजै रौ' ।

२ सामने की ओर भगा हुआ (उ.र.)

३ ध्यान देने वाला (उ.र.)

४ उत्तर काल भव (उ.र.)

५ दूसरी ओर अवस्थित (उ.र.)

परव—सं०पु० [सं० पर्वन्] ग्रंथि, जोड़, गांठ ।

ज्यूं—बांसरी परव ।

२ अंश, भाग, टुकड़ा, विभाग ।

३ ग्रंथ का भाग ।

ज्यूं—महाभारत रा १८ परव है ।

४ अवधि, निर्दिष्टकाल, विशेष कर प्रतिपक्ष की अष्टमी और चतुर्दशी तथा पूर्णिमा एवं अमावस्या ।

५ पूर्णिमा, अमावस्या और संक्रान्ति ।

६ उत्सव, पुण्यकाल ।

७ अवसर, मौका । उ०—चाढ़ि घड़ बेहड़ां वाढ़ि भड़ चौसरां । चाळि कळि काळि उजवाळि चोला । परब इसड़ै मुम्रो 'नाथ' मांहि पग, ढीलड़ी तणा पग हुआ ढीला ।

—राव सत्रसाल गोपीनाथोत हाडा रौ गीत

८ यज्ञादि के समय होने वाला उत्सव ।

९ त्यौहार ।

१० चन्द्र या सूर्यग्रहण ।

[सं० प्रपा ?] ११ पौसाला, प्याऊ (उ.र.)

१२ कूप, कुण्ड (उ.र.)

१३ समय । उ०—गुणग्राहक गिरनारपत, चूंडा राव खंगार । एक परव आधौ अरव, दे तुं द्विज दातार ।—बां.दा.

रू०भे०—पव, पब्ब, परब, परब्ब, प्रब, प्रबि, प्रब्ब, प्रव ।

परवकार—सं०पु० [सं० पर्वकारिन्] वह ब्राह्मण जो अमावस्यादि पर्व के दिनों में किया जाने वाला धर्मानुष्ठान का कार्य निजी लोभ के वशीभूत होकर किसी अन्य दिन कर डाले ।

परवकाळ—सं०पु०यौ० [सं० पर्व-काल] १ पर्व का समय ।

वह समय जब कोई पर्व हो, पुण्यकाल ।

३ चतुर्दशी, अष्टमी, पूर्णिमा, अमावस्या और संक्रान्ति ।

४ चन्द्रमा के क्षय का समय ।

परवगांमी—सं०पु० [सं० पर्वगामिन्] पर्व के दिन स्त्री-प्रसंग करने वाला ।

परवज—सं०पु० [सं० पर्वज] वह वृक्ष जिसके तने के मध्य गांठ हो—यथा ईख, बांस, एरंड ।

रू०भे०—पव्वया ।

परवणी—सं०स्त्री० [सं० पर्वणी] पूर्णिमा, पूर्णमासी, पूनम ।

परवत—सं०पु० [सं० पर्वत] १ वह प्राकृतिक भू-भाग जो भूमि से बहुत ऊंचा उठा हुआ हो और जो प्रायः पत्थर ही पत्थर हो, पहाड़. उ०—गुड़ै मयमत सेना मुहर गैमरा, प्रकटिया मारका थाट जोधपुरा । धूंसियै हैवपुरा पाय अरवद, पसरियै 'सिंघ' परवत थया पाधरा ।—महाराज रायसिंघ बीकानेर रौ गीत

पर्या०—अग, अचळ, अडोळ, अतोल, अद्री, अनड, आहारज, उपलंगी, कंदराकर, गिर, गोत्र, ग्राव, डूंगर, दरीभ्रत, द्रुमपाळ, धर, धराधर, नग, भाखर, भूखर, भूधर, मगरौ, मरुत, महीध्र, सधण, सांनुमांन, सिखरी, सिलोचय, सैल, स्रंगी ।

रू०भे०—पब, पबव, पवे, पवै, पब्ब, पब्बय, पब्बव, पब्बाया, पब्बै, परबत, परबत्त, परबराय, परब्बत, परब्बै, पव, पवै, पव्वय, पव्वै, पुब्ब, प्रब, प्रब्ब, प्रब्बत ।

अल्पा०—पवयौ, परबतड़ौ, परबतियौ, परवतड़ौ, परवतियौ ।

मह०—परबतोड़, परवतोड़ ।

२ पर्वत के समान ही किसी पदार्थ विशेष का बहुत ऊंचा ढेर ।

३ दश-नामी सन्यासियों की एक शाखा ।

४ महाभारत के अनुसार एक गंधर्व का नाम ।

५ वृक्ष, पेड़ (डिं.को.)

६ एक प्रकार की मछली ।

परवतग्ररि—देखो 'परवतारि' (रू.भे.)
परवतजा-सं०स्त्री० [सं० पर्वतजा] १ पार्वती, गिरिजा, गौरी।
२ नदी।
रू०भे०—परवतजा।
परवतनंदणी(नी)-सं०स्त्री० [सं० पर्वतनन्दिनी] पार्वती, गिरिजा, गौरी।
परवतमाळ, परवतमाळा-सं०स्त्री०यौ० [सं० पर्वतमाला] १ पर्वत-श्रेणी।
२ हिमालय पर्वत।
रू०भे०—परवतमाळ, परवतमाळा।
परवतमेर—देखो 'मेरुपरवत' (रू.भे.)
परवतराज-सं०पु०यौ० [सं० पर्वत+राज] १ हिमालय पर्वत।
२ सुमेरु पर्वत।
३ कोई बड़ा पर्वत।
परवतसुत-सं०पु०यौ० [सं० पर्वतसुत] लोहा (ग्र.मा.)
रू०भे०—परबतसुत।
परवतारि-सं०पु० [सं० पर्वतारि] इन्द्र।
रू०भे०—परवतग्ररि, परबतग्ररी, परवतग्ररि।
परवतासण(न)-सं०पु०यौ० [सं० पर्वतासन] योग के चौरासी ग्रासनों के ग्रंतर्गत एक ग्रासन विशेष जिसमें पद्मासन की तरह बैठ कर दोनों हाथों को शिर की तरफ ऊंचा करके करतलों का सम्पुट करके बैठना होता है।
परवतास्त्र-सं०पु०यौ० [सं० पर्वतास्त्र] एक प्रकार का ग्रस्त्र विशेष जिसका प्राचीनकाल में प्रयोग किया जाता था।
परवतियो-वि० [सं० पर्वत+रा.प्र. इयो] १ पर्वतसम्बन्धी, पर्वत का।
२ देखो 'परवत' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
परवती-वि० [सं० पर्वत+रा. प्र. ई] १ पर्वतसम्बन्धी, पर्वत का।
२ पहाड़ों पर रहने वाला।
३ पहाड़ों पर उत्पन्न होने वाला।
सं०स्त्री०—एक प्रकार की बकरी।
रू०भे०—परवती।
परबतेस, परवतेसर-सं०पु० [सं० पर्वतेश, पर्वतेश्वर] १ हिमालय पर्वत।
२ सुमेरु पर्वत।
३ कोई बड़ा पर्वत।
परवन-सं०स्त्री०—मेवाड़ की एक नदी का नाम।
परवर-वि० [फा०] पालन-पोषण करने वाला, पालक।
सं०स्त्री०—१ चूल्हे की बेवणी (मेवाड़)
२ देखो 'प्रवर' (रू.भे.)
उ०—१ भारथ पारथ जैतवंत, राव 'बीक' घरांणा। हूं उजवाळूं ऊजळा, परवर ग्रापांणा।—द.दा.
उ०—२ सोलंकियां रै भारद्वाज गोत्र, खेत्रज चांमुंडा दोय देवी, महिपाळ पितर, परवर तीन, खिड़ियो चारण।...—बां.दा. ख्यात
३ देखो 'परवाळ' (रू.भे.)
४ देखो 'परवळ' (रू.भे.)
परवरणौ, परवरबौ-क्रि०ग्र० [सं० प्रवर्त्तनम्] १ घूमना-फिरना।
उ०—१ दीजै तिहां डंक न दंड न दीजै, ग्रहणि मवरि तरु गांनगर। कर ग्राह्रो परवरिया मधुकर, कुसुम गंध मकरंद कर।—वेलि
उ०—२ व्याप्त होना। उ०—हैवैराव रूठै हिंदवांणै, प्रळै ताप उरि परवरिया। ग्रधरम तणा पटा 'ग्रासाउत', उतवगि चाढ़ि न ग्रादरिया।—सुजानसिंह राठौड़ रौ गीत
३ प्रसिद्धि प्राप्त होना, प्रसिद्ध होना।
उ०—परवरिया सारी प्रथी, 'गिरवरिया' रा गीत।—ग्रज्ञात
४ प्रस्थान करना, गमन करना। उ०—इंद्रक भोज सबळ सिग्रादिक, पाळा लेई परवरिया। बार-ग्रखोहणी दळ बलिभद्र लेई नई, हरिपूठ्ठइ संचरिया।—रुकमणी मंगळ
उ०—गीतारथ गुण ना दरिया रे!, गुरू समता रसना भरिया रे। पंच सुमति गुपति सुं परवरिया रे, भव सागर सहजे तरिया रे।
—स.कु.
परवरणहार, हारौ (हारी), परवरणियौ—वि०।
परवरिग्रोड़ो, परवरियोड़ो, परवरयोड़ो—भू०का०कृ०।
परवरीजणौ, परवरीजबौ—भाव वा०।
परवरतक—देखो 'प्रवरतक' (रू.भे.)
परवरती-वि० [सं० प्रवर्ती] भूलेभटकों को रास्ते पर लाने वाला।
उ०—लागो ध्यांन धरा पर लोटै, सुधबुध भूला मोम सिळै। विहद क्रपाळ हुग्रा परवरती, मुगती पोहरां मांय मिळै।
—बांकीदास बीठू
परवरदिगार, परवरदीगार-सं०पु०यौ० [फा० परवरदिगार] १ ईश्वर।
उ०—१ तिस बखत परवरदिगार कूं सिजदा करि महंमद मरतुजा ग्रली को याद करि दाहिणैं दसत सेती समसेर तोल हुकम फरमाया।
—सू.प्र.
२ पालन कर्ता, पालक।
उ०—भला यक परवरदीगार खालक खुदाई।
—केसोदास गाडण
परवरा-वि०—पर्व का(पर्यूषण- पर्व का)। उ०—वेणीरांमजी स्वांमी स्वांमीजी नैं कह्यौ—हेमजी नैं बखांण ग्रस्खलित परवरा मुंहडे तो ग्रावै नहीं नैं जोड़ता जाय ग्रनैं बखांण देता जाय।—भि.द्र.
परवरियोड़ो-भू०का०कृ०—१ घूमा हुग्रा, फिरा हुग्रा।
२ व्याप्त।
३ प्रसिद्धिप्राप्त, प्रसिद्ध।
४ प्रस्थान किया हुग्रा, गया हुग्रा।

(स्त्री० परवरियोड़ी)

परवरिस, परवरिसि—सं०स्त्री [फा० परवरिश] पालन-पोषण ।

उ०—आदाब अरज्ज उम्मेदवार, परवरिसि करहु परवरदिगार ।
—ऊ.का.

परवळ—स०स्त्री० [देशज] १ एक प्रकार की लता विशेष ।

२ उक्त लता का फल जिसका शाक बनाया जाता है ।

३ नागर बेल का फल जिसका भी शाक बनाया जाता है ।
(डूंगरपुर)

४ चिचड़ा जिसके भी फलों का शाक बनाया जाता है ।

परवळाण—सं०स्त्री० [देशज] घोड़े के अगले और पीछे के पैर बांधने की रस्सी विशेष ।

वि०वि०—यह तिरछा बंधन होता है ।

परवस—वि० [स० परवश] १ जो दूसरे के बस में हो, पराधीन ।

२ जो दूसरे पर निर्भर हो ।

रू०भे०—परबस, परबस्स ।

परवसता—सं०स्त्री० [सं० परवश+रा०प्र०ता] पराधीनता ।

रू०भे०—परवस्यता ।

परवसि—देखो 'परवस' (रू.भे.)

उ०—कुंजर के भै मैं डरूं, सो डर सह्या न जाय । कांम हेत परवसि पड्या, बेड़ी लागी पाय ।
—ह पु.वा.

परवस्ती—सं०स्त्री [?] परवरिश, पालनपोषण ।

उ०—इण बाळक माथै थोड़ी दया विचारो, अबै ओ आपरै सरणै है। इण री परवस्ती आज सूं अबै आप करो, म्हारै कनै रह्यो इण नै कई जोखा है ।—फुलवाड़ी

परवस्यता—देखो 'परवसता' (रू.भे.)

परवस्स—देखो 'परवस' (रू.भे.)

उ०—आप विचार उपाए, होवण हार बात परहत्थे । आसावार न पारं विधि, तिण ज्यास थयो परवस्से ।—रा.रू.

परवांण—१ देखो 'प्रमांण' (रू.भे.)

उ०—१ हूं आवियूं अजांण, पर पहिलूं पूछो नहीं । पांतरिया परवांण, वन थे हुइज्यो वींझरा ।—वींझरै अहीर री बात

उ०—२ नरां नखत परवांण, ज्यां ऊभा सकै जगत । भोजन तपै न भांण, रांवण मरतां राजिया ।—किरपारांम

उ०—३ राजा ओड तेड़ाविया, खोदण काज निवांण । गूजर-खड सौं आविया, करि पूरो परवांण ।
—जसमा ओडणी री बात

उ०—४ वो तो आपरै मन परवांण धोळो २ दूध जांणतो ।
—फुलवाड़ी

२ देखो परिमांण' (रू.भे.)

परवांणि, परवांणी—वि० [सं० प्रमाणिक, प्रामाणिक] १ शास्त्रसिद्ध, प्रमाणिक ।

उ०—१ एकै अक्षर पीव का, सोई सत कर जांणि । रांम नांम सद्गुरु कह्या, दादू सो परवांणि ।—दादूबांणी

उ०—२ सब्द ही अगम निगम परवांणी, सब्द सूं पुरांण अठारा । सब्द स्रुति स्म्रिति कहियै, महावाक्य विस्तारा ।
—स्री हरिरांमजी महाराज

उ०—३ धन माया सब धूड़ ज्यूं जांणी, तो ग्यांनी जग में परवांणी।
—स्री हरिरांमजी महाराज

२ माननीय ।

३ प्रमाण का, प्रमाणसिद्ध ।

परवांणै—क्रि०वि० [सं० प्रमाण=मात्रा] अनुसार, मुताबिक ।

उ०—१ बाकी रो घोळ तीनां रै माथै पांती परवांणै कूड दियो ।
—फुलवाड़ी

उ०—२ आपरी खुराक परवांणै नित बगत माथै अेक जीव टेमोटेम बारी सूं खुद चलायनै आपरै हाजर हो जासी ।—फुलवाड़ी

परवांणो—सं०पु० [फा० परवाना] १ आज्ञा-पत्र ।

उ०—पीछै राजावां सारांई मिळ करणसिंघजी नूं हिंदुस्तान रै पातसाह रो विरद दियो । अरु साहबै रै फकीर नूं माराज देस मैं घर दीठ पको पईसो कर परवांणा कर दीना । करणसिंघजी पंखे वाळै फकीर नूं ।—द.दा.

रू०भे०—परवांनो ।

मह०—परवांण ।

२ देखो 'प्रमांण' (अल्पा०, रू.भे.)

परवांन—१ देखो 'परवांणो' (रू.भे.)

उ०—मेलि परवांन मांन महाराज कीधा मन्है । लोपियो हुकम करतूत लहसी ।—घ.व.ग्रं.

२ देखो 'प्रमांण' (रू.भे.)

परवांनगी—सं०स्त्री० [फा० परवानगी] आज्ञा, अनुमति ।

परवांनो—सं०पु० [फा० फरवान] १ पतंगा ।

२ देखो 'परवांणो' (रू भे.)

परवा—सं०स्त्री० [फा०] १ चिन्ता, व्यग्रता, खटका ।

उ०—हुवै न गमियां हांण, आइयां ही हरख न ऊपजै । राजा पतसा रांण, मन कांइ परवा मोतिया ।—रायसिंह सांदू

२ ध्यान, ख्याल ।

उ०—लोगां री खिजमतां सारू अबै घणी परवा ई को करतो नीं ।
—फुलवाड़ी

रू०भे०—परवाह ।

३ देखो 'पड़वा' (रू.भे.)

४ देखो 'परवाई' (रू.भे.)

परवाइ, परवाई—सं० स्त्री० [सं० पूर्व+वायु] पूर्व दिशा की वायु ।

उ०—रांमदास हररांम गुरां री, गुरु महिमा सच गाई । प्रकट भमंग

भुजंग डस्ये पर, प्रबळ चली परवाई ।—ऊ.का.

रू०भे०— परवा, परवायी, परवाही, पिरवा, पिरवावाई, पुरवाई ।

परवाड़मल, परवाड़मल्ल—देखो 'प्रवाड़मल्ल' (रू.भे.)

उ०—गंगाजळ निरमळ जेम गंग, म्राइत्त धीर म्रोपित्त म्रंग । भारथि चडिय 'तेजसी' मल्ल, परवाड़मल्ल परचक्कपल्ल ।—रा.ज.सी.

परवाड़ो—देखो 'प्रवाड़ो' (रू.भे.)

उ०—१ 'मामड़' रै माल्हिया, नांव म्रावड़ नै म्राई । म्राई रौ म्रवतार हुवा, 'करनळ' मेहाई' । 'जैत' नूं जैत दीधी जिको, परवाड़ौ जां रौ पुणूं । विदमांन सकती ताळा विळंद, सिरी इंद्रबाई सुणूं ।—मे.म.

उ०—२ रातां जागण रौ जंगळ में रोळो, ढांणी-ढांणी में फिरतौ ढंढोळो । धुणता नर माथा चुणता घर धाड़ां, पाबू हरबू रा सुणता परवाड़ा ।—ऊ.का.

उ०—३ तितरै रांणगदे चढियौ नीसरियो, ताहरा गोगाजी बोलिया राव रांणगदे ! तू वडो सगो छै, म्हारो परवाड़ो लंल्यो । ताहरां रांणग बोलियो, तो सारीखा बिस्टा रौ म्हे परवाड़ो लेता फिरां छां ।—नैणसी

उ०—४ भांति भांति री पंडिताई परवाड़ा उण सूं था ।—नी.प्र.

परवाद–सं०पु० [सं० प्रवाद] १ छल, कपट (म्र.मा., ह.नां.मा.)

२ देखो 'प्रवाद' (रू.भे.)

परवायी—देखो 'परवाई' (रू.भे.)

परवार—देखो 'परिवार' (रू.भे.)

उ०—१ म्रांम फळै परवार सूं, महू फळै पत खोय । ताको रस जे कोइ पियै, म्रकल कठा सूं होय ।—म्रज्ञात

उ०—२ भाटी म्राणद जेसावत रौ परवार-म्रांक-२ । नैणसी

परवारणौ, परवारबौ–क्रि०म्र० [सं० परवारणम् म्रथवा परावर्तनम्]

१ मस्त होना, लीन होना, तल्लीन होना । उ०—बनात री गऊमुखी में हाथ घातियां म्रापरै इस्ट रौ ध्यांन सुमिरण कर परवारिया छै, जाजमां म्राय बिराजै छै ।—रा.सा.सं.

२ तृप्त होना, म्रघाना । उ०—इण भांत म्रारोग परवारिया छै, थाळ बारियां उठाया छै । हाथां री चीकणाई उतारण रै पगां मूंग थाळ मंगायजै छै ।—रा.सा.सं.

३ तैयार होना, सन्नद्ध होना । उ०—कूरमां समै कळपंत ज्यौं, प्रांण दंण परवारिया । म्रत वार जेम म्रम्रत मिळै, 'म्रजै' तेम ऊवारिया ।—रा.रू.

४ दुरावस्था को प्राप्त होना, खराब दशा में म्राना, म्रच्छा न रह जाना । उ०—१ करै न म्रच्छर-करम, धरम नहि कुळ रौ धारै । पलै न राखै परम, सरम नहि किण रै सारै । मन खावण नै मरै, ढेढ़ री हांडी ढूंढै । उडै नहीं म्रसळाग, माखियां बैठै मूंढै । परवार गयो पिस्तावणौ, करूं न मूंवां कंथ री । म्हारौ महा दुख मेट दै, भलो हुवै भगवंत री ।—ऊ.का.

५ नष्ट होना, समाप्त होना । उ०—१ ठालाभूला ठोठ, कुवध नहि छोडै काल्हा । पुण्य गया परवार, व्यसन जद लागा वाल्हा ।—ऊ.का.

उ०—२ पुन्न गया परवार, सज्जन साथ छूट्या जदै । दुरजण जिण री लार, रोता फिरै वे राजिया ।—क्रिपारांम

६ नीति-पथ से भ्रष्ट होना, बदचलन होना, चाल-चलन खराब होना, बिगड़ना ।

परवारणहार, हारौ (हारी), परवारणियौ—वि०

परवारिम्रोड़ौ, परवारियोड़ौ, परवारयोड़ौ—भू०का०कृ०

परवारीजणौ, परवारीजबौ—भाव वा०

परवारियोड़ौ–भू०का०कृ०—१ तल्लीन, लीन, म्रनुरक्त, मस्त ।

२ म्रघाया हुम्रा, तृप्त ।

३ तैयार, कटिबद्ध, सन्नद्ध ।

४ खराब दशा में म्राया हुम्रा, दुरावस्था-प्राप्त ।

५ नष्ट, समाप्त ।

६ नीतिपथ से भ्रष्ट, बिगड़ा हुम्रा ।

(स्त्री० परवारियोड़ी)

परवारौ—१ देखो 'परिवार' (म्रल्पा; रू.भे.)

उ०—तारघो पीहर-सासरौ, रांणी, तारघो सो परवारौ जी । परण्यो तारघो म्रापकौ, रांणी, करघो ए दूरां दूर वासो जी ।—जयवांणी

२ देखो 'परबारौ' (रू.भे.)

परवाळ—१ देखो 'प्रवाळ' (रू.भे.)

उ०—म्रहरां दीजै म्रोपमा परवाळ प्रकारां ।—मयारांम दरजी री वात

२ देखो 'परबाळ' (रू.भे.)

परवाळि, परवाळी–सं०पु० [सं० प्रवाल+रा०प्र०ई] १ प्रवाल के रंग से मिलतेजुलते रंग का वस्त्र विशेष ।

उ०—हवइ राजा परिवार प्रति वस्त्र म्रापइ; गुहीम्रां, सणीम्रां, कस्तूरीम्रां, प्रतापीम्रां, कुसमीम्रां, मोळीम्रां, मांडवीम्रां, मीणीम्रां, वाटलीम्रां, जळोदरीम्रां, मगीम्रां, जोडदरीम्रां, प्रागीम्रां, चुकडीम्रां, टसरीम्रां, पूरीम्रां, म्रमरीम्रां, मूगीम्रां, चळवळीम्रां, चारुळीम्रां, परवाळीम्रां, मांडळीम्रां··· । —व०स०

२ देखो 'प्रवाळ' (म्रल्पा; रू.भे.)

उ०—निरखी-निरखी म्रंखुडी, पचि पंखड़ी कीध । म्रधर तणी रातडी गणी, नु परवाळी प्रसिद्ध ।—मा.कां.प्र.

३ देखो 'प्रवाळी' (रू.भे.)

परवाह—१ देखो 'प्रवाह' (रू.भे.)

उ०—१ 'कांम-कंदळा' कही-कही, घडहड मूकइ धाह । पूरि चढ़ियां पांणी वहइ, लोम्रण ना परवाह ।—मा.कां.प्र.

उ०—२ धरूं विसन रौ ध्यांन, लेऊं परवाह गंगजळ । वसूं जाय

वनवास, हाड गाळूं हेमाळै ।—पहाड़खां ग्राढ़ौ

उ०—३ ताहरां साइल कहै—हूं परवाह देनै पछै साथै चढ़ीस। एकलौ चढ़ूं नहीं ।—नैणसी

उ०—४ हू थांनूं पछै ले जाईस, बचन दीयौ। ताहरां जेलू रांणै नूं परणीया। यूं करतां भोजै परवाह रांणै सूं दूणी दीन्ही।

—देवजी बगड़ावत री वात

२ देखो 'परवा' (रू.भे.)

उ०—मुझ मनि सिंघल द्वीप नी रे, पदमणी देखण चाह। तुझ परसादे सहु हुस्ये रे, हिव मुझ सी परवाह।—प.च.चौ.

परवाहपय-स०पु०यौ० [सं० प्रवाह-पय] नदी (ग्र.मा.)

रू०भे०—परबाहपय।

परवाहणौ, परवाहबौ—देखो 'प्रवाहणौ, प्रवाहबौ' (रू.भे.)

उ०—१ यां महरांणी उच्चरै, सुहड़ां तजौ सचींत। परवाहौ खग धार दे, जमणा धार प्रवीत।—रा.रू.

उ०—२ महरांणी 'जसराज' री, यां बोली तिण वार। प्रथम श्रमां परवाहियै, खग-धारा जळ-धार।—रा.रू.

परवाहणहार, हारौ (हारी), परवाहणियौ—वि०।

परवाहिग्रोड़ौ, परवाहियोड़ौ, परवाह्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परवाहीजणौ, परवाहीजबौ—कर्म वा०।

परवाहियोड़ौ—देखो 'प्रवाहियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परवाहियोड़ी)

परवाही-वि० [फा० परवा+रा.प्र.ही] १ परवाह करने वाला, खुशामदी। उ०—परवाही पुरसां तणी, मेह प्रतीत मनांह। वप उत्तरिया चढत विस, परवाही पवनांह।—बां.दा.

२ देखो 'परपाई' (रू.भे.)

उ०—परवाई पुरसां तणी, मेट प्रतीत मनांह। वप उत्तरिया चढत विस, परवाही पवनांह।—बां.दा.

३ देखो 'प्रवाही' (रू.भे.)

परवीण—देखो 'प्रवीण' (रू.भे.)

उ०—भागवत कथा भूतावळी, हिरण दरस हींडोर चा। परवीण होय जांणै पुरस, मालजादां रा मोरचा।—ऊ.का.

परवीणता—देखो 'प्रवीणता' (रू.भे.)

परवीन—देखो 'प्रवीण' (रू.भे.)

उ०—भक्ति नैन ग्यांन ज्यूं दरपण, रवि वैराग मिळ तीन। जब सुखरांम ग्रातम मुख दरसैं, लखे संत परवीन।

—स्री सुखरांमजी महाराज

परवेस—देखो 'परिवेस' (रू.भे.)

उ०—मुखि ग्राखै हरि-मंत्र, वदन कजि अंत विकस्सै। कियौ ग्रेह परवेस, रंजी पुरखेस दरस्सै। खमा-खमा उच्चरै, करै पारस रस कूंडळ। प्रगट जांण परवेख, मेघ ग्रागम रविमंडळ। चंदण सुवास पंखा चमर, ऋत गंगाजळ दास करि। छिड़कंत कंत रांणी छहूं, पांणी खेल वसंत परि।—रा.रू.

परवेस—देखो 'प्रवेस' (रू.भे.)

उ०—१ मुखि ग्राखै हरि मंत्र वदन कजि अंत विकस्सै। कियौ ग्रेह परवेस रजी पुरखेस दरस्सै।—रा.रू.

उ०—२ देस में कियौ परवेस जद दखणियौ। 'मेस' परमेस री जोत मिळियौ।—महेसदास कूंपावत रौ दूहौ

परव्रढ़-सं०पु० [?] राजा, नृप (ग्र.मा.)

परव्रहम—देखो 'परब्रह्म' (रू.भे.)

उ०—दिब नयणां परव्रहम न पेखै। पराक्रती नर जिम हरि पेखै।

—सू.प्र.

परसंख्या—देखो 'परिसंख्या' (रू.भे.)

उ०—परसंख्या इकथळ परठि, थळ दूजौ ठहराइ। नेह हांणि जियमै नहीं, जजी दीप मैं जाय।—पिंगळ सिरोमणि

परसंग—देखो 'प्रसंग' (रू.भे.)

उ०—१ भाव भक्ति उपजै नहीं, साहिब का परसंग। बिसय विकार छूटै नहीं, सो कैसा सतसंग।—दादूबांणी

उ०—२ रांम रावळ देवीदास रौ, तिको रावळ हापा रै परणियौ हुतौ तिण परसंग रांम रौ बेटौ संकर महवै हीज रह्यौ।—नैणसी

परसंगी—देखो 'प्रसंगी' (रू.भे.)

उ०—धोळख धोया ग्रासरां में, मांड मांडणा मोवणा। राजी रैवण परसंग्या सिर, छिड़क छांटणां सोवणा।—दसदेव

परसंघ—देखो 'प्रसंग' (रू.भे.)

परसंघी—देखो 'प्रसंगी' (रू.भे.)

परसंतोख-सं०पु० [सं० परसंतोष] चोर (ग्र.मा.)

परसंसणौ, परसंसबौ—देखो 'प्रसंसणौ, प्रसंसबौ' (रू.भे.)

उ०—कहर ग्ररि कंटकी काटि कानै किया, बिरुद मोटा लिया ग्राप बाहे। 'करण' तण ग्रापणौ सुजस सगळै कियौ, सही परसंसियौ पातिसाहे।—ष.व.ग्रं.

परसंसणहार, हारौ (हारी), परसंसणियौ—वि०।

परसंसिग्रोड़ौ, परसंसियोड़ौ, परसंस्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परसंसीजणौ, परसंसीजबौ—कर्म वा०।

परसंसा—देखो 'प्रसंसा' (रू.भे.)

उ०—हरि बांचउ हाथ थी ऊतरि, त्रिण्ह प्रदक्षिणा दीधी जी। ऋसण महाराज परसंसा करि, जन्म सफळ तइं कीधो जी।—स.कु.

परसंसियोड़ौ—देखो 'प्रसंसियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परसंसियोड़ी)

परस-सं०पु०—१ दो लघु के गगण गण के तीसरे भेद का नाम

(डिं.को.)

२ देखो 'स्परस' (रू.भे.)

उ०—घा कंय नै वा वनमाळी रै उनमांन उणी भांत गूंदी रा डाळा माथै पडी ग्रर ग्रजेज गावड़ रै बालाजोड़ी मार नै टिरगी।

परस व्हैतां ई गाबड़ चिमकी अर माळण तौ सगळा रै देखतां देखतां भींडी लांघती हां करतां अदीठ व्हैगी।—फुलवाड़ी

३ देखो 'परसरांम'।

उ०—बदरी, टीकम, परस बुध, जग मोहण जैकारं। घणदाता आणंदघण, स्रीपति सब आधारं।—ह.र.

४ देखो 'पारस' (रू.भे.)

परसण—१ देखो 'प्रसन्न' (रू.भे.)

२ देखो 'प्रस्न' (रू.भे.)

परसणौ, परसबौ—क्रि०स० [सं० स्पर्शनम्] १ देव-दर्शनार्थ तीर्थयात्रा पर जाना। उ०—१ गंगा परस 'अजो' गढ़पत्ती, छिल आयौ मारु छत्रपत्ती। सहरै पुरै वधावा सारै, उछव थया स् कमण उचारै।—रा.रू.

उ०—२ ओळगू हरदांन रांमदांन दोनूं अतीत होय गया था। तीरथां नै रवांनै होय गया था सो आगै केदारनाथजी परस, बदरीनाथ परस, विस्वाधार परस ···।—पलक दरियाव री बात

२ देवदर्शन करना।

३ स्पर्श करना, छूना। उ०—राघव तणौ परसतां पदरज, इमि गोतमी त्रिय हुओ उधार।—ह.नां.मा.

४ देखो 'पुरसणौ, पुरसबौ' (रू.भे.)

परसणहार, हारौ (हारी), परसणियौ—वि०।

परसिओड़ौ, परसियोड़ौ, परस्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परसीजणौ, परसीजबौ—कर्म वा०।

परस्सणौ, परस्सबौ, फरसणौ, फरसबौ—रू०भे०।

परसत—देखो 'परिसद' (रू.भे., डि.को.)

परसतार—देखो 'प्रस्तार' (रू.भे.)

परसताव—देखो 'प्रस्ताव' (रू.भे.)

परसताविक, परसतावीक—देखो 'प्रस्ताविक' (रू.भे)

परसद, परसदा—देखो 'परिसद' (रू.भे.)

उ०—१ लै आव्या नृप परसद मांहि।—वि.कु.

उ०—२ सम वसरण प्रभु देसना, बैठी परसदा बारौ जी।—स.कु.

परसध(व)—देखो 'प्रसिद्ध' (रू.भे.)

परसन, परसन्न—१ देखो 'प्रसन्न' (रू.भे.)

उ०—सुद्रष्टि जिणरी हुवै जांणि परसन्न सुर।—ध.व.ग्रं.

२ देखो 'प्रस्न' (रू.भे.)

उ०—हू पहिले परसन बूझियौ।—जयवांणी

परसपर—देखो 'परस्पर' (रू.भे.)

उ०—१ पधरावि त्रिया वांमै प्रभणावै, वाच परसपर जथा विधि। लाधी वेळा मांगी लाधी, निगम पाठकै नवे-निधी।—वेलि

उ०—२ गोपि अधर खंडन मुख गोविंद। पीयै महारस परसपर।—ह.नां.मा.

परसरग—सं०पु० [सं० परसर्ग] आधुनिक भाषा-विज्ञान में ने, नै, का, की, के, को, रा, री, रै, रौ, से, में आदि संज्ञा-विभक्तियां।

परसवरण—सं०पु० [सं० परसवर्ण] पर या उत्तरवर्ती वर्ण के समान वर्ण।

पसाद, पसाउ—देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)

परसाणौ, परसाबौ—क्रि०स० [सं० स्पर्शनम्] १ स्पर्श कराना, छुआना।

२ तीर्थयात्रा कराना।

३ देवदर्शन कराना।

४ देखो 'पुरसाणौ, पुरसाबौ' (रू.भे.)

परसाणहार, हारौ (हारी), परसाणियौ—वि०

परसायोड़ौ—भू०का०कृ०

परसाईजणौ, परसाईजबौ—कर्म वा०

परसावणौ, परसावबौ—रू०भे०

परसाद—१ देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)

उ०—१ हाथ दीधा जकै जोड़ आगळ हरि, उदर परसाद चरणाम्रत आघ रा।—र.ज.प्र.

उ०—२ तठै स्री गोरखनाथजी तुस्टमांन होय नै बोलिया राजा! मांग तनै तूठौ···सो राजा सुण नै सिलांम करनै बोलियौ महाराज आपरै परसाद करनै सारी वात री दौलत छै पिण एक पुत्र कोई नहीं।—रीसाळू री बात

२ देखो 'प्रासाद' (रू.भे.)

उ०—१ असुरांण सीस उपाड़ि, परसाद न सकै पाड़ि।—सू.प्र.

उ०—२ अडग हिंदवांण परसाद तीरथ अनंत, सहू आलम कलम हुआ साखी। कूरमां वेहूं रण पूठ अण-फेर करि, रैण ऊथळ-पुथळ होतो राखी।—पूरौ महियारियौ

परसादी—देखो 'प्रसादी' (रू.भे.)

परसायोड़ौ—भू०का०कृ०—१ स्पर्श कराया हुआ, छुवाया हुआ।

२ तीर्थयात्रा कराया हुआ।

३ देवदर्शन कराया हुआ।

४ देखो 'पुरसायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परसायोड़ी)

परसार—देखो 'प्रसार' (रू.भे.)

परसारणौ, परसारबौ—देखो 'प्रसारणौ, प्रसारबौ' (रू.भे.)

पसाव—देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)

परसावणौ, परसावबौ—देखो 'प्रसारणौ, प्रसारबौ' (रू.भे.)

उ०—हिलै न चालै परस्पर हरसै, दरसै मुख दरसावै। बारेई मास अमीरस बरसै, परसै तन परसावै।—ऊ.का.

परसावणहार, हारौ (हारी), परसावणियौ—वि०

परसाविओड़ौ, परसावियोड़ौ, परसाव्योड़ौ—भू०का०कृ०

परसावीजणौ, परसावीजबौ—कर्म वा०

परसावियोड़ौ—देखो 'परसायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परसावियोड़ी)

परसिद, परसिद्ध, परसिद्धउ, परसिध—देखो 'प्रसिद्ध' (रू.भे.)

उ०—१ प्रभु काज साधि पोतें पछै, काज प्रजा रा पिण करै।
परसिद्ध भली परधान री, राज साज सगळा सरै।—ध.व.ग्रं.
२ मरुधर देस मझारि, सबळ धन-धन्न समिद्धउ। नामइ पूगळ नयर पुहवि, सगळइ परसिद्धउ।—ढो.मा.

परसिदता, परसिद्धता, परसिधता—देखो 'प्रसिद्धता' (रू.भे.)

परसिधि, परसिधी—देखो 'प्रसिद्धि' (रू.भे.)

परसियोड़ो–भू०का०कृ०—१ देव-दर्शनार्थ तीर्थयात्रा गया हुआ।
२ देवदर्शन किया हुआ।
३ स्पर्श किया हुआ।
४ देखो 'पुरसियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परसियोड़ी)

परसीजणो, परसीजबो–क्रि०अ० [सं० प्रस्वेदनम्] पसीना होना।
उ०—यूं करतां घड़ी एक हुई। रुदन करण लागौ। देहीं परसीज गई। विवहल होय गयौ, ज्यो प्रांण छूटै।—पलक दरियाव री बात
परसीजणहार, हारौ (हारी), परसीजणियौ—वि०
परसीजिओड़ो, परसीजियोड़ो, परसीज्योड़ो—भू०का०कृ०
परसीजणो, परसीजबो—भाव वा०

परसीणो—देखो 'पसीनो' (रू.भे.)

परसीतस–सं०पु० [सं० परशु+रा० तस=हाथ] १ गजानन, गणेश (डि.को.)
२ परशुराम।

परसीधर—देखो 'परसुधर' (रू.भे.)

परसीपांण–सं०पु०यो० [सं० परशु+पाणि] १ गजानन, गणेश (अ.मा.)
२ परशुराम।

परसु–सं०पु० [सं० परशु] लकड़ी के डंडे पर अर्ध चंद्राकार लोहे का फल लगा हुआ एक शस्त्र, फरसा।
रू०भे०—फरस, फरसि, फरसी, फरि, फरी फुरस।
मह०—फररसौ, फरसौ, फरस्स।

परसुधर, परसुधरण–वि० [सं० परशुधर] परशु नामक शस्त्र को धारण करने वाला।
सं०पु०—१ जमदग्नि के पुत्र परशुराम।
२ गजानन, गणेश।
३ परशुधारी सिपाही।
रू०भे०—परसीधर, फरसधर, फरसधरण, फरसाधर, फरसाधर, फरसाधरण, फरसीधर, फरसीधरण, फरीधर।

परसुरांम–सं०पु० [सं० परशुराम] महर्षि जमदग्नि के पुत्र, परशुराम।
पर्या०—दुजरांम, दुजराज, परसुरांम, फरस, भ्रगुपत, रांम।
रू०भे०—परसरांम, परसूरांम, फरसरांम, फरसिरांम, फरसुरांम, फरसूरांम, फुरसरांम, फूरसरांम।
अल्पा०—परस्सौ।
मह०—परस, फरस।

परसुवन–सं०पु० [सं० परशुवन] एक नरक का नाम।

परसूं–क्रि०वि० [सं० परश्वः] १ गत दिन से पहले का दिन।
२ आगामी दिन से आगे का दिन।
रू०भे०—परसौ, परां पिरसूं, पिरिआं, पिरियां, पिरू, पिरू।

परसूत—देखो 'प्रसूत' (रू.भे.)

परसून—देखो 'प्रसून' (रू.भे.)

परसूरांम—देखो 'परसुरांम' (रू.भे.)

परसेद, परसेवौ—देखो 'प्रस्वेद' (रू.भे.)
उ०—१ कांई देख्यौ कै एक जाट सूखा में ई खेत खड़ै। परसेवा में घांण व्हियोड़ो—लथोबथ।—फुलवाड़ी
उ०—२ लिलाड़ सूं परसेवा री बूंदां चवती ही।—फुलवाड़ी

परस्त्रीगमन–सं०पु० [सं०] १ पराई स्त्री के साथ संभोग।
२ पराई स्त्री के साथ संभोग करने वाला।

परस्पर–क्रि०वि० [सं०] आपस में, एक दूसरे के साथ।
उ०—हिलै न चलै परस्पर हरसै, दरसै मुख दरसावै।
बारेई मास अमीरस बरसै, परसै तन परसावै—ऊ.का.
रू०भे०—परसपर।

परस्परोपमा–सं०स्त्री० [सं०] एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें उपमान की उपमा उपमेय को और उपमेय की उपमा उपमान को दी जाती है, उपमेयोउपमालंकार।

परस्सणो, परस्सबो—देखो 'परसणो, परसबो' (रू.भे.)
उ०—औरंगसाह महाबळी, विसव तणौ वडवाग। रीस तरस्सी पूत सिर, सोर परस्सी आग।—रा.रू.
परस्सणहार, हारौ (हारी), परस्सणियौ—वि०।
परस्सिओड़ो, परस्सियोड़ो, परस्योड़ो—भू०का०कृ०।
परस्सीजणो, परस्सीजबो—कर्म वा०।

परस्सियोड़ो—देखो 'परसियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० परस्सियोड़ी)

परस्सौ—१ देखो 'परसुरांम' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—चखां झाळ तूटै मुखां झाळ चंडा। परस्सौ फरस्सौ भ्रमावै प्रचंडा।—सू.प्र.
२ देखो 'परसु' (मह०, रू.भे.)

परहंस–सं०स्त्री० [?] १ पराजय, हार। उ०—बोले यौं राजांन, जो अजांनवाह पूरा। ऐसे परहस वंस, खमै सो अधूरा।—रा.रू.
२ देखो 'परमहंस' (रू.भे.)

परहउ–अव्य० [सं० परतस्] १ दूसरे से (उ.र.)
२ शत्रु से (उ.र.)
३ आगे (अपेक्षाकृत) परे, पीछे ऊपर (उ.र.)
४ अन्यथा, नहीं तो (उ.र.)
५ भिन्न प्रकार से (उ.र.)

७ बाद को, और आगे (उ.र.)
[सं० प्राक्] १ पहिले (उ.र.)
२ आरम्भ में, हाल ही में (उ.र.)
३ पूर्व में (उ.र.)
४ पूर्व दिशा में (उ.र.)
५ सामने (उ.र.)
६ जहां तक हो वहां तक

परहरणौ, परहरबौ—क्रि०स० [सं० परिहरणम्] १ छोड़ना, त्यागना। उ०—१ अत चिंता अभिलाख, परहर मारग पेम रौ। रे! संतोसहि राख, बिण चिंता अभिलाख बिण।—बां.दा.

उ०—२ स्रीहर परहर अवर नूं, मत संभरै अयांण। तरु छंडे लागी लता, पत्थर चे गळ जांण।—ह.र.

२ आगे बढना, आगे चलना। उ०—कितराहेक पाछै छै तिकै आगै होय नै चढ़ै छै। तिकै आगै चढया तिकां रा कांधा पीठ उपरा पग दे देनै आगा नुं परहरै छै।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

३ भाग जाना। उ०—तिणरी धाक ईरांन तूरांन रूम स्यांम फिरंग रूस चीन्ह म्हाचीन्ह इण देसां-देसां रा पातसाह ईणरा हुकम रा आधीन सारा डरै। परहरै। डंड भरै। ईणनूं रुसाय कुण आंगवण करै।—प्रतापसिंह म्होकमसिंह री बात

४ नष्ट करना, मिटाना, हटाना। उ०—संयम सहाय, अस्त अंतराय। परहरहु पीर, तुरियाब्धि तीर।—ऊ.का.

५ छीनना, झपटना, लूटना।

क्रि०अ०—६ मुक्त होना, छूट जाना। उ०—ते आले हो हरि तणा, जे नर नांम लियंत। से जमडंडा परहरै, राघव सरण रहंत।
—ह.र.

परहरणहार, हारौ (हारी), परहरणियौ—वि०।
परहरिओड़ौ, परहरियोड़ौ, परहर्योड़ौ—भू०का०कृ०।
परहरीजणौ, परहरीजबौ—कर्म वा०।

परहा—क्रि०वि० [सं० परस्मिन्] १ दूर, पृथक, अलग। उ०—युं करि सूता ज्युं हुता त्युं। इथै खील्यां खोइ नै पढीयौ। पछै चढि नै केल्हू परहा करि नै उतरीयौ।—चौबोली

२ नाश, नष्ट। उ०—समकित ताहरौ आयां साहिबां, परहा जायै पाप। राति अंधारौ किम करि रहि सकै, ऊगं सूरज आप।
—ध.व.ग्रं.

रू०भे०—पराह।

परहुणी—सं०स्त्री० [?] १ लगन, चाह ?
उ०—परदेसे परहुणी चढी, मडो एणि भाजइ अंग। संपति संपाडि न कां, कांमिनी करंती संग।—मा.कां.प्र.

२ उत्साह ?
उ०—किहि किहि कलि खूंची रहइ, किहि किहि पांमइ पार। परहुणी पग देई पुलइ, किहि किहि उदधि अपार।—मा.कां.प्र.

परहेज—सं०पु० [फा०] १ स्वास्थ्य को खराब करने वाली बातों से बचाव, संयम, पथ्य।
२ बुरी बातों से बचाव।
रू०भे०—परेज, परैज।

परहेजगार—सं०पु०यौ० [फा०] १ पथ्य रखने वाला, संयमी।
२ बुरी बातों से बचने वाला।
रू०भे०—परेजगार।

परहेजगारी—सं०स्त्री० [फा०] १ पथ्य रखने का कार्य, संयम रखने की क्रिया।
२ बुरे तत्वों से बचाव।
रू०भे०—परेजगारी।

परहेरौ—क्रि०वि० [देशज] पृथक, अलग। उ०—भाखरसी अर जैन खांन एकठा हुवा आवै हुता। ताहरां जैनखांन नूं भाखरसी कहियौ जु भोपतजी रांम कहियौ। ताहरां जैनखान कन्हा भाखरसी परहेरौ गयौ।—द.वि.

परहो—देखो 'परौ' (रू.भे.)
उ०—१ तथा जमाई कद कहै म्हारै वासतै सीरौ करौ। पिण जीमैं परहो।—मि.द्र.
उ०—२ जब लोक बोल्या—थारी चौकी दूर रही तूं चोरयां ही छोड। तूं दिन रा हाट घर देख जावै नै रात्री रा टाफरै चोरी करै पइसो-पइसो घर बैठा नै परहो देस्यां।—मि.द्र.
उ०—३ मेलिह वात परही सवि बाई। स्त्री तणउं सवि हुउं जांणु माई।—विराटपर्व
(स्त्री० परही)

परां—क्रि०वि०—१ ऊपर।
२ पूर्व, पहले।
३ उस ओर।
४ देखो 'परसूं' (रू.भे.)

परांखणौ, परांखबौ—देखो 'प्रांखणौ, प्रांखबौ' (रू.भे.)
परांखणहार, हारौ (हारी), परांखणियौ—वि०।
परांखिओड़ौ, परांखियोड़ौ, परांख्योड़ौ—भू०का०कृ०।
परांखीजणौ, परांखीजबौ—कर्म वा०।

परांखियोड़ौ—देखो 'प्रांखियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परांखियोड़ी)

परांण—सं०पु० [सं० प्रयाणम्] १ आक्रमण, हमला।
उ०—१ दीधी पौळि हुउ गढ़-रोहउ. कीधउं घणउ परांण। नगर मांहि पोसाता पायक, तेह न मूंकइ मांण।—कां.दे.प्र.
उ०—२ असण उलटयां ढोल असूझयां, थरहर धरणी कांपी। करघुं परांण ऊडव्या हाथी, तुरक चढ्यां गढ़ चांपी।—कां.दे.प्र.
२ देखो 'प्रांण' (रू.भे.)
उ०—दादू साहिब मेरे कप्पड़ें, साहिब मेरा खांण। साहिब सिर का

ताज है, साहिब पिंड परांण ।—दादूबांणी

३ देखो 'पुरांण' (रू.भे.)

४ देखो 'प्रयांण' (रू.भे.)

उ०—१ जाणायत राजा थारौ ऊ हो जांण । दुई का मील्या छै एक परांण ।—बी.दे.

उ०—२ थे घरि चालौ देवता, मूरिख राजा अपढ़ अयांण । हूं किम चालूं एकलौ ? आगइ गौरी तीजइ परांण ।—बी.दे.

परांणी—सं०स्त्री० [सं० प्रेरणिका या प्राजनम्] १ बैलों को हांकने की लकड़ी की दण्डिका (उ.र.)

उ०—माहियो ! ताहरां गोगादेजी मगरां में परांणी रा घाव दीठा तद कह्यौ ओ कांसूं छै ।—नैणसी

रू०भे०—परोंणी, पिरांणी, पीरांणी, पुरांणी ।

अल्पा०—परोंणियौ ।

२ देखो 'प्रांणी' (रू.भे.)

३ देखो 'पुरांणौ' (स्त्री०)

परांत—स०स्त्री० [देशज] फसल की गुहाई या कटाई के लिये कार्य-कर्ताओं द्वारा हर बार अपने लिये लिया जाने वाला कार्य का हिस्सा।

रू०भे०—पांत ।

परांवठौ—सं०पु० [सं० प्रोत्था, प्रा० प्रोट्ठ, अप० परौंठा] घी डालकर बेली हुई एवं तवे पर घी के साथ सेकी हुई परतदार रोटी ।

परा—अव्य० [स०]एक अव्यय शब्द जो दूर, पीछे, एक तरफ, ओर के अर्थ में प्रयुक्त होता है ।

उ०—१ परा सूं किलेदार आयो सो दरवाजो-दरवाजौ जुड़ियौ, खिड़की खुली ।—गौड़ गोपाळदास री वारता

उ०—२ अपछर देख मिळै आखाड़ौ, विघन तणौ रचियौ वीमाह। रिणवट सरा वांधियो 'रतनैं', परा फौज आवी पतिसाह ।—दूदौ

उ०—३ परा रायसिंघ नै उरा दूजो 'पदम', धरा नको दूजो अंजस धारै ।—द्वारकादास दधवाड़ियौ

स०स्त्री० [सं०] १ चार प्रकार की वाणियों में से प्रथम वाणी जो नाद-स्वरूप और मणिपुर चक्र से निकलती हुई मानी जाती है जिसका स्थान नाभि के पास माना जाता है ।

उ०—परा नभ मैं बसत है, पस्यंती हिरदै मझार । मध्यमा कंठ में खुलत है, बेखरी सब्द उचार ।—स्री हरिरांमजी महाराज

२ वह विद्या जो गोचर पदार्थों के परे रहने वाले ज्ञान को कराती है, ब्रह्म विद्या, उपनिषद विद्या ।

३ एक प्रकार का साम-गान ।

४ गंगा नदी का नाम ।

पराई—देखो 'परायी' (रू.भे.)

उ०—ल्यावै लोहि पराइयां, नहं दै आपणियांह । सखी अमीणा कंथ री, उरसां झूंपड़ियांह ।—हा.झा.

पराउपगार—देखो 'परोपकार' (रू.भे.)

उ०—लाज का समुद्र करण सा दातार । बीकम सा विवेकी परा उपगार ।—सू.प्र.

पराकम—देखो 'पराक्रम' (रू.भे.)

पराकमी—देखो 'पराक्रमी' (रू.भे.)

पराकरत—देखो 'प्राकृत' (रू.भे.)

पराकरम—देखो 'पराक्रम' (रू.भे.)

पराकरमी—देखो 'पराक्रमी' (रू.भे.)

पराका—सं०स्त्री० [सं० पराऽऽका=उत्कृष्टता से लहलहाने वाली] ध्वजा, पताका । (ह.नां.मा.)

पराकास्टा, पराकास्ठा, पराकोटी—सं०स्त्री० [सं० पराकाष्ठा, पराकोटि]

१ चरम सीमा, हद ।

२ ब्रह्मा की आधी आयु ।

पराक्रत—देखो 'प्राकृत' (रू.भे.)

पराक्रति, पराक्रती—देखो 'प्राकृतिक' (रू.भे.)

उ०—दिव नयनां परब्रह्म न देखै । पराक्रती नर जिम हरि पेखै । —सू.प्र.

पराक्रम—सं०पु० [सं०] १ बल, शक्ति ।

उ०—देख ताप खावै दुनो, आप पराक्रम आस । रोस झाळ-पुळा रहै, सादूळा स्यावास ।—बां.दा.

२ उद्योग, पुरुषार्थ ।

उ०—कहै कळहप्री अनै सहसकर, जुगां विहूं जुध हूवा जेह। अंत दिन कियौ पराक्रम 'ईसर', अेकण किणहि न कियौ एह ।

—ईसरदास मेड़तिया री गीत

रू०भे०—पराकम, पराकम्म, पराकरम, प्राकम, प्रराकम, प्राक्रम ।

पराक्रमवत-वि० [सं० पराक्रमवान्] (स्त्री० पराक्रमवंता) बहादुर, वीर ।

उ०—सूरवीर नै धीर नर, सतवादी सतधार । पराक्रमवंता मातजी, दुक्कर नहीं लिगार ।—जयवांणी

पराक्रमी—वि० [सं० पराक्रमिन्] १ बलवान, बलिष्ठ, शक्तिवान ।

उ०—ईम पंच भाखा उच्चरै, सुणि ग्रंथां ततसार । अब कुळ भाखा उच्चरूं, पराक्रमी अणपार ।—सू.प्र.

२ उद्योगी, पुरुषार्थी ।

रू०भे०—पराकमी, पराकरमी, प्राक्रमी, प्राकमी ।

पराक्रम्म—देखो 'पराक्रम' (रू.भे.)

पराखाड़—सं०पु० [सं० पराऽसाड=शत्रुओं को नहीं सहने वाला] इन्द्र (ना.डिं.को.)

पराग—सं०पु० [सं०] १ पुष्पों के बीच में जमी रहने वाली धूलि, पुष्प-रज । उ०—१ झणहण भंवर मस्त फूलां सूं, और उड़ रह्यो छै पराग । मारू आसो रसराज बसंत में, किणियक सुगणी रै भाग ।

—रसीलैराज रा गीत

उ०—२ डोर सूं झरोखे ढोल्यै आयो । जांणै कवलि पराग रै ऊपरै भवर लोभायो ।—पनां वीरमदे री वात

पर्या०—रज, फूल-रज।

रू०भे०—पिराग।

परागकेसर-सं०पु० [सं०] फूलों के बीच में लम्बे सूत जिनकी नोंक पर पराग रहता है। (इन्हें पौधों की पुरुष जननेन्द्रिय समझना चाहिए)

परागवड़—देखो 'प्रयागवड़' (रू.भे.)

उ०—वसुधा सर घोर कळू वरतांणौ, प्रथवी उथल-पुथल पुड़। निरधारां आधार रह्यौ नह, बीसम गयौ परागवड़।

—जवांनजी आढौ

पराघड-क्रि०वि० [सं० पराग्रक, प्रा. पर+अग्ग] दूर।

उ०—जीवितव्य कुण आज पराघड। कुण मूरख जे आवइं आघड।

—विराट पर्व

पराचत—देखो 'प्राछत' (रू.भे.)

पराचित, पराचिति-सं०पु० [सं० पर+आचित] १ नौकर, भृत्य। (ह.नां.मा.)

२ देखो 'प्राछत' (रू.भे.)

पराचीन—देखो 'प्राचीन' (रू.भे.)

पराचीनता—देखो 'प्राचीनता' (रू.भे.)

पराचीनावीत—देखो 'प्राचीनावीत' (रू.भे.)

पराचीपति—देखो 'प्राचीपति' (रू.भे.)

पराचीर—देखो 'प्राचीर' (रू.भे.)

पराचेत—देखो 'प्राछत' (रू.भे.)

पराछत, पराछित, पराछीत—देखो 'प्राछत' (रू.भे.)

उ०—१ वी लसकरिए नै जाय कही ए क्यूं परणी थे मोय। परण पराछित क्यूं लियौ ए जी रह्या क्यूं ना अकनकंवार। कंवारी नै वर तौ घणा छा जी।—लो.गी.

उ०—२ धरम री बेटी बणाय लिया, धरम री! प्रेम रै अंसुवां सूं भरी आंखियां सूं छोरी रै सांमौ जोय 'र रांगूजी बोलिया—हां धरम री बेटी बणासूं जद ओगठ वाळै पाप रौ पराछीत होवैला।

—वरसगांठ

पराज-सं०स्त्री० [देशज] तलवार की मूंठ में लगा वह अर्ध वृत्ताकार भाग जो कटोरी और 'थोला' से मिला होता है। यह तलवार पकड़ने वाले के हाथ को शत्रु की चोटों से बचाने में सहायक होता है।

पर्या०—ओघा, बीनी।

पराजय-सं०स्त्री० [सं०] हार, शिकस्त। उ०—फतेसाह साह आए बांह गैण धारे। 'विजावत' विजय रुक पराजय निवारे।—रा.रू.

रू०भे०—पराजै।

पराजित-वि० [सं०] हारा हुआ, परास्त।

पराजै—देखो 'पराजय' (रू.भे.) (डिं.को.)

उ०—दुझण जिण भुजाबळ हूत आठूं दिसा, लंघ सांमंद कीधी लड़ाई। जीत लीधी जमी कठै थी जेण री, पराजै हुई नह फतै पाई।

—र.रू.

पराणौ, पराबौ-क्रि०अ० [सं० प्रावृष] गाय-भैंस आदि पशुओं का स्तन में दूध उतारना।

परावणौ, परावबौ—रू०भे०।

परात-सं०स्त्री० [सं० पात्र] धातु, मिट्टी या काष्ठनिर्मित थाली की आकृति का वह पात्र जो आटा गूंदने, दही जमाने आदि के काम में आता है। उ०—केसर भरियौ वाटकौ, फूलां भरी परात। आग वधायौ ऐ रांणियां, राठोड़ी भरतार पीयौ नी दारूड़ी।—लो.गी.

वि०वि०—मिट्टी व काष्ठ की बनी परात में किनारे के ऊपरी भाग में एक छेद होता है। मिट्टी की परात के किनारे ऊपर से मोटे व चौड़े होते हैं जबकि धातु वाली के किनारे ऊपर से तीखे व छितराए हुए होते हैं। धातु वाली बहुत बड़ी परात शादी जैसे अवसरों पर विभिन्न कामों में ली जाती है, जैसे आटा गूंदना, साग काट कर डालना, बूंदी आदि को ठंडा करने निमित्त फैलाना इत्यादि।

वि० [फा० परास्त] हारा हुआ, पराजित।

परातणौ, परातबौ-क्रि०अ०—परास्त होना, पराजित होना।

उ०—आतुर दहूं आगरै आया, दहूं दिस काळ भड़ां दरसाया। पर 'मुहकम' जिम लेख परातौ, महाप्रळै असुरां घर मातौ।—रा.रू.

परातणहार, हारौ (हारी), परातणियौ—वि०।

परातिओड़ौ, परातियोड़ौ, परात्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परातीजणौ, परातीजबौ—भाव वा०।

परातिपरि—देखो 'परात्पर' (रू.भे.)

उ०—तू पारब्रह्म परातिपरि अळगां अळगे रा।—केसोदास गाडण

परातियोड़ौ-भू०का०कृ०—परास्त, हारा हुआ, पराजित।

(स्त्री० परातियोड़ी)

परात्पर-वि० [सं०] सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्कृष्ट।

सं०पु०—१ परमात्मा।

२ विष्णु।

रू०भे०—परातिपर।

पराथ—देखो 'पारथ' (रू.भे.)

उ०—'मघावत' दीध रकेबय पाव। रुठौ मनु जांण कळां जमराव। हुवौ असवार लै सावळ हाथ। परां दळ जांण चढेय पराथ।—पे.रू.

परादन-सं०पु० [सं०] फारस का घोड़ा (डि.को.)

पराधीन-वि० [सं०] दूसरे के अधीन, परवश।

उ०—सुकृत लगन स्वाधीन सदाई, सदा मगन सुख रासी। सनमुख संपद लगत अग्नि सी, पराधीन दुख पासी।—ऊ.का.

पराधीनता-सं०स्त्री० [सं०] दूसरे की अधीनता, परवशता।

परापत—देखो 'प्राप्त' (रू.भे.)

उ०—१ समाधिय में सब साधन सिद्ध। परापत व्है परब्रह्म प्रसिद्ध।

—ऊ.का.

उ०—२ राजा हाथ खड़ग लेय एकाकी जाय परापत हुवौ।

—बैताळपच्चीसी

परापति, परापती—देखो 'प्राप्ति' (रू.भे.)

परापर-सं०पु० [सं०] १ फालसा, एक फल।

२ देखो 'परंपरा' (रू.भे.)

उ०—ऐसा परापर परम भेद, गुर बिनां को देवै। मस्तक ऊपरि हस्ति राखै, आपणां करि लेवै।—ह.पु.वा.

परापरी—देखो 'परंपरा' (रू.भे.)

पराभव-सं०स्त्री० [सं०] १ ध्वंस, नाश, संहार।

उ०—'पातल' हरा ऊपरा पराभव, खळ खूटा टूटा खड़ग। पांडव-नांमी नीठ पाड़ियौ, लग उगमण आथमण लग।—खेमराज सौदो

२ पराजय, हार।

उ०—सक चहुदह समह समा, लागां इम जय ले'र। मारि खळां लीधो मऊ, दळां पराभव दे'र।—वं.भा.

रू०भे०—परभव्विय।

पराभूत-वि० [सं०] १ ध्वस्त, नष्ट।

२ पराजित, हारा हुआ।

परामरस-सं०पु० [सं० परामर्श] १ सलाह, राय।

२ विवेचन, विचार।

क्रि०प्र०—करणौ, दैणौ, लैणौ।

परामुख-सं०पु० [सं०पराङ्मुख] १ कविनिबद्धपात्रप्रौढ़ोक्ति।

उ०—वरणनीय नूं कवि बिना, जपै अवर कर जुक्त। सुकवि मंछ तिणनूं समझ, कहै परामुख उक्त।—र.रू.

वि०—विमुख, विरुद्ध।

उ०—चांपावत भगवांनदास, जुजठळ का अवतार, झूठ सूं परामुख साच सूं प्यार।—रा.रू.

परायउ—देखो 'परायौ' (रू.भे.)

उ०—आज उमाहडउ मो घणउ, ना जांणू किव केण। पुरख परायउ वीर वड, अहर फुरक्कइ केण।—ढो.मा.

परायचित—देखो 'प्राछत' (रू.भे.)

परायण-वि० [सं०] १ निरत, प्रवृत, लीन, तत्पर, लगा हुआ।

उ०—१ रूप भाग गुण भजन नरायण। पुत्र हुवौ सुज भगत परायण।
—रा.रू.

उ०—२ परधन हरण परायण पांमर, वंचक वांणी रे। ते झूंठी बुगलां री बातां, नाहक तांणी रे।—ऊ.का.

२ देखो 'पारायण' (रू.भे.)

उ०—वेद परायण इसी बचाई, मही सरायण सुणजो मूढ। निज नारायण गुरु निवाजै, फजर गई तारायण फूट।—बांकीदास बीठू

परायोड़ी-स्त्री० [भू०का०कृ०] वात्सल्य स्नेह के कारण स्तनों मे दूध उतारी हुई गाय, भैंस इत्यादि (पशु)

परायौ-वि० [सं० पर+रा०प्र०आयौ] १ दूसरे का, अन्य का।
(स्त्री० पराई, परायी)

उ०—१ और भाव लितां करै, देतां और ही भाव। घाव पराया हरण घन, साहां जात सुभाव।—वां.दा.

उ०—२ नागा नवलौ नेह, जिण तिण सूं कीजै नहीं। लीजै परायौ छेह, आप तणौ दीजै नहीं।—अज्ञात

२ जो आत्मीय न हो, जो स्वजनों में न हो, दूसरा, अन्य, बिराना।

उ०—अपणायौ अपरोह, पुरस कद होय परायौ। तूं कदरी पतिव्रता, कंथ अपणौ छिटकायौ।—ऊ.का.

३ देखो 'प्रस्वेद' (रू.भे.)

परारंभ—देखो 'प्रारंभ' (रू.भे.)

परारंभिक—देखो 'प्रारंभिक' (रू.भे.)

परार-अव्य० [सं० परारि] गत वर्ष से पूर्व का वर्ष।

उ०—यूं हिज करतां जासी ऊमर, परम न काल परार न पौर। आंपो वात करां अवरां री, आंपां री करसी कोइ और।
—ओपो आढ़ो

परारथ-सं०पु० [सं० परार्थ] दूसरे का उपकार, परोपकार।

परारथना—देखो 'प्रारथना' (रू.भे.)

परारथी—देखो 'प्रारथी' (रू.भे.)

परावद, परारबध—देखो 'प्रारब्ध' (रू.भे.)

परारब्धी—देखो 'प्रारब्धी' (रू.भे.)

पराळ-सं०पु० [सं० पलाल:] १ चावलों की भूसी।

२ घास का बंधा हुआ छोटा पुलिन्दा।

उ०—पराळा बोहळा पीटियां कण हेक न पावै।—केसोदास गाडण

३ भूसा, घास।

उ०—१ नहीं तू विप्र नहीं तू वैस, नहीं तू खत्रिय सुद्र न खेस। नहीं तू मूळ नहीं तू डाळ, नहीं तू पत्र नहीं तू पराळ।—ह.र.

उ०—२ रूस फ्रांस मझ रच्चिया, जरमन हूता जुद्ध। पड़ियौ जांण पराळ में, कण मंगळ कर क्रुद्ध।—किसोरदांन बारहठ

मुहा०—पराळ कूटणौ—व्यर्थ की बक-झक करना।

४ जंजाल, प्रपंच।

रू०भे०—पराळु।

परालबद—देखो 'प्रारब्ध' (रू.भे.)

परालबदी—देखो 'प्रारब्धी' (रू.भे.)

परालबध—देखो 'प्रारब्ध' (रू.भे.)

परालबधी—देखो 'प्रारब्धी' (रू.भे.)

पराळी-वि० [देशज] प्रचंड, तेज।

पराळु—१ देखो 'पराळ' (रू.भे.)

२ देखो पराळू' (रू.भे.)

पराळू-वि० [सं० पल्लवित] खरीफ की वह फसल जो बोने के पश्चात दूसरी वर्षा होने के पूर्व ही पल्लवित हो गई हो।

रू०भे०—पराळु।

परावठ—देखो 'प्राव्रट' (रू.भे.)

परावणौ, परावबौ—देखो 'पराणौ, पराबौ' (रू.भे.)

परावत—देखो 'पारावत' (रू.भे.)

उ०—दान दियौ जिण आपणी देह को, लीनौ **परावत** जीव लुकाई।
—ध.व.ग्रं.

परावध, परावधी—सं०स्त्री० [सं० परा+अवधि] सीमा, छोर, अंतिम सीमा। उ०—१ रुखवाळा राठौड़, धरा यूरोप री। पेखी सह संसार, **परावधी** कोप री।—किसोरदांन बारहठ

उ०—२ अनंत बात अंत की, छिपी न अंतराय की। सहायहीन को उपाय, सूझती सहाय की। समाधि योग सावधी, **परावधी** पीछांण लो। महेस राज राजवै, महाधिराज मांन लो।—ऊ.का.

परावह—सं०पु० [सं०] वायु के सात भेदों में से एक।

पराव्रट—देखो 'प्राव्रट' (रू.भे.)

परासकंद, परासकंदी, परासकंधी—वि० [सं० परास्कंदित] चोर, तस्कर
(अ.मा., ह.ना.मा.)

परासर—सं०पु० [सं० पराशर] १ एक प्रसिद्ध ऋषि जो महर्षि द्वैपायन वेदव्यास के पिता थे।

२ पुराणानुसार एक गोत्रकार ऋषि जो वशिष्ठ और शक्ति के पुत्र थे।

३ एक आयुर्वेदाचार्य ऋषि (चरक संहिता)

४ एक प्रसिद्ध स्मृतिकार ऋषि।

५ पाराशर संहिता के रचयिता, एक ज्योतिषाचार्य।

६ सिंह को मारने वाला एक जानवर, अष्टापद।

७ शृगाल, लोमड़ी आदि हिंसक वन्य पशु।

रू०भे०—परासुर, पारासर।

परासु—वि० [सं०] प्राणहीन, मृत।

उ०—प्रामार रा प्रहरणां रा प्रहार पाइ पीलू री पीठी हूं **परासु** होय पड़तां रहीमअली रो मस्तक तौ चाहुवांण चाचक देव काटि लीधौ।—वं.भा.

परासुर—देखो 'परासर' (रू.भे.)

परास्त—वि० [सं०] पराजित, हारा हुआ। उ०—परिश्रमी **परास्त** दे विजैत है परीश्रमी।—ऊ.का.

परास्रय—सं०पु० [सं० पराश्रय] दूसरे का अवलम्ब, पराधीनता।

पराह—देखो 'परहा' (रू.भे.)

परिं—देखो 'परि' (रू.भे.)

उ०—चंद चकोर तणी **परिं**, तूं वस्यउ मोरइ चीति। समयसुंदर कहइ ते खरी, पे परमेस्वर स्युं प्रीति।—स.कु.

परिंडौ—देखो 'परीडौ' (रू.भे.)

उ०—मंड में काळी माता जागिया, पुरी में जगन्नाथ बाबौ जागिया, **परिंडै** पितर देवता जागिया। झालर बाजै राजा रांमजी।
—लो.गी.

परिंदौ—सं०पु० [फा० परिन्द] पक्षी।

परि—उप [सं०] एक उपसर्ग जिसके लगने से शब्द के अर्थ में वृद्धि होती है।

जैसे—परिभ्रमण, परिपूर्ण, परित्याग, परिहास।

क्रि०वि०—१ ऊपर, पर। उ०—भी सिणगार संवारिक आई सेज परि। (परिहां) जांणे अपछर इंद्रक बैठा आप घरि।
—ढो.मा.

२ ज्यों, मानो, जैसे।

३ परन्तु, किन्तु। उ०—**परि** किमि करि लागां पगे, पाउ पताळ प्रमांण। समण दिसै बैकुंठ छत, राज निमो रहमांण।—पी.ग्रं.

वि०—समान।

रू०भे०—परिं।

सं०पु०—१ भांति, तरह, प्रकार। उ०—पहै रिण पाखती, छीण वैं हार परि। आव त फेरि संघारि झूंझार अरि।—हा.झा.

२ देखो 'परी' (रू.भे.)

उ०—जुष किणहिक जातां नृप जाणै। **परि** कंकण पड़ियौ सुणि पांणै।—सू.प्र.

३ देखो 'परी' (स्त्री.)

उ०—मांडो **परि** वेहां मांडण की, निज विप्र करै पावडा न वंध।
—महादेव पारवती री वेलि

परिआंण—१ देखो 'परियांण' (रू.भे.)

२ देखो 'प्रयांण' (रू.भे.)

परिआतमा—देखो 'परमात्मा' (रू.भे.)

उ०—तू आतम **परिआतमा** सबदां सहनांणी।—केसोदास गाडण

परिकर—सं०पु०[सं०परिकर]१ परिवार, कुटुम्ब। उ०—१ नरनारी ना हो **परिकर** बहु मिळै, वंदण भणी विसेस। आय विराज्या हो पूजजी पाटिए, द्यै धरम रा उपदेस।—ऐ.जै.का.सं.

उ०—२ जो पत्र बांचतां ही प्रतापसिंह, अरिसिंह, गोकळदास, गोइंदराज, हरीसिंघ, स्यांमदास, भगवदास सातूं ही सूरवीर आप आप रै **परिकर** सहित चंडासिराज रै वास रहण आंया।—वं.भा.

२ लवाजमा। उ०—अर जैतकुमार जुक्त सब सुद्धांत **परिकर** सहित प्रामार राज सलख चहूआंण कुमार सूं स्वकीय सुता रौ संबंध करण अजमेर ढ्रंग चलायौ।—वं.भा.

३ दल, समूह, सेना। उ०—१ अर काके भी पुळियार होइ प्राची रौ **परिकर** इकट्ठौ करि फेर भी दिल्ली पर चलावण द्रढ़ भाव गहियौ।—वं.भा.

उ०—२ अर जवनेस रा आगम रै निमित प्रथ्वीराज कुमार पिता सूं प्रच्छ आपरो **परिकर** केमास रै समीप भेजि खुरसांण री फौजां विरोळण रो निदेस कहियौ।—वं.भा.

४ अनुचर, सेवक।

उ०—राजा! तुम्ह रुडुं हजो, इम माहरी आसीस। **परिकर** सहु परिवार-सिउं, जीवै कोडि वरीस।—मा.कां.प्र.

५ वैभव।

उ०—ऊरध अकास, पाताळ पास। सब ठौर सिद्ध, परिकर प्रसिद्ध।
—ऊ.का.

६ कमरबन्द, पटुका।

उ०—पीतळ परिकर पर चीतळ कर परसै। वेहद महितळ सिर, सीतळ सर बरसै।—ऊ का.

७ एक अर्थालंकार जिसमें अभिप्रायपूर्ण विशेषणों के साथ विशेष्य का कथन होता है।

८ पर्यंक, पलंग।

९ फैसला, निर्णय।

रू०भे०—परीकर।

परिकरमा—देखो 'परिकमा' (रू.भे.)

परिकरांकुर–सं०पु० [सं०] एक अर्थालंकार जिसमें विशेष्य का साभिप्रायता से वर्णन किया जाता है।

परिकास—देखो 'प्रकास' (रू.भे)

उ०—रुहिर ज प्रगटउ परिकास, नाच्यो नारद कीधो हास।
—प.च.चौ.

परिक्खणो, परिक्खबो—देखो 'परखणो, परखबो' (रू.भे.)

उ०—गुरु परिक्खइ गुरु परिपक्खइ असदीहमि। दुरयोधन पमुह सवि रायकूंवर वण माहि लेविणु।—पं.पं.च.

परिक्खियोड़ो—देखो 'परखियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० परिक्खियोड़ी)

परिक्खवि—देखो 'परिसव' (रू.भे.)

उ०—सावईहि परिक्खवि परिवरिउ, मुल्लि महग्घउ जिव रयणु।
—कवि पल्ह

परिक्रमणा, परिक्रमा, परिक्रम्मा–सं०स्त्री० [सं० परिक्रमण, परिक्रमा] चारों ओर घूमना, फेरी, चक्कर। उ०—१ करणसिंह उमराव, ईस पूजन यक आयौ। फरि परिक्रमण अनेक, बीलपत्रनि हर छायौ।
—ला.रा.

उ०—२ पछै जमी आकास पवन पांणी चंद सूरिज नूं परणांम करि आरोगी दोळी परिक्रमा दीन्ही।—वचनिका

उ०—३ चमर धार परवार, करी भ्रांमर परिक्रमा। भुज लंबत डंडोत, वयण व्रत पेख अहम्मा।—रा.रू.

रू०भे०—परकमण, परकमा, परकम्म, परकरमण, परकरमणा, परक्रमण, परक्रमा, परिकम्मा, पिरकरमा।

परिक्षा—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

परिख—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

उ०—दादू यहु परिख सराफी उपली, भीतर की यहु नांहि। अंतर की जांणै नहीं, तार्थ खोटा खांहि।—दादूबांणी

परिखणो–वि०—परीक्षा करने वाला, जांच करने वाला।

परिखणो, परिखबो—देखो 'परखणो, परखबो' (रू.भे.)

उ०—दीठउ नळ सोभाग निधि, कुमरीइ परिखी ते विधि।
—नळदवदंती रास

परिखा–वि० [देशज] अपार,असीम, वहुत। उ०—करे दांन हित कंत, करे दुज दांन निरंतर। कितां चीर मंजीर, हीर मांणक जव्वाहर। सती तेज समरत्थ, वहे इम पंथ विचाळै। परीखा घन आवता, जांणि वरखा वरसाळै। ईखवा अचळ साहस ऊवरि, सुर दळ विमळ तरस्सिया। विसतार नूर सतियां वदन, द्वादसं सूर दरस्सिया।
—रा.रू.

सं०स्त्री०—१ किसी नगर या गढ के बाहर चारों ओर बनी नहर के आकार की खाई जो नगर या गढ़ की रक्षार्थ बनवाई जाती थी।

२ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

उ०—सकळै गुण सकज, पाँच दस परिखा पहुंतो। आंण्यां नह इतबार, मन सुद्ध थाप्यो महतो।—ध.व.ग्रं.

परिख्या—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

उ०—पण कोइ इसो है ज्यो चोर है, मारै नदी रजपूत बोल्या, कहै महाराज पांचां री रुजगार अकेला खाए जो किसै कांम आवेगा। अणां री परीख्या तो लीजै।—पंचमार री वात

परिख्यण–वि० [सं० परीक्षणम्] परीक्षा करने वाला।

उ०—गुणाखट भाख परिख्यण, आपण साख उजाळणो।
—ल.पि.

सं०पु०—परीक्षा, जांच।

परिख्यात—देखो 'प्रख्यात' (रू.भे.)

परिगणन–सं०पु० [सं०] भली प्रकार गिनना, ठीक ठीक गिनना।

परिगणना–सं०स्त्री० [सं०] पूरा गिनना, ठीक ठीक गिनना।

परिगणित–वि० [सं०] जिसकी गिनती हो चुकी हो, गिना हुआ।

परिगत–वि० [सं०] १ बीता हुआ, गत।

२ विस्मृत।

३ मरा हुआ।

४ घेरा हुआ, वेष्ठित।

६ जाना हुआ, समझाया हुआ, ज्ञात।

परिगह, परिगहि—देखो 'परिग्रह (रू.भे.)

उ०—१ मुहरि मांडीजे काजि दिगविजय मंडोवरो, धुर धमळ सिरे परिगह धरिसै। दिलीवै सोच 'गजसाह' मुख देखीजै, दिलीवै हरख होई 'गजण' दीसै।—महाराजा गजसिंह रो गीत

उ०—२ 'केहरि' परिगहि पालियो, करि परधानां गूझ। राजा राठोड़ वडो, जैसूं मांडि म झूझ।—गु.रू.बं.

परिगूढ–वि० [सं०] जो समझ में भी न आए, कठिनता से समझ में आने वाला, नितांत गूढ।

परिग्गह—देखो 'परिग्रह' (रू.भे.)

उ०—१ प्रमणै इम 'केहरि' तेउ परिग्गह, मैं कळपे तन मूझ तणो। पतिसाह उतांमळ मूझ समापै, मी इकवार अछै मरणो।—गु.रू.बं.

परिग्यांण, परिग्यांन–सं०पु० [सं० परिज्ञान] किसी वस्तु का पूर्ण ज्ञान, सम्यक ज्ञान।

परिग्रह, परिग्रहौ-सं०पु० [सं० परिग्रह] १ किसी वस्तु अथवा धन आदि का संग्रह।

उ०—१ भोग परित्याग प्रव्रज्या परयव जी। सूय परिग्रह चारू तप उपधांन हो।—वि.कु.

उ०—२ मदिरा मांस माखण भखइ, बहु आरंभ निवास। पार नहीं परिग्रह तणउ, इच्छा जेम आगास।—स.कु.

उ०—३ परिग्रहौ नहीं राखवौ, त्रि-विधे, त्रि-करण त्याग। रयणी-भोजन परिहरे, ते सांचौ वैराग।—जयवांणी

२ परिजन, परिवार। उ०—सैसव सुजु सिसिर वितीत थयौ सहु, गुण गति मति अति एह गिणि। आप तणौ परिग्रह ले आयौ, तरुणापौ रितुराउ तणि।—वेलि

३ चाकर, अनुचर. ४ स्वीकृति. ५ दान. ६ पकड़।

७. प्राप्ति, उपलब्धि. ८ धन, दौलत. ९ सेना, फौज।

उ०—गजसिंघ परिग्रह आगळैं, हाक मार आयौ हणूं। करमेत उडी कपूर वरि, गौ छंडे गढ लाडणूं।—गु.रू.बं.

१० अंतःपुर, रनिवास।

११ सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण।

१२ कलंक, दोष, पाप। उ०—ब्राह्मण गळवा री संकळप भरियौ सो पण कोई देवै नही। तैरौ पण प्रायचित थांनै ही लागसी। आगै तो इसौ परिग्रह कदेइ लगायौ न थौ। अबकै टळती दीसै न छै।
—पलक दरियाव री वात

रू०भे०—परगह, परगहै, परगाह, परगै, परग्गह, परघु, परघू, परघै, परघै, परिगह, परिगहि, परिगहै, परिग्गह, परिघरउ।

परिघ, परिघन-सं०पु० [सं० परिघः] १ एक आयुध विशेष।

उ०—केते कुठार बाहत करूर, परिघन कितेक कितेक सिर चकनचूर।—ला.रा.

२ ज्योतिष के २७ योगों में से १९ वां योग।

वि०वि०—इस योग को आधा छोड़ कर शुभ कार्य करना चाहिए।

रू०भे०—परघ्घन, परिघ्घन।

परिघरउ—देखो 'परिग्रह (रू.भे.)

उ०—चउरास्या सहु को मीलयौ। पाळौ परिघरउ सयळ असेस।
—वी.दे.

परिघळ—देखो 'परगळ' (रू.भे.)

उ०—सहसे लाखे साटविसु, परिघळ आणा वेसि। घरि बइठा ही प्रीतमा, पट्टोला पहिरेसि।—ढो.मा.

परिघात-सं०पु० [सं०] (वि० परिघाती) १ वध, हत्या, हनन।

२ डंडा, लुहांगी।

परिघोस-सं०पु० [सं० परिघोष] १ मेघ की गर्जना।

२ अनुचित कथन।

३ शोर, हल्ला।

परिघ्घन—देखो 'परिघ' (रू.भे.)

उ०—चलत लोह उताळसूर सर गदा परिघ्घन।—ला.रा.

परिचउ, परिचय-सं०पु० [सं० परिचय] १ किसी व्यक्ति, विषय या पदार्थ के सम्बन्ध में प्राप्त हुई जानकारी, ज्ञान, विशेष जानकारी।
(उ र.)

२ प्रमाण। उ०—चुप चतुर पाय, स्मरण सम्हाय। लय लीन लच्छ, परिचय प्रतच्छ।—ऊ.का.

३ जान-पहिचान।

ज्यूं—अठै घणा आदमियां सूं आपरौ परिचय है।

रू०भे०—परचइ, परचै।

परिचर-सं०पु० [सं० परिचरः] १ अनुयायी।

२ नौकर, सेवक।

परिचायक-वि० [सं०] परिचय कराने वाला, परिचय देने वाला।

परिचार-सं०पु० [सं०] १ सेवा, टहल।

२ देखो 'प्रचार' (रू.भे.)

उ०—बीज लवइ गज्जइ गयण, पवन तणा परिचार। इणि आसाढ़ि हूं डरूं, दहि दिगंतर दार।—मा.कां.प्र.

परिचारक, परिचारिक-सं०पु० [सं० परिचारकः, परिचारिकः] सेवक, अनुचर (ह.नां.मा.)

रू०भे०—परचारक।

परिचारी-सं०पु० [सं० परिचारिन्] सेवक, अनुचर।

परिचालक-वि० [सं०] १ चलने के लिए प्रेरित करने वाला, चलाने वाला।

२ किसी कार्य को जारी रखने तथा आगे बढाने वाला।

परिचावणौ, परिचावबौ-क्रि०स० [?] फुसलाना, ललचाना।

उ०—पुण्य कृतूत किया अति परिचळ, सुरपति सबळ पड़ी मन सांक
—स.कु.

परिचावियोड़ौ-भू०का०कृ०—फुसलाया हुआ, ललचाया हुआ।
(स्त्री० परिचावियोड़ी)

परिचित-वि० [सं०] जिसका परिचय या जानकारी हो चुकी हो, जाना-पहिचाना, जाना-बूझा।

परिचौ—देखो 'परचौ' (रू.भे.)

परिच्छेद-सं०पु० [सं०] ग्रंथ का कोई स्वतंत्र भाग, अध्याय, प्रकरण।

रू०भे०—परछेद, परिछेद।

परिच्छेद्य-वि० [सं०] १ गिनने, नापने या तौलने योग्य।

२ बांटने योग्य, विभाज्य।

परिछंदौ-सं०पु०—परिवार। उ०—मात के कूखि लहवो अवतार, भयो व्रत को अभिलाख अमंदो। तात कियो व्रत उच्छव देस में, सेस प्रजा हू यही परिछंदो।—ध.व.ग्रं.

परिछन—देखो 'परछन' (रू.भे.)

परिछेद—देखो 'परिच्छेद' (रू.भे.)

परिजंक—देखो 'परयंक' (रू.भे.)

परिजटन—देखो 'परयटन' (रू.भे.)

परिजन-सं०पु० [सं०] १ परिवार, कुटुम्ब ।
रू०भे०—परजिण, परियण, परीयणी ।
२ देखो 'परजन' (रू.भे.)
परिजनता-सं०स्त्री० [सं०] परिजन होने का भाव ।
परिजळणी, परिजळबौ—देखो 'प्रजळणौ, प्रजळबौ' (रू.भे.)
उ०—उतइं लाखहरुं परिजळइं उतइं भीमुजु केडइ मिळीइ ।
—पं.पं.च.
परिजळणहार, हारौ (हारी), परिजळणियौ—वि० ।
परिजळिग्रोड़ौ, परिजळियोड़ौ, परिजळयोड़ौ—भू०का०कृ०
परिजळीजणौ, परिजळीजबौ—भाव वा०
परिजळियोड़ौ—देखो 'प्रजळियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परिजळियोड़ी)
परिजाउ-वि० [देशज] वीररसपूर्ण कविता ?
उ०—वाह-वाह बारठजो भली कही । मन री लही । हुकुम किया । जांगड़िग्रै बहाराग माहै दूहा दिग्रा । परिजाऊ दूहा । वेगड़ा सांड धवळ रा दूहा । एकलगिड़ वाराह रा दूहा । मुंज मारवणि रा दूहा ।
—वचनिका
परिजात-वि० [सं०] १ उत्पन्न, जन्मा हुग्रा ।
२ देखो 'पारिजात' (रू.भे.)
उ०—ग्राम गुणा परिजात, नरां पीनां दुखहरणा । वीर सत्यां सुख सिरे, ग्रमर ग्रांणंद रा झरणा ।—दसदेव
परिजाळणी, परिजाळबौ—देखो 'प्रजाळणौ' 'प्रजाळबौ' (रू.भे.)
उ०—ग्रंतेउर परिजाळ्यो जी, स्रेणिक दियउ रे ग्रादेस । भगवत सांसउ भांगियउ जी, चमक्यउ चित्त नरेस ।—स.कु.
परिजाळणहार, हारौ (हारी), परिजाळणियौ—वि०
परिजाळिग्रोड़ौ, परिजाळियोड़ौ, परिजाळ्योड़ौ—भू०का०कृ०
परिजाळीजणौ, परिजाळीजबौ—कर्म वा०
परिजाळियोड़ौ—देखो 'प्रजाळियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परिजाळियोड़ी)
परिट्टा—देखो 'परियट्टा' (रू.भे.)
परिणणौ, परिणबौ—देखो 'परणणौ, परणबौ' (रू.भे.)
उ०—सींह मझि वि पूतली फिरइं, स स्रस्थिसहारि । तासु नयण वेही करी, परिणउ द्रूपदि नारि ।—पं.पं.च.
परिणत-वि० [सं०] बदला हुग्रा, पलटा हुग्रा ।
परिणति-सं०स्त्री० [सं०] १ ग्रवनति ।
२ रूपांतर ।
रू०भे०—परीणत ।
सं०पु० [सं०] तिरछी चोट करने वाला हाथी ।
परिणय, परिणयन-सं०पु० [सं० परिणय: परिणयनम्] विवाह, शादी ।
उ०—सांमंता समेत संमरराज रै तनूज परिणय:, रौ प्रस्थान कीधौ ।
—वं.भा.

परिणाणौ, परिणाबौ—देखो 'परणाणौ' 'परणाबौ' (रू.भे.)
परिणाम-सं०पु० [सं० परिणाम:, परीणाम:] नतीजा, फल ।
उ०—१ प्रांणांत पहुमि परिणाम पथ्य । रट्ठोर सकळ संबत रहस्य ।
—ऊ.का.
उ०—२ कुसळ गुरु नांमै नवनिधि पांमै । ध्यावै जेह सूधै मन सतगुरु, दिन-दिन सुभ परिणांमौ ।—ध.व.ग्र.
परिणामदरसी-वि० [सं० परिणामदर्शिन्] दूरदर्शी, सूक्ष्मदर्शी ।
परिणामद्रस्टि-सं०स्त्री० [सं० परिणामदृष्टि] किसी कार्य के परिणाम को जान लेने की शक्ति ।
परिणिति-सं०स्त्री० [?] प्रवृत्ति ।
उ०—'नायसागर' नीष्कामता, नीरखि परिणिति सांति । उत्तराध्यन ग्रादे बहु, संभलावै सिद्धांत ।—ऐ.जैका.सं.
परितांण—देखो 'परित्रांण' (रू.भे.)
परिताप, परितापन-सं०पु० [सं० परिताप:] पश्चाताप, संताप, कष्ट ।
उ०—१ काती पाती वान्हि परि, वपु-पंजरि परिताप । बाति वेधि हूं बलूं, ग्रबळा ग्रावइ ग्राप ।—मा.कां.प्र.
उ०—२ जेठ ! तु परितापन करइ, राति करइ न हींण । पांणीवळ पुहचइ नहीं, रमकां रंगि ग्रमीण ।—मा.कां.प्र.
परितापी-वि० [सं० परितापिन्] पश्चाताप करने वाला, दुखी ।
सं०पु० [सं०] पीड़ा देने वाला, दुखित करने वाला ।
परितियाग—देखो 'परित्याग' (रू.भे.)
परितियागी—देखो 'परित्यागी' (रू.भे.)
परितुस्ट-वि० [सं० परितुष्ट] संतुष्ट, प्रसन्न ।
परितुस्टि-सं०स्त्री० [सं० परितुष्टि] संतोष, प्रसन्नता ।
परितोख—देखो 'परितोस' (रू.भे.)
परितोम-सं०पु० [?] गिलाफखोली ।
परितोस-सं०पु० [सं० परितोष] संतोष, प्रसन्नता ।
रू०भे०—परितोख परीतोस ।
परितोसक-सं०पु० [सं० परितोषक] संतुष्ट करने वाला, प्रसन्न करने वाला ।
परितोसी-वि० [सं० परितोषिन्] संतोषी ।
परित्त-वि०—चारों ग्रोर ।
उ०—गमा ग्रनंता जेहमां रे, वलि ग्रनंत परयांय रे । यस परित्त तउ छ इहां रे लाल, थावर ग्रनंत कहाय रे ।—वि.कु.
परित्यज्य-वि० [सं०] त्यागने योग्य, छोड़ने योग्य ।
परित्याग-सं०पु० [सं०] छोड़ने का भाव, त्यागने का भाव ।
रू०भे०—परितियाग ।
परित्यागी-वि० [सं० परित्यागिन्] त्यागी, छोड़ने वाला ।
रू०भे०—परितियागी ।
परित्रप्त-वि० [सं० परितृप्त] ग्रघाया हुग्रा, संतुष्ट ।
परित्रांण-सं०पु० [सं० परित्राणम्] रक्षा, बचाव ।

परिदक्षिण, परिदक्षिणा, परिदखणा, परिदखिणा—देखो 'प्रदक्षिणा' (रू.भे.)

उ०—१ एकीकइ रोम ऊपरइ ईसर, मांडिया कोठ अनंत ब्रहमंड। सायर सात दियइ परिदक्षिण, डवर चा अंबर धजदंड।
—महादेव पारबती री वेलि

उ०—२ बावन देहुरियां जो परिदखणा परियां।—ध.व.ग्र.

उ०—३ एहवो धातकी खंड ए, परिदक्षिणा परकार। अठलख जोयण वीटीयो, समुद्र कालो दधि सार।—ध.व ग्रं.

परिदरसन–सं०पु० [सं० परिदर्शन] भली भांति अवलोकन करना।

परिध–सं०पु० [स० परिधि] १ गढ़, किला (ह.नां.मा.)
२ देखो 'परिधि' (रू.भे.)

परिधन, परिधान–स०पु० [सं० परिधांन] पहना जाने वाला वस्त्र।
रू०भे०—परधान।

परिधि–सं०पु० [सं०] किसी गोल पदार्थ या वृत्त की सीमा निर्धारित करने वाली रेखा, घेरा।
रू०भे०—परिध।

परिनाळ—देखो 'परनाळ' (रू.भे.)

उ०—रगत खाळ परिनाळ, लगै पगां पायाळइ। नवै कुळी नागिंद्र हूआ, स्रोणी ववाळइ।—गु.रू.व.

परिनिस्ठा–स०पु० [सं० परिनिष्ठा] १ चरम सीमा, पराकाष्ठा।
२ पूर्ण ज्ञान, पूर्ण परिचय।

परिन्योस–सं०पु० [सं०] किसी काव्य का वह स्थल जहाँ कोई विशेष अर्थ पूरा हो।

परिपक्व–वि० [सं०] १ पूर्ण पका हुआ।
२ पूर्ण विकसित।
३ निपुण।
रू०भे०—परपक्व।

परिपण–सं०पु० [सं०] मूलधन, पूंजी (डि.को.)

परिपाक–सं०पु० [सं०] १ पकने या पचने का भाव (अमरत)
२ पूर्णता।
३ निपुणता।

परिपाटि, परिपाटी–सं०स्त्री० [सं०] १ प्रणाली, शैली, प्रथा।

उ०—यह अंधाधुंध परिपाटी महा अंधेरो। घर त्याग नोसरघो घनानंद को घेरो।—ऊ.का.
२ पद्धति, रीति, चाल।

परिपाळग–सं०पु० [सं० परिपालक] पालन-पोषण करने वाला, पालन-कर्ता। उ०—'प्राग' हरो पात्रां परिपाळग, मोटां दांन दिमण मन मोट।—ल पि.

परिपाळणो, परिपाळबो–क्रि०स० [परिपालनम्] पालन-पोषण करना, रक्षा करना। उ०—दस मास उदरि धरि बळै बरस दस, जो इहां परिपाळै जिवड़ी। पूत हेत पेखता पिता प्रति, वळी विसेखै मात वडी।—वेलि

परिपीड़ण–सं०पु० [सं० परिपीडनम्] अत्यन्त दुःख पीड़ा, कष्ट।

परिपुसट, परिपुस्ट–वि० [सं० परिपुष्ट] भलीभांति पोषित, पूर्ण हृष्ट-पुस्ट, मोटाताजा।

परिपूजण–सं०पु० [सं० परिपूजनम्] सम्यक प्रकार से पूजा या उपासना करने की क्रिया।

परिपूजणो, परिपूजबो—क्रि०स० [सं० परिपूजनम] १ परिपूर्ण करना, सन्तुष्ट करना। उ०—उलग कहीय छइ एकला, दूजण सरिस कहइ घर बास। राजा रिधि छइ आपणइं, इण परिपूजई मन की आस।—बो दे

परिपुर–वि० [स० परिपूर्ण] पूर्ण, पूरा। उ०—परिपूर लच्छि प्रताप, सुजि लुटत हाट सराय।—सू प्र.

परिपूरण–वि० [सं० परिपूर्ण] खूब भरा हुआ, सम्पूर्ण।

उ०—तुं पर-नारी-बंधु ते, परखिउ मइं परिपूरण। अम्हे न अवला कहि, तणी पुजसि तुझ प्राघूरण।—मा.कां.प्र.

परिपोटक, परिपोटिक–सं०पु० [सं० परिपोटक:] कान की लौ सूज कर होने वाला एक कर्ण रोग (अमरत)

परिप्रीछक–वि० [सं० परिपृच्छक] जिज्ञासा करने वाला।

उ०—असवारी ऊपरि चढिया, परिप्रीछक पुंतार। सुंढा सोविन पक्खरी, करिवर अंकुस सार।—मा.कां.प्र.

परिबंधन–स०पु० [सं०] चारों ओर से जकड़ कर बाँधना।

परिबह–सं०पु० [सं० परिबहं] १ राजा के हाथी घोड़े की झूल।
२ राजा के छत्र चँवर आदि (डि.को.)

परिब्बार—देखो 'परिवार' (रू.भे.)

परिब्बेस—देखो 'परिवेस' (रू भे.)

परिब्रह्म—देखो 'परब्रह्म' (रू.भे.)

उ०—परिब्रह्म पूरण, तत मग्न तूरण। परमातम प्राप्त, वह पुरुस आप्त।—ऊ का.

परिभव–सं०पु० [सं०] १ अनादर, अपमान। उ०—इकि बयरी ना परिभव सह्या। लहूया नदण पाछलि रह्या।—पं.पं च.
२ पराजय, हार।
रू०भे०—परभव, परीभाव, परीभव।

परिभवण–सं०पु० [सं० परिभावन] १ पराजय, हार। उ०—एक राव परिभवण, एक रावां पड़िगाहण। एक राव जड गमण, एक राउ सरणं रखण।—गु.रू.व.

परिभाव—देखो 'परिभव' (रू.मे)

परिभासा–सं०स्त्री० [सं० परिभाषा] १ स्पष्ट कथन।
२ पदार्थ-विवेचन-युक्त अर्थ-कथन।
३ किसी ग्रंथ, शास्त्र आदि की विशिष्ट संज्ञा।

परिभ्रत—देखो 'परभ्रत' (रू.भे)

उ०—नवेली वसंत, नए द्रुम वेल तहां रही खेल, परिभ्रत कंजन वेलैं भ्रमर झकृत।—रसीलै रसराज

परिभ्रमण–सं०पु० [सं०] घूमना, चक्कर काटना।

परिमंडळ–सं०पु० [सं परिमंडलम्] १ घेरा, चक्कर।
२ चूड़ी के समान गोलाकार।

परिमळ–सं०स्त्री० [सं० परिमलः] सुगन्ध, सुवास। उ०—कापड़ माल असंख, हेम मिण रयण विभूखण। परिमळ चंदन अगर पांन कपूरह अस्सरा।—गु.रू.बं.
रू०भे०—परमिळ, परम्मळ, परिमळि, परिमिल, परिम्मिळ।

परिमांण–सं०पु० [सं० परिमाण] १ नाप। २ तोल।

परिमित–वि० [सं०] सीमित, नपा-तुला।
उ०—दादू मेरा एक मुख, कीरति अनंत अपार। गुण केते परिमित नहीं, रहे विचार विचार।—दादूबांणी

परिम्मळ—देखो 'परिमळ' (रू.भे.)
उ०—गुलाब मालती सुगंध, सेवती सुपहुळं। तरांणि पंच केवड़ाकि, केतकी परिम्मलं।—गु.रू.बं.

परियंक, परियंका—देखो 'परियंक (रू.भे.)
उ०—१ परियंक तजो हव 'पोळं' बना। विडंगांण चढो हरिआळ वना।—पा.प्र.
उ०—२ पोढे परियंका सदा निसंका। स्रीखंड-स सुगंधा है।
—ऊ का.

परियट–सं०स्त्री० [अं० परेड] कवायद, परेड।

परियट्ट–सं०पु० [सं०परिवर्त] परिवर्तनदोष (जैन)

परियटण—देखो १ 'परिवरतन' (रू.भे) (जैन)
२ देखो 'परयटन' (रू.भे.)

परियट्टणा–सं०स्त्री० [सं० परिवर्तना] पढे हुए सूत्र या पाठ को बार-बार दोहराना (जैन)

परियट्टावोस–सं०पु०[?] खराब आहार को डाल कर अच्छा आहार लाने से लगने वाला दोष (जैन)

परियट्टियदोस–सं०पु० [सं० परिवर्तितदोष] अपनी वस्तु दूसरे को देकर उसके बदले दूसरे की वस्तु लेकर साधु को देने से लगने वाला दोष (जैन)

परियण–सं०पु० [सं० प्रणय] १ प्रेम ?
उ०—ताहि पहुतउ जल गाहियँ नाहिय 'प्रभु हरिकेसि, 'मांनि न परियण उत्सव कुत्स वयण म भणेसि'।—जयसेखर सूरि
२ देखो 'परिजन' (रू.भे.)
उ०—पाखळं राव पौढीमणां, घणी पांण परियण घणां। मालदे राव मंडोवरो, वोह चिरयो-ई वीहावणो।—द.दा.
३ देखो 'परियांण' (रू.भे.)

परियणो, परियबो–क्रि०स० [सं० परित्यागनम्] छोड़ना, परित्याग करना। उ०—कइं पंडव पंथ संचरूं, कईं जाय सेव सूं गंग-दुवार। कह्यउ हमारु जइ सुणइं, उलग स्वांमी ! परियजि धार।
—बी.दे.

परियां–सं०पु० [सं० परिजन] पूर्वज। उ०—१ खाग भाग वरजाग, प्रिसण बाळे पर जाळे। खत्रवाट कुळवाट, पाट परियां उजवाळे।
—गु.रू.बं.
उ०—२ ओछो तिल न कूं तिल अधको, मुणतां सुकव करां ले माप। तूं ताहरा रांणा टोडरमल, परियां सारीखो 'परताप'।
—दुरसो आढो
रू०भे०—परयां, परिहां, परीआं, पिरिआं, पिरियां।

परियांण–सं०पु०—१ वंश, कुटुम्ब। उ०—पुर जोधांण, उदैपुर जंपुर, पह थांरा खूटा परियांण। आंकै गई आवसी आंकै, बांके 'आसल' किया बखांण।—बां दा.
[फा० पर+सं० या=गतौ] २ पंखधारी। उ०—समसेर वांण छूटै समर, आ ओपम इण नाचनै। परियांण जांण छूटै पतंग, जावै चंदण वावनै।—सू.प्र.
३ कीर्ति, यश। उ०—छित घड़ आवध छक छतां, मन बिहु मुओ मांण। अड़ा-अड़ी उरसां उड़ी, पड़ी पीव-परियांण।—रेवतसिंह भाटी
४ पर्यटन, भ्रमण।
५ सूर्योदय के समय पुकारी जाने वाली पूर्व व आग्नेय के बीच की दिशा (शकुन)।
६ पूर्व और आग्नेय के मध्य की दिशा।
७ देखो 'प्रयांण'।
उ०—१ ढोलउ करहउ सज कियउ, कसबी घाति पलांण। सोवन-वांनी घूघरा, चालण रइ परियांण।—ढो.मा.
उ०—२ समूहा सेन तणी सुरतांण, पछिम्म दिस किया परियांण।
—रा०ज० रासो
रू०भे०—परवांण परियण।

परिया–क्रि०वि० [देशज] १ उस तरफ, उस ओर। उ०—सु वणवीर परिया सिरोही हुंता राजाजी अर मुंहते रो मेलियो आयो।—द.वि.
२ दूर, अलग।

परियाणो, परियाबो–क्रि०अ० [सं० परि+या+रा.प्र.णो] जाना, गमन करना।
उ०—कस्मात् कस्मिन् किल मित्र किमरथ, केन कारध परिणाहि कुत्र। ब्रूहि जनेन येन भो ब्राह्मण, पुरतो मो प्रेसितम् पत्र।—वेलि

परियाय—देखो 'परयाय' (रू.भे.)

परियावट–वि०[?] पूर्वकृत।
उ०—एह कथा जे संभलइ, वंचइ वली विसेख। पातक परियावट तणा, तिहां रहइ नहि रेख।—मा.कां.प्र.

परयावळी–सं०स्त्री० [सं० पूर्वज+अवली] वंशावली, वंश-वृक्ष।
उ०—१ ऊमरकोट रा सोढा पदवी रांणा ज्यांरी परयावली रांणी गांगो चांपा रो पातो गांगा रो।—बां.दा.ख्यात
उ०—२ कवित्त छप्पय सीरोही री टीकायतां री परयावळी रा आसियो माली कहै।—नैणसी

परियास-सं०पु० [सं० प्रकाश] १ प्रकाश। उ०—चिहुं दिसि बीज झळहळइ, पंथी घर भणी पुछइ। विपरीत आकास चंद्र सूरय परियास।
—रा.सा.सं.

२ देखो 'प्रयास' (रू.भे)

परिरंभ-सं०पु० [सं०] गले से गला या छाती से छाती मिलाकर मिलना, आलिंगन।

उ०—दोइ ही तरफ गोळां री गजरहूं ओट आवै जिता ही घोड़ां १ सिपाहां २ समेत हाथियां ३ रा गोळ उडण लागा। अर इळा १ आकासरै २ हारावळी रूप बिघ्नकारी डूंगरां रा ढोहणहार बिघ्न-विहीण परिरंभ जुड़ण लागा।—वं.भा.

परिरोध-सं०पु० [सं०] रुकावट, अवरोध।

परिलंघन-सं०पु० [सं०] छलांग मारना, कूद कर लांघना।

परिलुप्त-वि०—१ नष्ट।

२ क्षतिग्रस्त।

परिलेख-सं०पु० [सं० परिलेख:] ढांचा, खाका।

परिलोप-सं०पु० [सं० परिलोप:] विलोप, नाश।

परिवड-सं०स्त्री० [सं० प्रतिपदा, प्रा. पडिवाश्र] प्रत्येक पक्ष की प्रथम तिथि। उ०—आदिपुर पाज उतरूं ए, सिधवड लूं विस्राम। चैत्र परिवड इण परिवारि ए, सीधा वांछित कांम।—स.कु.

परिवत्सर-सं०पु० [सं०] पांच वर्षों के युग का द्वितीय वर्ष (ज्योतिष)

परिवरणौ, परिवरबौ-क्रि०अ० [?] १ आना, आगमन होना।

उ०—स्त्री अस्टापद आविया, आदीसर अरिहंत। साध संघाति परिवरिया, केवलग्यांन अनंत।—स कु.

२ आवेष्ठित होना, घिर जाना।

उ०—१ अतिसय कमलां हाथिणी रे, परिवरियउ निस दीस। सहजानंद नंदन वनइ रे, केलि करइ सुजगीस।—वि कु.

उ०—२ बत्तीस अंतेउ परिवरचउ, भोगवइ सुख सार। नेमि समीप संजम लियउ, जांण्यौ अथिर संसारो।—स.कु.

३ देखो 'परवरणौ, परवरबौ' (रू भे.)

परिवरणहार, हारौ (हारी), परिवरणियौ—वि०।

परिवरिप्रोड़ौ, परिवरियोड़ौ, परिवर्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परिवरीजणौ, परिवरीजबौ—भाव वा०।

परिवरत-सं०पु० [सं०परिवर्त] १ घुमाव, चक्कर, फेरा, फिराव।

२ विनिमय, अदल-बदल।

३ किसी काल या युग का अंत।

४ प्रलय, नाश (डिं०को०)

५ मृत्यु के पुत्र दुस्सह के पुत्रों में से एक (पुराण)

परिवरतक-सं०पु० [सं० परिवर्तक] १ उलट-पुलट करने वाला, परिवर्तन करने वाला।

२ घूमने वाला, फिरने वाला।

३ युग का अन्त करने वाला।

४ प्रलय करने वाला।

परिवरतन-सं०पु० [सं० परिवर्तन] १ बदलने या बदले जाने की क्रिया का भाव, दशान्तर।

२ दो पदार्थों का परस्पर अदल-बदल, अदला-बदली, हेर-फेर।

३ घुमाव, घेरा, आवर्तन, चक्कर।

४ शृंगार में एक प्रकार का आसन।

५ किसी काल या युग का अन्त, समाप्ति।

रू०भे०—परियट्टण।

परिवरियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ आया हुआ, आगमन हुवा हुआ।

२ आवेष्टित, घिरा हुआ।

(स्त्री० परिवरियोड़ी)

परिवह-सं०पु० [स० परिवह:] १ सात प्रकार के पवनों में छट्ठा पवन।

२ अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

परिवाण—देखो 'प्रमांण' (रू०भे०)

उ० -तूं हीज सज्जण मित्त तूं, प्रीतम तूं परिवांण। हियडइ भीतरि तूं वसइ, भावइ जांण म जांण।—ढो.मा.

परिवा—देखो 'पड़वा' (रू०भे०)

परिवाडि, परिवाडी—देखो 'परिपाटी' (रू०भे०)

उ०—पणमीउ सांमीउ नेमिनाहु, अनु अंबिकि माडी। पभणि सु पंडव तणउं चरितु, अभिनव परिवाडी।—पं.पं.च.

परिवाद-सं०पु० [सं०] १ दोष-कथन, निंदा।

२ वीणा या सितार बजाने का लोहे के तारों का बना छल्ला।

रू०भे०—परीवाद।

परिवादक-सं०पु० [स०] निंदा करने वाला व्यक्ति।

वि०—निंदक।

परिवादणी-सं०स्त्री० [सं० परिवादिनी] सात तारों वाली बीन।

परिवादी-सं०पु० [सं० परिवादिन्] निंदा करने वाला व्यक्ति, निंदक।

परिवापण-सं०स्त्री० [सं० परिवापन] हजामत (डिं०को०)

परिवार, परिवारि, परिवारौ-सं०पु० [स० परिवार:, परीवार:] १ अपने भरण-पोषण के हेतु किसी विशेष व्यक्ति के आश्रित रहने वाले लोग, आश्रित वर्ग, पोष्य-जन।

उ०—चाहइ वेगि निरूपणा, सम पूरव पद चार लाल रे। पिण इण कलि मांहे नहीं, सांप्रति सहु परिवार लाल रे।—वि कु.

२ एक ही कुल में उत्पन्न लोगों का समुदाय, कुटुम्ब, कुनबा, परिजन-समुदाय।

उ०—१ सउं परिवारिहिं सुं दलिहिं हस्तिनागपुरि नगरि आवइं, अन्न-दिवसि रिसि नारदह नारि कज्जि आदेसु पांमइ।—पं.पं.च.

उ०—२ राजा रांणी बरजै, बरजै सब परिवारो। सीस फूल सिर ऊपर सोहै, बिंदली सोभा न्यारी।—मीरा

३ तलवार की म्यान, कोष।

रू०भे०—परवार, परिवार, परीवार, परीवार, पिरवार।

अल्पा०—परवारो, परिवारो ।

परिवारो—देखो 'परिवार' (अल्पा; रू.भे.)

उ०—स्री सावत्थी समोसरया पाचसइ मुनि **परिवारो** जी ।—स.कु.

परिवाह–सं०पु० [सं०] १ मोरी (हिं०को०)

२ पानी का निकास मार्ग (हि०को०)

३ जलाशयो का वह नियत स्थान जहां से आवश्यकता से अधिक जल निकलता है । मोटा ।

रू०भे०—परीवाह ।

परिवेख—देखो 'परिवेस' (रू०भे०)

परिवेदन–सं०पु० [सं०] पूरा ज्ञान, सम्यक ज्ञान ।

परिवेस–सं०पु० [सं० परिवेशः, परीवेशः, परिवेषः, परीवेषः] १ घेरा, मण्डल, परिधि ।

उ०—सिर चमर चोसर सोह, व्रति सूर किरण विमोह । **परिवेस** सुभट सप्रीत, गढ़ आवियो 'अगजीत' ।—रा०रू०

२ सूर्य या चन्द्रमा के चारो ओर बनने वाला सफेद बदली का घेरा ।

उ०—तिण समय चंद्रमा रै चौतरफ परिवेस रै प्रमांण भालो सिंहदेव साठ हजारी सेना सूं स्वकीय स्वांमी रा सिविर रै छबोना रो चक्र चलायो ।—वं.भा.

रू०भे०—परवेख, परिबेस, परीवेख, परीवेस ।

परिवेसण–सं०पु० [स० परिवेषणं] परसना, परोसना ।

उ०—देखी मुहुतु सखी सखेद, पूछिउ लेई मन नउ भेद । सांमिणि आगलि सहूइ कहिउं, **परीवेसण** तीणइ सासहिउ ।

—हीराणंद सूरि

परिवेस्टन–सं०पु० [सं० परिवेष्टन] १ दायरा, घेरा ।

२ लपेटने की क्रिया ।

परिव्रज्या–सं०स्त्री० [सं०] १ इधर-उधर घूमकर भिक्षुक की तरह समय बिताना ।

२ इधर-उधर घूमना, फिरना, परिभ्रमण ।

३ तपस्या ।

परिव्राज, परिव्राजक–सं०पु० [स० परिव्राजः, परिव्राजकः] (स्त्री० परिव्राजिका] १ वह सन्यासी जो सदा भ्रमण करता है ।

२ यती, परमहंस ।

३ तपस्वी । उ०—१ गेरिक **परिव्राजक** तिहां आयो, 'हथिणापुर' मांय । तपस्या कस्ट घणो करै, नर-नारी बहु जाय ।

—जयवांणी

उ०—२ कुमारी **परिव्राजिका**, सधव अधव गुरु नारो जी । व्रत भांजइ तेह नइ कह्यउ, छम्मारी तप सारो जी ।—स.कु.

परिसंख्या–सं०पु० [सं०] १ गणना, गिनती ।

२ एक अर्थालंकार जिसमें किसी वस्तु को उसके योग्य स्थान से हटा कर किसी अन्य स्थान पर स्थापित किया जाता है ।

रू०भे०—परसंख्या ।

परिसद, परिसदा–सं०पु० [स० परिषद्] १ सभा, समिति ।

उ०—१ बैठी **परीखद** बार जी । (जैन)

उ०—२ **परिसदा** सुण पाछी गई, वलिया कृस्ण नरेस । गज-सुकुमार वैरागियो, लागी धरम रो रेस ।—जयवांणी

रू०भे०—परखद, परखदा, परसत, परसद, परसदा, परीसदा ।

[सं० परिषदः] २ सदस्य, सभासद ।

परिसर–सं०पु० [सं०] समीप, पास । उ०—इणी समय रांणा लक्खण रो पट्टपकुमार अरिसिंह आखेट में रमतां कोई ग्राम रा **परीसर** में एक चंनाणा जाती रा हळखड रजपूत री पुत्री नू बळ में अतुळ जाणि प्रसभ पूरवक परणियो ।—वं.भा.

परीसरण–क्रि०स० [सं० स्पर्शनम्] छूना, स्पर्श करना ।

उ०—परिसरणै रघुनाथ पद, अहिल्या थई अकरम ।—रांमरासो

परिसरम—देखो 'परिश्रम' (रू.भे.)

परिसरमी—देखो 'परिश्रमी' (रू.भे.)

परिसराव—देखो 'परिस्राव' (रू.भे.)

परिसह, परिसहा, परिसा–सं०पु० [सं० परिषह] संयम के मार्ग में विचरते हुए प्रतिकूल परिस्थिति के कारण साधु द्वारा उठाए जाने वाले बाईस कष्ट । उ०—१ साधु सहै बावीस परिसह, आहार ल्यइ दोस टालि रे ।—स.कु.

उ०—२ राज लीला सुख भोगियउ, म्हारउ रिसभ सुकुमाल रे । आज सहइ ते **परिसहा**, भूख त्रिसा नित काल रे ।—स.कु.

उ०—३ बावीस **परिसहा** जे सहइ, चालइ सुद्ध आचारो जी ।

—स कु.

वि०वि०—निम्न लिखित २२ परिषह हैं—

(१) क्षुधा (२) तृषा (३) शीत (४) उष्ण (५) दंशमशक (६) अचेल (७) अरति (८) स्त्री (९) चर्या (१०) निषद्या (११) शय्या (१२) आक्रोश (१३) वध (१४) याचना (१५) अलाभ (१६) रोग (१७) तृणस्पर्श (१८) जल्लमैल (१९) सत्कार, पुरस्कार (२०) प्रज्ञा (२१) अज्ञान और (२२) दर्शन ।

रू०भे०—परीसउ, परीसह, परीसा ।

अल्पा०—परिसो, परीसो ।

परिसिद्ध—देखो 'प्रसिद्ध' (रू.भे.)

उ०—**परिसिद्ध** नांम प्रभात नो, ल्यै सहु कोइ मन सुध लोककि ।

—ध.व.ग्रं

परिसिस्ट–वि० [सं० परिशिष्ट] शेष, अवशिष्ट, छूटा हुआ ।

सं०पु०—१ यथा स्थान लगने से छूटी हुई वे बातें जो किसी ग्रन्थ या लेख के बाद में जोड़दी गई हों ।

२ किसी ग्रंथ या लेख के अन्त में संख्या, गणना आदि की दी गई जानकारी ।

परिसोलन–सं०पु० [सं० परिशीलन] मननपूर्वक अध्ययन ।

परिसो—देखो 'परिसह' (अल्पा; रू.भे.)

उ०—पड़ रही तावड़े री भोट, तिरसा सूं सूखा होट। सुणो रिसभजी, कठिन परिसो साधनो(णो)।—जयवांणी

परिसोधन-सं०पु० [सं० परिशोधन] १ पूर्ण रीति से शुद्ध करना।
२ सफाई, स्वच्छता।
३ चुकता करना।

परिस्तांन-सं०पु० [फा०] १ परियों का लोक (कल्पित)
२ सुन्दर स्त्रियों के जमघट का स्थान।

परिस्क्रत-वि० [सं० परिष्कृत] शुद्ध किया हुआ, साफ किया हुआ।

परिस्रम-सं०पु० [सं० परिश्रम] श्रम, मेहनत, उद्यम।
रू०भे०—परिसरम, परीसरम।

परिस्रमी-वि० [सं० परिश्रमिन्] उद्यमी, मेहनती।
रू०भे०—परिसरमी।

परिस्राव-सं०पु० [सं०] एक रोग विशेष जिसमें गुदा से पित्त और कफ़ मिला पतला मल निकलता है।
रू०भे०—परिसराव।

परिहंस—१ देखो 'परहंस' (रू.भे.)
उ०—१ जै सिंघ आद राजा जिता, लाज रहै परिहंस लियै। 'अजमाल' मेळ 'अबदुल्ल' सूं, हुवौ साल मुगळां हियै।—रा.रू.
उ०—२ कसियै जरदि मरद नवकोटी, चौरंगि चढियै अमत चढै। ऊभौ जा बांसै आसावत, परिहंस सु नहं पुरांणि पडै।
—राठौड़ अमरसिंह आसकरणोत री गीत
उ०—३ दिल्लेस खीज रीझां दिये, खोद हियै परिहस खमै। ऊगतौ भांण बाळक 'अभो', राय आंगण इण विध रमै।—सू.प्र.

परिहसणौ, परिहसबौ-क्रि०अ०—हंसना, परिहास करना।

परिहरणौ, परिहरबौ-क्रि०स० [सं० परिहरणम्] देखो 'परहरणौ, परहरबौ' (रू.भे.)
उ०—१ उत्तार आज स उत्तरउ, ऊकटिया सारेह। वेलां वेलां परिहरइ, एकल्लां मारेह।—ढो.मा.
उ०—२ दादू गऊ बच्छ का ग्यांन गह, दूध रहै ल्यौ लाइ। सींग पूंछ पग परिहरै, अस्तन लागै धाइ।—दादूवांणी
परिहरणहार, हारौ (हारी), परिहरणियौ—वि०।
परिहरिओड़ौ, परिहरियोड़ौ, परिहरयोड़ौ—भू०का०कृ०।
परिहरीजणौ, परिहरीजबौ—कर्म०वा०।

परिहरियोड़ौ-भू०का०कृ०—देखो 'परहरियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परिहरियोड़ी)

परिहां—देखो 'परियां' (रू.भे.)
उ०—हर घर ध्यांन कमध हेमाळै, परिहां चाढ़ैवा अमत। किसन व जोग चारणां कारण, गळियौ जुजठळ राव गत।—वां.दा.

परिहार-सं०पु०—१ त्यागना, छोड़ना।
२ देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)

परिहास-सं०पु० [सं०] हंसी, दिल्लगी, मजाक।

परींडौ-सं०पु०—वह स्थान जहां पानी पीने के मटके रक्खे जाते है।
उ०—१ बंगळै में हणमांन बाबौ जाग्या। परींडे में पितर देवता जाग्या। झालर तो बाजी राजा रांम की।—लो गी.
उ०—२ तद इण अरज कीवी—महाराज ठाठौ भाटौ मोसूं नह उपड़ै, किणही बांणियां रै आगै पांणी परींडौ कर लेयस्यूं।
—साह रांमदास री वारता
रू०भे०—पनींडौ, परिंडौ, परैंडौ, पलींडौ, पींडौ, पेंडौ, पैंडौ।
अल्पा०—पलींडौ।

परी-सं०स्त्री० [फा०] १ अप्सरा (अ.मा.)
उ०—परी वरी स्रग वर्स 'दळपत्ति'। उसी हिज केहर' कीध उकत्ति।
—सू.प्र.
पर्या०—अच्छर, खी, वारंगा, सारंगा, सारिका, सुरत्ति।
२ कोहकाफ पर्वत पर रहने वाली वे कल्पित स्त्रियां जो बहुत सुन्दर मानी जाती हैं और जिनके दोनो कंधों पर पर लगे रहते हैं।
३ एक पुष्प (अ.मा.)
४ एक प्रकार का बांण (अ.मा.)
५ देखो 'परो' का स्त्री०।
उ०—इतरी इवं कहो तद नायण कही तौ हालो आपां अठै सूं परी हालां। तद ऐ अठै सुं उठ अर नदी आई।—चौबोली
रू०भे०— परि।

परीआं—देखो 'परियां' (रू.भे.)
उ०—एकणि रहणि हिंदूआं ओपम, पाट-उधोर वडा पण पाळै। अवतारी भारी इहकारी, आप-तणां परीआं अजुयाळै।—ल.पि.

परीकर—देखो 'परिकर' (रू.भे.)

परीक्खणौ, परीक्खबौ—देखो 'परखणौ, परखबौ' (रू.भे.)

परीक्षक-सं०पु० [सं०] (स्त्री० परीक्षिका) परीक्षा करने वाला, जांच करने वाला।
रू०भे०—परखणौ, परिखणौ, परिखाणौ, परिछण, पारकी, पारखी, पारखू, पारखौ, पारिख, पारिखू, पारीखौ।

परीक्षण-सं०पु० [सं०] १ परीक्षा की क्रिया या भाव।
२ देखभाल या जांच।
रू०भे०—परीखण।

परीक्षत—देखो 'परीक्षित' (रू.भे.)

परीक्षा-सं०स्त्री० [सं०] किसी की योग्यता, सामर्थ्य, गुण-दोष आदि जांचने की क्रिया।
क्रि०प्र०—करणी, देणी, लेणी, होणी।
रू०भे०—परक्ख, परख, परिक्षा, परिखा, परिख्य, परिख्या, परीख, परीख्या, परेख, पारख, पारखा, पारिखा, पारिख्या, पारीख।
अल्पा०—पारखड़ी, पारिखौ।

परीक्षित-वि० [सं०] परीक्षा किया हुआ, जांचा हुआ।

सं०पु०—एक राजा का नाम (अर्जुन का पौत्र व अभिमन्यु का पुत्र)
उ०—राय परीक्षित रूयड़ु, बळीउ बाळी वेसि। सोइ स्रंगी-साप मुउ, धूनां घवळहर-रेसि।—मा.कां.प्र.
रू०भे०—परीक्षत, परीखत, परीछत, पीछत, प्रीच्छत, प्रीछत।

परीख-सं०स्त्री०—१ इच्छा।
उ०—कंवर पिता दरसण करण, पेखी साह परीख। अप्पी सरभ बि-राह री, साह समप्पी सीख।—रा.रू.
२ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—सीपाळ राजा कीधी परीख। कोढ़ रोग गयौ हुतौ बहु बरीक।
—स.कु.

परीखण—देखो 'परीक्षण' (रू.भे.)

परीखणौ, परीखबौ—देखो 'परखणौ, परखबौ' (रू.भे.)
उ०—रूपक रख्यण लाइक लख्यण, पात्र परीखण लख्यपती। रीति रहावण कीति कहावण, मौज महाघण मोटमती।—ल.पि.
परीखणहार, हारौ (हारी), परीखणियौ—वि०
परीखिग्रोड़ौ, परीखियोड़ौ, परीख्योड़ौ—भू०का०कृ०
परीखीजणौ, परीखीजबौ—कर्म वा०

परीखत—देखो 'परीक्षित' (रू भे.)
उ०—१ कियौ 'ग्रभय' नृप कूरमां, पावां लियौ बचाय। प्रभू परीखत रक्खियौ, जेम जळंतौ लाय।—रा.रू.

परीखियोड़ौ—देखो 'परखियोड़ौ' (रू.भे.)

परीख्या—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—तदी रजपुत बोल्या—कहै—महाराज पांचां रौ रुजगार अखेला खाए है जी (की) कीसं काम आवेगा। अणां री परीख्या तौ लीजै।
—पंचमार री बात

परीचणौ—सं०पु [देशज] रहट के चक्र की बीच की लकड़ी को रोकने व सहारा देने वाला एक लकड़ी का लट्ठा।
रू०भे०—परीसणौ, पलीचणौ, पलीसणौ।

परीछण—देखो 'परीक्षक' (रू.भे.)
उ०—वेद सासित्र भेद विमळ परीछण गुणगीत पिंगळ। चउद विदि आलहण चात्रिम रहावण कुळ रीति।—ल.पि.

परीछणौ, परीछबौ—देखो 'परखणौ, परखबौ' (रू.भे.)
उ०—१ चखां उदै विलासदास यों हुलास चीत में। परीछ जांनकी अनंद रामचंद प्रीत में।—रा.रू.
उ०—२ सकळ ही परिवार, हेता दियइ अपार। पाल्हणसी परीछा-यउ, दरीछइ नहीं गंवार।—अ. वचनिका
उ०—३ पेसखाना वाळी बात परीछइ, आगा लगइ करण आरास। वळ वादळ तांणिया दुवाहै, फारक ईसर तणा फरास।
—महादेव पारवती री वेलि
परीछणहार, हारौ (हारी), परीछणियौ—वि०।
परीछिग्रोड़ौ, परीछियोड़ौ, परीछ्योड़ौ—भू०का०कृ०।
परीछीजणौ, परीछीजबौ—कर्म वा०।

परीछत—देखो 'परीक्षित' (रू.भे.)
उ०—विच पेट परीछत मीच बचाय'र थेट हरीजन थापिया।
—र.ज.प्र.

परीछाणौ, परीछाबौ—देखो 'परखाणौ, परखाबौ' (रू.भे.)
परीछाणहार, हारौ (हारी), परीछाणियौ—वि०।
परीछायोड़ौ—भू०का०कृ०।
परीछाईजणौ, परीछाईजबौ—कर्म वा०।

परीछायोड़ौ—देखो 'परखायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परीछायोड़ी)

परीछावणौ, परीछावबौ—देखो 'परखाणौ, परखाबौ' (रू.भे.)

परीछावियोड़ौ—देखो 'परखायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परीछावियोड़ी)

परीछियोड़ौ—देखो 'परखियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परीछियोड़ी)

परीणत—देखो 'परिणति' (रू.भे.)
उ०—परीणत स्वास उसास प्रभाव। प्रिया प्रिय पास पलोटत पाव।
—ऊ.का.

परीत—देखो 'प्रीति' (रू.भे.)
उ०—बिरखा हुवा अर तावड़िया रौ तोटौ भुगतणौ पड़ै अर पंछी जिनावरां सूं मोह परीत है।—फुलवाड़ी

परीतौ-सं०पु० [देशज] रहट का एक उपकरण जिसमें डोरा लपेटने के समय का ज्ञान होता है।
वि०वि०—देखो 'डोरौ' ६।

परीतोस—देखो 'परितोस' (रू.भे.)

परीवार—देखो 'परिवार' (रू.भे.)

परीभ्रम्म—देखो 'परब्रह्म' (रू.भे.)
उ०—सीता रमा सोय, कीजै सम कोय। भाखौ परीभ्रम्म, राघौ महारंभ।—र.ज.प्र.

परीमग-सं०पु० [फा० परी+सं० मार्ग] आकाश, आसमान (नां मा.)

परीमीढ़-सं०पु० [?] एक प्रकार का व्यंजन। उ०—घेवर, ससिवदन, सुंहाली, घ्रतवरणी, घारड़ी, पतास, फीणी, दहीथरां, तिलसांकळी, फाफड़ा, पुरी, गुंभा, गुंद-बड़ा, परीमीढ़ां, घूघरी, गुलपापड़ी, गुद-पाक।—व.स.

परीयचि—देखो 'परियछ' (रू.भे.)। उ०—अर मंत्र पढ़ै छै। बीचि यें परीयचि खांचि ल्यै छै।—वेलि टी.

परीयच्चय-सं०पु०—आंचल। उ०—तरुणि पुणोव गहियं परीयचय मितरेण पिउ दिट्ठं। कारण कवण सयाणे दीपक्को धुणए सीसं।
—ढो.मा.

परिग्रछ, परीयछ, परीयछि-सं०स्त्री०—१ पर्दा। उ०—१ परीयछ बंधावौ इहां, त्रिलोचना तुझ पुत्री जेह।—वि.कु.

उ०—२ जवनिका छै, परीयछि को नांम सु आडी दियां राजा के आगे पात्र आवै छै।—वेलि टी.

२ जाजम, बिछायत। उ०—मेघव ना उलच बांध्या छइ, परीयछ ढली छइ। केतकी ना गंध गहगहीया छइ।—कां.दे.प्र.

रू०भे०—परियचि, परेच।

परियणि—देखो 'परिजन' (रू.भे.)

उ०—कन्हडि बांधीउ सूयण लोक सहु सोग निवारीयउ। पहुतुं सहुइ नीय नयरि परीयणी परिवारीय।—पं.पं.च.

परीवाडोदोस-सं०पु०—भोजन की पंक्ति में न बैठ कर उसका उल्लंघन कर के भोजन करने पर लगने वाला दोष (जैन)

परीवाद—देखो 'परिवाद' (रू.भे.)

परीवार—देखो 'परिवार' (रू.भे.)

उ०—अर गुजरात रौ अधीस विकळ थकौ परीवार सूं चंद्रहास लेतौ ही आगै आय पड़ियौ।—वं.भा.

परीवाह—देखो 'परिवाह' (रू.भे.)

परीवेस—देखो 'परिवेस' (रू.भे.)

परीसउ—देखो 'परिसह' (रू.भे.)

उ०—साधु परीसउ ते सह्यउ, आव्यउ उत्तम ध्यांन मुनिवर।
—स.कु.

परीसणौ—देखो 'परीचणौ' (रू.भे)

परीसदा—देखो 'परिसद' (रू.भे.)

उ०—जब परीसदा वांदण नीकली, सुण आयौ 'सुबाहु कुमारो रे।
—जयवांणी

परीसरम—देखो 'परिस्रम' (रू.भे.)

परीसह, परीसा—देखो 'परिसह' (रू.भे.)

उ०—१ जद स्वांमीजी कह्यौ—परीसह कितरा ? जब ते बोल्या—परीसह बावीस।—भि.द्र.

उ०—२ कठिन सिला संथारि, सबल परीसा पुत्र तूं सहइ जा हो।
—स.कु.

परीसारो—देखो 'पुरसगारो' (रू.भे.)

उ०—१ जाहरां परीसारा-रो हुकम कियो। परीसारो हुवो।
—प्रतापमल देवड़ा री वात

उ०—२ परीसारा रौ हुकम हुवौ छै। सारै साथ नै सरव वसत रौ परीसारौ हुवै छै। पांच-पांच दस-दस इकलाळिया थांहदा भेळा बैठा छै। मनुहारां हुय रही छै।—रा.सा.सं.

परीसौ—देखो 'परिसह' (अल्पा; रू.भे.)

उ०—आगे निरणौ सांभलो जी सहे परीसौ केम।—जयवांणी

परुतसार-सं०पु०—एक पौराणिक राजा।

उ०—भूप परुत सारसा, जग आरंभ कर का। कोट-कोट द्विज एक को दिय दांन मोहर का।—दुरगादत्त बारहठ

परुस-वि० [सं० परुष] १ कठोर, कड़ा।

उ०—परुस चीकणी चुट्ट, पड़ै डागळियां पक्कां। सुध पाधरी पड़ी, जकी सिगळी बिन टक्कां।—दसदेव

२ वाण, तीर।

परुसगारो—देखो 'पुरसगारो' (रू.भे.)

(स्त्री० परुसगारी)

परुसणौ, परुसबौ—देखो 'पुरसणौ, पुरसबौ' (रू.भे.)

परुसता-सं०स्त्री० [सं० परुषता] कठोरता, कड़ाई।

उ०—मिथ्यामत रज दूर मिटावइ, प्रगटइ सुरुचि सुगंध। अरुचि परुसता प्रगट न होवइ, करुणा रस स्रवइ सुबंध।—वि.कु.

परुसियोड़ौ—देखो 'पुरसियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परुसियोड़ी)

परुहूत-सं०पु०—देखो 'पुरुहूत' (ना.डि.को.)

परूण—देखो 'पुरण' (रू.भे.)

परूवणया, परूवणा—देखो 'प्ररूपणा' (रू.भे.)

परूपणौ, परूवबौ—देखो 'प्ररूपणौ प्ररूपबौ' (रू.भे.)

उ०—१ सामायिक पोसह पड़िकमणौ, देव-पूजा गुरु सेव जी। पुण्य तणा ए भेद परूप्या, अरिहंत वीतराग देव जी।—स.कु.

उ०—२ स्वांमीजी और तौ स्रद्धा आचार चोखा परूप्या, पिण नदी उतरया धरम या बात तौ स्वांमीजी पिण खोटी परूपी।—भि.द्र.

परूपियोड़ौ—देखो 'प्ररूपियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परूपियोड़ी)

परूवणया, परूवणा—देखो 'प्ररूपणा' (रू.भे.)

परूवणौ, परूवबौ—देखो 'प्ररूपणौ, प्ररूपबौ' (रू.भे.)

उ०—काचा पांणी में अपकाय रा असंख्याता जीव अनै नीलण रा अनंता जीव चौथा, छठा, तेरमा गुण ठांणा वाला सरव सरवे परूवै पण फरसणा में फेर।—भि.द्र.

परूसगारी—देखो 'पुरसगारी' (रू.भे.)

उ०—और भीतर तौ परूसगारी हुवै। होळै-होळै चोख सूं जीमै। चाकर लोगां रा कटोरा भरणै नूं हुकम हुवौ।
—सूरै खीवे कांधळोत री वात

परूसगारो—देखो 'पुरसगारो' (रू.भे.)

उ०—तिसै जोगेसर नै पिण आपरी पाखती बैसांण्यो। पतर मांहे परूसगारो कियो। मनुहारै मनुहारां जीमिया।
—जगमाल मालावत री वात

परुसणौ, परुसबौ—देखो 'पुरसणौ, पुरसबौ' (रू.भे.)

उ०—चेली चोळां में मन मोळां में रोळां में रूठंदा है। पकवांन परूसै रळपट रूसै, फरगट सुख फेंकंदा है।—ऊ.का.

परूसणहार, हारौ (हारी), परूसणियौ—वि०।

परूसिओड़ौ, परूसियोड़ौ, परूस्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परूसीजणौ, परूसीजबौ—कर्म वा०।

परूसारो—देखो 'पुरसगारो' (रू.भे.)

परूसो-सं०पु०—वह भोजन जो किसी आमन्त्रित व्यक्ति के जीमने न आने पर उसके यहां परोस कर भेजा जाता है।
मि०—कांसो।

परूसाणौ, परूसाबौ—देखो 'पुरसाणौ, पुरसाबौ' (रू.भे.)
उ०—जिमावै जिके भावता भोग जांणि, परूसावै जसोदा जिमै चक्रपांणी। अरोगे अघायें कियो आचमन्न, कपूरी ग्रहे पान बीड़ा क्रसन्न।
—ना.द.

परूसाणहार, हारौ (हारी), परूसाणियौ—वि०।
परूसायोड़ौ—भू०का०कृ०।
परूसाईजणौ, परूसाईजबौ—कर्म वा०।

परूसायोड़ौ—देखो 'पुरसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परूसायोड़ी)

परूसारौ—देखो 'पुरसगारौ' (रू.भे.)
उ०—आदमी ४०० चाकर-बाकर बीजा सड़ा मांहे बैसांणिया। भलीभांति परूसारो किया नै दारू पावता गया।—नैणसी

परुसावणौ, परुसावबौ—देखो 'पुरसाणौ, पुरसाबौ' (रू.भे.)
परूसावणहार, हारौ (हारी), परूसावणियौ—वि०।
परूसाविप्रोड़ौ, परूसावियोड़ौ, परूसाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।
परूसावीजणौ, परूसावीजबौ—कर्म वा०।

परूसावियोड़ौ—देखो 'पुरसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परूसावियोड़ी)

परूसियोड़ौ—देखो 'पुरसियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परूसियोड़ी)

परेंडौ—देखो 'परींडौ' (रू.भे.)

परे-अव्य०—१ भांति, तरह। उ०—नेम तणी परे छोडी रिद्ध। जग में सुजस हुवो परसिद्ध।—ऐ.जै.का.सं.
२ दूर।
३ देखो 'परै' (रू.भे.)

परेख—१ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—मर मर थाका जरमनी, लिख थाको चित्रलेख। तोइ न थाकी ताहरी, 'पातल' रूक परेख।—किसोरदांन बारहठ
२ कील, मेख।

परेखणौ, परेखबौ—देखो 'परखणौ, परखबौ' (रू.भे.)
उ०—भूमि परेखो हो नरां, कहा परेखो ब्यंद। भुयं बिन भला न नीपजै, कण त्रण, तुरी नरिंद।—जखड़ा-मुखड़ा भाटी री वात
परेखणहार, हारौ (हारी), परेखणियौ—वि०।
परेखिओड़ौ, परेखियोड़ौ, परेख्योड़ौ—भू०का०कृ०।
परेखीजणौ, परेखीजबौ—कर्म वा०।

परेखियोड़ौ—देखो 'परखियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० परेखियोड़ी)

परेग-सं०स्त्री० [अं० पिग] मेख, कील।

परेच—देखो 'परीयछ' (रू.भे.) उ०—तिका चावड़ी बैठी थी तठै चाली चाली आई। परेच आडी खंचाई नै जांबोती कह्यो।
—जगदेव पंवार री वात

परेज—देखो 'परहेज' (रू.भे.)

परेजगार—देखो 'परहेजगार' (रू.भे.)

परेट, परेड-सं०स्त्री० [अं० परेड] कवायद, परेड।

परेत—देखो 'प्रेत' (रू.भे.)
उ०—मड़ियो कुड़ियो मेर, संग सड़ियो न सुहावै। पड़ियो रहै परेत, दैत ज्यूं दांत दिखावै।—ऊ.का.

परेतकरम—देखो 'प्रेतकरम' (रू.भे.)

परेतपत, परेतपति, परेतपती—देखो 'प्रेतपति' (रू.भे.)
उ०—नरसिंहदेव नूं छिन्न-भिन्न होइ पडतो देखि कह्यो—जवनां नूं परेतपति री पुरी पांहुणा करि ऊहीज उतमंग आंणि।—वं.भा.

परेम-सं०स्त्री० [सं० परिमल] १ सुगन्ध, सुवास।
२ देखो 'प्रेम' (रू.भे.)

परेमी—देखो 'प्रेमी' (रू.भे.)

परेरउ-वि०—१ पराया, दूसरे का। उ०—साहिब कच्छ न जाइयइ, तिहां परेरउ द्रंग। भीमळ नयण सुवंक घण, भूलउ जाइसि संग।
—ढो.मा.
२ देखो 'परै' (रू.भे.)

परेरणा—देखो 'प्रेरणा' (रू.भे.)

परेली-सं०पु०—ताण्डव नृत्य का प्रथम भेद जिसमें अंग-संचालन अधिक और अभिनय थोड़ा होता है।

परेवौ—१ देखो 'पारेवौ' (रू.भे.)
उ०—२ गाढे-राव वारेंगां वरेवा उमै पाखां गिरै, लाखां साखा-भ्रगा नै हरेवा खेध लागा। जिके कांन रंध्रां हुवै नीसरै करेवा जंगां, महा-कूप हूंतां जू परेवा गैण भाग।—र.रू.
(स्त्री० परेवी)

परेस—देखो 'प्रेस' (रू.भे.)

परेसतौ—देखो 'फरिस्तौ' (रू.भे.)

परेसांन-वि० [फा० परेशान] व्यग्र, उद्विग्न, व्याकुल, हैरान।
उ०—तद आदमी एक ठावो मेल गढ में कहायो—बादसाह जबरन सूं म्हांनूं आंख्यां अदीठ कीन्हा छै, सो साथ लेय सांच कूड़ कर अठै दिन काढण नूं आया छां। औ थांरो मुलक छै। खावो पीवो। जैसी कीन्ही तैसी पाई। परेसांन था तिकां खरच पायो।
—जलाल बूबना री वात

परेसांनी-सं०स्त्री० [फा० परेशानी] उद्विग्नता, व्याकुलता, व्यग्रता।

परैं, परै-सं०पु०—१ प्रकार, तरह, भांति। उ०—१ हिव वरतंत सुणो सहु, आदरवत अचूक। सेठ तिहां ठग नी परैं, पड़ियो पाड़े कूक।—वि.कु.
उ०—२ सुख विलसतां तेम, निसि भरि कुमर इसी परैं। एक दिन

चितें एम, तरुण थ्यौ हूं हित्र सही।—वि.कु.

२ सामने वाला दूसरा पार्श्व, दूसरी ओर, दूसरी तरफ।

उ०—सांगज सोवरणांह, तैं वाही 'परतापसी'। जो वादळ किरणांह, परै प्रगट्टो कुंजरौ।—सूरायच टापरियौ

अव्य० [सं० पर] १ उस ओर, उधर। उ०—आद रु अंत मध्य नहिं मेरे, नहीं उरै परै मेरी सुरता।—स्री हरिरांमजी महाराज

२ ऊपर, पर। उ०—सिंघ सरिस रायसिंघ रै, रहियौ फूंफै रांम। आडौ सरवहियौ अच्छै, कळह तणौ घरि कांम। कांम सग्रांम चौ रांम नां यह करै, पहैं गिरनारि जे पढू मोटा परै।—हा.फा.

३ दूर। उ०—१ तदि राव सेखेजी कहायौ—'गड अठै मती घालज्यौ, परै जांगळू री हद में घातौ'।—द.दा.

उ०—२ रुकमरा या ल्यौ थे सूंठ-अजवांण, ऐ भी तौ लेवौ जी करड़ा खोपरा। हर जी परै ए बगावौ सूंठ अजवांण, बगड़ विखेरौ जी करड़ा खोपरा।—लो.गी.

रू०भे०—परइ।

परैज—देखो 'परहेज' (रू.भे.)

परैरौ—वि० (स्त्री० परैरी) दूर, अति दूर।

उ०—तद राव सेखे नूं जाय पूछियौ। कसौ म्हांनै कोई बसण नूं जागा बतावौ। तद सेखे कह्यौ—परैरी सी मांढौ जागां। तद इयां कह्यौ—परा तौ म्हे नहीं जावां।—नैणसी

परैसूं—अव्य० [सं० पर+रा. प्र. सूं] उस ओर से, दूसरी ओर से।

उ०—सू ऐ ठहै गया वा परैसूं निबाब साथ कर सांमा आयौ। तठै वेढ हुई।—द.दा.

परोंणी—देखो 'परांणी' (रू.भे.)

परोंस—सं०स्त्री० [देशज] फसल या घास काटते समय एक साथ व एक बार में काटने के लिए लिया हुआ भाग।

परोक्ष—सं०पु० [सं०] १ अनुपस्थिति।

२ अभाव।

३ छिपाव।

परोजन—सं०पु० [देशज] १ अग्रवाल जाति में पहला पुत्र उत्पन्न होने पर अदा किया जाने वाला एक संस्कार (मा.म.)

२ देखो 'प्रयोजन' (रू.भे.)

परोजौ—देखो 'फिरोजौ' (रू.भे.)

उ०—अघळ परोजा नीलवी, मुक्ताफळ ता मांहि। लसत हसत से लसणिया, सोभा कही न जाहि।—गजउद्धार

परोटणौ, परोटबौ—क्रि०स० [देशज] १ उपभोग करना, इस्तेमाल करना।

उ०—वौ हार नै फेर वर्क करतौ कैवण लागौ—म्हैं लायोड़ी चीज नै म्हारै वास्तै नीं परोटणी चावूं।—फुलवाड़ी

२ निभाना।

३ सम्हालना।

४ सुधारना।

५ देखभाल करना, हिफाजत करना।

परोटणहार, हारौ (हारी), परोटणियौ—वि०।

परोटिग्रोड़ौ, परोटियोड़ौ, परोटयोड़ौ—भू०का०कृ०।

परोटीजणौ, परोटीजबौ—कर्म वा०।

परोटियोड़ौ—भू०का०कृ०—१ उपभोग या इस्तेमाल किया हुआ।

२ निभाया हुआ।

३ सम्हाला हुआ।

४ सुधारा हुआ।

५ देखभाल या हिफाजत किया हुआ।

(स्त्री० परोटियोड़ी)

परोणियौ—देखो 'परांणी' (अल्पा., रू.भे.)

परोत्तर—देखो 'प्रत्युत्तर' (रू.भे.)

उ०—उत्तर परोत्तर किया घणा रे, बाप बेटा नै माय।

—जयवांणी

परोपंखी—सं०पु०—वह घोड़ा जिसका रंग काला और नीले रंग का हो या भस्म के रंग का। इसे अशुभ मानते हैं (शा.हो.)

परोपकार—सं०पु० [सं०] दूसरों के हित का कार्य, दूसरे की भलाई।

रू०भे०—परउपकार, परउपगार, पराउपगार, परोपगार।

परोपकारक—सं०पु० [सं०] दूसरे का भला करने वाला, दूसरे का हितैषी।

रू०भे०—परउपकारक, परउपगारक, परोपगारक।

परोपकारी—सं०पु० [सं० परोपकारिन्] (स्त्री० परोपकारण, परोपकारिणी) दूसरे का भला करने वाला।

रू०भे०—परउपकारी, परउपगारी, परोपगारी।

परोपगार—देखो 'परोपकार' (रू.भे.)

परोपगारक—देखो 'परोपकारक' (रू.भे.)

परोपगारी—देखो 'परोपकारी' (रू.भे.)

(स्त्री० परोपगारण, परोपगारणी)

परोफेसर—देखो 'प्रोफेसर' (रू.भे.)

परोसगारौ—देखो 'पुरसगारौ' (रू.भे.)

परोसगारौ—देखो 'पुरसगारौ' (रू.भे.)

परोसणौ, परोसबौ—देखो 'पुरसणौ, पुरसबौ' (रू.भे.)

उ०—खीर खांड रौ थनै थाळ परोसूं, थारी सोने चांच मंढाऊं रे! कागा, कद म्हारौ मारूजी घर आवै।—लो.गी.

परोसणहार, हारौ (हारी), परोसणियौ—वि०।

परोसाड़णौ, परोसाड़बौ, परोसाणौ, परोसाबौ, परोसावणौ, परोसावबौ—प्रे०रू०।

परोसिग्रोड़ौ, परोसियोड़ौ, परोस्योड़ौ—भू०का०कृ०।

परोसीजणौ, परोसीजबौ—कर्म वा०।

परोसियोड़ौ—देखो 'पुरसियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० परोसियोड़ी)

परोहन—सं०पु० [सं० प्ररोहणं] १ नाव, नौका।

उ०—पिंड परोहन सिंधु जळ, भव सागर संसार। राम बिनां सूझै नहीं, दादू खेवणहार।—दादूबांणी

२ वह वस्तु जिस पर सवार होकर यात्रा की जाय।

परी-वि० (स्त्री० परी) निश्चय एवं पूर्णताबोधक शब्द जो सदैव क्रिया से संबंधित रहता है। उ०—१ राती वाहो भाटिए देश रो विचार कियो, सु भाटी नरसिंघदास देवीदासोत परो काढियो थो।

—नैणसी

उ०—२ चपळा गत चूंबीह, परी गई अपछर परै। आय आंगण ऊभीह, कमळादे नर वेखियां।—पा.प्र.

सं०पु० (स्त्री० परी) १ मृत पूर्वजों में वह व्यक्ति जो देव मान कर कुटुम्बियों द्वारा पूजा जाता है।

वि०वि०—यह एक प्रचलित अंध विश्वास है कि मृत पूर्वज पुरखा उसी परिवार के सदस्यों में किसी एक को या सब को नाना विध दैहिक एवं दैनिक कष्ट देता है। इस कष्ट से भयभीत होकर परिवार के सदस्य उसे देव मान कर पूजते हैं।

२ पितर।

रू०भे०—परहो।

परयाय-सं०पु० [सं० पर्याय] १ द्रव्य और गुणों में रहने वाली अवस्था (जैन) उ०—म्हे ढीला पड़ गया हां तो ही मांनां एक दांणा में च्यार परयाय च्यार प्रांण ते खुवाया पुण्य किम हुसी।

—भि.द्र.

२ ऐसे शब्द जो सदैव परस्पर एक ही पदार्थ, जाति, गुण, व्यक्ति और भाव का बोध कराते हों। समानार्थक शब्द।

रू०भे०—परयाय, परियाय।

परयूसण—देखो 'परयूसण' (रू.भे.)

उ०—भलइ आये परयूसण परव री, भलइ आये।—स.कु.

पलंक—देखो 'पलंग' (रू.भे.)

उ०—उचाट काट नो निराट, पाट ओढणी नहीं। बिलोक बंक लंक दे पलंक पोढणी नहीं।—ऊ.का.

पलंकसा-सं०स्त्री० [सं० पलंकषा] १ लाख, लाक्षा (डि.को.)

२ गूगल (डि.को.)

३ गोखरू।

पलंग—१ देखो 'पल्यंक' (रू.भे.)

उ०—हे ओरा तो मांय ए जच्चा रांणी रे, हे! ओवरो ए जठै राती सो पलंग बिछाय म्हांने घणी ए सुहावै जच्चा पीपळी।

—लो.गी.

क्रि०प्र०—ढाळणो, बिछाणो।

मुहा०—१ पलंग पकड़णो—बीमार होकर बिस्तरे पर पड़ जाना।

२ पलंग तोड़णो—बिना कोई काम किए सोए रहना, निठल्ला रहना।

२ प्लव गति। उ०—नृत पलंग रुच लावै नूपुर। उरप तिरप जंग बाजी ऊपर।—सू.प्र.

३ एक प्रकार का शुभ रंग का घोड़ा (शा.हो.)

पलंगतोड़-वि०—निकम्मा, निठल्ला।

सं०स्त्री०—एक औषधि विशेष। इसका प्रयोग स्तम्भन हेतु किया जाता है।

पलंगपोस-सं०पु० [सं० पल्यंक+फा० पोस] पलंग पर बिछाने की चादर।

पलंगि—देखो 'पल्यंक' (रू.भे.)

उ०—तूठै हार अपार तुरंगम, पहुतटि मांग अनंग पड़ी। कमधज 'रतनै' स्यूं विसकामणि, चाचरि चवरंग पलंगि चढ़ी।

—रतनसिंघ राठोड़ री वेलि

पलंडु—देखो 'पलांडु' (रू.भे.)

पलंब—१ देखो 'प्वलंग' (रू.भे.)

उ०—डांणां किरि पाउ पलंब डहै। बाजिद्रक वेग विवांण वहै।

—गु.रू.बं.

२ देखो 'प्रलंब' (रू.भे.)

उ०—हेक दिन पलंब नुं आगळी हारियो। मुकंद मामो भलो मथुरा मां मारियो।—पी ग्रं.

पलंवंग—देखो 'प्लवंग' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पळ, पल-सं०पु० [सं० पल] १ मांस।

उ०—पळ आस उरध ढक गिरध पंख। सर तीर पूर रव नर असंख।

—रा.रू.

२ समय का एक बहुत प्राचीन विभाग जो २४ सैकिण्ड के बराबर होता है। उ०—पल-पल में कर प्यार, पल पल में पलटै परा। वे मतळब रा यार, रहै न छांनां राजिया।

—किरपाराम

रू०भे०—पल्ल, पिल्ल, पुलक, प्रल।

सं०स्त्री० [सं० पलक] ३ आंखों की पलक, दृगंचल।

मुहा०—१ पल उगाड़णी—आंखें खोलना।

२ पल झपणी—नींद आना, सोना।

३ पल मारणी—बहुत जल्दी करना।

४ पल लागणी—नींद आना, सोना।

रू०भे०—पल्ल।

पलक-सं०स्त्री० [सं० पल+क] १ क्षण, पल।

उ०—१ पलक निमिक मत पांतरै। दाखै दीनदयाळ।—ह.र.

उ०—२ प्यारा थांसूं पलक ही, वांछूं नहीं वियोग। उर वसिया मुहि आवज्यो, रसिया थांरो रोग।—ऊ का.

मुहा०—१ पलकदरिया—बड़ा दानी, उदार।

२ पलकनिवाज—शीघ्र प्रसन्न होने वाला।

२ आंख के ऊपर का चमड़े का परदा।

उ०—१ वरमाळा लै कंठि बणावै। पलक खुलो तद त्रिया न पावै।

—सू.प्र.

उ०—२ सासा सणकावै नासा निरतावै। जीता मरिया जुग भिभरो भररावै। पल पल पलकां सूं पड़ता परनाळा। मोटा मूंगां री होठां में माळा।—ऊ.का.

मुहा०—१ पलक उगड़णी—आंख खुलना।
२ पलक झंपणी—बहुत कम समय, थोड़ा सा सोना।
३ पलक पसीजणी—आंखों में आंसू आना।
४ पलक बिछाणी—अत्यन्त प्रेम से स्वागत करना।
५ पलक मारणी—अति शीघ्र, आंखों से इशारे करना।
६ पलक लगणी—नींद लेना, सोना।
७ पलकां में काढ़णी—बिल्कुल न सोना।

३ चमक, दमक।
४ पाडल नामक वृक्ष (अ०मा०)
रू०भे०—पलक्क।

पळकणो, पळकबो, पलकणो, पलकबो—क्रि०अ० [देशज] चमकना, टिमकना।
उ०—भंवरियो फुरणी में भंवराळो भळकै। पाधर बहती रा पसवाड़ा पळकै।—ऊ.का.
पळकणहार, हारो (हारी), पळकणियो—वि०
पळकिग्रोड़ो, पळकियोड़ो, पळक्योड़ो—भू०का०कृ०
पळकीजणो, पळकीजबो—भाव०वा०

पळकाणो, पळकाबो, पलकाणो, पलकाबो—क्रि०स० [देशज] चमकाना, टिमकाना।
उ०—खोटी खोडी रा गोळा गळगाता। पीळी कोडी रा डोळा पळकाता।—ऊ.का.
पळकाणहार, हारो (हारी), पळकाणियो—वि०।
पळकायोड़ो—भू०का०कृ०।
पळकाईजणो, पळकाईजबो—कर्म०वा०।

पळकायोड़ो—भू०का०कृ०—चमकाया हुआ।
(स्त्री० पळकायोड़ी)

पलकारणो, पलकारबो—क्रि०स०—टपकाना, गिराना।
उ०—लोरां लै लूरां मोरां ललकारै। पांसू पड़ियोड़ा आंसू पलकारै।
—ऊ.का.
पलकारणहार, हारो (हारी), पलकारणियो—वि०।
पलकारिग्रोड़ो, पलकारियोड़ो, पलकारयोड़ो—भू०का०कृ०।
पलकारीजणो, पलकारीजबो—कर्म वा०।

पलकारियोड़ो—टपकाया हुआ, गिराया हुआ।
(स्त्री० पलकारियोड़ी)

पळकाळ—देखो 'परकार' (रू.भे.)

पळकावणो, पळकावबो—देखो 'पळकाणो, पळकाबो' (रू.भे.)
पळकावणहार, हारो (हारी), पळकावणियो—वि०।
पळकाविग्रोड़ो, पळकावियोड़ो, पळकाव्योड़ो—भू०का०कृ०।
पळकावीजणो, पळकावीजबो—कर्म वा०।

पळकावियोड़ो—देखो 'पळकायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पळकावियोड़ी)

पळकियोड़ो—भू०का०कृ०—चमका हुआ।
(स्त्री० पळकियोड़ी)

पळको—सं०पु० [देशज] चमक।
उ०—घणस्याम सरूप अनूप घणो रे। तड़ता पळको पटपीत तणो रे।—र.ज.प्र.

पलक्क—देखो 'पलक' (रू.भे.)
उ०—आवधां छाकिया झड़ै, पलक्कां ग्रंबाळा आवै। रवताळा पैला झोक खावै आकारीठ।—उमेदसी सांदू

पलखद्वीप—सं०पु० [सं० प्लवक्ष द्वीप] पुराणानुसार पृथ्वी के सात बड़े खण्डों में से एक।

पळगांण—सं०पु०—पक्षी।

पलड़ो—सं०पु०—१ तराजू का पल्ला, तुलापट।
२ झूला का मंच जिस पर बैठ कर झोंका खाया जाता है।
रू०भे०—पालड़ो।
मह०—पल्लड़।

पळचर, पळचार, पळचारी, पळचारो, पळच्चर—सं०पु० [सं०पल+चर]
१ मांसाहारी पक्षी या पशु।
उ०—१ खुलत रिख नयण सुण पंख पळचर खरर।—र.ज.प्र.
उ०—२ गिळ धापै पळचर मंस गाळ। खळकिया घणा रुधराळ खाळ।—सू.प्र.
उ०—३ गळ भार लिये पळचार ग्रीध। पतधार सगत भर रुधर पीध।—वि.सं.
उ०—४ पळचार आस पूरूं प्रगट, चित उछाह इसड़ो चहे।—सू.प्र.
उ०—५ नीहसांण दहूं दिस नीधसियं। हरखै पळचारी मनै हसियं।
—पा.प्र.
रू०भे०—पळळचर।
२ राजपूतों की कथाओं में वर्णित रक्तप्रिय एक देवता।
उ०—१ पळचार हूर अप्छर सकळ, भूत प्रेत जंगमजती। नर नाग देव यम उच्चरत, जुध जीत्यो पद्धरपती।—ला.रा.
उ०—२ पळच्चर साकणि डाकणि प्रेत। खुधावंत अवल लिए रण खेत।—वचनिका
रू०भे०—पळांचार।

पलट—सं०स्त्री०[देशज] १ धोती की वह पलट जो कमर पर रहती है, अंटी।
उ०—अर बीजो खीवै री पलट माहे मींगणो मूकै अर ईंडो लै।
—चौवोली
२ धोती को घुटनों से ऊपर लेकर व कमर में टांग कर बनाया गया झोला।

पलटण-सं०स्त्री० [अं० बटालियन, फा० बटेलन] १ पैदल सेना का वह विभाग जिसमें दो या अधिक कंपनियां अर्थात् २०० के लगभग सैनिक होते हैं।

उ०—कायमखां कपतांन से करि बातें चब्बी। सेख इनायत खांन के भुज पलटण छब्बी।—ला.रा.

२ दल, समुदाय, झुण्ड।

रू०भे०—पलट्टण, पल्टण, पल्टन।

पलटणो, पलटबो-क्रि०अ० [सं० प्रलोठन, प्रा० पलोठन] १ किसी वस्तु की स्थिति बदल जाना, उलट जाना।

२ मुकरना, कह कर नट जाना।

उ०—पलटियो नहीं ग्रहियां पलो, सत हरचंद बिरदां सधे।—सू.प्र.

३ छूट जाना, अधिकार से हट जाना।

उ०—१ बैर महीं तोटो बसै, बसै नफो नह 'बंक'। सिया विरह राघव सह्यो, रावण पलटी लंक।—बां.दा.

उ०—२ तात मात मोसाळ तक, सूरां साख संसार। पलटै गढ़ ऊभा पगां, (म्हारो) लाजै पीहर लार।—लछमीदांन बारहठ

४ रुख बदलना, विरुद्ध होना।

उ०—१ मैं कीधो तूं मीत, जोए लाखां में 'जसा'। पलटै क्यूं हिव मीत, पलट्या सोभ न पाइजै।—जसराज

उ०—२ पल-पल में कर प्यार, पल-पल में पलटै परा। ऐ मतलब रा यार, रहै न छांना राजिया।—किरपाराम

५ लौटना, वापिस होना।

उ०—फळ अंगूर देखि द्रग फाटा, ताटा ऊंचा ताय। पलटी लूं की देय पळाटा, खाटा ऐ कुंण खाय।—ऊ.का.

६ अवस्था या दशा बदलना।

७ किसी वस्तु को बदलना।

उ०—भरइ पलट्टइ भीभरइ, मीभरि भी पलटेहि। ढाढ़ी हाथ संदेसड़ा, धण बिललंती देहि।—ढो मा.

८ किसी एक वस्तु के स्थान पर दूसरी वस्तु रखना।

९ किसी वस्तु की स्थिति बदल देना, ऊपर का नीचे या नीचे का ऊपर करना।

१० किसी वस्तु का रूप परिवर्तन कर देना।

उ०—विध विध आभूखण जवाहर, लख बगसे जस सुद्रढ़ लियौ। खिला सार पलटै अंग सुकवि, कमंध रुकमकर रुकम कियौ।
—मानजी लाळस

११ लौटाना या फेरना।

१२ घुमाना, मोड़ना।

पलटणहार, हारो (हारी), पलटणियो—वि०।

पलटवाड़णो, पलटवाड़बो, पलटवाणो, पलटवाबो, पलटवावणो, पलटवावबो—प्रे०रू०।

पलटाड़णो, पलटाड़बो, पलटाणो, पलटाबो, पलटावणो, पलटावबो
—सक०रू०

पलटिओड़ो, पलटियोड़ो, पलटयोड़ो—भू०का०कृ०।

पलटीजणो, पलटीजबो—भाव वा०, कर्म०वा०।

पलट्टणो, पलट्टबो, पालोटणो, पालोटबो—रू०भे०।

पलटाड़णो, पलटाड़बो—देखो 'पलटाणो, पलटाबो' (रू.भे.)

पलटाड़ियोड़ो—देखो 'पलटायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पलटाड़ियोड़ी)

पलटाणो, पलटाबो-क्रि०स० [पलटणो क्रि.काप्रे.रू.] १ किसी वस्तु की स्थिति बदलना, उलटवाना।

२ मुकरवाना, कहला कर नाही कराना।

३ अदलाबदली कराना।

४ रुख बदलवाना।

५ लौटाना।

६ मुड़ाना, घुमाना।

७ अवस्था या दशा बदलवाना।

८ किसी वस्तु को बदलवाना।

९ किसी एक के स्थान पर दूसरी वस्तु रखवाना।

१० किसी वस्तु का रूप परिवर्तन कराना।

पलटाणहार, हारो (हारी), पलटाणियो—वि०।

पलटायोड़ो—भू०का०कृ०।

पलटाईजणो, पलटाईजबो—कर्म वा०।

पलटायोड़ो-भू०का०कृ०—१ किसी वस्तु की स्थिति बदलवाया हुआ, उलटवाया हुआ।

२ मुकरवाया हुआ, कहला कर नाहीं कराया हुआ।

३ अदला-बदली कराया हुआ।

४ रुख बदलवाया हुआ।

५ लौटाया हुआ।

६ मोड़ा हुआ, घुमाया हुआ।

७ अवस्था या दशा बदलवाया हुआ।

८ किसी पदार्थ में बदलवाया हुआ।

९ किसी एक पदार्थ के स्थान पर दूसरा पदार्थ रखवाया हुआ।

१० किसी वस्तु का रूप-परिवर्तन कराया हुआ।

(स्त्री० पलटायोड़ी)

पलटाव-सं०पु० [देशज] परिवर्तन। उ०—कळजुग रो मांनै कहर बिजनस लागै वाव। रिखां कह्यौ इण देह रो, परत करां पलटाव।
—मयारांम दरजी री बात

पलटावणो, पलटावबो—देखो 'पलटाणो, पलटाबो' (रू.भे.)

पलटावणहार, हारो (हारी), पलटावणियो—वि०।

पलटाविओड़ो, पलटावियोड़ो, पलटाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पलटावीजणो, पलटावीजबो—कर्म वा०।

पलटावियोड़ो—देखो 'पलटायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पलटावियोड़ी)

पलटियोड़ो-भू०का०कृ०—१ किसी पदार्थ की स्थिति बदला हुआ, उलटा हुआ।
२ मुकरा हुआ, कह कर नाहीं किया हुआ।
३ अदला-बदली किया हुआ।
रू०भे०—पलटियोड़ो।
४ रुख बदला हुआ।
५ लौटा हुआ, वापिस आया हुआ।
६ मुड़ा हुआ, घूमा हुआ।
७ अवस्था या दशा बदला हुआ।
८ किसी पदार्थ में बदला हुआ।
९ किसी एक पदार्थ के स्थान पर दूसरा पदार्थ रखा हुआ।
१० किसी वस्तु का रूप-परिवर्तन किया हुआ।
(स्त्री० पलटियोड़ी)

पलटी-सं०स्त्री० [सं० प्रलोठनम्] स्थानान्तर, बदली, ट्रांसफर।
उ०—रोकां तो किण विध रुकै, पलटी हुकमां पाय। उदयापुर निरधन हुवो, 'दोलत' जयपुर जाय।—नाथूसिंह महियारियो
मह०—पलटो।

पलटो-सं०पु० [सं० प्रलोठन] १ परिवर्तन।
उ०—कवी कहै अबै जगत पर समै पलटो खायो। विसधर व्याकरण सूं घरोह हुवो।—बी.स.टी.
२ चक्कर, घुमाव।
३ प्रतिशोध, बदला।
४ लोहे का बड़ा खुरचना जो बड़ी कड़ाही में पकवान बनाते समय हिलाने के काम आता है।
५ देखो 'पलटौ' (मह., रू.भे.)
रू०भे०—पल्टो।

पलट्टण—देखो 'पलटण' (रू.भे.)
उ०—चूंड राव रिणमल्ल, राउ जोधो रढरांमण। 'सूजो', 'वाघो', 'गंगेव', 'माल' गढ कोट पलट्टण।—गु.रू.वं

पलट्टणो, पलट्टबो—देखो 'पलटणो, पलटबो' (रू.भे.)
उ०—१ वड चोक लोक संकत वहै, खांति रहै नह खट्टणै। दीपै न तूर दरगाह में, आगम साह पलट्टणै।—रा.रू.
उ०—२ ऊभा 'कूंपै' मेड़तै न घटै जेण किणो आधा, 'कूंपो' पाडां मेड़तै पलट्टै मालकोट।—महेसदास कूंपावत री गीत

पलट्टियोड़ो—देखो 'पलटियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पलट्टियोड़ी)

पळणो—देखो 'पाळणो', (रू.भे.)

पलणो—देखो 'पालणो' (रू भे.)

पळणो, पळबो, पलणो, पलबो-क्रि०अ० [सं० पालनम्] १ परवरिश पाना, आश्रय पाना। उ०—१ चीतारंतो चुगतिया, कुंझी रोवहियांह। दुरा हुंता तउ पळइ, जऊ न मेल्है हियांह।—ढो.मा.
उ०—२ दांणा-पांणी री कीं जुगत कोनीं। मां होय नै म्हैं आपरा जाया नै पाळ नीं सकूं। आपरै आसरै लाखूं जीव पळै है।
—फुलवाड़ी
२ निभना, निभाया जाना। उ०—१ केई इम कहै, हिवड़ा पांचमो आरो है। पूरो साधोपणो पलै नहीं।—भि.द्र.
उ०—२ जद स्वामीजी बोल्या—थांरा वचावणा रह्या, थें मारणोई छोडो। अंधारी रात्रि में किंवाड़ जड़ो हो। अनेक जीव मरै है। किंवाड़ जड़वा रा सूंस करो तो अनेक जीवां री दया पलै।—भी.द्र.
पळणहार, हारो (हारी), पळणियो—वि०।
पळवाड़णो, पळवाड़बो, पळवाणो, पळवाबो, पळवावणो, पळवावबो, पळाड़णो पळाड़बो, पळाणो, पळाबो, पळावणो, पळावबो—प्रे०रू०।
पळिओड़ो, पळियोड़ो, पळ्योड़ो—भू०का०कृ०।
पळीजणो, पळीजबो—भाव वा०।
पाळणो, पाळबो—सक० रू०।

पलणो, पलबो-क्रि०अ० [सं० पलायनम्] १ भागना, भाग जाना।
उ०—भाखर का पांणी ज्यूं वाटका दांणी ज्यूं, छेह मतो छाडो, थोड़ो सो मन करो गाडो, झालो वागां खड़ो, थोड़ा रहो झलीया। पिण थांमै किसो दोस, थांकै संगी पलिया।
—मयाराम दरजी री वात
[सं० पल] २ अड़ना, हट जाना, हटना। उ०—पलतो कर हाकळ मांड पगं। विण छोत मिटै नह सूर वगं।—पा.प्र.
३ मिटना, मिट जाना। उ०—सैंदा इदा सांमुहो, यों चढतां 'अभसाह'। 'हुसनअली' उर हरखियो, सब दळ पलो सदाह।—रा.रू.
४ रोका जाना।
पलणहार, हारो (हारी), पलणियो—वि०।
पलवाड़णो, पलवाड़बो, पलवाणो, पलवाबो, पलवावणो, पलवावबो, पलाड़णो, पलाड़बो पलाणो, पलाबो, पलावणो, पलावबो—प्रे०रू०।
पलिओड़ो, पलियोड़ो, पल्योड़ो—भू०का०कृ०।
पलीजणो, पलीजबो—भाव वा०।
पालणो, पालबो।—सक.रू.

पलथी—देखो 'पालथी' (रू.भे.)

पळपळाट-सं०पु० [सं० पल्लवम्] १ चमचमाहट।
उ०—१ सामी बैठा लोगां रा मूढा झाळ री लपटां सूं पळपळाट करै जांणै नाडी रा पांणी माथै सूरज री।—फुलवाड़ी
उ०—२ एक सिपाई खोखाळ में झांकियो तो सामी हार पड़ियो पळपळाटा करै।—फुलवाड़ी
२ नटखटपन, चंचलता।
३ दुष्टता, नीचता।

पळपळाणो, पळपळाबो-क्रि०अ० [अनु०] १ चमचमाना, चमकना।
उ०—१ पळपळाता अणियाळा भाला नै राजा काळजै मारण सारू हाथ उठायो तो पाखती रा रूंख मांयै बैठी टीलोड़ी कह्यो—राजा आप घाती महापापी।—फुलवाड़ी

उ०—२ पछै पळपळातो पाचणो सांमी करनै कैवण लागो—इण पाचणां सूं थारो काळजो चीरीजे ।—फुलवाड़ी

२ आभायुक्त होना ।

उ०—१ नायण रा डील माथै पळपळातो सोनो देखनै वांरै काळजै झाळ झाळ ऊठी ।—फुलवाड़ी

उ०—२ वो मन में जाणियो के ओ पळपळातो हिरण अकेलो खावूं तो बात बणै ।—फुलवाड़ी

रू०भे०—पळपळावणो, पळपळाववो ।

पळपळायोड़ो-भू०का०कृ०—१ चमका हुआ, चमचमाट करता हुआ ।

२ आभायुक्त हुवा हुआ ।

(स्त्री० पळपळायोड़ी)

पळपळावणो, पळपळावबो—देखो 'पळपळाणो, पळपळाबो' (रू.भे.)

उ०—बादळा गाजण लाग्या । बीजळियां कड़कड़ाट करती पळपळावण लागी । मोटी-मोटी छांटां रो मेह ओसरियो ।

—फुलवाड़ी

पलबंग—देखो 'प्लवंग' (रू.भे.)

पळभक्षी, पळभच्छ-वि० [सं० पलम्+भक्षी] मांसाहारी ।

उ०—अकबर मैंगळ अच्छ मांझळ दळ घूमै मसत । पंचानन पळभच्छ, पटके छरा 'प्रतापसी' ।—दुरसो आढो

पलमादार-स०पु० [?] हाथ का आभूषण ।

उ०—तरै जांबोती कपड़ा आछा पहिर पलमादार गुजराती गैंहणा पहिरचा, रथ जूतरचो जलूसदार ।

—जगदेव पंवार री बात

पलमो-सं०पु०[देशज] भेद, रहस्य । उ०—एक जणो बोलियो—मालकां केई रो पलमो नहीं गुमावणो जोयीजै । धोती में सैं नागा रैवै है ।

—वरसगांठ

पलल-सं०पु० [सं० पलम्] मांस (डिं.को)

पळळाट, पळळाटो-सं०पु०—चमक, चमचमाहट ।

उ०—रथ रा उण पळपळाटा में बांमणी नै एक अजीब हो झबको निगै आयो ।—फुलवाड़ी

पलवंग, पलवंगम—देखो 'प्लवंग' (रू भे.) (अ.मा.,नां.मा. ह.नां.मा.)

पलव-वि० [सं० पलवम्] १ चंचल (अ.मा.)

२ देखो 'पल्लव' (रू.भे.)

उ०—ऊपरि पद-पलव पुनरभव ओपति । निमळ कमळ दळ ऊपरि नीर ।—वेलि

पलवकर-सं०पु० [सं० पल्लवकर] हाथ की अंगुली (अ.मा.)

पलवक्ष-सं०पु० [सं०] सिंह (अ.मा.)

पलवग—देखो 'प्लवग' (रू.भे.) (नां.मा.)

पलवट-सं०स्त्री०—कमर, कटि । उ०—१ भाला अणियां मळक जगी आगळ जांमकियां । सिंहरूप सांवळा कसी पलवट में रखियां ।

—पा.प्र.

उ०—२ ताहरां खींवै जांघीयो पहिरी पलवट कसि नै कांचर चार पलट मांहि कसि नै पीपळ जाय चढीयो ।—चौबोली

पलवसु-स०पु० [सं० पल्लवसू] नाखून (ह नां.मा.)

पलवाड़ो-स०पु०—पीछे का भाग, पृष्ठ भाग ।

उ०—खूरम खरवै खळक निभ्रोठो । किरि पलवाड़ै सांड पईठो ।

—गु रू.बं.

पलवेटणो, पलवेटबो

उ०—एक अट्टाळइ ऊतरइ, उंची-थिकी आवासि । पलइ वलइ पलवेठियां, मन सुद्धि माधव-पासि ।—मा.कां.प्र.

पळसेटी-क्रि०वि० [?] तेजी से, वेगपूर्वक ।

उ०—लूंकै वहतै होज तरवार वाही । इसड़ी पळसेटी पसवाड़ै हुयनै वुही, धड़ सां माथो अळगो जाय पड़ियो ।—नैणसी

रू०भे०—पाळसेट ।

पलस्तर-सं०पु०—देखो 'पलास्टर' (रू.भे)

पलस्तरकारी-सं०स्त्री० [अं० प्लास्टर+सं०कारी] पलस्तर करने का कार्य या भाव ।

पळहारी-सं०पु० [सं० पल=मांस+आहारी] मांसाहारी ।

उ०—हेकठा हुआ बळि तणै हेत । पळहारी वेंतर भूत प्रेत ।

—गु रू बं.

पलां-सं०स्त्री० [?] संगीत में बाजों के कुछ बोलों का क्रमबद्ध मिलान।

उ०—१ ढोलण ढोली सूं कहै, पलां उतावळ माह । भीड़ै वाह दुवाह चर, भीड़ै नाह सनाह ।—वी.स.

उ०—२ ए ढोलण ढोली नूं कहै इतरी ढोल री पलां (ढोल री पोह वा गत) में इतरो क्यूं ताकीद करै। जोधार तो आप रा बाहु नै चर चरवादार मालक रो घोड़ो सझै छै ।—वी.स.टी.

पळांचर—देखो 'पळचर' (रू.भे.)

उ०—घटा छाजै गैघड़ा नगारां बाजै वीर-घोर, उठै पै तोखारां रजी मैं न है अछेह । 'चूंडा'-हरो ऊपटेस छोह तूंगे पळांचरा, माथै मारहठां वूठो लोह-धारां मेह ।—हुकमीचंद खिड़ियो

पलांडु-सं०पु० [सं०] प्याज ।

रू०भे०—पलंडु ।

पलांण-सं०पु० [सं० पल्ययनम्] १ ऊंट का चारजामा, ऊंट की जीन (मारवाड़)

उ०—ढोलउ करहउ सज कियउ, कसबी घाति पलांण । सोवन-बांनी घूघरा, चालण रइ परियांण ।—ढो.मा.

२ ऊंट पर बोझ लदने के लिए विशेष प्रकार की बनावट का चारजामा (शेखावाटी)

वि०वि०—देखो 'मारपलांण' ।

रू०भे०—पल्लाण, पल्हांण, पिलांण ।

अल्पा०—पलांणड़ो, पलाणियो, पलांणो, पिलांणड़ो, पिलांणियो ।

३ कच्ची मिट्टी की दीवार को वर्षा के पानी से बचाने हेतु उस पर की जाने वाली घास-फूस की छाजन ।

पलांणड़ो—देखो 'पलाण' (अल्पा; रू.भे.)

पलांणणो, पलांणबो–क्रि०स० [सं० पल्लयनम्] ऊंट पर चारजामा कसना, जीन कसना।

उ०—ढोलइ करह पलांणिया, सुंदरी सलूणी कज्ज। प्री मारुवणी सांम्हउ, म्हां उपराठउ अज्ज।—ढो.मा.

पलांणणहार, हारो (हारी), पलांणणियो—वि०

पलांणिग्रोड़ो, पलांणियोड़ो, पलांण्योड़ो—भू०का०कृ०

पलांणीजणो, पलांणीजबो—कर्म वा०

पल्लांणणो, पल्लांणबो, पल्हांणणो, पल्हांणबो, पिलांणणो, पिलांणबो —रू.भे.

पलांणियोड़ो–भू०का०कृ०—जीन कसा हुआ (ऊंट)

(स्त्री० पलांणियोड़ी)

पलांणियो—१ अर्द्धवृत्ताकार एक प्रकार का उपकरण विशेष जो हल जोतते समय ऊंट की पीठ पर कसा जाता है, इसका दूसरा नाम 'कुंठाळियो' भी है (शेखावाटी)

२ देखो 'पलाण' (अल्पा० रू.भे)

पलांणी–सं०स्त्री०—देखो 'पलाण' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—सो आदमियां मांहां कर सांवत राय रै बरछी री दीवी सु पेट फाड़ पलांणी भांज घोड़े रा मोर भांज काछ में जावती मुड-हाथ नीसरी सो ऊपरै री ऊपरै सीफ गयी।—पदमसिंह री बात

पळा—देखो 'बलाय' (रू.भे.)

पळा'—देखो 'पळास' (रू.भे.)

पला–सं०पु० [सं० पल्लव=कपड़े का छोर] (ब.व.) किसी वृद्ध पुरुष या स्त्री की मृत्यु पर रुदन करते हुए गाया जाने वाला शोकसूचक गायन।

क्रि०प्र०—लैणा।

[सं० पलायनम्] भागना।

उ०—मुख जोवइ दीवाधरी, पाछउ करहि पला·ह। मारू दीठी सास विण, मोटी मेल्हइ धाह।—ढो.मा.

पलाऊ–सं०पु० [देशज] रोकने वाला, मना करने वाला (शकुन)

उ०—अत मंगळ व्याव विनोद ओ ए। हव सांण पलाउ ए केम हुए। —पा.प्र.

पळाक, पळाको–सं०पु० [देशज] चमक।

उ०—आज ई वेटो हट झेलो के मा म्हनै काल सुणाई जिसी कोई चोखी सी कां'णी सुणा जिणमें तलवारां चमकै पळाक पळाक अर बंदूकां छूटै धड़ांम धड़ांम।—रातवासो

पळाटो–सं०पु० [?] चक्कर, फेरी ?

उ०—फळ अंगूर देखि द्रग फाटा, ताटा ऊंचा ताय। पलटी लूंकी देय पळाटा, खाटा ए कुण खाय।—ऊ.का.

पलाणो, पलाबो–क्रि०अ० [सं० पलायनम्] भाग जाना।

उ०—जरा भणइ 'तउ मइं हिव साति। पहिलउं दांत करइं जि पलाति'।—चिहुंगति चउपई

पलाथी—देखो 'पालथी' (रू.भे.)

उ०—मार पलाथी मींट लगावै, करै गजब का फैल। लोग दिखाऊ अन-जळ त्याग्यो, एक मखै बस पून।—डूंगजी जवारजी री पड़

पलाद–सं०पु० [सं०] मांसभक्षी, राक्षस।

उ०—कूप तिहां ते निरखि नै रे, जल पूरत ससुवाद। सहु निरयामक नै कहै रे, विरुग्रो तेह पलाद।—वि.कु.

पलादार—देखो 'पल्लेदार' (रू.भे.)

उ०—क्यों कवांणा कूंडळां पार खड़ैक पखालां। पलादार धड़हड़ै अनळ खळहळै बडाळां।—वखतो खिड़ियो

पळापळ–सं०पु० [देशज] १ चमाचम करने की क्रिया।

उ०—१ अेक जंगी मतवाळा हाथी रै लारै लक्खी विणजारा री सोनल रथ पळापळ करतो चालतो हो।—फुलवाड़ी

२ उक्त क्रिया से होने वाला प्रकाश।

उ०—मन री उमंगां रै साथै गिगन में भुरजाळा बादळ ई गरजण लागा। पळापळ करती बीजळियां चिमकण लागी।—फुलवाड़ी

पलायणो, पलायबो–क्रि०अ० [सं० पलायनम्] भाग जाना।

उ०—जिण बळी मेर बिना माथै चहुवांण रा केही सिपाहां रा प्रांणां री संघात छुडायो। इण रीति वीरां री संहार होतां प्रतिहार नाहरराज पलाय कढ़ियो।—वं.भा.

पलायन–सं०पु० [सं०] भागने की क्रिया या भाव।

पलायमान–वि० [सं० पलायमान] भागता हुआ, पलायन करता हुआ।

उ०—दिल्ली री कातर कटक पलायमांन थियो।—वं.भा.

पळायो–सं०पु० [देशज] वह व्यक्ति जो 'ल्हास' में काम करने में तो सम्मिलित न हो किन्तु भोजन में सम्मिलित होता हो।

रू०भे०—पळासियो, पलाहियो।

पलाल, पलालि–सं०पु० [सं०] १ घास, भूसा।

उ०—१ सरके जुड़ झांभर मेछ सही। जुध में धुज रैण पलाल जही। —रा.रू.

उ०—२ जवनां भड पुंज पलाल जही। मिळिया कर मारुत-चक्र मही। —रा.रू.

२ घास का ढेर।

उ०—नीछंटिया गोळा तंत्र नाळि। पावक्क जांणि पइठउ पलाळि। —गु.रू.वं.

पलालि–सं०पु० [सं०] मांस का ढेर।

पळावण–सं०पु० [देशज] गाय भैंस आदि का दूध दोहने के समय दूध के पात्र में लिया जाने वाला जल जिससे गाय भैंस के स्तन दोहने के पूर्व धो कर साफ किए जाते हैं।

रू०भे०—पळोवण।

पलावित—देखो 'प्लावित' (रू.भे.)

उ०—पसु निदांन निरोग, जिणां री दूध दुवाई। रतन तेरवो घिरत,

पलाविल विरुद वडाई ।—दसदेव

पळास—स०पु० [सं० पलाश] १ राक्षस, दुष्ट ।

उ०—ग्राडा डूंगर वन घणा, ग्राडा घणा पळास । सो साजण किम वीसरइ, बहुगुण तणा निवास ।—ढो.मा.

२ एक वृक्ष विशेष । उ०—निगरभर तरुवर सघण छांह निसि, पुहुपित ग्रति दीपगर पळास । मौरित ग्रंब रीफ रोमं चत, हरखि विकास कमळ कृत हास ।—वेलि

३ स्वर्णकारों का एक ग्रोजार विशेष ।

रू०भे०—पलासि, पाळास ।

ग्रल्पा०—पळासियौ ।

पळ सण—वि० [सं० पलम्+ग्रशन्] मांसभक्षी ।

उ०—पळासण ग्रग भखे भर पेट, मेळा उतमंग सदासिव भेंट ।
—मे.म.

पळासपापड़ौ—देखो 'पळासपापडौ' (ग्रल्पा., रू.भे.)

पळासपापड़ो—सं०पु० [रा० पळास+पापड+रा.प्र. ग्रो] पलास की फली जो ग्रौषध के काम ग्राती है ।

ग्रल्पा०—पळास-पापड़ौ ।

पळासि—वि० [सं० पलाशिन्] मांसाहारी । उ०—विद्या जोवा तीण पळासि, पहिलुं सिला रची ग्राकासि ।—पं.प.च.

पळासियौ—देखो 'पळास' (ग्रल्पा०, रू भे.)

उ०—ऊपर बरसात ग्रायी, तरै क्यूं ढाक पळासिया रा ग्रासरा किया छै ।—नैणसी

२ देखो 'पळायौ' (रू.भे.)

पलास्टर, पलास्तर [ग्रं० प्लास्टर] १ दीवार ग्रादि को सीधा ग्रौर सुडौल करने के लिए किया जाने वाला चूने, सीमेंट ग्रादि का लेव ।

२ हाथ पांव की हड्डी टूट जाने पर उक्त हड्डी को जोड़ने के लिए किया जाने वाला पट्टी के साथ चूने का लेप ।

रू०भे०—पलस्तर ।

पलाहियौ—देखो 'पळायौ' (रू.भे.)

पलिंग—देखो 'पलग' (रू भे.)

उ०—लाख दस लहै पलिंग, सोडि तीस लख सुणीजै । गाल मसूरिया सहस, सहस दोय गिंदूग्रां भणीजै ।—प.च.चौ.

पलिग्रोपम—देखो 'पल्योपम' (रू.भे.) (जैन)

पलित—वि० [सं०] १ वृद्ध, बूढ़ा ।

२ पका हुग्रा (बाल)

सं०पु०—१ बाल पकना ।

२ वैद्यक के ग्रनुसार एक रोग ।

पळियोड़ो—भू०का०कृ०—१ परवरिश पाया हुग्रा, ग्राश्रय पाया हुग्रा ।

२ निभाया हुग्रा, निभाया गया हुग्रा ।

(स्त्री० पळियोड़ी)

पलियोड़ो—भू०का०कृ०—१ भागा हुग्रा ।

२ ग्रड़ा हुग्रा, डटा हुग्रा ।

३ मिटा हुग्रा ।

४ रुका हुग्रा ।

(स्त्री० पलियोड़ी)

पलियो—सं०पु० [देशज] १ टाट का वह टुकड़ा जो पैर पोंछने हेतु दरवाजे की देहली पर डाल दिया जाता है । पायंदाज ।

२ टाट ग्रथवा वस्त्र का वह टुकड़ा जिसमें नाई मूंडे हुए बाल एकत्रित करता है ।

३ देखो 'पळी' (ग्रल्पा, रू.भे.)

पळियौ—देखो 'पळी' (ग्रल्पा., रू.भे.)

उ०—ग्रौरां नै तो मा पळिया पळियां ए खीर । मनै पळियौ मा, राब को जै ।—लो.गी.

पळींडो—देखो 'परींडो' (रू.भे)

पलींडो—देखो 'परींघो' (रू.भ.)

पळी, पली—सं०स्त्री० [देशज] १ घी तेल ग्रादि द्रव पदार्थ निकालने का लम्बी डांडी का धातु का (प्राय: लोहा) बना पात्र ।

उ०—ताहरां रावजी नागोर ग्राय नै पळी तोलायौ सु पचीस पइसा भर पळी हुवौ । ताहरां रावजी हुकम कियौ—घिरत भूंजाई में इयै पळी सो पुरसो ।—नैणसी

ग्रल्पा०—पळियौ ।

मह०—पळौ ।

[सं० पलित] २ सफेद बाल ।

उ०—सु एक दिन रावळ दूदो ग्रारीसो जोवतो थो—सु पळी १ दाढी मांहे दीठी तरै मूळराज रतनसी भेळो नेम लियो थो सु दूदा नूं नेम चीत ग्रायौ ।—नैणसी

[सं० पल्लि:, पल्ली] ३ मकान, झोंपड़ी (मेवाड़)

४ छोटा ग्राम (मेवाड़)

पळीचणो—देखो 'परीचणौ' (रू भे.)

पलीत—वि० [सं० प्रेत, फा० पलीद] १ कायर, डरपोक ।

उ०—तै लारैं तरवार रै, पायौ रजक पलीत । दीधौ खांवंद नूं दगौ, संत नहीं इण रीत ।—बां.दा.

२ मूरख, मूढ । उ० जसवंतजी वासो कीयो । तरै मांना करमसीयोत नुं एकण भाखरी माथै नगारौ देनै राखीयो थो । नै इण पलीत नुं कह्यो थो—मो नुं पाछौ ग्रायो देखनै ग्रठै हुं कहुं तरै नगारो देजै ।—राव मालदे री बात

३ ग्रालसी, निकम्मा । उ०—मावड़ियां मन मांझळी, सो गाडां भर सोत । की ऊंचो माथो करै, पड़िया रहै पलीत ।—बां दा.

४ मैला, गन्दा, ग्रपवित्र । उ०—पाळा भरै पलीत, मूत रा बैठा मांही । कोई कांम री कहूं, निलज सीख्यौ इक नांही ।—ऊ.का.

सं०पु०—१ नाश । उ०—देव पितर इण सूं डरै, रसक तरै किण रीत । हेम रजत पातर हरै, पातर करै पलीत ।—बां.दा.

२ असुर। उ०—पैंडां नीत रा चलाक घु छ च्यार मंज पलीत रा, सूर धीर चीत रा अछेह ओप संस।—र.ज.प्र.

३ प्रेत। उ०—निरवहइ व्रति रोजा निवाज, वंबळीवाळ के तवल-बाज। जब्बा पलीत मूगुल्ल जूह, सारवक जाणि बोलइ समूह।
—रा.ज.सी.

पलीती—देखो 'पलीतौ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—ईण भांत वात कहता तो बार लागै। रंजक जागी। कनां तोपखांना री ई क पलीती दागी। हर गोळा छूटो।
—प्रतापसिंघ म्हाकमसिंघ री वात

पलीतौ–स०पु० [फा० फतीत:] १ कोई यंत्र लिखकर बत्ती के आकार में लपेटा हुआ कागज। इस बत्ती की धूनी प्रेतग्रस्त को दी जाती है।

क्रि०प्र०—सुंघाणौ, सुळगाणौ।

२ बन्दूक अथवा तोप के रंजक में आग लगाने की वह बत्ती जो बररोह को कूट और बट कर बनाई जाती है।

क्रि०प्र०—दागणौ, देणौ, लगाणौ।

३ पनसाखे पर रखकर जलाई जाने वाली एक विशेष प्रकार की कपड़े की बत्ती।

अल्पा०—पलीती।

मह०—पलीत।

पलीथौ, पलीधौ–सं०पु० [देशज] मांस को पत्थर पर अत्यन्त महीन पीस कर मट्ठे के साथ बनाया जाने वाला एक प्रकार का सालन। इसे खट्टा बनाया जाता है।

उ०—तठा उपरांयत तीतर रौ मांस सिला ऊपर बांट पलीधौ कीजे छै।—रा.सा.सं.

पळूंड–सं०पु० [देशज] १ 'जेई' या 'वेई' नामक कृषि-उपकरण का हाथ से पकड़ने का लम्बा डंडा या बेंट। उ०—पीनणी भर पलूंड, ऊंखळी फिरूं किवाड़ां। ऊभी कील उखाड़, मेरणा जबर जुवाड़ा।
—दसदेव

पलूटा–सं०पु०—गायन का अलंकार।

पलूलौ–

उ०—आरावां धकोळा घोम बघूघळां खेह उडै, उडै आघोफरां झंडा दकुळां अफेर। रंगी ते पलूळां वेस खाथै जोस खळी राजा, साहूरां आवंळां दळां माथै समसेर।—हुकमीचंद खिडियो

पले'क–वि०— एक क्षण के लिए।

पलेग—देखो 'प्लेग' (रू.भे.)

पलेट–सं०स्त्री० [अं० प्लेट] १ लम्बी पट्टी, पटरी।

२ कच्चे लोहे की पत्ती जो रंदे में डाली जाती है और लकड़ी को चिकनी बनाने में मददगार होती है।

३ देखो 'प्लेट' (रू.भे.)

पळेटणौ, पळेटबौ–क्रि०स० [देशज] लपेटना।

उ०—चोर नै गिरियां सूं लेय नै ठेट गळा तक आंटां में पळेट दियौ।—फुलवाड़ी

पळेटणहार, हारौ (हारी), पळेटणियौ—वि०

पळेटाड़णौ पळेटाड़बौ, पळेटाणौ, पळेटाबौ, पळेटावणौ, पळेटावबौ
—प्रे०रू०।

पळेटिओड़ौ, पळेटियोड़ौ, पळेटयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पळेटीजणौ, पळेटीजबौ—कर्म०वा०।

पळेटफारम—देखो 'प्लेटफारम' (रू.भे.)

पळेटाड़णौ, पळेटाड़बौ—देखो 'पळेटाणौ, पळेटाबौ' (रू.भे.)

पळेटाड़णहार, हारौ (हारी), पळेटाड़णियौ—वि०

पळेटाड़िओड़ौ, पळेटाड़ियोड़ौ, पळेटाड़योड़ौ—भू०का०कृ०।

पळेटाड़ीजणौ, पळेटाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पळेटाड़ियोड़ौ—देखो 'पळेटायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पळेटाड़ियोड़ी)

पळेटाणौ, पळेटाबौ–क्रि०स० [पळेटणौ क्रि० का प्रे०रू०] लपेटवाना।

पळेटाणहार, हारौ (हारी), पळेटाणियौ—वि०।

पळेटायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पळेटाईजणौ, पळेटाईजबौ—कर्म वा०।

पळेटायोड़ौ–भू०का०कृ०—लपेटवाया हुआ।

(स्त्री० पळेटायोड़ी)

पळेटावणौ, पळेटावबौ—देखो 'पळेटाणौ, पळेटाबौ' (रू.भे.)

पळेटावणहार, हारौ (हारी), पळटावणियौ—वि०।

पळेटाविओड़ौ, पळेटावियोड़ौ, पळेटाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पळेटावीजणौ, पळेटावीजबौ—कर्म वा०।

पळेटावियोड़ौ—देखो 'पळेटायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पळेटावियोड़ी)

पलेटिनम—देखो 'प्लेटिनम' (रू.भे.)

पळेटियोड़ौ—भू०का०कृ०—लपेटा हुआ।

(स्त्री० पळेटियोड़ी)

पळेटौ–सं०पु० [देशज] १ आवेष्ठन, घेरा। उ०—दर कूंचां जाय दुरग रै, प्रतना रौ पळेटो दियौ। किनां सुमेरु परवत रै चौतरफ जवूदीप रौ मंडळ थियौ।—वं.भा.

२ विवाह मण्डप में यज्ञ की परिक्रमा, भांवरी (अजमेर)

पळेथन, पलेथन—देखो 'पळोथण, पलोथन' (रू.भे.)

पलेव—देखो 'पलेवौ' (मह., रू.भे)

उ०—हवइं पलेव आवइ, ते केहवी? चोखा नी पलेव, ज्वारि नी पलेव, बाजरी नी पलेव, हलदीया पलेव।—व.स.

पलेवड़ौ—देखो 'पलेवौ' (अल्पा., रू.भे.)

पलेवणउ–सं०पु० [सं० प्रदीपनम्] आग लगने की क्रिया?

उ०—भाद्रवड़ा भाई भणउ, भूरि जळ भरीय भागि। पंजरि थिकुं पलेवणउ, माहरूं सकइ न मागि।—मा.कां.प्र.

पलेवौ, पलेह–सं०पु० [?] १ पतला खाद्य पदार्थ जो आटे व द्रव्य के

संयोग से बनता है (अमरत)

उ०—अनइ एकि पलेह सिखामय मूलमय त्वगमय पत्रमय फलमय वातहर पितहर स्लेस्महर रोचक दीपक···।—व.स.

२ पहिए की धुरी पर स्निग्ध पदार्थ में भिगोकर लगाया जाने वाला सन या कपड़ा।

अल्पा०—पलेवड़ो।

मह०—पलेव।

पलेहण-सं०पु० [सं० प्रलेखनम्] वस्त्रादि को सम्हालने की क्रिया (जैन)

पलोट—देखो 'प्लोट' (रू.भे.)

पलोटण-सं०पु०—१ वैभव।

२ देखो 'पलोथन' (रू.भे.)

पलोटणौ, पलोटबौ-क्रि०अ० [सं० प्रलोठनम्] लोटना-पोटना (जमीन पर) उ०—परीणत स्वास उसास प्रभाव। प्रिय प्रिया पास पलोटत पाव।—ऊ.का.

पलोटणहार, हारौ(हारी), पलोटणियौ—वि०।

पलोटिश्रोड़ो, पलोटियोड़ौ, पलोट्योड़ो—भू०का०कृ०।

पलोटीजणौ, पलोटीजबौ—भाव वा०।

पलोटियोड़ौ-भू०का०कृ०—लोटपोट हुवा हुआ।

(स्त्री० पलोटियोड़ी)

पलोणौ, पलोबौ-क्रि०अ० [सं० प्रलोपनम्] देखना, निरीक्षण करना।

उ०—राज कुंमरि वल्लह तणउ, वयण पलोई जांम। मुहता नंदन थाहरइ, दीठउ सूरख तांम।—हीरानंद सूरि

पलोतण, पलोथण-सं०पु० [सं० प्रलेपनम्] १ रोटी को बेलते समय लोई या चकले पर लगाया जाने वाला सूखा आटा जिससे बेलन या चकले पर गीला आटा चिपकता नहीं है।

क्रि०प्र०—लगणौ, लागणौ।

२ वह व्यर्थ का व्यय जो किसी बड़े व्यय के पश्चात् छोटे व्यय के रूप में और हो जाता है।

क्रि०प्र०—देणौ, लगाणौ, लागणौ, होणौ।

मुहा०—खुद रौ पलोथण लगाणौ—खुद का खर्चा करना, व्यय वहन करना।

रू०भे०—पलेथण, पलेथन, पलोटन।

पलोभ—देखो 'प्रलोभ' (रू.भे.)

पलोवण-सं०पु०—देखो 'पलावण' (रू.भे.)

पळौ-सं०पु० [देशज] घी, तेल, दूध, चासनी आदि द्रव पदार्थों को कड़ाही आदि से बाहर निकालने का धातु का बना (प्रायः लोहा) एक उपकरण जो कटोरीनुमा होता है और उसके खड़े बल एक डंडी लगी रहती है। उ०—कठारी तेलण कठारौ पळौ, पाड़ोसण मांगै खळ रौ डळौ।—फुलवाड़ी

अल्पा०—पळियौ, पळी।

पलौ-सं०पु० [सं० पल्ल] १ कपड़े का छोर, पल्ला।

उ०—उडै ग्रहि अंत गिर्भा असमांण। पलौ इक झालत जोगणि पांण।—सू.प्र.

मुहा०—१ खाली पलै—देखो 'पलौ खाली'।

२ पलै पड़णौ—प्राप्त होना, मिलना, समझ में आना।

३ पलै बंधणौ—व्याही जाना, जिम्मे होना।

४ पलै बांधणौ—व्याह देना, जिम्मे कर देना।

५ पलौ खाली—निरधन, कंगाल।

६ पलौ छुडाणौ—छुटकारा पाना।

७ पलौ छूटणौ—पिण्ड छूटना।

८ पलौ छोडणौ—किसी को त्याग देना।

९ पलौ झाड़णौ—सब कुछ छोड़ देना।

१० पलौ पकड़णौ—शरण लेना, आश्रित होना, हठ करना।

११ पलौ पसारणौ—मांगना, प्राप्ति की आशा करना, याचना करना।

१२ पलौ बांधणौ—कमर को कस कर तैयार होना।

१३ पलौ बिछाणौ—देखो 'पलौ पसारणौ'।

१४ पलौ मांडणौ—देखो 'पलौ पसारणौ'।

१५ पलौ लगणौ—अनुचित सम्बन्ध होना, गलत सम्पर्क होना।

१६ पलौ सिर पर लेणौ—बेशर्म होना, लज्जाहीन होना।

२ साड़ी, दुपट्टा आदि का विशेष ढंग से रंगा या बनाया गया छोर, या पट्टा।

यौ०—पल्लेदार।

३ दूरी, फासला।

४ किवाड़ का पट।

५ चार मन का एक वजन।

६ तराजू का पलड़ा।

रू०भे—पल्लौ।

पल्टण, पल्टन—देखो 'पलटन' (रू.भे.)

पल्टौ—देखो 'पलटौ' (रू.भे.)

पल्थी—देखो 'पालथी' (रू.भे)

वि०— उस ओर का।

पल्यंक, पल्यंकि, पल्यंकु, पल्यंगं, पल्यंग-सं०स्त्री० [सं० पल्यंक] अच्छी या बढिया ढंग की खाट। उ०—पल्यंक आदिक आसन बैठी करी रे दोनु ही माथै हाथ चढाय रे।—जयवांणी

उ०—२ मारुवणी ढोलउ मन रंगि, प्रातहि सुखि बैठा पल्यंकि।—ढो.मा.

उ०—३ चित-साळि पल्यंकु पउढणइ। दक्षिण चीर भलउ अउढणइ।—लो.गी.

उ०—४ राज-वचन सुणि राज कुमार। पल्यंग छोड़ि धरती पड़ी नारि।—बी.दे.

उ०—५ आज सखी सपनंतर दीठ। राग चूरै राजा पल्यंगे बईठ।—बी.दे.

रू०भे०—पलंक, पलंग, पलंगि, पलिंग, पल्लंक, पिलंग ।

अल्पा०—पालिगो ।

पल्या-सं०पु० [सं० पलित] सफेद बाल । उ०—व्रद्धपणउं तु सोभीइ, जु हुइ रूडी मति । नवि लेखवीइ पल्या भणी, कुमति ऊपजइ नित ।
—नळ-दवदंती रास

पल्योपम-सं०पु० [सं०] काल का एक माप जो कूप की उपमा से गिना जाता है । उ०—व्रत पाली अणसण करि पहुंता, पहिलै देवलोकै परधांन । च्यार च्यार पल्योपम आयुस, धरमसीह धरै धरम ध्यांन ।
—ध.व.ग्रं.

वि०वि०—एक योजन लंबे एक योजन चौड़े और एक योजन गहरे कुए को देवकुरु उत्तर कुरुक्षेत्र के मनुष्य के बच्चों के बालाग्रों को तीक्ष्णतर शस्त्र से चीर कर ठूंस ठूंस कर ऐसा भरा जावे कि किसी चक्रवर्ती की सेना भी उसके ऊपर से चली जावे तो वह नहीं दबे । इस प्रकार के कुए से १०० १०० वर्ष के बाद एक एक बालाग्र को निकालते-निकालते जब वह कुआ खाली हो जाय और उसमें एक भी बालाग्र न बचे तो ऐसे समय को पल्योपम कहते हैं (जैन)

रू०भे०—पलिओवम ।

पल्लंक—देखो 'पल्यंक' (रू भे.)

उ०—पल्लक परि सूतो हो कुमार दीठो तसं ।—वि कु.

पल्ल—देखो 'पल' (रू.भे.)

उ०—१ त्रिण कोडा कोडि सागर सुखम बीय अरो । देह दो कोस दोई पल्ल आयु धरी ।—ध व ग्रं.

उ०—२ मीठो बोलै हुस मिळै, पातां नंह ढक पल्ल ।—वां दा.

पल्लड़ो-सं०पु० [सं० पल्ल+रा.प्र.ड़ो] झूला का मंच जिस पर बैठ कर झोका खाया जाता है । उ०—डोल्लहर रा पल्लड़ां रै प्रमांण ऊपरा-ऊपरी लोथि लागण ढूकी ।—वं.भा.

पळळचर—देखो 'पळचर' (रू.भे.)

उ०—भुव जंतु नखी मख लेन चले, पत्रधार पळळचर संग हले ।
—ला.रा.

पल्लण-वि०—मिटाने वाला, दूर करने वाला । उ०—गढ कोट गंजण मांण भंजण थूरि भंजण थाट । पर दुख पल्लण मूल झल्लण वंस चल्लण वाट ।—ल.पि.

पल्लणो, पल्लबो—देखो 'पलणो, पलबो' (रू.भे.)

पल्लियोड़ो—देखो 'पलियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पल्लियोड़ी)

पल्लर—देखो 'पालर' (रू.भे.)

उ०—खळवकै स्रोणी पल्लर खाळ, वर्ष घण लीण हुओ वरसाळ ।
—रा.ज.रासो.

पल्लव-सं०पु० [सं०] १ कोमल पत्ता, कोंपल ।

उ०—१ रूखां वळियां पल्लव फूटा, विणा अंकुर हुआं धरती नीली दीसै लागी ।—वेलि. टी.

उ०—२ विरहइ पीडित वरसनां, दैव दह्यां जे देह । निसा एक निमेस महि, नव पल्लव थ्यां तेह ।—मा.कां प्र.

२ दक्षिण का एक राजवंश ।

रू०भे०—पलव, पल्लवि, पल्हव ।

पल्लवणो, पल्लवबो-क्रि०अ० [सं० पल्लव+रा. प्र. णो] पल्लवित होना, नए पत्ते आना । उ०—तरु लता पल्लवित अणे अंकुरित, नीलांणी नीलंबर न्याइ ।—वेलि.

पल्लवणहार, हारो (हारी), पल्लवणियो—वि० ।

पल्लविओड़ो, पल्लवियोड़ो, पल्लव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पल्लवीजणो, पल्लवीजबो—भाव वा० ।

पल्हवणो, पल्हववो, पालवणो, पालवबो, पाल्हणणो, पाल्हणवो—रू०भे०

पल्लवि—देखो 'पल्लव' (रू.भे.)

उ०—एक करइ रथ वाडिय वाडिय माहि विवेक । कुसुम विवादइ चूंटइ खूंटइ पल्लव एक ।—जयसेखर सूरि

पल्लवित-वि० [सं०] पल्लवयुक्त, हराभरा ।

रू०भे०—पल्हवित ।

पल्लवियोड़ो-भू०का०कृ०—नए पत्ते आया हुआ, पल्लवित ।

(स्त्री० पल्लवियोड़ी)

पल्लांण—देखो 'पलांण' (रू.भे.)

उ०—पल्लांण परट्ठै तांण तंग । साकत्ति हेम हीरे सुचंग ।
—गु.रू.बं.

पल्लांणणो, पल्लांणवो—देखो 'पलांणणो, पलांणवो' (रू.भे.)

उ०—हल्लउं हल्लउ मत करउ, हियड़इ साल म देह । जे साचे ई हल्लस्यउ, सूता पल्लांणेह ।—ढो.मा.

पळ्ळाटो—देखो 'पळाटो' (रू.भे.)

उ०—देखतां देखतां बीजळी पळ्ळाटो मारियो । आभो इंबारीजण लागो ।—वरसगांठ

पल्ली-सं०स्त्री०—बाजरी ज्वार आदि के. सिट्टे तोड़ कर एकत्रित करने का कपड़ा (शेखावाटी)

पल्लीवाळ-सं०पु०—ब्राह्मणों की एक जाति या इस जाति का व्यक्ति ।

रू०भे०—पलीवाळ ।

पल्लू-सं०पु०—१ आंचल, छोर ।

२ चोड़ा गोट, पट्टा ।

पल्लेदार-सं०पु० [हि० पल्ला+फा० दार] १ अनाज को ढोने वाला मजदूर ।

२ एक बंदूक विशेष ।

रू०भे०—पलादार ।

पल्लोल-सं०पु०—प्रवाह, झोंका ? उ०—तंति सुसिर घन सद्दीइ, पवन तणा पल्लोल । माधव महिला सिउं करइ, क्रीड़ा-रसि कल्लोल ।
—मा.कां.प्र.

पल्लो—१ देखो 'पलो' (रू.भे.)

उ०—भाटी भीमजी इण चोखळा रो जांणीतो आदमी हो। पल्लो खाली होवतां थकां ई घर ग्वाड़ी वाळो खांनदांनी रजपूत हो।
—रातवासो

२ देखो 'पलो' (रू.भे.)

उ०—सात सै चढ़े पल्ला सुहड उल्लाई भड एतडा कमधज्ज जुध्ध-मेह्कर कियो. बे पतिसाहां प्रग्गाडा।—गु.रू.बं.

पल्हण-सं०पु०—स्नान करने की क्रिया।

उ०—तब कुंजर ही बोलियो, हम नित आवै जांहि। इतै कांम ही आवियो, पल्हण सायर मांहि।—गजउद्धार

पल्हव—देखो 'पल्लव' (रू.भे.)

पल्हवणो, पल्हववो—देखो 'पल्लवणो, पल्लववो' (रू.भे.)

उ०—हियड़इ भीतर पइसि करि, ऊगउ सज्जण रूंख। नित सूकइ नित पल्हवइ, नित नित नवला दूख।—ढो.मा.

पल्हवित—देखो 'पल्लवित' (रू.भे.)

पल्हांण—देखो 'पलांण' (रू.भे.)

उ०—पंचवरण तेजी पाखरिया, कुंकूंलोल पल्हांण। सोना तणां सांकळां पाए, हणहणीया केकांण।—कां.दे.प्र.

पल्हांणणो, पल्हांणवो—देखो 'पलांणणो, पलांणवो' (रू.भे.)

उ०—कोइ पल्हाणइ पखीमा, उंदिर अस्व बइल्ल। सब कहि थी संका करइ, गवरि चढइ गज-मल्ल।—मा.कां.प्र.

पवंग, पवंगम—१ देखो 'प्लवंगम' (रू.भे.)

उ०—आदि गुरु मात्रा इकबीस, सुकवि संभळै घूणै सीस। पायैपायै एण प्रमांणि, जपिया छंद पवंगम जांणि।—पिं.प्र.

२ देखो 'पमंग' (रू.भे.)

उ०—भारांणी जस भार, भुज मंडण थारा भुजां। ऊगै दीह उदार, पातां घर पूगै पवंग।—बां.दा.

पव—देखो 'परवत' (रू.भे.)

पवगांण—देखो 'पमंग' (रू.भे.)

पवचो-सं०पु०—चोहान वंश की पवचा शाखा का व्यक्ति।

पवण—देखो 'पवन' (रू.भे.)

उ०—पारथिया झपण वयण दिसि पवणे। विण अबह बाळिया वण।—वेलि

पवणवेग-सं०पु० [सं० पवनः + वेग] घोड़ा (डिं.ना.मा.)

पवत्रिय—देखो 'पवित्री' (रू.भे.)

उ०—विडंगक झालि पवत्रिय वाग। मळाह्ळ सेल ग्रहै मध्य भाग।
—सू.प्र.

पवत्री—देखो 'पवित्री' (रू.भे.)

उ०—चोगां तोड़ा पवत्रां, किलंगी सेवी पागछाई। बाजूबंध चौकी जोत जगाई।—मयाराम दरजी री वात

पवन-सं०पु० [सं० पवनः] हवा, वायु। उ०—जिण सक्ति परखि लजि तड़िति जात। भ्रत गवन पवन मन ज्यों विख्यात।—रा.रू.

पर्या०—अनिळ, अहिबलभ, अहिभख, आसक, गंधवाह, चंचळ, चक्र, जगतप्रांण, जळरिप, जवन, पवमांण, प्रकंपण, प्रभंजण, प्रापक, महाबळ, मरुत, मारुत, मेघअरि, मेघवाहण, म्रघभखण, म्रगवाहण, वात, वायु, सदागति, सपरसन, सबळ, समीर, सासनम, स्वसन, हवा।

यौ०—पवनअस्म, पवनकुमार, पवनगतो, पवनघणईहा, पवनचकी (चक्की), पवनचक्र, पवनज, पवनतनय, पवनदाग, पवनदाह, पवनविस्ण, पवननंद, पवननंदन, पवनपति, पवनपथ, पवनपरीक्षा, पवनपुत्र, पवनपूत, पवनबंध, पवनमग, पवनमुक्तासन, पवनवांणी, पवनवाहन, पवनवग, पवनव्याधि, पवनसंघात, पवनसख, पवनसुत।

२ सर्प, सांप।

क्रि०प्र०—लड़णो, लागणो।

३ विशिष्ट जाति वर्ग या समूह जो संख्या में ३६ माने जाते हैं—

उ०—१ सोझत था ऊगवण नूं जाट वांणीया सीरवी छत्तीस पवन बसै। सोझत सरीखो कसबो रा० जैतावत रो उतन।—मा.प.वि.

उ०—२ घांचो, घांछा, मोची, मणिहार, मइणारा, मेर, मैणा, सूई, सुतार, सोनार, चूनगर, चित्रगर, नीलगर, तेरमा, लूंणगर, ठंठारा, मठारा, लोहार, लोवाना, लोबना, लोढा, भोपा, भरडा, भिखारी, भील, कोळी, काठी, वणगर, कठीयारा, कळबी, कंसारा, कुंभार, चूड़ीगर, काछी, वांणिया, विप्र, वैद्य, वैश्या, वणघर, माली, तेली, मरदनीया, मठवासी, गोला, गांधी, गारडी, योगी, यति, सन्यासी, जिंदा, सोफी भगत, भ्रांमीक, भेषधर इत्यादि ३६ पवन।—सभा

४ प्राणवायु।

५ प्रथम लघु ढगण के भेद का नाम।

६ उचास की संख्या* (डिं.को.)

२ चंचल* (डिं.को.)

रू०भे०—पन्न, पमण, पवन, पवन्न, पवन्नि, पूंन, पून, पुण, पोन, पौन।

अल्पा०—पवनियो, पवनो।

पवनकुमार-सं०पु० [सं०] १ हनुमान।

२ भीमसेन।

पवनघणईहा-स०स्त्री० [सं० पवन + घन + ईहा] अग्नि, आग (डिं.को.)

पवनचकी, पवनचक्की-सं०स्त्री० [सं० पवन + चक्की] हवा के जोर से चलने वाली चक्की।

पवनचक्र-सं०पु० [सं०] चक्कर खाती हुई जोर की हवा, चक्रवात।

पवनज-सं०पु० [सं०] १ हनुमान।

२ भीमसेन।

पवनजात—देखो 'पवन' (३) (रू.भे.)

रू०भे०—पुणजात, पूनजात।

पवनतनय-सं०पु० [सं०] १ हनुमान ।
२ भीमसेन ।

पवनदाग, पवनदाह-सं०पु० [सं० पवनदाह] शव का वह अंतिम संस्कार जिसमें शव को खुले व ऊंचे स्थान पर रख दिया जाता है ताकि कौए, चील आदि उसका मांस भक्षण करलें ।

पवनधिस्ण-सं०पु० [सं० पवन+धिष्णयं] आकाश, आसमान (नां मा.)

पवननंद, पवननंदन-सं०पु० [सं०] १ हनुमान ।
उ०—पवननंद परचंडनं जीत दारुण खळ जंगी । अजर अमर अण-भंग, बजर आयुध बजरंगी ।—र.रू.
२ भीमसेन ।

पवनपंथ-सं०पु०यौ० [सं० पवनपथ] आकाश, आसमान (ह.नां.मा.)

पवनपथ-सं०पु०यौ० [सं०] आकाश, आसमान (ह.नां.मा.)

पवनपरीक्षा-सं०स्त्री०—आषाढ की पूर्णिमा को वायु की दिशा देखकर ऋतु का भविष्य बताने की क्रिया । (ज्योतिष)

पवनपुत्र, पवनपूत-सं०पु०यौ० [सं० पवनपुत्र] १ हनुमान ।
२ भीमसेन ।

पवनबंध-वि० [सं०] पवन को बांधने वाला, प्राणायामी ।
उ०—राजा अगर री वास सुं मन में विचारियौ-जे एथ कोई हुस्त-वध राजा छै के पवनबंध योगी छै ।—चौबोली
सं०पु०—पवन को बांधने वाला व्यक्ति, प्राणायामी व्यक्ति ।

पवनमग-सं०पु० [सं० पवन+मार्ग] आकाश, आसमान (अ.मा.)

पवनमुक्तासण(न)-सं०पु० [सं० पवनमुक्तासन] योग के चौरासी आसनों के अन्तर्गत एक आसन विशेष । इसमें बाएँ पैर की एड़ी से बाएँ जघा के निम्न भाग को एवं दाहिने पैर की एड़ी से दाहिने जघा के निम्न भाग को स्पर्श करा कर दोनों पावों के घुटनों को कधो के पास लाया जाकर दोनों हाथों को भीतर लेते हैं और बाएँ हाथ से दाहिने हाथ की कुहनी को एवं दाहिने हाथ से बाएँ हाथ की कुहनी पकड़ते हैं ।

पवनबांण-सं०पु० [सं० पवनबाण] वह बाण जिसके चलाने से हवा वेग से चलने लगे ।

पवनवेग-वि० [सं०] पवन के समान वेग वाला ।

पवनसख-सं०पु० [सं० पवनसखा] अग्नि, आग (ह.नां.मा.)

पवनसुत-सं०पु० [स०] १ भीमसेन (ह.नां.मा.)
२ हनुमान ।

पवनांण—देखो 'पावन' (रू.भे.)

पवनासण-सं०पु० [सं० पवन+अशनम्] १ वह जो हवा पीकर ही जीवित रहता है ।
२ सर्प, सांप (ह नां.मा.)
[सं० पवनासन]
३ योग के चौरासी आसनों के अन्तर्गत एक आसन जिसमें दोनों घुटनों पर खड़े रह कर दोनों हाथों की तर्जनियों को नाभि के पास एकत्र करके कटि को दवा कर स्थिर होना होता है ।

पवनासनी, पवनासी-सं०पु० [सं० पवनाशिन्] सर्प, सांप (अ.मा.)

पवनियौ, पवनौ—देखो 'पवन' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—ऊगते उण तारै परभात, पड़ै । ओ मोळौ घूंघूकार । पवनियौ सांसां में भर सांस, सांवटै जग री काळी कार ।—सांझ

पवन्न, पवन्नि—देखो 'पवन' (रू.भे.)
उ०—१ दिन छोटा मोटी रयण, थाढा नीर पवन्न । तिण रित नेह न छाडियइ, हे वालम वडमन्न ।—ढो.मा.
उ०—२ प्रभु तूं पांणी मांय पवन्न । गरज्जं गाजं मांय गगन्न ।
—ह.र.

पवमाण, पवमांन-सं०पु० [सं० पवमानः] हवा, वायु (ह.नां.मा.)
उ०—घट सुंदर ग्रीव कवांण घटी । पवमांण विमाण समांण पटी ।
—मे.म.

पवर, पवरु—देखो 'प्रवर' (रू.भे.)
उ०—स्री विमय हरर वाचक सुगुरु, पाठक धरमसी पवर ।—ध.व.ग्रं

पवरग-सं०पु० [सं०] प अक्षर से लेकर म अक्षर तक का वर्ग, पवर्ग ।

पवसाक, पवसाख—देखो 'पौसाक' (रू.भे.)
उ०—१ तन पवसाक जरी महताबी । फबि चीरा किलंगी सिर फाबी ।—सू.प्र.
उ०—२ मरद पवसाख भूसण कड़ा मूंदड़ो, कंठ डोरो मुरति लवंग कांनां ।—मे.म.

पवांड़—देखो 'पवाड़ौ' (मह., रू.भे)

पवाड़उ, पवाड़ौ-सं०पु० [देशज] १ चकवड़, चक्रमर्द ।
वि०वि०—यह हलका, स्वादिष्ट, रूखा, पित्त-वात-नाशक, हृदय को हितकारी, शीतल तथा कफ, श्वास, कुष्ठ, दद्रु और कृमि को नाश करने वाला है । इसका फल गर्म है और कुष्ठ, कण्डू, दाद, विप, वात, गुल्म, खासी, कृमि तथा श्वास को दूर करने वाला है और कटु रसान्वित है ।
अल्पा०—पंवाड़ियौ, पमाड़ियौ, पमाडियौ, पवाडियौ ।
मह०—पंमाड, पंवाड़, पवांड़, पुवाड़ ।
२ देखो 'प्रवाड़ौ' (रू.भे.)
उ०—१ मोटउ साहस धीधउ, वडउ पवाड़उ सीधउ ।—रा.सा.सं.
उ०—२ लूटियौ लहसकर आप वसिकर छोडियौ आलिम । जीत्यौ पवाड़ौ धरम आडो आवियौ क्रत करम ।—प.च.चौ.

पवारसाही-सं०स्त्री०यौ० [देशज] एक प्रकार की तलवार ।

पवाल—देखो 'प्रवाळ' (रू.भे)

पवासणौ, पवासबौ-क्रि०अ० [सं० प्रकाशणम्=प्रभासतम्] १ चमकना, प्रकाशित होना ।
उ०—इण तौ आंगणिये, सायवा, जेठजी फिरेला जी, जांणे पून्यूं रो चांद पवासियौ जी ।—लो.गी.
२ तुष्ठमान होना ।
उ०—बिड्द-विनायक दोनूं जी आया । आय पवास्या सीळं बड़ तळं ।
—लो.गी.

पवासो-सं०पु० [सं० प्रभास] प्रकाश, चमक ?
उ०—लहरघो तो रखियो सामं साळ में जी, कोई साळ पवासा लेवै जी क, लहरघो लेदो जी।—लो.गी.

पवि-सं०पु० [सं०] १ वज्र।
उ०—भड़ म्हारा पाछै भिड़ै, जिकां बहोडो जाइ। अब जे भड़ियो एक भी, तो पड़ियो पवि ताइ।—वं.भा.
२ मार्ग, रास्ता।
रू०भे०—पवि, पवी।

पविगि-देखो 'पमग' (रू.भे.)
उ०—ग्राजि रै बांधियो कहौ तरगस ग्रभिगि, प्रिथी रै धिणी सस-माथ चढ़ियो पविगि।—पी.ग्रं.

पविठ्ठ—देखो 'प्रविष्ठ' (रू.भे.)

पवित, पवितर—देखो 'पवित्र' (रू.भे.)
उ०—१ पवित ग्रंग मन चंग गंग जांणै जळधारा।—गु.रू.बं.
उ०—२ जस तिलक लख पै बळ, जुइ फिर रांम पवितर जेण।
—र.ज.प्र.

पवितरी—देखो 'पवित्री' (रू.भे.)

पवितरो—देखो 'पवित्रौ' (रू.भे.)

पवित्त—देखो 'पवित्र' (रू.भे.)
उ०—जपइ लाख नवकार जे एक चित्तं, लहइ ते तीरथकर पद पवित्तं।—स.कु.

पवित्तर—देखो 'पवित्र' (रू.भे.)

पवित्ति—देखो 'पवित्र' (रू.भे.)
उ०—केवी घर सैलोट कर, कर नवकोट पवित्ति। ग्रायो जोधांणै 'ग्रजो', परसै द्वारामत्ति।—रा.रू.

पवित्र-वि० [सं०] १ शुद्ध, पापरहित।
उ०—पवित्र कध इम करिस वडा प्रभ, नमे तुझ चरणां पोहोकर-नभ। कंठ इम पवित्र करिस करुणाकर, गावे तुझ चरित गोपीवर।
—ह.र.
२ निर्मल, स्वच्छ, साफ।
उ०—उदर पवित्र करिस ग्रपरंपर। चरणाम्रत तो धरे चक्रधर।
—ह.र.
सं०पु० [सं० पवित्रं] १ वह कुश जो यज्ञ में घी को छिड़कने या शुद्ध करने में व्यवहृत होता है।
२ तांबा।
पर्या०—पावन, पुण्य, पूत।
रू०भे०—पवित, पवितर, पवित्त, पवित्तर, पवित्ति, पवीतर, प्रवीत, प्रवित्त, प्रवित्ति, प्रवित्त, प्रवीत, प्रिवित।

पवित्रता-सं०पु० [सं०] १ शुद्धता, पावनता।
२ निर्मलता, स्वच्छता।

पवित्रा-सं०स्त्री० [सं०] १ तुलसी।
२ श्रावण के शुक्ल पक्ष की एकादशी।

पवित्रारोपण-सं०पु० [सं०] वैष्णवों का एक उत्सव जिसमें श्रीकृष्ण को यज्ञोपवीत पहनाया जाता है। यह श्रावण शुक्ला १२ को होता है। मतान्तर से एकादशी को भी होता है।

पवित्रिय, पवित्री-सं०स्त्री० [सं० पवित्र=कुश+रा०प्र०ई] १ कर्म-काण्ड के समय ग्रनामिका में पहनी जाने वाली कुश की बनी हुई ग्रंगूठी।
२ संन्यासियों की माला के मध्य में लगाने का गुरिया।
३ तांबा ग्रौर चांदी के मिश्रण से बनी मुद्रिका।
रू०भे०—पवत्रिय, पवितरी।

पवित्रो-सं०पु० [सं० पवित्र] १ मेड़तिया राठौड़ों की पगडी के साथ 'चारभुजा' के नाम से बांधी जाने वाली वस्त्र की एक पट्टी विशेष जिस पर लाल ग्रौर केसरिया रंग के फुंदके (फूदे) लगे रहते हैं।
उ०—सेली पवित्रा सीस कितारे सम सुंवरणो। फुलवयारी रो भंगो खवां दोनू ऊपरणो।—बखतो खिड़ियो
२ रेशम के गुच्छे का बना हार विशेष जो मांगलिक ग्रवसरों पर धारण कराया जाता है।
रू०भे०—पवत्रो, पवितरो।

पविधर-सं०पु० [सं०] इन्द्र।

पविन—देखो 'पावन' (रू.भे.)
उ०—विसवामित्र रघुपति वदति ए जग पविन जाह्नवी।
—रांमरासो

पविपांणी-सं०पु० [सं० पवि+पाणि] इन्द्र। उ०—कीचक बाळी कदिन, पुरुरवा ग्रो दवीपांणी। लंपट भये लंकेस, जूत खाया जग-जांणी।—ऊ.का.

पवी—देखो 'पवि' (रू.भे.)

पवीतरो—१ देखो 'पवित्रौ' (रू.भे.)
२ देखो 'पवित्र' (ग्रल्पा., रू.भे.)
उ०—की लोक निकर सुर नर किसूं, पत उर धांम पवीतरो। वाधियो ताप दूजां विचै, ग्राज प्रताप 'ग्रजीत' रो।—रा.रू.

पवै—देखो 'परवत' (रू.भे.)
उ०—मार लीध एक मुस्ट, दूर राळ बोध दुस्ट। हालियो समीर द्रोण, पवै जही हेत।—र.रू.

पवैयो-सं०पु० [देशज] हिजड़ों के साथ रह कर नाचने, गाने तथा उनकी लाग-बाग उगाहने वाला पुरुष (मा.म.)

पवोड़ो-सं०स्त्री०—कमल के बीज।

पव्वय—देखो 'परवत' (रू.भे.)
उ०—रुख मभिवर कप्पतरुख संघह धुरि मुणिवर। पंखि मभि जिम राजहंस पव्वय धुरि मंहिर।—ग्रभययतिक यती

पव्वया—देखो 'परवज' (रू.भे.)

पव्वै—देखो 'परवत' (रू.भे.)

उ०—पत्रा विहंगेस वाळी मंदार हेमंक पव्वै, धोम काळकूट मेघ-धारां गंगधार।—र.रू.

पसंगो—देखो 'पासंग' (अल्पा., रू.भे.)

पसंति—देखो 'पसयंती' (रू.भे.)

पसंद-वि० [फा०] १ अच्छा लगने वाला, रुचिकर, मनोनीत।

उ०—सिध साधक राखै सबर, सबर तजे मतमंद। सबर काज सुधरै सहू, सांई सबर पसंद।—बां.दा.

क्रि०प्र०—आणौ, करणौ, होणौ।

२ देखो 'प्रसन्न' (रू.भे.)

पसंनि-सं०पु०—दर्शन। उ०—अट्ठ पहर अरस में, बैठा पीरी पसंनि। दादू पसे तिन्न के, जे दीदार लहंति।—दादूबांणी

पसंसा—देखो 'प्रसंसा' (रू.भे.)

पस-सं०स्त्री०—१ अवधि, समय। उ०—सातल कह्यौ—हजरत! छै मास री पस पाऊं, सूल सराजांम करूं। कह्यौ—जा, दी पस।

—सातलसोम री बात

[?] २ प्रवेश। उ०—ओ संसार स्वप्न री नदियां, नीर कल्पना मांई। यामें पस नहावै जुग सारौ, पार कोई नहि जाई।

—स्रो हरिरांमजी महाराज

३ देखो 'पुसी' (रू.भे.)

उ०—हंस भाभी बूझै है बात, नणदल बाई राज। रात नैं नणदोई कांई-कांई दे गया जो म्हारा राज। मोहरां म्हारी पस ए भराय, भाभी म्हारी राज।—लो.गी.

अव्य० [फा०] अत:, इस कारण, इसलिए।

पसकण-वि० [?] कायर, डरपोक (डि.को.)

पसको-सं०पु०—कायरपन, कायरत्व।

पसगत—देखो 'पसुगत' (रू.भे.)

उ०—तन छीजें, जोबन हटै, घटै वयस धन, धरम। मदगत पसगत एक सी, ज्यांमें हया न सरम।—अज्ञात

पसण—देखो 'पिसण' (रू.भे.)

उ०—खळ-खट्ट करै खागां मुहे, सूरज हट्ट समूह गह। कमधज्ज दियण पसणां पहट, थिड़े थट्ट हूआ थहह।—गु.रू.बं.

पसणौ, पसबौ—देखो 'फंसणौ, फंसबौ' (रू.भे.)

पसतो-सं०पु० [फा० पश्तो] १ साढे तीन मात्रा का ताल, जिसमें दो आघात होते हैं। इसके बोल इस प्रकार हैं—ति, रक, धि, धा, गे।

उ०—डफ खजरी दुतार, विखम रोहिला वजावै। पसतो अरबी पा'ड़, गजल कड़खा बह गावै।—सू.प्र.

२ अफगानिस्तान की भाषा।

रू०भे०—पस्तो, पुसतो, पेसतो

पसत्थ—देखो 'प्रसस्त' (रू.भे.)

पसत्थराग-सं०पु० [सं० प्रशस्त-राग] देव, गुरु, धर्म के विषय में अथवा अनुकम्पा, दान आदि के विषय में होने वाला राग (जैन)

पसन्न—१ देखो 'प्रसन्न' (रू.भे.)

२ देखो 'प्रस्न' (रू.भे.)

पसम-सं०पु० [फा० पश्म] १ रोमावलि, बाल (अ.मा., ह.नां.मा.)

उ०—मोहरी चपा सेली समंध, पचकल्यांण पहचांणियै। अन्नेक रंग पसमां अलल, जेहा मुखमल जांणियै।—सू.प्र.

२ बहुत मुलायम तथा बढिया ऊन जो प्राय: कश्मीर, पंजाब और तिब्बत की भेड़ों पर से उतारी जाती है। उ०—एहिज सदन सिसर हिमवंतां। आसण पखी पसम अनंता।—सू.प्र.

३ गुप्तेन्द्रिय के बाल, झांट।

पसमीन, पसमीर, पसम्म-सं०पु० [फा० पश्मीना] मुलायम व बढिया ऊन का बना कपड़ा या दुशाला जो प्राय: कश्मीर, तिब्बत आदि पहाड़ी और ठंडे देशों में बहुत अच्छा और अधिकता से बनता है।

उ०—१ जिस अवास की सीढियूं के ऊपर रंगदार सब्जू पसमीन पायंदाज राजै। सो कैसे जिसकी सोभा के देखे तैं नील घन सघन के वद्दल लाजै।—सू.प्र.

उ०—२ पहरण घण ओढण पसमीना। नोख तोस घणमोल नवीनां।—सू.प्र.

उ०—३ महि माल बहु पसमीर, कर उतन जे कसमीर।—सू.प्र.

उ०—४ पगमंडा हीर पसम्म, नवरंग वाणि नरम्म।—सू.प्र.

रू०भे०—पस्मीन।

पसयाड़ो—देखो 'पखवाड़ो' (रू.भे.)

पसर-सं०पु० [सं० प्रसर] १ आक्रमण, हमला।

उ०—सम्मूह सेन संख्या पखै, जाइ लसक्कर जूजु ए। पतिसाह दळां दीनी पसर, गिरि झंगर पद्धर हुए।—गु.रू.बं.

२ विस्तार, फैलाव। उ०—इंद्र छभा फिर अमर, निडर राठौड़ निभैनर। पह रैणाइर पसर, धणी नवकोट छिहृतर।—गु.रू.बं.

३ पिचकारी। उ०—कचर कूट नांखिया भट कितरा, छूटइ पसरां लोह छर। धाय जुड़इ आवरत घुळंता, घण थट विकट वाढाळवर।

—महादेव पारवती री वेलि

पसरकंटाळी-सं०स्त्री० [सं० प्रसर-कंटाली] एक प्रकार का कंटीले पत्तों का पौधा जो जमीन पर फैल जाता है भटकरैया कटारी।

पसरणौ, पसरबौ-क्रि०अ० [सं० प्रसरणम्] १ आगे की ओर बढना या फैलना, विस्तृत होना। उ०—१ अग जातै भायो मनं, आयो पौस अवन्न। पसरता उत्तर पवन, घर सीतळ रवि धन्न।—रा.रू.

उ०—२ अत परमळ पसर, पसरिया आंवा। सुक पिक बोलै, सुखद सराग।—बां.दा.

२ पैर फैलाकर सोना।

पसरणहार, हारो (हारी), पसरणियो—वि०।

पसरवाड़णौ, पसरवाड़बौ, पसरवाणौ, पसरवाबौ, पसरवावणौ, पसरवावबौ, पसराड़णौ, पसराड़बौ, पसराणौ, पसराबौ, पसरावणौ, पसरावबौ—प्रे०रू०।

पसरिम्रोड़ो, पसरियोड़ो, पसरयोड़ो—भू०का०कृ० ।

पसरीजणो, पसरीजबो—भाव वा० ।

पसराणो, पसराबो—सक०रू०

पस्सरणो, पस्सरबो, पासरणो, पासरबो, प्रसरणो, प्रसरबो—रू०भे० ।

पसराड़णो, पसराड़बो—देखो 'पसराणो, पसराबो' (रू.भे.)

पसराड़णहार, हारो (हारी), पसराड़णियो—वि० ।

पसराड़िम्रोड़ो, पसराड़ियोड़ो, पसराड़योड़ो—भू०का०कृ० ।

पसराड़ीजणो, पसराड़ीजबो—कर्म वा० ।

पसराड़ियोड़ो—देखो 'पसरायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पसराड़ियोड़ी)

पसराणो, पसराबो—क्रि०स० ('पसरणो' क्रिया का प्रे.रू.) १ आगे को बढाना, फैलाना, विस्तृत कराना ।

२ पैर फैलवा कर सुलाना ।

पसराणहार, हारो (हारी), पसराणियो—वि० ।

पसरायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पसराईजणो, पसराईजबो—कर्म वा० ।

पसराड़णो, पसराड़बो, पसरावणो, पसरावबो—रू०भे० ।

पसरणो, पसरबो—अक० रू० ।

पसरायोड़ो—भू०का०कृ०—१ आगे बढ़ाया हुआ, फैलाया हुआ, विस्तृत किया हुआ ।

२ पैर फैलवा कर सुलाया हुआ ।

(स्त्री० पसरायोड़ी)

पसरावणो, पसरावबो—देखो 'पसराणो, पसराबो' (रू.भे.)

पसरावणहार, हारो (हारी), पसरावणियो—वि० ।

पसराविम्रोड़ो, पसरावियोड़ो, पसराव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पसरावीजणो, पसरावीजबो—कर्म वा० ।

पसरावियोड़ो—देखो 'पसरायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पसरावियोड़ी)

पसळी—देखो 'पासळी' (रू.भे)

पसवान—स०पु० [सं० प्सा=भक्षणे=प्सानम्] भोजन (अ.मा.)

पसवाड़—१ देखो 'पारसव' (रू.भे.)

२ देखो 'पसवाड़ो' (मह०, रू.भे.)

उ०—गिर नीलम पसवाड़ किलोलां हेत सुहावै । हेम कदळियां चौफेरी मे रुड़ी लखावै ।—मेघ.

३ देखो 'पसवाड़ो' (मह०, रू.भे.)

पसवाड़ै—क्रि०वि० [सं० पार्श्वः+पाटकः] १ तरफ ओर, बगल में । उ०—१ इतरी बात सुण बीरमदे नै रीस ऊपनी । तिको पाखती भैंसा रै पसवाड़ै आय चरताळ कढ़ियां सूं तरवार वाही, तिको सींग नै माथो वाढि दोय वटका कर नांख्या ।—वीरमदे सोनगरा री वात

उ०—२ ताहरां खीमो पसवाड़ै चालियो, पोकरण सो कोसे तीनै च्यारै ।—नैणसी

क्रि०प्र०—आणो, रै'णो, होणो ।

२ निकट, पास, समीप । उ०—१ सगळा लोग वाड़ी में ऊभा-ऊभा ई हाको करियो—जावै-जावै जित्तै तो मालण उणीज घोरा माथै माळी रे पसवाड़ै आय नै ऊभगी ।—फुलवाड़ी

उ०—२ चोर उणी भांत थांमा रै पसवाड़ै चापळियोड़ो ऊभो रह्यो।
—फुलवाड़ी

पसवाड़ो—स०पु० [सं० पार्श्वः] बगल, करवट ।

उ०—१ स्त्री रा इसा वचन सुण वो आळसी सिंह सत्रवां नै तिल मात्र गिणनै पसवाड़ो फेरियो ।—वी.स.टो.

उ०—२ मोडी गोडी दै पसवाड़ा मोड़ै । तड़छां बातोड़ी घड़छां तन तोड़ै ।—ऊ.का.

मुहा०—पसवाड़ो फिरणो—फुरसत मिलना, समय निकालना ।

रू०भे०—पासाड़ो, पासवाड़ो ।

मह०—पसयाड़, पसवाड़ ।

पसवाज—सं०पु० [देशज] नृत्य के समय पहिना जाने वाला वेश्या का एक घाघरा । उ०—खुसी खसबोय खरच से लाचार, गहणां का क्या करणा, गरीबी में गीरफतार । गरमी से सड़ी हाडुं का ढ़ेर, फाटी पसवाज का दिखाया फेर ।—दुरगादत्त बारहट

पसवो—देखो 'पसु' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—नाकां डांडो भुंई, ऊतरी सूरत अलोनी । धांन टाबरां नहीं, घास पसवा नै कोनी ।—दसदेव

पसाइ—देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)

उ०—भरिया तरु पुहप वहै छूटा भर, कांम बांण ग्रहिया करगि । वळि रितुराइ पसाई वेसम्रर, जण भुरड़ीतो रहै जगि ।—वेलि

पसाइत—देखो 'पसायत' (रू.भे.)

पसाइती—देखो 'पसायती' (रू.भे.)

पसाइतो—देखो 'पसायतो' (रू.भे.)

उ०—सहर साचोर मांहे सकना तुरक घर १५० छै, सकना कहावै छै, खेत १०० सहर मांहे, पसाइता खावै छै ।—नैणसी

पसाउ—देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)

उ०—अति मनूप आखर अवलि, सरसति करो पसाउ । हींगळाज सुप्रसन हु, पछिम तणा पतिसाउ ।—पी.ग्रं.

पसाणो, पसाबो—क्रि०स० [सं० प्रसावण] १ भात या चावल से मांड निकालना ।

२ किसी पदार्थ में मिला हुआ जल का अंश निकालना ।

पसाणहार, हारो (हारी), पसाणियो—वि० ।

पसायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पसाईजणो, पसाईजबो—कर्म वा० ।

पसावणो, पसावबो—रू०भे० ।

पसाय—देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)

उ०—१ हुवो सवाई सावळो, भूप 'अजीत' पसाय । हिळ माया ढूंढा-हड़ा, विचित्रां रस विसराय ।—रा रू.

उ०—२ लागूं हूं पहलो लुळे, पीतांबर गुर पाय। भेद महारस भागवत, प्रांमू जास पसाय।—ह.र.

पसायतवाव-सं०पु० [देशज] किसी सेवा विशेष में दी गई जागीर पर जागीर के मालिक से वसूल किया जाने वाला कर विशेष।

पसायत—१ देखो 'पसायतो' (मह., रू.भे.)

२ देखो 'पसायती' (रू०भे०)

पसायती-सं०स्त्री० [सं० प्रसादिता] १ नौकरी या सेवा के बदले में दी जाने वाली भूमि।

२ इस प्रकार की भूमि का उपभोग करने वाला व्यक्ति।

रू०भे०—पसाइत, पसाइती, पायती।

पसायतो-सं०पु० [सं० प्रसादित] १ वह व्यक्ति जिसे नौकरी या सेवा के बदले में जमीन दी जावे।

२ इस व्यक्ति द्वारा उपभोग की जाने वाली भूमि।

रू०भे०—पसाइतो, पायतो।

पसायोड़ो-भू०का०कृ०—१ मांड निकाला हुआ (चावल)

२ जल का अंश निकाला हुआ पदार्थ।

(स्त्री० पसायोड़ी)

पसार—देखो 'प्रसार' (रू.भे.)

पसारटो-सं०पु० [सं० प्रसार+रा.प्र.टो] पसारी का कार्य।

उ०—ए दलाल ए खुड़दिया, हुंडीवाळ बजाज। ऐहिज करै पसारटो, केवळ धन रै काज।—बां.दा.

पसारणो, पसारबो-क्रि०स० [सं० प्रसारनम्] फैलाना, पसारना, विस्तृत करना। उ०—नर मारगि एक एक मग नारी, क्रमिया अति उछाह करेउ। अंकमाळ हरि नयर आविवा, वाहां तिकरि पसारी वेउ।

—वेलि

पसारणहार, हारो (हारी), पसारणियो—वि०।

पसारिग्रोड़ो, पसारियोड़ो, पसारयोड़ो—भू०का०कृ०।

पसारीजणो, पसारीजबो—कर्म वा०

पसरणो, पसरबो—अक०रू०।

परसारणो, परसारबो, परसावणो, परसावबो, प्रसारणो, प्रसारबो

—रू०भे०

पसारी—देखो 'पंसारी' (रू.भे.)

उ०—म्हारी हळदी रो रंग सुरंग, निपजै माळवे। हळदी मिळै पसारी री हाट, बनड़ा रै सिर चढ़ै।—लो गी.

पसाव-सं०पु० [सं० प्रसाद] १ कपड़ा। उ०—भमरी थावै आप सूं, चित सरसावै चाव। जावै दाता द्वार जे, पावै पांच-पसाव।

—बां.दा.

[सं० प्रस्राव] २ चावल का मांड।

३ किसी पदार्थ से निकाला हुआ पानी का अंश।

४ पसीना, स्वेद।

५ देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)

उ०—१ आया रण कांम जिका उमराव। पाया तन नूतन प्रांण पसाव।—मे.म.

उ०—२ साधु मिळै तव ऊपजे. हिरदै हरि का भाव। दादू संगति साधु की, जब हरि करै पसाव।—दादूवांणी

उ०—३ आयो राजा सांभळयो राई, ततखिण बल्यउ नीसांणे घाव। राजा माहइ उछव हूवउ, ब्राह्मण दीयउ बहुत पसाव।—बी दे.

पसावण-सं०पु० [सं० प्रस्रावण] किसी उबाली हुई वस्तु का गिराया हुआ पानी, मांड, पीच।

पसावणो, पसावबो—देखो 'पसाणो, पसाबो' (रू.भे.)

उ०—तेरा रे बीरा, भु ल्याळवा, धणदेवां ने भात पसाव।—लो.गी.

पसावणहार, हारो (हारी), पसावणियो—वि०।

पसाविग्रोड़ो, पसावियोड़ो, पसाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पसावीजणो, पसावीजबो—कर्म वा०।

पसिद्ध—देखो 'प्रसिद्ध' (रू भे.)

पसीजणो, पसीजबो-क्रि०अ० [सं०प्र+स्विद्=प्रस्विद्यति, प्रा० पसिज्जइ]

१ पिघलना, द्रवित होना।

उ०—इतरी सुण भरमल रो डील तो विरह सूं पसीज गयो। बहुत उदास हुई। नयणां सूं प्रवाह छूटियो।—कुंवर सी सांखळा री वारता

२ दयार्द्र होना।

उ०—मिनखां री खालां उधड़गी, कुंदां रै धम्मीड़ां सूं माथा फूटग्या, खून सूं आंगणा लाल कंकोळ व्हैग्या, पण रागसां रा मन नहीं पसीज्या।—रातवासो

पसीजणहार, हारो (हारी), पसीजणियो—वि०।

पसीजिग्रोड़ो, पसीजियोड़ो, पसीज्योड़ो—भू०का०कृ०।

पसीजियोड़ो-भू०का०कृ०—१ पिघला हुआ, द्रवित।

२ दयार्द्र।

(स्त्री० पसीजियोड़ी)

पसीनो—देखो 'प्रस्वेद' (रू भे.)

उ०—चोवरी नै पूछयो—बावळा फिजूल क्यूं आपळै ? सूखी धरती में क्यूं पसीनो गाळै ?—फुलवाड़ी

क्रि०प्र०—आणो, छूटणो, टपकणो, निकळणो, वै'णो, होणो।

मुहा०—१ पसीना री कमाई—परिश्रम से पैदा किया गया रुपया या धन।

२ पसीना री जागां खून वहाणो—किसी के लिए प्राण देने को तैयार रहना।

३ पसीना रो खून करणो—अथक परिश्रम करना।

४ पसीनो-पसीनो होणो—एकदम लज्जित होना, द्रवित होना।

पसु-सं०पु० [सं० पशु] चार पैरों से चलने वाला पूंछ वाला जन्तु जिसके शरीर का भार खड़े होने पर पैरों पर रहता हो।

उ०—पसु अजाद मूचराद होय घात प्रांणयं। असंख जात पंखि वांण वेवजे उडायणं।—रा.रू.

रू०भे०—पसू ।

अल्पा०—पसवौ, पसुवौ ।

पसुकाळ-सं०पु०यौ०[सं० पशु + काल]—सर्प, सांप ।

उ०—जंगळ विहाळ किय रुदन प्रस्टि । पसुकाळ जंतु मग परघौ द्रस्टि ।—ला.रा.

पसुगति-सं०स्त्री० [सं० पशुगति] पशु की सी स्थिति, पशुत्व ।

पसुघात-सं०स्त्री० [सं० पशुघात] पशुओं की बलि ।

उ०—बुध रूप होय अवतरै, भयै जु जुग विख्यात । नदा कीवी जगत की, सदया हिय पसुघात ।—गजउद्धार

पसुता-सं०स्त्री० [सं० पशुता] जानवरपन, पशुपन ।

पसुधरम-सं०पु० [सं० पशुधर्म] पशुओं का सा आचरण ।

पसुनाथ-सं०पु० [सं० पशुनाथ] १ शिव ।

२ सिंह ।

पसुपतास्त्र-सं०पु० [सं० पशुपतास्त्र] महादेव का शूलास्त्र, शिव का त्रिशूल ।

पसुपति, पसुपती-सं०पु० [सं० पशुपति] १ शिव, महादेव ।

(अ.मा.,डि.नां.मा.,नां.मा.)

२ सिंह ।

पसुभाव-सं०पु० [सं० पशुभाव] पशुपन, पशुत्व ।

पसुराज-सं०पु० [सं० पशुराज] सिंह, शेर ।

पसुलक्षण-सं०पु० [सं० पशुलक्षण] ७२ कलाओं में से एक कला ।

पसुवौ—देखो 'पसु' (अल्पा० रू.भे.)

उ०—वलि वनवासी पसुवा हिरणला रे, जोवौ मन धरि नेह ।

—वि.कु.

पसू—देखो 'पसु' (रू.भे.)

उ०—पसू पसू कह पुरुस नैं, आवौ करै अनरथ । पसू जिसा वे पुरुसड़ा, आवै और न अरथ ।—ऊ.का.

पसे-सं०पु०—दर्शन ।

उ०—अठै पहर अरस में, बैठा पीरी पसंनि । दादू पसे तिन्ह के, जे दीदार लहंनि ।—दादूबांणी

पसेउ—देखो 'प्रस्वेद' (रू.भे.)

पसेरी—देखो 'पसेरी' (रू.भे.)

पसेव, पसेवौ—देखो 'प्रस्वेद' (रू.भे.)

उ०—आडा लै लै चोका ठारै, पसेवा परियो क्यूं न संभारै ।

—ह पु.वा.

पसै-सं०स्त्री० [देशज] अंगूठा व अंगुलियों को मिलाकर गहरी की हुई हथेली, आधी अजलि (शेखावाटी)

पसोपेस-सं०पु० [फा० पसोपेश] असमंजस, दुविधा ।

पस्चाताप—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)

पस्चिम—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

उ०—जोड़ी एक पस्चिम दिसा जयसलमेर थटौ मुलतांन सूं लाहोर मांही कर आया पण घोड़ी री कठै ही सुध नहीं हुई ।

—सूरे खींवे कांधळोत री बात

पस्चिमतांनासन-सं०पु० [सं० पश्चिमतानासन] योग के चौरासी आसनों के अंतर्गत एक आसन ।

वि०वि०—इसमें दोनों पांवों को दण्ड की तरह आगे फैलाकर कूल्हों के बल बैठा जाता है । दोनों घुटने जमीन से सटे रहते हैं । फिर दोनों हाथों से दोनों पैरों के अंगूठों को पकड़ कर ललाट को घुटनों पर रख देते हैं । इससे प्राण का वहन सुषुम्ना में होने लगता है ।

पस्चिमसागर-सं०पु० [सं० पश्चिमसागर] आयरलैण्ड और अमेरिका के बीच का समुद्र ।

पस्चिमाचळ-सं०पु० [सं० पश्चिमाचल] अस्त होने पर सूर्य जिसकी आड़ में छिप जाता है, अस्ताचल ।

पस्त-वि० [फा०] पराजित, दबा हुआ ।

पस्तहिम्मत-वि० [फा०] कायर, डरपोक ।

पस्तां—देखो 'पिस्ता' (रू.भे.)

उ०—कागदी बदांम, कठ बदांम, सकरी बदांम, पस्ता, निमजा, चाइम, चारोली, जरदोळां, अंजीर ।—व.स.

पस्ताणौ, पस्तावौ—देखो 'पछताणौ, पछतावौ' (रू.भे.)

पस्तावणहार, हारौ (हारी), पस्तावणियौ—वि० ।

पस्तायोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पस्तावीजणौ, पस्तावीजवौ—कर्म वा० ।

पस्तायोड़ौ—देखो 'पछतायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पस्तायोड़ी)

पस्ताव—१ देखो 'पछतावौ' (मह०, रू.भे.)

२ देखो 'प्रस्ताव' (रू.भे.)

पस्तावणौ, पस्तावबौ—देखो 'पछताणौ, पछतावौ' (रू.भे.)

पस्तावणहार, हारौ (हारी), पस्तावणियौ—वि० ।

पस्ताविओड़ौ, पस्तावियोड़ौ, पस्ताव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पस्तावीजणौ, पस्तावीजवौ—कर्म वा० ।

पस्तावियोड़ौ—देखो 'पछतायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पस्तावियोड़ी)

पस्तावौ—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)

पस्तौ—देखो 'पसतौ' (रू.भे.)

पस्म-सं०स्त्री० [फा० पश्म] बढिया किस्म की मुलायम ऊन ।

पस्मीना—देखो 'पसमीन' (रू.भे.)

पस्यंती-सं०स्त्री० [सं० पश्यंती] मूलाधार से उठ कर हृदय में जाने की ध्वनि, नाद । उ०—परा चित चितवन करे, पस्यंती मनन मनार । मध्यमा लखत व्यवहार कूं, वैखरी ॐ महकार ।

—स्री हरिरांमजी महाराज

रू०भे०—पसंति ।

पस्सरणौ, पस्सरबौ—देखो 'पसरणौ, पसरबौ' (रू.भे.)

उ०—दखणी दक्खण पस्सरिया दळ । किरम कहा करस्सण मेहळ ।
—गु.रू.बं.

पस्सरणहार, हारो (हारी), पस्सरणियो—वि० ।

पस्सरिओड़ो, पस्सरियोड़ो, पस्सरयोड़ो—भू०का०कृ० ।

पस्सरीजणो, पस्सरीजबो—कर्म वा० ।

पह—सं०पु० [सं० पथ] १ रास्ता, मार्ग (जैन)

[सं०प्रभु] २ स्वामी, प्रभु । उ०—समर में दसकठ जिण सजे । पह वहा हर चाप दळ पजे ।—र.ज.प्र.

३ राजा, नृप । उ०—१ मेवाड़ हुआ नागां मंडळ, साफ राफ पाहाड़ सह । इकलिंग कंठ रहियौ 'अमर' चीलसेख चीतौड़ पह ।
—गु.रू.बं.

उ०—२ पुर जोवांण उदैपुर जैपुर, पह थांरा खूटा परियांण । आंकै गई आवसी आंकै, बांकै आसल किया बखांण ।—बां.दा.

[सं० पद=पय=पव=किरण] ३ प्रातःकाल, उषाकाल ।

उ०—१ दारुण गोयद-चौगद्द, फिरिया पह फट्टी ।—सू प्र.

उ०—२ बीजइ दिन ऊंमर मिळयउ पह ऊगंतइ सूर । ढोला मारू एकठा, कहि केतीहक दूर ।—ढो.मा.

मुहा०—पह फाटणी—प्रातःकाल होना ।

रू०भे०—पो', प्रह ।

५ प्रतिष्ठा, इज्जत, मान । उ०—१ नैतियार जिणरी नृपत, समाधांन सरसाय । विदो किया दसरथ बडौ, पह दे कुरब पसाय ।
—र.रू.

उ०—२ जमीं न पह पीठांण जिण, रद छद जेम रुळेह । वेखे कुण गढ बिहड बन, सुळगे किना सुळेह ।—रेवतसिंह भाटी

६ पुण्यकाल, सुअवसर । उ०—'पीथल' हरो प्रसंग मोटे पह, छळ पह परियां तणै छळि । पग देसी 'मधकरो' पयंपै, कमळा पालटियां कमळि ।—महेस कल्याणमलोत सांखला रो गीत

सं०स्त्री० [सं० पृथ्वी] ७ पृथ्वी, भूमि । उ०—पह पत रघुपती दत्त कोक पांणी ।—र.ज.प्र.

वि० [सं० प्रभु] १ योद्धा, वीर । उ०—सुणि जबाब 'जसराज' तेड़ि सिताब महा भड़ । सूर 'बलू' सारिखा, जिसा गोवरधन अनड़ । बींद घड़ा बांनैत, तेड़ि माहेस तिआरा । 'पीथल' 'कान' 'उदिल्ल' जिसा 'मधुकर' झूंझारां । 'जगराज' 'रुघा', 'गिरधर' जिसा पूछि 'जसै' मोटा पहां । उंबरां नरां असिपत्ति सूं, कहौ जाव कासूं कहां ।
—वचनिका

२ शक्तिशाली, समर्थ, बलवान । उ०—पह चाळक धनवंतपुर, लांठे लूट लियाह । कांठे नदी कवेरजा, खेमा खड़ा कियाह ।—बां.दा.

३ दाता, दानवीर ।

[सं० प्रथम] ४ पहला, प्रथम । उ०—पह ज्यांरा चित लागा, रघुबर पाय । पुळ पुळ में त्यां पुरखा, थिर सुख थाय ।—र.ज.प्र.

रू०भे०—पहू, पों, पोह, पोहव, पोहोव, पोहो, पोहष, पोहों ।

पहड़णो, पहड़बो—क्रि०अ० [सं० पृथु=प्रक्षेपे] १ अपने स्थान से हट जाना, डिग जाना, विचलित होना । उ०—१ भोळा की डर भागियो, अंस न पहड़ै ऐण । बीजी दीठां कुळ बहू, नीचा करसी नैण ।—वी.स.

उ०—२ लहरी दरियाव अवण दत लाखां, कीरत सुण आयौ सो कोस पहड़ै तू रांणा पारथियां, 'दीपा' इण कुळजुग नै दोस ।
—अोपो आढो

२ अधीर होना, घबराना । उ०—हिरणाकुस खड़हड़ै, पुत्र न पहड़ै । सो पर उरड़ै, खग सुरड़ै ।—भगतमाळ

३ धोखा देना ।

पहड़णहार, हारो (हारी), पहड़णियो—वि० ।

पहड़िओड़ो, पहड़ियोड़ो, पहड़योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहड़ीजणो, पहड़ीजबो—भाव वा० ।

रू०भे०—पहिड़णो, पहिड़बो, पहुड़णो, पहुड़बो, पुहड़णो, पुहड़बो, पैड़णो, पैड़बो ।

पहड़ियोड़ो—भू०का०कृ०—१ अपने स्थान से हटा हुआ, डिगा हुआ, विचलित हुवा हुआ ।

२ अधीर, घबराया हुआ ।

३ धोखा दिया हुआ ।

(स्त्री०पहड़ियोड़ी)

पहचवांन—देखो 'पौचवांन' (रू.भे.)

पहचांण—देखो 'पैचांण' (रू.भे)

उ०—एक वीर री स्त्री पती रा हाथ रा सस्त्रुवां रै सस्त्र लागा तिण री पहचांण करावै छै ।—वी.स टी.

पहचांणणो, पहचांणबो—देखो 'पैचांणणो, पैचाणबो (रू.भे.)

उ०—१ विड कुलछ पहचांण, प्रति हेत कीजै पछै । जगत कहै सो जांण, रेखा पाहण राजिया ।—किरपाराम

उ०—२ अलक डोरि तिल चढ़सवो, निरवळ चिबुक निवांण । सींचै नित माळी समर, प्रेम बाग पहचांण ।—बां.दा.

पहचांणणहार, हारो (हारी), पहचांणणियो—वि० ।

पहचांणिओड़ो, पहचांणियोड़ो, पहचांण्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहचांणीजणो, पहचांणीजबो—कर्म वा० ।

पहचांणाणो, पहचांणाबो—देखो 'पैचांणाणो, पैचांणावो' (रू.भे.)

पहचांणाणहार, हारो (हारी), पहचांणाणियो—वि० ।

पहचांणायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पहचांणाईजणो, पहचांणाईजबो—कर्म वा० ।

पहचि, पहची—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

उ०—१ सुर जेठ अने संकर सिको, अहि अमर मांनव उरा । परमेस निमो थारी पहचि, परा परा सिगळां परा ।—पी.ग्रं.

उ०—२ धणी थारी पहचो वात थारी धणी । ओहि नाखै असुर भीर भगतां तणी ।—पी.ग्रं.

पहट—सं०स्त्री० [देशज] १ पराजय, हार ।

उ०—कमघज्ज दियण, पसरां पहट, थिडे थट्ट, हुआ थड्ड ।
—गु.रू.बं.

२ ध्वस्त, नष्ट ।

उ०—पाडे किया पहट मैदानं । दरबार दिवांणह-खानं ।—गु.रू.बं.

३ प्रहार, आघात, टक्कर ।

उ०—हे नाळ पहट गिरतर हुआ, चढ़े घटा रज परचंडे । सरसती नदी तटि सिवपुर, महिपत्ती डेरा मंडे ।—सू.प्र.

रू०भे०—पहट्ट ।

पहटणो, पहटबो-क्रि०स० [देशज] १ हराना, पराजित करना ।

उ० —खड़ सेन खरहंड, धूण लीधी धर धारह । परमारां दळ पहट, दीध प्रसणां पाहारह ।—नैणसी

२ ध्वस्त करना, नष्ट करना ।

पहटणहार, हारौ (हारी), पहटणियौ—वि० ।

पहटिओड़ौ, पहटियोड़ौ, पहट्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पहटीजणौ, पहटीजबौ—कर्म वा० ।

पहट्टणौ, पहट्टबौ—रू०भे० ।

पहटियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ हराया हुआ, पराजित किया हुआ ।

२ ध्वस्त किया हुआ, नष्ट ।

(स्त्री० पहटियोड़ी)

पहट्ट—देखो 'पहट' (रू०भे०)

पहट्टणौ, पहट्टबौ—देखो 'पहटणौ', 'पहटबौ' (रू०भे०)

उ०—पोसाळियौ पहट्ट मिळे चिरद में मुकांमां । तटां चढ़ै तिण वार, घरां रावां ऊधांमां ।—सू प्र.

पहतणौ, पहतबौ—देखो 'पहुंचणौ' 'पहुंचबौ' (रू०भे०)

उ०—पहतउ किळास तणइ जाइ परबत, माता कन्हा आगिया मांग । तप पिण ऊहिज ऊहिज तीरथ, जगत सघारण ऊहिज जाग ।
—महादेव पारवती री वेलि

पहतणहार, हारौ (हारी), पहतणियौ—वि० ।

पहतिओड़ौ, पहतियोड़ौ, पहत्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पहतीजणौ, पहतीजबौ—भाव०वा० ।

पहतियोड़ौ-भू०का०कृ०—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू०भे०)

(स्त्री० पहतियोड़ी)

पहनणौ, पहनबौ—देखो 'पहरणौ, पहरबौ' (रू०भे०)

पहनणहार, हारौ (हारी), पहनणियौ—वि० ।

पहनिओड़ौ, पहनियोड़ौ, पहन्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पहनीजणौ, पहनीजबौ—कर्म वा० ।

पहनाई-सं०स्त्री०—पहनने की क्रिया या भाव ।

पहनाड़णौ, पहनाड़बौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू०भे०)

पहनाड़णहार, हारौ (हारी), पहनाड़णियौ—वि० ।

पहनाड़िओड़ौ, पहनाड़ियोड़ौ, पहनाड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पहनाड़ीजणौ, पहनाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पहनाड़ियोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू०भे०)

(स्त्री० पहनाड़ियोड़ी)

पहनाणौ, पहनाबौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)

पहनाणहार, हारौ (हारी), पहनाणियौ—वि० ।

पहनायोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पहनाईजणौ पहनाईजबौ—कर्म वा० ।

पहनाथ-सं०पु० [सं० प्रभुनाथ] ईश्वर ।

उ०—दसनाथ बिभज भराथ दखं । पहनाथ समाथ अनाथ पखं ।
—र.ज.प्र.

पहनायोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पहनायोड़ी)

पहनाव—देखो 'पहनावौ' (रू.भे.)

पहनावणौ, पहनावबौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)

पहनावणहार, हारौ (हारी), पहनावणियौ—वि० ।

पहनाविओड़ौ, पहनावियोड़ौ, पहनाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पहनावीजणौ, पहनावीजबौ—कर्म वा० ।

पहनावियोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पहनावियोड़ी)

पहनावौ-सं०पु०—पोशाक, पहिराव, सिरोपाव ।

रू०भे०—पहनाव, पहिनावौ ।

पहनियोड़ौ—देखो 'पहरियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पहनियोड़ी)

पहनी-सं०स्त्री० [सं० उपानह] जूती, पगरक्षिका (अ.मा.)

पहनौ—देखो 'पनौ' (रू.भे.)

उ०—अर डांभ रौ राछ एक जिनस रौ घड़ायौ । न जिहूं युगां मांहे सांभळचौ न दीठौ । पत्री च्यारि बिचाळै दिराई आगुळ बिहूं बिहूं रै पहनै री ।—द.वि.

पहप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)

उ०—सोनै वास सुवास, फूल अहिवेल तणै फळ । पीपळ तणै पहप, सुजळ जळ-निध तणौ जळ ।—पी.ग्रं.

पहपदंती—देखो 'पुस्पदंती' (रू.भे.)

पहपमाळ—देखो 'पुस्पमाळा' (रू.भे.)

पहपमास—देखो 'पुस्पमास' (रू.भे.)

पहपवेण-सं०स्त्री० [सं० पुष्पवेणि] फूलों की चोटी ।

पहपणौ, पहपबौ-क्रि०अ० [सं० पुष्प] प्रफुल्लित होना ।

उ०—पेखे सकति वदन पहपहियौ । कर जोड़े राजा इम कहियौ ।
—सू०प्र०

पहपणहार, हारौ (हारी), पहपणियौ—वि० ।

पहपहिओड़ौ, पहपहियोड़ौ, पहपच्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पहपीजणौ, पहपीजबौ—भाव वा० ।

पहपहियोड़ौ-भू०का०कृ०—प्रफुल्लित ।

(स्त्री० पहपहियोड़ी)

पहम, पहमी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—नवघण घटा गरक गुण तीनूं, राम रतन घन नेरा। बूठे मेह पहम रुति पलटे, सुख में रहे बसेरा।—ह.पु.वा.

पहर-सं०पु० [सं० प्रहर] देखो 'प्रहर' (रू.भे.)

उ०—१ पर निंदा आठूं पहर, चाटे विसरी चाठ। क्यों नंह तूं प्रांणी करै, पंच-रतन री पाठ।—बां.दा.

उ०—२ पाछलै पहर कुंवर रतन री सवारी बणाय मुत्सधियां सारां साथै गोपाळदास रै डेरै आयो।—गोपाळदास गौड़ री वारता

पहरण-सं०पु० [सं० प्रहरणम्] १ अस्त्र-शस्त्र।

२ देखो 'पहरणि' (रू.भे.)

पहरणि-सं०स्त्री० [सं० परिधान] पोशाक।

उ०—कडि मणि मेहल नूंपर रूप रहावइं पाय। पहरणि सेत्र पटउलीय कूलीय पांन न माइ।—जयसेखर सूरि

रू०भे०—पहरण, पैहरण।

पहरणौ, पहरबौ-क्रि०स० [सं० परिधान] पहिनना, धारण करना।

उ०—उदर दीधौ जिको पूरसी जळ असन। वणं छिब धणं पटपीत पहरण बसन।—र.ज.प्र.

पहरणहार, हारौ (हारी), पहरणियौ।—वि०।

पहरवाड़णौ, पहरवाड़बौ, पहरवाणौ, पहरवावौ, पहरवावणौ, पहरवावबौ, पहराड़णौ, पहराड़बौ, पहराणौ, पहरावौ, पहरावणौ, पहरावबौ।—प्रे०रू०।

पहरिओड़ौ, पहरियोड़ौ, पहरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पहरीजणौ, पहरीजबौ।—कर्म वा०।

पहनणौ, पहनबौ, पहिनणौ, पहिनबौ, पहिरणौ, पहिरबौ, पहीरणौ, पहोरवौ, पै'रणौ, पै'रबौ, पेंहरणौ, पेंहरबौ।—रू०भे०

पहरतणौ, पहरतबौ-क्रि०स० [सं० प्रहरणम्] नष्ट करना।

उ०—वळदेव महाबळ तासु भुजाबळि, पिड़ि पहरतं नवी परि। बिजड़ां मुहे बेवते बळभद्र, सिरां पुंज कीधा समरि।—वेलि

पहरतणहार, हारौ (हारी), पहरतणियौ—वि०।

पहरतिओड़ौ, पहरतियोड़ौ, पहरत्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पहरतीजणौ, पहरतीजबौ—कर्म०वा०।

पहरतियोड़ौ-भू०का०कृ०—नष्ट किया हुआ।

(स्त्री० पहरतियोड़ी)

पहरवौ—देखो 'प्रहरी' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—बास विकट कोई पांन न खंडै, अग वसै ता मांही लो। पायक पांच पहरवा राख्या, उदै अस्त दोय नांही लो।—ह पु.वा.

पहरांमणी, पहरांवणी—देखो 'पहरावणी' (रू.भे)

उ०—साल सूतरू चिकन सुभ, अतळस जरकस आंण। सो तट दी 'लाखै' तरां, पहरांमणी पुरांण।—बां.दा.

पहराइत—देखो 'पो'रायत' (रू.भे.)

उ०—चरणे चांमीकर तणा चंद्राणणि, सज नूपुर घूघरा सजि। पीळा भमर किया पहराईत, कमळ तणा मकरंद कजि।—वेलि

पहराड़णौ, पहराड़बौ—देखो 'पहराणौ, पहरावौ' (रू.भे.)

पहराड़णहार, हारौ (हारी), पहराड़णियौ—वि०।

पहराड़िओड़ौ, पहराड़ियोड़ौ, पहराड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पहराड़ीजणौ, पहराड़ीजबौ—कर्म वा०।

पहराड़ियोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पहराड़ियोड़ी)

पहराणौ, पहरावौ-क्रि०स० ('पहरणौ' क्रि० का प्रे० रू०) पहिनाना, धारण कराना।

उ०—किणही वीर स्त्री रौ पति जुद्ध में हारनै मरण सूं डरतौ तरवार री ताप सूं घर में आय वड़ियौ। तठै वीर स्त्री आपरा कपड़ा उतार पतीनै पहराय घर में आघो घुसाय···।—वी.स.टी.

पहराणहार, हारौ (हारी), पहराणियौ—वि०।

पहरायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पहराईजणौ, पहराईजबौ—कर्म वा०।

पहनाणौ, पहनावौ, पहनावणौ, पहनावबौ, पहराड़णौ, पहराड़बौ, पहरावणौ, पहरावबौ, पहिनांणौ, पहिनावौ, पहिराणौ, पहिरावौ, पै'राड़णौ, पै'राड़बौ, पै'राणौ, पै'रावौ, पै'रावणौ, पै'रावबौ, पैंहराड़णौ, पैंहराड़बौ, पैंहराणौ, पैंहरावौ, पैंहरावणौ, पैंहरावबौ—रू०भे०।

पहरायत—देखो 'पो'रायत' (रू.भे.)

पहरायोड़ौ-भू०का०कृ०—पहिनाया हुआ, धारण कराया हुआ।

(स्त्री० पहरायोड़ी)

पहराव—देखो 'पहनाव' (रू.भे.)

उ०—देवीदास पण सांझ रौ घरै आय, जीमण जीम महल गयौ। घड़ी पलक बतळावण करी। वही ले बहिर हुवौ। वांसे वहू पण गहणौ-कपड़ौ उतार, सादौ पहराव पहर बहिर हुई।

—पलक दरियाव री वात

पहरावणी-सं०स्त्री० [सं० परिधापनी] विवाह आदि शुभ संस्कार के पश्चात सगे संबंधियों को वस्त्र पहिनाने अथवा नकद के रूप में देने की प्रथा। यह प्रायः विवाह के पश्चात् होती है।

उ०—१ करि पहरावणी भोज संयुत। दीधा पेई भरी बहूत।

—वी.दे.

उ०—२ हमैं जांन यूं भात पहरावणी दे बिदा दीनी। सात सहेली नै दस दासी इण रै साथ कीनी।—र.हमीर

रू०भे०—पहरांमणी, पहरांवणी, पहिरांमणी, पहिरामणी, पै'रांमणी, पै'रांवणी, पै'रावणि, पै'रावणी, पेंहरांमणी, पैंहरावणी, पैंहरावणि, पैंहरावणी।

पहरावणौ, पहरावबौ—देखो 'पहराणौ, पहरावौ' (रू.भे.)

उ०—राजा राठौडवै, मेर माझी मुंह आगळ। पहरावै पडगरै, भार दोनौ भुज्जावळ।—गु.रू.वं.

पहरावणहार, हारौ (हारी), पहरावणियौ—वि०।

पहराविग्रोड़ो, पहराविोयोड़ो, पहराव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहरावोजणो, पहरावीजबो—कर्म वा० ।

पहराविोयोड़ो—देखो 'पहरायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहराविोयोड़ी)

पहरिणो. पहरिबो—देखो 'पहरणो, पहरबो' (रू.भे.)

उ०—ग्रर म्होकमसिंघ सुणनै पहरियां बैठो थो सो सरपाव ग्रर घोड़ो घणो घन खबरदार नूं दीधो।

—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

पहरियोड़ो-भू०का०कृ०—पहिना हुग्रा, धारण किया हुग्रा ।

(स्त्री० पहरियोड़ी)

पहरी, पहरू—देखो 'प्रहरी' (रू.भे)

पहरो-स०पु० [सं० प्रहरदान] १ रखवाली, निगरानी, चौकसी ।

उ०—पाताळ लोक मांही बळी राजा राज करै छै । त्यांकै द्वार भगवान ग्राप पहरो देवै ।—सिंघासण-बत्तीसी

मुहा०—१ पहरो देणो—चौकसी करना, रखवाली करना ।

२ पहरो पड़णो—चौकसी होना, रखवाली होना ।

२ रक्षक, नियुक्ति ।

मुहा०—१ पहरो बदळणो—रक्षक बदलना ।

२ पहरो बैठणो—रक्षक नियुक्त होना ।

३ पहरो बैठाणो—रक्षक नियुक्त करना ।

३ हिरासत, हवालात ।

मुहा०—१ पहरा में देणो—हिरासत में देना, हवालात में भेजना ।

२ पहरा में बैठाणो—देखो 'पहरा में देणो' ।

३ पहरा में रखणो—नजरबंद रखना, हिरासत में रखना ।

४ पहरा में होणो—नजरबंद होना ।

रू०भे०—पुहरो, पौ'रो, पोहरो, पौ'रो, पोहरो ।

पहल-वि० [स० प्रथम] प्रथम, प्रारम्भ । उ०—महाराज के जोधांण के राव । हथलूं पहल कीए बीजलूं के घाव ।—सू.प्र.

सं०पु० [?] १ बादल । उ०—जळ जाळ स्रवति जळ काजळ ऊजळ, पीळा एक राता पहल । ग्राघोफरै मेघ ऊपसता, महाराज राजै महल ।—वेलि

२ शत्रु, दुश्मन । उ०—पहलां सूं मिळ पकड़ियो, 'सिभू' ग्रौरंगसाह । चक्रवत दखण चालतो, राजा भूंडे राह ।—रा.रू.

३ मिट्टी का पात्र, कूंडा । उ०—मोलहण साह बोलियो—तीस बरस ईंधण हूं पूरीस, भीमसाह कह्यौ—म्हारै इतो गुळ है, ग्रठारै बरस तांई ढीकली गुळ रा हीज गोळा चलावो, सादूसाह कह्यौ—दही रा पहल भरिया है ।—बां.दा.ख्यात

४ धुनी हुई रूई की मोटी तह । उ०—रूई के पहल ज्यों सगूं पर चढ़ाइ रोळै । छूटे हंस पड़े जांणे मंजीठ बोळै ।—सू.प्र.

पहलकै—देखो 'पैलकै' (रू.भे.)

५ देखो 'पहलू' (रू.भे.)

रू०भे०—पहलल, पै'ल ।

पहलव-सं०स्त्री० [सं० पह्लव] एक प्राचीन जाति ।

पहलवां, पहलवान-सं०पु० [फा० पहलवान] कुश्तीबाज, पहलवान, मल्ल । उ०—जहां पहलवां जीभ सूं, केकाउस कहियोह । ग्रंतक केहर ग्रगर ग्रो, रुस्तम नहं रहियोह ।—बां दा.

रू०भे०—पे'लवांन, पै'लवांन ।

पहलवानी-सं०स्त्री० [फा० पहलवानी] कुश्ती लड़ने का कार्य, पहलवान होने का भाव ।

रू०भे०—पे'लवानी, पै'लवानी ।

पहलवी-सं०स्त्री० [फा० पह्लवी] ईरान की एक भाषा विशेष ।

रू०भे०—पल्हवी ।

पहलां—देखो 'पै'लां (रू.भे.)

उ०—ग्राय राजू खां नूं मालम कीवी । कही म्हां ग्राज पहलां इसो कजियो कियो न सुणियो ।—सूरे खींवे कांधळोत री बात

पहळाज, पहळाद—देखो 'प्रहळाद' (रू.भे.)

उ०—१ पाळै पख बार किता पहळाज। किया सुख सेवग सारण काज ।—ह.र.

उ०—२ ऊचरतां सुख ऊपजै, सुणतां ग्रावै स्वाद । कहियो दांणव कोप कर, हर पर-हर पहळाद ।—भगतमाळ

पहली—१ देखो पै'ली' (रू.भे.)

उ०—पहली किया उपाव, दव दुसमण ग्रांमय दटै । प्रचंड हुवा बस बाव, रोभा घालै राजिया ।—किरपारांम

२ देखो 'पहेली' (रू.भे.)

उ०—काढ़ै दोसण कायबा, वातां दिए बिगोय । पूछै ग्ररथ र पहलियां, सूब मजाकी सोय ।—बां.दा.

पहलीभव-वि०—पहले जन्मा हुग्रा, जेष्ठ (डिं को.)

पहलू-सं०पु० [फा०] १ बगल ग्रौर कमर के बीच का भाग, करवट ।

मुहा०—१ पहलू गरम करणो—किसी का विशेषत: प्रेयसी या प्रेमपात्र का सट कर बगल में बैठना या बैठाना ।

२ पहलू बदळणो—करवट बदलना. २ रंग बदलना ।

३ पहलू में बैठणो—किसी के पहलू से ग्रपना पहलू सटा कर बैठना ।

४ पहलू में बैठाणो—किसी के पहलू से ग्रपना पहलू सटा कर बैठाना ।

२ पड़ोस, ग्रासपास ।

मुहा०—१ पहलू बसणो—किसी के पड़ोस में जाकर रहना ।

२ पहलू में रहणो—किसी के निकट जाकर रहना ।

३ सेना का दाहिना ग्रथवा बायां भाग ।

मुहा०—१ पहलू दबाणो—किसी फौज या दुर्ग पर एक ग्रोर से ग्राक्रमण करना ।

२ पहलू पर होणो—सहायक होना ।

३ पहलू बचाणो—मुठभेड़ बचाते हुए निकल जाना, ग्रांख बचाना ।

४ विचारणीय विषय का कोई एक अंग ।
रू०भे०—पैंलू ।
पहलूणी—देखो 'पैंलूणी' (रू.भे.)
पहलूणो—देखो 'पैंलूणो' (रू.भे.)
(स्त्री० पहलूणी)
पहले—देखो 'पैंलै' (रू.भे.)
उ०—जउ साहिब तूं नावियउ, मेहां पहलइ पूर । विचइ वहेसी वाहळा, दूर स दूरे दूर ।—ढो.मा.
पहळो-वि० (स्त्री० पहळी) चौड़ा, विस्तृत ।
उ०—राहग कोस १५ लांबो, कोस १५ पनरै पहळो छै । कोस तीस री गिरदवाई छै ।—नैणसी
रू०भे०—पैंळो ।
पहलो—देखो 'पैंलो' (रू.भे.)
(स्त्री० पहली)
पहलोत-सं०स्त्री०—१ प्रथम पत्नी (जयपुर)
२ देखो—'पैलियांण' (रू.भे.)
पहल्ल—देखो 'पहल' (रू.भे.)
उ०—'पातल' परगह ओपरी, हलकारै हरवल्ल । जरमन काग कबांण ज्यूं, पलै भगांण पहल्ल ।—किसोरदांन बारहठ
पहल्ली—देखो 'पैंली' (रू.भे.)
उ०—कथ 'गोइंद' 'किसन' रै पेखि चित खांत पहल्ली । साहिजादै 'किसन' सूं, मंडे हित पेच मुगल्ली ।—सू.प्र.
पहल्लो—देखो 'पैंलो' (रू.भे.)
पहव-सं०पु० [सं० प्रभु] १ राजा, नृप ।
उ०—उछब मिळ त्रिय जूथ आए, गांन मंगळ चार गाए । अप्र कांम कळस्स आंणे, पहव वंदण कीध पांणे ।—सू प्र.
२ योद्धा, वीर ।
उ०—कुंडळ सूं कुळ भांण, पंथ आतुर खेडै पमंग । जोइयां उतन जभांण, पख हेकण आया पहव ।—गो.रू.
वि०—प्रथम ।
उ०—मिळै न पुळपुळ तन मनख, धनख-धरण चित धार । पात भड़ै तरवर पहव, चढ़े न फेर विचार ।—र.ज.प्र.
पहवि, पहवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)
उ०—१ कळिजुग वणि जड काढिवा, आयी मली अचंक री । फरवरी पहवि ऊपरि फिरै, निमो फोज निकळंक री ।—पी.ग्रं.
उ०—२ लोकां आगे इम कहि, मांहि बैठा जाय । जपै प्रथवी-पति जेह थी, पहवी वधइं प्रताप ।—प.च.चौ.
पहसाच-सं०पु० [सं० प्रहसांच] चद्रमा (नां.मा.)
पहांण—देखो 'प्रधांन' (रू.भे)
उ०—धम सुधम पहांण जत्थ नहु जीव हणीज्जइ । धम्म सुधम्म पहांण जत्थ नहु कूड़ भणिज्जइ ।—समयग्रतिक यती

पहा-सं०पु०—प्रण, प्रतिज्ञा ।
उ०—नेम धारियो नरेस, पहा न को चढ़े पेस । देख कहैं सको देस, खत्री बीज गयो खेस ।—र.रू.
पहाड़-सं०पु० [सं० पाषाण] १ पर्वत, गिरि (डि.नां.मा.)
मुहा०—१ पहाड़ उठाणो—बड़ा काम सिर पर लेना ।
२ पहाड़ कटणो—आफत दूर होना ।
३ पहाड़ काटणो—नामुमकिन काम करना ।
४ पहाड़ रा पत्थर ढोणो—देखो 'पहाड़ काटणो' ।
५ पहाड टाळणो—आफत से जान बचाना ।
६ पहाड़ टूटणो या टूट पड़णो—एकाएक भारी आफत आ जाना ।
७ पहाड़ सूं टक्कर लैणी—भारी शत्रु से सामना करना ।
८ पहाड़ हो जाणो—भारी या कठिन हो जाना ।
२ किसी वस्तु का बड़ा भारी ढेर ।
रू०भे०—पहार, पाड़, पाहड़, पाहाड़ ।
अल्पा०—पहाड़ी ।
पहाड़वी-सं०स्त्री० [?] दक्षिण दिशा से उत्तर दिशा की ओर बहने वाली हवा ।
वि०वि०—इस हवा के चलने से बादल तो खूब उमड़ते हैं किन्तु वर्षा नहीं होती है । यह हवा किसानों के लिए लाभदायक नहीं होती है ।
पहाड़ा-सं०पु० [सं० प्रस्तार ?] किसी एक अंक के सिलसिलेवार एक से लेकर दस तक के साथ गुणा करने के फल ।
ज्यूं—तीन रो पहाड़ो, सात रो पहाड़ो आदि ।
रू०भे०—पावड़ो ।
पहाड़ी-वि० [सं० पाषाण=पहाड़+रा. प्र. ई] पहाड़ पर रहने या होने वाला ।
सं०स्त्री०—१ एक राग विशेष जिसके गाने का समय आधी रात है ।
२ देखो 'पहाड़' (अल्पा., रू.भे.)
रू०भे०—पाहाड़ी ।
पहार—१ देखो 'पहाड़' (रू.भे.)
उ०—प्यारा वे दिन खूब था, बिच न समातो हार । अब तो मिळणो कठण है, पड़े जु बीच पहार ।—अज्ञात
२ देखो 'प्रहार' (रू.भे.)
उ०—नैण मळक्का लागिया, 'पंजर पड़ी पहार । कै भो घायल जांणसी, कै वो वाहणहार ।—जलाल बूबना री वात
पहारणो, पहारबो—देखो 'प्रहारणो, प्रहारबो' (रू.भे.)
उ०—किसनसिंघ कमधज्ज, मुओ 'गोध्रधन' मारे । करमसेन नीकळै, कूंत गज कुंभ पहारे ।—गु.रू.बं.
पहारणहार, हारो (हारी), पहारणियो—वि० ।
पहारिओड़ो, पहारियोड़ो, पहारयोड़ो—भू०का०कृ० ।

पहारीजणौ, पहारीजबौ—कर्म वा० ।

पहारियोड़ो—देखो 'प्रहारियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० प्रहारियोड़ी)

पहास—दखो 'प्रभास' (रू.भे.)
उ०—किसनेस' 'लाल' हरकिसन रा, बिहुं स्रोण भक बोळिया।
तरवार जोर वाही तिहां, पहास रीस पंचोळिया।
—बखतौ खिड़ियौ

पहासणौ, पहासबौ—देखो 'प्रभासणौ, प्रभासबौ' (रू.भे.)
पहासणहार, हारौ (हारी), पहासणियौ—वि० ।
पहासिम्रोड़ौ, पहासियोड़ौ, पहास्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहासीजणौ, पहासीजबौ—कर्म वा० ।

पहासियोड़ो—देखो 'प्रभासियोड़ो' (रू.भे)
(स्त्री० पहासियोड़ी)

पहि-अव्य०—१ किन्तु, लेकिन ।
उ०—सरसती न सूझै, ताइ तूं सोझै, वाउवा हुम्रो कि वाउळौ।
मन सरिसो धावतौ मूढ मन, पहि किम पूजै पांगुळौ।
—वेलि
२ देखो 'प्रथ्वी' (रू.भे)
३ देखो 'पथिक' (रू.भे.)

पहिम्र—देखो 'पथिक' (रू.भे.)

पहिड़ौ—देखो 'पैंड़ौ' (रू.भे.)

पहिचांण—देखो 'पैंचांण' (रू.भे.)

पहिचांणणौ, पहिचांणबौ—देखो 'पैंचांणणौ, पैंचांणबौ' (रू.भे.)
पहिचांणणहार, हारौ (हारी), पहिचांणणियौ—वि० ।
पहिचांणिम्रोड़ौ, पहिचांणियोड़ौ, पहिचांण्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहिचांणीजणौ, पहिचांणीजबौ—कर्म वा० ।

पहिचांणी—देखो 'पैंचांण' (रू.भे.)
उ०—तब कह्यो सु परमेस्वर कौंण। तब पढितां कह्यउ सु स्री क्रस्णजी। वासुदेवजी रा पुत्र। मनुस्य कै विचारि करि तौ इहि भांति अनुराग हुवउ। अर उवइ जातिस्मर हूंता ही। उनकी पहिला जनमां की पहिचांणि हूंती ही।—वेलि

पहिचांणियोड़ौ—देखो 'पंचांणियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहिचांणियोड़ी)

पहिटणौ, पहिटबौ-क्रि०स०—१ पलटना, बदलना।
उ०—नंदी तणा प्रवाह पहिटीइ, वनसपती जलिइ करी छाटीइ।
एह वइ सखी! ए वरसा काळ, नळहईइ जिम सल्लइ साल।
—नळ-दवदंती रास
२ देखो 'पैठणौ, पैठबौ' (रू भे.)
पहिटणहार, हारौ (हारी), पहिटणियौ—वि० ।
पहिटिम्रोड़ौ, पहिटियोड़ौ, पहिट्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहिटीजणौ, पहिटीजबौ—कर्म वा० ।

पहिटियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ पलटा हुआ, बदला हुआ।
२ देखो 'पैठियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहिटियोड़ी)

पहिठांणो-सं०पु०—एक जाति विशेष का घोड़ा। उ०—छत्रीस वरण तणा घोड़ा। किस्या-किस्या घोड़ा—उज्जरा, गह्वरा, फारा, तोरका, भारिजा, सींधुया, अहिबांणा, पहिठांणा, उत्तरदेस ना, ऊदिरा, कलूज देस ना कुनथा....।—कां.दे.प्र.

पहिडणौ, पहिडबौ—देखो 'पहड़णौ, पहड़बौ' (रू.भे.)
उ०—छोरू कुछेरू जो हुवै, तोही पहिड़ै नहीं मावीत। भोलपणै एहवौ कह्यौ, तोही राजा चाले नीत।—स्रोपाळ
पहिड़णहार, हारौ (हारी), पहिड़णियौ—वि० ।
पहिड़िम्रोड़ौ, पहिड़ियोड़ौ, पहिड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहिड़ीजणौ, पहिड़ीजबौ—भाव वा० ।

पहिड़ियोड़ौ—देखो 'पहड़ियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहिड़ियोड़ी)

पहिनणौ, पहिनबौ—देखो 'पहरणौ, पहरबौ' (रू.भे.)
पहिनणहार, हारौ (हारी), पहिनणियौ—वि० ।
पहिनिम्रोड़ौ, पहिनियोड़ौ, पहन्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहिनीजणौ, पहिनीजबौ—कर्म वा० ।

पहिनाणौ, पहिनाबौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)
पहिनाणहार, हारौ (हारी), पहिनाणियौ—वि० ।
पहिनायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहिनाईजणौ, पहिनाईजबौ—कर्म वा० ।

पहिनायोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहिनायोड़ी)

पहिनावणौ, पहिनावबौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)
पहिनावणहार, हारौ (हारी), पहिनावणियौ—वि० ।
पहिनाविम्रोड़ौ, पहिनावियोड़ौ, पहिनाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहिनावीजणौ, पहिनावीजबौ—कर्म वा० ।

पहिनावियोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहिनावियोड़ी)

पहिनावौ—देखो 'पहनावौ' (रू भे.)

पहिनियोड़ौ—देखो 'पहरियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहिनियोड़ी)

पहिय, पहियइ—देखो 'पथिक' (रू.भे.)
उ०—१ नरवर देस सुहांमणउ, जइ जावउ पहियांह। मारू-तणा संदेसड़ा ढोलइ नूं कहियाह।—ढो.मा.
उ०—२ मारू मारइ पहियड़ा, जउ पहिरइ सोवन्न। दंती चूड़इ मोतियां, श्रीया हेक वरन्न।—ढो.मा.

पहियौ—देखो 'पैंडौ' (रू.भे.)
उ०—तो सांवत कही—म्हारै ढाळ रै पगां पाछौ कुण फिरै। सो

मूंहडै आगै रहकळी खड़ो थो तिणरी पहियो चढ़ियो ही जे काढ़ लियो।
—नापै सांखलै री वारता

पहिरण—सं०पु० [सं० परिधान, प्रा० परिहाण] वस्त्र, पोशाक।

उ०—१ नयण सलूणीय काजल रेह तिलउ कसतूरी यम खिवडीय। करयले कंकण मणि झमकारु जादर फालीय पहिरण ए।
—पं.पं.च.

उ०—२ बीजळियां चमकै घणी, आभै-आभै पूरि। कदे मिले सूं सज्जना, करि कै पहिरण दूरि।—जसराज

पहिरणौ, पहिरबौ—देखो 'पहरणौ, पहरबौ' (रू.भे.)

उ०—मारुवणी मुंह-वस्त्र, आदित्ता हूं उज्जळौ। सोइ भांखउ सोवंस, जो गळि पहिरउ रूपकउ।—ढो.मा.

पहिरणहार, हारौ (हारी), पहिरणियौ—वि०।

पहिरिग्रोड़ौ, पहिरियोड़ौ, पहिरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पहिरीजणौ, पहिरीजबौ—कर्म वा०।

पहिरांमणी—देखो 'पहरावणी' (रू.भे.)

उ०—कुंयरी जोवा आवी भणी। राउलि दीधी पहिरांमणी।
—कां.दे.प्र.

पहिराइत—देखो 'पौ'रायत' (रू.भे.)

पहिराड़णौ, पहिराड़बौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)

उ०—कद करिसौ दुनीआंन मां, खूंदालमजी खैर। चुड़लौ कद पहिराड़सौ, बकै कुंआरी बैर।—पी.प्र.

पहिराणौ, पहिराबौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)

उ०—कणियर तरु करणि सेवंती कूजा, जातो सोवन गुलाल जत्र। किरि परिवार सकळ पहिरायौ, वरणि वरणि ईए वसत्र।—वेलि

पहिराणहार, हारौ (हारी), पहिराणियौ—वि०।

पहिरायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पहिराईजणौ, पहिराईजबौ—कर्म वा०।

पहिरायत, पहिरायति—देखो 'पौ'रायत' (रू.भे.)

उ०—ए पीळा भ्रमर छै। ए पहिरायति छै। चोकीदार छै। रुखमणिजी का चरण कमळ त्यैं को मकरंद जि रस—त्यैं का रखवाळा छै।—वेलि टी.

पहिरायोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पहिरायोड़ी)

पहिरावणी—देखो 'पहरावणी' (रू.भे.)

उ०—कीधी बहु पहिरावणी, राजवीयां ने रंग। रस राख्यो जस संग्रह्यौ, वाध्यो प्रेम अभंग।—स्रीपाळ

पहिरावणौ, पहिरावबौ—देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)

उ०—जो पहिरावै सोई पहिरूं, जो दे सोई खाऊं। मेरी उणकी प्रीत पुरांणी, उण बिनि पल न रहाऊं।—मीरां

पहिरावणहार, हारौ (हारी), पहिरावणियौ—वि०।

पहिराविग्रोड़ौ, पहिरावियोड़ौ, पहिराव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पहिरावीजणौ, पहिरावीजबौ—कर्म वा०।

पहिरावियोड़ौ—देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पहिरावियोड़ी)

पहिरी—देखो 'प्रहरी' (रू.भे.)

उ०—हाथी सहु पहिरी हलकारै, हलकंता नवि हारै। सुंडा-दंड सबळ विसतारै, मद-उनमत्ता मारै हो।—वि.कु.

पहिलइ—देखो 'पै'लौ' (रू.भे.)

उ०—पहिलइ पोहरै रैणकै, दिवला अंबर डूल। धण कसतूरी हुइ रही, प्रिव चंपा रो फूल।—ढो.मा.

पहिलउ—देखो 'पै'लौ' (रू.भे.)

उ०—ती पुत्र को हेत विचारतां पिता थी माता वडी। तेहि हित करि माता को वरणन पहिलउ कीयउ।—वेलि टी.

(स्त्री० पहिलड़ी)

पहिलकउ, पहिलकौ—वि० (स्त्री० पहिली) पहिले का, पूर्व का।

उ०—नयणां तणां बांण नीछटता, निमख निमख ताइ वाधइ नेह। रुत जांणती समउ जांणीयउ, साईं सूं पहिलकउ सनेह।
—महादेव पारबती री वेलि

पहिलड़ौ—देखो 'पै'लौ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—ताड़िका तणा जोनी सगट टाळीया। पहिलड़ै पवाड़ै लिगन ना पाळिया।—पी.ग्रं.

(स्त्री० पहिलड़ी)

पहिळाद, पहिळादि, पहिळादौ—देखो 'प्रहळाद' (रू.भे.)

उ०—१ हिरणाकस राकस जेण हणे, पहिळाद उधारण सोजि पणे। इळि भगत बभीखण लंक अपे, जगनाथ जगतगुरु आप जपे।—पि.प्र.

उ०—२ हरि नै प्यारौ हेत प्रथम पहिलादि पियारौ।—पी.ग्रं.

उ०—३ बळभद्र द्रू पहिळाद बभीखण। रतनो रुखमांगद अमरेस। मांझी हतो मीच कुळमंडण। सहकारी जुहिठळ सारीस।—दूदौ

उ०—४ पांचां सा पहिळाव, पाट हरिचंद पधारो। नवां कोड़ियां नूर, सात कोड़ियां सुधारो।—पी.ग्रं.

पहिली—देखो 'पै'ली' (रू.भे.)

उ०—१ जउ तूं साहिब नावियउ, सावण पहिली तीज। बीजळ-तणइ झबूकड़इ, मूंध मरेसी खीज।—ढो.मा.

पहिलुं, पहिलु, पहिलूं—देखो 'पै'लौ' (रू.भे.)

उ०—१ विप्र विलंब न कीध जेणि आइस वसि, वात विचारि न भली न बुरी। पहिलुं इ लगन लै पुहतो, प्रोहित चंदेवरी पुरी।
—वेलि

उ०—२ पापथांनिक पहिलु तुमे जांणो, जीव हिंसा नवि करीये। बेंद्री तेंद्री चोरिंद्री पंचेंद्री, वध मां मन नवी धरीये।—ऐ.जै.का.सं.

पहलूंणि, पहलूंणी—१ देखो 'प्रथम, पहिले'।

उ०—अेवडि आठे पांच टळाय, तीन ऊबरै बाकी ताय। पंगति अेर चलै तिणी पासि, परि पहिलूंणी लेम प्रकासि।—ल पिं.

२ देखो 'पैलियांण' (रू.भे.)

पहिलूंणो—देखो 'पैंलूणो' (रू.भे.)
(स्त्री० पैंलूणी)

पहिलै—देखो 'पैंली' (रू.भे.)

उ०—जिहां परमेस्वरि पहिलै जनम दीयो । जिण मुख रै विसै जीभ दीधी । पाछै भरण पोसण करै ।—वेलि टी.

पहिलो—देखो 'पैंलो' (रू.भे.)

उ०—१ किसै जबानै करै प्रघट दाखियो पहिलो । दैत भणै अकरूर विसन नां ल्याव वहिलो ।—पी.ग्रं.

उ०—२ स्री कृस्ण देव तें पहिलो ज रुकमणीजी को वरणन कीयउ। सु या वासते जु स्रंगार ग्रंथ कीजै तो पहिलै स्री को वरणन कीयो चाही जै । स्रंगार स्री को सोभित विसेस छै ।—वेलि टी.

पही—१ देखो 'पथिक' (रू.भे.)

उ०—१ कवि पंडित जाहिर करै, मोटां रो जस वास । छोटां रा जस रो हुवै, पहियां हूंत प्रकास ।—बां.दा.

उ०—२ पही ममंता जइ मिळइ, तउ प्री आखै भाय । जोवण बंधन तोडसइ, बंधण घातउ आय ।—ढो.मा.

२ देखो 'पैंड़ो' (रू.भे.)

उ०—कान जड़ाऊ कांम रा, कुंडळ धारण कीन्ह । झळहळ तारा झूमका, दुहुं पाखां ससि दीन्ह । दुहुं पाखां ससि दीन्ह, अंधार निकंदवा, तेजोमय रथ तास निघात पही नवा । मांगफूल सिरफूल, जड़ाऊ मंडिया । खिण खिण निरखै नाह, हियै दुख खंडिया ।—बां.दा.

पहुंच, पहुंचण-सं०स्त्री० [सं० प्रभूत] १ पहुंचने की क्रिया या भाव ।

२ किसी के कहीं पहुचने की सूचना ।

३ ऐसा स्थान जहां तक पहुंचा जा सके ।

ज्यूं—दीवाल घड़ी हाथ री पहुंच सूं ऊंची है ।

४ किसी स्थान या व्यक्ति तक पहुंचने की शक्ति, सामर्थ्य ।

उ०—१ सह दरसै संसार, अंग आकृत वण एक सम । चितवन समझ विचार, पहुचण कवण 'प्रतापसी' ।
—जैतदान बारहठ

५ किसी विषय का होने वाला ज्ञान ।

६ ज्ञान की सीमा ।

रू०भे०—पउहंत, पहुंत, पहुत, पहूंत, पहूत्त, पहोंत, पहोच, पांत, पांथ, पूंहच, पुंहत, पोच, पोत, पोंहच, पोहंत, पोंच, पोंछ, पोहत, पोहोरा, पौंच, पौच, पौइच, पौहत्त ।

पहुंचणो, पहुंचबो-क्रि०अ० [सं० प्रभूत, प्रा० पहुच] १ एक स्थान से चल कर दूसरे स्थान पर उपस्थित होना, प्राप्त होना, पहुंचना ।

उ०—दिन लगन सु नैड़ो, दूरि द्वारिका, भो पहुचेस्यां किसी भति । साझ सोचि कुंदणपुरि सूतो, जागियो परभाते जगति ।—वेलि

मुहा०—पहुंचण वाळो—जिसका प्रवेश बड़े-बड़े स्थानों में हो, बड़ी-बड़ी शक्तियों से सम्पर्क हो ।

२ किसी भेजी हुई वस्तु का प्राप्त होना ।

ज्यूं—चिट्ठी पहुंचवा सूं सब समाचार मालम हुया ।

३ फैलाव के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान तक व्याप्त होना, पहुंचना । (पानी, आग आदि)

४ मान, मात्रा या संख्या में किसी विशिष्ठ स्थिति को प्राप्त होना।

५ प्रविष्ठ होना, घुसना, पैठना ।

ज्यूं—इण भींत रै कारण सारा मकांन में सील पहुचै ।

६ समझने में समर्थ होना ।

उ०—कहु न सुन न सुखतै सुख आगै, अगम सहर है लोई । तहां बसै ताहि दाण न लागै, पहुंचै बिरळा कोई ।—ह पु.वा.

७ ज्ञान के क्षेत्र में सक्षम होना ।

उ०—कीधां कुण पहुंचै किसन, बडां सरीसां बाद । आद नको तो बिण अनंत, आतम क्रम्म न आद ।—ह.र.

८ किसी का आशय या अभिप्राय समझ लेना ।

ज्यूं—हूं आपरै मतलब तक पहुंच को पायो नीं।

मुहा०—पहुंचो हुओ—जिसे सब कुछ मालूम हो, जो सब कुछ जानता हो ।

९ किसी विषय में किसी के बराबर होना ।

ज्यूं—पढ़ण में म्हो आपरै भाई नै नीं पहुंचै ।

१० एक स्थिति या अवस्था से दूसरी स्थिति या अवस्था को प्राप्त होना, पाना (उन्नति)

११ परिणाम के रूप में अनुभव होना, प्राप्त होना ।

ज्यूं—हकीमजी री दवाई सूं काफी फायदो पहुंच्यो ।

पहुंचणहार, हारो(हारी), पहुंचणियो—वि० ।

पहुचाड़णो, पहुंचाड़बो, पहुंचाणो, पहुंचाबो, पहुंचावणो, पहुंचावबो
—प्रे०रू० ।

पहुंचिओड़ो, पहुंचियोड़ो, पहुंच्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहुंचीजणो, पहुंचीजबो—भाव वा० ।

पउहंतणो, पउहतबो, पहुंतणो, पहुंतबो, पहुतणो, पहुतबो, पहुत्तणो, पहुत्तबो, पहूंतणो, पहूंतबो, पहूतणो, पहूतबो, पहूत्तणो, पहूत्तबो, पहोंचणो, पहोंचबो, पहोंतणो, पहोंतबो, पहोतणो, पहोतबो, पांचणो, पांचबो, पांथणो, पांथबो, पूंहचणो, पूंहचबो, पुंहतणो, पूहतबो, पोंचणो, पोंचबो, पोंतणो, पोंतबो, पोहंचणो, पोहंचबो, पोंचणो, पोंचबो, पोंछणो, पोंछबो, पोहचणो, पोहचबो, पोहतणो, पोहत्तबो, पोंहचणो, पोंहचबो, पोथणो, पोथबो, पोहचणो, पौहचबो, पौहतणो, पौहतबो ।—रू०भे० ।

पहुंचवांन—देखो 'पोंचवांन' (रू.भे.)

पहुंचाड़णो, पहुंचाड़बो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचाबो' (रू.भे.)

उ०—मूंहतै रो साळो 'पतो मूंहतो' कोट मांहे हुतो सु वाहिरा जका वस्तु मांहि न्हाळीजती सु करमचंद मूंहतो घाटो मांहा पहुंचाड़ै तिण वास्तै कोट टूटै नहीं ।—द वि.

पहुंचाड़णहार, हारो(हारी), पहुंचाड़णियो—वि० ।

पहुंचाड़िओड़ो, पहुंचाड़ियोड़ो, पहुंचाड़्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पहुंचाड़ीजणो, पहुंचाड़ीजबो—कर्म वा० ।
पहुंचाड़ियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुंचाड़ियोड़ी)
पहुंचाणो, पहुंचाबो–क्रि०स० ('पहुंचणो' क्रि० का प्रे० रू०) १ एक स्थान से दूसरे स्थान पर उपस्थित या प्राप्त कराना, पहुंचाना ।
२ किसी भेजी हुई वस्तु को प्राप्त कराना ।
३ फैला कर एक स्थान से दूसरे स्थान तक व्याप्त कराना, पहुंचाना (आग, पानी)
४ मान, मात्रा या संख्या में किसी विशिष्ट स्थिति को प्राप्त कराना ।
५ प्रविष्ठ कराना, घुसाना, पैठाना ।
६ समझने में समर्थ कराना/करना ।
७ ज्ञान में सक्षम करना/कराना ।
८ किसी के आशय या अभिप्राय को समझाना ।
९ किसी विषय में किसी के बराबर करना/कराना ।
१० एक स्थिति या अवस्था से दूसरी स्थिति या अवस्था को प्राप्त कराना । (उन्नति)
११ परिणाम के रूप में अनुभव कराना, प्राप्त कराना ।
पहुंचाणहार, हारौ(हारी), पहुंचाणियो—वि० ।
पहुंचायोड़ो—भू०का०कृ० ।
पहुंचाईजणो, पहुंचाईजबो—कर्म वा० ।
पहुचाड़णो, पहुंचाड़बो, पहुंचावणो, पहुंचावबो, पहुचाड़णो, पहुचाड़बो, पहोंचाणो, पहोंचाबो, पहोंचावणो, पहोंचावबो, पांचाणो, पोचाबो, पुहुंचाणो, पुहुंचाबो, पुहुंताणो, पुहुंताबो, पोंहचाणो, पोंहचाबो, पोंचाणो, पोंचाबो, पोंछाणो, पोंछाबो, पोहचाड़णो, पोहचाड़बो, पोहचाणो, पोहचाबो, पोहचावणो, पोहचावबो, पोहोचाणो, पोहोचाबो, पोंहचाणो, पोंहचाबो, पोचाणो, पोचाबो, पोचावणो, पोचावबो, पोछाड़णो, पोछाड़बो, पोछाणो, पोछाबो, पोछावणो, पोछावबो, पोहचाणो, पोहचाबो, पोहताणो, पोहताबो —रू०भे० ।
पहुंचायोड़ो–भू०का०कृ०—१ एक स्थान से दूसरे स्थान पर उपस्थित या प्राप्त कराया हुआ, पहुचाया हुआ ।
२ किसी भेजी हुई वस्तु को प्राप्त कराया हुआ, पहुंचाया हुआ ।
३ फैला कर एक स्थान से दूसरे स्थान तक व्याप्त कराया हुआ । (आग, पानी)
४ किसी विशिष्ट स्थिति को प्राप्त कराया हुआ । (मान, मात्रा या संख्या में)
५ प्रविष्ठ कराया हुआ, घुसाया हुआ ।
६ समझने में समर्थ कराया हुआ ।
७ सक्षम कराया हुआ (ज्ञान में)
८ किसी के आशय या अभिप्राय को समझाया हुआ ।
९ किसी के बराबर कराया हुआ (किसी विषय में)
१० एक स्थिति या अवस्था से दूसरी स्थिति या अवस्था को प्राप्त कराया हुआ (उन्नति)
११ परिणाम के रूप में अनुभव कराया हुआ, प्राप्त कराया हुआ ।
(स्त्री० पहुंचायोड़ी)
पहुंचावणो, पहुंचावबो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचाबो' (रू.भे.)
पहुंचावणहार, हारौ(हारी), पहुंचावणियो—वि० ।
पहुंचाविओड़ो, पहुंचावियोड़ो, पहुंचाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पहुचावीजणो, पहुंचावीजबो —कर्म वा० ।
पहुंचावियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुंचावियोड़ी)
पहुंचियोड़ो–भू०का०कृ०—१ एक स्थान से चल कर दूसरे स्थान पर उपस्थित हुवा हुआ, प्राप्त हुवा हुआ, पहुंचा हुआ ।
२ ईश्वर का सामीप्य प्राप्त, ज्ञानी ।
३ प्राप्त हुवा हुआ, पहुचा हुआ (पत्र या वस्तु)
४ फलाव के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान तक हुवा हुआ । (पानी, आग)
५ मान, मात्रा या संख्या में किसी विशिष्ट अवस्था को प्राप्त हुवा हुआ ।
६ घुसा हुआ, पैठा हुआ, प्रविष्ठित ।
७ समझने में समर्थ ।
८ किसी कार्य सम्पादन में दक्ष, चतुर, सक्षम, ज्ञानी ।
९ ज्ञान के क्षेत्र में सक्षम, पारंगत ।
१० प्रकाण्ड-पण्डित ।
११ किसी के आशय या अभिप्राय को समझा हुआ, प्राप्त हुवा हुआ ।
१२ किसी विषय में किसी के बराबर हुवा हुआ ।
१३ एक स्थिति या अवस्था से दूसरी स्थिति या अवस्था को प्राप्त हुवा हुआ । (उन्नत)
१४ परिणाम के रूप में अनुभव हुवा हुआ, प्राप्त हुवा हुआ ।
(स्त्री० पहुंचियोड़ी)
पहुंचि, पहुंची—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)
उ०—पुणै सुर असुर 'दुरंगेस' अधकी पहुंचि, वडां अनड़ां सिरै आंक वाळै । पूत 'अवरंग' तणै लार सारा पळै, पूत अवरंग तणा तूंहीज पाळै ।—दुरगादास राठौड़ रौ गीत
पहुंचो—देखो 'पुणचो' (रू.भे.)
उ०—अही नारी जपै, लही मोल ऊंची, प्रभू रै पहुंचै लटूके प्रहुंची ।
—ना.द.
पहुंत—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)
पहुंतणो, पहुंतबो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)
उ०—पित कुरब लूंण भूपाळ रो, करि ऊजळ जुध जस करगि । मगरूर भेदि सूरज मंडळ, 'सूरजमल' पहुंतो सरगि ।—सू.प्र.

पहुंतणहार, हारौ (हारी), पहुंतणियौ—वि० ।
पहुंतिग्रोड़ौ, पहुंतियोड़ौ, पहुंत्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहुंतीजणौ, पहुंतीजबौ—भाव वा० ।

पहुंतियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुंतियोड़ी)

पहु-सं०पु० [सं० प्रभु] १ ईश्वर, प्रभु ।
उ०—नमो पहु सायर बांधण पाज, नमो रिपु-रांवण-रोळण-राज ।
—ह.र.

२ राजा, नृप ।
उ०—१ पहु गोघळिया पास, ग्रालूघा अकबर तणी। रांणौ खिमै न रास, प्रघळौ सांड 'प्रतापसी' ।—दुरसौ ग्राढ़ौ
उ०—२ मोटां पहु ग्राराघ करै महि, मोटै गढ़ लीजतै मुवौ । जगि हरि-भगत तुहाळौ 'जैमल', हरि सारीख प्रताप हुवौ ।
—जैमल वीरमदेवोत मेड़तिया राठोड़ रौ गीत

क्रि०वि०—प्रत्यक्ष, सामने ।
रू०भे०—पहू ।

पहुग्रावर-सं०पु० [देशज] एक प्रकार का व्यंजन विशेष ।
उ०—पहुग्रावर घनपुर तणा रे, लाल गुप-चुप गढ ग्वाळेर । करणसाही लाडू भला रे, लाल वारू बीकानेर ।—प.च.चौ.

पहुचणौ, पहुचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
पहुचणहार, हारौ (हारी), पहुचणियौ—वि० ।
पहुचिग्रोड़ौ, पहुचियोड़ौ, पहुच्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहुचीजणौ, पहुचीजबौ—भाव वा० ।

पहुचाड़णौ, पहुचाड़बौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू.भे.)
उ०—सिवांणौ राजाजी हीज तोड़ियौ हुतौ पणि मुंहतौ 'पतै' मुंहतै नूं ऊपरि जिका वस्तु जोईजती सु पहुचाड़तौ तिण वासतै गांव तूटौ नहीं ।—द.वि.
पहुचाड़णहार, हारौ (हारी), पहुचाड़णियौ—वि० ।
पहुचाड़िग्रोड़ौ, पहुचाड़ियोड़ौ, पहुचाड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहुचाड़ीजणौ, पहुचाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पहुचाड़ियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुचाड़ियोड़ी)

पहुचाणौ, पहुचाबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू.भे.)
पहुचाणहार, हारौ (हारी), पहुचाणियौ—वि० ।
पहुचायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहुचाईजणौ, पहुचाईजबौ—कर्म वा० ।

पहुचायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुचायोड़ी)

पहुटणौ, पहुटबौ—देखो 'पहटणौ, पहटबौ' (रू.भे.)
उ०—तूटै हार ग्रयार तुरंगम, पहुटति मांग अनंग पड़ी। कमघज 'रतनै' सूं विसकामणि, चाचरि चवरंग पलंग चढ़ी ।—दूदौ
पहुटणहार, हारौ (हारी), पहुटणियौ—वि० ।
पहुटिग्रोड़ौ, पहुटियोड़ौ, पहुट्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहुटीजणौ, पहुटीजबौ—भाव वा० ।

पहुड़णौ, पहुड़बौ—देखो 'पहुड़णौ, पहड़बौ' (रू.भे.)
पहुड़णहार, हारौ (हारी), पहुड़णियौ—वि० ।
पहुड़िग्रोड़ौ, पहुड़ियोड़ौ, पहुड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहुड़ीजणौ, पहुड़ीजबौ—भाव वा० ।

पहुड़ियोड़ौ—देखो 'पहड़ियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुड़ियोड़ी)

पहुत—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)
पहुत्त—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)
पहुतणौ, पहुतबौ—देखो 'पहुचणौ, पहुचबौ' (रू.भे.)
उ०—ताहरां 'ऊदौ' पाग्र ले चालियौ । जाइ 'मेळै' रै गांम पहुंतौ।
—ऊदै उगमणावत री बात

पहुतणहार, हारौ (हारी), पहुतणियौ—वि० ।
पहुतिग्रोड़ौ, पहुतियोड़ौ, पहुत्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पहुतीजणौ, पहुतीजबौ—भाव वा० ।

पहुत्तणौ, पहुत्तबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
उ०—इणि परि ऊमा देवड़ी, जांणी मारुवत्त। सुप्रभाति कहि बांभणी, पिंगळ पासि पहुत्त ।—ढो.मा.

पहुतियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुतियोड़ी)

पहुपंजळि—देखो 'पुस्पांजळि' (रू.भे.)
उ०—प्रगटै मधु कोक संगीत प्रगटिया, सिसिर जवनिका दूरि सिरि। निज मंत्र पढ़ै पात्र रितु नांखी, पहुंपंजळि वणराय परि ।—वेलि

पहुप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)
उ०—पहुप भार दुख जननि न प्रंमै। जोगणि ग्रसटम वरस जनंमै।
—सू.प्र.

पहुपांजळी—देखो 'पुस्पांजळि' (रू.भे.)
पहुमि, पहुमी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)
उ०—१ प्राणांत पहुमि परिणामपस्य। रट्ठौर सकळ संबत रहस्य।
—ऊ.का.

उ०—२ छोरा रोळा में छपने रस रुळिया, पहुमी नवरस नस दस हों दिस पुळिया ।—ऊ.का.
उ०—३ जळ जेथे जगदीस, भासे जग भागीरथी। सो व्है पहुमी सीस, तो जळ सूं निरमळ तुरत ।—बां.दा.

पहुर—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)
उ०—पहुर हुवउ ज पधारियां, मो चाहती चित्त। डेडरिया खिण मइ हुवइ, घण बूठइ सरजित्त ।—ढो.मा.

पहुवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—छूटी आसारां कासारां छिळती । पड़ती परनाळां पहुवी पिळपिळती ।—ऊ.का.

पहुवीनाह—देखो 'प्रथवीनाथ' (रू.भे.)

पहूंत—देखो 'पहुच' (रू.भे.)

पहूंतणो, पहूतबो—देखो 'पहुचणो पहुंचबो' (रू.भे.)

उ०—१ पाडघो-प्रधान चल्यो तिणी ठाई । गढ़ अजमेर पहूता जाई । —बी.दे.

पहूंतणहार, हारो (हारी), पहूंतणियो—वि० ।

पहूंतिओड़ो, पहूंतियोड़ो, पहूंत्योड़ो—भू०का०कृ०

पहूंतीजणो, पहूंतीजबो—भाव वा० ।

पहूंतियोड़ो—देखो 'पहुचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहूंतियोड़ी)

पहू—देखो 'पहु' (रू.भे.)

उ०—तूं जागतउ तीरथ 'पास' पहू । जोणइ ए बात जगत्र सहू । —स.कु.

पहूतणो, पहूतबो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)

उ०—पंचम कउ दिन पहूतो छइ आई । अवत होइ घरि छोडो हो राई ।—बी.दे.

पहूतणहार, हारो (हारी), पहूतणियो—वि० ।

पहूतिओड़ो, पहूतियोड़ो, पहूत्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहूतीजणो, पहूतीजबो—भाव वा० ।

पहूतियोड़ो—देखो 'पहुचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहूतियोड़ी)

पहूत्त—देखो 'पहुच' (रू.भे.)

पहूत्तणो, पहूत्तबो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)

उ०—हय हींसारव गज घमक, बलीया सुहड़ बहूत्त । क्रमि क्रमि मारग मूंकता, कांमावती पहूत्त ।—मा.कां.प्र.

पहूत्तणहार, हारो (हारी), पहूत्तणियो—वि० ।

पहूत्तिओड़ो, पहूत्तियोड़ो, पहूत्त्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहूत्तीजणो, पहूत्तीजबो—भाव वा० ।

पहूत्तियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहूत्तियोड़ी)

पहेली—सं०स्त्री० [सं० प्रहेलिका] १ दूसरी वस्तु या विषय का-सा जान पड़ने वाला किसी वस्तु या विषय का वर्णन, बुझौवल । (उ.र.)

२ कोई ऐसी बात जिसका अर्थ न खुलता हो ।

मुहा०—पहेलो बूझणो, घुमा फिरा कर कहना ।

रू०भे०—पहलो, पहैलो, प्रहेलि, प्रहेलिका ।

पहेत—वि०—सहित, संयुक्त ?

उ०—घणी मूंग बाजरी री खीच रांद दाळ रोटियां पहेत खीर गोरस सारो तयार करनै राखिया छै ।—नैणसी

पहैली—१ देखो 'पं'ली' (रू.भे.)

उ०—पोहर हेक रिड़ मां पहैली, पाय खांड घर परवाळी । लाग अवासां कूंमे लागी, मांडु धुणी परतमाळी ।—नैणसी

२ देखो 'पहेली' (रू.भे.)

पहोंच—देखो 'पहुच' (रू.भे.)

उ०—बादसाहा तूं कांम घणा छे तिणसूं कांम री पहोंच पूरी नहीं कर सकै ।—नी.प्र.

पहोंचणो, पहोंचबो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)

उ०—इतरै में आपरो लोग पण माण हीज पहोंचियो । सत्रुसाळ, रत्न महेसदासोत ऐ सामळ रहिया ।

—महाराजा स्री पदमसिंह री वात

पहोंचणहार, हारो (हारी), पहोंचणियो—वि० ।

पहोंचिओड़ो, पहोंचियोड़ो, पहोंच्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहोंचीजणो, पहोंचीजबो—भाव वा० ।

पहोंचाणो, पहोंचाबो—'पहुंचाणो, पहुंचाबो' (रू.भे.)

पहोंचाणहार, हारो (हारी), पहोंचाणियो—वि० ।

पहोंचायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पहोंचाईजणो, पहोंचाईजबो—कर्म वा० ।

पहोंचायोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो (रू.भे.)

(स्त्री० पहोंचायोड़ी)

पहोंचावणो, पहोंचावबो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचाबो' (रू.भे.)

पहोंचावणहार, हारो (हारी), पहोंचावणियो—वि० ।

पहोंचाविओड़ो, पहोंचावियोड़ो, पहोंचाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहोंचावीजणो, पहोंचावीजबो—कर्म वा० ।

पहोंचावियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहोंचावियोड़ी)

पहोंचियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहोंचियोड़ी)

पहोंत—देखो 'पहुच' (रू.भे.)

पहोंतणो, पहोंतबो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)

उ०—ईण भांत दिन पांच सात आडा घात नै एक तो साथ रजपूत अर येक चाकर सो भी मजबूत । दोय आदमी साथ लेनै जिण मेवासा मैं भील रहतो तठै ही आप जाय पहोंतो ।

—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

पहोंतणहार, हारो (हारी), पहोंतणियो—वि० ।

पहोंतिओड़ो, पहोंतियोड़ो, पहोंत्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पहोंतीजणो, पहोंतीजबो—भाव वा० ।

पहोंतियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहोंतियोड़ी)

पहोड़—सं०पु०—भाटी वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति ।

पहोड़ौ—देखो 'पैं'ड़ौ' (रू.भे.)

उ०—जावतै हीज मुंह आगै रावजी रौ अराबौ खड़ौ हुतौ सु एकै रहकळै रौ पहोड़ौ चढ़ियै हीज काढ़ि अर हाथ कर लियौ। —नैणसी

पहोच—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पहोचणौ, पहोचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

पहोचणहार, हारौ (हारी), पहोचणियौ—वि०।

पहोचिओड़ौ, पहोचियोड़ौ, पहोच्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पहोप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)

उ०—जन हरिदास वसंत रुति, खेले गोपी ग्वाळ। हरि सन्मुख जहां का तहां, करि पहोपन की माळ।—ह.पु.वा.

पहोपकछौ-सं०पु० [सं० पुष्पकच्छ] एक प्रकार का अशुभ रंग का घोड़ा (शा हो.)

पहोमि, पहोमी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

पहोर—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)

उ०—१ पछै आथण रौ पहोर छै, ताहरां 'जैतौ', 'कूंपौ', अखैराज सोनगरौ कूंपाजी रै डेरै में बैठा छ।—नैणसी

पहोरौ—देखो 'पहरौ' (रू.भे.)

उ०—जगहत्थ जगत सिर जळहळै, दस द्रिगपाळ दहक्कवै। महि-माल छहां जिहां सातमौ, चौथै पहोरै चक्कवै।—सू.प्र.

पहोवर—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)

पहोवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—चंचळ चपळ चकोर जिम, नयण कांती सोहै घणी। कहै राघव सुलतांण सुणि, पहोवी हुवै अइसी पदमणी।—प.च.चौ.

पहोत—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पहोतणौ, पहोतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—१ पछै सवराड़ रा गाडा दुनाड़ै पहोता। तितरै देवीदास रांणराव रौ थांणौ मारनै गढ़ लियौ।—नैणसी

उ०—२ चंदरसेण सारण रौ चढ़ियौ, लोहीयावट आय पहोतौ। —नैणसी

पहोतणहार, हारौ (हारी), पहोतणियौ—वि०।

पहोतिओड़ो, पहोतियोड़ौ, पहोत्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पहोतीजणौ, पहोतीजबौ—भाव वा०।

पहोर—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)

उ०—दिन पहोर चढ़ियौ नै वोठी फळोधी आया।—नैणसी

पह्लवी—देखो 'पहलवी' (रू.भे.)

पां-क्रि०वि०—१ पास में (हाड़ौती)

२ देखो 'पांसु' (रू.भे.)

३ देखो 'पद' (रू.भे.)

४ देखो 'पांम' (रू.भे.)

पाउंडो, पांउडो—देखो 'पांवडो' (रू.भे.)

पांऊणौ—देखो 'पामणौ' (रू.भे.)

उ०—ढोला तणा संदेसड़ा, दिस सैणां कहियाह। हूं आवु छुं पांऊणौ, वेगौ हो वहीयांह।—ढो.मा.

पांक—१ देखो 'पूंख' (रू.भे.)

२ देखो 'पंक' (रू.भे.)

पांकणौ, पांकबौ-क्रि०स० [?] १ छोड़ना, त्यागना।

उ०—१ अमर हुआ नह को इळ ऊपर, पांकै धरम जिकै नर पोच। सूरां मरण तणी की संका, सूरां मरण तणी की सोच। —केसरीसिंह बारहठ (रूपावास)

उ०—२ हूं लालच पांकै नहीं, वै आंकै धारांह। लैणौ भावै मंगणां, दैणौ दातारांह।—बां दा.

पांकणहार, हारौ (हारी), पांकणियौ—वि०।

पांकिओड़ौ, पांकियोड़ौ, पांक्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पांकीजणौ, पांकीजबौ—कर्म वा०।

पांकियोड़ौ-भू०का०कृ०—छोड़ा हुआ, त्यागा हुआ।

(स्त्री० पांकियोड़ी)

पांख-सं०स्त्री० [सं० पक्ष] १ पक्षी का डैना, पंख, पर।

उ०—सयणां पांखां प्रेम की, तइं अब पहिरी तात। नयण कुरंगउ ज्यूं बहइ, लगइ दीह नहिं रात।—ढो.मा.

२ कुक्षि, कूंख।

उ०—बालो पांखां बाहर आयौ, माता बैण सुणावै यूं। म्हारी गोद सिळाय रै बाला, मैं तोय सखरी घूंटी दूं।—लो.गी.

मुहा०—पांखां बाहर आणौ—जन्म लेना, पैदा होना।

३ शाखा।

उ०—साहपुरौ देवळियौ दोय पांख उदैपुर री ऐ।—बां.दा.ख्यात

४ पुष्पदल।

५ देखो 'पूंख' (रू.भे.) (जैसलमेर)

रू०भे०—पांखी।

अल्पा०—पांखड़ली, पांखड़ि, पांखड़ी, पांखुड़ली, पांखूड़ी।

मह०—पांखड़, पांखड़ौ।

पांखड़ली, पांखड़ी—देखो 'पांख' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—१ चांचड़ली थारै हिंगळू ढोळू, पांखड़ल्यां रंग केसर। ए चिड़कली गीगा नै खिलायी ए।—लो.गी.

उ०—२ पांखड़ियां ई किउ नहीं, दैव अवाडू ज्याह। चकवी कइ हुइ पंखड़ी, रयणि न मेळउ त्यांह।—ढो.मा.

उ०—३ तुझ मुख मटकउ अति भलौ रे, जांणइ पुनमचंद। आंखड़ी कमळ नी पांखड़ी, सीतल नइ सुखकंद।—वि कु.

पांखड़ौ—१ देखो 'पांख' (मह.,रू.भे.)

२ देखो 'पूंख' (अल्पा.,रू.भे.)

पांखण—देखो 'पंखण' (रू.भे.)

उ०—सुरतांण दत्तांणी खाग खळां सर, पींजरिया परमळ पहरंत।

पांखण तीयै अजै भख पामै, भमर अजै लग वास भमंत ।
—दुरसो आढ़ो

पांखणो, पांखबो—देखो 'प्रांखणो, प्रांखबो' (रू.भे.) ।
उ०—पल तणौ तोरण पांखीजै, बड़ वेहड़ा घट टोप विचाळ । आखा सीर आरती असमर, वांमे अंग घाले वरमाळ ।
—राठौड़ अमरसिंह गजसिंहोत री बात

पांखणहार, हारौ (हारी), पांखणियौ—वि० ।
पांखिग्रोड़ौ, पांखियोड़ौ, पांख्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पांखीजणौ, पांखीजबौ—कर्म वा० ।

पांखळियौ—देखो 'पांखळौ' (अल्पा., रू.भे.)

पांखळौ-सं०पु० [सं० पक्ष+आलुच्] १ बैलगाड़ी के दाईं तथा बाईं ओर लगाया जाने वाला लकड़ी का कटहरा जिससे उसमें रखा जाने वाला अनाज या सामान बाहर न गिरने पावे ।
२ बकरी के बालों का बना हुआ वह कपड़ा जो अनाज आदि भर कर लाते समय बैलगाड़ी के चारों ओर डंडे लगाकर लगाया जाता है ताकि अनाज बाहर न गिरने पावे । (मारवाड़)
रू०भे०—पाखळौ ।
अल्पा०—पांखळियौ, पाखळियौ ।

पांखणी—देखो 'पंखणी' (रू.भे.)
उ०—छायौ गयण रंग रथ छाजै । विखमी पांख पांखणी वाजै ।
—सू.प्र.

पांखियोड़ौ—देखो 'प्रांखियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पांखियोड़ी)

पांखियौ—देखो 'पक्षी' (अल्पा.,रू भे.)
उ०—उमंडे मद् गै-सुंड डोहै अगे । पांखिया जांण पाहाड़ हालै पगे ।
—गु रू.बं.

पांखी—देखो 'पांख' (रू.भे)
उ०—पेखूं अंग प्रियंगु, केसड़ा मोर पांखियां । मुखड़ौ चंदं मांय, आंखड़ी नैण हिरणियां ।—मेघ.

पांखीजणौ, पांखीजबौ-क्रि०अ० [सं० पक्ष+रा. प्र. ईजणौ] चींटियों का पंखयुक्त होना ।

पांखीजियोड़ौ-भू०का०कृ०—पंखयुक्त हुवा हुआ ।
(स्त्री० पांखीजियोड़ी)

पांखुड़ी, पांखूड़ी—देखो 'पांख' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—१ त्यांह का इसा उजळा नख छै । ज्यां मांहे केसरि की पांखुड़ीयां रौ प्रतिबिंब दीसै छै ।—वेलि टी.
उ०—२ रुकमणीजी कइ साथि जु सखी छै सु सीलैं करि कुलैं कर नै वै करि एक समांन छै । जैसे कमळ नी पांखूड़ी सरव बराबरि छै ।
—वेलि टी.

पांगरण—देखो 'पंगरण' (रू.भे.)
उ०—खांन पांन पांगरण नु, मूढ ! म करसि विचार । आगळि-आगळि अनुक्रमइं, स्वांमि करेसि सार ।—मा.कां.प्र.

पांगरणौ, पांगरबौ-क्रि०अ० [सं० उपाङ्गधरणम्] १ अंकुरित होना, पनपना । उ०—सांवण आयौ सायबा, सब बन पांगरियाह । आव विदेसी पांवणा, ए दिन दूभरियाह ।—अज्ञात
२ हृष्टपुष्ट होना, ताजा होना ।
३ विहार करना । उ०—वाल्हेसर रलियांमणा हो, जे जगि साचा मीत । तिण थी पांगरउ पूज्यजी रे, मो मनि ए परतीत ।
—समय प्रमोद

पांगरणहार, हारौ (हारी), पांगरणियौ—वि० ।
पांगरिग्रोड़ौ, पांगरियोड़ौ, पांगर्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पांगरीजणौ, पांगरीजबौ—भाव वा० ।
पंघरणौ, पंघरबौ, पांगुरणौ, पांगुरबौ, पांगूरणौ, पांगूरबौ, पांगळणौ, पांगळबौ—रू०भे० ।

पांगरियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ पनपा हुआ, अंकुरित ।
२ हृष्टपुष्ट हुवा हुआ, ताजा हुवा हुआ ।
२ विहार किया हुआ ।
(स्त्री० पांगरियोड़ी)

पांगळ-सं०पु० [सं० पांगुल्य] १ ऊंट (अ.मा.) (ना.डि.को.)
२ युवा ऊंट ।
उ०—आंटाळी पाघड़ी बांध नै तेलिया पांगळ माथै चढ'र सेठ जठेई जावता, खूब भाव आदर होवतौ ।—रातवासौ
३ देखो 'पंगु' (मह.,रू.भे.)
अल्पा०—पांगळियौ ।

पांगळणौ, पांगळबौ—१ देखो 'पांगरणौ, पांगरबौ' (रू.भे.)
उ०—करै मन क्रोध तप दसटि धार जिकां, भसम होय तका रण जोड़ भूरा । अभंग 'भगतेस' खग झाळ थारी अगां, पिसण नह पांगळे कधी पूरा ।—भगतरांम हाडा री गीत

पांगळियौ—१ देखो 'पंगुळ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—ना मूं बांमण वांणये री, ना विणजारे री धीय । हूं तो सकल देवतीये, पांगळियां पग देय ।—लो.गी.
(स्त्री० पांगळी)
२ देखो 'पांगळ' (अल्पा०, रू.भे.)

पांगळी—देखो 'पंगुळी' (रू.भे.) (डि.को.)
उ०—सांमळी सगत धरण सवण सांमळै, उठै अत नांगळी भांण ऊगै । आंगळी ऊरध कीधां घड़ी एक में, पांगळी वा'र मा तुरत पूगै ।—खेतसी बारहठ

पांगळौ—देखो 'पंगुळ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पांगळा खहै जमदूत फीटा पड़ै, जोखमी ऊघड़ै नयण जूटी ।
—मे.म.
(स्त्री० पांगळी)

पांगी—देखो 'पंगी' (रू.भे.)

पांगुरण—देखो 'पंगरण' (रू.भे.)

उ०—पांगुरण जण खंड पान, पहरै धूपि राचै धांन। गीतड़ा तिण भोम, गावै 'रतनसी' राजांन।—दूदो

पांगुरणौ, पांगुरबौ—देखो 'पांगरणौ, पांगरबौ' (रू.भे.)

उ०—१ प्रीतम कांमणगारियां, थळ थळ बादळियांह। घण बरसंतइ सूकियां, लू सूं पांगुरियांह।—ढो.मा.

उ०—२ संघ वंदावी गुरुजी पांगुरयां, आया म्हेसांणे गांमो जी।
—ऐ.जै का सं.

पांगुरणहार, हारौ (हारी), पांगरणियौ—वि०

पांगुरिओड़ौ, पांगुरियोड़ौ, पांगुरयोड़ौ—भू०का०कृ०

पांगरीजणौ, पांगरीजबौ—भाव वा०

पांगुरियोड़ौ—देखो 'पांगरियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पांगुरियोड़ी)

पांगूरणौ, पांगूरबौ—देखो 'पांगरणौ, पांगरबौ' (रू.भे.)

उ०—जीभ न जीभ विगोय नो, दव का दाधा कूंपळी मेल्ही। जीभ का दाधा नुं पागूरई, वाल्हा कहइ सुणाजइ सब कोइ।—बी.दे.

पांगूरणहार, हारौ (हारी), पांगूरणियौ—वि०।

पांगूरिओड़ौ, पांगूरियोड़ौ, पांगूरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पांगूरीजणौ, पांगूरीजबौ—भाव वा०।

पांगूरियोड़ौ—देखो 'पांगरियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पांगूरियोड़ी)

पांगौ—देखो 'पंगु' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—लंकाळ सेवग तूझ लांगौ, भ्रात लिछमण खळां भांगौ। पती-कुळ स्वारथी पांगौ, करण असह निकंद।—र.ज.प्र.
(स्त्री० पांगी)

पांघरणौ, पांघरबौ—देखो 'पांगरणौ, पांगरबौ' (रू.भे.)

उ०—लूआं थे क्यूं उणमणी, दीठां बादळियांह। थारा बाळ्या पांघरै, फळसी पांघरियांह।—लू

पांघरणहार, हारौ (हारी), पांघरणियौ—वि०।

पांघरिओड़ौ, पांघरियोड़ौ, पांघरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पांघरीजणौ, पांघरीजबौ—भाव वा०।

पांघरियोड़ौ—देखो 'पांगरियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पांघरियोड़ी)

पांच—वि० [सं० पंच] १ जो गिनती में चार और एक हो, चार से एक अधिक। (उ.र.)

मुहा०—१ पांचां आंगळी घी में होणी—सुख से दिन कटना, खूब बन आना।

२ पांचां अंगळी बराबर न होणी—सब का समान या बराबर न होना।

३ पांचां सवारां में नांम लिखाणौ—बड़े आदमियों की श्रेणी में गिनाना।

सं०पु०—१ पांच की संख्या।
२ पांच का अंक।

३ देखो 'पंच' (रू.भे.)

रू०भे०—पांचि, पाचूं, पांचूं।

अल्पा०—पांचड़ौ, पांचडौ, पांचौ।

पांचअंग—देखो 'पंचअंग' (रू.भे.)

पांचअव्रत—सं०पु०यौ० [सं० पंच+अव्रत] हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह ये पांचों पांच अव्रत कहलाते हैं। (जैन)

पांचकौ—सं०पु० [सं० पंच] प्रसव के पांचवें दिन किया जाने वाला संस्कार विशेष।

पांचड़ौ, पांचडौ—सं०पु० [देशज] १ लम्बा कदम, छलांग।

उ०—इसौ मन में जांणी नै खड्ग हाथ माहे झालि सिंह रा सा पांचड़ा भरि नै ढोलिये कनै जाय नै उलाळ दीधौ नै मेरू नै हेठौ नांख्यौ।—जगदेव पंवार री वात

२ देखो 'पांच' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—जांणिजै आंक चौगड़ौ जेथि, तळि च्यारि रूप मांडिजै तेथि। परठजै पांच पांचड़ै पाय वळि, बिगड़ै बीचलि बे बचाइ।—ल.पि.

पांचजन, पांचजन्य—सं०पु० [सं० पांचजन्य] श्री कृष्ण का शंख।

वि०वि०—यह शंख श्री कृष्ण को उस समय प्राप्त हुआ था जब उन्होंने अपने गुरु सान्दीपनि के पुत्र को पंचजन नामक दैत्य से छुड़ाया था।

पांचणा—सं०पु० (ब.ब.) [सं० पंच+रा०प्र०णौ] बलि दिए हुए बकरे के शिर और चारों पैरों के समूह का नाम।

रू०भे०—पूंचणा, पांचणा।

पांचणौ, पांचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

पांचणहार, हारौ (हारी), पांचणियौ—वि०।

पांचिओड़ौ, पांचियोड़ौ, पांच्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पांचीजणौ, पांचीजबौ—भाव वा०।

पांचनखौ—सं०पु०[सं० पंच+नख]एक प्रकार का अशुभ घोड़ा। (शा.हो.)

पांचपदौ—सं०पु० [सं० पंच+पद] बागड़ क्षेत्र में जोगियों के एक समूह-वादन का नाम।

वि०वि०—इस समूह वादन में दो सहनाइयां, एक ढोलक, एक झालर व एक कुंडी नामक वाद्य होता है। ढोलक वाला ढोलक-सहित नाचता है। यह नृत्य विवाह में बरात के आगे आगे किया जाता है।

पांचबांण—देखो 'पंचबांण' (रू.भे.)

उ०—दिन जास्यै हिव दोहिला, किम रहिसै मुझ प्रांण। संतावै मुझ नै सदा, घट मां पांचेबांण।—वि.कु.

पांचभूतिक—देखो 'पंचभूतक' (रू.भे.)

पांचम—१ देखो 'पंचमी' (रू.भे.)

उ०—पांचम आज सहेलियां, पांचूं बंध्या ठांण। उळगांणा री कोटड़ी, हुई पिलाण पिलांण।—अज्ञात

२ देखो 'पंचम' (रू.भे.)

उ०—पांचम सुविधि जिनेसर सेव। सौ गणधर ध्यावौ नित मेव।
—ध.व.ग्रं.

पांचमउ—देखो 'पंचम' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—पांचमउ पुरुस गोरखलाल। पांडपुत्र घरि एह गोवाल।

—सालिसूरि

पांचमहाव्रत—देखो 'पंचमहाव्रत' (रू.भे.)

उ०—लेय नै पाछो देवै तौ साहुकार। लेय नै पाछो न देवै मांग्यां झगड़ो करै ते दिवाल्यो। ज्यूं पांच महाव्रत लेय नै चोखा पालै ते साध अनै न पालै ते असाध।—भि.द्र.

पांचमि, पांचमी—१ देखो 'पंचम' (रू.भे.)

उ०—पांचमि तप विधि सांभळउ, पांमउ जिम भव पारो रे।

—स.कु.

२ देखो 'पंचमी' (रू.भे.)

पांचमुख—देखो 'पंचमुख' (रू.भे.)

उ०—दुस्सासण जिके जिसा दुरजोधन, रिख असथामा द्रोण रिखं। भारथ मुह जिके कदे नह भाजै, परदळ भंजण पांचमुख।—गु.रू.बं.

पांचमो—देखो 'पंचम' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—पात नांम भट 'गोप' करे जस प्रकट सकाजा। मौज लाख पांचमों जेण बगसै महाराजा।—सू.प्र.

(स्त्री० पांचमी)

पांचरूप—देखो 'पंचरूप' (रू.भे.)

उ०—काळ प्रळै पेखि पेंतीस कुळ, लोहि लडंता लह बहै। पांचरूप हूवो नव कोट पह, राउ अवर ओळै रहै।—गु.रू.बं.

पांचलड़ी—वि० [सं० पंच+यष्टि] १ पांच लड़ों वाली।

२ पांच लड़ वाली।

पांचलड़ो—१ पांचों तत्वों सहित ?

उ०—एकलड़ो जीव खासी गोता, नव पदारथ में पांच कहै तिण लेखे पांचलड़ो जीव खासी गोता इम कहिणो।—भि.द्र.

२ देखो 'पंचलड़ो' (रू.भे.)

पांचलोड़—सं०पु०—पुरोहित ब्राह्मणों का एक भेद विशेष जो अपने को पाराशर ऋषि की सन्तान कहते हैं।

पांचवों—देखो 'पंचम' (अल्पा०, रू.भे.)

(स्त्री० पांचवीं)

पांचवों—१ नैऋत्य कोण से चलने वाली हवा जो कालसूचक मानी जाती है।

२ देखो 'पंचमी' (रू.भे.)

पांचसदी—देखो 'पंचसदी' (रू.भे.)

उ०—सैद अहमद सैद मेहमद रो बेटो कासमखांन रो जमाई पांचसदी असवार दोयसौ।—नैणसी

पांचहजारी—देखो 'पंचहजारी' (रू.भे.)

उ०—मल्हपियो रूप अंम्रियांमणो, बहसतो बंबाहतो। उरड़तो सुजड़ जड़तो असुर, पांचहजारी पाड़तो।—सू.प्र.

पांचाणो, पांचावो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचावो' (रू.भे.)

पांचाणहार, हारो (हारी), पांचाणियो—वि०।

पांचायोड़ो—भू०का०कृ०।

पांचाईजणो, पांचाईजवो—कर्म वा०।

पांचाधर—सं०पु०—सेना के पांच दल ?

उ०—मुगल भागिया। जसवंतजी वासो कीयो। तरै 'मांना' करमसोत नु एकण भाखरी माथै नगारो देनै राखियो थो। नै इण पलीत नूं कहियो थो—मोनूं पाछो आयो देख नै अठै हूं कहूं तरै नगारो देजो। यूं कह नै आप वासो कियो। तरै मांनो बैठो छै। अठै साथ घणो काम आयो। पैलो पांचाधर पाड़ीया नै उणै मांनै साथ वेढ जीती देख नै नगारो दीयो।

—राव मालदेव री वात

पांचाम्रत—देखो 'पंचाम्रत' (रू.भे.)

उ०—घाव घाव पांचाम्रत घाजे, जण जण पूगो जुओ-जुओ। मेलियो गळवाहां मतवाळां, मरणीका छेतरे मुओ।—बळरांम राठौड़ री गीत

पांचायण—देखो 'पंचानन' (रू.भे.) (डि.को.)

पांचायोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पांचायोड़ी)

पांचाळ—देखो 'पंचाळ' (रू.भे.)

पांचाळी—सं०स्त्री० [सं० पांचाली] १ पाण्डवों की स्त्री, द्रौपदी।

उ०—दमयंती नळराज नै, जांण तजी निरधार। पांडव पांचाळी तजी, जुवारी आचार।—पंचदंडी री वारता

२ साहित्य में एक प्रकार की रीति।

३ इन्द्रजाल के छः भेदों में से एक।

रू०भे०—पंचाळी।

मह०—पंचाळ।

पांचि—देखो 'पांच' (रू.भे.)

पांचिद्रिय—देखो 'पंचेंद्रिय' (रू.भे.)

पांचिम—देखो 'पंचमी' (रू.भे.)

उ०—प्रथमादि आग बसंत पांचिम राग फाग परीखिये। हित धांम धांम धमाळ सुख हूय उरध भीमळ ईखिये।—रा.रू.

पांचियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पांचियोड़ी)

पांची—सं०स्त्री०—ताश की वह पत्ती जिस पर पांच बूंटियां होती हैं।

रू०भे०—पंजी।

पांचुं, पांचूं—१ देखो 'पांच' (रू.भे.)

उ०—१ पाछो आय देखै तो चूला लारै रोटी पड़ी हुती ते मिनकी ले गई। तवे री तवे वल गई। खीरां री खीरां वल गई। इण रीते एक महाव्रत भागां पांचु भाग जावै।—भि द्र.

उ०—२ पांचम आज सहेलियां पांचू वंघ्या ठांण। उळगांणा री कोटड़ी, हुई पिलांण-पिलांण।—अज्ञात

२ देखो 'पंचमी' (रू.भे.)

पांचप्रगट—सं०पु० [सं० पंचप्रकट] कछुआ, कमठ (अ.मा.)

पांचूंसाख—देखो 'पंचसाख' (रू.भे.) (अ.मा.)

पांचे'क, पांचेक—वि० [सं० पंच+एक] पांच के लगभग। उ०—संकर री किरपा सूं धानड़ी तौ अबकै वीसे'क वीसे'क कळसी व्हे जावैला जिणमें तिलां री पांचे'क कळसी री अंदाज है।—रातवासौ

पांचैं—देखो 'पंचमी' (रू.भे.)

पांचौ—सं०पु० [सं० पंच] १ पांच की संख्या का वर्ष या साल। उ०—पांचौ आठौ दस पनरौ खूंपड़िया। सतरैं बीसैं हय खतरैं में खड़िया।—ऊ.का.

२ पांच की संख्या का अंक।

पांजर, पांजरउ, पांजरइन—स०पु० [देशज] १ चड़स से लाव जोड़ने के स्थान पर चड़स में लगाए जाने वाले काष्ठ के गुटके जो एक दूसरे पर+धन का चिन्ह बनाते हुए रखे जाते है। उ०—बारैं बारैं रे धन दै धणणाटा। गांजर खाचे लै पांजर गणणाटा।—ऊ.का.

२ देखो 'पंजर' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ रे जीव वखत लिख्या सुख लहियइ। झूरि झूरि काहे होत पांजर, दैव दीना दुख सहियइ।—स.कु.

उ०—२ पांजरडउं ते भूलउ भमइ रे, जीव तमारे पासि रे। तमस्यूं बोल्यइ विण माहरइ रे, पनरह दिन छ मासि रे।—स.कु.

पांजरी—देखो 'पंजर' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—वोजइ दिन राउति रिण सोधिउं, दीठां पड्यां पल्हांण। हाथी तणी पांजरी भागी, धरणि ढल्या केकांण।—कां.दे.प्र.

पांजा—सं०पु० [सं० पंच] वह धागा जिसमें पांच धागे सम्मिलित हों।

पांड—सं०स्त्री० [देशज] १ छाव।

उ०—१ कह्यौ-जी, सलखौ जी पधारिया हुता, सु किरियांणौ लियौ गूंठे जावता हुता। सु म्हारै माथै पांड हुती सु सुगन हुवौ।—नैणसी

उ०—२ आगै सूनी हाटां पड़ी छै, कंदोई री पण हाटां मिठाई सों भरी पड़ी छै। सद नायण मिठाई री पांड भर हर बाहर जाय रजपूतां नूं देइ आई।—चौबोली

२ देखो 'पांडु' (रू.भे.)

उ०—पांचमउ पुरुस गोरखवाल। पांड पुत्र घरि एह गोवाल।

—सालि सूरि

३ देखो 'पिंड' (रू.भे.)

उ०—जोखमियौ जुधे जींदरै मौत न हूंदी मांड। हुतासणे में होम सूं 'पाबू' भेळौ पांड।—पा.प्र.

४ देखो 'पांडुर' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पांडर, पांडरउ, पांडरौ—वि० [सं० पांडुर] १ स्वच्छ, निर्मल।

उ०—सो किण भांति तळाव जांणे दूसरौ मानसरोवर राती-सी एके रढि रै माथै पांडरौ नीर पवन री मारिग्रो कराड़ फींण आछटतौ ठपां खाइनै रहिग्रा छै।—रा.सा.सं.

२ देखो 'पांडुर' (रू.भे.)

पांडव—सं०पु० [सं०] १ राजा पांडु के पुत्र—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल व सहदेव।

उ०—तूं ब्रह्मा रौ तात, नमो नारीयण तणौ नम। हुग्रौ वडौ लहणियौ, पांच पांडव सरिस प्रम।—पी.ग्रं.

२ पांच इंद्रियां (योग)।

उ०—पांचूं पांडव फेरि, घेरि अपणे घरि आया। चांवड के सिर चोट, भेद भेरूं का पाया।—ह.पु.वा.

३ घोड़े की टहल बंदगी करने वाला, सईस।

उ०—१ पांडवां खुरहरां झपट पाय। तदि मिळै हाथळां ग्रोप पाय।—सू.प्र.

उ०—२ सु रावळी बडी घोड़ी थी तिका चरवादार तळाव संपडावण वास्तै लै आया, यां रै तळाव री पाळ डेरौ छै बेठा छै नै पांडव घोड़ियां चढ़िया आवै छै।—नैणसी

उ०—३ पांडवां नीलौ पलांण। असी घोड़ै राव आंण। वैडतै उमै विकास। आरिखै जिसौ उचास।—गु.रू.बं.

४ मुसलमान, यवन।

रू०भे०—पंड, पंडव, पंडू, पांडवेय, पिंड, पांडु।

अल्पा०—पंडवड़ौ, पंडवौ।

पांडवतिलक—सं०पु०यौ० [सं०] युधिष्ठिर (ह.नां.मा.)

रू०भे०—पंडवतिलक।

पांडवनगर—सं०पु०यौ० [सं० पाण्डवनगर] दिल्ली।

रू०भे०—पडवनगर।

पांडवनांमी—वि० [सं० पांडवनाम्न] पाण्डव के पांच पुत्रों में से कोई एक, पाण्डव।

रू०भे०—पंडवनांमी।

पांडवेय—देखो 'पांडव' (रू.भे.)

पांडिति—देखो 'पंडित' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पांडियौ—देखो 'पंडौ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—पांडिया नूं बुलाय त्यावै वखत राजा उठा थी नोसर मजूर रौ रूप कियौ।—पचदण्डी री वारता

पांडीउ—सं०पु० [सं० पाण्डु] एक देश का नाम।

उ०—तत्र देसे गोमुख नरा—महाभोट ३ कोडि, अस्वमुख नरा, कान्हडउ, चौड सारढ ३ लक्ष, मलयगिरि ७ लक्ष, पांडीउ १७ लक्ष, सिंघलदीप १ कोडि।—व.स.

पांडीस—सं०स्त्री० [डिं.] तलवार (डिं.को.)

उ०—काळ न आवै कायरां, बालम बिसवाबीस। पकड़ै रण घर पंथ नूं, पकड़ै नह पांडीस।—बां.दा.

रू०भे०—पंडीस, पंडीसक।

पांडु—सं०पु० [सं०] १ एक रोग विशेष।

उ०—ताप सन्निपात जांणी अतीसार संग्रहांणि, फोड़ौ विष राल

पांडु गोला सूल खैन है। हीया रोग सास खास रुधिर प्रवाह रूप, सीस पीड़ रोग अरु जेते रोग नैन है।—ध.व.ग्रं.
२ सफेद रंग (ह.नां.मा.)
३ कुछ लाली लिए हुए पीला रंग।
४ प्राचीन काल के एक राजा का नाम जो पांडवों के पिता थे।
५ देखो 'पांडव' (रू.भे.)
रू०भे०—पंड, पंडु, पंडू, पांडू।
पांडुता-सं०स्त्री० [सं०] सफेदी, रक्ताल्पता।
पांडुनाग-सं०पु० [सं० पाण्डुनाग] १ सफेद रंग का हाथी।
२ सफेद रग का सांप।
पांडुपुत्र, पांडुपूत-सं०पु० [सं०] पांडुपुत्र, पांडव के पुत्र, पांडव।
पांडुर-वि० [सं०] १ पीला।
२ सफेद (डि.को.)
सं०पु०—१ पीलिया नामक रोग का रोगी।
उ०—समझावै बहुधीत सयांणा, वाचक नीत विनीत। संख सेत है रीत सदा री, पांडुर पीत प्रतीत।—ऊ.का.
२ एक रोग जिसमें रक्ताल्पता होती है।
३ वह जो सफेद हो।
रू०भे०—पंडर, पंडरू, पंडुर, पंडूर, पांड, पांडर, पांडरउ, पांडरौ, पांडूर, पिंडर, पुंडर।
अल्पा०—पांडरौ, पांडूरौ।
पांडुरी-सं०स्त्री०—एक प्रकार का पीपल का वृक्ष जिसे राजस्थानी में पारस पीपल कहते हैं।
पांडुरौ—देखो 'पांडुर' (अल्पा, रू.भे.)
पांडुलिपि-सं०स्त्री० [सं०] काट-छांट करने अथवा घटाने-बढ़ाने आदि के लिये तैयार किया गया लेख आदि का पहला रूप, मसविदा, डौल।
पांडू—देखो 'पांडु' (रू.भे.) (डि.को.) (ह.नां.मा.)
पांडूय-सं०पु०—एक वस्त्र विशेष।
उ०—देवदूस्य, देवांग, चीनांसुक, पटदुकूल, नीलनेत्र, वायंगण-नेत्र, पांडूय, पट्टहीर, पट्टसाउल।—व.स.
पांडूर, पांडूरौ—देखो 'पांडुर' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)
उ०—असी वरस की हो वृद्धि वेसि। दांत कवाड्या सिर पांडूरा केस।—बी.दे.
पांडे—देखो 'पांडयौ' (रू.भे.)
पांडेरी(की)ओवरी-सं०स्त्री० [देशज] मेवाड़ के महाराणा का एक कारखाना जिसमें महाराणा की नजर आदि में आई हुई वस्तुओं को लिखा जाकर सम्बन्धित कारखाने में भेजी जाती हैं।
पांडोसबौ-सं०पु० [देशज] खड्गधारी, योद्धा ?
उ०—परळ जळ गरळ वळ जळै पाडोसबौ, नरां अंत कळकळै वळै नीड़ौ। 'केहरी' वियौ मुणिसाळ रळतौ कळै, ताइयां जांणियौ काळ तीड़ौ।—राजा भीमसिंघ हाडा रौ गीत
पांडयौ-सं०पु० [सं० पण्डा] १ पण्डित, विद्वान।
उ०—पांडया वीरा हूं थारी गुणदास। दिन दस महूरत मोडउ परगास।—बी.दे.
२ शिक्षक।
३ रसोइया।
४ देखो 'पंडौ' (अल्पा., रू.भे.)
पांण-सं०पु० [सं० प्राण] १ शक्ति, बल।
उ०—१ ऊभा सीहों केस इक, कर लेणौ मुसकल्ल। पांण छतै भयंकर पड़ै, ऊभा सींहां खल्ल।—बां.दा.
उ०—२ करै घर पारकी, आपणौ जिकै नर। केवियां सीस खग-पांण करणा कचर।—हा.झा.
[सं० पानीय] २ पानी, जल।
उ०—बारह कुल तणी गोचरी जी, इकवीस जाति नौ पांण। तके नही आटा नै टीमलाती, चतुर अवसर तणा जांण।—जयवांणी
[सं० प्राण] ३ जीव, प्राण।
उ०—तुड़तांण पांण काया तजंत। जै रांम रांम जीहा जपंत।
—गु.रू.बं.
[सं० उपानह] ४ जूती।
उ०—रुकमणी जी समस्त स्रंगार संपूरणि करि देविका देहरा दिसि मन कियो। मोतियां जड़ित पांणिही पहिरी छै। सु ए पांण नहीं छै। ए मांनु चालि चालिवा की होड़ छांडि हंस आंणि पगां लागा छै।—वेलि टी.
५ प्रभाव, प्रताप।
उ०—अगम निगम दोय वांणी जग में, ऊभी करै बखांण। राजा प्रजा दरस न आवै, बिन जोगी थारौ पांण।—स्री हरिरांमजी महाराज
६ प्रण।
उ०—अकबर जग उफांण, तंग करण भेजै तुरक। रांणावत रिढ-रांण, पांण न तजै प्रतापसी।—दुरसौ आढौ
७ पसली व चूतड़ की हड्डी के बीच का रिक्त स्थान, बगल।
८ कारण, हेतु।
उ०—राजाजी री आंख्यां खोरा जगै ज्यूं जगण लागी। रीस रै पांण फुरणियां सूं बाफां निकळण लागी।—फुलवाड़ी
सं०स्त्री० [सं० प्रण] ९ मर्यादा, प्रतिष्ठा।
उ०—१ चित ले जावै विसटिया, पांण चकारां पाड़। मारौ ज्यांनै मोटवी, सगत असूळां चाड़।—पा.प्र.
उ०—२ पाड़ चकारां पांण, हमणौ चित ले हेंडियौ। रे कछ धर री रांण, आज कठी गो 'आवड़ा'—पा.प्र.
[सं० पानम] १० किसी शस्त्र अथवा पैनी धार वाली वस्तु को गरम कर के पानी या अन्य तरल पदार्थ में बुझाने की क्रिया जिससे उसकी धार अधिक पैनी हो जाय।
उ०—तद लोहार कही राज हू मठ बावड़ी रै पांणी सूं पांण

देनै तरवार करूं छूं ।—चौबोली

११ चमक ।

उ०—एक तौ इणसूं फासलौ दूणौ व्है जावै अर दूजै तस्वीर में पांण आजावै ।—फुलवाड़ी

१२ कपड़े या सूत पर चढाया जाने वाला कलफ जो भिन्न-भिन्न प्रकार के कपड़ों के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है, मांडी ।

१३ वह छोटी सीधी लकीर जो संख्या के आगे लगाने से एक के चतुर्थांश का बोध कराती है ।

१४ पशुओं—विशेषतया गाय, भैंस व बैल के खाद्य-पदार्थ से तृप्त हो जाने पर पेट के तन जाने की अवस्था ।

१५ मान (ह.नां.मा.)

१६ कुए अथवा बावड़ी से पूरे खेत को सींचने की क्रिया ।

यौ०—कोरपांण ।

क्रि०वि० [सं० प्रांण] १ ही ।

उ०—१ व्रतधारियां न जेझ विचारी । सुणतां पांण हुई असवारी ।
—रा.रू.

उ०—२ आ तौ म्हैं सावचेती राखी कै पड़तां पांण हेलौ कर दियौ ।
—फुलवाड़ी

२ तुरन्त, फौरन ।

रू०भे०—पांणि ।

अल्पा०—पांणौ ।

१७ देखो 'पांणि' (रू.भे.)

उ०—उहै ग्रहि अत ग्रिभां असमांण । पलौ हिक झालत जोगणि पांण ।—सू.प्र.

पांणकोर, पांणकोरौ [देशज] १ वह नवीन वस्त्र जिसे धोकर उसका कलप उतारा न गया हो ।

पांणगौ, पांणग्ग-सं०पु० [सं० पानः] १ गांव के लोगों का पानी पीने का कूआ ।

२ शराब, अफीम आदि की गोष्ठी ।

उ०—१ भाला तणौ पांणगौ भारी, 'कुंभ' कळोधर 'जगै' कियौ । तण अणहार बेवलां तोड़ै, गोरी सेन अचेत गियौ ।
— उहणा प्रथ्वीराज रौ गीत

उ०—२ सज्जण मिळिया सज्जणां, तन मन नयण ठरंत । अण-पीयइ पांणग्ग ज्यूं, नयणै छाक चढत ।—ढो.मा.

रू०भे०—पांणिगौ, पैणगौ ।

पांणग्रहण—देखो 'पांणिग्रहण' (रू.भे)

उ०—अनि सुणि कोइक वरण नृप आसी । पांणग्रहण पहिला मृत पासी ।—सू प्र.

पांणत-सं०स्त्री० [सं० पानीयकृत्य] १ खेत की क्यारियों में पानी पिलाने की क्रिया । उ०—पैंलौ जोटौ आवै है, पांणतिया वीरा चेत रे । कोई पांणत गंगा ऊतरै ।—चेत मानखा

२ उक्त कार्य की मजदूरी ।

पांणतियौ, पांणती-सं०पु० [सं० पानीयकृती] (स्त्री० पांणतण) खेत की क्यारियों मे पानी पिलाने वाला । उ०—१ बायरै रा ठंडा झोला, सांमी छाती झेलजै । पैंलौ जोटौ आवै है, पांणतिया स्रोरी घेरजै ।—चेत मांनखा

उ०—२ सोडि बिचि सूइजै तापिजै सिगडियै, सबल सी मांहि पिण सद्रव सोरा । एतिण बार में पांणती ओजगी, दोजगी भरै निसदिस दोरा ।—ध.व.ग्रं.

पांणद—देखो 'पांणी' (रू.भे.) (अ.मा.) (ह नां.मा.)

पांणधर-वि० [सं० प्राणधारिन्] शक्तिशाली, बलवान ।

उ०—पड़ै झळ दसटि बळ छूट विखम प्राजळ पांणधर नको तोय आंण पूगै । करा तोय तेग निजि लपट लागै कहर, अरि-हरां कूपळां नथी ऊगै ।—भगतराम हाडा रौ गीत

पांणप—देखो 'पांणिप' (रू भे.)

उ०—१ है तूं बाकी हेक, कर पांणप धर मूंछ कर । दूजा सांमी देख, कायर मत होजै नकुळ ।—रांमनाथ कवियौ

उ०—२ इंद्रसिंघ पांणप ऊझळै, बळ घात मूछां काबळै ।—रा.रू.

पांणपखौ-सं०पु० [देशज] घीया पत्थर ।

पांणपुन्न-सं०पु०यौ० [सं० पानीपुण्य] पानी पिलाने से होने वाला पुण्य (जैन)

पांणही—देखो 'पनही' (रू.भे)

उ०—सिणगार करे मन कीधौ स्यांमा, देवि तणा देहरा दिसि । होउ छडि चरणे लागा हस, मोती लगि पांणही मिसि ।—वेलि

पांणि-सं०पु० [स० पाणि] १ कर, हाथ । उ०—'अभौ' निरखै ऊमरा, परखै भूप प्रकास । जांणि पलट्टां थंभवै, एकण पांणि अकास ।—रा.रू.

यौ०—पांणिग्रहण, पांणिपीड़ण ।

२ देखो 'पांणी' (रू.भे.)

३ देखो 'पांण' (रू भे.)

उ०—घणी उप्परै लूंण वारंत धज्जं । गिरावै जिकै आठुआं पांणि गज्जं ।—वचनिका

रू०भे०—पाण, पांणी ।

पांणिगौ—देखो 'पांणगौ' (रू.भे.)

उ०—कसूंबो रातां ओछड़ां ओछाडीजै छै । कसूंबो नै हुसनाक पवन न्हांकै छै । कसूंबै रौ पांणियौ मंडियौ छै ।—रा.सा सं.

पांणिग्रहण-सं०पु० [सं० पाणिग्रहण] विवाह की वह प्रथा जिसमें कन्या का पिता वर के हाथ में कन्या का हाथ देता है, विवाह ।

उ०—इण रीति अरबुद रा अधीस री पुत्री रौ पांणिग्रहण करि कुमार प्रथीराज अजमेर आवियौ ।—वं भा.

रू०भे०—पांणग्रहण, पांणीग्रहण, पांणेग्रहण, पानग्रहण ।

पांणिणि, पांणिन, पांणिनि–सं०पु० [सं० पाणिनिः] संस्कृत भाषा के स्वनामख्यात एक व्याकरणी विद्वान का नाम।

पांणिनीय–वि० [सं० पाणिनीय, पाणिनीयः] पाणिनी संबंधी, पाणिनी का बनाया हुआ। उ०—प्रभु पांणिनीय व्याकरण प्रमांण प्रमांणी। पद महाभास्य अभ्यास पिछांणी।—ऊ.का.

पांणीपीड़ण–सं०पु० [सं० पाणिपीडनम्] पाणिग्रहण, विवाह।

उ०—बारहठ पाछौ आइ याही अरज कीधी, तो सुणि दया रै दरियाव हालू नरेस सातवीसी सुभटां नूं पड़िहारां री पोळि पांणि-पीड़ण स्वीकार कराई।—वं.भा.

पांणियौ—देखो 'पांणी' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—पावको जम सपो वेस्या, तुरिया पांणियौ वहणं। तसकर तुरक नरिंदो, आपांण कदे न हुवंत।—गु.रू.वं.

पांणिप–सं०पु०—१ बल, शक्ति, सामर्थ्य।

उ—१ पांणिप सहत खगां तन पोधौ, रीधौ भांण रखै न। कहू कह बीद अछर मन कीधौ, लीधौ साथ 'लखै' नै। 'कांधां' रा भोमिया।

—सींधल राठौड़ां रौ गीत

उ०—२ या सुणतां ही कुमार रा पांणिप नूं प्रमांण करि पाछौ जाइ फौजदार आपरा वीरां नूं बहोड़ि दसोर पूगौ।—वं.भा.

२ प्रतिष्ठा, इज्जत, मान। उ०—१ अनमी कुळ काछड़ौ न आंणै, जुध भागां कन पांणिप जाय।—जैचंद कल्यांणोत रौ गीत

उ०—२ पंद्रह दिन रहियां पछै मुगळ मीर तैमूर। क्रम इण मंडळ जीत कर, गौ ग्रह पांणिप पूर।—वं.भा.

३ कांति, आभा।

रू०भे०—पाणप, पांनिय।

पांणी–सं०पु० [सं० पानीय] १ एक पारदर्शक, निर्गंध और स्वाद तथा रंगरहित तरल पदार्थ जो वनस्पति एवं सब प्राणियों के जीवित रहने के लिए एक अनिवार्य आवश्यक है।

—जल, वारि

उ०—सालूरा पांणी विना, रहइ बिलक्खा जेम। ढाढी साहिब सूं कहइ, मो मन तो बिन एम।—ढो.मा.

पर्या०—अंतर, अंब, अथर, अप, अमुत, अम्रति, अरुण, अल, आब, उजळ, उदक, कं, कवंध, कमळ, कीळाळ, कुळीनस, कुस, क्रपीट, खीर, घणग्रप, घणरस, छापि, जग-जीवन, जळ, जाद, जीवन, जोतंबळ, झरनाळ, टातंब, तरंग, तर-तात, तोय, दक, धार, धोइ-अंग, नर, निवास, नीचव, नीर, नीलंठ, पणंग, पय, पांणद, पीठ, पुसप, पोहकर, प्रवतक, बंधांणी, वन, बार, भुवन, भू, भोमी-बळ, भ्रजण, मळमंजण, मेघ, मेघपुसप, रंग, वन, वसुधाधुक, वार, विख, संबर, संदक, सर, सरग्रड, सरबमुख, सलिल, सारंग, सी, सीतळ, सेलंबल, हर।

मुहा०—१ पांणी आणौ—वर्षा होना, वर्षा के पानी का तालाब में एकत्र होना।

२ (आंखियां में) पांणी आणौ—द्रवित होना, रुदन करना, रोना।

३ (मूंह में) पांणी आणौ—खाने के लिए लालायित होना, ललचाना।

४ पांणी उतरणौ—पानी की सतह का नीचा होना।

५ पांणी ऊं पतळौ—अत्यन्त निर्धन, अत्यन्त कमजोर, अत्यन्त सूक्ष्म, अति सूक्ष्म।

६ पांणी ऊपरा कर फिरणौ—पानी की सतह से ऊपर हो जाना, स्थिति से काबू से बाहर हो जाना।

७ पांणी काटणौ—तैर कर दूरी तय करना, मूर्खता का कार्य करना।

८ पांणी काडणौ—खुदाई द्वारा धरती की सतह का पानी निकालना, कूए से पानी निकालना।

९ (पग मार नै) पांणी काडणौ—महान कार्य करना, असंभव कार्य करना।

१० पांणी कातणौ—असम्भव कार्य करना।

११ (दूध का दूध) पांणी का पांणी—न्यायोचित बात कहना, सार सत्य निकाल कर रख देना। यथार्थ न्याय करना।

१२ पांणी चढ़णौ—पानी की सतह का ऊंचा होना, शारीरिक अवयव का निरन्तर पानी में रहने से रुग्ण एवं विकृत होना। चाकू या शस्त्र पर धार लगना।

१३ पांणी चढ़ाणौ—नल द्वारा यांत्रिक दबाव से पानी को ऊंचा चढ़ाना, ऊपर पहुंचाना।

१४ पांणी छणणौ—पानी का किसी वस्त्र के टुकड़े या बारीक जाली से होकर निकलना, पानी का स्वच्छ और निर्मल होना, स्थिति स्पष्ट होना।

१५ पांणी छूटणौ—बंध हटने पर जलप्रवाह चालू होना।

१६ पांणी छोडणौ—सिंचाई के लिए किसी बंध, नदी या नहर के पानी को खेतों की ओर प्रवाहित करना। किसी चीज का रसना। यथा–तरकारी को आग पर चढ़ाने से पानी छोड़ना।

१७ पांणी टूटणौ—पानी का कम होना। (बंध, तालाब या कूप)

१८ पांणी तोड़णौ—पानी कम करना, कुए आदि का पानी समाप्त कर देना।

१९ पांणी दिखाणौ—पशु को पानी पिलाना।

२० पांणी देखणौ—स्थिति का पता लगाना, किसी के स्वभाव की गहराई का पता लगाना।

२१ पांणी देणौ—किसी पौधे आदि को सींचना, नष्ट करना, पित्रों को अंजलि द्वारा तर्पण करना।

२२ पांणी नीं मांगणौ—किसी बिच्छू या सर्प के काटने से तुरन्त मर जाना।

२३ (आधं) पांणी न्याव करणौ—आधा लाभ प्राप्त करना।

२४ पांणी पड़णो—देखो 'पांणी आणो'।
२५ (गोडां) पांणी पड़णो—बुरी तरह थकना।
२६ पांणी पर मळाई ठंणो—हर हालत में लाभ पहुंचना।
२७ पांणी-पांणी करणो—द्रवित करना।
२८ पांणी-पांणी होणो—द्रवित होना।
२९ पांणी पाणो—देखो 'पांणी देणो'।
३० (ठंडो) पाणी पाणो—सुख देना।
३१ पांणी पा'र छोडणो—भारी तंग करना।
३२ पांणी पावणो—पीटना, हराना।
३३ (ऊकळ्यो) पांणी पीणो—पूरी तरह याद करना, शीघ्रता करना।
३४ (ढकं घड़ै रो) पांणी पीणो—इज्जत बनाए रखना।
३५ (नित कुओ खोदणो नित) पांणी पीणो—रोज की कमाई रोज खाना, रोज कमाना रोज खाना।
३६ पांणी पिछांणणो—वास्तविकता समझना।
३७ पांणी पीता पीतां नाज को सवाद आणो—बुरी स्थिति का सामना करते अच्छी स्थिति में आना।
३८ पांणी पी'र जात पूछणो—स्वार्थसिद्धि के बाद औचित्य पर ध्यान देना।
३९ (तातो) पांणी पी'र जाणो—कष्ट भोग कर जाना।
४० पांणी पी-पी पातळो होणो—झूठा अमीर बनना।
४१ पांणी पै'ली पाळ बांधणी—आफत आने से पूर्व ही उस को रोकने का प्रबन्ध कर लेना।
४२ पांणी फिरणो—काम बिगड़ना, किये कार्य का यश न मिलना।
४३ पांणी फूटणो—पानी का मेढ़ तोड़कर बहना।
४४ पांणी फेरणो—काम बिगाड़ देना, किसी के परिश्रम को न सराहना।
४५ पांणी बांधणो—पानी को रोकने हेतु बांध बनाना।
४६ पांणी बारै काडणो—धोना (वस्त्र)।
४७ पांणी बोलणो—स्थान विशेष से प्रभावित होना, उबाल आने पर या अधिक वर्षा होने पर पानी की आवाज होना।
४८ पांणी मरणो—किसी की तुलना में फीका होना, निम्न स्तर का होना।
४९ पांणी मरणो—पानी का रिस रिस कर अन्दर जाना (मकान या दीवार) किसी कारणवश किसी के सामने दबना, ज्यूं अठै आवतां उण रो पांणी मरै है। बेइज्जत होना।
५० पांणी मा'कर काडणो—देखो 'पांणी बारै काढणो'।
५१ पांणी में आग लगाणी—असंभव को संभव करना।
५२ पांणी में उतरणो—कमजोर पड़ना, पोची दिखाना।
५३ (अजांणै) पांणी में उतरणो—अज्ञात स्थिति में आना।
५४ पांणी में खोज काढ़णो—गहरी जांच करना, दुर्लभ्य का पता लगा लेना।
५५ पांणी में बहाणो—व्यर्थ खर्च करना, किसी वस्तु को नष्ट करना।
५६ पांणी री नींव—कच्चा काम।
५७ पांणी री पोट—वह शाक या तरकारी जिसमें पानी का अंश अधिक मात्रा में हो। ऐसा व्यक्ति जो दिखने में मोटा ताजा लगता है परन्तु वस्तुतः बहुत कमजोर होता है।
५८ पांणी री तरह बहणो—अंधाधुंध खर्च होना।
५९ पांणी री तरह बहाणो—देखो 'पांणी में बहाणो'।
६० पांणी रै पी'दै बैठाणो—बर्बाद करना, डुबो देना।
६१ पांणी रै भाव बिकणो—अत्यन्त सस्ता होना।
६२ पांणी रोकणो—देखो 'पांणी बांधणो'।
६३ पांणी रो आसरो—पानी पीकर जीवन-निर्वाह करना।
६४ पांणी रो पतासो या बुलबुलो—क्षणिक।
६५ (धूणी) पांणी रो सीर—पूर्व जन्म की आत्मीयता का प्रसंग।
६६ पांणी लागणो—जलवायु का प्रतिकूल पड़ना।
६७ पांणी वारणो—रोग विशेष की मुक्ति हेतु किसी पात्र में जल भर कर किसी के ऊपर से घुमाना।
६८ (वांसां) पांणी होणो—अत्यधिक जल होना, अत्यधिक कठिन होना।
६९ (मेह) पांणी होणो—वर्षांत होना, फूट-फूट कर रोना।
७० भारी पांणी—गरिष्ठ जल।
७१ मीठो पांणी—मीठा पेय, शर्बत आदि।
७२ हळको पांणी—पाचक जल।
२ शक्ति, बल।
उ०—समझावै सोही बैरी बोही, द्रोही हुय दाझंदा है। पिंड में नहीं पांणी निज निरमांणी, सठ हांणी साझंदा है।—ऊ.का.
३ तेज, चमक, कान्ति।
उ०—१ काच रो पांणी कितोई भळभळाट करै, कितोई चळकै, पर चानणां बिना वो निरद आंधो।—फुलवाड़ी
उ०—२ जाया रजपूतांणियां, बीरत दीधी वेह। प्रांण दियै पांणी पुरण, जावा न दीये जेह।—बां.दा.
मुहा०—१ पांणी उतरणो—देखो 'पांणी जाणो'।
२ पांणी चढ़ाणो—चमकीला व तेज बनाना, धार लगाना, आभा या कान्तियुक्त करना।
३ पांणी जाणो—चमक या कान्ति नष्ट हो जाना।
यौ०—पांणीदार।
४ वीर्य।
उ०—हर हर करतो हरख कर, आळस म कर अयांण। जिण पांणी सूं पिंड रच, पवन विलग्गै प्रांण।—ह.र.
मुहा०—१ पांणी काढ़णो—सम्भोग करना।
२ पांणी छूटणो—स्खलित होना।

५ आंसू।
मुहा०—पांणी आणौ—द्रवित होना।
६ इज्जत, प्रतिष्ठा।
उ०—सूरा नमो आखियो सूरां, भारथ करे साखियो भांण। पांणी गोत चढ़ाय बिरदपत, चत्रभुज जोत मिळै चहुवांण।
—भीमसिंघ हाड़ा रौ गीत
मुहा०—१ पांणी उतरणौ—अपमानित होना या लज्जित होना।
२ पांणी उतारणौ—अपमानित करना।
३ पांणी चढ़णौ—मान प्रतिष्ठा इज्जत का बढ़ना।
४ पांणी चढ़ाणौ—मान इज्जत का बढ़ाना।
५ पांणी जाणौ—इज्जत समाप्त होना।
६ पांणी चढ़ाणौ—मान इज्जत का बढ़ाना।
७ (सौ घड़ा) पांणी पड़णौ—शर्मिंदा होना, लज्जित होना।
८ पांणी पांणी होणौ—लज्जित होना।
९ पांणी बचाणौ—इज्जत की रक्षा करना।
१० पांणी मरणौ—बेइज्जत होना, बेशर्म होना, कलंकयुक्त होना।
११ पांणी राखणौ—इज्जत रखना।
यौ०—पांणीदार।
७ देखो 'पांणि' (रू.भे.)
उ०—कदेक सपना मांय सायधण आंण मिळांणी। धण लेती गळ-वत्थ पसारूं उरसां पांणी।—मेघ.
रू०भे०—पांणद, पांणि, पांणिय, पांणू, पानि, पानी।
अल्पा०—पांणियो, पांणीड़ो, पांणीडो।

पांणी-ग्रहण—देखो 'पांणि-ग्रहण' (रू.भे.)
उ०—ब्राह्मण जु कछु वरम होय कहै। तब कह्यौ एक स्त्री सु वार-वार पांणी ग्रहण न होय हथळेवौ एक ही बार होय।—वेलि टी.

पांणीड़ो—देखो 'पांणी' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—१ सात सहेली पांणीड़े नै निकळी। सातूं एक उणियारे हो रांम। भरण गई जळ जमना को पांणी।—लो.गी.
उ०—२ ओ जी ओ मनै पांणीड़ो पोमचियो रंगादे मोरी मांय। लूवर रमवा मैं ज्यासूं।—लो.गी.
उ०—३ सरवण भैया पांणीड़ो पिला। बन मांई प्यास लगी।
—लो.गी.

पांणीजरौ—देखो 'पांणीझरौ' (रू.भे.)

पांणीजीवौ-सं०पु० [सं० पानीयजीव] कच्छप, कछुआ (ह.नां.मा.)

पांणीझरौ-सं०पु० [?] एक प्रकार का आंत्रिक ज्वर।
उ०—नीमां चढ़ी गिलोय बणै बडी गुणगारी। छः आना भर पाव फळावै ग्राम पसारी। काढ़ौ पांणी-झरा घूंटियौ गुजराती में। कम-जोरी में क्वाथ पीड़ होयां छाती में।—दसदेव
वि०वि०—यह एक प्रकार का मयादी बुखार है जिसमें शरीर पर छोटी-छोटी फुंसियां हो जाती हैं।

पांणीपंथ—देखो 'पांणीपत' (रू.भे.)
उ०—पछै दमादी दे अर चढ़ियौ अकबर पातिसाह दिली नूं पांणी-पंथ आयौ।—बां.दा. ख्यात

पांणीपंथौ-सं०पु०—एक जाति विशेष का घोड़ा जो पानीपत प्रदेश में होता था।
उ०—पांणी पंथा नइ खुरसांणी, एक तुरकी तुरंग। सूडा पंखा नइ किहाड़ा, एक नीलड़ा सुरंग।—कां.दे.प्र.

पांणीपत, पांणीपथ-सं०पु० [सं० पानीपत ?] वर्तमान अम्बाला और दिल्ली के आसपास स्थित एक प्राचीन प्रदेश जहां के घोड़े प्रसिद्ध हुआ करते थे। कालान्तर में यह प्रदेश समाप्त हो गया और इसको मैदान के नाम से जाना जाने लगा। इसी मैदान में वे तीन प्रसिद्ध ऐतिहासिक युद्ध हुए हैं जिनके परिणामस्वरूप भारत का भाग्य ही बदल गया।
रू०भे०—पांणीपंथ, पांणीपथ, पानीपथ।

पांणीपीड़ण—देखो 'पांणिपीड़ण' (रू.भे.)

पांणीय—देखो 'पांणी' (रू.भे.)
उ०—खाजां खरहर चूरतां कूरतां आविउ थाळि। नांमइ घ्रत जिम पांणीय, जांणिय लीजइ दाळि।—जयसेखर सूरि

पांणीलंघणौ-स०स्त्री० [देशज] गमी के बाद कराई जाने वाली विशेष रस्म जिसमें मृतक के परिवार वालों को अन्न जल ग्रहण करवाया जाता है। उ०—तीजै पहर माधवसिंघ, सूरतसिंघ, खिंगारजी बीजा ही हिंदू ठाकुर पधारिया। पधारि अर पांणीलंघणौ कराड़ियौ।
—द.वि.

पांणीवाड़ौ-सं०स्त्री० [देशज] किसी के सम्बन्धी की अन्य स्थान या नगर में मृत्यु होने की सूचना मिलने पर उस द्वारा वहीं के किसी तालाब आदि पर जाकर स्नानादि करने व अंजली देने की रस्म।

पांणीस, पांणीसबळ-सं०स्त्री०—१ परमार वंश की एक शाखा।
उ०—परमारां री पेंतीस साख लिखते—परमार, पांणीस, वलसी, लोदा, धरिया।—बां.दा. ख्यात
सं०पु०—२ इस शाखा का व्यक्ति।

पांणीहड, पांणीहल-सं०पु० [सं० पानीय+रा० हुंड] मुक्ता, मोती।
उ०—१ राजा तूझ समो अन राजा, होड कियां नृप विया हसै। पांणीहंड पहरै दोहूं पासां, नासा नार जिहूं इ नकसै।—सांइयौ झूलो
उ०—२ रंभ झूलणौ कमळ दळ रीदां, दुहूं मझ भिड़ गत देख-दिखाळ। अिसणां सीस चुगै पांणी हळ, 'पांचो' हस चढै खगपाळ।
—पंचायण करमसीयोत रौ गीत

पांणीहारी—देखो 'पणिहार' (रू.भे.)
उ०—थयु प्रभात तव तुरणी नारि, गई सरोवर पांणीहारि। आगइ आछउं हूंतुं निरवरण, दीठउं पांणी लोही वरण।—कां.दे.प्र.

पांणू-सं०पु०—१ एक प्रकार का छंद।
उ०—तीने हार सुचि लहू तंते, आंणौ हार इक जिण अंते। पाणूं

छंद इण विध पढो, रांवां-राव हरि हरी रटो ।—पिंगळ सिरोमणि

२ देखो 'पाणी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—कांन्ह ने भांग रिड़माल राजा कियौ, पियौ पय हाकडौ समंद पांणूं ।—बालाबख्श बारहठ (गजूकौ)

पांणेची-सं०स्त्री० [सं० पानीय+रा. प्र. ची=की] पीने के पानी के पात्र रखने का स्थान, परीडा ।

उ०— मेळाया भुरसाळ ज्यां, पाणेचो गम पैठ । जिके कहांणा खोय जस, वसुधा मंडळ बैठ ।—बां.दा.

रू०भे०—पांणेछी, पांणेवी ।

पांणेचीघरा-सं०स्त्री० [सं० पानीय+रा.प्र.ची+घरा] पूर्वजों की भूमि ।

उ०—प्रजा नचीत रहो सुख पावो, सुख पावो सोह कवेसर ।
पांणेचो-घरा किसूं पूछणी, नवी खाट सो जिसो नर ।
—केसरीसिंह बारहठ (रूपावास)

पांणेछी—देखो 'पांणेची' (रू.भे.)

पांणे-वि०—सामर्थ्यशाली ।

क्रि०वि०—लिए, वास्ते, निमित्त ।

पांणेग्रहण—देखो 'पांणिग्रहण' (रू.भे.)

उ०—गहड घड़ कांमणी, करै पांणेग्रहण । करगि खग वाहतौ, जुवा जुसण कसण ।—हा.झा.

पांणेड़ो-सं०पु० [सं० पानीय+रा.प्र ड़ो] सरदारों आदि के लिए पीने के जल-पात्र रखने का स्थान (उदयपुर)

उ०—उदेपुर आबदारखांनो पांणेड़ो कहावै, कपड़ा रो कोठार निकारी ओरी कहावै ।—बां.दा.ख्यात

पांणौ—१ देखो 'पणौ' (रू.भे.)

२ देखो 'पांण' (रू.भे.)

उ०—मुगल महा भड साहसी, मूंकै दोय-दोय बांणौ रे । लालचंद पतिसाह स्यु, पुजे केहौ किम पांणौ रे ।—प.च.चौ.

पांत—१ देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

उ०—१ बिरळा दांतां री पांतां बिरळाती । चौड़ै चाचर री चौड़ै चिरळाती ।—ऊ.का.

उ०—२ तठा पछै बीजा बांमणां 'रतन' रा भाईयां 'रतन' नूं पांत मांहि था परो काढियो ।—नैणसी

उ०—३ पग-पग फटिया पांहुणा, खागां सहणौ खांत । पोव परूसै पांत में, भूलै केम दुभांत ।—वी.स.

मुहा०—१ पांत ऊ काढणौ—किसी पाप कर्म के कारण भोजन के समय सजातीय मंडली में साथ न बैठने देना ।

२ पांत ऊं टाळणौ—देखो 'पांत ऊं काढणौ' ।

२ देखो 'पांती' (रू.भे.)

उ०—दोख निज दीह न वीसै रे, रसा अवरां पर रीसै रे । बात निज हाथ बिगाड़ी रे, आई सोई पांत अगाड़ी रे ।—ऊ.का.

पांतर, पांतरण-सं०स्त्री० [देशज] भूल, विस्मरण ।

उ०—१ पांतर भाव न पूछता, थोथी करता थंथ । पगां पड़ै कुळ पागहूंत, बळूं बुहारै पंथ ।—रेवतसिंह भाटी

उ०—२ पड़ि पिता गुर पांतरण, इसौ कठण पण ओड । चाप चढ़ै किस रांमचंद, किम पूरीजै कोड ।—रांमरासौ

रू०भे०—पंतर, पंतरण ।

अल्पा०—पांतरो ।

पांतरणौ, पांतरबौ-क्रि०स० [देशज] १ छोड़ना ।

उ०—घिखे घोम घूंवा रवण घरा पुड़ि घूजिया, कड़े चढ़िया कटक ऊकटा काट । कटे घोड़ा सुहड़ हुई आरिण विकट, विहारी पांतर केम कुळवाट ।—राठोड़ बिहारीदास मांनोत री गीत

२ भूलना, विस्मरण करना । उ०—१ विरुद्ध वेद वारता प्रवुद्ध पांतरै नहीं । बिसुद्ध सुद्ध संध तैं असुद्ध आंतरै नहीं ।—ऊ.का.

उ०—२ हर हर करै न पांतरे, हर री नांम रतन्न । पांचू पाडव तारिया, कर दागियौ करन्न ।—ह.र.

३ बुद्धिहीन होना, पागलपन करना ।

उ०—१ सजु करै अहोरां सरिस सगाई, ओळांडै राजकुळ इता । अिषपरां मति कोई वेसासौ, पांतरिया माता इ पिता ।—वेलि

उ०—२ अंब तजइ नहि कोइलां, सरवर सालूरांह । राज हिवइ मा पातरउ, आ घण दउ अवरांह ।—ढो.मा.

४ धोखा खाना । उ०—दुरजण केरा बोलड़ा, मत पांतरजउ कोय । अणहूंती हूंती कहइ, सगळी सांच न होय ।—ढो.मा.

पांतरणहार, हारो (हारी), पांतरणियौ—वि० ।

पांतरिओड़ो, पांतरियोड़ो, पांतरयोड़ो—भू०का०कृ० ।

पांतरीजणौ, पांतरीजबौ—कर्म वा० ।

पंतरणौ, पंतरबौ—रू०भे० ।

पांतरियोड़ो-भू०का०कृ०—१ छोड़ा हुआ ।

२ भूला हुआ ।

३ बुद्धिहीन बना हुआ ।

४ धोखा खाया हुआ ।

(स्त्री० पांतरियोड़ी)

पांतरो—देखो 'पांतर' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—चाकर पोहरै ऊभो थो, तिण पांतरे मारियौ ।—नैणसी

पांता, पांतावत—देखो 'पातावत' (रू.भे.)

पांति—१ देखो 'पांती' (रू.भे.)

उ०—माया सहि उतिम मधिम, प्रभु सरीखी पांति । आ मन री लागै अधिक, भगतवछळ ना भ्रांति ।—पी.ग्रं.

२ देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

उ०—१ करै पांति चौसरी, जरी तांणिया सिमांना । उठै भूप आविया, थंभ दुहु हिंदुसथांना ।—सू.प्र.

उ०—२ प्रमणंति पुत्र, इम मात पिता प्रति, अम्हा वासना वसी इसी । ग्याति किसी राजवियां ग्वाळा, किसी जाति कुळ पांति किसी ।—वेलि

पांतिग—देखो 'पातक' (रू.भे.)

उ०—चत्रभुज बाप आउध च्यार, साधुआं तणा पांतिग संघार।
—पी.ग्रं.

पांतियौ-सं०पु० [सं० पंक्ति] वह बिछाने का वस्त्र जिस पर बैठ कर लोग भोजन करते हैं।

उ०—तारां अमरसिंघजी उणारै डेरै पधारिया। वां पांतिया ढाळ सारैई साथ सूं आरोगण बिराजिया।—द.दा.

रू०भे०—पांतो. पांतोटौ, पांत्यौ।

पांती-सं०स्त्री० [सं० पंक्ति] १ हिस्सा, भाग।

उ०—जद स्वामीजी आहार नी पांती करतां ठंडी रोटी ऊपर एक एक लाडू मेल दियौ।—भि.द्र.

२ देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

रू०भे०—पांत, पांति।

पांतीदार-सं०पु०यौ० [सं० पंक्ति+फा० दार] हिस्सेदार, भागीदार।

पांतीवार-वि० [सं०क्ति+राज. वार] हिस्से अनुसार, भाग के अनुसार।

उ०—पांती चंद्रसेणी सूपदेणी धार लीनी। पांतीवार तीनां की लिखावटी मांड दीनी।—शि.वं.

पांतोटो, पांतो, पांत्यौ—देखो 'पांतियौ' (रू.भे.)

उ०—१ हवलदारां अरज कीवी छै। भुजाई तयार हुयी छै। आप फुरमायो छै पांतोटा नांखो, बाजवट थाळ मंगावो।—रा.सा.सं.

उ०—२ जद रसोड़दार अरज कीवी-पांत्यौ कराइजे। सिरदार अरोगीजे।—पनां वीरमदे री बात

पांथणो, पांथवो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)

उ०—तोपखांनो अकबर री फौज सांमो पहला बहीर कियो, सो तोपखांनो दिली सूं तीन कोस पांणीपत पांथो।—बां.दा.ख्यात

पांथणहार, हारौ (हारी), पांथणियौ—वि०।

पांथिओड़ो, पांथियोड़ौ, पांथ्योड़ो—भू०का०कृ०।

पांथीजणो, पांथीजबो—भाव वा०।

पांथियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पांथियोड़ी)

पान-सं०पु० [सं० पा] १ पीना क्रिया।

उ०—१ स्रीपत चरण सरोज रौ, गंगाजळ मकरंद। अलियळ ज्यूं कर पांन अब, अधिकावण आणंद।—बां.दा.

उ०—२ जुईवा जु तूं नाग काळी जगावे, अजे मुख पै-पांन री सोडि आवे।—ना.द.

यौ०—खांन-पांन, दुग्ध-पांन, पय-पांन, सुरा-पांन, स्तन-पांन।

[सं० पर्णम्] २ पत्ता, पत्र। उ०—रांमा अवतार नांम ताइ रुखमणि, मांनसरोवरि मेरु गिरि। बाळकति करि हंस चो बाळक, कनकवेलि विहु पांन करि।—वेलि

३ सोने के हार (पहनने का) में पत्ते के आकार का ताबीज।

४ चूना, कत्था, सुपारी आदि के साथ खाया जाने वाला नागरवेल का पत्ता, ताम्बूल (अ.मा.)। उ०—१ 'सूर' पांन ले साहरा, आयौ करण अखियात। धर मुदफर सिर छत्र धर, विसटाळा री बात।
—सू.प्र.

उ०—२ किहि करगि कुमकुमो कुंकुम किहि करि, किहि करि कुसुम कपूर करि। किहि करि पांन अरगजो किहि करि, धूप सखी किहि करगि धरि।—वेलि

यौ०—पानदांन।

रू०भे०—पन।

५ तमाखू। उ०—डूबगी बात सब देस री, खूब असुभ गुण खादियौ। पांन रौ ध्यांन धरियां पछै, सांसी गिणै न सादियौ।—ऊ.का.

[सं० पानः] ६ नगाड़ा। उ०—लागा सिंधरी राग रा पांना साकुरां मड़ालां लीदां। अभागां छड़ाळां आम छवंतो ता-ठोड।
—विसनसिंह राठौड़ रौ गीत

७ सर्प, सांप।

क्रि०प्र०—लड़णो, लागणो।

यौ०—पानदार।

८ खेलने के ताश के चार प्रकार के पत्तों में से लाल रंग का एक पत्ता।

९ ताश का पत्ता।

१० स्त्रियों की नाक में पहिनने का आभूषण।

११ फौलाद की बनी पत्ती।

रू०भे०—पन्न।

अल्पा०—पांनड़लो, पांनड़ो, पांनो।

पानक-सं०स्त्री० [सं० पानकम्] पेय पदार्थ।

उ०—इळ सोत अंबर पसरि उत्तर, वसन प्रीत विसेख ए। आमिक्ख पांनक पूर आसव, पुहवी नृप सुख पेख ए।—रा.रू.

पानकराड़-सं०पु० [सं० पान+रा. कराड़] शराब बेचने वाला, कलाल
(डिं.को.)

पानगहण—देखो 'पांणिग्रहण' (रू.भे.)

पानड़लो—देखो 'पांन' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—एक पांनड़लो तोड़ियो, ए लूम्यां री डोरी। चुय-चुय पड़ै ए मजीठ, वारी ए लूम्यां री डोरी।—लो.गी.

पानड़ी-सं०स्त्री० [सं० पर्णम्+रा. प्र.ड़ी] १ चंदा उगाहने की सूची।

२ रहट पर संगीतात्मक ध्वनि उत्पन्न करने के लिए लकड़ी का उपकरण जो जोड़े में होता है और रहट की माल घुमाने वाले घेरे को उल्टा फिरने से रोकने वाले उपकरण 'ढूहा' पर लगाया जाता है।

वि०वि०—मधुर ध्वनि के लिए यह जोड़ा प्रायः आम की लकड़ी का बनवाया जाता है। इसके लिए यह भी कहा जाता है कि इसकी ध्वनि की लय के साथ साथ बैल आसानी से रहट को चलाते रहते हैं।

३ मूंग, मोठ, गवार आदि के सूखे पत्ते जो पशुओं को खिलाते हैं।

४ देखो 'पनही' (रू.भे.)

पांनड़ो—१ देखो 'पांनो' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—रांणा रा विन रावतां, गाढां आदर गाढ़। पायो अकबर पांनड़े, चित्रकोट जळ चाढ़।—बां.दा.

२ देखो 'पांन' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—पय ठव सूका पांनड़ा, मां बजाड़ मयमंत। खबरदार के बेखबर, बन इण सीह बसंत।—बां.दा.

पांनचराई-सं०स्त्री०यौ० [सं० पर्ण+चर] एक प्रकार का टैक्स जो मवेशी रखने वालों से वसूल किया जाता था।—नैंणसी

पांनदांन-सं०पु०यौ० [सं० पर्ण+दान] वह डिब्बा जिसमें पान और उसको लगाने की सामग्री रखी रहती है। उ०—छजंत भूपती छमा, सलांम भूपती सजै। कपूर पांनदांन केक, राखि भूपती रजै।—सू.प्र.

पांनदार-सं०पु०यौ० [राज. पांन+फा. दार] वह अर्ध मंडलाकार पत्थर जिसके मध्य में सर्प की आकृति खुदी रहती है (शिल्प)

पांनपखीण-सं०पु०—चन्द्रमा (नां मा.)

पांनबीड़ो-सं०पु०यौ० [राज०] लगाया हुआ पान का बीड़ा, गिलोरी। उ०—अरोगे अघाये किया आचमनं। कपूरो ग्रहे पांनबीड़ा क्रसनं।—ना.द.

पांनस-सं०स्त्री० [देशज] तिलहन की सूखी पत्तियां (शेखावाटी)

पांनसी-स०स्त्री० [देशज] १ मोठ, मूंग, गवार, चौले आदि की सूखी हुई पत्तियां जो पशुओं को खिलाने के काम में ली जाती हैं।

२ देखो 'पनड़ी' (रू.भे.)

पांनह, पांनही—देखो 'पनही' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—हू बळिहारी सज्जणां, सज्जण मो बळिहार। हूं सज्जण पग पांनही, सज्जण मो गळहार।—ढो.मा.

पांनि—देखो 'पांणि' (रू.भे.)

उ०—कमनैत तीरनि तांनिके, पखरेत बेधत पांनि के।—वं.भा.

पांनिप-सं०पु० [सं० पान:=ढोलक या ढोल की दुकान] १ नगाड़ा, २ ढोल। उ०—अहिके नद पांनपि तुं तुंबुरयं। चहिके चहुं ओरनि जंबुरयं।—ला.रा.

३ शराब पीने वाला व्यक्ति। ४ देखो 'पांणिप' (रू.भे.)

पांनी—देखो 'पांणी' (रू.भे.)

पांनीपथ—देखो 'पांणीपत' (रू.भे.)

पांनूस—देखो 'फांनूस' (रू.भे.)

पांनोली-सं०स्त्री० [सं० पर्ण+अवलि] पौधे के अंकुर के साथ निकलने वाली पत्ती, किसलय। उ०—उगता थांन री पांनोली छांनी नीं रहै।—फुलवाड़ी

पांनो-सं०पु० [सं० पान:] १ नगाड़ा। उ०—राग वज सिंधवो, विखम पांनो रुहै। कंपू 'जैतसी' तणो, आंण चढियो कहै।—जसजी आढो

२ अधिकार। उ०—१ नांखै नीसासा, आसा अड़ियोड़ी। पांमर पुरुसां रै पांनै पड़ियोड़ी।—ऊ.का.

उ०—२ सु ऐ अठै नागौर रा हाकम रै पांनै पड़िया, सु औ लेनै पातसाह री हजूर जातो थो।—नैंणसी

[सं० पर्ण] ३ पत्र, कागज। उ०—वली पंच महाव्रत नो द्रव्य क्षेत्र काल भाव पूछ्या। जद बोल्यो—पांनां में मंडया है।—भि.द्र.

४ पृष्ठ, पेज। उ०—पाछलै पांनै वंसावळी छै।—नैंणसी

मह०—पन।

५ वंश।

[फा० पह्न] ६ स्त्रियों के स्तन में वात्सल्य के कारण दूध उतरने की अवस्था। उ०—१ खटक्कै मुंहै नागणी बोल खारो, प्रभू जागसी मूझ पाछा पधारो। काळी नाग सूं लीजियै वेगि कांनो, पड्यो तात सोझै चढ़ै मात पांनो।—ना.द.

उ०—२ नटणी रांमत करण सारू त्यार व्ही के उण नै ख्याल आयो—भरत पार करतां दो तीन घड़ी लाग जावैला। उणरै हांचळां तें पांनो आयोड़ो हो।—फुलवाड़ी

७ जमीन का भाग या हिस्सा।

८ धार, पैनापन।

उ०—जिण वगत वो जैपुर रा राजा रै सांमा इक्कीस नवलखा हारां री निजरांणी धके करियो उण वगत इस्टूर्खां एक काळा भाटा रै माथै रगड़ रगड़ नै मोटी कवाड़ी रो पांनो करतो हो।—फुलवाड़ी

९ देखो 'पांन' (अल्पा०, रू.भे.)

रू०भे०—पान्हो।

अल्पा०—पांनड़ो।

पान्हो—देखो 'पांनो' (रू.भे.)

उ०—घड़ी एक हुई। त्यूं बाळक री साद हुवो ई ऐरे आंचळै पान्हो आयो।—देवजी बगड़ावत री बात

पांपण, पांपणि-सं०स्त्री० [देशज] पलक। उ०—१ पांपण नै पड़तांह, कहो तो कुवा भरावियै। मांणेरा मरतांह, सरीर में सरणी वहै।—अज्ञात

उ०—२ दळ फूलि विमळ बन नयण कमळ दळ, कोकिळ कठ सुहाइ सर। पांपणि-पंख संवारि नवी परि, भ्रूहा रै भ्रमिया भ्रमर।—वेलि

पांभड़ी, पांभरी-सं०स्त्री० [सं० पक्ष्माटिका] १ एक प्रकार का पुरुषों के ओढने का दुशाला विशेष। उ०—१ ताहरां कुंवर स्री दळपतजी पातिसाह रै पाए लागा। घणो दिलासा पातिसाहजी की पांभड़ियां री जोड़ी हेक, सिरपाव, घोड़ो इनायत कियो।—द वि.

उ०—२ पहरी पटोली पांभड़ी रे लाल, दासह सुंदर देह।—प.च.चौ.

उ०—३ श्री 'जिन सागरसूरि' जी, सद्गुर साथै लीध रे। पाटंबर नै पांभरी, जाचक जन ने दीध रे।—सुमति वल्लभ

२ विवाह में भांमरी (विवाह मंडप में) के समय दुलहिन को ओढ़ाया जाने वाला वस्त्र विशेष।

रू०भे०—पंवरी, पांमडी, पांमडी, पामरी, पांवरी, पुंहरी, फमड़ी, फांवड़ी, फांमरी, फांमड़ी, फांवरी।

पांम-सं०स्त्री० [सं० पामन्] १ रक्त विकार के समय होने वाला एक रोग विशेष, एक प्रकार की खुजली।

वि०वि०—इसमें प्राय: अंगुलियों के जोड़ों, जांघों के जोड़ों, मल द्वार अथवा अन्य अंगों पर छोटी-छोटी फुंसियां उठती हैं। ये फुंसियां धीरे-धीरे फैलती जाती हैं। यह छूत का रोग है और पशुओं में भी पाया जाता है।

२ रोग, बिमारी।

उ०—रांमजणी अर कंचणी, पातर देवै पांम। है वाघण बन हेक री, राखै अळगी राम।—बा.दा.

रू०भे०—पा, पांय, पांव।

पांमणड़लौ—देखो 'पांमणौ' (अल्पा., रू.भे.)

पांमड़ी—देखो 'पांमड़ी' (रू.भे.)

उ०—चूनड़ी, पातल साड़ी, नंदरबारी, पाघड़ी, पांमड़ी, लोवड़ी, वाहणवही लोवड़ी, पछेडी...।—व.स.

पांमड़ौ—देखो 'पांवड़ौ' (रू.भे.)

पांमणड़ौ—देखो 'पांमणौ' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—रतन तणी पर जतन राखतां, खड़ग तणौ घा खमियौ। पोहर तणौ हुतौ पांमणड़ौ, गावतड़ां ईज गमियौ।—ओपौ आढ़ौ

पांमणचार, पांमणाचार-सं०पु०यौ० [सं०प्राघुणः+चार] खातिरदारी, मेहमानदारी।

पांमणौ-सं०पु० [सं० प्राघुणक] (स्त्री० पांमणी) मेहमान, अतिथि।

रू०भे०—पांउणौ, पांम्हणौ, पांवणौ, पांहुणौ, पाहुणौ, पाहूणउ, पाहूणौ, प्रांमणौ, प्राहुणौ, प्राहुणौ।

अल्पा०—पांमणड़लौ, पांमणड़ौ।

मह०—पाहुण, पाहूण, प्राहुण।

पांमणौ, पांमबौ—देखो 'पाणौ, पाबौ' (रू.भे.)

उ०—१ पद वनराव न पांजियौ, दुरद दिखाळै दांत। सीह थयौ वन साहिबौ, ठीगां री संकरांत।—बां.दा.

उ०—२ एकणि जीभ किसा कहूं, मारू रूप अपार। जे हरि दीयइ त पांमियइ, उदियइ इण संसार।—ढो मा.

उ०—३ जिम सुपनंतर पांमियउ, तिम परतख पांमेसि। सज्जन मोतीहार ज्यूं, कंठा ग्रहण करेसि।—ढो.मा.

पांमणहार, हारौ (हारी), पांमणियौ—वि०।

पांमिओड़ौ, पांमियोड़ौ, पांम्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पांमीजणौ, पांमीजबौ—कर्म वा०।

पांमर-वि० [सं० पामर] १ नीच कुल या वंश का(की)।

उ०—मन रुच खाया बेर फळ, जिण सबरी पांमर। ते कदमूं रज आभड़े, अवरत गौतम तर।—र.ज.प्र.

२ पापी, नीच। उ०—लाखां धन दे लोक नै, मरद मरोड़ै मूंछ। सापुरसां रै सींग नहिं, पांमर रै नहिं पूंछ।—ऊ.का.

[सं० पामरः] ३ मूर्ख, निर्बुद्धि, खल। उ०—छित कुळ धरम छांडै गुरुगम गाडै, मांडै चख मूंदंदा है। चांमर कर चोळा भांमर भोळा, पांमर पद पूजंदा है।—ऊ.का.

रू०भे०—पांमल, पांवर।

पांमरजोग-सं०पु० [सं० पामरयोग] १ भारत के नट, बाजीगर आदि द्वारा दिखाया जाने वाला निकृष्ट योग।

२ एक प्रकार का निकृष्ट योग (फलित ज्योतिष)

पांमरी—देखो 'पांमडी' (रू.भे)

उ०—पछि वस्त्र पहिरावइ, देवदूसित वस्त्र, रतन कांबळ, चीर, सोनइरी, पांमरी, खीरोदक खासा...।—व.स.

पांमल—१ देखो 'पांमर' (रू.भे.)

२ देखो 'पांयलौ' (मह०, रू.भे.)

उ०—गुड़दा खेचां हुय, पांमल गुण गावै। मुड़दा मुड़दा में, सांमल मिळ जावै।—ऊ.का.

पांमलियौ—देखो 'पांयलौ' (अल्पा०., रू.भे.)

पांमिचदोस-सं०पु० [?] साधु के लिए आहार आदि उधार लाकर देने पर लगने वाला दोष, अपमित्यदोष (जैन)

पांमियोडौ-भू०का०कृ०—प्राप्त किया हुआ।

(स्त्री० पांमियोडी)

पांमेचौ—देखो 'पांमिच्च-दोस' (रू.भे.)

पांम्हणौ—देखो 'पांमणौ' (रू.भे.)

उ०—कोई एक वीर स्त्री आपरा जोधार पती नै कह रही छै-आप रा पांम्हणां (दुसमण) तौ पंथ निहारै, झगड़ा री वाट जोवै।—वी.स.टी.

पांय—१ देखो 'पद' (रू भे.)

उ०—प्रमेसर तेरा पांय प्रळोय। कुरांण पुरांण न जांणै कोय।—ह र.

२ देखो 'पांम' (रू भे.)

पांयणौ—देखो 'पायलौ' (रू.भे.)

पांयदान-सं०पु० [फा० पायंदाज] पैर पोंछने का बिछावन (उपकरण)

पांयलियौ—देखो 'पांयलौ' (अल्पा०., रू.भे.)

पांयल, पांयलौ-वि० (स्त्री० पांयली) पांम रोग ग्रसित।

अल्पा०—पांमलियौ, पांयलियौ, पांवलियौ।

मह०—पांमल, पांयल।

पांव—१ देखो 'पद' (रू.भे.)

उ०—रूक-हथ पेखिसो हाथ जसराज रा। ठिवंतां पांव धीरा दियौ ठाकुरां।—हा.झा.

२ देखो 'पांम' (रू.भे.)

उ०—जंणी पांव में कोढ ईरखा, गळे अंग गड़बड़िया है। लुच्चां वांणी माथै लीनी, झूठां रा नख झड़िया है।—ऊ.का.

पांवड़ो [सं० पदक+रा.प्र.ड़ो] १ पैर को एक स्थान से दूसरे स्थान तक रखने की दूरी, पैंड, डग, कदम।
उ०—सो तौ पांवड़ा दोय सौ आगै वहै छै। लाख मांणसां री जहाज क्यूं डूबो छो।—मारवाड़ रा अमरावां री वारता
२ देखो 'पांयदान' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—पलकां सूं करां पांवड़ा जी, अंचळां सूं मग भार। गिरधर म्हारौ परम सनेही, मीरां उनकी नार।—मीरां
रू०भे०—पांउड़ो, पामड़ो, पाउंडो।

पांवणो—देखो 'पांमणो' (रू.भे.)
उ०—१ आयोड़ा किणजी रा सीस, किणजी रै सिगरत पांवणा। पोळिड़ा पोळ उघाड़, आज नै अवेळा आया पांवणा।—लो गी.
उ०—२ आ परदेसण पांवणी जी, पुळ देखैं नीं वेळा। आलीजा रै आंगण में, करै मनां रा मेळा।—चैत मांनखा
(स्त्री० पांवणी)

पांवणो, पांवबो—देखो 'पाणो, पावो' (रू.भे.)

पांवर—देखो 'पांमर' (रू.भे.)
उ०—मिनखा जनम अमोलक मूरख, पांवर फेर न पावै। हिळ-मिळ हंसणो खेवळ बसणो, औ मोसर कद आवै।—ऊ का.

पांवरो—सं०पु० [देशज] 'बडावेस' में लाई गई वेश-भूषा को वधू को पहिनाने की रीति या प्रथा (पुष्करणा ब्राह्मण)

पांवळियो, पांवळो—१ देखो 'पद' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—हरि मंदिर जातां पांवळियो रै दूखै, फिर आवै सारो गांम रै।
—मीरां
२ देखो 'पांयलो' (अल्पा०, रू भे.)
उ०—जाळ छाल बाळ बुरकायां, राख खरूंट लै ऊतरै। सांढ पांवळी सूत पतीजै, 'रांम बांण है छूत रै'।—दसदेव
(स्त्री० पांवळी)

पांस—सं०स्त्री० [सं० पांशु] १ रज, धूलि (अ.मा.)
२ देखो 'फांस' (रू भे.)
रू०भे०—पासु, पांसू, पां', पोह।

पांसर—सं०पु०—१ डांस, गोमक्खी।
२ देखो 'पांसुल' (रू.भे.)

पांसळि, पांसळी—देखो 'पासळी' (रू.भे.)
उ०—पिंजर पांसळियां भीतर पैठोड़ा। बोलै बोबाता डोबा बैठोड़ा।
—ऊ का.

पांसु—१ देखो 'पांस' (रू.भे) (ह.नां.मा.)
२ देखो 'पासळी' (रू.भे.)

पांसुखुर—सं०पु० [देशज] घोड़ों का एक रोग जो पैरों में होता है।

पांसुभंग—सं०पु० [सं० पशुका+भज्] छोटी पसली का ऊंट।

पांसुल—वि० [सं० पांसुल या पांशुल] १ पापी, दुष्ट।
२ गंदला किया हुआ। ३ भ्रष्ट किया हुआ।
रू०भे०—पांसर।

पांसुळी—वि० [सं० पुंसुला या पांशुला] १ रजस्वला।
२ छिनाळ औरत।
३ देखो 'पासळी' (रू.भे.) (उ.र.)

पांसू—१ देखो 'पांस' (रू.भे.)
उ०—१ क्रतध्वंसी विस्णूं कमळ भव जिस्णूं स्तुति करै। हिमांसू स्तुति करै। हिमांसू उस्णांसू पदम पद पांसू सिर धरै।—मे.म
उ०—२ लोरां लै लूरां मोरां ललकारै। पांसू पड़ियोड़ा आंसू पळ-कारै।—ऊ.का.

पांसो—देखो 'पासो' (रू.भे.)

पांह—देखो 'पांस' (रू.भे.)
उ०—मोटा घेदा छै, तोबड़िया छै, घणै लीलै जड़ी-बूटी रा चरण-हार, पांहरै पांणी रा पीवणहार।—रा.सा.सं.

पांहणो—देखो 'पांमणो' (रू.भे.)
उ०—कंवर चूंडो जी बोल्या—थे तो अठै म्हांकै पांहुणा छो।
—राव रिणमल री बात

पांहि, पांही—क्रि०वि०—पास, निकट।
उ०—जीव दांन देवहु इन्है, मरण जोग ये नांहि। संकर भोळानाथ मैं, करूं विनय तुम पांहि।—जलाल बूबना री बात

पांहुणो—देखो 'पांमणो' (रू.भे.)
उ०—ए विना निवता रा पांहुणा (सत्रु) ढळिया आय नै ऊतरिया छै। पण म्हारौ पती परूस जांणै है।—वी.स टी.

पां'—देखो 'पांस' (रू.भे.)

पा—वि०—पीने वाला।
सं०पु०—१ पान।
२ पक्षी।
३ अमृत।
सं०स्त्री०—१ शिवा।
२ रज, धूलि (एका०)

पाअ—देखो 'पद' (रू.भे.)
उ०—एकणि पाए आंणिजै, सोळह कळ वळि सात। तविआ पैंगळ रीत रह, इसा छंद अवदात।—ल.पि.

पाअणो, पाअवो—देखो 'पाणो, पावो' (रू.भे)
उ०—पव्वै धारा पाए मौत रळगो अमरांपुरां। ऊजळै गो गोत बूंदी समरां आथांण।—दुरगादत्त बारहठ

पाअरधिय, पाआराधिय-सं०पु० [सं० परिधान=आच्छादनम्] ओट से मारने वाला, शिकारी, भील।
उ०—पाअरधिय 'चादोय' वैण पढै। सज आयोय 'पाल' विहंग चढै।—पा.प्र.

पाइ—देखो 'पद' (रू.भे.)
उ०—प्रति घण ऊनिमि आधियउ, भाभो रिठि भड़वाइ। बग ही

भला त बप्पड़ा, घरणि न मुक्कइ पाइ ।—ढो.मा.

पाइक, पाइक्क—१ देखो 'पायक' (रू०भे०)

उ०—१ पटमिणि रखपाळ पाइदळ पाइक्क । हिळवळिया हलिया हसति ।—वेलि

उ०—२ मलं अखाड़ केक मंड, दाव घाव दायकं । वहूंत के पटास्य वंक, पांणवंत पायकं ।—सू प्र.

पाइगह—देखो 'पायगा' (रू.भे.)

उ०—कुंवरी नै कह्यौ—थे राजा रै पाइगह रा घोड़ा २ जय-विजय नांम छै सु ले मरदांनो वागो पहर खरीचो ले नै वाग में आवो ।

—चौबोली

पाइणि—देखो 'पोयणी' (रू.भे.)(उ.र

पाइदळ—देखो 'पाईदळ' (रू.भे.)

उ०—हिरणां का जु जूथ देखीजै सोइ मांनों पाइदळ हूवा ।

—वेलि टी.

पाइप-संपु० [अं०] पानी की कल, नल

पाइल—देखो 'पायल' (रू.भे.)

पाइलो—देखो 'पायली' (रू भे.)

पाई-संस्त्री०—१ एक छोटा सिक्का जो एक पैसे का तिहाई भाग होता है । उ०—पाई नहिं पाई पाटी पढियोड़ी । चपटा दांतां पर काई चढियोड़ी ।—ऊ.का.

२ छोटी खड़ी रेखा जो वाक्य के अंत में लगाई जाती है, पूर्ण-विराम का चिन्ह ।

३ इकाई का चतुर्थांश प्रकट करने वाली वह रेखा जो अंकों के आगे लगाई जाती है ।

४ झड़वेरी के सूखे कंटीले डंठलों का गुच्छा जो अहाता आदि बनाने के काम में आता है ।

पाईक—देखो 'पायक' (रू.भे.)

उ०—मे हवसी कन्नड़ा, केई पाईक फरीघर । के राजा के राव, केई रावत्त बहादर ।—गु.रू.व.

पाईगह—देखो 'पायगा' (रू.भे.)

उ०—इणि अंतर बीसलदे राय । सवा लाख पाईगह केकांण ।

—बी.दे.

पाईता-संपु० [देशज] १ प्रथम मगण फिर एक भगण फिर एक सगण का ६ वर्ण का एक वर्णिक छंद (पि.प्र.)

पाईवळ-संपु०—पैदल सिपाही, पदाति ।

उ०—नेजा न संख नेजाइतां, न को संख पाईवळां । असपत्ति तणी फोजां असख, मिळे कहळे मेहळां ।—गु.रू.वं.

रू०भे०—पयदळ, पाइदळ ।

पाउंड-सपु० [अ०] १ सोने का एक अंग्रेजी सिक्का जो २० शिलिंग का होता है । यह लगभग १४) रु० के बरावर होता है ।

२ एक अंग्रेजी तोल जो लगभग ४३० ग्राम के बराबर होता है ।

पाउंडो—देखो 'पांवडो' (रू.भे.)

पाउ—१ देखो 'पद' (रू.भे.)

उ०—हाथ भलइं रहु हालता, पाउ सदैवत पंग । हाळी वाळी आप सिउं, अवरा ही मोरु रंग ।—मा.कां प्र.

२ देखो 'पाऊ' (रू.भे.)

पाउग, पाउगा—देखो 'पादुका' (रू.भे.)

पाउडर-संपु० [अं०] १ पीस कर आटे के समान बारीक बनाई गई कोई वस्तु, चूर्ण ।

२ चेहरे की शोभा बढाने हेतु स्त्रियों अथवा नाटक के पात्रों द्वारा प्रयोग किया जाने वाला एक प्रकार का चूर्ण ।

पाउरण—देखो 'प्रावरण' (रू.भे.) (जैन)

पाउरदोस-संपु० [सं० प्रकाश+दोष] दीपक, मणि आदि का प्रकाश करने पर लगने वाला दोष । (जैन)

रू०भे०—पाओअर-दोस ।

पाउल—देखो 'पाटल' (रू.भे)

उ०—पाउल देउल रंग भरि, देस देसांतर हांम । स्रस्ठा सरजाडि न कां, केलि करंतां कांम ।—मा.कां.प्र.

पाउस—देखो 'पावस' (रू.भे.)

उ०—सो जांणो पाउस काळ री नदियां में उपटपट वेग रै अनुसार तरां वोट छळतो महानव आय मिळियो ।—वं.भा.

पाउसियाकिरिया-संस्त्री० [सं० प्राद्वेपिकीक्रिया] दुष्ट, पापी, कृपण आदि को तो कष्ट में देख कर प्रसन्न होने तथा पुण्यवान, गुणवान आदि को सुख में देख कर ईर्षा करने की क्रिया (जैन)

पाऊ-संपु० [देशज] १ लोहे का मोटा कीला जो ऊपर से कुछ मुड़ा हुआ होता है और दीवार में विशेषकर पानी के नल को रोकने में काम आता है ।

२ देखो 'पद' (रू.भे.)

उ०—पांणां करि पाऊ पलंव डहे । वाजिद्रक वेग विवांण वहे ।

—गु.रू.वं.

रू०भे०—पाउ ।

पाए—देखो 'पद' (रू.भे.)

उ०—तव माधव पाए पड़इ, पंडित दत्त कुरंग । आलिंगन अलजइ दिइ, हीयड़ा अंतरि अंग ।—मा.कां.प्र.

पाएल—देखो 'पैदल' (रू.भे.)

उ०—छिलता झिलता घणूं छछोहा, ताढी तट छाया अख ताह । मद झरता इतरा ममंगळ, पाएल चालस्यइ पहाड़ ।

—महादेव पारवती री वेलि

पाओअरदोस—देखो 'पाउरदोस' (रू.भे) (जैन)

पाओलां-संस्त्री० [स० पाद+अवलि] चमड़े की कसों में गुंथी हुई घुंघरुओं की दो पट्टियां जो लोक नृत्य में पैरों में वांधी जाती हैं ।

रू०भे०—पावलां ।

पाक-वि० [फा०] १ पवित्र, शुद्ध, निर्मल।
उ०—प्रांण जितै जग आपणो, प्रांण जितै तन पाक। प्रांण प्रयांण कियां पछै, व्है नर नांम हलाक।—बां.दा.
२ पापरहित, निर्दोष।
[सं० पाक:] ३ पकाया हुआ। उ०—पय मीठा कर पाक, जो इमरत सींचीजिये। उर करडाई आक, रंच न मूके राजिया।
—किरपारांम
४ जो पकने को तैयार हो, पकने योग्य हो।
५ अनुकूल होने वाला।
सं०पु०—१ पकने की क्रिया या भाव (भोजन, अन्न, ईंट)
२ पका हुआ अन्न, भोजन, व्यंजन।
यौ०—पाकागार, पाकसास्त्र, पाकविग्यांन।
३ मिठाई, मिष्ठान्न। उ०—सूप बघायौ मोतियां, कीवा निजर तुरंग। भोजन भूंजाई विवध, विंजन पाक सुरंग।—रा.रू.
४ मिश्री, चीनी (शक्कर) या शहद के मिश्रण से बनाया पौष्टिक पदार्थ।
उ०—दूधपाक, कोहलापाक, सेलड़ीपाक, गूंदपाक, नालीअरपाक, कौचापाक, आदापाक।—व.स.
५ पचने की क्रिया, हजम होने की क्रिया।
६ घाव के पक जाने की अवस्था।
७ वृद्धावस्था के कारण बालों का पक कर सफेद हो जाना।
८ लकड़ी के मध्य का परिपक्व।
९ एक दैत्य जिसे इन्द्र ने मारा था।
यौ०—पाकरिपु, पाकसासण।
१० बालक, बच्चा (ह.नां.मा., अ.मा.)
११ किए हुए कर्मों का विपाक, कर्मविपाक।
१२ देखो 'पाकिस्तांन'।
रू०भे०—पाग।
पाकड़-सं०पु० [सं० पर्कटी, प्रा० पक्कड़ी] एक वृक्ष विशेष जो पंचवटों में से है, प्लक्ष।
रू०भे०—पाकर।
पाकड़णो, पाकड़बो—देखो 'पकड़णो, पकड़बो' (रू.भे.)
उ०—हथळेवो रूखमणजी आंगुठां सहित पाकड़ियो।—वेलि टी.
पाकड़णहार, हारो (हारी), पाकड़णियो—वि०।
पाकड़िओड़ो, पाकड़ियोड़ो, पाकड़्योड़ो—भू०का०कृ०।
पाकड़ीजणो, पाकड़ीजबो—कर्म वा०।
पाकड़ियोड़ो—देखो 'पकड़ियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पाकड़ियोड़ी)
पाकट-सं०पु० [अं० पाकेट] जेब, खीसा।
रू०भे०—पाकेट।
पाकठ-वि०—१ पका हुआ।
२ अनुभवी।
पाकणो, पाकबो-क्रि०अ० [सं० पचष् १ अनाज, फल आदि का ऐसी अवस्था में पहुंचना जिसके बाद वे झड़ने लग जांय, खाने योग्य होना, परिणतावस्था को प्राप्त होना।
उ०—१ ढाढ़ी एक संदेसड़उ, ढोलइ लगि लइ जाय। कण पाकउ करसण हुअउ, भोग लियउ घरि आइ।—ढो.मा.
उ०—२ भांत-भांत रा फळां में मूंडो मारने वो पाक्योड़ा गूंदियां नै बगळ-बगळ खावण लागो।—फुलवाड़ी
मुहा०—ऊमर पाकणी, बाळ पाकणा—पूर्ण वृद्धावस्था को प्राप्त होना।
२ आंच या गरमी पाकर गलना या नरम होना, कठोर होना, सिद्ध होना, सीझना, रिंधना, चुरना।
३ फोड़ा, फुंसी, घाव आदि का मवाद भर आने की अवस्था को प्राप्त होना, पीव भरना।
४ देखो 'पकणो, पकबो' (रू.भे.)
पाकणहार, हारो (हारी), पाकणियो—वि०।
पाकिओड़ो, पाकियोड़ो, पाक्योड़ो—भू०का०कृ०।
पाकीजणो, पाकीजबो—कर्म वा०।
पकणो, पकबो—अक०रू०।
पाकती-क्रि०वि०—१ निकट, समीप।
उ०—प्रथम मार परमार लियौ जूनौ लोहा लड़। रहै राव पाकती मड़ां घोड़ा भीड़ोहड़।—पा.प्र.
रू०भे०—पाखति, पाखती, पाखै, पागती।
पाकथांन-सं०पु० [सं. पाकस्थान] १ पाकशाला, रसोईघर।
२ देखो 'पाकिस्तांन' (रू.भे.)
पाकर—देखो 'पाकड़' (रू.भे.)
पाकरिपु-सं०पु० [सं० पाक+रिपु] इन्द्र (डिं.को)
पाकसाळा-सं०स्त्री० [सं० पाकशाला] भोजन बनाने का स्थान, रसोईघर।
पाकसासण, पाकसासन-सं०पु०यौ० [सं० पाकशासन] इन्द्र
(ह.नां.मा.)
उ०—नांम गोवंद थयो नमो नंदराय नंद, अमंद जस गोरधन आभ अड़ियौ। छोड आसण गयंद घाक मांनै छळी, पाकसासन बळी पगां पड़ियौ।—बां.दा.
पाकसिया-सं०स्त्री०—रामावत साधुओं की एक शाखा।
पाकारि-सं०पु० [सं० पाक+अरि] इन्द्र (डिं.को.)
पाकिस्तांन-सं०पु० [फा० पाकी+सं० स्थान] वह मुसलमानी राज्य जो भारत का विभाजन करके बनाया गया है और जिसका कुछ भाग भारत के पश्चिम और कुछ भाग पूर्व में भी है।
पाकेट, पाकेटू-सं०पु० [देशज] १ ऊंट (डिं.को.)
उ०—१ चरख्यां चठीठ अंगीठ चख, पीठ समोबड़ पालणा। पाकेट

सज्या सो कोस पथ, हैकरण चांटी हालणा ।--मे.म.

उ०--२ कठठे हठी पाकेडु की कतार सो कंसे बगलूं के उरले गिर सिखरं से थूंभ ।--सू.प्र.

२ देखो 'पाकट' (रू.भे.)

पाकोड़ो--१ देखो 'पाको' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०--वासप नैंणा सूं निकळै मुख बाफां, रेंगूं ऐड़ी पर फाटोड़ी राफां । थुर-थुर धूजंता धुड़ता पाकोड़ा, पीळा पड़ियोड़ा पिळिया पाकोड़ा ।--ऊ.का.

पाको-वि० [सं० पक्व] १ अति वृद्ध । उ०--सू किसा-अेक सरदार जुवांन छै ? पाकां पाका वरियांमा नूं, अजरायलां नूं, खीवरां नूं, हाणहुलां, डाकियां नूं. करड़दंतां नूं, लोह घड़ा लाह पर डाहलां नूं, लोलीदेता, कटारी उठारह खाता, पचासां वोळावियां आधे आघघाढ उतारियां ।--रा.सा.सं.

मुहा०--पाको पांन--अत्यन्त बूढ़ा ।

२ देखो 'पक्को (रू.भे.)

उ०--१ जेहवी चंचळ वीजळी, पीपळ नो वळि पाको पांन कि । ठार री तेह न ठाहरे, वैस्या नो जिम नेह निधांन कि ।

—ध.व,ग्रं.

उ०--२ कुंभ कह्यो-घोड़ा राज घोड़ा हीज मुदाइत, जिणरै घोड़ां रो अधिकार हुसी तिण रो राज । रजपूत रो सिणगार घोड़ां रो असवार पाको छूं ।--राव रिणमल री बात

रू०भे०--पक्को ।

अल्पा०--पाकोड़ो ।

पाक्षिक-वि० [सं०] १ पक्ष या पखवाड़े से सम्बन्धित ।

२ किसी व्यक्ति विशेष का पक्ष करने वाला, तरफदार, मददगार ।

३ अच्छे वंश का ।

४ वह पत्र व पत्रिका जो पंद्रह-पंद्रह दिन से प्रकाशित होती है ।

पाखंड-सं०पु० [सं० पाषण्ड] १ वेदविरुद्ध आचरण ।

२ षट् दर्शनों में से कोई एक अथवा सब ।

वि०वि०--वेदों में धार्मिक, आध्यात्मिक व सामाजिक विषयों का जो प्रतिपादन किया गया है उनसे भिन्न मत वाले दर्शन को वेदानुयायियों ने पाखण्ड नाम से सम्बोधित किया है । ये दर्शन छै हैं जो 'षट् दर्शन' कहलाते हैं--

(१) सांख्य (२) योग (३) वैशेषिक (४) न्याय (५) मीमांसा (पूर्व मीमांसा) और (६) वेदान्त (उत्तर मीमांसा)

इनके अतिरिक्त चार्वाक, बौद्ध और जैन इनका प्रादुर्भाव और हुआ । इनके मत भी वेदानुकूल न होने के कारण ये भी पाखंड कहलाए । कालान्तर में इन्हीं दर्शनों को विभिन्न सम्प्रदायों के रूप में माना जाने लगा ।

इन षट् दर्शनों के ९६ भेद माने जाते हैं (प्रत्येक के १६, १६) परन्तु षट् दर्शन समुच्चयनामक जैन ग्रंथ में कुल १०२ भेदों (प्रत्येक के १७, १७) का उल्लेख मिलता है जिनकी सूची निम्न लिखित है--

(१) नैयायिक दर्शन--(१) भाट (भटज) (२) शैव (३) पाशुपति (४) कापालिक (५) घंटाल (६) पाह्व (पाहू) (७) आकट (आकड) (८) केदारपुत्र (९) नग्न (१०) अयाचक (११) एक भिक्षु (एक चक्षु) (१२) घाड़ीवाहा (१३) आयारी (आयरिय) (१४) पतियाणा (१५) मठपतिया (१६) चारण (वाइण) और (१७) कालमुख ।

(२) सांख्य दर्शन--(१) भगवन्त (२) त्रिदंडीया (३) स्नातक (४) चन्द्रायणा(णी) (५) मुनिया (मोनिया) (६) गुरिया (गउरिया) (७) कवि (८) बूहारा (कू-घू) (९) विगठिन (१०) गूगलिया (११) दांभिक (१२) गलतड़िया (वहड़िया) (१३) सांखिया (संखाया, संखिया) (१४) विलेसरिया (१५) अवगरिया (१६) स्वामिसतु (स्वामिया) और (१७) नागरिया ।

(३) वैशेषिक--(१) ब्राह्मण (२) अवस्तिया (इवा) (३) अग्निहोत्रिया (४) दीक्षित (५) अग्निक (याज्ञिक) (६) उपाध्याय (७) आचार्य (८) व्यास (९) ज्योतिर्विद (ज्योतिषी) (१०) पंडित (११) कथक (१२) चतुर्मुख पाठक (१३) केहकुलिया (क-केहलीय) (१४) भट्ट (भाट) (१५) वैष्णव (१६) कहतगिया और (१७) बहूआ (वहूआ)

(४) बौद्ध (वेदान्त) दर्शन--(१) बोधा, वोधी (२) चंडी (उद्दाघदर) (३) सात घड़िया (४) दगडि (दंतुहा) (५) डागुरा(डा) (६) भूहिमा (भूइंमदा) (७) कपालिया (मा, मे) कमलिय (८) मूलघरिया (मूलपाणिया) (९) पेटुहड़ा (भेदफोड़ा) (१०) मांडिया (माड़) (११) विट (१२) पावईया (१३) थोइया (तूरी) (१४) गुरुडा (गरोन) (१५) गणघडलिय (१६) जगहुथिया (जगहच्छिया) और (१७) वासदेविय (सु) (वासवेटिया ।

(५) जैन दर्शन--(१) श्वेताम्बर (२) दिगम्बर (दियाकृत) (३) काष्टासंगी (४) मूलासंगी (मयूरशृंगी) (५) जायलिया (जांगालिया) (६) चउदसिया (७) पूनमिया (८) वडगछा (९) धर्मघोष (१०) खरतर (११) आंचलिया (१२) आगमिया (१३) मलधारी नटावा (१४) भावसार (१५) पुजारा (१६) ऊकट (कुटिया) और (१७) वेषधराः सर्वे (धूर्त कितव)

(६) चार्वाक--(१) योगी (विवरण) (२) हरिमेखलिया (हरमेखलिया) (३) इन्द्रजालिया (४) नागमतिया (५) तोलमतिया (६) माटमतिया (७) कुलमतिया (८) गोगामतिया (९) धनंतरिया (१०) रसायणी रसाइणीया (११) भिक्षु (१२) तुम्बक (तुम्बण) (१३) मंत्रवादी (१४) धम्मवादी (१५) पत्रवादी (पत्री) साउकमिया (१६) नोरसिया और (१७) धातुर्वादी (धोदिया)

३ वास्तविक श्रद्धा के अभाव में झूठी श्रद्धा का प्रदर्शन, ढोंग, आडम्बर। उ०—पाखंड खंड दब दड प्रखंड पुजायौ। धरणी तळ को बळबंड प्रचंड धुजायौ।—ऊ.का.

४ शरारत, नीचता।

५ कपट, धोखा।

६ ९६ की संख्या*।

रू०भे०—पखंड।

पाखंडी-वि०—१ वेदविरुद्ध आचरण करने वाला।

उ०—आस्तिक बिन इंदुक, नास्तिक, निंदुक, सास्तिक मत सोखंदा है। तज धरम त्रिदंडी, अधिक अफंडी, पाखंडी पोखंदा है।—ऊ.का.

२ षटदर्शनों के अंतर्गत भिन्न-भिन्न मतों में किसी एक मत को मानने वाला, षटदर्शनी।

३ ढोंगी, धूर्त।

४ कपटी, धोखाबाज।

५ शरारती, नीच।

रू०भे०—पखंडी।

पाख-क्रि०वि०—१ ओर, तरफ। उ०—कांन जड़ाऊ कांम रा, कुंडळ धारण कीन्ह। झळहळ तारा झूमका, दुहूं पाखां ससि दीन्ह।—बां.दा.

२ देखो 'पक्ष' (रू.भे.)

उ०—पुनें चैत आसोज रा स्वेत पाखां। लुळै मात नूं जातरी लोक लाखां।—मे.म.

३ देखो 'पाखर' (रू.भे.)

रू०भे०—पाखे, पाखड़ि, पाखैं।

पाखइ—देखो 'पखै' (रू.भे.)

उ०—१ विनयचंद्र कवि कहइ तुम्ह पाखइ। किण सुं हो २ माहरउ मन रमइ जी।—वि.कु.

उ०—२ तिणी नगरीइं त्रही गयु, थाकउ थामकहींन। अंगि उचाटिउ अति घणउं, जिम जल-पाखइ मीन।—मा.कां.प्र.

उ०—३ सूरय पाखइ दिवस नहीं पुण्य पाखइ सौख्य नहीं।—रा.सा.सं.

पाखड़ी-सं०स्त्री० [देशज] १ आंख की पलक।

२ देखो 'पाख' (अल्पा.,रू.भे.)

पाखड़ौ-सं०पु० [देशज] १ ऊंट के चारजामे के बाजू की लकड़ी।

[देशज] २ भैंस या ऊंट का अगला पैर (ठांण से) बांधने की रस्सी या सांकल।

पाखति, पाखती—देखो 'पाकती' (रू.भे.)

उ०—दस जूता दस जूतणा, दस पाखती बहंत। हेकण धवळा बायरा, खैंचातांण करंत।—बां.दा.

पाखर-वि० [सं० प्रक्खर] तीक्ष्ण, तेज ?

उ०—आठम प्रहर संझा समै, धण ठव्वै सिणगार। पांन कजळ पाखर करै, फूलां को गळिहार।—ढो.मा.

सं०पु० [सं० प्रखर:] १ युद्ध में रक्षा के लिए हाथी या घोड़े पर डाली जाने वाली लोहे की झूल।

२ हाथी या घोड़े की झूल।

उ०—वनसपती पाखर वणी, वणिया टूक विहद्द। पटा विछूटं नीझरण, आयौ मद अरबुद्द।—अज्ञात

३ कोहरा, धुंध। उ०—वरखा रितु लागी, विरहणी जागी। आभा झरहरै, वीजां आवास करै। नदी ठेबां खावै, समुद्रे न समावै। पहाड़ां पाखर पड़ी, घटा ऊपड़ी। मोर सोर मंडै, इंद्र धार न खंडै।—रा.सा.सं.

४ कवच। उ०—१ प्यारा पाखर पेम का, कांइज पहिरा अंगि। वयण खटक्कइ वांण ज्यूं, कोइ न लागइ अंगि।—ढो.मा.

उ०—२ वांदि वांदि फुरमांण, सिलह पाखर करि सांमां। आय सवै उमराव, सूर बहु मिळै समांमां।—सू.प्र.

रू०भे०—पक्खर, पक्खरिय, पखर, पखराळ, पखरीय।

अल्पा०—पक्खराळो, पक्खरी, पणराळो, पाखरड़ू, पाखरड़ौ, पाखरी।

मह०—पंखराळ, पक्खरांण, पक्खराळ, पखरांण, पखराळ, पखरांण, पाखरांण।

पाखरड़ू, पाखरड़ौ—देखो 'पाखर' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—अंग पहरै लो नूं आंगरडू, घोड़लडै पाखरड्डू घाल। 'पातल' रांण चढे परबाते, झटकूं बाद भड़कूं झाळ।—महारांणा प्रताप रौ गीत

पाखरणौ, पाखरबौ-क्रि०स० [सं० प्रखर:] १ कवच, शस्त्र आदि से सुसज्जित करना।

उ०—१ पंचाइण नइं पाखरयउ, मइगळ नइ मद कीध। मोहणवेली मारुई, कंत पेम रस पीध।—ढो.मा.

उ०—२ पातिसाह रा दळ बादळ मोगर थाट ऊपड़िया छै। बीस असवार पाखरीआ।—रा.सा.सं.

२ घोड़े, ऊंट आदि को जीन कस कर सुसज्जित करना।

उ०—चपल तुंग तुरंगम पाखरिया। गुडगुडया असवार ते सांचरिया।—सालिभद्र सूरि

पाखरणहार, हारौ (हारी), पाखरणियौ—वि०।

पाखरिओड़ौ, पाखरियोड़ौ, पाखरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पाखरीजणौ, पाखरीजबौ—कर्म वा०।

पक्खरणौ, पक्खरबौ, पखरणौ, पखरबौ—रू०भे०।

पाखरवंत-वि० [सं० प्रक्खर= प्रा० पक्खर+सं० वान] झूल, जीन, कवच, शस्त्र आदि से सुसज्जित।

उ०—पायक अस रथ पंथ अपारां। हाथी पाखरवंत हजारां।—रा.रू.

पाखरांण—देखो 'पाखर' (मह०, रू.भे.)

पाखरियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ कवच, शस्त्र आदि से सजा हुआ।

२ जीन कसा हुआ।

(स्त्री० पाखरियोड़ी)

पाखरी—१ देखो 'पाखर' (अल्पा०, रू.भे.)

२ देखो 'पाखळी' (अल्पा.,रू.भे.)

पाखरैत—देखो 'पखरैत' (रू भे.)

उ०—दे कळां जांमकी सारी साथ यूं फिरांणी दोळी, साम्रवां हिरांणी नाडो ऊगे समै सूर। पाखरैतां घोड़ां भड़ां थाट सूं विरांणी 'पनो', 'जालांणी' लिरांणी वीटो दिरांणी जरूर।

—कांबां रा मोमिया, सींधल राठौड़ां री गीत

पाखळणो, पाखळबो–क्रि०स० [देशज] ऊंट या घोड़े के अगले व पिछले पैर को बांधना।

पाखळणहार, हारौ (हारी), पाखळणियो—वि०।

पाखळिग्रोड़ो, पाखळियोड़ो, पाखळयोड़ो—भू०का०कृ०।

पाखळीजणो, पाखळीजबो—कर्म वा०।

पाखळि, पाखळिय—देखो 'पाखळो' (रू.भे.)

उ०—रुंड मुंड रडवडइ रिणंगणि, लोही तणा प्रबाह। ऊभे हाथ असुर पोकारइ, पाखलि पाडइ धाह।—कां.दे.प्र.

पाखळियोड़ो–भू०का०कृ०—अगला व पिछला पैर बांधा हुआ (घोड़ा या ऊंट)

(स्त्री० पाखळियोड़ी)

पाखळियो—देखो 'पाखळो' (अल्पा०, रू.भे.)

पाखळी, पाखळीय–सं०स्त्री० [देशज] मोट (चड़स) के खाली होने वाले स्थान पर तीन ओर लगाए जाने वाले पत्थरों में से एक पत्थर।

क्रि०वि०—पास, समीप ?

उ०—ऊंचा ते अळगाह, भुंवि पड़िया भावै नहीं। थुड़ी पाखळी फिरतांह, जीव गमायो जेठवा।—अज्ञात

पाखळो—देखो 'पाखळो' (रू.भे.)

पाखाण—देखो 'पासांण' (रू.भे.) (अ.मा.) (डिं.नो.मा.)

उ०—जितै 'जसो' पह जीवियो, थिर रहिया सुर-थांण। आंगळ ही 'अवरंग' सूं, पड़ियो नह पाखांण।—वां.दा.

पाखांणवद्ध—देखो 'पासांणवद्ध' (रू.भे.)

पाखांणभेद—देखो 'पासांणभेद' (रू.भे.)

पाखांणी—देखो 'पासांणी' (रू.भे.)

पाखाणो—देखो 'पाखानो' (रू.भे.)

पाखान—देखो 'पासांण' (रू.भे.)

पाखानो–सं०पु० [फा० पायख़ाना] १ भोजन के पाचन के बाद पचा हुआ मल जो गुदा में होकर बाहर निकल जाता है, टट्टी, गू।

२ शौचस्थान, तारत, टट्टी।

मुहा०—१ पाखानो निकळणो—मारे भय के बुरा हाल होना।

२ पाखानो फिर दैणो—भय से घबरा जाना।

३ पाखानो फिरणो—मल त्याग करना।

४ पाखानो लगणो—मल का वेग जान पड़ना।

रू०भे०—पाखांणो, पैखानो।

पाखाळणो, पाखाळबो—देखो 'पखाळणो, पखाळबो' (रू.भे.)

उ०—पोह सामंद्र खड़ग पाखाळै। अरक वंस विरदां उजवाळै।

—सू.प्र.

पाखाळणहार, हारौ (हारी), पाखाळणियो—वि०।

पाखाळिग्रोड़ो, पाखाळियोड़ो, पाखाळयोड़ो—भू०का०कृ०।

पाखाळीजणो, पाखाळीजबो—कर्म वा०।

पाखाळियोड़ो—देखो 'पखाळियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पाखाळियोड़ी)

पाखि–क्रि०वि०—पास ?

उ०—पंड-तणी गति पवन सहू, कहिया पाखि तुं प्रीछि। ते प्रीछिम प्रियतम जई, एह अम्हारी ईच्छ।—मा.कां.प्र

पाखी–सं०स्त्री० [सं० पक्ष] कुए से सींची जाने वाली फसल की भूमि की कुछ क्यारियों का समूह जिनको एक ही नाली से पानी पिलाया जाता है।

मुहा०—पाखी पीणो—सब खराब होना, सब एक जैसे होना।

सं०पु०—१ घोड़ा।

२ देखो 'पक्षी' (रू.भे.)

उ०—ओ मिनख मरघा कै मरघा पाखी। ओ देख मरघो कै मरघो साखी।—कन्हैयालाल सेठिया

पाखे, पाखेड़ि, पाखै—देखो 'पाकती' (रू.भे.)

उ०—१ परपीड़न पेखे दया न देखे, लेखे विन लूटंदा है। परमेस्वर पाखे आ अभिलाखे, छदमी क्यूं छूटंदा है।—ऊ.का.

उ०—२ सिरचंद अर तेजसी क्याल वेद हुइ अर कारी की। सु कारी न हिंदुस्तान न खुरासांण मांहे सुणी व दीठी। सूंटी रै पाखेड़ि कारी की।—द.वि.

२ देखो 'पखै' (रू.भे.)

उ०—ऊपर आंवा मोरिया, तळ नीझरण झरंत। साजण पाखै दीहड़ा, ताढ़ा तोय तपंत।—अज्ञात

३ देखो 'पाख' (रू.भे.)

पाखो–सं०पु० [सं० पक्ष] १ दूध देने वाले पशुओं के स्तन का किसी ओर का एक भाग या पूरे स्तन-मण्डल का आधा भाग।

२ देखो 'पक्ष' (रू.भे.)

उ०—अगहन मास ऋतूग्यो आखो। पो त्रेता युग वीतौ पाखो।

—ऊ.का.

पाग–सं०स्त्री० [सं० पदक=पग] १ सिर पर बांधने का वस्त्र, पगड़ी।

उ०—आज घुराऊ घुंधळो, मोटी छांटां मेह। भीजी पाग पधारस्यो, जद जांणूली नेह।—अज्ञात

वि०वि०—पाग को पहले पैर के घुटने पर बांधते हैं और फिर सिर

पर रखते हैं। इसी कारण इसका नाम पाग प्रतीत होता है।

२ देखो 'पग' (रू.भे.)

उ०—ऊंचे गिरवर आग, जळती सह देखे जगत। परजळती निज पाग, रती न दीसै राजिया।—किरपारांम

३ देखो 'पाक' (रू.भे)

रू०भे०—पाघ।

अल्पा०—पगड़ो, पग्गड़ो, पघड़ो, पघ्घड़ो, पागड़ो, पाघड़ो, पागणी।

मह०—पगड़, पग्गड़, पघड़, पघ्घड, पागड़, पागड़ो।

पागड़—१ देखो 'पाग' (मह०, रू.भे.)

२ देखो 'पागड़ो' (मह०, रू.भे.)

उ०—ढोलउ हल्लांणउ करइ, धण हल्लिवा न देह। झब झब झूंमइ पागड़इ, डब डब नयण भरेह।—ढो.मा.

३ देखो 'पग' (मह०, रू भे.)

पागड़ाछाक—सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार की रीति जिसमें मेहमानों को रवाना होते समय शराब की मनुहार देते हैं (राजपूत)

पागड़ापछाड़—सं०स्त्री० [देशज] घोड़े के पेट पर रकाब के रहने के स्थान पर होने वाली भौंरी जिसे अशुभ मानते हैं।

पागड़ी—देखो 'पाग' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—ए झटपट बांधी पागड़ी रुण-झुणियो ले। ए दोड़्या बागां जाय जाजो मरवौ ले।—लो.गी.

पागडून—सं०पु० [देशज] १ ऊंट की रकाब के बांधने का बन्धन जो ऊंट के चारजामे के साथ बधा रहता है (शेखावाटी)

२ देखो 'पागड़ो' (रू.भे.)

पागड़ो—सं०पु० [सं० पदक+रा० प्र०ड़ो] १ घोड़े के चारजामे में लगा पायदान, रकाब।

उ०—सु महेस इयूं कहि अर पावां आगै आइ पड़ियो। अर मदनो पातावत घोड़ै हूता पड़ियो। जे पागड़ो तूटै नहीं तो मरै।—द.वि.

मुहा०—१ पागड़ै पग देणो—रकाब में पैर रखकर घोड़े पर सवार होना।

२ पागड़ै लगाणो—आधीन करना।

३ पागड़ो छाडणो—घोड़े से नीचे उतर कर विश्राम करना।

४ पागड़ो झालणो—रुकने को आग्रह करना, खुशामद करना। पनाह ताकना।

५ पागड़ो पकड़णो—देखो 'पागड़ो झालणो'।

२ पुरुषों के पैर में पहिनने का सोने अथवा चांदी का बना आभूषण विशेष।

उ०—झांझर, नेउर, सांकळां, ग्रैवेयक, पागड़ां, वींछीया, अंगूठळी, वाला, झालि... ।—व स.

३ देखो 'पाग' (मह., रू.भे.)

उ०—टांगड़ी भेर लागां टळै, पड़ै खिसकिनै पागड़ो। नागड़ो तोई देखो निलज, अमल न छोडै आघड़ो।—ऊ का.

रू०भे०—पाघड़ो।

मह०—पागड़, पागडून, पाघड़।

पागणो, पागबो—क्रि०स० [सं० पाक:] १ शक्कर, गुड़ आदि की बनी मीठी चासनी में डुबोना या तर करना।

क्रि०अ०—२ डूबना, मग्न होना, तन्मय होना।

उ०—बोखौ आय अभागै बैठें, रस पागै प्रिय रोळ। मूरख रै लागै तन मिरचां, त्यागै तुरत तमोळ।—ऊ.का.

पागणहार, हारौ (हारी), पागणियौ—वि०।

पागिओड़ो, पागियोड़ो, पाग्योड़ो—भू०का०कृ०।

पागीजणो, पागीजबो—कर्म वा० भाव वा०।

पागती, पागते—देखो 'पाकती' (रू.भे.)

उ०—तिसै सा गढ पै सारा टाबर रमै छै। पागती लोग ऊभा छै।

—वीरमदे सोनीगरा री बात

पागल—वि० [सं०] (स्त्री० पगली) १ जिसका दिमाग ठीक न हो, बावला, सनकी।

२ नासमझ, मूर्ख।

उ०—पसुवत पांमरपण पोसण धण पागल। दोनूं भुज दुरगति चौंघटियां दागल।—ऊ.का.

३ क्रोध, प्रेम, शोक आदि के कारण होश-हवास खो देने वाला।

यौ०—पागलखांनो।

अल्पा०—पगलौ, पगल्लो।

पागलखांनो—सं०पु० [सं० पागल+फा० खाना] वह स्थान जहाँ पागलों की चिकित्सा की जाती है।

पागलणी—देखो 'पगली' (रू भे.)

उ०—हरिजी सूं हित करलै हे पागलणी। प्रभुजी सूं प्रेम करलै हे पागलणी।—मी.रां.

पागलियौ—१ देखो 'पग' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—जैसळमेर तौ पाणीड़ो तेड़ायो ओतो पागलियौ, पांणी में काढ़ै रे, म्हारो गोरबंध चौरांणो।—लो.गी.

२ देखो 'पागो' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—मांचां रा पागलिया लियां, लांमी लांम झहामड़ी। टावरिया गेडिया टाळै, बूढ़ां ठेगण कांमड़ी।—दसदेव

पागार—सं०पु० [सं० प्राकार] परकोटा।

उ०—तेरिण पातिसाहि आयां सांतरि सत छाडइ नहीं, खत्र खांडइ नहीं, दीण न भाखइ, पागार लंघित न होयइ।—अ. वचनिका

पागि—देखो 'पग' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—साहिउ अरजुनि वनचरु पागि, प्रकटु हुई बोलइ 'वरु मागि'।

—पं.पं.च.

पागियोड़ो—भू०का०कृ०—१ शक्कर, गुड़ आदि की चासनी में डुबोया हुआ।

२ तन्मय, मग्न ।
(स्त्री० पागियोड़ी)

पागी-सं०पु० [सं० पदक+रा प्र. ई] १ भूमि पर अंकित पद चिन्हों को पहिचानने वाला, खोजी ।
उ०—सरणागत सोधै, प्रेम प्रवोधै, गोधे जिम गाजंदा है । अणभेअण रागी, परभव पागी, वग बागी बाजंदा है ।—ऊ.का.
२ ज्ञाता, जानकार, विज्ञ ।
उ०—भली भई, मोय सतगुरु मिळिया, तिहुं मारग का पागी । भिन्न-भिन्न करके भेद बताऊं, अनुभव उगती जागी ।
—स्री हरिरामजी महाराज
रू०भे०—पाहाघो ।
अल्पा०—पागीड़ो ।

पागीड़ो—देखो 'पागी' (अल्पा.,रू.भे.)
उ०—जैसळमेर तो पागीड़ो तेड़ायो, ओ तो पागलिया पांणी में काडे रे, म्हारो गोरबंध चोरांणो ।—लो.गी.

पागीपो-सं०पु० [सं० पदक+रा. प्र. पो] १ भूमि पर अंकित पद-चिन्हों को पहिचानने का कार्य ।
२ भूमि पर अंकित पदचिन्हों को पहिचानने का पारिश्रमिक ।

पागोड़ियो, पागोड़ो—देखो 'पगथियो' (रू.भे.)
उ०—ओप बावड़ो पागोडा थिर नीलम जड़िया । रतन-नाळ जुत हेम कंवळ जळ फूटर भरिया ।—मेघ.

पागोटियो—देखो 'पगथियो' (रू.भे.)

पागोटी-सं०स्त्री० [स० पदक+रा. प्र. ओटो] स्वस्तिकासन बैठने का एक आसन विशेष, पालथी ।
रू०भे०—पाघोटी ।

पागोटो, पागोडियो, पागोडो, पागोतियो, पागोतीयो, पागोत्यो, पागोथियो, पागोथ्यो—देखो 'पगथियो' (रू.भे.)

पागो-सं०पु० [सं० पाद] पलंग, कुर्सी, चौकी, तख्त आदि में लगा खड़ा डंडा जिसके सहारे उसका ढांचा या तल ठहरा रहता है, पाया ।
उ०—केई नर सूता, केई नर जागै, जागतड़ां री पागड़ियां ढोल्या रै पागां, सूतोड़ां री पागड़ियां जागतड़ा ले भागै, फोरा पतळा रो डाव नीं लागै ।—फुलवाड़ी
रू०भे०—पगो ।
अल्पा०—पागलियो ।

पाघ—देखो 'पाग' (रू.भे.)
उ०—जिस बखत स्री महाराजा केसरिया ऊंच पौसाक पहिरि खांघी पाघ पेच वणवाय । जवहर के सिरपेच सिर सोबा जगजोति जगाय ।
—सू.प्र.

पाघड़—१ देखो 'पाग' (मह०, रू.भे.)
उ०—कर कम चालै जीभ अत, सिर पाघड़ सिरकंत । विढै बजारां वाणियां, मुख मूछां फरकंत ।—बां.दा.
२ देखो 'पागड़ो' (मह०, रू.भे.)

पाघड़ी—देखो 'पाग' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—मूंछ केस खंडत नहीं, नाक न खंडत कोर । पड़ो पुळंता पाघड़ी, सुकुळीणी तज सोर ।—बां.दा.

पाघड़ो—१ देखो 'पागड़ो' (रू.भे.)
उ०—असवार बड़ो असमांन गति, घूहड़ घूजै वड घड़ै । पह पूठि चढै जैवंत मह, पाउ परट्ठै पागड़ै ।—गु.रू.वं.
२ देखो 'पाग' (मह.,रू.भे.)
उ०—कितां करै एराक, ऊंच पोसाकां ऊपर । अरि ओळां, पाघड़ां, कुलंग जूंगां बह जब्बर ।—सू.प्र.

पाघोड़ो—देखो 'पगथियो' (रू.भे.)

पाघणी—देखो 'पाग' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—नांणे वेसे वीड नंह, उळझे लेखे अत्थ । राती पाघणियां तणा, सुळझावण समरत्थ ।—बां.दा.

पाघोटी—देखो 'पागोथियो' (रू.भे.)

पाड़-सं०पु०—१ एक प्रकार का वाद्य यंत्र ।
उ०—डफ खंजरी दुतार विखम रोहिला बजावै । पसतो अरवी पाड़ गजल कड़खा बह गावै ।—सू.प्र.
२ अहसान । उ०—जसवंत सुत जैसिंघ नूं, दिवरायो ढूंढाड़ । आलम सो अजमाल नूं, प्रगट मनायो पाड़ ।—रा.रू.

पा'ड—देखो 'पहाड़' (रू.भे.)
उ०—कमध आव सुण कूक धणारी रा झाड़ां सूं । कुरछी हूंता कहूं 'पाल' कैरू पा'डां सूं ।—पा.प्र.

पाडणी, पाडबो-क्रि०स० [सं० पातनम्] १ पराजित करना ।
उ०—'मांण' रै बीच वळभद्र रो ऊथाळै साबळ अणी । नरमाल प्रिथीमल पाडियो, दांणव सिंघ दरस्सणी ।—गु,रू.वं.
२ प्रविष्ट करना ।
३ हस्तक्षेप करना, दखल डालना ।
ज्यूं—आपस का झगड़ा में दूजा नैं पाड़णो ठीक नहीं ।
४ दुःखप्रद घटना का घटित करना ।
ज्यूं—आफत पाड़णी ।
५ वीर गति को प्राप्त कराना ।
उ०—पाड़े फिरंग नीठ रिण पड़िया, कमधां साको प्रबळ कियो । दीधो मरण 'वलू' दहवारी, सारकोट रै मरण कियो ।
—जादूरामजी आढ़ो
६ मारना, संहार करना । उ०—उंवर आदि राजा पाड़ै अरि । किलम हजार गुलाव छड़ी करि ।—सू.प्र.
७ त्वचा उतारना । उ०—वारा सुखनां खीजियो, अकवर साह जलाल । उच्चरियो हूं जीवतां, सीहां पाड़ूं खाल ।—बां.दा.
८ गिराना, पटकना । उ०—हाथी पाड़ूं हींडता, घोड़ा पाखरियांह ।

तो नांणीजै रावतां, भूंडण रा जणियांह ।

—डाढाळा सूर री वात

९ एक वस्तु का दूसरी पर फैलाकर रखा जाना, फैलाना ।

१० छोड़ा या डाला जाना ।

ज्यूं—पेट में रोटी पाड़णी, साग में नमक पाड़णो ।

११ पूर्व की स्थिति को छुड़ा कर नवीन स्थिति या दशा में डालना ।

ज्यूं—ढीलो पाड़णो, कमजोर पाड़णो ।

१२ प्राप्त कराना, हथियाना ।

१३ उखाड़ना ।

उ०—बाभी दिन दिन बोल में, कहता बढणो कंत । हूमैं निहारी हाथिया, देवर पाड़ै दंत ।—वी.स.

१४ लूटना । उ०—रावळ देवीदास चाचै री बेटो । तियै बाप रै बैर उमरकोट पाड़ियो ।—नैणसी

पाड़णहार, हारो (हारी), पाड़णियो—वि० ।

पाड़िग्रोड़ो, पाड़ियोड़ो, पाड़्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पाड़ीजणो, पाड़ीजबो—कर्म वा० ।

पड़णो, पड़बो—अक०रू० ।

पाड़वलो—देखो 'पड़दलो' (रू भे.)

पाड़ियोड़ो-भू०का०कृ०—१ हराया हुआ, पराजित किया हुआ ।

२ प्रविष्ट कराया हुआ ।

३ हस्तक्षेप कराया हुआ ।

४ दुखप्रद घटना घटित कराया हुआ ।

५ वीरगति प्राप्त कराया हुआ ।

६ मारा हुआ ।

७ त्वचा उतारा हुआ ।

८ गिराया हुआ, पटका हुआ ।

९ फैलाया हुआ ।

१० डाला हुआ ।

११ नवीन स्थिति में डाला हुआ ।

१२ प्राप्त किया हुआ, हथियाया हुआ ।

१३ उखाड़ा हुआ ।

१४ लूटा हुआ ।

(स्त्री० पाड़ियोड़ी)

पाड़ो—देखो 'पाडो' (रू.भे.)

पाड़ै-अव्य० [देशज] १ निकट, पास ।

२ ओर, तरफ ।

पाड़ोस-सं०पु० [सं० प्रतिवेश, प्रा० पडिवेस या प्रत्योकस्] १ किसी के घर के समीप का घर ।

क्रि०प्र०—करणो, होणो ।

२ किसी स्थान के आसपास के स्थान ।

रू०भे०—पड़ोस, पडोस, पाडोस ।

पाड़ोसण-सं०स्त्री० [सं० प्रतिवेश+रा.प्र.ण] वह स्त्री जिसका घर पड़ोस में हो, पास के मकान में रहने वाली स्त्री ।

उ०—ना म्हैं सासू नणद सतायी, ना पाड़ोसण सतायी हो रांम । ना म्हैं दिवले से दिवलो संजोयो, ना म्हैं काची नींद जगायी हो रांम ।

—लो.गी.

रू०भे०—पड़ोसण ।

पाड़ोसी-सं०पु० [सं० प्रतिवेश+रा०प्र०ई] (स्त्री० पाड़ोसण) वह जिसका घर पड़ोस में हो, पड़ोस में रहने वाला व्यक्ति ।

उ०—एक साहूकार बेटा नै सीख देवै—लेवै जिणरो पाछो दैणो । न दियां लोक दीवाल्यो कहै । पाड़ोसी दीवाल्यो हुंतो ते सुणनै कूदै ।

—भि.द्र.

रू०भे०—पड़ोसी, पडोसी, पाडोसी ।

पाड़ो-सं०पु० [सं० पट्टन] मुहल्ला ।

पाच-सं०स्त्री० [देशज] मणि ।

उ०—घरम घरम सहु कोई भासै, पिण अंतर असमांन रे । साकर लूण सरीखा दीसै, काच पाच समवांन रे ।—स्रीपाळ

पाचक-वि० [सं०] कच्ची वस्तु को पचाने या पकाने वाला ।

सं०पु०—१ भोजन पकाने वाला, रसोइया, बावर्ची ।

२ पांच प्रकार के पित्तों में से एक । (अमरत)

सं०पु०—३ पाचक पित्त में रहने वाली अग्नि ।

४ भोजन को पचाने तथा पाचन शक्ति व भूख को बढ़ाने वाली औषधि ।

पाचड़ियो-सं०पु० [देशज] फाल की मजबूती के लिए हल के पीछे लगाई जाने वाली लकड़ी ।

रू०भे०—पाछड़ियो, पासींचो ।

पाचणो—देखो 'पाछणो' (रू.भे.)

उ०—एकर नाई एक बा'रला वांणिया रै खिजमत करी । पाचणा सूं माथो घुरड़ नै तांबा जैड़ो कर दियो ।—फुलवाड़ी

पाचणो, पाचबो-क्रि०स० [सं० पचष्] १ पकाना (उ.र.)

२ हजम कराना ।

पाचणहार, हारो (हारी), पाचणियो—वि० ।

पाचिग्रोड़ो, पाचियोड़ो, पाच्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पाचीजणो, पाचीजबो—कर्म वा० ।

पाचन-वि० [सं०] १ पचाने वाला, पकाने वाला ।

२ हजम करने वाला ।

सं०पु०—१ वह औषधि जो आम या अपक्वदोष को पचावे, बदहजमी मिटाने वाली औषधि ।

२ उदरस्थ वह शक्ति जो एक प्रकार की अग्नि के रूप में मानी जाती है और जिसकी सहायता से खाए हुए पदार्थ पचते या हजम होते हैं, हाजमा, जठराग्नि ।

३ आग, अग्नि ।

पाचनसक्ति, पाचनसगति, पाचनसगती–सं०स्त्री०यौ० [सं० पाचनशक्ति] भोजन को पचाने की शक्ति, हाजमा।

पाचनी–सं०स्त्री० [सं०] हर्ड (नां.मा.)

पाचर, पाचरी–सं०पु० [देशज] १ गाड़ी के पहिये के ऊपर पुट्ठी को मजबूत करने के लिये पुट्ठी के छेदों में लगाई जाने वाली लकड़ी।

उ०—चौधरी पुचकार नै बळदां री रास खांची। हेठै उतर नै जोयौ—पूठियां तौ साव खोळी व्हैगी ही। ठोरण सारू हाथ वसू कीं दूजी चीज निगै नीं आई तौ वौ लप करतौ मा'राज री वींणी उठायौ। आगा सूं लांठो घूबौ व्है ज्यूं देख्यौ तौ बौ जांण्यौ के पाचरा ठोरण सारू नांमी राच है। वौ भवाय नै पूरा करार सूं एक पाचरा माथै वींणी वायौ हो। पूठी अर पाचरा री भचीड़ उड़तां ई उणरी तौ किळी-किळी बिखरगी।—फुलवाड़ी

रू०भे०—फाचर, फाचरी।

अल्पा०—फाचरी।

पाचळणी–वि०—पीछे की।

उ०—प्रवाड़ौ खाट दरबार न आयौ सुपह, कथन आय नरां दूसरा कहिया। पाचळणी भड़ी कमर सूं पाकड़ै, राव रावत विनै खेत रहिया।—अज्ञात

क्रि०वि०—पीछे से।

पाचियोड़ौ–भू०का०कृ०—१ पकाया हुआ।

२ हजम किया हुआ।

(स्त्री० पाचियोड़ी)

पाची–सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार की लता विशेष, हरित पत्रिका।

पाचू–सं०पु० [देशज] ऊंट के शरीर के किसी भाग में होने वाली ग्रंथी विशेष जिसमें कीड़ा पड़ जाता है और मवाद निकलती है। इसमें से खील निकल जाने पर यह ठीक हो जाती है। यह ऊंट के पिछले पैर में अधिक होती है।

पाछ–सं०स्त्री० [देशज] कमी, बाकी।

उ०—१ सो कजिये में ठाकुरां पाछ नहीं राखी। कही थी तिण सूं दस गुणी कर दिखाई।—मारवाड़ रा अमरावां री वारता

उ०—२ घर में रामजी राजी होवतां थकांई सेठ सेठांणी नै इण वात रौ बडौ दुख हौ के उणांरै कोई संतांन कोय ही नी। कोसीस करण में सेठां पाछ कोय राखी नी।—रातवासौ

पाछइ–क्रि०वि०—पीछे, बाद में।

उ०—हित विण प्यारा सज्जणां, छळ करि छेतरियाह। पहिली लाड लडाइ कइ, पाछइ परहरियाह।—ढो.मा.

पाछउ—देखो 'पाछौ' (रू.भे.)

उ०—ढोलइ सूवउ सीख दइ, जा पंछी ग्रह वास। उडियर पाछउ आवियउ, माळवणी-कइ पास।—ढो.मा.

(स्त्री० पाछी)

पाछटणौ, पाछटबौ–क्रि०स० [देशज] १ वार करना, चलाना।

उ०—पहली असवर पाछटै, अरियां लोह विछोड़। पाछै अजका भूप रा, दळ मह पूगै दौड़।—वी.स.

२ फोड़ना, तोड़ना।

उ०—विण मरियां विण जीतियां, घणी आवियां धांम। पग-पग चूड़ी पाछटूं, जे रावत री जांम।—वी.स.

३ देखो 'पछटणौ, पछटबौ (रू.भे)

पाछटणहार, हारौ (हारी), पाछटणियौ—वि०।

पाछटिओड़ौ, पाछटियोड़ौ, पाछट्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पाछटीजणौ, पाछटीजबौ—कर्म वा०।

पाछटियोड़ौ–भू०का०कृ०—१ वार किया हुआ, चलाया हुआ।

२ फोड़ा हुआ, तोड़ा हुआ।

३ देखो 'पछटियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पाछटियोड़ी)

पाछड़ियौ—देखो 'पाचड़ियौ' (रू.भे.)

पाछणौ–सं०पु० [देशज] १ बाल मूंडने का उस्तरा (अमरत)

उ०—पणग ते जांणे पाछणां, पवन ते लाइ लूण। पड़ी पड़ी हुं तड़फडूं, हुं पीड़ि निवारइ कुंण।—मा.कां.प्र.

२ एक प्रकार का छोटा छुरा जो द्वंद्व युद्ध के समय पैर के अंगूठे में बांधा जाता था।

उ०—जठै वीरमदे खेलण नै दरबार री तयारी कीधी। जदै अपछरा गुपत आय कह्यौ, पंजू रै पग रा अंगूठा माहें पाछणौ छै।

—वीरमदे सोनगरा री वात

रू०भे०—पाचणौ, पासणौ।

पाछत, पाछतरौ–वि० [सं० पश्चात्] अवसर या मौसम निकल जाने के बाद बोई गई फसल।

रू०भे०—पछेत।

विलो०—आगत, आगतरौ।

पाछपोळि–क्रि०वि० [सं० पश्चात] पीछे।

उ०—पाछपोळि पापी करइं, कूडु दीधउ रतिवाउ। निहणीय पंच पंचाल, वाल, अनु राखसि जाउ।—पं.पं.च.

पाछमनौ–वि० [सं० पश्चात+मन] आगे बढ़ने में उदास।

उ०—नितरै किण हेक महेस रै चाकर ऊंचै चढ़तां महेस जी री आंण कह्यौ। तठै रिणमल पाछमना सा हुवा।

—राव मालदे री वात

पाछल–सं०स्त्री [सं० पश्चात] १ पीठ।

उ०—कांणियौ फाचर रीस में पग पटकतौ बोल्यौ—नी सीखिया तौ आज म्हैं थां नै सिखाऊं। आ वात कहनै वो आपरी वा'र घकी नै पाछल फोरी।—फुलवाड़ी

२ देखो 'पाछलौ' (मह.,रू.भे.)

उ०—वेस्या नेह, जुवार धन, कातौ अबर छार। पाछल पौ'र अऊत घर, जात न लागै वार।—अज्ञात

पाछलो-वि० [सं० पश्चात्] (स्त्री० पाछली) १ पूर्व का, पहले का।
उ०—१ जन्म भूमि में करै जातरा, पाप प्रबळ पिल जावै। पुन्न पाछला होवै पूरा, भ्रा मन में जद भ्रावै।—ऊ.का.
२ पीछे का, बाद का।
उ०—१ रिणमलजी मानै नहीं। चवंडो जी छाडै नहीं। यूं करतां पाछलो पहर हुभ्रो।—नैणसी
उ०—२ भ्रागलि गलि दोरी धरी, पाछलो बांधी पांणि। (राजा जंपइ) 'राउ-नइं', भूठे भाली भ्रांणि।—मा.कां.प्र.
उ०—३ घर छोडिया नूं जै तीन बरस हुवा छै। पाछली खबर तक नहीं के किण तरह छै।—रांमदत्त साह री वारता
रू०भे०—पछलो, पछिलो, पाछिलउ, पाछिलो, पिछलो।

पाछिम—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)
उ०—बपि रजवट खत्रवट प्रघट बणी। धरपति लखपति, धन पाछिम धणी।—ल.पि.

पाछिलउ—देखो 'पाछलो' (रू.भे.)
उ०—१ पाछिलइ भवि तु बांभण हुतउ, अधिकारी दुख दायौ जी। पांचसइ हाली नइ तइं कीयउ, अन्न पांणी अंतरायो जी।—स.कु.
उ०—२ तब राघव चितवइ वयर पाछिलउ संभारयउ। कहुं जिहां पद्मिनी साह जु चितइ धारउ।—प.च.चौ.
(स्त्री० पाछिली)

पाछिलो—देखो 'पाछलो' (रू.भे.)
उ०—१ कूभड़ियां करळव कियउ, धरि पाछिलै वणेहि। सूती साजण संभरया, द्रह भरिया नयणेहि।—ढो.मा.
उ०—२ दीवा पाछिलो राति इसौ भाखो दीसै छै।—वेलि टी.
(स्त्री० पाछिली)

पाछेपो—देखो 'पाछोपो' (रू.भे.)

पाछै—देखो 'पछै' (रू.भे.)
उ०—हाथ न भ्रपणो होवसी, हरो हाथ जय हार। पटक हाथ पिछतावसी, पाछै हाथ पसार।—ऊ.का.

पाछोपो-वि० [सं० पश्चात् ?] १ पीछे का, बाद का (वंश)
उ०—तरै सवणी कह्यो—जु इण गढ़ 'सवो' रावळ रो नांम रह्यो चाहीजै नै पाछोपो नहीं रहै।—नैणसी
२ पीठ पीछे का।
रू०भे०—पछोपो, पछोपो, पाछैपो।

पाछोर-सं०स्त्री० [सं० पश्चात् ?] तालाब या पोखर के भ्रासपास की पिछली भूमि।

पाछौ-वि० (स्त्री० पाछी) वापिस, पीछे।
उ०—१ ढेढ नांम सुण पाछा छळिया। बाट भ्रावता उणहिज बळिया।—ऊ.का.
उ०—२ भ्राथ घरै घर भ्रोर री, वयण इस्ट दे बीच। भ्रा भ्राछी न करै भ्रठै, न दिए पाछी नीच।—बां.दा.
रू०भे० पाछउ।

पाज-सं०स्त्री० [देशज] १ प्रण।
उ०—भ्रब तो निभायां, बांह गह्यां री लाज। भ्रसरण सरण कह्यां गिरधारी, पतित उधारण पाज।—मीरां
[सं० पाजस्य] पुल, सेतु।
उ०—१ वैरी कढ़छै 'बांकला', करै भ्रहोणो काज। रांम तार गिरवर रची, पांणी ऊपर पाज।—बां.दा.
उ०—२ धरी दध पाज महानग धार। पदम्य भ्रढार उतारिय पार।
—ह.र.
३ तट, किनारा (भ्र.मा.)
४ तालाब की पाल।
उ०—बाबहिया, चढि डूंगरै, चढि उंचइ री पाज। मत ही साहिब वाहुडइ, सुणि मेहां री गाज।—ढो.मा.
५ सीमा, मर्यादा।
उ०—१ करि भ्राज हिंदू वी ऐसी भ्रनेसी। तिहारे रही राज के पाज कैसी।—ला.रा.
उ०—२ पह चढे जांणि दध छिले पाज। रिणछोड़ दरस कवि महाराज।—सू.प्र.
६ प्रतिष्ठा, मान, गौरव।
उ०—भ्रै मिळ दुस्टी भ्राज, पाज भ्रनादी पालटै। लाजै कुळ री लाज, सो कोसां सूं सांवरा।—रांमनाथ कवियो
७ पंक्ति, कतार।
उ०—हरेक लूटघोड़ा घर सूं लगाय नै चांवटै री जाजम तक चीजां री पाज सी बधगी।—रातवासो
८ पट्टा, घाट। उ०—बावड़ी री पाज माथै दोनां जणा निरांत सूं बैठा लाडुभ्रां री कोथळी खोल नै लाडू खावण लागा।
—फुलवाड़ी
रू०भे०—पाजा, पाजि।
भ्रल्पा०—पाजड़ी।

पाजड़ी—देखो 'पाज' (भ्रल्पा०, रू.भे.)
उ०—पालीतांणा पाजड़ी ए, चढियउ ऊठि परभाति। सेत्रुंज नदीय सोहांमणी ए, दूरी थकी देखात।—स.कु.

पाजणखीर-सं०पु० [?] एक प्रकार का कंद विशेष।
उ०—मरडा मोगरि मूंसली, तापस तेली कंद। पाजणखीर कपूरीमा, चंद चमारी चंद।—मा.कां.प्र.

पाजणी—देखो 'पैंजणी' (रू.भे.) (उ.र.)

पाजांमो-सं०पु० [फा० पाजामा] कमर से टखने तक के भाग को ढका रखने वाला पैरों से पहिनने का एक प्रकार का सिला हुभ्रा वस्त्र।
रू०भे०—पजांमो, पायजांमो।

पाजा—देखो 'पाज' (रू.भे.)

उ०—प्रंमेसर बांधिसै पाजा, लोपसै दधि तणी लाजा। साधुग्रां रा दीह साजा, वजाडो वाजा।—पी.ग्रं.

पाजि—१ देखो 'पाज' (रू.भे.)

उ०—रुगनाथ निरेहण रेसण रांमण, डंबर मेलि पलंब दळं। मांडे महिरांणं पाजि पखांण, वांण धनंख सजे सबळं।—पि.प्र.

२ देखो 'पाजी' (रू.भे.)

पाजी-वि० [फा० पा] (ब.व. पवाज) १ दुष्ट, नीच।

उ०—१ जलाल कही–इसा पाजियां रै ऊपर ग्रापका पधारणा ठीक नहीं है।—जलाल बूबना री बात

उ०—२ मतलब रा पाजी, कर जोड़्यां विनती करै। विन मतलब राजी, बोलै नहिं बै बाधजी।—ग्रासो बारहठ

२ लुच्चा, बदमाश।

रू०भे०—पाजि।

पाजेब—देखो 'पायजेब' (रू.भे.)

पाझळणो, पाझळबो—देखो 'प्रजळणो, प्रजळबो' (रू.भे.)

पाझळणहार, हारो (हारी), पाझळणियो—वि०।

पाझळिग्रोड़ो, पाझळियोड़ो, पाझळ्योड़ो—भू०का०कृ०।

पाझळीजणो, पाझळीजबो—भाव वा०।

पाझळियोड़ो—देखो 'प्रजळियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पाझळियोड़ी)

पाझो—देखो 'प्राझो' (रू.भे.)

पाटंबर—देखो 'पटंबर' (रू.भे.)

उ०—१ पाटंबर धोयति, जिग प्रवीत। उद्दार तिलक, क्रांति ग्रद्वीत।
—सू.प्र.

उ०—२ ग्रोपै हाट ग्रोछंडिया, पाटंबर ग्रणपार। वांणक जांणक वद्दळां, इंद्र धनुख उणहार।—रा.रू.

पाट-सं०पु० [सं० पट्टः] १ रेशम का वस्त्र। उ०—उचाट काटनी निराट, पाट ग्रोढणी नहीं। बिलोक वंक लंक दे, पलंक पोढणी नहीं।—ऊ.का.

२ रेशम का डोरा। उ०—१ बाजूबंध बधै गोर बाहु बिहूं, स्यांम पाट सोहंत सिरी। मणिमै हींडि हींडळं मणिधर, किरि साखा स्रीखंड की।—वेलि

उ०—२ हिवड़ा नै हारुं ज लावजो, म्हारै हिवड़ा ने हारुंज लाव। ग्रो म्हारै तमण्यो पाट पळावजो, हो भंवर म्हांनै खेलण द्यो गणगोर।
—लो.गी.

३ वस्त्र।

उ०—मुखमल री वदु पाथरी माहे, पाथरिउ रेसम री पाट।
कळ पदम करि चिहु कनारै, थरकाई वेहां कर थाट।
—महादेव पारवती री वेलि

४ सिंहासन, राजगद्दी। उ०—१ रांम पाट कुस भूप विराजै। सुज कुस पाटि प्रतिथ दिन साजै।—सू.प्र.

उ०—२ बहसियो 'सूर' रो साह सूं वराबर, घाल ग्रसुरांण दळ भांजवा घाट। उदै हूं छतो विरतो रतो जुध ग्रभंग, पाटवी परै ग्रहियो खड़ो पाट।—द.दा.

क्रि०प्र०—उतरणो, उतारणो, बैठणो, बैठाणो।

यौ०—पाटगादी, पाटथांनी, पाटधणी।

५ पीढा या बाजोट, चौकी।

मुहा०—१ पाट बैठणो—विवाह की एक रस्म जो पाणिग्रहण के कुछ दिन पूर्व दूल्हे या दुलहिन को चौकी पर बैठा कर मंगल गीतों के साथ सम्पन्न की जाती है। यह रस्म विवाह ग्रारंभ की प्रतीक मानी जाती है।

६ तख्ता।

७ राजा, सम्राट। उ०—१ करि राज एम कमधां तिलक, वसे ग्रमरपुरि क्रीत वरि। तिण पाट 'माल' बैठो तखत, धर मुरधर सिर छत्र धरि।—सू.प्र.

उ०—२ पाइगाह मंडण चढण पाट। सांहणी छोड सिणगार थाट।
—गु.रू.बं.

मुहा०—१ पाट घाव करणो—राज्याधिकारी को मारना।

२ पाट री सोगंध लैणी—राजा की शपथ खाना।

यौ०—पाट-गादी, पाट-भगत, पाट-रांणी, पाट-हाथी।

८ चक्की का एक ग्रोर का (ऊपर का ग्रथवा नीचे का) भाग।

९ कोल्हू में 'लाठ' से संलग्न ग्रायताकार काष्ठ का तख्ता जिस पर भारी पत्थर 'लाठ' पर दबाव बढ़ाने के लिए रखा जाता है तथा यह वृत्ताकार पथ में धरातल के समानान्तर बैल के साथ-साथ घूमता रहता है।

१० कपड़े का थान।

११ मकान के छत के पत्थरों की दृढ़ता के लिए उनके नीचे दीवारों पर लगाया जाने वाला लम्बोतरा पड़ा पत्थर।

उ०—उडि पड़ै पाट दिवाळ, लगि लाल पाथर लाल। धड़ड़ंत झळ धौमाळ, कड़ड़ंत बीज कराळ।—सू.प्र.

१२ छत में लगाए जाने वाले लकड़ी के पाटिए, शहतीर।

उ०—ग्रिह-ग्रिह प्रति भींति सुगारि हींगळू, ईंट फिटकमै चुणी ग्रचंभ। चंदण-पाट कपाटइ-चंदण, खुंभी पनां प्रवाळी खभ।—वेलि

१३ वह जमीन जिसमें वर्षा का पानी एकत्रित होने से गेहूं, चने ग्रादि पैदा होते है। उ०—सु जोधपुर रै मारग सोजत सूं जातां डावी तरफ ईंदावो ग्ररहट विलावस वासै छै। नै जीमणी तरफ पाट जोड़ लगती सोजत री छै। पाट ग्रागै जोधपुर मारग पावू नाडी तळाई छै।—सोभत रै मंडळ री वात

१४ भूमि की तह, परत। उ०—हे सखी! फौज तो सत्रुग्रां री इतरी है जिणरा झंडा धजाग्रां सूं ग्राकास छाईजगो है नै घोड़ां रा पौड़ां सूं धरती रा पाट न्यारा-न्यारा होय रह्या है पण इतरी फौज ऊपरै निसंक थको तोरण माथै बींद जावै ज्यूं म्हारो पती निसंक जाय रयो छै।—वी.स.टी.

१५ भूमि, जमीन । उ०—तवे खगधार सिरि राह खत्रियां तणी, वहसि 'खेमाळ' हर ऊभियं बाह । पाट सूं मेळतौ भीछ पतसाह रा, पाट ऊखेळतौ प्रिसण पतसाह ।

भावसिंह कूंपावत राठौड़ री गीत

१५ नदी की चौड़ाई । उ०—लाग खाई परे पाटां लहै कंपू खेच लागा, वहै खाटा घायलां निराटां भीमवार । केम मार्गं लाट-राटां जाट-राटां वाळो कोट, कपाटां ठिकांणां ऊभा नद रा कुंवार ।

—कविराजा बांकीदास

१७ कुए पर लगाई जाने वाली पत्थर या लकड़ी की वह पट्टी जिस पर गिर्री के दोनों ओर लगाये जाने वाले डंडे लगाए जाते हैं ।

(जयपुर)

१८ कुए की जगत पर आड़ी लगाई जाने वाली पत्थर की वह सिला जिस पर चड़स या मोट को रख कर खाली करते हैं ।

१९ कुए पर खड़ी लगाई जाने वाली पत्थर की वह पट्टी जिस पर पैर अड़ा कर चड़स या मोट को भरने के लिए रस्सी (लाव) को बार बार खींच कर छोड़ते हैं ।

२० स्त्रियों के गले में पहिनने का आभूषण विशेष ।

उ०—ए रे गांवां के गोरवें रांणी पटवौ पोवै छै पाटां जी । मेरे सायब को पो दे पूंचियौ रांणी सती माता नै नवसर हारौ जी ।

—लो.गी.

२१ कोमल*

२२ देखो 'पट' (रू.भे.)

२३ देखो 'पट्ट' (रू.भे.)

रू०भे०—पाठ, पाढि ।

अल्पा०—पाटलौ, पाटियौ, पाटी, पाटौ ।

पाटऊधोर—देखो 'पाटोधर' (रू.भे.)

उ०—झालियौ भार भूंझारि भुजि झालियौ । पाटऊधोर हालां वखत पाळियौ ।—हा.झा.

पाटक—वि० [सं० पटुक] १ चतुर, दक्ष । उ०—अबै लोग सागड़ी री मोळप अर थळिया री हुंस्यारी माथै चरचा करण लागा के मा'टी थळियौ तौ गजब रौ चाञ्‌ग अर पाटक निकळियौ, अपां तौ उणरै पग री ई होड नी कर सकां ।—फुलवाड़ी

२ धूर्त, चालाक । उ०—एक धरमसाळा में एक नाई रैवतौ हौ । अणूंतौ ई पाटक । आपका खूंजिया में हरदम नीबू राखतौ हौ । आवतो जकौ मारगू उठे रोटी खावतौ तौ वो उणरै पाखती बैठ नै बतळ करणी सुरू कर देवतौ ।—फुलवाड़ी

सं०पु० [पाटक] बाण, तीर ।

पाटड़ागोह—सं०स्त्री०यौ० [देशज] एक प्रकार की भूरे रंग की गोह ।

उ०—एक पाटड़ागोह अळगा सूं आ रचना देखी ।—फुलवाड़ी

रू०भे०—पाटागोह, पाडागोह ।

पाटड़ौ—१ देखो 'पाटौ' (अल्पा.,रू.भे.)

२ देखो 'पटौ' (रू.भे.)

३ देखो 'पट्टी' (अल्पा०, रू.भे.)

४ देखो 'पाटी' (रू.भे.)

पाटड़ौ—सं०पु० [सं० पट्टः] हेंगा ।

पाटण—सं०पु० [सं० पत्तन, प्रा० पट्टण] १ गुजरात का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर (व.स.)

उ०—देस नगर नइ पाटण कनक रतन भंडार रे । कूवर जीपी ते लीइ हस्ती कोठार रे ।—नळदवदंती रास

२ पाटने की क्रिया का भाव ।

पाटणमुखी—सं०पु० [?] काजळ, कज्जल (अ.मा.)

पाटणी—सं०पु० [सं० पट्ट+रा०प्र०णी] वस्त्र विशेष । उ०—देवदूस्य चीनांसुक गोजी चउडसी नीलनेत्र सचोपां पाटणीयां हीरपट्ट साउला···प्रभृति वस्त्र जाति ।—व.स.

पाटणौ, पाटबौ—क्रि०स० [सं० पाटनम्] १ किसी चीज की रेल-पेल कर देना । उ०—भुज लगां 'विलंद' धड़ भड़ भिड़ज, धरा पाटि झाटकि धरूं । आपरा लूंण हूंता 'अभा', कळह बोलबाला करूं ।

—सू.प्र.

२ किसी नीचे स्थान या गड्ढे को उसके आसपास के धरातल के बराबर कर देना ।

३ दो दीवारों के बीच या किसी गहरे स्थान के आरपार, लकड़ी, पत्थर आदि की पट्टियां बिछा कर ढक देना, छत बनाना ।

पाटणहार, हारौ (हारी), पाटणियौ—वि० ।

पाटिओड़ो, पाटियोड़ो, पाटयोड़ो—भू०का०कृ० ।

पाटीजणौ, पाटीजबौ—कर्म वा० ।

पटणौ, पटबौ—अक०रू० ।

पाटथंभ—सं०पु० [सं० पट्टस्तम्भ] १ राजसिंहासन का रक्षक ।

२ राजा ।

रू०भे०—पाट रा थंभ ।

पाटथांन—सं०पु० [सं० पट्टस्थान] प्रमुख स्थान, राज्यस्थान ।

उ०—बाला वरसिंघ वरसिंघ नांव पाया, तीनां का तीन पाटथांन जो बताया ।—शि.वं.

पाटनगर—सं०पु० [सं० पट्टनगर] किसी राज्य की राजधानी ।

रू०भे०—पट्टनगर ।

पाटप—वि० [सं० पट्टप] १ प्रधान । २ शिरोमणि ।

उ०—अकबर हिए उचाट, रात दिवस लागी रहे । रजवट वट सम्राट, पाटप रांण 'प्रतापसी' ।—दुरसौ आढौ

पाटपत, पाटपति, पाटपती—सं०पु० [सं० पट्टपति] १ राजा, नृप ।

(अ.मा.)

उ०—१ रिप नाट परमळ हाट रावळ, धरण परधर घाट । पित-पाट राखण पाटपत, नृप काट हूंत निराट ।—नैणसी

उ०—२ कंधानांमी साजियौ हरांमी भड़ां तणै कहै, कीधी की

ग्रमांमी कीधी नमांमीं कुलाट। सुछत्रो मारियो दगा सूं राज हिंदवा सूर, पाटपती तीसूं हुवो नछत्री मेवाट।

—राजा राघोदेव झाला रो गीत

२ युवराज, राज्याधिकारी। उ०—१ पोकरणि पलटि 'गजबंध' रा पाटपति, वांधियो जोधपुर गळे छत्रबंध।

—नरहरदास बारहठ

उ०—२ 'मेघ' हरो तेग खरो राजगती मोटमती। पाटपती देसपती राउ तणो लखपती।—ल.पिं.

पाटरख्यक-सं०पु० [सं० पाटरक्षक] पाटरक्षक, राजा, नृप। उ०—तियै प्रस्तावि राव कल्यांणमल रो पुत्र पाटरख्यक महाराजाधिराज महाराजा स्त्री रायसिंघ चीत्रोड़ि परणीजण पधारिया हुता।—द.वि.

पाटरांणी—देखो 'पटरांणी' (रू.भे.)

पाटरायंभ—देखो 'पाटथंभ' (रू.भे.)

उ०—उभै नर बराबरा पाथ रूपी ग्रडर, घणो निज हाथ स्त्रीनाथ घड़िया। तिकै पातां भड़ा मदन मुरधर तणै, पाटरायंभ रिणवाट पड़िया।—पहाड़ खां ग्राढ़ो

पाटरियैव-सं०पु० [सं० पट्टः=चौराहा] युद्धस्थल, लड़ाई का मैदान। उ०—पड़िया नेजाळ विढ़ै पाटरियै, भागां कोट नह क्रम भरिया। 'ग्रजमल' तणा खड़्ग रै ग्रोळै, ग्रथपत मोटा ऊबरिया।

—राजराणा ग्रज्जा झाला रो गीत

पाटळ, पाटल-सं०पु० [सं० पाटलः] १ बेल के समान पत्तों वाला एक वृक्ष विशेष। उ०—दाख मोगरो केतकी दाड़म बेल गुलाब। पाटल चूही केवड़ो ग्रांवळ चंवेलि ग्रांब।—गजउद्धार

पर्या०—ग्रमोघा, करबुरा, थाली, दंबु, दूषका, फळेरुहा, मवक्ष, घसामध, वांमासर।

२ एक देश। उ०—मळय सिंगल कोसल नइ ग्रंग्य, स्त्रोपरवत द्राविड़ नइ वंग्य। वैरोट तापी लाजो धार, स्त्री वेंदरभ पाटल ग्रतिसार।

—नळदवदंती रास

३ तलवार। उ०—टूक पैलां करण लागतो पाटलां, पड़ै गोळा ग्रसण उभै कोसां पला।—राजाधिराज लछमणसिंघ रो गीत

रू०भे०—पाटलि, पाडळ पाडल।

ग्रल्पा०—पाटलो।

पाटला, पाटलावती-सं०स्त्री० [सं० पाटलावती] दुर्गा।

पाटलिपुत्र, पाटलीपुत्र-सं०पु० [सं०] वर्तमान विहार का एक नगर जो पटना कहलाता है। उ०—पाटलीपुत्र पुरे राजा नवनंद हुवो ज्यांरी लक्ष्मी दांना भावात गंगा तीरे पीत पाखांण हुई ग्रजूं है।

—बां.दा.ख्यात

पाटलो-सं०पु० [ग्र०व० पाटला] १ स्त्रियों की हाथ की कलाई में पहिनने का सोने का बना चौड़ा पट्टीनुमा बना ग्राभूषण विशेष।

२ बैल गाड़ी के पहिये में लगाया जाने वाला गोल, चौड़ा व मोटा लकड़ी का वह टुकड़ा जो ग्रारा ग्रौर पूठी के बीच में लगाया जाता है।

३ कातने के चरखे के नीचे का वह लकड़ी का भाग जिसमें तकुग्रा डालने के दोनों डंडे खड़े-रूप में लगे रहते हैं।

४ देखो 'पाटल' (ग्रल्पा.,रू.भे.)

उ०—राजा नंद रा ठावा ग्रादमियां वन में पाटळा व्रख री डाळ बैठा पंखी नीलटांच, जिणरा मुख में विना उद्यम कियां लटां पड़ै, जिका देखिया।—बां.दा. ख्यात

५ देखो 'पाट' (ग्रल्पा.,रू.भे.)

उ०—चंपा नगरी प्रभु हुंता, जांण्या उदाई रा भाव। सूंपी स्थांनक पाटला, विहार कियो धर चाव।—जयवाणी

रू०भे०—पाखलो।

पाटलोपळ-सं०पु० [सं० पाटलोपल] पद्मरागमणि।

पाटव-सं०पु० [सं०] १ स्वास्थ्य, ग्रारोग्य।

उ०—जरै सती रा स्राप हूं कलेवर में कोढ पाई, पुस्कर, प्रयाग प्रमुख तीरथां में न्हाइ ग्रौर भी ग्रोखधाधिक ग्रनेक उपाय करि थाको परंतु पाटव न पायो।—वं.भा.

२ स्फूर्ति, कुशलता।

उ०—सो धवां रा धड़ पड़ता देखि खड्ग खेटक रा पाटव में प्रवीण सूर भाव रै साथ स्रद्धा रै समान सात्रवां रो संहार करती सारी ही मध्यपुर रा प्रकोस्ट रै माथै ग्रावती कृपांणां रै बाढ़ लागी।—वं.भा.

पाटवी-वि० [सं० पट्ट+रा०प्र०वी] १ उत्तराधिकारी, पट्टाधिकारी।

उ०—१ मछरीकां रा पाटवी, 'चुतर' ग्रने 'फतमाल'। ढाळ तणी पर लेखवै, रिण जोधा 'रिणमाल'।—रा.रू.

उ०—२ डूंगरपुर वांसवड़ाह देस। पाटवी रांण राखीह पेस।

—वि.सं.

२ रेशमी, कौशेय।

पाटवीराग-सं०पु० [सं० पट्टप+राग] वीर राग, सिंधु राग।

उ०—झुकै नाग रा सीस, ग्रांवाळ तासा झड़ै, पाटवीराग रा विखम हाका पड़ै। ग्रोय ! लागै गजब भुजां उरसां ग्रड़ै, 'जैत' मारू कटी कड़ा सलहां जड़ै।—महादांन महडू

पाटहाथी—१ देखो 'पटहस्ती' (रू.भे.)

उ०—तिण समय साहण सिणगार नांम राजा रो पाटहाथी डांण लागो।—वं.भा.

पाटहोड़ो—देखो 'पटहोड़ो' (रू.भे.)

पाटागोह—देखो 'पाटड़ागोह' (रू.भे)

पाटावंध, पाटाबांधण-वि० [सं० पट्ट+बंधनम्] १ घावों पर मरहमपट्टी करने वाला, जर्राह।

उ०—तरै जोगीसरां झोळी मांडिनै उठायो, तिको किणहेक सहर ल्याया। पाटावंध तेड़ नै पाटा वंधाया।

—जखड़ा मुखड़ा भाटी री वात

२ वीर जिसने कई योद्धाग्रों को युद्धस्थल में घायल कर दिया हो।

उ०—दूदा रै बेटो हरदास। बीकानेर सू छाड जोधपुर चाकर रह्यो।

पछै नबाव खांनखांनै मांग लियौ। बडो डील, बडो धरमातमा, बडो पाटाबध ठाकर हुतौ।—बां.दा. ख्यात

३ वह जिसके युद्धस्थल में कई घाव लगे हों और जिसके कई पाटे बांधे गये हों।

पाटाबंधाई [सं० पट्ट+बधनम्] १ घाव पर मरहम पट्टी बांधने का कार्य।

२ उक्त कार्य का पारिश्रमिक।

पाटि—देखो 'पाट' (रू.भे.)

उ०—तरु ताळ पत्र ऊंचा तड़ि तरळा, सरला पसरंता सरगि। बैठे पाटि वसंत बंधिया, जगहृथ फिरि ऊपरि जगि।—वेलि

पाटियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ ढेर लगाया हुआ, रेल-पेल किया हुआ।

२ आसपास की जमीन या धरातल के बराबर किया हुआ।

३ दो दीवारों के बीच का छाया हुआ स्थान।

(स्त्री० पाटियोड़ी)

पाटियौ-सं०पु० [?] १ पीतल का दूध दुहने का पात्र।

२ देखो 'पाट' (अल्पा.,रू.भे.)

३ देखो 'पाटौ' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—ताहरां साहजादी डूबती थकी रै हाथ पाटियौ १ ढूंढा रौ आयौ। तिको झाल नै बैठो सु नदी री धार मांहे वूहो जावती हुती। —नैणसी

पाटिसथांन, पाटिस्थांन-सं०पु० [सं० पट्ट+स्थान] १ प्रमुख स्थान।

२ सिंहासन। ३ राजधानी।

पाटी-सं०स्त्री० [सं० पट्टः] १ परिपाटी, रीति।

उ०—सीह छतीसी सांभळे, छाकं वस छतीस। 'बांके' पाटी बीर रस, वरणी विसवावीस।—बां.दा.

[सं० पाटीः] २ गणनादि का क्रम, जोड़, बाकी, गुणा, भाग आदि का क्रम।

यौ०—पाटीपहाड़ा।

३ पाठ, सबक।

उ०—पढ़िया नहिं पाटी, घट में घाटी, तळ ताटी तोड़ंदा है। करणी में किर-किर, घिरणी में घिर-घिर, फिर-फिर सिर फोड़ंदा है। —ऊ.का.

मुहा०—१ पाटी पढ़णौ—छलकपट करना, कुछ सीखना।

२ पाटी पढ़ाणौ—किसी को बहकाना, गुरु का शिष्य को पढ़ाना।

३ पाटी में आणौ—किसी के सिखाने में आना।

४ चारपाई के ढांचे में लम्बाई की ओर की पट्टी।

उ०—जाय खातीजी नै यूं कईजो, म्हारै पिलंग पाटी ले आयजौ। म्हारै पलंग पाटी लइ आवैजो।—लो.गी.

५ पत्थर अथवा टीन का वह टुकड़ा जिस पर विद्यारंभ करने वाले छात्र लिखते हैं, स्लेट।

उ०—सांचौ पढवा पाठ, संवारी सोहणी। मनमथ राजकुंवार क, पाटी मोहणी।—बां दा.

६ विवाह के समय पढे जाने वाले वेद-मंत्र।

क्रि०प्र०—पढणी।

७ कान के नीचे का हिस्सा जहां पर छेद कर आभूषण पहिनाए जाते हैं।

क्रि०प्र०—छेदणी।

८ जोते हुए खेत की मिट्टी बराबर करने का कृषि-उपकरण, हेंगा।

मुहा०—१ पाटी फिरणी—कार्य नष्ट हो जाना।

२ पाटी फेरणी—किए हुए कार्य को नष्ट करना।

९ घाव पर बांधने की कपड़े की पट्टी।

क्रि०प्र०—खोलणी, बांधणी।

१० किसी कपड़े की कोर अथवा किनारी।

११ मांग के दोनों ओर तेल, मोम, पानी आदि की सहायता से कंघी द्वारा वैठाए हुए सिर के बाल।

क्रि०प्र०—पाड़णी, संवारणी।

१२ वह भूभाग जिसे किसान मवेशी चराने, घास उगाने अथवा पेड़ों को पालने के उपयोग में लेता है (जयपुर)

१३ देखो 'पट्ट' (अल्पा०, रू.भे.)

१४ देखो 'पट्टी' (रू.भे.)

१५ देखो 'पाट' (अल्पा०, रू.भे.)

रू०भे०—पटी।

अल्पा०—पटड़ी, पाटड़ी।

पाटीपोतौ-सं०पु० [सं० पट्टः+पोतः] स्लेट साफ करने का कपड़ा।

पाटीहोड़ौ—देखो 'पटहोड़ौ' (रू.भे.)

उ०—घणा घणा-मोला घोड़ा, पाइगड़ां पाटीहोड़ा। आगळा घड़े अलंब, अजूळी पियै ज अंब।—गु.रू.बं.

पाटु-सं०पु० [सं० पट्ट] १ वस्त्र विशेष।

उ०—१ जरदोजी जांमो वण्या, पाटु सुथन पाइ। साहिब घरे पधारिया, सो गल वलगुं जाइ।—व.स.

उ०—२ पाटु नी पूजि ओढउ पछेवड़ी रे। पाटण नी नीपनी सखरी दोपड़ी रे।—स.कु.

[सं० पाद] २ लात। उ०—कमलापति कैवल्य प्रति, विस्व-विधाता जेह। भलपण ए अगुरिसि-तणउं, पादु मारिउ तेह। —मा.का.प्र.

पादुआली-सं०स्त्री०[सं०पाद+आलुच्] पादप्रहारिणी, पैर की चोट(उ.र.)

पाटेपड़ी-सं०स्त्री०[देशज]एक पक्षी विशष जिसका मांस खाया जाता है।

रू०भे०—पटेपड़ी, पाठेबड़ी।

पाटेदार-सं०पु० [सं० पट्ट+फा० दार] पट्टी बांधने वाला।

उ०—पचासां वोळावियां आघेआघ वाढ उतरियां, जियांरा पांच-पांच हजार दांम, पाटा बंधाई रा पाटेदार खाय चुका छै।—रा.सा.सं.

पाटोतो-सं०पु० [सं० पट्टः+रा.प्र. ओतो] भोजन करते समय थाली रखने की चौकी।
उ०—इतरा में खवास आंण अरज कीवी—भुजाई तयार छै, पाटोता बिछाया छै। तद सरदार सारा ऊठिया।
—सूरे खींवे कांधळोत री वात

पाटोधर-वि० [सं० पट्ट+धारिन्] १ श्रेष्ठ।
उ०—मन माठइ सइ नाळे र मेल्हियउ, भागा लगइ करण ऊछाह।
परणीजसी कुंवर पाटोधर, अरधळ तणइ हुस्यइ वीमाह।
—महादेव पारवती री वेलि
सं०पु०—राजा, नृप।
उ०—सूरिजमल 'गंग' 'वाघ' सलक्खां, पाटोधर चाढण जंळ पक्खां।
मोहरै अणी किसन रिणमल्लां, चांपा कूंपा 'जैत' अचेल्लां।
—वचनिका
२ राज्यसिंहासनाधिकारी, युवराज।
उ०—सुत 'जालणा' 'छाडै' बंससूर। पाटोधर 'तीडो' विरद पूर।
—सू.प्र.
३ वीर, बहादुर।
रू०भे०—पटोधर, पाटऊधोर, पाटोधरण।

पाटो [सं० पट्टः=पज्जी] १ मरहम-पट्टी।
उ०—पाटा पीड़ उपाव, तन लागां तरवारियां। वहै जीभ रा घाव, रती न ओखध राजिया।—किरपाराम
२ काष्ट का बना विशष प्रकार का तख्ता जिस पर छात्र लिखने का काम करते हैं।
उ०—ते दूमाहउ देखी पंडित, एक दिवस बोलावइ। सविहुं छात्र तणा सवि पाटापाटी सदा भंजावइ।—हीराणद सूरि
२ देखो 'पाट' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—१ ए धरम कहै दीपै घणी, एह नैं मूंडा आगल थाटो रे। स्यूं इण रो रोजगार छै, ए ऊंचो बैठो पाटो रे।—जयवांणी
उ०—२ सूरत सहरै जिणचंद सूरिजी, आप्यो आपणो पाटो जी। महोत्सव गाजे बाजे मांडिया, गीतो री गहगाटो जी।—ध.व.ग्रं.
मुहा०—१ पाट उतरणी—समाप्त होना, नाश होना, बरबाद होना।
२ पाट उतारणो—समाप्त करना, नाश करना, ध्वंस करना, बरबाद करना।

पाटोधरण—देखो 'पाटोधर' (रू.भे.)
उ०—कमधज्ज वंस ऊदोत कर, कमधज्जां कुळि आभरण। गरजियौ पिता बैठे 'गजण', पिता पाट पाटोधरण।—गु.रू.बं.

पाठ-सं०पु० [सं०] १ पढ़ने की क्रिया, पढाई।
२ किसी धर्मपुस्तक को पढने की क्रिया।
उ०—मोती समो न ऊजळो, चंदण समो न काठ। 'करनी' समो न देवता, गीता समो न पाठ।—अज्ञात
यौ०—पाठदोस, पाठप्रणाळी।
३ पढने या पढाने का विषय।
४ एक दिन में, एक वार में पढाया जाने वाला किसी विषय का अंश। उ०—सांचो पढवा पाठ संवारी सोहणी। मनमथ राज-कुंवार क पाटी मोहणी।—बां.दा.
क्रि०प्र०—देणो, पढणो, पाणो।
मुहा०—१ पाठ पढणो—कोई बुरी बात सीखना।
२ पाठ पढांणो—किसी को बहकाना।
५ पुस्तक का एक अंश, परिच्छेद, अध्याय।
६ शब्दों या वाक्यों का क्रम।
यौ०—पाठभेद, पाठांतर।
७ फालसा।
सं०स्त्री० [सं० पुष्ट] ८ वह जवान बकरी जिसने अभी तक बच्चा देना प्रारम्भ न किया हो।
रू०भे०—पाठड़।
अल्पा०—पठड़ी, पांठड़ी।
९ देखो 'पाठो' (मह०, रू.भे.)
१० देखो 'पाट' (रू.भे.)

पाठक-सं०पु० [सं०] १ पढाने वाला, अध्यापक।
उ०—विधि पाठक सुक सारस रस वंछक, कीविद खंजरीट गतिकार। प्रगळभ लाग दाट पारेवा, विदुर वेस चक्रवाक विहार।
—वेलि
२ पढने वाला, पाठ करने वाला। उ०—नित पाठक नार नसावन कौ, हिय हाटक हार हुंसावन कौ। छिल गादर कादर छंटन में, वह आदर चादर बंटन में।—ऊ.का.
३ धर्मोपदेशक।
४ गौड़, सारस्वत, सर्यूपारीण व गुजराती ब्राह्मणों का एक भेद।
रू०भे०—पाठिक, पाठीक, पाढीक।

पाठड़ी—देखो 'पाठ' (८ अल्पा०, रू भे.)

पाठड़ो—सं०पु० [सं० पुष्ट+रा.प्र.ड़ो] सूअर का नौजवान बच्चा।
उ०—पूरा आकुल पाठड़ा, मालां पड़तां मार। हेकण कवळा बांहरी, झाड़ां झाड़ां डार।—वी.स.

पाठदोस-सं०पु० [सं० पाठदोष] १ पढने की निंद्य व वर्जित चेष्टा।
२ किसी ग्रंथ के शब्दों के अक्षरों तथा वाक्यों के शब्दों की अशुद्ध भ्रामक योजना।

पाठन-सं०पु० [सं०] पढाना, अध्यापन।

पाठप्रणाळी-सं०स्त्री० [सं०पाठप्रणाली] १ पढने की रीति, पढने का ढग।
२ पढाने की रीति, पढ़ाने का ढंग।

पाठभेद-सं०पु० [सं०] एक ही ग्रंथ की एक से अधिक प्रतिलिपियों के पाठ का भेद, पाठांतर।

पाठर—देखो 'पाठा' (अल्पा०, रू.भे.)

पाठवणो, पाठवबो—देखो 'पठाणो, पठावो' (रू.भे.)

उ०—१ नितु नितु नवला साढिया, नितु नितु नवला साजि। पिंगळ राजा पाठवइ, ढोला तेडन काजि।—ढो.मा.

उ०—२ मांणस हवां त मुख चवां, म्हे छां कूं'झड़ियांह। प्रिउ संदेसउ पाठविसु, लिखि दे पंखड़ियांह।—ढो.मा.

पाठसाळा—सं०स्त्री० [सं० पाठशाला] वह स्थान जहां पढा या पढाया जाता है, स्कूल, विद्यालय, चटशाला।

पाठांण, पाठांन—देखो 'पठांण' (रू.भे.)

उ०—चढे सेख चंदवळां, मुगळ वर गोळज गोळां। रचे गोळ राफजी, सयद पाठांण हरोळा।—सू.प्र.

पाठांतर—देखो 'पाठभेद'।

पाठा—सं०स्त्री० [सं०] एक लता विशेष जिसके पत्ते गोल व नोंकदार, फूल सफेद व फल लाल होते हैं।

रू०भे०—पाठ, पाठर।

पाठाफेर—सं०पु० [सं० पाठ+रा. फेर] किसी कवि की कविता के शब्दों और भावों में परिवर्तन करने की क्रिया।

पाठिक—देखो 'पाठक' (रू.भे.)

पाठी—वि० [सं० पाठ+रा. प्र. ई] पाठ करने वाला, पढने वाला।

सं०स्त्री०—हृष्ट-पुष्ट व नौजवान स्त्री।

रू०भे०—पाठीन।

पाठीक—देखो 'पाठक' (रू.भे.)

पाठीन—सं०स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार की मछली (अ.मा.) (ह.नां.मा.)

२ देखो 'पाठी' (रू.भे.)

पाठेवही—देखो 'पाटेपड़ी' (रू.भे.)

पाठो—सं०पु० [सं० पुष्ट] (स्त्री० पाठी) १ हृष्ट-पुष्ट या मोटा ताजा व्यक्ति।

[देशज] ऊंट के चारजामे में लगाये जाने वाले काठ के दो डंडों में से एक।

३ एक प्रकार का हरिण। उ०—आतुसूं के घम के बांणूं की चोट। संभळ चीतळ पाठे केते लोटपोट।—सू.प्र.

४ डबल, फुल-स्केप साइज का कागज।

उ०—कलम छड़ियाळ समर करि पाठौ, घण खळ सुद्रव आखरां घाव। साखां तेरह सम्है समरि करि, सल्हैं वैर घरि 'माल' सुजाव। —सादूळ पंवार रौ गीत

५ जांघ पर गांठ होने वाला एक रोग विशेष।

६ जवान हाथी। (मेवाड़)

पा'ड, पाड—१ देखो 'पटह' (रू.भे.)

उ०—वाजी ओं ओं मंगल संख। धिविकट थेंकट पाड असंख। —हीराणंद सूरि

२ देखो 'पट्ट' (रू.भे.)

उ०—तरुआरे सोनह री मूंठि, करडा खेडा घालइ पूंठि। कडिही कटारी हीरे जडी, पाड सूत्र नी छइ दाबड़ी।—कां.दे.प्र.

३ देखो 'पा'ड़' (रू.भे.)

उ०—सकल अछै तूं पूरिवा जी, घणा हरख नै लाड। जाइ अनेरा आगलै जी, किसौ चढावूं पा'ड।—वि.कु.

४ देखो 'पा'ड़' (रू.भे.)

५ देखो 'पहाड़' (रू.भे.)

पाडकी—देखो 'पाडी' (अल्पा.,रू.भे.)

पाडकौ—देखो 'पाडौ' (अल्पा.,रू.भे.)

(स्त्री० पाडकी)

पाडगत, पाडगती—सं०पु०—१ रघुवरजसप्रकास के अनुसार सुपंखरा गीत जिस में नृत्य के बोल आते हों।

२ वह गीत छंद जिसके विषम चरणों में १६ मात्रा हों सम चरणों में १८ मात्राएं हों तथा लय मिलाने हेतु जिस में आगड़दी शब्द अनिवार्य रूप से हो।

रू०भे०—पाड़गत।

पाडड़ी—देखो 'पाडी' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—ऐ कांम घेनवां थारै, थारी बरोबरी म्हे करां स, कोई भैंस पाडड़ी म्हारै। गिरधारी हो लाल।—लो गी.

पाडण—सं०स्त्री०—एक प्रकार की मछली विशेष।

पाडर—देखो 'पाटल' (रू.भे)

उ०—पाडर पुन रायन तरु तमार, तहां सरु बकायन सरस तार। चंदन अगर तीया कुंद चारु, सीताफळ चंपक अरु अनारु। —मयारांम दरजी री बात

पाडळ—सं०स्त्री० [देशज] १ विशेष प्रकार के रंग की गाय।

उ०—मोडी गोडी यै पसवाड़ा मोड़ै। तड़छां बातोड़ी घड़छां तन तोड़ै। पीळी पाडळ पर फिर-फिर कर फेरै। धोळी धूंमर नै घिर-घिर घर घेरै।—ऊ.का

२ पीले रंग की हरिणी विशेष।

३ एक प्रकार का पीपल विशेष, पारस पीपल (अमृत)

४ देखो 'पाटल' (रू.भे.) (अमृत) (अ.मा.)

उ०—पीपल, पाडल पींपली, पीठवनी पदमाख। पारिजात पीलूवडां, पींपरि पत्तां पांख।—मा.कां.प्र.

पाडसूत्र—सं०पु० [सं० पट्ट+सूत्र] रेशमी डोरे का कार्य करने वाली जाति का व्यक्ति।

उ०—नगरि मांडवी वारू पीठ, आछी खेरा चोल मजीठ। पाडसूत्र पटूआ सालवी, वुहरइ वस्त अणावइ नवी।—कां.दे.प्र.

पाडाखुरौ—सं०पु० [राज. पाडौ+सं० खुर:] भैंसे के समान खुर वाला, सूअर।

उ०—गैंदंती पाडाखुरौ, आरण अचळ अघट्ट। भूंहण जणै सु भूभळी, थोभै अरियां थट्ट।—हा.झा.

पाडागोह—देखो 'पाटड़ागोह' (रू.भे.)

पाडाजीभी-सं०स्त्री० [राज० पाडो+सं० जिह्वा] भैंसे के जीभ के आकार की कटार।

उ०—सू कटारी किण भांतरी छै ? विरांणपुर री, रांमपुरा री, बूंदी री राजासाही, ओढारी, मढ़ाई, मोगलीरी, कोताखांनी, पाडाजीभी, घणी सोने में भकोळी थकी।—रा.सा सं.

पाडियो—देखो 'पाडो' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—पालर ठंडो जांमे पायो। स्वाद अनोखो घणो सरायो। दया करी निज ताळ दिखायो। गया पाडिया जळ गिंदळायो।—ऊ.का.

(स्त्री० पाडी)

पाडिहार, पाडिहारू—देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)

उ०—फबै मंडळा 'खेतसी' पाडिहारं। वधै चाड राजा तणी वारवारं।
—रा.रू.

पाडी-सं०स्त्री० [देशज] भैंस की छोटी बछिया।

उ०—१ खुंडी पाडी रा लाडी चख खोळै। घमती खांडाळी काळी दिन घोळै।—ऊ.का.

उ०—२ आथूणी तो खेत दीज्यो बिच में दीज्यो नाडी। घरवाळी नें छोरो दीज्यो भैंस ल्यावै पाडी।—लो.गी.

रू०भे०—पाड्डी।

अल्पा०—पाडकी।

पाडुई, पाडुया-वि० [सं० पातुक, प्रा० पाडुअ] खराब, अशुभ (जैन)

उ०—१ वीर कहइ तुम्हे सांभळउ, दांनसीळ तप भाव। निंदा छइ अति पाडुई, धरम करम प्रस्तावि।—स.कु.

उ०—२ परिग्रह आरंभ पाडुया, पाडुया पाप ना करमो जी। पाडीजइ परभवि गयां, ते किम कीजइ अधरमो जी।—स कु.

रू०भे०—पाडूई, पाडूउ।

पाडू-सं०स्त्री०—लूट।

उ०—आव्या तुरक पाडूऊं करिउं, सू तूं नगरि सहू को धरिउं।
—कां.दे.प्र.

पाडूई, पाडूउ—देखो 'पाडुइ' (रू.भे.)

उ०—१ मनुस्य नइ उपदिसा आवइ त्यारइ कुमति ऊपजइ। आवणहारी वेळा पाडूई, तव सुमति किहां थी संपजइ।—नळ दवदंती रास

उ०—२ सबळ बंधन बांधीउ, रायनइ कहिउं तेह। आदेस दीधउ पाडूउ, हुकउ मफनइ छेह।—नळ दवदंती रास

पाडोस—देखो 'पाड़ोस' (रू.भे)

पाडोसण—देखो 'पाड़ोसण' (रू.भे.)

पाडोसी—देखो 'पाड़ोसी' (रू.भे.)

पाडो-सं०पु० [देशज] १ भैंसा, महिष।

उ०—प्यारा टोघड़िया पाडा कद पेखां। दूधां दहियां रा चाडा कद देखां।—ऊ.का.

[सं० पटह] २ घोषणा, ढिंढोरा। उ०—तरै राजा सहर में पाडो फेर्‌यो—नागजी नै ताजो करै, तिण नै लाखपसाव देवां।
—नागजी नागवंती री बात

३ आक का फल जिसमें से रुई जैसा महीन रेशेदार पदार्थ बीज के साथ निकलता है।

अल्पा०—पाडको, पाडियो।

४ देखो 'पाड़ो' (रू.भे.)

उ०—सज्जण चाल्या हे सखी, पाछै पीळी पज्ज। नव पाडा नगर वसइ, मो मन सूनउ अज्ज।—ढो.मा.

पाढ-सं०पु० [?] १ वंश, कुल। उ०—नीपणां दै लाख 'लाखो' राखि जांणै नांमो। साम्रवां री पाढ कढ़ै गाढधारी 'सांमो'।—ल.पि.

२ देखो 'पाठ' (रू.भे.) (उ.र.)

पाढ़गति—देखो 'पाढगत' (रू.भे.)

पाढि—देखो 'पाट' (रू.भे.)

पाढीक—देखो 'पाठक' (रू.भे.)

पाढो-सं०पु० [देशज] १ योग, संस्कार। उ०—पण छोरी ढूकती को होनी, गरीब नै कुण देवै। नित-नित थांरी-म्हारी हिड़क्यां रै हाथ लगांवतै-लगांवतै छेकड़ एक जागा पाढो ढूकौ।—वरसगांठ

२ देखो 'पाट' (अल्पा०, रू.भे.)

पाणी, पाबौ-क्रि०स० [सं० प्रापण, प्रा० पावण] १ पिलाना, पान कराना।—मा मूई जब एह नी, तब ए लघुतर बाल। पय पाई मोटो कियो, एम कहै भूपाल।—वि.कु.

[सं०पा] २ प्राप्त करना। उ०—१ रात दिवस होवै मन राजी, निरख पराई नारी। पढण पढावण मोसर पायो, चूक गयो विभचारी।—ऊ.का.

उ०—२ मंडळ मांह वसाय म्रग, थयो कळंकी चंद। पायो सीह मयंद पद, हण हाथळ म्रग वंद।—बां.दा.

३ भोगना, अनुभव करना।

४ खाना, भोजन करना। उ०—भोळी भड़कावै पोळी पावै, टोळी सूं टाळंदा है।—ऊ.का.

५ समझना, तह तक पहुंचना।

६ देखना, साक्षात्कार करना।

७ किसी बात में किसी के बराबर पहुंचना।

८ समर्थ होना। उ०—जठै धणां रा कचरघांण में आपरा अनीक रा पद-द्रव रा प्रवाह में पड़ियो नवाब कासिमखांन १ समेत कुमार दारासाह ४०।१।२ भी ठहरण न पायो।—वं.भा.

९ धूम्रपान कराना।

ज्यूं—साथीड़ा नैं बीड़ी पांणी चाही।

क्रि०अ०—१० मिलना, प्राप्त होना।

पाणहार, हारो (हारी), पाणियो—वि०।

पायोड़ो—भू०का०कृ०।

पाईजणी, पाईजबो—कर्म वा०, भाव वा०।

पांमणो, पांमबो, पाम्रणो, पाम्रबो, पावणो, पावबो, प्रांमणो, प्रांमबो
—रू०भे०।

पातंग—देखो 'पतंग' (रू.भे.)

पातंजळ-वि० [सं० पातञ्जल] पतंजल रचित, पतंजल का बनाया हुआ।
रू०भे०—पातंजळि।

पातंजळ-दरसण-सं०पु० [सं० पातंजल-दर्शन] योगदर्शन।

पातंजल-भास्य-सं०पु० [सं० पातंजल-भाष्य] एक प्रसिद्ध व्याकरण-ग्रंथ, महाभाष्य।

पातंजळसूत्र-सं०पु० [सं० पातञ्जलसूत्र] योग-सूत्र।

पातंजळि—देखो 'पातंजळ' (रू.भे.)
उ०—वैसेसिक में कणभुक सो बळ बिस्तारयो। पातंजळि पाठ पतंजळि जेम प्रचार्‌यो।—ऊ.का.

पात-सं०पु० [सं० पात्रम्] १ कवि। उ०—जिकै वार बोले वडा पातजह्‌। वडा वंस वाखांण हुई विहद्‌।—सू.प्र.
२ याचक। उ०—पातां जीवन पाळगर, अनदाता आधार। 'जेहो' भारमल्ल रो, भावठ भंजणहार।—बां.दा.
३ हल की फाल के नीचे लगाई जाने वाली लोहे की चक्र।
४ प्रहार, चोट। उ०—गज सीस पड़ै घड़ पड़ै गात। पड़िया किर पाहड़ वज्रपात।—सू.प्र.
५ आभूषण चूड़ा आदि पर सोना, चाँदी आदि का चढाया जाने वाला पत्तर। उ०—चुड़लो हस्ती दांत रो, रंग तो सुरख नयो। महीं चीर्‌यो कारीगर को यो, सोवन पात छयो।
—रसीलैराज रो गीत
६ पत्तरा। उ०—आंम को गाडूलो घड़ ल्याय, चांदी का पात चढ़ाय।—लो.गी.
७ औरतों के पहिनने का सिर का आभूषण विशेष।
८ पत्ता, पल्लव। उ०—पुहुपां मिसि एक एक मिसि पातां, खाडिया द्रब मांडिया ऊखेळि। दीपक चंपक लाखे दीघा, कोड़ि धजा फह-रांणी केळि।—वेलि
९ पाई की बनावट में बान की लड़ियों का वह समूह जिसके मध्य में होकर बुनावट के लिए लड़ी को खींचा जाता है।
१० पतन।
११ 'पत' (रू.भे.)
उ०—लाडू करूं कसार को, करडी मैं राखूं पात रे। दिन दिन तो दुख से काढ दूं, बैरन हो गई रात रे।—लो.गी.
रू०भे०—पात्र।
अल्पा०—पातडो, पाथू।

पातक-सं०पु० [सं०] १ पाप, कुकर्म, अघ।
उ०—सूंमपणो पातक छटो, अपजस तर आंकूर। कारण इण 'बीकम' 'करण', इणसूं रहिया दूर।—बां.दा.
२ गुनाह।
रू०भे०—पातिग, पातग, पातिग, पातिगि।

पातकि, पातकी-वि० [सं० पातकिन्] १ पापी, कुकर्मी, अघर्मी।
उ०—नर फीटो हो थयो तिरयंच पातकी व्रक्ष कुसुम सही। सुक एक मणुं, वली कह्युं छै हो आगम मांहि, नरक वेदन फल संग्रही।
—वि.कु.
२ गुनाहगार। उ०—हेली सिळगै मो हियो, रह्यो तड़फि दिन रात। बालम छयो विदेस में, जो दुख सह्यो न जात। जो दुख सह्यो न जात, रात बरसात की। घालै प्रांणां घाव पपीहो पातकी।
—सिववक्स पाल्हावत
रू०भे०—पायकी।

पातग—देखो 'पातक' (रू.भे.)

पातड़ी-सं०स्त्री० [सं० पत्र+रा.प्र.ड़ी] १ ऊंट की नाक पर चोट लगने से होने वाली गांठ। (शेखावाटी)
२ देखो 'पतड़ी' (रू.भे.)
३ देखो 'पातड़ो' (अल्पा.,रू.भे.)
उ०— बावळिया कठे रे मेलूंली थारो फूल। बावळिया कठे रे मेलूंली थारी पातड़ी।—लो.गी.
४ देखो 'पात' (अल्पा.,रू.भे.)
५ देखो 'पातो' (अल्पा.,रू.भे.)

पातड़ो-सं०पु० [?] १ रूंझ या रींझ का वृक्ष अथवा इसका फल।
२ बबूल नामक वृक्ष की फली।
३ देखो 'पात' (अल्पा.,रू.भे.)
४ देखो 'पातो' (अल्पा.,रू.भे.)
५ देखो 'पतड़ो' (रू.भे.)
रू०भे०—पातरो (रू.भे.)
अल्पा०—पातड़ी।

पातन-सं०पु० [सं०] पारे के आठ संस्कारों में से पांचवां संस्कार।

पातर-सं०स्त्री० [सं० पात्र] १ राजस्थान में रहने वाली वेश्याओं में एक जाति की हिन्दू वेश्या।
उ०—कुकड़ा रो गुण कांम, काक गुण भक्षण कीनो। जुध करण रो जोध, स्वांन गुण सांप्रत लीनो। अणपढ़ियां में आंण, खरो गुण लीनो खर रो। धाड़ा चोरी, धरम, घमंड गुण कीनो घर रो। मद-पांन मगन मांदा रहै, देय हकीमां दांन जू। परणी तज पातर रखै, खरा गुणां री खांन जू।—ऊ.का.
वि०वि०—देखो 'वेश्या'।
२ देखो 'पातरो' (मह.,रू.भे.)
३ देखो 'पातळ' (रू.भे.)
४ देखो 'पात्र' (रू.भे.)
रू०भे०—पातरु, पातुर, पात्र।
अल्पा०—पातुरी।

पातरउ—देखो 'पातरो' (अल्पा.,रू.भे.)
उ०—क्रिया करउ चेला क्रिया करउ, क्रिया करउ जिम तुम्ह निस्तरउ। पड़िलेहउ उपग्रण पातरउ, जयणा सुं काजउ ऊधरउ।
—स.कु.

पातरवाड़ो-संपु० [सं० पात्र+पाटकः] वेश्याओं का मुहल्ला ।
उ०—औ नह पीयै ऐराक अखाड़ां, पातरवाड़ां छाक पीयै । नागी खागां झाट लियै नह, लाग नागियां वाव लीयै ।
—कविराजा बांकीदास

पातरु—१ देखो 'पातरौ' (रू.भे.)
उ०—हाथे दीधुं घी नूं पातरु, मुझनइ आथेरउ वउ लावि रे ।
—स.कु.
२ देखो 'पातर' (रू भे.)

पातरौ-संपु० [सं० पात्र] १ जैनी साधुओं द्वारा काम में लिया जाने वाला काठ का पात्र ।
उ०—मुनिवर मांडयौ पातरौ, पांणी लै पीधौ तिण वार हो । साधु जी साता पांमिया, तिरखा दीधी निवार हो ।—जयवांणी
२ देखो 'पातड़ौ' (रू.भे.)
३ देखो 'पात्र' (अल्पा.,रू.भे.)
रू०भे०—पातरु, पात्रौ ।
मह०—पातर ।

पातळ-संस्त्री० [सं० पत्र] १ पत्तल, पनवारा ।
उ०—तद कुंवर पांच पातळ परिसाय नै दोय पातळ आप रांणीजी नै भर तीन्ह पातळ छै सु पंखी जांनावरां नै घातै ।—चौबोली
२ एक मनुष्य के खाने योग्य भोजन-सामग्री ।
३ देखो 'पतळौ' (मह.,रू.भे.)
रू०भे०—पातर, पातल्ल ।

पातलड़ी—देखो 'पातळी' (अल्पा.,रू.भे.)
उ०—१ मिरगा घेरो नी, अम्हा जी रा ईसर जी, घेरो नी बन रा मिरगला, म्हें क्यूं घेरां, ए म्हारी गवर सांवलड़ी, गवर पातलड़ी, बाई म्हारी सोदरा सासरै ।—लो.गी.
उ०—२ थे तौ वण जाज्यौ बारिया, मारूजी, मैं पातलड़ी पणिहार । थे तौ वण जाज्यौ कीलिया मारूजी, मैं पातलड़ी छकियार ।
—लो.गी.

पातळचट्ट, पातळचट्टौ-वि०यौ० [सं० पात्र+रा० चट्टौ] (स्त्री० पातळचट्टी) १ स्वार्थी, धोखेबाज । २ खुशामदखोर, चापलूस ।

पातळपेटी-वि० [सं०पत्राळ+पेट+रा.प्र.ई] पतले पेट वाली, कृशोदरा ।
उ०—दीरघ नेसां री छांणी तप देती । लांबा केसां री दांणा लप लेती । वेगी छेटी विन भेटी भुज भारी । पातळपेटी निज वेटी सम प्यारी ।—ऊ.का.

पातळियौ—देखो पतळौ' (अल्पा.,रू भे.)
उ०—हेमाचळ जी री गवरळ डीकरी हां जी रे ! वा पातळियै ईसर घर नार ।—लो.गी.

पातळी-विस्त्री० [सं० पत्राल] पतली, कृश, कृशांगी, सुन्दर ।
उ०—१ जाघड़ली मूमल री देवळिये रौ थंभ ज्यौं हांजी रे, सापड़ली सपीठी पींडी पातळी, म्हांजी माड़ेची मूमल, हाले नी रे मालीजे रै देस ।—लो.गी.
उ०—२ पायेलवाळी, पातळी गोरी इन गळियां मत आव । तेरी पायल बाजणी, छैला रौ बुरौ सुभाव ।—लो.गी.
अल्पा०—पातलड़ी, पातलोड़ी ।

पातली-संस्त्री० [देशज] मटकी (डि.को.)
अल्पा०—पतोलड़ी, पतोली, पातलड़ी ।

पातळौ-वि० [सं० पत्राल] १ कम उपजाऊ (भूमि, खेत)
उ०—दुघवड़ थी तीखा २, घीठारा रै मारग खेड़ो छै । दिखण मुं नाडी खेजड़नडी, खेत पातळा ।—नैणसी
२ देखो 'पतळौ' (रू..भे.)
उ०—१ कोमळ राता पातळा, अधर जिकांरा ईख । अमिलाखै पीवण अमर, सुधा जांम दे सीख ।—बां.दा.
उ०—२ ताहरां प्रथवीराज कह्यौ-जीवौ महाराज ! ऐ हीज छै । तरै रावजी कह्यौ-मेड़तै प्रथांनां रा पग पातळा भाई ।—नैणसी
उ०—३ घाल घणा घर पातळौ, आयौ थह में आप । सूतो नाहर नींद सुख, पौहरो दियै प्रताप ।—बां.दा.
(स्त्री० पातळी)
३ देखो 'पाटलौ' (रू.भे.)

पातसा—देखो 'बादसाह' (रू.भे)
उ०—वा उण नै फटकारती बोली-मूरखां रा पातसा गुफा ई कदै ई बोलै ।—फुलवाड़ी

पातसाई—देखो 'बादसाही' (रू.भे.)

पातसाह—देखो 'बादसाह' (रू.भे)
उ०—नायावतां री बूंदी री ओळ वडी तरवार राव 'रतन' काळ कियौ, तरै सो नाहरखांन राघवदासोत पातसाह जहांगीर रै चाकर हुओ ।—नैणसी

पातसाही—देखो 'बादसाही' (रू.भे.)
उ०—तद मांडव रो पातसाही पातसाह गोरी हुसंग भोगवै ।
—नैणसी

पातस्या—देखो 'बादसाह' (रू.भे.)
उ०—दिली रा हरोळ 'अन' तणा रायसिंघ दूजा, सिंधु भुजा पूजं भड़ां पातस्या सिपाय ।—अमरदास बारहठ

पातस्याई, पातस्याही—देखो 'बादसाही' (रू भे.)
उ०—नवे लाख घोड़ा तणी; पातस्याही तणी नेकी । एकै राजा 'अनै' वधे दुहुं भुजां आय ।—अमरदास बारहठ

पाता—देखो 'पातावत' (.रू.भे.)

पाताळ-संपु० [सं० पाताल] १ पृथ्वी के नीचे का सातवां लोक ।
उ०—राजा तीं सूअर रै पाछै आय गुफा में गया । सो पाताळ लोक जाय नीसरिया ।--सिंघासण बत्तीसी
पर्या०—अधोभुवन, अवट, कुहर, गरट, गरत, जळनीवांण, नागलोक, निरवांण, रसातळ, विवर ।

२ छंद शास्त्र में वह चक्र जिसके द्वारा मात्रिक छंदों की संख्या, लघु, गुरु, कला आदि का ज्ञान होता है।

रू०भे०—पताळ, पताळि, पयार, पयाळ, पयाळि, पायाळ, पियाळ, पियाळ, पीयार, पीयाळ।

अल्पा०—पताळियौ, पाताळियौ।

यौ०—पाताळखंड, पाताळगरुड़ी, पाताळगरुड, पाताळगारुडी, पाताळजंत्र, पाताळपती, पाताळसींगी, पाताळसिद्धि।

पाताळखंड-सं०पु० [सं० पातालखंड] पाताल लोक।

रू०भे०—पताळखंड।

पाताळगरुड़ी, पाताळगरुड, पाताळगरुडी-सं०स्त्री० [सं० पातालगरुड] एक प्रकार की लता जिसके पत्तों के रस से पानी जम जाता है।

रू०भे०—पताळगारुड़ी।

पाताळजंत्र-सं०पु० [सं० पातालयंत्र] कड़ी औषधियां पिघलाने या उनका तेल निकालने का यंत्र।

रू०भे०—पताळजंत्र।

पाताळतुंबी-सं०स्त्री०यौ० [सं० पातालतुम्बी] पीले रंग के बिच्छू के डंक जैसे कांटों वाली लता विशेष।

पाताळदंती-सं०पु० [सं० पाताल+दंती] वह हाथी जिसका दांत नीचे की ओर झुका हुआ होता है।

रू०भे०—पताळदंती।

पाताळपती-सं०पु० [सं० पाताल+पति] शेषनाग।

पाताळसींगी-सं०स्त्री० [सं० पाताल+शृंग+रा.प्र.ई] नीचे की ओर मुड़े हुए सींगों वाली भैंस।

रू०भे०—पयालसींगी।

पाताळसिद्धि-सं०स्त्री० [सं० पातालसिद्धि] बहत्तर कलाओं में से एक कला।

पाताळियौ—१ देखो 'पताळियौ' (रू.भे.)

२ देखो 'पाताळ' (अल्पा., रू.भे.)

पातावत—राठौड़ वंश की एक उप शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

रू०भे०—पाता, पातावत, पातावत, पाता।

पाति—देखो 'पाती' (रू.भे.)

पातिक, पातिग, पातिगि—देखो 'पातक' (रू.भे.)

उ०—१ नांम नैं गोत्र सुणियां थका, पातिक जाव परा दूर रे। साजे ही मन आराधतां, च्यारे ही गति देवै चूर रे।—जयवांणी

उ०—२ आवै है आराधै आई, माई हे दाखै महरि। 'पीरीयै' तणै उतारै पातिग, साचां रै वसिओ सहरि।—पी.ग्रं.

उ०—३ पीरदास तणै अक्रम प्रगळ, सिचिओ घणौ सुधारियौ। भांगिमिणि न आ अनंत रे, हरि पातिगि संहारियौ।

—पी.ग्रं.

पातिव्रत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

पातिव्रत—देखो 'पतिव्रत' (रू.भे.)

पातिसा, पातिसाह—देखो 'बादसाह' (रू.भे.)

उ०—१ नमो सुक्र संध्या घणौ स्रेस्ट सम्मौ। नखित्रां तणौ पातिसा स्वाति तम्मौ।—मे.म.

उ०—२ अहमदानगर आसेरगढ, पातिसाह पालट्टिया। पुरब्ब-पछिम उत्तर दखण, च्यार चक्क चकत्ते लिया।—गु.रू.बं.

पातसाही—देखो 'बादसाही' (रू.भे.)

उ०—रूक हूं झरत्त रत्त, धरतौ कोप 'घूहड़', वेहड़ा घड़ा करंतौ वरंतौ दुबाह। 'सूर' ही करै सराह पातसाही बोलै पूरो, वाह वाह बीकानेरै तणी हथवाह।—दूदौ वीठू

पातिस्या, पातीस्या—देखो 'बादसाह' (रू.भे.)

पातिस्याही—देखो 'बादसाही' (रू.भे.)

पाती-सं०स्त्री० [सं० पत्री] १ तलवार (डिं.को.)

२ स्वर्णकार का औजार विशेष जो लड़ बांधने के काम में आता है।

३ लोहे व अन्य धातु की पतली लीरी, पत्ती।

४ देखो 'पत्र' (१) (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ दादू पाती प्रेम की, बिरळा बांचै कोइ। वेद पुरांण पुस्तक पढ़ै, प्रेम बिना क्या होइ।—दादूवांणी

उ०—२ बनस्पती, कंदमूल, घास व फळफूल सह बळिया, नीली पाती न रही।—ढाढाळा सूर री बात

पातुर—देखो 'पातर' (रू.भे.)

उ०—पातुर नाचए धरम दुवार, मेरी माय भलो ए राजन पार उतार।—लो.गी.

पातुरी—देखो 'पातर' (अल्पा., रू.भे.)

पातौ-सं०पु० [सं० पात्र] १ मिट्टी का बना बड़ा बर्तन विशेष।

२ स्त्रियों के कंठ में पहिनने का आभूषण विशेष।

रू०भे०—पतर।

३ राठौड़ों की पातावत शाखा का व्यक्ति।

उ०—ऐ पाता ताता अवसांणै। काज घणी वाजै केवांणै।

—रा.रू.

पात्र-सं०पु० [सं०] १ वह वस्तु जिसमें कुछ रखा जा सके, बर्तन, भाजन।

२ किसी वस्तु या विषय का अधिकारी व्यक्ति।

उ०—१ बळिबंधण मुझ स्याळ सिंघ बळि, प्रासै जो बीजो परणै। कपिळ धेनु दिन पात्र कसाई, तुळसी करि चांडाळ तणै।

—वेलि

उ०—२ इतरे लाभ बथूळौ आवै, कहर क्रोध डंडूळ कहावै। छित पर कांम धुंव नभ छावै, पात्र विवेक निजर नह आवै।

—ऊ.का.

३ नाटक के नायक नायिका आदि।

उ०—आठ पुहर नित पूजा करइ, ईंडे ध्वजा वस्त्र फरहरइ। वलतइ

वारि हुइ नितु जात्र, नाटक नृत्य नचावइ पात्र ।—कां.दे.प्र.

यौ०—कुपात्र, कृपापात्र, दायापात्र, दानपात्र, सिक्षापात्र, सुपात्र ।

४ देखो 'प ' (रू.भे.)

५ देखो 'पातर' (रू.भे.)

उ०—नगर माहिइ नवि नाचइ पात्र, नेसालइ भणइ नहीं छात्र । न पोसाळइ करइ वखांण, इस्ट गोस्टी न करइ सुजांण ।

—नळदवदंती रास

६ देखो 'पात' (रू.भे.)

उ०—'प्राग' हरी पात्रां परिपाळग, मोटां दांन दिम्रण मन मोट । पह समराथ हाथ जग ऊपरि, कयावरि 'करन' करम रो कोट ।

—ल.पि.

पात्रता-संस्त्री० [सं०] १ पात्र होने का भाव ।

२ योग्यता, भाजनता ।

पात्रौ—देखो 'पातरौ' (रू.भे.)

उ०—जद स्वांमीजी बोल्या-म्हारै तौ पात्रा रंगीयाई है थारै संका हुवै तौ तूं मत रंग ।—भि.द्र.

पाथ-संपु० [सं० पाथं] १ जल, पानी (म्र.मा., ह.नां.मा.)

२ देखो 'पत्थर' (रू.भे)

उ०—जांनकी नाथ गिरतार पाथ । सो हैं समाथ भवसिंघु सार ।

—र.ज.प्र.

३ देखो 'पंथ' (रू.भे.)

उ०—नमो हरिरांम नमो निज नांम, गुरू हरिरांम नमो ग्रह गांम । मही हरि रांम नमो जिन मात, पिता हरिरांम नमो विन पाथ ।

—ऊ.का.

४ देखो 'पारथ' (रू.भे.) (म्र.मा., डि.को.)

उ०—सीलका गगेव भारथ का पाथ । नरूका जंवहरी, जोधांण का नाथ ।—सू.प्र.

५ देखो 'पथ' (रू.भे.)

पाथनाथ-संपु० [सं०] समुद्र ।

पाथनिधि-संपु० [सं० पाथोनिधि] समुद्र ।

पाथर—१ देखो 'पत्थर' (रू.भे.) (म्र.मा., डिं नां.मा.)

उ०—१ पांन खांन हित भाव सपूरति । मुख बोलि पाथर रची मूरति ।—सू.प्र.

उ०—२ महाराज हिवै कळयुग आयौ । ईंडो पाथर रो कराईजै । राजा बात मांनी, पाखांण रो ईंडो करायो ।—चौबोली

२ देखो 'पथरणौ' (मह.,रू.भे.)

उ०—तुंडां गज, फेटां तुरी, डाढां भड भोभाड । हेकण कोठै धूंदिया, फौजां पाथर पाड ।—वी.स.

पाथरणि—देखो 'पथरणौ' (म्रल्पा.,रू.भे.)

उ०—ग्रह पुहुप तणौ तिणि पुहुपित ग्रहणौ, पुहपई ओढ़ण पाथरणि । हरखि हिंडोळि पुहपमै हिंडति, सहि सहचरि पुहपां सरणि ।—वेलि

पाथरणौ—देखो 'पथरणौ' (रू.भे.)

पाथरणौ, पाथरबौ-क्रि०स० [सं० प्रस्तरणम्] १ फैलाना, बिछाना ।

उ०—१ पग-पग-कांटा पाथरै, वादीलो बनराय । होणी ज्यूं त्यूं होवसी, दियै न हींणौ दाव ।—बां.दा.

उ०—२ मुखमल री सवङ्ग पाथरी, माहे पाथरियउ रेसम री पाट । कळ पदम करि चिहुं किनारे, थरकाई वेहां कर थाट ।

—महादेव पारवती री वेलि

२ धराशायी करना, मारना ।

उ०—कूरम किता पुमाड़ा 'कान्हा', उतवंग भागहियै अनड़ । सारे फेरि कीया सत्र पाथर, घड़ा तीन बाईस घड़ ।

—कानसिंघ बळभद्रोत कछवाहा री गीत

पाथरणहार, हारौ (हारी), पाथरणियौ—वि० ।

पाथरिग्रोड़ौ, पाथरियोड़ौ, पाथरयोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पाथरीजणौ, पाथरीजबौ—कर्म वा० ।

पथरणौ, पथरबौ—रू०भे० ।

पाथराणौ, पाथराबौ—देखो 'पथराणौ, पथराबौ' (रू भे.)

पाथराणहार, हारौ (हारी), पाथराणियौ—वि० ।

पाथरायोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पाथराईजणौ, पाथराईजबौ—कर्म वा० ।

पाथरायोड़ौ—देखो 'पथरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पाथरायोड़ी)

पाथरावणौ, पाथराववौ—देखो 'पथराणौ, पथराबौ' (रू.भे.)

पाथरावणहार, हारौ (हारी), पाथरावणियौ—वि० ।

पाथराविग्रोड़ौ, पाथरावियोड़ौ, पाथराव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पाथरावीजणौ, पाथरावीजबौ—कर्म वा० ।

पाथरावियोड़ौ—देखो में 'पथरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पाथरावियोड़ी)

पाथरी—१ देखो 'पाथरौ' (म्रल्पा०, रू.भे.)

२ देखो 'पथारी' (रू भे.)

पाथरौ-संपु० [सं० प्रस्तरणम्] १ खेत में कटे हुए अनाज के पौधों का ढेर ।

अल्पा०—पाथरी

पाथारी-संस्त्री० [सं० प्रस्तरणम्] १ गोष्ठी ।

२ घास की गंजी या ढेरी ।

३ देखो 'पथारी' (रू.भे.)

पाथियौ-सपु० [सं० पथक या पथिक] राहगीर ।

उ०—नाउ सांमा आवतौ, दरपण लीयां हाथ । सुकन विचारौ पाथियां, सम्मत आवै साथ ।—अज्ञात

पाथिव—देखो 'पारथिव' (रू.भे.) (डि.नां.मा.)

पाथू—१ देखो 'पात' (अल्पा.,रू.भे.)

२ देखो 'पाथ' (अल्पा.,रू.भे.)

उ०—पाथू माछ पनग गज पंखी, किहीं न बीजै सेव करंत । राउळ

समंद मळेतर रेवा, मानसरोवर मन मानंत ।—ईसरदास बारहठ
३ देखो 'पथक' (अल्पा.,रू.भे.)

पाथेय-सं०पु० [सं०] राह में खाने के लिए राहगीर द्वारा ले जाया जाने वाला भोजन, मार्ग का कलेवा ।
रू०भे०—पाहेय ।

पाथोज-सं०पु० [सं०] कमल ।

पाथोद-सं०पु० [सं०] १ मेघ, बादल ।
उ०—तेज हाक-नीर पूर पाथोद पाड़िया तसा, नगांद्र ताडिया ज्यूं खगंद्र बंधे नेत । पबं पख बडूजा भाड़िया बोम वज्र-पात, खळां थाट दूजे 'दलै' बभाड़िया खेत ।—हुकमीचंद खिड़ियौ
२ समुद्र (डिं.को)

पाथोधर-सं०पु० [सं०] बादल, मेघ ।

पाथोधि, पाथोनिधि, पाथोनिधी-सं०पु० [सं० पाथोधि, पाथोनिधि] समुद्र, सागर ।
उ०—अकबर मच्छ अयांण, पूंछ-उछाळण बळ प्रबळ । गोहिलवत गहरांण, पाथोनिधी 'प्रतापसी' ।—दुरसौ आढ़ौ

पाथोरुह-सं०पु० [सं०] कमल ।

पाद-स०पु० [सं० पर्दः] १ गुदा मार्ग से निकलने वाली वायु अपान वायु ।
उ०—वाद ओ विवाद को सवाद तैं सह्यौ । राव रौ निनाद ऊंट पाद ज्यूं गयौ ।—ऊ.का.
[सं०] २ पैर, चरण ।
उ०—अगहर उद्धारक ते भवतारक, खारक दाख खुपंदा है । ले स्वाद लुभावै पाद पुजावै, घट में नाद घुरंदा है ।—ऊ.का.

पादक-सं०पु० [सं०] आभूषण विशेष ।
उ०—हस्त संकलिका पाद संकलिका उतरिका, पादक ग्रैवेयक सख ।
—व.स.

पादचारी—देखो 'पदचारी' (रू.भे.)

पादटीका-सं०स्त्री० [सं०] किसी ग्रंथ के पृष्ठ के नीचे लिखी गई टिप्पणी, फुटनोट ।

पादण-सं०स्त्री० [सं० पर्दनम्] वह स्त्री जो अपान वायु निकाले ।

पादणौ-स०पु० [सं० पर्दनम्] (स्त्री० पादण) वह पुरुष या बैल जो बार-बार अपान वायु निकाले ।

पादणौ, पादबौ-क्रि०स० [सं० पर्द] गुदा से वायु बाहर निकालना, अपानवायु निकालना ।
उ०—होको हींडै हाथ लटकतौ खड़ियौ लारै । पड़ पड़ पादै पाद नोंप जिम पड़ी नगारै ।—ऊ.का.
पादणहार, हारौ (हारी), पादणियौ—वि० ।
पादिग्रोड़ौ, पादियोड़ौ, पादयोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पादीजणौ, पादीजबौ—भाव वा० ।

पादतळ—देखो 'पदतळ' (रू.भे.)

पादत्र-सं०पु० [सं०] १ जूता, जूती । २ खड़ाऊ ।

पादत्रांण-सं०पु० [सं० पादत्राण] जूता, उपानह (डिं को.)
रू०भे०—पायत्रांण ।

पाददाह-सं०पु०यौ० [सं०] पैरों के तलवे में जलन का रोग ।

पादप-सं०पु० [सं०] वृक्ष, पेड़ (डिं.को.)

पादपूरण-स०पु०यौ० [सं०] किसी कविता के पद (चरण) को पूरा करना ।

पादपोस-सं०पु० [फा० पा—पोश अथवा सं० पाद+फा० पोश] जूता, पगरखी ।
रू०भे०—पायपोस ।

पादर—देखो 'पाधर' (रू.भे.)
उ०—गांव रै अड़ोअड़ एक खेत आयोड़ौ—पादर, गांव नै खेत रै बिचाळै फगत एक बाड़ ।—रातवासौ

पादरी-सं०पु० [पुर्त०—पैडे, १ ईसाई धर्म का पुरोहित ।
२ देखो 'पाधरी' (रू.भे.)

पादरौ—देखो 'पाधरौ' (रू.भे)
(स्त्री० पादरी)

पादवदन-स०पु० [सं०] पैर पकड़ कर प्रणाम करने की क्रिया ।

पादवेस्टक-सं०पु० [सं० पादवेष्टक] पैर में धारण करने का आभूषण विशेष ।
उ०—लघुचूड़क, मुक्ताचूड़क, सुवरणचूड़क, मोतीसरी, करगी, कंकणी, पादवेस्टक, पोलरकत्रिक, चतुसरक, नवसरक, अस्टादससरक इति आभरणानि ।—व स.

पादसंकळिका-सं०स्त्री० [सं० पादशृंखलिका] पैर का आभरण विशेष ।
उ०—संकलिक, स्रवणपीठ, स्रवणमाल, वैस्टिक, हस्तसंकलिका, पाद· सकलिका, उत्तरिका पादक···।—व.स.

पादसाखा-सं०स्त्री० [स० पादशाखा] पैर की अंगुलि ।

पादसाह—देखो 'बादशाह' (रू.भे.)
उ०—पांमीयउ परमाणद तलक्षण, हुकम दिउठी नउ कियउ । अत्यंत आदर मांन गुरु नै, पादसाह अकबर दियउ ।—स.कु.

पादहरस-सं०पु० [स० पादहर्ष] पैरों में झुनझुनाहट उत्पन्न करने वाला एक रोग विशेष (अमरत)

पादहिता-सं०स्त्री० [सं०] पदरक्षिका, जूती, उपानह ।

पादांकुळक—देखो 'पादाकुळक' (रू.भे.)

पादांगद-सं०पु० [सं०] नूपुर (अ.मा.)

पादाक्रांती-वि०[सं०] पैरो से कुचला या रौंदा हुआ, पददलित ।
उ०—पादाक्रांती पदक्रांती बिन पावै । आरधावरती जन अन बिन अकुळावै ।—ऊ.का.

पादाकुळक, पादाकुळति, पादाकूलक-सं०पु० [सं०] प्रत्येक चरण में सोलह मात्रा और अत में गुरु वर्ण वाला मात्रिक छद ।
रू०भे०—पदाकुळक, पादांकुळक, पादकुळक ।

पादारबंद, पादारव्यंद-सं०पु० [सं० पादारविन्द] चरणकमल ।

उ०—'किसन्न'स' आखै अरज्जी कविंद । बडो आसरो रांम पादार-
व्यंदं ।—र.ज.प्र.

पादियोड़ो-भू०का०कृ०—गुदा से वायु बाहर निकाला हुआ, अपान वायु निकाला हुआ।
(स्त्री० पादियोड़ी)

पादुका-सं०स्त्री० [सं०] १ खड़ाऊ।
२ जूती।
३ देखो 'पगलिया'।
उ०—जरगा ऊपर राजा हरिचंद री थापी गुसांई री पादुका छै। तठै त्रिसूळ छै।—नैणसी
रू०भे०—पाउग, पाउगा।

पादोदक—देखो 'पदोदक' (रू.भे.)

पादोदर-सं०पु० [सं०] सर्प, सांप।

पादोरणौ, पादोरबौ—देखो 'पाधोरणौ, पाधोरबौ' (रू.भे.)

पादोरियोड़ो—देखो 'पाधोरियोड़ो'।
(स्त्री० पादोरियोड़ी)

पादौ-सं०पु० [सं० पर्दः] (स्त्री० पादी) वह पुरुष जो अधिक अपान वायु निकालता हो।

पाद्रि—देखो 'पाधरो' (रू.भे.)
उ०—आवी पाद्रि सइंफलउं मांडयउं, लीधा चउपट घाउ। सोर-ठीया राउत सपरांणा, न दीइ पाछा पाउ।—कां.दे.प्र.

पाधड़ी—देखो 'पद्धरी' (रू.भे.)

पाधर-वि० [?] १ पालतू। उ०—नीठर नेमि गदाधरु पाधर सीह विमासि। परि म सरीसीय मांडइ ए मांडइ ए पाडिसु पासि।
—जयसेखर सूरि
२ अनुकूल। उ०—दीहा पाधर वंक गय, भुज घरियं कुळ भार। चोळ वरन्न लोचने, आयौ आप दुवार।—गु.रू.बं.
सं०पु०—१ समतल भूमि, खुला मैदान, सपाट मैदान।
उ०—१ भंवरयौ फुरणी में भंवराळो भळकै। पाधर वहती रा पसवाड़ा पळकै।—ऊ.का.
उ०—२ उठै निराठ पाधर छै और भूमि निराठ दूरी छै।
—मारवाड़ रा अमरावां री वारता
सं०पु०—१ तरवार (डि.को.)
उ०—लोक जठै रंको नहीं, नंह संको पर-थाट। सोढां जस डंको घुरै, पाधर बंको घाट।—बां.दा.
२ देखो 'पाधरो' (मह., रू.भे.)
उ०—पाधर अकबर सूं 'पतौ', विढे इसौ वरियांम। सो गाजै चीतोड़ सिर, की इचरज रौ कांम।—बां.दा.
रू०भे०—पद्दर, पद्धरयं, पधर, पादर।

पाधरणौ, पाधरबौ—देखो 'पाधोरणौ, पाधोरबौ' (रू.भे.)
पाधरणहार, हारौ (हारी), पाधरणियौ—वि०।
पाधरिओड़ो, पाधरियोड़ो, पाधरयोड़ो—भू०का०कृ०।
पाधरीजणौ, पाधरीजबौ—कर्म वा०।

पाधरपतसा-सं०पु० [राज० पाधर+फा० बादशाह] १ कछवाहा वंश के अंतर्गत नरूका शाखा के राजपूतों का विरुद।
२ खुले मैदान में युद्ध करने वाला वीर।
रू०भे०—पद्धरपति, पद्धरपती।

पाधरसलो-वि० [राज. पाधर+अ. सलाह] १ प्रासादगुणयुक्त (कविता)
उ०—पह सर आखर पाधरा, वापार पढाणां। पाधरसला दूहड़ा, के दीह रहांणा।—मयारांम दरजी री बात
२ सीधे व सरल स्वभाव का व्यक्ति।

पाधरियोड़ो—देखो 'पाधोरियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पाधरियोड़ी)

पाधरी-वि० [?] १ सीधी, सरल।
रू०भे०—पद्धरी, पादरी, पाद्री।
२ देखो 'पद्धरी' (रू.भे.)

पाधरो-वि० [?] (स्त्री० पाधरी) १ जिसमें फेर या घुमाव न हो, अवक्र, सीधा।
उ०—बंबी इंदर पौढियो, काळौ दबकै काय। पूंगी ऊपर पाधरो, आवै भोग उठाय।—वी.स.
२ जो किसी ओर ठीक प्रवृत हो, ठीक लक्ष्य की ओर हो।
उ०—न्याय री सीख न मांनै अनै अजोगाई अन्याय करै तिणनै पाधरो करवा ऊपर स्वांमीजी द्रस्टांत दियौ।—भि.द्र.
३ जो कुटिल या कपटी न हो।
उ०—बेटो 'रायधण' मोयै दायजै मांगै। पण आपां पाधरा रज-रजपूत छां।—रायधण री वारता
४ जो विरुद्ध न हो, अनुकूल।
उ०—गाहै गजराजां गुड़ां, रुहिर मचावै कीच। ज्यांरै नव-ग्रह पाधरा, जे वंका रण बीच।—बां.दा.
५ जिसका करना कठिन न हो, आसान।
६ शांत, सुशील, शिष्ट।
उ०—एक रजपूत रावतजी की हजूर रहै। जकौ आदमी तौ पाधरो सो। पण मोटियार पगछंटो सो।
—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात
७ जो जल्दी समझ में आवे, दुर्बोध न हो।
८ देखो 'पाधर' (मह०, रू.भे.)
रू०भे०—पद्धरो, पादरो।
मह०—पधर, पध्धर।

पाधारणौ, पाधारबौ—देखो 'पधारणौ, पधारबौ' (रू.भे.)
उ०—१ आखइ ताइ सती अरज करि आगळि, निज अवधार अनाथानाथ। पाधारउ राजांन जियइ पुर, सांम मोनइ ही लीजइ साथ।
—महादेव पारवती री वेलि

उ०—२ परणीजै पाधारियो, सांभर 'अजन' सुजाव । जस साभळि खीजै जवन, रीझै मुरधरराव ।—रा.रू.

पाधारणहार, हारौ (हारी), पाधारणियौ—वि० ।

पाधारिग्रोड़ो, पाधारियोड़ो, पाधारचोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पाधारीजणौ, पाधारीजबौ—भाव वा० ।

पाधारियोड़ो—देखो 'पधारियोडो' (रू.भे.)

(स्त्री० पाधारियोड़ी)

पाधोर-वि० [? सीधा लक्ष्य पर निशान लगाने वाला ।

उ०—वांको विचित्त पाधोर वंक । ताणइ कमांण पइंतीस-टंक ।
—रा.ज.सी.

सं०स्त्री०—सीध ।

पाधोरणौ, पाधोरबौ-क्रि०स० [सं० उपाधोरणम्] १ दड देकर सीधा करना ।

उ०—पह 'सूजो' पाधोरियौ, 'ग्रोरंग' लियौ उबार । पतसाही राखी पगे, 'केहर' राज कुंवार ।—द.दा.

२ युवा बैल को हल, गाड़ी आदि में जोतने को अभ्यस्त करना, हिलाना ।

पाधोरणहार, हारौ (हारी), पाधोरणियौ—वि० ।

पाधोरिग्रोड़ो, पाधोरियोड़ो, पाधोरचोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पाधोरीजणौ, पाधोरीजबौ—कर्म वा० ।

पाधरणौ, पाधरबौ—रू०भे०

पाधोरियोड़ो-भू०का०कृ०—१ दण्ड देकर सीधा किया हुआ ।

२ युवा बैल को हल, गाड़ी आदि में जोतने को अभ्यस्त किया हुआ, हिलाया हुआ ।

(स्त्री० पाधोरियोड़ी)

पाधोरी-वि० [?] (स्त्री० पाधोरण) १ दंड देकर सीधा करने वाला ।

२ युवा बैल को हल, गाड़ी आदि हेतु अभ्यस्त करने वाला ।

३ अचूक निशानेबाज ।

पाधो-सं०पु० [स० उपाध्याय] पंडित, ब्राह्मण ।
(शेखावाटी)

पाप-सं०पु० [सं०] १ वह कार्य जिसका फल इस लोक व परलोक में अशुभ हो, निंदित काम । उ०—धोळा बुगला ध्यान लगावै, खावै मछियां खूब । पापी पल पल पाप कमावै, डबके जावै डूब ।—ऊ.का. दुष्कर्म । उ०—पाप जिता तू पलक में, सुरसरी हरण समत्थ । इता पाप ऊमर महीं, सौ कुण करण समत्थ ।—बां.दा.

मुहा०—१ पाप उदय होणौ—संचित पाप का फल मिलना, बुरे दिन आना ।

२ पाप कटणौ—पाप का नाश होना, अच्छा समय आना ।

३ पाप काटणौ—पाप से मुक्त करना, नष्ट करना ।

४ पाप कमाणौ—पाप कर्म करना, झूठ कपट छल आदि को अपने जीवन में स्थान देना ।

५ पाप प्रगटणौ—देखो 'पाप उदय होणौ' ।

६ पाप रो घूप—क्षणिक, अस्थायी ।

७ पाप लागणौ—अपराध होना, बुरे कर्म का पुरा परिणाम भोगना, कलंक लगना ।

३ दुर्भाग्य । उ०—रोग सोक दुख पाप रिण, ऐ मत करो प्रवेस । रहो अनीत अनीत विण, दाता हूंदे देस ।—बां.दा.

४ वध, हत्या ।

५ बुरी नीयत, खोट, हीनभावना ।

उ०—हरसा समरथ मोबी रे, जे तूं राखैला पेटै पाप । ओदर का रे लोटया, दरगा में दांवणगिरियां रै बणूं ।—लो.गी.

६ अनिष्ट, अहित, बुराई ।

७ झंझट, जंजाल ।

मुहा०—१ पाप कटणौ—झगड़ा दूर होना ।

२ पाप काटणौ—झगड़ा मेटना ।

३ पाप मोल लेणौ—झंझट में पड़ना, बखेड़े में पड़ना ।

४ पाप पलै पड़णौ—व्यर्थ का झंझट शिर पड़ना ।

५ पाप मिटणौ—झंझट हटना ।

६ पांच मात्रा के आठ भेदों में से पाच लघु मात्रा का नाम ।
(र.ज.प्र.)

७ दुखद वर्णन* (डि.को.)

८ अटल* (डि.को.)

९ तप्त वर्णन* (डि.को.)

१० कृष्ण वर्णन* (डि.को.)

रू०भे०—पापि, पापु, पाव ।

अल्पा०—पापौ ।

पापड्यौ—देखो 'पपड्यौ' (रू.भे.)

पापकरण-सं०पु० [सं०] शिकार, आखेट (डि.को.)

पापकरम-सं०पु० [सं० पापकर्म] अनुचित या बुरा काम, कुकर्म, दुष्कर्म ।

पापकरमी-सं०पु० [सं० पापकर्मिन्] (स्त्री० पापकरमणी) पापी, कुकर्मी ।

पापक्षय, पापखै-सं०पु० [सं० पापक्षय] १ पापों के नष्ट होने की क्रिया ।

२ वह स्थान जहां जाने से पाप नष्ट हो जाते हैं, तीर्थ ।

पापगण [सं०] छन्द शास्त्र के अनुसार ठगण का आठवां भेद (डि.को.)

पापग्रह-सं०पु० [सं०] १ कृष्णपक्ष की दशमी से शुक्लपक्ष की पंचमी तक का चन्द्रमा (ज्योतिष)

२ फलित ज्योतिष के अनुसार सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु-ग्रह ।

पापड़-सं०पु० [सं० पर्पट, प्रा० पप्पड] १ उर्द, मूंग, मोठ आदि की धोई दाल के आटे में मसाला आदि मिला कर बनाई गई पतली

(इसका आटा क्षारयुक्त पानी में गूंदा जाता है)

उ०—१ फोग, कैर काचरफळी, पापड़ सेघर पात। वड़ियां मेलै बांणियां, सांगरियां सोगात।—बां.दा.

उ०—२ पापड़ पापड़ी नां साक, सेक्या पापड़ तल्या पापड़, बघारघा पापड़...।—व.स.

वि०वि०—इसको प्राय: भोजन के पश्चात् आग पर सेक कर अथवा तेल या घी में तल, खाने के काम में लेते हैं। हिन्दुओं-विशेष कर नागरिकों के भोज में पापड़ एक आवश्यक खाद्यपदार्थ है।

२ एक प्रकार का वृक्ष जिसकी लकड़ी इमारती होती है।

वि०—१ बारीक, पतला।

२ सूखा, शुष्क।

अल्पा०—पप्पड़ो, पापड़ियो।

पापड़ी-सं०स्त्री० [सं० पर्पटी] १ बंबूल की फली।

उ०—बांवळया कुण रै सरीसौ थारौ फूल, बांवळया कुण रै सरीसी थारी पापड़ी। गोरी ए सोनै सरीसौ म्हारौ फूल, रूपै सरीसी म्हारी पापड़ी।—लो.गी.

२ एक प्रकार का खाद्य पदार्थ। उ०—सेव सूंहाली लाडू गल्या, आछा मांडा पापड़ तल्या। खाजे खड़क सालणे वड़ी, कूर कपूर तली पापड़ी।—कां.दे.प्र.

३ एक प्रकार का वृक्ष विशेष।

४ देखो 'पपड़ी' (रू.भे)

उ०—कोई कोई जगै थोड़ी घास ही ऊगै, पण पांण सूख्यां पछै लूण री पापड़्यां जम जावै।—रातवासौ

पापड़ी-खार-सं०पु० [सं० पर्पटक्षार] केले के पेड़ का क्षार, क्षार विशेष। (अमरत)

पापड़ो-सं०पु० [देशज] १ स्कंध की वह हड्डी जो पीठ की ओर रीढ एवं बाहुमूल के बीच में स्थित है। कंधे की हड्डी।

रू०भे०—पुट-पड़ो।

२ देखो 'पापड़' (मह०, रू.भे.)

पापड़ो-कायो-सं०पु० [सं० पर्पट+क्वाथ] एक प्रकार का कत्था (अमरत)

पापचंद्रमा-सं०पु० [स० पापचंद्रमा] विशाखा के अंतिम चरण से जेष्ठा के अन्तिम चरण तक का चंद्रमा (फलित ज्योतिष)

पापचर-वि० [सं०] पापी, पाप करने वाला।

पापचारी-वि० [सं० पापचारिन्] (स्त्री० पापचारिणी) पापी, पातकी।

पापजूंण-सं०स्त्री० [सं० पापयोनि] पशु-पक्षी आदि की योनि, पाप योनि।

पापण, पापणी-वि० [सं० पापिनी] पाप में रत, पापिनी।

उ०—१ पापण जा पाछीह, हव तौ मारघां स्यूं हुवै। आंण करी आछीह, पावू नै कुण पाळसी।—पा.प्र.

उ०—२ जद ब्राह्मण बोल्या—हे पापणी! म्हांनै भ्रस्ट किया। अबै गंगाजी जाय स्नांन पांणी रा लेप करी सुद्ध थास्यां।—मि.द्र.

रू०भे०—पापिणी।

पापत्रयताप-सं०पु० [सं० पाप+त्रय+ताप] तीन प्रकार के पाप, कायिक, वाचिक और मानसिक (आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक) का ताप।

पापदरसी-वि० [सं० पापदर्शिन्] १ बुरी नीयत या अनिष्ट दृष्टि से देखने वाला।

२ जो पाप की पहिचान कर सकता हो।

पापद्रस्टी-वि० [सं० पापदृष्टि] जिसकी दृष्टि में पाप भरा हो।

पापनक्षत्र-सं०पु० [सं०] भरणी, कृतिका, विशाखा, जेष्ठा और अश्लेषा नक्षत्र। (फलित ज्योतिष)

पापनांमी-वि० [सं० पापनामन्] पापी, दुष्ट, निंदित।

पापनासणी-सं०स्त्री० [सं० पापनाशिनी] पापों को नष्ट करने वाली, तुलसी।

पापनासन-सं०पु० [सं० पापनाशन] १ पाप का नाश करने वाला, पापनाशी।

२ विष्णु।

३ शिव।

४ वह कर्म जिससे पापों का नाश हो, प्रायश्चित।

पापफळ-वि० [सं० पापफल] वह कार्य जिससे पाप लगे, पापोत्पादक कार्य।

पापमति-वि० [स०] जिसकी बुद्धि सदा पाप में रहे, पापचेता।

पापमय-वि० [सं०] पाप से युक्त, पाप से भरा हुआ।

पापमोचण, पापमोचणी, पापमोचन-सं०स्त्री० [सं० पापमोचनी] १ चैत्र कृष्ण एकादशी।

२ पाप नष्ट करने वाली, गंगा।

पापरोग-सं०पु० [सं०] पाप विशेष के कारण होने वाला रोग।

वि०वि०—धर्म शास्त्र अनुसार कुष्ठ, यक्ष्मा, कुनख, पीनस, हीनांगता, पंगुत्व, मूकता, लोलजिह्वता, उन्माद, अंधत्व, काणत्व आदि पाप रोग माने गए हैं। ये रोग ब्रह्महत्या, सुरापान, स्वर्णहरण आदि पापों के कारण नरक और पशु कीट आदि की योनियों से पुन: मनुष्य जन्म प्राप्त करने पर होते हैं।

पापरोगी-वि० [स० पापरोगिन्] (स्त्री० पापरोगणी, पापरोगिणी) पाप रोग से ग्रसित।

पापळ-वि० [?] अशक्त। उ०—पांणी प्रेरणिका पावळ पुचकारै। वापू वापू कर थापल वुचकारै।—ऊ.का.

पापलोक-सं०पु० [सं०] पाप करने वाले को मिलने वाला लोक, नरक।

पापसमणी-वि० [सं० पापशमनी] पापनाशक, तुलसी।

पापस्थांन-सं०पु०यौ० [सं० पापस्थान] जन्म कुंडली में ६, ८, १२ वा स्थान।

पापहर, पापहारी-वि० [सं० पापहरिन्] पापनाशक, पापों को हरने वाला, पाप को मिटाने वाला। उ०—गंग के सुथांन नख करत प्रकास भांन, रहत सदीव उर मधि पंचमाथ के। पापहारी प्रगट अहिल्या के उधारी सिर, मंडन सिखा री बनचारिन के साथ के।
—र.ज.प्र.

सं०स्त्री० [सं० पापहर] एक नदी का नाम।

पापांकुसा-सं०स्त्री० [सं० पापांकुशा] आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी।

पापा-सं०पु०—१ बच्चों द्वारा पिता के लिए प्रयोग किया जाने वाला शब्द।

वि०वि०—इसका प्रयोग प्राय: यूरोपियन बच्चे ही करते हैं। किन्तु आजकल अपने आपको आधुनिक (एडवांस) मानने वाले अफ़सर भी अपने बच्चों को यही शब्द सिखाते हैं।

२ प्राचीन काल के बिसप पादरियों एवं वर्तमान के केवल यूनानी पादरियों के एक विशेष वर्ग की उपाधि।

३ पुराण के अनुसार एक तीर्थ।

पापाख्या-सं०स्त्री० [सं०] बुध की उस समय की गति जब वह हस्त, अनुराधा अथवा जेष्ठा नक्षत्र में रहता है।

पापाचार-सं०पु० [सं०] पाप का कार्य, दुराचार।

वि०—बुरी राह चलने वाला, पापी, दुराचारी।

पापात्मा-वि० [सं० पापात्मन्] पापी, दुराचारी।

पापि—१ देखो 'पाप' (रू.भे.)

उ०—कइ अम्हे नीचसंग आचरियउ, कनक चोरिया कापि। तुरक तणइ बंधानइ पडीयां, कहउ अम्हे केहइ पापि।—कां.दे.प्र.

२ देखो 'पापी' (रू.भे.)

पापिणी—देखो 'पापणी' (रू.भे.)

उ०—निज स्वारथ अन पहुंचता, निज सूरिकंता नारी रे। पापिणी पति नइ विस दियउ, पिण देखस्यइ दुख भारो रे।—स.कु.

पापियउ—देखो 'पापी' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—पापियउ माथ्यउ पोस, स्यउ जीविवा नउ सोस।—स.कु.

पापियो—देखो 'पापी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—साधुआं सुधारो सही, पापिया बिसारै परा। संभारै चीतारै तिको तारै सिरताज।—पी.ग्रं.

पापिस्ट-वि० [सं० पापीष्ट] बड़ा पापी, बड़ा गुनाहगार।

उ०—पूत नहीं पापिस्ट हूं, मुझ हत्या जे होय। स्त्री बंभण बेहू तणी, टालि सकइ नहीं कोय।—मा.कां.प्र.

पापी-वि० [सं० पापिन्] (स्त्री० पापण, पापणी) १ अघी, पातकी।

उ०—यौवन! जा रे पापीया, तूं हिमगिरि पारि! मूंडा! तुझ मइं भोगविसि, भवि बीजइ भरथारि।—मा.कां.प्र.

२ क्रूर, निर्दय, परपीड़क।

सं०पु०—पाप करने वाला, अपराधी। उ०—धोळा बुगला ध्यांन लगावै, खावै मछियां खूब। पापी पल पल पाप कमावै, अबके जावै डूब।—ऊ.का.

रू०भे०—पापि।

अल्पा०—पापियउ, पापियो, पापीयो।

पापीयो—देखो 'पापी' (अल्पा० रू.भे.)

पापु—देखो 'पाप' (रू.भे.)

उ०—देवु न गिणई देवु न गिणई पुण्णु नइ पापु।—पं.पं.च.

पापैड़ो-सं०पु० [सं० पाप+रा.प्र. ऐड़ो] पाप का कृत्य, पापकर्म।

पापोस-सं०पु० [फ़ा० पा+पोश] जूता, उपानह।

पापो—देखो 'पाप' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—जीव अजीव न ओलख्या, जाण्या पुण्य न पापो रे। आस्रव संवर निरजरा, बंध मोक्ष वलै थापो रे।—जयवांणी

मुहा०—पापो कटणो—देखो 'पाप कटणो'।

पाबंद-वि० [फ़ा०] १ बंधा हुआ, बद्ध, कैद।

२ किसी नियम, प्रतिज्ञा आदि का पालनकर्ता।

३ नियम, प्रतिज्ञा आदि का पालन करने को विवश।

४ कर्तव्य के प्रति सावधान।

सं०पु०—घोड़े की पिछाड़ी।

पाबंदी-स०स्त्री० [फ़ा०] १ पाबंद होने का भाव, बद्धता।

२ नियम, प्रतिज्ञा आदि का पालन करना।

३ कोई विशेष कार्य करने की बाध्यता या लाचारी।

४ रोक, मनाही।

पाबागढ-सं०पु०—चौहानों का एक छोटा सा राज्य जो मालवे में था।

पाबासर-सं०पु० [सं० पर्वतसर] मानसरोवर झील।

उ०—बड दाता पातां बडां, अपहड़ पूरै आस। मोताहळ हंसां मिळै, पाबासर रै पास।—बां.दा.

रू०भे०—पबैसर, पावासर, पाबाहर।

पाबासरो, पाबाहरो-वि० [सं० पर्वत+सर+रा.प्र. ओ] मानसरोवर का। उ०—सार दळ बोळ, जळ बोळ सीरोहियां, विरुदपत झूलियो घणो बांणै। प्रसण जिम चालियो पोहणी चंपतो, जगो पाबाहरो हंस जांणै।—जगमाल सीसोदिया रो गीत

सं०पु०—हंस, मराल।

पाबू, पाबूराठौड़-सं०पु०—१ एक प्रसिद्ध प्रतिज्ञा-वीर।

उ०—रातां जागण री जंगळ में रोळी। ढांणी-ढांणी में फिरतो ढंढोळो। धुणता नर माथा चुगता घर धाड़ा। पाबू हरबू रा सुणता परवाड़ा।—ऊ.का.

वि०वि०—इनका जन्म महेवा निवासी धांधलजी राठौड़ के यहां हुआ था। मुंहता नैणसी की ख्यात तथा अन्य कथाओं के आधार पर ये एक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न हुए। इनका पिता धांधलजी पाटण के तालाब के किनारे से एक अप्सरा को पकड़ लाए थे तथा उससे

विवाह कर कोलूगढ आ गए। वहीं उसके गर्भ से दो सन्तानें—एक पुत्र एक पुत्री हुई। पुत्र का नाम पाबू और पुत्री का नाम सोनाबाई रखा गया। दूसरी पत्नी से भी धांधलजी के दो सन्तानें हुईं। एक पुत्र व एक पुत्री जिनके नाम क्रमशः बूड़ा और पेमाबाई था। धांधलजी की मृत्यु होने पर राज्य का अधिकार बड़े बेटे बूड़ा को मिला।

बूड़ोजी राज्य करते थे और पाबूजी भोमिया के रूप में अपनी जीविका उपार्जन करते थे। ये नित्य सांड (मादा ऊंट) पर चढ कर शिकार करने जाते थे तथा छोटी सी उम्र में ही बड़े बड़े काम कर दिखाते थे। उस समय आना बघेला एक वीर राजपूत था। उसके यहां थोरी जाति के सात जवान नौकर थे। ये सातों ही एक ही मां के बेटे थे और बड़े ही शूरवीर थे। सबसे बड़े बेटे का नाम चांदिया था। एक बार आना बघेला के राज्य में अकाल पड़ा। इन थोरियों ने भूख से व्याकुल होकर एक दिन एक जानवर का वध किया। खबर मिलने पर राजा के कुंवर ने इनको ऐसा करने से रोका। बात बढ़ जाने पर लड़ाई ठन गई। युद्ध में राज कुमार मारा गया। राजा के भय से डर कर थोरी अपने सामान व बाल बच्चों को लेकर भाग निकले। राजा को खबर मिली तो उसने इनको जा घेरा। युद्ध हुआ। और उसमें थोरियों का बाप वीरगति को प्राप्त हो गया। राजा इसीसे सन्तुष्ट हो गया और अपने महल में लौट गया। इन थोरियों को कोई भी शरण देने को राजी न हुआ। अंत में ये पाबूजी के पास गए और पाबूजी ने इनको अभय दान दे दिया। पाबूजी के ये अनुयायी बन गए और उनके साथ रहने लगे।

इन थोरियो की सहायता से पाबूजी ने कई वीरतापूर्ण कार्य किए जिनमें से मुख्य ये हैं—

(१) अपनी बहिन सोना बाई द्वारा अपने भाई की बुराई न सुन सकने के कारण उसके पति सिरोही के रावजी द्वारा कोड़े मारने पर अपने बहनोई को पकड़ लाना व बहिन द्वारा अभयदान मांगने पर छोड़ देना।

(२) अपनी भाभी डोडगहेली द्वारा ताना मारने पर उसके भाई को डोडवाणा से मुसकें बांध कर पकड़ लाना व भाभी को दिखा कर उसके कहने पर छोड़ देना।

(३) अपने सहयोगी चान्दा के कहने पर उसके पिता के हत्यारे आना बघेला को मारना व उसके पुत्र द्वारा शरण में आने पर राज्य सौंपना।

(४) अपनी भतीजी को विवाह के समय दिए गए वचन के अनुसार दूदा सूमरा से सांढनियां लाकर देना।

जब ये दूदा सूमरा से सांढें छीन कर ऊमरकोट के पास से निकल रहे थे तो झरोखे में खड़ी राजकन्या इनकी तेजस्विता को देख कर इन पर मोहित हो गई। उसने अपनी माता से इनके साथ विवाह करने की इच्छा प्रगट की। पाबूजी को सूचना भेजी गई। पाबूजी ने उत्तर दिया, 'अभी तो हम सांढों को लेकर जा रहे हैं। वापिस आकर विवाह करेंगे। सोढों ने उसी समय नारियल दे व टीका करके सगाई पक्की कर दी।

एक वर्ष पश्चात जब ये बरात सजा कर रवाना हुए तो मार्ग में कुछ अपशकुन हुए। साथ के लोगों द्वारा बरात लौटाने हेतु काफी आग्रह करने पर भी ये नही माने और सब लोगों के वापिस रवाना हो जाने पर अपने साथ डांमा को लेकर दोनों ही विवाह करने चल दिए। बड़ी ही धूमधाम से विवाह हुआ। इन्होंने फेरा लेने के साथ ही कूच करने की तैयारी करदी। जब लोगों ने इसका कारण जानना चाहा तो इन्होने मार्ग में अपशकुन होने की बात बताई और उसी रात वापिस लौटना आवश्यक कहा। वीर पत्नी सोढी को जब इसका पता लगा तो वह भी साथ ही बिदा होने का हठ करने लगी। उसे भी रथ में बैठा लिया गया। ये रातोंरात अपने गांव लौट आए। गांव में बधाइयां बंटी। पाबूजी अपने महल में जा सो रहे। पाबूजी के विवाह में उनके बहनोई जींदराव खीची भी आए थे। कच्छ कि एक चारण के पास एक कालमी घोड़ी थी जो बड़ी ही करामाती थी। इस कारण से चारणों ने उसे न बेचने का निश्चय कर रखा था। जींदराव खीची ने भी इसे खरीदना चाहा था पर चारणों ने नहीं दी थी। पाबूजी के भाई बूड़ाजी को भी यह घोड़ी नहीं बेची गई। किन्तु चारणों ने यह घोड़ी पाबूजी को इस शर्त पर देदी थी कि कोई विपत्ति आने पर वे उनकी सहायता करेंगे। इस समय यह घोड़ी पाबूजी के पास थी।

जींदराव खीची ने इस बात को याद कर बदला लेने का यह अवसर अच्छा समझा। बिदा कर उसने चारणों के गो-धन का अपहरण कर लिया और ले चला। देवल देवी (मुंहता नैणसी की ख्यात में बिरवड़ी नाम है) ने बूड़ाजी से आकर गो-धन छुड़ाने की प्रार्थना की पर बूड़ाजी ने बहाना बना कर सहायता नही की। देवल देवी ने पाबूजी के खास आदमी चान्दा से जाकर कहा—'पाबूजी तो यहां हैं नहीं, अतः तुम ही सहायता करो।' यह बात पाबूजी ने सुन ली। वे बाहर आए। अपने साथियों को लेकर खीची को जा घेरा। लड़ाई शुरू हो गई। खीची के बहुत से आदमी मारे गए। गायें छुड़ा ली गईं और पाबूजी अपने महल में लौट आए।

इसी समय किसी अनजान व्यक्ति ने आकर बूड़ाजी को आकर पाबूजी के मारे जाने की झूठी सूचना दे दी। बूड़ाजी ने अपनी सेना लेकर खीचियों को जा घेरा। खीचियों ने कहा—'पाबूजी लौट गए हैं। अब मत लड़ो। किन्तु बूड़ाजी ने इस बात पर विश्वास नही किया। लड़ाई हुई और बूड़ाजी वीरगति को प्राप्त हो गए। बूड़ाजी की मृत्यु से खीची भयभीत हो गए। वे सोचने लगे, यदि अब पाबूजी को नहीं मारा तो हमारा जीना मुश्किल है।' वे कोलूमढ के राजा के पास गए और सहायता की प्रार्थना की। वह राजी हो गया। दोनों की सम्मिलित सेना ने पाबूजी पर चढाई करदी। घमासान युद्ध हुआ। पाबूजी अपने सैनिको सहित वीरगति को प्राप्त हुए।

उनकी पत्नी उसी समय उनके साथ सती हो गई।

सारे मारवाड़ के लोग पाबूजी को देवता की तरह पूजा करते हैं। अनेक स्थानों पर पाबूजी के छोटे-छोटे मन्दिर बने हुए हैं जिनमें उनकी घोड़े पर चढ़ी मूर्तियां हैं तथा साथ में थोरी जाति नामक दो साथी चांदा और ढेबा हैं। आज तक मारवाड़ के गांव गांव में थोरी जाति के लोग पाबू का गुण-कीर्तन करते फिरते हैं। इनके पास एक बड़ी चादर भी होती है जिस पर पाबूजी के जीवन काल की अनेक घटनायें भी चित्रित होती हैं। इस प्रकार के प्रदर्शन को 'पड़ बांचना' कहते हैं। कुछ भिन्नता लिए यही इतिहास पाबू-प्रकाश नामक ग्रंथ में है जो बहुत बाद का रचा हुआ है।

२ एक प्रकार का लोक गीत।

पावै—देखो 'परवत' (रू.भे.)

पायंदाज-सं०पु० [फा०] पैर पोंछने का बिछावन।

उ०—पगमंड थान अपार, हिक हिक्क मोल हजार। रंग बिछाइत अनिराज, दुति इसा पायंदाज।—सू.प्र.

पायंदारी-सं०स्त्री० [देशज] एक समय का राशन।

पाय—देखो 'पद' (रू.भे.)

उ०—१ पावस मास प्रगट्टिउं, जगि आणंद विहाय। बग ही भला जु बप्पहा, धरण न मेल्हइ पाय।—ढो.मा.

उ०—२ आवै पायै त्रिणिय गुण, रुचिर चमोतरि रूप। कुंवर तणी करि कीरति, भणि लखप्पती भूप।—ल.पिं.

पायक-स०पु० [स० पादाति या पादाविक] (स्त्री० पायका)

१ सेवक, नौकर। उ०—रिणसोहा रिणसूरमा, 'वीको' 'सोम' बखांणि। नायक पायक भड़ निवड, अरि-भंजण आरांणि।—हा.झा.

२ पैदल सिपाही, प्यादा। उ०—पायक अस रथ पंथ अपारां। हाथी पाखरवंत हजारां।—रा.रू.

३ दूत, हरकारा। उ०—हां जी बना भरत सत्रूघन साथ हनुमांन सा पायक ल्याज्यो जी, हां हां रे हनुमांन सा पायक ल्याज्यो जी।—लो.गी.

४ कर्मेन्द्रिय (साधु) उ०—नौसे खाई कोट, पांच पायक अभिमांनी। महल बहैतरि मांहि, मांहि दोय बारू पटरांणी।—ह.पु.वा.

५ योद्धा, वीर। उ०—हूतासण में होमिया, वसत हुवै सुप्रवीत। जूंझ मुंवा जुध में जके, पायक सदा प्रवीत।—पा.प्र.

रू०भे०—पाइक, पाइक्क, पाईक।

अल्पा०—पायको।

पायका-सं०स्त्री० [सं० पादातिका] दासी, सेविका।

उ०—कटी सु छीन केहरी प्रवीण पायका नही। बिनीत बांणि बीन-सी नवीन नायका नहीं।—ऊ.का.

पायकी—देखो 'पातकी' (रू.भे.)

उ०—मइं सुयोधन मिलिइन जाईइ, कुंतिगइं बिस किमइ न खाईइ। सयरि हुइ किमइ वीर पायका, चांपीयइ न नृप सीम पारकी।—सालि सूरि

पायको, पायक्क—देखो 'पायक' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ कोई डांभी जी वण आयो ज्यांरो पायको।—पाबूजी री पड़

उ०—२ पाअरविय लोधिय धीस पुलं। पायक्क अधक्क पुळै प्रगळं।—पा.प्र.

पायगा, पायगाह-सं०पु० [फा० पाएगाह] अश्वशाला, घुड़शाला।

उ०—१ तिण दिनां पायगा घोड़ा घणा बांधै। तरै रावळ जैतसी वेटा नूं कहाड़ियो—इतरा घोड़ा बाधा चारीजै, इतरो हासल आंपणै किसूं छै? घोड़ा असवारी रा पायगां बांधा राखो।—नैणसी

उ०—२ तठा पछै वरिहांसू दावो मांगण री मन में राखै, सु घणो साथ राखियो। घणा घोड़ा पायगाह किया।—नैणसी

रू०भे०—पाइगह, पाईगह।

पायड़-स०पु० [देशज] बैलगाड़ी के पहिए का वह अवयव जो लोहे से जड़ा होता है तथा जिस पर 'पूठी' (चंद्राकार लकड़ी) लगाई जाती है।

पायचो-सं०पु० [देशज] धोती को कमर में खूंस कर बनाई गई वह पलट जिसमें किसान लोग अनाज व अन्य वस्तुएं भर लिया करते हैं।

पायच्छित, पायछत, पायछित—देखो 'प्राछत' (रू.भे.)

उ०—१ पाछिली राइइं उठइं नइ हो स्रावक हुयइ सावधांन। राइ पायछत काउसग करी हो, देव वांदइ सुभ ध्यांन।—स.कु.

उ०—२ नाकी राख नै आलोयणा करे रे, पायछित लेवे गुरु पास रे। कदा इण लोक सूं डरता गोपवे रे, तो नहीं सद्गति री आस रे।—जयवाणी

पायजन—देखो 'पायजेब' (रू.भे.)

पायजामो—देखो 'पाजांमो' (रू.भे.)

पायजादो-वि० [सं० पा+अ. जादः] प्राप्त करने वाला। उ०—महण सुभावां कमंदगुर तायजादो मठां, खगां बळ दिली दळ खायजादां। पायजादो सुजस सायजादो पनो, रायजादां मुगट रायजादो।—मेघराज आढो

पायजेब-सं०स्त्री० [फा०] स्त्रियों के पैरों में पहिनने का आभूषण विशेष, नूपुर।

रू०भे०—पाजेब, पायजन।

पायत-सं०पु०—एक प्रकार का छंद विशेष जिसके प्रत्येक चरण में एक मगण, एक भगण और एक सगण होता है (र.ज.प्र.)

पायतावो-सं०पु० [फा०] पैर का मोजा, जुरबि।

पायती—देखो 'पसायती' (रू.भे.)

पायतो—देखो 'पसायतो' (रू.भे.)

पायत्रांण—देखो 'पादत्रांण' (रू.भे.)

पायदळ-सं०पु० [सं० पाददल] पैदल सिपाही, पैदल सेना।

उ०—भुकती कळ दावानळ झालै। च्यार हजार पायदळ चालै।—सू.प्र.

रू०भे०—पायल, पायल्ल ।

पायदार-वि० [फा०] टिकाऊ, दृढ़, मजबूत, निश्चित ।

उ०—अंगरेज कहैं सीप सूं मोती प्रगट हुवै । सीप नूं चीर मोती लोक लियै तैरी ऊपर काढ्या पवन ऊपर है । इणनूं पायदार मत जांणो ।—बां दा ख्यात

पायनांमी-वि० [सं० पाद+नाम+रा.प्र ई] पैरों में सिर झुकाने वाला, नमने वाला । उ०—सारा आंण मिळिया, टका किया, घोड़ा लिया, पायनांमी किया ।—ठाकुर जैतसी री वारता

पायनांमो-सं०पु० [सं० पाद+नाम] अधिकार ।

उ०—सूबा बादिस्याहि पायनांमा में लगाया । राजा रायसलजी खडपुर कै पाट आया ।—शि वं.

पायपोस—देखो 'पादपोस' (रू.भे.)

पायपोसबरदार-सं०पु० [फा०पापोश+बरदार या सं० पाद+फा० पोश +बरदार] जूता उठा कर चलने वाला व्यक्ति ।

उ०—सिविया दिखणी सांवतां रा पायपोस वरदार नै हूल कर सांवता रा उमराव है ।—बां.दा.ख्यात

पायल-सं०स्त्री० [सं० पाद+रा०प्र०ल] १ स्त्रियों के पैरों में पहिनने का एक गहना जिसमें घुंघरू लगे रहते हैं, नूपुर । उ०—बीरा म्हारै पगल्यां पायल ल्याज्यो, म्हारा बिछिया बैठ घड़ाज्यो ।—लो.गी.

२ मकान आदि पर पट्टियें चढाने हेतु काष्टादि के खम्भों के बंधन से बनाया गया ढलू रास्ता ।

३ देखो 'पायदळ' (रू.भे)

रू०भे०—पाइल, पायल्ल, पाळ ।

अल्पा०—पायलड़ी ।

पायलड़ी—१ देखो 'पायल' (रू भे.)

उ०—कोई कोई पहरची रिमझिम बिछिया, कोई कोई पहरघी पायलड़ी । होळी आई ए ।—लो.गी.

२ देखो 'पायली' (अल्पा०, रू.भे.)

पायली-सं०स्त्री० [सं० पाद+रा०प्र० ली] मिट्टी, धातु या काष्ठ का बना अनाज नापने का बर्तन विशेष ।

रू०भे०—पाइली, पावली ।

अल्पा०—पायलड़ी ।

पायलो-सं०पु० [सं० पाद+रा.प्र.लो] १ मिट्टी, धातु या काष्ठ का बना अनाज नापने का बर्तन विशेष जो 'पायली' का चौथाई होता है (मारवाड़)

२ अफीम का छबड़ा । उ०—वांटं ज्यूं बाधो (थारै) पल्लै न बाधो पायलो । मिळियो स्री माघो, कै लाधो को पारस 'लछा' ।

—भगवांनजी रतनूं

रू०भे०—पांयणो ।

पायल्ल—१ देखो 'पायदळ' (रू भे.)

उ०—मांवां ऊपर मुळकता, ले चलिया पायल्ल । म्हे थानै पूछां ठाकरां, सूअर कै घायल्ल ।—डाढाळा सूर री वात

२ देखो 'पायल' (रू भे.)

पायस-सं०पु० [सं० पायसं या पायसः] १ दूध, क्षीर ।

२ देखो 'पाइस' (रू.भे.)

पायांण—देखो 'प्रयांण' (रू.भे.)

उ०—तइं पतिसाह तणेह, पायांणउ पारंभ सुणी । हळ-हळिया हेकांणवइ, गढपति गमे-गमेह ।—अ० वचनिका

पायाकुळक—देखो 'पादाकुळक' (रू.भे.)

पायारोपणी-सं०स्त्री० [सं० पाद+ रोपणं] मन्दिर, मकान आदि की नींव लगाने की क्रिया ।

उ०—घड़े घाट करं कोरणी, लगन भले पायारोपणी ।—अ. स्तु.

पायाल—देखो 'पाताळ' (रू.भे.)

उ०—बळ पायाळ चलवियो बोलै, जुग बोलियो घणा दिन जाय । माहव राव मुक्यो मेवाड़ै, केसव मूझ न मुक हो काय ।

—हरिदास केसरियो

पायाळमुख-सं०पु० [सं० पाताळ+मुख] वृक्ष, पादप, दरख्त ।

(अ.मा.)

पायुभेद-सं०पु० [सं०] चन्द्र ग्रहण के मोक्ष का एक प्रकार ।

पायू-सं०पु० [सं० पायु] मलद्वार, गुदा (डि.को.)

पायोड़ो-भू०का०कृ०—१ पिलाया हुआ, पान कराया हुआ ।

२ प्राप्त किया हुआ ।

३ भोगा हुआ, अनुभव किया हुआ ।

४ खाया हुआ, भोजन किया हुआ ।

५ समझाया हुआ, तह तक पहुचाया हुआ ।

६ देखा हुआ, साक्षात्कार किया हुआ ।

७ किसी बात में किसी के बराबर पहुंचा हुआ ।

८ समर्थ ।

९ धूम्रपान कराया हुआ ।

(स्त्री० पायोड़ी)

पायो-सं०पु० [सं० पाद] १ बन्दूक का घोड़ा, खटका ।

२ एक बार में सेंक कर या तल कर निकाली जाने वाली भोजन-सामग्री ।

ज्यूं—सेव रौ पायौ, पुड़ियां रौ पायौ ।

३ नक्षत्र का चतुर्थांश समय ।

वि०वि०—प्रत्येक नक्षत्र के चार पाद माने जाते हैं जिसमें प्रथम पाद सुवर्ण, द्वितीय पाद रौप्य, तृतीय पाद ताम्र और चतुर्थ पाद लोहे का होता है ।

मतान्तर से घनिष्ठा से ५ नक्षत्र तक का स्वर्णपाद, आर्द्रा से १० नक्षत्र तक का रौप्यपाद, विशाखा से ७ नक्षत्र तक का ताम्रपाद तथा शेष ५ नक्षत्र लोहपाद माने जाते हैं ।

४ खम्भा, स्तंभ।

५ एक प्रकार की बीमारी जो घोड़े के पैर में हुआ करती है। (शा.हो)

६ पद, ओहदा।

उ०—बादसाह नूं वचन पसंद आवियौ अर उण रौ पायौ बधाइयौ। —नी.प्र.

७ वश, अधिकार। उ०—हर एक तफा नूं आपरा पाया में राखै। —नी प्र.

८ देखो 'पागौ' ((रू.भे.)

उ०—खातोड़ा तू मोल चंदण रौ रूंख काढ घड़ लाजे रंग री ढोलियौ, आया पाया रतन जड़ाव ईसां ढळावौ जाभा हींगळू।—लो गी.

९ देखो 'पद' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—मुगति पहुता अनुक्रमि मुनिवरु, स्री ढढण रिसि गयौ जी। समयसुंदर कहइ हुं ए साधना, प्रतिदिन प्रणमुं पायौ जी।—स.कु.

पारंग, पारंगत–वि० [सं० पारगत] १ पार गया हुआ।

२ पूर्ण पंडित, किसी विषय का पूर्ण जानकार।

उ०—दादू नमौ नमौ निरंजनम्, नमस्कार गुरु देवतः। वदनम् सरव साधवा, प्रणामं पारंगतः।—दादूवांणी

रू०भे०—पारगत।

पारंद–सं०पु० [?] १ बाण, तीर (अ.मा)

२ देखो 'पारींद्र' (रू.भे) (ह नां मा.) (अ.मा.)

पारंपर–सं०पु०—आरपार ?

उ०—साधां समीपै पूभसी, घर छोड़ी हो होसी अणगार। पंच समिति तीन गुप्ति सूं, घोर तपसी हो होसी पारंपार —जयवांणी

पारंभ—देखो 'प्रारंभ' (रू.भे.)

उ०—१ ऐ घोड़ा ऐ आदमी, कहौ नी आया काह। कोई मोटौ पारंभ कियौ, आरंभ निमौ अलाह।—पी.ग्रं.

उ०—२ सझि आउघ तिम रूप सनाही, आभूखण आभरेणे अंग। पारंभ मीर घड़ा गुहि-पाखर, जोधा सूं रचियौ रिण रंग। —दूदौ

उ०—३ आयउ राजांन सिंहासण ऊतर, सिध साधक तेड़िया सिध। पारंभ की कुंवरि परणावण, वेह बांधी भली विधि। —महादेव पारवती री वेलि

उ०—४ पारंभ करण आरंभ में, लियण खंभ सोरंभ जस। रख-पाळ मंडोवर राखिया, भू डंडे रवखे अडस।—गु.रू बं.

उ०—५ जिस वखत छत्तीस वंस राजकुळ उमराव सिलह आवधूं सैं कड़ाचूड़ होयकै पखरे तूं चढि आयै, दळ का पारंभ समंद-सा हरसावै।—सू प्र.

यौ०—पारंभ-गुर।

पारंभगुर, पारभगुरु, पारभगुरू–वि० [सं० पारंभगुरु] १ महान कार्य करने वाला, यश का कार्य करने वाला। उ०—पारंभगुरु तूझ सपेखै 'पातल', बडा सुरिंद मिळि करै विचार। किम खग धार चलावी कीरति, घन आवियौ-स किम खगधार।—दुरसौ आढ़ौ

२ आरंभ किए हुए कार्य को पूर्ण करने वाला।

पार–वि० [सं० पारम्] दूसरा, पराया।

सं०पु० [सं० पार] १ दूर तक फैली हुई किसी वस्तु अथवा नदी, जलाशय आदि का दूसरी ओर का किनारा, अपर तट।

उ०—१ संन्यासिए जोगिए तपसि तापसिए, कांई इवड़ा हठ निग्रह किया। प्रांणी भव सागर वेलि पढंतां, थिया पार तरि पारि थिया। —वेलि

उ०—२ पार उतारै पूछियौ, कविराज हकारै। कठै ब्रह्म राकस कहौ, इम रांम उचारै।—सू.प्र.

मुहा०—१ पार उतर जाणौ—मतलब साध कर अलग हो जाना, नदी आदि के बीच से होते हुए दूसरे किनारे पर पहुंचाना, उद्धार हो जाना, किसी काम को पूरा न कर चुकना, सिद्धि या सफलता प्राप्त करना, मर कर समाप्त होना।

२ पार उतरणौ—देखो 'पार उतर जाणौ' (२) (३) (४) व (५)

३ पार उतारणौ—दूसरे किनारे पर पहुंचाना, किसी कार्य को पूरा कर चुकना, उद्धार करना, मार डालना, समाप्त करना।

४ पार करणौ—नदी आदि के बीच से होते हुए उसके दूसरे किनारे पर पहुंचना, दुर्गम मार्ग तै करना, उद्धार करना।

५ पार लगणौ—पूरा हो सकना।

६ पार लगाणौ—किसी वस्तु के बीच से ले जाकर उसके दूसरे किनारे पर पहुंचाना, कष्ट या दुख के बाहर करना, पूरा करना, समाप्त करना।

७ पार होणौ—दूर तक फैली हुई किसी वस्तु के बीच से होते हुए उसके दूसरे किनारे पर पहुंचाना, किसी काम को पूरा कर चुकना, मतलब साध कर अलग हो जाना।

[सं० पारम्] २ दूसरी ओर, दूसरी तरफ।

उ०—धवळ पयंपै रे धणी, की दुमनौ घण भार। ओडे घर री आवगी, करूं पहाड़ां पार।—वी.स.

मुहा०—१ पार करणौ—किसी वस्तु के ऊपर, नीचे या भीतर होते हुए उसकी दूसरी ओर पहुंचना।

२ पार होणौ—किसी वस्तु पर से जाकर, उसे लांघ कर या उसमें घुस कर उसके दूसरी तरफ निकलना।

३ किसी वस्तु के पूरे विस्तार के बीचोंबीच से गई हुई कल्पित रेखा के दोनों छोरों पर पड़ने वाले तटों या पार्श्वों में से कोई एक ओर या तरफ।

४ सीमा, छोर, अन्त, हद। उ०—१ संमत मेक सपत्त मिळै

पुणसठी छमच्छर । सरद पार हिमवार, सकळ रित हू रित सुंदर ।
—रा.रू.

उ०—२ पीठ धरणी-धर पट्टी, हरिरिंत चित्रणहार । तोई तोरा चरितां तणौ, परम न लागै पार ।—ह.र.

उ०—३ महमाया माया निमो, परम न जांणै पार । ते हिज निपाया तीन गुण, कै जाया करतार ।—पो.ग्रं.

मुहा०—१ पार पड़णौ—किसी कार्य का पूरा होना ।

२ पार पाड़णौ—किसी कार्य को पूरा करना ।

३ पार पाणौ—किसी के ग्रंत तक पहुचना ।

५ शत्रु, दुश्मन । उ०—पहली झेलै पार री, बाहै ग्रंस उतार । जोवौ भाभी जेठ री, बळिहारी सौ बार ।—वी.स.

६ चोर (ह.नां.मा.)

७ किसी वस्तु का ग्रधिक से ग्रधिक परिमाण ।

उ०—कर लहमकर कीधा कतळ, पार पखै परमार । डूया रूठै देवरज, धारा काळी धार ।—बां.दा.

रू०भे०—पारि ।

पारग्रपार-सं०पु०यौ०—परमेश्वर, ईश्वर (ह.नां.मा.) (नां.मा.)

पारउ—देखो 'पारौ' (रू.भे.)(उ.र.)

पारक-सं०पु० [ग्रं० पार्क] १ बगीचा, उपवन ।

२ देखो 'पारकर' (रू.भे.)

३ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

पारकर-सं०पु०—१ राठौड़ों के प्रसिद्ध तेरह वंशों में से एक वंश ।

२ पारकर नामक प्रांत में पाया जाने वाला घोड़ा

पारकियौ—देखो 'पारकौ' (ग्रल्पा०, रू.भे)

पारकी-वि० [सं० परकीय] १ पराई, दूसरे की ।

उ०—पड़ो न छेड़ै पारकी, चिहुं वरण विचाळा । ऐसा राज करै ग्रवध, दसरथ नृप बाळा ।—र.रू.

२ शत्रु की । उ०—करै धर पारकी ग्रापणी जिकै नर । केवियां सीस खग-पांण करणा कचर ।—हा.झा.

३ देखो 'पारकौ' (रू.भे.)

पारकौ-वि० [सं० परकीय] (स्त्री० पारकी) १ ग्रन्य का, दूसरे का, पराया । उ०—सासू मंत्र ज साज, पूत जण्या जे पारका । ज्यांरी पारख ग्राज, सांची व्हैगी सावरा ।—रांमनाथ कवियौ

२ शत्रु का । उ०—घोड़ा चढणौ सीखिया, भाभी किसड़े कांम । बंब सुणीजे पारकौ, लीजे हात लगांम ।—वी स.

ग्रल्पा०—पारकियौ ।

पारक्खड़ी—देखो 'परीक्षा' (ग्रल्पा०, रू भे.)

उ०—हंसा ग्रा पारक्खड़ी, छीलर जळ न पियंत । कै पाबासर पीवणौ, कै तिरसाहि मरत ।—ग्रज्ञात

पारख—१ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

उ०—मेळ उखेळे मंडळी, ग्रस गज ऊरवड़ांह । खूंद लखै भाराथ कर, पारख हाथ भड़ांह ।—रा.रू.

पारखणौ, पारखबौ—देखो 'परखणौ, परखबौ' (रू.भे.)

पारखणहार, हारौ (हारी), पारखणियौ—वि० ।

पारखिग्रोड़ौ, पारखियोड़ौ, पारख्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पारखीजणौ, पारखीजबौ—कर्म वा० ।

पारखत, पारखद—देखो 'पारसद' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

उ०—हरजन को मारग जुदौ, वे जम लोक न ग्राय । चढ विमांन वैकूंठ कूं, लिय पारखत जाय ।—गजउद्धार

पारखा—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

उ०—देव गुरु धरम नहीं पारखा । सगळाई जांणै सारखा ।
—जयवांणी

पारखि—१ देखो 'परीक्षक' (रू भे.)

उ०—जुध पारखि रमतै जोधा रवि, काळा घाट वणावत केव । खापर घड़ 'रतनसी' खेडेचौ, विजड़ै बाथां मिळिया वेव ।—दूदौ

२ देखो 'परीक्षा' (रू भे.)

पारखियोड़ौ—देखो 'परखियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पारखियोड़ी)

पारखी, पारखु, पारखू—देखो 'परीक्षक' (रू.भे.)

उ०—१ चम्रण पड़ियौ चौबटै, लेउड़ा फिर फिर जाय । ग्रासी चंनण रौ पारखी, लेसी मोल चुकाय ।—ग्रज्ञात

उ०—२ ताहरां मूरिखै रौ नांम रतन पारखू दीयौ । रतन परखावण लोक ग्रावै ।—चौबोली

पारखौ—१ देखो 'परीक्षा' (मह., रू.भे.)

उ०—किया जिता समवड़ो 'कलावत', पुरख जिकां सेविया पग । मोटां एह पारखौ मारू, लता चढै तर तीस लग ।—संकर बारहठ

२ देखो 'परीक्षक' (ग्रल्पा., रू.भे.)

पारग-वि० [सं०] पार जाने वाला ।

उ०—छत्री को धरम धार को मारग, कवेसरां की साख निरवाह सूं पारग ।—रा.रू.

पारग्खड़ी—देखो 'परीक्षा' (ग्रल्पा., रू.भे)

पारगत—देखो 'पारंगत' (रू.भे.)

पारगांमी-वि०यौ० [सं० पार+गामिन्] पार जाने वाला, पार उतरने वाला ।

पारचौ-सं०पु० [सं० पारज] १ स्वर्ण, सोना ।

उ०—हाथी पालकी सात पारचां रो खिलत ग्रनायत हुई ।
— द.दा.

[फा० पार्च.] २ कपड़ा, वस्त्र ।

३ कपड़े का टुकड़ा ।

पारजात, पारजातक, पारजाति, पारजाती—देखो 'पारिजात' (रू.भे)
(ग्र मा , डि.को., नां मा.)

उ०—१ दंडकाळ करंगा तरेस सी गणेस दंत, सूर प्रळै रसम्मां

मरोस सुधा सार । चंडी सूळ पारजात, मराळां पंकतां चंगी, किर-
माळां मोज पंगी कोसल्या कंवार ।—र.रू.

उ०—२ मंदार पारजाती कळप, हरिचंदन संतांन तर। परसियो 'अर्भ' व्रंदा विपन, कुंज पुंज तरवर निकर ।—रा.रू.

उ०—३ भांभी पारजाती री कदाच ऐळी जावै झाली । रेणी दुर्दां-
पति री न जावै खाली रीझ ।—दुरगादत्त बारहठ

पारजीत-वि० [सं० पार+जीत] पार जाने वाला ?

उ०—पारजीत जोगेन्द्र, थयो गोरख अविनासी । पारजीत खटजती, नाथ नव सिद्ध चौरासी । पारजीत वैराग हुवा, चौवीस तीथकर । पारजीत चौवीस, पीर मोटा पैगंबर । पार रौ बोध लाधण प्रथम, आपै अकल आधारणी । जिण पारजीत आखुं जुगत, सुमत समापै चारिणी ।—पा.प्र.

रू०भे०—पाराजीत ।

पारटी-सं०स्त्री० [अं० पार्टी] १ मण्डली, दल ।

२ दावत, भोज ।

पारणउ—देखो 'पारणौ' (रू भे)

उ०—करहा, इण कुळि गांमडइ, किहां स नागरवेलि । करि कइरां ही पारणउ, अइ दिन यंही ठेलि ।—ढो.मा.

पारणी—देखो 'परणी' (रू.भे)

उ०—पणवंती पारणी सीळवंती सतवंती अति मुगती हालियौ कियां साथै कुळवंती ।—रा.रू.

पारणौ-सं०पु० [स० पारणम्] १ किसी व्रत या उपवास के बाद दूसरे दिन किया जाने वाला प्रथम भोजन ।

उ०—१ बरित करूं घरि आपणइं, पारणौ कीधौ द्वादसी जोग । दोई दिन स्वांमी थे विलंबज्यौ, तेरस कइ दिन करज्यौ हो भोग ।
—वी.दे.

उ०—२ दोयां में एक जणौ वेलै-वेलै पारणौ करै तिणनै कह्यौ—थें तौ तपस्या ठीक करौ छौ पिण दूजौ ते तौ करै नहीं ।—भि.द्र.

२ तृप्त करने की क्रिया का भाव ।

रू०भे०—पारणउ ।

पारत—देखो 'पारद' (रू.भे.)

पारत्थ—देखो 'पारथ' (रू.भे)

उ०—मेड़तियो 'सूरो' पण समत्थ । हेड़वण दुयण पारत्थ हत्थ ।
—रा.रू.

पारत्थणौ, पारत्थबौ—देखो 'प्रारथणौ, प्रारथबौ' (रू.भे.)

उ०—कुळ तूझ विना जायै कुणै, मेछ महण रण मत्थियौ । ईखे समाथ 'अमसाह' नूं, प्रथीनाथ पारत्थियौ ।—रा.रू.

पारत्थणहार, हारौ (हारी), पारत्थणियौ—वि० ।

पारत्थिओड़ौ, पारत्थियोड़ौ, पारत्थ्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पारत्थीजणौ, पारत्थीजबौ—कर्म वा० ।

पारत्थियोड़ौ—देखो 'प्रारथियोड़ौ' (रू.भे)

(स्त्री० पारत्थियोड़ी)

पारथ-सं०पु०.[सं० पार्थ] १ पृथा के पुत्र—युधिष्ठिर, भीम व अर्जुन आदि में से कोई एक ।

२ अर्जुन, पार्थ (अ.मा., ह.नां.मा.)

उ०—पारथ हेकरसां हथणापुर, हटियौ त्रिमा पड़तां हाथ । देख जका दुरजोधण कीधी, पछै तका कीधी कांइ पाथ ।—जमणी बारहठ

३ अर्जुन नामक वृक्ष ।

४ श्वेत* (डिं को.)

५ श्याम-काला* (डिं.को.)

रू०भे०—पत्थ, पत्थयं, पथ, पथ्थ, पराथ, पाथ, पारत्थ, पारथि, पारथी, पारथ्थ, पारथ्थी, पाराथ, परारथ ।

पारथणौ, पारथबौ—देखो 'प्रारथणौ, प्रारथबौ' (रू.भे)

उ०—जग मुगति भुगति दाता 'जगा', दांन मांन वंछत दियै । पारथै किसूं मेळग कुपह, प्रभू नाथ पारथियै ।—ज.खि.

पारथणहार, हारौ (हारी), पारथणियौ—वि० ।

पारथिओड़ौ, पारथियोड़ौ, पारथ्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पारथीजणौ, पारथीजबौ—कर्म वा० ।

पारथव—देखो 'पारथिव' (रू.भे.)

(अ.मा., ह.नां.मा.)

पारथि—देखो 'पारथ' (रू.भे.)

उ०—तउ उतारिइं अस्त्र चढ़ी नइं आंणिउ । माथा भला भोडी पारथि तांणिउ ।—सालिभद्र सूरि

पारथियोड़ौ—देखो 'प्रारथियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पारथियोड़ी)

पारथिव-वि० [सं० पार्थिव] १ पृथ्वी सम्बन्धी ।

२ मिट्टी का बना हुआ ।

सं०पु० [सं० पार्थिवः] १ राजा ।

२ बादशाह, सम्राट ।

३ तगर का पेड़ ।

४ मंगल ग्रह ।

५ मिट्टी का बर्तन ।

६ पृथ्वी पर निवास करने वाला प्राणी ।

रू०भे०—पार्थिव, पारथव ।

यौ०—पारथिवलिंग ।

पारथिवलिंग-सं०पु० [सं० पार्थिवलिंग] मिट्टी का शिवलिंग ।

पारथी-वि०—१ प्रार्थना करने वाला, प्रार्थी ।

२ पार्थिव शिव-लिंग की अर्चना ।

३ कवि । उ०—लहरी परियाव ब्रवण दत लाखां, कीरत सुण आयो सौ कोस । पहडै तू रांणा पारथियां, 'दीपा' इण कळजुग नै दोस ।—ओपो आढ़ौ

४ योद्धा, वीर । उ०—'चद' 'ढेवे' जिसा पारथी मन चला, सांप-

रत करदई काच सीसी। आवड़ा-फूल रावत पड़ै अबीढा, वढै संग सांवळा सातबीसी।—गिरवरदांन सांदू

पारथी—देखो 'प्रारथना' (रू.भे.)

उ०—दुजिद वेद मंत्र दाखि, आसिवाद उच्चरै। सतोत्र पाठ ह्वै सकत्ति, कोटि पारथी करै।—सू.प्र.

पारथ्य, पारथ्थी—देखो 'पारथ' (रू.भे.)

उ०—जिण करै समर पारथ्य जोड़। सुभांत पड़ियौ लोहां अरोड़।—शि.सु.रू.

पारद-वि० [सं०] पार देने वाला। उ०—सारद ससि सारद वदन, सारद कविता सुद्ध। अदसारद पारद उकति, करण विसारद बुद्ध।—रा.रू.

सं०पु० [सं०] १ पारा। उ०—जोगी नेमनाथ सेवै जिण। तेरह रती दीध पारद तिण।—सू.प्र.

२ पारस में रहने वाली एक जाति विशेष या इस जाति का व्यक्ति।

३ सफेद, श्वेत* (डि.को.)

रू०भे०—पारत।

पारदरसक-वि० [सं० पारदर्शक] जिसके भीतर से होकर प्रकाश की किरणों के जा सकने के कारण उस पार की वस्तुयें दिखाई दें।

पारदरसी-वि० [सं० पारदर्शिन्] १ उस पार तक देखने वाला।

२ दूरदर्शी, चतुर, बुद्धिमान।

पारध-सं०पु० [देशज] १ खुला मैदान। उ०—आरंभ रांम आरंभ गुरु, पारध ही फरसांधरण। गजसिंघ महण गभीर पण, कळा तेज सेहस किरण।—गु.रू.व.

२ देखो 'पारधी' (मह., रू.भे.)

पारधि, पारधी, पारधियौ, पारध्धी-सं०पु० [सं० परिधान=आच्छादनं=आड़ में शिकार करने वाला अथवा पापर्द्धि] बहेलिया, शिकारी।

उ०—१ हिरण रहै थिर होय, बीणा सुर सूं 'बांकला'। जिण कारण सूं जोय, पारधियां पांनै पड़ै।—बां.दा.

उ०—२ हां, सांमी! जावै हो चित्त इम कहै, वलै बोल्या मुनिराय हो। तिण बाग में हो कोई पारधी वसै, तो जाय के नहीं जाय हो।—जयवांणी

उ०—३ नांम नीति अनीति सब, पहली बांधे बंद। पसू न जांणै पारधी, दादू रोपै फंद।—दादूवांणी

उ०—४ दुजड दांत धालाय, आग दवंगे उठते। पारध्धी पाडतौ, तुंड उप्पाडै कूंते।—गु.रू.बं.

२ भील। उ०—'पाल' छाड जाय पागड़ौ, राख कोट सम रात। संतरां पारधिया सेहत, चांदौ ढेमौ साथ।—पा.प्र.

रू०भे०—पाराध, पाराधी, पारिध।

पारपंथक-सं०पु० [सं० पारिपंथिक] डाकू, चोर (ह.नां.मा.)

पारपखै-वि० [?] असंख्य, अपार, असीम। उ०—तिण समै धरती माहे ऊपरा ऊपरी सुगाळ हुवा छै। सु धांणियां रै धांन पारपखै भेळौ हुवौ छै।—नैणसी

पारपलव—देखो 'पारिपलव' (रू.भे.) (अ.मा.)

पारबत, पारबतां, पारबती—देखो 'पारवती' (रू.भे.) (डि.को.) (ह.नां.मा.)

उ०—वीरभद्र गणराज, सहत पारबती संकर। खिल नारद खेचरा, भूत भूचरा भयंकर।—सू.प्र.

पारबतीनाथ-सं०पु० [सं० पार्वतीनाथ] शिव, महादेव] (ह.नां.मा)

पारबतीपति-सं०पु० [सं० पार्वतीपति] शिव, महादेव (डि.नां.मा.)

पारबत्ती, पारब्बती—देखो 'पारवती' (रू.भे.)

उ०—अब तौ सरणै आवियौ, वेगी बाहर कर। ब्रह्मांणी पारब्बती, गगा गोदावर।—ठा० जूझारसिंह मेड़तियौ

पारब्रह्म—देखो 'परब्रह्म' (रू.भे.)

उ०—परमतत परभेद, सकळ जुग-मंडण जोगी। पारब्रह्म हरि अखिल, रस रोग रसना नहीं भोगी।—ह.पु.वा.

पारमारथिक-वि० [सं० पारमार्थिक] १ परमार्थसम्बन्धी, जिससे मनुष्य को पारलौकिक सुख हो।

२ सदा ज्यों का त्यों रहने वाला, वास्तविक।

पारलियामेंट-वि० [अं० पार्लियामेण्ट] देश या राज्य के शासन के नियम बनाने वाली सभा, संसद।

पारलौकिक-वि० [सं०] स्वर्गसम्बन्धी, परलोकसम्बन्धी।

पारवण-सं०पु० [सं० पार्वण] किसी पर्व में किया जाने वाला श्राद्ध।

पारवतां—देखो 'पारवती' (रू.भे.)

पारवती, पारवत्ती-सं०स्त्री० [सं० पार्वती] हिमालय पर्वत की कन्या, शिव की अर्द्धांगिनी (अ.मा.)

उ०—१ पेख पारवती अनै पदमावती। अनंत रै ऊपरा उतारौ आरती।—पी ग्रं.

उ०—२ सायंता पाखती लीधां राठौड़ सहत्तौ सती, पेखै पारवत्ती करै आरत्ती प्रसंन।—किसनसिंह राठौड़ रौ गीत

पर्या०—अंबिका, अद्रजा, ईसरी, उमा, गिरिजा, गौरी, जगदंबा, त्रिलोचना, भवांनी, मंगळा, रुद्रांणी, संकर-घरणी, संकरी, सकती, सती, सिवा, हेमवती।

रू०भे०—पारबत, पारबत्ती, पारब्बती, पारबतां।

पारवारयं-वि० [?] पार होने वाला, पार निकलने वाला।

उ०—उभै दळै उचारयं, मचै सु मार मारयं। विसक्ख पारवारयं, भड़ां सनाह भारयं।—रा.रू.

पारवाळ-सं०पु० [सं० प्रहारिवाल] आंख की पलक के भीतर निकलने वाले वे वाल जो आंख में खटका करते और रोशनी मिटा देते हैं।

रू०भे०—परवाळ, परवाळ।

पारब्रहंम, पारब्रह्म—देखो 'परब्रह्म' (रू.भे.)

उ०—तू पारब्रह्म पराति पर, अळगां अळगेरा ।
—केसोदास गाडण

पारस-वि० [?] चंगा, स्वच्छ, निरोग ।
सं०पु० [सं० पारस्य] १ हिन्दुस्तान के पश्चिम में अफगानिस्तान के आगे का एक देश ।
[सं० स्पर्श] २ वह कल्पित पत्थर जिसको छूने से लोहा सोना बन जाता है । उ०—१ आसण अनंत फिरे ता फेरचा, गावै था सो गाया । पारस परसि भया मन कंचन, निज बिसरांम समाया ।
—ह.पु.वा.
उ०—२ जण ही सू जड़ियोह, मद गाढौ करि माढवां । पारस खुलि पड़ियोह, रोयां मिळै न राजिया ।—किरपारांम
[सं० पार्श्व] ३ निकट का भाग, बगल ।
उ०—पारस प्रासाद सेन संपेखे, जांणि मयंक कि जळहरी । मेरु पाखती नखित्र माळा, ध्रू माळा संकर धरी ।—वेलि
४ परशुराम ।
५ देखो 'पारसनाथ' ।
रू०भे०—पारसि ।

पारसद-सं०पु० [सं० पार्षदः] १ पास रहने वाला, सेवक ।
२ परिषद में बैठने वाला, परिषद का सदस्य, पंच (कौंसलर)
३ गण ।
ज्यूं—सिव रा पारसद, विस्णु रा पारसद ।
४ विख्यात पुरुष ।
रू०भे०—पारखत, पारखद ।

पारसदेव—देखो 'पारसनाथ' ।
उ०—अज्जु सफल अवतार असाड़ा, दिट्ठा पारसदेव । बुट्ठा मेह अमियदा, तुट्ठा साहिब सतमेव ।—ध.व.ग्रं.

पारसनाथ-सं०पु० [सं० पार्श्वनाथ] जैनियों के तेईसवें तीर्थंकर ।
उ०—पारसनाथ सरिखुं सहु रे, एह ना गुण छइ अनंत । समय सुंदर कहइ जउ मिलइ, इंद्र तउ पिण कहि न सकंत ।—स.कु.
रू०भे०—पारस, पारसनाह, पास, पासि ।
अल्पा०—पासौ ।

पारसपीपळ-सं०पु० [सं० पारीशपिप्पल] पीपल की जाति का एक प्रकार का वृक्ष विशेष ।
वि०वि०—पारिस पिप्पल का वृक्ष भी पीपल के समान होता है, परन्तु पीपल पर फूल नहीं लगते और पारिश पिप्पल में भिंडी के समान ही पीले रंग के फूल आते हैं ।
अल्पा०—पारसपीपळी, पारिसपीपळी ।

पारसपीपळी-सं०स्त्री०—देखो 'पारसपीपळ' (अल्पा०, रू.भे.)

पारसव—देखो 'पारसव' (रू.भे.) (डिं.को.)

पारसल-सं०पु० [अं० पार्सल] रेल या डाक से रवाना किया हुआ पैकेट या गट्ठर, पुलिन्दा ।

पारसव-सं०पु० [सं० पारशवः] १ लोहा (ह.नां.मा.)
२ पराई स्त्री से उत्पन्न पुत्र, वर्णसंकर ।
३ हरामी, दोगला ।
क्रि०वि० [सं० पार्श्व] समीप, निकट (अ.मा.)
रू०भे०—पसवाड़, पारसब ।

पारसियौ—देखो 'पारसीयौ' (रू.भे.)

पारसी-सं०स्त्री० [देशज] १ सांकेतिक भाषा या बोली । उ०—जठै किसतूरी पागां रा बंध पछांण्या । अै तो निडर साभाव रा रसिया । मिजमांन जांण्या । जठै पारसी में बोली । पनां नैं बधाई दीनी ।
—पना वीरमदे री वात
२ सकेत, इशारा । उ०—प्रभु कुण जांणिसै साच री पारसी । निमो थंभि नीसरै गाजियो नारसी ।—पी ग्रं.
३ देखो 'फारसी' (रू.भे.)
उ०—१ पांच बखत निवाज रा करणहार, सुद्ध कलमें रा पढणहार पेसता, आरबी, पारसी रा बोलणहार ।—रा.सा.सं.
उ०—२ जगलोक वांण सीखै जवन, पढै ब्रह्म मुख पारसी । हित देव सेव आधा हुआ, काई लागां आरसी ।—रा.सा.सं.

पारसीअजमोद-सं०स्त्री० [सं० पारसीकयवानी] खुरासानी, अजवायन ।

पारसीयौ-सं०पु० [देशज] मिट्टी या पत्थर का बना चौड़ा मुंह का छोटा बर्तन ।
रू०भे०—पारसियौ ।

पाराइण—देखो 'पारायण' (रू.भे.)

पाराजातपत-सं०पु० [सं० प्रजात+पति] इन्द्र (अ.मा.)

पाराजीत—देखो 'पारजीत' (रू.भे.)

पारातीरत, पारातीरथ-सं०पु० [सं० परातीर्थ] वेश्यागमन, व्यभिचार
उ०—विळखीजै रिणतूर वागियां, अदंग बागियां हुरख मचै । धारा तीरथ चढ़ै धूजणी, पारातीरथ कियां पछै ।
—कविराजा बांकीदास

पाराथ-सं०पु०—१ योद्धा, वीर ।
२ देखो 'पारथ' (रू.भे.) (अ.मा.)
उ०—अहंकार नब्बाब दज्जोण एहौ । जठै हिंदवानाथ पाराथ जेहौ ।—सू.प्र.
३ देखो 'प्रारथना' (रू.भे.)
उ०—पाराथ सेवग आय आपण करण सिध मन काथ । दसदूण-हाथ समाथ दाटक, मार खळ दसमाथ ।—र.ज.प्र.

पाराथणो, पाराथवो—देखो 'प्रारथणौ, प्रारथबो' (रू.भे.)
उ०—साहजादे पाराथियां, सको कमंधां साथ । सूर तरस्सै बोलिया, मूछ परस्सै हाथ ।—रा.रू.
पाराथणहार, हारो (हारी), पाराथणियो—वि० ।
पाराथिओड़ो, पाराथियोड़ो, पाराथ्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पाराथीजणो, पाराथीजबो—कर्म वा० ।

पारथियोड़ौ—देखो 'प्रारथियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पाराथियोड़ी)

पाराध, पाराधी—देखो 'पारधी' (रू.भे.)
उ०—पैला री दावण प्रथी रखिया पावू राव। थां ऊभां पाराधियां घर ली जींद धकाय।—पा.प्र.

पारायण-सं०पु० [सं०] १ किसी अनुष्ठान की की जाने वाली समाप्ति।
२ किसी ग्रंथ का समय बांध कर आद्योपांत पाठ।
३ किसी चीज का बार-बार पढ़ा जाना या कहना।
उ०—बिगड़ी किसमत री परायण बांचै, नाड़ी नाड़ी में नारायण नाचै।—ऊ.का.
४ पूरा करने का कार्य, समाप्ति।
रू०भे०—परायण, पाराइण, पुरायण।

पारायणी-सं०स्त्री०—१ चिंतन या मनन करते हुए समाप्त या पूर्ण करने की क्रिया।
२ सरस्वती।
३ पार पाने वाली, पार तक पहुंचने वाली।
उ०—उभै रूप धारायणी साचेली जिहांन आखें, तारायणी सिला-धू नाचेली नित्याद। पारायणी प्रवाहां आछेली दसा देण पातां, नारायणी रूप नमो काछेली अनाद।—नवलजी लाळस

पारावत-सं०पु०—१ कबूतर।
२ लाल, रक्त वर्ण। (डिं.को.)

पारावार-वि० [सं०] पारंगत, पूर्ण। उ०—च्यार वेद नै व्याकरण, खट सासत्रूं के विनांण। पिंडत विद्या में पारावार जांणै, नवदूण पुरांण।—सू.प्र.
सं०पु०—समुद्र। उ०—दिये मुख दाद दीवांण आलम दुनी, पारा-वार तटै चढ़ कीत पांगी। अब पख चाढ सारंग घरै आवियो, जीत खळ राड़ वाजाड़ जांगी।—सारंगदेव री गीत
२ सीमा, अंत, हद। उ०—हइवर गइवर पाइदळ, पुहवि न पारा-वार। गोरीराउ गिरि आसनउ, गउ गढ़-गजणहार।
—अ. वचनिका

पारासर [सं० पाराशर] १ पाराशर के पुत्र, वेदव्यास।
२ ब्राह्मणों के अंतर्गत एक जाति विशेष।
३ देखो 'परासर' (रू.भे.)
रू०भे०—पारासुर।

पारासुर, पारास्वर—देखो 'पारासर' (१) (रू.भे.)
उ०—पारासुर पैहलाद, सेस गगेव महेसुर। अरिजण नै अकरूर, व्यास रिसि बारट ईसर।—पी.ग्रं.

पारि—देखो 'पार' (रू.भे.)
उ०—बापड़ा कंटक बूडिसै, आइए पारि उतारि। ताहरा सेवग तारिया, तिमि मुनाई तारि।—पी.ग्रं.

पारिख—१ देखो 'परीक्षक' (रू.भे.)
उ०—केते पारिख जौहरी, पंडित ग्याता ध्यांन। जाण्या जाइ न जांणिये, का कह कथिये ग्यांन।—दादूवांणी
२ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)

पारिखा—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—नीसांण छोड धज प्रांण निज, गयंद फतैगज सारिखा। ऊगी सलाह कच्ची उपरि, पूगी सच्ची पारिखा।—रा.रू.

पारिखू—देखो 'परीक्षक' (रू.भे.)
उ०—रतन एक बहु पारिखू, सब मिळ करैं विचार। गूंगे, गहिलैं, बावरैं, दादू वार न पार।—दादूवांणी

पारिखौ—१ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—अग्नि पाड़ण नहीं पारिखौ ए। तिण राजा तूं कठियारा सारिखौ ए।—जयवांणी
२ देखो 'परीक्षक' (रू.भे.)

पारिख्या—देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—जद कुंवर कहै थारी वणी पारिख्या पण कीदी।
—वधी बुहारी री वात

पारिजात, पारिजातक, पारिजाती-सं०पु० [सं० पारिजातः, पारिजातकः] १ इन्द्र के नन्दन कानन का एक देव वृक्ष।
उ०—१ लखमी कौस्तुभ पारिजात, मथ काढै मांही। सुरा धनतर चंद्रमां, निकसे तीह ठाही।—गजउद्धार
उ०—२ अंतर काग हंस सर सायर, चंदन कास्ठ पळासां। इवड़ौ अंतर हरि सिसिपाळई, पारिजातक अरडूसां।—रुक्मणी मंगळ
उ०—३ सुरां झंब रूपी तरां अंब सोभै। लखे पारिजाती तजै मार लोभैं।—रा.रू.
वि०वि०—पुराणानुसार यह वृक्ष समुद्र मंथन के समय निकला था और चौदह रत्नों में से एक है। सत्यभामा को प्रसन्न करने हेतु श्रीकृष्ण इन्द्र से युद्ध करके इसको स्वर्ग से ले आए थे। इसका पूरा उपयोग करके वे इसे पुनः स्वर्ग में रख आए थे।
इसके फूल इच्छानुसार गन्ध देने वाले माने जाते हैं तथा शाखाओं पर भिन्न-भिन्न प्रकार के रत्न लगे हुए बताते हैं। इसको इच्छा-नुसार फल देने वाला भी माना जाता है।
२ फलित ज्योतिष के अनुसार एक शुभ योग।
३ हरसिंगार नामक वृक्ष का नामान्तर।
४ पारियात्र नामक एक सूर्यवंशी राजा। उ०—जे सुत पारिजात क्रत ऊंफळ। बाळ नृपति जे सुतण महाबळ।—सू.प्र.
रू०भे०—परिजात, पारजात, पारजातक, पारजाति, पारजाती।

पारितोसिक-सं०पु० [सं० पारितोषिक] पुरस्कार, इनाम।

पारिध—देखो 'पारधी' (रू.भे.)

पारिपलव-वि० [सं० पारिप्लव] चंचल (ह.नां.मा.)
रू०भे०—परपलव, पारपलव।

पारिपात्र-संपु० [सं० परिपात्र] विंध्य के अन्तर्गत सप्त कुल पर्वतों में से एक।

पारिभासिक-वि० [सं० पारिभाषिक] वह जिसका अर्थ परिभाषा द्वारा सूचित किया जावे।

पारियौ-संपु० [देशज] हल में लोहे की फाल को मजबूती से जमाए रखने के लिए लगाया जाने वाला लकड़ी का उपकरण।

पारिवौ—देखो 'पारेवौ' (रू.भे.)
उ०—काती लेई पिंड कापी नई, ले मांस तू सींचांण रूड़ा पंखी। त्राजुए तोलावी मुझ नइं दियउ, एह पारिवा प्रमांण रूड़ा राजा।
—स.कु.

पारिस—देखो 'पारस' (रू.भे.)

पारिसपीपळ—देखो 'पारसपीपळ' (रू.भे.)

पारींद्र-संपु० [सं०] १ सिंह, शेर।
२ अजगर।
रू०भे०—पारद।

पारी-संस्त्री० [देशज] १ घी रखने का मिट्टी का बना छोटा पात्र।
उ०—मोडां मांनू रे रांम रा मारियां लुपके छुपके घी लोगां रा, पधरावो भरि पारियां।—ऊ.का.
अल्पा०—पारोटियौ, पारोटी।
२ व्यंजन विशेष (?) उ०—पिंडोली नइ पद्मिनी, पोयणि पूंख पटोळि। पारी संकळ पाथरी, पिंडी पाज प्रगोळि।—मा.कां.प्र.
रू०भे०—पाळी।

पारीक-संपु०—छः न्याति ब्राह्मणों की एक शाखा।
रू०भे०—पारीख।

पारीख—१ देखो 'परीक्षा' (रू.भे.)
उ०—यळ अन पहां नजर न आई, पाई किव पूरण पारीख। साहपुरा वाळी हदसाही, तुरंगां भड़ां सवाई तीख।—जवांनजी बारहठ
२ देखो 'पारीक' (रू.भे.)

पारिखौ—देखो 'परीक्षक' (रू.भे.)
उ०—परबत बोल रे ! नर लाखां पूछे, पात भड़ां पारीखो। दीन दाता तें पण कोई दीठो, सोलकी सारीखो।
—जीवराज सोलंकी रौ गीत

पारू-वि० [सं० पारम्] पार करने वाला। उ०—प्रभु पिथि अवतार अणपार पारू। जखं किदरे जास राखें जुहारू।—पी.ग्रं.

पारूठौ—देखो 'अपूठौ' (रू.भे.)
उ०—पारूठे पाए किय पहारि। मारिया मेछ वाजिन्न मारि।
—रा.ज.सी.

पारेचौ-संस्त्री० [देशज] पत्थर की वह कुंडी जिसमें रहट की माल से पानी गिरता है।
रू०भे०—पारेसौ।

पारेवउ-संपु०—१ वस्त्र विशेष। उ०—सुवरण्ण पढि, पंचवरण्ण पढि, फरणपढि, माठउं जादर, भातीगतुं जादर पोती पारेवउ-पट साउल मेघाडंबर।—व.स.
२ देखो 'पारेवौ' (रू.भे.)
उ०—पारेवउ सींचांणा पुखे अवतरी, पढ़ि यूं पारेवउ खोला माय राजा।—स कु.

पारेवड़ी—देखो 'पारेवी' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—पूरे मासे पारेवड़ी, इम करै अरदास। जादवराय बंधन पड़्या पग माहरे, ढोला करै कोई पास।—जयवांणी

पारेवड़ौ—देखो 'पारेवौ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—प्रीतइ भलां पारेवड़ां, केता अवर विहंग। वात न लहइ वियोगनी, सदा निरंतर संग।—मा.कां.प्र.
(स्त्री० पारेवड़ी)

पारेवर—देखो 'पारेवौ' (रू.भे.)
उ०—नळ वाजि विहंगां राग नरै। पारेवर बोलैं जेण परै।
—गु.रू.वं

पारेवी-संस्त्री० [सं० पारावती] कबूतरी, कपोती।
उ०—पारेवी ज्यूं पुसतकां, कुकव बाज बस थाय। पांखां ज्यूं हा पांनड़ा, जत्र तत्र व्है जाय।—बां.दा.
रू०भे०—परेवी।
अल्पा०—पारेवड़ी।

पारेवौ-संपु० [सं० पारावत] (स्त्री० पारेवी) १ कपोत, कबूतर।
उ०—१ विधि पाठक सुक सारस रस वंछक, कोविद खंजरीट गतिकार। प्रगलभ लाग दाट पारेवा, विदुर वेस चक्रवाक विहार।
—वेलि
उ०—२ नेहाळू नजरांह, जोई कांमण पर हथ 'जसा'। विरही पारेवाह, तारां ज्यूं तूटै परै।—जसराज
उ०—३ उरि गयवर नइ पग भमर, हालंती गय हूंझ। मारू पारेवाह ज्यूं, अंखी रत्ता मंझ।—ढो.मा.
२ डूंगरपुर में निकलने वाला संगमूसा पत्थर।
रू०भे०—परेवौ, पारिवौ, पारेवउ, पारेवर।
अल्पा०—पारेवड़ौ।

पारेसौ—देखो 'पारेचौ' (रू.भे.)

पारोकिया-विस्त्री० [?] दूर की ?
उ०—बीजुळियां पारोकियां, नीठ ज नीगमियांह। अजइ न सज्जण बाहुड़े, वळि पाछी वळियाह।—ढो.मा.

पारोटियौ, पारोटी—देखो 'पारी' (अल्पा०, रू भे.)

पारोठौ—देखो 'उपरांठौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पारोठी)

पारो-संपु० [सं० पारद] १ साधारण गर्मी या सर्दी में द्रव अवस्था में रहने वाली चांदी की तरह सफेद और चमकीला एक पदार्थ।
(अ.मा.)

उ०—कर पारो काचो कळस, जळ राखियो न जात। नव नहचे ठहरै नहीं, विदर उदर में वात।—बां.दा.

पर्या०—चळ, पारस, पारद, रस, सूत।

मुहा०—१ पारो उतरणो—क्रोध शांत होना।

२ पारो उतारणो—क्रोध शांत करना।

३ पारो चढणो—क्रोध आना।

४ पारो तेज होणो—देखो 'पारो चढणो'।

५ पारो पिलाणो—किसी चीज को बहुत भारी करना।

६ पारो पीणो—बच्चा न होने के लिए पारा खाना।

२ घी रखने का मिट्टी का बना बर्तन।

उ०—लाडी लाखीणीं घारां घूंघाती। पीवर ऊघां री पारां पय पाती।—ऊ.का.

३ देखो 'पार' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—माहरे पापां को छेह न पारो रे, यां बिना घोर अंधारो रे।
—जयवांणी

रू०भे०—पाळो।

पालंखो, पालंठो—देखो 'पालकी' (रू.भे.)

उ०—सज्जण चाल्या हे सखी, वाज्या विरह निसांण। पालखी विसहर भई, मंदिर भयउ मसांण।—ढो.मा.

पाळ-सं०स्त्री०[सं० पालिः पाली] १ पानी को रोकने वाला किनारा, तट, बांध (अ.मा.)

उ०—१ ए वाड़ी, ए बावड़ी, ए सर-केरी पाळ। वै साजण, वै वीहड़ा, रही संभाळ संभाळ।—ढो.मा.

उ०—२ सज्जण बांधे पाळ सिर, सीसा छकियां गाळ। दुरजण फोड़े गाळ दे, प्रीत सरोवर पाळ।—बां.दा.

२ [सं० पालः] हर्र, हरड़ (अ.मा.)

३ देखो 'पायल' (रू.भे.)

उ०—बोली वीणा हंस गत, पग वाजंती पाळ। रायजादी घर अंगणइ, छुटे पटे छंछाळ।—ढो.मा.

रू०भे०—पालि, पाळी।

पाल-सं०पु० [सं० पट] १ तम्बू, सामियाना।

उ०—चिग पड़दारू पाल चमंकै। दांमण जांण सिळाउ दमंकै।
—सू.प्र.

२ नाव के मस्तूल लगा कर बांधा जाने वाला कपड़ा।

क्रि०प्र०—खोलणो, तांणणो, बांधणो।

३ टाट का लम्बा-चौड़ा कपड़ा जो प्रायः बिछाने के काम आता है। [सं० पल्लिः, पल्ली] ४ भीलों की बाहुल्यता वाला गांव।
(मेवाड़)

उ०—पावा गढ इलाखा जोडे बाहिर पारो इलाखो। चोवला भीलां री पाल अनेक येक ही नीको।—केहर प्रकास

४ मना करने या रोकने की क्रिया या भाव।

५ भूसा, घास आदि बिछा कर बनाया गया फलों को पकाने का स्थान।

क्रि०प्र०—देणो।

६ देखो 'फाल' (रू.भे.)

उ०—तठे हीरण पाल सांवनै बाग री भीत कुदीयो। तठै पातसाह लारै मागो।—रीसाळू री वात

पाळउ—देखो 'पाळो' (रू.भे.)

उ०—जिणि दीहे पाळउ पड़इ, टापर तुरी सहाइ। तिणि रिति बूढी ही भुरइ, तरुणी केम रहाइ।—ढो.मा.

पाळक, पालक-वि० [सं० पालक] रक्षक, रक्षा करने वाला।

उ०—१ महागज ग्राह बिछोडण मंत। सनातन केवळ पाळक संत।
—ह.र.

उ०—२ वह तो अखलेस्वर अवगति अनदाता। तत सत जगपाळक जगमाळक त्राता।—ऊ.का.

रू०भे०—पाळग।

सं०पु० [सं० पालकं] एक प्रकार की पत्ती वाला साग।

अल्पा०—पालको।

पालकी-स०स्त्री० [सं० पल्यकं] आदमियों द्वारा कंधे पर उठा कर ले जाई जाने वाली एक प्रकार की सवारी।

उ०—पछै फेर सेनापति नै सांमी देख नै कह्यो—संत पाळा आवै है तो आंपां ई सगळा पाळा जावांला। वधायां पछै म्हैं खुद संतां री पालकी ऊचावूंला।—फुलवाड़ी

रू०भे०—पालंखी, पालखी।

मह०—पालखो।

पालकीखांनो-सं०पु० [सं० पल्यंक+फा० खानः] वह स्थान जहाँ पालकियाँ रखी जाती हैं। उ०—ऊदावत केहरसिंघ रै गळा में ममरकड़ी रहती। नित्य सेर पक्की खीचड़ी खातो। हमै पालकी-खांनो है जठै कंद में हुतो।—बां.दा. ख्यात

पालकीनसीन-सं०पु० [सं० पल्यंक+फा नशीन] पालकी में बैठने वाला।

उ०—इस वर्ज सैं बोले च्यार हजार। सो पालकीनसीन आठ फीलूं के असवार।—सू.प्र.

पालकी-सरोपाव-सं०पु०यौ० [सं० पल्यंक+शिर+पाद] जोधपुर दर-बार द्वारा दिया जाने वाला एक प्रकार का सिरोपाव जिसमें सामान्य रूप से ४७२ रु० व विवाह के समय ५५१ रु० दिए जाते थे।

पालको—देखो 'पालक' (अल्पा०, रू.भे.)

पालखी—देखो 'पालकी' (रू.भे.)

उ०—दीधी वाला पालखी, दीधा हाथी उतम ठाई।—वी.दे.

पालखो—देखो 'पालकी' (मह., रू.भे.)

उ०—सिरोही ना अमराव, कांमदार आदि मतो कियो उदैपुर, जैपुर, जोधपुर वाळां रै पालखो। आंपां रै ई पालखो वणावो। इम विचार,

बांस बांध ऊपर छाया करी, लाल वस्त्र ओढाय पालखो बणायो ।
—भि.द्र.

पाळग-सं०पु० [सं० पालक] १ बादल, मेघ (नां.मा.) (ह.नां मा.)
२ देखो 'पालक' (रू.भे.)
उ०—जीपे दस सिर जंग, समंदां लग दीपै सुजस । ऊ रघुनाथ अभंग, जन पाळग समराथ जग ।—र.ज.प्र.

पाळगर-सं०पु० [सं० पाल+कर] पालन करने वाला, रक्षक ।
उ०—प्रथमी छट्टा पाळगर, नर मट्टा करनार । तखत बयट्टा 'सूध' कवि, थट्टा सहर मझार ।—बां.दा.

पाळगोटी—देखो 'पालथी' (रू.भे.)

पालड़ी-सं०स्त्री० [?] गोष्ठी ।
उ०—गांव रा मठ में अमल री पालड़ी हुई ही, इण वास्तै वूढा-ठाडा लोग उठै जाय जम्या ।—रातवासो

पालड़ो—देखो 'पलड़ो' (रू.भे.)
उ०—पंसेरी इक पालड़ै, पुंगीफळ इक ओड़ । ऊ तोलण सम कर उभै, आ चतुराई खोड़ ।—बां.दा.

पालट-सं०पु० [?] परिवर्तन । उ०—हाथिणी सांढि री दूध पालट हुओ कहै ससि लोक ओ समंद इमरिति कूओ ।—पी.ग्रं.

पालटणो, पालटबो—देखो 'पलटणो, पलटबो' (रू.भे.)
उ०—संभळत धवळ सर साहुलि संभळि, आळूदा ठाकुर अलल । पिंड बहुरूप कि भेख पालटे, फेसरिया ठाहे झिगल ।—वेलि
पालटणहार, हारो (हारी), पालटणियो—वि० ।
पालटिओड़ो, पालटियोड़ो, पालटयोड़ो—भू०का०कृ० ।
पालटीजणो, पालटीजबो—कर्म वा०, भाव वा० ।

पालटियोड़ो—देखो 'पलटियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पालटियोड़ी)

पालठी—देखो 'पालथी' (रू भे.)
उ०—बत्रीस दूखण बारह तनु नां, मारि बइसइ पालठी । अति अथिर आसण दिस्टि चंचल, करइ काया एकठी ।—स.कु.

पाळण-सं०पु० [सं० पालनम्] १ रक्षा, बचाव ।
उ०—अजंपा जाप भगतां उधार, संसार घड़ण पाळण संघार ।
—पी.ग्रं.
२ पोषण, परवरिश ।

पालण-सं०पु० [सं० पालन] १ पथ्य ।
२ रोक, मना ।

पालणड़ो—देखो 'पालणो' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पालणडइ पउढयउ रमइ, म्हारउ बालुयड़उ । हींडोळइ अचिरा माय, म्हारउ नान्हड़ियउ ।—स.कु.

पालणियो—देखो 'पालणो' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—रेसम हूंदा पोतड़ा, पालणियै पोढाय । तो जेहा बेटा तिके, भले झुलाया माय ।—बां.दा.

पाळणो, पाळबो-क्रि०स० [सं० पालनम्] १ भरण-पोषण करना, परवरिश करना । उ०—१ चुगइ चितारइ भी चुगइ, चुगि चुगि चित्तारेह । कुरझी बच्चा मल्हिकइ, दूरि थकां पाळेह ।—ढो.मा.
उ०—२ माळी ग्रीसम मांह, पोख सुजळ द्रुम पाळियो । जिण री जस किम जाय, अत घण वूठां ही 'अजा' ।—बां.दा.
२ निभाना । उ०—१ जिम सालूरां सरवरां, जिम धरणी अर मेह । चंपावरणी वाल्हा, इम पाळीजइ नेह ।—ढो.मा.
उ०—२ धकै फरसधर चक्रधर, पाळी जिण निज पैंज । सो सूरां सिर सेहरो, नर-पुंगव सुर-नंज ।—बां.दा.
३ रक्षा करना ।
पाळणहार, हारो (हारी), पाळणियो—वि० ।
पाळिओड़ो, पाळियोड़ो, पाळयोड़ो—भू०का०कृ० ।
पाळीजणो, पाळीजबो—कर्म वा० ।

पालणो-सं०पु० [सं० पल्यंक] १ बच्चों को सुलाने को रस्सियों के सहारे टंगा हुआ खटोला या छोटा बिस्तरा ।
उ०—पित मो बाधो पालणै, रांमत रिझवारै । इम रांमण सुणि अंगदह, खळ वायक खारै ।—सू प्र.
२ प्रायः छत से टंगा हुआ झूलने का पलंग या बिस्तरा ।
उ०—जठै एक कन्या कही राजा री छै । तिका राकस ले आयो छै। सु पालणै में बैठी हींडै छै । नाम फूलमती छै ।—चौबोली
रू०भे०—पलणो ।
अल्पा०—पालणियो ।

पालणो, पालबो-क्रि०स० [सं० पालनं] १ दूर करना, हटाना ।
उ०—अला तुम्हारो आसरो, अला तुहारी आस । परमेसरजी पालिजै, पीर तणा जम पास ।—पी.ग्रं.
२ रोकना, मना करना । उ०—पग नह मांडै पालियो, रावतियां रो साथ । केहर सूं कुसती करै, घो धीणा मैं हाथ ।—बां.दा.
३ मिटाना, नष्ट करना । उ०—बालम ओछा री पीड़ा कुण पालै । पीहर प्यारो नै सासरियो सालै ।—ऊ.का.
४ भगाना ।
पालणहार, हारो (हारी), पालणियो—वि० ।
पालिओड़ो, पालियोड़ो, पाल्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पालीजणो, पालीजबो—कर्म वा० ।

पालतू-वि० [सं० पालनम्] पाला हुआ, पोसा हुआ ।
उ०—नापो मन में सोची जे हिरण सहर की आड़ी क्यूं जावै । किहीं रो पालतू जे छै ।—नापे सांखले री वारता

पालथी-सं०स्त्री० [सं० पर्य्यस्त=फैलाना] एक प्रकार का बैठने का ढंग, पद्मासन, कमलासन (उ.र.)
उ०—जोगी रो रूप धारण करनै उण धूमाळा माथै पालथी मारनै बैठ गयो ।—फुलवाड़ी
वि०वि०—इसमें दोनों जांघें दोनों ओर फैला कर जमीन पर रखी

जाती हैं और घुटनों पर से दोनों टांगें मोड़ कर बायां पैर दाहिनी जंघा पर और दाहिना पैर बाईं जंघा पर टिका दिया जाता है।

रू०भे०—पलथी, पलाथी, पल्थी, पालंठी, पाळगोठी, पालठी, पालोठी।

पाळम-सं०स्त्री० [?] शकुन चिड़ी।

पाळमहि-सं०पु० [सं० महिपालः] १ बादल, घन (अ.मा.)

२ राजा, नृप।

पालर, पालरियौ-सं०पु० [देशज] वर्षा का पानी।

उ०—१ पालर ठंडो जांमै पायो। स्वाद अनोखो घणौ सरायो।
—ऊ.का.

उ०—२ पालर पय पिव-खाग-पय, पहै समांन प्रभाव। सफरी अर तिय चख सदा, घालै प्रजळा घाव।—रेवतसिंह भाटी

उ०—३ झाडू दै ढांणी झालरिया झाड़ै। पांणी पालरया पोवण पछखाड़ै।—ऊ.का.

पालवणी-सं०पु०—वह गीत छंद जिसके प्रथम द्वाले के प्रथम चरण में १६ मात्रायें, शेष के प्रत्येक चरण में १६ १६ मात्रायें तथा तुकांत चारों चरणों का मिलाया जाता हो।

पालवणौ, पालवबौ—देखो 'पल्लवणौ, पल्लवबौ' (रू.भे.)

उ०—तास थयो प्रारंभ रै थंभ, जिसा रै तरुवर पालवै रे। दुखियां नै दुरलंभ रे, विरही लोकां रै हीयड़ै सालवै रे।—वि.कु.

पालवणहार, हारौ (हारी), पालवणियौ—वि०।

पालविग्रोड़ौ, पालवियोड़ौ, पालव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पालवीजणौ, पालवीजबौ—कर्म वा०।

पालवियोड़ौ—देखो 'पल्लवियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पालवियोड़ी)

पालवी-सं०पु० [सं० पल्लिः+रा.प्र. वी] १ पाल (भीलों की बाहुल्यता वाला ग्राम) के निवासियों का मुखिया।

उ०—पालवी राजा सूं मिळ थांणो सरद करायो। लाख बीस रा पट्टा रो बाहरियो लरायो।—केहर प्रकास

२ भील। उ०—सूरापण रो छाकियो देखै तमासौ ऊगतो सूर, घरा तळै पोड़ां सेस गाजियो घमांम। पालवी हजारां मिळै साजियो घानंको प्रळै, सोलकी ऊजळी खागां वाजियो संग्रांम।
—गंभीरसिंह सोलंकी रो गीत

पाळसेट—देखो 'पलसेटो' (रू.भे.)

उ०—एक काठियां रे वास थो, तठै रावळ वाड़ मांहै कूद पड़ियो। 'लाखै' दीठौ-जुजु जाइ तरै पाळसेट तरवार वाही, सु गुदड़ी मांहै आंगळ वे वैठी।—नैणसी

पालसौ—देखो 'फालसौ' (रू.भे.)

पाळागर-सं०पु० [सं० प्रालेय+गिरि] हिमगिरि, हिमालय।

उ०—कहर वाज लोहाळ लूआळ झाटक कटक, तूटतां बराळां जोस तार्थं। अरक ग्रीखम तणौ तेज तवियो 'अजन', मेछ पाळागरां तणै माथै।—नाथो सांदू

पालापाली, पालापूली-सं०स्त्री०यौ० [देशज] मना करने या रोकने की क्रिया, मनाही, रोक। उ०—म्हारी हाथ जोड़नै थां सगळां नै आ इज अरज है कै थे म्हनै इण कांम वास्तै पालापूली मत करो।
—फुलवाड़ी

पाळास—देखो 'पळास' (रू.भे.)

पालिंगो—देखो 'पल्यंक' (अल्पा०, रू.भे.)

पाळि-सं०स्त्री० [सं० पालिः] १ पंक्ति, कतार। उ०—घटै सांमद्रां हाथियां पाळि थाई। उमै जम्म री जाणि जम्मात आई।—सू.प्र.

२ देखो 'पाळ' (रू.भे.)

उ०—ढाढी एक संदेसड़उ, ढोलइ लगि लइ जाइ। जोवण फटी तळावड़ी, पाळि न वंधउ काइ।—ढो मा.

पाळिका-सं०स्त्री० [सं० पालिका] पालन-पोषण करवे वाली।

उ०—घुमंड मेघ की घटा, यहां अटाळिका नहीं। कहां भुजाळ भाळ में, कपोत पाळिका नहीं।—ऊ.का.

पाळियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ भरण-पोषण किया हुआ।

२ निभाया हुआ।

३ रक्षित।

(स्त्री० पाळियोड़ी)

पालियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ हटाया हुआ, दूर किया हुआ।

२ रोका हुआ, मना किया हुआ।

३ मिटाया हुआ।

४ भगाया हुआ।

(स्त्री० पालियोड़ी)

पालिस-सं०स्त्री० [अं० पालिश] १ वह मशाला जिसके लगाने से चमक आ जाय, रोगन।

२ चमक, ओप।

मुहा०—१ पालिस करणी—रोगन रगड़ कर चमकाना।

२ पालिस होणी—रोगन से चमकीला किया जाना।

क्रि०प्र०—आणी, करणी, होणी।

रू०भे०—पोलिस।

पालिसरंदो-सं०पु०[अं०पालिश+सं०रंदन] बढ़ई का एक औजार विशेष।

रू०भे०—पोलिसरंदो।

पालिसी-सं०स्त्री० [अं०] १ कार्य साधन का ढंग, नीति।

२ चाल।

पाळी [सं० पालि, पाली] १ कान का अग्र भाग (डिं.को.)

२ देखो 'पाळो' (स्त्री०)

उ०—१ दूजै पोहरै रयण कै, मिळियत गुनफा-गुच्छ। घण पाळी पिव पाखरचो, विहूं भला भड़ जुद्ध।—ढो.मा.

उ०—२ पहसी जद कांम दोड़सी पाळी, दाढ्याळी असुरां भुजडांण। वा आवै ऊपर इकताळी, देसणोंक वाळी दीवांण।—अज्ञात

३ देखो 'पाळ' (अल्पा०, रू भे)

४ देखो 'पारी' (रू.भे.)

पाली-सं०स्त्री० [?] १ एक प्राचीन भाषा जिसमें महात्मा बुद्ध ने उपदेश दिए थे।

२ कोना (डिं.को.)

पालीयात-सं०पु०—पदाति, पैदल ?

उ०—पुहुरायत पूठि थया, ग्रहीग्रा वली तलार। दीवटीया दह दिसि रह्या, पालीयात नहीं पार।—मा.कां.प्र.

पाळू-वि० [सं० पालक] १ पालने वाला, पालक। उ०—इण बांभण रो मुलाहिजो कियो। अठै तो इब राजा ही गरीबां रो पाळू छै।
—अमरसिंह गजसिंहोत राठौड़ री बात

२ पाला हुआ, पालतू।

पाळे-सं०पु० [देशज] भैंस अथवा ऊंटनी (सांड) की गर्भ धारण हेतु ऋतुमती होने अथवा 'रवै' आने की दशा।

पाळोकड़, पाळोकड़ो—देखो 'पालतू' (रू.भे.)

उ०—वां काजीजी रै एक पाळोकड़ कुत्ती ही।—फुलवाड़ी

(स्त्री० पोलकड़ी)

पालोठी—देखो 'पालथी' (रू.भे.)

पाळो-वि०पु० [सं० पाद+आलुच्] (स्त्री० पाळी) पैदल।

उ०—जिण रीति भाई नै पाळो हुवो देखि मारवधरा रो कँवाड़ कनक प्रतिहार असिरो आघात दे'र प्रथ्वीराज रा अस्व रो अग्र उडाय पाड़ियो। उण समय पाळा होय दोही बीरां अजमेर मंडोवर रा सुहाग री लाज रा लंगर घीसता अस्वमेघ अध्वर रा अवभृथ रो (यज्ञ समाप्ति के स्नान का) तिरस्कार करता पैंड सांम्हे ही लगाया।
—वं.भा.

सं०पु० [सं० प्रालेय] १ बर्फ, हिम। उ०—माह महीने पाळो पड़सी, पांणी पथ्थर खाह। पांणी रो पथ्थर कोनो, वाह रै सांई वाह।—लो.गी.

क्रि०प्र०—जमणो, पड़णो।

२ रोगियों अथवा वृद्धों के लिए पेशाब टट्टी करने हेतु धातु का बना थालीनुमा बर्तन विशेष। उ०—पाळा भरै पलीत, मूत रा बैठो मांही। कोई कांम रो कहू, निलज सोव्यो इक नांही।—ऊ.का.

३ कबड्डी आदि के लिए खेलों में दोनों दलों के लिए पृथक पृथक निश्चित मैदान जिसकी हदबन्दी प्रायः रेखा खींच कर स्थिर की जाती है।

४ निर्जन स्थान, रेगिस्तान।

५ देखो 'पारो' (रू.भे.)

रू०भे०—पाळउ।

पालो-सं०पु० [सं० पल्लवम्] झड़बेरी के सूखे पत्ते जो मवेशियों के खाने के काम आते है। उ०—बकरी कह्यो—गवूंड़ा खवाड़स्यूं, पालो चरावस्यूं, पूंछ माथै बैठायनै हींडा खवाड़स्यूं।—फुलवाड़ी

पाल्डो-सं०पु० [देशज] बैलगाड़ी के चक्र का वह भाग जो लोहे की पत्तियों से बंधा होता है।

पाल्हवणो, पाल्हवबो—देखो 'पल्लवणो, पल्लवबो' (रू.भे.)

उ०—सजण मिल्या, मन ऊमग्यउ, अवगुण सहि गळियाह। सूका था सू पाल्हव्या, पाल्हविया फळियाह।—ढो.मा.

पाल्हवणहार, हारो (हारी), पाल्हवणियो—वि०।

पाल्हविग्रोड़ो, पाल्हवियोड़ो, पाल्हव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पाल्हवीजणो, पाल्हवीजबो—भाव वा०।

पाल्हवियोड़ो—देखो 'पल्लवियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पाल्हवियोड़ी)

पावंडो—देखो 'पांवडो' (रू.भे.)

उ०—मन करतो तो चारा रै मूंडो घालतो, पांणी पीवतो अर मन करतो जणां भार उखणतो नींतर घणा ई सोटां रा धमीड़ उडना तो ई एक पावंडो आगै को करतो नीं।—फुलवाड़ी

पाव-सं०पु० [सं० पाद=चतुर्थांश] १ चतुर्थांश, चौथाई भाग।

उ०—कांकण समै कुबेलियां, सरकण तणो सुभाव। निगुणा थिर रोपै नहीं, पाव घड़ी ही पाव।—बां दा.

२ तौल जो एक सेर का चौथाई तथा चार छटांक के बराबर होता है।

[सं० पाद] ३ नाथ सम्प्रदाय के सिद्ध पुरुषों के नाम के साथ लगाई जाने वाली एक उपाधि या पद। उ०—साधन सिध उभै एक साधन सौं, 'बांका' सूधो बाट बह। रीजै देवनाथ रीजायां, पाव जळंधर 'मांन' पह।—बां.दा.

४ पैर, चरण। उ०—भूल न दीजै ठाकुरां, पावक माथै पाव। राख रहीजै दाझियां, तियां धरीजै चाव।—वी.स.

मुहा०—१ पावै घालणो—मातहत करना।

२ पावै लागणो—प्रणाम करना, चरण स्पर्श करना।

५ देखो 'पाप' (रू.भे.)

उ०—आहेडइ चल्लीऊ पाव पसरि मनि मोहि घुमीउ। पुत्तू लेउ पीहरि गई 'गंग' तीण अवमाणि दूमीय।—पं.पं.च.

पावक-सं०पु० [सं०] १ अग्नि, आग (अ.मा., डिं.को., ह नां मा.)

उ०—१ तिण समयै तिण वेर, उभै नाजर व्रत आदर। पावक करण प्रवेस, तरण पति चरण निरंतर।—रा.रू.

उ०—२ भूल न दीजै ठाकुरां, पावक माथै पाव। राख रहीजै दाझियां, तियां धरीजै चाव।—वी.स.

२ एक प्रकार का बाण (अ.मा.)

३ सूर्य।

४ लाल* (डिं.को.)

रू०भे०—पावक्क, पावग।

अल्पा०—पावको।

पावककुंड-सं०पु० [सं०] १ अग्नि कुण्ड।

२ त्रिकोण* (डिं.को)

पावकमणि-सं०स्त्री० [सं०] सूर्यकान्तमणि ।
पावकुळक—देखो 'पादाकुळक' (रू.भे.)
पावको—देखो 'पावक' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पावको जम सपो वेस्या, सुरिया पांणियो वहणे । तसकर सुरक नरिंदो, आपांण कदे न हुवंत ।—गु.रू.बं.
पाववक—देखो 'पावक' (रू.भे.)
उ०—जाळ देहू पाववक, पाळ पतिवरत महापण । कुळ लज्या उजयाळ, रीत रखवाळ नरेहण ।—रा.रू.
पावग—देखो 'पावक' (रू.भे)
पावड़ियो-सं०पु० [सं० पाद+रा.प्र. ड़ियो] १ सीढ़ी ।
उ०—पावड़िया गोमोद का, रह्या लसणिया लग्ग । सोभत सुंदर अति सरस, जोत होत जिगमग्ग ।—गजउद्धार
२ देखो 'फावड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)
रू०भे०—पावड़ीयो ।
अल्पा०—पावड़ी, पाहुडो ।
पावड़ी-सं०स्त्री० [सं० पादुका] १ खड़ाऊ, पादुका ।
उ०—पावड़ियां सहत नरम पद पंकज, नूपुर-हाटक परम पुनीत । छक कड़बंध सुचंगा छाजै, पट अंगा राजै पुंण पीत ।—र.रू.
२ जुलाहे का एक उपकरण । उ०—लोग रेजौ खेसला के साड़ियां मोलावण सारू आवै तो तीडो वांनै पावड़ियां माथै पग चलावतो केई ग्यांन री वातां बतावै, वेजा रा सगळा कमियाळा नै वो मिनखदेह माथै ढाळै ।—फुलवाड़ी
वि०वि०—यह काष्ठ का बना होता है तथा खड़ाऊ के आकार का होता है । यह करघे में पैर रखने के काम आता है । इसमें रस्सी लगी होती है जिसे 'राछ' से बांध देते हैं । ये संख्या में प्रायः दो होते हैं किन्तु कहीं कहीं एक भी होता है ।
३ फासला, दूरी । उ०—जैतसी बोलिया, कहियो—'खीमाजी ! इतरी भोम नहीं लाभो, जोधपुर नै समेळ विचै पावड़ी घणी छै ।—नैणसी
४ देखो 'पावड़ियो' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—ठाकुर हूतो ठीक पावड़ी चडण न पातो । हूं जांणतो इसी बिटळ नै थूक बगातो ।—ऊ.का.
५ देखो 'फावड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)
रू०भे०—पावटी, पावठी ।
पावड़ीयो—१ देखो 'पावड़ियो' (रू.भे.)
२ देखो 'फावड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)
पावड़ो—१ देखो 'पहाड़ो' (रू.भे.)
२ देखो 'फावड़ो' (रू.भे.)
पावचा-सं०स्त्री—चौहान वंश की एक शाखा ।
पावचो-सं०पु०—चौहान वंश की 'पावचा' शाखा का व्यक्ति ।
पावजळंद्री-सं०पु० [सं० जालंद्रपाद] जलंधरनाथ । उ०—पग वंदि हरखि भूप तदि पुंणियो । सिध में पावजळंद्री सुणियो ।—सू.प्र.
पावटो-सं०पु० [देशज] १ पैरों से चलाया जाने वाला छोटा रहँट ।
२ देखो 'पावड़ो' (रू.भे.)
पावटो-सं०पु०—किसी जलाशय का घाट ।
उ०—जळ पीधो जाडेह; पावासर रै पावटै । नैनकियै नाडेह, जीव न धापै जेठवा ।—जेठवा
पावठी—देखो 'पावड़ी' (रू.भे.)
उ०—पाय परठी पावठी, जड़ी सु हीरा हेम । पाट पटंबर पाथरइ, 'माधव' चालइ जेम ।—मा.कां.प्र.
पावण-वि० [सं० पा] १ पिलाने वाला । उ०—पियाला साथियां, अरक पावण पिवण, घणी आवण कीउं न जेझ धारं ।—चिमनजी आढो
२ देखो 'पावन' (रू.भे.)
उ०—रघुनाथ स्रोहथ हथे रावण । परम संतां कीध पावण ।—र.रू.
पावणो-वि० [सं० पा+रा.प्र. णो] (स्त्री० पावणी] पिलाने वाला ।
पावणो, पावबो—देखो 'पाणो, पावो' (रू.भे.)
उ०—१ पोढै तेण वखत नृप पावै । महखी दूध सवा मण मावै ।—सू प्र.
उ०—२ भारांणी भटकेह, आवै कवि पाळा अठै । ऊतरिया भटकेह, अस पावै ऐराक रा ।—बां.दा.
उ०—३ रांम असरण सरण, भूप गुण राज रा, पार सीतारमण कमण पावै ।—र.ज.प्र.
उ०—४ पकवांन जळेबिय पावन कौं, गहरी धुनि रागनि गावन कौं ।—ऊ.का.
पावणहार, हारो (हारी), पावणियो—वि० ।
पाविग्रोड़ो, पावियोड़ो, पाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पावीजणो, पावीजबो—कर्म वा० ।
पावन-वि० [सं०] १ पवित्र, शुद्ध । उ०—१ पावन हृदो करिस पुरुसोतम । संच गिनांन तूझ स्री संगम ।—ह.र.
उ०—२ पावन हुवो न पीठवो, न्हाय त्रिवेणी नीर । हेक 'जेत' मिळियां हुवो, सो निकळंक सरीर ।—बां.दा.
उ०—३ गळ मुंडमाळ मसांण ग्रह, संग पिसाच समाज । पावन तूझ प्रताप सूं, संभु अपावन साज ।—बां.दा.
२ पवित्र करने वाला ।
सं०पु० [सं०] १ प्रथम सात सगण और अंतिम लघु गुरु वर्ण का छंद विशेष । उ०—सात सगण लघु गुरु सहित, एकणि पाए आंणि । पाट कुंवर 'लखपत्ति' रा, पावन छंद पछांणि ।—ल.पि.
२ परमेश्वर (ह.नां.मा) ।
३ गोबर ।
४ रुद्राक्ष ।
५ चंदन ।

६ सिद्ध पुरुष ।

७ विष्णु ।

सं०स्त्री०—८ राजाओं की दासियां विशेष ।

वि०वि०—ये दासियां पतियों के मरने पर चूड़ा (अहिवात)न उतार कर राजाओं के मरने पर उतारती हैं। इनका सुहाग राजाओं के लिए होता है।

रू०भे०—पावण, पावन्न ।

पावनता-सं०स्त्री० [सं० पावन+रा.प्र. ता] पावन होने की अवस्था या भाव, पवित्रता । उ०—गंग ब्रह्म कमंडळी, पावनता विण पार । तूं मोनूं तिरसावही, कं देसी दीदार ।—बां.दा.

पावनपुरखि-सं०पु० [सं० पावन+पुरुष] १ विष्णु ।

२ श्रीकृष्ण । उ०—नाथण नाग नगर ब्रज-नाइक, आवण महर आंगणे । पावनपुरखि नांम पुरखोतम, भूधर चरित भांमणे ।

—पि.प्र.

पावन्न—देखो 'पावन' (रू.भे.)

उ०—१ गजउधार गुण गावियौ, करिवा जग पावन्न । पढ़ै सुणै चित में धरै, जिकां जमारौ धन्न ।—गजउद्धार

उ०—२ कबरी किरि गुंथित कुसुम करंबित, जमुण फेण पावन्न जग । उतमंग किरि अंबर आधौ अधि, मांग समारि कुंआरमग ।

—वेलि

पावपंथ-सं०पु० [सं० पाद+पंथ] नाथ पंथ, नाथ सम्प्रदाय (मा.म.)

पावपंथी-वि० [सं० पाद+पथ+ रा.प्र.ई] नाथ पंथ अथवा सम्प्रदाय को मानने वाला ।

पावपरिखेवी-वि० [सं० पापपरिक्षेविन्] गुरुजनों अथवा बड़े बूढ़ों की भूल को तूल देने वाला (जैन)

पावपोस—देखो 'पादपोस' (रू.भे.)

उ०—पावपोस मोही प्रगट, गणवत मनुं गयंद । हीरां प्रोहित मिळण हित, उर उपजत आणंद ।—बगसीरांम प्रोहित री बात

पावरी-सं०स्त्री० [सं० प्रावरी] १ चमड़े, ऊन या सूत की बनी छोटी थैली ।

२ देखो 'पावरौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पावरोर-सं०पु० [सं० पापरौरव] भयकर पाप । उ०—पासु पाय-सिउ अभय सूरि, थंभणपुरि मंडणु । जिणवल्लह सूरि पावरोर, दुखाचल खंडणु ।—ऐ.जै.का.सं.

पावरौ-सं०पु० [सं० प्रावर:] १ चमड़े का अथवा सूत का बना थैला जो प्राय: घोड़े के जीन पर लटका रहता है ।

२ घोड़े के मुंह पर दाना भर कर लटकाने का चमड़े का अथवा धातु का बना थैला, तोबड़ा ।

रू०भे०—पाहुरौ, पाहोरौ ।

अल्पा०—पाहोरी ।

पावलां—देखो 'पाओलां' (रू.भे.)

पावलि-सं०स्त्री०—जीना, सीढ़ी ।

उ०—जंपइ ए रमणि सिरोमणि, रुकमणि राणिय रोलि । रहि रहि बहिनि ऊतावली, पावलि माहि म ढोलि ।—जयसेखर सूरि

पावली-सं०स्त्री० [सं० पाद+रा.प्र.ली] १ एक रुपए का चौथाई सिक्का जो पच्चीस पैसे के बराबर होता है, चवन्नी । उ०—दूजे दिन घड़ी दिन चढ़ियां वौ जाट सेठांणी कनै फेर आयौ । एक धोळी धक नवी पावली उणरै सांमी करनै कह्यौ—आ'र रा सौ रिपिया सूं सगळौ कांम सार लियौ ।—फुलवाड़ी

२ देखो 'पायली' (रू.भे.)

उ०—थोथा चणा एक पावली, इन भांडां को द्योनी उनमांन । स्वासणियां नै पोमचा, इन भांडां नै कुला एक वांण ।—लो.गी.

पावलौ [सं० पाद+रा प्र. लौ] १ पैर, चरण ।

उ०—अहिल्या गाईया, गीत उतावला । प्रभु रा गरीबां, तणै घर पावला ।—पी ग्रं.

२ देखो 'पावली' (मह., रू भे.)

पावस-सं०स्त्री० [सं० प्रावृषः या प्रावृषा, प्रा० पाउस] १ वर्षा ऋतु । उ०—ग्रीखम पावस सरद गहाई । ए च्यारूं कळियुग में आई ।

—ऊ.का.

२ मेघ, बादल (अ.मा., डिं.को., नां.मा., ह.नां.मा.)

रू०भे०—पाउस, पावसि ।

पावसणौ, पावसबौ-क्रि०अ० [सं० प्रावृषम्] गाय, भैंस आदि दुधारू पशुओं का स्तनों से दूध उतारना । उ०—भैंसां मूळ न पावसै, सूकं पाडी साथ । हार दुहारा उट्ठिया, ठाली बरतण हाथ ।—लू

पावसणहार, हारौ (हारी) ।

पावसिओड़ो, पावसियोड़ो, पावस्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पावसीजणौ, पावसीजबौ—भाव वा० ।

पावसाणौ, पावसाबौ-क्रु०स० ['पावसणौ' क्रिया का सक० रूप] गाय, भैंस आदि दुधारू पशुओं के स्तनों से दूध उतरवाना ।

पावसाणहार, हारौ (हारी) ।

पावसायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पावसाईजणौ, पावसाईजबौ—कर्म वा० ।

पावसायोड़ो-भू०का०कृ०—स्तन से दूध उतरवाई हुई (गाय, भैंस आदि)

पावसि—देखो 'पावस' (रू.भे)

उ०—बग रिखि राजांन सु पावसि बैठा, सुरं सूता थिउ मोर सर । चातक रटै बलाहकि चचळ, हरि सिणगारै अंबहर ।—वेलि

पावसियोड़ो-भू०का०कृ०—स्तन से दूध उतारी हुई (गाय भैंस आदि)

पावहियौ-सं०पु० [देशज] हिजड़ा, नपुंसक । उ०—पावहियौ करै गिरनारपत, नाचवियौ घर घर तिको । बरार वेचि मैंहर किय, मांग 'पाल' हेकण मुखां ।—प्रा.प्र.

पावही-सं०स्त्री०—एक देवी का नाम । उ०—यह इज आसा पुरी हुई, पावही कही जूं । देवी हिंगळाज रैण, डूंगरे रही जूं ।—पा.प्र.

पावासर, पावाहर—देखो 'पावासर' (रू.भे.)

उ०—वड दाता पातां वडा, अपहड़ पूरै आस। मोताहळ हंसां मिळै, पावासर रै पास।—बां.दा.

पाविवड़-सं०पु० [सं० प्रयागवट] प्रयाग वट, बोधि वृक्ष।

पावेंक-वि०—चार छटांक (पाव) के लगभग।

पावो-सं०पु० [सं० पाद=पात्र+रा.प्र.ओ] १ टीन के पूरे पीपे का चौथाई, पौवा।

२ काच की पूरी बोतल का चौथाई, पौवा।

३ बौना, ठिगना।

पासंग-सं०पु० [फा०] १ तराजू के दोनों पलड़ों या डांडी के तोल का अन्तर।

२ तराजू की डंडी या पलड़ो के सतुलन को बराबर करने के लिए डांडी के ऊपर उठते हुए शिरे पर बांधा जाने वाला पदार्थ या भार।

उ०—हाथी तोलीजै जठै गधा पासंग में जाय।

३ सहारा, मदद।

मुहा०—पासग भी न होणौ—बेसहारा होना।

अल्पा०—पसंगौ, पासंगौ।

पासंगौ—देखो 'पासंग' (अल्पा०, रू.भे.)

पास-वि० [अं०] १ पार किया हुआ, तै किया हुआ।

ज्यूं—रेल स्टेशन पास करगी।

२ उत्तीर्ण, सफल।

ज्यूं—वो आठवीं कक्षा पास है।

३ स्वीकृत, मंजूर।

ज्यूं —सभा प्रस्ताव पास कर चुकी।

सं०पु० [सं० पार्श्वः] १ सामिप्य, निकट। उ०—ज्यांरै खाख बिछावणौ, ओढण नूं आकास। ब्रह्म पोस संतोस वित, पूरण सुख ह्यां पास।—बां.दा.

२ पड़ोस।

[सं० पाश] ३ पाश, फंदा। उ०—रखे पधारो रावतां, नमक घणी रो नांख। जम री पड़सी पास जद, ऊघड़सी तद आंख।—बां दा.

४ बंधन। उ०—पति संग जळा अहि लाज पण, तजां पास कुळजुग तणौ। व्रत भंग हुए वर बीछड़ै, जिको अजीवत जीवणौ।

—रा.रू.

रू०भे०—पासि, पासी, पासु, पाहि।

अल्पा०—पासड़ौ।

मह०—पासौ।

५ अधिकार, कब्जा।

६ समूह, झुण्ड। उ०—लागी बिहुं करे घूघणे लोवैं, केस पास मुगता करण। मन अग चै कारणै मदन चौ, वागुरि जांणे विसतरण।—वेलि

[सं० पाशिन्=पाशी] ७ वरुण (अ.मा.)

[अं० पास] ८ कहीं जाने का अधिकार-पत्र।

ज्यूं—रेल रो पास, सिनेमा रो पास।

९ देखो 'पारसनाथ' (रू.भे.)

उ०—मुनि सुव्रत जिन बीसमां, नेमि अरिट्ठ नेम। पास जिनेस्वर वीरजी, पहुता सिवपुर क्षेम।—जयवांणी

क्रि०वि० [सं० पार्श्व] बगल में, निकट में (अ.मा.)

२ अन्दर, में। उ०—वडदाता पातां वडा, अपहड़ पूरै आस। मोताहळ हंसां मिळै, पावासर रै पास।—बां.दा.

३ अधिकार में, कब्जे में। उ०—पारस नह-नह पोरसौ, पातर राखै पास। जिणरै आयौ जांणजै, नेड़ौ धन रो नास।—बां.दा.

रू०भे०—प.', पासइ, पासह, पासि, पासेही, पासै, पाहं, पाह, पाहि, पाहिइ, पाइ।

पासइ—देखो 'पास' (रू भे)

उ०—१ सखियां रांणी सूं कहइ, मारूमन-मांणी। साल्ह कुंवर पासइ विना, पदमिणि कुंमळांणी।—ढो मा.

उ०—२ च्यारइ पासइ घण घणउ, बीजळि खिवइ अगास। हरियाळी रुति तउ भली, घर संपति पिउ पास।—ढो.मा.

पासकेरळी-सं०पु० [सं० पाश+केरल+रा प्र. ई] पासे फेंक कर की जाने वाली ज्योतिष की एक गणना।

रू०भे०—पासाकेवळी।

पासड़ौ—देखो 'पास' (अल्पा., रू.भे)

उ०—१ तलफत तलफत बहु दिन बीता, पड़ी विरह की पासड़ियां। अब तो वेगि दया करि साहब, मैं तो तुम्हारी दासड़ियां।—मीरां

उ०—२ नैण दुखी दरसण कूं तरसैं, नाभिन बैठे सांसड़ियां। राति दिवस यह आरति मेरे, कब हरि राखै पासड़ियां।—मीरां

पासजिणंद, पासजिण-सं०पु० [सं० पार्श्वजिनेन्द्र] पार्श्वनाथ।

उ०—१ सफल करत अपनो सुर पदवी, प्रणमत पाय अरविंदा। समयसुंदर प्रभु परउपगारी, जय-जय पासजिणंदा।—स.कु.

उ०—२ परुवयारपायवप वरसिचण मुहरसमांण। पुरिसादांणिअ पासजिण, गुणगण रयण निहांण।—स.कु.

पासणी-सं०स्त्री० [सं० प्राशन+रा.प्र. ई] बच्चे को सर्वप्रथम अन्न चटाने की रीति।

पासणो—देखो 'पाछणौ' (रू.भे.)

उ०—राखै छुरी नै पासणा रै, पातरां के रै मांय। नाना बालक भोलवी रे, काळजो काढी नै खाय।—जयवांणी

पासणौ, पासबो-क्रि०स० [सं० पाश] पानी निकालने के लिए रस्सी या लाव में बांध कर मोट आदि कुए में डालना।

पासणहार, हारो (हारी), पासणियौ—वि०।

पासिओड़ो, पासियोड़ौ, पास्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पासीजणो, पासीजबो —कर्म वा०।

पासत्थउ-वि० ?] चरित्र पालन में शिथिल होना, ढीला। उ०—जउ

पूरब विधि मइ रहइ, न करइ किम विपरीत रे। पिण पासत्थउ ते खरउ, सरव देस परिणीत रे।—वि कु.

पासत्थभत्तदोस-स०पु० [?] आचारभ्रष्ट व भेष मात्र से जीविका करने वाले साधु के पास से आहार लेने पर लगने वाला दोष (जैन)

पासनाह—देखो 'पारसनाथ' (रू.भे.)

उ०—फलवधी मंडण पासनाह। वीनवियउ जिनवर मन उच्छाह। —स कु.

पासपातळो-स०पु०यौ० [सं० पार्श्व+पत्र.ल] पतली पसली वाला अशुभ माना जाने वाला घोड़ा (शा हो.)

पासबांन—देखो 'पासवांन' (रू.भे.)

पासबुक-सं०स्त्री० [अं०] बैंक अथवा पोस्ट आफिस की लेनदेन के हिसाब रखने की पुस्तक।

पासभ्रत-सं०पु० [सं० पाशभृत] वरुण (नां.मा.)

पासरण-सं०पु० [सं० प्रसरण] १ फैलाव। उ०—लूटे गांम वित धन लीधा। दिस च्यारूं पासरणा दीधा।—रा.रू.

वि०—बंधन डालने वाला ?

उ०—परभात चढिया सो गांव दूजो वळै जाय मारियो। पछै बीजा गांवां नूं पासरणा छूटा सो वित सारो घर ले आया। —अमरसिंह राठौड़ री बात

पासरणो, पासरबो—देखो 'पसरणो, पसरबो' (रू.भे.)

पासरणहार, हारो (हारी), पासरणियो—वि०।

पासरिओड़ो, पासरियोड़ो, पासरघोड़ो—भू०का०कृ०।

पासरीजणो, पासरीजबो—भाव वा०।

पासरियोड़ो—देखो 'पसरियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पासरियोड़ी)

पासरो-सं०पु० [सं० उपाश्रय] जैन यतियों का स्थान (शेखावाटी)

पासळी-सं०स्त्री० [सं० पर्शुका] मनुष्य या पशु की उन हड्डियों में से एक हड्डी जो उसकी छाती पर होती है तथा गोलाकार होती है।

उ०—१ ताहरां अखैराज रा घाव सूं हाथी री दोय पासळी भागी। —नैणसी

उ०—२ उर चौड़ी कड़ पातळी, झीणी पासळियांह। कै मिळसी हर पूजियां, कै हेमाळै गळियांह।—अज्ञात

मुहा०—१ पासळी फड़कणी—उमंग पैदा होना, जोश आना।

२ पासळ्यां ढीली करणी—बहुत मारना।

३ हड्डी पासळी तोड़णी—देखो 'पासळ्यां ढीली करणी'।

रू०भे०—पंसुळी, पसळी, पांसळि, पांसळी, पासुळी, पांसू।

पासवनो—१ देखो 'पासवांनियो' (रू.भे.)

२ देखो 'पासवांन' (रू.भे.)

पासवय-स०पु० [?] पेशाब, लघुशंका (जैन)

पासवांन-सं०स्त्री० [सं० पार्श्व] १ बिना विवाह किए पत्नी रूप में रहने वाली स्त्री, रखेल।

सं०पु०—२ सदा पास रहने वाला राजा का सेवक, मरजीदान (मेवाड़)

उ०—भूलै नह सहर मुलक नह भूलै, पंडित नह भूलै पांणा। भह कव पासवांन किम भूलै, रूंख न भूलै रांणा। —महारांणा जवांनसिंह रो गीत

३ अंगरक्षक, शरीररक्षक।

४ पुराणे राजाओं के जमाने में रावणा राजपूतों का एक नाम। (मा.म.)

रू०भे०—पासबांन, पासहवांन, पासेवांण।

अल्पा०—पासवनो।

पासवांनियो-सं०पु०—पासवान स्त्री का पुत्र, रखेल का पुत्र।

रू०भे०—पासवनो।

पासवाड़ो—देखो 'पसवाड़ो' (रू.भे.)

पासहवांन—देखो 'पासवांन' (रू.भे.)

उ०—हिचै खग दंगळ नोख हुवास। खत्री गुर पासहवांन खवास। —सू.प्र.

पासांण-सं०पु० [सं० पाषाण] पत्थर, प्रस्तर। उ०—लम्बी कोस केई गुफा खोस लीधी। करे पोस पासांण निरदोस कीधी।—मे.म.

रू०भे०—पखांण, पाखांण, पाखान, पाहण, पाहन, पाहांण।

पासांणकरम-सं०स्त्री० [सं० पाषाणकर्म] ७२ कलाओं में से एक कला।

पासांणबद्ध-सं०पु०यौ०[सं०पाषाणबद्ध]पत्थर से बंधे पट्टों वाला सरोवर।

उ०—पासांणबद्ध कराविया ए, सरोवर चउरासीय। वारू सयंवर वावडी ए, च्यार सइ चउसठ कीय। —स.कु.

रू०भे०—पाखांणबद्ध।

पासांणभेद-सं०पु०यौ० [सं० पाषाणभेद] बगीचों में लगाया जाने वाला सुन्दर पत्तियों का पौधा।

रू०भे०—पाखांणभेद।

पासांणी-वि० [सं० पाषाण+रा.प्र. ई] पत्थर संबंधी, पत्थर का।

रू०भे०—पखांणी, पाखांणी।

पासाकेवळी—देखो 'पासकेरली' (रू.भे.) (उ.र.)

पासाड़ो—देखो 'पसवाड़ो' (रू.भे.)

पासाद—देखो 'प्रासाद' (रू.भे.)

पासावळि, पासावळी-क्रि०वि० [सं० पार्श्व+अवलि] पास, निकट।

उ०—सोवन चौकी सोवटा, पासावळी नविरंग। दीवा झारी गाल मसूरी, उभउ सीसा अति चंग।—ढो.मा.

पासावाड़ो—देखो 'पसवाड़ो' (रू.भे.)

पासासार-सं०पु० [सं० पाशक] चौपड़ पासा नामक खेल।

उ०—बिजयातसु घर नार ए। बिहुं रमयति पासासार ए। —स कु.

पासि—१ देखो 'पारसनाथ' (रू.भे.)

२ देखो 'पास' (रू.भे.)

उ०—१ तासु पासि छागळि जळि भरी। ठाकुर तणी दृष्टि वे ठरी।—ढो.मा.

उ०—२ जोवरण भरि जे पहुतउ किमइ। विसय पासि ते वाघउ तिमइ।—वस्तिग

३ देखो 'फांसी' (रू.भे.)

पासियोड़ो—भू०का०कृ०—पानी निकालने की रस्सी या लाव में बांध कर मोट आदि कुए में डाला हुआ।

(स्त्री० पासियोड़ी)

पासींचो—देखो 'पाचड़ियो' (रू.भे.)

पासी—सं०पु० [सं० पार्श्व+रा०प्र० ई] १ तरफ, ओर।

उ०—पसवाड़ै धरती मूकीया। मूकि नै वेहुं बाती पकड़ि नै मांहिलै पासी घस सु उतरीयो।—चौबोली

२ देखो 'फांसी' (रू.भे.)

उ०—प्रात तणी पासी पड़ी, दासी हूं विण दांव। आंख पलक सिर ऊपरै, धारा धरजे पांव।—बां दा.

३ देखो 'पास' (रू.भे.)

पासीगर—सं०पु० [सं० पाश+कर] जाल रचने वाला, फांसी गूंथने वाला, जालसाज। उ०—पासीगर पूरा साजा सूरा, मुराख भाळंदा है। जे आतां जातां पेच पजातां, वातां बद बूजदा है।—ऊ.का.

रू०भे०—फासीगर।

पासीजळ—सं०पु० [सं० पाशी जल] जलदेवता, वरुण (ह नां.मा)

पासु—देखो 'पास' (रू.भे.)

उ०—कंठि ठवइ जां पासु डाल तरुयर तणी······। आवियउ बूंद प्रभावि तांम मनि चिंतिउ सांमि।—पं.पं.च.

पासेवांण—देखो 'पासवांन' (रू.भे.)

उ०—बीभरणा सूं वायेरा लीजै छै। सू किण भांतरा वीभरणां छै? लाहोर रा कियाड़ा छै। रूपै री डांडी, जरी सूं मढी, टुकड़ी री झालरी सु वर्णी थकी खवास पासेवांणा रै हाथ छै।—रा.सा सं.

पासेस—देखो 'पारसनाथ' (रू.भे)

उ०—सीख करै तिहां थी सुमन, पुलिया पच्छिम देस। सुख विहार आया सुगुरु, प्रणमेवा पासेस।—ऐ.जै का.सं

पासेही—देखो 'पास' (रू.भे.)

पासै—क्रि०वि० [सं० पार्श्व] १ दूर, अलग। उ०—ताहरा राजाजी रांमसिंघजी नूं कहियो—मास ४ मांहरै वास हुंता पासै हुवो।—द.वि.

२ देखो 'पास' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—१ हूं बळिहारी साथिया, भाजै नह गइयांह। छीणा मोती हार जिमि, पासै ही पड़ियांह।—हा.झा.

उ०—२ पगां माही सवा मण लोह री गटी छै। चाकर रा मांचा दोनूं पासै छै।—सूरे खींवे कांधळोत री वात

पासौ—सं०पु० [सं० प्राशक, प्रा० पासा] १ चौसर आदि के खेल में खिलाड़ियों द्वारा बारी-बारी से बार बार फेंके जाने वाले उंगली की लम्बाई के बराबर हाथीदांत, हड्डी, लकड़ी आदि के बने टुकड़ों में से एक। उ०—१ पासो ढुळै है, हाथ लुळै है, ढीली नथ झळकै है। प्रेम री झांई बाहर पळकै है।—र. हमीर

उ०—२ पुरख नारि मैं तै मती, नहिं पासा नहिं सारी। डाव नहीं चौपड़ नहीं, नहीं जीत नहिं हारी।—ह.पु.वा.

मुहा०—१ पासौ खाणौ—हार जाना।

२ पासौ देणौ—खिसक जाना, बच निकलना।

३ पासौ पड़णौ—भाग्य का अनुकूल होना, भाग्य चेतना।

४ पासौ पलटणौ—दाव फिरना, भाग्य परिवर्तन होना।

५ पासौ फेंकणौ—भाग्य आजमाना।

२ [सं० पार्श्व, पार्श्वः] पार्श्व भाग, बगल। उ०—मुख पूण्यर चंद ज्यूं सोळह कळा संपूरण छै। पेट पीपळ री पांन छै। पासा मांखण री लोथ छै। नितंब कटोरा सा छै।—रा.सा.सं.

३ कान का एक आभूषण विशेष।

४ देखो 'पास' (रू.भे.)

उ०—चाकर चोकीदार ज्यूं, बहुला राखै पासौ रे। कांम करावैं ते कन्हा, विलसै आप विलासौ रे।—ध.व ग्र.

५ देखो 'पारसनाथ' (रू.भे.)

उ०—महिमा मोटी महियलै, प्रगट चिंतामणि पासौ रे। सफलौ नांम करै सदा, आपै वंछित आसौ रे।—ध.व.ग्रं.

पास्वौ—सं०पु० [सं० पार्श्व ?] एक प्रकार का तकिया। उ०—तिसी हीज विछायत ऊपरां गाव तकिया, बगल तकिया, गींदवा, बादेला, पास्वा मसंद ऊपरै पड़िया छै।—जगदेव पंवार री वात

पाहं—देखो 'पास' (रू.भे.)

पाहड़—देखो 'पहाड़' (रू.भे.)

पाहण, पाहन—देखो 'पासांण' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—पाहण गळ बांधे पड़ो, वेरो वावड़ियांह। पिण मंगण मत पारथो, मुजळां मावड़ियांह।—बां.दा.

पाहरी, पाहरु, पाहरू—देखो 'प्रहरी' (रू.भे)

उ०—१ इंद्र अस्त्र कुण होइ असाहरी। सीह रहइं कवण होइ पाहरी।—सालिभद्र सूरि

उ०—२ ठग कांमेती ठोठ गुर, चुगल न कीजै सैण। चोर न कीजै पाहरू, ग्रहसपती रा बैण।—बां.दा.

पाहांण—देखो 'पासांण' (रू.भे.)

उ०—नितु-नितु सेवा नवी नवी, तूं नवयौवन नारि। भोगवि जे भणिया नहीं, पंडित पाहांणे मारि।—मा.कां.प्र.

पाहाघी—देखो 'पागी' (रू.भे.)

उ०—नै चोखावास मोटै राजा उरी लीयो, हळवा ३ धरती दीवी कांना पाहाघी नूं।—नैणसी

पाहाड़—देखो 'पहाड़' (रू.भे.)

उ०—मेवाड़ हुवा नागा मंडळ, साफ राफ पाहाड़ सह। इकलंग कंठ रहियो 'अमर', चीलसेख चीतोड़ पह।—गु.रू.बं.

पाहाड़ी—देखो 'पहाड़' (अल्पा०, रू.भे.)

पाहार—१ देखो 'पहाड़' (रू.भे.)
उ०—फाटो लोह धरा आभ सुरेस रो वज्र फाटो, पेख भूप जावो फाटो जलालो पाहार। फेरूं कम्र तट हीरो अठारा ठौड़ सूं फाटो, थणो जातां म्हारो हीयो न फाटो धिकार।
—महाराजा बळवंतसिंह रतलांम रो गीत
२ देखो 'प्रहार' (रू.भे.)
पाहारणी—देखो 'प्रहारणी' (रू.भे.)
उ०—देवी रत्त बबाळ, गळमाळ रूंडा। देवी मूढ पाहारणी, चंड मूंडा।—देवि.
(स्त्री० पाहारणी)
पाहारणो, पाहारबो—देखो 'प्रहारणो, प्रहारबो' (रू.भे.)
पाहारणहार, हारो (हारी), पाहारणियो—वि०।
पाहारिओड़ो, पाहारियोड़ो, पाहारयोड़ो—भू०का०कृ०।
पाहारीजणो, पाहारीजबो—कर्म वा०।
पाहारियोड़ो—देखो 'प्रहारियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पाहारियोड़ी)
पाहिं—देखो 'पास' (रू.भे.)
उ०—बहू गुणवंती गोरड़ी, कठि विलाई कंत। मझ पाहिं तुझ वल्लही, ते कहीइ कुण तंत।—मा.कां.प्र.
पाहि-अव्य० [सं०] १ एक संस्कृत का पद जिसका अर्थ है रक्षा करो।
उ०—देवि रोग भवहारणी आहि मांम। देवी पाहि पाहि देवी पाहि मांम।—देवि.
२ देखो 'पद' (रू.भे.)
उ०—गिरवर डहर झंगर गाहि। पाघर किया पगंगा पाहि।
—गु.रू.बं.
पाहिइ—देखो 'पास' (रू.भे.)
उ०—वलतूं कहइ मंत्री, सुणउ पिता पाहिइ बहुलु देस। स्वांग उपारजन तुम्ह करु, पोतइ घणउ निवेस।—नळ-दवदंती रास
पाहुंन—देखो 'पांमणो' (रू.भे.)
उ०—मम अमिय मूरि, द्रग तैन दूरि। आत्मिक अधार, पाहुन पधार।—ऊ.का.
पाहुड़िय दोस-सं०पु० [सं० प्राभृतिका दोष] साधु के कारण मेहमान के सत्कार में आगापीछा करने पर लगने वाला दोष।
वि०वि०—कोई व्यक्ति किसी मेहमान का सत्कार तब ही करे जब कि कोई साधु आवे अर्थात् साधु के आने की इन्तजार में बैठा रहे और जब तक साधु न आवे तब तक मेहमान का भी सत्कार न करे तब पाहुड़िया दोस लगता है (जैन)
पाहुड़ो—देखो 'पावड़ियो' (अल्पा० रू.भे.)
उ०—पान सारीखो पेट पातळो अम्रित सी नाभी कुंडळी मांहि पांणी पीतां ढळकतो दीसे छै जांणे काच री सीसी मांहे गुलाब ढळकतो दीसे छै। पेट री अवळी जांणे कांम रा महल री पाहुड़ी वणी छै।—रा.सा.सं.
पाहुण, पाहुणउ—देखो 'पांमणो' (रू.भे.)
उ०—पाहुणउ तूं हम आज, कहुं ते महिमांनी करां जी। सगळी तुम्ह नइं लाज, वादळ राज हमां तणी जी।—प.च.चौ.
पाहुणभतदोस-सं०पु०यौ० [सं०प्राघूर्णकः+भक्त+दोष] मेहमानों को खिलाने से पूर्व उनके निमित्त बनाए गए भोजन को स्वयं के खाने पर लगने वाला दोष (जैन)।
पाहुणो—देखो 'पांमणो' (रू.भे.)
उ०—१ जित करै हट पाहुणो, इतै करै हट एह। पग थिर रोप पाहुणो, एह हुए असनेह।—बां.दा.
उ०—२ दादू देही पाहुणो, हंस बटाऊ मांहि। का जांणूं कब चालसी, मोहि भरोसा नांहि।—दादूबांणी
(स्त्री० पाहुणी)
पाहुर, पाहुरो—देखो 'पावरो' (रू भे.)
उ०—जगदेवजी असवार हुवो तिण पहली चावड़ी आंण ऊभी रही। थेली मोहरां री पाहुरा माहे घाली।
—जगदेव पंवार री वात
पाहू-सं०पु०—भाटी वंश की एक शाखा। उ०—भाटियां री खांप लिखते—जेचंद, जेतुग, बुध, केलण, सरूपसी, सोहड़, सेना, छीकण, पोहड़े पाहू, नहू, वारसी।—बां.दा.ख्यात
पाहेय—देखो 'पाथेय' (रू.भे.) (जैन)
पाहेसे-पाहेसे-अव्य० [देशज] भैंस को पानी पिलाने के लिए उच्चारण किया जाने वाला शब्द।
रू०भे०—पाहे।
पाहे—१ देखो 'पास' (रू.भे.)
२ देखो 'पाहेसे-पाहेसे' (रू.भे.)
पाहोड़ा-वि०—पास का, निकट का।
पाहोरी—देखो 'पावरो' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—लूंणग हाथी री सूंड उरी लेनै घोड़ा री पाहोरी मांहै घाती।
नैणसी
पाहोरो—देखो 'पावरो' (रू.भे.)
उ०—१ रावळ पाछो आयो, तरै जिकै वरछी वाहि सकिया न था, त्यां वरछी रो फळ बूड़ी भांज नै पाहोरा मांहे घाती थी।
—नैणसी
उ०—२ ताहरां घोडी नांख दियो। कहियो-'जी, इतरा दिन दाळ पाहोरो इण घोड़ी नूं म्हे दियो छै, अबै थे देज्यो।—नैणसी
पिंक-सं०स्त्री० [सं० विनेक] मस्ती। उ०—अमल री पिंक लागी अटळ, सुख लूटै वे सुलखणां। सवेरा सांझ दोनूं समै, कांझकंझ नै कुलखणां।—ऊ.का.
पिंग-वि० [सं०] १ लाल-पीला मिला हुआ भूरा (हिं.को.)
२ पीलापन लिया हुआ (हि को.)
रू०भे०—पींग।

पिंगति—देखो 'पंक्ति' (रू.भे.)

उ०—पिंगति सातमी मेर परीख । ता समीं...वरण एण तरीख ।
—ल.पि.

पिंगळ–वि० [सं० पिङ्गल] १ पीला, पीत।

२ भूरापन लिए पीला, सुंघनी रंग का ।

सं०पु० [सं० पिंगल:] १ शनि (ग्र.मा.)

२ सूरज, सूर्य (ग्र.मा., नां.मा.)

३ मेघ, बादल (ना.डिं.को.)

४ एक प्राचीन मुनि जिन्होंने छन्दशास्त्र बनाया ।

५ पिंगल मुनि का बनाया हुआ छन्दशास्त्र ।

उ०—पिंगळ अरह पुराण पराक्रत, विध विध जांणण सयळ विमेक । 'जैसा' हरौ न भंगवट जांणै, ऊतर करै न जांणै एक ।
—ईसरदास बारहठ

६ व्रज भाषा । उ०—डिंगळियां मिळियां करै, पिंगळ तणौ प्रकास । संसक्रती व्है कपट सज, पिंगळ पढियां पास ।—बां.दा.

७ पीतल ।

८ एक नाग का नाम । उ०—प्रथम अर्हम मफ वेद, छंद मारग दरसायौ । खग अग पिंगळ नाग, नागपिंगळ कर गायौ ।
—र.ज.प्र.

९ एक प्रकार का फनदार सांप ।

१० भैरव राग का एक पुत्र ।

११ बन्दर, कपि ।

१२ नेवला, नकुल ।

१३ उल्लू, पक्षी ।

रू०भे०—पैंगळ ।

पिंगळा–सं०स्त्री० [सं० पिंगला] १ शरीरस्थ योग की तीन प्रधान नाड़ियों में से एक । उ०—किण रौ गुरुजी मैं भोग लगावूं, किण रौ पवन ढळाऊं रे । इड़ा पिंगळा अवधु भोग लगावौ, सुखमण पवन ढुळावौ रे ।—स्री सुखरामजी महाराज

२ लक्ष्मी का एक नाम ।

३ दक्षिण दिग्गज की स्त्री ।

४ राजा भर्तृहरि की रानी का नाम । उ०—अगंजी रै अधीस प्रामार राज भरतरीहरि रै रांणी पिंगळा जिकण रौ दूजौ नाम अनंगसेना कहीजै सो अद्वितीय प्रीति रौ आस्पद वणी ।
—वं.भा.

५ एक भगवद्भक्त वेश्या का नाम ।

६ एक चिड़िया ।

७ गोरोचन ।

पिंगा–सं०स्त्री० [सं०] १ एक रक्तवाहिनी नाड़ी ।

२ हल्दी ।

३ केशर ।

४ हरताल ।

५ चण्डिका देवी ।

पिंगी–सं०स्त्री० [देशज] वह पतली डोरी या रस्सी जिसे स्त्रियां खेत में काम करते समय बच्चे के पैर से बांध देती हैं ।

पिंगौ–सं०पु० [देशज] बरसात बीत जाने पर नदी द्वारा किनारे पर छोड़ दी गई मिट्टी ।

२ देखो 'पींगौ' (रू.भे.)

पिंछांटणौ, पिंछांटबौ–क्रि०स० [देशज] पछाड़ना, पटकना ।

उ०—कबूड़ा रौ तौ फींदी बिखरतौ बिखरतौ बिखरैला, म्है अबारू थनै पिंछांटनै मार न्हांकूला ।—फुलवाड़ी

पिंछांटियोड़ौ–भू०का०कृ०—पछाड़ा हुआ, पटका हुआ ।

(स्त्री० पिंछांटियोड़ी)

पिंजड़ौ—देखो 'पींजरौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पिंजण, पिंजन—देखो 'पींजण' (रू.भे.)

उ०—१ बैठा बिजण बिण हिंजरता बारै, घुंघट पिंजर में पिंजण झुणकारै ।—ऊ.का.

उ०—२ कासी की हांसी करी, लांबी दे ललकार । पिंजन पाखे तूल तिम, उडते फिरै अगार ।—ऊ.का.

पिंजर—देखो 'पंजर' (रू.भे.)

उ०—१ रथरूपी पिंजर रचक, सकल नियंता सांम रौ । ओर रौ डर नहीं डर अवस, रात दिवस उण रांम रौ ।—ऊ.का.

उ०—२ प्रीति जु मेरे पीव की, पैठी पिंजर मांहि । रोम रोम पिव पिव करै, दादू दूसर नांहि ।—दादूवांणी

पिंजरौ—१ देखो 'पींजरौ' (रू.भे.)

उ०—मांनै न वयण जो हमैं मुझ, तौ जड़ूं जंजीरां माय तुझ । पिंजरै जड़ूं सुल्तांन पेस, भेज दूं करै दरवेस भेस ।—वि.सं.

२ देखो 'पंजर' (अल्पा०. रू.भे.)

पिंजस–सं०पु० [फा० फिनस] १ पलंग, ढोलिया ।

उ०—काछव काछ घणीह, बसौ तौ वासौ म्हेदा । दूध पखाळूं देह, पिंजस ढळावूं पोढणै ।—अज्ञात

२ एक प्रकार की सवारी जो बन्द पालकी की तरह की होती थी ।

रू०भे०—पिनस, पींजस, पीनस ।

पिंजारण–सं०स्त्री०—पिंजारा जाति की स्त्री ।

उ०—चटपट पिंजारण घट घट छुच्चैंठी । अटपट आंतां नै तांतां जिम ऐंठी ।—ऊ.का.

पिंजारा–सं०स्त्री०—रूई धुनने का कार्य करने वाली एक जाति
—मा.म.

रू०भे०—पिनारा, पींजारा, पीनारा ।

पिंजारौ–सं०पु० [सं० पिञ्जनम्] (स्त्री० पिंजारण, पिंजारी) पिनारा जाति का व्यक्ति, धुनिया ।

रू०भे०—पिनारो, पींजारो, पीनारो।

पिंजूस, पिंजूसन–सं०पु० [सं० पिंजूषः] १ श्रवणेन्द्रिय, कान।

उ०—पिंजूसन ताटंक यों यों कुंडळ पाया।—वं.भा.

२ कान का मैल या ठेठ।

रू०भे०—पिजूसण।

पिंड–सं०पु० [सं० पिण्डम् या पिण्डः] १ कोई गोलमटोल टुकड़ा।

२ कोई द्रव्यखण्ड, ठोस टुकड़ा।

३ ढेर, राशि।

४ गया, हरिद्वार, पुष्कर, सोरों आदि तीर्थों में पितरों की अस्थि-विसर्जन करने के लिए बनाया जाने वाला आटे का गोला।

उ०—परागजी आय मकर री नाहण करि फेर पाछा जाय कुंवर रा पिंड भरायां पछै गैदनाथजी जगन्नाथजी परस मारकंडेय कुंड तरपण किया।—पलक दरियाव री वात

क्रि०प्र०—भराणो, सराणो।

५ श्राद्ध में पितरों को अर्पण करने हेतु पके हुए चावलों का हाथ से बनाया हुआ गोला।

यौ०—पिंडदान, सपिंड।

६ युद्ध में वीरगति प्राप्त करने की अवस्था में घायल योद्धा द्वारा पितरों को अर्पण करने हेतु अपने खून से बनाया जाने वाला मिट्टी का गोला। उ०—तठै पडि खेत किया पिंड तत्र। रिणो जळ गंग समेळ रतत्र।—सू.प्र.

अल्पा०—पिंडी, पिंडोळी।

मह०—पिंडाण।

७ शरीर, देह (अ.मा.) (ह.नां.मा.)

उ०—१ ताहरां वीरमदे कह्यौ—'जाह रे हरदास ! तैं म्हारो पांच हजार रो घोडो वढायो'। ताहरां हरदास कह्यौ—'कुरजपूत ! म्हैं म्हारो पिंड ही वढायो'।—नैणसी

मुहा०—१ पिंड छुडाणो—किसी का पीछा छुड़ाना।

२ पिंड छोडणो—साथ लगा न रहना।

३ पिंड पड़णो—पीछे पड़ना।

८ शक्ति, बल।

रू०भे०—पिंडप।

९ भोजन, आहार।

१०—देखो 'पांडव' (रू.भे.)

उ०—कुरु पिंड वेध वसुधा, अपण मंभेरा मुज्भयो उमए। कुरखेत जुद्ध समयो, विणासिण काळ बुद्ध विपरीतो।—गु.रू.बं.

रू०भे०—पड, पांड, पिंडि, प्यंड।

अल्पा०—पिंडो, पिंडोळी।

मह०—पींड।

पिंडखजूर, पिंडखिजूर–सं०पु० [सं० पिण्डखर्जूरम्] १ मीठे फलों वाला खजूर जाति का वृक्ष (उ.र)

२ खजूर नामक पेड़ का फल।

उ०—वे मीठा मीठा पिंडखिजूर विना मेडियां ऊंची करियां ई तोड़ लेता।—फुलवाड़ी

पिंडज–सं०पु० [सं०] १ सब अंगों सहित गर्भ से सजीव निकलने वाला प्राणी।

२ पुत्र।

पिंडत—देखो 'पंडित' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—जणां पिता री कहण सूं कमळाकर घन लेय कासी गयो। तेथी पिंडतां री मोकळी सेवा करी।—सिंघासणबत्तीसी

पिंडदान–सं०पु० [सं० पिण्डदान] १ अन्तिम संस्कार के समय तथा उसके बाद मृत आत्मा के लिए अन्न के पिण्ड बना कर दान करने का कर्म।

वि०वि०—यह कर्म कुछ लोगों में मृत्यु के दिन से ९ दिन तक तथा कुछ में १२ दिन तक किया जाता है।

२ श्राद्ध पक्ष में पितरों को पिण्ड देने क कर्म।

३ युद्ध भूमि में घायल वीर द्वारा अपने रक्त से मिट्टी का पिण्ड बना कर पितरों को अर्पण करने की क्रिया।

पिंडप–सं०पु० [सं० पिंडम्+रा.प्र.प] १ शक्ति, बल।

२ देखो 'पिंड' (रू.भे.)

पिंडपुस्प–सं०पु० [सं० पिण्डपुष्पम्] १ अनार, दाडिम (अ.मा.)

२ अशोक वृक्ष।

३ गुलाब विशेष।

पिंडबड़ी—देखो 'पिंडवड़ी' (रू.भे.)

पिंडबळी–वि० [सं० पिण्ड+बल+रा.प्र.ई] बलवान शरीर वाला। शक्तिशाली, बलवान।

उ०—तारां हटग जांण वेतावां, आयो वाळ अफारा। वेहू एम जूटिया.बंधव, पिंडबळी अणहारा।—र.रू.

पिंडर—देखो 'पांडुर' (रू.भे.)

उ०—जिण घण काज उमाहियो, घण हुंदो ऊ वेस। कुच माऊ का खिस गया, पिंडर हुवा ज केस।—ढो.मा.

पिंडरू–सं०पु० [सं० पिण्ड] वह अशौच जो घर में किसी का जन्म होने पर लगता है।

रू०भे०—पडरू।

पिंडळी—देखो 'पींडो' (अल्पा०, रू.भे.) (जैन)

पिंडवड़ियो–स०पु०—पिंडवड़ी के अनुसार कार्य करने वाला व्यक्ति।

पिंडवड़ी–सं०स्त्री० [सं० पिण्ड+राज० वड़ी] किसानों के कृषि-कार्य की एक रीति विशेष।

वि०वि०—इसमें आवश्यकता पडने पर एक किसान दूसरे किसान के यहां काम करने जाता है। इसके बदले में दूसरा किसान पहले किसान के यहां काम करने आता है। इसमें एक दूसरे को मजदूरी के पैसे नहीं देने पड़ते हैं।

रू०भे०—पिंडवड़ौ ।

पिंडवाय-सं०स्त्री० [ ] भिक्षा के लिए घूमने की क्रिया, भिक्षार्थ भ्रमण (जैन)

पिंडवौ—१ देखो 'पिंड' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—घर चाढि मांझी मिळै थाट मोटै 'घड़ै', पिंडवा सतावी तुरा पाखर पड़ै । होय वीरां हालक जोगणी हड़हड़ै, 'जालमौ' किणी सिर आज ससतर जड़ै ।—जालमसिंह मेड़तिया री गीत

२ देखो 'पांडव' (अल्पा०, रू.भे.)

पिंडा-सं०पु० [सं० पिण्ड] श्रीमान, आप ।

रू०भे०—पंडा ।

पिंडाकार-वि० [सं०] गोल-मटोल ।

पिंडांण—देखो 'पिंड' (४ से ६) (मह०, रू.भे.)

उ०—न भागै जिकै जुद्ध, भागां न मारै । सरीरां हुआं खंड, पिंडांण सारै ।—वचनिका

पिंडार-सं०पु० [सं०] १ गाय भैंस चराने वाला, ग्वाला, गोप ।

उ०—भरयां मांग सिंदूर मारग्ग भाळै, वहै सांवळी व्रज सेरी विचाळै । वहै लार लव्वार पिंडार बाळै, नवा नेह सूं तेह गोपी निहाळै ।—ना.द.

२ देखो 'पिंडारौ' (मह०, रू.भे.)

पिंडारक-सं०स्त्री० [सं०] १ एक पवित्र नदी का नाम ।

सं०पु०—२ एक नाग का नाम ।

३ गुजरात में स्थित एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

पिंडारड़ौ—देखो 'पिंडारौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पिंडारा-सं०स्त्री० [सं० पिंडार] दक्षिण की एक जाति ।

उ०—पिंडारां री बाईस ढाळ हुलकर रै तावीन मैं हुती । खरड़ा री राड़ में हैदराबादियां नूं लूंटी घनाढ्य हुआ ।—बां.दा ख्यात

वि०वि०—यह जाति पहले कर्नाटक, महाराष्ट्र आदि में बसती थी और खेती करती थी । बाद में लूटमार करने लगी और मुसलमान हो गई । मुसलमान होने पर भी यह जाति गोमांस नहीं खाती है और देवताओं की पूजा तथा व्रत उपवास करती है ।

पिंडारियौ—देखो 'पिंडारौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पिंडारी-सं०पु० [देशज] पिंडारा जाति या इस जाति का व्यक्ति ।

पिंडारौ-सं०पु० [देशज] (स्त्री० पिंडारण, पिंडारी) १ पिंडारा जाति का व्यक्ति ।

मह०—पिंडार ।

[सं० पिंड+रा. प्र. आरौ] २ वर्षा के दिनों में जलाने हेतु पाथे हुए उपलों का सुरक्षित ढेर ।

क्रि०प्र०—थापणौ, दैणौ ।

रू०भे०—पींडारौ ।

अल्पा०—पिंडारड़ौ, पिंडारियौ, पींडारकौ, पींडारड़ौ, पींडारियौ ।

मह०—पिंडार, पींडार ।

पिंडाळ, पिंडाळू-सं०पु० [सं० पिण्ड+आलुच्] १ एक प्रकार का कन्द ।

उ०—गाजर मूळा गिरमिरि, पिंडाळू नहीं नाहि । लसण लसाई डूंगली, तिज परबत अवगाहि ।—मा.कां.प्र.

२ अरवी (मेवाड़)

रू०भे०—पींडाळू ।

पिंडि—देखो 'पिंड' (रू.भे.)

उ०—कंचण कंकण केउर, नेउर पइं भुयदंडि । चंदनि देह विलेपनु, लेप न लागइ पिंडि ।—जयसेखर सूरि

पिंडी-सं०स्त्री० [सं० पिण्ड] १ पोटली, गठड़ी (अमरत)

२ सारंगी को बजाने के गज (धनुषाकार वस्तु) का हाथ से पकड़ने का स्थान ।

३ कस कर लपेटे हुए सूत रस्सी आदि का लच्छा या गोला ।

४ देखो 'पींडी' (रू.भे.)

पिंडुपिंड-सं०पु० [सं० पिंड] १ कामदेव (अ.मा.)

२ आप, स्वयं ।

पिंडोळी-सं०स्त्री० [?] १ लता विशेष । उ०—पिंडोळी नइं पद्मिनी, पोयणि पुंख पटोळि । पारी संकळ पाथरी, पींडी प्राज प्रगोळि ।—मा.कां.प्र.

२ देखो 'पिंडी' (अल्पा०. रू.भे.)

३ देखो 'पिंड' (अल्पा०, रू.भे.)

पिंडौ—देखो 'पिंड' (अल्पा०, रू.भे.)

पिण—देखो 'पण' (रू.भे.)

उ०—मुनि सुव्रत मन माहरौ जी, लागौ तुम लगि थेट । पिण तूं मींटन मेलवे जी, ए अत दुक्कार नेट ।—वि.कु.

देखो 'पींदौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पिंदी—देखो 'पींदौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पिंदौ—देखो 'पींदौ' (रू.भे.)

पिंधन-सं०पु० [सं० पिधानं] १ वस्त्र, कपड़ा ।

२ आवरण, ढक्कन ।

पियाल—देखो 'पाताल' (रू.भे.)

उ०—भलाई री जड़ ठेठ पियाल मैं है ।—फुलवाड़ी

पि-सं०स्त्री०—१ विषय ।

२ योनि, भग ।

३ भीष्म ।

४ पवित्र ।

५ शिखा ।

६ स्वर्ग (एका.)

पिम्र—देखो 'प्रिय' (रू.भे.)

पिम्रउ—देखो 'प्रिय' (रू.भे.)

पिम्रणौ, पिम्रवौ—देखो 'पीणौ, पीवौ' (रू.भे.)

उ०—आंगणि जळ तिरप उरप अलि पिम्रति, मरुत-चक्र किरि लियत मरू । रांमसरी खुमरी लागी रट, घूया माठा चद घरू ।—वेलि

पिअणहार, हारो (हारी), पिअणियो—वि०।
पिओड़ो, पियोड़ो—भू०का०कृ०।
पिईजणो, पिईजबो—कर्म वा०।
पिआई-सं०स्त्री०[सं० पा]१ कुए से पानी निकाल कर पिलाने की क्रिया।
२ उक्त कार्य करने वाले व्यक्ति को दिया जाने वाला पारिश्रमिक।
३ जलाशयों व कुओं पर पशुओं को पानी पिलाने के बदले में दिया जाने वाला धन।
४ देखो 'पिसाई' (रू.भे.)
रू०भे०—पिहाई, पी, पीआई, पीयाई।
पिआर—१ देखो 'प्यार' (रू.भे.)
२ देखो 'पाताल' (रू.भे.)
पिआरो—देखो 'प्यारो' (रू.भे.)
उ०—भला कन्या वाट जोवै कुंआरी। भला परणीजै हिमै करिजै पिआरी।—पी.ग्र.
(स्त्री० पिआरी)
पिआलो—देखो 'प्यालो' (रू.भे.)
उ०—पातिसाहां रा खासा भण्डां जाड़ा थंडा खंडा जाइस्यां। रूक पिआला पीअस्यां-पाइस्यां।—वचनिका
पिआस—देखो 'प्यास' (रू.भे.)
पिआसो—देखो 'प्यासो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिआसी)
पिउ—देखो 'प्रिय' (रू.भे.)
उ०—ऊनमियउ उत्तर दिसइं, काळी कंठळि मेह। हूं भीजूं घर अंगणइ, पिउ भीजइ परदेह।—ढो.मा.
पिउड़ो—देखो 'प्रिय' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—जारे तौ तइं इम कह्यु जी, तो मइं छोडि रे आठ। पिउड़ा मइं हूंसतां कह्यु जी, कुणसुं करस्यूं बात।—स.कु.
पिउहर—देखो 'पी'र' (रू.भे.)
उ०—अर केही दिन उठै हि रहि चंदाणी कुमराणी नूं, आधा न सहित पिउहर मेल्हि आयो।—वं.भा.
पिऊ—देखो 'प्रिय' (रू.भे.)
पिकंवर—देखो 'पैगंबर' (रू.भे.)
उ०—असुरांण तुरकांण रा दळ राजांन ऊपरै विदा हुआ सो किण भांत रा कहीजै छै रहमांण रहीम अलाह परवरदिगार, पीरां-पिकंबरां री औलाद।—रा.सा.सं.
पिक—सं०स्त्री० [सं०] १ कोयल (अ.मा.) (डि.को.)
उ०—मोर सिखर ऊंचा मिळै, नाचै हुवा निहाल। पिक ठहकै झरणा पड़ै, हरिए डूंगर हाल।—बां.दा.
२ काला* (डि.को.)
रू०भे०—पिकी।
पिककंठी—वि० [सं० पिककण्ठी] कोयल के समान मधुर कण्ठवाली।
पिकबैणी—देखो 'पिकबैनी' (रू.भे.)
पिक-वलभ—सं०पु० [सं० पिकवल्लभ] आम का वृक्ष (अ.मा.)
पिकबैनी—वि० [सं० पिक+वचन+रा.प्र.ई] कोयल के समान मधुर वाणी वाली।
रू०भे०—पिकबैणी।
पिकी—देखो 'पिक' (रू.भे.)
पिक्खणो, पिक्खबो—देखो 'पेखणो, पेखबो' (रू.भे.)
उ०—जिण दिट्ठइ हुई सुइ धम्ममइ। अवहट्ठ काइ उव्वहहु। पहु जब फणि मंडिउ वास जिणु अजयमेरि किन पिक्खहु।—कवि पल्ह
पिक्खिणो, पिक्खिबो—देखो 'पेखणो, पेखबो' (रू.भे.)
उ०—घण वरसंदा बूंद ज्यां, नहिं पार लहंदा। पान सिरंदा पिक्खियै, पंथा उतरंदा।—सू.प्र.
पिक्खियोड़ो—देखो 'पेखियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिक्खियोड़ी)
पिंखणय-सं०पु० [सं० प्रेक्षणम्] दृश्य। उ०—वेरोडरि वर मयरि, तुर सहिं गज्जंति अंबरु। नच्चंतिय वर रमणि, ठामि-ठामि पिंखणय सुंदर।—सारमूरति मुनि
पिगळणो, पिगळबो—देखो 'पिघळणो, पिघळबो' (रू.भे.)
पिगळणहार, हारो (हारी), पिगळणियो—वि०।
पिगळिओड़ो, पिगळियोड़ो, पिगळयोड़ो—भू०का०कृ०।
पिगळीजणो, पिगळीजबो—भाव वा०।
पिगळाणो, पिगळाबो—देखो 'पिघळाणो, पिघळाबो' (रू.भे.)
पिगळणहार, हारो (हारी), पिगळणियो—वि०।
पिगळायोड़ो—भू०का०कृ०।
पिगळाईजणो, पिगळाईजबो—कर्म० वा०।
पिगळायोड़ो—देखो 'पिघळायोड़ो' (रू.भे)
(स्त्री० पिगळायोड़ी)
पिगळियोड़ो—देखो 'पिघळियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिघळियोड़ी)
पिगाळणो, पिगाळबो—देखो 'पिघाळणो, पिघाळबो' (रू.भे.)
पिगाळणहार, हारो (हारी), पिगाळणियो—वि०।
पिगाळिओड़ो, पिगाळियोड़ो, पिगाळयोड़ो—भू०का०कृ०।
पिगाळीजणो, पिगाळीजबो—कर्म वा०।
पिगाळियोड़ो—देखो 'पिघाळियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिगाळियोड़ी)
पिघळणो, पिघळबो-क्रि०अ० [सं० प्र+गलनम्] १ ताप से किसी वस्तु का द्रव रूप में होना।
२ चित्त में दया उत्पन्न होना, पसीजना। द्रवीभूत होना।
उ०—१ पण तोई वो मन माथै काबू राखियो। दरसण वास्तै

आयोडा भगतां नै आतमा परमातमा परम मुगति अर कल्याण रा वारा मैं आपरा स्रीमुख सूं अेहा आदेस करतो कै वांरी काया उण वगत पिघळती सी लखावती ।—फुलवाड़ी

उ०—२ उण वगत री अरड़ावणी सुणियो तो सिंघां रा ई काळजा पिघळ जावै ।—फुलवाड़ी

उ०—३ मिळण नै आया दिन सूं रात, पिघळना दळिया साम्ही ढाळ। रह्यो न दिन दिन रात न रात, विचाळै सांभ घणी जंजाळ ।—सांभ

पिघळणहार, हारो (हारी), पिघळणियो—वि० ।

पिघळाड़णो, पिघळाड़बो, पिघळाणो, पिघळाबो, पिघळावणो, पिघळावबो—प्रे०रू० ।

पिघळिओड़ो, पिघळियोड़ो, पिघळयोड़ो—भू०का०कृ० ।

पिघळीजणो, पिघळीजबो—भाव वा० ।

पिघाळणो, पिघाळबो—सक०रू० ।

परघळणो, परघळबो, पिगळणो, पिगळबो, पीगळणो, पीगळबो, पीघळणो, पीघळबो, प्रगळणो, प्रगळबो—रू०भे० ।

पिघळाड़णो, पिघळाड़बो—देखो 'पिघळाणो, पिघळाबो' (रू०भे०)

पिघळाड़णहार, हारो (हारी), पिघळाड़णियो —वि० ।

पिघळाड़िओड़ो, पिघळाड़ियोड़ो, पिघळाड़योड़ो—भू०का०कृ० ।

पिघळाड़ीजणो, पिघळाड़ीजबो—कर्म वा० ।

पिघळाड़ियोड़ो—देखो 'पिघळायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पिघळाड़ियोड़ी)

पिघळाणो, पिघळाबो-क्रि०स० ['पिघळणो' क्रि०काप्रे०रू] १ किसी कड़े या जमे हुए पदार्थ को गरमी पहुँचा कर द्रव रूप में लाना ।

२ किसी के मन में दया उत्पन्न करना ।

पिघळाणहार, हारो (हारी), पिघळाणियो—वि० ।

पिघळायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पिघळाईजणो, पिघळाईजबो—कर्म वा० ।

पिघळणो, पिघळबो—अक०रू० ।

पिगळाणो, पिगळाबो, पिघळाड़णो, पिघळाड़बो, पिघळावणो, पिघळावबो ।—रू०भे० ।

पिघळायोड़ो-भू०का०कृ०—१ किसी कड़े या जमे हुए पदार्थ को गरमी पहुंचा कर द्रव रूप में लाया हुआ ।

२ दयार्द्र किया हुआ ।

(स्त्री० पिघळायोड़ी)

पिघळावणो, पिघळावबो—देखो 'पिघळाणो, पिघळाबो' (रू०भे०)

उ०—बूंहरि पड़य अथाह, ते विरहानल नो धूंम । वेगा जावो कोई, पिघळावो प्रिय मन मूंम ।—ध.व.ग्रं.

पिघळावणहार, हारो (हारी), पिघळावणियो- वि० ।

पिघळाविओड़ो, पिघळावियोड़ो, पिघळाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पिघळावीजणो, पिघळावीजबो—कर्म वा० ।

पिघळावियोड़ो—देखो 'पिघळायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पिघळावियोड़ी)

पिघळियोड़ो-भू०का०कृ०—१ ताप के कारण किसी घन पदार्थ का द्रव रूप में हुवा हुआ ।

२ चित्त में दया उत्पन्न हुवा हुआ, पसीजा हुआ, द्रवीभूत हुवा हुआ ।

(स्त्री० पिघळियोड़ी)

पिघाळणो, पिघाळबो-क्रि०स० [सं० प्रगलनम्] १ किसी घन पदार्थ को ताप द्वारा द्रव रूप में करना ।

२ किसी के चित्त में दया उत्पन्न करना ।

पिघाळणहार, हारो (हारी), पिघाळणियो—वि० ।

पिघाळिओड़ो, पिघाळियोड़ो, पिघाळ्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पिघाळीजणो, पिघाळीजबो—कर्म०वा० ।

पिघळणो, पिघळबो—अक०रू० ।

पिगाळणो, पिगाळबो, पीघाळणो, पीघाळबो—रू०भे० ।

पिघाळियोड़ो-भू०का०कृ०—किसी घन पदार्थ का ताप द्वारा द्रव रूप में किया हुआ ।

२ किसी के चित्त में दया उत्पन्न किया हुआ ।

(स्त्री० पिघाळियोड़ी)

पिड़-सं०पु०—युद्ध, संग्राम ।

उ०—आजे मींत अमल्ल, लग्ग-वग्गां खणकारां । पिड़ सींधू सुर पड़ै, भड़ां कांनां भणकारां ।—ऊ.का.

रू०भे०—पिड़ि ।

पिड़गनूं, पिड़गनो—देखो 'परगनो' (रू.भे.)

उ०—जैं दिन अराई को पिड़गनूं भी रीज कोनूं । मादरसिंघ लीनूं भूप माधोसिंघ दीनूं ।—शि.वं.

पिड़गी-सं०स्त्री० [सं० पिटक] ध्वनि, आवाज ।

पिड़जांन—देखो 'पड़जांन' (रू.भे.)

पिड़वा—देखो 'पड़वा' (रू.भे.)

उ०—इकताळा रै चैत सुद, आद उदै नवरात । असुरां सिर आयो 'अखो', पिड़वा रै परभात ।—रा.रू.

पिड़ि-सं०पु० [सं० पिंड] १ वृक्ष का तना ।

उ०—घटिघटि घण घाउ घाइ घाइ रत घण, ऊंच छिछ ऊछळै अति । पिड़ि नीपनो कि खेत्र प्रवाळा, सिरा हुस नीसरै सति ।

—वेलि

२ देखो 'पिड़' (रू.भे.)

उ०—हसतिमार भेळी हुओ, काळी दळां किवाड़ । भागा पड़ि गाहण भड़ां, पिड़ि अणभंग पहाड़ ।—वचनिका

पिचंड-सं०पु० [सं०] उदर, पेट (डि.को., ह.नां.)

पिचंतर-वि० [सं० पञ्च सप्तति] सत्तर और पांच का योग ।

उ०—ले माल घनै ढांणो लगै, डारण खग हथ दौड़ियां । मंत-रूप साढ धोड़ै सहत, वढ़ो पिचंतर घोड़ियां ।—पा.प्र.

रू०भे०—पचेतर, पंचोतर, पचहत्तर ।
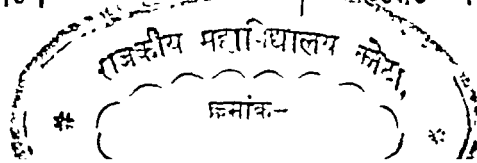
पिचंतरमों-वि०—पचहत्तरवां, ७५वां।
रू०भे०—पचहत्तरमो।
पिचंतरे'क-वि०—पचहत्तर के लगभग।
रू०भे०—पचहत्तरे'क।
पिचंतरो-सं०पु०—पचहत्तर का वर्ष।
रू०भे०—पंचोतरो, पचहत्तरो।
पिचक—देखो 'पंचक' (रू.भे.)
पिचकणो, पिचकबो-क्रि०अ० [सं० पिच्च्-दबना] किसी फूले या उभरे हुए तल का दब जाना। उ०—दोवड़ी कमर, पिचक्योड़ा गाल नैं बैया रै आ'ळा जिसा लटकता हाँचळ।—फुलवाड़ी
पिचकणहार, हारो (हारी), पिचकणियो—वि०।
पिचकाड़णो, पिचकाड़बो, पिचकाणो, पिचकाबो, पिचकावणो, पिचकावबो—प्रे०रू०।
पिचकिओड़ो, पिचकियोड़ो, पिचक्योड़ो—भू०का०कृ०।
पिचकीजणो, पिचकीजबो—भाव वा०।
पिचकाड़णो, पिचकाड़बो—देखो 'पिचकाणो, पिचकाबो' (रू.भे.)
पिचकाड़णहार, हारो (हारी), पिचकाड़णियो—वि०।
पिचकाड़िओड़ो, पिचकाड़ियोड़ो, पिचकाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।
पिचकाड़ीजणो, पिचकाड़ीजबो—कर्म वा०।
पिचकाड़ियोड़ो—देखो 'पिचकायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिचकाड़ियोड़ी)
पिचकाणो, पिचकाबो-क्रि०स० ('पिचकणो' क्रिया का प्रे०रू०) किसी फूले अथवा उभरे हुए तल को दबवाना।
पिचकाणहार, हारो (हारी), पिचकाणियो—वि०।
पिचकायोड़ो—भू०का०कृ०।
पिचकाईजणो, पिचकाईजबो—कर्म वा०।
पिचकणो, पिचकबो—अक० रू०।
पिचकायोड़ो-भू०का०कृ०—किसी फूले अथवा उभरे तल को दबवाया हुआ।
(स्त्री० पिचकायोड़ी)
पिचकार, पिचकारका, पिचकारी-सं०स्त्री० [सं० पिच्चकार] १ पानी या अन्य तरल पदार्थ को जोर से फेंकने का एक नलदार यंत्र।
उ०—१ रसियो तो बंदो पिण बंदी बी तरेदार, पिचकार बैं तो करणफूल सूं बचावै छै।—पनां बीरमदे री वात
उ०—२ कई छळ सूं पिचकारका कान में न्हांकै छै।
—पनां बीरमदे री वात
उ०—३ घणै अबीर नै गुलाल मांहै गरकाव हुवा थकां अबीर गुलाल उड़ि रहिया छै। दिस दिस केसरिआं पिचकारी छूटि रही छै।—रा सा.सं.
क्रि०प्र०—चलाणी, छोड़णी, मारणी, लगाणी।
मुहा०—१ पिचकारी छूटणी—तरल पदार्थ का पतली धार से फुहारे की तरह निकलना।
२ पिचकारी छोड़णी—पानी, रंगीन पानी आदि को पिचकारी से फेंकना।
२ इस यंत्र के द्वारा छोड़ी जाने वाली लम्बी द्रव-धारा।
३ इसी धारा के समान अन्य किसी पदार्थ से निकली हुई लम्बी द्रव-धारा।
अल्पा०—पिचरकी, पीचरकी।
मह०—पिचरको, पीचरको।
पिचकावणो, पिचकावबो—देखो 'पिचकाणो, पिचकाबो' (रू.भे.)
पिचकावणहार, हारो (हारी), पिचकावणियो—वि०।
पिचकाविओड़ो, पिचकावियोड़ो, पिचकाव्योड़ो—भू०का०कृ०।
पिचकावीजणो, पिचकावीजबो—कर्म वा०।
पिचकाव्योड़ो—देखो 'पिचकायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिचकावियोड़ी)
पिचकिच-सं०पु० [देशज] खजूर (अ.मा.)
पिचकियोड़ो-भू०का०कृ०—दबा हुआ (फूला अथवा उभरा तल)
(स्त्री० पिचकियोड़ी)
पिचड़णो, पिचड़बो—देखो 'पिछड़णो, पिछड़बो' (रू.भे.)
पिचड़णहार, हारो (हारी), पिचड़णियो—वि०।
पिचड़िओड़ो, पिचड़ियोड़ो, पिचड़्योड़ो—भू०का०कृ०।
पिचड़ीजणो, पिचड़ीजबो—भाव वा०।
पिचड़ियोड़ो—देखो 'पिछड़ियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिचड़ियोड़ी)
पिचपिचाणो, पिचपिचाबो-क्रि०अ० [सं० पिच्च] पिचकने के कारण घाव या किसी अन्य वस्तु से पानी, गूदा या पीब आदि का बाहर निकलना, रसना।
पिचपिचाणहार हारो (हारी), पिचपिचाणियो—वि०।
पिचपिचायोड़ो—भू०का०कृ०।
पिचपिचीजणो, पिचपिचीजबो—भाव वा०।
पिचपिचायोड़ो-भू०का०कृ०—रसाया हुआ।
(स्त्री० पिचपिचायोड़ी)
पिचपिचाहट-सं०पु०—गीला या आर्द्र रहने का भाव, पिचपिचाने का भाव।
पिचपिचो—१ देखो 'चिपचिपो'।
२ देखो 'पचपचो' (रू.भे.)
पिचरंग—१ देखो 'पचरंग' (रू.भे.)
२ देखो 'पचरंगो' (रू.भे.)
उ०—सुपने में देख्या भवरजी नैं आवता जी। कोई माथै पिचरंग पाग (ए जी ए) पाग।—लो.गी.
पिचरंगो—देखो 'पचरंगो' (रू.भे.)
उ०—छूटै म्हारा बाजूड़ा री लूं'ब, लट उळझी जाय। कोई पिचरंगं

मोळियै रा पल्ला लहराय ।—चेत मांनखा

पिचरकी—देखो 'पिचकारी' (ग्रल्पा., रू.भे.)

उ०—सहज भाव सुगंध तेलइं, पिचरकी सम जल रसइं । गुण राग-रंग गुलाल उडइ, करुण ससबोही वसइ ।—वि.कु.

पिचरकौ—देखो 'पिचकारी' (मह., रू.भे.)

उ०—ग्रस्त्र गुलाल ग्रबीर उडायौ । सस्त्र पिचरका छिब सरसायौ ।
—ऊ.का.

पिचांणणौ, पिचांणबौ—देखो 'पं'चांणणौ, पं'चांणबौ' (रू.भे.)

पिचांणणहार, हारौ (हारी), पिचांणणियौ—वि० ।

पिचांणिग्रोड़ौ, पिचांणियोड़ौ, पिचांण्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पिचांणीजणौ, पिचांणीजबौ—कर्म वा० ।

पिचांणवौं—देखो 'पंचांणूमौं' (रू भे.)

पिचांणियोड़ौ—देखो 'पं'चांणियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पिचांणियोड़ी)

पिचास—देखो 'पिसाच' (रू.भे.)

(स्त्री० पिचासणी)

पिचियासियौ-सं०पु०—८५वां वर्ष ।

रू०भे०—पचियासियौ ।

पिचियासी-वि० [सं० पञ्चाशीति] जो गिनती में ग्रस्सी ग्रौर पांच हो, पांच कम नब्बे ।

सं०पु०—पचासी की सूचक संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—८५ ।

रू०भे०—पंचासी, पंच्यासी, पंच्यासीइ, पचियासी, पच्चासी, पिच्यासी ।

पिचियासीं'क-वि०—८५ के लगभग ।

पिचियासीमौं-वि०—८५ वां ।

पिचियौ-सं०पु०—१ छोटा बच्चा । उ०—तठा उपरांत सूरदास उण नै समझावतां कह्यौ—ग्रबै बाला बोलौ रें' । थूं ई सोच, थारै रोवण सूं कांई कारी लागेला । सांमी ग्रौ बाळ पिचियौ चमकेला ।—फुलवाड़ी

२ फोड़ा, फुंसी ।

रू०भे०—पचियौ ।

पिचुळ-सं०पु०—झाऊ का पेड़ ।

पिचू-सं०पु० [देशज] १ कैर का वृक्ष ।

२ कैर का पका हुग्रा फल (जयसलमेर)

३ नीम का वृक्ष । उ०—उखारत मूल पिचू बदुतार । बजारनि हाक परी हटनार ।—ला.रा.

पिचोतर—देखो 'पचोतर' (रू.भे.)

पिचोतर-सौ—देखो 'पचोतर-सौ' (रू.भे.)

पिचोतरौ-सं०स्त्री० [स० पंचोत्तर+रा.प्र. ई] सौ के ऊपर पांच ।

पिचोवड़ौ—देखो 'पछेवड़ौ' (रू.भे.)

पिच्चक—देखो 'पंचक' (रू.भे.)

पिच्छ-सं०पु० [सं०] पंख, पर । उ०—गुणवंता सहू को करइ, जिहां जाइं तिहां इच्छ । नरपति सिर-सेखरि धरि, मोर तणां जे पिच्छ ।—मा.कां.प्र.

पिच्छम—देखो 'पच्छिम' (रू भे.)

उ०—'ग्रौरंग' कोप विलोप भू, गिणै ग्रकब्बर साह । सांम्हा चढिया वावसू, खड़िया पिच्छम राह ।—रा.रू.

पिच्छु-स०स्त्री०—ह्रस्व इकार की मात्रा । उ०—किवलौ पिच्छु कहै लहू, लघु ग्रंक लहावै । गिणै छंद बस गुरु, कवी लघु चार कहावै ।
—र.ज.

पिच्यांणमै—देखो 'पचांणू' (रू.भे.)

पिच्यांणमौं—देखो 'पचांणूमौं' (रू.भे.)

पिच्यांणु—देखो 'पचांणू' (रू.भे.)

पिच्यासी—देखो 'पिचियासी' (रू.भे.)

पिछक-सं०पु० [सं० पिच्छक] तमालपत्र (ग्र.मा.)

पिछड़णौ, पिछड़बौ-क्रि०ग्र० [सं० पश्चात्कृत] १ पीछे रह जाना ।

क्रि०स०—२ बलपूर्वक किसी चीज को इस प्रकार दवाना कि वह टूट-फूट जाय ।

३ किसी रसदार वस्तु को दवा कर रस निकालना ।

पिछड़णहार, हारौ (हारी), पिछड़णियौ—वि० ।

पिछड़िग्रोड़ौ, पिछड़ियोड़ौ, पिछड़योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पिछड़ीजणौ, पिछड़ीजबौ—भाव वा०, कर्म वा० ।

पिछड़ियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ पीछे रहा हुग्रा ।

२ दबाव से टूटा हुग्रा (पदार्थ)

३ दबा कर रस निकाला हुग्रा (पदार्थ)

(स्त्री० पिछड़ियोड़ी)

पिछताग्रौ—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)

पिछताणौ, पिछतावौ—देखो 'पछताणौ, पछतावौ' (रू.भे.)

उ०—संकर वेगौ गयौ सिधाई । परजा दुखी घणी पिछताई ।
—ऊ.का.

पिछताणहार, हारौ (हारी), पिछताणियौ—वि० ।

पिछतायोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पिछताईजणौ, पिछताईजबौ—भाव वा० ।

पिछताप, पिछतापौ—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)

पिछतायोड़ौ—देखो 'पछतायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पिछतायोड़ी)

पिछताव—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)

पिछतावणौ, पिछतावबौ—देखो 'पछताणौ, पछतावौ' (रू.भे.)

उ०—यां को धन तो परौ दिरावौ । ग्ररु ब्रह्महत्या का प्राछत करावौ । नहीं तो पछै ही पछतावस्यौ । निदांन मारा जावस्यौ ।
—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

पिछतावणहार, हारौ (हारी), पिछतावणियौ—वि० ।
पिछताविश्रोड़ौ, पिछतावियोड़ौ, पिछताव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पिछतावीजणौ, पिछतावीजबौ—भाव वा० ।
पिछतावियोड़ौ—देखो 'पछतायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पछतावियोड़ी)
पिछतावौ—देखो 'पछतावौ' (रू.भे.)
उ०—वौ मन में पिछतावौ करतौ कै जोवण रा बारै वरस यूं ई तप में बिरथा गंवाया ।—फुलवाड़ी
पिछम—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)
पिछमांण—देखो 'पछमांण' (रू.भे.)
उ०—सारस केळ करै सैंजोड़ै, ऊंचा भमंग चढै तर ओड़ै । दिस पिछमांण बादळा दौड़ै, तद जळ नदियां ढावा तोड़ै ।
—वर्षा विज्ञान
पिछमांणौ—देखो 'पछमांण' (रू.भे.)
पिछमाद-सं०स्त्री० [सं० पश्चिम+रा. प्र. आद] पश्चिम दिशा ।
उ०—सूरज सह सोढांण रौ, महिपत घर पिछमाद । रांणौ ऊभां रावतां, ह्वै ण न देवां वाद ।—पा.प्र.
पिछमियौ—देखो 'पच्छिमी' (अल्पा., रू.भे.)
पिछलगी-सं०स्त्री०—पिछलगा होने का भाव, अनुसरण ।
पिछलगू, पिछलगौ, पिछलग्गू-सं०पु० [देशज] (स्त्री० पिछलगी) १ वह मनुष्य जो किसी के पीछे पीछे चले ।
२ अनुगामी, शिष्य ।
३ सेवक, नौकर ।
पिछलौ—देखो 'पाछलौ' (रू.भे)
उ०—१ भगवत करता नै करतब भुगतावै, पिछला पापां रा पांमर फळ पावै ।—ऊ.का.
उ०—२ गरवा लाय पिछली रात कूं मिल्यौ कुंजन में । नटवर वेस कियै अलबेलै ।—रसीलैराज
(स्त्री० पिछली)
पिछवा-सं०स्त्री० [सं० पश्चिम] पश्चिम दिशा का वायु ।
उ०—ठंडी ठंडी पिछवा चालै, ऊपर वरसै मेह । सारै वदन में छूटै कंपकंपी, भीजै सारी देह । मारूजी सुनसांन जंगळ में, रात अंधेरी थारौ चालीवौ ।—लो.गी.
रू०भे०—पछवा ।
पिछवाई—देखो 'पछवाई' (रू.भे.)
पिछवाड़ौ—देखो 'पछवाड़ौ' (रू.भे.)
उ०—मोरी गळियन में आवो जी घणस्यांम । पिछवाड़ै आय हेलो दीजो, ललिता सखी है मेरो नांम ।—मीरां
पिछवौ-सं०पु० [सं० पृष्ठ ?] पीठ के पीछे और पूंछ के ऊपर का हाथी का एक आभूषण ।
पिछांण—देखो 'पैंचांण' (रू.भे.)
उ०—१ ओखधि पिछांण खावौ अमल, ओखधि है नह अकल री । असल री मजौ क्यूं और है, निकमूं आणंद नकल री ।—ऊ.का.
उ०—२ बांमणी सूं खिलपोड़ौ करता थका कैवण लागा—म्हाराज कवरां सूं तौ थारी जलम २ री ओळख पिछांण है । पाखती मया थूं सगळा पिछाण काढ लेवैला ।—फुलवाड़ी
पिछांणणौ, पिछांणबौ—देखो 'पैंचांणणौ, पैंचाणबौ' (रू.भे.)
उ०—जात पांत सपने सम जांणूं । पाप पुण्य नहिं एक पिछांणूं ।
—ऊ.का.
पिछांणणहार, हारौ (हारी), पिछांणणियौ—वि० ।
पिछांणिओड़ौ, पिछांणियोड़ौ, पिछांणयोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पिछांणीजणौ, पिछांणीजबौ—कर्म वा० ।
पिछांणियोड़ौ—देखो 'पैंचाणियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पिछांणियोड़ी)
पिछांणी, पिछांणु—देखो 'पैंचांण' (रू.भे.)
उ०—माया दिसि रहे जन सोय । रांम भजन का आनंद होय । जन हरिदास तब भई पिछांणी । जब मिटि गई कुटुंब की कांणी ।
—ह पु.वा.
पिछाड़ी—देखो 'पछाड़ी' (रू.भे.)
पिछावड़ौ—देखो 'पछोकड़ौ' (रू.भे.)
पिछी—सं०स्त्री०—ह्रस्व इकार की मात्रा ।
पिछुं-सं०पु० [सं० पुच्छ] १ पूंछ । उ०—उर ढाल वाढका वर्ण एम झाटका पिछुं दा चवर जेम ।—पे.रू.
२ देखो 'पिच्छू' (रू.भे.)
पिछेड़ौ—देखो 'पछेवड़ौ' (रू भे)
पिछेड़ौ—देखो 'पछेवडौ' (रू.भे.)
पिछेवड़ौ—देखो 'पछेवड़ौ' (रू.भे)
उ०—कचियौ प्रेम पिछेवड़ौ, कीधी सेज तियार । गोवर रमै मंदिर गई, पिउ मांणी तिण वारि ।—व स.
पिछोकड़, पिछोकड़ौ, पिछोकड़उ, पिछोकडौ—देखो 'पछोकड़ौ' (रू.भे.)
उ०—१ वीरो मेरो दौड़ पिछोकड़ जाय । भावज तो घर में घुस गई जी म्हारा राज ।—लो.गी.
उ०—२ मूळू छोडै चढ पाटण आयौ, सौ माळी रै घर में पिछोकड़ै आय ऊभौ रह्यौ ।—नैणसी
पिछोड़ी—देखो 'पछेवड़ी' (रू.भे.)
उ०—वायर पिछोड़ी को गालणौ हो देवी, रनु बाई भात लई जाय ।
—लो.गी.
पिछोड़ौ, पिछोवड़ौ—देखो 'पछेवड़ौ' रू.भे.)
पिछोहा-सं०पु० [देशज] सांसी जाति में पुत्र जन्म के छठे दिन अपने भाई-बंधुओं को दिया जाने वाला भोज (मा.म.)
पिजूसण—१ देखो 'पिंजूसण' (रू.भे.)

२ देखो 'परयूसण' (रू.भे.)
पिटंत-सं०स्त्री०—पीटने की क्रिया, मारपीट।
पिटणौ, पिटबौ-क्रि०अ० [सं० पीडनम्] १ पीटा जाना, मार खाना।
२ प्रतियोगिता आदि में हारना।
३ कुछ खेलों में गोट, मोहरे आदि का मारा जाना।
उ०—जुगत बिन सतरंज जीत न जांणी। ऊमरदांन विवेक बिना वपु, पैदल खूब पिटांणी। बुरद भई न भई चौमोरे, प्याद मात भई प्रांणी।—ऊ.का.
पिटणहार, हारौ (हारी), पिटणियौ—वि०।
पिटवाड़णौ, पिटवाड़बौ, पिटवाणौ, पिटवाबौ, पिटवावणौ, पिटवावबौ, पिटाड़णौ, पिटाड़बौ, पिटाणौ, पिटाबौ, पिटावणौ, पिटावबौ —प्रे०रू०।
पिटिओड़ौ, पिटियोड़ौ, पिट्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पिटीजणौ, पिटीजबौ—भाव वा०।
पिटपिट-सं०स्त्री० [अनु०] किसी छोटी वस्तु के गिरने से उत्पन्न ध्वनि
पिटपिटाणौ, पिटपिटाबौ-क्रि०अ० [अनु०] असमर्थता के कारण हाथ पैर पटक कर विवश होकर रह जाना।
पिटपिटी-सं०स्त्री० [अनु०] दाना पड़ने से पूर्व के चने के फल।
पिटल-सं०पु०—१ मारवाड़ राज्यांतर्गत एक काश्तकार कौम या जाति।
२ इस जाति का व्यक्ति (मा.म.)
रू०भे०—पटल, पटेल, पटैल।
पिटांट-वि० [देशज] दुबलापतला, अशक्त।
पिटाई-सं०स्त्री० [सं० पीडनम्] १ पीटने की क्रिया या भाव।
ज्यूं—छात री पिटाई।
२ पीटने की मजदूरी।
३ किसी पर पड़ने वाली मार।
पिटाट-सं०पु० [देशज] सिर, मस्तक (व्यंग्य)
पिटाड़णौ, पिटाड़बौ—देखो 'पिटाणौ, पिटाबौ' (रू.भे.)
पिटाड़णहार, हारौ (हारी), पिटाड़णियौ—वि०।
पिटाड़िओड़ौ, पिटाड़ियोड़ौ, पिटाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पिटाड़ीजणौ, पिटाड़ीजबौ—कर्म वा०।
पिटाड़ियोड़ौ—देखो 'पिटायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पिटाड़ियोड़ी)
पिटाणौ, पिटाबौ-क्रि०स० ('पिटणौ' क्रिया का प्रे०रू०) १ पिटाया जाना, मार खिलाना।
२ प्रतियोगिता आदि में हराना।
३ कुछ खेलों में गोट, मोहरे आदि को मरवाना।
पिटाणहार, हारौ (हारी), पिटाणियौ—वि०।
पिटायोड़ौ—भू०का०कृ०।
पिटाईजणौ, पिटाईजबौ—कर्म वा०।
पिटायोड़ौ-भू०का०कृ०—पिटाया हुआ, मार खिलाया हुआ।
२ प्रतियोगिता आदि में हराया हुआ।
३ कुछ खेलों में गोट, मोहरे आदि को मरवाया हुआ।
(स्त्री० पिटायोड़ी)
पिटापिट-सं०पु० [अनु०] १ ध्वनि, आवाज।
२ मारपीट।
पिटारी-सं०स्त्री०—१ पान रखने का पात्र।
२ देखो 'पिटारौ' (अल्पा., रू.भे.)
पिटारौ-सं०पु० [सं० पिटकः] बांस, बेंत, मूंज आदि के नरम छिलकों का बना एक प्रकार का बड़ा सम्पुट या ढकनेदार डलिया।
उ०—१ करै उपकार भव्य जीव नौ जी, ग्यांन पिटारौ खोल। विकथा लबार करै नहीं जी, बोलै है गिणिया बोल।—जयवांणी
उ०—२ मांनतौ जंत्र न मंत्र मांनतौ, वैण न मांनतौ मंडतौ वीक। गुरड़ जिम आसकरण तणौ गावड़ ग्रहे, पिटारै घालियौ पनंग पुंडरीक।
—दुरसादास राठौड़ रौ गीत
अल्पा०—पिटारी।
पिटावणौ, पिटावबौ—देखो 'पिटाणौ, पिटाबौ' (रू.भे.)
पिटावणहार, हारौ (हारी), पिटावणियौ—वि०।
पिटाविओड़ौ, पिटावियोड़ौ, पिटाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पिटावीजणौ, पिटावीजबौ—कर्म वा०।
पिटावियोड़ौ—देखो 'पिटायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पिटावियोड़ी)
पिटियारी—देखो 'पटियारी' (रू.भे.)
पिटियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ पिटा हुआ।
२ प्रतियोगिता आदि में हारा हुआ।
३ कुछ खेलों में गोट, मोहरा आदि को मरवाया हुआ।
(स्त्री० पिटियोड़ी)
पिट्ठ, पिट्ठी—देखो 'पीठ' (रू.भे.)
उ०—पन प्रवळ पिसन पिक्खै न पिट्ठ। रजवट घट दै रट्ठौर रिट्ठ।
—ऊ.का.
पिट्ठू-वि० [सं० पृष्ठ+रा.प्र.ऊ] पीछे चलने वाला, अनुयायी।
२ सहायक; मददगार।
पिठवण-सं०स्त्री० [सं० पृष्ठपर्णी] औषधि के काम आने वाली एक प्रसिद्ध लता।
पिठांण—देखो 'पीठांण' (रू.भे.)
पिडीयार—देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)
उ०—पिडीयार लखमणदास गोपाळोत।—नैणसी
पिढलौ—देखो 'पीढौ' (अल्पा०, रू.भे.)
पिढीयार—देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)
उ०—पिढीयार सादूळोत।—नैणसी
पिण—देखो 'पण' (रू.भे.)

उ०—१ कुतक खिदर धव काठ रा, विदर पजावरण वेस। तो पिण हाजर राखणा, घरण मेखचा हमेस।—बां.दा.

उ०—२ ताहरै माहरै प्रीतड़ी जी, आज थी थई रे प्रमांण। पिण दस दिवस मुझ कत नी जी, कांइक राखीये कांण।—वि.कु.

विणघट—देखो 'पणघट' (रू.भे.)

उ०—दै घर री तज देहली, विणघट सांमा पाय। बाजै घूघर पार विण, सोर सरोवर जाय।—बां.दा.

विणच-सं०स्त्री० [देशज] १ बुना हुआ कपड़ा फैलाने का दो लकड़ियों का बना ढांचा।

२ देखो 'पणच' (रू.भे.)

३ देखो 'पुणच' (रू.भे.)

विणचीजणो-सं०पु० [देशज] १ ऊंट के पिछले पैर के नीचे के भाग में सूजन आने से होने वाला रोग।

२ उक्त रोग से पीड़ित ऊंट।

विणछीजणो, विणछीजबो-क्रि०अ०—ऊट के पिछले पैर के नीचे के भाग में सूजन आना।

विणयार, विणहार, विणहारी—देखो 'पणियार' (रू.भे.)

विणि—देखो 'पण' (रू.भे.)

उ०—इहि विधि की संधि सु वयसधि कहावै। जैसे सुपिनौ। न सोवै छै न जागै छै। आगै पल-पल चढती होसी। पिणि हिवै वैसंधि को इसो प्रथम ग्यांन ताकी इसी परिछै।—वेलि.टी.

विणियार, विणियारी, विणिहार, विणिहारी—देखो 'पणियार' (रू.भे.)

उ०—१ सरवरियै नै लहरां पूछ्यौ—क्यूं आई विणियार ? विणघट बोल्यौ—भंवर मिलण नै आई भोळी नार।—चेत मांनखा

उ०—२ ताहरां कूंभै सैचाळ नूं कह्यौ—रे मूंहडै मूंछ छै, मरद कहावै छै, इये विणियारी नूं घड़ो क्यूं नहीं उखणावै छै।

—नैणसी

उ०—३ ताहरां एक विणिहारी तळाव आई, अर कह्यौ—'वीरा, बैर किण सरदार री गई।'—नैणसी

पितंबर—देखो 'पीतांबर' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—खिरोद कन्न खीनखास, धारियं धुजंबरं। सुसोभितं सिखा स मुत्र, सेनयं पितंबरं।—सू.प्र.

पित—१ देखो 'पिता' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—१ धरि गुरु वचन वचन पित धारे। प्रभु सिय-जुत वनवास पधारे।—सू.प्र.

उ०—२ मात सलांमत पित मुआ, आवै नहीं अपांण। धांमधूम मिजनू घटा, जे मावड़िया जांण।—बां.दा.

२ देखो 'पित्त' (रू.भे.)

उ०—आधिभूतक आधिदेव अध्यातम, पिंड प्रभवति कफ-वात-पित। त्रिविध ताप तसु रोग त्रिविधि मैं, नं भवंति वेलि जपंत नित।

—वेलि

पितकाळी, पितगाळी-सं०स्त्री० [सं० पित्ताकारी] लाल मिर्च (जयसलमेर)

पितपति—देखो 'पितरपति' (रू.भे.) (नां.मा.)

पितरपापड़ो—देखो 'पित्तपापड़ो' (रू.भे.)

पितमनमथ-सं०पु०यौ० [सं० मन्मथ-पिता] मन (ह.नां.मा.)

पितर-सं०पु० [सं० पितृ, पितरः] (स्त्री० पितरांणी) १ परलोकवासी वे पूर्वज जिनके नाम पर कर्मकाण्ड के अनुसार श्राद्ध, तर्पण आदि कर्म किए जाते हैं।

२ ऐसा मृत व्यक्ति जो प्रेतत्व से मुक्त हो चुका हो।

३ एक प्रकार के देवता जो सब जीवों के आदि पूर्वज माने जाते हैं। उ०—देव पितर इण सूं डरै, रसक तरै किण रीत। हेम रजत पातर हरै, पातर करै पलीत।—बां दा.

४ सामाजिक रूढि के अनुसार किसी परिवार विशेष में विवाहित या अविवाहित वह मृतक जिसको देव योनि में मान कर उसकी पूजा की जाती है।

वि०वि०—किसी व्यक्ति के मरणोपरान्त उसको देव योनि में मानते हुए घर में 'परीडे' पर पाहन को प्रतीक रूप में स्थापित कर धूप-दीप से किसी दिवस विशेष पर पूजा करते हैं। इसके अतिरिक्त किसी समस्या के समाधानार्थ उसको धूप दीप आदि से या वैसे ही याद करने पर उसकी आत्मा का घर के किसी व्यक्ति के शरीर में प्रवेश होता है और फिर उससे इच्छित प्रश्नोत्तर किए जाते हैं।

रू०भे०—पियर, पित्तर, पित्री, पित्रेस्वर, पित्रेसर, पीतर।

अल्पा०—पितरियौ।

पितरपति-सं०पु०यौ० [सं० पितृ+पति] धर्मराज, यमराज (डि.को.)

रू०भे०—पितपति।

पितरांमेळा-सं०पु० [सं० पितृ+मेलक] मृत पुरुष के लिए बारह दिन के उपरांत पुत्र द्वारा सपिंडी श्राद्ध कृत्य से प्रेतत्व निवृत्ति के पश्चात् पितृत्व प्राप्त करवाने की क्रिया। उ०—पण हाल पितरांमेळो अर बारह महीनां रा टीमल तौ बाकी-ई पड़िया है।

—वरसगांठ

रू०भे०—पितरीमेळौ, पित्रीमेळौ।

पितरियौ—देखो 'पितर' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—वीर नौ पितरियौ नाम सु-पास ए।—स कु.

पितरीमेळौ—देखो 'पितरांमेळौ' (रू.भे.)

पितरेसुर-सं०पु० [सं० पित्रीश्वर] देखो 'पित्रेस्वर' (रू.भे.)

उ०—आवै अनदातार नूं, भारथ खळां भळाय। पितरेसुर जिण रा पड़ै, नरक विचाळै न्याय।—बां.दा.

पितळकण—देखो 'पितळण' (रू.भे.)

पितळकणो, पितकळबो—देखो 'पितळणो, पितळबो' (रू.भे.)

पितळकणहार, हारो (हारी), पितळकणियो—वि०।

पितळकिओड़ो, पितळकियोड़ो, पितळक्योड़ो—भ०का०कृ०।

पितळकीजणो, पितळकीजबो—भाव वा० ।

पितळकियोड़ो—देखो 'पितळियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पितळकियोड़ी)

पितळण–सं०स्त्री०—१ फिसलने की क्रिया या भाव, फिसलन ।

२ ऐसा स्थान जहां चिकनाई के कारण कोई वस्तु या पैर जम न सके ।

३ ऐसा पदार्थ या स्थान जिस पर रखने से कोई वस्तु ठहर न सके और रपट जाय ।

रू०भे०—पितळकण ।

पितळणो, पितळबो–क्रि०अ०—१ फिसलना, रपटना ।

उ०—एक दिन अजांण उण रो पग पितळियो । गूंण मांयलो सं लूंण पाणी में गळग्यो ।—फुलवाड़ी

२ किसी तरल पदार्थ का पीतल के बर्तन में रखने से कसैला होना, कसिया जाना ।

पितळणहार, हारो (हारी), पितळणियो—वि० ।

पितळाड़णो, पितळाड़बो, पितळाणो, पितळाबो, पितळावणो, पितळावबो—प्रे०रू० ।

पितळिओड़ो, पितळियोड़ो, पितळ्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पितळीजणो, पितळीजबो—भाव वा० ।

पितळकणो, पितळकबो—रू०भे० ।

पितळाड़णो, पितळाड़बो—देखो 'पितळाणो, पितळाबो' (रू.भे.)

पितळाड़णहार, हारो (हारी), पितळाड़णियो—वि० ।

पितळाड़िओड़ो, पितळाड़ियोड़ो, पितळाड़्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पितळाड़ीजणो, पितळाड़ीजबो—कर्म वा० ।

पितळाड़ियोड़ो—देखो 'पितळायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पितळाड़ियोड़ी)

पितळाणो, पितळाबो–क्रि०स० ('पितळणो' क्रिया का प्रे०रू०) १ फिसलाना, रपटाना ।

२ कसैला करना ।

पितळाणहार, हारो (हारी), पितळाणियो—वि० ।

पितळायोड़ो—भू का०कृ० ।

पितळाईजणो, पितळाईजबो—कर्म वा० ।

पितळणो, पितळबो—अक० रू० ।

पितळाड़णो, पितळाड़बो, पितळावणो, पितळावबो—रू०भे०

पितळायोड़ो–भू०का०कृ०—१ फिसलाया हुआ, रपटाया हुआ ।

२ कसैला किया हुआ ।

(स्त्री० पितळायोड़ी)

पितळावणो, पितळावबो—देखो 'पितळाणो, पितळाबो' (रू.भे.)

पितळावणहार, हारो (हारी), पितळावणियो—वि० ।

पितळाविओड़ो, पितळावियोड़ो, पितळाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पितळावीजणो, पितळावीजबो—कर्म वा० ।

पितळावियोड़ो—देखो 'पितळायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पितळावियोड़ी)

पितवड़—देखो 'पित्तोड़' (रू.भे)

पितसरो–सं०पु० [सं० पिता+श्वसुर] श्वसुर (शेखावाटी)

पिता–सं०पु० [सं० पितृ] जन्म देने वाला, जनक, बाप (हि.को.)

पर्या०—जणो, जनक, जनेता, जांमी, तात, प्रतायिता, बपिता, बाप, विरज, सविता ।

रू०भे०—पता, पत्त, पित, पित्त, पिय, पीय ।

पितामह–सं०पु० [सं०] १ पिता का पिता, दादा ।

उ०—लीलाधरण ग्रहे मांनुखी लीला, जग वासग वसिया जगति । पित प्रदुमन जगदीस पितामह, पोतो अनिरुध ऊखापति ।

—वेलि

२ भीष्म । उ०—अणहूंती व्है आज, हुई न आगै होण री । कैरव करै अकाज, आज पितामह ईखतां ।—रांमनाथ कवियो

३ शिव । उ०—पितामह नांम हि नांम प्रचार । अहरनिस रांम हि रांम उचार ।—ऊ.का.

४ ब्रह्मा (डि.को.)

उ०—जोग नींद वस भए निरंजन । गज्जे असुर पितामह गंजन ।

—मे.म.

५ ६४ भैरवों में से एक भैरव का नाम ।

रू०भे०—पियामहि, पीयामह ।

पिताविरंच, पिताविरंची–सं०पु०यौ० [सं० पितृ+विरञ्चः, पितृ+विरञ्चि] कमल (अ.मा., ह.नां.मा.)

पितुंडियो, पितुंडो–सं०पु० [देशज] मोठ को पानी में डुबाने हेतु उसी पर बांधे हुए पत्थर के नीचे लगाया जाने वाला चमड़े का टुकड़ा ।

रू०भे०—पितुडियो, पितुडो ।

पितु–सं०पु० [सं० पितुः] पिता । उ०—खग बळ जो पितु खाटियो, दूर दाटियो देस । पाट अडिग 'परताप' रै, बाजै नृप 'बखतेस' । बाजै नृप 'बखतेस' कळू मघि करण सो । अरक वस उजवाळ, पाळै खटवरण सो । पातां लाखपसाव, दुरद सासण दिया । फरिकेता कविराज, कवि अभरी किया ।—सिववक्स पाल्हावत

पितुडियो, पितुडो—देखो 'पितुंडियो' (रू.भे.)

पितोड़, पितौड़—देखो 'पित्तोड़' (रू.भे.)

पित्त–सं०पु० [सं०] १ आयुर्वेदानुसार शरीरस्थ मुख्य तीन तत्वों या दोषों में एक (अन्य दो वात और कफ है) जो यकृत में बनता है तथा नीलापन लिए हुए तरल होता है ।

२ उक्त तत्व या दोष का मुख्य गुण ताप या शक्ति जो खाद्यपदार्थ को पचाता है ।

मुहा०—१ पित्त उबळणा—कारणवश मन में अत्यधिक क्रोध उत्पन्न होना ।

२ पित्त पड़ना—शरीर में पित्त प्रकुपित होना, पित्त प्रकोप होना ।

३ देखो 'पिता' (रू.भे.)

उ०—पुत्रां काजि खाटै धन पित्तां।—गु.रू.बं.

रू०भे०—पित।

पित्तकर–वि० [सं०] पित्त को बढ़ाने वाला (द्रव्य)

पित्तकारक–वि० [सं०] पित्त को पैदा करने वाला (पदार्थ)

पित्तकास–सं०पु० [सं०] पित्त के विकृत होने से होने वाला कास रोग या खांसी।

पित्तजुर, पित्तज्वर–सं०पु०यौ० [सं० पित्तज्वर] पित्त की विकृति से होने वाला ज्वर।

पित्तदाह–सं०स्त्री० [सं०] १ पित्त की दाह।

२ पितज्वर।

पित्तप्रकृति–वि० [सं० पित्तप्रकृति] जिसके शरीर में वात और कफ की अपेक्षा पित्त की प्रधानता हो।

पित्तप्रकोप–सं०पु० [सं०] पित्त का आधिक्य जिससे पित्त उग्र रूप धारण कर लेता है।

पित्तर—देखो 'पितर' (रू.भे.)

उ०—भूधरजी नौ भूप, तनां पुजे दसरथ-तण। गुण गंध्रप विधि-ग्यांन, जख किन्नर पित्तर-जण।—पी.ग्रं.

पित्तव्याधि–सं०स्त्री० [सं०] पित्त के प्रकोप से होने वाला रोग।

पित्तसूळ–सं०पु०यौ० [सं० पित्तशूल] पित्त प्रकोप से होने वाला शूल, दर्द।

पित्तस्थान–सं०पु०यौ० [सं० पित्तस्थान] १ शरीरस्थ वे पांच स्थान जिनमें पाचक, रंजक आदि पांचों प्रकार के पित्त रहते हैं।

२ पित्ताशय।

पित्तहर–वि० [सं०] पित्त का नाश करने वाला।

सं०पु०—खसखस, उशीर।

पित्तातिसार–सं०पु० [सं०] पित्त के प्रकुपित होने से होने वाला अतिसार।

पित्तारि–वि० [सं०] पित्त का नाश करने वाला।

सं०पु०—१ पित्त का शत्रु।

२ पित्तपापड़ा।

३ पीला चन्दन।

पित्तासय–सं०पु० [सं० पित्ताशय] पित्ताशय।

पित्ती–सं०स्त्री० [सं० पित्त+रा.प्र.ई] पित्त के प्रकोप से रक्त में अत्यधिक उष्णता होने से होने वाला एक रोग।

वि०वि०—इस रोग के कारण शरीर के विभिन्न अंगों में छोटे २ ददोरे निकल जाते हैं और जिनमें तेज खुजली चलती है।

रू०भे०—पित्ती, पीति, पीती।

पित्तोड़–सं०पु० [सं० पात्रलोट:] बेसन में मसाले डाल कर छाछ या पानी के साथ पकाई हुई वह खाद्य सामग्री जिसको थाली में ठण्डा करके छोटी छोटी कतलियों में काट कर खाते हैं एवं साग भी बनाते हैं।

रू०भे०—पतवड़, पतोड़, पतोळ, पितवड़, पितोड़, पितोड़, पित्तोड़।

पित्तोदर–सं०पु० [सं० पित्त+उदर] पित्त की अधिकता के कारण होने वाला, पेट फूलने का एक रोग।

पित्तोन्माद–सं०पु० [सं० पित्त+उन्माद] पित्ताशय के ठीक काम न करने के कारण होने वाला एक रोग, जिसमें रोगी चिन्तित एवं खिन्न रहता है।

पित्ती—देखो 'पीती' (रू.भे.)

पित्तोड़—देखो 'पित्तोड़' (रू.भे.)

पित्र–सं०पु० [सं० पित्र्य] १ बड़ा भाई (अ.मा.)

२ देखो 'पित्री' (रू.भे.)

पित्रअमावस—देखो 'पित्रीअमावस' (रू.भे.)

पित्रकरम—देखो 'पित्रीकरम' (रू.भे.)

पित्रकिरिया—देखो 'पित्रीक्रिया' (रू.भे.)

पित्रकुळ—देखो 'पित्रीकुळ' (रू.भे.)

पित्रक्रिया—देखो 'पित्रीक्रिया' (रू.भे.)

पित्रगीता—देखो 'पित्रीगीता' (रू.भे.)

पित्रग्रह—देखो 'पित्रीग्रह' (रू.भे.)

पित्रतरपण—देखो 'पित्रीतरपण' (रू.भे.)

पित्रपूरबो [सं० पित्र्य:+पूर्वी] बड़ा भाई (ह.नां.मा.)

पित्रभक्ति, पित्रभगति—देखो 'पित्री भक्ति' (रू.भे.)

पित्रलोक—देखो 'पित्रीलोक' (रू.भे.)

पित्राई–सं०पु० [सं० पित्र्य] पिता के चाचे का बेटा भाई (जयसलमेर)

पित्री–सं०पु० [सं० पितृ] १ पिता।

२ किसी व्यक्ति के पिता, पितामह, प्रपितामह आदि मृत पूर्वज।

३ वह मृत व्यक्ति जो प्रेतत्व से मुक्ति पा चुका हो।

४ एक प्रकार के देवता जो सब जीवों के आदि पूर्वज माने गए हैं।

५ देखो 'पितर' (रू.भे.)

रू०भे०—पित्र।

पित्रीअमावस–सं०स्त्री०यौ० [सं० पितृ+अमावस्या] श्राद्ध पक्ष में आने वाली अमावस्या।

रू०भे०—पित्रीअमावस।

पित्रीकरम–सं०पु०यौ० [सं० पितृकर्म] पितरों के उद्देश्य से किये जाने वाले कर्म, श्राद्ध, तर्पण आदि कर्म।

रू०भे०—पित्रकरम।

पित्रीकेळप–सं०पु०यौ० [सं० पितृकल्प] श्राद्धादि कर्म।

पित्रीकानन–सं०पु०यौ० [सं० पितृकानन] श्मशानभूमि, मरघट।

पित्रीकारज–सं०पु०यौ० [सं० पितृकार्य] श्राद्ध, तर्पण आदि कर्म।

पित्रीकिरिया—देखो 'पित्रीक्रिया' (रू.भे.)

पित्रीकुळ–सं०पु०यौ० [सं० पितृकुल] पिता, पितामह या उनके भाई-

बंधुओं आदि का कुल ।
रू०भे०—पित्रकुळ ।
पित्रीकुळ्या-सं०पु०यौ० [सं० पितृकुल्या] एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।
पित्रीकृत्य-सं०पु०यौ० [सं० पितृकृत्य] श्राद्धादि पितृकार्य ।
पित्रीक्रिया-सं०स्त्री०यौ० [सं० पितृक्रिया] श्राद्धादि कर्म, पितृकर्म ।
रू०भे०—पित्रकिरिया, पित्रक्रिया, पित्रीकिरिया ।
पित्रीगण-सं०पु०यौ० [सं० पितृगण] १ पितर ।
२ मरीचि आदि ऋषियों के पुत्र ।
पित्रीगाथा-सं०स्त्री० [सं० पितृगाथा] पितरों द्वारा पढ़े जाने वाले कुछ विशेष श्लोक या गाथा ।
पित्रीगीता-सं०स्त्री० [सं० पितृगीता] वाराह पुराण के अन्तर्गत वह गीता जिसमें पितरों का माहात्म्य दिया गया है ।
रू०भे०—पित्रगीता ।
पित्रीग्रह-सं०पु० [सं० पितृगृह] १ पिता का घर ।
२ स्त्री का मायका ।
रू०भे०—पित्रग्रह, पित्रीघर ।
[सं० पितृग्रह] ३ स्कन्दादि बाल ग्रहों में से एक ।
पित्रीघर—देखो 'पित्रीग्रह' (१,२) (रू.भे.)
पित्रीघात-सं०स्त्री० [सं० पितृघात] (वि०—पित्रीघातक, पित्रीघाती,) पित्रीघातक । पिता की हत्या, पिता का वध ।
पित्रीघातक, पित्रीघाती, पित्रीघातीक-वि० [सं० पितृघातकः, पितृघातिन्] पिता को मारने वाला, पितृ-हत्यारा ।
पित्रीजग(ग्य)-सं०पु० [सं० पितृयज्ञ] पितृ तर्पण ।
पित्रीजांण-सं०पु०यौ० [सं० पितृयान] मृत्यु के पश्चात जीव को परलोक ले जाने का वह मार्ग जिससे वह चन्द्रमा में पहुंचता है ।
पित्रीतरपण-सं०पु०यौ० [सं० पितृतर्पण] १ पितरों के उद्देश्य से किया जाने वाला जलदान ।
२ तिल ।
३ गया नामक तीर्थ जहां श्राद्ध करने से पितरों का प्रेतत्व से मुक्त होना माना जाता है ।
रू०भे०—पित्र तरपण ।
पित्रीतिथ, पित्रीतिथि-सं०स्त्री० [सं० पितृ+तिथि] अमावस्या ।
पित्रीतीरथ-सं०पु०यौ० [सं० पितृतीर्थ] १ गया नामक तीर्थ ।
२ मत्स्य पुराण के अनुसार गया, वाराणसी, प्रयाग, विमलेश्वरादि २२२ तीर्थ ।
३ अंगूठे और तर्जनी के मध्य का स्थान जिसमें होकर तर्पण का जल छोड़ा जाता है ।
पित्रीदांन-सं०पु०यौ० [सं० पितृदान] १ उत्ताराधिकार में पिता की ओर से मिलने वाली सम्पति ।
२ पितरों का श्राद्ध या श्राद्ध सम्बन्धी दान ।
पित्रीदिन-सं०पु०यौ० [सं० पितृदिन] अमावस्या ।
पित्रीदेव-सं०पु०यौ० [सं० पितृदेव] पितरों के अधिष्ठाता देव, पितरगण ।
रू०भे०—पित्रीदेवत ।
पित्रीदेस-सं०पु०यौ० [सं० पितृदेश] १ पितरों के पूर्वजों के रहने का देश ।
२ वह देश जिसमें कोई अपने पूर्वजों के समय से रहता आया हो ।
पित्रीदेवत-सं०पु०यौ० [सं० पितृदैवत] १ पितृ देवता सम्बन्धी, पितरों की प्रसन्नता के लिए किया जाने वाला (यज्ञादि)
२ पितरों के अधिष्ठाता देवता ।
३ देखो 'पित्रीदेव' (रू.भे.)
पित्रीनाथ-सं०पु०यौ० [सं० पितृनाथ] १ यमराज ।
२ अर्यमा नामक पितर जो सब पितरों में श्रेष्ठ माने जाते हैं ।
पित्रीपक्ष, पित्रीपख-सं०पु०यौ० [सं० पितृपक्ष] आश्विन मास का कृष्ण पक्ष, श्राद्ध पक्ष ।
२ पितृकुल ।
पित्रीपती-सं०पु० [सं० पितृपति] यमराज ।
पित्रीपद-सं०पु० [सं० पितृपद] १ पितरों का लोक या देश, पितृलोक ।
२ पितर होने का पद या स्थिति ।
पित्रीपिता-सं०पु०यौ० [सं० पितृपिता] पितामह, दादा ।
पित्रीप्रसू-सं०स्त्री०यौ० [सं० पितृप्रसू] १ पिता की माता, दादी ।
२ सन्ध्या, सायंकाल ।
पित्रीप्रिय-सं०स्त्री०यौ० [सं० पितृप्रिया] १ भंगरा, भृंगराज ।
२ अगस्त का वृक्ष ।
पित्रीभक्त, पित्रीभगत-वि०यौ० [सं० पितृभक्त] माता पिता की आज्ञा शिरोधार्य मानने वाला तथा माता पिता की सेवा करने वाला ।
पित्रीभक्ति, पित्रीभगति-सं०स्त्री०यौ० [सं० पितृभक्ति] १ पितृ-भक्त होने की अवस्था या भाव ।
२ पिता के प्रति होने वाली भक्ति ।
रू०भे०—पित्रभक्ति, पित्रभगति ।
पित्रीभोजन-सं०पु०यौ० [सं० पितृभोजन] १ पितरों का अर्पित किया जाने वाला भोजन ।
२ उरद ।
पित्रीमंदिर-सं०पु० [सं० पितृ+मंदिर] १ पिता का घर ।
२ श्मशान भूमि ।
पित्रीमेध-सं०पु०यौ० [सं० पितृमेध] एक प्रकार का अन्त्येष्ठि कर्म जो वैदिककाल में प्रचलित था ।
पित्रीमंळौ—देखो 'पितरांमेळौ' (रू.भे.)
पित्रीराज-सं०पु०यौ० [सं० पितृराज, पितृराजः] यमराज ।
पित्रीरिण-सं०पु०यौ० [सं० पितृऋण] धर्मशास्त्रानुसार मनुष्य के

तीन ऋणों में से एक, जिसको लेकर वह जन्म ग्रहण करता है।
वि०वि०—पुत्र उत्पन्न करने से मनुष्य इस ऋण से मुक्त हो जाता है।

पित्रीरिस्ट-सं०पु०यौ० [सं० पितृरिष्ट] एक कुयोग जिसमें जन्म लेने वाला बालक पिता के लिए घातक माना जाता है (फलित ज्योतिष)

पित्रीरूप-स०पु०यौ० [सं० पितृरूप] शिव।

पित्रीलोक-सं०पु०यौ० [सं० पितृलोक] पितरों के निवास करने का लोक, वह लोक जहां पर पितर निवास करते हैं।
रू०भे०—पितरलोक, पित्रलोक।

पित्रीवंस-सं०पु०यौ० [सं० पितृवंश] पिता का कुल।

पित्रीवन-सं०पु०यौ० [सं० पितृवन] श्मशान भूमि, मरघट।

पित्रीवनेचर-वि० [सं० पितृ+वन+चर] श्मशान भूमि में बसने वाला।
सं०पु०—१ भूत-प्रेत।
२ शिव।

पित्रीवसती-सं०स्त्री०यौ० [सं० पितृ+वसति] श्मशान, मरघट।

पित्रीवास-सं०पु०यौ० [सं० पितृ+वास] श्मशान, मरघट।

पित्रीवदन-सं०पु०यौ० [सं० पितृवदन] कुश।

पित्रीव्रत-सं०पु०यौ० [सं० पितृ+व्रत] पितृकर्म।

पित्रीसू-सं०स्त्री० [सं० पितृसू] १ पिता की माता, दादी।
२ सन्ध्याकाल।

पित्रीस्थान-सं०पु०यौ० [सं० पितृस्थान] १ पिता का पद।

पित्रीहता-सं०पु०यौ० [सं० पितृहंता] पिता का संहारक।
पितृहा।

पित्रेस-सं०पु० [सं० पितृ+ईश] यमराज। उ०—सजा हूं छुडायो आई राव 'सेखो'। लाई पुत्र पित्रेस रो लोप लेखो।
—मे.म.

पित्रेसुर, पित्रेस्वर-सं०पु० [सं० पितर+ईश्वर] १ परलोकवासी पूर्वज। उ०—यों वरखा रितु ऊतरी, आवी सरद सुभाव। पित्रेसुर कीजे प्रसन, पोखीजे रिख राय।—रा.रू.
२ देवयोनि।
३ देखो 'पितर' (रू.भे.)
रू०भे०—पितरेसुर, पित्रेसुर।

पिथ—देखो 'प्रथु' (रू.भे.)
उ०—वरियांम अहंमदबाद, अमल जमावियो। पिथ भूप जिम अणपार, इळ रस आवियो।—सू.प्र.

पिथराव-सं०पु० [सं० पृथुराज] राजा पृथु। उ०—मछ कोम नरसींघ वाह वांमण कहि वांमण। रिख वदत पिथराव, भरथ रघुनाथ सत्रघण।
—पी.ग्रं.

पिथि, पिथी—देखो 'प्रथ्वी' (रू.भे.)
उ०—लड़ै मुड़ो पतिसाह विमुहा खड़ो लसकर, रिण पड़ो घणी धारां तणी रीठ। किम फिरै पीठ 'जैसिंघ' कूरम तणी, पिथी चो भार कूरम तणी पीठ।—पूरो महियारियो

पिदड़को-सं०पु० [देशज] १ कचूमर ?
उ०—वेदव्यास तो राजा री किणी बात रै वास्तै चुंकारो ई नीं करियो। राजा री रीस फेर वत्ती ऊकळी। जरड़ जरड़ उण री सगळी पांखां तोड़ न्हांकी। पछै गीता, वेद कठां करियोड़ा उण सूवटा नै हेटै पटक पगां सूं चिगदियो। राजा री एडी री जोर लागतां ई वेदव्यास री पिदड़को निकळग्यो।—फुलवाड़ी
क्रि०प्र०—निकळणो, निकाळणो।
२ नाराज होने की क्रिया या अवस्था।
क्रि०प्र०—मारणो।

पिदणो, पिदबो-क्रि०अ० [देशज] १ किसी के द्वारा तंग होना।
२ कष्ट से पीड़ित होना।
पिदणहार, हारो (हारी), पिदणियो—वि०।
पिदिग्रोड़ो, पिदियोड़ो, पिद्योड़ो—भू०का०कृ०।
पिदीजणो, पिदीजबो—भाव वा०।

पिदर-सं०पु० [फा० मि. सं० पितृ] पिता। उ०—विदर पिदर जांणै नहीं, मादर विदरां मूळ। राखै अगणत रंग रा, दिल री कुसी दुकूळ।—बां.दा.

पिदाणो, पिदावो-क्रि०स० ('पिदणो' क्रिया का प्रे०रू०) १ किसी को तग करना।
२ कष्ट व पीड़ा पहुंचाना।
३ प्रसन्नता के कारण व्यक्ति विशेष का दोनों हाथों को दोहरा करके कांखों के ऊपर तेज गति से ऊचे नीचे करना।
४ भिखारियों के बच्चों का दानदाता को खुश करने के लिए कांख में एक हाथ डाल कर दूसरे हाथ को तेज गति से ऊपर नीचे करते हुए कांख से ध्वनि करना।
पिदाणहार, (हारो)हारी, पिदाणियो—वि०।
पिदायोड़ो—भू०का०कृ०।
पिदाईजणो, पिदाईजबो—कर्म वा०।
पिदणो, पिदबो—अक० रू०।
पिदावणो, पिदावबो—रू०भे०।

पिदायोड़ो-भू०का०कृ०—१ व्यर्थ में तंग किया हुआ।
२ पीड़ित किया हुआ।
३ प्रसन्नता के कारण उछला हुआ।
प्रसन्न करने हेतु खांख से ध्वनि किया हुआ।
(स्त्री० पिदायोड़ी)

पिदावणो, पिदावबो—देखो 'पिदाणो, पिदाबो' (रू.भे.)
उ०—बाळक, मोट्यार, लुगायां, बूढा-ठाडा भांत-भांत रा मिणगिण मिनख, हा हो, हा हो करता मैं'ल में भरग्या। मैं'ल री तो रंगत ई बदबळगी। ज्यूं २ जोव बावड़तो देंतराज हरख सूं

किलकारियां करतौ खाकां पिदावतौ ।—फुलवाड़ी

पिदियोड़ो-भू०का०कृ०—१ तंग हुवा हुआ ।

२ पीड़ित ।

(स्त्री० पिदियोड़ी)

पिदियौ-सं०पु० [देशज] एक प्रकार की चिड़िया जो रात्रि में सोते समय अपने पैर प्राय: आकाश की तरफ रखती है (शेखावाटी)

पिद्दी-सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार की छोटी चिड़िया ।

सं०पु०—तुच्छ जीव, नगण्य जीव ।

पिद्दो-स०पु० (स्त्री० पिद्दी) तुच्छ जीव, नगण्य जीव ।

रू०भे०—फिद्दो ।

पिधणौ, पिधबौ-क्रि०स० [सं० परिधारणम्] आच्छादन होना, ढका जाना ।

पिधांन-स०पु० [सं० पिधानम्] १ तलवार का म्यान या कोश ।

२ आवरण, ढक्कन ।

पिधाणौ, पिधाबौ-क्रि०स० [सं० पिधानम्] आच्छादन करना, ढकना, आवरणयुक्त करना ।

उ०—ध्यांन समाधी छोरी कै, मन चित्र बढाया । तद्दिन धूरि बितांन कै, घन भांन पिधाया । सारद पुण्णिम का ससी, जिम बारद छाया । छब्बि धरत्ती पक्खरां इक ओप लखाया ।—वं.भा.

पिधायोड़ो—भू०का०कृ०—आच्छादित, ढका हुआ ।

(स्त्री० पिधायोड़ी)

पिद्ध—देखो 'पींद्धो' (रू.भे.)

उ०—जड़धार तार जंकार किद्ध । भरि पत्त रत्त जोगणी पिद्ध ।

—गु रू बं.

पिन-सं०स्त्री० [अं०] लोहे या पीतल आदि की बहुत छोटी कील जो प्राय: कागज आदि को नत्थी करने के काम आती है ।

पिनक-सं०स्त्री० [देशज] अफीम के नशे की झोंक, तंद्रा, हलकी नींद, नींद का झोंका ।

पिनकणौ, पिनकबौ-क्रि०अ० [देशज] अफीम के नशे में झूमना, हलकी नींद लेना, नींद के झोके खाना ।

पिनकियोड़ो-भू०का०कृ०—अफीम के नशे में झूमा हुआ, नींद लिया हुआ, नींद के झोंके खाया हुआ ।

पिनकी-वि० [देशज] अफीम के नशे में झोके खाने वाला, अफीमची ।

पिनस—१ देखो 'पीनस' (रू.भे.)

२ देखो 'पिंजस' (रू.भे.)

पिनसन—देखो 'पेनसन' (रू.भे.)

पिनाक-सं०पु० [सं० पिनाकं, पिनाक:] १ शिवजी का धनुष ।

उ०—१ धरियौ पण जनक इसी मन धारे, धनक पिनाक चढाय धरै । महपत आय सयंबर मांहे, वसुदा कुंमरी तिकी वरै ।—र.रू.

उ०—२ विदेह प्रतंग्या कहै इम वाक । पुत्री जो वरै सो ज तांणै पिनाक ।—सू.प्र.

२ धनुष (अ.मा., ह.नां.मा.)

उ०—पड़ची मुख मूरत सूरत पाक, पड़ची चकचूरत कंध पिनाक ।

—मे.म.

३ धनुषाकार एक प्रकार की वीणा विशेष ।

उ०—वींणा ताळ सुर वींण, तार तंबूर चंग तदि । प्रत खंजरी पिनाक, जुगति मरदंग वजत जदि ।—सू.प्र.

रू०भे०—पनांग, पनाक, पन्नाक, पिनाग, पिनायक, पुनाग, पुन्नाक, पुन्नाग, पैनाक, पैनाग, पैनायक ।

पिनाकपाणि, पिनाकपांणी-सं०पु०यौ० [सं० पिनाकपाणि] महादेव, शिव ।

पिनाकी, पिनाखी-सं०पु० [सं० पिनाकिन्] महादेव, शिव

(अ.मा.,नां.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—पिनाकी रीझियौ 'कूंपो' सतावी थिरोध पूजा, वगस्सै निरम्भै धांम काटै पाप बंध । केवाणां असम्मी कड़ा हूत कीधा प्रळैकारां, कैळास ले गयौ सारां पूजारा कमंध ।—उम्मेदजी सादू

पिनाकेस-सं०पु० [सं० पिनाक+ईश] महादेव, शिव ।

उ०—रूप सीस 'ऊदा' भूप आहूंसी आखियो राजा, दळा गाहि हठा-स भाखियौ दीन होय । दूठ नराताळा झोक दाखियौ सुवांन दवौ, पिनाकेस राखियौ माळ में सीस पोय ।

—कविराजा करणीदान

पिनायक—देखो 'पिनाक' (रू.भे.)

उ०—अनोखा धायिकां झोक लायिकां जैसिंघ आळा, सोक पंखी गायिकां गं-तायिकां डाण सूक । बरूथां नायकां दोख दायिकां वेधी, आचां पिनायकां झोक सायकां आऊक ।

—हुकमीचंद खिड़ियौ

पिनाग—देखो 'पिनाक' (रू.भे.)

पिनारा—देखो 'पिंजारा' (रू भे.)

पिनारौ—देखो 'पिंजारौ' (रू.भे.)

पिनिद्ध-वि० [सं० पिनद्ध] पहना हुआ, धारण किया हुआ ।

उ०—सनिद्धि कचांमि के सदा पिनिद्धां पां परघा करै । लरै नही सुलोक ते कुलोक तें लरघा करै ।—ऊ.का.

पिन्नाक—देखो 'पिनाक' (रू.भे.)

उ०—झले राघवां सेस पिन्नाक झल्ले । उभै तेज सांमंद्र जांणै उझल्ले ।—सू.प्र.

पिपरमिंट, पिपरमेंट-सं०पु० [अं० पेपरमिंट] १ पुदीने की जाति का, किंतु रूप में उससे भिन्न, यूरोप और अमेरिका में होने वाला एक पौधा ।

२ इस पौधे का अर्क ।

३ इस अर्क के मिश्रण से शक्कर के योग से बनाई जाने वाली खट्टी-मिट्ठी गोली ।

पिपरामूळ—देखो 'पिप्पळीमूळ' (रू.भे.)

पिपलीग्रौ-सं०पु०—एक प्रकार का वस्त्र विशेष। (व.स.)

पिपास, पिपासा-सं०स्त्री० [सं० पिपासा] (वि० पिपासी) प्यास, तृष्णा। उ०—१ क्षुधा पिपासा प्रांण कूं लागत, हरस सोक मन संगी। जनम मरण ग्यांनी देही को जांणे, ग्रातम ग्रचळ ग्रभंगी।
—स्री सुखरांमजी महाराज

उ०—२ सीत न तावड मनि गणइ, दिवस न रयणी संक। भूख पिपासा न बम्हि जळ, केवळ यथा करंक।—मा.कां.प्र.

रू०भे०—पिवासा।

पिपासित, पिपासी-वि० [सं० पिपासिन्] प्यासा, तृषित।

पिपासु-वि० [सं०] १ जिसे प्यास लगी हो, पिपासित, प्यासा, तृषित।

२ वह जिसके मन में किसी प्रकार की प्रबल कामना या लोभ हो।

३ पीने का इच्छुक।

पिपीतकी-स०स्त्री० [सं०] वैशाख शुक्ल द्वादशी जो पवित्र और व्रत का दिन माना गया है।

पिपील-सं०पु० [सं० पिपीलः] चींटा।

रू०भे०—पपील।

पिपीलक, पिपीलिक-सं०पु० [सं० पिपीलकः] १ बड़ा चींटा।

[सं० पिपीलकम्] २ एक प्रकार का सुवर्ण।

रू०भे०—पपिलक।

पिपीलिका-सं०स्त्री० [सं० पिपीलिका] एक प्रकार का छोटा चींटा। मादा चींटी।

उ०—भूल रे छेड़ न भूप मड़, ऊठै उरेब ग्राग। पल में काट पछाड़ दे, पिपीलिका पंनाग।—रेवतसिंह भाटी

रू०भे०—पपीलिका, पिवीलिया।

पिपीलिकाभक्षी, पिपीलिकाभखी-सं०पु०यौ० [स० पिपीलिका-भक्षिन्] लम्बे थथन और बहुत बड़ी जीभ वाला ग्रफ्रिका का एक जन्तु जो प्राय: चींटियों के बिलों को ग्रपने पंजे से खोदता है और उन्हें खा जाता है। इसके दांत नहीं होते हैं।

पिपीलिकामारग-सं०पु०यौ० [सं० पिपिलिकामार्ग] योग साधना के तीन मार्गों में से एक जिसके द्वारा साधक चींटी के समान ही क्रमशः धीरे-धीरे ग्रागे बढता है और षट्-चक्रों को वेधता हुग्रा प्राण-ब्रह्मांड तक पहुंचता है। इसके ग्रतिरिक्त दो माग—मीन मार्ग व विहंगम मार्ग और होते हैं।

पिपीली-सं०स्त्री० [सं०] चींटी।

रू०भे०—पपिली।

मह०—पपील।

पिपौ—देखो 'पीपौ' (रू.भे.)

उ०—द्वारामती ग्राणद भयं मुनिजन देत ग्रसीस। जन 'पिपौ' समळाइयौ, सिंहासण जगदीस।—रुकमणी-मंगळ

पिप्पळ—देखो 'पीपळ' (रू.भे.)

उ०—विळै इग्यारस वरत, भगति ऊपरि प्रभ भीजै। पिप्पळ तुळछी पांन, रांम यां ऊपरि रीजै।—पी.ग्रं.

पिप्पळा-सं०स्त्री० [सं० पिप्पला] एक प्राचीन नदी।

पिप्पळाद-सं०पु० [सं० पिप्पल+ग्रद्=खाना+ग्रण] पुराणानुसार एक ऋषि जो पिप्पल के पत्ते खा कर ही रहते थे।

पिप्पलासन-सं०पु० [सं० पिप्पल+ग्रशन] वह जो पिप्पल के फल या गूदा खाता हो।

पिप्पलि, पिप्पली-स०स्त्री० [सं०] पीपल नामक लता या उसका फल।

रू०भे०—पीपर।

पिप्पळीमूळ-स०पु०यौ० [सं० पिप्पलीमूल] पीपल नामक लता की जड़ जो ग्रोषधियों में उपयोग ली जाती है।

रू०भे०—पिपरामूळ, पिपलामूळ, पीपरामूळ।

पिमूकणौ, पिमूकबौ—देखो 'मूकणौ, मूकबौ' (रू.भे.)

उ०—गजसिंघ महा किम्माड थिर, कीए ग्रागळि कमधजे। डेरा पिमूकि गा दक्खणी, किरि पतंग काचू तजे।—गु.रू बं.

पिम्म, पिम्मु—देखो 'प्रेम' (रू भे.)

उ०—१ मयण म करि घरि घणुहु बांण, पुणि पंज म पयडहि। रूविण पिम्म पयावि, वम हरि हरु मन(त) विनडहि।
—कवि पल्ह

उ०—२ रुउ पिम्मु ता बांण मयण ता दरिसहि घणुहरु।
—कवि पल्ह

पियंकर-वि० [सं० प्रियकर] हितैषी (जैन)

पिय-स०पु० [सं० प्रिय] १ चातक पक्षी के बोलने की ग्रावाज या ध्वनि। उ०—रे पपैह्या बावरे, कब को बैर चितारयौ। म्हैं सूती थी ग्रपने भवन में, पिय पिय करत पुकारयौ।—मीरां

रू०भे०—पिउ, पिऊ, पिव पी।

२ देखो 'पिता' (रू भे.)

उ०—सच्चवई पिय माय ग्रंबा ग्रबाली ग्रविका।—पं.पं.च.

३ देखो 'प्रिय' (रू.भे)

उ०—१ भूखी की जीमैं सिसकारा भरती, नांखै निसकारा धीमैं पग धरती। मुखड़ो कुम्हळायौ भोजन बिन भारी, पय पय करतोड़ी पौढी पिय प्यारी।—ऊ का.

उ०—२ सावण ग्रायौ बालमा, वेलां झुर रहि वार। चात्रंग झुरै मेघ बिन, पिय बिन झुर रहि नार।—लो.गी.

३ देखो 'प्रिया' (रू.भे.)

पियड़उ—देखो 'प्रिय' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

पियर—१ देखो 'पितर' (रू.भे.)

२ देखो 'पी'र' (रू.भे.)

पियरोळा-सं०स्त्री० [देशज] मैंना से मिलती-जुलती किंतु छोटी पीले रंग की एक मधुर स्वर वाली चिड़िया ।

पियांण, पियांणउ, पियांणो—देखो 'प्रयांण' (रू.भे.)

उ०—१ नांमजाद मयगळ मदमाता, ल्याउ साहण रूपरांणूं । साथि घणूं पायदळ पाळउं, वेगि दीउ पियांणउ ।—कां.दे.प्र.

उ०—२ पछिमि सणो पतिसाह, सेन मेळिया सप्रणा । परमेसर परठिसै, पूरब सांमहा पियांणा ।—पी.ग्रं.

पियांनो-सं०पु० [अं० पियानो] एक प्रकार का हारमोनियम की तरह का बड़ा अंगरेजी बाजा जो मेज के आकार का होता है ।

पिआस—देखो 'प्यास' (रू.भे.)

पिआसो—देखो 'प्यासो' (रू.भे.)

(स्त्री० पिआसी)

पिया—१ देखो 'प्रिय' (रू.भे.)

उ०—१ ऊंचो सो मंडवो रोपावो म्हारा बावल, रेसम तणी ए बंधाय । श्रो ल्यं भावज घर आपणो(णूं) म्हैं तो जावूं'गी पिया जी रै देस ।—लो.गी.

उ०—२ अपणा पिया संग हिळमिळ खेलूं, अधर सुधारस पागी । मीरां गिरधर के मन मांनी, अब मैं भई सभागी ।—मीरां

२ देखो 'प्रिया' (रू.भे.)

उ०—घर अन राज-काज नह धारै । इक मुख पिया पिया उच्चारै ।

—सू.प्र.

पियाई—१ देखो 'पिग्राई' (रू.भे.)

२ देखो 'पिसाई' (रू.भे.)

पियाक-वि० [सं० पा] पीने वाला । उ०—तकै सिर ईस लियै मुसताक । पड़ै छक जांणि क फूल पियाक ।—सू.प्र.

पियाड़-सं०पु० [सं० पा+रा. प्र. आड़] वह खेत जिसमें सिंचाई की जा चुकी हो ।

पियाज—देखो 'प्याज' (रू भे.)

पियादो—देखो 'प्यादो' (रू भे)

उ०—१ वा'र री बात बालाबकस बियै रैं, हिये रैं मांहि तकलीफ हूगी । जरां हूं याद पोहकरी जिम करी जद, पियादा हरी ज्यां इंद्र पूगी ।—मे.म.

उ०—२ पांच पियादा, दस असवार, बाई के वीरो पांवणो जी, म्हारा राज ।—लो.गी.

उ०—३ मिळिया मिळिया हजार चोदह असवार रहै । हजार चोदह पियादा रहै ।—जलाल बूबना री वात

(स्त्री० पियादी)

पियामहि—देखो 'पितामह' (रू.भे.)

उ०—लेई निय हथियार द्रोण पियामहि अणगमीय । कुंतादिवि भरतार नयण नीर नीझर झरइ ए ।—पं.पं.च.

पियावास-सं०पु० [सं० प्रिय+राज. वास] कटसरैया, कुरबक ।

पियार—१ देखो 'प्यार' (रू.भे.)

२ देखो 'पाताल' (रू.भे.)

पियारो—देखो 'प्यारो' (रू.भे.)

उ०—१ आडा डूंगर वन घणा, खरा पियारा मित्त । देह विधाता पंखड़ी, मिळ मिळ आवउं नित्त ।—ढो.मा.

उ०—२ फेर बसाई भट्टियां, अंत करे पियारी ।—द.दा.

उ०—३ सच्च पियारा सांइयां, सांई सच्च सिवाय ।—ह.र.

(स्त्री० पियारी)

पियाळ-सं०पु० [सं० पियाल] १ महुए से मिलता-जुलता मझोले आकार का एक वृक्ष विशेष जिसके फल फालसे के बराबर और गोल होते हैं । बीज की गिरी बादाम और पिस्ते की भांति मीठी होती है और चिरोंजी कहलाती है ।

२ देखो 'पाताल' (रू.भे.)

उ०—जटा-जूट जोगी जबर है, जूनो जिणरो जोगड़ो । इळा पिंगळा जड़ां पियाळां, भल मरु फरजन फोगड़ो ।—दसदेव

३ देखो 'प्यालो' (मह., रू.भे.)

पियाली—देखो 'प्याली' (अल्पा., रू.भे.)

पियालो—देखो 'प्यालो' (रू.भे.)

उ०—१ जहर पियालैं जेहड़ी, इण कुण मंडै आस । अहि काळै मुख आंगळी, वाळै किर विसवास ।—रा.रू.

उ०—२ खड़ी जोवती राह मैं जी, सतगुरु पोंछे आय । पियालो लियां हाजिर खड़ी जी ।—मीरां

पियास—देखो 'प्यास' (रू.भे.)

उ०—ज्यों ज्यों पीवै रांम रस, त्यों त्यों वढे पियास । ऐसा कोई एक है, बिरळा दादूदास ।—दादूबांणी

पियासाळ-सं०पु० [सं० प्रियसालक] एक प्रकार का बेहड़े या अर्जुन की जाति का वृक्ष विशेष ।

पियासो—देखो 'प्यासो' (रू.भे.)

(स्त्री० पियासी)

पियूख, पियूस—देखो 'पीयूख' (रू.भे.)

उ०—१ सूखां नै हरिया किया, मुरझाया विकसाया हो । प्रेमांणंद पियूख हा, बादळ वरसाया करै, बाजा मधुर बजाया हो ।—गी.रां.

उ०—२ सेवगां हेत पियूस ससि स्रेवड़ा, प्रवाड़ा कठा लग पार पाऊं ।—बालाबक्स बारहठ (गजूकी)

पियोड़ो—भू०का०कृ०—१ किसी तरल पदार्थ विशेषतः जल को प्राणियों का मुंह द्वारा, वनस्पतियों का जड़ द्वारा अपने आप में लीन किया हुआ, पिया हुआ, आत्मसात किया हुआ ।

२ किसी प्रकार की निंदनीय घटना या अप्रिय बात को मन ही मन चुपचाप सहन किया हुआ ।

३ किसी प्रकार के उग्र या तीव्र मनोविकार का अंदर ही अंदर दमन किया हुआ, दबाया हुआ ।

४ नशे के लिए तम्बाकू, गांजा, चरस आदि का धूम्रपान किया हुआ।

५ पदार्थ विशेष का जल या तरल पदार्थ को अपने अंदर खींचा या सोखा हुआ।

६ शराब या भांग आदि मादक पदार्थ का पान किया हुआ।

७ पीवणा सर्प द्वारा प्राण वायु पिया हुआ।

(स्त्री० पियोड़ी)

पियो-सं०पु० [सं० पा] पशुओं को पानी पिलाये जाने का दिन।

रू०भे०—पीयो। (जयसलमेर)

पिरकरमा—देखो 'परिक्रमा' (रू.भे.)

उ०—चांद सूरज रा दिवला संजोया, नव लख तारा धूजी रै पिरकरमा देवै।—लो.गी.

पिरड़—देखो 'परड़' (रू.भे.)

पिरजा—देखो 'प्रजा' (रू.भे.)

उ०—सुख सूं सूती थी पिरजा सुखियारी। दुस्टी आतां ही करदी दुखियारी।—ऊ.का.

पिरजापत, पिरजापति, पिरजापती—देखो 'प्रजापति' (रू.भे.)

पिरणणो, पिरणबो—देखो 'परणणो, परणबो' (रू.भे.)

उ०—भला कन्या वाट जोवै कुंआरी, भला पिरणीजै हिमैं करिजै पिआरी।—पी.ग्रं.

पिरणियोड़ो—देखो 'परणियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पिरणीयोड़ी)

पिरतक, पिरतक्ख, पिरतख—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू.भे.)

पिरथमी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—पिरथमी मायाजाळ में पड़ो। तूं तो समझि सुहागण सूरता नारि पलक मेरी रांम सूं लगी।—मीरां

पिरथमीतळ—देखो 'प्रथवीतळ' (रू.भे.)

पिरथमीनाथ—देखो 'प्रथवीनाथ' (रू.भे.)

पिरथमीपोख—देखो 'प्रथवीपोख' (रू.भे.)

पिरथवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—जैंसो ही डील, जैंसो ही रूप, जैंसो ही पोत, मही जैंसो ही थळ, जैंसो ही कुम्मेत रंग, काळी गांठां सो पिरथवी रूप कच्छ री नीपनी, धीणोद रै मठ रा जोगी रै घर री।

—सूरै खींवे कांधळोत री बात

पिरथवीधर—देखो 'प्रथवीधर' (रू.भे.)

पिरथवीनाथ—देखो 'प्रथवीनाथ' (रू.भे.)

पिरथवीपोख—देखो 'प्रथवीपोख' (रू.भे.)

पिरथवीराज—देखो 'प्रथवीराज' (रू.भे.)

पिरथि, पिरथी—देखो 'प्रथ्वी' (रू.भे.)

उ०—१ बीरत कीरत बात, पिरथी सिर वापरी। आयो औरंगबाद, फतह कर आखरी।—दमसिंह री बात

उ०—२ पिरथी बड़ा पंमार, पीरथी परमारां तणी। एक उजीणी धार, बीजो आबू बैसणो।—अज्ञात

पिरथीधर—देखो 'प्रथ्वीधर' (रू.भे.)

पिरथीनाथ—देखो 'प्रथ्वीनाथ' (रू.भे.)

पिरथीपाळ—देखो 'प्रथ्वीपाळ' (रू.भे.)

उ०—म्हारा स्वांग में कीं खामी व्है तो बतावो। पिरथीपाळ, अबै रावळा भांड नै राजी होय नै बगसीस दिरावो।—फुलवाड़ी

पिरथीराज—देखो 'प्रथ्वीराज' (रू.भे.)

पिरथु—देखो 'प्रथु' (रू.भे.)

पिरभु, पिरभू—देखो 'प्रभु' (रू.भे.)

उ०—अविणासी सो बालमा है, जिण सूं साची प्रीति। मीरां कूं पिरभू मिळया है, ये ही भगति की रीति।—मीरां

पिरवा, पिरवाई—देखो 'परवाई' (रू.भे.)

उ०—सूरियो कहै सुण पिरवाई। गाडिया मेह कठा सूं लाई।

—वर्षाविज्ञान

पिरवार—देखो 'परिवार' (रू.भे.)

उ०—अरे ऊंठां पर कुण है? समदड़ी वाळा सेठ जी अर वांरो पिरवार।—रातवासो

पिरसूं—देखो 'परसूं' (रू.भे.)

उ०—आज-कालै पिरसूं अर परलै रोज करतां कीं महीना फेर गुडग्या। पीढियां रै गांव अर ठायां नै छोडणो इत्तो सैल काम नीं हो।—फुलवाड़ी

पिरांणो—देखो 'परांणो' (रू.भे.)

पिराइयो—देखो 'प्रस्वेद' (अल्पा., रू.भे.)

पिराग—१ देखो 'प्रयाग' (रू.भे.)

उ०—१ राजा कनोज सहित चौरासी, किला पिराग अनै घर कासी।

—सू.प्र.

उ०—२ रवद पिराग देखि छिब रीधा। डेरा आय गंग तट दीधा।

—सू.प्र.

२ देखो 'पराग' (रू.भे.)

पिरागवड़—देखो 'प्रयागवड़' (रू.भे.)

पिराचित, पिराछत, पिराछित, पिरास्चित—देखो 'प्राछत' (रू.भे.)

उ०—१ पांणी री छांट तक नी वरसी। दुनिया घणी कळपी, घणो ई पिराछत करियो पण मा'देवजी आपरै खण सूं नी डिगिया।

—फुलवाड़ी

उ०—२ एवड़-छेवड़ ओलंमा रे लाल! बिच-बिच सात सलांम, परण पिराछत क्यूं लियो जी रह्यो क्यूंनी अखनकंवार, सनेही ढोला।—लो.गी.

उ०—३ बीं लसकरिया नै जाय कहियो क्यूं परणे छो, औ तो परण पिराछित क्यूं लियो।—लो.गी.

उ०—४ थनै मारण रा पिरास्चित रै बदळै म्हैं सगळां रै मरणा

रो अमर दुख भुगतूंला ।—फुलवाड़ी
पिरिश्रां, पिरियां—१ देखो 'परसूं' (रू.भे.)
२ देखो 'परियां' (रू.भे.)
उ०—जुध करि पिरिश्रां जेम, 'सादा' उत श्रवसांणसिव । कर वाहे गाहे किलंब, 'ग्रमर' गयो खगि ऐम ।—वचनिका
पिरियोजन—देखो 'प्रयोजन' (रू.भे.)
पिरीत—देखो 'प्रीति' (रू.भे.)
उ०—ऊठ 'फरीदा' जाग रे, झाडू देय मसीत । तूं सोवै रब जागता, किस विध वर्णै पिरीत ।—फरीद
पिरू, पिरू—देखो 'परसूं' (रू.भे.)
पिरोजन—देखो 'प्रयोजन' (रू.भे.)
पिरोजी—देखो 'फिरोजी' (रू.भे.)
उ०—१ तरै लाख फदिया हुजदारां थांहरा नूं देस्यां । तरै तेजसी तो गढ़ चढीया । पीरोजी लाख कोठार रावळा थी तेजसी रा हुजदारां नूं सुहलां-सा गिण दीया ।—राव मालदेव री बात
उ०—२ पिरोजी रंग रा सांमियांना में श्रणगिण जुपयोड़ा दीवा इण भांत लखावता जांणै गिगन सूं श्राभो ई हेटै उतरग्यो है ।
—फुलवाड़ी
पिरोजो—देखो 'फिरोजो' (रू.भे.)
पिरोणो, पिरोवो—देखो 'पोणो, पोवो' (रू.भे.)
पिरोणहार, हारो (हारी), पिरोणियो—वि० ।
पिरोश्रोड़ो, पिरोयोड़ो—भू०का०कृ० ।
पिरोईजणो, पिरोईजबो—कर्म वा० ।
पिरोयत—देखो 'पुरोहित' (रू.भे.)
पिरोयोड़ो—देखो 'पोयोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिरोयोड़ी)
पिरोळ—देखो 'पोळ' (रू.भे.)
पिरोवणो, पिरोवबो—देखो 'पोणो, पोबो' (रू.भे.)
पिरोवणहार, हारो (हारी), पिरोवणियो—वि० ।
पिरोविश्रोड़ो, पिरोवियोड़ो, पिरोव्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पिरोवीजणो, पिरोवीजबो—कर्म वा० ।
पिरोवियोड़ो—देखो 'पोयोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिरोवियोड़ी)
पिरोहित—देखो 'पुरोहित' (रू.भे.)
उ०—कहै पिरोहित राज श्रणकळ । 'माहव' रो 'विजपाळ' महाबळ ।—सू.प्र.
पिलग—सं०पु० [देशज] १ शिकारी कुत्ता । उ०—१ हरिण निबळ पर ह्रख हियै, प्रहार करण पिलग । स्वांत भरोसो सक्ति रो, जुड़ मैंगळ हुंत जंग ।—रेवतसिंह भाटी
उ०—२ फिरै नचींता ग्वाळिया, गायां सिंघ करै रखवाळी । निधड़क एण पिलंग सूं, दावालेण लगाकर श्राली । चिड़िया श्राद विहंग बन, बाजां हूंत हसैं दे ताळी । वधै गरीबां बळ इधक, ऐसी धाक सियावर वाळी ।—र.रू.
२ देखो 'पल्यंक' (रू.भे.)
उ०—१ हमरा पिलंग जड़ाऊ छोड्या, वणिया (रेसम) पीळी पाट । क्यां पर राजी भयो सांवरो, चेरी को नहीं खाट ।—मीरां
उ०—२ वो नौजवांन इणी कमरा में खड़ां खड़ां श्राय नै पिलंग माथै बैठ्यो । पिलंग चांदी रो हो ।—फुलवाड़ी
पिलंड—सं०पु०—१ शेषनाग । २ सर्प, सांप ।
उ०—नर नाग मंडळ मेवाड़ निरखतां, कमधज गरुड़ फिरै को पंख । कुंभकरण सिसकनै काढै, पिलंड उर ताप खाग भटपख ।
—मालो सांदू
पिलणो, पिलवो—क्रि०श्र० [?] १ मग्न जाना । उ०—खिलो सुरता घस सिद्धि समंद । पिलो प्रभुता बस बुद्धि प्रबंध । हिलो जुगतो जसवार हजार । मिळो मुगतो दस-द्वार मभार ।—ऊ.का.
२ दूर होना, चला जाना, मिट जाना । उ०—जनम भूमि में करै जातरा, पाप प्रबळ पिल जावै । पुन्न पाछला होवै पूरा, श्रा मन में जद श्रावै ।—ऊ.का.
३ द्रवित होना, पिघल जाना, श्रनुकूल होना । उ०—मुगधा मध्या नै मोडा मिळ जावै, पढ़-पढ़ प्रारथना प्रौढा पिल जावै । हियागम श्रागम उलटा पण होवै, साध्वी दुख देखै कुलटा सुख सोवै ।
—ऊ.का.
४ तिल, सरसों श्रादि का पेरा जाना ।
पिलणहार, हारो (हारी), पिलणियो—वि० ।
पिलिश्रोड़ो, पिलियोड़ो, पिल्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पिलीजणो, पिलीजबो—भाव वा० ।
पीलणो, पीलवो—सक० रू० ।
पिल्लणो, पिल्लवो, पिल्हणो, पिल्हवो—रू०भे० ।
पिलपिल—सं०स्त्री० [देशज] पिलपिल होने या करने की श्रवस्था या क्रिया ।
पिलपिलणो, पिलपिलबो—क्रि०श्र० [देशज] १ नर्म होना, पिलपिला होना । उ०—काळी कांठळ में दांमणियां दमकी, चित में कांमणियां विरहानळ चमकी । छूटी श्रासारां कासारां छिळती, पड़ती परनाळां पहुवी पिलपिलती ।—ऊ.का.
२ सड़ना, गदवदना ।
पिलपिलणहार, हारो (हारी), पिलपिलणियो—वि० ।
पिलपिलिश्रोड़ो, पिलपिलियोड़ो, पिलपिल्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पिलपिलीजणो, पिलपिलीजवो—भाव वा० ।
पिलपिलाणो, पिलपिलावो—सक० रू० ।
पिलपिलाणो, पिलपिलाबो—क्रि०स० ('पिलपिलाणो' क्रिया का प्रे०रू०)
१ नर्म करना, पिलपिला करना ।
२ सड़ाना ।

पिलपिलाणहार, हारो (हारी), पिलपिलाणियो—वि० ।
पिलपिलायोड़ो—भू०का०कृ० ।
पिलपिलाईजणो, पिलपिलाईजबो—कर्म वा० ।
पिलपिलणो, पिलपिलबो—अक० रू० ।

पिलपिलाट—सं०स्त्री० [देशज] नर्म या पिलपिला होने की दशा या भाव ।
रू०भे०—पिलपिलाहट ।

पिलपिलायोड़ो—भू०का०कृ०—१ नर्म या पिलपिला किया हुआ ।
२ सड़ाया हुआ ।
(स्त्री० पिलपिलायोड़ी)

पिलपिलाहट—देखो 'पिलपिला'ट' (रू.भे.)

पिलपिलियोड़ो—भू०का०कृ०—१ नर्म हुवा हुआ, पिलपिला हुवा हुआ ।
२ सड़ा हुआ, गदबदाया हुआ ।
(स्त्री० पिलपिलियोड़ी)

पिलपिलो—वि० [देशज] (स्त्री० पिलपिली) वह जिसका रस या गूदा हल्के स्पर्श से बाहर आ जाता है।
ज्यूं—पिलपिलो आंबो, पिलपिलो खरबूजो, पिलपिलो फोड़ो ।

पिलवांण—देखो 'पीलवांण' (रू.भे.)
उ०—पिलवांणां आंकस पांण धरै । सुज दामणि जांणि खिवै सिहरै ।—गु.रू.बं.

पिलां—सं०स्त्री०—एक चिड़िया विशेष जिसका मांस खाया जाता है ।

पिलांण—देखो 'पलांण' (रू.भे.)
उ०—एक सो आठ कौतक हय सिणगारिया, सुंदर-सोवन-जड़ित पिलांण । एक सौ नै आठ रथ सिणगारिया, चालै असवारी आगीवांण ।—जयवांणी

पिलांणड़ो—देखो 'पलांण' (अल्पा., रू.भे.)

पिलांणणो, पिलांणबो—देखो 'पलांणणो, पलांणबो' (रू.भे.)
उ०—सांड्या रे भाई जलदी सांड पिलांण । बेग पधारो राणी सीकरी रै देस में जी ।—लो.गी.
पिलांणणहार, हारो (हारी), पिलांणणियो—वि० ।
पिलांणिओड़ो, पिलांणियोड़ो, पिलांण्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पिलांणीजणो, पिलांणीजबो—कर्म वा० ।

पिलांणियोड़ो—देखो 'पलांणियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिलांणियोड़ी)

पिलांणियो—देखो 'पलांण' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—१ घण तेजाळ घोड़लो, तुरी करै वह तांन । हीरै जड़ित पिलांणियो, दे बारट नां दांन ।—रा.ग्रं.

पिळाग्रखतेस—देखो 'पीळाग्रक्षत' (रू.भे.)
उ०—सभे खग ऊजळ भाटक सूर । पिळाग्रखतेस चढ़ावत पूर ।—सू.प्र.

पिलाणो, पिलाबो—देखो 'पाणो, पाबो' (रू.भे.)
उ०—कंठ सुं पांणी पांणी कहियो । विलळां भांग पिलायर वहियो ।—ऊ.का.
पिलाणहार, हारो (हारी), पिलाणियो—वि० ।
पिलायोड़ो—भू का०कृ० ।
पिलाईजणो, पिलाईजबो—कर्म वा० ।

पिलायोड़ो—देखो 'पायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिलायोड़ी)

पिलिया—सं०स्त्री० [देशज] पकी हुई ककड़ी । उ०—थुर थुर थूजंता थुडता थाकोड़ा । पीळा पड़ियोड़ा पिलिया पाकोड़ा ।—ऊ.का.

पिलियोड़ो—भू०का०कृ०—१ भगा हुआ, पलायन किया हुआ ।
२ दूर हुवा हुआ, गया हुआ, मिटा हुआ ।
३ द्रवित हुवा हुआ, पिघला हुआ, अनुकूल ।
४ पेरा हुआ ।
(स्त्री० पिलियोड़ी)

पिलुवरणी—सं०स्त्री० [सं० पिलुपर्णी] मरोड़फली नामक लता, मूर्वा।

पिलूंदी—सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार की मोटे तने की लता विशेष जो वृक्षों पर चढती है ।

पिलोत—देखो 'पीलसोज' (रू.भे.)

पिल्ल—देखो 'पल' (रू.भे.)
उ० —बिलकुल नै घणो तातो मिळै । प्रिथिमै घड़ो पिल्ल रो मिजमांन हवो थको भिलै ।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

पिल्लणो, पिल्लबो—'पिलणो, पिलबो' (रू भे.)
उ०—हठि चहचउ सुरतांण, खणवि धरणि तलि पिल्लउं वेगि ल्यावि पदमिणी, सेन सवि साइर घल्लउं ।—प.च.चौ.
पिल्लणहार, हारो (हारी) पिल्लणियो—वि० ।
पिल्लिग्रोड़ो, पिल्लियोड़ो, पिल्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पिल्लीजणो, पिल्लीजबो—भाव वा०, कर्म वा० ।

पिल्लियोड़ो— देखो 'पिलियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पिल्लियोड़ी)

पिल्हणो, पिल्हबो—क्रि०स० [?] १ स्पर्श करना, चूमना ।
उ०—तव कमलिणि विस तरग, नयण सूं नयण न मेलिग। वयण-वयण नहु मिली, अहर सुं अहर न पिल्हिग ।—प.च.चौ.
२ देखो 'पिलणो, पिलबो' (रू.भे.)
उ०—सांमि कजि अणसरउं, नारि पदमिणी उवेलउं । गढ राखउं राखउं भुज प्राणि, मारि असुरां दल पिल्हउं ।—प च.चौ
पिल्हणहार, हारो (हारी), पिल्हणियो—वि० ।
पिल्हिओड़ो, पिल्हियोड़ो, पिल्हयोड़ो—भू०का०कृ० ।
पिल्हीजणो, पिल्हीजबो—कर्म वा० ।

पिल्हियोड़ो—भू०का०कृ०—१ स्पर्श किया हुआ, चूमा हुआ ।
२ देखो पिलियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पिल्हियोड़ी)

पिल्लो-सं०पु० [तामिल, पिल्ला] कुत्ते का बच्चा ।

(स्त्री० पिल्ली)

पिव-देखो 'प्रिय' (रू.भे.)

उ०—उड़ उड रे ओ काळा काग । जे म्हारा पिव बी घर आवै ।—लो.गी.

पिवासा—देखो 'पिपासा' (रू.भे.) (जैन)

पिवण—देखो 'पीवण' (रू.भे.)

पिवणो, पिवबो—देखो 'पीणो, पीवो' (रू.भे.)

उ०—संत तणक्कइ, पिउ पियइ, करहउ ऊगाळेह । भल वळावो दीहड़ा, दइ वळावण देह ।—ढो.मा.

पिवणहार, हारो (हारी), पिवणियो—वि० ।

पिविप्रोड़ो, पिवियोड़ो, पिव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पिवीजणो, पिवीजबो—कर्म वा० ।

पिवरियो—देखो 'पी'र' (अल्पा., रू.भे.)

पिवीलिया—देखो 'पिपीलिका' (रू.भे.) (जैन)

पिसकस-सं०पु० [?] १ एक प्रकार का धनुष ।

२ धनुष (अ.मा.)

पिसण-वि० [सं० पिशुन] १ नीच, दुष्ट ।

उ०—विपत अंग विपरीत, अधरम आळस ऊंघणो । अपजस सोर अनीत, पैलां घर वांछै पिसण ।—बां.दा.

२ चुगलखोर, निंदक ।

३ छली, कपटी, धूर्त ।

सं०पु०—१ शत्रु, दुश्मन (ह.नां.मा.)

उ०—१ हुवौ अति सिधुवौ राग, वागी हकां । थाट आया पिसण, घाट लागा थकां ।—हा.झा.

उ०—२ 'गाजू' मग्गे पाचसो, पिसण करग्गां पेख । खांची वग्गां 'रांम' रिण, जंगां दाख विसेख ।—रा.रू.

उ०—३ जन हरिदास साया नरां, मारै अग्नि लगाय । पहली सज्जन व्है मिळै, पछै पिसण व्है खाय ।—ह.पु.वा.

२ केसर (नां.मा, ह.नां.मा.)

रू०भे०—पसण, पिसन, पिसन्न, पिसुण पिसुन, प्रसण, प्रिसण ।

मह०—पिसणाक, प्रसणांण, प्रसणायण, प्रिसणांण ।

पिसणखोर-वि० [सं० पिशुन, फा० खोर] शत्रु को संहार करने वाला ।

उ०—जांणै अकबर जोर, तो पिण तांणै तोर तिढ । आ वलाय है ओर, पिसणखोर 'प्रतापसी' ।—दुरसो आढ़ो

पिसणपतंग-सं०पु०यौ० [सं० पिशुन+पन्नग] मयूर, मोर (अ.मा.)

पिसणाक—देखो 'पिसण' (मह, रू.भे.)

उ०—'हठी' रिणछोड़ तणो करिहाक । पछट्टत खाग हुणै पिसणाक ।

—सू.प्र.

पिसणो, पिसबो-क्रि०अ० ('पीसणो' क्रिया का अक. रू.) १ पिसा जाना (आटा आदि)

२ रगड़ या दबाव के कारण महीनतम टुकड़ों में होना, चूर्ण होना ।

३ कुचला जाना, दब जाना ।

४ किसी प्रकार से कष्ट या संकट आदि के पड़ जाने से अथवा बहुत अधिक परिश्रम के कारण थक कर पूर्ण शिथिल होना ।

५ शोषित किया जाना, शोषित होना ।

६ देखो 'फिसणो, फिसबो' (रू.भे.)

पिसणहार, हारो (हारी), पिसणियो—वि० ।

पिसिप्रोड़ो, पिसियोड़ो, पिस्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पिसीजणो, पिसीजबो—भाव वा० ।

पिसताणो, पिसतावो—देखो 'पछताणो, पछतावो' (रू.भे.)

उ०—लिख पत्तर रांणू मीरां नै भेज्यो संग साधां से पिसतास्यो जी ।—मीरां

पिसताणहार, हारो (हारी), पिसताणियो—वि० ।

पिसतायोड़ो—भू०का०कृ० ।

पिसताईजणो, पिसताईजबो—भाव वा० ।

पिसतायोड़ो—देखो 'पछतायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पिसतायोड़ी)

पिसतावणो, पिसतावबो—देखो 'पछताणो, पछतावो' (रू.भे.)

उ०—पुण्य करे पिसताविया रे, राजा गंध्रपसेण । यूं पिसतावै जगत सब, मुख गदा री लेण ।—स्री हरिरांमजी महाराज

पिसतावणहार, हारो (हारी), पिसतावणियो—वि० ।

पिसताविप्रोड़ो, पिसतावियोड़ो, पिसताव्योड़ो—भू०का०कृ० ।

पिसतावीजणो, पिसतावीजबो—भाव वा० ।

पिसतावियोड़ो—देखो 'पछतायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पिसतावियोड़ी)

पिसतावो—देखो 'पछतावो' (रू.भे.)

उ०—तरसै देख अवर बनतावां, भूलै रघुवर भोळा । जद करसी पिसतावो जम रा, दूत फिरेला दोळा ।—र.रू.

पिसतोल—देखो 'पिस्तोल' (रू.भे.) (अ.मा.)

उ०—करावीन जंबूर, तुपक पिसतोल तयारिय । ठौर ठौर नद घोर, यते लुकमांन डकारिय ।—ला.रा.

पिसतो—देखो 'पिस्तो' (रू.भे.)

उ०—विध विध सहेली बाड़ियां छाजै छै । आंबा केला नारेल पिसता छूहारा दाख विदांम'''।—वगसीरांम पुरोहित री वात

पिसन, पिसन्न—देखो 'पिसण' (रू.भे.)

उ०—१ पन प्रबळ पिसन पिक्खै न पिट्ठ, रजवट्ट-वट दै राठौर रिट्ठ ।—ऊ.का.

उ०—२ विरदपत परताप 'विजपत' विय, सदविजै अंबाटां पिसन्न सेलोट । उरड जाता वडा करेवा गरदवां, अभंपद वसै वे राज री

ओट।—महाराजा मांनसिंह रो गीत

पिसर-सं०पु० [फा०] पुत्र, लड़का, बेटा।

उ०—तिसके दरम्यांन खलक के खालक अवतारू के अवतंस मुनराज के मालक दसरथ का पिसर अंतेबर सूं आये।—र रू.

पिसलणौ, पिसलबौ-क्रि०स० [सं० पेषणम्] १ किसी नरम पदार्थ को हाथ, हथेली या उंगलियों से दबाते हुए रगड़ना या मसलना।

उ०—नाडा नीसर गई, आंतड़ा चैठा ऊंडा, कूंडा में कांचतां, भिळै हैं ढांळा भुडा। मूठयां सूं मसळतां, पिसलतां डोडा पीसै; पोसत छांण'र पियै, दसत रा दोसत दीसै।—ऊ.का.

२ देखो 'फिसळणौ, फिसळबौ' (रू.भे.)

पिसळणहार, हारो (हारी), पिसळणियौ—वि०।

पिसळिओड़ौ, पिसळियोड़ौ, पिसळ्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पिसळीजणौ, पिसळीजबौ—कर्म वा०, भाव वा०।

पिसळियोड़ौ—देखो 'फिसळियोड़ौ' (रू भे.)

(स्त्री० पिसळियोड़ी)

पिसाई-सं०स्त्री [सं० पेषणम्] १ पीसने की क्रिया या भाव।

२ चक्की द्वारा पिसाई करने का धन्धा या व्यवसाय।

३ पिसाई करने पर मिलने वाला पारिश्रमिक।

४ अत्यधिक कार्य करने से होने वाला परिश्रम।

५ अत्यधिक परिश्रम करने से होने वाली शारीरिक अवस्था।

रू०भे०—पिआई, पियाई, पिहाई, पीआई, पीयाई, पीसाई, पीहाई।

पिसाड़णौ, पिसाड़बौ—देखो 'पिसाणौ, पिसाबौ' (रू.भे.)

पिसाड़णहार, हारो (हारी), पिसाड़णियौ—वि०।

पिसाड़िओड़ौ, पिसाड़ियोड़ौ, पिसाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पिसाड़ीजणौ, पिसाड़ीजबौ—भाव वा०।

पिसाड़ियोड़ौ—देखो 'पिसायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पिसाड़ियोड़ी)

पिसाच, पिसाचक-सं०पु० [सं० पिशाच](स्त्री० पिसाचण, पिसाचणी)

१ एक प्रकार के भूत या प्रेत जो यक्षों और राक्षसों से हीन कोटि के देवों में गिने जाते हैं।

उ०—गळ मुंडमाळ मसांण ग्रह, संग पिसाच समाज। पावन तूझ प्रभाव सूं, संभू अपावन साज।—बां दा.

२ बीभत्स या जघन्य कर्म करने वाला व्यक्ति।

३ भारत के पश्चिमोत्तर भाग से कश्मीर की सीमा तक के भू भाग का प्राचीन नाम।

४ इस प्रदेश का निवासी व्यक्ति।

वि०—मांसाहारी, मांसभोजी।

रू०भे०—पिचास, पिसाचर, पिसाय।

पिसाचकी-सं०पु० [सं० पिशाचकिन्] कुबेर (अ.मा.)

पिसाचघन-वि०यौ० [सं० पिशाचघ्न] १ पिशाचों का नाश करने वाला।

२ पिशाच-बाधा मिटाने वाला।

सं०पु०—पीली सरसों।

पिसाचचरजा-सं०स्त्री०यौ० [सं० पिशाचचर्या] पिशाचों की भांति मरघट में परिभ्रमण करना।

पिसाचद्रु-सं०पु० [सं० पिशाचद्रु] सिंहोर का वृक्ष।

पिसाचपत, पिसाचपति-सं०पु० [सं० पिशाचपति] महादेव, शिव।

पिसाचबाधा-सं०स्त्री०यौ० [सं० पिशाचबाधा] पिशाच के द्वारा प्राप्त होने वाला कष्ट।

पिसाचभासा-सं०स्त्री०यौ० [सं० पिशाचभाषा] १ पिशाच प्रदेश की भाषा (प्राचीन)

२ पिशाचों की भाषा, पैशाची भाषा।

पिसाचमोचन-सं०पु०यौ० [सं० पिशाचमोचन] काशी का एक प्रसिद्ध तालाब जिसके तट पर पिंडदान करने से जीवात्मा की पिशाच योनि से मुक्ति हो जाती है।

पिसाचर—देखो 'पिसाच' (रू.भे.)

उ०—तर पीपळ रै तळै, फिरै फूंकार मणंधर। तर पीपळ रै तळै, रमै बेताळ पिसाचर।—पा प्र.

पिसाचविवाह-सं०पु०यौ० [सं० पिशाचविवाह] आठ प्रकार के विवाहों में से सबसे अधम विवाह, जो एकान्त स्थान में सोई हुई बेखबर या नशे में बेहोश पड़ी हुई कन्या के साथ सम्भोग करके किया जाता है।

पिसाचांगंजन-सं०पु० [सं० पिचाश+राज० गंजन] वरुणदेव।

(ना.डिं.को.)

पिसाचा-सं०पु० [सं० पिशाचिन्] १ कुबेर (ह.नां.)

सं०स्त्री० [सं० पिशास्य] २ एक देव जाति (नां.मां.)

पिसाची-सं०स्त्री० [सं० पिशाची] २ पिशाच स्त्री।

३ पिशाचों की भाषा पैशाची।

४ जटामासी।

पिसांणौ, पिसाबौ-क्रि०स० ('पीसणौ' क्रिया का प्रे०रू०) १ सूखे या ठोस पदार्थ को दबाव पहुंचा कर या रगड़ महीनतम चूर्ण के रूप में कराना, किसी वस्तु को आटे के रूप में कराना।

२ शिला पर रख कर किसी पदार्थ को पत्थर से महीनतम बंटाना, चटनी रूप करना।

३ अत्यधिक परिश्रम कराना, कठोर परिश्रम कराना।

४ किसी को पूरी तरह से कुचलना किसी से कठोरतापूर्वक कार्य कराना।

५ शोषण कराना

पिसाणहार, हारो (हारी), पिसाणियौ—वि०।

पिसायोड़ौ—कर्म०का०कृ०।

पिसाईजणौ, पिसाईजबौ—कर्म वा०

पिसाड़णौ, पिसाड़बौ, पिसावणौ, पिसावबौ—रू०भे०

पिसादिय—देखो 'फिसादी' (रू.भे.)
उ०—पिसादिय लोक भरै रिस पूर। करै जद कम्मध कोप करूर।
—पे.रू.

पिसायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ सूखे या ठोस पदार्थ को महीनतम चूर्ण के रूप में कराया हुआ, किसी वस्तु को आटे के रूप में कराया हुआ।
२ महीनतम बंटाया हुआ, चटनी रूप में कराया हुआ।
३ अत्यधिक व कठोर परिश्रम कराया हुआ।
४ बुरी तरह से कुचलाया हुआ।
५ शोषण कराया हुआ।
(स्त्री० पिसायोड़ी)

पिसारण, पिसारी-सं०स्त्री० [सं० पेषणम्] वह स्त्री जो पिसाई का कार्य करती हो।

पिसावणौ, पिसावबौ—देखो 'पिसाणौ, पिसावौ' (रू.भे.)
पिसावणहार, हारौ (हारी), पिसावणियौ—वि०।
पिसाविग्रोड़ौ, पिसावियोड़ौ, पिसाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पिसावीजणौ, पिसावीजबौ—कर्म वा०।

पिसावियोड़ौ—देखो 'पिसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पिसावियोड़ी)

पिसित-सं०पु० [सं० पिशितम्] १ मांस, गोश्त।
२ मांस का टुकड़ा या बोटी (हि.को.)

पिसियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ पिसा गया हुआ।
२ रगड़ या दबाव के कारण महीनतम टुकड़ों या खण्डों में हुवा हुआ।
३ कुचला गया हुआ।
४ किसी प्रकार के कष्ट या संकट आदि में पड़ जाने के कारण अथवा बहुत अधिक परिश्रम के कारण थक कर शिथिल हुवा हुआ।
५ शोषित किया गया हुआ।
(स्त्री० पिसियोड़ी)

पिसुण, पिसुन—देखो 'पिसण' (रू.भे.) (डिं.को., ह.नां.मा)
उ०—मांनइ मोटा उवरा, मांनइ रांणा राय हो पूजजी। तेज घणउ जगि ताहरउ, पिसुन लगाड़्या पाय हो पूजजी।—स.कु.

पिस्ट-वि० [सं० पिष्ट] पिसा या पीसा हुआ, चूर्ण किया हुआ।
सं०पु० [सं० पिष्ट] १ जल के साथ पिसा हुआ वह अन्न जिसकी मालिश की जाती है।
२ आटा।
३ चूर्ण।

पिस्टपेसण-स०पु० [सं० पिष्टपेषणम्] १ पिसी हुई वस्तु को पुनः पीसना।
२ कही हुई बात को पुनः कहना।
३ व्यर्थ का काम करना।

पिस्टि, पिस्टी-सं०स्त्री० [सं० पिष्टि] १ पीसी हुई वस्तु।
२ पीठी।

पिस्ती—देखो 'पित्ती' (रू.भे.) (अमरत)

पिस्तोळ-सं०पु० [अं० पिस्टल] एक प्रकार का तमंचा, छोटी बंदूक।
रू०भे०—पिसतोळ।

पिस्तौ-सं०पु० [सं० पिस्त] १ एक प्रकार का छोटा वृक्ष विशेष जो ईराक, अफगानिस्तान में होता है।
२ इस वृक्ष का फल जो मेवों में गिना जाता है।
उ०—पिस्तां सूं ना प्रेम, कोड काजू रौ कोनी। नोजा लागै निकांम, किसमिसी भावै कोनी। खारक ना खुस करै, खुमांणी दाय न आवै। खारी वणी बिदांम, दांम अखरोट लगावै। मारवाड़ मलांणी मगरै, खोखौ चोखौ मेवड़ौ। सूकौ ससतौ देवै सदा, मुरधर खेजड़ देवड़ौ।
—दसदेव
रू०भे०—पिसतौ।

पिस्सू-सं०पु० [फा० पश्शः] १ एक प्रकार का उड़ने वाला छोटा कीड़ा जो मच्छर की तरह काटता है।
२ मच्छर।

पिह-सं०पु० [सं० प्रभु] पति। उ०—भूंडण भूंडौ नह जणै, ना पिह लोपै रेह। तिण सू पहला ठहरता, दद मचावै खेह।
—डाढाळा सूर री वात

पिहर—देखो 'पी'र' (रू.भे.)
उ०—प्यारा आजी पांमणा, प्यारी घण रै देस। साजन म्हांरा पिहर में, थांरा कोड हमेस।—अज्ञात

पिहलउ-वि० [सं० पृथुल] चौड़ा। उ०—पहिलौ जंबूद्वीप, समद्र विचि थाळ आकार। लांबउ पिहलउ इक, लख जोइण नै विस्तार।
—ध.व.ग्रं.
रू०भे०—पिहुलउ, पिहुलौ।

पिहळाद—देखो 'प्रहळाद' (रू.भे.)

पिहाई—१ देखो 'पिग्राई' (रू.भे.)
२ देखो 'पिसाई' (रू.भे)

पिहित, पिहिय-वि० [सं० पिहित] १ छिपा हुआ, गुप्त। उ०—तिण सकार इण तौर, सतत गणिका समझाई। वेस वधू गुण वदळि, प्रीति लेस न पलटाई। तदि सकार असि तोलि, घाव उण रै लगाय घण। मरि जांणि खळ मूढ़, लिहित आयो घर अघण। न मरी सु प्रवळ सब सौं नयति, दिन किताक अंतर दिया। सह विप्र वळै विलसै सफळ, कांम वयस जुव्वन किया।—वं.भा.
२ ढका हुआ।

पिहुखणौ, पिहुखबौ—देखो पेखणौ, पेखवौ' (रू.भे.)
उ०—पावहु पवित्र प्रहरन प्रसाद। पिहुक्ख प्रयांन पक्खर प्रनाद।
—ऊ.का.

पिहुलउ, पिहुलौ—देखो 'पिहलउ' (रू.भे.)
उ०—दीपइ बीजउ दीप ए, धन धन घात की खंड। पिहुलौ चिहुं लख जोयणै, मंडळ रूपै खड।—ध व.ग्रं.

पीं-स०स्त्री० [अनु०] अव्यक्त, ध्वनि या शब्द।

उ०—टाबर टुकड़ा जोड़, ठोकरी मुख में लेवै। बीच जाळरी पांन, जोर सूं फूंकां देवै। पीं पीं ज्यूं पिक वैण, पींपटी वर्ण रंगीली। देव दुकानां मिळे, मुफतरै मोल चंगीली।—दसदेव

मुहा०—पीं बोलणी—अशक्त होना, साहसहीन होना, किसी कार्य के करने में असमर्थ होना।

पींग—देखो 'पिंग' (रू.भे.)

पींगो-सं०पु० [सं० प्लवंग] रस्सियों के बल लटकाया हुआ बच्चों का पलना या झूला। उ०—१ पेखै चंद प्रकास, देखै निस जळ देवियां। है मन बाळ हुलास, पींग सर तट पोढियो।—पा.प्र.

उ०—२ पींगै पूतां रै तंबू तण जावै। सेजां सूतां रै बजरंग बण जावै।—ऊ.का.

वि०—अति तरल।

रू०भे०—पिंगो।

पींडणो, पींडबो—देखो 'पीड़णी, पीड़बो' (रू.भे.)

उ०—पलक गिणै एक मास सउ, घडिय गिणै छम्मास। वरस समान दिनह गिणइ, इम विरह पींडइ तास रे।—प.च.चौ.

पींचणो, पींचबो-क्रि०अ० [सं० पिच्च, पीड़] १ दबना।

उ०—भूवाजी नै लखायो के वांरो काळजो जांणै केकड़ा रा पंजा में फ़िलियोड़ो पींचीजै है। वांरी नाडियां में जांणै लोई ऊंघो वैवण लागो। बोलणो चायो तो ई वांरा मूंडा सू बोल नीं निकळियो।

—फुलवाड़ी

२ सिकुड़ना। उ०—आंख्यां आडा खीरा जगण लागा। नाड़ियां बाळने लोई पीवणा सूं ई तिस मुझै तो लोई पीणो पड़ैला। डील री सगळी नाड़ियां जांणै पींचीजण लागी। थाबा खावतां खावतां रो अणचींत्यो एक बावड़ी रै पाखती पूगो।—फुलवाड़ी

३ किसी भारी वस्तु के दबाव से कुचला जाना, रौंदा जाना।

उ०—कदेई लखावतो के म्हारा माथा नै कोई उकळती कढाई में तळै है, कदै ई लखावतो के कोई हजारेक काळिंदर म्हारा माथा में फूंफां-फां करै है, कदेई लखावतो के किणी मोटा भाखर रै हेटै दबनै पींचीजै है।—फुलवाड़ी

४ दबाना।

पींचणहार, हारो (हारी), पींचणियो—वि०।

पींचिओड़ो, पींचियोड़ो, पींच्योड़ो—भू०का०कृ०।

पींचीजणो, पींचीजबो—भाव वा०, कर्म वा०।

पींचियोड़ो-भू०का०कृ०—१ दबा हुआ।

२ सिकुड़ा हुआ।

३ किसी दबाव से कुचला गया हुआ।

४ दबाया हुआ।

(स्त्री० पींचियोड़ी)

पींचो-सं०पु० [देशज] एक प्रकार की चिड़िया जिसकी दुम का रंग लाल होता है, गुल-दुम।

रू०भे०—पीचो।

पींछ-सं०पु० [सं० पिच्छम्] १ मयूर की पूंछ का पर. (उ.र.)

उ०—मोर पीछ कुण चीतरै जी। कुण करै संध्या रंग।

—विनय-विजयी

२ मयूर की पूंछ।

३ डैना (उ.र.)

४ कलंगी (छोटी) (उ.र.)

रू०भे०—पीछ।

पींछरो-सं०पु० [सं० पिच्छम्] गेहूं, जौ, जवार आदि की दाना-रहित छूछी बाल जो पशुओं को खिलायी जाती है।

उ०—जोबन नै जवार, काचा थकां ज मांणियै। झड़पै जासी झार, बाकी रहसी पींछरा।—अज्ञात

पींजण-सं०स्त्री० [सं० पिञ्ज+ल्युट=अन=पिंजनम्] रूई धुनने की धुनकी, पिंजन।

रू०भे०—पिंजण, पिंजन, पींजणी, पीनण।

पींजणी-सं०स्त्री० [देशज] १ पैर में धारण करने का एक प्रकार का आभूषण जो कड़े के आकार का परन्तु उससे कुछ मोटा और खोखला होता है। उ०—हाथ में सोनै री चटियो धु-जी, रमण खेलण नै चाल्या। पांव में पींजणियां गळै कुंज-माळा।—लो.गी.

वि०वि०—इसके अंदर कंकड़ियें होती हैं जिससे चलने में यह बजता है।

२ बैलगाड़ी के पहिए के आगे की धनुषाकार वह लकड़ी जिसके छेद में से होकर धुरा निकला रहता है।

३ देखो 'पींजण' (अल्पा., रू.भे.) (डिं.को.)

रू०भे०—पीजणी, पीनणी।

पींजणो, पींजबो—क्रि०स० [सं० पिंजि] १ धुनकी से रूई धुनना।

२ पीटना, मारना। उ०—किणी रै कीं होयै ढूकी नीं के एक जाट बिचाळै हो छातो ठोरनै कंवण लागो—ठाकर सा नै मनाय लावण रो जिम्मो तो म्हारो पण पछै अठै आयां ठाकरसा म्हारा मोर पीज न्हाकै तो इणरो जिम्मो कुण लेवेला।—फुलवाड़ी

पींजणहार, हारो (हारी), पींजणियो—वि०।

पीजिओड़ो, पीजियोड़ो, पीज्योड़ो—भू०का०कृ०।

पींजीजणो, पींजीजबो—कर्म वा०।

रू०भे०—पीजणो, पीजबो, पीनणो, पीनबो।

पींजर—देखो 'पंजर' (रू.भे.)

उ०—१ मारका जांण जूटंत मल्ल, गजथट्ट गहै भड़ अडो-पल्ल। पीजर पड़ंत पडियाळगांह, सिर अड़ावड़ा पड़ सुभट्टांह।

—गु.रू.बं.

उ०—२ सारण परली ठीकरी, घिस-घिस पतळी होय। परदेसी की गोरड़ी; झुर-झुर पीजर होय।—लो.गी.

उ०—३ मिळणो हुवै तो जी ढोला थे मिळो, छिन-छिन पींजर होती जाय।—लो.गी.

पींजरणौ, पींजरबौ–क्रि०स० [सं० पिंजि] १ संहार करना, मारना।
उ०—१ विढण सु प्रवि चीतौड़ि 'वीर'-उत्त, वह दळ पींजरिया बांणासि। घुक-घुक हेक गया घड़ धरती, ग्रध घड़ हेक गया ग्राकासि।
—ईसरदास मेड़तिया रौ गीत
उ०—२ कतियांणी कह-कह नारद डह-डह, हेका टह-टह वीर हसै वह रावत व्रह-व्रह, पौरसि प्रह-प्रह दूडी ठह-ठह होठ डसै। पड़िया-लागि पींजरै हुइ हुव, हींजर गाजै गिरवर गोम ग्रहे। ग्रोल्हार ग्रणि-सर, जमधर खजर, घडि-घडि ग्रसमर धार वहे।—गु.रू.बं.
२ ध्वंस करना, नाश करना।
३ ग्राच्छादित करना, ढकना। उ०—१ तो ग्रांगमण नमो 'सांगा' तण, रढ-रांवण मेवाड़ा रांण। पमंगां ग्रणी दुरंग पींजरिया। खग्र-वट्ट ता पहतां खूमांण।—महारांणा उदयसिंह रौ गीत
उ०—२ चीर जरद पाखर चंढाउण, कांचू जिरह जड़ाव करि। प्रिय कजि परिमळ रजी पींजरे, हालै टूकी 'जोध' हर।—दूदौ
उ०—३ फुण नागि निमै। गयणगि गिमै। रज पींजरियं। हय हींजरयं।—गु.रू.बं.
पींजरणहार, हारौ (हारी), पींजरणियौ—वि०।
पींजरिग्रोड़ौ, पींजरियोड़ौ, पींजरयोड़ौ—भू०का०कृ०।
पींजरीजणौ, पींजरीजबौ—कर्म वा०।
पींजरणौ, पींजरबौ—रू०भे०।
पींजरल्यौ—देखो 'पींजरौ' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
उ०—खदे तो माटी चीकणी, घड़ल्यां घड़ै ए कुमार। हसती तौ घूमै राजा रूठ के, चालो सैंयां देखण चाल। चंदन रूख कटायक जी पींजरल्यो घड़ाय। बेटी तो जलमी रूठ के, दीजो नदी ये वुहाय।
—लो गी.
पींजरापिरोळ, पींजरापोळ–स०स्त्री० [सं० पञ्जर+प्रतोली] १ संस्था द्वारा चलाई जाने वाली गोशाला।
२ खेती ग्रादि की हानि पहुँचाने वाले पशुग्रों को बंद करने का स्थान, कांभीहाउस। उ०—थे फालतू जिदो भाई? ग्रांपां रै किसी सारै-री बात है। फाटक वाळां नै ईंज जोईजै कै वे सगळी गायां नै पींजरापिरोळ में घाल दे।—वरसगांठ
पींजरियोड़ौ–भू०का०कृ०—१ संहार किया हुग्रा, मारा हुग्रा।
२ ध्वंस किया हुग्रा, नाश किया हुग्रा।
३ ग्राच्छादित किया हुग्रा, ढका हुग्रा।
(स्त्री० पींजरियोड़ी)
पींजरौ–सं०पु० [सं० पञ्जरकम्] बांस, धातु ग्रादि की खपचियों का या लोहे की सलाकों का बना हुग्रा भाबा या बक्स की तरह का उपकरण जिसमें पशु, पक्षी ग्रादि बंद किए जाते हैं।
उ०—मरणौ लाजम मांमलै, धार ग्रणी चढ धाप। पड़ग्रे सांकळ पींजरै, सिंहां वडौ सराप।—बां.दा.
रू०भे०—पिंजड़ो, पिंजरो।
ग्रल्पा०—पींजरल्यौ।
पींजस—देखो पिंजस (रू.भे.)
उ०—'डूंग' न्हार नै पकड़ कर, बां पींजस दियो बिठाय। ग्रागरै के लाल किलै में, दीनूं छै पुंचाय।—डूंगजी जवारजी री पड़
पींजारा—देखो 'पिंजारा' (रू.भे.)
उ०—गुळी रा खेत कदेक हुवा था, तिण री जमा चली जाय थी छींपा पींजारा।—नैणसी
पींजारौ—देखो 'पिंजारौ' (रू.भे.)
पींजियोड़ौ–भू०का०कृ०—१ धुन द्वारा धुना हुग्रा, पींजा हुग्रा।
२ पीटा हुग्रा, मारा हुग्रा।
(स्त्री० पींजियोड़ी)
पींजू–सं०पु० [देशज] करील का फल। उ०—लूग्रां लाग पिळीजिया, ग्रामां हाल बेहाल। पीजू मुरधर पाकिया, लै खाली ज्यूं लाल।—लू
पींड—१ देखो 'पिंड' (रू भे.)
२ देखो 'पींडो' (मह०, रू.भे.)
३ देखो 'पींडो' (मह०, रू.भे.)
पींडको—देखो 'पींडौ' (ग्रल्पा., रू.भे.)
पींडळी—देखो 'पींडी' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
उ०—पींडळियां रोमाळियां हो जी, वैरी जांघ देवळ के रो थांम। हे गवरल, रूड़ो हे नजारौ तीखो हे नैणां रो।—लो.गी.
पींडवा–सं०स्त्री० [देशज] हल पर वजन रख कर की जाने वाली जुताई।
पींडाढाळ–सं०पु० [देशज] ऊंट (ना डि.को.)
पींडार–सं०पु० [सं० पिण्डार] १ गडरिया।
२ ग्वाला।
३ देखो 'पिंडारो' (मह०, रू.भे.)
ग्रल्पा०—पींडारको, पींडारडो।
पींडारको, पींडारड़ो, पींडारियौ—१ देखो 'पींडार' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
उ०—पींडारड़े तउ दल पूंठि दीधी। वूवारवइं भुइं भव भीरु कीधी।
—सालि सूरि
२ देखो 'पिंडारो' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
पींडारो—देखो 'पिंडारो' (रू.भे.)
पींडाळू—देखो 'पिंडाळू' (रू.भे.)
पींडी–सं०स्त्री० [सं० पिण्ड] १ महादेव की मूर्ति या लिंग।
उ०—मैं इण भांत सेवा की, महादेव ग्रो फळ दियो, हमरकै देहरा मांहे कावड़ रै मिस जाऊं, जाय नै ऊपर एक भाटो नांखूं, पींडी भांजूं—नैणसी।
२ सने हुए ग्राटे की गोल रोटी जिसे सेक कर चूर कर तल कर चूरमा बनाया जाता है।
उ०—तिजारै रै पांणी सूं ग्राटो गूंदजै छै। तेरा रोटा करजै छै। रोटा ग्रोर पींडी कीजै छै। तठा पछै कढाही में तळजै छै।
—रा.सा सं.

३ टांग के घुटने के नीचे का पिछला मांसल भाग।

उ०—जाघ केळे का जी थांम, मिरगानेणी जी राज। पींडी तो कहियै रतनाळियां जी म्हारा राज।—लो.गी.

४ मोट (चड़स) के मुंह पर लगाया जाने वाला लकड़ी का चौखटा.

५ देखो 'पींडो' (अल्पा रू.भे.)

रू०भे०—पिंडी।

अल्पा०—पिंडली, पिंडोळी, पींडळी।

मह०—पींड।

पींडो-संपु० [सं० पिण्ड] १ पशुओं के पिछले पैर का ऊपर का हिस्सा जो मांसल होता है।

उ०—१ आप दोन्हू बकरां रा पींडा लेय आगे हालियौ।

—जलाल बूबना री वात

उ०—२ पड़छी स-तुच्छ पींडं प्रचंड, खंडरइ जु आंटूं भीति खंड।

—रा.ज सी.

२ हल को जमीन में गहरा पहुँचाने के लिए उस पर रखा जाने वाला मिट्टी का भार।

३ जेवड़ी का लपेट कर बनाया हुआ गोला या गुच्छा।

४ किसी गीले पदार्थ का बंधा हुआ पिंड, लोंदा।

उ०—माईतां री लोई पीवण री सोगन दिरायां पछै ई छोकरी आपरी ठौड़ बैठी थेपड़ी रै मापै ढिगली सूं गोबर रौ पींडौ लेय नीची घूण करियां थापण री कांम उणी भांत चालू करियो।

—फुलवाड़ी

५ देखो 'परींडो' (रू भे)

उ०—मेरो पींडो रीतो, बो बावल, कुण भरैगो तेरी धीय बिना। तेरी भाज्यां भरैगी तेरो पींडो, लाडो बेटी जाय घरां।—लो.गी.

अल्पा०—पींडकौ, पींडी।

मह०—पींड।

पींणच—देखो 'पुंणच' (रू.भे.)

पींदो-संपु० [सं० पिण्ड] किसी वस्तु का वह भाग जिस पर वह टिकी रह सके, तला। उ०—कुलडी रै पींदा जेड़ी उपसियोड़ी छोटी लिलाड़।—फुलवाड़ी

रू०भे०—पिंदो।

अल्पा०—पिंदी, पेंदी।

पींधो-संपु०[?] चिथड़ा।

पींप—देखो 'पीप' (रू.भे.)

उ०—अम्रत आरोगी न थी, तां टळवळती टीप। चाखि न पहिला चारवी, पछइ न भावइ पींप।—मा.कां.प्र.

पीपटी—देखो 'पींपी' (अल्पा., रू भे.)

उ०—टावर टुकड़ा जोड़, ठीकरी मुख मे लेवै। बीच जाळ रो पांन, जोर सूं फूंका देवै। पींपी ज्यूं पिक वैण, पीपटी वर्ण रंगीली। देव दुकानां मिळै, मुफतरै मोल चंगीली।—दसदेव

पींपळ—देखो 'पीपळ' (रू.भे.)

उ०—अला पींपळै फूल अति वेग फूलै। अला चढै हस्तण तणी दूध चूलै।—पी.ग्रं.

पींपळियौ—देखो 'पीपळ' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—पेटड़लो मूमल रौ, पीपळिये रो पांन ज्यों, हां जी रे, हीवड़लो हतीयारी रो संचै ढाळीयो।—लो.गी.

पींपळी—देखो 'पीपळी' (रू.भे.)

उ०—पीपल पाडल पींपली, पीठवनी पदमाख। पारिजात पीलूवड़ां, पींपरि पस्तां पांख।—मा.कां.प्र.

पींवळी-संस्त्री० [देशज] भाले, तलवार आदि की नोंक।

पींवा-संस्त्री० [देशज] खींप की फली। उ०—खींपा पींपा फोग, भुरट बूई वरणावै। भुरट लांपड़ी लुळै, गजब वेला गरणावै।—दसदेव

पींपीं-संस्त्री०—फूंक से बजाया जाने वाला पान और ठीकरी के मेल से बना बच्चों का बाजा।

रू०भे०—पीपटी।

पी-संपु०—१ स्वर्ण, सोना (एका०)

२ लोहा (एका०)

३ पीड़ा, कष्ट (एका०)

संस्त्री०—४ हल्दी (एका०)

५ चींटी।

६ देखो 'प्रिय' (रू.भे.)

उ०—१ पाघ बजाजां पूछ पी, लेसो मोल मंगाड़। ईजत किण विध आंणसो, पूछूं हेला पाड़।—बां.दा.

७ देखो 'पिग्राई' (रू.भे.)

पीग्रणजहर-संपु०यौ० [सं० पा+फा० ज़हर] शिव, महादेव (ह नां मा.)

रू०भे०—पीयण-जहर।

पीग्रणो, पीग्रबो—देखो 'पीणो, पीबो' (रू.भे.)

उ०—रांमरस प्याले रा पीग्रणहार, दया धरम रा पाळणहार, करम-जाळ रा मोडणहार, तापस अस्टांग जोग रा साभणहार, सांत रस मांहे गळतांण होइ नै रहिग्रा छै।—रा सा सं.

पीग्रणहार, हारौ (हारी), पीग्रणियौ—वि०।

पीग्रोड़ो, पीयोड़ो—भू०का०कृ०।

पीईजणो, पीईजबो—कर्म वा०।

पीग्रळ, पीग्रल—देखो 'पीयळ' (रू.भे.)

पीग्रळो, पीग्रलो—देखो 'पीळो' (रू.भे.)

उ०—ऐक रातां ऐक पीग्रळो, ऐक काळां एक सेत। कुसुम करइ कोडांमणा, विस्व वधारइ हेत।—मा.कां.प्र.

(स्त्री० पीग्रळी, पीग्रली)

पीग्रांणु, पीग्रांणो—देखो 'प्रयांण' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—पूरव सागर लगइ कटक लेई, आगइ दीऊं पीग्रांणूं। मइ दुखी राय देस छंडाव्या, तिहां अम्हारउं थांणूं।—कां.दे.प्र.

पीम्राई—१ देखो 'पिम्राई' (रू.भे.)
२ देखो 'पिसाई' (रू.भे.)
पीम्रारड़ी–वि०स्त्री० [सं० पराक, प्रा० पराय] १ पराई, दूसरे की।
उ०—देखी न सकइ रूम्रड, हईड़ दुस्ट म्रपार। देखी रिद्धि पीम्रारड़ी, वहइ निरंतर खार।—नळ-दवदंती रास
२ देखो 'प्रिया' (म्रल्पा०, रू.भे.)
पीइ, पीई—देखो 'प्रीति' (रू.भे.)
पीउ, पीऊ—१ देखो 'पिय' (रू.भे.)
२ देखो 'प्रिय' (रू.भे.)
उ०—चहुं दिस दामिनि सघन घन, पीउ तजी तिण वार। मारू मर चातग भई, पिउ पिउ करत पुकार।—ढो मा.
पीऊडइ—देखो 'प्रिय' (म्रल्पा., रू.भे.)
उ०—कंठी कलापी भ्रवतरिउ, ते सिव कंठ समांन। हाळाहळ न रस-मसि, पीऊडइ मांग्यां पांन।—मा कां.प्र.
पीऊस—देखो 'पीयूख' (रू भे.)
पीक–सं०पु० [सं० पिच्च] १ थूक, ष्ठीवन।
२ चबाए हुए पान के बीडे का थूक के साथ मिला हुम्रा रस।
उ०—तद पूठी चमेली म्राख री सागं रंग पायो, अग म्रंग में दरपण रोसो चमक जिण सूं ग्र हणां री दोलड़ी चोलड़ी चमक जिण रै पांन रो पीक गळै उतरतो बारै झळकै है सू गोरा गळा पर जांणे निमए पार रो मांणक हीज पळकै है।—र. हमीर
यौ०—पीकदांन
सं०स्त्री० [देशज] १ चाह, इच्छा।
२ म्रावश्यकता, जरूरत।
क्रि०प्र०—पड़णी, होणी।
३ म्राशय, मतलब म्रौर प्रयोजन।
पीकदांन–सं०पु० [सं० पिच्च+फा० दान] वह पात्र जिसमें पीक थूकी जाती है, उगालदान।
म्रल्पा०—पीकदांनी।
पीकदांनी—देखो 'पीकदान' (म्रल्पा०, रू.भे.)
पीगळणो, पीगळबो—देखो 'पिघळणी, पिघळबो' (रू.भे.)
पीगळणहार, हारो (हारी), पीगळणियो—वि०।
पीगळिम्रोड़ो, पीगळियोड़ो, पीगळ्योड़ो—भू०का०कृ०।
पीगळीजणो, पीगळीजबो—भाव वा०
पीगळियोड़ो—देखो 'पिघळियोड़ो' (रू.भे)
(स्त्री० पीगळियोड़ी)
पीघळणो, पीघळबो—देखो 'पिघळणी, पिघळबो' (रू.भे.)
उ०—सुरनर मुनिवर इसो न कोय हो मुनिवर जो। फांई जिणनैं जोयां सूं म्हारो मन पीघळै हो राज।—गी.रां.
पीघळणहार, हारो (हारी), पीघळणियो—वि०।
पीघळिम्रोड़ो, पीघळियोड़ो, पीघळ्योड़ो—भू०का०कृ०।
पीघळीजणो, पीघळीजबो—भाव वा०।
पीघळियोड़ो—देखो 'पिघळियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पीघळियोड़ी)
पीड़—देखो 'पीड़ा' (रू.भे.)
उ०—१ पाटा पीड़ उपाव, तन लागां तरवारियां। वहै जीभ रा घाव, रती न म्रोखद राजिया।—किरपारांम
उ०—२ पीड़ न पेखै दया न देखै, लेखै बिन लूटंदा है।
—ऊ.का.
उ०—३ जात पिछांणुं जातरी, म्रोरां पीड़ न एस। रे भोळा! घण रोवसी, सो दुख मूझ विसेस।—बी.स.
उ०—४ हिव तूं जउ उपगार करि, मेटि सहू नी पीड़। स्युं भाखै छै मो भणी, भांजी दुहेली भीड़।—वी.कु.
उ०—५ भगतां भूधर भांजण भीड़, पालीजै देव म्रम्हीणी पीड़। त्रिविध त्रिजग त्रिविक्रमतार, चतुरभुज चेतन म्रातम सार।—ह.र.
उ०—६ विघ चूका वैद न जांणै वेदन, म्रोखध लहै न पीड़ म्रथाह। रात दिवस खटकै उर 'राजो', साजो तेण नहीं पतसाह।
—पीरदांन म्रासियो
पीड़क–वि० [सं० पीडक] १ कष्ट देने वाला, पीडा पहुंचाने वाला।
२ म्रत्यधिक म्रत्याचार या म्रन्याय करने वाला, म्रत्याचारी।
३ ग्रहण करने वाला, पकड़ने वाला।
४ दबाने वाला।
पीड़ण, पीड़णी–सं०स्त्री० [सं० पीडन] १ व्यक्ति विशेष को पहुंचने वाला मानसिक या शारीरिक कष्ट या तकलीफ।
२ दर्द, पीड़ा।
३ म्राक्रमण द्वारा किसी देश को बर्बाद करने का कार्य
उ०—म्रभूत रीस पूत साह जूत दाह म्रंग में। हले म्रभंग रूप माग घू लग निहंग में। पडै भगांण देस देस म्रग्रवांण पीड़णी। सलाह पाछलै पुरै मिटी तुरेस भीड़णी।—रा.रू.
४ संकट, कष्ट।
५ सूर्य, चंद्र म्रादि का ग्रहण।
६ उच्छेद, नाश।
७ स्वरों के उच्चारण करने में होने वाला एक प्रकार का दोष।
रू०भे०—पीड़न।
पीड़णी, पीड़बो–क्रि०स० [सं० पीडनम्] पीड़ा देना, कष्ट देना, पीड़ित करना। उ०—१ पीड़ंति हेमत सिसिर रितु पहिलो, दुख टाळ्यो वसंत हित दाख। व्याए वेली तणी तरुवरां, साखां विसतरियां वैसाखि।—वेलि
उ०—ले तो म्रकारा दंड, निरदयी प्रचंड। पर पीवां नैं पीड़तो ए, म्रापणैं छंदै कीड़तो ए।—जयवांणी
पीड़णहार, हारो (हारी), पीड़णियो—वि०।
पीड़िम्रोड़ो, पीड़ियोड़ो, पीड़्योड़ो—भू०का०कृ०

पीड़ीजणी, पीड़ीजबो—कर्म वा० ।
पिड़णो, पिड़बो—अक० रू० ।
पीड़णो, पीड़बो, पीडणो, पीडबो—रू०भे० ।

पीड़त—देखो 'पीड़ित' (रू.भे.)
उ०—उपव मुनि मेल्है सिख इतरै । जवन सक्रोध आविया जितरै । संभ्रम दिल आसमां सिकारां । पीड़त मुनि कीधा अणपारां ।
—सू.प्र.

पीड़न—देखो 'पीड़ण' (रू.भे.)

पीड़ा-सं०स्त्री० [स० पीडा] १ रोग, बिमारी, व्याधि । (अ.मा.)
२ यातना, कष्ट, तकलीफ (डिं.को.)
३ किसी भी प्रकार के मानसिक या शारीरिक आघात से उत्पन्न होने वाली अप्रिय अनुभूति जो प्राणियों को विव्हल या व्यथित कर देती है, वेदना, दर्द, व्यथा ।
४ शरीर के अंगों में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न होने से अथवा शारीरिक क्रियाओं का अव्यवस्थित होने वाली अनुभूति जिसका अनुभव सारे शरीर के स्नायविक तंत्र द्वारा होता है ।
ज्यूं—अपच पेट री पीड़ा, ज्वर जुखांम माथा री पीड़ा ।
५ किसी भी प्रकार की अव्यवस्था के कारण होने वाला कष्ट या दर्द, अतिक्रमण, नियमभंग ।
६ चद्रमा या सूर्य का ग्रहण ।
७ नाश, उच्छेद ।
८ हल्दी (अ.मा.)
रू०भे०—पीड़, पीढ़ि, पीर ।

पीड़ाकर-वि० [सं० पीडा+कर] पीड़ा या कष्ट देने वाला, पीड़ा पहुंचाने वाला ।

पीड़ाघर-सं०पु०यौ० [सं० पीड़ा-गृह] १ वह स्थान जहां किसी को कष्ट या पीडा पहुचाई जाती है ।
२ कष्टप्रद स्थान ।

पीड़ावणो, पीड़ावबो-क्रि०अ० [सं० पीडनम्] १ पीड़ा होना, दर्द होना ।
उ०—ताहरां उवां नूं कहियो । रांमदास, खिंगार, रायसल्ल नूं कहियो जु कंवरजी स्री भोपतजी रो पेट दूखे छै । उवां पणि कहियो कुंवर जी पधारो डेरे पेट पीड़ावै छै ।—द.वि.
२ प्रसव के पूर्व कष्ट होना, दर्द होना ।
पीड़ावणहार, हारो (हारी), पीड़ावणियो—वि० ।
पीड़ाविग्रोड़ो, पीड़ावियोड़ो, पीड़ाव्योड़ो—भू०का०कृ० ।
पीड़ावीजणो, पीड़ावीजबो—कर्म वा० ।

पीड़ावियोड़ी-भू०का०कृ०—प्रसव के कारण पीड़ित हुई हुई ।

पीड़ावियोड़ो-भू०का०कृ०—१ पीड़ा हुवा हुआ, दर्द हुवा हुआ ।
(स्त्री० पीड़ावियोड़ी)

पीड़ास्थान-स०पु यौ० [सं० पीडा-स्थान] फलित ज्योतिष के अनुसार जन्म कुंडली में उपचय अर्थात् लग्न से तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें स्थान के अतिरिक्त शेष स्थान जो अशुभ ग्रहों के स्थान माने जाते हैं । अशुभ ग्रह-स्थान ।

पीड़िका-सं०स्त्री० [सं० पीडिका] फुंसी, फुड़िया (अमरत)

पीड़ित-वि० [सं० पीडित] १ वह जिसे व्यथा या पीड़ा पहुंचती हो, दुखित ।
२ जो किसी प्रकार की पीड़ा से ग्रस्त हो, पीड़ायुक्त, क्लेशयुक्त ।
उ०—खुधा त्रिखा पीड़ित पुरख, तन त्यागंत प्रतीव । अभवी कहू न अनाप दे, जे द्विज अभवो जीव ।—ऊ.का.
३ जो किसी दूसरे के अत्याचार, जुल्म आदि से आक्रान्त हो ।
४ जो किसी चीज के प्रभाव या फल से अपने को दुखी समझता हो ।
सं०पु० [सं०] शृंगार में एक आसन विशेष ।
रू०भे०—पीड़त ।

पीड़ियार—देखो 'प्रतिहार' (रू.भे.)

पीच-सं०पु० [देशज] १ भीड़, समूह । उ०—खाळ रगत रह खळकता, पीच पड़ै पंखाळ । बरड़ै मड़ करड़ै बरी, भव रौरव रण भाळ ।
—रेवतसिंह भाटी
२ जलाशय पर पानी पीने हेतु होने वाली पशुओं की भीड़ या जमघट । उ०—मोटी मोती मोल कम, सायर पीच न थाय । रावत भागो राड़ में, को चेला किम थाय ।—अज्ञात
३ ग्रामनिवासियों और उनके पशुओं के निमित्त कुए से जल निकालने का कार्य या श्रम ।
४ उक्त का पारिश्रमिक ।
५ उक्त पानी के उपलक्ष में दिया जाने वाला निर्धारित धन (कर)
रू०भे०—पीछ ।

पीचको-स०पु० [स० पा०] सार्वजनिक कुआ ।
रू०भे०—पेचको, पेजको ।

पीचरकी—देखो 'पिचकारी' (अल्पा०, रू.भे.) (अमरत)

पीचास—देखो 'पिसाच' (रू.भे.)
(स्त्री० पीचासणी)

पीचू-सं०पु० [देशज] करील का पक्का फल ।

पीचो—देखो 'पींचो' (रू.भे.)

पीछ-सं०पु०—१ पर्दा । उ०—आड़ो पीछ तांणी हुती नै बाहिर राजा नूं बैसारियो ।—चौबोली
२ पूंछ ।
३ देखो 'पीछै' (रू.भे.)
उ०—घर मुहर तोपखानां सधीर । ज्यां पीछ अरांनां गज-जंजीर ।
—वि.सं.
४ देखो 'पीच' (रू.भे.)

६ देखो 'पींछ' (रू.भे.)

पीछम—देखो 'पच्छिम' (रू.भे.)

पीछे, पीछें-क्रिंवि० [सं० पश्चात्, प्रा० पच्छ] १ जिस ओर मुंह हो ठीक उसकी विरुद्ध या विपरीत दिशा में आगे या सामने का उलटा, पीठ में।

ज्यूं—थूं थारै पीछै देख कुण ऊभो है।

मुहा०—१ पीछै आणौ। देखो 'पीछै चलणौ'।

२ पीछै करणौ—भेद लेने हेतु पीछे भेजना, किसी को पकड़ने हेतु उसके पीछे भेजना।

३ पीछै चलणौ—नकल करना, अनुकरण करना, किसी का अनुगामी या अनुयायी होना।

४ पीछै छूटणौ—राह में चलते चलते पीछे रह जाना, भेद लेने के लिए जासूस होना, किसी आदमी को पकड़ने के लिए किसी को भेजना। किसी का भेद या रहस्य आदि जानने के लिए किसी का नियुक्त किया जाना या होना।

५ पीछै छोडणौ—किसी को पकड़ने के लिए किसी को भेजना या दौड़ाना। किसी का पीछा करने के लिए किसी को भेजना, जासूस या भेदिया बना कर किसी को किसी के पीछे लगाना। गुप्त रूप से किसी के साथ रह कर उसका भेद या उसके कार्यों की जानकारी लेने के लिए किसी को नियुक्त करना। किसी विषय में औरों से बढ़ कर इस प्रकार आगे हो जाना कि और लोग उसकी तुलना न कर सकें। अपने विपक्षी को पद, कौशल आदि में पीछे रखना।

६ पीछै जाणौ—किसी का पीछा करना, अपने पूर्वजों के गुणों को अपने अंदर लाना, पूर्वजों के गुणो को धारण करना।

७ पीछै डालणौ—देखो 'पीछै पटकणौ'।

८ पीछै दौड़णौ—किसी का पीछा करना, किसी को पकड़ने के लिए प्रयत्नशील होना, अनुगमन करना।

९ पीछै दोड़ाणौ—पीछे-पीछे भेजना, गए हुए व्यक्ति के पास संदेश भेजना या उसे वापिस बुलाने के लिए किसी को उसके पीछे भेजना, भागे हुए या जाते हुए को पकड़ लाने के लिए किसी को भेजना, भागे हुए का पीछा करने के लिए किसी को भेजना।

१० पीछै पड़णौ—किसी कार्य को कर डालने पर तुल जाना, किसी कार्य को कर डालने के लिए अविराम परिश्रम करना, निरन्तर कार्य को करने में जुट जाना, कोई काम करने के लिए किसी को बार बार कहते रहना, किसी को बहुत अधिक तंग करना या परेशान करना, अवसर पाकर किसी की बुराई करते रहना, किसी का नुकसान करने के लिए सदैव कटिबद्ध होना, किसी कार्य की सफलता के लिए आग्रहयुक्त होना।

११ पीछै पटकणौ—भविष्य की आवश्यकता के लिए अपनी कमाई में से धन की बचत करना, आगे के लिए संचित करना, भविष्य में पूरा करने के लिए किसी कार्य को रख छोड़ना, पीछे दौड़ाना, पीछा करवाना।

१२ पीछै भेजणौ—भेदिया लगाना, किसी को पकड़ने के लिए आदमी भेजना।

१३ पीछै लगणौ—देखो 'पीछै लागणौ'।

१४ पीछै लगाणौ—आश्रय देना, साथ कर लेना, अनिष्ट या दुखप्रद वस्तु से सबन्ध कर लेना, किसी को सहारा या आश्रय देना, अकारण अपने पर आफत लेना, साथ भेजना।

१५ पीछै लागणौ—किसी स्वार्थवश किसी के पीछे पीछे चलना, आश्रय लेना, साथ साथ चलना, पीछे पीछे घूमना, साथ साथ चलना, पीछा करना, किसी अनिष्ट या अप्रिय वस्तु का संबन्ध हो जाना, रोग कष्टादि का दीर्घकाल तक बना रहना।

१६ पीछै होणौ—अनुकरण करना, आश्रय लेना।

२ पीठ की ओर कुछ दूरी पर, कुछ दूर पर।

ज्यूं—थे अठा ताईं आ गया, घटाघर घणौ पीछै रै'गयौ।

३ देश या कालक्रम में किसी के पश्चात या बाद में, स्थिति या घटना के विचार से किसी के अनंतर, कुछ दूर या कुछ समय बाद, पश्चात, अनंतर, उपरांत।

४ किसी की अनुपस्थिति या अभाव में, किसी की अविद्यमानता में।

ज्यूं—किणी रै पीछै किणी री बुराई करणी ठीक नही है।

५ अंत में, आखिर में।

६ प्रति व्यक्ति या इकाई में हिसाब से।

ज्यूं—अब राशन मे फी आदमी पीछै एक पाव आटो मिळै है।

८ किसी अर्थ से, किसी कारण से, निमित्त, लिए, वास्ते।

ज्यूं—थारै पीछै म्हैं घणौ आराम में हूं।

८ मरणोपरांत, बाद में।

रू०भे०—पीछ।

पीछोड़लू—देखो 'पछेवड़ौ' (रू भे.)

उ०—परि जोई पाछा वल्या, राइं करिउ विचार। पोढी परि पीछोडलु, आंणी उढिउ सार।—मा.कां.प्र.

पीछोड़ी—देखो 'पछेवड़ी' (रू.भे)

उ०—हस रोमनी तूलिका, लाहि पीछोडी लक्षि। करि-वरि चांमर चालवइ, ऊलग करति असंख्य।—मा कां प्र.

पीछो-सं०पु० [स० पश्चात्, प्रा० पच्छ] १ किसी व्यक्ति या वस्तु का वह भाग जो सामने की विपरीत दिशा में पड़ता हो। किसी व्यक्ति या वस्तु के पीछे का भाग, आगा का विपरीत।

२ किसी के पीछे लगे रहने की क्रिया या भाव।

उ०—१ तद एक दिन धाधळजी विचारियो देखां, अपच्छरा कह्यो हुतो म्हारो पीछो मती समाळजे सु आज तो जायनै देखीस।
—नैणसी

उ०—२ सो सपूत जो पीछो राखै, दुरजन होण कदे ना भाखै। वेरां

तरणा विसारै वेहा, सो जाया ही अरणजाया जेहा ।

—ढाढाळा सूर री वात

मुहा०—१ पीछौ करणौ—किसी को पकड़ने, पीटने, मारने आदि के लिए उसके पीछे तेजी से चलना या दौड़ना। किसी का भेद या रहस्य जानने के लिए गुप्त रूप से उसके पीछे पीछे चलना। हर समय किसी के समीप या पास रहना। कोई काम निकालने के लिए बहुत आग्रह करना। किसी बात के लिए किसी को तंग करना। गले पड़ना।

२ पीछौ छुडाणौ—२ पीछा करने वाले से छुटकारा पाना। किसी बात के आग्रह से तंग करने वाले से अपने आपको दूर करना। गले पड़े हुए व्यक्ति से जान छुड़ाना।

३ पीछौ छूटणौ—पीछा करने वाले व्यक्ति से छुटकारा मिलना। अप्रिय साथ या कष्टप्रद वस्तु का दूर होना। गले पड़े हुए का साथ छूट जाना। पिंड छूटना, छुटकारा पाना, बचाव या रक्षा होना।

४ पीछौ छोडणौ—पीछे करने का कार्य बंद करना, किसी आशा या मतलब से किसी के साथ फिरना बंद करना, सहारा छोड़ देना, किसी कार्य के लिए किसी से अधिक आग्रह करना बंद करना, किसी को तंग करना बंद करना।

५ पीछौ पकड़णौ—किसी आशा से किसी का साथी बनना, आश्रय की अभिलाषा करना, सहारा बनना।

३ किसी मकान या वस्तु के पीछे का विस्तार।

पीजणवाव—सं०पु०यौ० [?] प्रजा से वसूल किया जाने वाला एक प्रकार का सरकारी कर।

पीजणी—देखो 'पीजणी' (रू.भे)

पीजरणौ, पीजरबौ—देखो 'पींजरणौ, पीजरबौ' (रू.भे.)

पीजरणहार, हारौ (हारी), पीजरणियौ—वि०।

पीजरिओड़ौ, पीजरियोड़ौ, पीजरयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पीजरीजणौ, पीजरीजबौ—कर्म वा०।

पीजरियोड़ौ—देखो 'पींजरियोड़ौ' (रू.भे)

(स्त्री० पीजरियोड़ी)

पीजहलउ, पीजहलू—स०पु० [सं० पेय-फलम्] पेय फल (उ.र.)

पीट—सं०स्त्री० [सं० पीड्] प्रहार, चोट, मार।

पीटणौ, पीटबौ—क्रि०स० [सं० पीडनम्] किसी प्राणी पर उसे कष्ट पहुंचाने अथवा सजा देने के उद्देश्य से किसी डंडे आदि से मारना, आघात करना।

ज्यूं—गुरां सा छोरां नै कांवा सूं बुरी तरै पीटिया।

२ लोहा, चांदी, सोना आदि धातु या इन धातुओं से बने पदार्थ को आघात पहुंचा कर चौड़ा करना या बढ़ाना, चोट मार कर चौड़ा या चिपटा करना।

ज्यूं—पतरौ पीटणौ।

३ बजाना।

ज्यूं—हूंडी पीटणी।

४ किसी वस्तु पर चोट पहुंचाना, मारना।

ज्यूं—छत रौ चूनौ पीटणौ।

५ घोर दुख, व्यथा या शोक प्रदर्शित करने के लिए अपने दोनों हाथों की हथेलियों से शिर या सीने पर चोट मारना, आघात करना।

ज्यूं—छाती माथौ पीटणौ।

६ किसी न किसी प्रकार से प्राप्त करना, उपार्जन करना।

ज्यूं—दिन भर भाग दौड़ कर'र पांच रुपिया रोज पीट लूं।

७ चौसर या शतरंज आदि खेलों में विपक्षी की गोटी को मारना।

८ प्रतियोगिता में हराना।

पीटणहार, हारौ (हारी), पीटणियौ—वि०।

पीटिओड़ौ, पीटियोड़ौ, पीटयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पीटीजणौ, पीटीजबौ—कर्म वा०।

पिटणौ, पिटबौ—अक० रू०।

पीटियोड़ौ—भू०का०कृ०—१ डंडे आदि से मारा हुआ, आघात किया हुआ।

२ चोट या आघात पहुंचा कर चौड़ा या चपटा किया हुआ।

३ बजाया हुआ।

४ चोट पहुंचाया हुआ, मारा हुआ।

५ शिर एवं छाती पीटा हुआ, दुःख प्रकट किया हुआ।

६ प्राप्त या उपार्जन किया हुआ।

७ विपक्षी की गोटी को मारा हुआ।

८ प्रतियोगिता में हराया हुआ।

(स्त्री० पीटीयोड़ी)

पीटोकड़, पीटोकड़ौ—वि० [सं० पीड्] १ निर्लज्ज, ढीठ, धृष्ट।

२ पीट खाने की आदत वाला, पिटने योग्य।

पीठ—सं०स्त्री० [सं० पृष्ठ] १ प्राणियों के शरीर में, पेट, छाती के ठीक विपरीत दिशा की ओर का वह भाग जो मनुष्यों के पीछे ओर पशु-पक्षियों, कीड़े-मकोड़ों आदि के ऊपर की ओर होता है।

उ०—१ पीठ तुरस केवांण कर, आसपास रजपूत। मावड़िया सोहै नहीं, मुख मूंछां सिर सूत।—बां दा.

उ०—२ भडा फरक्कं बयहां पीठ कोमंडांचा चला झूलं, धूवां रोळ आतसां नगारां पड़ै ध्रीह।—राजाधिराज बखतसिंह रौ गीत

मुहा०—१ पीठ करणी—देखो 'पीठ राखणी'।

२ पीठ खाली होणी—असहाय होना, रक्षक का न होना, कोई सहारा या मदद करने वाला न होना।

३ पीठ ठोकणी—कोई उत्तम कार्य करने पर अभिनन्दन करना, प्रशंसा करना, प्रोत्साहन या शाबासी देना, किसी कार्य को करने हेतु उत्साहित करना, हिम्मत बढाना, साहस दिलाना, प्रोत्साहित करना।

४ पीठ थपथपांणी—प्यार में किसी की पीठ पर हाथ फेरना, किसी पर प्यार जताना या करना, क्रुद्ध हुए पशु का क्रोध शान्त करने हेतु उसकी पीठ पर हथेली फेरना, थप-थपाना, जोश दिलाना।
५ पीठ दिखाणी—युद्ध या मुकाबले से भाग जाना, मैदान छोड़ देना, मैदान छोड़ कर सामने से हट जाना, भाग जाना, पीछा दिखाना।
६ पीठ देणी—मुह मोड़ना, विमुख होना, स्नेह तोड़ना, प्रस्थान करना, कर्तव्यविमुख होना।
७ पीठ पर होणी—सहायक होना, मददगार होना, रक्षक होना, संरक्षक होना।
८ पीठ पाळणी—रक्षा करना, सहायता करना, मदद करना।
९ पीठ पालणी—शत्रु को रोकना, आफत टालना या मिटाना।
१० पीठ पीछै—अनुपस्थिति में, अविद्यमानता में, परोक्ष में, आड में, पीछे पीछे।
११ पीठ फेरणी—विदा होना, प्रस्थान करना, ममत्व व स्नेह आदि का ध्यान छोड कर अलग होना, दूर चला जाना।
१२ पीठ राखणी—सहायता करना, मदद करना।
१३ पीठ लागणी—पशुओं की पीठ पर जख्म होना, घाव होना।
१४ पीठ सभाळणी—भेद लेना, गुप्त बात को जानने का प्रयत्न करना, गुप्त बात या रहस्य का पता लगाने का प्रयत्न करना, गुप्त बात को जानना।
२ पहिनने के वस्त्र का वह भाग जो पीठ पर रहता हो।
मुहा०—पीठ फटणी—पहिनने के वस्त्र का पीठ पर धारण करने का भाग फट जाना, मदद का टूट जाना, सहारा न रहना।
३ कुर्सी सिंहासन आदि आसन का वह भाग जो पीठ पर रहता हो।
४ किसी वस्तु की बनावट में उसके अगले ऊपर के या सामने वाले भाग के ठीक विरुद्ध का भाग। साधारणतः काम में आने या सामने वाले भाग से विपरीत का भाग, पीछे वाला भाग।
ज्यूं—कागद री पीठ माथै पतो लिखदो।
५ दुकान पर होने वाली ग्राहकों की भीड़ या समूह।
उ०—१ तिण सूं व्योपारी खुस हुआ, सो लाख ऊपर दांण री उपाजो, असी पीठ लागी, फेर लागती ही जावै है।
—मारवाड़ रा अमरावां री वारता
उ०—२ विविध वस्तु हाटै पांमइ, छत्रीसइ किरयांणां लीइ। नगरी मांडवी वारु पीठ, आछ खेरा चोल मजीठ।—कां.दे प्र.
६ जलाशय पर पानी पीने वाले पशुओं आदि की होने वाली भीड़, जमघट।
७ मूर्ति का वह आधार-स्थान जिस पर वह खड़ी रहती है, वेदी।
८ व्रतधारियों, विद्यार्थियों आदि के बैठने के लिए बना हुआ कुशासन, आसन।
९ बैठने के निमित्त लकड़ी, धातु या पत्थर आदि का बना हुआ आसन, चौकी, पीढ़ा।
१० राजसिंहासन।
११ बैठने का एक विशेष प्रकार का ढंग, आसन या मुद्रा।
१२ किसी प्रकार का उपदेश या शिक्षा देने का स्थान या केन्द्र।
ज्यूं—विद्यापीठ धरमपीठ।
१३ वह स्थान जहां सती के शरीर का कोई अंग या आभूषण भगवान विष्णु के चक्र से कट कर गिरा हो।
वि०वि०—ऐसे स्थान पुराणों के अनुसार ५१, ५३, ७७ और १०८ है जिसमें ये कुछ महापीठ और कुछ उपपीठ नाम से संबोधित किए जाते हैं।
१४ कपड़े की बुनावट में विशेष प्रकार की मोटाई या दृढता।
रू०भे०—पिट्ट, पिट्ठ, पूंठ, पुठ, पूठि, पुठै, पुठो।

पीठक-सं०पु० [सं०] चौकी, पीढा।

पीठगरभ-स०पु० [सं० पीठगर्भ] वह गड्ढा जो मूर्ति को जमाने के लिए वेदी पर खोद कर बनाया जाता है।

पीठड़-स०पु० [देशज] झाला राजपूत वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

पीठडलो—१ देखो 'पीठी' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—बना पीठड़लो दिन चार, रुच रुच मसळा लो। बनड़ा चाव-ळिया दिन चार, रुच रुच जोमल्यो।—लो.गी.
२ देखो 'पीढडी' (अल्पा०, रू.भे.)

पीठड़ो-सं०स्त्री० [स० पिष्टि+रा०प्र० ड़ो] जस्ते का चूर्ण या भस्म जो गुलाब जल में घोट कर आंख में आंजते हैं, आंख की दवा विशेष (मारवाड़)
अल्पा०—पीठड़लो।

पीठनायका-सं०स्त्री० [स० पीठ-नायिका] १४ वर्ष की कन्या जो दुर्गोत्सव में दुर्गा की प्रतिनिधि मानी जाती है।

पीठ-भू-सं०पु० [सं० पीठ भूः] चहार दीवारी के आसपास की जमीन, प्राचीर के आसपास का भू-भाग। उ०—अर आगै देवराज रो रचियो आठ हाथ उच्छिन, आठ हाथ लंबायत, ३२ पूतळी सहित चंद्रकांत मणिमय एक सिंघासण कोई प्रासाद रो पीठ-भू खोदतां कढियो तको ही आपरै भद्रासण बणायो।—वं.भा.

पीठमरद-सं०पु० [सं० पीठ-मर्द] १ नायक के चार सखाओं में से एक जो अपनी बचन चातुरी से नायिका का मान-मोचन करने में समर्थ हो। (साहित्य)
२ कुपित नायिका को प्रसन्न करने में समर्थ नायक।
३ नर्तकी वेश्या को नृत्य सिखाने वाला उस्ताद।

पीठलो-सं०पु० [सं० पिष्ट+रा०प्र०लो] वेसन को पानी में घोल कर उसमें नमक, मिर्च मसाले डाल कर हलवे की तरह पकाया हुआ एक खाद्य पदार्थ।

वि०वि०—यह प्रायः शाक की जगह काम आता है।

पीठवनी-सं०स्त्री० [सं० पृष्टि पर्णी] १ एक प्रकार का क्षुप विशेष जिसके गोल पत्ते तथा बीज दवा के काम आते हैं।

२ एक प्रकार का वृक्ष विशेष। उ०—पीपळ पाडळ पींपळी, पीठवनी पदमाख। पारिजात पीलूवडा, पीपरि पस्तां पाख।

—मा.कां.प्र.

पीठांण, पीठाणि-सं०पु० [देशज] युद्ध। उ०—१ प्रबळ सुर असुर जिण लगाया पागड़ै, जिकौ खळ चापड़ै खेत जारां। पाड़ियौ रांम दसकंध पीठांण में, सबद जै जै हुवा लोक सारां।—र रू.

उ०—२ अवसांण तेल खळ खाग ऊपरै, असि सुरि गहणि गंगोदक आंणि। सूरां वहा तणं संपाड़ै, 'पूरौ' सांपड़ियौ पीठांणि।

—पूरणमल भांणावत रौ गीत

रू०भे०—पिठांण।

पीठाड़ी-सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार का गोलाकार पौधा जिसके बीज प्रायः पागल कुत्ता काटने पर दवाई के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं।

पीठि-क्रि०वि० [सं० पृष्ठ] १ पीछे। उ०—एक राति निसीथ रै समय एकला बहाहनूं पुर बारै जावतौ दीखि विक्रम भी प्रच्छन्न पीठि लागौ थकौ एक नदी रै तीर समसांण देस गियौ।

—वं.भा.

२ देखो 'पीठ' (रू.भे.)

उ०—उठै प्रतिहार सिंह चांमुंडराज सों कहियौ गज बाजी री पीठि न लेंण पावै तिण पहली ही चालुक्यराज रा प्रांणां रौ उपहार कुमार प्रथ्वीराज रै भेंट करणौ म्हारा विचार में ठीक जांणियौ।

—वं.भा.

पीठिका-सं०स्त्री० [सं०] १ मूर्ति या खम्भे का मूल या आधार।

२ पुस्तक के विशिष्ट भागों में से कोई एक।

रू०भे०—पीठका।

पीठी-सं०स्त्री० [सं० पिष्टि] १ शरीर की त्वचा को कोमल, स्वच्छ सुंदर बनाने के लिए उस पर किया जाने वाला उबटन विशेष जो प्रायः आटा, हल्दी, चिरांजी, सरसों के तेल के सम्मिश्रण से बनाया जाता है।

उ०—१ तद नायण पूछी कही थारौ घणी कठै छै। तद इयै कही सिकार गयौ छै। तद नायण इयै नूं पीठी कर सनांन कराय माथौ गूंथ तैयार कीवी। इतरै कुंवर सिकार ले आयौ।

—चौबोली

२ विवाह की एक प्रथा विशेष जिसमें विवाह के कुछ दिन पूर्व दुल्हा दुलहिन के शरीर पर किया जाने वाला उबटन जो जौ के आटे, हल्दी और घी या तेल के साथ बनाया जाता है।

उ०—कोट आय जोसी तेडि नैं लगन बूझियौ। तरै प्रभाते गोधूळक रौ लगन छै। सगळी सजाई कीधी। बीजै दिन वीरमती नैं पीठी कराई। खेहटियौ बिनायक थाप्यौ। तीजै पो'र गोठ जोमण नै आया।

—जगदेव पंवार री बात

३ विवाह में दुल्हा, दुल्हिन के उबटन के अवसर पर गाया जाने वाला एक राजस्थानी लोक गीत।

अल्पा०—पीठड़ली।

पीढ़-सं०पु० [सं० पीठम्] आसन। उ०—भीम आपरा वांम भुजनूं इच्छणी रा ताटंक री पीढ़ करण रौ संकल्प तजियौ।

—वं.भा.

पीढ़लौ—देखो 'पीढ़ौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पीढियौ-सं०पु० [सं० पीठम्] १ बैलगाड़ी में ऊपरी चौड़े तख्ते (थाटे) के नीचे घोड़े के खुर की आकृति वाले तख्ते (आक या अंगठ) के बीच लगाया जाने वाला काष्ठ-खण्ड।

२ देखो 'पीढ़ौ' (अल्पा०, रू.भे.)

पीढ़ी-सं०स्त्री० [सं० पीठिका] १ बैठने के निमित्त एक विशेष प्रकार की सूत या मूंज से बुनी हुई छोटी चौकी, छोटा पीढ़ा।

उ०—तरै पाखती एक पुरांणौ वडौ देहुरौ छै, तठै सांखळी नूं ओलै राखी, उठै 'धारू' जायौ तरै पीढ़ी एकी उपरी राखियौ तठै साप रौ बिल एक छै, तिणां मांहे सूं साप एक नीसरनै पीढ़ी परदखणा देनै मोहर १, सोनौ तोळा पांच भर री मेल गयौ।—नैणसी

२ किसी कुल विशेष की परम्परा में किसी विशिष्ट व्यक्ति की आगे जन्म लेने वाली संतान का क्रमागत स्थान या कड़ी।

वि०वि०—वंश का क्रम दोनों से गिना जाता है यथा—प्रपितामह, पितामह, पिता ये तीन पीढ़ियां या पुत्र, पिता, दादा ये तीन पीढियां। जिस व्यक्ति से क्रम शुरू होता है उसी के बाद से पीढी चलती है।

उ०—१ आप मनांएं आविया, निरभै कर नगर। 'जूंझै' नीसांणी कही, मूझ सीस मयाकर। दस पीढ़ी सूं रावळौ, यूं रहियौ ऊपर। तो जस करनी 'मेह' तण, त्रिहलोकां ऊपर।

—जूंझारसिंह मेड़तियौ

उ०—२ तेरा सै संमत बरस इकतीसै, जवन हिंदवां हुवौ जुद। रांणै बात अबीढ़ी राखी, तेरा पीढी झड़ी तद।

—महारांणा गढ़ लक्ष्मणसिंह रौ गीत

३ वंश क्रम में प्रत्येक कड़ी के अंतर्गत आने वाले सब लोग जो संबंध रिश्तों में बराबर के हों।

ज्यूं—उण री तीजी पीढ़ी में परिवार रै लोगां री गिणती पचास रै उनमान ही, पण पांचवी पीढ़ी में वीस डील रौ परिवार है।

४ किसी देश, समाज या परिवार का एक समय व एक अवस्था के अंतर्गत आने वाले व्यक्तियों का समूह।

ज्यूं—आज री पीढ़ी रै लोगां में प्राचीन परंपरावां रै प्रति गै'री उदासी है।

५ किसी क्षेत्र विशेष या विषय विशेय से संबंधित परम्परागत अवस्था।

ज्यूं—संगीत ग्रर कळा रो पुराणी पीढ़ी में फिलम रै ग्राविस्कार बो'त ग्रतर ग्रायगो है।

यौ०—पीढी-दर-पीढ़ी।

पीढ़ोनामो-सं०पु०यौ० [सं० पीठिका+नाम्न:] वशवृक्ष।

पीढ़ो-सं०पु० [स० पीठक] चौकी के ग्राकार का चार पाएदार वह ग्रासन जो मूंज या सूत की डोरियो से बना हुग्रा होता है।

उ०—चरखा, पीढ़ा, सांगवा भल, पेई पिलांण पाचरा। हलवै भरघा कड़ाव हालै, ग्रोग झूररी ग्राचरा।—दसदेव

ग्रल्पा०—पीढलौ, पिढ़ियो।

पीण—१ देखो 'पीन' (रू.भे.)

उ०—ग्रधर सुरंग जिसा परवाळी, सरल सुकोमळ बाहु। पीण पयोहर ग्रति ही मनोहर, जाणं ग्रमिय पवाह।—विद्याविलास पवाडउ

२ देखो 'पंणो' (मह०, रू.भे.)

पीणिहारड़ी—देखो 'पणिहार' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

पीणिहारी—देखो 'पणिहार' (रू.भे.)

पीणुक-वि० [सं० पा] उपभोग करने योग्य, उपभोग्य ?

उ०—प्रीतम मीर तणी घड़ पीणक, वेधक विधन सणो वीमाह। रहियो बिचं खड्गहथ 'रतनो', ग्रत मिंदर रिण-चवरी मांह।

—दूदो

पीणो-सं०पु० [सं० पानम्] १ पीना क्रिया या भाव।

२ देखो 'पंणो' (रू.भे.)

उ०—वाही थी गुण वेलड़ी, वाही थी रस चेलि। पीणइ पीवी मारवी, चाल्या सूती मेलि।—ढो.मा.

पीणो, पीबो-क्रि०स० [सं० पानम्] १ किसी तरल वस्तु विशेषत: जल को प्राणियों द्वारा मुंह से वनस्पतियों द्वारा जड़ों से ग्रात्मसात करना, पीना। उ०- सोभा ग्रति सागर तणी, जो नहीं वरणी जाय। देखि भरचो मंझार दधि, पय भोळै पी जाय। पय भोळै पी जाय, भलो तण भांत सू। हंसां संभ्रम होय, क्षीर सिंधु खांत सूं। वणियो ताळ विहद, 'बखत' नृप वीर रो। उण पर ग्रधिक ग्रारांम, धांम छत्रधार रो।—सिवबक्स पाल्हावत

२ किसी प्रकार की निंदनीय घटना या ग्रप्रिय बात को मन ही मन में चुपचाप सह लेना या दबा देना, तथा उसके विषय में कुछ न कहना या करना, सर्वथा मौन धारण कर लेना।

३ किसी प्रकार का उग्र या तीव्र मनोविकार को अंदर ही ग्रदर दबा देना, उसका कुछ भी ग्रनुभव न करना, मनोभाव ही न रहने देना।

ज्यूं—लज्जा पीणी, क्रोध पीणो।

४ नशे के लिए गांजे, तमाकू, चरस ग्रादि मादक पदार्थों का धूंग्रा श्वास द्वारा मुंह के ग्रंदर खीचना तथा बाहर निकालना। धूम्रपान करना। उ०—खाण नैं पीण ग्राघा खिसक, लागा लपक लकूंदरा। इम ग्रमल तमाकू है उभै, एकण बिल रा ऊंदरा।—ऊ.का.

५ शराब या भंग ग्रादि पेय पदार्थ का पान करना पीना।

ज्यूं—ग्रौ छोरो पीयोड़ो है, इण नैं मत छेड़ो।

उ०—चालाक तो चंडू पिए, भोळा पीए भंग। ग्रलीण सूं ग्राधा रहै, रजपूतां नैं रंग।—ऊ.का.

६ पदार्थ विशेष का किसी दूसरे द्रव या तरल पदार्थ को ग्रपने ग्रंदर खींचना या सोखना।

ज्यूं—स्याहीसोख स्याही पी गयो, पारी घी घणो पीयोड़ी है।

७ पीवणा सर्प द्वारा किसी मनुष्य या प्राणी की प्राण वायु पीना, खीचना।

पीणहार, हारौ (हारी), पीणियो—वि०।

पीग्रोड़ो, पीयोड़ो—भू०का०कृ०।

पीईजणो, पीईजबो—कर्म वा०।

पिग्रणो, पिग्रबो, पिवणो, पिवबो, पीग्रणो, पीग्रबो, पीवणो, पीवबो

—रू०भे०

पीतंबर—देखो 'पीतांबर' (रू.भे.)

उ०—१ घू पहळाद भभीखण सिंघुर, ग्रपणाया सुख ग्रापै। पीतंबर काटै दुख पासां, थिर कै दासां थापै।—र.ज.प्र.

उ०—२ की मंजण जळ करूं, किसूं पहरूं पीतबर।

—बखतो खिड़ियो

पीत-वि० [स०] १ पिया हुग्रा, पान किया हुग्रा।

२ भीगा हुग्रा, तर।

३ पीले रग का, पीला। उ०—बसन्न सु पीत देही घनवांन।

—ह.र.

३ भूरा (डि.को.)

सं०पु०—१ पीला रग।

२ भूरा रंग।

३ हरताल (डि.को.)

४ देखो 'प्रीति' (रू.भे.)

उ०—पत तूं भूखो पीत को, चित देख विचारे। भीलण का फळ भोगतां, नह झूठ निहारे।—भगतमाळ

पीतग्रंजणी-सं०पु०यौ० [सं० पीत+राज० ग्रंजणी] वह घोड़ा जिसके कधे पर पीले रंग का चकत्ता हो (शा.हो.)

पीतकुस्मांड-सं०पु०यौ० [स० पीत कुष्मांड] पीलाकुष्माण्ड।

पीतड़ली, पीतड़ी—देखो 'प्रीति' (रू.भे.)

उ०—ग्राप जाय मुथरा में बैठे, पीतड़ली बोहु वाढी।—मीरां

पीतचंदण, पीतचंदन-सं०पु०यौ० [सं० पीतचन्दन] द्रविड देश में होने वाला पीले रंग का चदन, हरिचदन।

पीतता-सं०स्त्री० [सं० पीत+रा. प्र. ता] पीलापन।

उ०—श्री वदन पीतता चित व्याकुळता, हियै ग्रगग्रगी खेद हुइ। घरि चख लाज पगे नेउर धुनि, करे निवारण कंठ कुइ।

—वेलि

पीतधातु-सं०पु०यौ० [सं०] गोपी चंदन।

पीतन, पीतनक स०स्त्री० [सं० पीतनम्] १ केशर (नां.मा., ह.नां.मा.)
२ हरताल (डि.को.)
[स० पीतनः] ३ वट वृक्ष।

पीतनायक-सं०पु०यौ० [सं० प्रीति+नायक] आभूषण विशेष। (व स.)

पीतपट-सं०पु० [सं०] पीला वस्त्र, पीताम्बर।
उ०—पुलिण रवि-सुता फहरावजे पीतपट। आवजे रास रुळ वज्र-नाथ आथ।—बां.दा.

पीतम—देखो 'प्रियतम' (रू.भे.) (ह.नां.)
उ०—१ माता पितु बेटी बेटा भल भरिया, प्यारां प्यारां नें मुसकल परहरिया। जंतर जर हरणूं अभ्यंतर जड़ियो, पीतम प्यारी नें परहरणूं पड़ियो।—ऊ.का.
उ०—२ चित लागो पीतम रे चरणां, भवन रहण रुचि नहिं म्हांरी। हुकम करो तो सासू ! पिव सग जाऊंसा, पति-सेवा ही सुखकारी।—गी.रां.

पीतमो—देखो 'प्रियतम' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—तुम मती जांणो पीतमा हो, तुम बिछड्या मोहि चैन। —मीरां

पीतरग-सं०पु० [सं०] १ सोना, स्वर्ण (अ.मा., ह.नां.मा.)
२ अनार (अ.मा.)

पीतर—देखो 'पितर' (रू.भे)
उ०—जख कींदर पीतर जर्णे, इमिया प्रांखि प्रलाह। ब्रह्मा संकर बखाणियो, पछिम तणो पतिसाह।—पी प्र.

पीतरगत-वि० [सं० पीतरक्त] नारंगी रंग का।
सं०स्त्री० [सं० पीत+रक्तम्] १ केशर (अ.मा.)
२ पुखराज।

पीतरयाई-सं०पु० [सं० पितृव्य] पितृव्य, चाचा, चचा।
उ०—'पांच सै भाला लागसी तरै मार लेस्यां'। सु पैलो कांनी खगार रो भाई साहिब नै पितरयाई 'फूल', यां कइयो।—नैणसी

पीतळ-सं०पु० [सं० पित्तलम्] तांबे और जस्ते के मेल से बनने वाला एक मिश्रित धातु। उ०—मोड़ मुख मोड़ हीतळ हत वाळी, पीतळ पैरण नें सीतळ सतवाळी। लुच्चा ललचावै लालच घिन लागै, लोचण जळ मोचण सोचण खिण लागै।—ऊ का.
पर्या०—आरकूट, गिरिभार, पीतलोह।

पीतळियो-वि० [सं० पित्तल+रा.प्र.इयो] पीतल का बना, पीतल का।
उ०—बाबेली ए ओठी पीतळियो पिलांण। हीरां सूं जड़ियो लाजणो।—लो.गी.
स०पु०—पीतल का बना तसला या कलसा।

पीतळीजणो, पीतळीजबो-क्रि०अ० [सं० पित्तलम्] पीतल के बर्तन में रखे किसी अम्ल पदार्थ का कसिया जाना, विकृत हो जाना।

पीतलोह-सं०पु० [सं०] पीतल (डि.को.)

पीतवसु-सं०पु०—एक देश का नाम (व.स.)

पीतवान-स०पु० [देशज] हाथी के दोनों आंखों के बीच का स्थान (डि.को.)

पीतवास-सं०पु० [सं० पीत वासस्] १ श्रीकृष्ण (नां मा.)
२ विष्णु का नामान्तर।

पीतविंदु-सं०पु० [सं०] विष्णु के चरण-चिन्हों में से एक।

पीतस-सं०स्त्री० [?] पति या पत्नी की माता, सासु (शेखावाटी)

पीतसरो-स०पु० [?] चचिया ससुर।

पीतांबर-सं०पु० [सं० पीत+अम्बर] १ पीले रंग का वस्त्र।
उ०—मोर मुकुट पीतांबर सोहै, स्यांम बरण वडभागी। जनम-जनम को साहिब मोरो, वा सौं लो लागी।—मीरां
२ पूजा पाठ के समय पहिनी जाने वाली मरदानी रेशमी धोती।
उ०—१ लघु-भ्रत जिम अभिलाख सू लाधै, समै तेणि दासातन साधै। उतिम सिनांन करावै आंणै, पीतांबर धोतावर पांणै।—सू प्र.
उ०—२ गढपति न्हाय गंग जळ गहरे, पीतांबर खीरोदक पहरे। —सू प्र.
३ पीला वस्त्र धारण करने वाला व्यक्ति।
४ विष्णु (डि.नां.मा.)
५ श्रीकृष्ण (डि.को.)
रू०भे०—पितंबर, पीतंबर।

पीता-स०स्त्री० [सं०] हल्दी (अ मा.)

पीति, पीती-सं०पु० [सं० पीतिः] १ घोड़ा (डि.को.)
२ देखो 'पित्ती' (रू.भे.)

पीतु-सं०पु० [सं० पितुः] १ सूर्य।
२ अग्नि।
३ हाथियों के गिरोह का सरदार, यूथपति (डि.को.)

पीतो-सं०पु० [सं० पित्त] पित्त का थैला जो यकृत या जिगर के पीछे और नीचे की ओर होता है। उ०—भळगा एकांयत नीयत निरदावै, धूणी अवधूतां दूणी धुकवावै। पूरा पोमाह्वै सूरा सत सावै, पीता मरियोड़ा जीता पद पावै।—ऊ.का.
मुहा०—१ पीतामार कांम करणो—ऐसा कार्य करना जो अपनी सामर्थ्य के बाहर हो और जिसे पूरा करने में बहुत अधिक परिश्रम की आवश्यकता हो।
२ पीतो उबळणो—पित्ताशय में उष्णता होना, क्रोध आना।
३ पीतो गळणो—पशु का पित्ता खराब हो जाना जिससे उसके पूंछ के बाल गिर जाते हैं और शनैः शनैः वह भी मर जाता है।
४ पीतो मरियोड़ो—अति कृश व कमजोर।
रू०भे०—पित्तो।

पीत्रांणी-वि० [सं० पिता+रा.प्र. आंणी] पिता के वंश का, पिता संबंधी।

संoस्त्रीo [संo पितृव्य+पत्नी] चाची (उ.र.)

पीत्रीयउ, पीत्रीयु–संoपुo [संo पितृव्य] १ चाचा, काका।

उo—पग्गमीय तायह पाय पाछउ वालीउ मद्रि सउं। विद्या वृद्धि उपाइ ग्रापीय पहुतउ पीत्रीयउ।—पं.पं.च.

२ कोई भी कुटुम्ब का वृद्ध पुरुष (उ.र.)

पीथ–संoपुo [संo पीथः] १ सूर्य (डि.को.)

२ ग्रग्नि।

३ समय।

४ जल।

पीथड़–संoपुo—राठौड़ वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

पीथळिया–संoस्त्रीo—पंवार वंश की एक शाखा।

पीथळियो–संoपुo—उक्त शाखा का व्यक्ति।

पीथापुरा–संoस्त्रीo—सोलंकी वंश की एक शाखा।

पीथि–संoपुo [संo पीथिः] घोड़ा (डि.को.)

पीद, पीदुं, पीदो, पीध, पीधुं, पीधो—देखो 'पीन्हो' (रू.भे.) (उ.र.)

(स्त्रीo पीदी, पीधी)

पीन–विo [संo] १ मोटा, मांसल, स्थूल। उo—सुणतां हाको सहज ही, कोधी जेज कधी न। नीदाळ, ग्रब छोडणां, मोडांणा कुच पीन।—वी.स.

२ भरापूरा, सम्पन्न।

३ पुष्ट।

रूoभेo—पीण।

४ देखो 'पीन्हो' (रू.भे)

(स्त्रीo पीनी)

पीनण—देखो 'पींजण' (रू.भे.)

पीनणी—देखो 'पींजणी' (रू.भे.)

उo—राखो ताव तमांम, पीनणी ग्रर पुसळाई। नेड़ी पैड़ी तणी, जाळ ग्रसतुवा वणाई।—दसदेव

पीनणो, पीनबो—देखो 'पीजणो, पींजबो' (रू.भे.)

पीनणहार, हारो (हारी), पीनणियो—विo।

पीनिग्रोड़ो, पीनियोड़ो, पीन्योड़ो—भूoकाoकृo।

पीनीजणो, पीनीजबो—कर्म वाo।

पीनस–संoपुo [संo] १ सर्दी, जुखाम।

२ नाक का एक रोग जिससे नाक से दुर्गन्धमय पानी निकलता रहता है तथा घ्राण शक्ति नष्ट हो जाती है।

उo—पीनस-काय के पास कपूर, धरयो कवि 'ऊमर' तो हिय हारयो।—ऊ.का.

३ देखो 'पिंजस' (रू.भे.)

उo—घोड़ं की हीस को सुण कर डरै, मुरदै की तरह पीनस की सवारी करै।—दुरगादत्त बारहठ

रूoभेo—पिनस।

पीनसी–विo [संoपीनस+राoप्रoई] पीनस रोग से पीड़ित।

उo—रूठ'र कहै ग्रवर नह रूड़ो, तूठ न देऊं तार। पूठ फिराय पीनसी जंपै, गांधी ऊठ गंवार।—ऊ.का.

पीनारा—देखो 'पिंजारा' (रू.भे.)

पीनारो—देखो 'पिंजारो' (रू.भे.)

उo—धोबी सवणी-गर न्यारा रे, नाई नीलगर पीनारा। सकलीगर गांछा नै घोसी रे।—जयवांणी

(स्त्रीo पीनारी)

पीनियोड़ो—देखो 'पीजियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्रीo पीनियोड़ी)

पीनोड़ो, पीन्ह, पीन्होड़ो, पीन्हो–विo [संo पीत] पान किया हुग्रा पिया हुग्रा।

(स्त्रीo पीनोड़ी, पीन्होड़ी, पीन्ही)

रूoभेo—पिद्ध, पीद, पीदुं, पीदो, पीध, पीधुं, पीधो, पीन।

पीप–संoपुo [संo पूय] फोड़े या घाव के ग्रन्दर से निकलने वाला सफेद रसदार पदार्थ (पानी), मवाद, पीव।

रूoभेo—पींप, पीव।

पीपड़ी—देखो 'पीपी' (ग्रल्पाo, रूoभेo)

पीपड़ो–संoपुo [देशज] १ लोहे का एक पत्तरा जिसके चारों ग्रोर के किनारे उठे हुए होते हैं। (स्वर्णकार)

२ देखो 'पीपो' (ग्रल्पाo, रू.भे)

पीपर–संoपुo [संo पिप्पली] १ एक प्रकार की लता जो मगध, बरार में ग्रधिक होती है।

२ उक्त लता की कली जो ग्रोपधि के रूप प्रयोग में ली जाती है।

पर्याo—उपकुल्या, उसरगा, करगा, कोल्या, ऋसरगा, चपळा, तंदुला, तिगम, मागधी, वैदेही।

३ देखो 'पीपळ' (रू.भे.)

रूoभेo—पीपळ।

ग्रल्पाo—पिप्पळ, पींपलि, पीपली।

पीपरामूळ–संoपुo [संo पिप्पला+मूल] देखो 'पिप्पळीमूळ' (रू.भे.)

पीपळ–संoपुo [संo पिप्पल] १ भारत में सर्वत्र पाया जाने वाला बरगद की जाति का एक वृक्ष विशेष जिसे हिन्दू पवित्र मान कर पूजते हैं (ग्र.मा., नां.मा., ह.नां.मा.)

पर्याo—ग्रस्वथ, कुंजरग्रख, चळदळ, दंतीभख, बोधीव्रख, सुव्रख, स्त्रीव्रख।

२ देखो 'पीपर' (रू.भे.)

रूoभेo—पिप्पल, पींपल, पीपर।

ग्रल्पाo—पीपड़ियो, पीपळियो।

पीपळपती, पीपळपत्ती-सं०पु०यौ० [सं० पिप्पल-पत्र] (ब व. पीपलपत्ता)
१ पीपल वृक्ष का पान या पत्ता।
२ स्त्रियों के कान में धारण करने का सोने या चांदी का बना आभूषण विशेष।
३ पीपल के पत्तों के आकार की बनी झल्लरी जो स्त्रियों के आभूषणों के नीचे लगाई जाती है।

पीपळपांन-सं०पु०यौ० [सं० पिप्पलपत्र] स्त्रियों के कान में धारण करने का आभूषण।

पीपळपांनकटार-सं०स्त्री०यौ०—एक प्रकार की कटार जिसकी बनावट पीपल के पत्ते के समान होती है।

पीपळरी—देखो 'पीपी' (अल्पा०, रू.भे.)

पीपळामूळ—देखो 'पिप्पळीमूळ' (रू.भे.)
उ०—तद चाचे दीठी। देखै तौ कासूं बिछेरौ छै। तुरंत रुई मांहे लपेट एकै मूहरै मांहे राखियौ। कुमार री बयर चतुर हुंती। धोड़ नै मांखण मांहे पीपळामूळ अजमौ चटावै।
—राव रिणमल राठौड़ खाबड़ियै री वात

पीपळि—देखो 'पीपर' (अल्पा०, रू.भे.)
२ देखो 'पीपळी' (रू.भे.) (अमरत)

पीपळियौ-वि० [स० पिप्पल+रा.प्र. इयौ] १ पीपल का, पीपल वृक्ष-संबधी।
२ पीपल का फल।
३ देखो 'पीपळ' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—इण सरवरिया री पाळ, हगांमी ओ ढोला रे पीपळिया, हो ढोला, पीपळिया थोड़ा, बड़ळा चोगणां, हो राज।—लो.गी.

पीपळी-सं०स्त्री० [सं० पिप्पल] १ एक प्रकार का पीपल का वृक्ष विशेष, यह आकार में पीपल से छोटा होता है।
उ०—कळियां कूळां री कादै में कळगी। विसहर संगत सूं पीपळियां बळगी।—ऊ.का.
२ बहन के लिये प्रयोग में लाया जाने वाला शब्द।
उ०—सो थे उठीनै सूराचंद रा भाड़ां खेह लगावण नै जावो छो तो हू थांरी धरम री पीपळी छूं। आगै आपो परगासौ।
—जैतसी ऊदावत री वात
३ एक राजस्थानी लोक गीत।
रू०भे०—पीपळी, पीपळि।

पीपळौ-सं०पु० [देशज] तलवार का वह निचला भाग जहां से वह कुछ अधिक पतली होकर चंद्राकार मुड़ी हुई होती है।

पीपाड़ा-सं०स्त्री०—गहलोत वंश की एक शाखा।

पीपाड़ौ-सं०पु० (स्त्री० पीपाड़ी) गहलोत वंश की पीपाड़ा शाखा का व्यक्ति।

पीपावंसी-सं०पु०—१ पीपा नामक भक्त के वंशज।
२ दर्जियों की एक जाति।

पीपी-सं०स्त्री० [सं० पिप्पलं] १ पीपल का फल।
२ कागज, पत्ता आदि को मोड़कर बच्चों द्वारा फूंक देकर बजाया जाने वाला बाजा विशेष।
३ छोटा टीन।
अल्पा०—पीपड़ी, पीपाड़ी।

पीपूड़ो, पीपूड़ीवरड़-सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार का छोटा सर्प विशेष जो प्रायः उछल कर काटता है।
उ०—धरती खारी जे'र, अर निजर पूगै जितरै कठई झाड़ बांटको नैं घासफूस री नांम ही नी। इण धरती में सांडा अर पीपूड़ीवरड़ा घणी मिळै।—रातवासौ

पीपौ-सं०पु० [देशज] १ लोहे का बना चौकोर बर्तन विशेष जिसमें तेल, घी आदि प्रायः तरल पदार्थ रखे जाते हैं।
उ०—कलसियांबंद आटो पीसांणो, पीपांबंद घी अर बोरियांबंद गुड़ खांड आई।—रातवासौ
२ एक विशेष प्रकार की बनावट की, कुए से पानी निकालने की डोली।
३ गागरोण (कोटा) का खीची राजा जो रामानुज का शिष्य हो गया था।
रू०भे०—पिपौ।
अल्पा०—पीपड़ो, पीपलियौ।

पीय—देखो 'पीप' (रू.भे.)

पीय—१ देखो 'प्रिय' (रू.भे.)
उ०—१ मिगसर पाळौ चमंकियौ, प्यारौ लागौ सीय। प्यारी मीठी पीव नूं, प्यारौ मीठो पीय।
—कुंवरसी सांखला री वारता
उ०—२ लाघौ हिव प्रभ्भु पड़दो लाय। मुरारि परत्तख बाहिर मांय। ठगारा ठाकुर हेकौ थीय। पड़दो नांख परो हिव पीय।
—ह.र.
२ देखो 'पिता' (रू.भे.)
उ०—अह दैवह वसि तेवि पंच ए पंडव वणि चलिय। हथिणाउरि जाएवि मुकलावइ निय माय पीय।—पं.प.च.

पीयण-वि०—पीनेवाला।
सं०स्त्री०—१ पीने की क्रिया या भाव।
२ देखो 'पैणो' (रू.भे.)

पीयणजहर—देखो 'पोमणजहर' (रू.भे.) (ह.नां.)

पीयणो—देखो 'पैणो' (रू.भे.)
उ०—जिण मुइ पन्नग पीयणा, कयर-कंटाळा रूंख। आके-फोगे छांइडी, हूंछां भांजइ भूख।—ढो.मा.

पीयमधु-सं०पु० [सं० प्रियमधु] श्री कृष्ण के बड़े भाई बलराम (ह.नां.)

पीयर—देखो 'पी'र' (रू.भे.)
उ०—ढोलाजी रे परणी पीयर मेल।—लो.गी.

पीयल-सं०स्त्री० [सं० पा] १ वह भूमि जिसमें कुए से सिंचाई कर

पानी पिलाया जाता है।

२ रबी की वह फसल जिसका उत्पादन सिंचाई द्वारा होता है।

उ०—हळवद री पाखती झाड़ी थोड़ी, मैदान छै। खेती ज्वार, बाजरी, तिल, कपास हुवै। उनाळी-पीयल कस वे काई नहीं।

—नैणसी

३ पीले रंग की चिड़िया विशेष जो बाजरी की बालों में दाने पड़ने से पूर्व 'उत्तर-पश्चिम' दिशा की ओर से आती है और बाजरी की बालों के दाने खाकर चली जाती है।

४ शराब की गोष्ठी।

उ०—साथ सारा नू पीयल हो रही छै। मनहारां होय छै।

—कुंवरसी सांखला री वारता

५ कान का आभूषण विशेष।

उ०—फूली भूली भांमिणी, कांन कहंती बात। पीयल ऊपरि पांनड़ी, मंझि महासणि सात।—मा.कां.प्र.

रू०भे०—पीअळ, पीअल, पील, पीवल।

पीयळो, पीयलो—१ देखो 'पीळो' (रू.भे.)

(स्त्री० पीयळी, पीयली)

पीयांण, पीयांणउ, पीयांणो—देखो 'प्रयांण' (रू.भे.)

उ०—१ हूं लूकिड रे लाडकी, दिहाडी दूरि पीयांण। माहरु अमइ तुहनारडा, पंजर पूठइं प्रांण।—मा.कां.प्र.

उ०—२ जं वाहरू दळ भुजाबलि मइं न जाणिउं। मइं देखि दीधउं तुझ ऊपरि पीयांणउं।—सालिसूरि

उ०—३ सवा लाख खांडायत सरसू, पाखरीए केकांणे। समीआंणे सउळ कान्हडदे, आग्यु छडे पीयांणे।।—कां.दे प्र.

उ०—४ सुंन सहर की चढ्या चाकरी, प्रकट किया पीयांण। गुरगम घोड़ा मेरे सतगुरु दीना, ब्रह्म आणद में रहणा।।

—स्री हरिरांमजी महाराज

पीया—१ देखो 'प्रिय' (रू.भे.)

२ देखो 'प्रिया' (रू.भे.)

पीयाई—१ देखो 'पिसाई' (रू.भे.)

२ देखो 'पिआई' (रू.भे.)

पीयामहु—देखो 'पितामह' (रू.भे.)

पीयार—१ देखो 'पाताल' (रू.भे.)

२ देखो 'प्यार' (रू.भे.)

उ०—पिसुन-पणइ प्रांणी हण्या. जीह न बोलिउं साच। चोरी वस्त पीयारड़ी, पर-नर-नारी राचि।—मा.कां.प्र.

पीयारडुं, पीयारड़ो—१ देखो 'प्यारो' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ प्रेम धरी प्रासाद-मुखि, अक्षर लिखिया हरिय। भांजइ दुख पीयारडुं, सो अवनी-तलि नत्थि।—मा.कां.प्र.

उ०—२ भांजइ दुख पीयारडुं, सो अवनी-तलि अत्थि। भूप-तणा अक्षर भणी, अति आनदिउ चिंति।—मा.कां.प्र.

वि०—२ पराया, दूसरे का।

(स्त्री० पियारडी)

पीयारी—देखो 'प्यारी' (रू.भे.)

पीयारो—देखो 'प्यारो' (रू.भे.)

(स्त्री० पीयारी)

पीयाल—१ देखो 'पाताल' (रू.भे.)

२ देखो 'प्यालो' (मह०, रू.भे.)

पीयाली—देखो 'प्यालो' (अल्पा०, रू.भे.)

पीयालो—देखो 'प्यालो' (रू.भे.)

उ०—१ ताळी खुलै कुदां पीयालां जतू तांनमानां, अद्रा सिधा घेरे जोस ऊजळै अमाप। भूरा-वाघ थटैतां मेळियो भलां भाई, पटैतां अेकलो ढाहे विजाई 'प्रताप'।—महारांणा भीमसिंह रो गीत

उ०—२ सूळा गोलां घणै मसालै, वळै कटारी अमल विया। ऐकण चोट पीआलां असमर, कुरंमां दल सेलोट कीया।

—दुरजणसिंह सेरसिंह राठौड़ रो गीत

पीयूख, पीयूस-सं०पु० [सं० पीयूषं या पीयूषः] १ अमृत, सुधा। (ह.नां.मा.)

उ०—१ वीनती सेठजी सांभळो जी, सरस पीयूस समांन।—वि.कु.

२ दूध।

३ मधुर* (डि.को.)

रू०भे०—पयूख, पियूख, पियूस, पीऊस।

पीयोड़ो—देखो 'पियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पीयोड़ी)

पीयो—१ देखो 'प्रिय' (अल्पा०, रू भे.)

उ०—पड़ै ठाउड़ली जोरावर ओ राज, मरै रे वन रा मोरिया। पाडोसण रो पीयो घर आवियो, मद री लेनै मनवार।—लो.गी.

२ देखो 'पियो' (अल्पा., रू.भे.)

पी'र-सं०पु० [सं० पितृ+गृह] विवाहिता स्त्री के माता-पिता का घर, मायका, मैका।

उ०—१ हंस-सरोवर गोरी पी'र थांहरो जी राज। मांन-सरोवर थांरो सासरो जी राज।—लो.गी.

मुहा०—१ पी'र पूरो करणो—पिता के वंश में किसी को न रखना, पिता का वंश समाप्त करना।

२ पी'र पूरो होणो—पिता के वंश में कोई न रहना, पिता का वंश नाश होना।

रू०भे०—पिउहर, पियर, पिवर, पिहर, पीयर, पीवर, पीह, पीहर,

अल्पा०—पीवरियो, पीहरियो, पी'रियो, पी'रो, पीवड़लो, पीहड़ो, पीहरड़ो।

पीर-वि० [फा०] १ महात्मा, पूज्य, सिद्ध।

उ०—पर पीर विदीरण पीर प्रपा, तुलसी तसवीर कबीर कृपा। सुधि नानक बानक सी सरसी, दुति दादु दयाळ समी दरसी।

—ऊ.का.

२ बड़ा।

उ०—पाल्यौ रहै न पीर, साच कहुं कांनां सुणौ। बढ़जै रण विच वीर, ग्राजे मत भाजै 'ग्रजा'।—बांकजी बोगसौ

३ बूढा, वृद्ध।

४ चालाक, घूर्त।

सं०पु०—१ परलोक का मार्गदर्शक, धर्मगुरु।

उ०—१ ज्योरूं दिस कीरत रही, पीर तणी छित छाय। जग में नीर तळाय सह, वणिया खीर तळाय।—बां दा.

उ०—२ पूजै कर-कर पीर, घर-घर नूंतै गांम में। वळै जगावै वीर, मूंठ चलावै मोतिया।—रायसिंह सांदू

२ महात्मा और सिद्ध पुरुष, सिद्धिप्राप्त महात्मा।

उ०—पीरां पतखीरां पैं'ली घर घायो, उण दिन 'रांमो' डर सांमो नहिं ग्रायो। लुट-लुट खीरां में दुनियां लव लाई। पांचूं हिं पीरां मिळ खीरां न खाई।—ऊ.का.

३ मुसलमानों के धर्मगुरु, पैगम्बर।

उ०—१ पीर पैंकंबर दस्तगीर, सब हाजर बंदे।

—केसोदास गाडण

उ०—२ राग न रंग उमंग न राजस, हौज न बाग फुंहार न हूम्रर। ह्वै ग्रसवार सिकार न हालत, पाठ कुराण न पीर पैंकंबर।

—सू.प्र.

वि०वि०—वैसे तो मुसलमानों में बहुत से धर्मगुरु हुए हैं परन्तु इनमें प्रमुख २४ ही माने जाते हैं यथा—ग्रादम, शीश, नूह इब्राहीम, याकूब, इसहाक, यूसुफ, इस्माईल, ज़करिया, यहया, यूनुस, दाऊद, ग्रयूब, लूत, सुलेमान, स्वालह, शुएब, ईसा, मूसा, इलयास, हारू, यूसग्रा, जिलकिल्प, मुहम्मद साहिब।

४ सोमवार।

५ देखो 'पीड़ा' (रू.भे.)

उ०—१ संयम सहाय, ग्रल ग्रंतराय। परहरहु पीर, तुरीयाब्धि तीर।—ऊ.का.

उ०—२ पर पीर विदीरन पीर प्रथा, तुलसी तसबीर कबीर क्रपा। सुधि नानक बांनक सी सरसो, दुति दादुदयाळ समी दरसो।

—ऊ.का.

पीरग्रजोनी—स०पु० [फा० पीर+सं० ग्रयोनी] महादेव, शिव।

उ०—हास मधुर कुंडळ हिंडळता, जोग्याम्यास जजोनी। इण तसबीर रावळी ऊपर, वारूं पीरग्रजोनी।

—महाराजा मांनसिंह (जोधपुर)

पीरजादो—सं०पु० [फा० पीर+जाद:] (स्त्री० पीरजादी) धर्म-गुरु का लड़का।

उ०—१ कुतब-गोस ग्रबदाळ सूफी ग्रनै कळंदर, पीरजादा मिळै सांझ परभात। कांन ग्रवरग रा भरै इक राह कज, वरै नह पड़ै 'जसवंत' छतै बात।—नरहरदास बारहठ.

उ०—२ मक्कारै पीरजादा, नोसरे साह नूं लिखी तो ने बादसाही न सौभै।—नी प्र.

पीरजुगादी—सं०पु० [फा० पीर+सं० युग+ग्रादि] महादेव।

पीरांण—देखो 'प्राण' (रू.भे.)

उ०—तूटो वोम बाट निराताळ सो बिछूटो तारो, केतां छूटो पीरांण ग्रा लखां ताकै कूप। कोप रुद्र माळका विहंगनाथ धूटा किना, रुठो गोरां माथै प्रळै काळ को सो रूप।—गिरवरदांन कवियो

पीरांणो—वि० [फा० पीर+रा०प्र० ग्रांणो] १ पीरों का, पीरों संबंधी।

उ०—ग्रला मांहि महमद साथै मुलांणा, ग्रला पास दरवेस दीसे पीरांणा।—पी.प्र.

२ देखो 'परांणो' (रू.भे.)

पीराई—सं०स्त्री० [फा० पीर+रा०प्र०ग्राई] १ पीर होने के भाव।

२ पीर का चमत्कार, पीर की करामात।

सं०पु०—३ पीरों के गीत बाजे पर गाने वाले एक प्रकार के मुसलमान।

पी'रियो—वि० [सं०पितृ+गृह+रा०प्र०इयो] विवाहित स्त्री के मायके का।

सं०पु०—१ विवाहित स्त्री के पिता के कुटुम्ब या निवास का व्यक्ति।

२ देखो 'पी'र' (ग्रल्पा, रू.भे.)

रू०भे०—पीवरियो, पीहरियो।

पीरी—सं०स्त्री० [फा० पीर+रा०प्र०ई] १ पीर होने का भाव।

२ वृद्धावस्था। ३. शिष्य बनाने का धंधा।

पीरु—सं०स्त्री० [सं० पीड़ा] पीडा, दर्द।

उ०—ध्रुव घन सिधायो वचन मारयो ध्यांन धारयो एक ये। तजि पांन नीरू महाधीरू परा पीरू पेख ये।—करुणासागर

पीरोजियो, पीरोजो—देखो 'फीरोजी' (ग्रल्पा., रू.भे.)

उ०—१ तरै राठौड़ ग्रासकरण जैतावत देवीदासोत नै दोनूं ही भेळा होय नै पीरोजो २०००० राव रांम नूं दी.........।

—राव चंद्रसेण री वात

उ०—२ संवत १६४१ मोटै राजा राव सुरतांण सिरोही रो धणी जिण माथै पेसकसो पीरोजी लाख दोय नै घोड़ा १३ ठहराया।

—बां. दा. ख्यात

पीरोजो—सं०पु०—देखो 'फीरोजो' (रू.भे.) (ग्र.मा.)

पीरोत—देखो 'पुरोहित'

उ०—टग-टग महलां जी उमादे रांणी ऊतरी जी, जड़िया सजड़ किवाड़। पहली मनाव महाराज पीरोत पधारिया, भठियांणी रांणी खोल किवाड़।—लो.गी.

पी'रो—देखो 'पी'र' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

उ०—रांमलै री बहू, राजी-राजी पी'रै सूं गैणा लाय'र भूवा जी, मासी जी ग्रर मांमो जी रौ टंटो निवटाय दियो ग्रर सासू रो जी सौरो

कराय दियौ ।—वरसगांठ

पील-वि० [?] रक्षक, सहायक ।

उ०—के तुम किस के मांमले चाहत सुर भाया । के तुम किस के पील हो अरजी गुजराया ।—ला.रा.

सं०पु० [फा०] १ हाथी ।

रू०भे०—पीलु ।

२ देखो 'पीयल' (रू.भे.)

उ०—बीघा २००० रेलीजै, काठा गेहूं हुवै । पील घणी कोन्ही ।

—नैणसी

पीळखांनौ-सं०पु०यौ० [फा० पील+फा० खांन] हाथियों के बांधने का स्थान, हस्तिशाला ।

पीळचोस, पीळचौस, पीळजोत—देखो 'पीलसोज' (रू.भे.)

उ०—१ सेझवट तकिया घणू ऊजळा गरकाब गदरा परां नैरू सूं भरिया थका घणूं ऊजळी गरकाब बिछात कीजै छै, पीलचोसां अढार दांनीआं री रुसनाई लागी रही छै, तेज-पुंज आसप आरोगीजै छै ।

—रा.सा सं.

उ०—२ तद हरिरांम कह्यौ—'लोक सरव ऊभा ऊठो । तद लोक सरब ऊठि ऊभा हुआ । मसाळची पीलचोसां ने गया ।

—पलक दरियाव री बात

उ०—३ चारू कांनी घी री पीलजोतां जगमगावती ही । सौरमी चीजां री सौरम सूं कमरा में मभरोळां उठती ही ।—फुलवाड़ी

पीळणौ, पीळबौ-क्रि०अ० [?] पीला पड़ना, पीत वर्ण होना, पीला होना ।

उ०—पीळांणी घरा ऊखघी पाकी, सरदि काळि एहवो सिरी । कोकिल निसुर प्रसेद ओसकण, सुरति अति मुख जिम सुश्री ।

—वेलि

पीलणौ, पीलबौ-क्रि०स० [देशज] १ कठोर और वजनी दो वस्तुओं के बीच में किसी रसदार पदार्थ को डाल कर इस प्रकार दवाना कि उसका रस निकल जाय ।

उ०—वेळू घांणी पील-कर कोई तेल कढावै ।—केसोदास गाडण

२ मारना, संहार करना ।

उ०—मळिया मेछां मांण, पापी चोकस पीलिया । आलम जोरी आंण, आज हुई इळ ऊपरा ।—पी.प्रं

३ ध्वस्त करना, नाश करना ।

४ तंग करना, परेशान करना ।

५ अत्यधिक परिश्रम कराना । ज्यूं०—कांम में पीलणौ ।

पीलणहार, हारौ (हारी), पीलणियौ—वि० ।

पीलाड़णौ, पीलाड़बौ, पीलाणौ, पीलाबौ, पीलावणौ, पीलावबौ

—प्रे०रू० ।

पीलिओड़ौ, पीलियोड़ौ, पील्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पीलीजणौ, पीलीजबौ—कर्म वा० ।

पीलती-सं०स्त्री०—देखो 'पीळी' (रू.भे.)

उ०—गाय भैंस अर ऊंट, पीड सूं खड़ा खुडावै । मारै दूसरौ पसू, पांव में सोई आवै । सीघ्र खंदेड़ो खोद, पीलती माटी लावै । गोबर रै गुण घाल, ठींगळ घोळ सिजावै । सैंती सैंती पीड ताड़ो, लपेट लकड़ी लीरड़ा । तीजै दिन वन पयांन करै, त्यांग दुवाई चीरड़ा ।

—दसदेव

पीलपांव-सं०पु०यौ० [फा० पील+सं० पाद] श्लीपद नामक एक प्रसिद्ध रोग जिससे पैर फूल कर हाथी के पैर जैसे हो जाते हैं ।

पीलपायौ-सं०पु० [फा० पील-पाय] १ चारपाई के पाए के नीचे लगाया जाने वाला सहारा या आधार । (पत्थर काष्टादि)

२ किले आदि की दीवार के साथ या नीचे बनी बहुत मोटी दीवार ।

पीलपाळ-सं०पु० [फा० पील+सं० पाल] हाथीवान, महावत ।

पीलबांन—देखो 'पीलवांन' (रू.भे.)

पीलरियौ—देखो 'पीलरौ' (अल्पा०, रू भे)

पीलरौ-वि० (स्त्री० पीलरी) १ रक्ताल्पता रोग से पीड़ित, अति दुर्बल ।

उ०—तिण इण नू घणौ दुरबळ दीठौ, पीलरौ दीठौ, तरै पीलरौ होंण रौ हाल पूछियौ ।—नी प्र.

२ पीले रंग का, पीत ।

उ०—हे सोना नै सरीसी घण पीलरी ओ राज । राज ढोला राखेनी थारै हिवड़ै रै माय ।—लो गी.

अल्पा०—पीलरियौ ।

पीलवण-सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार की मोटे तने की लता जो वृक्षों पर चढी रहती है । रंगभेद से सफेद और श्याम दो प्रकार की होती है । (मारवाड)

रू०भे०—पीलवांण, पीलवांनी ।

मह०—पीलवणौ ।

पीलवणौ—देखो 'पीलवण' (मह०, रू.भे.)

पीलवांण, पीलवांन-सं०पु० [स० पीलुवान, फा० फीलवान] महावत ।

उ०—१ पीलवांण कूंभाथळां माथै पगां रा अगूठा चलावै छै, गज-बागां खैंचे छै, घता-घता करै छै ।—रा सा सं.

उ०—२ उरं ओद्रकं सास अभ्यास आंणं । वडा जूह पूंत।रिया पील-वांणं ।—बचनिका

उ०—३ पोसाक ऊंच अनोप, इम पीलवांनह ओप । असवार गज उणवार, पुज देव दुज अणयार ।—सू.प्र.

२ देखो 'पीलवण' (रू.भे.)

रू०भे०—पिलवांन, पीलवांन ।

पीलवपांनी-स०स्त्री० [फा० पीलवान+ई] १ फीलवान का कार्य, महावत का कार्य ।

२ महावत का पद ।

३ महावत को मिलने वाला वेतन ।
४ देखो 'पीलवरण' (रू.भे.)

पीलसोज, पीलसोत-सं०स्त्री० [फा० फतीलसोज] १ पीतल या और किसी धातु की बनी दीवट जिसमें एक अथवा अनेक दीपक ऊपर बने हुए होते हैं। उनमें तेल रखकर बत्तियां जलाई जाती हैं।
उ०—१ दोय बड़ी नोबत, दोय बडी देग रकबाई घड़ियाल, सोनारी पीलसोज, रूपा रा किंवाड़ चितोड़ सूं आंण अकबर अजमेर ख्वाजेजी रैं भेंट किया ।—बां.दा. ख्यात
उ०—२ भरमल री मा कन्है बैठी दारू पावै छै, पीलसोतां चस रही छै ।—कुंवरसो सांखला री वारता
२ साधारण चिरागदान ।
रू०भे०—पिलोत, पीलचोस, पीलचौस, पीलजोत, पीलोत ।

पीळाअक्षत, पीळाआखतो, पीळाआखा, पीळाचावळ-सं०पु०यौ० [रा० पीळा+सं०अक्षत, तदुल] (ब.व.) मांगलिक अवसरों पर इष्टमित्रों के यहां कुंकुमपत्रिका के स्थान पर केसर या हल्दी में रंग कर भेजे जाने वाले चावल ।
उ०—१ इम धसूं गोळ मझि करि करि उरड़, धसत लोपि घड़ मेंगळां । उजळा करूं पीळाअक्षत, असुर विहूंड खग उजळां ।—सू प्र०
उ०—२ तो पहूंचूं लग नील पताखां, इम उजवाळूं पीळाआखां ।
उ०—३ अठै आईदांन खड़िया री बेटी परणियौ छै, तिण बाई सूं दोय संदेसा कहिणा छै । तरै म्हारा सासरिया पूछसी राज रैं बहू सूं कठारी सेंध । तरै थे कहिज्यौ म्हारै पीळाआखां री घणी सांमदांन आसियो छै । तिण री भांणेजी छै ।—जैंतसी ऊदावत री वात
मुहा०—पीळा चावळ देणा—मांगलिक अवसर पर निमंत्रण देना ।
रू०भे०—पीलाअखतेस ।

पीळाड़ी-वि० [?] पापी, दुष्ट ।
उ०—पेच मुंदियाड़ पर 'बादरो' पीलाड़ी, कवर रैं लिलाड़ी मांय करकै । हारगा बियां सूं हिलै न हिलाड़ी, सिलाड़ी तो विना नांज सिरकै ।—ऊमरदांन लाळस

पीलाणौ, पीलाबौ-क्रि०स० ('पीलणौ' क्रिया का प्रे०रू०) १ कठोर और वजनी दो वस्तुओं के बीच में डालकर किसी रसदार पदार्थ का रस निकलाना, कोल्हू में डाल कर पेराना ।
२ मरवाना, सहार कराना ।
उ०—अबै तो म्हनै घांणी में पीलाय देवैला । मार मारनै फेर मारैला ।—फुलवाड़ी
३ परेशान करना, अत्यधिक परिश्रम कराना ।
पीलाणहार, हारौ (हारी), पीलाणियौ—वि० ।
पीलायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पीलाईजणौ, पीलाईजबौ—कर्म वा० ।
पीलावणौ, पीलावबौ—रू०भे० ।

पीलायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ रसदार पदार्थ का दो वजनी वस्तुओं द्वारा रस निकलाया हुआ, कोल्हू में पेराया हुआ ।
२ मरवाया हुआ, संहार कराया हुआ ।
३ परेशान करवाया हुआ, अधिक परिश्रम करवाया हुआ ।
(स्त्री० पीलायोड़ी)

पीलावणौ, पीलावबौ—देखो 'पीलाणौ, पीलाबौ' (रू भे.)
उ०—हार देवतां देवतां ही ई घांणी में पीलावै तो सो बार पीलावै ।
—फुलवाड़ी
पीलावणहार, हारौ (हारी), पीलावणियौ—वि० ।
पीलाविओड़ौ, पीलावियोड़ौ, पीलाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पीलावीजणौ, पीलावीजबौ—कर्म वा० ।

पीलावियोड़ौ—देखो 'पीलायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पीलावियोड़ी)

पीलिया—देखो 'पीलू' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—कई खाय पीलिया कैर्णा, कई जाळ जाळोटिया । मुरधर मलक वर्णै इण मेवैं, बाळ बैंड बोरोटिया ।—दसदेव

पीलियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ कोल्हू में डालकर पेरा हुआ, तेल निकाला हुआ ।
२ संहार किया हुआ, मारा हुआ ।
३ तंग किया हुआ, परेशान किया हुआ ।
(स्त्री० पीलियोड़ी)

पीळियौ-वि० [देशज] पीत वर्ण का, पीले रंग का ।
सं०पु०—१ रक्त के दूषित होने से होने वाला एक रोग जिससे नेत्र, नाखून और शरीर का रंग पीत वर्ण का हो जाता है, कामला ।
२ पीले रंग का बैल ।
(स्त्री० पीळी)
रू०भे०—पीळयौ ।

पीळी-वि० [देशज] पीत वर्ण की, पीले रंग की ।
उ०—अेकर एक जूं रिसांणी कर नैं आप रैं नांनांणै जावती । सोना गैणा सू पीळी जरद व्हियोड़ी ।
—फुलवाड़ी
सं०स्त्री०—१ पीतवर्ण की गाय ।
उ०—मोडी गोडी दे पसवाड़ा मोड़ै, तड़छां बातोड़ी घड़छां तन तोड़ै । पीळी पाडळ पर फिर फिर कर फेरे, धोळी घूमर नै फिर फिर घर घेरे ।—ऊ.का.
२ पीले रंग की घोड़ी ।
३ एक प्रकार की मिट्टी विशेष जिसका रंग पीला होता है ।
रू०भे०—पीळती ।

पीळीकणेर-सं०स्त्री०—कनेर वृक्ष का एक भेद जिसके फूल पीले रंग के होते हैं ।

पीळीचमेली-सं०स्त्री०यौ० [रा० पीळी+सं० चंपावेललि:] चमेली की जाति की लता विशेष जिसके फूल पीले रंग के होते हैं ।

पीळीजूही-सं०स्त्री०यौ० [रा० पीली+सं० यूथिका या यूथी] एक प्रकार की जूही जिसके फूल पीले रंग के होते हैं, सोनजूही।

पीळीमाटी, पीळीमिटी-सं०स्त्री० [राज० पीळी+सं० मृत्तिका] पीले रंग की मिट्टी, पीली मिट्टी। (ग्रमरत)

पीलु, पीलू-सं०पु० [सं० पीलु:] १ हाथी, हस्ती (डिं.को.)
२ तीर, बाण।
३ एक वृक्ष विशेष, इस वृक्ष का फल।
४ एक राग विशेष।
अल्पा०—पीलिया।

पीलूवडो-सं०पु० [सं० पीलू] वृक्ष विशेष।
उ०—पीपळ पाडळ पींपळी, पीठवनी पदमाख। पारिजात पीलूवडां, पींपरि पत्तां पाख।—मा.कां.प्र.

पीलोत—देखो 'पीलसोज' (रू.भे.)
उ०—ग्रह छिद्र गवाक्षन मीट घणी। तिण दीठिय जोत पीलोत तणी।—पा.प्र.

पीळो-वि० [देशज] (स्त्री० पीळी) १ वह जो सोने, केसर या हल्दी के रंग का हो, पीत, जर्द, पीला।
उ०—चरणे चामीकर तणा चंदांणणि, सज नूपुर घूघरा सजि। पीळा भमर किया पहराइत, कमळ तणा मकरंद कजि।—वेलि
मुहा०—पीळा हाथ करणा—लड़के या लड़की का विवाह करना।
२ रक्तताल्पता के कारण हलका श्वेत हो गया हो, जिसके स्वास्थ्य-सूचक कांति या दीप्ति न हो, कांतिहीन, निस्तेज। (शरीर)
उ०—प्रीतम् वीछुड़ियां पछइ, मुई न कहिजइ काइ। चोळी केरे पांन ज्यूं, दिन-दिन पीळी थाइ।—ढो.मा.
क्रि०प्र०—पड़णो, होणो।
३ वह जो भय, लज्जा ग्रादि के कारण पीत हो गया हो।
मुहा०—लाल पीळो होणो—क्रोध के कारण शरीर का रंग फीका पीत होना, क्रोध करना।
सं०पु०—१ स्त्रियों के ग्रोढने का पीला रंगा हुग्रा वस्त्र।
उ०—थेई ग्रो वना सूरज ऊगं जोधांणं सिधाग्रो, पीळो म्हारं कुण जी मोलाय। थेई ग्रो जच्चा रांणी गीगलियो हुलराय, पीळो म्हारा माताजो मोलावसी।—लो.गी.
२ पुत्र जन्मोत्सव पर राजस्थान में गाया जाने वाला मांगलिक लोक गीत।
३ सोने या हल्दी से मिलता जुलता एक प्रकार का रंग।
४ पीले रंग का बैल।
५ रंग विशेष का घोड़ा।
रू०भे०—पीग्रळो, पीग्रलो, पीयळो, पीयलो।

पीळोधतूरो-सं०पु० [सं० पीत धुस्तुर] एक प्रकार का धतूरा जिस के पुष्प पीत वर्ण के होते हैं।

पीळोपो-सं०पु०यौ० [राज०पीळो+सं०पाद=पाय=किरण] उषाकाल, सवेरा, तड़का।

पीळोवादळ-सं० पु० यौ० [रा० पीळो+सं० बारिद] उषाकाल तड़का। उ०—चांद-किरण मिळ पवन सूं, टीवां करी किलोळ। पीळेवावळ खोज लै, लूग्रां रोळ गिदोळ।—लू

पीळ्यो—देखो 'पीळियो' (रू.भे.)

पीव-सं०पु० [सं० प्रिय ?] १ चातक, पीहा। (ग्र०मा०)
२ देखो 'प्रिय' (रू.भे.)
उ०—१ प्रीत कर पाछो न जावै, ये ही वैराग की रीत। कबहूं तो मन होय उदासी, कबहूं गावै गीत। ग्रासक महल ग्ररु इसक झरोखा, चढण ग्रगम की भीत। पल-पल प्रीत करो उण पीव से, लख जो नीत ग्रनीत।—स्री हरिरांमजी महाराज
उ०—२ सब ही ग्रतक देखिये, किहि विघ जीवै जीव। साधु सुधारस ग्रांणकर, दादू बरसै पीव।—दादूवांणी
उ०—३ झूठै हाकै हुलसता, पीव बधाई दार। जाणी सिव सांचो कियो, घूमै मैंगळ वार।—वी०स०

पीवड़लो—देखो 'प्रिय' (ग्रल्पा०, रू.भे.)
२ देखो 'पीवर' (ग्रल्पा०, रू.भे)
उ०—पीवड़लै लिख भोजड़ल्यां पठावां, कहो ऐ भेजां संदेस। भोजड़ल्यां वायव हुम नां पतीजां, सदेसे न ग्रावं म्हारो वीर।
—लो.गी.

पीवण, पीवणउ, पीवणो-वि०—१ पीने वाला।
२ देखो 'पंणो' (रू.भे.)
उ०—मारवणी मुख ससि तणइ, कसतूरी महकाइ। पासइ पन्नग पीवणउ, विळकुळियउ तिणि ठाइ।—ढो.मा.
रू०भे०—पिवण।

पीवणो, पीवबो—देखो 'पीणो, पीवो' (रू.भे)
उ०—१ इण पर पड़गी,रात ग्रंधारी, पीवण नै घट मैं नहीं पाणी। तिरया पुरसां खांचातांणी प्यासा मरता विलखा प्रांणी।—ऊ.का.
उ०—२ डाबी नै फरूकै देखकर, जळै ग्रांख मम जीवणी। साथियां कठै तूं सीखियो, पीव तमाखू पीवणी।—ऊ.का.
उ०—३ वाही थी गुण वेलड़ी, वाही थी रस वेलि। पीणइ पीधी मारवी, चाल्या सूती मेलि।—ढो मा.
पीवणहार, हारो (हारी), पीवणियो—वि०।
पीविग्रोड़ो, पीवियोड़ो, पीव्योड़ो—भू०का०कृ०।
पीवीजणो, पीवीजबो—कर्म० वा०।

पीवर-सं०पु० [सं०] १ बड़ा, स्थूल, मोटा।
उ०—१ उनमत पीवर ग्रतिघन, स्तन मध्य मुकलित माल। सखी मास काती दहत छाती, माळ सो भई भाल।—वि.कु.
उ०—२ लाडो लाखीणीं, प्यारा घूंघाती। पीवर ऊघारी पारां पय पाती। भाखा खीणां भइ एवड़ ले ग्राता। घाया धीणा रा गोधन रा घाता।—ऊ.का.

२ देखो 'पी'र' (रू.भे.)

उ०—घरा मुढले पीव पिलंगा, दोय जरणां बात करै मते ए उपावै, ग्रावो प्यारी घरण मते ए बैठां, करां ए नचींतड़ी बात। हम न करस्यां सायब थे ही करस्यौ, म्हारौ पीवर दूर।—लो.गी.

पीवरियौ—देखो 'पी'र' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

उ०—भँरूंजी पीवरिये रै मांय, थरपूं देवळो, हूं ग्रावती नै जावती थांनै धोक सूं। भँरूंजी एक ग्ररज म्हारी हेलो सांभळो।—लो.गी.

२ देखो 'पी'रियौ' (रू.भे.)

उ०—ग्रायौ ग्रायौ ए मां पीवरिया रौ ए काग, वो भपकै लेग्यौ मां मांडियो जे। भागी-दोड़ी मा कागलिये री ए लार, कांटो लाग्यौ मा केर को जे।—लो.गी.

पीवल—१ देखो 'पीयल' (रू.भे.)

उ०—बरसाळा कंवळा खेत, बाजरी घणी हुवै, ऊनाळी पीवल सेवज घणो।—नैणसी

२ देखो 'प्रिय' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

उ०—कै है रे थारै सासू सावकी, ए पणिहारी ए लो। कै है थारौ पीवरियो परदेस बाला जी हे लो।—लो.गी.

पीसण, पीसणू, पीसणौ-सं०पु० [सं० पेषणं] १ पीसने की क्रिया या भाव. २ पीसा जाने वाला पदार्थ. ३ पीसाई करने का उद्योग, धंधा।

पीसणौ, पीसबौ-क्रि०स० [सं० पेषण] १ सूखे या ठोस पदार्थ को दबाव या रगड़ के द्वारा महीनतम चूर्ण के रूप में करना, किसी वस्तु को ग्राटे के रूप में करना।

उ०—१ गुण-पाखर पूरब गयौ, नभ ग्रो घसतै सीस। ग्राटो करे उडाविया, जेण पठाणां पीस—बां.दा.

उ०—२ पीस-पीस पीसणो हाथ घस गया हाथा सूं।—ऊ का.

२ शिला पर रख कर किसी पदार्थ को पत्थर से महीनतम बांटना, चटनी रूप करना।

३ बहुत ग्रधिक परिश्रम करना, कठोर परिश्रम करना।

किसी को बुरी तरह से कुचलना, किसी से कठोरतापूर्वक कार्य कराना।

५ शोषण करना।

पीसणहार, हारौ (हारी), पीसणियौ—वि०।

पीसाड़णौ, पीसाड़बौ, पीसाणौ, पीसाबौ, पीसावणौ, पीसावबौ —प्रे०रू०।

पीसिग्रोड़ौ, पीसियोड़ौ, पीस्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पीसीजणौ, पीसीजबौ —कर्म वा०।

पिसणौ, पिसबौ—ग्रक०रू०।

पीसाई—देखो 'पिसाई' (रू.भे.)

पीसाड़णौ, पीसाड़बौ—देखो 'पीसाणौ, पीसाबौ' (रू.भे.)

पीसाड़णहार, हारौ (हारी), पीसाड़णियौ—वि०।

पीसाड़िग्रोड़ौ, पीसाड़ियोड़ौ, पीसाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पीसाड़ीजणौ, पीसाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पीसाड़ियोड़ौ—देखो 'पीसायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पीसाड़ियोड़ी)

पीसाणौ, पीसाबौ-क्रि०स० ('पीसणौ' क्रिया का प्रे रू.) १ सूखे या ठोस पदार्थ को दबाव या रगड़ के द्वारा महीनतम चूर्ण के रूप में कराना, ग्राटे के रूप में कराना।

२ शिला पर किसी पदार्थ को महीनतम बंटवाना, चटनी रूप कराना।

३ बहुत ग्रधिक परिश्रम कराना, कठोर परिश्रम कराना।

४ बुरी तरह से कुचलाना, कठोरतापूर्वक कार्य करवाना।

५ शोषण कराना।

पीसाणहार, हारौ (हारी), पीसाणियौ—वि०।

पीसायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पीसाईजणौ, पीसाईजबौ—कर्म वा०।

पिसणौ, पिसबौ—ग्रक० रू०।

पीसाड़णौ, पीसाड़बौ, पीसावणौ, पीसावबौ—रू०भे०।

पीसायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ दबाव या रगड़ के द्वारा महीनतम-चूर्ण रूप में कराया हुग्रा, ग्राटे के रूप कराया हुग्रा।

२ महीनतम बंटवाया हुग्रा, चटनी रूप कराया हुग्रा।

३ ग्रत्यधिक परिश्रम करवाया हुग्रा, कठोर परिश्रम करवाया हुग्रा।

४ कुचलाया हुग्रा, कठोरतापूर्वक कार्य करवाया हुग्रा।

५ शोषण करवाया हुग्रा।

(स्त्री० पीसायोड़ी)

पीसावणौ, पीसावबौ—देखो 'पीसाणौ, पीसाबौ' (रू.भे.)

पीसावणहार, हारौ (हारी), पीसावणियौ—वि०।

पीसाविग्रोड़ौ, पीसावियोड़ौ, पीसाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पीसावीजणौ, पीसावीजबौ—कर्म वा०।

पीसावियोड़ौ—देखो 'पीसायोड़ौ (रू.भे.)

(स्त्री० पीसावियोड़ी)

पीसू—देखो 'पिसू' (रू.भे.)

पीसौ—देखो 'पईसौ' (रू भे.)

पीसोड़ौ—देखो 'पीसियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पीसोड़ी)

पीसोधरी-सं०पु० [सं० पिश=पापयुक्त+धारिन्] राक्षस, ग्रसुर।

उ०—ग्रागम संपेखे ग्रंगद, माया विसतारे। पीसोधर ग्ररि फेरि पूठि, सिल सभा सभारे।—सू प्र.

पीसोर-सं०पु०—पेशावर।

उ०—तानासाह मास ६ दिन १२ गढ़ में लड़ियो। पण गढ़ छूटो नहीं। तद दीवांण हस्त खां रो बेटो जिलफिकार खां पीसोर फौज लाख दोय सूं लड़तो हो सू इण नू बादसाहजी........जलदी ग्रामो। —द.दा.

पीह, पीहर—देखो 'पी'र' (रू.भे.)

उ०—१ ताहरां म्रा, चांनण सांगमरावजी नूं कहियो—'जु राज। चढ़ीजै नहीं। घोडीरो वेम हू ले आईस। ताहरां म्रा, चांनण पीहर गई। जाय नै भाई विसनदास पास। बछेरो मांगियो।—नैणसी

उ०—२ पीहर पतळारा, सेणां रा प्यारा, तारक तूटां रा नैणां रा तारा। सोरी सिटियां रा सूल्हांरा सारा, मीड़ी मूखां रा फूलां रा भारा।—ऊ.का.

उ०—३ पित-मात बांधव गोत्र पीहर, पांण मांण पराक्रमं।
—पी.ग्रं.

उ०—४ जाया माजी रात जिस, पीहर हुम्रो प्रवीत। भ्रायां सुसरा भ्रांगणां, निरमळ फैनी नीत।—बां.दा.

पीहरड़ो—देखो 'पी'र' (अल्पा०, रू.भे.)

पीहरियो—१ देखो 'पो'रियो' (रू.भे.)

२ देखो 'पी'र' (ग्रल्पा., रू.भे.)

उ०—चालो-चालो नगीने रे देस म्हारी सुंदर गोरी रे। थांरो पीहरियो म्हांरो सासरो हो राज।—लो.गी.

पीहरो—देखो 'पी'र' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

पीहाई—देखो 'पिसाई' (रू.भे.)

पीहू-सं०स्त्री०—पपीहे के बोलने की आवाज।

पुंख, पुंखो-सं०पु० [सं० पुङ्ख] तीर का वह भाग जहां उसमें पर लगे रहते हैं।

उ०—जितरै दूसरो तीर फेर मारियो सो सर पुंखा समेत गरक हुवो।
—ठाकुर जैतसी री वारता

२ देखो 'पूंख' (रू.भे.)

पुंग—देखो 'पूग' (रू.भे) (अ.मा.)

पुंगरण—देखो 'पंगरण' (रू.भे.)

उ०—पुंगरण जान सेन है साखति, भ्रणवर 'गोयंद' किसन भ्रगाह। रवद तणी घड़ सांम्हो 'रतनो', मिळियो मोड़ बंधे रिण मांह।—दूदो

पुंगळ—देखो 'पूंगळ' (रू.भे.)

पुंगव-वि० [सं०] कुशल, श्रेष्ठ।

उ०—घर्क परसघर चक्रधर, पाळो जिण निज पैज। सो सूरां सिर सेहरो, नर-पुंगव सुरनैज।—बां.दा.

पुंगी—देखो 'पूंगी' (रू.भे.)

उ०—विरदां पुंगी रागवस, मांनै मत्र स-मोद। भ्रयो सिर धाका पड़ै, जटपख ताखा जोध।—कविराजा करणीदांन

पुंगीफळ—देखो 'पूंगीफळ' (रू.भे)

पुंचाळो—देखो 'पूंचाळो' (रू.भे.)

उ०—काका खेमकरण, 'सहस' 'अजवेस' संघाळा। भड़े पांच भात्रीज, पड़े वेटा पुंचाळा।
—कल्याणसिंह नगराजोत वाढेल री वात

पुंचिका—देखो 'पुणची' (रू.भे.)

उ०—जुहारं मिणो पुंचिका हाय जोपै, भ्रघ पंकजं मंडळं भ्रंग वोपै, कळी चंप की भ्रांगळी सोभ कीनै, नसं उज्जळं चंद्र सोभा नवीनै।
—जगसीरांम प्रोहित री वात

पुंची—देखो 'पुणची' (रू.भे.)

पुंचीयो—१ देखो 'पुणची' (ग्रल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ गजरा नवग्रही पूंचिया ए प्रोंचा कै विसै। भ्रापणी-भ्रापणी ठोड़। विधि-विधि सों वणाया छै।—वेलि टी.

२ देखो 'पुणचो' (ग्रल्पा., रू.भे.)

पुंछ—देखो 'पूंछ' (रू.भे.)

पुंछाळ, पुंछाळो-वि० [सं० पुच्छ+आलुच्] १ पूंछ वाला।

२ पीछे लगने वाला, खुशामदी, आश्रित, पिछलग्गु।

सं०पु०—घोड़ा (डि.नां.मा.)

पुंज-सं०पु० [सं० पृषो०] समूह, ढेर, राशि।

उ०—१ ना बूंदी ना दीद, चाव ना चूरमे घेवर। पीलूड़ा रस पुंज, जाळ रा मीठा जेवर।—दसदेव

उ०—२ स्वकीय सदन भ्राय प्रभात ही सो पुरट पुंज जाचकां नै लुटाय भ्रपूरब जस लीधो।—वं.भा.

रू०भे०—पूंज।

पुंजी—देखो 'पूंजी' (रू.भे.)

उ०—सजि व्यापार तुं पुंजी साहू, भ्रटकलि ठांम देह उघारूं। रखै वधारे रिण नै रोग, लखण लीजै ज्यूं हसै न लोग।
—ध.व.ग्रं.

पुंठ—देखो 'पूठ' (रू.भे.)

पुंड-सं०पु० [सं० पुण्ड्र:] १ केसर, चंदन आदि का मस्तक पर बनाया गया तिलक या चिन्ह।

यौ०—त्रिपुंड, उर्ध्वपुंड।

२ सफेद कमल।

पुंडग-सं०पु० [?] बूंद। उ०—सिर जावो सहनांक, नाक न जावै पख। पांणी पुंडग न जावज्यो, लोही जावो लख।
—कुंवरसी सांखला री वारता

पुंडर—१ देखो 'पुंड' (रू.भे.)

२ देखो 'पांडुर' (रू.भे.) (नां.मा.)

पुंडरिकणी-सं०पु० [ ] १ श्वेत कमलिनी।

२ एक नगर का नाम। उ०—मध्य विदेह विजय पुस्प कलावती, नयरी पुंडरिकणी सार सलूणा। तिहां विचरइ भविजन मन मोहता सत्य की मातु मल्हार सलूणा।—वि.कु.

पुंडरी-वि० [सं० पाण्डरीक] श्वेत, सफेद। उ०—घर नीली धण पुंडरी, घरि गहगहइ गमार। मारू देस सुहामणउ, सांवणि सांझी वार।—ढो.मा.

पुंडरीक-सं०पु० [सं०] १ कमल, श्वेत कमल।

उ०—पांणी साथि पुंडरीक, केतूं करइ परांण। मित्त पखइ मरवूं तथा, जांणइ जे को जांण।—मा.कां.प्र.

२ रघुवंश का एक राजा (नभ का पुत्र)

उ०—पुंडरीक नभ पादि विरदपति, सुज पुत्र खेम धन्व वायक सति। देवानीक तास पुत्र दीपत, सुर दातार अनीक तास सुत।—सू प्र.

३ यवन, मुसलमान। उ०—१ पुळिया पुंडरीक सुपह संचरिया, वागी हाक न कोय वळै। बालाचद ऊठ अतुळीबळ, भोजराज गढ तूभ मळै।—भोजराज रूपावत री गीत

४ बादशाह। उ०—मानतौ जत्र न मंत्र नह मानतो, वैण नह मानतो मंडतो वीक। गुरड़ जिम 'आसकरण' तणौ गाबड़ ग्रहे, पिटारै घालियौ पनंग पुंडरीक।—दुरगादास राठौड़ री गीत

४ जैनियो के एक गणधर का नाम। उ०—पुंडरीक गणधर तणी, प्रतिमा अति आणदि मोरा लाल। हां रे मोरा लाल सहसकूट अस्टापदे, प्रमुख बहु जिन वांदि।—वि कु.

५ सिंह (अ.मा.)

६ श्वेत वर्ण।

७ सफेद रग।

८ सफेद रग का हाथी।

९ सफेद रंग का सांप।

१० एक प्रकार का बाज पक्षी।

११ एक नाग का नाम।

१२ क्रौंच द्वीप का एक पर्वत।

१३ आकाश।

१४ तिलक।

१५ हाथी का ज्वर।

१६ अग्निकोण के दिग्गज का नाम।

१७ श्वेत कुष्ट (अमरत)

पुंडरीकस, पुडरीकाक्ष, पुंडरीकाख, पुंडरीकास-सं०पु० [सं० पुंडरीकाक्ष] कमल-नयन श्रीकृष्ण, विष्णु, ईश्वर।

उ०—जब बलिभद्रजी आई उलाहणौ दियौ। तब क्रस्णजी लजाय कै नीचो द्रस्टि करी। पुंडरीकाख खहतां कंवळ नयण प्रसन्न हुआ।—वेलि टी.

पुंडरीकासण-स०पु० [सं० पुंडरीकासन] ब्रह्मा (गजमोख)

पुंड्र-वि० [सं०] १ श्वेत, सफेद। उ०—जेहरि घूघर माळ पर्गा भुणकं जियां। कुजं बारिज पुंड्र बचा कलहंसिया।—बां.दा

स०पु०—१ एक देश का नाम।

२ एक वृक्ष का नाम।

३ बलि के पुत्र एक दैत्य का नाम जिसके नाम पर देश का नाम पड़ा।

४ चदन या केशर से अंकित ललाट पर तिलक।

५ कमल।

६ श्वेत कमल।

रू०भे०—पुंडर।

पुंण—देखो 'पूंण' (रू.भे.)

उ०—पुंण पहुर पडिलेहण करीनइ, मातरा पडिलेह ए। जल घड़ा लोटी बाटका, पडिलेहवा वलि तेह ए।—स.कु.

पुंणच, पुंणछ-सं०स्त्री०—१ हरिसा और हल के जोड़ पर मजबूती के लिए तिरछा लगा हुआ काष्ठ का छोटा सा डण्डा।

२ देखो 'पंणच' (रू.भे.)

रू०भे०—पुणछ।

पुंतार-सं०पु० [देशज] हाथी का शिक्षक।

उ०— करणीकार, रसकार, क्षीरकार, सस्यकार, वस्त्रकार, विभूसणकार, पुंतार, अस्व-सिक्षाकार, रथकार, साव्यकार।—व.स.

रू०भे०—पउंतर, पोतार।

पुंन्नाग-सं०पु० [सं० पन्नाग] १ सर्प, सांप।

उ०—मणिधर मोटा देखीइ, पंखाला पुंन्नाग। सात फणइ पो सहिस गल, बिमणी-बिमणी वाग।—मा.कां.प्र.

[सं० पुन्नाग] २ श्वेत हाथी।

३ श्वेत कमल।

४ नागकेशर का वृक्ष या नागकेशर।

पुंन्यु—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)

उ०—फिरि जिनुका जसका प्रकास, मनुं हंस का सा विलास। किधुं हरजू का हास किधुं, सरद पुंन्युं का सा उजास।—रा.सा.सं.

पुंलिंग—देखो 'पुल्लिंग' (रू.भे.)

पुंवार—देखो 'परमार' (रू.भे.)

पुंस-सं०पु० [सं० पुंस्] पुरुष, नर। उ०—परम अंस रवि वंस, प्रवर दुरवंस प्रभायौ। हंस वंस अवतंस, पुंस परताप सवायौ।—रा.रू.

पुंसचळी-सं०स्त्री० [सं० पुंश्चली] १ व्यभिचारिणी, कुलटा स्त्री (अ.मा.)

२ वेश्या, गनिका (अ.मा.)

रू०भे०—पुंसळी।

पुंसत्व-वि० [सं० पुंसत्व] १ पुरुषार्थ, बल।

२ सत्य।

पुंसरस-सं०पु० [सं०] दूध (अ मा.)

पुंसळी—देखो 'पुंसचळी' (रू.भे.)

पुंसवन-सं०पु० [सं०] गर्भाधान से तीसरे महीने में किया जाने वाला सोलह सस्कारों में से दूसरा सस्कार।

पुंहुच—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पुंहचणौ, पुंहचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—सोहती मन मोहती, पुंहचउ सदल सुरंग। अंगुली मूंगनी फळी, समस्त तीखा नख सुरंगा।—रुकमणी मगळ

पुंहचणहार, हारौ (हारी), पुंहचणियौ—वि०।

पुंहचिओड़ौ, पुंहचियोड़ौ, पुंहच्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पुंहचीजणौ, पुंहचीजबौ—भाव वा०।

पुंहचियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पुंहचियोड़ी)
पुंहचौ—देखो 'पुणचौ' (रू.भे.)
उ०—इण भांत रौ तिजारौ सू गोरौ मूवरिया पुंहचांसू दूजण साह्यां कटोरा में भलौ जुवांन मचकावं छै।—रा.सा.सं.
पुंहत—देखो 'पहुच' (रू.भे.)
पुंहतणौ, पुंहतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
उ०—ताहरां बूड़ंजी नूं रीस आई। ताहरा बूड़ंजी चढिया सो खीची नूं जाय पुंहता। ताहरां बूड़ंजी कह्यौ—'रे खीची! पाबू नं मार कठं हालियौ?—नैणसी
पुंहतणहार, हारौ (हारी), पुंहतणियौ—वि०।
पुंहतिओड़ौ, पुंहतियोड़ौ, पुंहत्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पुंहतीजणौ, पुंहतीजबौ—भाव वा०।
पुंहतियोड़ौ—देखो 'पहुचियोड़ौ' (रू भे.)
(स्त्री० पुंहतियोड़ी')
पुंहरी—देखो 'पांभड़ी, पांभरी' (रू भे)
उ०—पुंहरी रा छेह ढळकतां पासइ, लाज करे अंजळउ लीयउ। कोरज वळ पहरि रायकुंवरी, कुंकम तिलक निलाट कीयउ।
—महादेव पारवती री वेलि
पुआल—देखो 'पूळौ' (मह०, रू.भे.)
पुओहर—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)
उ०—उन्नत पीन पुओहर नारि, कठि निगोदर उरवरि हार। इसी नारि घरि हुइ दुइ चारि, अउर किसूं छइ सरगह बारि।
—लो.गी.
पुओ—सं०पु० [सं० पूप]
रू०भे०—पूओ।
पुकरमूळ—देखो 'पुस्करमूळ' (रू.भे.)
पुकर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे)
पुकार—स०स्त्री० [प्रकुश] १ बचाव या मदद के लिए की गई आवाज। उ०—१ अजामेळ जमदळ भगा, विछुटयौ बिखमी वार। कीधी नारायण कहे, पुत्तर हेत पुकार।—ह.र.
उ०—२ समं कुसमं सुर सारत सार, पुकारत आरत वंत पुकार। सुखी करिये अति आप समांन, दुखी सरणागत ऊमरदांन।
—ऊ.का.
२ किसी के द्वारा पहुचे हुए दुख के प्रतिकार में की गई चिल्लाहट, फरियाद। उ०—तिणरे लाख वळद तिणसूं लखी वालदियौ बाजतौ। ते लूंण लेवा मारवाड़ आवतौ। जद जाटां रा खेत भेलै। जद जाटां विजयसिहजी कनं पुकार की।—भि.द्र.
३ आवश्यकीय पदार्थ के लिए की गई मांग, गहरी मांग।
ज्यूं—जठै जाओ उठै सकर सकर री ही पुकार है।
क्रि०प्र०—करणी, होणी।
४ किसी का नाम लेकर ऊंचे स्वर से बुलाने की क्रिया या भाव। अपनी ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए किसी के प्रति ऊचे स्वर से आवाज।
क्रि०प्र०—करणी, देणी, मचणी, मचाणी, होणी।
रू०भे०—पूकार, पोकार, पोकारु, पौकार।
पुकारणौ, पुकारबौ—क्रि०म० [स० प्रकुश] दुखी होकर छुटकारे के लिए आवाज करना, रक्षा के लिए चिल्लाना।
उ०—१ अदालतां सूं होय भागती, पिरजा रोय पुकारी रे। सूंक दुकांना मंडी सरासर, धोळै दिवस अंधारी रे।—ऊ.का.
उ०—२ समं कुसमं सुर सारत सार, पुकारत आरत वंत पुकार। सुखी करिये अति आप समांन, दुखी सरणागत ऊमरदांन।
—ऊ.का.
उ०—३ ब्रह्मादिक तणउ हुओ दईतां वर, अति गति मांडी तियां अनंत। इंद्र री सभा इंद रह आगळ, कितरा देव पुकार करत।
—महादेव पारवती री वेलि
२ घोषणा करना, ध्यानाकर्षण हेतु कोई बात जोर से कहना।
उ०—सुति समाचार को सार पुकार सुणायौ, धरमी सुख धार अधरमी सीस धुणायौ।—ऊ.का.
३ शिकायत करना। उ०—भीखणजी उठै अमकड़ियै गांमै काचौ पांणी लीधौ, अमकड़ियै गांम कंवाड़ जड़नै सूता, अमकड़ियै नित्य पिंड लीधौ, इत्यादिक अनेक दोस पांनां सूं वांचवा लागौ। जद सेठजी बोल्या—जोधपुर जावौ। राजा कनै पुकारौ।—भि.द्र.
४ नाम रटना, धुन लगाना। उ०—वावहिया डूंगर दहण, छौडि हमारउ गांम। सारी रात पुकारियउ, लइ-लइ प्रिय कउ नांम।
—ढो.मा.
५ फरियाद करना।
पुकारणहार, हारौ (हारी), पुकारणियौ—वि०।
पुकारिओड़ौ, पुकारियोड़ौ, पुकारयोड़ौ—भू०का०कृ०।
पुकारीजणौ, पुकारीजबौ—कर्म वा०।
पोकारणौ, पोकारबौ—रू०भे०।
पुकारू—वि०—पुकार करने वाला, फरियादी। उ०—खांन आजम मांहे हुतौ सु जाहरां वेरियौ ताहरां पातिसाह कन्है पुकारू आया खांन आजम रा मेल्हिया हुता।—द वि.
पुक्कर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे)
उ०—खीरकंद मिस्रित हित खती, भोजन अवर दियै वह भंती। जुगत अरध भक्ष भिखा जतावै, अघर भेन पुक्कर अंचवावै।—सू.प्र.
पुक्कळ—सं०पु०—एक सूर्यवंशी राजा का नाम (पुराणों में पुष्कल नाम के स्थान पर किन्नर नाम मिलता है)।
उ०—पुत्र सुनिखत्र नृप रै नृप पुक्कळ, सुन जे अतरीख दळ सब्बळ। कहि सुतपा जिण सुत व्रद कोटिक, अमिंत्रजीत तेण सुत नृप इक।
—सू.प्र.

पुक्खर–वि० [सं० प्रखर] १ तीक्ष्ण, धारदार, पैना ।
२ देखो 'पुस्कर' (रू.भे.)

पुक्खरवरत—देखो 'पुस्करवरत' (रू.भे.)
उ०—काळो दधि नै पैले पार ए, धीरद्‌यत जूड़ी जेम विचार ए । सोलै लख जोयण विस्तार ए, दीप पुक्खरवर प्रति सुखकार ए ।
—ध.व.ग्रं.

पुक्ष–सं०पु० [सं०] १ पुस्य नामक राजा जो हिरण्यनाभ का पुत्र था ।
उ०—पुक्ष संभ्रम ध्रुवसंधि प्रथीपति, 'सुत सुदरसण उदारह दति सति । अगन वरण जे सुत आचारी, सीघ्र नृपति जिण सुत सति धारी ।—सू.प्र.
३ देखो 'पुस्य' (रू.भे.) (अ.मा., नां.मा.)

पुख—देखो 'पुस्य' (रू.भे.)
उ०—१ वज्रनाभ सुत सुगण धरम वप, ते सुत विम्रत नरेस उग्र तप । सुत जय हरिणनाभ सुभियांणै, पुख नृप जे सुत इंद्र प्रमांणै ।
—सू.प्र.
उ०—२ करि चक्र पूज हेत अधिकारै, धरपति कनकथाळ मझि धारै । उर नंदनंद प्रदुमन आराधै, साधन एह नखित्र पुख साधै ।
—सू.प्र.

पुखणौ, पुखबौ–क्रि०स० [सं० पुष्प] १ पुष्पों की माला बनाना ।
२ देखो 'पोखणौ, पोखबौ' (रू.भे.)
पुखणहार, हारौ (हारी), पुखणियौ—वि० ।
पुखिप्रोड़ौ, पुखियोड़ौ, पुख्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पुखीजणौ, पुखीजबौ—कर्म वा० ।

पुखत—देखो 'पुख्त' (रू.भे.)
उ०—१ प्राणी तूं डूबौ पुखत, मोह नदी रे मांहि । देव नदी में डूबियौ, नख पग हंदौ नांहि ।—बां दा.
उ०—२ प्राण गांठ जेते पुखत, इण तन मांझल एह । वयावर तेते नांम कर, धांम गांठ मत देह ।—बां.दा.
उ०—३ मेर मरजाद रणजीत आखाड़मल, खेर दीधा डसण जबर खेटै । पुखत गुरगम मिळी सेन पण पांकियौ, भरतपुर फेर नह उत्तर भेटै ।—कविराजा बांकीदास

पुखताई–सं०स्त्री० [फा० पुख+रा. प्र. आई] १ गम्भीरता, गांभीर्य ।
२ वृद्धावस्था ।
रू०भे०—पुगताई ।

पुखतापण, पुखतापणौ, पुखतापौ–सं०पु० [फा० पुख्तः+रा. प्र. ण, णौ, पौ] १ वृद्धावस्था, बुढापा । उ०—भार्या सूं खेटा किया, साळां खाधौ धन्न । पुखतापै पछितावियौ, हुई सो जांणै मन्न ।
—अज्ञात
२ दृढ़ता, मजबूती ।
३ पक्कापन, स्थिरता ।
रू०भे०—पुगतापणौ ।

पुखतौ—देखो 'पुख्तौ' (रू.भे.)
उ०—तरै मोकलजी कह्यौ—राजि हकीकत सुणी होज हुसी। पातसाह रौ कागद नै लकड़ी एक मेली छै नै गोढ दिसा पुछायौ छै, सौ राजि बडेरा पुखता छौ, घणी दीठी छै, तिणसूं म्हांने.तो गोढ़ री खबर नहीं ।—राव रिणमल री बात

पुखमास—देखो 'पुस्यमास' (रू.भे.)

पुखर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे.)

पुखराण–सं०पु० [सं० पक्षिराट] पक्षिराज । उ०—गुटकांण सिधांण विमांण तणौ गत । नाव तिरांण देघांण नृणै । पुखराण वेगांण प्रमांण पराचक । वात वसै विहगांण भणै ।—किसनौ दधवाड़ियौ

पुखराज–सं०पु० [सं० पुष्पराग] एक प्रकार का बहुमूल्य पीले रंग का रत्न या पत्थर । उ०—कलरंग घाट कुमाच, पन्नास नीलम पाच। संग रंग ठंग सुढाल, पुखराज अन्य प्रवाळ ।—सू.प्र.

पुखराजी–वि० [सं० पुष्पराट+रा.प्र. ई] पुखराज का बना, पुखराज का । उ०—मोतियां री लड़ां रा पेच उघटि रह्या छै । पुखराजी प्याला सूं अेराक चाक पीवै छै ।—पनां वीरम दे री वात

पुखलावती–सं०स्त्री० [सं० पुष्कलावती] पुष्कलावती नामक नगरी ।
उ०—पुरी 'पुखलावती' विजय कही, पुंडरिकणी नांमे नगरी लही। तिहां जिनजी उतपति पांमी, सुमरौ स्रोसीमंधर स्वांमी ।
—जयवांणी

पुखसनांन—देखो 'पुस्यस्नान' (रू.भे.)

पुखा–सं०पु० [सं० पूषन] सूर्य (अ.मा., नां.मा.)

पुखि—देखो 'पुस्यनक्षत्र' (रू.भे.)

पुखीख, पुखेंक–सं०पु० [सं० पुष्प+इषु+स्वार्थिक] कामदेव (अ.मा.)

पुख्त, पुख्ता, पुख्तौ–वि० [फा० पुख्तः] १ वृद्ध, बुजुर्ग, बूढा ।
२ पक्का, दृढ, मजबूत । उ०—१ बाप रा हिवड़ा सूं वेटा रै वास्तै वा प्रेम री आह ही के तावतप री कराह-पुख्ता तौर माथै सुभट कीं कह्यौ नीं जा सकै ।—फुलवाड़ी
उ०—२ छिण पैला ई आपरै इण मरण री पुख्तौ सनेसौ नीं मिळै । मौत री औ अंधारखातौ अबै घणा दिन नीं चालैला, आ बात आपनै साफ कैदूं ।—फुलवाड़ी
३ पूर्ण, पूरा ।
रू०भे०—पुखता, पुखतौ, पुगता, पुगतौ ।

पुख्यारक—देखो 'पुस्यारक' (रू.भे)
उ०—कातिवर सेठ एक नवौ मिंदर बरगोवै सौ पुस्य नक्षत्र रविवार नूं वैरौ नींव लगाई । पुस्य नक्षत्र नूं ही वैरौ कारज होवै । वीं मिंदर मांही सुंदर भींत सुवरण मई, अर खंभा रतनजटित, तोरण दरीखांना, दरवाजा, महराबदार महल, कोटड़ी, जाळी बारी, सिखर-कळस, ध्वजा-पताका, बंदरवार, चंदवा, पड़दा, रथमाळा, गजमाळा, अस्वमाळा सै परम सुंदर निरमांण कराया । फेर पुख्यारक मांही नीं

मांही प्रवेस कियो।—सिंघासण बत्तीसी

पुगड़ो—देखो 'पगड़ो' (रू.भे.)

उ०—पाट-हसत पुगड़े पटहोड़ा, पेस करे आय कियो परणांम। साभे गढ गिरनार 'कला' सुत, जेर किया वे मारू जांम।—द.दा.

पुगताई—देखो 'पुखताई' (रू.भे.)

पुगतापण–सं०पु० [फा० पुख्त:+रा. प्र. पण] वृद्धावस्था।

उ०—कर कंपे लोयण भरै, मुख ललरावे जीह। मावड़िया जुध में मिळै, पुगतापण रा दीह।—बां.दा.

पुगती—देखो 'पुख्तो' (रू भे.)

उ०—कहै दास सगरांम, हमें तूं हुम्रो पुगतो। किया मोकळा कांम, राख खाविंद सूं नुकतो।—सगरांमदास

पुगाड़णो, पुगाड़बो—देखो 'पहुचाणो, पहुंचाबो'।

पुगाड़णहार, हारो (हारी), पुगाडणियो—वि०।

पुगाड़िग्रोड़ो, पुगाड़ियोड़ो, पुगाड़योड़ो—भू०का०कृ०।

पुगाड़ीजणो, पुगाड़ीजबो—कर्म वा०।

पुगाड़ियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुगाड़ियोड़ी)

पुगाणो, पुगाबो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचाबो'।

पुगाणहार, हारो (हारी), पुगाणियो—वि०।

पुगायोड़ो—भू०का०कृ०।

पुगाईजणो, पुगाईजबो—कर्म वा०।

पूगणो, पूगबो—अक० रू०।

पुगाड़णो, पुगाड़बो, पुगावणो, पुगावबो—रू०भे०।

पुगायोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो'।

(स्त्री० पुगायोड़ी' (रू.भे.)

पुगावण–वि० [?] पहुंचाने वाला। उ०—आगे कनखळ सैल हिमाळै उतरी धरणी। सागर-पूतां सरग पुगावण गंगा सरणी। मोह चढंतां अंब हंसण मिस भाग उडाती। करां तरंगां चंद जटाहर हाथ जुळाती।—मेघ.

पुगावणो, पुगावबो—देखो 'पहुचाणो, पहुंचाबो'।

उ०—१ म्हारै थकां आपरी वारी नीं आवै। भ्रो भार ऊंचायनै म्हैं आपनै ठेट आपरै घरै पुगावूंला।—फुलवाड़ी

उ०—१ कवूड़ो भर हिरण दोनुं राजकंवर नै मारग तांई पुगावण नै आया —फुलवाड़

पुगावणहार, हारो (हारी), पुगावणियो—वि०।

पुगाविम्रोड़ो, पुगावियोड़ो, पुगाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पुगावीजणो, पुगावीजबो—कर्म वा०।

पुगावियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो'।

(स्त्री० पुगावियोड़ी)

पुग्गळ, पुग्गल—१ देखो 'पुदगळ' (रू.भे.)

उ०—अरगाहैं पूरण गलणें नभ पुग्गल धम्म। समय वलिय महुत्त दीह पख मासनें साल।—स.कु.

२ देखो 'पूंगळ' (रू.भे.)

पुड़–सं०पु० [?] १ तह, परत। उ०—वमि पावक लोह भड़ो वरसै, दगियां कळ पांत घड़ी दरसै। करणी गढ ग्रास घणी कड़कै, धरणी गढ़ धूजि फणी धड़कै।—मे.म.

२ नगारे या ढोल पर मंढा जाने वाला चमड़ा।

उ०—फुटै पुड नोबत पड़ी, टूटै डंड निसांण। पेख सहेली पीव रै, पूंचै बधियो पांण।—वी.स.

रू०भे०—पुड़ि, पुड़िवाल।

पुड़ऊंध–सं०पु० [सं०पुट+अवमूर्द्ध] १ उथल-पुथल। उ०—लाख नेस लूटिजै, देस कीजै पुडऊंधै। जितो भूक हुय जाय, सूक साहे पय रूंधै।—रा.रू.

पुड़च्छी, पुड़छी–सं०स्त्री० [देशज] १ घोड़े की पीठ में 'मुद्दा' और 'पुट्ठे' के मध्य का भाग। उ०—उर ढाल सारीख चौड़ा अलल्ला, भिड़ज्जां बाहु जंघ वे पक्ख भल्ला। पुड़च्छी जिम्रां तोछ पै बंध पूरा, संग्राम विखै हांम पूरंत सूरा।—वचनिका

२ 'पड़छी' (रू.भे.)

रू०भे०—पड़च्छ, पड़च्छी, पड़छ, पड़छी।

पुड़तक्काळ—देखो 'पुरतगाळ' (रू.भे.)

उ०—सीरोही री नीपनी, वे भांगळ वाढ झेरियां थका जनैव मगरेब पुड़तक्काळ सेफ विलायती भुजरी बिरांणपुरी हवसांनी फिरंगी।

—रा.सा.सं.

पुड़दड़ी–सं०स्त्री० [सं० पुट+द्रढी] कटारी रखने का बना चमड़े का उपकरण। उ०—मीर म्हे नकां मीरी विसंभर, गांज कुंण सकै 'जसराज' रा गांव। राव एक थाप ऊथापिया रिड़मलां, रिड़मलां पुड़दड़ी राखिया राव।—बां.दा.

पुड़पुड़ी–सं०स्त्री [सं० पुट् ?] गुदगुदी। उ०—चौरासी भ्रासण रा भेद कीजै छै। अस्टांग मिळण चुंबण, अधरपांन, नखदांन, कुचमरदन, पुड़पुड़ी, चूंहटी, चसका, मसका, हांजी, ना जी इण भांति कांम री कुहक पड़िनै रही छै।—रा.सा.सं.

पुड़ि—देखो 'पुड़' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—१ अगवाट दुहेली कुळवट भारी, वैरी ऊक थनोख व्रत। जैचंद कहै जीवि चा जग पुड़ि, पनरह ऊपहरां परत।

—जैचंद सोलंकी री गीत

२ देखो 'पुड़ो' (रू.भे.)

पुड़िको—देखो 'पुड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)

पुड़ियाल—देखो 'पुड़' (मह., रू.भे.)

उ०—पड़ै ढोल पुड़ियाल वरंग गुड़ियाल चहुं थळ।

—पनां वीरमदे री वात

पुड़ियो–सं०पु० [देशज] १ चक्की का पाट।

२. देखो 'पुड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)

३ देखो 'पुड़ी' (अल्पा., रू.भे.)

पुड़ी-संस्त्री० [सं० पुटिका, प्रा० पुडिया] १ हाथ चक्की का आटा गिरने के लिए चारो ओर बना हुआ लकड़ी, मिट्टी, पत्थर या लोहे का घेरा।

२ आटे की छोटे आकार की बनी हुई रोटी जो घी में तली जाती है।

३ मोड़ या लपेट कर संपुट के आकार का किया हुआ कागज या पत्ता जिसके भीतर कोई वस्तु रखी जाय।

४ देखो 'पुड़' (रू.भे.)

रू०भे०—पुड़ि, पुड़ियो, पुड़ी, पूरी।

पुड़ौ-संपु०—१ बड़ी पुड़िया या बंडल।

२ चूतड़।

अल्पा०—पुड़ियौ।

पुचकार-संस्त्री० [अनु०] प्यार जताने के लिए ओठों से निकला हुआ चूमने का शब्द, चुमकार।

रू०भे०—पुचकारी, पुचकारौ, बुचकार, बुचकारी, बुचकारौ।

अल्पा०—बुचकौ।

पुचकारणौ, पुचकारबौ-क्रि०स० [अनु०] १ स्नेह प्रदर्शित करते हुए ओष्ठों से विशेष प्रकार की ध्वनि करना।

उ०—पाणी प्रेरणिका पापल पुचकारै, बापू बापू कर थापल बुचकारै।—ऊ.का.

२ प्यार से शरीर पर हाथ फेरना। उ०—वीर स्त्री पती रै चढण रा मरजीदान घोड़ा नै हाथ सूं पुचकार नै कह रही छै अर आ भी जांण रही छै के म्हारा धणी री फतै इण हीज घोड़ा रै प्रताप सूं छै।—वी.स.टी.

पुचकारणहार, हारौ (हारी), पुचकारणियौ—वि०।

पुचकारिओड़ौ, पुचकारियोड़ौ, पुचकारयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पुचकारीजणौ, पुचकारीजबौ—कर्म वा०।

बुचकारणौ, बुचकारबौ—रू०भे०।

पुचकारियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ ओष्ठों से एक विशेष प्रकार की ध्वनि करते हुए स्नेह प्रदर्शित किया हुआ।

२ प्यार से शरीर पर हाथ फेरा हुआ।

(स्त्री० पुचकारियोड़ी)

पुचकारी—देखो 'पुचकार' (रू.भे.)

पुचकारौ-संपु०—देखो 'पुचकार' (रू.भे.)

पुच्छ, पुच्छी—देखो 'पूंछ' (रू.भे.)

उ०—१ सदा मिळै बिल स्याळ रै, वच्छ पुच्छ खुर चाम। मिळै गयां म्रगराज-ग्रह, गजरद मोती ग्राम।—बां.दा.

उ०—२ जरासिंघ लौ अंगमें जोर पायौ, पनग्गी मनूं पाय पुच्छी दबायौ।—ला.रा.

पुच्छणौ, पुच्छबौ—देखो 'पूछणौ, पूछबौ' (रू.भे.)

उ०—पंडु पुच्छीउ पंडु पुच्छीउ विदुर घरि कन्हु, रोसारुणु चल्लीयउ मग्गि मिलिउ सहूइ नावइ।—पं.पं.च.

पुच्छणहार, हारौ (हारी), पुच्छणियौ—वि०।

पुच्छिओड़ौ, पुच्छियोड़ौ, पुच्छयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पुच्छीजणौ, पुच्छीजबौ—कर्म वा०।

पुजनीक—देखो 'पूजनीक' (रू.भे.)

उ०—तरै वीरम जी कयौ आपणै ही फरास रौ ढोल करावौ। तरै जोयां री मसीत ऊपर फरास थौ ऊ फरास जोयां रै पुजनीक छै। सो फरास बढ़ायनै वीरमजी ढोल करायौ।—रा.वं वि.

पुजा—देखो 'पूजा' (रू.भे.)

पुजाई-संस्त्री० [सं० पूज्+रा.प्र.आई] १ पूजने की क्रिया या भाव।

२ पूजा कराने का पारिश्रमिक।

पुजाड़णौ, पुजाड़बौ—देखो 'पूजाणौ, पूजाबौ' (रू.भे.)

पुजाड़णहार, हारौ (हारी), पुजाड़णियौ—वि०।

पुजाड़िओड़ौ, पुजाड़ियोड़ौ, पुजाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पुजाड़ीजणौ, पुजाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पुजाड़ियोड़ौ—देखो 'पूजायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पुजाड़ियोड़ी)

पुजाणौ, पुजाबौ-क्रि०स० ('पूजणौ' क्रि० का प्रे०रू०) १ किसी को देवपूजा में प्रवृत्त कराना, दूसरे से पूजा कराना। उ०—पाखंड खंड दव दंड अखंड पुजायौ। धरणी तळ को बल-बंड प्रचंड धुजायौ।—ऊ.का.

२ अपनी पूजा या प्रतिष्ठा कराना।

पुजाणहार, हारौ (हारी), पुजाणियौ—वि०।

पुजायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पुजाईजणौ, पुजाईजबौ—कर्म वा०।

पूजणौ, पूजबौ—सक०रू०।

पुजाड़णौ, पुजाड़बौ, पुजावणौ, पुजावबौ, पूजाणौ, पूजाबौ—रू०भे०

पुजापौ-संपु० [सं० पूज+रा० प्र० पो] देवपूजन की सामग्री।

मुहा०—पुजापौ बिखेरणौ—पदार्थों को अस्त-व्यस्त करना।

रू०भे०—पूजापौ।

पुजायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ देवपूजा में प्रवृत्त कराया हुआ। दूसरे से पूजा कराया हुआ।

२ अपनी पूजा-प्रतिष्ठा कराया हुआ।

(स्त्री० पुजायोड़ी)

पुजारी, पुजारौ-संपु० [सं० पूज] (स्त्री० पुजारण, पुजारिण, पूजरण, पूजारिण) १ किसी देवमंदिर में देवमूर्ति की पूजा करने के लिए नियुक्त व्यक्ति, किसी देवमूर्ति की पूजा करने वाला व्यक्ति।

उ०—१ गाजै ग्रह मांझल बैठौ मुज्झ, पुजारा पंच चढावै पुज्झ। सझा थी तुम्ह तुम्हा थी संभ, उपज्जै-जेम अकासा अंभ।—ह.र.

उ०—२ राजा आपरा हाथ सूं पुजारी नै खावण सारू वो अमर-फळ दियौ। पुजारण ई पुजारी रै पावतो ऊभी ही। बोखी हंसी हंसतां वा राजा नै हाथ जोड़ वीणती करी—पिंडतजी जवांन छिंयां म्हनै घर सूं तगड़ देवैला।—फुलवाड़ी

रू०भे०—पूजारी, पूजारू, पूजारौ।

पुजावणो, पुजावबो—देखो 'पुजाणो, पुजाबो' (रू.भे.)

पुजावणहार, हारौ (हारी), पुजावणियो—वि०।

पुजाविग्रोड़ो, पुजावियोड़ो, पुजाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पुजावीजणो, पुजावीजबो—कर्म वा०।

पुजावियोड़ो—देखो 'पुजायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुजावियोड़ी)

पुज्झ—देखो 'पूज' (रू.भे.)

उ०—गाजै ग्रह मांझल बैठो मुज्झ, पुजारा पंच चढावै पुज्ज। सब्बी थी तुम्ह तुम्हां थी सभ, उपज्जै जेम प्रकासा ग्रंभ।—ह.र.

पुट-सं०पु० [स० पुट] १ तह, परत, पल्ला।

२ गिलाफ, खोल, आच्छादन।

३ दोने के आकार का पदार्थ, कटोरेनुमा पदार्थ।

ज्यूं—अंजळि-पुट, कर-पुट।

४ कोई भी छिछला गोल बर्तन, दोना, कटोरा।

५ ओषध पकाने या भस्म तैयार करने का मुहबंद बर्तन।

६ मुहबंद बर्तन में ओषध पकाने की या भस्म बनाने की विधि विशेष।

वि०वि०—एक गज चौड़ा और एक गज गहरा (लगभग २७ इंच) खड्डा कर उसमें गोबरी भर बीच में ओषध के संपुट को रख कर अग्नि देने को गज-पुट अग्नि कहते हैं। गज-पुट के लिए २॥ हाथ का गोल खडडा बना कर पक्की ईंटों से बंधवा लेने से २७ इंच का लगभग खड्डा तैयार हो जाता है। खड्डे की गोलाई जितनी नीची हो उससे ऊपर के भाग में ३, ४ इंच कम करना चाहिए। इस रीति से खड्डा तैयार होने पर अग्नि प्रमाण में लगती है। ईंटों के बांधे बिना अग्नि का तेज जमी में बहुत चला जाता है। संपुट के ऊपर एक दो कण्डों की तह रख कर इस तरह संपुट को बीच में रखना चाहिए। संपुट स्वांग शीतल होने पर ही गज-पुट से निकालना चाहिए। इसी प्रकार गड्ढे के विस्तार के हिसाब से महापुट, कुक्कुट-पुट, बराह-पुट आदि बनते है।

७ वैद्यक के अनुसार किसी चूर्ण आदि को किसी प्रकार के रस या तरल पदार्थ में बार-बार मिला कर घोटना और सुखाना जिससे उक्त पदार्थ का कुछ गुण आ जाय। भावना।

उ०—विस में मिठास न हुवै, वळी दूधां ही सूं पुट दियां।

—ध.व.ग्रं.

८ रंग या हलका मेल देने के लिए धुले हुए वस्त्र को रंग या अन्य तरल पदार्थ में डुबाना, बोर।

ज्यूं—इण रे गुलाबी रंग री पुट दे दो, इण रै लाल रंग री पुट दे दो।

९ ढकने वाला पदार्थ, आच्छादन।

ज्यूं—करण-पुट, नेत्र-पुट।

उ०—नमो अग्राह्यारू स्रवनपूट सारू सत नमो।—ऊ.का.

१० नगर, शहर (ह.नां.)

वि० [अनु०] उलटा, औंधा। उ०—दो तीन जणां उचक'र आया अर जरै जरै दो लाठी लादाळै रै जमाय दी। दो थप्पड़ बापड़ै छोरा रै लागा। लादाळो गुलांच खा'र पुट पड़ियो।

—घरसगांठ

पुटपड़ो-सं०पु० [देशज] १ गाल। उ०—फेर तरै दीठी जो पांख्यां नीसर आई, पुटपड़ा बैठ गया।—साह रांमदत्त री वारता

२ देखो 'पापड़ो' (१) (रू.भे.)

पुटपाक-स०पु०यौ० [स०] पत्तों के दोने में रख कर ओषध बनाने का ढंग या क्रिया।

पुटभेद, पुटभेदण, पुटभेदन-सं०पु० [सं० पुटभेदन] १ नगर, शहर (अ.मा., डि.को.)

२ वाद्य-यंत्र विशेष।

पुटाळ, पुटळो-सं०पु० [सं० पुट+आलुच्] तलवार की मूठ के मध्य भाग में पकड़ने के स्थान पर उभरे भाग में किसी ओर का ढळवां भाग।

पुटियो-सं०पु० [देशज] चिड़िया से भी छोटा एक प्रकार का पक्षी विशेष जो आकाश की तरफ पैर करके सोता है।

उ०—१ आछो मांन अमाव, मतहीणा केई मिनख। पुटिया की ज्यूं पाव, राखै ऊंचा राजिया।—किरपारांम

पुट्टळो—देखो 'पोट' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—सूरां हूरां सत्य है, गळ-बत्थ मिळाया। खंडै राय खिल्हार हू, रन फग्ग रचाया। पात गदा के पुट्टळो, फटकार फवाया। घाय हब्बकं रंग के जळजंत चलाया।—व.भा.

पुट्ठो-सं०पु० [सं० पृष्ठ या पृष्ठ] १ शरीर के पृष्ठ भाग में चूतड़ के ऊपर का भाग, विशेषकर चौपायों के चूतड़ का ऊपरी भाग।

२ किसी पुस्तक का ऊपरी भाग।

पुठाणो, पुठाबो-क्रि०स० [?] गाड़ी के पूठी लगवाना।

पुठाणहार, हारौ (हारी), पुठाणियो—वि०।

पुठायोड़ो—भू०का०कृ०।

पुठाईजणो, पुठाईजबो—कर्म वा०।

पुठाड़णो, पुठाड़बो, पुठावणो, पुठावबो—रू०भे०।

पुठायोड़ो-भू०का०कृ०—पूठी लगाई हुई गाड़ी या शकट।

पुठो—देखो 'पूठो' (रू.भे.)

पुढणो, पुढबो—देखो 'पोढणो, पोढबो' (रू.भे.)

उ०—'कांम कंदला' कही कही, ऊठि आलिंगन देय। सबल भुजा

भोडी करी, पुढइ पच्छर लेय।—मा.कां.प्र.

पुढगर-सं०पु० [सं० पुथकर] विलाप, रुदन। उ०—होय सबद हा हंत पड़ पुढगर भयंकर। कर हुंता घर कांम, नांख थावै नारीं नर। है कासूं की हुवो, जिकै जिण जिण नै वतळावै। केवळ हाहाकार, प्रगट कोई जाब न पावै।—साहिबो सुरतांणियो

पुढवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—पुढवी पांणी अगनि, अनै चौथो वळि वाय। कालीचक्र असंख्याता तांई जीव रहाय।—घ.व.ग्रं.

यौ०—पुदवीकाय, पुदवोखनन।

पुण—१ देखो 'पुन' (रू.भे.)

उ०—तसु घरि बइसी राउ सा वाली मागइ। वात स वेढ़ीवाहा पुण चीति न लागइ।—पं.पं.च.

२ देखो 'पुण्य' (रू.भे.)

उ०—इणि भांति सूं च्यारि रांणी त्रिणि खवासि गंगाजळ सिनांन करि, हीर चीर चांमीर परिमळ पहिरि, पांन कपूर खाइ दांन पुण करण लागी।—वचनिका

३ देखो 'पुरण' (रू.भे.)

उ०—लघू मध्य रगण फळ अतक पत पवन लख, तात अतु जरा तन रगत आतंख। रखेसुर अंगारख भेड पुण रोद्र रस, उजेणी नृपत कुळ सूद्र रिख अंख।—र.रू.

पुणग-सं०स्त्री० [?] १ बूंद, जळकण। उ०—१ दादू मीठा रांम रस, एक घूंट कर जाउं। पुणग न पीछे को रहै, सब हिरदे मांहि समाउ।—दादूवांणी

उ०—२ जाया रजपूतांणियां, बीरत दीधी वेह। प्रांण दियै पांणी पुणग, जावा न दियै जेह।—बां.दा.

२ अणुमात्र, किंचित।

३ देखो 'पनग' (रू.भे.)

उ०—घर नोगुल दीवउ सजळ, छाजइ पुणग न माइ। मारू सूती नींद्र भरि, साल्ह जगाई आइ।—ढो.मा.

पुणच—१ देखो 'पुणचो' (मह०, रू.भे.)

२ देखो 'पणच' (रू.भे.)

उ०—विळकुळियौ बदन जेम आकारचो, संग्रहि धनुख पुणच सर संधि, क्रिसन रुकम आउध छेदण कजि, वेलखि भणी मूठि द्रिठि वंधि।—वेलि.

रू०भे०—पिणच।

पुणचियौ—देखो 'पुणचो' (अल्पा०, रू.भे.)

पुणची-सं०स्त्री० [प्रकोष्ठ] १ कलाई पर धारण किया जाने वाला सोने का आभूषण विशेष। उ०—पुणचा जड़त जड़ाऊ पुणची, कल आजांनभुजा केयूर। वैजंती बळ मुगत विसाळा, प्रगट हियै माळा भरपूर।—र.रू.

रू०भे०—पुंचिका, पुंची, प्रहुंची, प्रांची, प्रोंची।

अल्पा०—पूंचियौ।

पुणचौ-सं०पु० [सं० प्रकोष्ठ] १ अग्र बाहू व हथेली के बीच का भाग, कलाई, मणिबंध। उ०—थोड़ी ताळ पछै उण चौधरण री बेटी आई। हाथा में पुणचां तांई मूठियौ अर खवांखांच चूड़ी देखनै बोल्यौ—हाथां मे घोळा घोळा अै हाडक क्यूं पळेटिया है।

—फुलवाड़ी

२ कलाई पर धारण करने का आभूषण विशेष।

रू०भे०—पहुंचौ, पहूंचौ, पुंचियौ, पुंहचौ, प्रांचौ।

अल्पा०—पुणचियौ, पूंचियौ।

मह०—पुणच, प्रोंच।

पुणछ-सं०पु०[?] १ पशु के पूंछ के पास का भाग, पशु का चूतड़।

२ देखो 'पणच' (रू.भे.)

पुणणौ, पुणबौ-क्रि०स० [सं० पणनं] १ बोलना, कहना।

उ०—१ पहलै तीजै बार पढ, उभये वेद इग्यार। पंचा दूहा सो पुणै, सुकव जिकै मतसार।—र.ज.प्र.

उ०—२ पुणै भांण राघौ रहै केम पेखै। दुवै भाइयां, एक सारीख देखै।—सू.प्र.

२ रचना, बनाना, कथना। उ०—रुकमणि गुण लखण रूप गुण रचवण, वळि तास कुण करै बखांण। पांचमौ वेद भाखियौ पीथळ, पुणियौ उगणीसमौ पुरांण।—दुरसौ आढौ

पुणणहार, हारौ (हारी), पुणणियौ—वि०।

पुणिअोड़ौ, पुणियोड़ौ, पुण्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पुणीजणौ, पुणीजबौ—कर्म वा०।

पणणौ, पणबौ—रू०भे०।

पुणवीर-स०पु०—राठौड़ों की तेरह शाखाओं में से एक शाखा।

पुणिंद—देखो 'फणींद्र' (रू.भे.)

उ०—मारू घूंघटि दिट्ठ मइं, एता सहित पुणिंद। कीर, भमर, कोकिल, कमळ, चंद, मयंद, गयंद।—ढो.मा.

पुणि—१ देखो 'पुन्य' (रू.भे.)

२ देखो 'पुन' (रू.भे.)

उ०—परमेसर प्रणवि प्रणवि सरसति पुणि, सदगुरु प्रणवि त्रिण्हे ततसार। मंगळरूप गाइजै माहव, चार सु ए ही मंगळचार।

—वेलि.

पुणियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ बोला हुआ, कहा हुआ, रटा हुआ।

२ रचा हुआ, बनाया हुआ।

(स्त्री० पुणियोड़ी)

पुणियौ—१ देखो 'पुरणियौ' (रू.भे.)

उ०—स्वांमी बोलया—गाडो नहीं होणे पुणिया ते गधेड़ा आवता ते ऊपर बेसांण नै गांम में आंण्यो तिण नै कांई थयो।—भि.द्र.

२ देखो 'पुरण' (अल्पा.,रू.भे.)

पुणु—देखो 'पुण्य (रू.भे.) (जैन)

पुणोवि—
उ०—तरुणी पुणोवि गहियं परीयच्चय मितरेण पिउ दिट्ठं। कारण कवण सयाणे दीपक्को वूण ए सीसं।—ढो.मा.

पुण्ण—देखो 'पुण्य' (रू.भे.)

पुण्णट्ठा-सं०पु० [सं० पुण्य-नष्ट] मृत मनुष्य के पीछे पुण्यार्थ बनाए गए भोजन को लेने पर लगने वाला दोष (जैन)

पुण्णमासि, पुण्णमासी—देखो 'पूरणमासी' (रू.भे.)

पुण्णिम—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)
उ०—ध्यांन समाधी छोरिकैं मन चित्र वढाया। तदिन घुरि वितान के, घन भाव विधाया। सारद पुण्णिम का ससी जिम वारद छाया। दक्खि धरित्ती पक्ख में, इक ग्रोघ लखाया।—वं.भा.

पुण्य-वि० [सं०] १ पवित्र, शुद्ध (म्र.मा.)
२ मंगलात्मक, शुभ।
ज्यूं—कागो पुण्यधाम है।
३ धर्मशास्त्रानुसार उत्तम फल देने वाला।
ज्यूं—पुण्य काम।
४ उत्सव संबंधी, धूमधाम का, धूमधड़ाका।
ज्यूं—दिवाळी पुण्य दिन है।
५ नेक, ईमानदार, धार्मिक।
६ मनोहर, सुंदर।
७ कोमल* (डि.को.)
८ प्रसन्नताकारक, ग्राल्हादप्रद।
यौ०—पुण्यलक्ष्मी।
सं०पु०—१ वह कार्य जिसका फल शुभ हो, शुभादृष्ट, सुकृत। (डि.को., ह.नां.मा)
२ शुभ कर्मों का सचय, जिसका फल ग्रागे जाकर मिलता हो।
उ०—१ ठाला भूला ठोठ, कुबुध नहिं छोडै काल्हा। पुण्य गया परवार, व्यसन जद लागा वाल्हा।—ऊ.का.
उ०—२ सचित पूरब करम ना, फळ भोगवीइ पुण्य। जिहां वाविउ तिहां ऊगमइं, ग्रण वाविऊं तिहां सून्य।—मा.कां.प्र.
३ शुभ कर्मों का बंध (जैन)
४ विशुद्धता, पवित्रता (म्र.मा.)
५ परोपकार का कार्य। उ०—तद पुरांणीक पंडित राजा नूं कही 'महाराज भूखी ग्रात्मा नूं जो भोजणु देवै पुण्य री कोई पार नहीं पायै।—साह रांमदत्त री वारता
६ दान।
रू०भे०—पन, पुण, पुणि, पुणु, पुण्ण, पुन, पुनि, पुनियर, पुनुं, पुनु, पुन्न, पुन्नि, पुन्य, पुन्यु, पून, पून्य, पोन्यु।

पुण्यक-सं०पु० [सं०] १ व्रत, ग्रनुष्ठान ग्रादि करने से पुन्य होता है।
२ वह व्रत या उपचार जो पुत्र-कल्याण के लिए पुत्रवती स्त्री करती है।
३ विष्णु।

पुण्यकरता-सं०पु०यौ० [सं० पुण्यकर्तृ] पुण्य कर्म करने वाला।

पुण्यकरम-सं०पु०यौ० [सं० पुण्यकर्मन्] वह कर्म जिसके करने से पुण्य होता हो।

पुण्यकाळ-सं०पु०यौ० [सं० पुण्यकाल] दान ग्रादि पुण्य कर्म करने का समय।

पुण्यक्षेत्र, पुण्यखेत-सं०पु०यौ० [सं० पुण्यक्षेत्र] तीर्थ जहां पर जाने से पुण्य होता हो।

पुण्यजन-सं०पु०यौ० [सं०] १ राक्षस, ग्रसुर (डि.को.)
२ यक्ष (डि.को.)

पुण्यजनेस्वर-सं०पु० [सं० पुण्यजनेश्वर] कुबेर (ह.नां.मा.)
रू०भे०—पुनजनेसर, पूनजनेसुर।

पुण्यजोग—देखो 'पुण्ययोग' (रू भे.)

पुण्यतिथ, पुण्यतिथि-सं०स्त्री०यौ० [सं० पुण्यतिथि] १ शुभ या मांगलिक कार्य करने का कोई उपयुक्त दिन।
२ शुभ कर्मो के करने का दिन। दान, पुण्य ग्रादि करने का दिन।

पुण्यपुरुस-सं०पु०यौ० [सं० पुण्यपुरुष] धर्मात्मा ग्रौर पुण्यात्मा पुरुष।

पुण्यभूमि-सं०स्त्री०यौ० [सं०] ग्रार्यावर्त देश, भारतवर्ष।

पुण्ययोग-स०पु० [सं०] ग्रच्छे कर्मों के प्राप्त होने का योग, शुभ योग।
रू०भे०—पुण्यजोग, पुनजोग, पुनाजोग।

पुण्यवंत, पुण्यवांन-वि० [स० पुण्यवान] (स्त्री० पुण्यवती) शुभ कार्य करने वाला, सुकृती। उ०—१ तास तणी माता स्री 'जम्बूवती' रे, निरमळ गंगा नीर। पुण्यवंत खट दरसण सेव करइ सदा रे, धरम मूरति मति धीर।—पं.पं च.
उ०—२ गंग प्रवाहित रयण माहि घालिउ मंजूसं। कीजइ पातकु पुण्यवंति कइ लाज कि रीसं।—पं.पं.च.
रू०भे०—पुन्यवंत, पुन्यवांन।

पुण्यस्थान-सं०पु० [सं० पुण्यस्थान] १ पवित्र स्थान, तीर्थ स्थान।
२ जन्मकुण्डली में लग्न से नवां स्थान (भाग्यस्थान)

पुण्याई-सं०स्त्री० [सं० पुण्य+रा.प्र. ग्राई] पुण्य का प्रभाव, पुण्य का फल। उ०—एकेंद्रिय सूं नीकल्यो जीवा, इंद्रिय पाई दोय। पुण्याई ग्रनंती वधी जीवा, वाल सिखा न्याये जोय।—जयवांणी
रू०भे०—पुनियाई, पुन्याई।

पुण्यातमा, पुण्यात्मा-वि० [सं० पुण्यात्मन्] पुण्यशील, धर्मात्मा।
उ०—१ पारिख साह भला पुण्यात्मा, सांमीदास सूरदासो जी। पदठवणो कीधो मन प्रेम सुं, वित खरच्या सुविलासो जी। —ध.व.ग्रं.
उ०—२ पाले हेत पुण्यात्मा।—ध.व.ग्रं.
रू०भे०—पुन्यात्मा।

पुण्यारथ-वि० [सं० पुण्यार्थ] १ वह जो पुण्य-प्राप्ति के विचार से किया गया हो।
२ परोपकार के निमित्त दानादि में दिया गया हो।
सं०पु०—१ परोपकार की भावना से दिया जाने वाला धन।
२ परोपकार की भावना।
अव्य०—१ लोकोपकार या शुभ फल की प्राप्ति के विचार से।
रू०भे०—पुंन्यारथ।

पुण्योदय-सं०पु० [सं०] शुभ कर्मों के फलस्वरूप होने वाला भाग्योदय।
रू०भे०—पुन्योदय।

पुत-सं०पु० [सं० पु०+इति, पृषो० साधुः] १ एक नरक का नाम जिससे पुत्र होने पर ही उद्धार मिलता है।
२ नितम्ब, चूतड़ (डि.को.)
३ देखो 'पुत्र' (रू.भे.)

पुतना—देखो 'पूतना' (रू.भे.)

पुतर—देखो 'पुत्र' (रू.भे.)
उ०—१ जे कोई धूजी ने परणी-पाती गावै। परणी-पाती गावै गोद पुतर खेलावै।—लो.गी.
उ०—२ पिव ! रघुवर वर निज भवन बुलावो, पुतरी परणावो।
—गी.रां.
(स्त्री० पुतरी)

पुतळी—देखो 'पूतळी' (रू भे.)
उ०—१ कै वा देवी देवां घरी, कै वा चंद्र वदन उणिहार। कइ बा देवळ पुतळी, ईसीय छइ प्रभुजी ! अमारड़ी नार।—बी.दे.
उ०—२ पंचरंग दीधा ढोलिया, पुतळी पागे जांण। सेझ सुंहाली अति भली, रेसम वणीयो वांण।—ढो.मा.

पुतळौ—देखो 'पूतळौ' (रू.भे.)

पुताई-स०स्त्री० [स० पूतनं] १ पोतने की क्रिया या भाव।
२ इस कार्य की मजदूरी।
रू०भे०—पोताई।

पुतारणौ, पुतारबौ—देखो 'पूंतारणौ, पूंतारबौ' (रू.भे.)
पुतारणहार, हारौ (हारी), पुतारणियौ—वि०।
पुतारिओड़ौ, पुतारियोड़ौ, पुतारघोड़ौ—भू०का०कृ०।
पुतारीजणौ, पुतारीजबौ—कर्म वा०।

पुतारियोड़ौ—देखो 'पूंतारियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पुतारियोड़ी)

पुती, पुतीय—देखो 'पुत्री' रू.भे.)
यौ०—पुतीयदान।

पुतीयदान-सं०पु०यौ० [सं० पुत्रीदान] कन्यादान।

पुतौ, पुत्त, पुत्तर—देखो 'पुत्र' (रू.भे)
उ०—१ आय माता नें इम कहे, मैं सुण्या वीर ना माय। धन कृतारथ तुम पुता ! इम बोली छै माय।—जयवांणी
उ०—२ प्रसिद्ध बुद्धि सिद्धि निद्ध रिद्धि व्रद्धि पूरए। कलूरा पुत्त किति वित्त बढते सनूर ए।—ध.व ग्रं.
उ०—३ धन बाई, तुळछां, धन थारो नांम। धन बाई, तुळछां, धन उत्तम कांम। वनमाळी रै पुत्तर जायौ। जिण तुळछां रो बन रोपायौ।—लो.गी.

पुतळविधान-सं०पु० [सं० पुत्तल+विधान] अस्थियों के अभाव में पुतला बना कर किया जाने वाला विधान या क्रिया (ब्राह्मण)
रू०भे०—पूतळविधि।

पुत्ति—१ देखो 'पूरति' (रू.भे.)
उ०—सुमील सम्य सच्छरं स्तुति प्रमांण सोहनें। अमंग पुत्ति मोज के मनोज मूरति मोहनें।—ऊ.का.
२ देखो 'पुत्री' (रू.भे.)

पुत्तिका-सं०स्त्री० [सं०] १ तितली (डि.को.)
२ मधुमक्षिका।
३ दीमक।

पुत्तु, पुत्तौ, पुत्र—सं०पु० [सं० पुत्र] पुत्र, लड़का, बेटा।
उ०—१ ए पुत्तु तसु कूखि ऊपन्नउ। विद्या लक्षण गुण संपन्नउ।
—पं पं.च.
उ०—२ तुं जग जीवन प्रांण आधारा। तुं मेरा पुत्ता बहुत पियारा।—स.कु.
उ०—३ सूरज पुत्र करन्न, पेट कूंता उतपन्नो। पवन पुत्र हणमंत, उदर अजनो उपन्नो।—गु.रू.बं.
२ बालक (अ.मा.) (ह.नां.मा.)
पर्या०—अगज, अपकंठ. अरभ, अबुध, कुमार, कुळवर, कोमळ, खीरकंठ, छावौ, छोकरो, जायौ, जोध, डावडौ, डिमतनु, डीकरो, तनय, तात, थप, धोटौ, नंद, पाक, पोत, प्रथुक, बाळ, लघुवेस, ललत, संमोभ्रम, (समोभ्रम), साव, सिवाई, सिसु, सुजाव, सुत, सूनु, स्तन-धय।
रू०भे०—पुत, पुतर, पुतौ, पुत्त, पुत्तर, पूत, पूत, पूत्तु, पूत्रु।
अल्पा०—पूतड़लौ, पूतड़ौ, पूतरौ, पूत्रौ।

पुत्रका—देखो 'पुत्रिका' (रू.भे.)

पुत्रदाएकादसी-सं०स्त्री० [स० पुत्रदाएकादशी] श्रावण के शुक्ल पक्ष की एकादशी।

पुत्रवंती, पुत्रवती-सं०स्त्री० [सं० पुत्रवती] वह स्त्री जिसके पुत्र हो, पुत्रवाली। उ०—१ हुतै दीध असीस आणंद हूतौ। अखं भाग सोभाग हो पुत्रवंती।—सू.प्र.
उ०—२ कांमा वरखतो कांम दुधा किरि, पुत्रवती थी मन प्रसन। पुहप करणि करि केसू पहिरे, वनसपती पीळा वसन।—वेलि.

पुत्रि, पुत्रिका—देखा 'पुत्री' (रू.भे.)
उ०—'द्रुम' राजा नी पुत्रिका, 'प्रभावती' इण नांम।—जयवांणी

पुत्री-सं०स्त्री० [सं०] कन्या, बेटी। उ०—रयणायर पुत्री रमा,

दाटी कर दुरभाव। रणायर ते डूबवै, सूंमां केरी नाव।
—वां.दा.

पर्या०—आतमजा, कन्या, कुळजा, तनिया, तनुजा, दुहिता, धी, बेटी, वत्सा, सुता।

रू०भे०—पुतरी, पुती, पुतीय, पुत्ति, पुत्रका, पुत्रि, पुत्रिका, पूती।

पुत्रेस्टि-सं०पु० [सं० पुत्रेष्टि] पुत्र प्राप्ति हेतु किया जाने वाला यज्ञ।

पुत्रोछव, पुत्रोत्सव-सं०पु० [सं० पुत्रोत्सव] पुत्र जन्म पर मनाया जाने वाला उत्सव।

पुत्रौ—देखो 'पुत्र' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—ईस्वर उमया पुत्रौ, तस्मै गुणेसाय नमः।—गु.रू.बं.

पुदगळ, पुदगल—देखो 'पुद्गळ, पुद्गल' (रू.भे.)
(अ.मा., डिं.को., ह.नां.मा.)

उ०—पुदगल तणीअ संख्या जांणि, फिरतइं जीव न कीधी कांणि।
—चिहुंगति चउपई

पुदीनो—देखो 'पोदीनो' (रू.भे.)

पुद्गळ, पुद्गल-सं०पु० [सं० पुद्गल] १ शरीर।

उ०—दोही वीरां रा तीव्र दोही तरफां कंकटां नूं काटि पुद्गळां में पेठि तूटिया।—वं.भा.

२ पूर्ण गलन धर्म वाला द्रव्य (जैन)

रू०भे०—पुगळ, पुदगळ, पुदगळ, पूगळ, पोग्गल, फुदगळ।

पुन-अव्य० [सं० पुनः] १ नए सिरे से, फिर। उ०—अन भायन जोयन भ्राड करै। पुन आय न कोय न खाड परै।—ऊ.का.

२ अनन्तर, पीछे से।

रू०भे०—पुणि, पुनि।

३ देखो 'पुण्य' (रू.भे.)

उ०—१ ऊंची जातां रा नीचा पुन आया। खोडां काढण री खोडा खिड़काया।—ऊ.का.

उ०—२ सावध दान में पुन सरधै तिण सूं समकत चरित्र एक ही नहीं।—भि.द्र.

मुहा०—१ पुन खूटणा—पूर्व संचित शुभ कर्मों का ह्रास हो जाना।

२ पुन परवारणा—पूर्वोपार्जित शुभ कर्मों का शुभ फल नष्ट होना।

३ पुन पूरा होणा—देखो 'पुन खूटणा'।

पुनजनेसर—देखो 'पुण्यजनेसर' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पुनजोग—देखो 'पुण्ययोग' (रू.भे.)

उ०—१ विहार करता आविया रे, साघू तिण हिज गाम। भूला चूका पुनजोग सूं रे, जोग मिलियो छै नामी।—जयवांणी

उ०—२ पुनजोग कठै मिळणो करणी। जगती पर साख भरै जिण...।—पा.प्र.

पुनम, पुनमी, पुनम्म—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)

उ०—बसंत कोकिला सरीखी मधरी वांणी। आरीसा सरीखा कपोळ। मुख पुनम रै चांद ज्यूं सोळै कळा संपूरण।
—फुलवाड़ी

पुनरजन्म-सं०पु० [सं० पुनर्जन्म] मरने के बाद किसी भी योनि में प्राप्त होने वाला दूसरा जीवन, दुबारा मिलने वाला जन्म।

पुनरजीवण-सं०पु० [सं० पुनर्जीवनम्] १ मरणासन्न को पुनः प्राप्त होने वाला जीवन, पुनर्जीवन। उ०—तीं कर मुवा। पुनरजीवण ऊठिया। राजा नूं देखि आसीस दीन्ही, पुरुषां री वरसा हुई।
—सिंघासण बत्तीसी

२ पुनर्जन्म।

पुनरनवा-सं०स्त्री० [सं० पुनर्नवा] वर्षा ऋतु में होने वाला एक क्षुप विशेष।

वि०वि०—यह तीन चार जाति की होती है, फूल लाल, सफेद जुदे २ रंग के होते हैं। इनमें सफेद रंग के फूल का विषखपरा है और लाल रंग की सांठ अर्थात् गदपुनेरा कहा जाता है। (१) विषखपरे का क्षुप पृथ्वी पर फैला हुआ, गोल पत्तों तथा लाल किनारेदार होता है। एवं फूल सफेद रंग के होते हैं। (२) सांठ का क्षुप कंकरीली भूमि में अधिक होता है। इसके पत्ते चौलाई के समान तथा फूल लाल होते हैं। राजस्थानी में इसे प्रायः साटी कहते हैं।

पुनरपि-अव्य० [सं० पुनर+अपि] फिर भी।

उ०—चवतां चरित तुहारा चेतन। जगत नहीं पुनरपि मांनव जन।
—ह.र.

पुनरवस—देखो 'पुनरवसु' (रू.भे.)

पुनरव्याव—देखो 'पुनरविवाह' (रू.भे.)

पुनरभव-सं०पु० [सं० पुनर्भव] नाखून (अ.मा.) (ह.नां.मा.)

उ०—ऊपरि पदपलव पुनरभव ओपति, निमळ कमळ दळ ऊपरि नीर। तेज कि रतन कि तार कि तारा, हरि हंस सावक ससिहर हीर।—वेलि.

पुनरवसु, पुनरवसू-सं०पु० [सं० पुनर्वसु] सत्ताईस नक्षत्रों में से सातवां नक्षत्र (अ.मा.) (नां.मा.)

उ०—१ आदित्यवार, भनइं, वली, मूल मघा रेवत्ति। पोढी पुष्य पुनरवसु, सेजि चढइ नहीं सत्य।—मा.कां.प्र.

उ०—२ आदरा भरै खादरा, पुनरवसु भरै तळाव।—वर्षा-विज्ञान

रू०भे०—पुनरवस, पुन्नवसु।

पुनरविवाह-सं०पु० [सं० पुनर्विवाह] पति के मरने पर या छोड़ने पर दूसरा विवाह करने की क्रिया।

रू०भे०—पुनरव्याव।

पुनरावत-वि० [सं० पुनरावृत्त] दोहराया हुआ, फिर से घूमा हुआ।

पुनरासी-सं०पु० [सं० पुण्यराशि] पुण्य का समूह, पुण्यवान ।
उ०—अकबर जासी आप, दिल्ली पासी दूसरा । पुनरासी 'परताप', सुजस न जासी सूरमा ।—दूरसो आढ़ौ

पुनरुक्ति-सं०पु० [सं०] किसी कही हुई बात को फिर कहना, दोहराना ।

पुनवंती—देखो 'पुण्यवंती' (रू.भे.)
उ०—सखि हे, राजिद चालियउ, पल्लांणियां दमाज । किहिं -पुनवंती सांमुहउ, म्हा उपराठंउ आज ।—ढो.मा.

पुनवती-सं०स्त्री० [सं० पूर्णवती] १ ध्वजा (अ.मा.)
२ देखो 'पुन्यवति' (रू.भे.)

पुनाग—देखो 'पुन्नाग' (रू.भे.)

पुनाजोग—देखो 'पुण्ययोग' (रू.भे.)

पुनावत-सं०पु०—१ राठौड़ वंश की एक उपशाखा या इस शाखा का व्यक्ति ।

पुनि-सं०पु० [सं० पुनः दुग्ध=पुंसवन, उधाशि] (पुनि)=दूध) १ दूध ।'' (ह.नां.मा.)
२ देखो 'पुन' (रू.भे.)
उ०—नमो पुनि भूपति प्रत्थ प्रवीत । नमो अवनी अघ मेट-अनीत ।
—ह.र.

पुनितोया-सं०स्त्री० [सं० पुण्यतोया] गंगा । उ०—सोम सुर सांमंद्र प्रता सुध, अघट सुभाव दाखवै अंग । रांम कियो व्रत सोमि धरम रसि, पुनितोया मिळि पूत्र प्रसग ।
—राठौड़ रांमदास मेड़तिया रो गीत

पुनिम—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)
उ०—मरुदेवी नी प्रतिमा वली । माही पुनिम थापी रली ।
—स.कु.

पुनियर—देखो 'पुण्य' (रू.भे.)
उ०—ध्यांन न ध्यांन पाप नहि पुनियर । अधर अलेख नहि चखचाळो ।—ह.पु.वा.

पुनियाई—देखो 'पुण्याई' (रू.भे.)

पुनीत-वि० [देशज] (स्त्री० पुनीता) जिसमें पवित्रता हो, पविश्र, शुद्ध । उ०—१ पूरण पुनीत स्रीरांम-पद, विघनहरण त्रैलोक्यवर । परणांम सुकवि 'ईसर' पुणै, ततनांम भवसिंधु तर ।—ह.र.
उ०—२ ससि बदनी सीता, कत पुनीता, दास अभीता कुळ दीता ।
—र.ज.प्र.
सं०पु०—१ सूर्य, भानु (अ.मा.)
२ युधिष्ठिर (अ.मा.)
३ धर्म, पुण्य (अ.मा.)

पुनुं, पुनु, पुन्न—१ देखो 'पुण्य' (रू.भे.)
उ०—१ जाचक हिरन तिसाया जावै, पुन्न नीर सपने नहि पावै ।
—ऊ.का.
उ०—२ नहीं तू जोग नहीं तू जाप । नहीं तू पुन्न नहीं तू पाप ।
—ह.र.
उ०—३ पुन्न गया परवार, सज्जन साथ छुटया जदे । दुरजण जण री लार, रोता फिरवै राजिया ।—किरपाराम
उ०—४ नाज पुरांणो घी नयो, आग्याकारी नार । पंथ तुरी चढ चालणो, पुन्न तणा फळ च्यार ।—अज्ञात
२ देखो 'पूरण' (रू.भे.)
उ०—पुन्न प्रभावि हिं पांमियउ पहिलु कुंतादेवि । पुन्न मणोरह पूत पुण सुमिणां पंच लहेवि ।—पं.पं.च.

पुन्नवसु—देखो 'पुनरवसु' (रू.भे.)
उ०—मधि त्रेताजुग चैत्रमास, संक्रति-मेखि सरि । करक लगन पख सुकळ, धरा पुन्नवसु नखित्र धुरि ।—सू.प्र.

पुन्नाक-स०पु० [सं०] १ सुलताना चम्पा नामक लाल रंग के पुष्पों का वृक्ष ।
रू०भे०—पुनाग ।
२ देखो 'पिनाक' (रू.भे.)
उ०—कुंधरांगुरु तरइ पुन्नाग ग्रह्यउ कर, भड हलकारइ महाभड । एकण बाण कबांण आवजइ, ऊपाडै नांखिया उपड ।
—महादेव पारवती री वेलि

पुन्नि—१ देखो 'पुण्य' (रू.भे.)
उ०—दोनां ही पोकर में दोनां पुन्नि कीनां ।—शि.वं.
२ देखो 'पुन' (रू.भे.)

पुन्य—देखो 'पुण्य' (रू.भे.) (डिं.को.)
उ०—१ साध संगत बिन मुकति न सुपनै, सतगुरु बोल सुणावै । पुन्य वडेरां हूं जद पूग, आ मन में जद आवै ।—ऊ.का.
उ०—२ को कहणो कोसल्या, मोटो तैं कीध पुन्य ऐ अमम । जै कूखै खल-जंता आखे, जगराम औतारं ।—र ज.प्र.
उ०—३ भाळो-स आज मूझ भाग, आप ग्रेह आविया । दरस तौ रघू दिलीप, पुन्य हूत पाविया ।—सू.प्र.

पुन्यवंत—देखो 'पुण्यवंत' (रू.भे.)
उ०—जोध सहरि गढ जतनि, सदृढ जादव पण सच्चै । सूरपण समरत्थ, रीत अनि पथ न रच्चै । सांमिधरम चित सरम, आदि रज करम अरेहण । परम भगत पुन्यवंत, रीत खग सकति नरेहण ।
—रा.रू.

पुन्यवांन—देखो 'पुण्यवांन' (रू.भे.)

पुन्याई—देखो 'पुण्याई' (रू.भे.)
उ०—घणी पुन्याई बाई ताहरी जी, इम बोल्या मुनिराय । देवकी मन में जांणियो जी, यां नैं तो खबर न काय ।—जयवांणी

पुन्यात्मा—देखो 'पुण्यात्मा' (रू.भे.)

पुन्यारथ—देखो 'पुण्यारथ' (रू.भे.)

पुन्यु, पुन्यू—१ देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)

उ०—सखियांन के बीचि हीरां को मुखारबिंद छै जांणै तारा मडळ में पुन्यु को चांद छै।—बगसीरांम पुरोहित री वात

२ देखो 'पुण्य' (रू.भे.)

पुन्योदय—देखो 'पुण्योदय' (रू.भे.)

पुप्फ—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)

उ०—एक ऊखेवइ अगर नइं, पुप्फ पाथरइं हेठि। फणि लाई जळ-यंत्र नी, जिम फडि फडखइ मेठि।—मा.कां.प्र.

पुप्फकरंड—देखो 'पुस्पकरंडक' (रू.भे.)

उ०—रिद्धि भवन घने धांने पूर। वैरी परबल भय रहे दूर। ईसांण कोणे पुप्फकरंड उजांण। सट् रितु ना फल फूल बखांण।

—जयवांणी

पुप्फचूलिका, पुप्फचूलिया-सं०पु० [सं० पुष्पचुलिका] प्रश्न व्याकरण सूत्र का एक उपांग (जैन)

उ०—१ सुणउ रे विपाक श्रुत अंग इग्यारमउ, तजउ विकथा तथा जे अनेरी। ललित उवंग जस प्रवर पुप्फचूलिका, मूलिका पाप आतंक केरी।—वि.कु.

उ०—२ पुप्फचूलिया जांणीये जी।—वृहत्स्तव

रू०भे०—पुफचूळीया, पुफचूलीया।

पुप्फवंत—देखो 'पुस्पदंत' (रू.भे.)

पुप्फमइ—देखो 'पुस्पमई' (रू.भे.)

उ०—भंवर अलसी पुप्फमइ, दिसि विसि नीर निघोस। विर-हणिआं मनि विस जिसिउ, आसो नु ए दोस।—मा.कां.प्र.

पुप्फि, पुफ—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)

उ०—१ पुप्फि परिमळ ईक्षु रस, दूध मांहि घ्रत जेम। सुणि प्रिऊड़ा! तिम माहरइ, पंजरि पसरिउ प्रेम।—मा.कां.प्र.

उ०—२ पति कोध विचारं जिनमति नारं, सोमति मारवीय धारं। घटथी पुफ भारं आंणि अवारं, तिय किय घट कर संचारं।

—ध.व.ग्रं.

पुफचूलीका, पुफचूलीया—देखो 'पुप्फचूलिया' (रू.भे.)

उ०—पुप्फिया दसम इग्यार पुफचूलीया, एम वन्नी दसा बारम अनु-कूलीया।—ध.व.ग्रं.

पुब्ब—१ देखो 'परवत' (रू.भे.)

उ०—१ सुज चलत पब्ब समाज। भय तेण पातक भाज।—रा.रू.

२ देखो 'पूरव' (रू.भे.)

उ०—कहि कहि हरिगोविंद इम, क्रम वहिकाया। हरिनारायण पुत्र निज पख, पुब्ब सिखाया।—वं.भा.

पुमांन-सं०पु० [सं० पुमान्] मनुष्य, पुरुष (ह.नां.मा.)

पुमाड़ो—देखो 'प्रवाड़ो' (रू.भे.)

उ०—क्रम किता पुमाड़ा कांन्हा, उतबंग आगड़िये अनड़। सारे फेर कीधा सत्र पाधर। घड़ा तीन बायीस घड़।

—कांनसिंह बलभद्रोत री गीत

पुमाणो, पुमाबो—देखो 'पोमाणो, पोमाबो' (रू.भे.)

उ०—१ हटी पुमाय हत्य तें, हलें घुमाय हत्थि को। अखेल अंत खेल में, खिलाय ते प्रमत्थि को।—ऊ.का.

उ०—२ पढिया बिना मूढ पग फावैं, पढ़ियां बिचे पुमाईजै। उण रै ढिग कोई रहै आदमी, (तौ) क्यूंहिक कसर कुमाई में।—ऊ.का.

पुमाणहार, हारो (हारी), पुमाणियो—वि०।

पुमायोड़ो—भू०का०कृ०।

पुमाईजणो, पुमाईजबो—भाव वा०।

पुमायोड़ो—देखो 'पोमायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुमायोड़ी)

पुमावणो, पुमावबो—देखो 'पोमाणो, पोमाबो' (रू.भे.)

उ०—घट दीन दरिद्र घुमावत क्यूं। पुरुसारथहीण पुमावत क्यूं।

—ऊ.का.

पुमावणहार, हारो (हारी), पुमावणियो—वि०।

पुमाविओड़ो, पुमावियोड़ो, पुमाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पुमावीजणो, पुमावीजबो—भाव वा०।

पुमावियोड़ो—देखो 'पोमायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री०—पुमावियोड़ी)

पुय-सं०पु० [सं०] १ वरुण (डिं.को., ह.नां.मा.)

२ जीवात्मा।

पुरंद, पुरंदर-सं०पु० [सं० पुरन्दरः] १ इन्द्र।

(अ.मा., डिं.को., ह.नां.मा.)

उ०—१ मनरा महरांण समायण मोजां, कापण दीनां तणा कुरंद। दोजो किसो समोवड दूजो, पेखे चक्रत रहै पुरंद।

—र.रू.

उ०—२ गोप गायां त्रिया सहत वसिया गिरत, चिरत अदभुत तणी करत चरचा। आप जिम करग थपै दर उचत ऐ, ऊथपै पुरदर तणी अरचा।—बां.दा.

२ शिव, महादेव।

३ विष्णु।

४ जेष्ठा नक्षत्र।

५ नगर (अ.मा.)

रू०भे०—पुरदरू, पुरिंद, पुरिंदर, पुरिंद्र, पुळंद, पुलंदर, पुलंद्र, पुलिंद, पुलिंदर, पुल्यदर, प्रलंद।

पुरंदरा-सं०स्त्री० [सं० पुरदर+टाप्] गंगा।

पुरदरू—देखो 'पुरंदर' (रू.भे.)

उ०—जिणवर पूजा हेतइ जांणि पुरंदरु रे, कांमदेव अवतार। स्रेणिक राय परि गुरु भगता सही रे, सिंह मुकुट सणगार।

—प.च.चौ.

पुरंध्रि, पुरंध्री-सं०स्त्री० [सं०] १ पति, पुत्र, कन्या आदि से युक्त स्त्री।

२ स्त्री (अ.मा.)
रू०भे०—परंध्रो, पुरेंद्री ।
पुर-संपु० [सं०] १ नगर, शहर (ह.नां.मा.)
उ०—कुळ सूरज मो क्रिपा करीजै, दाखूं जिको तिको पुर दीजै ।
—सू.प्र.
रू०भे०—पुरु ।
अल्पा०—पुरी ।
२ घर (अ.मा.)
यौ०—अंतेपुर ।
३ देह, शरीर (ह.नां.मा.)
४ लोक, भुवन ।
५ नक्षत्र-पुंज ।
पुर'—देखो 'पुरस' (रू.भे.)
रू०भे०—पुरु ।
पुरअमर-संपु० [सं० अमर+पुर] स्वर्ग (डिं.को.)
पुरइद-संपु० [सं० इन्द्रपुर] स्वर्ग । उ०—ऊससां ससत्र झेलां उरहि, सिर बगसां ससिइद रै । रथ चढां हुसां गळबांह रंभ, एम बसां पुरइद रै ।—सू प्र.
पुरख—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)
पुरखपुरांण—देखो 'पुरांणपुरुस' (रू.भे.)
उ०—प्रछन्न प्रगट्ट पुरखपुरांण । अखंडित ग्यांन, प्ररम्म प्रघांण ।
—ह.र.
पुरख—देखो 'पुरुस' (रू.भे.) (अ.मा., ह.नां.मा.)
उ०—ठाकर अनाड़सिंघ यूं बडा सज्जन पुरख हा पण दो ऐब वांमें बडा मोटा हा ।—रातवासौ
पुरखड़ो—देखो 'पुरुस' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—चढिया जे कर चाह, लालच घोड़ै ललकणै । 'बांका' ह्वै बदराह, पड़िया दीठा पुरखड़ा ।—बां.दा.
पुरखपुरांण—देखो 'पुरांणपुरुस' (रू.भे.)
पुरखातण, पुरखातन—देखो 'पुरुसातन' (रू.भे.)
पुरखाध्रम-संपु०यौ० [सं० पुरुष+धर्म] कुबेर (अ.मा.)
पुरखारत, पुरखारथ—देखो 'पुरुसारथ' (रू.भे.)
उ०—किसी एक ! बाळी भोळी अबळा प्रउढा सोडस वरस की । रांणी रवतांणी आपणा देवर जेठ भरतार का पुरखारथ देखती फिरइ छइ ।—अ. वचनिका
पुरखि—देखो 'पुरुस' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)
पुरखेस-संपु० [सं० पुरुष+ईश] राजा, नृप ।
उ०—मुखि आखै हरि मंत्र, वदन कजि अंत विकस्सै । कियौ ग्रेह परवेस, रजो पुरखेस दरस्सै । खमा खमा उच्चरै, कर पारस रस कुंडळ । प्रगट जांण परवेस, मेघ आगम रवि मंडळ ।—रा.रू.
पुरखोतम—देखो 'पुरुसोत्तम' (रू.भे.) (ह.नां.)

पुरखो-संपु० [सं० पुरुष] १ पूर्वज । उ०—पंडित सब पुरखा सोठ न सिरका, ग्यांनी खाय गपीदा है ।—ऊ.का.
२ वृद्ध पुरुष, बुजुर्ग ।
रू०भे०—पुरिखो, पुरुखो, पूरखो ।
पुरक्ख—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)
उ०—काजळ वरणो ए सखी, मूवो एक पुरक्ख । बळण वाळा कोइ नहीं, रोवण वाळा लक्ख ।—अज्ञात
पुरज—देखो 'पुरजो' (मह., रू.भे.)
पुरजंण-संपु० [सं० पुरजन] १ नगर के लोग, नगरनिवासी, पुरवासी । उ०—हा हा ! दियं घरोघर हेला, पुरजण हियै प्रळापा । जियै जिकै नह जांणै जग, किए अनेक कळाया ।—ऊ.का.
संस्त्री०—२ गेहू की फसल के साथ होने वाला पौधा विशेष जिसका शाक भी बनाया जाता है ।
रू०भे०—पुरजणी ।
पुरजणी—देखो 'पुरजण' (२) (रू.भे.)
पुरजित-संपु० [सं० पुरजित्] १ शिव ।
२ जाम्बुवती के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम ।
पुरजियो—देखो 'पुरजो' (अल्पा०, रू.भे.)
पुरजो-संपु० [फा० पुर्जः] १ टुकड़ा, खण्ड ।
उ०—१ वेणी डंड वाळियउ वळाकै सांम्हउ, सांम्हो अणी लियउ दिख साहि । तिल तिल तिल करे पुरजा तन, होमइ चउण हीज हुतासण माहि ।—महादेव पारवती री वेलि
उ०—२ इसो समियो वण रहियो छै । इणगी ऐ पचास, उणगी पांच सो सो इसा हीज वाजिया सो दीठा ही वण आवै । रात घड़ी च्यार गयां दोनूं भाई 'सूरो' 'खींवो' कांम आया । आदमी पवास था तिकां माहि एक ही नहीं नीसरियो । पुरजो-पुरजो होय गया ।
—सूरे खींवे कांधळोत री बात
मुहा०—१ पुरजो-पुरजो करणो—खण्ड-खण्ड करना ।
२ पुरजो पुरजो करने उडाणो—कागज आदि को खण्ड-खण्ड करके उड़ा देना ।
३ पुरजो-पुरजो होणो—खण्ड-खण्ड होना ।
२ किसी के साथ भेजी जाने वाली चिट्ठी या पत्र ।
उ०—१ सब के बीच मसूरखां, पुरजा बंचवाया । फिर कासीद जवांन दा, समचार सुणाया ।—ला.रा.
उ०—२ पुरजा कासली नै बादिसाहां का खिनाया । रायांसाल जाया राव अंमल मे बुलाया ।—शि वं.
३ किसी यंत्र का कोई खण्ड या हिस्सा ।
ज्यूं—घड़ी रो पुरजो, मसीन रो पुरजो ।
मुहा०—१ पुरजा खोळा करणा—कमजोर बनाना, अत्यधिक पीटना ।
मुहा०—२ पुरजा ढीला होणा—शरीर में शैथिल्य आना, वृद्धावस्था आना ।

३ पुरजा बिखेरणा—विखण्डित करना, विभक्त करना।

अल्पा०—पुरजियो।

पुरट-स०पु० [सं० पुरटं] सुवर्ण, सोना। उ०—१ सेलां भणी सिनान, धारा तीरथ में धसे। दैण धरम रण दान, पुरट सरीर 'प्रतापसी'।—दुरसो आढो

उ०—२ सुवर्ण रो राशि संपादन होण रो वर मांगि स्वकीय सदन आय प्रभात ही सौं पुरट पुंज जाचकां नूं लूटाय अपूरब जस लीधौ।—व.भा.

पुरण-सं०पु० [सं० पुरन्ति अग्रे गच्छन्ति अनेन तत् पुरणम्=वाहनम् या प्रवहणम्] १ घोड़ा (ना.डिं.को.)

२ वाहन, सवारी। उ०—रासब पुरण पलांण कर, कोई हस्तवंध कहावै।—केसोदास गाडण

रू०भे०—पुण, पुहण, पुहण, पूंण, पूण, पूहण।

अल्पा०—पुणियो, पुरणियो, पूंणियो, पूणियो।

पुरणवासी—देखो 'पूरणमासी' (रू.भे.)

उ०—मुसालां री चानणी वण नै रह्यौ छै, जांणै सरद री पुरणवासी खुली छै।—रा.सा.सं.

पुरणाई-स०स्त्री० [सं० पूर्ण ?] मांगलिक अवसरों पर गोबर, गेरुं और पीली मिट्टी से आंगन लीपने की क्रिया या प्रथा।

पुरणाहुति, पुरणाहुती—देखो 'पूरणाहुती' (रू.भे.)

उ०—हुई तांम पुरणाहुती जद मंत्र जपालै। गाढ द्रवड़ दोनूं गती दुरगा दरसावै।—पा.प्र.

पुरणिम—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)

पुरणियो-स०पु० [राज० पुरण] १ गधा।

रू०भे०—पुणियो, पूंणियो, पूणियो।

२ देखो 'पुरण' (अल्पा०, रू.भे.)

पुरतकाळ, पुरतगाल-सं०पु० [अं० Portugal] १ योरुप के दक्षिण पश्चिम का एक छोटा देश।

२ उक्त देश की बनी तलवार विशेष।

रू०भे०—पुड़तकाळ।

पुरतगाळी-वि० [अं० पोर्चुगाल+रा प्र.ई] पुरतगाल संबंधी, पुरतगाल का।

सं०पु०—पुरतगाल का निवासी।

सं०स्त्री०—पुरतगाल की भाषा।

रू०भे०—परतकाळी, परतगाळी।

पुरतोरण-सं०पु०यौ० [सं०] नगर का मुख्य द्वार।

पुरतो-अव्य० [सं० पुरतस्] १ आगे, सामने। उ०—कस्मात् कस्मिन किल मित्र किमरथ, केन कास्य परियासि कुत्र। ब्रूहि जनेन येन भो। ब्राह्मण, पुरतो में प्रेसितम् पत्र।—वेलि.

२ पूर्व, पहिले।

३ पीछे से।

पुरत्रांण-सं०पु०यौ० [सं० पुरत्राण] परकोटा, शहरपनाह।

पुरदड़ो—देखो 'पड़दळो' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—दुजा 'क्रन' नमो पराक्रम 'दुरगा', रूक वदै थारी दोय राह। राजा बीया पुरदड़ो राखै, पुरदड़िया थारी पतसाह।—दुरगादास आसकरणोत रौ गीत

पुरद्वार-सं०पु०यौ० [सं०] नगर का मुख्य द्वार।

पुरधर-स०पु०यौ० [सं० पुर=घर+धर] नगर, शहर।

उ०—दुरधर वेळा कठण दुहेली, उर घर म्हे अकुळावां। मुरधर धणी मधांण मेल नै, पुरधर जांण न पावां।—ऊ.का.

पुरनबिरम—देखो 'पूरणब्रह्म' (रू.भे.)

उ०—अलख निरंजन अग्या दीनी, संतां संकट त्यागया। पुरनबिरम 'पदमयै' पाया, भीव तणा भव भागया।—रुकमणी मंगळ

पुरनारी-सं०स्त्री० [सं०] वेश्या, रंडी।

पुरपाळ-वि० [सं० पुर+पाल] नगर-रक्षक।

सं०पु०—१ पुर या नगर का प्रधान अधिकारी।

२ कोतवाल।

३ आत्मा, जीव।

पुरब—देखो 'पूरब' (रू.भे.)

पुरबलो—देखो 'पूरबलो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुरबळी)

उ०—रांणाजी म्हारी प्रीत पुरबली मैं क्या करूं ? रांम नांम विण घड़ी न सुहावै रांम मिळै म्हारो हियड़ो ठर जाय।—मीरां

पुरबिया—देखो 'पूरबिया' (रू.भे.)

पुरबियो—देखो 'पूरबियो' (रू.भे.)

पुरबो—देखो 'पूरबो' (रू.भे.)

पुरबीकम-सं०पु० [विक्रमपुर] बीकानेर नगर।

पुरराउ-स०पु० [सं० पुरराज] नगरस्वामी, नगरपति।

उ०—इंद अछइ रहत पुरराउ, विज्जमालि ते लहुतड भाउ।—पं.पं.च.

पुरलिंग—देखो 'पुल्लिंग' (रू.भे.)

पुरवणो, पुरवबो—देखो 'पूरणो, पूरबो' (रू.भे.)

उ०—और अमल किस कांम का चढि उतर जावै। अमल करो इक नांम का अमरापुर जावै। अमल किया भावा भया सुख रैन विहावै। अमल नु कल हरि पूरवै जस मीरां गावै।—मीरां

पुरवाई—देखो 'परवाई' (रू.भे.)

उ०—कदेयक भोला चलै सूरियो घीमी घीमी पुरवाई। रुत आयी रे पपइया तेरे बोलण की रुत आई।—लो.गी.

पुरवासी-सं०पु० [सं०] पुर या नगर का रहने वाला, नगरनिवासी, नागरिक।

पुरविसन, पुरविस्न-सं०पु० [सं० विष्णु+पुर] वैकुंठ।

उ०—समर 'किरतेस' तजियो सरीर। विध इण गयो पुरविस्न वीर।—शि.सु.रू.

पुरस-सं०स्त्री० [सं० पुरुष] १ एडी से चोटी तक की ऊंचाई ।
२ धरातल के समान्तर फैले हाथों की दोनों मध्यमाओं के बीच का फैलाव या दूरी का नाप विशेष । उ०—राव बलू नूं साचोर हुई तरै कूवौ १ दिखण दिस नै राव बलू खणायौ छै, तिण मांहै पांणी मीठौ पुरस २० नीसरियौ छै ।—नैणसी
वि०वि०—यह करीब २ गज के बराबर की लम्बाई का होता है। प्रत्येक व्यक्ति का पुरस उसकी ऊंचाई के बराबर होता है अर्थात् उसके पुरस की लम्बाई व शरीर की लम्बाई बराबर होती है ।
रू०भे०—पुर', पुरसि ।
३ देखो 'पुरुस' (रू.भे.)
उ०—न करिस्यौ नीच पुरस सुं नेह । करसी तेह पछतावसी जी, निस्चै नै निस्संदेह ।—वि.कु.

पुरसगारी-सं०स्त्री० [सं० परिवेषकार+रा.प्र.ई] १ भोजन परोसने वाली स्त्री । उ०—मांमा रा ब्याव नै मा पुरसगारी । जीमौ बेटा रात अंधारी ।—फुलवाड़ी
२ परोसी जाने वाली भोजन-सामग्री ।
३ परोसने की क्रिया ।
रू०भे०—परुसगारी, परूसगारी, पुरसारी ।

पुरसगारौ-सं०पु० [सं० परिवेषकार] (स्त्री० पुरसगारी) भोजन परोसने वाला व्यक्ति ।
रू०भे०—परोसारौ, परुसगारौ, परूसगारौ, परूसवारौ, परुसारौ, परोसगारौ, पुरसारौ ।

पुरसड़ौ—देखो 'पुरुस' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—काट जिकां कुळ ऊबटै, आठवाट इतफाक । वां सबळां ही पुरसड़ां, वैरी गिणै वराक ।—बां.दा.

पुरसणौ, पुरसबौ-क्रि०स० [सं० परिवेषणम्] खाद्य पदार्थ को पत्तल आदि में रखना, भोजन परोसना । उ०—तितरै घर सूं भातौ आयौ, तरै भातौ पत्तर मांहे पुरस नै आप मांखी राखण लागौ ।—नैणसी
पुरसणहार, हारौ (हारी), पुरसणियौ—वि० ।
पुरसवाड़णौ, पुरसवाड़बौ, पुरसवाणौ, पुरसवाबौ, पुरसवावणौ, पुरसवावबौ, पुरसाड़णौ, पुरसाड़बौ, पुरसाणौ, पुरसाबौ, पुरसावणौ, पुरसावबौ—प्रे०रू० ।
पुरसिओड़ौ, पुरसियोड़ौ, पुरस्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पुरसीजणौ, पुरसीजबौ—कर्म वा० ।
परुसणौ, परुसबौ, परूसणौ, परूसबौ, परोसणौ, परोसबौ—रू.भे.

पुरसपत—देखो 'सप्तपुरी' (रू.भे.)
उ०—मिळि हरख जेसठ मास, पख प्रथम धरम प्रकास । पुरसपत रूप प्रवीत, मुख धांम-धारा मीत ।—रा.रू.

पुरसपुरांण—देखो 'पुरांणपुरस' (नां.मा.)

पुरसली-सं०स्त्री० [देशज] एक प्रकार की चिड़िया, काबर ।

पुरसाकार-सं०पु० [सं० पुरुषाकार] लिंग, शिश्न ।

पुरसाड़णौ, पुरसाड़बौ—देखो 'पुरसाणौ, पुरसाबौ' (रू.भे.)
पुरसाड़णहार, हारौ (हारी), पुरसाड़णियौ—वि० ।
पुरसाड़िओड़ौ, पुरसाड़ियोड़ौ, पुरसाड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पुरसाड़ीजणौ, पुरसाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पुरसाड़ियोड़ौ—देखो 'पुरसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पुरसाड़ियोड़ी)

पुरसाणौ, पुरसाबौ-क्रि०स० ('पुरसणौ' क्रि० का प्रे०रू०) खाद्य पदार्थ को पत्तल, थाली आदि में रखवाना, भोजन परोसवाना ।
पुरसाणहार, हारौ (हारी), पुरसाणियौ—वि० ।
पुरसायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पुरसाईजणौ, पुरसाईजबौ—कर्म वा० ।
पुरूसाड़णौ, पुरूसाडबौ, पुरूसाणौ, पुरूसाबौ, पुरूसावणौ, पुरूसावबौ, पुरसाड़णौ, पुरसाड़बौ, पुरसाणौ, पुरसाबौ, पुरसावणौ, पुरसावबौ —रू०भे०

पुरसातण, पुरसातन-सं०पु० [सं० पुरुष+रा०प्र० तन] बल, पराक्रम ।
उ०—चालंतौ कोट पयंपै 'चूंडौ', ऐ पुरसातन तणा अपर । रण मुड़िये नांहीं जो आरण, आगै पाछै मुड़ै अर ।—राव चूंडा री गीत
रू०भे०—पुरुखातन, पुरुखातम, पुरुसातन ।

पुरसाद—देखो 'प्रसाद' (रू.भे.)
उ०—पीलूड़ा पुरसाद देवै, भाड़ौ लेवै बाळका । विरमांणी विरांणी जांणी, जाळां जूनी काळका ।—दसदेव

पुरसायोड़ौ-भू०का०कृ०—भोजन परोसवाया हुआ ।
(स्त्री० पुरसायोड़ी)

पुरसारथ—देखो 'पुरुसारथ' (रू भे)
उ०—प्रारब्ध प्रतिग्या द्रढ प्रतीत । पुरसारथ प्रग्या परम प्रीत ।
—ऊ.का.

पुरसारी—देखो 'पुरसगारी' (रू.भे.)

पुरसारौ—देखो 'पुरसगारौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पुरसारी)

पुरसावणौ, पुरसावबौ—देखो 'पुरसाणौ, पुरसाबौ' (रू.भे.)
पुरसावणहार, हारौ (हारी), पुरसावणियौ—वि० ।
पुरसाविओड़ौ, पुरसावियोड़ौ, पुरसाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पुरसावीजणौ, पुरसावीजबौ—कर्म वा० ।

पुरसावियोड़ौ—देखो 'पुरसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पुरसावियोड़ी)

पुरसि—देखो 'पुरस' (रू भे.)

पुरसियोड़ौ-भू०का०कृ०—(भोजन) परोसा हुआ ।
(स्त्री० पुरसियोड़ी)

पुरसोतम, पुरसोत्तम—देखो 'पुरुसोतम' (रू.भे.) (नां.मा.)
उ०—१ गैल ओण रज परसत रीजै नारी गौतम । प्रतिपळ 'किसना' रांमचंद्र सो भज पुरसोतम ।—र.ज.प्र.

उ०—२ गुरु न्याय विप्रायक गोतम से। पुन पाय प्रमा पुरसोत्तम से।—ऊ का.

पुरस्कार-सं०पु० [सं०] पारितोषिक, इनाम।

पुरस्क्रत-वि० [सं० पुरस्कृत] इनाम पाया हुआ।

पुरहथण—देखो 'हस्तिनापुर' (रू.भे.)

उ०—सुत परहुत रासहुत समहर, राघवां जांणों जीये रथ। पुरहथण जीहो वीकपुर है, यां नवचव आप हथ।—द.दा.

पुरहूत—देखो 'पुरुहूत' (रू.भे.) (अ.मा., नां.मा.)

पुरहूतजय-सं०पु०यो० [सं० पुरुहूतजय] वज्र (अ.मा.)

पुरहूति—देखो 'पुरुहूत' (रू भे.) (ह.नां.मा.)

पुरह्लत-स०पु० [स०] शिव, महादेव (नां.मा.)

पुरांइद—देखो 'इद्रपुरी' (रू.भे.)

उ०—डाक चमु वजाड़ै घपाड़ै ग्रीघां गळांडळां। वीजुजळां भुजाबळां मांजे खळां चंद। अछरां अरजां करै आंटोला वींवांण आवौ। अंगहोमां कहै ऊभी आवौ पुराइद।—वनजी खिड़ियौ

पुरांण-वि० [सं० पुराण] प्राचीन, पुरातन।

सं०स्त्री०—१ एक नदी का नाम। उ०—साल सूतरु चिकन सुभ, अतळस जरकस आंण। तो तट दी लाखें तरां, पहरांमणी पुरांण।—बां.दा.

सं०पु०—२ हिन्दुओं के धर्म-संबंधी आख्यान-ग्रंथ। (डि को., ह नां मा.)

उ०—कतेबां कलम्मां उचारै कुरांणां। पढै भारथां भागवंतां पुरांणां।—सू.प्र.

वि०वि०—ये संख्या में अठारह है। इनके नाम प्रायः ये माने जाते हैं—ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु या शिव, लिंग या नृसिंह, गरुड़, नारद, स्कन्द, अग्नि, श्रीमद्भागवत या देवी भागवत, मार्कण्डेय, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, वामन, वराह, मत्स्य, कूर्म और ब्रह्माण्ड। साहित्यकारों के अनुसार पुराणों में पांच बातें होती हैं—सर्ग अर्थात् सृष्टि, प्रतिसर्ग अर्थात् प्रलय और उसके उपरांत फिर से होने वाला सृष्टि, वंशों, मन्वन्तरों और वंशानुचरित की बातों का वर्णन। साधारणतः वेदव्यास ही इन पुराणों के रचयिता माने जाते हैं। इनके अलावा १८ उपपुराण भी माने गए हैं।

३ पुरुष की बहत्तर कलाओं में से एक।

४ अठारह की संख्या* (डि.को.)

रू०भे०—परांण, पौरांण।

पुरांणग-सं०पु० [सं० पुराण+ग] ब्रह्मा, विधि (डि.को.)

पुरांणपुरख, पुरांणपुरस, पुरांणपुरुख, पुरांणपुरुख, पुरांणपुरुस।

स०पु०यो० [स० पुराण+पुरुष] १ श्रीकृष्ण (अ.मा.)

२ ईश्वर। उ०—प्रकृति अतीत पुरुख प्रधान, गरथ्म विग्यांन जगत्त गिनांन। अमेस, पुरांणपुरक्ख प्रतक्ख, अगोचर एक अनेक अलक्ख।—ह.र.

रू०भे०—पुरक्खपुरांण, पुरखपुरांण, पुरसपुरांण, पुरिखिपुरांण, पुरुखपुरांण, पुरुसपुरांण।

पुरांणिक—देखो 'पुरांणीक' (रू भे.)

पुरांणी—१ देखो 'परांणी' (रू.भे.)

२ देखो 'पुरांणौ' (स्त्री०)

पुरांणीक-वि० [स० पौराणिक] १ पुराण संबंधी, पुराण का।

२ पुराणों का जानकार। उ०—१ एक दिन रै समाजोग रावत प्रतापसिंघ कनै एक पंडित पुरांणीक आयौ, जिण बडा-बडा ग्रंथां रौ समुद्र को सौ पार दरसायौ।

—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

उ०—२ तद पुरांणीक पंडित राजा नुं कह्यौ, 'महाराज भूखी आत्मा नुं जे भोजन देवै तिण पुण्य रौ कोई पार नहीं पावै।'

—साह रांमदत्त री वारता

रू०भे०—पुरांणिक।

पुरांणौ-वि० [स० पुराण] (स्त्री० पुरांणी) १ जो बहुत पहले रहा हो और अब न हो, बहुत पूर्व का, पूर्वकाल का, प्राचीन।

ज्यूं—पुरांणी प्रथा, पुरांणा रीतिरिवाज।

२ जो बहुत दिनों का होने के कारण सुदृढ दशा में न हो या ठीक तरह से काम न दे सकता हो, जीर्ण-शीर्ण।

उ०—१ सींगाळौ अवखल्लणौ, जिण कुळ हेक न थाय। जास पुरांणी वाड़ जिम, जिण-जिण मरथै पाय।—हा झा.

उ०—२ होय सभा हमगीर, दुय हाथां खैंचै दुसट। चळघौ पुरांणौ चीर, सिर सूं चाल्यौ सांवरा।—रांमनाथ कवियौ

क्रि०प्र०—पड़णौ, होणौ।

मुहा०—पुरांणौ चोळौ—वृद्ध शरीर।

यौ०—फाटौ-पुरांणौ।

३ जो वर्तमान समय से बहुत पूर्व का हो, बहुत प्राचीन काल का, प्राचीन पुरातन। उ०—सुणीजै ऊखांणौ पुरांणौ सयांणी, रूकीजै नहीं जंगळी जटुरांणी।—ना.द.

४ जिसने बहुत समय देखा हो, जिसका अनुभव बहुत दिनों का हो, पूर्ण रूप से परिपक्व ज्ञान वाला, पूर्ण रूप से अभ्यस्त।

ज्यूं—पुरांणौ पंडित।

मुहा०—पुरांणौ खुरांट—वृद्ध, बहुत दिनों का अनुभवी।

२ पुरांणौ खोपड़ी—देखो 'पुरांणौ खुरांट'।

३ पुरांणौ घाघ—किसी विषय का अनुभव करते करते बहुत पुराना हो गया हो, बहुत चालाक, बहुत कांइयां।

४ पुरांणौ पापी—देखो 'पुरांणौ घाघ'।

५ जो किसी निश्चित समय से सुरक्षित रूप से चला आ रहा हो या बना रहा हुवा हो।

ज्यूं—जाळोर रै गढ में दोय सौ वरस पुरांणौ घी है।

चिड़िया नाथ री धूणी पांच सौ वरस पुरांणी है।

६ जिसे अस्तित्व में आए बहुत समय हो गया हो, नया नहीं, प्राचीन।

उ०—१ नाज पुरांणो घी नयो, आग्याकारी नार। पंथ तुरी चढ चालणो, पुन्न तणा फळ चार।—अज्ञात

उ०—२ राजा देखे राठवड़, पेखे भाग विचार। पिये पुरांणी सेव गिण, ऊपर वांणी वार।—रा.रू.

पुरा-अव्यय० [सं०] १ पूर्वकाल में, पुराने समय में।

२ प्राचीन, अतीत, पुराना।

ज्यूं—पुराव्रत (वृत), पुराकल्प, पुरातन।

३ शीघ्र। उ०—गुडै मयमंत सेना मुहर गैमरां, प्रकटिया मारका थाठ जोधापुरा। घूंसियै हैय पुरा पाय भरबद, पसरियै सिंघ परवत थया पाधरा।—राजा रायसिंह री गीत

पूराचीन—देखो 'प्राचीन' (रू.भे.)

पुराणो, पुराबो-क्रि०स० ('पूरणो' क्रिया का प्रे०रू०) भराना, पूरा कराना। उ०—घर घर ए सखियां मंगळ गावो। घर घर मोतीड़ा सूं चौक पुरावो।—लो.गी.

पुराणहार, हारो (हारी) पुराणियो—वि०।

पुरायोड़ो—भू०का०कृ०।

पुराईजणो, पुराईजबो—कर्म वा०।

पुरावणो, पुरावबो—रू०भे०।

पुरातत्व-सं०पु० [सं०] प्राचीन काल संबंधी विद्या।

पुरातन-वि० [सं०] प्राचीन, पुराना। उ०—पुरातन प्रीत जिसी हरि पय। राजा लोमज ग्रनं दसरथ।—रांमरासो

सं०पु०—१ सनातन पुरुष (पति ?)

उ०—पुरुस पुरातन छाड़कर, चली आन के साथ। सो भी संग थैं बीछुटया, खड़ी मरोड़े हाथ।—दादूवांणी

२ विष्णु (ह.नां.मा.)

रू०भे०—पुरातम, पुरायण, पूरातन।

पुरातम—देखो 'पुरातन' (रू.भे.)

उ०—१ भले भगवंत भले भगवान, पुरातम पूरण नाथ प्रधान।
—पी.ग्रं.

उ०—२ निमो देव अरिहंत, पुरुस परधान पुरातम।—पी.ग्रं.

पुरातळ-सं०पु० [सं० पुरातल] तलातल।

पुरायण—देखो 'पारायण' (रू.भे.)

उ०—इठा उपरांत करिनै राजान सलांमति तिण सहर माहि च्यार वरण, च्यार आस्रम, अठारे वरण, खटदरसण, परम ग्यांन पुरायण धरम-धरम रा पाळणहार, दयाधरम रा राखणहार, देह साभ्रना रा करणहार बैठा तप करै छै।—रा.सा.सं.

पुरायोड़ो-भू०का०कृ०—पूरा कराया हुआ, भरा हुआ।

(स्त्री० पुरायोड़ी)

पुरारि-सं०पु० [सं०] शिव।

पुरालब्ध—देखो 'प्रारब्ध' (रू.भे.)

उ०—लहणीयै जोग आफै लाहिसि, पुरालब्वे पुण्य पापरी। 'धरम-सीउं' कहै धीरज धरे, औ ही मन छै आपरी।—ध.व.ग्रं.

पुरालब्धी—देखो 'प्रारब्धी' (रू.भे.)

पुरावणो, पुरावबो—देखो 'पुराणो, पुराबो' (रू.भे.)

उ०—मोती चउक पुराविया। वाजित्र बाजै घुरइ निसांण।
—बी दे.

पुरावणहार, हारो (हारी), पुरावणियो—वि०।

पुराविग्रोड़ो, पुरावियोड़ो, पुराव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पुरावीजणो, पुरावीजबो—कर्म वा०।

पुराविग्रोड़ो—देखो 'पुरायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुरावियोड़ी)

पुरिंद, पुरिंदर, पुरिंद्र—देखो 'पुरंदर' (रू.भे.) (नां.मा.)

पुरिख, पुरिखि—देखो 'पुरुष' (रू.भे.)

उ०—माया पुरिख नारि पुनि माया, माया ग्रांन सगाई। माया स्वांमी माया सेवक, बहोत भांति करि आई।—ह पु वां.

पुरिखिपुरांण—देखो 'पुरांणपुरुस' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पुरिखोतम—देखो 'पुरुसोत्तम' (रू.भे.)

पुरिखो—देखो 'पुरखो' (रू.भे.)

पुरिमड्ढ़-सं०पु० [ ] प्रथम दो पहर तक आहार त्याग करने की क्रिया।

उ०—२ आयबळ नीवी, पुरिमड्ढ, करे द्रव्य अनुमान। भिन्न पिंड-वाहए पांचमों, ए आग्या भगवांन।—जयवांणी

पुरिस—देखो 'पुरस' (रू.भे.)

उ०—पहिरण ओढण कंबळा, साठे पुरिसे नीर। आपण लोक उभाखरा, गाडर छाळी खीर।—ढो.मा.

पुरिसोतम, पुरिसोत्तम—देखो 'पुरुसोत्तम' (रू.भे.)

उ०—'पीरै' सां पुरिसोतमा, हिमै करीजै हिति। भगति दिवारो भूधरा, नांम लिरावो निति।—पी.ग्रं.

पुरिसो—देखो 'पोरसो' (रू.भे.)

उ०—तलि कीध तयारं सीधो सारं, सोवन पुरिसो स्रीकारं।
—ध.व ग्रं.

पुरी-सं०स्त्री० [सं०] १ नगरी, छोटा शहर (अ.मा., ह नां.मा.)

रू०भे०—पूरिय।

२ जगन्नाथपुरी।

३ स्वामी शंकर के शिष्य पृथ्वीधर के अनुगामी दशनामी संन्यासियों की एक शाखा. २ उक्त शाखा का एक संन्यासी।

सं०पु० [सं० पुरिन्] ४ चंद्रमा।

पुरीख, पुरीस-स०पु० [सं०पुरीष] १ मल, विष्टा।

उ०—१ हड्ड तणी ए पंजरी, माँहि मूत्र पुरीख। अवगुण थली अनेक छइ, सभळि माहरी सीख।—मा.का.प्र.

उ०—२ मुख ओछी रै माहि ले, पर काचड़ा पुरीस। पटकै रोडी

स्रवण पर, से चंडाल सरीस ।—बां.दा.

उ०—३ रुडो तीरथ राज रै, नित जळ कीजै न्हांन । तो पिण न हुए पाक तन, मूळ पुरीस मकांन ।—बां.दा.

२ देखो 'पुरुस' (रू.भे.)

उ०—दांत कस्ट वंध्यो गोरड़ी, तोयी भलो दमयंती नारि । नळ राजा मेल्हे गयो, पुरीस समो नहीं निगुण संसार ।—बी.दे.

पुरु–संपु० [सं०] १ एक प्राचीन राजा जो नहुष के पौत्र और ययाति के पुत्र थे ।

२ एक प्राचीन क्षत्रिय नरेश जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था ।

३ सिकन्दर महान से लड़ने वाला एक पंजाब का राजा ।

४ शरीर, देह (डिं.को.)

५ देखो 'पुर' (रू.भे.)

उ०—इंद पत्थु तिलपत्थु पुरु, वारुणु कीसी च्यारि । हस्तिनागपुर पांचमुं, आपीउ मतसरु वारि ।—पं.प.च.

पुरुक्ख—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)

उ०—नहीं तो नार पुरुक्ख सनेह । नहीं तो दीरघ छुच्छम देह ।
—ह.र.

पुरुकुसीमांन–संपु० [पुरुकुत्स] १ पुरुकुत्स नामक एक सूर्यवंशी राजा ।

उ०—पुरुकुसीमांन सुत बस रूप । पुर क्रुससमु तणै संभूत भूप ।
—सू.प्र.

२. अंगिरा के कुत्स नामक उपगोत्रकार के तीन प्रवरों में से एक ।

पुरुख—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)

पुरुखड़ो—देखो 'पुरुस' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—पसू पसू कह पुरुख नै, आघो करै अनरथ । पसू जिसा वे पुरुखड़ा, आवै और न अरथ ।—ऊ.का.

पुरुखपुरांण—देखो 'पुरांणपुरुस' (रू.भे.)

पुरुखातम, पुरुखात्रम—देखो 'पुरुसातन' (रू.भे.)

उ०—१ 'पातल' हरा निमो पुरुखातम, कळ दळ सबळ कळासै । उरडै फौज धजा बिच आधी, गुण की गजां गरासै ।
—नाहरसिंह आसियो

उ०—२ चालंतो दुरग पयंपै 'चूंडो', ए पुरुखातम तणी पर । आप न मुड़ियै जाय अरीयण, तो आगै पाछै मुड़ै यर ।
—चूंडा लाखावत सीसोदिया री गीत

पुरुखारथ—देखो 'पुरुसारथ' (रू.भे.)

उ०—यउ तउ पातिसाह उत्तर दक्खिण पूरब पच्छिम कउ जइत-वार, इ-का पुरुखारथ प्रवाड़ा नाहि पार ।—म. वचनिका

पुरुखि—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)

पुरुखो—देखो 'पुरखो' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पुरुजित–संपु० [सं० पुरुजित्] १ कुंतीभोज का पुत्र जो अर्जुन का मामा था । २ एक निमिवंशीय राजा । ३ विष्णु ।

पुरुरवा–संपु० [सं० पुरूरवस्] एक प्राचीन राजा ।

उ०—कीचक, वालो, कदिन पुरुरवा प्रो पविवांणी । लंपट भये लंकेस, जूत खाया जग जांणी ।—ऊ.का.

वि०वि०—ये बुध और इला के पुत्र थे तथा बड़े रूपवान, बुद्धिमान और पराक्रमी थे । इन्होंने शापवश भूलोक में आई हुई उर्वशी के साथ तीन शर्तों को मान कर विवाह कर लिया । बहुत दिनों तक सुखपूर्वक रहने के बाद ये शर्तों का पालन करने में चूक गए और फलस्वरूप उर्वशी शाप से छूट कर स्वर्ग चली गई । पुरुरवा की राजधानी प्रयाग में गंगा किनारे थी जिसका नाम प्रतिष्ठानपुर था । उर्वशी के वियोग में ये बहुत दिनों तक विलाप करते घूमते रहे ।

पुरुस–संपु० [सं० पुरुष] १ मनुष्य जाति का नर प्राणी, आदमी ।

उ०—अलकार मांही अहो !, बस देखिए विचित्र । लहै ऊंचता लेण नै, पूरा पुरुस पवित्र ।—महामहोपाध्याय कविराजा मुरारिदांन

२ प्रकृति से भिन्न एक अपरिणामी, अकर्ता और असंगचेतन पदार्थ, विश्वात्मा ।

३ मनुष्य का शरीर या आत्मा ।

४ स्त्री का पति या भर्तार ।

५ जीव या आत्मा ।

६ सूर्य ।

७ शिव ।

८ किसी पीढ़ी या पुश्त का प्रतिनिधि ।

९ वक्ता की दृष्टि से किया जाने वाला सर्वनाम का विभाजन ।
(व्याकरण)

१० पुरुषों की बहत्तर कलाओं में से एक ।

रू०भे०—पुरक्ख, पुरख, पुरखि, पुरस्ख, पुरस, पुरिख, पुरिखि, पुरिस, पुरीख, पुरीस, पुरुक्ख, पुरुख, पुरुखि, पुरुख, पुरुख ।

अल्पा०—पुरखड़ो, पुरसड़ो, पुरुखड़ो, पुरुसड़ो ।

पुरुसग्रह–संपु०यो० [सं० पुरुषग्रह) रवि, मंगल, गुरु (ज्योतिष)

पुरुसड़ो—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)

पुरुसनक्षत्र, पुरुसनखत्र–संपु०यो० [सं० पुरुषनक्षत्र] अश्वनी, मघा, मूल, रेवती, पुष्य, स्रवण, हस्त और शतभिषा नक्षत्र (ज्योतिष)

पुरुसमेध–संपु० [सं० पुरुषमेध] एक प्रकार का वैदिक यज्ञ जिसमें मानव की बलि दी जाती थी ।

पुरुसरासि, पुरुसरासी–संस्त्री० [सं० पुरुषराशि] मेख, मिथुन, सिंह, तुला, धन और कुंभ (ज्योतिष) ।

पुरुसवार–संपु० [सं० पुरुषवार] रवि, मंगल और गुरु ।

पुरुसातन–संपु० [सं० पुरुष+तन] शक्ति, बल, सामर्थ्य ।

रू०भे०—पुरखातण, पुरखातन पुरखातम, पुरखात्राम ।

पुरुसारथ–संपु० [सं० पुरुषार्थ] १ पुरुष के उद्योग का विषय ।

२ पुरुष में होने वाला सामर्थ्य या शक्ति ।

उ०—घट दीन दरिद्र घुमावत ज्यूं । पुरुसारथ हीन पुमावत ज्यूं ।
—ऊ.का.

३ परिश्रम, उद्यम। उ०—पच्छ ग्रहे प्रालब्ध, नहीं पुरुसारथ नेड़ो। चोखे मन नहि चाय, भाय ग्रावे मन भेंड़ो।—ऊ.का.
रू०भे०—पुरखारत, पुरखारथ, पुरसारथ, पुरुखारथ।

पुरुसारथी-वि० [सं० पुरुषार्थिन्] पुरुषार्थ करने वाला, परिश्रमी, उद्यमी।

पुरुसु—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)
उ०—ग्रछइ सोवन्नो कावज हाथि। एक पुरुसु ग्राविउ छइ साथि। —प.पं.च.

पुरुसोतम, पुरुसोत्तम-सं०पु० [सं० पुरुषोत्तम] १ श्रेष्ठ पुरुष।
उ०—ग्रपुरब दे बर दाखि ग्रतिगह कोट बि राखिय ठेलि कंधार। परउपगार भला पुरुसोतम, ग्रपणा जगत करइ उपगार। —चौहथ बारहठ
२ ईश्वर (नां.मा.)
उ०—नरां नाह नीपनो पार पाड़ियो पुरुसोत्ताम। ग्रगे ग्रादि ग्रो ग्राज, ग्रमर ग्रमरां मां ग्रोपम।—पी.ग्रं.
३ रामचंद्र। (नां.मा.)
४ श्रीकृष्ण। (ग्र.मा.)
५ जगन्नाथपुरी का मन्दिर।
६ जगन्नाथ की मूर्ति (उड़ीसा)
यौ०—पुरुसोत्तामक्षेत्र, पुरुसोत्तममास।
रू०भे०—पुरसोतम, पुरसोत्ताम, पुरिखोतम, पुरिसोतम, पुरिसोत्तम, प्रसोतम।

पुरुसोत्तमक्षेत्र-सं०पु०यौ० [सं० पुरुषोत्तमक्षेत्र] जगन्नाथपुरी। (उड़ीसा)

पुरुसोत्तममास-सं०पु०यौ० [सं० पुरुषोत्तममास] ग्रधिकमास, मलमास।

पुरुहूत-सं०पु० [सं०] इन्द्र।
रू०भे०—पुरहुत, पुरहूत, पुरहूति, पुरुहुत, पूरहूत।

पुरूसणी, पुरूसबौ—देखो 'पुरसणी, पुरसबौ' (रू.भे.)
पुरूसणहार, हारौ (हारी), पुरूसणियौ—वि०।
पुरूसिग्रोड़ौ, पुरूसियोड़ौ, पुरूस्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पुरूसीजणौ, पुरूसीजबौ—कर्म वा०।

पुरूसियोड़ौ—देखो 'पुरसियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पुरूसियोड़ी)

पुरेंद्री—देखो 'पुरंध्री' (रू.भे.)
उ०—देवि पांडव नरेंद्र पुरेंद्री। द्रूपदी तणइ हउंजि सुलिद्री। —सालि सूरि

पुरे—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)
उ०—पड़े मसांण देस देस, ग्रग्रवांण पोहरणी। सलाह पाछलै पुरे, मिटी तुरेस मोड़णी।—रा.रू.

पुरोगत-वि० [सं०] १ जो सामने हो, सम्मुख हो।
२ जो पहिले गया हो, पुराना।
३ देखो 'पुरोगति' (रू.भे.) (ग्र.मा.)

पुरोगति-वि० [सं०] ग्रग्रगामी।
सं०पु०—१ स्वान, कुत्ता (ह.नां.मा.)
सं०स्त्री—२ ग्रागे ग्रागे चलने की क्रिया या भाव, ग्रग्रगामिता।
३ पुरोगत होने की दशा या भाव।
रू०भे०—पुरोगत।

पुरोचन-सं०पु० [सं०] दुर्योधन का म्लेच्छ मंत्री एवं मित्र जिसकी नियुक्ति लाक्षा गृह में पांडवों को जलाने के लिए की गई थी।
उ०—एहु तु पुरोचन नांमि पुरोहितु दुरयोधनह। तुम्हि वीनविया सांमि राय सुयोधनि पय नमीय।—पं.पं.च.

पुरोडा, पुरोडास-सं०पु० [सं० पुरोडाश् या पुरोडाश] १ कपाल में पकाकर बनाई हुई जौ के ग्राटे की टिकिया।
वि०वि०—इस टिकिया का टुकड़ा काट कर मंत्र पढ़ कर यज्ञों में देवताग्रों को ग्राहुति दी जाती थी।
२ उक्त ग्राहुति देते समय पढ़ा जाने वाला मंत्र।
३ सोमरस।

पुरोहिग्र, पुरोहित-सं०पु० [सं० पुरोहित] (स्त्री०पुरोहितण, पुरोहिताणी)
१ यज्ञ, ग्रनुष्ठान, संस्कार ग्रादि कराने वाला ब्राह्मण।
२ राजा या किसी ग्रन्य यजमान के यहां यज्ञ, श्रौतकर्म, गृहकर्म संस्कार ग्रादि कराने वाला। प्रधान याज्ञिक कृत्य कराने वाला ब्राह्मण।
३ ब्राह्मण वर्णान्तिर्गत एक गोत्र विशेष जो प्रायः राजाग्रों ग्रौर जागीरदारों के कुलगुरु होते हैं।
४ इस गोत्र का व्यक्ति।
उ०—तरवाड़ी टोळै पया, पुरोहित पारावार।—मा.कां.प्र.
५ ब्राह्मण वर्णान्तिर्गत एक जाति विशेष।
रू०भे०—परोयत, परोहित, पिरोयत, पिरोहित, पीरोत, पुरोहितु, प्रोयत, प्रोहत, प्रोहित।

पुरोहितु—देखो 'पुरोहित' (रू.भे.)
उ०—राति चालइ राउ मागि सुरंगह कुणबि सउं। दियइ पुरोहितु दाउ लाख हरइ विसनरु ठवइ।—पं.प.च.

पुरोहिताई-सं०स्त्री० [सं०पुरोहित+रा प्र.ग्राई] १ पुरोहित का कार्य।
२ पुरोहित का पद।
३ इस कार्य के करने पर मिलने वाला पारिश्रमिक।

पुरौ—देखो 'पुर' (ग्रल्पा., रू.भे.)

पुलदर, पुलंदौ, पुलंद्र—देखो 'पुरंदर' (रू.भे.)
उ०—लील-विलास सुरां मा लाइकि। नमो पुलंद्रा देव बिनाइकि। —पी.ग्रं.

पुळपूळ-सं०स्त्री० [फा० पुल] १ किसी नदी, खाई, जलाशय ग्रादि पर उसके ग्रारपार जाने के लिए बनाया गया रास्ता, सेतु।
क्रि०प्र०—बांधणी।

मुहा०—१ पुळ टूटणो—अत्यधिक होना, भरमार होना, अधिक तादाद में होना, सहायताहीन होना, बे-सहारा होना।
२ पुळ बांधणो—अत्यधिक तारीफ करना, बातों की झड़ी लगाना, बढ़ा चढ़ा कर कहना।
२ देखो 'पळ' (रू.भे.)
उ०—नाथ अनाथ दासरथ नंदण, स्रीरघुनाथ 'किसन' साधार। कदम पखो अपखो ज्यां काळा, अवखो पुळ वाला आधार।—र.ज.प्र.

पुळक, पुलक-सं०पु० [सं० पुल+कन्] १ प्रेम, भय, हर्ष के कारण शरीर में होने वाला रोमांच, कम्पन।
२ कोई काम करने की प्रवृत्ति उत्पन्न करने वाली कामना।
ज्यूं—संभोग-पुळक।
३ एक प्रकार का बहुमूल्य पत्थर, रत्न, नगीना जिसे महताब, याकूत, चुन्नी भी कहते हैं।
४ हाथी का रातिब।
५ हरताल।
रू०भे०—पुळकि।

पुळकणो, पुळकबो-क्रि०अ० [सं० पुलक+रा.प्र.णो] पुलकित होना, गद्गद् होना, रोमांचित होना। उ०—हित सूं कमठाक्रत हरी, सेवै पुळच सरीर। वदन छिपावण देह विच, ते मांगे तदबीर।—बां.दा.
२ भय, शर्म आदि से मुह या चेहरा फीका पड़ना, अप्राकृतिक मंद हंसना।
पुळकणहार, हारौ (हारी), पुळकणियो—वि०।
पुळकवाड़णो, पुळकवाड़बो, पुलकवाणो, पुलकवाबो, पुळकवावणो, पुळकवावबो—प्रे०रू०।
पुळकाड़णो, पुळकाड़बो, पुळकाणो, पुळकाबो, पुळकवाणो, पुळकवावो—सक०रू०।
पुळकिओड़ो, पुळकियोड़ो, पुळक्योड़ो—भू०का०कृ०।
पुळकीजणो, पुळकीजबो—भाव वा०।

पुळकाड़णो, पुळकाड़बो—देखो 'पुळकाणो, पुळकाबो' (रू.भे.)

पुळकावणो, पुळकावबो—देखो 'पुळकाणो, पुळकाबो' (रू.भे.)
उ०—भाग न जागै आंखियां, तिण सिर दीधा तंत। पल-पल मुख पुळकावणो, कायर हो उचकंत।—बां.दा.
पुळकावणहार, हारौ (हारी), पुळकावणियो—वि०।
पुळकाविओड़ो, पुळकावियोड़ो, पुळकाव्योड़ो—भू०का०कृ०।
पुळकावीजणो, पुळकावीजबो—कर्म वा०।

पुळकावियोड़ो—देखो 'पुलकायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पुळकावियोड़ी)

पुळकि—देखो 'पुलक' (रू.भे.)

पुलकित-वि० [सं०] रोमांचित, गदगद।

पुलकियोड़ो-भू०का०कृ०—१ पुलकित हुवा हुआ, गद्गद् हुवा हुआ, भयभीत हुवा हुआ, लज्जित हुवा हुआ।
(स्त्री० पुलकियोड़ी)

पुलग-सं०पु० [सं० प्लवंग] घोड़ा। उ०—१ सपतास के सहोदर लड़ा-लूबा में अथाग तिलवागूं के लीनै ल्यावै, पवनूं की पाय, साणियां नै भली विध सिरै खांन के पुलग साज तिण निजरू गुजरायां।—र.रू.
उ०—२ पुलग चढ'र पांडीस पर, पीव पांण पड़ियांह। आंगन में घर आंगळयां, घलसी उण घड़ियांह।—रेवतसिंह भाटी

पुळच, पुळछ—देखो 'पोळछ' (रू.भे.)

पुळण, पुलण—देखो 'पुलिन' (रू.भे.)
उ०—वरसिंघदे बाघेलो गुजरात सौं गंगाजी री जात आयो हुतो सद अठै बंधव री ठौड़ निबळा-सा रजपुत रहे ता, ठौड़ खालो घोठो, सरै गंगाजी रा पुळण मनोहर देखनै अठै रहण री कीवी।
—नैणसी

पुळणो, पुळबो-क्रि०अ० [सं० पलायनम्] १ कूच करना, प्रस्थान करना, रवाने होना। उ०—१ लखी तोपां सालुळी पुळी पलटणा पटंतां। संगीनां साबलां, आभ छायो भखडंतां।—मे म.
उ०—२ व्याकुळतां घुळतां बळतां वह, मरघट पुळतां माची। अकुळातां अंतिम असवारी, चमरां ढुळतां चाली।—ऊ का.
२ गमन करना, जाना, चलना। उ०—१ गुठा जीमता गटक, अंत नहीं वांनै। राव ऽरोगता रटक, जरै नह सीरो ज्यांनै। पुळता नगै पाय, मोल वड बूट मगावै। पट रेजा पहरता, अतळसां दाय न आवै। अनाथी आत आया अठै, आतम जाणी आपसी। कमंध केइ लोह कचन किया, पारस भूप 'प्रतापसी'।—जुगतीदांन देथो
उ०—२ तुरी पल्हांणि आंणीउ, 'माधव' थियउ असवार। पाछउं जोइ नह पुळइ, सिंह तणी आचारि।—मा कां.प्र.
३ किसी प्रकार की गति से युक्त होकर आगे वढ़ना, गतिमय होना, बहना। उ०—जो न भांण ऊगमें, जो नवि वासग धर झलै। राम बांण न अहे, करण पारथ्यौ ज मुळै। ब्रह्मा छोडै वेद, पवन जा रहे पुळतो। चंद सूर ना वहे, रहे किम अमी झरंतो। पमार नाकारो ना करै, मेर-समो जाको हियो। कंकाळी कीरति करै, सीस दांन 'जगदे' दियो।—जगदेव पंवार री वात
४ चलने की साधारण चाल से द्रुत गमन करना, अधिक वेग से चलना, दौड़ना। उ०—जेती जइ मन मांहि, पंजर जइ तेती पुळइ। मनि वइराग न थाइ, वालंभ वीछुडियां तणो।—ढो.मा.
५ भय, संकट आदि के उपस्थित होने पर उससे बचने के लिए द्रुत गति से चल पड़ना, भाग जाना, भागना। उ०—१ मुहधो तजि खेतु पुळ्यो प्रतमाग। खड़ो नृप 'जैत', दळै करि खाग।
—मे.म.
उ०—२ पुळिया पुंडरीक सुपह संचरिया, वागी हाक न कोय वळै। बाळाचंद ऊठ अतुळीवळ, भोजराज गढ तूझ भळै।
—भोजराज रूपावत री गीत

उ०—३ नरां ग्रही ग्रंमरां उछंडे धंडे थाळ नीर, मही रसातळां घोर मंडे ग्रासमांण। महावीर देवां-साल विलोके रोस में मंडे, पुळै कपी-भाल छंडे पछाड़ी पीढांण।—र.रू.

उ०—४ मूछ केस खंडत नहीं, नाक न खंडत कोर। पही पुळंतां पाघड़ी, सुकुलीणां तज सोर।—बां.दा.

६ नष्ट होना, नाश होना, मिट जाना, मिटना। उ०—१ चोखो ग्रोढूं चीर, लाळ मांहि लुळ जावै। ग्रतर लगाऊं ग्रंग, पाद ग्रागै पुळ जावै। मेंदी देऊं मुळक, मेल सूं कर दे मोळी। दीवाळी रै दिवस, हिया में ऊठै होळी। हाथ झटक झिझिकार हुंस, नाथ न लेऊं नांम जी। भव भांड इसै भरतार सूं, रांड भली ग्रो रांमजी।
—ऊ.का.

६ किसी वस्तु का ग्रपने स्थान से कुछ हट जाना, या कुछ इधर-उधर हो जाना, खिसकना, हिलना। उ०—पुळियो नह चाप कंथा तो पांणी, धांम जनक मिळिया रजधांणी। हुतौ कठै पोरस कुळ-हांणी, ग्रब तैं सिया दगौ कर ग्रांणी।—र रू.

८ व्यतीत होना, गुजर जाना। उ०—पुळियो पचोसो चोतीसो चुळियो, ग्रड़ताळीसो भी ग्रंतर ग्राकुळियो।—ऊ.का.

पुळणहार, हारो (हारी), पुळणियो—वि०।

पुळवाड़णो, पुळवाड़बो, पुळवाणो, पुळवाबो, पुळवावणो, पुळवावबो,
—प्रे०रू०।

पुळाड़णो, पुळाड़बो, पुळाणो, पुळाबो, पुळावणो, पुळावबो—क्रि०स०

पुळिग्रोड़ो, पुळियोड़ो, पुळयोड़ो—भू०का०कृ०।

पुळीजणो, पुळीजबो—भाव वा०।

पुळाणो, पुळाबो—रू.भे.।

पुळपुळ—सं०पु० [देशज] उत्पात, शरारत, शैतानी।

पुळपुळणो, पुळपुळबो—क्रि०ग्र० [देशज] शैतानी करना, उत्पात करना।

पुळपुळा'ट—देखो 'पुळपुळाहट' (रू.भे.)

पुळपुळाणो, पुळपुळाबो—क्रि०स० [देशज] १ किसी ठोस खाद्य पदार्थ को मुंह में इधर उधर घुमाना, उसका स्वाद लेना. रस चूसना।

२ ऊपर हाथ फेरना, सहलाना।

३ खुजली चलना।

पुळपुळायोड़ो—भू०का०कृ०—१ कोई ठोस खाद्य पदार्थ को मुंह मे इधर-उधर घुमाया हुग्रा, स्वाद लिया हुग्रा, चूसा हुग्रा।

२ ऊपर हाथ फेरा हुग्रा, सहलाया हुग्रा।

३ खुजली चला हुग्रा।

(स्त्री० पुळपुळायोड़ी)

पुळपुळाहट—सं०पु० [देशज] १ शैतानी, शरारत, उत्पात।

२ पुळपुळा होने का भाव।

रू०भे०—पुळपुळा'ट।

पुळपुळियोड़ो—भू०का०कृ०—शैतानी किया हुग्रा, उत्पाद किया हुग्रा।

(स्त्री० पुळपुळियोड़ी)

पुळपुळो—वि० [देशज] (स्त्री० पुळपुळी) १ जिसके भीतर का भाग ठोस न हो, गुदगुदा, मुलायम।

२ चंचल, नटखट।

३ उत्पात करने वाला, बखेड़ा करने वाला।

पुलमजा—देखो 'पुलोमजा' (रू.भे.) (ग्र.मा., नां. मा.)

यौ०—पुलमजापति।

पुलमजापति—देखो 'पुलोमजापति' (रू.भे.) (ग्र.मा.)

पुलवती—वि०स्त्री० [?] सौभाग्यवती, सुशील।

पुळसत, पुलसुत, पुलस्त्य—सं०पु० [सं० पुलस्ति, पुलस्त्य] १ एक ऋषि जिनकी गणना सप्तर्षियों ग्रौर प्रजापति में की जाती है।

वि०वि०—ये ब्रह्मा के ग्राठ मानस पुत्रों में से एक थे जो शक्तिशाली महर्षियों में गिने जाते हैं।

पुलह—सं०पु० [सं०] एक ऋषि जो ब्रह्मा के मानस पुत्रों ग्रौर सप्त-र्षियों मे गिने जाते हैं।

पुलाक—सं०पु० [सं०] १ दाने रहित धान्य की भूसी (जैन)

२ दुष्ट रस वाला द्रव्य।

३ एक प्रकार का कदन्न, भंकरा।

४ चावल का मांड पीच।

५ भात।

६ पुलाव।

७ पुलाक लब्धि वाला साधु (जैन)

रू०भे०—पुलाग।

पुलाकलब्धि—सं०स्त्री० [सं०] देवता के समान समृद्धि वाला विशेष लब्धिसम्पन्न मुनि।

वि०वि०—देखो 'लब्धि'।

पुळाड़णो, पुळाड़बो—देखो 'पुळाणो, पुळाबो' (रू.भे.)

पळाड़णहार, हारो (हारी), पळाड़णियो—वि०।

पळाड़िग्रोड़ो, पळाड़ियोड़ो, पळाड़्योड़ो—भू०का०कृ०।

पळाड़ीजणो, पळाड़ीजबो—कर्म वा०।

पुळाड़ियोड़ो—देखो 'पुळायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुळाड़ियोड़ी)

पुळाणो, पुळाबो, पुलाणो, पुलाबो—क्रि०स० [सं० पलायनम्] १ कूच कराना, प्रस्थान कराना, रवाने कराना।

२ गति से युक्त करके ग्रागे बढ़ाना, गतिमय करना, बहाना, ग्रधिक वेग से चलाना, दौड़ाना।

३ पलायन कराना, भगाना।

४ नष्ट करना, नाश करना, मिटाना।

५ खसकाना, हटाना, हिलाना।

६ देखो 'पुळणो, पुळबो' (रू.भे.)

उ०—१ सरु सांधी रात केंउइ धाइ, हरिणउ हरिणी सहितु पुळाइ।
—पं.पं.च.

उ०—२ विसु दीधउं दुरयोधनि, भीमहिं भोजन माहि। ग्रम्रत

हुई नइ परिणामित, पुन्नि हिं दुरित पुलाइ।—पं.पं.च.

उ०—३ तुम नांमइ हो मोरा पाप पुलाइ कि, जिम दिन उगइ चोरडा।—स.कु.

पुळाणहार, हारौ (हारी), पुळाणियौ—वि।

पुळायोड़ो—भू०का०कृ०।

पुळाईजणौ, पुळाईजबौ—कर्म वा०, भाव वा०।

पुळाड़णौ, पुळाड़बौ, पुळावणौ, पुळावबौ—रू०भे०।

पुलाव, पुलाव-सं०पु० [फा० पुलाव] मांस और चावलों को साथ पकाया हुआ एक प्रकार का व्यंजन, मांसोदन।

उ०—१ छळती हिक मूंण सराब छकै। भर धूंण पुलाव कबाव भखै।—मे.म.

उ०—२ उद तेली नूं खनै बैठायौ नै आपरा थाळ मांय सूं सीरौ पुड़ी चावळ दाळ पुलाव, साबूनी तेली नूं ठाकुरसी आप रा हाथ सूं पुरसिया।—द.दा.

रू०भे०—पोलाव।

पुळावणौ, पुळावबौ, पुलाणौ, पुलाबौ—१ देखो 'पुळाणौ, पुळाबौ' (रू.भे.)

२ देखो 'पुळणौ, पुळबौ' (रू.भे.)

उ०—पुण्य तणां फळ परतिख देखौ, करौ पुण्य सहु कोय जी। पुण्य करंतां पाप पुळावै, जीव सुख होय जी।—स.कु.

पुळावणहार, हारौ (हारी), पुळावणियौ—वि०।

पुळाविओड़ो, पुळावियोड़ो, पुळाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पुळावीजणौ, पुळावीजबौ—कर्म वा०। भाव वा०।

पुळावियोड़ो—१ देखो 'पुळायोड़ो' (रू.भे.)

२ देखो 'पुळियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुळावियोड़ी)

पुळिंद-सं०पु० [सं० पुलिंदक] १ भारत में निवास करने वाली एक प्राचीन असभ्य जाति।

२ इस जाति का व्यक्ति।

उ०—१ ग्राह गोह गयंदा, देखव्याघ मदंधा। पेख ओघ पुलिंदा, पयोध नघ पार।—र.ज.प्र.

उ०—२ बलमीक पुलिंद रिखीबाणौ, कीधौ गुर सुकनाधिप काणौ।—र.ज.प्र.

३ इस जाति का निवास करने का भू-भाग।

४ देखो 'पुरंदर' (रू.भे.)

उ०—१ धोरा मरदन पुलिंद पास करि, धेनुक बछक ताड्या। विद्याधर नऊं विख अप हरीयौ, कंटक कोड़ि विभाड्या।

—रुकमणी मंगळ

उ०—२ बादळां दिखणी दळां लूंबिया पहुंवै-थळां। दांमणी चमकै कूंत रचै महा इंद। ऊबारियौ नंद धांम नंद रै पुळिंद आयां, नंद ग्रांम ऊबारियौ 'छाताळ' रै नंद।—देवीसिंघ हाडा रौ गीत

पुळिंदर—देखो 'पुरंदर' (रू.भे.)

उ०—१ लिखमीवर इहड़ा व्रिद लीधा, के पहळाद पुळिंदर कीधा।

—पी.ग्रं.

उ०—२ नर-नाराइण निमौ, ध्यांन धरियौ धरणी-धरि। पेखि रूप परम रौ, प्रघळ कांपियौ पुळिंदर।—पी.ग्रं.

उ०—३ मेर-गिरंद जिसा घर मंडप, सत्त-समंद अखूट सरोवर। द्वादस कोट विसम्भर दीपक, चंद अरक्क पुळिंदर चाकर।—पि.प्र.

पुळिवा-सं०स्त्री [?] ताप्ती नदी की सहायक एक छोटी नदी जिसका उल्लेख महाभारत में भी है।

पुळिवौ-सं०पु० [सं० पुल=ढेर+रा.प्र.औ] लपेटे हुए कागज, कपड़े आदि का छोटा गट्ठर, बंडल।

पुळिण, पुलिण—देखो 'पुलिन' (रू.भे.)

उ०—पुलिण रवि-सुता फहरावजै पीत-पट, आवजै रासथळ व्रजनाथ आथ। कांन कंवार विहरि गळी व्रज-कुंज री, सुभ रळी कीजियै लाडली साथ।—बां दा.

पुलित-सं०पु० [सं० प्लुतिः] १ स्वर का एक भेद जिसके उच्चारण में दीर्घ से भी अधिक समय लगता है और तीन मात्रा का होता है।

उ०—लघु तैं दीरघ पुन पुलित, यां मात्रा इधकाय। त्यां छोटे न वह किय 'पता', वडे महांन वढ़ाय।—जैतदांन बारहठ

[सं० प्लुतं] २ घोड़े की एक चाल विशेष। (शा.हो.)

३ उछलते हुए चलना, सरपट चाल।

४ छलांग, फलांग।

पुलिन-सं०पु० [सं० पुलिनं या पुलिनः] १ नदी का रेतीला तट।

२ नदी का तट। (अ.मा.)

उ०—परणीजै मधुपुरी, 'अभौ' व्रंदावन आयौ। पेखि धांम सुख परम, अठां तीरथ मन भायौ। पेखि निगम द्रुम पुंज, हेक सुख कुंज निहारै। हेक पुलिन हित करै, हेक जळ जमण विहारै।—रा.रू.

रू०भे०—पुळण, पुलण, पुळिण, पुलिण, पुलीण, पुलीन।

पुळियार-वि० [सं० पलायनकार] भागने वाला।

उ०—जसराज रा वचनां में मीणां रौ इसौ अधरम जांणि नेत्रां में जळ आंणि कुमार कहियौ—चोड़ै चढ़ चाल्यां इसड़ा अनरथ रा करणहार अंत्यज पुळियार होइ जीवता रहि जावै।—वं.भा.

सं०स्त्री० [सं० पलायनम्] भागने की क्रिया या भाव, भगदड़।

पुळियोड़ो-भू०का०कृ०—१ कूच किया हुआ, प्रस्थान किया हुआ, रवाने हुवा हुआ।

२ गमन किया हुआ, गया हुआ, चला हुआ।

३ किसी प्रकार की गति से युक्त होकर आगे बढ़ा हुआ, बहा हुआ।

४ अधिक वेग से चला हुआ, दौड़ा हुआ।

५ भय, संकट आदि से बचने के लिए भागा हुआ, द्रुत गति से चला हुआ।

६ नष्ट हुवा हुआ, मिटा हुवा हुआ।

७ खिसका हुआ, हिला हुआ, हटा हुआ।

(स्त्री० पुळियोड़ी)

पुळिस–सं०पु० [अं० पुलिस] १ राज्य की आन्तरिक शान्ति व्यवस्था बनाए रखने व प्रजा के धन माल की सुरक्षा रखने हेतु बनाया हुआ एक राजकीय विभाग।

२ उक्त विभाग के अन्तर्गत सुरक्षात्मक कार्य करने वाले कर्मचारियों का दल।

३ उस दल का व्यक्ति।

पुळी–सं०स्त्री० [देशज] १ छोटे बछड़े के निकलते हुए सींगों का ऊपरी आवरण या भाग। उ०—सींगां पुळी न संचरी, पगां न ठेठर बंध। दूध पीयंतं बाछड़े, दियो महाभड़ कंध।

—महाराजा मानसिंह जोधपुर

२ एक प्रकार की काले और भूरे रंग की चिड़िया।

पुलीण, पुलीन—देखो 'पुलिन' (रू.भे.)

उ०—ग्रीखम गिर लागा जळन, सखर निकट पुलीन(ण)। वूर्भगो कंसे विपिन, परस्यां विना प्रवीण।

पुलोम–सं०पु० [सं० पुलोमन्] १ एक दैत्य जिसकी कन्या 'शची' इन्द्र को व्याही गई थी।

२ एक राक्षस का नाम।

यौ०—पुलोमजा।

रू०भे०—पुलम।

पुलोमजा–सं०स्त्री० [सं०] पुलोम नामक दैत्य की पुत्री 'शची' जो इन्द्र को व्याही गई थी, इंद्राणी।

यौ०—पुलोमजापति।

रू०भे०—पुलमजा।

पुलोमजापति–सं०पु० [सं०] शचिपति इन्द्र।

रू०भे०—पुलमजापति।

पुलोमा–सं०स्त्री० [सं०] महर्षि भृगु की पत्नी का नाम।

वि०वि०—यह वैश्वानर नामक राक्षस की कन्या थी तथा च्यवन ऋषि की माता थी।

पुळो–सं०पु० [सं० प्लुतं] १ घोड़े की एक चाल विशेष, पोई।

२ देखो 'पूळो' (रू.भे.)

पुल्यंदर—देखो 'पुरदर' (रू.भे.)

उ०—अहो सिरि सरां देवां सिरै गढपत्यां, स ऊजळ हलूरां उरड़ सामाव। जेठ आसोज नभ मास बारह जतू। रवि उदधि पुल्यंदर संभरी राव।—भगतराम हाडा रो गीत।

पुंल्लिग–सं०पु० [सं०] पुरुष चिह्न वाला।

रू०भे०—पूंलिग, पुरलिग।

पुल्ली–सं०स्त्री० [देशज] घोड़े के सुम के ऊपर का भाग।

पुव—देखो 'पुरव' (रू.भे.)

पुवन—देखो 'पवन' (रू.भे.)

उ०—और राहण रै लोग सहर रै लोग छतीस पुवन बधाई दीवी।

—कूंवरसी सांखला री वारता

पुवभव—देखो 'पूरवभव' (रू.भे.)

उ०—बोलइ गुरु धरम घोसु, पुवभवि ए पांच ए कुण बीय ए।

—पं.पं.च.

पुवाड—देखो 'पमाड' (रू.भे.) (डिं.को.)

पुवाड़ो—देखो 'प्रवाड़ो' (रू.भे.)

उ०—प्रथम पुवाड़इ पूतना सोखी, मर दळियो मुसाल। ए हरि मई आगई दावानळ, दावण नई कुळि काळ।—रुकमणी मंगळ

पुव्वंग—देखो 'पूरवांग' (रू.भे.) (जैन)

पुव्व—देखो 'पूरव' (रू.भे.)

उ०—१ चोरासी पुव्व लाख वरस पाल्यो जिण आयु। पांचसै धनुष प्रमांण काय राजै जगराय।—ध.व.ग्रं.

उ०—२ पुव्व दिसि आसण आइ बैसें पहु। सुरकृत चोमुख रूप देखे सहु।—ध.व.ग्रं.

पुव्वभव—देखो 'पूरवभव' (रू.भे.)

पुव्वांग—देखो 'पूरवांग' (रू.भे.) (जैन)

पुस—१ देखो 'पुस्य' (रू.भे.) (अ.मा.)

२ देखो 'पुस्प' (रू.भे.)

पुसकर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे.) (डिं.को., अ.मा., ह.नां.)

उ०—घट में ही पुसकर औ लोधेस्वर लछिमन कवर विलासी।

—मीरां

पुसकरचूड़–सं०पु०यौ० [सं० पुस्करचूड] एक दिग्गज का नाम।

पुसकरणा–सं०स्त्री० [सं० पुष्करणा] ब्राह्मण वर्णान्तर्गत एक प्रसिद्ध जाति।

रू०भे०—पुहकरणा, पोकरणा, पोहकरणा।

पुसकरणी–सं०स्त्री० [सं० पुष्करिणी] १ हस्थिनी।

२ देखो 'पुसकरणी' (स्त्री०)

रू०भे०— पुहकरणी, पोहकरणी।

पुसकरणो–सं०पु०—पुष्करणा जाति का व्यक्ति।

रू०भे०—पुहकरणो, पो'करणो, पोहकरणो।

पुसकरनाभ—देखो 'पुस्करनाभ' (रू.भे.)

पुसकरपान–सं०पु०यौ० [सं० पुष्कर-पर्ण] यज्ञ की वेदी बनाने के उपयोग में ली जाने वाली ईंट।

पुसकरमुख–सं०पु०यौ० [सं० पुष्करमुख] हाथी की सूंड का विवर।

पुसकरमूळ—देखो 'पुस्करमूळ' (रू.भे.)

पुसकराक्ष, पुसकराख–वि० [सं० पुष्कराक्ष] कमलनयन।

सं०पु०—विष्णु।

पुसकरावती–सं०स्त्री० [सं० पुष्करावती] एक प्राचीन नदी का नाम।

पुसकरियो—देखो 'पुस्कर' (अल्पा., रू.भे.)

पुसकरी—देखो 'पुस्करी' (रू.भे.)

पुसकळ—देखो 'पुस्कळ' (रू.भे.)
पुसकळक-सं०पु० [सं० पुष्कलक] कस्तूरीमृग।
पुसकळावती-सं०स्त्री० [सं० पुष्कलावती] गांधार देश की प्राचीन राजधानी का नाम जिसे भरत के पुत्र पुष्कल ने बसाई थी।
पुसट—देखो 'पुस्ट' (रू.भे.)
पुसटता—देखो 'पुस्टता' (रू.भे.)
पुसटाई—देखो 'पुस्टाई' (रू.भे.)
पुसटी—देखो 'पुस्टी' (रू.भे.)
पुसटीकरण—देखो 'पुस्टीकरण' (रू.भे.)
पुसटीमत—देखो 'पुस्टीमारग'।
पुसटीमारग—देखो 'पुस्टीमारग' (रू.भे.)
पुसत—देखो 'पुस्त' (रू.भे.)
पुसतक—देखो 'पुस्तक' (रू.भे.)
उ०—पारेवो ज्यूं पुसतकां, कुकुर बाज बस थाय। पांखां ज्यूं ही पानड़ा, जत्र तत्र ह्वै जाय।—बां.दा.
पुसतनांमौ—देखो 'पुस्तकनांमौ' (रू.भे.)
पुसतौ—देखो 'पुस्तौ' (रू.भे.)
पुसप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.) (ह.नां.मा., अ.मा.)
पुसपकरंड-सं०पु० [सं० पुष्पकरंडक] १ फूल रखने की डलिया।
२ उज्जयिनी के शिवोद्यान का नाम।
पुसपकाळ-सं०पु० [सं० पुष्पकाल] वसंत ऋतु (अ.मा.)
पुसपकीट-सं०पु० [सं० पुष्पकीट] भौंरा (ना.डि.को.)
पुसपकेतु-सं०पु० [सं० पुष्पकेतु] कामदेव (ना.डि.को.)
पुसपगंध-सं०पु० [सं० पुष्पगंध] १ भौंरा (ह.नां.मा.)
२ जूही।
पुसपचाप—देखो 'पुस्पचाप' (ह.नां.मा.)
पुसपदत—देखो 'पुस्पदंत' (रू.भे.)
पुसपधनवा—देखो 'पुस्पधन्वा' (रू.भे.)
पुसपधनु—देखो 'पुस्पधनु' (रू.भे.)
पुसपनक्षत—देखो 'पुस्पनक्षत्र' (रू.भे.)
पुसपपुर—देखो 'पुस्पपुर' (रू.भे.)
पुसपबांण—देखो 'पुस्पबांण' (रू.भे.)
पुसपमाळ, पुसपमाळा—देखो 'पुस्पमाळा' (रू.भे.)
पुसपरस-सं०पु० [सं० पुष्परस] १ पराग, मकरंद (अ.मा.)
२ शहद (अ.मा.)
३ भौंरा (ह.नां.मा.)
पुसपवरखा, पुसपवरसा—देखो 'पुसपव्रस्टी'।
पुसपवाटिका—देखो 'पुस्पवाटिका' (रू.भे.)
पुसपव्रस्टी-सं०स्त्री० [सं० पुष्पवृष्टि] फूलों को किसी के ऊपर गिराने की क्रिया, पुष्पवर्षा, फूलों का ऊपर से बरसना या बरसाया जाना, पुष्पवृष्टि।

पुसपसजा, पुसपसज्जा—देखो 'पुस्पसजा' (रू.भे.)
पुसपसर-सं०पु० [सं० पुष्पसर] कामदेव (अ.मा.)
पुसबन—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)
उ०—वनी तो लागे प्यारी रे, पुसबन की सुगंध सवाई रे।
—लो.गी.
पुसरी—रक्त, खून (अ.मा.)
पुसळाई-सं०स्त्री० [देशज] द्वार पर लगा हुआ चार लकड़ियों का ढांचा जिसमें कपाट लगाए जाते हैं। बारसोत, चोखट।
उ०—साखी ताव समांम, पीनणी भर पुसळाई। नैड़ी थैड़ी तणी, जाळ बसतुवां बणाई।—दसदेव
पुसळी—देखो 'पुसी' (अल्पा० रू.भे.)
उ०—बहतौ जळ छोडेह, पुसळी भर पीधौ नहीं। नैनकडै नाडेह, जीव न धापै जेठवा।—जेठवा
पुसाणौ, पुसावौ-क्रि०स० [...] देखो 'पोसाणौ, पोसावौ' (रू.भे.)
पुसायोड़ौ—देखो 'पोसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पुसायोड़ी)
पुसी-सं०स्त्री० [सं० प्रसर] १ गहरी की हुई हथेली, करतल-पुट, पसर।
उ०—तैं मुख-कमळ सुदांमा तंदुल। पाया बिलकुल भरे पुसी।
—र.ज.प्र.
२ गहरी की हुई हथेली में समाने योग्य किसी पदार्थ की मात्रा।
रू०भे०—पस।
अल्पा०—पुसळी, पूसळी।
पुस्कर-सं०पु० [सं० पुष्कर] १ जल, पानी।
२ कमल।
३ नील कमल।
४ तालाब, सरोवर।
५ आकाश, अंतरिक्ष।
६ तलवार की धार।
७ तलवार (कविराजा बांकीदास)
८ तलवार का म्यान (कविराजा बांकीदास)
९ तीर, बांण।
१० हाथी की जिह्वा का अग्र भाग।
११ हाथी की सूंड का अग्र भाग।
१२ युद्ध, लड़ाई।
१३ सर्प विशेष।
१४ विष्णु का एक नाम।
१५ शिव।
१६ सूर्य, भानु।
१७ भग्न पाद नक्षत्र का एक अशुभ योग।
१८ ढोल की चाम।
१९ ढोलक का मुख।

२० अनावृष्टि सूचक बादल।

२१ ब्रह्माण्ड के सात विशाल भागों में एक।

२२ अजमेर के पास एक तीर्थ स्थान (राजस्थान)

२३ पीले और बादामी रंग का मृग जिसके सींग छोटे होते हैं।

वि०—कोमल। * (डि.को.)

रू०भे०—पुकर, पुक्कर, पुखर, पुसकर, पुसकरण, पुहकर, पो'कर, पो'खर, पोहकर, पौ'कर, पौहकर, पौहकरण।

अल्पा०—पुसकरियौ, पुस्करियौ।

पुस्करनाभ-सं०पु०यौ० [सं० पुष्करनाभ] विष्णु।

रू०भे०—पुसकरनाभ, पुहकरनाभ, पोहकरनाभ, पौहकरनाभ।

पुस्करमूळ-सं०पु०यौ० [सं० पुष्करमूल] कश्मीर में होने वाली एक प्रकार की वनस्पति की जड़ जो औषध-प्रयोग में ली जाती है।

रू०भे०—पुकरमूळ, पुसकरमूळ, पुहकरमूळ, पोकरमूळ, पोखरमूळ, पो'मूळ, पोहकरमूळ, पौहकरमूळ।

पुस्करवरत-सं०पु० [सं० पुष्करावर्त्तक] मेघों के एक विशेष अधिपति।

रू०भे०—पुखरवरत।

पुस्करियौ—देखो 'पुस्कर' (अल्पा०, रू.भे.)

पुस्करी सं०पु० [सं० पुष्करिन्] हाथी।

रू०भे०—पुसकरी, पो'करी, पो'हकरी, पौहकरी।

पुस्कळ-वि० [सं० पुष्कल] बहुत, विपुल, अत्यन्त, अधिक।

उ०—अस लेता हरखित अर्पे, पुस्कळ नांणौ पीव। पिण पिसणां देणौ पड़ै, जमी मोल निज जीव।—रेवतसिंह भाटी

रू०भे०—पुसकळ।

पुस्ट-वि० [सं० पुष्ट] १ पोषण किया हुआ, पाला हुआ। (डि.को.)

२ मोटा-ताजा, हृष्ट-पुष्ट।

३ अच्छी तरह सम्पन्न, पूर्ण सम्पन्न।

उ०—जे वस्त्र राख्या जिणरी पडिलेहण न करै अनै न भोगवै तौ विसेस कस्ट उपजै तिण सूं पोसौ अपूठौ पुस्ट होवै।—भि.द्र.

४ बलवर्द्धक, मोटाताजा बनाने वाला।

५ पूर्ण, पूरा।

६ पक्का।

रू०भे०—पुसट।

पुस्टता-सं०स्त्री० [सं० पुस्ट+रा प्र.ता] पुष्ट होने का भाव, पुष्टि।

रू०भे०—पुसटता।

पुस्टाई-सं०स्त्री० [सं० पुष्ट+रा.प्र.आई] पुष्टता, पुष्टि।

रू०भे०—पुसटाई।

पुस्टि-सं०स्त्री० [सं० पुष्टि] १ पोषण। २ बलिष्ठता। ३ मोटापन, ताजापन। ४ बात का समर्थन, पक्कापन। ५ वृद्धि, पूर्णता।

६ सोलह मात्राओं में से एक।

रू०भे०—पुसटी, पुस्टी।

पुस्टिकर-वि० [सं० पुष्टिकर] बलवर्धक, पुष्ट करने वाला।

पुस्टिकरण-वि० [सं० पुष्टि+कर] पुष्ट करने वाला, शक्तिवर्द्धक।

रू०भे०—पुसटीकरण।

पुस्टिमत-सं०पु० [सं० पुष्टिमत] देखो 'पुष्टिमारग'।

पुस्टिमारग-सं०पु०यौ० [सं० पुष्टिमार्ग] वल्लभाचार्य के मतानुकूल, वैष्णव भक्ति-मार्ग।

रू०भे०—पुसटीमारग।

पुस्तंग-सं०पु० [फा० पुश्त+सं.अंग] १ घोड़े के पिछले पैरों का ऊपरी भाग या हिस्सा।

मुहा०—पुस्तंग छांटणौ—घोड़े का पिछले दोनों पैरों को एक साथ उठा कर आघात मारना।

२ घोड़े के पिछले पैरों में होने वाला एक रोग विशेष। (शा.हो.)

३ घोड़े की पीठ के नीचे रहने वाला पट्टा।

उ०—कांधळजी घोड़ौ खुरी करावता ताहरां सदा तंग, पुस्तंग, दुमची आगवंध तूट जावता सु तूट गया।—नैणसी

रू०भे०—पुस्तग।

पुस्त-सं०स्त्री० [फा० पुश्त=] १ किसी पदार्थ का पृष्ठ-भाग, पृष्ठ-प्रदेश, पीछा।

२ मनुष्य, पशु आदि का पृष्ठ भाग, पीठ।

उ०—पैसवाज र पट्टे के जुदे तार, टूटी सी अंगिया अरु फाटी सी इजार। चश्मां में काजळ का अैसा वणाव, कुत्ते की पुस्त पर ससेरण का घाव।—दुरगादत्त बारहठ

३ वंशानुक्रम की प्रत्येक कड़ी या स्थान जिस पर कोई पुरुष हुआ हो या होने को हो, पीढी।

उ०—ये साची बातां कही पण अहड़ी ना होय, सात पुस्त री जायगां छोड सकै न कोय।—महाराजा जयसिंह आमेर रा धणी री वारता

४ देखो 'पुस्तौ' (रू.भे.)

रू०भे०—पुसत।

पुस्तक-सं०स्त्री० [सं० पुस्तकं] १ छपे हुए या हाथ से लिखे हुए कागजों का जिल्द-बंध रूप।

[फा० पुश्तक] २ घोड़े द्वारा पिछले दोनों पैर उठा कर किया जाने वाला आघात, दौलत्ती।

पुस्तकप्रकास-सं०पु० [सं० पुस्तकप्रकाश] पुस्तकों के रखने का स्थान, पुस्तकालय।

पुस्तकसाळ (ळा)-सं०स्त्री० [सं० पुस्तकशाला] पुस्तकालय।

पुस्तकाकार-सं०पु० [सं०] पुस्तक के आकार का रूप जो पुस्तक के रूप में हो।

पुस्तकालय-सं०पु० [सं०] वह भवन या स्थान जहां पर अनेक विषयों की अनेक पुस्तकें जनता के अध्ययनार्थ रखी गई हों, पुस्तकों का संग्रह स्थान

पुस्तखार-सं०पु० [फा० पुश्तखार] पशुओं की पीठ खुजलाने के लिए लोहा, हाथी दांत, सींग आदि का बना उपकरण।

पुस्तग—देखो 'पुस्तंग' (रू.भे.)

उ०—तद कावलजी घोड़े नूं कुदावता तद तंग, पुस्तग, दुमची टूट जावता ।—द.दा.

पुस्तनामो-संपु० [फा० पुश्त+सं० नाम्न:] किसी वंश में उत्पन्न पुरुषों की पूर्वोत्तर क्रम की सूची ।

रू०भे०—पुसतनामो ।

पुस्तबंद, पुस्तबंध-सं०स्त्री [फा० पुश्त+सं० बंध] पुश्ते की बंधाई, पुश्ता उठाने की क्रिया ।

पुस्ती-सं०स्त्री० [फा०] १ जळाघात या अन्य किसी प्रकार के आघात से सुरक्षित रखने हेतु दीवार या बांध के तल-पार्श्व भाग से लगा कर कुछ ऊपर उठा हुआ ईंट पत्थर मिट्टी आदि का बना भाग ।

२ पालण-पोषण ।

३ सहायता, मदद ।

४ मजबूती, दृढ़ता ।

उ०—हूं घर तोनूं सौंपियो थो, भलो बसायो, भली राज री पुस्ती बांधी ।—ठा० राजसिंह री वारता

रू०भे०—पुसती

पुस्तैन-सं०स्त्री० [फा० पुश्त+रा.प्र.एन] पीढ़ी-दर-पीढ़ी, वंशपरंपरा ।

पुस्तैनी-वि० [फा०] १ वंशपरम्परा का ।

२ वह जो कई पीढ़ियों से चला आता हो, बाप दादों के समय का पुराना ।

३ भविष्य की पीढ़ियों तक चलने वाला ।

पुस्तो-सं०पु०—देखो 'पुसता' (रू.भे.)

२ किताब की जिल्द के पुट्ठे पर लगा चमड़ा या कपड़ा ।

रू०भे०—पुसतो ।

पुस्प-सं०पु० [सं० पुष्प] १ पेड़ पौधों के फूल, कुसुम ।

उ०—वीं पर एक सुवरणमय व्रक्ष, अम्रत-रस-फळ सुगंधमय पुस्प ।
—सिंघासण बत्तीसी

२ ऋतुमती स्त्री का रज ।

३ आंख का फूला नामक रोग ।

४ घोड़े के शरीर पर होने वाली चित्ती जो स्थान विशेष के कारण शुभ या अशुभ भी मानी जाती है (शा.हो.)

५ कुबेर का विमान ।

६ देखो 'पुस्य' (रू.भे.)

रू०भे०—पप, पहप, पहुप, पहोप, पुप्फ, पुप्फि, पुफ, पुस, पुसप, पुसबन, पुहप, पुहव, पुहुप, पूफ, पूहप, पोहप, पौहप ।

पुस्पक-सं०पु० [सं० पुष्पक] कुबेर का विमान ।

उ०—विना स्रम बैठत व्योम विमाण, जनारदन प्रेरक पुस्पक जाण ।
—ऊ.का.

रू०भे०—पुसपक, पोहपविवांण ।

पुस्पचाप-सं०पु० [सं० पुष्पचाप] कामदेव ।

रू०भे०—पुसपचाप, पुहपचाप, पोहपचाप ।

पुस्पदंत, पुस्पदंती-सं०पु० [सं० पुष्पदंत (ती)] १ वायु कोण का दिग्गज (वं.भा.)

२ शिव का अनुचर, गंधर्व जिसने महिम्न स्तोत्र की रचना की है ।

३ एक प्रकार का नगर द्वार (प्राचीन)

रू०भे०—पहपदंती, पुप्फदंत, पुसपदंत, पुहपदंत, पोहपदंत ।

पुस्पधनु-सं०पु०यौ० [सं० पुष्पधनु] कामदेव ।

रू०भे०—पुसपधनु, पोहपधनु ।

पुस्पधन्वा-सं०पु०यौ० [सं० पुष्पधन्वा] कामदेव ।

रू०भे०—पप्पधनवा, पसपधन्वा ।

पुस्पध्वज-सं०पु०यौ० [सं० पुष्पध्वज] कामदेव ।

रू०भे०—पोहपधुज ।

पुस्पनक्षत्र—देखो 'पुस्यनक्षत्र' (रू.भे.)

पुस्पपति-सं०पु०यौ० [सं० पुष्पपति] कामदेव ।

रू०भे०—पोहपति ।

पुस्पपुर-सं०पु०यौ० [सं० पुष्पपुर] पाटलीपुत्र का एक नाम ।

रू०भे०—पुसपपुर, पुहपपुर, पोहपपुर ।

पुस्पमई-वि० [सं० पुष्प+मय] पुष्पयुक्त, पुष्पसहित ।

रू०भे०—पुपफमई ।

पुस्पमाळ, पुस्पमाळा-सं०स्त्री० [सं० पुष्पमाला] पुष्पहार, फूलों का हार । उ०—सउच करो दंत धावन स्नान की तैयारी रे वस्त्र और पुस्पमाळ तुळसी अति प्यारी ।—मीरां

रू०भे०—पहपमाळ, पहपमाळा, पुसपमाळ, पुसपमाळा, पुहपमाळ, पुहुपमाळा पुहुपमाळ, पोहपमाळा ।

पुस्पमास-सं०पु० [सं० पुष्पमास] चैत्रमास ।

रू०भे०—पहपमास, पुहपमास, पुसपमास ।

पुस्परथ-सं०पु०यौ० [सं० पुष्परथ] एक प्रकार का रथ जिस पर चढ कर प्राचीन काल में राजे महाराजे हवा सेवन करने को जाते थे ।

पुस्पवाटिका-सं०स्त्री० [सं० पुष्पवाटिका] फूलों वाले वृक्षों या पौधों का बगेचा, फुलवारी ।

पुस्पसजा, पुस्पसज्जा-सं०स्त्री० [सं० पुष्पशय्या] वह शय्या जिस पर फूल बिछे हुए हों ।

रू०भे०—पुसपसजा, पुसपसज्जा ।

पुस्पसरासण-सं०पु० [सं० पुष्पशरासन] कामदेव ।

पुस्पांजळि, पुस्पांजळी-सं०स्त्री० [सं० पुष्पाञ्जलि] फूलों से भरी अंजली जो किसी देवता या महापुरुष को अर्पण की जाती है ।

रू०भे०—पहुपजळि, पहुपंजळी, पहुपांजळा, पुहुपांजळी ।

पुस्पा-सं०स्त्री० [सं० पुष्पा] आधुनिक चंपारन का प्राचीन नाम ।

पुस्पाकर-सं०पु० [सं० पुष्पाकार] वसन्त ऋतु ।

पुस्पावळि-सं०स्त्री० [सं० पुष्पावली] पुष्प (ना.मा.)

पुस्पिका-सं०स्त्री० [सं० पुष्पिका] १ प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों या

उसके अध्यायों के अंत में लिखे जाने वाला समाप्ति सूचक वाक्य या वाक्य-समूह जिसमें प्रायः ग्रंथ रचयिता का नाम व संवत भी होता है (रहता है)

पुस्य-सं०पु० [सं० पुष्य] १ पोष मास का नाम।

२ अश्विनी, भरणी आदि सताईस नक्षत्रों में आठवां नक्षत्र जिसकी आकृति धनुष पर चढ़े हुए बाण के समान बताई गई है। इसको तिष्य भी कहते हैं। उ०—आदित्यवार अनइंवळी, मूल, मघा, रेवत्ति। पोढी पुस्य पुनरवसु, सेजि चढइ नहि सत्य।—मा.कां.प्र.

रू०भे०—पुक्ष. पुख, पुस, पुस्य, पुहव; पूख, पूखा।

पुस्यनक्षत्र—देखो 'पुस्य'।

उ०—कांतीधर सेठ एक नवौ मिंदर बणावै सो पुस्यनक्षत्र रविवार नूं वैरो नींव लगाई। पुस्यनक्षत्र नूं ही वैरौ कारज होवै।

—सिंघासण बत्तीसी

पुस्यमास-सं०पु० [सं० पुष्यमास] विक्रम संवत का दशमा मास, पोसमास।

वि०वि०—इस मास में पुस्य नक्षत्र का उदय होना माना जाता है इसलिए इसका यह नाम पड़ा।

रू०भे०—पुखमास।

पुस्यसनांन, पुस्यस्नांन-सं०पु०यौ० [सं० पुष्यस्नान] पूस मास में चंद्रमा के पुष्य नक्षत्र में होने पर विघ्न शांति के लिए किया जाने वाला स्नान (प्रायः राजा महाराजा)

रू०भे०—पुखसनांन।

पुस्यारक-सं०पु० [सं० पुष्यार्क] १ रविवार के दिन होने वाला पुष्य नक्षत्र।

२ कर्क की संक्रांति में सूर्य के पुष्य नक्षत्र में होने पर होने वाला एक योग (ज्योतिष)

रू०भे०—पुख्यारक।

पुह—देखो 'प्रथ्वी' (रू.भे.) (डिं.को.)

पुहकर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे.)

(अ.मा., डिं.को., डिं.नां.मा., नां.मा, ह नां मा.)

उ०—जळ गंगा जमुना पुहकर जळ। दळ ग्रह दरम छिड़क तुळछी दळ।—रा.रू.

पुहकरणा—देखो 'पुसकरणा' (रू.भे.)

पुहकरणो—देखो 'पुसकरणो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुहकरणी)

पुहकरनाभ—देखो 'पुस्करनाभ' (रू.भे.)

पुहकरमूळ—देखो 'पुस्करमूळ' (रू.भे.) (अमरत)

पुहगाळ-सं०पु० [सं० प्रातःकाल या पुष्यकाल] प्रातःकाल, सवेरा।

उ०—एक दिवस आहेड़ा आळि, नळ राजा चढियौ पुहगाळि।

—ढो.मा.

पुहण—देखो 'पुरण' (रू.भे.)

उ०—१ छाया खेजड़ तर भलो, पुहण भलो ज ऊंट।

—ढो.मा.

उ०—२ वीरम नूं तौ रात आसुदा पुहण देनै साथे साथे देनै सोहण नूं चलायौ।—नैणसी

पुहतणौ, पुहतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—१ स्री बळभद्र जी जुध कीयौ। रूक्मणजी रथि बैठा रुखमणीजी नै लीयां आगै अकेला ही जाता था। रुखमइयौ रुखमणीजी को भाई। अकेलौ ही फिर आगै रूकमणजी नै पुहतौ।

—वेलि टी.

उ०—२ सकळै गुणे सकज्ज, पांच दस परिखा पुहतौ। आंण्यौ म्हे ईतवार. मन सुध थाप्यौ मुहतौ।—ध.व ग्रं.

उ०—३ ताहरां ई दी विना जीमी ऊमरांणै पगे दौड़ी। पगोपग गई। आगै सात कोस लगनाथ गयौ। जायनै जाळ हेठै नाथ सूतो, सो नाथ नूं तो नींद आय गई। इतरै इंदो जाय पुहुतौ।—नैणसी

पुहतणहार, हारौ (हारी), पुहतणियौ—वि०।

पुहतिओड़ो. पुहतियोड़ौ, पुहत्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पुहतीजणौ, पुहतीजबौ—भाव वा०।

पुहतियोड़ौ—देखो 'पुहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पुहतियोड़ी)

पुहप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)

उ०—चौकी रूप पिलग चढायै, विमळ पुहप घण सेज बिछायै।

—सू प्र.

पुहपचाप—देखो 'पुस्पचाप' (रू.भे.)

पुहपदंत—देखो 'पुस्पदंत' (रू.भे.)

पुहपति-सं०पु० [सं० पुष्पपति] १ पुष्पपति, कामदेव।

उ०—वनसपति पुहपति विसतारै। भंवर गु जार करै सुर मारै।

—सू.प्र.

२ पृथ्वीपति।

पुहपपुर—देखो 'पुस्पपुर' (रू.भे.)

पुहपमाळ, पुहपमाळा—देखो 'पुस्पमाळा' (रू.भे.)

उ०—चरचै चनण तूफ चीतोडा, पुहपमाळ पहरावै। दासपणो न करै दीवाळी, ईद तणै घर आवै।—महारांणा उदयसिंह रो गीत

पुहपवती-सं०स्त्री० [सं० पुष्पवती] पुष्पवती, फूलोंवाली, फूलों से युक्त। उ०—लता जु पुहपवती छै सु ए रजस्वळा कही छै। तांह सौं पवन परस करै छै। इह मतवाळा अग छै।—वेलि टी.

पुहपांजळी—देखो 'पुस्पांजळी' (रू.भे.)

उ०—पात्र पुहपां सु अंजळि भरि अरि मंत्र पढै छै। बीचि परीयचि खांचि ल्यै छै। तब पुहपांजळी होइ छै।—वेलि टी.

पुहपाई, पुहपावती-सं०स्त्री० [सं० पुष्पावती] पुष्पावती नगरी।

उ०—पुहपावती जई नई पूहंता, कुंदणपुर मेल्हांण।

—रुकमणी मंगळ

पुहम, पुहमि, पुहमी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—१ साते सर ऊपर भया, पुहम पलटि गत नीर। मछली वसे अकास में, लगी प्रेम की सीर।—ह.पु वा.

उ०—२ मेळो तें कीधो भलो, जळहर श्रो जळजाळ। धुन मुधरी पुहमी धवै, दुसह निवार दुकाळ।—बां.दा.

पुहर, पुहरि, पुहरी—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)

उ०—१ श्रोर बाळक जितरो वरस दिन माहे वधे, तितरै रुकमणी जी एक महीना मांहे वधै। श्रोर महीना माहे वधे। तितरो रुकमणी जी एक पुहर मांहे वधै।—वेलि टी.

उ०—२ लेख लिखांणा श्रायस दीधा, फिरइ दिसि ऊपह्लांणा। करी सजाई पुहर पाछि लइ, तेड्या राउत रांणा।—कां.दे प्र.

उ०—३ श्रति श्राणंव ऊमाहियउ, वहइ ज पूगळ वट्ट। तीजइ पुहरि उलांघियउ, श्राडावाळा रउ घट्ट।—ढो.मा.

उ०—४ राजा कान्हड़दे तणइ कटकि, पाछिलइ पुहरि कडाहि चडइ।—कां.दे.प्र.

उ०—५ श्रठ पुहरी पोसउ लीजियइ, चउ विहार विधि सुं कीजियइ।—स.कु.

पुहरो—देखो 'पहरो' (रू.भे.)

उ०—१ मर जीवउ पांणी तणउ, सालह उघट नइ खाइ। दुख सहणा पुहरा दियण, कंत दिसाउरि जाय।—ढो.मा.

उ०—२ जावतां जावतां एकै उद्यांन वन विखे श्रायूण हूवो ताहरां च्यारे बोलीया—रोही रो समीयो छै। पुहरै पुळी सावचेत रहणो।—चौबोली

पुहव—१ देखो 'पुस्य' (रू.भे.)

उ०—विख राजा(न) बीनती दाखि, पुहव-लगन ताइ नहीं पछइ। प्रभु ये त्रंबावती पधारउ, श्राठै पहरें लगन श्रछइ।

—महादेव पारवती री वेलि

२ देखो 'पुस्प' (रू भे.)

पुहवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे)

उ०—१ मरुधर देस मझारि, सकळ धन-धन्न समिद्धउ। नांमइ पूंगळ नयर, पुहवि सकळइ परसिद्धउ।—ढो मा.

उ०—२ पाल्हणसो पुहवि हि रह्यउ, अनि समहरचा सरग्गि। तिणि वेळा हीया भरी, राइ राइ रोवण लग्गि।—श्र. वचनिका

पुहविपति, पुहविपत्ति—देखो 'प्रथवीपति' (रू.भे)

उ०—हिंदुश्रां मोड़ राठौड़ मोटै हसम, पुहविपत्ति मांहि परताप श्राझो। श्रनूपसिंह रावजी श्रटक कटके श्रडिग, श्राप सीजी करें जास श्राझो।—ध व ग्रं.

पुहवी, पुहवीइ—देखो 'प्रथवी' (रू भे.)

उ०—१ श्रालिमसाह श्रलावदी, पूछइ व्यास प्रभात। सयल परीक्षा तुं करइ, स्त्री की केती जाति। स्त्री की केती जाति, कहि न राघव सुविचारी। रूपवंत पतिव्रता, मूंघ सोहइ सुपियारी। हस्तनी चित्रणी कर संखिनी, पुहवी वडी पदमावती। इम भणइ विप्र साचउ वयण, श्रालमसाह श्रलावदी।—प.च.चौ.

उ०—२ जूड़ा जोड़ा परयंक पेसणी पात्र पुंज कटि करवाळ पुहवी में पंठो तो भी मंतु बिहुण जनक रो मित्र मारणा में म्हारो तो मन श्राघात रो उत्करस न मानें।—वं.भा.

उ०—३ हठ कीधउ सुरतांणस्यूं तास कथा संबंध। चाहूश्रांण गुण वरणवूं पुहवीइ प्राकृत बंध।—कां.दे.प्र.

पुहवीधर—देखो 'प्रथवीधर' (रू.भे.)

पुहवीस—देखो 'प्रथवीस' (रू.भे.)

उ०—मालव देस रा पच्छिम प्रांत रो पुहवीस, रतळांम नगर रो वसावणहार।—वं.भा.

पुहुंचणो, पुहुंचवो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचवो' (रू.भे.)

उ०—ढोलइ मनह विमासियउ, एक करीजइ एम। करहइ चढ़ि श्रापां खड़ा, नरवर पुहुंचां जेम।—ढो.मा.

पुहुंचणहार, हारो (हारी), पुहुंचणियो—वि०।

पुहुंचाड़णो, पुहुंचाड़वो, पुहुंचाणो, पुहुंचावो, पुहुंचावणो, पुहुंचावबो —सक०रू०।

पुहुंचीश्रोड़ो, पुहुंचियोड़ो. पुहुंच्योड़ो—भू०का०कृ०।

पुहुंचीजणो, पुहुंचीजबो—भाव वा०।

पुहुंचाडणो, पुहुंचाडबो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचावो' (रू.भे.)

उ०—परघू सहू परधान पणि, पुहुंचाडवा पुलंति। ब्रह्मा सनक सरीखड़ा, श्रतर को न कलंति।—मा.कां.प्र.

पुहुचाडणहार, हारो (हारी), पुहुंचाडणियो—वि०।

पुहुचाडिश्रोड़ो, पुहुंचाडियोड़ो, पुहुचाडयोड़ो—भू०का०कृ०।

पुहुंचाडीजणो, पुहुचाडीजबो—कर्म वा०।

पुहुंचाडियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुहुंचाडियोड़ी)

पुहुंचाणो, पुहुचावो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचावो' (रू.भे.)

पुहुंचाणहार, हारो (हारी), पुहुंचाणियो—वि०।

पुहुंचायोड़ो—भू०का०कृ०।

पुहुंचाईजणो, पुहुंचाईजबो—कर्म वा०।

पुहुंचायोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुहुंचायोड़ी)

पुहुंचावणो, पुहुंचावबो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचावो' (रू.भे.)

पुहुचावणहार, हारो (हारी), पुहुंचावणियो—वि०।

पुहुंचाविश्रोड़ो, पुहुंचावियोड़ो, पुहुंचाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पुहुंचावीजणो, पुहुंचावीजबो—कर्म वा०।

पुहुंचावियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पुहुंचावियोड़ी)

पहुंचियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पहुंचियोड़ी)

पुहुंतणो, पुहुंतबो—देखो 'पहुंचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)
उ०—लूंणग हाथी री सूंड उरी लेवै घोड़ा री पाहोरी मांहे घाती। अतरै बीजो ही साथ पातसाही आय पुहुंतो, तिको पातसाह नूं पकड़ लियो।—नैणसी
पुहुंतणहार, हारो (हारी), पुहुंतणियो—वि०।
पुहुंतिओड़ो, पुहुंतियोड़ो, पुहुंत्योड़ो—भू०का०कृ०।
पुहुंतीजणो, पुहुंतीजबो—भाव वा०।
पुहुंतियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पुहुंतियोड़ी)
पुहुण—देखो 'पुरण' (रू.भे.)
उ०—इतरी बात करतां ही मेरो आसथान रै गुढ़ा रा तीन पुहुण लीया। इण रा गुढ़ा रा लोग पुकारता इणां आगै आया।—नैणसी
पुहुतणो, पुहुतबो—देखो 'पहुचणो, पहुंचबो' (रू.भे.)
उ०—ताहरां सिखरै जी बाकरै रो कांन चीरनै साथै बांध लियो नै जाय तळाव पुहुता।—नैणसी
उ०—२ निरखइ नगर कांमावती, कांमसेन भूपाळ। गढ़ मढ़ मंदिर अति भलां, तिहां पुहुतु ततकाळ।—मा.कां.प्र.
पुहुतणहार, हारो (हारी), पुहुतणियो—वि०।
पुहुतिओड़ो, पुहुतियोड़ो, पुहुत्योड़ो—भू०का०कृ०।
पुहुतीजणो, पुहुतीजबो—भाव०वा०।
पुहुतियोड़ो—देखो 'पहुचियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पहुतियोड़ी)
पुहुप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)
पुहुपमाळ—देखो 'पुस्पमाळा' (रू.भे.)
उ०—देहा विलेप स्रीखंड हाल। मालती चंपका पुहुपमाळ।
—गु.रू.बं.
पुहुरायत—देखो 'पौ'रायत' (रू.भे.)
उ०—पुहुरायत पूठियया, अहीआ वळी तलार। दीवटीया दह दिसि रह्या, पालीयात नहीं पार।—मा कां.प्र.
पुहुवि, पुहोवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)
उ०—कूरव कूड़ न सीधउ काज, पुण्यइ पांडव पांम्यां राज। पुण्य प्रसंसा पुहुवि करी, पद्मनाभ पंडित विस्तरी।—कां.दे.प्र.
पुहोवीधणी—देखो 'प्रथवीधणी' (रू.भे.)
उ०—स्त्री बाळक पुहोवीधणी रे, ए तिहुं एक सभाव। रढ नवि छांडे आपणी रे, भावें तो घर जाय।—प.च.चौ.
पूं—सं०पु० [अनु०] अधोवायु के निकलते समय उत्पन्न होने वाली ध्वनि।
पूंक—देखो 'पूंख' (रू.भे.)
पूंकड़ो—देखो 'पूंख' (अल्पा०, रू.भे.)
पूंकणो, पूंकबो—देखो 'प्रांखणो, प्रांखबो' (रू.भे.)
पूंकणहार, हारो (हारी), पूंकणियो—वि०।
पूंकिओड़ो, पूंकियोड़ो, पूंक्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूंकीजणो, पूंकीजबो—कर्म वा०।
पूंकियोड़ो—देखो 'प्रांखियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूंकियोड़ी)
पूंख—सं०पु० [सं० प्रङ्ख] १ बाजरी का सिट्टा (मारवाड़)
उ०—मोटयार ठाकुरजी रा प्रसाद वास्ते खेतां में पूंख मतीरा लावण नै गयोड़ा हा।—रातवासो
२ ज्वार का सिट्टा (किशनगढ)
३ मक्का का भुट्टा (मेवाड़, डूंगरपुर)
४ खेत की सीमा या मेढ (किशनगढ)
रू०भे०—पूंक।
अल्पा०—पूंकड़ो, पूंखड़ो।
पूंखणो, पूंखबो—देखो 'प्रांखणो, प्रांखबो' (रू.भे.)
उ०—१ गावै जोगणि गीत, ऊडै सर सांम्हा अखत। वेद भणे नारद ब्रहम, पूंखै अछर प्रवीत।—वचनिका
उ०—२ पुड़ करै पंखणी अपछर पूंखै, धार तोरण मणी वदै खग धोड़। विकट लाडो वणी बींद बांको, मयंक रो परणजै बांधियां मोड़।—गोपाळदास चांपावत रो गीत
उ०—२ पुड़ धर पंख जोगणी पूंखै, निधक घाव दमांम निहाव। चौरंग सूर्य पगै चालियो, रोद घड़ा दिस बांको राव।
—दूदा नगराजोत रो गीत
पूंखणहार, हारो (हारी), पूंखणियो—वि०।
पूंखिओड़ो, पूंखियोड़ो, पूंख्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूंखीजणो, पूंखीजबो—कर्म वा०।
पूंखाळो—वि०पु० [राज० पूंख+सं० आलुच्] (स्त्री० पूंखाळी)
पूंख वाला।
पूंखियोड़ो—देखो 'प्रांखियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूंखियोड़ी)
पूंखियो—सं०पु०—१ घास विशेष।
२ देखो 'पूंख' (अल्पा., रू.भे.)
पूंग—देखो 'पूग' (रू.भे.)
पूंगड़ो—सं०पु० [देशज] (स्त्री० पूंगड़ी] १ प्रतिष्ठित संतान।
उ०—वीरमदेजी सिलांम करि कह्यौ, हजरत म्हे घर रा धणी रजपूत जमींदार भोमियां छां पातिसाह रा पूंगड़ा म्हारै घर लायक नहीं।—वीरमदे सोनिगरा री वात
२ शाहजादा। उ०—१ तरै नवलाख रिपिया रोकड़ हाथ खरच नूं दिराइया और आवतां जावतां री रोकड़ खरच दिरायो। और बादसाह खुस होय कह्यौ—जलाल बादसाह रै पूंगड़ा होय जैसा ही है।
—जलाल बूबना री वात
उ०—२ जोर जोवण चढी अणी नख जोड़ली, पिलंग पाधर पड़ी 'दलै' पाली। जावदी तणी घड़ पूंगड़ो जीव ले, होड ग्रहणा हसत छोड हाली।—नैणसी

रू०भे०—फूंबड़ो, फूदड़ो, फूबड़ो, फूमड़ो।

पूंगरण—देखो 'पंगरण' (रू.भे.)

उ०—भागो कंत लुकाय घण, लें खग आतां धाड़। पहर धणी चा पूंगरण, जीती खोल किवाड़।—वी.स.

पूंगळ-सं०पु०—बीकानेर राज्यान्तरगत एक भू भाग का नाम।

उ०—छापर मोहिल राज करै ताहरां मोहिलां नाळेर सादूळ रांणंगदेवोत नूं पूंगळ मेल्हियो।—नैणसी

रू०भे०—पुंगळ, पुग्गळ, पूगळ, पूगळि।

पूंगी-सं०स्त्री० [देशज] सपेरे का फूक वाद्य विशेष। उ०—१ दूजा गज रो पोगर अरिसिंघ री पाघ ऊपर आयो जांणे पूंग्यां रा पूंज पर नागराज भोग उठायो।—वं.भा.

उ०—२ मिणधर, छत्रधर, अवर गेल मन, ताइ धर रज धर 'सींघ' तण। पूंगीदळ पातसाह पैरतां, फेरे कमळ न सहंसफण।

—महाराणा प्रताप री गीत

पूंगीफळ-सं०पु० [सं० पूगफल] सुपारी।

रू०भे०—पुंगीफळ, पूगफळ।

पूंगीधर-सं०पु० [राज० पूंगी+सं० धारिन्] 'पूंगी' को रखने वाला।

उ०—कळपै अकबर काय, गुण पूंगीधर गोड़िया। मिणधर छाबड़ मांय, पड़ै न राण 'प्रतापसी'।—दुरसो आढो

पूंचणा—देखो 'पांचणा' (रू.भे.)

उ०—ताहरां छोकरी कह्यो—बाईजी! एथ सिरांवण बीजो तौ क्युं ही नहीं। बाकरां रा पूचणा तो चरु मांहे छै।—नैणसी

पूंचाळ—देखो 'पूंचाळो' (मह., रू.भे.)

उ०—परी ईस जोगणि खग प्रभणै, सात पहर वीता जुध साल। गुड़सी कठै कमळ खग गांमा, पड़सी किण ठांमां पूंचाळ।

—महाराजा बळवंतसिंह गोठड़े री गीत

पूंचाळो-वि० [?] सामर्थ्यवान, शक्तिशाली, बाहुबल वाला।

उ०—१ रुख-रुख तीरां रूकड़ां, मुख मुख बीरां मोळ। पूंचाळा हेकण पखै, दैल में प्रवळ दरोळ।—बी.स.

उ०—२ 'पातल' तणो 'जसो' पूंचाळो। भाखर 'रिदै' तणो भुरजाळो—रा रू.

रू०भे०—पुंचालो, पूंछालो, पूचालो।

मह०—पुंचाळ, पूंचाळ, पूंछाळ।

पूंचियो—देखो 'पुणचो' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—ए रे गांवां के गोखै रांणी, पटवो पोवै छै पाटा जी, मेरे सायब को पो दे पूंचियो रांणी, सती माता नै नवसर हारो जी।—लो.गी.

पूंची-सं०पु० [?] १ चोरी का माल लाकर देने वाला व्यक्ति।

२ उक्त कार्य के बदले कार्यकर्त्ता को दिया जाने वाला धन, पारिश्रमिक (शेखावाटी)

३ बैल गाड़ी के अग्रभाग वाले लम्बे डण्डों के पिछले भाग पर चौड़े तख्ते के नीचे मजबूती के लिये लगाया जाने वाला डंडा। (मारवाड़)

४ बैलगाड़ी के पिछले भाग में लगाया जाने वाला लकड़ी का कटहरा।

५ देखो 'पुणची' (रू.भे.)

उ०—है कानै मोताहळ कर पूंची, कंठमाळ पै संकळ। राघौ नाम विहूंण, अनखाणी ढोर आदम्मी।—र.ज.प्र.

रू०भे०—पहुंचो, पूछ, पूछी।

पूंचो-सं०पु० [?] कलाई, मणिबंध।

उ०—फूटै पुड़ नौबत पड़ी, टूटै डंड निसांण। पेख सहेली पीव रै, पूंचै बधियो पांण।—वी.स.

२ देखो 'पुणचो' (रू.भे.)

पूंछ-सं०स्त्री० [सं० पुच्छ] १ गुदा मार्ग के ऊपर रीढ़ की हड्डी की संधि में या उससे निकल कर नीचे की ओर कुछ दूर तक लम्बा चला जाने वाला, मनुष्य से भिन्न अन्य प्राणियों के शरीर का एक भाग विशेष, दुम, लांगूल।

उ०—अदु रूप सिखर थळ दुम विमोह। स्रंगार चमर किर पूंछ सोह।—रा रू.

पर्या०—दुम, लांगूळ, लूम, वाळधी।

क्रि०प्र०—खेंचणी, पकड़णी, मरोड़णी।

मुहा०—१ पूंछ झलाणी = गलत सलाह देकर गुमराह करना, रूढ़िवादी बनाना।

२ पूंछ झालणी = रूढ़िवादी होना, लकीर का फकीर होना, हठ करना, जिद करना।

३ पूंछ पकड़णी=देखो 'पूंछ झालणी'।

४ पूंछ फटकारणी = क्रोध व्यक्त करना, काम बिगाड़ना, विघ्न डालना, असहमति प्रगट करना।

२ किसी पदार्थ के पीछे का भाग।

रू०भे०—पूंछ, पुच्छ, पुच्छी।

अल्पा०—पूंछड़ी, पूंछड़ो, पूंछियो, पूंछड़ो।

मह०—पूंछड़।

पूंछड़—देखो 'पूंछ' (मह., रू.भे.)

उ०—वांण यथा अरजुन तणां, हवूआ पूंछड़ जेम। तिम तिम वद्धइ माहरइ, माधव-केरु प्रेम।—मा.कां.प्र.

पूंछड़तग-सं०पु० [सं० पुच्छ+रा.प्र.ड़+तु.तंग] ऊंट के चारजामे का वह रस्सा जो ऊंट की पूंछ के नीचे रहता है, तथा बैल की झूल के पीछे रस्से का बना गाळिया जो बैल की पूंछ में पहनाया जाता है।

पूंछड़ी-सं०स्त्री०—देखो 'पूंछ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—१ खड़ती सूवाड़ो वाड़ी विन खटकै। मरती मोछड़ियां पूंछड़ियां पटकै।—ऊ.का.

पूंछड़ो—देखो 'पूंछ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—हरे मांस काट लेण नै आविया। तकै मूरख भै रा मारिआ सांम्है न आविया नै पूंछड़े दसा काटण लागा।

—कल्याणसिंह नगराजोत वाढ़ेल री वात

पूंछडीलो-सं०पु० [सं० पुच्छ+रा प्र.डीलो] एक प्रकार का अशुभ घोड़ा। (शा.हो.)

पूंछणो, पूंछबो-क्रि०स० [सं० प्रोच्छन, प्रा०पोछन] गर्द, मैल अथवा गीली वस्तु को हाथ अथवा कपड़ा आदि से साफ करना, पोंछना।
उ०—कोरियोड़ा चित्रांमां री गळाई सगळा बोला बोला बैठा रह्या। ठगां रा सरदार री आंख्यां जळजळी होवण लागी तो वो आंख्यां नै गमछा सूं पूंछतां होळै सूं कह्यो।—फुलवाड़ी
पूंछणहार, हारो (हारी), पूंछणियो—वि०।
पूंछिप्रोड़ो, पूंछियोड़ो, पूंछ्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूछीजणो, पूंछीजबो—कर्म वा०।

पूंछबुवार-सं०पु० [सं० पुच्छ+राज.बुवार] पूंछ को जमीन पर घसीटता हुआ चलने वाला बैल। (अशुभ)

पूंछरेळ-वि० [सं० पुच्छ+रा.प्र.रेल] पूंछधारी।
उ०—तैंही लंक सांगा सो जोजनां गिणै तूछरेल, मूछरेल अढंगां अयारां मेल मीच। डरावणो रूप रा दयंतां भांगा दूछरेल, भांमणे रांमरा लागा पूंछरेळ भीच।—र.ज.प्र.

पूंछलतारो-सं०पु०यौ० [सं० पूंच्छ+तार] कभी-कभी उदित होने वाला वह तारा जिससे लगा हुआ भाप या कुहरे सा द्रव्य पूंछ के आकार में दूर तक दिखाई देता है।

पूंछवाळ-सं०पु०यौ० [सं० पुच्छ+बाल] बैल अथवा पशु की पूंछ के निचले भाग के बाल।

पूंछापाछ, पूंछापांछो-वि० [अनु०] अवशिष्ट, शेष, बचा हुआ।
सं०पु०—पोंछने की क्रिया या भाव।

पूंछाळ—देखो 'पूंचाळो' (मह., रू.भे.)

पूंछियोड़ो-भू०का०कृ०—गर्द, मैल, गीली वस्तु आदि को हाथ, कपड़ा आदि से साफ किया हुआ, पोंछा हुआ।
(स्त्री० पूंछियोड़ी)

पूंछियो—देखो १ 'पूंची' (अल्पा., रू.भे.)
२ देखो 'पूणयो (अल्पा., रू.भे.)

पूंछी-सं०स्त्री० [सं० पुच्छ] चौपायों पर लिया जाने वाला कर विशेष (नेणसी)

पूंछेटणो, पूंछेटबो-क्रि०स० [सं० पुच्छ+रा.प्र. एटणो] तेज गति से चलाने हेतु बैलों का पूंछ मरोड़ना।

पूंछेटियोड़ो-भू०का०कृ०—तेज गति से चलाने हेतु पूंछ मरोड़ा हुआ। (बैल)
(स्त्री० पूंछेटियोड़ी)

पूंज-सं०पु० [स० पुंज] १ बाजरी के सिट्टों का ढेर (मारवाड़)
२ घास का लंबा सीधा ऊंचा गंज।
३ देखो 'पुंज' (रू.भे.)
उ०—जरै वीरमदेजी तिण मोरचै 'घाघा' वांनर नै राखियो, सेलां रो गंज करायो, कटारियां रा पूंज दिराया।
—वीरमदे सोनिगरा री वात
४ देखो 'पूंजवाळ' (रू.भे.)
अल्पा०—पूंजळी।

पूंजड़ी—देखो 'पूंजी' (अल्पा०, रू.भे.)

पूंजण-सं०पु० [स० परिमार्जनम्] सफाई करने का उपकरण (जैन)
उ०—ते सरीर री साता रै अरथे वस्त्रादिक आछा पाछा पूंजणादिक करै ते सावद्य छै।—भि.द्र.

पूंजणी-सं०स्त्री० [सं० प्रमार्जिका] जैन साधु, साध्वी द्वारा जमीन बुहारने का कपड़े का अथवा सूत का बना चंवरनुमा उपकरण जिसे वे सदैव अपने पास रखते हैं। उ०—जे अढाई द्वीप बारला तरयंच स्रावक सामायक पोसा करै ते किसी पूंजणी राखै छै।—भि.द्र.
रू०भे०—पउजणी।

पूंजणो, पूंजबो-क्रि०स० [सं० पुंज+रा.प्र. णो] १ 'पूंजणी' या 'ओघा' द्वारा शरीर में होने वाली खुजली का मिटाना, खाज मिटाना।
उ०—१ जद स्वांमीजी पाछो फरमायो पूंजनै खुणै ऊभा रहै।
—भि.द्र.
उ०—२ जद स्वांमीजी बोल्या पूंजनै खाज खणै सो जावता सामायक रा करै कै काया रा करै है।—भि.द्र.
२ ओघा या पूंजणी द्वारा किसी स्थान का परिमार्जन करना।
पूंजणहार, हारो (हारी), पूंजणियो—वि०।
पूंजिप्रोड़ो, पूंजियोड़ो, पूंज्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूंजीजणो, पूंजीजबो—कर्म वा०।

पूंजळी—देखो 'पूंज' (अल्पा., रू.भे.)

पूंजवाळ-सं०पु० [देशज] १ मूंज या डाभ का वह भाग जो एक बार रस्सी बुनने मे जोड़ा जाता है।
२ रस्सी या पलंग बुनते समय मूंज से गिर कर बिखरने वाला फूस।

पूंजी-सं०स्त्री० [सं० पुञ्ज] १ जोड़ा या जमा किया हुआ धन।
उ०—१ फल किहां थी विण फूल, गांम विना सीम न गिणजो। गुर विन हुवै न ग्यांन, विगर पूंजी किम विणजै।—ध.व.ग्रं.
उ०—२ लोपै हिंदू लाज, सगपण रोपै तुरक सूं। आरज कुळ री आज, पूंजी रांण 'प्रतापसी'।—दुरसो आढो
२ व्यापार में लगाया हुआ या ऋण पर दिया हुआ धन, मूल धन।
३ ऐसा धन या संपत्ति जिससे आय होती हो।
४ किसी विषय की समस्त योग्यता या धन।
क्रि०प्र०—खोणी, गंमांणी जोड़णी, लगांणी।
रू०भे०—पुंजी।
अल्पा०—पूंजड़ी।

पूंजीदार-सं०पु०यौ० [रा० पूंजी+फा० दार] १ अधिक धन या सम्पत्ति वाला व्यक्ति।
क्रि०प्र०—बणणो, होणी।

पूंजीदारी-सं०स्त्री०यौ० [रा० पूंजी+फा० दार+रा.प्र.ई] पूंजीदार होने की अवस्था या भाव।

पूंजीपति-सं०पु० [सं० पुंज+रा.प्र.ई+सं० पति] १ वह जिसके पास अधिक धन हो।
२ वह व्यक्ति जो लाभ की दृष्टि से विभिन्न उद्योग-धंधों में पूंजी लगाता हो, पूंजीदार।
पूंजीवाद-सं०पु०यौ० [रा० पूंजी+सं० वाद] वह आर्थिक प्रणाली जिसमें देश के उत्पत्ति तथा वितरण के प्रमुख साधनों पर पूंजी-पतियों का व्यक्तिगत अधिकार हो।
पूंजीवादी-सं०पु०यौ० [रा० पूंजी+ सं० वादिन्] पूंजीवाद के सिद्धांत को मानने वाला व्यक्ति।
पूंठ—देखो 'पीठ' (रू.भे.)
पूंठगठरी-सं०स्त्री०यौ० [सं० पृष्ठ+रा० गठरी] घूम कर माल बेचने वाले के पीठ पर लदी हुई गठरी।
पूंठियौ, पूंठीड़ौ-सं०पु० [देशज] वस्त्रविशेष, अंगा, अंगरखा।
पूंण-वि० [सं० पाद+ऊन] १ तीन-चौथाई भाग, पौन।
उ०—निज करम परम निरसंक ह्वै, बीदग धरम बनावणूं। हित हरख सवाया पूंण हुय, लूण कदे न लजावणूं।—ऊ.का.
२ देखो 'पुरण' (रू.भे.)
रू०भे०—पुंण, पूण, पूणौ।
अल्पा०—पूंणियौ, पूणियौ।
पूंणियौ—देखो 'पुरणियौ' (रू.भे.)
२ देखो 'पुरण (अल्पा०, रू.भे.)
३ देखो 'पूंण' (अल्पा०, रू.भे.)
पूंतरौ-सं०पु० [ ] छिलका, छाल। उ०—लड़णनै लागि जावै ललकि, वौ पड़ण न देवै पूंतरा। नित नारि गैल रोवै निलज, छैल मती पो छूंतरा।—ऊ.का.
पूंतारणौ, पूंतारबौ-क्रि०स० [सं० पूताऽन्तरणम्] प्रोत्साहित करना, जोश दिलाना। उ०—१ उरं ओद्रके सास अभ्यास आणे, वडा जूह पूंतारिआ पीलवांणे। गंडां मारि वेसारिआ नीठ गज्जं, छमा-माळ फेरे करे झाड़ि रज्जं।—वचनिका
उ०—२ भड पूंतारे आपरा, धारे सांमधरम्म। 'भांण' तणौ अस भेळिया, वळ सांघणौ दुगम्म।—
२ दुलारना, प्यार करना।
पूंतारणहार, हारौ (हारी), पूंतारणियौ—वि०।
पूंतारिओड़ौ, पूंतारियोड़ौ, पूंतारयोड़ौ—भू०का०कृ०।
पूंतारीजणौ, पूंतारीजबौ—कर्म वा०।
पूतारणौ, पूतारबौ, पूतारणौ, पूतारबौ, पूंतारिणौ, पूंतारिबौ, पोता-रणौ, पोतारबौ, पौतारणौ, पौतारबौ, प्यूतारणौ, प्यूतारबौ—रा०रू०
पूंतारियोड़ौ-भू०का०कृ०—१ प्रोत्साहित किया हुआ। २ दुलारा हुआ, प्यार किया हुआ।
(स्त्री०—पूंतारियोड़ी)
पूंद-सं०पु०—नितम्ब, चूतड़।
रू०भे०—पून।
पूंदियौ-सं०पु० [राज० पूंद+रा.प्र. इयौ] चरस चलाते समय लाव (रस्सी) पर रख कर बैठने का चमड़े का टुकड़ा।
पूंदौ-वि० [देशज] कायर, डरपोक। उ०—खेळा चंठी नचातौ भ्रो मचातौ सूरमां खागां, घणा जाडा थंडां नूं रचातौ घेर घेर। हाकले रांणा सूं साम्हैं चालतौ जे पूंदौ हाडा, वूंदी आडावला सूधौ रालतौ बखेर।—जीवाजी भादौ
पून—१ देखो 'पवन' (रू.भे.)
उ०—कठै तो वा दिन में तवा जसी तप्योड़ी धरती'र वळवळती लू अर कठै आ ठंडी ठंडी मखमल जसी नरम नरम रेत अर धीमी मुधरी पून।—रातवासौ
२ देखो 'पूंद' (रू.भे.)
पूंमड़ौ—देखो 'पूंगड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पूंमड़ी)
पू-वि०—पूर्ण।
सं०स्त्री०—१ गंगा।
सं०पु०—२ नभ, आकाश।
३ पूर्व, प्राची।
४ नगर।
५ शरीर, वपु।
पूइय-सं०पु०—पूजित (जैन)
पूओहर—देखो 'पयोधर' (रू.भे.)
पूओ—देखो 'पुओ' (रू.भे.)
पूकार—देखो 'पुकार' (रू.भे.)
पूख—देखो 'पुस्य' (रू.भे.) (नां मा.)
पूखण-वि० [सं० पूषणम्] १ पोषण करने वाला, पालन करने वाला।
उ०—हरि कहइ जिके करि भाव घणइहित, दासां तियां तणउ हूं दास। वरणविजइ ईसर वरदायक, आस वंधण पूखण हास।
—महादेव पारवती री वेलि
२ देखो 'पूसण' (रू.भे.)
उ०—सिणगार कर दुति विहुव पूखण जगे भूखण जोत। पख पूर जांणे विवध संपत अवध कीध उदोत।—र.रू.
पूखा—१ देखो 'पूसण' (रू.भे.) (अ.मा.)
२ देखो 'पुस्य' (रू.भे.)
पूग-सं०पु० [सं०] १ सुपारी।
२ सुपारी का पेड़।
३ समूह, झुण्ड (ह.नां.मा.)
रू०भे०—पुंग, पूंग।
४ देखो 'पहुंच'।
पूगणौ, पूगबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ'।
उ०—१ पंथ असेंदे पूगणौ, अळगौ घणौ अकत्थ। न्है विण जांण्यौ हालणौ, संवळ (जा) विण सत्थ।—वां.दा.

उ०—२ अजको गहली रो कळस, बळती रो नाळेर। एकल पूगो टेकलो, आस किसू धव केर।—वी.स.

उ०—३ बुद्धि सूं च्यारां नै पकड़्यां माल राख्यो। अनै एक साथै च्यारां सूं झगड़तो तो कद पूगतो।—भि.द्र.

उ०—४ तपधारी 'तखतेस' रो, सुत मोमी सुभियांण। धरा हूंत सुरधर धणी, पूगो सुरग पयांण।—ऊ.का.

उ०—५ नित समरु एह नो नाम रे, सहुवाते समरथ साम रे। हिय पूगी हिया नी हाम रे, श्रो हिज मुझ आतम राम रे।—ध.व.ग्रं.

उ०—६ इसड़ो अमोघ उपाइ बिचारि कपट रै प्रपंच बांणियां री बरात बणाइ बाजियां रै बदळै रथ छकड़ा जुताइ किताक प्रवहणां मैं प्रहरण छिपाइ कुंकुम रा रंग में गरक दुकूल कीधां दूजी दिसा रै मारग मंडोवर पूगिया।—वं.भा.

उ०—७ रांणी हे सखि! रांणो है अति रंढाल, धरणी हे सखि! धरणी मनहरणी वरी जी। मन नी हे सखि! मन नी पूगी आस, सफली हे सखि! सफलो परतंग्या करी जी।—प.च.चौ

उ०—८ नास गयो जीवतव्य नो जी, पिणसी पूगी आस। तें कल्पद्रुम जाणि नै जी, सेव्यो निगुण पलास।—वि.कु.

पूगणहार, हारो (हारी) पूगणियो—वि०।

पूगवाड़णो, पूगवाड़बो, पूगवाणो, पूगवाबो, पूगवावणो, पूगवावबो —प्रे०रू०

पूगाड़णो, पूगाड़बो, पूगाणो, पूगाबो, पूगावणो, पूगावबो—सक०रू०

पूगिओड़ो, पूगियोड़ो, पूग्योड़ो—भू०का०कृ०।

पूगीजणो, पूगीजबो—भाव वा०।

पूगफळ—देखो 'पूंगीफळ' (रू.भे.)

पूगरण—देखो 'पंगरण' (रू.भे)

उ०—वीर स्त्री आपरा कपड़ा उतार, पति नै पहिराय घर में आधो घुसाय, आप पती रा पूगरण कपड़ा पहर तरवार संभाय घर रो किंवाड़ खोल सत्रुआं नै मार तंडलकर झगड़ो जीत गई।—वी.स.टी.

पूगळ—१ देखो 'पुद्गळ' (रू.भे.)

उ०—आदि के अनंतानंत, सिद्ध रुबे जीव संत, दूसरैं निगोद जीव तीजैं वनरास है। चौथो काळ को सरूप, पंचमो पूगळ रूप, छट्टो वेद भेद तूं अलोक को आकास है।—ध.व.ग्रं.

२ देखो 'पूंगळ' (रू.भे.)

उ०—हाथ करो रे पूगळ पदमणी रे, आछी, दासी होय-होय जाय। आलीजो रे जोवसा म्हारा राज।—लो.गी.

पूगळगढ, पूगळि—देखो 'पूंगळ' (रू.भे.)

उ०—१ इण तो आंगणियै, सायबा सासूजी फिरैला जी, जांणै पूगळगढ रा पदमणी जो।—लो.गी.

उ०—२ पूगळि पिंगळ राऊ, नळ राजा नरवरे नयरे। अदिठा दुरिट्ठा ये, सगाई दईय संजोगे।—ढो.मा.

पूगळिया—सं०स्त्री०—भाटी वंश की एक शाखा।

उ०—भाटियां री खांप लिखंते—जेचंद, जेतूंग, बुध, केलण, सरूपसी, सीहड़·········पचायणोत, देरावरिया, पूगळिया, गुगळी, सोम·······।—बां.दा. ख्यात

पूगाड़णो, पूगाड़बो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचाबो'।

पूगाड़णहार, हारो (हारी), पूगाड़णियो—वि०।

पूगाड़िओड़ो, पूगाड़ियोड़ो, पूगाड़्योड़ो।—भू०का०कृ०।

पूगाड़ीजणो, पूगाड़ीजबो—कर्म वा०।

पूगाड़ियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पूगाड़ियोड़ी)

पूगाणो, पूगाबो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचाबो'।

पूगाणहार, हारो (हारी) पूगाणियो—वि०।

पूगायोड़ो—भू०का०कृ०।

पूगाईजणो, पूगाईजबो—कर्म वा०।

पूगावणो, पूगावबो—देखो 'पहुंचाणो, पहुंचाबो' (रू.भे.)

पूगावणहार, हारो (हारी), पूगावणियो—वि०।

पूगाविओड़ो, पूगावियोड़ो, पूगाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पूगावीजणो, पूगावीजबो—कर्म वा०।

पूगावियोड़ो—देखो 'पहुंचायोड़ो'।

(स्त्री० पूगावियोड़ी)

पूगियोड़ो—देखो 'पहुंचियोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पूगियोड़ी)

पूचाळो—देखो 'पूंचाळो' (रू.भे.)

उ०—सांमळ सूर जही 'सांगाहर', सांची पैज सम्हाळी। रूंधे दूसमण रै उर रोपी, पूचाळो प्रत माळी।

—केसवदास सक्तावत रो गीत

पूछ—सं०स्त्री०—१ पूछने की क्रिया।

२ चाह या जरूरत।

३ आदर, इज्जत। उ०—यूं गांव में ऊठ ही मोकळा हा पण ठाकुर री पूछ विसेस ही। इण रा कई कारण हा, जिणमें सबसूं पं'लो कारण हो ठाकुर रो निरलोभी सुभाव।—रातवासो

क्रि०प्र०—करणी, होणी।

यौ०—पूछगाछ, पूछताछ।

पूछगाछ—देखो 'पूछताछ' (रू.भे.)

उ०—उण कहणे वालां सांमो ही नहीं दीठो। उण सू पूछगाछ न कीवी।—नी.प्र.

पूछड़ो—देखो 'पूंछ' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—वांदर वळता पूछड़ा दरियाव बुझाया।

—केसोदास गाडण

पूछणो, पूछबो—क्रि०स० [सं० पृच्छ] १ आदर करना या कदर करना।

ज्यूं—आजकाल तो गुणवांणां ने कोई पूछे नीं।

२ ध्यान देना या टोकना।

ज्यूं—आप तो सीधा चला जाज्यो, आपने कोई नीं पूछैला।

३ किसी के प्रति सहानुभूति रखते हुए कुशल समाचार जानना।

उ०—सुख सूं बैठी सदन में, क्यूं पूछो कुसळात। तो तन कुसळा-यत तणी, बालम पूछूं बात।—बां.दा.

४ किसी के प्रति आदर-सत्कार का भाव प्रगट करते हुए उसकी ओर उचित ध्यान देना।

ज्यूं—इतरी भीड़ भाड़ में कोई कीनेई को पूछै नी।

मुहा०—बात न पूछणी—कुछ भी ध्यान न देना।

५ किसी से कोई बात जानने या समझने को शब्दों का प्रयोग करना, पूछना। उ०—माळवणी मनि दूमणी, आवि वरग विमासि। रइबारी पूछो करी, आई करहा पासि।—ढो.मा.

६ जांच, परीक्षा आदि के लिए प्रश्नों द्वारा उत्तर प्राप्त करना।

उ०—काढै दोसण कायबां, बातां किए बिगोय। पूछै अरथ र पह-लियां, सूंब मजाकी सोय।—बां.दा.

पूछणहार, हारो (हारी), पूछणियो—वि०।

पूछाडणो, पूछाडबो, पूछाणो, पूछाबो, पूछावणो, पूछावबो —प्रे०रू०।

पूछिप्रोड़ो, पूछियोड़ो, पूछयोड़ो—भू०का०कृ०।

पूछीजणो, पूछीजबो—कर्म वा०।

पूच्छणो, पुच्छबो—रू०भे०।

पूछताछ, पूछताज, पूछपाछ-सं०स्त्री० [अनु] १ पूछने की क्रिया या भाव।

२ चाह, आवश्यकता।

रू०भे०—पूछगाछ, पूछाताछी, पूछापाछी।

पूछाडणो, पूछाडबो—देखो 'पूछाणो, पूछाबो' (रू.भे.)

उ०—पणि पहिलो विचार करि अर अखैराज सलहदी नूं स्रोजो कन्है मेल्हि अर पूछाडियो।—द.वि.

पूछाडणहार, हारो (हारी), पूछाडणियो—वि०।

पूछाडिप्रोड़ो, पूछाडियोड़ो, पूछाड्योड़ो—भू०का०कृ०।

पूछाडीजणो, पूछाडीजबो—कर्म वा०।

पूछाडियोड़ो—देखो 'पूछायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पूछाडियोड़ी)

पूछाणो, पूछाबो-क्रि०स० ('पूछणो' क्रि०का प्रे०रू०) १ आदर या इज्जत कराना।

२ ध्यान दिलाना, या टोकवाना।

३ किसी के प्रति सहानुभूति रखवाते हुए कुशल समाचार ज्ञात करवाना।

४ किसी के प्रति आदर-सत्कार भाव प्रगट करवाते हुए उसकी ओर उचित ध्यान दिलाना।

५ किसी की कोई बात जानने या समझने को शब्दों का प्रयोग कराना, पूछाना।

६ जांच, परीक्षा आदि के लिए प्रश्नों द्वारा उत्तर प्राप्त कराना।

पूछाणहार, हारो (हारी), पूछाणियो—वि०।

पूछायोड़ो—भू०का०कृ०।

पूछाईजणो, पूछाईजबो—कर्म०वा०।

पूछाताछी, पूछापाछी—देखो 'पूछताछ' (रू.भे.)

पूछायोड़ो-भू०का०कृ०—१ आदर या इज्जत कराया हुआ।

२ ध्यान दिवाया हुआ।

३ किसी के प्रति सहानुभूति रखाते हुए कुशल समाचार ज्ञात कर-वाया हुआ।

४ किसी के प्रति आदर भाव प्रगट करवाते हुए उसकी ओर उचित ध्यान दिलवाया हुआ।

५ किसी की कोई बात जानने या समझने हेतु शब्दों का प्रयोग कराया हुआ।

६ जांच, परीक्षा आदि के लिए प्रश्नों द्वारा उत्तर प्राप्त कराया हुआ।

(स्त्री० पूछायोड़ी)

पूछावणो, पूछावबो—देखो 'पूछाणो, पूछाबो' (रू.भे.)

पूछावणहार, हारो (हारी), पूछावणियो—वि०।

पूछाविप्रोड़ो, पूछावियोड़ो, पूछाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पूछावीजणो, पूछावीजबो—कर्म वा०।

पूछावियोड़ो—देखो 'पूछायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पूछावियोड़ी)

पूछियोड़ो-भू०का०कृ०—१ आदर या कदर किया हुआ।

२ ध्यान दिया हुआ, टोका हुआ।

३ किसी के प्रति सहानुभूति रखते हुए कुशल समाचार जाना हुआ।

४ किसी के प्रति आदर सत्कार का भाव प्रगट करते हुए उसकी ओर उचित ध्यान दिया हुआ।

५ किसी से कोई बात जानने या समझने को शब्दों का प्रयोग किया हुआ।

६ जांच, परीक्षा आदि के लिए प्रश्नों द्वारा उत्तर प्राप्त किया हुआ।

(स्त्री० पूछियोड़ी)

पूछो—देखो 'पूंछो' (रू.भे.)

पूज-सं०पु० [सं० पूज्य] १ देवता (डि.को.)

२ देखो 'पूजा' (रू.भे.)

उ०—१ सुर झालर घंटा-सरसाया, महजीतां सुर बांग मिटाया। सिव हरि सकत सेव सरसाई, मीर पीर त्यां पूज मिटाई।—रा.रू.

उ०—२ सिलल धार जळ धार लगो सूंड माळप्प सवण, धमंकियो लोक बळ कमण चालै। जण समै धरै गिरधर धणी ते जिम जकै। पूज सुरपत तणी भलां पाळै।—बां.दा.

रू०भे०—पुज्ज।

पूजक, पूजग–सं०पु० [सं० पूजक] पूजा करने वाला। उ०—दाता दे वित दान मौज मांणै मुरसंडा। लाखां लै धन लूट पूतळी पूजग पंडा।—ऊ.का.

रू०भे०—पुजग, पुयग्र।

पूजजी—देखो 'पूज्यजी' (रू.भे.)

उ०—घदो भवियण हित ग्रांणी। पूजजी नीं मीठी वांणी।

—वि कु.

पूजणी, पूजबौ–क्रि०स० [सं० पूजनं] १ देवी-देवता की आराधना करना, अर्चना करना, पूजा करना। उ०—१ करसूं कमळ कवेरजा, निज सिर नांखै नाग। पित तूं कमळां पूज ही, बारण मुख बड भाग।—बां.दा.

उ०—२ ढोला, सायघण मांणने, झीणी पांसळियांह। कइ लाभै हर पूजियां, हेमाळै गळियांह।—ढो.मा.

२ किसी की बराबरी करना, समानता करना। उ०—पारबती तणई बखत कुण पूजइ, चत्रबारै चढ़ि करइ विचार। दासी हुइ जउ तउ ई जीविग्रइ, देखी जइ दिन कउ दीदार।—महादेव पारवती री वेलि

३ आदर करना, सत्कार करना। उ०—'गजसाह' देखि जंहगीर गह, करि हित कमळ प्रकासियौ। पूजियौ साह मुनसप पटां, 'सूरसाह' साबासियौ।—सू.प्र.

४ प्रतिष्ठा करना, बड़ाई करना, हस्तकौशल की प्रशंसा करना। उ०—लोहारी तौ पीव रा, वले न पूजूं हत्थ। फूलंतां रण कंत रै, कढ़ी समांणी मत्थ।—वी.स.

५ पूर्ण करना। उ०—यही बात हूजौ, प्रभु पूजौ आस मन की।

—घ.व.ग्रं.

क्रि०अ०—६ इच्छा पूरी होना। उ०—१ थे सिव्वावउ सिध करउ, पूजउ थांकी आस। वीछुड़तां ही मांणसां, मेळउ दियउ उल्हास।

—ढो.मा.

उ०—२ मेदनी स्रंगार बसइ वरण अढार अति ऊंचा आवास पूजही सहू आस।—सभा

७ देखो 'पहुंचाणौ, पहुचाबौ'।

उ०—मांण करण प्रमांण बळ, मांण दजोण क पत्थ। रण जूंझै पण जीपणं, कुण पूजै समरत्थ।—रा.रू.

पूजणहार, हारौ (हारी), पूजणियौ—वि०।

पूजवाड़णौ, पूजवाड़बौ, पूजवाणौ, पूजवाबौ, पूजवावणौ, पूजवावबौ, पुजाड़णौ, पूजाड़बौ, पूजाणौ, पूजाबौ, पूजावणौ, पूजावबौ—प्रे०रू०

पूजिग्रोड़ौ, पूजियोड़ौ, पूज्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पूजीजणौ, पूजीजबौ—कर्म वा०, भाव वा०।

पूजदेव–सं०पु० [सं० पुज्यदेव] इष्टदेव, पूज्यदेव।

पूजन–सं०स्त्री० [सं०] देवी देवता अथवा अन्य किसी पूज्यनीय की वंदना, आराधना।

रू०भे०—पूयण।

पूजनीक, पूजनीय–वि० [सं० पूजनीय] अर्चनीय, पूजा करने योग्य।

उ०—१ पण एक अरज आप सूं है कै आपणै घर में तखत, छत्र वगैरें पूजनीक चीजां है जिके हूं चाहूं।—द.दा.

उ०—२ अह अद्वितीय, पद पूजनीय। उत्साह अरघ, मिलणौ महरघ।—ऊ.का.

रू०भे०—पुजनीक।

पूजळी—देखो 'पूंजळी' (रू.भे.)

२ देखो 'पूंज' (अल्पा०, रू.भे.)

पूजवण—देखो 'पूजवांण' (रू.भे.)

पूजवणौ, पूजवबौ—१ देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ'।

उ०—घणा सियालि जे जणै, जंबूक घणा। तोहि नहं पूजवै पांण, केहरि तणा।—हा.झा.

२ देखो 'पूजणौ, पूजबौ' (रू भे.)

पूजवांण–सं०स्त्री० [सं० पूजप्राण] १ शक्ति, बल।

२ वैभव. ३ पहुंच।

रू०भे०—पूजवण।

पूजा–सं०स्त्री० [सं०] १ किसी देवी-देवता या मान्य व्यक्ति की फूल, फल, अक्षत आदि से अर्चना या वंदना करने की क्रिया।

उ०—माडे पूजा तूझ महण मथ। सकळ सरीर, करिस इम सूक्रियथ।—ह र.

२ व्यंग के रूप में मारने-पीटने की क्रिया।

क्रि०प्र०—ऊतारणौ, करणौ, कराणी, बणणौ, होणा।

पर्या०—अरचना, अरहणा।

रू०भे०—पुजा, पूज, पूया।

पूजाड़णौ, पूजाड़बौ—देखो 'पूजाणौ, पूजाबौ' (रू.भे.)

पूजाड़णहार, हारौ (हारी), पूजाड़णियौ—वि०।

पूजाड़िग्रोड़ौ, पूजाड़ियोड़ौ, पूजाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पूजाड़ीजणौ, पूजाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पूजाड़ियोड़ौ—देखो 'पुजायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पूजाड़ियोड़ी)

पूजाणौ, पूजाबौ ('पजणौ' क्रिया का.प्रे.रू.) १ किसी की बराबरी कराना, समानता कराना।

२ आदर कराना, सत्कार कराना।

३ बड़ाई कराना, प्रतिष्ठा कराना।

४ पूर्ण कराना।

५ इच्छा पूरी कराना।

६ देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू.भे.)

पूजाणहार, हारौ (हारी), पूजाणियौ—वि०।

पूजायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पूजाईजणौ, पूजाईजबौ—कर्म वा०।

पुजाणौ, पुजाबौ (रू.भे.)

पूजापती–सं०स्त्री०—१ देवता को पूजा रूप में चढ़ाया जाने वाला पदार्थ।

उ०—पूजापाती मोपा लेगया, पत्थर गिडकड़ा चाटे रे !—ऊ.का.
२ देखो 'पूजा'।
पूजापो—देखो 'पुजापो' (रू.भे.)
उ०—म्हैं तो आपरै मूंन रो औ इज अरथ समझूं के इण नै गुणो परवांणै पूजापो चढ जाणो चहीजै।—फुलवाड़ी
पूजायोड़ो–भू०का०कृ०—१ किसी की बराबरी कराया हुआ, समानता कराया हुआ।
२ आदर कराया हुआ, सत्कार कराया हुआ।
३ प्रतिष्ठा या बड़ाई कराया हुआ।
४ पूर्ण कराया हुआ।
५ इच्छा पूरी कराया हुआ।
६ देखो 'पहुंचायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूजायोड़ी)
पूजारी, पूजारु, पूजारू, पूजारो—देखो 'पुजारी' (रू.भे.)
उ०—१ कूड़ा पूजारी कूड़ी कथ कीनीं। देवण कानां में पंजीरी दीनी।--ऊ.का.
उ०—२ पूजारू पूछइ 'कहइ', अरे भयांण ! अबूझ। नव योवन निकळंक नर ! तनि सी उछिम तूझ।—मा.कां.प्र.
उ०—३ गढवाड़ा राखण सरणागत, पूजारां वांधण ध्रम पाळ। विरधा तरण चेलकां वासै, घर बाहर ओठम घटाळ।—दोलो
(स्त्री० पूजारण, पूजारिण)
पूजावणो, पूजावबो—देखो 'पोमाणो, पोमाबो' (रू.भे.)
पूजावणहार, हारो (हारी), पूजावणियो—वि०।
पूजाविप्रोड़ो, पूजावियोड़ो, पूजाव्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूजावीजणो, पूजावीजबो—कर्म वा०।
पूजावियोड़ो—देखो 'पूजायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूजावियोडी)
पूजित–वि० [सं०] आराधित, सम्मानित।
पूजियोड़ो–भू०का०कृ०—१ आराधना किया हुआ, अर्चना किया हुआ।
२ किसी की बराबरी किया हुआ, समानता किया हुआ।
३ आदर किया हुआ, सत्कार किया हुआ।
४ प्रतिष्ठा किया हुआ, सत्कार किया हुआ।
५ पूर्ण किया हुआ।
देखो 'पहुंचियोडो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूजियोड़ी)
पूज्य–वि० [सं०] १ मान्य, आदरणीय।
२ पूजा किये जाने योग्य।
रू०भे०—पूज।
पूज्यजी–सं०पु० [सं० पूज्य+राज०, जी] साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका इन चतुर्विध श्री संघ के अधिष्ठाता (जैन)
उ०—पूज्यजी पधारो हो नगरी हम तणी। होसी घणो उपगार हो महामुनि।—जयवांणी
रू०भे०—पूजजी।
पूटी—देखो 'पूठी' (रू भे)
पूठ–सं०पु० [सं० पृष्ठ] १ सहायता, मदद। उ०—१ अब छोगाळा ऊठ, काळा तूं प्रतिपाळ कर। पांचाळी री पूठ, चढ रखवाळी चतुर० भुज।—रामनाथ कवियो
उ०—२ जु जो म्हारी पूठ राखो तो दरवाजे रा किवाड़ छै सु हूं तोड़ूं।—नैणसी
२ शरण। उ०—महिमो पमार पहीरा डूंगरसूं नीसरियो सु मांडवै रै पातसाह रै पूठ आयो।—नैणसी
३ देखो 'पीठ' (१ से ४) (रू.भे.)
उ०—१ दूठ घणोई दाखियो, पूठ न दी पर पक्क। मूंठ खडग हथ मेलतां, कीधो ऊठ कड़क्क।—भगतमाळ
उ०—२ परवत सम सवळो, पूठ पड़्यो सुंडाल। ततखिण जिण नांमै, ध्रंस करै नहीं आल।—ध.व.ग्रं.
उ०—३ संके जावै संग सूं, अरध निसा में ऊठ। नर मूरख तो पिण न दे, पातरियां नूं पूठ।—बां.दा.
उ०—४ खोल्या खोल्या पोळी रा किवाड़, पूठ फोर धण वा खड़ी जी राज।—लो गी.
क्रि०वि०—पीछे। उ०—आडा वन खंड दे गया, परवत दीन्हा पूठ। हियड़ा ऊपर राखती, कदे न कहती ऊठ।—ढो.मा.
रू०भे०—पूठि, पूठी।
पूठइ–क्रि०वि० [सं० पृष्ठ] पीछे। उ०—एक ऊघाड़ां बारणां, नाखी निरखण जाई। जिहां जिहां माधव संचरइ, तिहां तिहां पूठइ थाई।
—मा.कां.प्र.
पूठड़ियो–सं०पु० [सं० पृष्ठवाह] १ फेरी लगा कर सौदा वेचने वाला व्यापारी।
२ देखो 'पूठाडो' (अल्पा०, रू.भे.)
रू०भे०—पूठाड़ियो।
पूठड़ो—देखो 'पूठाड़ो' (रू.भे)
पूठणो, पूठबो–क्रि०स० [?] १ गाड़ी या शकट के चक्के के पूठी लगाना।
२ कूप तालाब के बंध में या बड़ी दीवार में एक विशेष प्रकार के घड़े हुए पत्थर लगाना।
यौ०—पूठीबंध।
पूठणहार, हारो (हारी), पूठणियो—वि०।
पूठाड़णो, पूठाड़बो, पूठाणो, पूठाबो, पूठावणो, पूठावबो—प्रे०रू०।
पूठिओड़ो, पूठियोड़ो, पूठ्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूठीजणो, पूठीजबो—कर्म वा०।
पूठरो–वि०पु० [सं० पृष्ठ] (स्त्री० पूठरी) १ पीठ का, पीछे का।

२ देखो 'फूठरो' (रू.भे.)

पूठली—देखो 'पीठ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—चंदण चोपदार तसलीम करतै-करतै जाय पगां में माथो दियो। आप पूठली थाप ऊंचो कियो।—पलक दरियाव री बात

पूठलो-वि०पु० [सं० पृष्ट] (स्त्री० पूठली) पीछे का।

उ०—१ सो आपां तो खाविंद रै पूठै साको करणै ऊपर हुवा। अर नैट पूठला इणरी ही जे चाकरी करसी।

—राठोड़ अमरसिंह गजसिंहोत री बात

उ०—२ रथरे मांही पूठलै पाछै एक पेई नै बणवाई।

—कूंवरसी सांखला री वारता

रू०भे०—पूठिलो।

पूठवाड़ो-क्रि०वि०—१ पीछे की ओर। उ०—ई सो विचार नै महीला रै पूठवाड़ै जावण लागो।—रीसालू री वात

२ देखो 'पूठाड़ो' (रू.भे.)

पूठाड़ियो—देखो 'पूठड़ियो' (रू.भे.)

२ देखो 'पूठाड़ो' (अल्पा०, रू.भे.)

पूठाड़णो, पूठाड़बो—देखो 'पुठाणो, पुठाबो' (रू.भे.)

पूठाड़णहार, हारो (हारी), पूठाड़णियो—वि०।

पूठाड़िओड़ो, पूठाड़ियोड़ो, पूठाड़योड़ो—भू०का०कृ०।

पूठाड़ीजणो, पूठाड़ीजबो—कर्म वा०।

पूठाड़ियोड़ो—देखो 'पूठायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पूठायोड़ी)

पूठाड़ो-सं०पु० [सं० पृष्ठ+रा.प्र. ड़ो] फेरी लगा कर सोदा बेचने का भुगचा।

रू०भे०—पूठड़ो, पूठवाड़ो।

अल्पा०—पुठड़ियो, पूठाड़ियो।

पूठाणो, पूठाबो-क्रि०स० [सं० पृष्ठ+रा. प्र. णो] देखो 'पुठाणो, पुठाबो' (रू.भे.)

पूठाणहार, हारो (हारी), पूठाणियो—वि०।

पूठायोड़ो—भू०का०कृ०।

पूठाईजणो, पूठाईजबो—कर्म वा०।

पूठायोड़ो-भू०का०कृ०—१ पूठी चढ़ाया हुआ गाड़ी का चक्का।

२ विशेष प्रकार की घड़त का पत्थर से बंधा हुआ (कूप, तालाब)

(स्त्री० पूठायोड़ी)

पूठावणो, पूठावबो—देखो 'पुठाणो, पुठाबो' (रू.भे.)

पूठावणहार, हारो (हारी), पूठावणियो—वि०।

पूठाविओड़ो, पूठावियोड़ो, पूठाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पूठावीजणो, पूठावीजबो—कर्म वा०।

पूठावियोड़ो—देखो 'पूंठ योड़ो' (रू.भे)

(स्त्री० पूठावियोड़ी)

पूठि—देखो 'पूठ' (रू.भे)

उ०—ढोलइ चढि पड़ताळिया, डूंगर दीन्हा पूठि। खाजे वावू हत्यड़ा, धूड़ि भरेसी मूठि।—ढो.मा.

उ०—२ धरपति गोळ, हरोळ तोप धुरि। पूठि पहाड़, दुरंग तारा-पुरि।—सू.प्र.

२ देखो 'पीठ' (रू.भे.)

उ०—रतनारी पाखर पूठि रुळंती, भिड़ज वघइ ताइ आगळ भाण। अंबरराव हतउ ओफाड़इ, सिहरां रा सींगे सहिनांण।

—महादेव पारवती री वेलि

३ देखो 'पूठी' (रू.भे.)

पूठियो-सं०पु० [देशज] पहिनने का एक वस्त्र विशेष, अंगरखा।

पूठियोड़ो-भू०का०कृ०—१ पूठी चढाया हुआ (।) (गाड़ी का चक्का या कूप तालाब का बंध)

(स्त्री० पूठियोड़ी)

पूठिलो—देखो 'पूठलो' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—पूठिलो परि तै गळगळै, पिण नहीं कोई उपाय। सगळै जो कहै जळ नै बिना, जीव विछूटो जाय।—वि.कु.

(स्त्री० पूठिली)

पूठी-सं०स्त्री० [?] १ गोलाकार बनाने हेतु बैलगाड़ी के चक्के के ऊपर लगाई जाने वाली चन्द्राकार बनी लकड़ी का खण्ड।

उ०—गाडी तो म्हे तो रे नरसी देता तो खरा। पूठ्यां वांकी फाट गई टूट गया आरा।—मीरां

२ कुए, तालाब तथा बड़ी-बड़ी दीवारों में लगाई जाने वाली चंद्राकार, घड़ी हुई पत्थर की सिल्ली।

३ ब्राह्मणों में, वैदिक गोडीय पद्धति से विवाह में वधू के गृह-प्रवेश के अवसर पर वर के द्वार पर पढा जाने वाला मंत्र।

क्रि०वि०—१ वापिस, फिर।

२ देखो 'पूठ' (रू.भे.)

पूठीबंध-वि० [राज० पूठी+सं० बंध] वह जिस के बंध या बनावट में पूठी लगी हो। उ०—तलाव रांणीसर री कोट तरफ दीखणाद १८५३ में सोर भुरज मांय सूं उडियो थो तिण सूं पड़ गयो। तिण सूं पाछो नवो पूठीबंध करायो।—मारवाड़ री ख्यात

वि०वि०—देखो 'पूठी'।

पूठीसंवारक-सं०पु०—वह घोड़ा जिस के पिछले पैर सफेद हों और सिर में सफेद तिलक हो (शा.हो.)

पूठै—देखो 'पीठ' (रू.भे.)

उ०—१ यां राजोधर अखियो, सू जादवां सप्रांण। सोठै नांणां जीवणो, तो पूठै जैसांण'।—रा०रू०

उ०—२ अडर मूळ डर न धारै कंसरी भांण री, पिता माता तणो डर न पूठै। जतन सूं सखी दध वेचवा जावता, अचानक कांन री धाड़ ऊठै।—बां.दा.

पूठो-क्रि०वि० [सं० पृष्ठ] वापिस, पुनः। उ०—ताहरां सारा ही

असवार पूठा फिरिया।—नैंणसी

सं०पु०—१ बैल आदि पशुओं के पिछले पैरों का ऊपरी हिस्सा।

२ पुस्तक या कापी का मोटे कागज का आवरण।

३ देखो 'पीठ' (१-४) (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—पूठो भारी रावजी स्री बीकोजी रो।

—सूरे खींवे कांधळोत री बात

रू०भे०—पुट्ठो, पुठो।

पूढी-सं०स्त्री० [सं० प्रौढा] वृद्धा, वूढी। उ०—देवी निद रे रूप पख विसन रूढी। देवी विसन रे रूप तूं नाभ पूढी।—देवि.

पूण—१ देखो 'पुरण' (रू.भे.)

उ०—चोरंग लख पूणां चहै, प्रणियां चढबा माय। पिय बिण पूणां व्यय चढै, हथी डोह हिक हाय।—रेवतसिंह भाटी

२ देखो 'पून' (रू.भे.)

पूणजात—देखो 'पवन' (१)

रू०भे०—पुवनजात।

पूणणो, पूणबो-क्रि०स० [सं० पादोनन] १ नष्ट करना, खराब करना। [सं० पुर्णयति] २ पूरा करना, सम्पूर्ण करना।

उ०—जां विराट सुत चाप न घूणइ। वैर वर्ग मुझ तां यज पूणइ।

—सालिसूरि

३ कम मूल्य में बेचना।

पूणणहार, हारो (हारी), पूणणियो—वि०।

पूणाडणो, पूणाडबो, पूणाणो, पूणाबो, पूणावणो, पूणावबो

—प्रे०रू०।

पूणीओड़ो, पूणीयोड़ो, पूण्योड़ो—भू०का०कृ०।

पूणीजणो, पूणीजबो—कर्म वा०।

पूणाणो, पूणाबो ('पूणणो' क्रि० का प्रे०रू०) १ नष्ट कराना, खराब कराना।

२ पूरा कराना, सम्पूर्ण कराना।

३ कम मूल्य में बिकवाना।

पूणाणहार, हारो (हारी), पूणाणियो—वि०।

पूणायोड़ो—भू०का०कृ०।

पूणाईणो, पूणाईजबो—कर्म वा०।

पूणाड़णो, पूणाड़बो, पूणावणो पूणावबो—रू०भे०।

पूणायोड़ो-भू०का०कृ०—१ नष्ट कराया हुआ, खराब कराया हुआ।

२ पूरा कराया हुआ, सम्पूर्ण कराया हुआ।

३ कम मूल्य में बिकवाया हुआ।

(स्त्री० पूणायोड़ी)

पूणावणो, पूणावबो—देखो 'पूणाणो, पूणाबो' (रू.भे.)

पूणावणहार, हारो (हारी), पूणावणियो—वि०।

पूणाविओड़ो, पूणावियोड़ो, पूणाव्योड़ो—भू०का०कृ०।

पूणावीजणो, पूणावीजबो—कर्म वा०।

पूणावियोड़ो—देखो 'पूणायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० पूणावियोड़ी)

पूणियोड़ो-भू०का०कृ०—१ नष्ट किया हुआ।

२ पूरा हुवा हुआ, सम्पूर्ण हुवा हुआ।

३ कम मूल्य में बेचा हुआ।

(स्त्री० पूणियोड़ी)

पूणियो-सं०पु०—एक छन्द विशेष। उ०—धुर अठार बी बार धर, ती सोळह चव वार। वि गुरु अंत सो पूणियो, सोय त्रिभंगी सार।

—र.ज.प्र.

२ देखो 'पुरणियो' (रू.भे.)

३ देखो 'पूंण' (अल्पा०, रू.भे.)

४ देखो 'पूरण' (अल्पा०, रू.भे.)

पूणी-सं०स्त्री० [सं० पूणित या पिंजिका] चरखे पर सूत कातने हेतु धुनी हुई रूई की बनी पोली बत्ती जिससे कातने पर बढ़ बढ़ कर सूत का धागा निकलता है। उ०—कातणवाळी छैल छबीली, बैठी पीढो ढाळ। मईं सही था पूणी कातै, लंबो काढै तार। चाल रे चरखला।—लो.गी.

पूणो-सं०पु०—पौन का पहाडा।

२ देखो 'पूंण' (रू.भे.)

उ०—हिरदै ऊणा होत, सिर धूणा अकबर सदा। दिन दूणा देसोत, पूणा हुवै न 'प्रतापसी'।—दुरसो आढो

३ देखो 'पणो' (रू.भे.)

पूत-वि० [सं०] १ पवित्र, शुद्ध (डि.को.)

२ देखो 'पुत्र' (रू.भे.)

उ०—१ आज घरै सासू कहै, हरख अचांणक काय। बहू घलैवा हूलसै, पूत मरेवा जाय।—वो.स.

उ०—मिटसी सह मतिमंद, कळंक न मिटसी भरत कुळ। अंध हिया रा अंध, पूत कुसासण पात रे।—रामनाथ कवियो

पूतआतमा—देखो 'पूतातमा' (रू भे.)

पूतड़लो, पूतड़ो—देखो 'पुत्र' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—तूं तो काईं, म्हारी मायड़ गरभरी, तूं तो देख पूतड़ला रो छाळो रे।—लो गी.

पूतना-सं०स्त्री० [सं०] १ कंस द्वारा श्रीकृष्ण को मारने हेतु भेजी गई एक राक्षसी जिसे श्रीकृष्ण ने मार दिया था। उ०—सकटासुर साभीयो तैं ईज; मारीयो तिणवत। पळ गमीयो पूतना, वडो मांडियो सदाव्रत।—पी.ग्रं.

२ हर्रे, हरड़ (अ.मा., डि.को., डि ना.मा.)

रू०भे०—पुतना।

पूतनारि-सं०पु० [सं०] पूतना नामक राक्षसी को मारने वाले, श्रीकृष्ण।

पूतनासूदन-सं०पु० [सं०] श्रीकृष्ण।

पूतनाहड़-सं०स्त्री० [सं० पूतना+हरीतकी] छोटी हर्र, छोटी हरड़।
पूतरो—देखो 'पुत्र' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—जठै झाली राम राम करि ऊठी नै मुखड़ा सूं कह्यौ—देवर, थांरी घणी वेल पसरो, पूतरा पोतां सूं वधो, धांन धीणौ धायो।
—झगड़ा मुखड़ा माटी री वात
पूतळ-सं०पु० [सं० पुत्तल] वर्णसंकर, जारज संतान।
उ०—विक्रमादित नूं पाछो चीतोड़ बैसांणियो, पछै पूतळ छोकरी रै बेटै विक्रमादित रमता नु मारियो, वर्णवीर चीतोड़ लीधी।
—नैणसी
पूतळविधि—देखो 'पुतळविधांन' (रू.भे.) (मा.म.)
पूतळी-सं०स्त्री० [सं० पुत्तली] १ लकड़ी, मिट्टी, धातु, पत्थर, कपड़ा आदि की बनी हुई आकृति विशेष। उ०—फेर मुहूरत सुधाय राजा सिंघासण रै बैठणे नूं आइयौ जद इक्कीसवीं पूतळी आय कही।
—सिंघासण बत्तीसी
मुहा०—पूतळी नचांणी—पुतलियों का तमाशा दिखाना।
२ कपड़ा बुनने की कल।
यौ०—पुतळीघर।
३ आंख का काला भाग।
मुहा०—१ पूतळी फिरणी—१ गर्व करना।
२ मरना या मरने के समीप होना।
२ पूतळी नचाणी—आंख से इशारे करना।
४ घोड़े की टाप का मेंढक की तरह निकला मांसल भाग।
रू०भे०—पुतरी, पुतळी।
पूतळो-सं०पु० [स० पुत्तल] लकड़ी, मिट्टी, पत्थर, धातु आदि का बना पुरुष का आकार या मूर्ति।
उ—पांच तत्व का पूतळा, रज वीरज की बूंद। ऐके घाटी नीसरया, बांमणि, क्षत्री, सूंद।—ह पु वा.
मुहा०—पूतळो जळाणो=१ मृत व्यक्ति का पुतला बना कर उसका दाह-संस्कार करना।
२ किसी की मृत्यु की कामना करने या उसे अपमानित करने हेतु उसका पुतला बनाकर जलाना।
रू०भे०—पुतळो।
पूतातमा-वि० [पूतात्मन्] पवित्र हृदय का, शुद्ध हृदय का।
सं०पु०—१ गरुड़, पक्षिराज (अ.मा.)
रू०भे०—पूतआतमा।
पूतारणो, पूतारबो—देखो 'पूंतारणो, पूंतारबो' (रू.भे.)
उ०—निठा निठु बैसाड, झाडै नुखरां। खरा भारिया भार पूतारि खित्तां।—रा.रू.
पूतारणहार, हारो (हारी), पूतारणियो—वि०।
पूतारिओड़ो, पूतारियोड़ो, पूतारयोड़ो—भू०का०कृ०।
पूतारीजणो, पूतारीजबो—कर्म० वा०।
पूतारियोड़ो—देखो 'पूंतारियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूतारियोड़ी).
पूती—देखो 'पुत्री' (रू.भे.)
उ०—जो नृप पूती नह दियै, दासी दूध अहार। तो विहरै गिरि वज्र जिम, खत्री, खग्ग, पहार।—गु.रू.बं.
पूत्त, पूत्तु, पूत्रु—देखो 'पुत्र' (रू.भे.)
उ०—१ पुन्न प्रभाविहि पांमीयउ, पहिलुं कुंता देवि। पुन्नमणोरह पूत्त पुर्ण, सुमिणां पंच लहेवि।—पं.पं.च.
उ०—२. अतिरथि सारथि तहिं वसये, राय तणइ घरि सूत्त। राधा नांमिहिं तसु घरणि, करणु भणुं तसु पूत्तु।—पं.पं.च.
उ०—३ पूत्रु पुरोहित नउ इम भणइ। रूत्या नउ वरु छइ अम्ह तणइ।—प.प.च.
पूत्रो—देखो 'पुत्र' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पहिलुं सरमइ धरमह पूत्रो। जेह रहइं नवि कोई सत्रो।
—पं.पं.च.
पून—१ देखो 'पवन' (रू.भे.)
उ०—जोण मेरी बाई ये, तिसियो मैं पीसूं ठंडी पून। जांमण की ये जायी, भूखो मैं चावूं ये बन रा पानड़ा।—लो.गी.
२ देखो 'पूंद' (रू.भे.)
उ०—गाजर मेवो कांस खड़, पुरख ज पून उघाड़। ऊंधा ओझर अस्तरी, अइ हो घर ढंूढ़ाड़।—अज्ञात
३ देखो 'पुण्य' (रू.भे.)
उ०—पैलै भव रै पून, जिको इण भव मो जुड़ियो। पोह जिण रै परताप, अछत नह कु आभड़ियो। पांणी खअवट पूर, मलम जस-वास भळाहळ। रहत दुख अणरेह, यळा मालम चित ऊजळ।
—पहाड़खां आढ़ो
४ देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)
पूनजनेसुर—देखो 'पुण्यजनेस्वर' (रू.भे.)
(ह.नां.मा.)
पूनम—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)
उ०—अंग दया घर घोर अंधारो, पूनम सी छवि पावै। दया-हींण घर दीन दिवाळी, काळी-रात कहावै।—ऊ.का.
पूनमपत-सं०पु० [सं० पूर्णमा+पति] चन्द्रमा, शशि।
उ०—जेहल तो दिस विदिस जस, भळहळ छायो भाळ। पूनमपत रो पसरियो, जांणं किरणां जाळ।—बां.दा.
पूनमी—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)
पूनागिर-सं०पु०—मारवाड़ राज्यान्तर्गत एक पहाड़ जहां पर देवी का मन्दिर है।
पूनावत-सं०पु०—राठौड़ वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।
—बां.दा. ख्यात
पूनिम, पूनिमी, पूनू, पूनो—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)

उ०—१ कैसी ? जैसी आसोज की पूनिम सरद रित जैसी ऊजळी।
—वचनिका

उ०—२ आसो पूनिमि ऊपजइ, पिता-पुत्र-वचि प्रेम। ते महिला मागिउं अछइ, कहु संदेसु एम।—मा.कां.प्र.

पून्य—देखो 'पुण्य' (रू.भे.)

उ०—पून्य प्रताप होय अंग पूरन, पाप प्रताप अपंगी। प्रथम विचार पाप को पापी, कर मत मीत कुसंगी।—ऊ.का.

पून्यम, पून्यूं—देखो 'पूरणिमा' (रू.भे.)

उ०—१ राई भलो जीसो पून्यम चंद। गोकुळ मांही सोहै ज्युं गोव्यंद।—बी.दे.

उ०—२ सेवग हाजरि चाहिजे, साहिब सदा हजूरि। पून्यूं पूरा चंद ज्यूं, जहां तहां भरपूरि।—ह.पु.वा.

पुप—देखो 'पुमो'।

पूपी-सं०स्त्री० [सं० पूपिका] पूड़ी, रोटी, छोटा मालपुआ।

उ०—१ उंबी सिबी अंगुळी बहु सेकि बरक्कं। खाजे पूपी खल्लके तजि करि तक्कं।—वं भा.

उ०—२ आप करै सोई असरा, इस्ट भोग अवसेस। इम पूपी जुग करि उठै, प्रभु रै कीधी पेस।—वं.भा.

पूफ—देखो 'पुस्प' (रू.भे.) (नां.मा.)

पूमाणौ, पूमावौ—देखो 'पोमाणौ, पोमावौ' (रू भे.)

पूमाणहार, हारौ (हारी), पूमाणियौ—वि०।

पूमायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पूमाईजणौ, पूमाईजबौ—कर्म वा०।

पूमायोड़ौ—देखो 'पोमायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पूमायोड़ी)

पूमावणौ(बौ)—देखो 'पोमाणौ, पोमाबौ' (रू.भे.)

पूमावणहार, हारौ (हारी), पूमावणियौ—वि०।

पूमाविप्रोड़ौ, पूमावियोड़ौ, पूमाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पूमावीजणौ, पूमावीजबौ—कर्म वा०।

पूमावियोड़ौ—देखो 'पोमायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पूमावियोड़ी)

पूमार-सं०पु० (स्त्री० पूमारण) परिहार वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

पूयग्र—देखो 'पूजक' (रू.भे.) (जैन)

पूयण—देखो 'पूजन' (रू.भे.) (जैन)

पूया—देखो 'पूजा' (रू.भे.) (जैन)

पूर-वि० [?] १ अनेक आघातों अथवा भारी आघातों के कारण जिसके सब अंग विकृत हो गए हों, क्षत-विक्षत।

उ०—सू अठै वडौ झगड़ौ हुवौ। आदमी आठ मा'राज रै हाथै ठौड़ रया अठै। अरु मा'राज घणा घावां पूर हुआ।—द.दा.

२ युक्त, सहित। उ०—पवंग पूर पाखरां, सूर सिलहां बळ सम्मर।
—सू.प्र.

सं०पु० [सं०] १ घाव का भराव, घाव के भरने की क्रिया।

[?] २ फटा पुराना चिथड़ा या कपड़ा।

उ०—१ लायो नटड़ौ फाबड़ौ पुरांणौ पूर जी कोई, जद चित आया सोड़'र गींदवा।—लो.गी.

उ०—२ फाटचौ सो गुदड़ौ नहीं जे में पूर, वौ थारी जच्चा-राणी ओढ जी राज।—लो.गी.

[सं०] ३ समूह। (ह.नां.मा.)

४ बहुतायत, भरमार।

उ०—रोम रोम आंमय रहै, पग पग संकट पूर। दुनियां से नजदीक दुख, दुनियां से सुख दूर।—बां.दा.

५ जल की धारा।

६ जल की बाढ।

७ नदी की बाढ (मेवाड़)

८ धारापात प्रवाह।

उ०—जाउ साहिब तूं नावियउ, मेहां पहलइ पूर। विचइ वहेसी वाहला, दूर स दूरे दूर।—ढो.मा.

९ देखो 'पूरक' (रू.भे.)

उ०- दइवांण रुद्र एकादसां प्रांण पूर पति धरम पण। कपिराय धीर कवि मंछ कह जय-जय स्री रघुवीर जण।—रु.रू.

१० देखो 'पूरण' (रू.भे.)

उ०—मंण लगाड़े पालड़ां, तोलां मांहि कसूर। उर तज राखै डांडियां, पारद हूंता पूर।—बां.दा.

११ देखो 'पूरौ' (मह., रू भे.)

पूरउ—देखो 'पूरौ' (रू भे.)

उ०—चंदा तो किण खंडियउ, मो खंडी किरतार। पूनिम पूरउ ऊगसी, आवंतइ अवतार।—ढो.मा.

पूरक-वि० [सं०] जो किसी की पूर्ति करता हो, पूरा करने वाला।

उ०—पूरक पूरा है गोपाळ। सब की चिंता करै दरहाल।
—दादूवांणी

सं०पु० [सं०] १ प्राणायाम विधि के तीन भागों में से पहली विधि जिसमें श्वास को नाक द्वारा खींच कर अंदर ले जाते हैं।

उ०—१ निज आठ जोग अभ्यास अहनिस, सधै सुरधर जुगम रवि सस। करै रेचक पूरक कुंभक, वहै दम सिर ठांम।—र.ज.प्र.

२ मृत्यु तिथि से दस दिन तक मृत व्यक्ति के नाम पर प्रतिदिन एक के हिसाब से दिये जाने वाले पिण्ड।

३ गुणक अंक।

रू०भे०—पूर।

पूरण-वि० [सं०] १ जिसमें किसी प्रकार की कमी या कसर न हो, कामिल पूर्ण।

उ०—म्हारा इण राज में फगत आप रो घणौ म्हारौ पूरण स्यांम भगत हो। रांम जांणै क्यूं उणरै जीवतां म्हनैं भी विस्वास हो कै

खुद जमराज ई म्हनै कीं हांण नीं पुगा सकैला ।—फुलवाड़ी

२ परिपूर्ण, पूर्ण ।

उ०—पण तो ई राजा ऊपर सूं रोव जतळावतो **पूरण** अकड़ाई रै साथै रैयत रै सांमी गोखड़ा में ऊभो व्हियो ।—फुलवाड़ी

३ जितना चाहिए उतना, भरपूर ।

उ०—ज्यांरै खाख विछावणी, ओढण नूं आकास । ब्रह्म पोस संतोस वित, पूरण सुख त्यां पास ।—बां.दा.

४ कुल, समूचा ।

सं०पु०—१ परिपूर्ण या पूर्ण करने की क्रिया या भाव ।

२ किसी रिक्त स्थान या अवकाश में किसी को बैठाना या भर देने की क्रिया या भाव, पूर्ति कर देने की क्रिया या भाव ।

३ समाप्त करने की क्रिया या भाव ।

४ पूर्ण ब्रह्म, परमात्मा, ईश्वर । उ०—आतम आप आप मांही पूरण, जिस फद है निरवांणी । चित्त सफंद, वाते फुरियां, ज्यूं बांझ पुत्र प्रगटांणी ।—स्री सुखरांमजी महाराज

५ आकाश, आसमान (अ.मा.)

६ मृतक के दशवें दिन दिया जाने वाला पिंड, पूरक पिंड, दशाह पिंड ।

७ जिसमें किसी आवश्यक अंग की कमी न हो, अखण्ड ।

उ०—परमेस्वर अणपार, परम पूरण परमातमा । स्रीपति असरण-सरण, तरणतारण त्रिगुणातम ।—रा.रू.

८ अंक का गुणन ।

रू०भे०—पुनूं, पुनु, पुन्न ।

पूरणचंद-सं०पु० [सं० पूर्णचन्द्र] अपनी सब कलाओं से युक्त पूर्णिमा का चन्द्रमा । उ०—पलकां मिलबो पाल उपाव अनंद नै । चितवै जांण चकोरक पूरणचंद नै ।—बां.दा.

पूरणता-सं०स्त्री० [सं० पूर्ण+रा.प्र.ता] १ पूर्ण होने की अवस्था ।

उ०—वै म्है तो ईस्वर नै इणी रूप में मांनूं कै वो न्याय, सच्चाई अर पूरणता री एक भावना मात्र है ।—फुलवाड़ी

२ अभाव, त्रुटि या कमी न होने की दशा । उ०—अर जिण कांम नूं आगया करै तिण नूं पूरणता नूं पहुंचावै ।—नी.प्र.

पूरणपादासन-सं०पु० [सं० पूर्णपादासन] योग के चौरासी आसनों के अंतर्गत एक आसन जिसमें दोनों पांवों से सीधा खड़ा रहना होता है ।

पूरणपुरख, पूरणपुरण-सं०पु० [सं० पूर्णपुरुष] परमेश्वर, परब्रह्म ।

उ०—पूरण पुरस पुरांण प्रमेसर । सुकवि सधारवार अग्रेस्वर ।

—रा.रू.

पूरणप्रतिग्य-वि० [सं० पूर्णप्रतिज्ञ] अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने वाला, दृढ़प्रतिज्ञ ।

पूरणब्रहम, पूरणब्रह्म-सं०पु० [सं० पूर्णब्रह्म] १ ईश्वर, परमात्मा ।

उ०—प्रथम सुमर इण विध परमेस्वर । पूरणब्रह्म प्रताप अपंपर ।

—रा.रू.

२ देखो 'ब्रह्म' (रू.भे.)

रू०भे०—पुरनबिरंम, पूरणब्रह्म ।

पूरणमलोत-सं०पु०—कछवाह वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति ।

पूरणमासी-सं०स्त्री० [सं० पूर्णमासी] शुक्ल पक्ष का पंद्रहवां दिन जिस दिन चंद्रमा अपनी सब कलाओं से युक्त होता है, पूर्णिमा ।

उ०—सकण समै कासी माहै बरस दन माहे हेकण दन वैसाखी पूरणमासी करवत दे ए ।—कल्याणदास नगराजोत बाढेल री वात

रू०भे०—पुण्णमासि, पुण्णमासी, पुरणवांसी, पूरनमासी, पोरण-मासी ।

पूरणविरांम-सं०पु० [सं० पूर्णविराम] वाक्य के पूर्ण हो जाने पर लगाया जाने वाला खड़ी लकीर का चिन्ह, पूर्णविराम, फुलस्टॉप ।

पूरणव्रह्म—देखो 'पूरणब्रह्म' (रू.भे.)

उ०—सेवग सात समंद, चाकर सूरज चंद । गावै सेस गुणेसं, पूरण-ब्रह्म परमेसं ।—पि.प्र.

पूरणा-सं०स्त्री० [सं० पूर्णा] मास की पंचमी, दशमी, अमावस्या एवं पूर्णिमा की तिथियां ।

पूरणाघात-सं०पु० [सं० पूर्णाघात] ताल में अनाघात के एक मात्रा के बाद आने वाला स्थान (संगीत)

पूरणानंद-सं०पु० [सं० पूर्णानन्द] परमेश्वर ।

पूरणावतार-सं०पु० [सं० पूर्णावतार] सम्पूर्ण कलाओं सहित किसी देवता का अवतार ।

वि०वि०—विष्णु के तीन अवतार ही पूर्णावतार माने जाते हैं यथा—नृसिंहावतार, रामावतार और श्रीकृष्णावतार ।

पूरणाहुति, पूरणाहुती-सं०स्त्री० [सं० पूर्ण+आहुति] १ यज्ञ की समाप्ति पर दी जाने वाली आहुति ।

२ किसी की समाप्ति पर किया जाने वाला अंतिम कृत्य

(लाक्षणिक)

रू०भे०—पुरणाहुति, पुरणाहुती ।

पूरणिमा-सं०स्त्री० [सं० पूर्णिमा] प्रत्येक मास के शुक्ल पक्ष की अंतिम तिथि, इस तिथि को उदय होने वाला चन्द्रमा पूर्ण सोलह कलाओं से युक्त होता है । उ०—तो केसपास छै सोह राति भई । राका कहतां पूरणिमा ताको ईस चंद्रमा सोई मुख हुओ ।

—वेलि. टी.

रू०भे०—पुंन्यु, पुण्णिम, पुनम, पुनमी, पुनम्म, पुनिम, पुन्यु, पुरणिम, पूनम, पूनमी, पूनिम, पूनिमी, पूनु, पूनो, पून्यम, पून्यु, पून्यूं ।

पूरणो-सं०स्त्री० [सं० पूर्ण···] १ मजबूती के लिए किसी दीवार से लगा कर कुछ ऊपर तक उठाई गई दीवार या पत्थर की पुश्त, पुश्ती ।

२ पूर्ण कार्य ।

पूरणेंदु-सं०पु० [सं० पूर्णेन्दु] पूर्णिमा का चंद्रमा ।

पूरणोपमा-सं०पु० [सं० पूर्णोपमा] उपमा अलंकार का प्रथम भेद जिसमें उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म चारों अंग प्रकट रूप से वर्तमान रहते हों।

पूरणो, पूरबो-क्रि०स० [सं० पूरणम्] १ किसी खाली स्थान को भरना, पूर्ति करना। उ०—आगइ पत्र जोगणियां तणा पूरिया, ग्रीभंण गूद गिलइ अउगाढ़। बीजा गिरवर किया बहादर, चुणिया सूरज भइंजर चाढ़।—महादेव पारवती री वेलि

२ तृप्त करना, संतुष्ट करना। उ०—वह सिरहूं नांखे वह वहती, विसरति पूरति विपरति वेसि। लाहो आवै गगन लोडती, दोड़ाया भड़ चौदस देस।—दूदो

३ पूर्ण करना, पूरा करना। उ०—नील वरण हयवर ऊपरै, राज थयो असवार। सहु गुण लक्षण पूरियो, ते हयवर सीकार।—वि कु.

४ (मनोरथ या आशा) सफल करना, आशा पूरी करना।

उ०—हां महाराज ! महाराज रा मनोरथ स्रीमहाराज पूरै। अखिआति ऊबरै।—वचनिका

५ पूरा पड़ना, गुजर चलना।

६ मंगल अवसरों पर आटा, अबीर खड़ी आदि से चौखूंटे आदि क्षेत्र बनाना।

ज्यूं—चौक पूरणौ।

७ बजाना (शंख)

उ०—रथ राजन कीयो भेळो, नाथ होइ निसंक। रुखमणी दीठी रथइ बइठी, स्वामि पूरयउ संख।—रुकमणि मंगळ

क्रि०प्र०—८ व्यतीत होना, समाप्त होना।

उ०—दिन-दिन डोहला पूरतां, बोल्या पूरा मास। सुत जायो रलियांमणो, सहु नी पूरी आस।—वि.कु.

९ भर जाना, पूर्ण हो जाना।

उ०—पूरब पराक्रम पूरियो, सिर लग्गै असमांन। गिरे भंगर भागे न गो, चढि आयो मैदांन।—गु.रू.बं.

पूरणहार हारो (हारी), पूरणियो—वि०।

पूराडणो, पूराडबो, पूराणो, पूराबो, पूरावणो, पूराववो—प्रे०रू०।

पूरिओड़ो, पूरियोड़ो, पूरयोड़ो—भू०का०कृ०।

पूरीजणो, पूरीजबो—कर्म वा०, भाव वा०।

पूरवणो, पूरवबो—रू०भे०।

पूरत, पूरति-सं०स्त्री० [सं० पूर्ति] पूर्णता, पूरापन।

उ०—जोगणपुरी मयण तण जोवण, वर प्रापत गहि पूरत वेस। परणै जिको चढ़ी तैं परणवा, नव खंड हिंदू तुरक नरेस।—दूदो

रू०भे०—पुत्ति।

पूरनमासी—देखो 'पूरणमासी' (रू.भे.)

पूरपटी-क्रि०वि० [...] पूरे वेग से, तेज गति से।

उ०—प्रगळो वळ ओपन पूरपटै। लख मोलिय जायल नेस लटै।

—पा.प्र.

पूरब—देखो 'पूरव' (रू.भे.) (अ मा., डिं.को.)

उ०—१ पुनि पुन्य उदै भए पूरब के। उधरे उर अंक अपूरब के।

—ऊ.का.

उ०—२ अपभ्रंस भाखा प्राकृत सो कुळ का विवार जिसतेसी प्राकृत भाखा विस्तार करि गाई। जिसमें पूरब, पच्छिम, उत्तर, दक्खिण ए च्यार भाखा करि दिखाई।—सू.प्र.

पूरबज—देखो 'पूरवज' (रू.भे.) (अ.मा., ह.नां.मा.)

उ०—पूरबजां तणी म्रजादन पलटी, पहलां लें हिंदू प्रबळ। बसू जीत सायरां बिचाळै, 'वापै' लीधा आप वळ।

—महारावळ वापा री गीत

पूरबजलम—देखो 'पूरवजन्म' (रू.भे.)

पूरबदेव—देखो 'पूरवदेव' (रू.भे.) (अ.मा., डिं.को., नां.मा.)

पूरबपत, पूरबपति, पूरबपती—देखो 'पूरवपति' (रू.भे.)

(अ.मा., ना.डिं.को., नां.मा., ह.नां.मा.)

पूरबभव—देखो 'पूरवभव' (रू.भे.)

उ०—गौतम ! सुण पूरब भव एह। अते क्षमा अधिकी करी जी, निज रांणी दीधी देह।—जयवांणी

पूरबमीमांसा—देखो 'पूरवमीमांसा' (रू.भे.)

पूरबळ-सं०पु० [?] १ पूर्वजन्म, पहिला जन्म।

२ प्राचीन समय, पुराना जमाना।

३ पूरी शक्ति, पूरी ताकत।

पूरबलो—देखो 'पूरवलो' (रू.भे.)

उ०—१ नंह राखूं नांनींह, सुण म्हारी विपही सरब। छिप मत रख छांनींह, कहदै पूरबली कथा।—पा.प्र.

उ०—२ थे छिटकाई मनै सासरै, काढयो पूरबलो कांसू वैर।

—लो.गी.

(स्त्री० पूरबली)

पूरबाचळ—देखो 'पूरवाचळ' (रू.भे.)

पूरबानक्षत्र, पूरबानखत्र—देखो 'पूरवाफालगुणी' ?

उ०—धरा वेध खत्र खेद चत्र कोट गढ ढेलडी, पूरबानखत्र सुवखत प्रमांणो। साह अवरंग अवतार सिसपाळ रो, 'राजसी' किसन अवतार रांणो।—महारांणा राजसिंह री गीत

पूरबाफालगुणी—देखो 'पूरवाफालगुणी' (रू.भे.) (अ.मा.)

पूरबासाढा—देखो 'पूरवासाढा' (रू.भे.)

पूरबिया-वि० [सं० पूर्व+रा.प्र.इया] पूरब का, पूरब सम्बन्धी।

सं०पु० [ब.व.] १ पूरब के राजपूत जो देशी राज्यों की सेना में भरती किये जाते थे।

सं०स्त्री०—२ चौहान राजपूतों की एक शाखा।

३ नाइयों की एक शाखा।

रू०भे०—पुरबिया।

पूरबियो-सं०पु० [सं० पूर्व+रा.प्र इयो] १ पूर्व दिशा का निवासी।

(स्त्री० पूरबियण)
२ उत्तर प्रदेश का निवासी।
३ चौहान राजपूतों की पूरबिया शाखा का व्यक्ति।
४ पूरबिया शाखा का नापित, नाई।
रू०भे०—पुरबियौ।
पूरबी—देखो 'पूरवी' (रू.भे.)
पूरब्ब—देखो 'पूरब' (रू.भे.)
उ०—पउ गाहै पट्टण आप बळ, दोमझि मंजे कच्छ दळ। पूरब्ब हूंत आवै पच्छिम, सीह प्रवाहौ किय सबळ।—गु.रू.बं.
पूरव-वि० [सं० पूर्व] पहले (का), आगे (का)।
सं०पु०—१ वह दिशा जहाँ मघा नक्षत्र उदय होता है, पश्चिम के ठीक सामने की दिशा। (अ.मा., डिं.को.)
२ राजस्थान के पूर्व दिशा की ओर का प्रदेश, उत्तर प्रदेश।
३ सत्तर लाख छप्पन हजार वर्ष को एक करोड़ से गुणा करने पर होने वाला समय, ७०५६०००,००००००० वर्ष। (जैन)
रू०भे०—पुब्व, पुरब, पूरब, पूरब्ब, पुव, पुव्व।
पूरवकरम-सं०पु० [सं० पूर्वकर्म्मन्] १ रोगोत्पत्ति के पहिले किये जाने वाले कार्य। (सुश्रुत)
२ पूर्व जन्म के किये हुए कार्य।
पूरवगंगा-सं०स्त्री० [सं० पूर्वगंगा] नर्मदा नदी।
पूरवग्यान-सं०पु० [सं० पूर्वज्ञान] १ पहिले या पूर्व का ज्ञान।
२ पूर्व जन्म का ज्ञान।
पूरवज-सं०पु० [सं० पूर्वज] १ बड़ा भाई। (डिं.को.)
(स्त्री० पूरवजा)
२ पूर्व पुरुष, पुरखा।
रू०भे०—पूरबज।
पूरवजन्म-सं०पु० [सं० पूर्वजन्मन्] पिछला जन्म, इस जन्म से पहले का जन्म।
रू०भे०—पूरवजनम।
पूरवजन्मा-सं०पु० [सं० पूर्वजन्मा] बड़ा भाई, अग्रज (डिं.को.)
पूरवण-वि० (स्त्री० पूरवणी) पूर्ण करने वाला।
पूरवणौ, पूरवबौ-क्रि०अ० [सं० पोषणम्] १ पालना, पोसना।
२ देखो 'पूरणौ, पूरबौ' (रू.भे.)
उ०—भो भमल पूरवूं कठा सुं, लाऊं कांईक लाड में। परबात पीहर जास्यूं परी, खावंद पड़ज्यो खाड में।—ऊ.का.
पूरवणहार, हारौ (हारी), पूरवणियौ—वि०।
पूरविओड़ौ, पूरवियोड़ौ, पूरव्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पूरवीजणौ, पूरवीजबौ—कर्म वा०।
पूरवतरकासन-सं०पु० [सं० पूर्वतर्कासन] योग के चौरासी आसनों के अतर्गत एक आसन जिसमें दोनों हाथों के पंजों को कपोलों पर लगा कर दोनों हाथों की टहुनी को दोनों घुटनों पर रखते हैं और देह को सामने झुका कर बैठते हैं।
पूरवदिगवदनं-सं०पु० [सं० पूर्वदिग्वदन] मेष, सिंह और धनु राशियां (ज्योतिष)
पूरवदिगीस-सं०पु० [सं० पूर्वदिगीश] १ इन्द्र।
२ मेष, सिंह और धनु ये तीन राशियां (ज्योतिष)
पूरवदिस्ट-सं०पु० [सं० पूर्वदिष्ट] पूर्व कर्मों के फलस्वरूप भोगे जाने वाले दुःख-सुख।
पूरवदेव-सं०पु० [सं० पूर्वदेव] १ नर और नारायण (अ.मा.)
२ असुर, राक्षस।
रू०भे०—पूरबदेव।
पूरवधर, पूरवधार, पूरवधारी-वि० [सं० पूर्वधारी] पूर्व ज्ञान को धारण करने वाले (जैन)
उ०—१ एह तणि उतपति कहूं, निरयुक्ति नइं अणुसार। भद्रबाहु सामी भणइ, चउद पूरवधर सार।—स.कु.
उ०—२ रक्षमावंत सतवंत छे रे, चवदे पूरवधार। चउनाणी गुरु साथे मुनिवर परवरया रे, पंच सयां अणगार।—जयवाणी
उ०—३ कुण चवदे पूरवधारी साधुजी केवली जिम हो देता प्रतिबोध के। इण निद्रा परताप सूं मरने, गया हो नरक निगोद के।—जयवाणी
पूरवपक्ष-सं०पु० [सं० पूर्वपक्ष] १ चन्द्रमास का कृष्ण पक्ष।
२ शास्त्र विषय के सम्बन्ध में उठाई हुई बात, प्रश्न या शंका।
३ अभियोग में वादी द्वारा उपस्थित किया हुआ दावा या बात, मुद्दई का दावा।
रू०भे०—पूरवपख।
पूरवपक्षी-सं०पु० [सं० पूर्वपक्षिन्] १ पूर्व का पक्ष उपस्थित करने वाला व्यक्ति। २ दावा दायर करने वाला व्यक्ति।
पूरवपख—देखो 'पूरवपक्ष' (रू.भे.)
पूरवपति-सं०पु० [सं० पूर्वपति] इन्द्र।
रू०भे०—पूरबपत, पूरबपति, पूरबपती।
पूरवफालगुनी—देखो 'पूरवाफालगुनी' (रू.भे.)
पूरवभव-सं०पु० [सं० पूर्व+भव] पूर्व जन्म, पहला जन्म।
उ०—पूरवभव तणइ करम संयोगि, पाणि ग्रहण इण परि हुउं ए। बोलइ मुनिवर हीराणद, धन नर जीह वंछित फलू ए।—हीराणंद सूरि
रू०भे०—पुवभव, पुव्वभव, पूरबभव।
पूरवभाद्रपद—देखो 'पूरवाभाद्रपद' (रू.भे.)
पूरवमीमांसा-सं०पु० [सं० पूर्वमीमांसा] कर्मकांड सम्बन्धी बातों का वह दर्शन शास्त्र जिसकी रचना जैमिनि मुनि ने की थी।
रू०भे०—पूरबमीमांसा।
पूरवराग-सं०पु० [सं० पूर्वराग] संयोग से पूर्व ही नायक-नायिका में होने वाला प्रेम या अनुराग, पूर्वानुराग।
पूरवरूप-सं०पु० [सं० पूर्वरूप] १ प्रारम्भिक आकार या रूप, पहिले का आकार या रूप।

२ एक अर्थालंकार जिसमें किसी के विनिष्ट गुण, वैभव आदि के वापिस लौटने का उल्लेख होता है। उ०—पूरब रूप क गुण परठ, तजि फिर अपणो लेत। दूजे जिह गुण ना दरस, होय मेटणे हेत।
—पिंगळ सिरोमणि

पूरबलो-वि० [सं० पूर्व+रा.प्र. लो] पहिले का, पूर्व का।
(स्त्री० पूरवली)
उ०—१ दादू रंग भर खेलूं पीव सौं, तहं कबहुं न होइ वियोग। दूजे जिह गुण ना दरस, होय मेटणे हेत।—दादूबांणी
उ०—२ कुमर परीक्षा जोइवा, आयो तिहां वन देव। रूप कियो वांनर तणो, तज पूरबली टेव।—वि०कु०
२ प्राचीन समय का, पुराने जमाने का, पहिले समय का।
३ पूरी शक्ति वाला, पूरी ताकत वाला।
रू०भे०—पुरबलो, पूरबलो।

पूरबवाद-सं०पु० [सं० पूर्ववाद] न्यायालय में किसी व्यक्ति द्वारा व्यवहार शास्त्र के अनुसार उपस्थित किया जाने वाला अभियोग, नालिश।

पूरबवादी-सं०पु० [सं० पूर्ववादिन्] न्यायालय में अभियोग उपस्थित करने वाला, वादी, मुद्दई।

पूरबव्रत-सं०पु० [सं० पूर्ववृत्त] इतिहास।

पूरबांग-सं०पु० [सं० पूर्वाङ्ग] चौरासी लाख वर्ष का समय। (जैन)
रू०भे०—पुव्वंग, पुव्वांग।

पूरबाखाड़ा—देखो 'पूरबसाढ़ा' (रू.भे.) (अ मा.)

पूरबाचळ-सं०पु० [सं० पूर्वाचल] उदयाचल पर्वत।
रू०भे०—पूरबाचळ।

पूरबाचारिज-सं०पु० [सं०पूर्वाचार्य] पहले के आचार्य।
उ०—घ्रत जाण आचरण परंपर पूरबाचारिज कही। भगवंत भास्यउ सत्य तेहिज खांचाताण करिवी नहीं।—स०कु०

पूरबानुराग—देखो 'पूरबराग'।

पूरबापर-अव्य० [सं० पूर्वापर] आगे-पीछे।
वि०—आगे का और पीछे का।
सं०पु०—आगे-पीछे की बात।

पूरबाफाल्गुणी-सं०पु० [सं० पूर्वाफाल्गुनी] दो तारों वाला, सत्ताईस नक्षत्रों में से ग्यारहवां नक्षत्र जिसका आकार पलंग की तरह माना गया है। (ज्योतिष)
रू०भे०—पूरवाफालगुणी, पूरवफालगुनी।

पूरबाभाद्र, पूरबाभाद्रपद, पूरबाभाद्रपदा-सं०पु० [सं० पूर्वाभाद्रपदा] सत्ताईस नक्षत्रों में से पच्चीसवां नक्षत्र जिसका आकार घण्टे की तरह माना गया है। (ज्योतिष) (अ०मा०)

पूरबारद्ध-सं०पु० [सं०पूर्वार्द्ध] १ किसी काम, चीज या बात का आरम्भ का आधा भाग।
२ शरीर का पहला अर्द्ध भाग।

पूरबासाढ़ा-सं०पु० [सं०पूर्वाषाढ़ा] सत्ताईस नक्षत्रों में से बीसवां नक्षत्र जिसका आकार सूप का सा माना जाता है।
उ०—पूरबासाढा में खाडा में पड़िया। अगले अनरथ रा अंकुर ऊघड़िया।—ऊ०का०
रू०भे०—पूरबासाडा, पूरबाखाडा।

पूरबियोड़ो-भू०का०कृ०—१ पाला हुआ, पोसा हुआ।
२ देखो—'पूरियोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूरबियोड़ी)

पूरबिलइ-वि० [सं० पूर्विल] पूर्व का, पिछला।
उ०—निसुणउ लाडीय तपह प्रमांणु। पूरबिलइ भवि कियउं नियांणु।—प०पं०च०

पूरबी-वि० [सं०पूर्वीय] १ पूर्व दिशा का, पूर्व दिशा सम्बन्धी।
२ पहले का, पूर्व का।
उ०—मुनी ताके छाके सुख रु दुख थाके बळ मही। अपूरबी आभा घो लखत कृत पूरबी फळ लही।—ऊ०का०
सं०स्त्री०—१ एक बोली।
२ एक रागिनी।
३ बिहार प्रांत में बिहारी भाषा में गाया जाने वाला एक दादरा।
रू०भे०—पुरबी, पुरबी।

पूरबीघाट-सं०पु०[सं० पूर्वी+घट्ट] दक्षिण भारत में पूर्वी समुद्र के साथ साथ बालासोर से कन्याकुमारी तक गया हुआ पहाड़ों का सिलसिला।

पूरसल-वि० पूर्ण।

पूरहूत—देखो 'पुरुहूत' (रू.भे.)
उ०—प्रीतकर पूरहूत ऊपर, उठै रघुवर आप। सहस भग किय चसम सहसा, सकत मेटे स्राप।—र०रू०

पूरांणो—देखो 'पुरांणो' (रू.भे)
उ०—जद स्वामीजी बोल्या—थांरा बाप, दादा, पड़ दादा आदि पीढ़ियां रा नांम तथा त्यांरी पूरांणी बातां जांणो हो सो कुण देखी है?—भि०द्र०
(स्त्री० पूरांणी)

पूराडणो, पूराडबो—देखो 'पूराणो, पूराबो' (रू.भे.)
पूराडणहार, हारो(हारी), पूराडणियो—वि०।
पूराडिओड़ो, पूराडियोड़ो, पूराड्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूराडीजणो, पूराडीजबो—कर्म०वा०।

पूराडियोड़ो—देखो 'पूरायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूराडियोड़ी)

पूराणो, पूराबो-क्रि०स० ('पूरणो' क्रिया का प्रे०रू०) १ किसी खाली स्थान को भराना, पूर्ति कराना।
२ तृप्त कराना, संतुष्ट कराना।
३ पूरा कराना, पूर्ण कराना।
४ मनोरथ सफल कराना, आशा पूरी कराना।

५ मंगल अवसरों पर आटा, अबीर, खडी आदि से चौखूटे क्षेत्र आदि बनवाना।
६ बजवाना (शंख)।
७ व्यतीत कराना, समाप्त कराना।
८ भरवाना, पूर्ण कराना।
पूराणहार, हारो (हारी), पूराणियो—वि०।
पूरायोड़ो—भू०का०कृ०।
पूराईजणो, पूराईजबो—कर्म०वा०।

पूरातन—देखो 'पुरातन' (रू.भे.)

पूरामास-वि० [सं० पूर्ण+मास] पूरे नौ मास की गर्भवती (स्त्री)

पूरायोड़ो—भू०का०कृ०—१ किसी खाली स्थान को भराया हुआ, पूर्ति कराया हुआ।
२ तृप्त किया हुआ, संतुष्ट किया हुआ।
३ पूरा कराया हुआ, पूर्ण कराया हुआ।
४ मनोरथ सफल कराया हुआ, आशा पूरी कराया हुआ।
५ मंगल अवसरों पर आटा, अबीर, खडी आदि से चौखूटे क्षेत्र आदि बनवाया हुआ।
६ बजवाया हुआ (शंख)
७ समाप्त कराया हुआ, व्यतीत कराया हुआ।
८ भरवाया हुआ, पूर्ण कराया हुआ।
(स्त्री० पूरायोड़ी)

पूरावणो, पूरावबो—देखो 'पूराणो, पूराबो' (रू.भे.)
उ०—१ लावण लाडू व दोवड़ी छावड़ी, भरीय अणावउ रे। फळ-हुलि छाब भरावउ रे, वेमंइ कळस पूरावउ रे।—रुकमणी मंगळ
उ०—२ सुख भायां अंजस सयण, आयां सिघ अवसांण। पितु मनसा पूरावियां, ज्यां जाया चित जांण।—जैतदान बारहठ
उ०—३ मणिमय पूतली सोवनथंभ, मोतीय चउक पूराविया ए। कुंकूय चंदणि छडउ दिवारि, घरि घरि तोरण ऊभीयां ए।
—पं.पं.च.
पूरावणहार, हारो (हारी), पूरावणियो—वि०।
पूराविओड़ो, पूरावियोड़ो, पूराव्योड़ो—भू०का०कृ०।
पूरावीजणो, पूरावीजबो—कर्म वा०।

पूरावियोड़ो—देखो 'पूरायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पूरावियोड़ी)

पूरित-वि० [सं०] १ परिपूर्ण, पूर्ण भरा हुआ।
२ तृप्त, संतुष्ट।

पूरिय—देखो 'पुरी' (रू.भे.)
उ०—धनदिहि सइ हथि थापिय वापी अवर आरामि। मणि कण घण संपूरिय पूरिय द्वारका नांमि।—जयसेखर सूरि

पूरियाकल्यांण-सं०पु० [?] सम्पूर्ण जाति का एक शंकर राग जो रात के पहले प्रहर में गाया जाता है।

पूरियोड़ो-भू०का०कृ०—१ किसी स्थान को भरा हुआ, पूर्ति किया हुआ।
२ तृप्त किया हुआ, संतुष्ट किया हुआ।
३ पूरा किया हुआ, पूर्ण।
४ मनोरथ सफल किया हुआ, आशा पूरी किया हुआ।
५ पूरा पड़ा हुआ, गुजारा चला हुआ।
६ मंगल अवसरों पर आटा, अबीर, खड़ी आदि से चौखूटे आदि क्षेत्र बनाया हुआ।
७ बजाया हुआ (शंख)
८ व्यतीत हुआ, समाप्त हुआ।
९ भरा हुआ, पूर्ण हुआ।
(स्त्री० पूरियोड़ी)

पूरी-वि०—१ देखो 'पूरो' (स्त्री०)
उ०—सखी अमीणा कंथ री, पूरी एह प्रतीत। कै जासी सुर अंगणे, कै आसी रण जीत।—बां.दा.
२ देखो 'पुड़ी' (रू.भे.)

पूरु-सं०पु० [सं०] १ वैराज मनु के एक पुत्र. २ मनुष्य।

पूरुख—देखो 'पुरुस' (रू.भे.)

पूरैपाठै-क्रि०वि० [?] पूरी तरह से परिपक्व अवस्था में (गर्भ)
रू०भे०—पूरापाठै।

पूरो-वि० [सं० पूर्ण] (स्त्री० पूरी) १ जिसके अन्दर कुछ अवकाश न हो, जिसका भीतरी भाग बिल्कुल भरा हुआ हो, भरपूर।
२ जितना आवश्यक हो, यथेच्छ, यथेष्ट, पर्याप्त।
उ०—१ पदमणि पुरवांरै पंगरण नह पूरा, भूखा सूतोड़ा संगरण वे भूरा। रोजा निसवासर संठां में राजै, बैंकति कंठां में अलगोजा बाजै।—ऊ.का.
मुहा०—१ पूरो पड़णो—निर्वाह होना।
२ पूरो होणो—समाप्त होना, पूर्ण होना।
३ समग्र, समूचा, सारा, कुल, सम्पूर्ण।
उ०—१ लेतो कर कर लाड, दूसरा हंसि हंसि देतो। नेता हूग्यो नास, बणायो पूरो वेतो—ऊ.का.
उ०—२ पूरो एक बरस बीत्यां म्हारै कनै आज रै दिन पाछा इणी ठौड़ आजो। आठूं दिसावां में मन करै उठी नै जावो परा।
—फुलवाड़ी
४ जो अपूर्ण या अधूरा न हो, पूर्ण।
उ०—नमस्कार सूरां नरां, पूरा सतपुरसांह। भारत गज थाटां भिड़ै, अड़ै भुजां उरसांह।—बां.दा.
मुहा०—१ पूरो करणो—सम्पूर्ण करना, समाप्त करना, निपटाना, गुजारना।
२ पूरो होणो—समाप्त होना, पूर्णता की स्थिति में होना।
५ ऐसा क्रम जो एक निश्चित सीमा तक चल कर पुनः शुरू होता

हो। आदि से अन्त तक का।

उ०—पूरा एक बरस रै उपरांत रितुवां री गैडी पूरी व्हियौ। सांवण भादवा रा मईनां में भुरजाळा बादळा धरती माथै झोलरिया तौ वै झोलरिया के बात छोडौ।—फुलवाड़ी

मुहा०—पूरौ होणौ—समाप्त होना, पूर्णता को प्राप्त करना।

६ जिसमें कोई कोर-कसर या कमी न रह गई हो, सर्वांगीण।

उ०—थोड़ा दिनां तक उणरै घरै रैय, आपरी झोळी रै सांपां सूं भिड़ाय नोळिया नै पूरौ हुसियार कर दियौ।—फुलवाड़ी

मुहा०—पूरौ उतरणौ—नाप तोल में बराबर होना।

७ आकार, घनता, विस्तार आदि के विचार से ठीक विस्तृत एवं व्याप्त हो चुका हो।

ज्यूं—पूरौ जवांन।

८ दृढ़, पक्का, अटल।

उ०—१ सत वक्ता सहासील, समीक्षक सूरौ। पुरुसारथ पूरण प्रेम प्रतिग्या पूरौ।—ऊ.का.

उ०—२ चेली अरु चेला मांहै मेळा, कांम विकळ किळकंदा है। नित हांजी नांजी पूरा पाजी, ताजी रांड तकंदा है।—ऊ.का.

उ०—३ ऐड़ी नीं व्है के भैंस्यां ब्याय जावै अर थनै ऊंघ आय जावै। पाडियां नै जिनावर खाय जावैला। पूरौ जाब्तौ राखजे।

—फुलवाड़ी

उ०—४ रात दिवस भज रांम नरेसर, पात राख नहचौ मन पूरौ।

—र.ज.प्र.

मुहा०—पूरौ उतरणौ—वादा, कौल, प्रतिज्ञा में खरा उतरना, तोल में पूरा होना।

९ संतोषजनक, तुष्टीपूर्ण, संतोषप्रद।

उ०—रांणी कह्यौ—नी, नीं आपनै फोड़ा भुगतण री कीं जरूरत कोनीं। म्हारौ तौ इण आश्रम में पूरौ मन रमग्यौ।—फुलवाड़ी

मुहा०—(मुराद) पूरी करणी—मनवांछित फल प्राप्त होना, इच्छा पूर्ण होनी।

उ०—द्रव्य सत्य नै भाव सत्य नैं, मांही रह्या नहीं रूड़ा रै। भाव सत्य कोई काढसी, ते परमेस्वर नैं पूरा रै।—जयवांणी

पूलालाग-सं०पु०यौ० [देशज] एक प्रकार की लाग जो खेत में अनाज कटने पर, अनाज के पौधों के गट्ठर के रूप में नित्य काम आने वाली जातियां लेती हैं।

पूळी—देखो 'पूळौ' (स्त्री०)

पूळौ-सं०पु० [सं० पूलक] घास, तृण आदि का बंधा हुआ गट्ठर।

उ०—१ ऊछळे खळे तन तुरंग एक। घासूळे पूळां सूं विसेख।

—रा.रू.

उ०—२ सासू बहू म्हे चली खेत नैं, लीनी गंडासी हाथ। सासूजी तो पूळा काटचा, कोई म्हे काटचा सर ए पचास।—लो.गी.

मह०—पुआल।

पूवौ—देखो 'पुओ' (रू.भे.)

पूस-सं०पु० [सं० पौष] मार्गशीर्ष के बाद आने वाला हेमंत ऋतु का दूसरा चांद्रमास, विक्रमी संवत का दसवां महीना।

रू०भे०—पो', पोस, पोसौ, पोह, पौह।

पूसण-सं०पु० [सं० पूषण] १ सूर्य।

२ बारह आदित्यों में से एक।

३ पालन-पोषण करने वाला।

रू०भे०—पूखण, पूखा, पूसा।

पूसणा-सं०स्त्री० [सं० पूषणा] कार्तिकेय की अनुचरी एक मातृका।

पूसदंतहर-सं०पु० [सं० पूसदंतहर] शिव के अंश से उत्पन्न वीरभद्र नामक एक अनुचर जिसने सूर्य का दांत तोड़ा था।

पूसली-सं०स्त्री० [देशज] देखो 'पुसी' (अल्पा०, रू.भे.)

उ०—तरै छोकरी झारी भर नै ले आई। तिसैं बाई पूसली भर नैं देखै तो पांणी मांहे तेल हीज तेल दीसै।

—वीरमदे सोनिगरा री वात

पूसा-सं०स्त्री० [सं० पूषा] १ दाहिने कान की एक नाड़ी का नाम।

—हठयोग

२ देखो 'पूषण' (रू.भे.)

पूहडणौ, पूहडबौ—देखो 'पहडणौ, पहडबौ' (रू.भे.)

पूहडणहार, हारौ (हारी), पूहडणियौ—वि०।

पूहडिओडौ, पूहडियोड़ौ, पूहडयोड़ौ—भू०का०कृ०।

पूहडीजणौ, पूहडीजबौ—भाव वा०।

पूहडियोड़ौ—देखो 'पहडियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पूहडियोड़ी)

पूहण—देखो 'पुरण' (रू.भे.)

पूहतणौ, पूहतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—थळि थळि थाणां सहू फल्यां, जलि-जलि कमळ विकास। आस न पूहती अह्म-तणी, अहो रे आसो मास।—मा.कां.प्र.

पूहप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)

पूहमीपोख—देखो 'प्रथवीपोख' (रू.भे.) (नां.मा.)

पूहर—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)

उ०—१ कांम कुतूहळ केलवी, कांमिनी केते ठांमि। आठ पूहर ऊलग करइ, मन सिद्धि माधव स्वामि।—मा.कां.प्र.

उ०—२ हीव राजा समस्त रातरै पूहर सभा जोड़नै सारा ही उमरावां नै, प्रधान नै भेळा करै नै मनसूबौ पूछीयौ।

—रीसालू री वात

पेंचकस—देखो 'पेचकस' (रू.भे.)

पेंज—देखो 'पेज' (रू.भे.)

उ०—अविचळ छत्र सुख-सुख ओप उछव मांण जें। परतख अलंकृत जस पेंज प्रमत प्रमांण जें।—बां.दा.

पेंजार—देखो 'पंजार' (रू.भे.)

उ०—पावड़ी नै पेंजार। पहिरे नहीं पगां मंझार।—जयवांणी

पेंटर-सं०पु० [अं०] चित्रकार, रंगसाज।

पेंटिंग-सं०स्त्री० [अं०] चित्रकारी, रंगसाजी।

पेंड—१ देखो 'पेंड' (रू.भे.)

उ०—बात भली दिन पाधरा, पेंडै पाकी बोर। घर मिडल घोड़ा जिणां, लाडू मारै चोर।—फुलवाड़ी

२ देखो 'पेंडौ' (मह०, रू.भे.)

पेंडौ—१ देखो 'पैंडौ' (रू.भे.)

उ०—राव रा आदमी हाथीयां नुं गया छै, पाछा वळतां इण पेंडै आवसी।—राव मालदे री वात

२ देखो 'परींडौ' (रू.भे.)

पेंदी—देखो 'पींदो' (अल्पा०, रू.भे.)

पेंवड-सं०पु० [?] एक घास विशेष जो अकाल के समय मनुष्यों द्वारा खाने के काम में लिया जाता है।

पेंसन—देखो 'पेनसन' (रू.भे.)

पेंसनर—देखो 'पेनसनर' (रू.भे.)

पेंसिल—देखो 'पेनसिल' (रू.भे.)

पे-सं०स्त्री०—१ पेटी। २ पीने की क्रिया, पीवन। ३ भोग। ४ पक्ष। ५ अंडा। ६ पानी, जल (एका.)

पेई-सं०स्त्री० [सं० पेटिका] छोटी सन्दूक, पेटी।

उ०—पीहर पूंछै खोलणी, पेई मूखण केर। हेड़वियां बाभी हंसी, नणंद कनै नाळेर।—वी.स.

रू०भे०—पेयी।

पेकंबर—देखो 'पैगंबर' (रू.भे.)

पेकार-सं०पु० [देशज] गाने का व्यवसाय करने वाला व्यक्ति।

पेखक—देखो 'प्रेक्षक' (रू.भे.)

पेखणी—देखो 'पेसणी' (रू.भे.)

पेखणौ, पेखबौ-क्रि०स० [सं० प्रेक्षणं, प्रा० पेक्खण] देखना, अवलोकन करना।

उ०—१ दनां दाखियो मुक पाहाड़ देखो। प्रभू पंच जोधा महासूर पेखो।—सू.प्र.

उ०—२ गुण को प्रवाह, रूप को निधान, गुणवंत की लूस, जोवन को पेखणो, इसी उमां साखुली छै।—लाली मेवाड़ी री वात

पेखणहार, हारौ (हारी), पेखणियौ—वि०।

पेखाडणौ, पेखाडबौ, पेखाणौ, पेखाबौ, पेखावणौ, पेखावबौ—प्रे०रू०।

पेखिओड़ौ, पेखियोड़ौ, पेख्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पेखीजणौ, पेखीजबौ—कर्म वा०।

पईखणौ, पईखबौ, पिक्खणौ, पिक्खबौ, पिक्खिणौ, पिक्खिबौ, पिहुक्खणौ, पिहुक्खबौ, पेखहणौ, पेखहबौ—रू०भे०

पेखहणौ, पेखहबौ—देखो 'पेखणौ, पेखबौ' (रू.भे.)

उ०—बळिहारी गुरु वयणड़े, बळिहारी गुरु मुख चंद रे। बळिहारी गुरु नयणड़े, पेखहतां परमाणंद रे।—स.कु.

पेखहणहार, हारौ (हारी), पेखहणियौ—वि०।

पेखहिओड़ौ, पेखहियोड़ौ, पेखह्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पेखहीजणौ, पेखहीजबौ—कर्म वा०।

पेखहियोड़ौ—देखो 'पेखियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पेखहियोड़ी)

पेखाडणौ, पेखाडबौ—देखो 'पेखाणौ, पेखाबौ' (रू.भे.)

पेखाडणहार, हारौ (हारी), पेखाडणियौ—वि०।

पेखाडिओड़ौ, पेखाडियोड़ौ, पेखाड्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पेखाडीजणौ, पेखाडीजबौ—कर्म वा०।

पेखाडियोड़ौ—देखो 'पेखायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पेखाडियोड़ी)

पेखाणौ, पेखाबौ-क्रि०स० ('पेखणौ' क्रिया का प्रे०रू) १ दिखाना, अवलोकन कराना।

क्रि०अ०—२ दिखाई देना, मालूम होना (पड़ना)

उ०—पल जांणै दिन जाय, दिन जांणै पख ज्यूं दरस। पख एक बरस पेखाय, जावण लग्गा जेठवा।—जेठवा

पेखाणहार, हारौ (हारी), पेखाणियौ—वि०।

पेखायोड़ौ—भू०का०कृ०।

पेखाईजणौ, पेखाईजबौ—कर्म वा०, भाव वा०।

पेखाड़णौ, पेखाड़बौ, पेखावणौ, पेखावबौ—रू०भे०।

पेखायोड़ौ-भू०का०कृ०—१ दिखाया हुआ, अवलोकन कराया हुआ। २ दिखाई दिया हुआ।

(स्त्री० पेखायोड़ी)

पेखावणौ, पेखावबौ—देखो 'पेखाणौ, पेखाबौ' (रू.भे.)

पेखावणहार, हारौ (हारी), पेखावणियौ—वि०।

पेखाविओड़ौ, पेखावियोड़ौ, पेखाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पेखावीजणौ, पेखावीजबौ—कर्म वा०।

पेखियोड़ौ-भू०का०कृ०—देखा हुआ, अवलोकन किया हुआ।

(स्त्री० पेखियोड़ी)

पेगंबर—देखो 'पैंगबर' (रू.भे.)

उ०—जाप का पेगंबर आप का दरियाव। ताप का सेस ज्वाळ दाप का कुरराव।—रा.रू.

पेड़-सं०पु० [सं० पिण्ड] वृक्ष, दरख्त। उ०—एक बीज सूं सब हो उपज्या, पेड़ डाल फूलाजी।—स्री सुखरांमजी महाराज

मुहा०—१ पेड़ लगणौ—वृक्ष का किसी स्थान पर जड़ पकड़ना, कार्यारम्भ होना।

२ पेड़ लगाणौ—वृक्ष या पौधे को किसी स्थान पर जमाना, काम प्रारम्भ करना।

पेड़कालौ-सं०स्त्री० [सं० पट्टिकालय] छत पर जाने वाली सीढियों की पंक्ति।

पेड़ी-सं०स्त्री० [?] १ पेड़ का तना। उ०—निमझर जीरै मांत, निंबोळी दाखां जेड़ी। आंम तण्यांरै रूंख, एक सा डाळा पेड़ी। —दसदेव

२ देखो 'पेडी' (रू.भे.)

३ देखो 'पैंड़ी' (रू.भे.)

पेड़ो—देखो 'पैंड़ो' (रू.भे.)

उ०—सातमो मास उलरियो ए जच्चा, कंद रै पेड़े मन जाय। —लो.गी.

पेच-सं०पु० [फा०] १ छल, कपट, षड़यंत्र। उ०—कथ 'गोइंद' किसन रै, पेखि चित खांत पहल्ली। साहिजादै 'किसन' सूं, मंडे हित पेच मुगल्ली।—सू.प्र.

क्रि०प्र०—डाळणौ, लगाणौ।

२ उलझन, झझट, बखेड़ा। उ०—सुण जतनां री बात पंथ रा पेच घणेरा। सुण इमरत संदेस कुरळता कोड मनां रा।—मेघ.

क्रि०प्र०—डालणौ, पड़णौ।

३ चालाकी, चालबाजी, धूर्तता। उ०—१ फौजदार नूं नीड़ै जांणि केही वार संकल्प पाछौ छोडि तुरकां रा पेच में कंद होण रो डर धारियो।—वं.भा.

उ०—२ पुहवि कच्छ पचाळ, गंजी लीधी पटु पेचां।—वं.भा.

क्रि०प्र०—पड़णौ, चलणौ।

४ पगड़ी का फेरा, पगड़ी का लपेट। उ०—१ पेचां मझि स्रोण वहे अणपार। जटा गंग जांणिक धार हजार।—सू.प्र.

उ०—३ पेच सुरगी पाघ रा, ढाकै मत धर ढाल। काछौ चढ आंछौ कहूं, हजा भीजण हाल।—बां.दा.

क्रि०प्र०—कसणौ, देणौ, पड़णौ, बांधणौ।

५ किसी प्रकार की मशीन, यंत्र।

६ वह कील या कांटा जिसके नुकीले आधे भाग पर चक्करदार गहरियां होती हैं और जो ठोक कर नहीं बल्कि घुमा कर जड़ा जाता है।

क्रि०प्र०—कसणौ, खोलणौ, जड़णौ, निकाळणौ।

७ यंत्र का वह विशेष अंग जिसको दबाने, घुमाने या हिलाने से वह यंत्र चलता या रुकता है।

मुहा०—१ पेच घुमाणौ—तरकीब से किसी का मन फेरना।

२ पेच हाथ में होणौ—किसी के विचारों को परिवर्तन करने की शक्ति होना।

८ युक्ति, तरकीब।

क्रि०प्र०—निकालणौ, लड़ाणौ।

९ पतंग लड़ने के समय दो या अधिक पतंगों के डोर का एक दूसरे में फंस जाना।

मुहा०—१ पेच काटणौ—दूसरे की पतंग को काटना।

२ पेच छूटणौ—दो या दो से अधिक पतंगों की डोर का अलग-अलग होना।

३ पेच लड़ाणौ—दूसरे की पतंग काटने को उसकी डोर में अपने पतंग की डोर को फँसाना।

४ पेच होणौ—दो या दो से अधिक पतंगों की डोर का एक दूसरे से फँसना।

१० कुश्ती में प्रतिद्वंदी को पछाड़ने की युक्ति, दाव।

उ०—पड़ै खग दाव तणा घण पेच। महाबळ खेत लड़ै 'महवेच'। —सू.प्र.

क्रि०प्र०—चलाणौ, मारणौ, लगाणौ।

११ किसी टूटी हुई, फटी हुई आदि वस्तु के परत या तल में फटे, टूटे आदि भाग को निकाल कर उसके स्थान पर दूसरा टुकड़ा लगाने की क्रिया।

क्रि०प्र०—लगाणौ।

१२ घुमाव, फिराव, चक्कर।

१३ पगड़ी या टोपी के सामने की ओर खोंसा जाने वाला या लगाया जाने वाला एक आभूषण, सिरपेच। उ०—मोतियां का तुररा रतन पेचूं के बीच ऐसा दरसाए। मानूं नवग्रह के पास तारागण आए।—सू.प्र.

यौ०—सिरपेच।

१४ किसी भी वस्तु का व्यसन, आदत।

पेचक-सं०स्त्री० [सं०] पूंछ का मूल।

पेचकौ—देखो 'पीचकौ' (रू.भे.)

पेचकस-सं०पु० [?] १ लोहे या अन्य धातु के पेच को कसने और जड़ने का एक उपकरण।

२ एक प्रकार का शस्त्र विशेष। उ०—ऐसे भूखणूं सूं जुगति पन्नू के मोहरे जूं से कम्मर पेचकसि। जवह(स) के साज सू जमदढ खग कसि।—सू.प्र.

रू०भे०—पेंचकस।

पेचदार-वि० [फा०] १ जिसमें कोई पेच लगा हुआ हो।

२ उलझन वाला, पेचीदा।

पेचदाव-सं०पु० [?] दावपेच, तरकीब, उपाय।

पेचपट्टी-सं०स्त्री० [?] बढई अथवा स्वर्णकार का एक औजार विशेष जो लोहे आदि में चूड़ी निकालने के काम आता है।

पेचलगूरीय-सं०स्त्री० [देशज] घोड़े के चलने की एक गति विशेष।

पेचाळो-सं०पु० [?] वह व्यक्ति जिसके बाल घूंघराले हों।

उ०—सइयां मोरी ए, पटियां पेचाळौ जलालो मनैं मेल दे, अन नेवड़ां सूं लेवां समझाय।—लो.गी.

पेचिस-सं०स्त्री० [फा० पेचिश] १ आंव के कारण पेट में होने वाली पीड़ा, मरोड़।

२ एक उदर रोग जिसमें बार बार पाखाने जाना पड़ता है।

पेची-वि० [?] १ चालाक या धूर्त।

२ देखो 'पेछी' (रू.भे.)

सं०स्त्री० [देशज] १ घर की लाल पगड़ी या दुपट्टे पर लपेटा जाने वाला एक सफेद कपड़े का लंबोतरा टुकड़ा (बांभी)

२ एक विशेष प्रकार से बांधी जाने वाली 'खिड़किया पाग' और उसकी रक्षा के लिए बांधे जाने वाले बंधन 'उपरणा' की जोड़ को छिपाने वाली जरी की पट्टी (पुष्करणा ब्राह्मण)

पेचीदो-वि० [फा० पेचीद:] पेचदार।

पेचूंटी-सं०स्त्री० [प्रा० पेट-कूंची] नाभि के ठीक नीचे की पेट की वह नस जो अंगुली के दबाने से रह-रहकर उछलती हुई सी मालूम पड़ती है, धरण।

पेचू—देखो 'पेछू' (रू.भे.)

पेचो-सं०पु० [?] एक प्रकार की पाग जिसके एक किनारे पर तार, गोटा लगा रहता है।

उ०—आभा चमकै बीजळी सीकर बरसै मेह। छांटां लागै प्रेम की भींजै सारी देह। जी उमराव थांको पचरंग पेचो भींजै म्हारा प्राण।
—लो.गी.

पेछी, पेछू-वि० [?] व्यसनी, दुर्व्यसनी।

उ०—तन अखत रोड होले, तिके उर अंतर सूं आफळै। इम पियण घूंट पेछू उमग, होका दीठां हांफळै।—ऊ.का.

रू०भे०—पेची, पेचू।

पेज-सं०पु० [अं०] १ पृष्ठ, पन्ना।

[सं० पेय] २ पीने की वस्तु।

उ०—लियां पत्र पेज भर्‌यां लटियाळ। घणै तप तेज खमा घटियाळ।
—मे.म.

३ प्रतिष्ठा।

४ लाज, शर्म।

५ स्पष्ठ ?

उ०—प्यार ही वरण सुण जो चतुर, पात पुकारे पेज में। आ लाज सरम कुळ री अबे, साथ गमावे सेज में।—ऊ.का.

६ प्रतिज्ञा।

७ शर्त।

रू०भे०—पेंज।

पेजको—देखो 'पीचको' (रू.भे.)

पेट-सं०पु० [सं० पेट=थैला] १ शरीर के मध्य भाग का वह सामने वाला अंग जो छाती के नीचे और पेड़ू के ऊपर होता है।
(अ.मा., ह.नां.मा.)

२ शरीर की वह थैली जिसमें पहुंचकर खाया हुआ अन्न पचता है, आमाशय, ओझर।

उ०—छाक पियो जिण पेट छुडायो। भारी पांणी जनम भंडायो।
—ऊ.का.

पद—१ पेट कढावे वेट—भोजन के लिए किए जाने वाला धंधा।

२ पेट का कुत्ता—जो केवल भोजन के लालच से सब कुछ कर सकता हो।

३ पेट का धंधा—१ जीविका-निर्वाह हेतु किया जाने वाला उद्योग, धंधा। २ रसोई बनाने का कार्य।

४ पेट की आग—भूख या क्षुधा।

५ पेट के लिए—उदरपूर्त्ति के लिए।

मुहा०—१ पेट आणो—पतले दस्त लगना।

२ पेट आफरणो—पेट में वायु के कारण विकार होना, पेट का फूल जाना।

३ पेट और पीठ एक होणो—१ बहुत भूखा होना। २ बहुत दुबला होना।

४ पेट ऐंठणो—पेट में दर्द होना।

५ पेट कटणो—पेट में मरोड़ चलना।

६ पेट काटणो—बचत के लिए कम खाना।

७ पेट की आग बुझाणो—खाकर भूख मिटाना।

८ पेट भराई—गुजारा, निर्वाह।

९ (किसी को) पेट की मार देणो—१ भूखा रखना, किसी की रोजी छीनना, २ जीविका उपार्जन में बाधक बनना।

१० पेट रो पाणी तक न हिलणो—जरा भी परिश्रम न होना।

११ पेट रो पाणी न पचणो—किसी बात को कहे बिना न रह सकना।

१२ पेट गुड़गुड़ाणो—पेट में अपच के कारण गुड़गुड़ शब्द करना।

१३ पेट छंटणो—१ पेट का मल या विकार निकल जाना। २ मोटापा कम होना।

१४ पेट छूटणो—पतले दस्त आना।

१५ पेट जळणो—बहुत भूख लगना।

१६ पेट दिखाणो—भूखे होने का संकेत करना।

१७ पेट दूखणो—किसी की उन्नति देखकर जलना।

१८ पेट न भरणो—पूरा न पड़ना।

१९ पेट नै धोखो देणो—खाने में बचाना।

२० पेट पकड़'र फिरणो—बहुत अधिक विकलता बताते हुए घूमना।

२१ पेट पर सांप लोटणो—घबरा जाना, हतप्रभ होना।

२२ पेट पांणी होणो—बार-बार पतले दस्त होना।

२३ पेट पापी—जीवन में किए जाने वाले पापों की जड़ पेट है।

२४ पेट पाळणो—किसी तरह निर्वाह करना।

२५ पेट फाटणो—पेट में बहुत अधिक दर्द होना, अधिक खाने से तकलीफ महसूस होना, अत्यधिक खुशी होना।

२६ पेट फूलणो—कोई बात जानने या कहने को बहुत उत्सुक होना।

२७ पेट बाळणी—(किसी को) परेशान करना।
२८ पेट भरणी—१ जो कुछ मिले वह खा लेना।
२ जी भरना, संतोष होना।
२९ पेट मसोसणी—भूखे मरना।
३० पेट मार'र मरणी—आत्मघात करना।
३१ पेट में ऊंदरा दौड़णी—अधिक भूख लगना।
३२ पेट में खळबळी होणी—घबराना, अधिक भूख लगना, भूख के मारे विह्वल होना।
३३ पेट में डाळणी—जो कुछ मिले वह खा लेना।
३४ पेट में दाढी होणी—छोटी अवस्था में ही वयस्कों की तरह चतुर होना।
३५ पेट में पग होणा—अत्यंत छली या कपटी होना।
३६ पेट रै पाटी बांधणी—भूखा रहना।
३७ पेट में बळ पड़णी—अधिक हंसी के कारण पेट में दर्द होना।
३८ पेट बळणी—पेट में अत्यधिक गर्मी अनुभव करना, दुर्घटना की आशंका होना।
३९ पेट सूं पांव निकाळणी—१ कुमार्ग में लगना।
२ सामर्थ्य या योग्यता से अधिक काम करना।
३ वंश, कुल।
उ०—राव लाखा री पेट-सोभी, सहसमल लाखौ। ऊदौ लखारी टीकै न हुवौ।—नैणसी
४ बन्दूक या तोप के अन्दर का वह स्थान जहां गोली या गोला भरा या रखा जाता है।
५ किसी खुली या पोली चीज के बीच का भीतरी खाली भाग।
ज्यूं—बोतल रो पट।
६ स्त्री का गर्भाशय या उसमें स्थित होने वाला गर्भ, हमल।
उ०—१ पेट घरे जायौ पछै, घबरायौ मळ घोय। जिण कारण जगदीस सूं, जणणीं गरवी जोय।—बां.दा.
उ०—२ सुणि ढोला, करहउ कहइ, सांमि-तणउ मो काज। सरदी पेट न लेटयइ, मूंघ न मेलूं आज।—ढो.मा.
पद—१ पेट चोट्टी—वह स्त्री जिसके गर्भ तो हो किन्तु बाहर से दिखाई न पड़े।
२ पेट पोंछना—अंतिम संतान।
३ पेट वाळी—गर्भवती स्त्री।
मुहा०—१ पेट गदराणो—गर्भवती होने के कारण पेट का उभरना।
२ पेट गिरणी—गर्भपात होना।
३ पेट गिराणी—गर्भपात कराना।
४ पेट ठंडो करणी—बच्चों से संतोष करना।
५ पेट ठंडो रहणी—संतान के जीवित रहने से माता का सुखी रहना।
६ पेट दिखाणी—गर्भ पहिचानवाना।
७ पेट फुलाणी—किसी स्त्री को गर्भवती कर देना।
८ पेट फूलणी—गर्भवती होना।
९ पेट बळणी—संतान का मरजाना या संतान मरने का दुख होना।
१० पेट बाळणी—किसी की संतान को मारना।
११ पेट राखणी—पुरुष के साथ सम्भोग करके गर्भाशय में गर्भ स्थित कराना।
१२ पेट रहणी—गर्भ रहना।
१३ पेट सूं होणी—गर्भवती होना।
७ लाक्षणिक रूप में अन्तःकरण या मन।
पद—१ पेट का गहरा—जो अपने मन की बात किसी पर प्रकट न होने दे।
२ पेट हलका—जो सुनी हुई बात छिपाकर न रख सके।
३ पेट की बात—मन में छिपाकर रखी हुई बात।
४ पेट में—मन या हृदय में।
मुहा०—१ पेट देणो—अपना गूढ रहस्य बताना।
२ पेट में घुसणी—मन का भेद जानना।
३ पेट में डाळणी—देखी या सुनी हुई बात अपने मन में छिपा कर रखना।
४ पेट में होणो—भीतर होना, कब्जे में होना।
५ पेट मोटौ हो जाणी—१ खूब रिश्वत खाना।
२ धनी हो जाना।
६ पेट से निकळणी—दूसरे द्वारा छिपाई या दबाई हुई चीज को प्राप्त करना।
अल्पा०—पेटड़लो, पेटि, पेटो, पेदौ।
पेटड़लौ—देखो 'पेट' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—पेटड़लौ मूमल रौ पीपळिये रौ पांन ज्यों, हांजी रे हीवड़लौ हतोयारी रो सचै ढाळीयौ, म्हारी नाजकड़ी मूमल हालै नी रे रसीले रे देस।—लो.गी.
पेटघियाळी-सं०स्त्री०यौ० [राज० पेट+राज० घियाळी] १ उदरपूर्ति के लिए की जाने वाली छोटी मजदूरी।
२ छोटी चोरी।
पेटघियाळियौ-वि० [राज० पेट+राज. घियाळियौ] १ उदरपूर्ति के लिए छोटी मजदूरी करने वाला।
२ छोटी चोरी करने वाला।
पेटपसार-सं०स्त्री०—पेट तक ऊंची (भूमि) उ०—रावजी सलामत! चढाव तो पेटपसार छै नै थेट गयां आदमी रै कांधै पग देनै चढै आगे ऊभौ होइ कांगरो पाकड़ै, इसी करै तो गढ पाकड़ै, मिळै हाथ आवै।—राव रिणमल री वात
पेटल—१ देखो 'पेटू' (रू.भे.)
२ देखो 'पेट' (मह०, रू.भे.)
पेटवांन—देखो 'पैंठवांन' (रू.भे.)

पेटारथी-वि० [राज० पेट+सं० अर्थिन्=पीटार्थी] जो केवल पेट भरने को ही सब कुछ समझता हो, पेटू, भुक्खड़।

पेटाळजो, पेटाळिजो-सं०पु० [देशज] १ पक्षियों के शरीर का वह अवयव जहां पर उनका कलेजा, गुर्दे और हृदय रहता है।
२ पशु (शिकार) के पेट का भाग विशेष। उ०—सो किण भांति रा सूळा पेटिमांरा खालिमां रा, अंतर वेढिम्रां रा, ऊपर चेठ रा, काळिजे रा, पेटाळिजे रा, इण भांति रा सूअरां बाकरां रा सूळा।
—रा.सा.स.

पेटि—१ देखो 'पेट' (रू.भे.)
उ०—पुरुस पढिइ पणि पेटि थी, नारीं छत्र धराय। वाहाविं कुंअर वायनइ, वाय न ऊम्हइ वाय।—मा.कां.प्र.
२ देखो 'पेटी' (रू.भे.)

पेटियो-सं०पु० [सं० पेट+रा.प्र.इयो] १ वृत्ति वालों को दिया जाने वाला एक खुराक का बिनापक्का (कच्चा) सामान।
उ०—राजा कांमेती बोलायो कह्यो ओडां नूं पेटिया मांडदघो अर असमांवे नूं साळ, दाळ, घ्रत, मैदो, खांड मांडिदघो।
—जसमां ओडणी री वात
२ तोप या बंदूक में एक बार में खर्च होने वाला बारूद।
३ एक समय खाया जाने योग्य बिना पकाया हुआ भोजन का सामान। उ०—पड़दे घाली पातरां, ठावी ठावी ठोड़। परणी नूं नह पेटियो, देखो बुध री दोड़।—बां.दा.
मुहा०—पेटिया दूरवणौ—किसी को खाने को देना, किसी का निर्वाह करना।

पेटी-सं०स्त्री० [सं० पेटिका] १ संदूकची, छोटा संदूक।
उ०—जिण बगत हजार अमोलक मणियां री वा पेटी लक्खी विणजारो आपरा हाथ में आदर सूं झेली···।—फुलवाड़ी
२ छाती और पेडू के बीच का स्थान।
३ कमर में बांधी जाने वाली पट्टी, कमरबंद, बैल्ट।
मुहा०—पेटी उतरणी—पुलिस के सिपाही का मुअत्तिल किया जाना।
४ नाई के औजार (उस्तरा, कैंची आदि) रखने की किसबत।
५ युद्ध के समय पेट के ऊपर धारण किया जाने वाला उपकरण
६ मशीन पर कते हुए सूत का बंधा गट्ठर।
रू०भे०—पेटि, पेटिय।

पेटीय—देखो 'पेटी' (रू.भे.)
उ०—जमदाढ बांमे अंग भीड़ जड़ी। सूज ऊपर पेटिय सांवरड़ी।
—गो.रू.

पेटू-वि० [रा० पेट+रा.प्र.ऊ] बहुत अधिक खाने वाला, पेटार्थी।
सं०पु०—वह प्राणी जिसका पेट फूला हुआ हो।
रू०भे०—पेटल।

पेटेंट-वि० [अं०] १ किसी आविष्कारक के आविष्कार के लिए सरकार द्वारा दी हुई रजिस्टरी, सर्वाधिकार सुरक्षित।
२ मशीन, यंत्र, युक्ति या औषध जिसकी इस प्रकार रजिस्ट्री हो चुकी हो, घातिया।
ज्यूं—आ हैजा री पेटेंट दवा है।

पेटै-क्रि०वि० [देशज] १ बदले में, एवज में। उ०—बिणजारो मांडने सगळो विखो दरसायो। पछै केसरी रै पेटै फगत अेक लाख रिपिया उधारा मांग्या।—फुलवाड़ी
२ लिए, निमित्त।

पटो-सं०पु०—१ किसी पदार्थ का मध्य भाग।
२ पशुओं की आंतें।
३ वृक्ष का तना।
४ बही के पृष्ठ का मध्य भाग।
क्रि०प्र०—भरणौ।
५ ढरकी के मध्य का वह रिक्त स्थान या गड्ढा जिसमें जुलाहे नरी रख कर कपड़ा बुनते हैं।
६ तलवार का ऊपर से नीचे तक दोनों ओर वाला मध्य का चौड़ा भाग।
७ कपड़े की बुनवट में बाना का भाग।
८ उड़ती हुई पतंग की डोर का झोल खाया हुआ भाग।
९ देखो 'पेट' (अल्पा०, रू.भे.)
उ०—पूरा दिन हुवा। राजा रो पेटो फाटयो। टाबर नीसरीयो।
—चौबोली
मुहा०—१ पेटा री बात—हृदयगत भाव, मन के विचार।
२ पेटा रो भेद—गुप्त बात, रहस्य।
३ पेटो ऊघड़णौ—गुप्त बात का प्रकट हो जाना। भेद खुलना।
४ पेटो देणौ—भेद या रहस्य प्रकट करना, गुप्त मंत्रणा को प्रगट कर देना।
१० देखो 'पेटी' (मह०, रू.भे.)
उ०—रोय सुत किम नीर राळै, टळै भावी कोण टाळै, हुवो होवणहार। पड़ी देह सनेह पेटा, बाप दागण काज बेटा तुरत कीजै त्यार।
—र.रू.

पेठो सं०पु० [देशज] १ एक प्रकार का लता फल, सफेद रंग का कुम्हड़ा (अमरत)
२ एक प्रकार की मिठाई जो शक्कर से पागी जाती है तथा मैदा से या मावे से बनाई जाती है। यह सफेद कुम्हड़े से भी बनाई जाती है।
ज्यूं—आगरा रो पेठो, मावा रो पेठो।

पेठावड़ी-सं०स्त्री० [राज० पेठो+सं० वटक] सफेद कुम्हड़े को पीस कर तथा उसमें नमक, मिर्च, मसाला डाल कर उसकी बनाई हुई बड़ी।

पेडाइत—देखो 'पेडायत' (रू. भे.)
उ०—खाडा वूजी भक्ति है, लोहरवाड़े माहि। परकट पेडाइत बसैं, तहं संत काहे को जाहि। —दादूवांणी

पेडी—सं० स्त्री० [देशज] १. द्वार के चौखट के नीचे वाली लकड़ी जो जमीन पर रहती है, देहली।
उ०—जद हाट रौ धणी बोलियौ-अबारूं तौ स्वांमीजी उतरयां है, सो आखी पेडी रुपियां सूं जड़ देवौ तौ ही न दयूं। —भि.द्र.
२. दुकान या मकान आदि किराये पर लेने के लिये मकान मालिक या पूर्व किरायेदार को किराये के अतिरिक्त दिया जाने वाला धन।
३. देखो 'पेड़ी' (रू.भे.)
४. देखो 'पैड़ी' (रू.भे.)
रू०भे०—पेड़ी, पेढ़ी।

पेडू—सं० पु० [राज० पेट ?] १. नाभि और मूत्रेन्द्रिय के बीच का स्थान, उपस्थ।
उ०—पण इण पैंलां ईज टूं किया री गोळी पेडू में आय ठठी, अर वांनै बैठणो पड़ग्यौ। —रातवासौ
२. गर्भाशय।
उ०—हाथ छडी पग दोरडी, वाधइ कोटि विसाळ। पयोधर पेडू जइ अडइ, मग थाइ, मगनाळ। —मा.कां.प्र.
पद—पेडू की आंच=१. स्त्री का पुरुष के साथ केवल काम.वासना का प्रेम।
२. स्त्री की काम वासना।

पेढ़—देखो 'पेड़' (रू.भे.)
उ०—रीति खांति तणी चीति राखी रूड़ा, पेढ़ साखा सहत घड़त पाती। तरवरां ऊपरै केई नर तरछिया, खरौ हूंनर लियां 'नगा' खाती। —नगराज रौ गीत

पेढ़ी—देखो 'पेडी' (रू.भे.)
उ०—क्यूं कै पेट में तो भूखो रैवीजे नी, अर बिना हथेरण सेठ लोग पेढ़ी माथे ई चढ़ण देवै नहीं। —रातवासौ

पेंतावौ—देखो पेंताळौ (१) (रू. भे.)

पेंयड़—सं० पु०—राठौड़ वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।
उ०—सीहाजीरै केड़रा राठौड़ ज्यांरी विगत—घूहड़िया, मोट, धांधल, महण, रांदा, आसल, वोला, पेंयड़, फीटक। —बां. दा. ख्यात

पेयड़बाई—सं० स्त्री०—चारण वंशोत्पन्न एक देवी विशेष।

पेंदल—देखो 'पैदल' (रू. भे.)
उ०—चौसट खण रौ घर रचवायौ, ता में सेन सजांणी। पेंदल, घोड़ा, ऊंट, अनै कफ, मंडयौ जुद्ध मेदांनी। —ऊ. का.

पेवौ—देखो 'पेट' (व्यंग)

पेनसन—सं० स्त्री० [अं० पेन्शन] वह मासिक अथवा वार्षिक वृत्ति जो किसी मनुष्य को वृद्धावस्था में उसकी सेवाओं के उपलक्ष में उसको अथवा उसके परिवार वालों को दी जाती है।
क्रि० प्र०—दैणी, पाणी, मिळणी, लैणी, होणी।
रू० भे०—पिनसन, पेंनसन, पेंसन।

पेनसनर, पेनसनियौ—सं० पु० [अं० पेन्शनर] पेन्शन वृत्ति पाने वाला व्यक्ति।
रू० भे०—पेंसनर।

पेनसिल—सं० स्त्री० [अं० पेन्सिल] सुरमे, सीसे, रंगीन खड़िया आदि की बनी लिखने की कलम विशेष जिसमें स्याही की आवश्यकता नहीं होती।
रू० भे०— पेंसिल।

पेनाकी—देखो 'पिनाकी' (रू. भे.)

पेनी—सं० स्त्री० [अं०] इंगलैण्ड में चलने वाला सबसे छोटा सिक्का जो एक शिलिंग के बारहवें भाग के बराबर होता है।

पेनीवेट—सं० पु० [अं०] १० रत्ती के बराबर का एक अंग्रेज़ी तोल।

पेपर—सं० पु० [अं०] १. कागज।
२. समाचार-पत्र, अखबार।
३. परीक्षा का प्रश्न-पत्र।

पेम—देखो 'प्रेम' (रू.
उ०—१. मत चिंता, अभिलाख, परहर मारग पेम रौ। रे! संतोसहि राख, विण चिंता अभिलाख विण। —बां. दा.
उ०—२. अम्हां मन अचंरिज भयउ, सखियां आखइ एम। तहं अणदिट्ठा सज्जणां, किउं करि लग्गा पेम। —ढो. मा.

पेमचीबोर—सं० पु० [देशज] बड़े आकार का बेर जो कलम द्वारा मीठा बनाया जाता है।
रू० भे०—पेमजीबोर, पेमदीबोर, पेमलीबोर।

पेमचौ—देखो 'पोमचौ' (रू. भे.)

पेमजीबोर—देखो 'पेमचीबोर (रू. भे.)

पेमदी—सं० पु० [देशज] एक देव वृक्ष। (अ. मा.)

पेमदीबोर—देखो 'पेमचीबोर' (रू. भे.)

पेमरस—देखो 'प्रेमरस' (रू. भे.)
उ०—महंदी वायी-वायी वालूड़ारी रेत। पेमरस महंदी राचणी। —लो. गी.

पेमल—वि० [सं०प्रेम+रा० प्र० ल] प्रेम व स्नेह रखने वाला।
स० स्त्री०—मीरां बाई का जन्म का नाम।
उ०—मुख ती हर पास निभावण मीरां, भोग विलास उदास भई। दिन ही दिन दास उपासत देखं, देस धणी हिक त्रास दई। न हुवौ घट नास पियौ विस 'पेमल' जास धणी बळ तास जरं। —भगतमाळ

पेमली, पेमलीबोर—देखो 'पेमचीबोर' (रू. भे.)

उ०—१. जैपुर के बाजार में पड़ची पेमलीबोर । नीची होय उठावतां, पड़धो कमर में जोर । —लो. गी.

उ०—२. पाखती पेमलीबोरां री एक बेर-धुमेर बोरड़ी ही । —फुलवाड़ी

पेमांनो—सं० पु० [फा० पैमान = बचन, संधि] १. संदेश ।

उ०—दूणीनाथ पेमान रावजी ने, बुला लीनूं । जेनें भूप सीकरि का धणी के साथ कीनूं । —शि. वं.

२. देखो 'पैमांनो' (रू. भे.)

पेमेंट—सं० पु० [अं०] भुगतान, मूल्य चुकारा ।

पेमो—देखो 'प्रेम' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—तूं सोच करे छे केमो । हे सुंदर ! धर मोसूं पेमो । —जयवांणी

पेय—वि० [सं०] जो पिया जा सके, पीने योग्य ।

सं० पु०—१. पीने की वस्तु । २. जल या पानी । ३. दूध ।

पेयी—देखो 'पेई' (रू. भे.)

उ०—गोरी ए, पेयां मेलो म्हारो फूल । डाबा नै मेलो म्हारी पागड़ी । —लो. गी.

पेरण—देखो 'पैरण' (रू. भे.)

पेरणौ, पेरबौ—देखो 'प्रेरणौ, प्रेरबौ' (रू. भे.)

उ०—१. मिणधर छत्र-धर अम्बर गेलमन, ताईभर रजधर 'सींध'तण । पूंगी दळ पतसाह पेरतां, फेरै कमळ न सहंसफण । —महारांणा प्रताप सिंह रो गीत

उ०—२. पर हूंता जिम पसर, धारा फणधर उर धारै । पवन जोर पेरियो, सह बद्दळ विसतारै । नाग राग पेरियो, प्रांण पैलां वसि थप्पै । दास हुकम पेरियो, जास पति धार सजप्पै । परतक्ष ठगोरी पेरियो, मनुज ग्रहे ठग मंडळी । पेरियां मंत्र सिंधुर अगह, आवै दरगह अग्गळी । —रा. रू.

पेरणहार, हारी (हारी), पेरणियौ —वि० ।

पेरिम्रोड़ो, पेरियोड़ो, पैरयोड़ो —भू० का० कृ० ।

पेरीजणौ, पेरीजबौ —कर्म वा० ।

पेरियोड़ो—देखो 'प्रेरियोड़ो' (रू. भे.)

(स्त्री० पेरियोड़ी)

पेरुवौ, पेरुवो—सं०पु० [सं० पर्व] १. उंगुली का संधि स्थान या जोड़ ।

२. उक्त दो जोड़ों के बीच का भाग ।

३. उंगुली या अंगूठे के ऊपर का भाग, पोर ।

उ०—आंगळी रौ पेरवौ टिकै जिती भी जमीन न दूं । —मारवाड़ी ख्यात

रू० भे०—पहरवौ ।

पेरी—सं० स्त्री० [सं० पर्व], गन्ना, बाजरी, ज्वार, बाँस आदि के डण्ठलों के स्थान स्थान पर जोड़ का उभरा हुआ स्थान ।

पेरोजो—देखो 'फीरोजो' (रू. भे.)

उ०—पेरोजा पुखराज के, वणे महल पर छात । ताके खंभ प्रवाळिया, वणे विविध सी भांत । —गजउद्धार

पेरयाळो—वि० (स्त्री० पेरयाळी) दूसरी ओर का, दूर का । (जैसलमेर)

पेल—सं० पु० १. पेलने का भाव, धक्का, ढकेल ।

२. पवार वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति ।

उ०—परमारां री पैंतीस साखं लिखंते परमार, पाणीस········· धध, खेर, डोड, पेल, गूगा, काबा । —बां. दा. ख्यात

पेलणौ, पेलबौ—क्रि० स० [सं० पीडनम्, पेलनं या पेल्] १. धकेलना, दबाना, ठेलना ।

उ०—१. प्रगल्भ कंठ पेल देत कंठ कंठिराव को । दुहत्थ हत्थ ठेल देत हत्थ लै प्रदाव को । —ऊ. का.

उ०—२. रोमि रोमि ते पेलइं परांणि । तीहं रहिं दुक्ख आठ गुणउं जांणि । —वसिंग

२. पराजित करना, हराना ।

उ०—पातां प्रसण रिमांदळ पेलण, जोगण बीस भुजाळी । —जसकरण पीरदांनोत लाळस

३. जाना ।

उ०—मती धारि पूरब्ब बन्नीत मेले । पचीसेंक रोहैं कपी साथ पेले । —सू. प्र.

४. नष्ट करना, मिटाना ।

उ०—एको ही नांम अनंत रो, पेलै पाप प्रचंड । जब तिल जेतौ ज्वाळनळ, खोण दहे नवखंड । —ह. र.

५. रोकना, मना करना ।

उ०—तीन ही भायां रो तख्त माथे चलावणो जांणि प्राची में पुत्र नूं भेजि आवाची कूं आवता दो ही पुत्रां नूं समझावण साम्हे जावता पातिसाहि नूं पेलि तिण रो बडो पुत्र साहस रै सहाय पहली कहिया कटक साथ दरकूंचां दक्खिण रै अभिमुख चलायो । —वं. भा.

६. भेजना ।

उ०—१. मैं मेले रे ! मैं मेले । परचंड दसूं दिस पेले । नंह भूलो बात सुमंत्रा नंदण ! छोह अनाहक छेले । —र. रू.

उ०—२. जिण थी हाडां रा समग्र ही पांच सौ ५०० सिपांहि तिकां नूं बाढ़ण काजै आंपरी समस्त ही सेना पेलीजै तो विसंभर बिबाहिण्णि १ बिनां ही बिहूं संबंधियां रो बचन निबाहै । —वं. भा.

७. झोंकना ।

उ०—'हरी' 'बहादर' 'चंद'तण, ईखे मेछ अभंग । एकै सेल उथल्लियो, ऊपर पेल पवंग । —रा. रू.

८. चलाना, दौड़ाना ।

उ०—पटादि खेल पेलकै सटा समालते नहीं । घुसै गयंद की घटा मयंद मालते नहीं । —ऊ. का.

पेलणहार, हारौ (हारी), पेलणियौ —वि० ।

पेलिग्रोड़ो, पेलियोड़ो, पेल्योड़ो —भू० का० कृ० ।
पेलीजणौ, पेलीजवौ, —कर्म वा० ।
पेलणौ, पेलबौ —रू० भे० ।

पेलव–वि० [सं०] १. दुर्बल, निर्बल। (डि० को०) २. सूक्ष्म, छोटा। ३. सुकुमार, सुकोमल। ४. महीन, पतला।

पे'लवांन—देखो 'पहलवांन' (रू. भे.)

पे'लवांनी—देखो 'पहलवानी' (रू. भे.)

पेलियोड़ौ–भू० का० कृ०—१. पराजित किया हुग्रा, हराया हुग्रा. २. धकेला हुग्रा, दबाया हुग्रा. ३. गया हुग्रा. ४. नष्ट किया हुग्रा. ५. रोका हुग्रा, मना किया हुग्रा. ६. भेजा हुआ. ७. चलाया हुआ. ८. झोंका हुग्रा. (स्त्री० पेलियोड़ी)

पेस–क्रि०वि० [फा० पेश] १. सामने, सम्मुख।
उ०—सत पेस कियौ सिस सादरतें। उपदेस दियौ गुर ग्रादर तें। —ऊ. का.
क्रि०प्र०—करणौ, पहोचणौ, होणौ।
२. पूर्ण, पूरा।
उ०—म्हारौ कांम बडो खरौ छै सो इसा मित्ररी मदद बिगर पेस न पहोंच सकसी। —नी. प्र.
क्रि० प्र०—चढ़णौ, होणौ।
२. हाजिर, उपस्थित, पेश।
उ०—मांनेन वयण जो हमें मुज्भ, तौ जड़ूं जंजीरां मांय तुज्भ। पिंजरे जड़ूं सुल्तांन पेस, भेजडूं करे दरवेस भेस। —वि. सं.
क्रि० प्र०—करणौ, होणौ।
स० पु०—१. स्वांमी, मालिक।
उ०—खळ रा दळण दुरद रा मोखण, पत रा रखण सुमत रा पेस। कळमें दरस आपरा करतां, प्रगट पाप रा गया प्रवेस। —र.रू.
२. दण्ड, कर, लाग।
उ०—१. सांमां, सोढां सूमरां-स हु पेसां ल्याया। सतरंजा सीरोहिया सिर ग्रंक सहाया। —नापे सांखले री वारता
उ०—२. दखणाधी की फतै पंच खट पक्खां मांही। दक्खणियां दे देस, पेस दीनी सगळांही। —गु. रू. व.
३. वरुण। (ग्र. मा.)
४. भेंट, नजर।
उ०—१. ताइरां एक दिन नापो बैठो हुतो, ताहरां कमांण एक कठाई सों पेस ग्राई। —नैणसी
उ०—२. ब्रह्मा, विस्णु, महेस, मनावै, सुर नर नाग सुरेस। एळा महिप जातरी ग्रावै, पाथां लावै पेस। —ग्रज्ञात
उ०—३. ग्राप करै सोही ग्रसण, इस्ट भोग ग्रवसेस। इम पूपी जुग २ करि उठै, प्रभु रै कीधी पेस। —वं. भा.
रू०भे०—पेम।

पेसकवज, पेसकबज्ज, पेसकवज–सं० पु० [फा० पेशकब्ज] कटार विशेष।
उ०—१. पड़ि पेसकवज खरड़क ग्रपार। करड़क्क खाग भरड़क कटार। —सू. प्र.
उ०—२. वहै दहूंवै वळ पेसकवज्ज। सग्रांम दहूं वळ स्यांम सकज्ज। —मे. म.

पेसकस, पेसकसि, पेसकसी–स० स्त्री० [फा० पेशकश] बड़ों को दी जाने वाली भट, नजर।
उ०—१. हाथी एक घोड़ा चार दीवाण नूं प्रोहित साथै ग्रापरा ग्रादमी पेसकस मेलिया। —नैणसी
उ०—२. सु हाथी करोड़िये पेसकस कियो हूंतो सु हाथी मंगायो। —द. वि.
उ०—३. 'चांपा'हरा चलाविया, सोभत ऊपर फेर। दिन-दिन लीजै पेसकसि, सोबा लीजै घेर। —रा. रू.
उ०—४. हम महिमांनी तुम करी रै, ग्रब तुम हम मेहमान। पेसकसी पदमणी कीयां, हिवैं छूटे वौ राजांन। —प. च. चौ.
रू० भे०—पेसिकस।

पेसकार–सं०पु० [फा० पेशकार] १. दफ्तर के कागज पत्र ग्रफसर के समक्ष रखकर ग्रादेश लेने वाला लेखक या लिपिक।
उ०—सेणां मसलत नूं पेसकार दौलत मंदां रो कहियौ छै। —नी. प्र.
२. मिट्टी, पत्थर ग्रादि डालने वाला छोटा मजदूर।
रू० भे०—पेसगार, पेहगार, पंकार।

पेसकारी–सं० स्त्री० [फा० पेशकारी] पेशकार का कार्य या पद।
रू० भे०—पेसगारी, पेहगारी।

पेसखांनउ, पेसखांनौ, पेसखेमौ–सं० पु० [फा० पेशखेमा] १. वह खेमा जो ग्रगले पडाव पर पहले से लगा दिया जाय।
उ०—१. ग्रावइ पेसखांनउ ईसर रउ, मिळणइ ग्रागइ करइ मिळांण। —महादेव पारवती री वेलि
उ०—२. जगूं के साज छत्तीस कारखांनु के हवालगीरूं नें सब जंगूंका सराजांम हाजर किया। नागदुरंग की तरफ फरासूं नें पेसखांना खड़ा किया। —सू. प्र.
२. सेना का वह सामान जो पहिले ही उसके अगाड़ी भेज दिया जाता है।
उ०—हुजदारां आपरां वेग तागीद करावौ। दखिण गुजराति दिसा पेसखांना पधरावौ। —सू. प्र.

पेसगार—देखो 'पेसकार' (रू. भे.)

पेसगारी—देखो 'पेसकारी' (रू. भे.)

पेसगी–सं० स्त्री० [फा० पेशगी] किसी कार्य के निमित्त पहिले दी जाने वाली रकम, ग्रग्रिम राशि, एडवांस। (ग्रं.)

पेसणी–स० स्त्री० [सं० पेषणी] चक्की। उ०—चूड़ा जोड़ा परंपक पेसणी पात्र पुंज कटि करवाळ पुहवी में पैठो तो भी मंतु विहण जनक रो मित्र मारण में म्हारो तौ मन आघात रो उत्करस न मानें। —वं. भा.

पेसणौ-पेसबौ—देखो 'फेसणौ, फेसबौ' (रू. भे.)
पेसणहार, हारौ (हारी), पेसणियौ —वि०।
पेसिग्रोड़ौ, पेसियोड़ौ, पेस्योड़ौ —भू० का० कृ०।
पेसीजणौ, पेसीजबौ —भाव वा०।

पेसतर—क्रि० वि० [फा० पेश्तर] पूर्व में, पहिले।

पेसता—स० स्त्री० देखो 'पस्तो' (रू. भे.)
उ०—पांच बखत निवाजरा करणहार, सुद्ध कलमें रा पढ़णहार, पेसता, ग्ररबी, पारसी रा बोलणहार, ग्राउखी डाढ़ी राखणहार। —रा. सा. सं.

पेसताख—सं० स्त्री० [फा० पेशताक] ग्रच्छी व बड़ी इमारतों के ऊपर आगे की ग्रोर कुछ निकली हुई एक प्रकार की मेहराब।

पेसबंद—सं० पु० [फा० पेशबंद] घोड़े के गर्दन में से लाकर दूसरी ग्रोर बांध दिया जाने वाला चारजामें से लगा हुग्रा दोहरा बन्धन।
रू० भे०—पेसबंध।

पेसबंदी—सं० स्त्री० [फा० पेशबंदी] १. पहिले से की हुई बचाव की युक्ति।
२. षड़यंत्र, छल।

पेसबंध—देखो 'पेसबंद' (रू. भे.)
उ०—बंघ जोट दीघ कसि जेरबंध। सभि पेसबंध कसमार संध। —सू. प्र.

पेसबाब—सं० पु०—एक प्रकार का घोड़ा।
उ०—बह अबरस मुसकी ग्रर संजाब। बौरता केहरी पेसबाब। —सू.प्र.

पेसराज—सं०पु० [फा० पेश+राज० राज] पत्थर ढोने वाला मजदूर।

पेसरूंद—सं० पु० [?] रग विशेष का घोड़ा ?
उ०—रोसनी बिदांमी पेसरूंद। कागड़ा हूंस चकवा कबूंद। —सू.प्र.

पेसळ, पेसल—वि० [सं० पेशल] १. सुन्दर, मनोहर। (अ.मा., ह.नां.मा.)
२. कुशल, प्रवीण।

पेसवा—सं०पु० [फा० पेशवा] १. नेता, अग्रुवा।
२. मराठा राज्य के समय महाराष्ट्र साम्राज्य के प्रधान मंत्री की उपाधि। (मा. म.)

पेसवाई—सं०स्त्री [फा० पेशवाई] १. ग्रागे बढ़कर स्वागत करने की क्रिया, अगवानी।
उ०—१. नवाब पेसवाई में ड्योढ़ी तक सांमें आयौ। हाथ झाल महल में लेजाय गादी ऊपर बैठाळिया। —महाराजा जयसिंह ग्रांमेर रा धणी री वारता
उ०—२. साहजादे देखे हिम्मत निवाह। 'दुरंग' का भाई पेसवाई 'दुरंग' साह। —रा. रू.
२. पेशवा का कार्य।
रू० भे०—पैंसवाई।

पेसवाज—सं० स्त्री० [फा० पिशवाज़] वेश्याओं द्वारा नाचते समय पहिना जाने वाला लहंगा।

पेसवाल—सं० पु०—प्रतिहार वंश की एक शाखा जो बाद में रैबारी बन गये। वि० वि०—देखो 'रैबारी' (मा. म.)

पेसांणी, पेसांनी—स० स्त्री० [फा० पेशानी] १. ललाट, भाल।
२. भाग्य, प्रारब्ध।
३. किसी पदार्थ का अगला या ऊपरी भाग।
ज्यूं--गाडी री पेसांनी।

पेसाब—सं० पु० [सं० प्रस्रव, फा० पेशाब] मूत्र, मूत।
मुहा०—१. (किसी चीज पर) पेसाब करणौ—(किसी चीज को) बहुत ही हेय ग्रथवा तुच्छ समझना. २. पेशाब री धार पर मारणौ—महा हीन समझना, क्षुद्र समझना. ३. पेसाब री राह बहाणौ—वेश्यावृत्ति में सारा धन गँवाना. ४. पेसाब रौ चिराग जळणौ—रोब या दबदबा होना. ५. पेसाब निकळ पड़णौ—डर के मारे पेशाब हो जाना. ६. पेसाब बंद होणौ—बहुत डरना. ७. पेसाब सूं सिर मूंडणौ—चेला बनाना।

पेसाबखांनौ—सं० पु० [फा० पेशाब+खानः] पेशाब करने का स्थान, मूत्रालय।

पेसार— देखो 'पैंसार' (रू. भे.)

पेसारियौ—सं० पु० [राज०] चोरी के उद्देश्य से सेंध लगाकर घुसने से पूर्व कपडा बांध कर डाली जाने वाली लकड़ी।

पेसावर—सं० पु० [फा० पेशावर] १. कोई व्यवसाय (पेशा) करने वाला, व्यवसायी।
२. पाकिस्तान के सीमांत का एक नगर, पेशावर नगर।
रू० भे०—पेसोर।
सं० स्त्री० [फा० पेश:+वर] ३. व्यभिचार द्वारा धन उपार्जन करने वाली स्त्री।

पेसावरी—वि० [फा० पेश:+वर+ई] १. व्यवसायी, पेसेवर।
२. पेशावर नगर का।
उ०—के मुलतांनी काबली, पेसावरी प्रचंड। नेसापुर रा नीपना, बगदादी बळबंड। —बां. दा.

पेसिकस—देखो 'पेसकस' (रू. भे.)
उ०—गज भिड़ज्ज गढ़ गांम, करां द्रब दीघ पेसिकस। हूं चाकर हुकमरौ, एम कहियौ तजि ग्रंजस। —सू. प्र.

पेसिका—सं०पु० [सं० पेशिका] ग्रण्डा। (डिं. को.)

पेसियोड़ौ—देखो 'फेसियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पेसियोड़ी)

पेसी-सं० स्त्री० [फा० पेशी] १. मुकदमे की सुनवाई ।
२. सामने होने की क्रिया या भाव ।
३. शरीर के भीतर मांस की गुत्थी या गांठ ।
ज्यूं-मांश-पेसी ।

पेसोर—देखो 'पेसावर' (२) (रू. भे.)
उ०—दिली सरदार दुरगादासजी बगेरा पेसोर सूं आया ज्यां कनै तीन सो च्यार सौ लोक हुतो । —बां. दा. ख्यात

पेसौ-सं० पु० [फा० पेशः] १. जीविका उपार्जन के लिए किया जाने वाला उद्योग, व्यवसाय ।
२. वेश्यावृत्ति ।

पेस्तर-क्रि० वि० [फा० पेश्तर] पहिले, पूर्व ।

पेहगार—देखो 'पेसकार' (रू. भे.)

पेहगारी—देखो 'पेसकारी' (रू. भे.)

पेहळाद—देखो 'प्रह्ळाद' (रू. भे.)

पेहली—देखो 'पैंली' (रू. भे.)
उ०—अजमेर आवतां पेहली माहाबतखांन पातसाह साहजहां सुं मालम कीवी-जु राजा गजसिंघ म्हारी माथौ वाढ़ण रै वास्तै नागोर लियौ हुतौ सु हूं पाऊं । —नैणसी

पेहवौ-वि० [?] व्यर्थ ?
उ०—ऊगां विण सूर पेहवौ अंबर, दीपक पाखै जसौ दुवार । पावस बना जेहवी प्रथमी, 'सांगा' विण जेहौ संसार ।
—महारांणा संग्रामसिंह बडा री गीत

पैं—देखो 'पै' (रू. भे.)
उ०—तासूं भगवांन कहै भार तुम कंधै । पैं आलम सूं जंग काज तेग हम बंधै । —रा. रू.

पैंक—देखो 'पैंक' (रू. भे.)

पैंकड़ौ—देखो 'पैंखड़ौ' (रू. भे.)

पैंखड़णौ, पैंखड़बौ-क्रि० स० [राज० पैंखडौ] ऊंट या भैंस को लोहे या सूत के 'पैंखडे' से अगले पैर मे बांधना ।
उ०—लुगाई री रूं रूं मिनख रै खूंटै पैंखड़िजियोड़ी है ।
—फुलवाड़ी

पैंखड़णहार, हारौ (हारी), पैंखड़णियौ—वि० ।
पैंखडिअोडौ, पैंखड़ियोड़ौ, पैंखड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
पैंखडीजणौ, पैंखड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पैंखड़ौ-सं० पु० [देशज] ऊंट अथवा भैंस को बांधने का लोहे अथवा सूत का बना उपकरण जिसे उसके अगले पैर में बांध कर खूंटे से बांध दिया जाता है ।
रू० भे०—पैंकड़ौ ।

पैंगळ—देखो 'पिंगळ' (रू. भे.)

उ०—एकरिण पाए आंणिजै, सोलह कळ वळि सात । तविआ पैंगळ रीत रह, इसा छंद अवदात । —ल. पिं.

पैंड़णौ, पैंड़बौ—देखो 'पहड़णौ, पहड़बौ' (रू. भे.)
उ०—निज करमसोत, पैंड़ै न बीह । उदावत अैहेंगे अबीह ।
—ऊ. का.

पैंड़णहार, हारौ, (हारी) पैंड़णियौ—वि० ।
पैंड़िओड़ौ, पैंड़ियोड़ौ, पैंड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
पैंड़ीजणौ, पैंड़ीजबौ—भाव वा० ।

पैंड़ियोड़ौ—देखो 'पहड़ियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पैंड़ियोड़ी)

पैंजणी, पैंजनी-सं० स्त्री० [सं० पद+अनु+झन] स्त्रियों के पैरों का एक आभूषण विशेष जो चलने पर झन-झन की आवाज करता है, नूपुर ।
उ०—१. डूंगर ऊपर डूंगरी सोनी घड़ै सुनार । मेरी घड़दे पैंजणी मेरे प्रीतम की········· । —लो. गी.
उ०—२. ए मां भाभी नै कहदै मनै पैंजणियां दिरादै मैं खेलण ज्यासूं लूरड़ी । —लो. गी.
रू० भे०—पाजणी ।

पैंट-सं० पु० [अं०] पायजामे की तरह का एक अंग्रेजी वस्त्र, पतलून ।

पैंड-सं० पु० [सं० पद+दण्ड] १. डग, कदम ।
उ०—दियै पैंड दातार ही, दातारां रै पंथ । ज्यांनी पुरसांरा किया, ज्यांनी धरचै ग्रंथ । —बां. दा.
क्रि० प्र०—धरणौ, भरणौ ।
२. देखो 'पैंडौ' (मह., रू. भे.)
रू० भे०—पेंड ।
अल्पा०—पैंडू ।

पैंडाक-वि० [राज० पैंड+प्र० आक] डग भरने वाला, चलने वाला ।

पैंडायत-सं० पु० [राज० पैंड+प्र० आयत] बटमार ।
रू० भे०—पेडाइत ।

पैंडू—देखो 'पैंड' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—बूंदी हाडा छत्रसाल जाहा जस वर का, सौ हाथी जिस समपिया सो पैंडू भरका । —दुरगादत्त बारहठ

पैंडौ-सं० पु० [सं० पद+रा० प्र० डौ] १. मार्ग, रास्ता, पथ ।
उ०—१. भासाव्रज मारु-सुर-भासा, भासा-प्राकृत जांण भर । पायौ चरण रूपगां पैंडौ, 'मेहाहो' थारी महर । —बां. दा.
उ०—२. सीतकाळ मांहे सूरिज तिरछै पैंडै चलतौ थौ सु धूप-काळ के विखै सूरज माथा ऊपरि चालण लागौ । —वेलि टी.
२. यात्रा ।
उ०—मन सब का असवार है, पैंडा करै अनेक । मन ऊपरी असवार है, विरळा कोई एक । —ह. पु. वां.

३. प्रणाली, प्रथा।
४. पद-यात्रा।
उ०—सु साहिजादी दिली सुं चली थी सु मांतरी रै कसबै री नदी आई। पैंडै चाली सु दिन भाद्रवा आसोज रा हुंता। —नैणसी
५. वह दूरी जो कोई चल कर आया हो, अथवा चलने को हो।
उ०—१. ठाडी रात रा खासो भलो पैंडो पार व्है जावैला। —फुलवाड़ी
उ०—२. घरबिद री वातां करतां-करतां वे चारे'क कोस रो पैंडो पार करियो व्हैला कै वांनै मगरा री ढळांत सुं हेटै किणी सिंघ रै डाढ़ण री आवाज सुणीजी। —फुलवाड़ी
६. देखो 'परीडो' (रू. भे.)
रू० भे०—पइंडउ, पइंडो, पेंडो।
मह०—पेंड, पैंड।

पैंणो—सं० पु० [सं० पा=पीवनम्] १—एक प्रकार का विषैला सर्प।
उ०—ए रिणछोड़ घर्क मुख आया। पैंणे जांण नींद बस पाया। —रा. रू.

वि० वि०—यह जैसलमेर, बीकानेर, सिन्ध (पाकिस्तान) आदि की रेतीली भूमि में पाया जाता है। यह लम्बाई में चार या पांच फुट से अधिक नहीं होता है। नर का पेट कुछ पीलापन लिए होता है तथा शरीर पर लकीर नुमा काले धब्बे होते हैं, जब कि मादा का पेट सफेद होता है और काले धब्बे नर से छोटे आकार के होते हैं। यह बहुत चमकीला होता है। यदि इसके दो दिन के मृत शरीर पर तेज सूर्य की तिरछी किरणें पड़ रही हों तो यह शीशे की तरह चमकता है और दूरी से देखने वाला व्यक्ति यह निश्चय नहीं कर सकता कि यह क्या है। इसको दिन में या तेज रोशनी में दिखाई नहीं देता है। इसीलिए यह दिन में अपने स्थान को नहीं छोडता है। यह एक रात में ६०, ७० मील भाग सकता है। अतः यह दूर-दूर तक अपना शिकार करके वापिस अपने स्थान पर पहुँच जाता है। अधिकतर यह अपने स्थान से दूर जाकर ही शिकार करता है। यह अन्य सर्पों की तरह रेंगकर नहीं चलता अपितु कुछ उछल-उछल कर चलता है अतः इसके चलने के निशान कुछ दूर के अन्तर से मिलते हैं। कहते हैं यह अपने शिकार पर चोर की तरह जाता है अतः इसको चोर सर्प भी कहते हैं। चोरी का पता चलने पर आहट पाकर यह भाग भी जाता है। यह बड़ी कठिनाई से मरता है। इसके शरीर पर जहां भी डण्डे की चोट पड़ती है वहां से वह रबड़ की तरह फैल जाता है और पुनः पूर्ववत हो जाता है। इसी बीच अवसर पाकर भाग भी जाता है। तलवार आदि तेज हथियारों से भी कठिनाई से कटता है। इसके जख्मी हो जाने या मर जाने पर अन्य सर्पों की तरह इसके पास चींटियां नहीं आती हैं। इसकी आयु के विषय में कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती है।

इसकी सब से बड़ी विशेषता यह है कि यह किसी को काटता नहीं है अपितु मनुष्य, स्त्री व बालक के वक्षस्थल पर (सोते समय) तथा पशु के मुंह के सामने बैठ जाता है और श्वास को पीने हेतु अपना मुंह उसके मुंह अथवा नाक के समक्ष ले जा कर खोल देता है। इसी से इसको 'पीणा' अथवा 'पीवणा' सर्प कहते हैं। कहते हैं इसके मुंह में एक प्रकार का जहरीला फोडा होता जिसके दर्द से व्याकुल होकर यह इधर-उधर भटकता रहता है। प्राणियों की वायु के स्पर्श से इसका फोडा फूट जाता है और इसको पूर्ण शान्ति मिलती है, किन्तु ऐसा होने पर इसके फोड़े का विष प्राणी के श्वास द्वारा कण्ठ में चला जाता है। जाते समय यह प्राणी की छाती पर या मुंह पर जोर से पूंछ मार जाता है। आघात से प्राणी जग जाता है। उसको प्यास के कारण व्याकुलता महसूस होती है और श्वासावरोध होने लगता है। धीरे-धीरे श्वासावरोध बढ़ता जाता है और सर्वांग शीतलता के उपरान्त सूर्योदय से पूर्व ही उसकी मृत्यु हो जाती है।

कुछ वृद्ध पुरुषों के मतानुसार प्राणी के श्वास से अपना श्वास मिलते समय इसका फोडा तो फूट जाता है किन्तु प्राणी के तालु में फोडा हो जाता है। सूर्योदय की गर्मी पाकर प्राणी के तालु में उत्पन्न फोडा फूट जाता है और उसका विष फैलकर उसकी मृत्यु हो जाती है।

राजस्थानी साहित्य में इस सर्प का जिक्र सातवीं शताब्दी से मिलता है किन्तु संस्कृत साहित्य में कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता।
२. कपटी व्यक्ति।
रू० भे०—पींणग, पीणो, पीयणो, पीवणउ, पीवणो, पैंणो।
मह०—पीण, पीयण, पीवण।

पैंतरो—सं० पु० [सं० पदांतर, प्रा० पयांतर] १. कुश्तीबाजी, पटाबाजी, तलवार संचालन आदि में घुमा कर कदम रखने की क्रिया या मुद्रा।
२. चालाकी से भरी हुई कोई बात।
उ०—हाजरियो ई हैरांन हो, छेवट उणें पैंतरो बदळणो। डंड नीति छोड'र दांम नीति अपणाई। —रातवासो
क्रि० प्र०—बदळणो, बताणो।
रू० भे०—पैंतरो।

पैंतावो—देखो 'पैंताळो' (१) (रू. भे.)

पैंताळवो—देखो 'पैंताळीसो' (रू. भे.)
उ०—पनरै सै पैंताळवै, सुद वैसाख सुमेर। थावर बीज थरप्पियो, 'बीकै' बीकानेर। —द. वा.

पैंताळीस—वि० [सं० पञ्चचत्वारिंशत्, प्रा० पञ्चचत्तालीसा, अप० पणतालीस] चालीस और पांच का योग।
उ०—मास तीन बावीस दिन, पैंताळीस बरस्स। अमरापुर वसियो 'अजो', राजा कर राजस्स। —रा. रू.
सं० पु०—चालीस और पांच के योग की संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है, ४५.

रू० भे०—पंइताळीस, पंचताळी, पंचताळीस, पचताळीस, पणया-सीस, पिचताळी, पिचताळीस ।

पैंताळीसमौं–वि० [राज० पैंताळीस+प्र० मौं] पैंतालीस के स्थान पर पडने वाला, पैंतालीसवां ।

पैंताळीसे'क–वि० [राज० पैंताळीस+एक] पैंतालीस के लगभग ।

पैंताळीसौ–सं० पु० [राज० पैंताळीस+प्र० औ] १ पैंतालीस की संख्या का वर्ष या साल । रू० भे०—पैंताळवौ, पैंताळौ ।
२. चार हजार पांच सौ की संख्या, ४,५००.

पैंताळौ–सं०पु० [देशज] १. ढीले जूते को चुस्त करने के लिए उसमें डाला जाने वाला पतले चमड़े का लम्बा टुकड़ा, सुखतला ।
रू० भे०—पैंतावौ, पौतावौ ।
२. देखो 'पैंताळीसौ' (रू० भे०)
उ०—बीत बयाळौ वरस, बीत 'मौकमा'तयाळौ । वरस चमाळौ वीत, पछै वीतौ पैंताळौ । —अरजुनजी बारहठ

पैंतावौ—देखो 'पैंताळौ' (१) (रू० भे०)

पैंतीस–वि० [सं० पञ्चत्रिंशत्, प्रा० पञ्चतीसा] तीस और पांचकी संख्या का योग ।
उ०—कळ हेवा चंक कूंभक्रन रांणा, जगत तणा गुर दुरंग जुळ । काळ्यां अचरज किसौ कटारी, काळ्यां जिण पैंतीस कुळ । —महारांणा कुम्भा रौ गीत
सं० पु०—पैंतीस की संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है, ३५.
रू० भे०—पइंतीस, पइत्रीस, प्रेंतीस ।

पैंतीसमौं–वि० [राज० पतीस+प्र० मौं] पैंतीस के स्थान पर पड़ने वाला, पैंतीसवां ।

पैंतीसे'क–वि० [राज० पैंतीस+एक] पैंतीस के लगभग ।

पैंतीसौ–सं० पु० [राज० पैंतीस+प्र० औ] १. पैंतीस की संख्या का वर्ष ।
२. तीन हजार पांच सौ की संख्या, ३५००.
रू० भे०—पैंत्रीसौ ।

पैंतौ–सं० पु० [?] भेद, रहस्य ।
उ०—किणही पूछ्यौ—थारै पाग ते कठा सूं आई । जद साहूकार हुवै ते तौ पैंतौ वतावै साईदार भरावै······ । —भि० द्र०

पैंत्रीसौ—देखो 'पैंतीसौ' (रू० भे०)

पैंनाग—देखो 'पैनाग' (रू० भे०)
उ०—उठावै करां पोगरां दे उछाळा । किनां लागणौ राग पैंनाग काळा । —वं० भा०

पैंसट—देखो 'पैंसठ' (रू० भे०)
उ०—धणिरौ हुक्कम लां सीस धार । हुव भरां डंड पैंसट हजार । —पें० रू०

पैंसटमौं—देखो 'पैंसठमौं' (रू० भे०)

पैंसटे'क—देखो 'पैंसठे'क (रू० भे०)

पैंसटौ—देखो 'पैंसठौ' (रू० भे०)

पैंसठ–वि० [सं० पञ्चषष्टि, प्रा० पणसट्ठि, पण्णट्ठि] साठ और पांच का योग ।
सं० पु०—साठ और पांच के योग की संख्या, ६५.
रू० भे०—पइंसठ, पइंसठि, पैंसट, पैंसठि ।

पैंसठमौं–वि० [राज० पैंसठ+प्र० मौं] पैंसठ के स्थान पर पड़ने वाला, पैंसठवां ।
रू० भे०—पैंसटमौं ।

पैंसठि—देखो 'पैंसठ' (रू० भे०)

पैंसठे'क–वि० [राज० पैंसठ+एक] पैंसठ के लगभग ।
रू० भे०—पैंसटे'क ।

पैंसठौ–सं० पु० [राज० पैंसठ+प्र०औ] पैंसठ की संख्या का वर्ष ।
रू० भे०—पैंसटौ ।

पै–वि० [सं० प्रभा] १. सुन्दर । (एका०)
[सं० पद] २. प्यादा, पैदल ।
सं०पु० [सं पद] १. चरण, पैर ।
उ०—हनमंत विभिखन भांन तनै, जिन कीन बडे जन लाघव रे । भुजगेस, महेस, दुजेस, रिखी नित, पै रज चाहत माधव रे । —र० ज० प्र०
२. पद, ओहदा ।
३. सगा, सम्बन्धी । (एका०)
४. श्रद्धा । (एका०)
५. पैसा, टका (एका०)
[सं० पयस्] ६. दूध ।
उ०—जावक दे मिळि जाय, न जावै जाणियौ । पै मिळियौ जळ जाय, किसूं पहचांणियौ । —वां० दा०
७. जल, पानी ।
[सं० पयज] ८. कमल, नीरज । (एका०)
क्रि० वि० [?] १. ऊपर, पर ।
उ०—असरम सो न धरम पै, कमांन ग्लांन मांन पै । परयौ जमीन पै सु सांग टांग आसमांन पै । —ऊ० का०
२. में ।
३. पास, निकट ।
४. किन्तु, लेकिन ।
उ०—हुवा आद दे फिर हुवै, सह विष करण सुधार । पै परताप 'प्रताप' तें, अधक सुजस उच्चार । —जैत दांन बारहठ
५. अनन्तर, पीछे ।
रू० भे०—पैं ।

पैकंबर—देखो 'पैगंबर' (रू० भे०)

उ०—राग न, रंग उमंग न राजस, हौज न बाग फुंहार न हुन्नर। न्है असवार सिकार न हालत, पाठ कुरांन न पीर पैकंबर।

—सू० प्र०

पैक–वि० [फा० पैक, सं० प्रेक्षी] चतुर, होशियार, कुशल। उ०—पछि पैंक भमकत पाय। रिझवंत नटवर राय।—रा.रू.

सं०पु०—दूत, हरकारा।

उ०—चौतरफ लिख फुरमांण चलवे, डाकदार उदार। धाविया बहु पूंग धारक, पैक वड अणपार।

—सू० प्र०

पैकनभाव–सं० पु० [?] हाथी की बीमारी जिसमें उसकी आंखों से निरंतर पानी गिरता है तथा उसके बाहर के दांत तड़क जाते हैं और उनमें पीप आने लग जाता है।

पैकळौ–सं० पु० [देशज] बहुत बड़ी जूं। (शेखावाटी)

पैकांम–सं० पु० [फा० पैकान] तीर के आगे का भाग, बाण की नोंक।

उ०—'नींबौ' जोधावत टीकावत हुवौ, राव जोधा रै। सु नींबै 'जैसौ' मारियौ तद तीर लगायौ थौ तिणरौ पैकांम मांहे रह्यौ थौ।

—राव जोधा जी रै बेटां री बात

पैकार–सं० स्त्री० [फा०] १. लड़ाई, युद्ध।

सं० पु० [फा० पायकार] २. फुटकर सौदा बेचने वाला।

३. देखो 'पेसकार' (रू० भे०)

पैकेट–सं पु० [अ०] पुलिंदा, गट्ठर।

पैखांनौ—देखो 'पाखांनौ' (रू० भे०)

पैगंबर–सं० पु० [फा०] ईश्वर का सन्देश वाहक, धर्म प्रवर्तक।

उ०—१. नजूमियां अगाऊ नजूमरी किताबां में लिखियौ हौ—आखर जमांना रौ पैगंबर सुतर सवार होसी। —बां० दा० ख्यात

उ०—२. आगे होते मोटे मीर, गये छोड पैगंबर पीर।—दादूवांणी

रू० भे०—पक्कंबर, पिकंबर, पेकम्बर, पेगंबर, पैकबर।

पैगंबरी–सं० पु० [फा०] १. पैगंबर होने का भाव।

२. पैगंबर का पद।

पैगांम–सं० पु० [फा०] १. संदेश, सूचना, खबर।

उ०—हेली घर-घर की हुवै, पूंचा छक पैगांम। हाथी हाथळ आहणैं, नाहर जिणरौ नांम।

—वी० स०

पैड़काळौ–स० पु० [?] जीना, सीढी। (शेखावाटी)

पैड़णौ, पैड़बौ—देखो 'पहड़णौ, पहड़बौ' (रू० भे०)

उ०—जिणनू पाडो पैंड़तौ, आडै दिनां असीम। पैनगां पैड़ै पियौ, भालौ भंजण भीम।

—रेवतसिंह भाटी

पैड़णहार, हारौ (हारी), पैड़णियौ—वि०।

पैड़िओड़ौ, पैड़ियोड़ौ, पैड़योड़ौ—भू० का० कृ०।

पैड़ीजणौ, पैड़ीजबौ—भाव वा०।

पैड़ियोड़ौ—देखो 'पहड़ियोड़ौ' (रू० भे०) (स्त्री० पैड़ियोड़ी)

पैड़ी–सं० स्त्री० [राज० पैर] १. वह जिस पर पैर रख कर ऊपर चढ़ें, सीढ़ी, जीना।

उ०—सतगुरु सबद अगम की पैड़ी, ता चढि लंघौ पारा। काया कस्ट अगनि मे डारया, तब जळि बळि भया अंगारा।

—ह० पु० वां०

२. सिंचाई के लिए जलाशय से पानी लाकर डाले जाने का स्थान, पौदर।

३. डिंगल का निसांणी छन्द जिसके प्रत्येक चरण में अनुप्रास युक्त १८, १६ मात्रायें व अन्त में मगण होता है।

४. देखो 'पैंड' (अल्पा०, रू० भे०)

रू० भे०—पेड़ी, पेडी, पैहरी।

पैंड़ौ–सं० पु० [सं० परिधि] १. पहिया, चक्र, चक्का।

उ०—कै पड़जावौ कूप गिरवरां चढि गिरजावौ। अंजन वाळौ आय फेर पैंड़ौ फिर जावौ।

—ऊ० का०

क्रि० प्र०—चढ़ाणौ, फिरणौ।

२. जाट विशेष द्वारा किये जाने वाले बड़े भोज में ध्वजदण्ड के ऊपर रखाजाने वाला पहिया।

क्रि० प्र०—चढ़ाणौ, टांगणौ।

३. दूध के खोए की गोलाकार छोटी बट्टी पर शक्कर लगाकर बनाई जाने वाली मिठाई विशेष।

४. मकान आदि पर पट्टिएं चढ़ाने हेतु काष्टादि के लट्ठों को बांधकर बनाया जाने वाला ढालू रास्ता।

क्रि० प्र०—बांधणौ।

५. देखो 'पेड़ौ' (रू० भे०)

रू० भे०—पइंडौ, पइडउ, पइडौ, पइडउ, पइडौ, पई, पईडउ, पईयौ, पहड़ौ, पहि, पहिड़ौ, पहियौ, पही, पहोड़ौ, पेडौ।

पैंचांण–सं० स्त्री० [सं० प्रत्याभिज्ञान या परिचयनम्] परिचय, पहिचान, जानकारी।

रू० भे०—पहचांण, पहिचांण, पहिचांणि, पिछांण, पिछांणि, पिछांणी, पिछांणु।

पैंचांणणौ, पैंचांणबौ–क्रि० स० [राज० पेंनांण] १. किसी व्यक्ति के चरित्र अथवा स्वभाव की विशेषता को जान लेना। २. विभिन्न प्रकार के पहचान चिन्हों व रंग-रूपों के आधार पर व्यक्ति विशेष या वस्तु विशेष को जानना। ३. अपनी क्षमता के अनुसार व्यक्ति विशेष या वस्तु विशेष का परिचय प्राप्त करना। ४. स्मरण शक्ति के आधार पर पूर्व देखी हुई किसी वस्तु या प्रांणी को देखते ही जान लेना।

पैंचांणणहार हारौ (हारी), पैंचांणणियौ—वि०।

पैंचांणिओड़ौ, पैंचांणियोड़ौ पैंचांण्योड़ौ—भू० का० कृ०।

पं'चांणीजणौ, पं'चांणीजबौ—कर्म वा० ।

पछांणणौ, पछांणबौ, पहचांणणौ, पहचांणबौ, पहिचांणणौ, पहिचांणबौ, पिचांणणौ, पिचांणबौ, पिछांणणौ, पिछांणबौ—रू०भे० ।

पं'चांणियोड़ो—भू०का०कृ०—१. किसी व्यक्ति के चरित्र या स्वभाव की विशेषता को जाना हुआ. २. एक वस्तु का दूसरी वस्तु अथवा वस्तुओं से भेद किया हुआ. ३. किसी वस्तु या व्यक्ति को देखते ही जाना हुआ.

(स्त्री० पं'चांणियोड़ी)

पैज—सं० स्त्री० [सं० प्रतिज्ञा] १. प्रण, प्रतिज्ञा ।

उ०—१. घके फरसधर चक्रधर, पाळी जिण निज पैज । सो सूरां सिर सेहरौ, नर-पुंगव सुर-नैज । —बां. दा.

उ०—२. जुग-जुग भीड़ हरी भक्तन की, दीन्ही मोक्ष समाज । मीरां चरण गही चरणण की, पैज रखौ महाराज । —मीरां

क्रि० प्र०—करणी, निभाणी, पूरणी, लैणी ।

२. प्रतिस्पर्धा, प्रतिद्वंद्विता ।

उ०—जिण ऊपर पैजां मारीजै है । केई जीती जै नै केई हारीजै है । —र. हमीर

मुहा०—पैज पड़जाणी = जिद्द हो जाना, हठ हो जाना, उलझ जाना ।

३. मर्यादा, सीमा ।

उ०—तिण मारी ताड़का, जिकण रिख मख रखवाळै । हण सुबाहु मारीच, पैज खित्रवट ध्रम पाळै । —र. ज. प्र.

रू० भे०—पइज, पेंज ।

यौ०—पैजबंध ।

पैजबंध—वि० [राज० पैज+सं० बंध] १. प्रतिज्ञावीर, दृढ़प्रतिज्ञ ।

उ०—सुणे वांण 'गोकळे'स' पैजबंध हुआे सागै, कीधी बात सारी वादसाह री कबूल । —गोकळदास सक्तावत रो गीत

२. मर्यादा रखने वाला ।

३. प्रतिस्पर्द्धा करने वाला ।

पैजार—सं० पु० [फा०] जूता, उपानह । (अ. मा.)

उ०—तद काजी नूं खूब पैजारां पिटवायो । काज सूं दूर कियो । —जलाल बूबना री वात

रू० भे०—पेंजार ।

पैटावणौ, पैटावबौ—क्रि० स० [स० प्रविष्टम्] नये बैलों को जोतने के लिये अभ्यस्त करना ।

उ०—इसी विध बरस दोय हुवा, तरै नाथिया नै पैटावणा मांडिया । तिकै पांच कोस जायनै बैल जूतां पाछा आवै । —जखड़ा मुखड़ा भाटी री वात

पैंटावहार, हारौ (हारी), पैंटावणियौ—वि० ।

पैंटाविओड़ो, पैंटावियोड़ो, पैंटाव्योड़ो—भू०का० कृ० ।

पैंटावीजणौ, पैंटावीजबौ—कर्म वा० ।

पैटावियोड़ो—भू०का०कृ०—जोतने के लिये अभ्यस्त किया हुआ (बैल) (स्त्री० पैंटावियोड़ी)

पैठ—सं० स्त्री० [सं० प्रविष्ठ] १. प्रवेश, गति, पहुंच ।

२. पहली हुण्डी के खो जाने पर महाजन द्वारा लिखी जाने वाली दूसरी हुण्डी ।

३. भरोसा, विश्वास ।

क्रि० प्र०—ऊठणी, खोणी, जमणी, जमाणी, जाणी, होणी ।

४. कार्य कुशलता, दक्षता ।

५. चरित्र ।

उ०—अंग घणां आलंगियौ, अधर घणां री ऐंठ । नर मूरख जांणै नहीं, पातरियां री पैठ । —बां. दा.

६. जानकारी, ज्ञान ।

रू० भे०—पैठि ।

पैठणौ, पैठबौ—क्रि० अ० [सं० प्रविष्टम्] प्रविष्ठ होना, घुसना ।

उ०—वास विकट निबळा वसै, सबळ न लागै ताळ । गांजीजै नह गुरड़ सूं, पैठा नाग पयाळ । —बां. दा.

पैठणहार, हारौ (हारी), पैठणियौ—वि० ।

पैठाड़णौ, पैठाड़बौ, पैठाणौ, पैठाबौ, पैठावणौ, पैठावबौ—प्रे०रू० ।

पैठिओड़ो, पैठियोड़ो, पैठ्योड़ो—भू० का० कृ० ।

पैठीजणौ, पैठीजबौ—भाव वा० ।

पइठणौ, पइंठबौ, पइट्ठणौ, पइट्ठबौ, पइठणौ, पइठबौ, पईठणौ पईठबौ, पयट्ठणौ, पयट्ठबौ, पहिटणौ, पहिटबौ—रू० भे० ।

पैंठवांन, पैंठवांनियौ—स० पु० [अं० पॉइण्टसमैन] १. वह आदमी जिसके जिम्मे रेलवे लाईन बदलने का कार्य होता है । २. विश्वासपात्र व्यक्ति, दक्ष व्यक्ति ।

रू० भे०—पेटवांन ।

पैंठाड़णौ, पैंठाड़बौ—देखो 'पैंठाणौ, पैंठाबौ' (रू० भे०)

पैंठाड़णहार, हारौ (हारी), पैंठाड़णियौ—वि० ।

पैंठाड़िओड़ो, पैंठाड़ियोड़ो, पैंठाड़्योड़ो—भू० का० कृ० ।

पैंठाड़ीजणौ, पैंठाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पैंठाड़ियोड़ो—देखो 'पैंठायोड़ो' (रू० भे०) (स्त्री० पैंठाड़ियोड़ी)

पैंठाणौ, पैंठाबौ—क्रि० स० ['पैंठणौ' क्रिया का प्रे० रू०] प्रविष्ठकराना, घुसाना ।

पैंठाणहार, हारो (हारी), पैंठाणियौ—वि० ।

पैंठायोड़ो—भू० का० कृ० ।

पैंठाईजणौ, पैंठाईजबौ—कर्म वा० ।

पैंठाड़णौ, पैंठाड़बो, पैंठावणौ, पैंठावबौ—रू० भे० ।

पैंठायोड़ो—भू०का०कृ०—प्रविष्ठ कराया हुआ, घुसाया हुआ ।

(स्त्री० पैंठायोड़ी)

पंठार—सं० पु० १. प्रवेश, पहुंच। २. प्रवेशद्वार, दरवाजा।

पंठावणौ, पंठावबौ—देखो 'पैठाणौ, पैठावौ' (रू० भे०)

पैठावणहार, हारौ (हारी), पैठावणियौ —वि०।

पैठाविम्रोडौ, पैठावियोडौ, पैठाव्योड़ौ —भू० का कृ०।

पैठावीजणौ, पैठावीजबौ —कर्म वा०।

पंठावियोड़ौ—देखो 'पैठायोडौ' (रू० भे०) (स्त्री० पैठावियोडी)

पंठि—देखो 'पैठ' (रू० भे०)

उ०—अपंग पंग अंध जीमि, बैठि जाणते नहीं। महाजनीन हुंडि सेठ, पैठि मानते नहीं। —ऊ० का०

पंठियोड़ौ, पंठोड़ौ, पंठौ—भू० का० कृ०—घुसा हुआ, प्रवेश किया हुआ। (स्त्री० पैठियोड़ी, पैठी, पैठोडी)

पैड—सं० पु० [देशज] १. वह ढलुवां रास्ता जिस पर जल भरे चरस को बैल खींच कर चलते हैं। २. देखो 'पैडी' (महा०, रू० भे०)

पर्याय०—गूणी, सारण।

पैडी—सं० पु० [देशज] १. 'गाहटा' या 'रहट' में भीतर की ओर चलने वाला बैल। २. देखो 'पैड़ी' (रू० भे०)

मह० —पैड।

पैणगौ—देखो 'पांणगौ' (रू० भे०)

उ०—'पातल' रै खग पैणगैं, अर छकिया जे ग्रांण। अवनी हूंत न ऊठिया, पाछा लै तन प्रांण। —किसोरदांन बारहठ

पैणौ—देखो 'पैंणौ' (रू०भे०)

पैतरौ—देखो 'पैंतरौ' (रू०भे०)

पैत्रक, पैत्रिक—वि० [सं० पैतृक] पुरखों से चला आया हुआ, पुश्तैनी।

पैदल—वि० [सं० पादतल, प्रा० पायतल] १. पैरों से चलने वाला।

क्रि० वि०—पैरों से, पांव-पांव।

सं० पु०—१. बिना किसी वाहन के पांव-पांव चलने की क्रिया।

२. पैदल सिपाही, पदाति।

उ०—हालै जिण अगर घूमता हसती, ताता गयण झूमता तुरंग। पैदल प्रबळ रथां ह्नद पंगी, चतुरंगी अत फौज सुचंग। —र०रू०

३. शतरंज की प्यादी (गोटी) जो सीधी चलती है और तिरछी मारती है।

रू० भे०—पाएल, पेदल, प्यादल।

अल्पा०—पियादौ, प्याद, प्यादी, प्यादौ।

पैदा—वि० [फा०] १. उत्पन्न, प्रसूत, जन्मा हुवा।

उ०—हेक विदर पैदा हुवै, अगणात मिळियां अस। विदरां री संगत बुरी, विदरां रै नह वस। —बां० दा०

२. प्राप्त, अर्जित, कमाया हुआ।

३. प्रकट, उपस्थित।

क्रि० प्र०—करणौ, होणौ।

पैदा'—देखो 'पैदाइस' (रू०भे०)

पैदाइस, पैदायस—सं० स्त्री० [फा० पैदाइश] १. उत्पत्ति, जन्म। २. प्राप्ति। ३. आय, आमदनी। ४. उत्पादन। ५. निर्माण। ६. सृजण, रचना।

रू० भे०—पैदा', पैदास।

पैदावार, पैदावारी—सं० स्त्री० [फा० पैदावार] १. खेत से उत्पन्न होने वाली फसल, उपज।

२. आमदनी, आय।

पैदास—देखो 'पैदाइस' (रू० भे०)

उ०—१ तद मोजड़ी राजा उवा देखनैं ढढ़ोरो फेरीयो, कहीयो इयै मोजड़ी री जोड़ी पैदास करो तो जैनुं आधो राज अर बेटी परणाऊं —चौबोली

उ०—२. आगै बडी ठौड हुती रु० लाख ७०००००) री पैदास हुती। —नैणसी

उ०—३. धन्य है माता तूं सो थारो ओघो पैदास हुवै है। —मि० द्र०

उ०—४. वडा-वडा वेद सार, प्रसिद्ध प्रवत्ता। जिण ऐती पैदास की सो कायम कुदरता। —केसोदास गाडण

उ०—५. चौरासी लाख भख दीयण, निरपख निरवांणी। घड-घड भंजें भी घड़ै, पैदास पुरांणी। —केसोदास गाडण

पैनाक—१. देखो 'पिनाक' (रू०भे०)

२. देखो 'पैनाग' (रू० भे०)

पैनाग—सं०पु० [सं० पन्नग] १. सर्प, सांप।

उ०—सांकळां हूं लांघणीक हेड़ियौ बीहतौ सेर। पूंछ चांप सूतो फेर छेड़ियौ पैनाग। —बद्रीदास खिड़ियौ

[सं० पन्नग = नाग = हाथी] २. हाथी।

उ०—कड़ी वाजतां वरम्मां पीठ, पैनागां ऊघड़ी केत, मागां काळ घड़ी देत पैडा आसमेद। छद्दालां अभागां लागां अड़ी, आसमांन छायो, बाजदा वागां यूं आयो 'उमेद'। —हुकमीचद खिड़ियौ

३. देखो 'पिनाक' (रू०भे०)

रू० भे०—पैनाग, पैनाक, पैनायक।

पैनायक—१.देखो 'पिनाक' (रू० भे०)

उ० हुवै झपट चंम्मरां, नाद हुवै पैनायक। कोतल उछटां करै, नटां झपटा है नायक। —सू०प्र०

२. देखो 'पैनाग' (रू०भे०)

पैनौ—वि० [सं०पैण = घिसना] १. तेज धार वाला, तीक्ष्ण। २. देखो 'पनौ' (रू० भे०)

पैबंद—देखो 'पैवंद' (रू० भे०)

पैबदी—देखो 'पैबंदी' (रू० भे०)

पैबंदू—देखो 'पैवंद' (रू.भे.)

उ०—कमळा रेसमी नारगी पैबंदू का हुंनर अदभूत। रोसनी

हमगंनी सुरखांनी सहतूत ।—सू.प्र.

पैमांनो—सं० पु० [फा० पैमाना] मापने का उपकरण, मापदण्ड, नाप ।
रू० भे०—पेमांनो ।

पैमाइस, पैमायस—सं० स्त्री० [फा० पैमाइश] भूमि आदि नापने की क्रिया या भाव, माप ।
रू० भे०—पैमास ।

पैमाल—वि० [फा० पा-माल] १. रौंदा हुआ, पदाक्रान्त । २. तबाह, बरबाद, दुर्दशाग्रस्त ।
३. तहसनहस नष्ट ।
उ०—जिन्हूं के रस सवाद देखें से विलायत के पातसाह के मेजें । विलायत त(क) के वेदांने अनार सों पैमाल जावें ।—सू. प्र. ।

पैमाली—सं० स्त्री० [रा० पैमाल+प्र० ई] १. दुर्गति ।
२. बरबादी ।

पैमास—देखो 'पैमाइस' (रू. भे.)

पैर—सं० पु० [सं० पददण्ड, प्रा० पयदंड, अप० पयड] १. चरण, पाँव ।
उ०—दारते कुदार पैर पोच में दियों । कार को बिगार सोच लार से कियो । —ऊ. का.
मुहा०—१. पैर उखडणो—भागना, न ठहर सकना. २. पैर की धोवण होणी—मुकाबिले में बहुत छोटा होना. ३. पैर की धूळ झाडणो—खुशामद करना. ४. पैर की धूल होणी—अपेक्षा कृत बहुत नीचा होना. ५. पैर पटकणो—बहुत प्रयास करना. ६.पैर में सनीचर होणो—दिन रात चलने वाला होना. ७. पैरों में बेड़ी डाळणी—१. कहीं आने जाने न देना, विवाह कर देना ।
२. धूलि पर पड़ा पदचिन्ह । ३. वैभव, ऐश्वर्य ।
४. रक्त प्रदर । (अमरत)
मुहा०—पैर छूटणो—स्त्री के अधिक रक्तस्राप होना ।
६. प्रहर । (डिं. को.)
६. वक्त, जमाना, युग । ७. खलिहान । (मेवात)

पैरगाड़ी—सं० स्त्री० [सं०पद+शकटी] पैर से चलने वाली हल्की गाड़ी, ज्यूं—बाई-सिकल, ट्राई सिकल, साईकिल आदि ।

पैरण—सं० पु० [सं० परिधानं] क्षत्री-वैश्यों की स्त्रियों के पहिनने के अधोवस्त्र के साथ टांगा जाने वाला वस्त्र विशेष । २. पहने का वस्त्र ।
रू० भे०—पेरण ।

पैं'रणौ, पैं'रबौ—क्रि० स०—१. स्वीकार करना, अपने ऊपर लेना ।
[सं० प्लवन] २. तैरना ।
उ०—तुम बिन तारण को नहीं, दूभर यह संसार । पैरत थाके केसवा, सूझै वार न पार । —दादूवांणी

३. देखो 'पहरणौ, पहरबौ' (रू. भे.)
उ०—१. मौड़ै मुख हीतल हतवाळी । पीतळ पैरणनें सीतळ सत वाळी । —ऊ. का.
उ०—२. उणी री माउ तौ जोगण हुई, ए समीचार वीरम सुणनै वैराग आयौ । जद घर-वार छोड भसमी पैं'री ।
—कल्यांणसिंघ नगराजोत वाढ़ेल री वात
पैं'रणहार, हारौ (हारी), पैं'रणियौ—वि० ।
पैं'रवाड़णौ, पैं'रवाड़बौ, पैं'रवाणौ, पैं'रवाबौ, पैं'रवावणौ, पैं'रवावबौ, पैं'राड़णौ, पैं'राड़बौ, पैं'राणौ, पैं'राबौ, पैं'रावणौ, पैं'रावबौ—प्रे० रू० ।
पैं'रिम्रोड़ौ, पैं'रियोड़ौ, पैं'रयोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पैं'रीजणौ, पैं'रीजबौ—कर्म वा०/भाव वा० ।
पइरणौ, पइरबौ, पइहरणौ, पइहरबौ, पहरणौ, पहरबौ, पैहरणौ, पैहरबौ—रू०भे० ।

पैरवाई—देखो 'पैरवी' (रू.भे.)

पैरवास, पैरवेस—सं० पु० [सं० परिवेश] पोशाक, वेषभूषा, पहनावा ।
उ०—हे दरजण आज सूं ही म्हारै लंबी बांहां री अंगियां—विधवा री पैरवेस लावजे ।—वी.स.टी.

पैरवी—सं० स्त्री० [फा०] १. अनुगमन, अनुसरण ।
२. पक्ष का मण्डन ।
३. आज्ञा पालन ।
४. कार्रवाई ।
५. अनुकूल फल प्राप्ति हेतु किया जाने वाला प्रयत्न ।
उ०—आ बात तो खरी कठिन छै, मोसूं हुवै नहीं, थां रै वास्तै पैरवी करस्यूं ।—पंच दडी री वारता
क्रि० प्र०—करणी, होणी ।
रू० भे०—पैरवाई ।

पैरवीकार—सं० पु० [फा०] पैरवी करने वाला व्यक्ति ।
रू० भे०—पैरोकार ।

पैं'रामणी, पैं'रावणी—देखो 'पहरावणी' (रू.भे.)

पैराक—वि० [सं० प्लावक] तैरने वाला, तैराक । उ०—महाकाळी कूंत हाथां 'सालमेस' क्रोध मंडी, प्रयाग अधारा पढी वहंती पैराक
—सालमसिंघ देवळ री गीत
रू० भे०—पैराकी ।

पैराकर—वि० [?] पार करने वाला ।
उ०—वंसी एराकरां छ-मास पैराकरां खड़गवाहां । जोस भेषा आखरां आसुरां भंज जंग । —र.ज.प्र.

पैराकी—वि० [राज० पैराक+प्र० ई] १. प्रवीण, चतुर ।
उ०—जिण साथ पैराकी जंगा रा । भ्रत प्राक्रम दीरघ भंगा रा ।
—र.रू.

२. देखो 'पैराक' (रू.भे.)

पैं'राड़णी, पैं'रड़बौ—१. देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)
२. देखो 'पैं'राणौ, 'पैं'राबौ' (रू.भे.)
पैं'राड़णहार, हारौ (हारी), पैं'राड़णियौ—वि० ।
पैं'राड़िग्रोड़ौ, पैं'राड़ियोड़ौ, पैं'राड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पैं'राड़िजणौ, पैं'राड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पैं'राड़ियोड़ौ—१. देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)
२. देखो 'पैं'रायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पैं'राड़ियोड़ी)

पैं'राणौ, पैं'राबौ—क्रि०स० ['पैं'रणौ' क्रि० का प्रे० रू०] १. स्वीकार कराना ।
२. तैराना ।
३. देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)
उ०—दंपति पूजै विविध सूं, चरणां सीस लगाय । धूप दीप फळ फूल जुत, पोहपमाळ पैराय । —गजउद्धार
पैं'राणहार हारौ (हारी), पैं'राणियौ—वि० ।
पैं'रायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पैं'राईजणौ, पैं'राईजबौ—कर्म वा० ।
पैं'राड़णौ, पैं'राड़बौ, पैं'रावणौ, पैं'राववौ—रू०भे० ।

पैं'रायोड़ौ—भू०का०कृ०—१. स्वीकार कराया हुआ । २. तैराया हुआ ।
३. देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पैं'रायोड़ी)

पैरावण—सं० स्त्री० [सं० परिधानं] गिरासी जाति के विवाह की तीन रीतियों में से एक रीति ।

वि०वि०—इस जाति के अविवाहित लड़के लड़कियां जंगल में ढोर चराने जाते हैं । जवान हो जाने पर कोई लड़का किसी लड़की को व लड़की उस लड़के को चाहने लगती है । जब दोनों के भली प्रकार मन मिल जाते हैं तो युवक युवती के हाथ लगा देता है और शाम को घर आकर अपने माता-पिता को सूचित कर देता है । लड़के के माता-पिता लड़की के माता-पिता को कहलवा देते हैं कि हमारे लड़के ने तुम्हारी लड़की के हाथ लगा दिया है अतः अब यह दूसरी जगह न जाने पावे । फुरसत मिलने पर लड़की के मां-बाप, पंचों और गांव के मुखिया को एकत्रित करते हैं और लड़के वाले को बुलाकर उनको १२ बछड़े और १२ पिछेवड़े (वस्त्र) देकर राजी करते हैं । एक-एक बछड़ा पंच और मुखिया अपने महनताने के ले लेते हैं । फिर लड़की के मां-बाप अच्छा मुहूर्त देख कर लड़की को उस युवक के साथ कर देते हैं । उस समय दोनों को कुछ कपड़े भी पहिनाते हैं । इसी से यह रीति पैरावण कहलाती है । अन्य दो रीतियां 'तांणणौ' और 'व्याह' है । (मा.म.)

पैं'रावणि, पैं'रावणी—देखो 'पहरावणी' (रू.भे.)

पैं'रावणौ, पैं'राववौ—१. देखो 'पहराणौ, पहराबौ' (रू.भे.)
उ०—हाथी सगळी भीड़ में घूमग्यो तोई वो माळा पैं'रावणी तो अळगी, सूंड नीची ई नीं करी । —फुलवाड़ी
२. देखो 'पैं'राणौ, पैं'राबौ' (रू.भे.)
पैं'रावणहार, हारौ (हारी), पैं'रावणियौ—वि० ।
पैं'राविग्रोड़ौ, पैं'रावियोड़ौ, पैं'राव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पैं'रावीजणौ, पैं'रावीजबौ—कर्म वा० ।

पैं'रावियोड़ौ—१. देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)
२. देखो 'पैं'रायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पैं'रावियोड़ी)

पैं'रियोड़ौ—भू०का०कृ०—१. तैरा हुआ ।
२. स्वीकार किया हुआ, अपने ऊपर लिया हुआ ।
३. देखो 'पहरियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पैं'रियोड़ी)

पैरोकार—देखो 'पैरवीकार' (रू.भे.)

पैल—वि० [देशज] १. मंदगति से चलने वाला (बैल).
उ०—कीच निहारयां कनैं भेसरौ चळणूं भारी । पैल बळद पग प्रगट, खिसै नह दीठां खारी —ऊ.का.
२. उद्योग करने में आलसी या मन्द ।
सं० स्त्री०—१. बहुतायत, अधिकता ।
उ०—भीज रीझ फेली भली, पावस पांणी पैल । मतवाळा मनधार री, छाक म ठेलौ छैल ।—बां.दा.
२. किसी काम, बात या व्यक्ति को औरों से दिया जाने अथवा मिलने वाला अवसर, प्राथमिकता ।

पैं'ल—देखो 'पहल' (रू.भे.)
उ०—जिण दिस देखौ सूत्रती, पैं'ल वेम हिरण्यांह । ठंडी निजरां जोयज्यो, कर ऊंची किरण्यांह ।—लू

पैं'लके—अव्य०—पहले । उ०—इत्तूखां कह्यौ—पैं'लके म्हैं इक्कीस हारां वास्तै ई आपनैं ओडो दियो हो के थें म्हारी खातर वै हार क्यूं कबूल करिया ।—फुलवाड़ा
रू० भे०—पहलके ।

पैं'लड़ौ—देखो 'पैं'लौ' (अल्पा.,रू भे.)
उ०—१. सांवणिया रे पैं'लड़ै मास रिड़मल घुड़ला मोलवे रे ! हां रे म्हारी जोड़ रौ रे गढ़ां रौ रावजी रे रिड़मल राव ।—लो.गी.
उ०—२. इत्ते में खंधीआळै म्हाराज आप'र घोटौ घुमायौ—क्यों ! कठीनै री त्यारी करौ हो ? खंधी पैं'लड़ी ई को आयी नी । —वरसगांठ
(स्त्री० पैलड़ी)

पैलणौ, पैलबौ—देखो 'पेलणौ, पेलबौ' (रू.भे.)
उ०—१. करमसीहोत हरनाथ जसकरन बेलौ । केतीबार महा-

बाह साह फौज पैली ।—रा.रू.

उ०—२. राव पिण आंण मुकांम कोस २ बाकी छोड कीया, सु जगमाळ रै कटकै विचारियौ जु "राव सुरतांण रै वसी रा रजपूतां रा गांव छै तिणां ऊपर फौज १ पैलीजै, ज्यूं रजपूत जुदा जुदा विखर जाय, पछै सुरतांण नूं कूट मारस्यां ।"—नैणसी

पैलणहार, हारौ (हारी), पैलणियौ—वि० ।

पैलिग्रोड़ौ, पैलियोड़ौ, पैल्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पैलीजणौ, पैलीजबौ—कर्म वा० ।

पै'ल-पांत, पै'लपोत, पै'लपौत—अव्य०—[सं० प्रथम + पंक्ति] सबसे पहले सर्व प्रथम ।

उ०—१. पै'लपोत गाय री बारी । उणनैं छैंकला में गाय रै सिवाय दूजी की चीज देखण में नीं आई ।—फुलवाड़ी

उ०—२. स्या'ळ रै इत्तौ नेठाव कठै ! सुणतां ई उडियौ । सांमला गांव में गियौ । वौ पै'लपौत उण डोकरी रै घरै गियौ ।—फुलवाड़ी

पै'लवांन—१. देखो 'पहलवांन' (रू.भे.)

२. देखो 'पैलियांण' (रू.भे.)

पै'लवांनी—देखो 'पहलवांनी' (रू.भे.)

पैलांतर—वि०यौ०—पूर्व जन्म का ।

उ०—१. वीरमदे-बाहिरी घणी दोहरी छै । तिकौ पैलांतर रौ नेह वाचा-बंधियौ छै ।—वीरमदे सोनगरा री वात

उ०—२. बेगम बोली—बाबाजी, हींदू मेरा पैलांतर का खावंद है । आगै छः वेळां इण पाछै मेरी देही जळाई है ।

—वीरमदे सोनगरा री वात

पै'ला—अव्य०—१. आदि, आरम्भ या शुरू में, सर्वप्रथम ।

उ०—चाह नीर मिळणौ चित चायौ, हेर भलौ हुवौ हित हरखायौ । पै'ला उण मीठौ जळ पायौ, लारां सूं ऐंठौ खळ लायौ । —ऊ.का.

२. काल, घटना, स्थिति आदि के क्रम के विचार से आगे या पूर्व ।

उ०—वौ ग्रंतावळ करतौ आखतौ पड़नै पूछ्यौ—इण सूं पै'ला ! थूं धरमसाळ में आई कीकर ? म्हनै सगळी बात मांडनै बता, म्हैं सब जांणणी चावूं । —फुलवाड़ी

३. बीते हुए समय में, पूर्व काल में ।

४. देखो 'पै'ली' (रू.भे.)

रू०भे०—पहिलुं, पहिलु, पहिलै ।

पै'ळाद—देखो 'प्रह्लाद' (रू.भे.)

उ०—रूप नरसिंग पै'ळाद काज धारियौ । गयंद हद तारियौ वेद गाव ।—भगतमाळ

पैलियांण, पैलियांत—वि० स्त्री० [?] प्रथम, पहली ।

सं० स्त्री०—प्रथम बार बच्चा देने वाली गाय, भैंस, बकरी आदि ।

रू०भे०—पहलूंण, पहलूंणां, पहलूंणी, पहलोत, पहिलूंणा, पहिलूंणी, पै'लवांन, पैलीयांत, पैलूंण, पैलूंणी, पैलूणी ।

पैलियोड़ौ—देखो 'पेलियोड़ौ' (रू.भे.) (स्त्री० पैलियोड़ी)

पै'ली, पैली—क्रि०वि० [?] उस ओर, दूसरी ओर ।

उ०—१. सदगुरु काढ़ै केस गहि, डूबत इहि संसार । दादू नाव चढ़ाइ कर, कीये पैली पार ।—दादूबांणी ।

उ०—२. पै'ली कांनीं सूं रावळ मांणस हजार सात ग्राठ सूं आयौ ।

—नैणसी ।

२. प्रथम ।

३. देखो 'पै'लौ' (स्त्री.)

उ०—इतरा गांवां रौ हांसल खायजै । बाकी पैली धरती रौ कोप धाड़ौ आवै ।—सूरे खींवे कांधळोत री बात

४. देखो 'पै'ला (रू.भे.)

उ०—१. दादू दुनियां बावळी सोच करै गैली । रोटी देवै रांमजी, दिन ऊगां पै'ली ।—दादूबांणी

उ०—२. राजकंवर भर निजर उण नैं निरखतौ रह्यौ—जांणै पै'ली बार ही इण चीजनै देखी है ।—फुलवाड़ी

उ०—३. घणा दिनां पै'ली री बात है । एक ही राजा नै एक ही रांणी ।—फुलवाड़ी

उ०—४. ऊमर में आज पै'ली ग्रां आंख्यां सूं आसुंवां रौ मेळ हुवौ ।

—फुलवाड़ी

रू० भे०—पहली, पहल्ली, पहिली, पहिलै, पैहल, पैहली ।

यौ०—पैलीकांनी, पैलीधर, पैलीपैल ।

पैलीधर—स० स्त्री० [?] दूसरा किनारा, दूसरा तट ।

उ०—पीरां पतघीरा पैलीधर धायौ । उण दिन 'रांमौ' सांमौ नहिं आयौ ।—ऊ.का.

पैलीयांत—देखो 'पैलियांण' (रू.भे.)

पैलूंण, पैलूंणी—देखो 'पैलियांण' (रू.भे.) (तोरावाटी)

पै'लू—देखो 'पहलू' (रू.भे.)

उ०—ललता पंखां रा पै'लू लागोड़ा । भूखां भमतां रा भीतर भागोड़ा ।—ऊ.का.

पैलूणी—१. देखो 'पैलियांण' (रू.भे.)

२. देखो 'पैलूणौ' (स्त्री०)

पैलूणौ—वि० (स्त्री० पैलूणी) प्रथम या पहिला ।

रू०भे०—पहिलूणौ ।

पै'लै, पैलै—क्रि०वि०—उस ओर । उ०—सोभत था कोस १ ऊतर नूं नदी रै पै'लै कांनी ।—नैणसी

२. प्रथम, पहिले ।

रू०भे०—पइलइ, पहले, पहिले, पेहले, पैहलै ।

पैलैदिन—सं०पु० [?] वर्तमान दिन से तीन दिन पहिले या तीन दिन बाद का दिवस ।

रू०भे०—परलैदिन ।

पं'लैपार—क्रि० वि०—उस पार, दूसरे किनारे पर।
उ०—राघोदे आघा बधतो थको सैल री राजा रै घमोड़ी। तिका पं'लैपार नीकळी।—जैतसी ऊदावत री बात

पं'लोड़ो—देखो 'पं'लो' (अल्पा.,रू.भे.)
(स्त्री० पं'लोडी)

पंलोट, पंलोटणो, पंलोठणो—देखो 'पंलियांण'.

पं'लो, पंलो—वि०पु० [देशज] (स्त्री० पं'ली, पैली) १. समय के विचार से जो सर्व प्रथम जन्मा या हुआ हो।
उ०—१. राजा मसखरी करतां कह्यो—अर पछै वो पं'लो अमर-फळ थनै खाणो पड़ैला।—फुलवाडी
उ०—२. उण रांणी री वो पं'लो जीव हो जको अठै आयां रोयो कळपियो कोनीं।—फुलवाडी
उ०—३. अळगा-अळगा पंथ चालता थका वै सगळा अेक ई भांत री बातां सोचता-विचारता जावता। पण पं'लो राजकंवर सब सूं लांठो हो, इण कारण उणनै सातूं भाइयां री अणूंतो ही सोच हो।—फुलवाड़ी
उ०—४. मोटोड़ा रांणी-मां पं'लके म्हारी पं'ली चिड़ी नै घणा लाडकोड सूं मांय आळा में बिसांणनै उण री घणी साळ-संभाळ करी ही। —फुलवाड़ी
२. किसी वर्गीकृत पदार्थ के प्रारंभिक अंश से सम्बंधित।
ज्यूं—पोथी री पं'लो पांनो, गीता री पं'लो अध्याय।
३. प्रतियोगिता या तुलना मे जो सर्वप्रथम आया हो।
ज्यूं—मोवन दौड़ में पं'लो लड़को है।
४. वर्त्तमान काल से पूर्व का।
ज्यूं—पं'लारा जमांना जैड़ा हमें सुख कठै।
५. दूसरा, अन्य।
उ०—मांहो मांहि पै'लां रा उलां रा डेरा आवै जावै।—नैणसी
६. शत्रु।
उ०—१. कोट घेरियो पं'लां कटकां, अधिक सांकड़ै आयो।
के वेळा माता तैं करनी, बीकानेर बचायो।—बां.दा.
उ०—२. पं'लो खोसै पाघड़ी, हंसै दिखाळै दंत। कायर मोनै क्यों कहै, सुद्ध सुभावां संत।—बां.दा.
रू०भे०—पइलउ, पइलो, पइहिलो, पह्लो, पहलो, पहल्लौं, पहिलइ, पहिलउ, पहिलुं, पहिलू, पहिलो।
अल्पा०—पहिलड़ो, पैलड़ो, पै'लोड़ो।

पैलो-जनम—सं०पु०यौ०—१. आगे होने वाला जन्म, भावी-जन्म।
उ०—कोई वीर स्त्री भागळ पति नै कहे छे—हे कंथ! आप भला भागनै जीवता घरै आया। अबै म्हारो वेस धारण करावो अबै म्हनै मां चुड़ियां सूं लाज आवै छै सो हूं तो अबै चुड़ियां पैलै-जनम मेट सूं।—वी.स.टी.
२. देखो 'पैलो-भव'.

पैलो-भव—सं०पु० [?] १. पूर्वजन्म।
उ०—गैलै बहता गुड पड़्या, ऐलै अमली आप। लै लै करता लागिगो, पैलै-भव रो पाप।—ऊ.का.
२. देखो 'पैलो-जनम.

पैवंद—सं०पु० [फा०] १. कपड़े का वह छोटा टुकड़ा जो किसी बड़े कपड़े का छेद आदि बंद करने के लिए लगाया जाता है।
उ०—किलमांपति भेंटे कारीगर, कारी घाव निहाव कर। बाळ बाळ जुड़ियो थारो विप, पैवंद आइस तणी पर।
—महाराणा जगतसिंह रो गीत
उ०—किसी पेड़ की टहनी काट कर उसी जाति के किसी दूसरे वृक्ष के साथ नये फलों व नये स्वाद के उद्देश्य से बांधने का ढग।
रू०भे०—पैबंद, पैवंदू।

पैवंदी—वि० [फा०] १. जिसमें पैवंद लगा हो। २. पैवंद लगाकर उत्पन्न किया हुआ, (फल). ३. वर्ण शंकर।

पैस—सं० स्त्री० १. गति, पहुंच, प्रवेश। (डिं.को.)
२. देखो 'पेस' (रू.भे.)

पैसण—सं०स्त्री० [सं० प्रविष्ट] पहुंच, प्रवेश। (डिं.को.)

पैसणो, पैसबो—क्रि०अ० [सं० प्रविश, प्रा० पइस] प्रवेश करना, घुसना।
उ०—१. बड़कै अोघण बंधिया, पेसै पई पताळ। सोंच करै नह सागड़ी, धवळ तणी दिस भाळ।—बां.दा.
उ०—२. आगै दरवाजे नीसरतां देखै तो एक कुंभार परणीज'र आवै छै। दरवाजै मांहै पैसै छै।—नैणसी
पैसणहार, हारो (हारी), पैसणियो—वि०।
पैसाड़णो, पैसाड़बो, पैसाणो, पैसावो, पैसावणो, पैसावबो—सक०रू०
पैसिअोड़ो, पैसियोड़ो पैस्योड़ो—भू०का०कृ०।
पैसीजणो, पैसीजबो—भाव वा०।
पइसणो, पइसबो, पयसणो, पयसबो—रू०भे०।

पैसवाई—देखो 'पेसवाई' (रू भे.)

पैसाच, पैसाची—वि० [सं० पैशाच] पिशाच सम्बंधी, पिशाची।
सं० स्त्री० [सं० पैशाची] एक प्रकार की प्राकृत भाषा।

पैसाड़णो, पैसाड़बो—देखो 'पैसाणो, पैसाबो' (रू.भे.)
पैसाड़णहार, हारो (हारी), पैसाड़णियो—वि०।
पैसाड़िअोड़ो, पैसाड़ियोड़ो, पैसाड़्योड़ो—भू० का० कृ०।
पैसाड़ीजणो, पैसाड़ीजबो—कर्म वा०।

पैसाड़ियोड़ो—देखो 'पैसायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पैसाड़ियोड़ी)

पैसाणो, पैसावो—क्रि० स० ['पैसणो' क्रि० का० स० रू०] प्रवेश कराना, घुसाना।

पैसाणहार, हारौ (हारी), पैसाणियौ—वि०।
पैसायोड़ौ—भू० का० कृ०।
पैसाईजणौ, पैसाईजबौ—कर्म वा०।
पुसांणौ, पुसांबौ, पैसाड़णौ, पैसाड़बौ, पैसावणौ, पैसावबौ
—रू० भे०।

पैसायोड़ौ—भू० का० कृ०—प्रवेश कराया हुआ, घुसाया हुआ।
(स्त्री० पैसायोड़ी)

पैसार—सं० पु० [सं० प्रवेशनम्] १. पैठ, प्रवेश।
उ०—ऐ थया जाहा आदमी, गत कुटळ जीद अमीर। पैसार सूं नैसार मुसकल, वर्णसी सुण वीर।—पा.प्र.
२. डेरा।
उ०—ईसरदास कल्यांणदासोत रै चाकर रांमसिंघ जगमाळ रै पैसार पैसनै रातै मारियो।—नैणसी
३. प्रवेश होने का स्थान, प्रवेश द्वार।
उ०—विचार, बुद्धि, बल पूरा राखता होय पैसार नै काळ लड़ाई रा जांणता होवै। —नी.प्र.
रू० भे०—पेसार।
अल्पा०—पइसारउ, पइसारौ, पैसारौ।

पैसारौ—सं० पु० [सं०प्रवेश+चार या प्रवेशनम्] १. पुष्करणा ब्राह्मणों में 'भांवरी' से एक दिन पूर्व की जाने वाली एक रीति या रस्म। (मा.म.)
वि०वि०—इसके अनुसार कन्या के ननिहाल व पिता के पक्ष के स्त्री-पुरुष वर के घर मिलने को आते हैं। वर पक्ष वाले वर को कपड़े व गहने पहिनाकर मकान के बाहर गद्दी पर बैठा देते हैं। वर के सम्बन्धी भी एकत्रित हो जाते हैं। कन्या पक्ष वाले ढोल बजाते हुए आते हैं और स्त्रियां गीत गाती आती हैं। दोनों ओर के सभी व्यक्ति 'सपरदान' की रीति करते हैं।
२. उक्त अवसर पर गाया जाने वाला गीत।
३. विवाह के पश्चात दूल्हे का दूलहिन सहित अपने घर में प्रवेश करने की विधि विशेष।
उ०—१. ताहरां भारमळजी रिणमलजी खाबड़ आया। पिण कोस २ तथा २॥ बीच रह्या। तद रिणमलजी नुं भारमलजी कहायो, "थांहरी तरवार मेल देज्यो, जु सोढ़ी री पैसारौ करां। अर पछै म्हे थां आय मिळसां।" इतरौ भारमलजी कहायो।
—रिणमल राठौड़ खावड़ियै री वात
उ०—२. हिवै हालीयां। रांण भणाय आय पहुता। हिवै पैसारौ करि रांणौ घरे गयो। हिवै जेलू मोजेसुं परधानां करै। थारै बोलीयेनुं पाल करि। —देवजी बगड़ावतांरी वात
वि०वि०—इसमें दूल्हे को घर के प्रमुख द्वार में प्रवेश करते ही आंगन में थालियों की एक कतार रखी मिलती है। उन थालियों को दूल्हा तलवार की नोंक से एक दाईं व एक बाईं तरफ के क्रम से सरकाता जाता है। पीछे दुलहिन और उसकी 'जेठांणी' उन थालियों को संग्रह करती जाती है। संग्रह के समय थालियों की परस्पर आवाज होना अशुभ माना जाता है।
४. देखो 'पैसार' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—निसरणी ऊंची करो, सुभट करो पैसारौ रे। आंणौ रावळ इण घड़ी, कुट्टण क्या सु गमारौ रे। —प.च.चौ.
रू०भे०—पइसारउ, पइसारौ।

पैसावणौ, पैसावबौ—देखो 'पैसाणौ, पैसाबौ' (रू.भे.)
पैसावणहार, हारौ (हारी), पैसावणियौ—वि०।
पैसाविओड़ौ, पैसावियोड़ौ, पैसाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पैसावीजणौ, पैसावीजबौ—कर्म वा०।

पैसावियोड़ौ—देखो 'पैसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पैसावियोड़ी)

पैसिंजरगाड़ी—सं० स्त्री० [अं० पैसेंजर+राज० गाड़ी] यात्रियों को ले जाने वाली रेलगाड़ी जो हर स्टेशन पर ठहरती है, सवारीगाड़ी।

पैसियोड़ौ—भू०का०कृ०—प्रवेश किया हुआ, घुसा हुआ।
(स्त्री० पैसियोड़ी)

पैसेंजर—सं० पु० [अं०] १. यात्री। २. देखो 'पैसिंजरगाड़ी'.

पैसौ—देखो 'पईसौ' (रू.भे.)

पैहरण—देखो 'पहरण' (रू.भे.)
उ०—पट्टोलो पैंतीस हाथ पैहरण पैहरीजै। पिछोड़ो सोल है, तेण तन नहीं ढकीजै।—नैणसी

पैहरणौ, पैहरबौ—देखो 'पै'रणौ, पै'रबौ' (रू.भे.)
उ०—१. महाराज आ अठै मोजड़ी की पैहरण वाली आई छै अर अठै मोजड़ उवा हाजर कीवी। —चौबोली
उ०—२. तिको पांचां मांहे वैर पहरियो। तिण बैर काढण घणी फिकर रहै। —जैतसी ऊदावत री वात
पैहरणहार, हारौ (हारी), पैहरणियौ—वि०।
पैहराड़णौ, पैहराड़बौ, पैहराणौ, पैहराबौ, पैहरावणौ, पैहरावबौ
—प्रे०रू०।
पैहरिओड़ौ, पैहरियोड़ौ, पैहरयोड़ौ—भू० का० कृ०।
पैहरीजणौ, पैहरीजबौ—कर्म वा०।

पैहराड़णौ, पैहराड़बौ—देखो 'पै'राणौ, पै'राबौ' (रू.भे.)
पैहराड़णहार, हारौ (हारी), पैहराड़णियौ—वि०।
पैहराड़िओड़ौ, पैहराड़ियोड़ौ, पैहराड़योड़ौ—भू० का० कृ०।
पैहराड़ीजणौ, पैहराड़ीजबौ—कर्म वा०।

पैहराड़ियोड़ौ—देखो 'पै'रायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पैहराड़ियोड़ी)

पैहराणौ, पैहराबौ—देखो 'पै'राणौ, पै'राबौ' (रू.भे.)

उ०—जोगी तूं बोलाय, जोगी रा आभरण पैंहराय रावळ मलीनाथ नांम दियौ। —नैणसी

पैंहराणहार, हारौ (हारी), पैंहराणियौ—वि०।

पैंहरायोड़ौ—भू० का० कृ०।

पैंहराईजणौ, पैंहराईजबौ—कर्म वा०।

पैंहरायोड़ौ—१. देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)

२. देखो 'पैं'रायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पैंहरायोड़ी)

पैंहरावणि, पैंहरावणी—देखो 'पहरावणी' (रू.भे.)

पैंहरावणौ, पैंहरावबौ—देखो 'पैंहराणौ, पैंहराबौ' (रू.भे.)

उ०—जी हो खेलावण हुलरावणैं, लाला, चुगावण नै पाय। जी हो न्हवरावण पैंहरावणैं लाला, अंगो अग लगाय।—जयवाणी

पैंहरावणहार, हारौ (हारी), पैंहरावणियौ—वि०।

पैंहराविओड़ौ, पैंहरावियोड़ौ, पैंहराव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

पैंहरावीजणौ, पैंहरावीजबौ—कर्म वा०।

पैंहरावियोड़ौ—१. देखो 'पैं'रायोड़ौ' (रू.भे.)

२. देखो 'पहरायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पैंहरावियोड़ी)

पैंहरी—देखो 'पैंडी' (रू.भे.)

उ०—कंचन पाळ विसाळ अति, पैंहरी जरी जराय। ता पर सोभा तरुन की, का पैं बरनी जाय।—गजउद्धार

पैंहल—देखो 'पहल' (रू.भे.)

उ०—सूरज ऊगां पैंहल संभलो, गहलोतां, कछवाहां गौड़। गढपतियां दरबार गवीजै, ठौड़ ठौड़ बाघौ राठौड़।

—महाराजा सिवदांनसिंघजी

पैंहलड़ौ—देखो 'पैं'लौ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—अर पैंहलड़ी लड़ाई मांहे चांदै खीची नूं तरवार वाही हुती। —नैणसी

(स्त्री० पैंहलड़ी)

पैंहलां—देखो 'पैं'लां' (रू.भे.)

उ०—नै सांखळा मेराजनूं तो पैंहलांई माटी रांणगदे मारनै नीसरियौ हुतौ। —नैणसी

पैंहला—देखो 'पैं'ला' (रू.भे.)

उ०—राजा जदु पैंहला हुवौ छै, तिणासूं जदुवंसी कहावै छै। —नैणसी

पैंहळाद—देखो 'प्रह्ळाद' (रू.भे.)

उ०—वळ करै मार धड़ मैंगळां, जळ पीवै महरांण हूं। पैंहळाद चाड पथर विहर, तिको सिंघ रायसिंघ तू। —द.दा.

पैंहली—देखो 'पैं'ली' (रू.भे.)

उ०—वान प्रताप 'अजन' रै पैंहली। पूगी खबर सोनागर पैंहली। —रा.रू.

पैंहलौ—देखो 'पैं'लौ' (रू.भे.)

उ०—पैंहलै दिन वीमाह हुवौ नै बीजै दिन गोठ की।—नैणसी

पैंहारी—देखो 'पयहारी' (रू.भे.)

पैंहैलौ—देखो 'पैं'लौ' (रू.भे.)

पोंच—१. देखो 'पहुंच' (रू.भे)

२. देखो 'पोच' (रू.भे.)

पोंचणौ, पोंचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—१. पनरै बरसां पोंचियां, पिय जागै तो जाग। जोबन दूध उफांण ज्यूं, जाहि ठिकाणै लाग। —अज्ञात

उ०—२. संमत १७११ रा काती मांहे पातसाहजी अजमेर पधारीया तद खबर पोंहची। —नैणसी

पोंचणहार, हारौ (हारी), पोंचणियौ—वि०।

पोंचिओड़ौ, पोंचियोड़ौ, पोंच्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पोंचीजणौ, पोंचीजबौ—भाव वा०।

पोंचियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पोंचियोडी)

पोंत—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पोंतणौ, पोंतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—तरै चाचे मेरै डेरै जाइ, पांणी मांहे लाकड़ी, नांख, गोढ री खबरि पाड़ी। तरै चीठी एक गोढ रै बांध पाछी मेली। तिका दिल्ली पोंहती। —रावरिणमल री वात

पोंतणहार, हारौ (हारी), पोंतणियौ—वि०।

पोंतिओड़ौ, पोंतियोड़ौ, पोंत्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पोंतीजणौ, पोंतीजबौ—भाव वा०।

(स्त्री० पोंतियोड़ी)

पोंतियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे)

पोंहच—१. देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

उ०—जद कहै-म्हारी पोंहच इतरीज ही है।—भि. द्र.

२. देखो 'पोच' (रू.भे)

पोंहचणौ, पोंहचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—जम हथ्या फुरती जिका, बरणौ कवण बणाय। पोंहचै मारण प्रांणिया, जळ थळ अंबर जाय। —बां.दा.

पोंहचणहार, हारौ (हारी), पोंहचणियौ—वि०।

पोंहचिओड़ौ, पोंहचियोड़ौ, पोंहच्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पोंहचीजणौ, पोंहचीजबौ—भाव वा०।

पोंहचियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पोंहचियोड़ी)

पोंहचाणौ, पोंहचाबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू.भे.)

उ०—जद आकूंतखां नै मोहबतखां रीसायो, तद कह्यौ तूं खबर पोंहचावै छै। —नैणसी

पोंहचाणहार, हारौ (हारी), पोंहचाणियौ—वि० ।
पोंहचायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
पोंहचाईजणौ, पोंहचाईजबौ—कर्म वा० ।

पोंहचायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पोंहचायोड़ी)

पोंहत—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पोंहतणौ, पोंहतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
उ०—सु राव रौ साथ लोहीयांणा कनै वाहळौ छै तठै गया। नै लखो लोहायांणै पोंहतौ।—राव लाखै री बात
पोंहतणहार, हारौ (हारी), पोंहतणियौ—वि० ।
पोंहतिग्रोड़ौ, पोंहतियोड़ौ, पोंहत्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
पोंहतीजणौ, पोंहतीजबौ—भाव वा० ।

पोंहतियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोंहतियोड़ी)

पो—स० पु०—१. पिण्ड। २. सुत, पुत्र। ३. अघ। (एका०) ४. प्रभू।
५. देखो 'पौ' (रू. भे.)
उ०—पो फाटी जद भोर में, खिणके लाग्यौ दाव। चांदौ मुळक्यौ मोद में, मिटियौ लूआं ताव।—लू

पो'—सं० स्त्री० [?] १. पृथ्वी। २. चौपड़ नामक खेल का कोडी अथवा पासे का एक दाव।
वि० वि०—कोडी में दस, पच्चीस और तीस आने पर इन संख्याओ के अतिरिक्त अपनी किसी भी गोटी एक घर आगे और सरकाया जाता है या कोई नई गोटी रखी जा सकती है। नई गोटी पो' आने पर ही रखी जा सकती है। इसी प्रकार पासे में भी किसी एक पासे में एक अंक आने पर पो' माना जाता है।
३. देखो 'पूस' (रू. भे.)
उ०—अगहन मास ऋतू ग्यौ आखौ। पो' त्रेतायुग बीतौ पाखौ।
—ऊ. का.
४. देखो 'पौ' (रू. भे.)
उ०—रांमचरण पो' ऊपर रहियौ। सीत घांम अपणै सिर सहियौ।
—ऊ. का.

पोग्र—देखो 'पोत' (रू. भे.) (जैन)

पोग्रणौ, पोग्रबौ—देखो 'पोवणौ, पोवबौ' (रू. भे.)
पोग्रणहार, हारौ (हारी), पोग्रणियौ—वि० ।
पोइयोड़ौ—भू० का० कृ० ।
पोईजणौ, पोईजबौ—कर्म वा० ।

पोग्राणौ, पोग्राबौ—देखो 'पोवाणौ, पोवाबौ' (रू.भे.)
पोग्राणहार, हारौ (हारी), पोग्राणियौ—वि० ।
पोग्रायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
पोग्राईजणौ, पोग्राइजबौ—कर्म वा० ।

पोग्रायोड़ौ—देखो 'पोवायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पोग्रायोड़ी)

पोइण—देखो 'पोयण' (रू.भे.)
उ०—वैनांणी ढीलौ घड़ै, मो कंथ तणौ सनाह। विकसै पोइण फूल जिम, पर दळ दीठां नाह।
—हा.झा.

पोइणि, पोइणी—देखो 'पोयणी' (रू.भे.)
उ०—१. आयौ इळि वसंत वधावण आई, पोइणि पत्र जळ एणि परि। आणंद वणे काच मै अंगणि, भांमिणि मोतिए थाळ भरि।
—वेलि
उ०—२. लागे साद सुहांमणउ, नस भर कुंभड़ियांह। जळ पोइणिए छाइयउ, कहउत पूगळ जांह।—ढो. मा.
उ०—३. सार दळ बोल जळ-बोल सीरोहियौ, बिरूदपत झूलियौ घणौ वांणै। प्रसण जिम चालियौ पोइणी चपंतौ, 'जगौ' पावाहरौ हंस जांणै।—जगमाल सीसोदिया रो गीत

पोइयोड़ौ—देखो 'पोवियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोइयोड़ी)

पोइस—ग्रव्य० [फा० पोश] हटो, बचो आदि का संकेत।
वि० वि०—प्राचीन समय में इस शब्द का प्रयोग प्रायः हरिजन (भंगी) करते थे। वे जब सड़क पर चलते थे तो 'पोइस-पोइस' अथवा 'पोस-पोस' कहते हुए चलते थे ताकि आगे या आस-पास चलने वाले अलग हटजावें और उन्हें स्पर्श-दोष न लगे। (मा.म.)
रू० भे०—पायस, पोयस, पोस।

पोईण—देखो 'पोयण' (रू.भे.)
उ०—वे कंध जांणौ कळस ढाळया, वांह पोईण नाळ।
—रुक्मणिमंगळ

पो'कर—१. देखो 'पुस्कर' (रू. भे.)
उ०—१. पूरब में जागीरी दीवी। स्रीवाराहजी रो देहुरो पो'कर मांथै सगर संवरायो।—नैणसी
उ०—२. बावाजी हुक्म कराय दौ, हुक्म करौ तौ पो'कर न्हायस्यां।
—लो. गी.
२. देखो 'पोखर' (रू. भे.)

पोकरणा—सं० स्त्री०—१. राठोड़ों की एक उप-शाखा।
२. देखो 'पुसकरणा' (रू. भे.)
(स्त्री० पोकरणी)
रू० भे०—पोहकरणा।

पोकरणौ—सं० पु० १. राठोड़ वंश की 'पोकरणा' शाखा का व्यक्ति।
२. देखो 'पुसकरणौ' (रू. भे.)

पोकरमूळ—देखो 'पुम्करमूळ' (रू. भे.)

पोकरी—देखो 'पुस्करी' (रू. भे.)
उ०—हरी पोकरी रै हुवौ जेम ह्वीजै। कवी पात री मात ऊवेळ कीजै।—मे. म.

पोकार—देखो 'पुकार' (रू. भे.)
उ०—चातक नु छै चतुर, सीख सुणि वयणे साचे। पिउ पिउ करै पोकार, जलद सगला मत याचे।—घ. व. ग्र.

पोकारणौ, पोकारबौ—देखो 'पुकारणौ, पुकारबौ' (रू. भे.)
उ०—१. ऊंचै हाथि धाहि पोकारइ, बोलावइ किरतार। आंणीवाइ किम्हइ ऊवेलइ, करइ ग्रम्हारी सार।—कां. दे. प्र.
उ०—२. तूं सभारइ सब्द जउ, हूं मुंकुं खिण मात्र। पीऊ पीऊ मुखि पोकारतां, गहिबरिउ सवि गात्र।—मा. कां. प्र.
पोकारणहार, हारौ (हारी), पोकारणियौ—वि०।
पोकारिग्रोड़ौ, पोकारियोड़ौ, पोकारयोड़ौ—भू० का० कृ०।
पोकारीजणौ, पोकारीजबौ—कर्म वा०।

पोकारियोड़ौ—देखो 'पुकारियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोकारियोड़ी)

पोकारु—१. पुकार करने वाला। २. देखो 'पुकार' (रू. भे.)
उ०—कूंयर परीक्षा तणइ मिसि गुरिहिं कूड पोकारु किद्धउ।
—प. पं. च.

पोख—स० पु० [सं० पोषण] १. शरण, सहारा, ग्राधार।
उ०—ज्यांरै खाख बिछावणौ, ग्रोढण नूं ग्राकास। ब्रह्म पोख सतोख वित, पूरण सुख त्यां पास।—बां. दा.
२. देखो 'पोसण' (रू. भे.)
उ०—बुध्ध भ्रस्ट, व्याकुळ वचन, तन नहिं पावै पोख। इण दारू में कोण गुण, दांम लगै अर दोख।—ग्रज्ञात
३. देखो 'पोक' (रू. भे.)

पोखण—देखो 'पोसण' (रू. भे.)
उ०— जसवत' कै'तो जीवनै, पोखण में नहिं पाप। काफर नहिं देणौ कहै, वे इज काफर आप।—ऊ. का.

पोखणौ—वि० [सं० पोषण+रा० प्र० औ] (स्त्री० पोखणी) पालन-पोषण करने वाला।
सं० पु०—श्रीमाली ब्राह्मणों के विवाह की एक रीति, रस्म।
(मा. म.)
वि० वि०—जब 'कुलेवा' की रीति हो जाती है और वर अपने घर पहुंच जाता है तो ठीक उसी समय कन्या के घर की चार ग्रोरतें वर को 'पोखणें' को ग्राती हैं। उनके पास लकड़ी के छोटे-छोटे चार बेलन होते हैं जिनको वे वर के सिर मुंह, हाथ आदि से लगाती हैं। इसी क्रिया को पोखणौ कहते हैं।

पोखणौ, पोखबौ—१. देखो 'पोसणौ, पोसबौ' (रू.भे.)
उ०—हातमताई हरख सूं, पोखतौ पहियाह। ग्रमर नाम उण रौ ग्रजै, कीं जादा कहियांह।—बां.दा.
२. देखो 'प्राखणौ, प्रांखबौ' (रू.भे.)
उ०—पूत पिता सारै पोखीजै, रण 'गोपाळ' ग्रने बळरांम।
—गौड गोपाळदास री वारता

पोखणहार, हारौ (हारी), पोखणियौ—वि०।
पोखिग्रोड़ौ, पोखियोड़ौ, पोख्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पोखीजणौ, पोखीजबौ—कर्म वा०।

पोखता—सं० स्त्री० [स० पोशितृ] एक प्रकार की ग्रप्सरा जिसका सहवास प्राप्त होने पर सब प्रकार के सुख मिलते हैं तथा मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।
उ०—पदमण जांणै पोखता, एहड़ां आचारां। इंद्रायण कै ऊतरी, ग्रतलोक मझारां। —मयारांम दरजी री वात
रू०भे०—पोसता।

पोखर—स०पु० [सं० पुष्करः] १. छोटा तालाब या गड्ढा।
उ०—भाखरिया हरिया हुआ, पोखर भरिया पास। तरवरिया प्रफुलित थया, नीर निखरिया खास।—जीगीदांन कवियौ
२. देखो 'पुस्कर' (रू.भे.)
रू०भे०—पो'कर।
अल्पा०—पोखरौ।

पोखरमूळ—देखो 'पुस्करमूळ' (रू.भे.)

पोखरौ—देखो 'पोखर' (अल्पा., रू.भे.)

पोखाळौ—सं० पु० [देशज] बरबाद, नष्ट, खराब।
उ०—खवासजी कह्यौ—थूं तौ साव बावळी व्ही है, टोळा रौ झुरणौ छोड। वौ तो एक सपनौ हो जको तूटग्यौ। उण सपना रै भरोसै साज सरीखी बाजरी रौ पोखाळौ करूं, म्हैं ऐड़ौ कालौ कोनीं।
—फुलवाड़ी

पोखियोड़ौ—भू० का० कृ०—पालन-पोषण किया हुग्रा।
(स्त्री० पोखियोड़ी)

पोगंड—देखो 'पौगंड' (रू. भे.)

पोगर—सं० स्त्री० [सं० पुष्करी=हाथी+कर=सूंड] हाथी की सूंड।
उ०—१. लळवळतां पोगरां, पाय खळहळतां लंगर। झळहळतां चख झाळ, चोळ मळहळतां चाचर।—सू. प्र.
उ०—२. दूजा गज रौ पोगर अरिसिंघ रौ पाघ ऊपर आयौ जांणै पूंग्या रा पूंज पर नागराज भोग उठायौ।—वं. भा.

पोगसापुद्गल—सं० पु०—आत्मा से लगकर अलग हुए पुद्गल। (जैन)

पोगेती—स० स्त्री० [सं० पर्य्यस्त] पालथी, स्वस्तिकासन।

पोग्गळ, पोग्गल—देखो 'पुद्गळ' (रू. भे.)
उ०—इंद्रिये रुचि पोग्गली, जीव में रुच पोग्गल थाय। सतक ग्राठ उद्देसे, दसवें चाल्यौ भगवती माय।—जयवांणी

पोग्गळी, पोग्गली—वि०—पुद्गलवान, पुद्गलवाला।
उ०—इंद्रिये रुचि पोग्गली, जीव में रुच पोग्गल थाय। सतक ग्राठ उद्देसे दसवें, चाल्यौ भगवती मांय—जयवांणी

पोड़—देखो 'पौड़' (रू. भे.)
उ०—दिनकर वाहण देह, पाहण फूट पोड़ सूं। 'जेहल' साहण जेह,

साहण समंद समापिया ।—बां. दा.

पोड़कणौ, पोड़कबौ–क्रि० अ० [देशज] बदलना, फिसलना ।

पोड़कणहार, हारौ (हारी), पोड़कणियौ—वि० ।

पोड़किप्रोड़ौ, पोड़कियोड़ौ, पोड़क्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पोड़कीजणौ, पोड़कीजबौ—भाव वा० ।

पोड़कियोड़ौ–भू० का० कृ०—बदला हुआ, फिसला हुआ ।

(स्त्री० पोड़कियोड़ी)

पोड़ि—देखो 'पौड़' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—घोड़े सूं उतरिया, अमल कीधा नै टेवटा लीधा, तितरै घडी एक दो गई नै एक हको सुणियो, घोड़ां री पोड़ि हौकार सुणिया ।

—जगमाल मालावत री वात

पोच–वि० [फा० पूच] १. नीच, निकृष्ट ।

उ०—हर-हर जप अनम कर हर, परहर अहमत पोच । व्यापक नर हर जगत विच, अंतर-गत आलोच ।—र. ज. प्र.

स० पु०—१. कुमार्ग, कुसग ।

उ०—दार तैं कुदार पैर पोच में दियौ । कार कों बिगार सोच लार सैं कियौ ।—ऊ. का.

सं० स्त्री०—२. कायरता, कमजोरी । उ०—स्वांग सती का पहर-कर, करै कुटुंब को सोच । बाहर सूरा देखिये, दादू भीतर पोच ।

—दादूवांणी

३. देखो 'पोचौ' (मह., रू. भे.)

पो'च—देखो 'पहुंच' (रू. भे.)

पो'चणौ, पो'चबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू. भे)

पो'चणहार, हारौ (हारी), पो'चणियौ—वि० ।

पो'चाड़णौ, पो'चाड़बौ, पो'चाणौ, पो'चाबौ, पो'चावणौ, पो'चावबौ

—प्रे० रू० ।

पो'चिप्रोड़ौ, पो'चियोड़ौ, पो'च्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पो'चीजणौ, पो'चीजबौ—भाव वा० ।

पो'चाड़णौ, पो'चाड़बौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे.)

पो'चाड़णहार, हारौ (हारी), पो'चाड़णियौ—वि० ।

पो'चाड़िप्रोड़ौ, पो'चाड़ियोड़ौ, पो'चाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पो'चाड़ीजणौ, पो'चाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पो'चाड़ियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पो'चाड़ियोड़ी)

पो'चाणौ, पो'चाबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे.)

पो'चाणहार, हारौ (हारी), पो'चाणियौ—वि० ।

पो'चायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

पो'चाईजणौ, पो'चाईजबौ—कर्म वा० ।

पोचापौ—सं० पु० [देशज] १. वह कारण या कार्य जिससे गौरव, प्रतिष्ठा, कीर्ति एवं स्तर में निम्नता प्राप्त हो । उ०—आपनै यूं खाली हाथ भेजां तौ सगळी न्यात रौ पोचापौ को लागै नीं ?—फुलवाड़ी

२. अपमान, अप्रतिष्ठा, बेइज्जती ।

उ०—घर रा मोटयारां नै भेजै तौ दो हाथ ई बतावां । लुगाई री जात सूं बात करण में ई म्हांरौ पोचापौ लागै ।—फुलवाड़ी

पो'चायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पो'चायोड़ी)

पोचारौ—देखो 'पोचारौ' (रू.भे.)

पो'चावणौ, पो'चावबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू.भे.)

पो'चावणहार, हारौ (हारी), पो'चावणियौ—वि० ।

पो'चाविप्रोड़ौ, पो'चावियोड़ौ, पो'चाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पो'चावीजणौ, पो'चावीजबौ—कर्म वा० ।

पो'चावियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पो'चावियोड़ी)

पो'चियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पो'चियोड़ी)

पोचौ–वि० [फा० पूच] (स्त्री० पोची) १. घृणित, निकृष्ट, हेय ।

उ०—भगवत करता नैं करतब भुगतावै । पिछला पापां रा पांमर फळ पावै । भावी भूलोड़ा भूंको क्यूं भाया । पोचा करमां रा पोचा फळ पाया ।—ऊ का.

२. तुच्छ ।

उ०—अड़ियो घोचौ, आखि अमल छोडण आळोचौ । सोचौ सोचौ सुघड़, पलै बंधियौ नग पोचौ ।—ऊ. का.

३. कमजोर, अशक्त, क्षीण ।

सं०पु० [स्त्री० पोची] १. शूद्र, अनुसूचित ।

उ०—अगम भोम सूं म्हे चल आया, पूरां कारण ब्रह्म पठाया । पोची जात हींण घर पाया, लिछमी-वर सूं प्रांण लगाया ।

—ऊ.का.

मह०—पोच ।

पोछड़ी—सं०स्त्री० [सं०पश्च + रा०प्र०ड़ी] १. वह (स्त्री) जिसकी अंतिम संतान प्रौढा अवस्था को पार करने के बाद होती है । इसीलिये यह अंतिम संतान पोछड़ी कहलाती है ।

२. सब से बाद की संतान, अंतिम संतान ।

पोछड़ीयौ–सं०पु० [देशज] गहरे कुओं से मोट द्वारा पानी निकालने के समय लाव के छोर पर जोडा जाने वाला बुना हुआ छोटा रस्सा ।

पो'छणौ, पो'छबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू. भे.)

पो'छणहार, हारौ (हारी), पो'छणियौ—वि० ।

पो'छिप्रोड़ौ, पो'छियोड़ौ, पो'छ्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पो'छीजणौ, पो'छीजबौ—भाव वा० ।

पो'छाणौ, पो'छाबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे.)

उ०—जद भाई-बेटांनूं कह्यौ—मांणस लेनै थे वघनोर में जावज्यौ हूं सरफुद्दीन नूं पो'छावणनै जाऊं छूं।—बां. दा. ख्यात

पो'छाणहार, हारौ (हारी), पो'छाणियौ—वि०।

पो'छायोड़ौ—भू० का० कृ०।

पो'छाईजणौ, पो'छाईजबौ—कर्म वा०।

पो'छायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पो'छायोड़ी)

पो'छियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पो'छियोड़ी)

पोछींडौ—सं० पु०—पीछे का भाग (मकान), पृष्ठ भाग।

पोट—सं० स्त्री० [सं०] १. ढेर, समूह।
उ०—मेह सुजळ पोटां महीं, सांवण करता सेल। मोटौ हुवै सिताव मन, छोटां रौ ही छैल।—बां. दा.
२. पकने की स्थिति में।
उ०—पोटां आयौ खड़यो बाजरौ, कोड्याळी ए जवार वदळी।
—लो. गी.
३. गठडी, बुगचा।
उ०—बांधी धोबण कपड़ां री पोट, हांये मने सोगन थारी ये, कोई हाथ लेई रंग री मोगरी जी राज।—लो. गी.
४. पीठ पर माल लदे बैल, गधे आदि का समूह।
उ०—१. दुख मेटण पोट कबीर घरां, दिस हाकळ कीध वईर हरी।
—भगतमाळ
उ०—२. आई हो आई हो साहिबा बिणजा रै री पोट, तमाखू ल्यायौ रे म्हारौ मीठौ सूरत री रे म्हारा राज।—लो. गी.
५. वज्र, बिजली।
उ०—सरादा भडां मुरधरा दळांसुं, हजारां बळां नह रहे हटकी। पापरी चोट नवकोट ऊपरा, पोट अजगैब री आंण पटकी।
—महाराजा प्रतापसिंह किसनगढ़ री गीत
६. सर्प के मुह के अंदर की विषयैली जिस का विष सर्पदंश के समय काटे जाने वाले प्राणी के घाव में मिल जाता है।
रू०भे०—पोटि, पोठ।
अल्पा०—पुट्टळी, पोटळियौ पोटळी, पोठी।
मह०—पोटौ, पोटळौ।

पोटळियौ—सं० पु० [?] १. कधे पर माल लादकर व फेरी लगाकर सौदा बेचने वाला व्यापारी। (मा. म.)
२. बकरी के बालो से बना हुआ घास-फूस की गठरी बांधने का वस्त्र विशेष।
३. देखो 'पोट' (अल्पा., रू. भे.]
रू० भे०—पोटळौ।

पोटळी—देखो 'पोट' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—१. विना पोटळी नागणियौ, बिना सींग रौ बैल। कदियक आवै कोटड़ी, छिपतौ-छिपतौ छैल।—बां. दा.
उ०—२. तड़कै वनमाळी राजा नैं एक अमरफळ रै खिरण री खुस खबरी सुणावणनै गियौ उण सूं पैला ई अमरता रौ कोडायौ एक काळिंदर सांप उण अमरफळ मे दांत गडाय आपरै विस री पोटळी फोड़ दी।—फुलवाडी

पोटळौ—सं० पु०—१. कोडा, चाबुक।
उ०—जळवार पेस कबजां जडत।
पोटळां मार गुर्जां पडंत।—वि. सं.
२. देखो 'पोट' (मह., रू. भे.)
३. देखो 'पोटळियौ' (रू. भे.)

पोटाड़णौ, पोटाड़बौ—देखो 'पोटाणौ, पोटाबौ' (रू. भे.)
पोटाड़णहार, हारौ (हारी), पोटाड़णियौ—वि०।
पोटाड़िओड़ौ, पोटाड़ियोड़ौ, पोटाड़योड़ौ—भू० का० कृ०।
पोटाड़ीजणौ, पोटाडीजबौ—कर्म वा०।

पोटाड़ियोड़ौ—देखो 'पोटायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोटाड़ियोडी)

पोटाणौ, पोटाबौ—क्रि० स०—बहकाना, फुसलाना।
उ०—बुगला कर बैण पोटाय पती। कर चेलिय कथ बणौ कुमती।
—ऊ. का.
पोटाणहार, हारौ (हारी), पोटाणियौ—वि०।
पोटायोडौ—भू० का० कृ०।
पोटाईजणौ, पोटाईजबौ—कर्म वा०।
पोटाड़णौ, पोटाडबौ, पोटावणौ, पोटावबौ—रू० भे०।

पोटायोड़ौ—भू० का० कृ०—बहकाया, हुआ फुसलाया हुआ।
(स्त्री० पोटायोड़ी)

पोटावणौ, पोटावबौ—देखो 'पोटाणौ, पोटाबौ' (रू. भे.)
पोटावणहार, हारौ (हारी), पोटावणियौ—वि०।
पोटाविओडौ, पोटावियोडौ, पोटाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पोटावीजणौ, पोटावीजबौ—कर्म वा०।

पोटावियोड़ौ—देखो 'पोटायोडौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोटावियोड़ी)

पोटास—सं०पु० [अं०] खनिज-पदार्थों से प्राप्त होने वाला एक प्रकार का क्षार विशेष।

पोटि—देखो 'पोट' (रू. भे.)
उ०—घर धंधइ सब घरम गमायउ, वीसरि गयउ देव गुरु भजनं। पोटि उपाड़ि गये कुणपरभवि, म करि म करि जीव लोभ घनं।
—स. कु.

पोटियो—सं०पु०—१. घास का छोटा ढेर या गंज। २. वह बैल जिसकी पीठ पर बोझ का गट्ठर लदा हो।
रू०भे०—पोठियो, पोठीयो।

पोटी—सं०स्त्री०—१. पक्षियों के पेट की वह थैली जिसमें वे चुगा हुआ दाना एकत्रित करते हैं।
वि०वि०—जल में रहने वाले पक्षियों के यह थैली पेट में सीने के पास होती है किन्तु जो पक्षी पानी में नहीं रहते हैं उनके यह थैली पीठ पर होती है।
२ ऊंट के पैर में होने वाली ग्रंथी।
मह०—पोटो।

पोटीजणौ, पोटीजबौ—क्रि०अ० [देशज] १. बहकाया जाना, फुसलाया जाना। उ०—रांणीजी रौ दुहाग मिट जावै तौ पछै सोने में सौरम जैड़ी बात सरै। अबगैली पोटीजनै औ कांम सार देवै तौ पछै चाहीजै ई कांई। —फुलवाड़ी

पोटौ—सं०पु० [सं० पव+रा० प्र० टौ] १. गोबर, गोमय।
उ०—तिकै पांच कोस जाय नै बैल जूतां पाछा आवै, बीच मांहै पोटा छगास करै नही।—जखड़ा-मुखड़ा भाटी री वात
२. अनाज के पौधों के बाल निकलने के पूर्व के समय की अवस्था।
क्रि० प्र०—आणौ, होणौ।
रू० भे०—पोठौ।
३. देखो 'पोटी' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—१. तिलोर नीतर करचांनक मुरगाबी होसनाक बणावै छै। पोटा चीरजै छै। —रा. सा. सं.
उ०—२. पोटा चीरजै छै। पेटाळजो चीरजै छै। मुहडै में हींग भरजै छै। पेट में जीरौ भरजै छै।—रा. सा सं.
४. देखो 'पोट' (मह., रू. भे.)
उ०—मांणस जळ का बुदबुदा पांणी का पोटा। दादू काया कोट में मेवासी मोटा।—दादूवांणी

पोट्टलजिण—सं० पु०— श्री पोट्टिलजिन। उ०—सुनन्दनो जीव ते नवम पोट्टिल जिणं।
वि०वि०—जैन मतानुसार सुनन्द श्रावक का जीव नवम तीर्थंकर श्रीपोट्टिलजिन के नाम से हुआ।

पोठ—देखो 'पोट' (रू.भे.)
उ०—गुळ खांड चावल गोहू तणां, पोठ आंणि परगट किया। 'समय सुंदर' कहइ सत्यासीयउ, तुं परहो जा हिव पापीया।—स.कु.

पोठियौ—देखो 'पोटियौ' (रू.भे.)
उ०—अरु लाख दोय पोठिया रेत सूं भरायनै हलो कियौ सू अठै वडो झगड़ो हुवौ। —द. दा.

पोठी— १. देखो 'पोटियौ' (अल्पा., रू. भे.) (जैन)
२. देखो 'पोट' (अल्पा., रू. भे.) (जैन)

पोठीयौ—देखो 'पोटियौ' (रू.भे.)
उ०— अलूखांनि जण सांधि मोकल्या, देखाडयूं मेल्हांण। घोडा हाथी ऊंट पोठीया, वेसर पूठि पल्हांण। —कां. दे. प्र.

पोठौ—देखो 'पोटौ' (रू.भे.)
उ०—अब सूकोड़ा कांम न आवै, दांम न दै अणदड़िया है। गाया उछरगी गोहरि सूं, पोठा लागै पड़िया है। ऊ.का.

पोडी—देखो 'पौढी' (रू.भे.)

पोढ़उ—देखो 'प्रौढ़' (रू.भे.)
उ०—तिण ते लीधउ बाल हो जी, पुत्र पाली पोढ़उ कियउ लाल।
—स. कु.

पोढ़णौ—वि० (स्त्री० पोढणी) शयन करने वाला।
उ०—उचाट काटणी निराट पाट ओढ़णी नही। विलोक वंक लंक दे पलंक पोढ़णी नही। —ऊ. का.

पोढ़णौ, पोढ़बौ—देखो 'पौढणौ, पौढबौ' (रू. भे.)
उ०—त्यां रावत लूंणौ रावजी सूं सीखकर जाय पोढ़ियौ।
—नैणसी

पोढ़णहार, हारौ (हारी), पोढणियौ—वि०।
पोढ़िओड़ौ, पोढ़ियोड़ौ, पोढ़चोड़ौ—भू० का० कृ०।
पोढ़ीजणौ, पोढ़ीजबौ—भाव वा०।

पोढ़ाणौ, पोढाबौ—देखो 'पौढ़ाणौ, पौढाबौ' (रू. भे.)
उ०— रेसम हुंदा पोतडां, पालणिये पोढ़ाय। तो 'जेहा' वेटा तिकै, भलो झुलाया माय।—वां. दां.
पोढ़ाणहार, हारौ (हारी), पोढ़ाणियौ—वि०।
पोढ़ायोड़ौ—भू० का० कृ०।
पोढ़ाईजणौ, पोढ़ाईजबौ—कर्म वा०।

पोढ़ायोड़ौ—देखो 'पौढायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोढायोडी)

पोढ़िम—देखो 'पौढ़म' (रू. भे.)
उ०—पोढ़िम पवन! तुम्हारडी, पत्रय तंत पराय। मन सुद्धि प्रेरी माधवु, लेइ तूं ल्याविन कांइ?—मा. कां. प्र.

पोढिमपणउं—सं० पु० [सं० प्रौढता] देखो 'पौढीमणौ' (रू. भे.)
उ०—पुरुषारथ पौढ़िमपणउं, जांणइ युगति विवेक। तुहि पांडव पांमया, पांच मिलीनइ एक।—मा. कां. प्र.

पोढ़ियोड़ौ—देखो 'पौढ़ियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोढ़ियोड़ी)

पोढ़ो—देखो 'पौढी' (रू. भे.)

पोढ़ीनाथ—सं० पु०—रामदेव तुंवर नामक एक प्रसिद्ध सिद्ध का नाम।
वि० वि०— देखो—'रांमदेव'।

पोढ़ीनेर—देखो 'पौढ़ी'।

पो'णौ, पो'बौ—देखो 'पोवणौ, पोवबौ' (रू.भे.)

उ०—पोयो सोढी लड़ दोय च्यार ।—लो. गी.

पोअणहार, हारौ (हारी), पोअणियौ—वि० ।

पोयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

पोईजणौ, पोइजबौ—कर्म वा० ।

पोत-सं० पु० [स०] १. जहाज, नाव ।—(अ. मा., ह. नां. मा.)

उ०—१. मिट आग तप मिटजाय, साकंप सीत सवाय । द्रढ़ पोत खेवट दांम, तट घरी गुदरी तांम ।—रा. रू.

उ०—२. धाय मुनेस सेस सिर धारै, निज सिर जिकां सुरेस नवाय । जोतसरूप तणा आगरजस, पोत रूप भव सागर पाय ।
—र. ज. प्र.

२. पशु, पक्षी आदि का बच्चा ।

३. अधोवस्त्र, धोती ।

उ०—१. सिनांन नूं पोत काढ़ी । आप तळाव मांहै पैठा ।
—नैणसी

उ०—२. तठा उपरांयत सिरदारां देसोतां तळाव में झूलण री हांस करै छै । लाल लांगी री पोतां पहरजै छै ।—रा. सा. सं.

अल्प०—पोतड़ी ।

४. बालक । (अ. मा., ह. नां. मा.)

५. भेद, रहस्य ।

उ०—१. तीनू एकण गोत । जिणनें जैसा गुरु मिल्या तिसा काढ़िया पोत ।—भि. द्र. ।

उ०—२. गळ फेरि छुरी, जैचंद गोत । अपणूं पोत करियै न उदोत ।—ऊ. का.

मुहा०—पोत काढ़णौ—अपना भेद देना, कमजोरी प्रकट करना ।

६. वह गर्भस्थ पिण्ड जिस पर झिल्ली न चढ़ी हो ।

७. ढाँचा, बनावट, रचना ।

उ०—इसी दूसरी घोड़ा मुलक में नहीं । जैसो ही डील, जैसो ही रूप, जैसो ही पोत, मही जैसो ही बळ ।
—सूरे खींवे कांधळोतरी बात

८. आभा, कान्ति ।

९. बरछी ।

१०. वस्त्र, रेशम ।

उ०—वधि पोत कीमति वेस । मझि कारचोभ मुकेस ।—सू. प्र.

११. वस्त्र की मोटाई ।

उ०—महि माल बहु पसमीर, कर उतन जे कसमीर । इक तार पोत असाधि, विरहांनपुर रंग बाधि ।—सू. प्र.

[सं. प्रोत] १२. एक प्रकार के छोटे मोती विशेष जो स्त्री के कंठा-भरण (तेवटे) में पिरोये जाते हैं ।

उ०—१. इसड़ै टोटै हूं सखी, वारी बार अनंत । पोत जणी में मोतियां, चूड़ो मगळ दंत ।—वी. सं.

उ०—२. तोड़ो तण वसणां तणौ, तोड़ो अन रो ताय । पिव तोड़ो न पिसण रो, तोड़ो पोत न थाय ।—रेवतसिंह भाटी

१३. माला ।

१४. गले में पहिनने का काला रेशमी डोरा, पवित्रा ।

उ०—१. कंठ पोत कपोत कि कहुं नीलकंठ, वडगिरि काळिंद्री वळी । समैं भागि फिरि संख सखघर, एकणि ग्रहियौ अगुळी ।
—वेलि

उ०—२. कपोत कंठ पोत केम मोह ओपमा मिळी ।—सू. प्र.

रू० भे०—पोअ, पोत ।

पोतइ—देखो 'पोतै' (रू. भे.)

उ०—१. कांते काती ! जनमियां, जउ पांमया वियोग । पुण्य पोतइ पूरयां नहीं, किम लहीइ संजोग ।—मा. कां. प्र.

उ०—२. नरसा सुत गणपति कहइ, अंग थया ए आठ । सूधइ स्वांमिनी सारदा, पोतइ दीधू पाठ ।—मा. कां. प्र.

पोतक-सं० पु० [स०] नाव, नौका । उ०—सुभ महुरत ले पूरीया, लांघ्यो कितरो रे माग । चलंतां जल खूटो तिहां पोतक, वणिक कहै पूरो कोई रे अभाग । —स.कु.

पोतड़ियौ—देखो 'पोतड़ो' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—लुगाई रो जमारो पाय अेकरो ई पोतड़ियां गो कस हाथां नीं लागो तो सित्तर बरसां रो ओ नरकवाड़ो क्यूं भुगतियो !
—फुलवाड़ी

पोतड़ी—देखो 'पोत' (१, ३) (अल्पा., रू. भे.)

उ०—राती कांनी री पोतड़ियां रूड़ी । ऊनी लोवड़ियां बगलां में ऊड़ी । —ऊ.का.

पोतड़ो-सं० पु० [स० पोत=वस्त्र+रा०प्र०ड़ो] १. छोटे बच्चों के चूतड़ों के नीचे रखा जाने वाला कपड़ा ।

उ०—रेसम हुदा पोतड़ां, पालणिये पोढ़ाय । तो 'जेहा' बेटा तिके, भलां झुलाया माय ।—बां. दा.

अल्पा०—पोतड़ियो ।

२. देखो 'पोतो' (अल्पा., रू. भे.)

(स्त्री० पोतड़ी)

पोतणौ-सं० पु० [स० पूत+रा०प्र०णौ] वह कपड़ा जिससे कोई चीज पोती जावे ।

क्रि० प्र०—फेरणौ, लगाणौ ।

पोतणौ, पोतबौ—क्रि०स० [सं०प्लुत=प्र०प्रा० पुत+रा० णौ] १. किसी गीले पदार्थ को किसी सूखे पदार्थ पर ऐसा लगाना कि वह उस पर जम जाय ।

ज्यूं०—रंग पोतणौ, वारनिस पोतणौ ।

२. किसी गीले पदार्थ पर दूसरे पदार्थ पर फैलाकर लगाना, चुपड़ना ।

ज्यूं०—तेल पोतणौ, चूनो पोतणौ ।
३. देखो 'पहुंचणौ, पहुंचवौ' (रू. भे.)
पोतणहार, हारौ (हारी), पोतणियौ—वि० ।
पोतिग्रोड़ौ, पोतियोड़ौ, पोत्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
पोतीजणौ, पोतीजवौ—कर्म वा० ।
पोतदार—स० पु० [फा० पोत:दार] १. कोपाध्यक्ष, खजांची ।
[राज० पोतौ=छोटा अफीम का डिब्बा+फा० दार]
२. बड़ा अफीमची ।
रू० भे०—पोतादार, पोतेदार, पोतैदार ।
पोतयोड़ौ—भू० का० कृ०—देखो 'पोतियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोतयोड़ी)
पोतरउ—देखो 'पोतौ' (रू. भे.)
उ०—चंद्र प्रभ सामि तउ पोतरउ, चंद्रसेखर नांउ मल्हारौ जी । चद्र जसराय कराविय‍उ ए, नवमउ उद्धारौ जी ।—स. कु.
पोतरांण—देखो 'पौत्रांण' (रू. भे.)
पोतरौ—देखो 'पोतौ' (रू. भे.)
उ०—१. राव प्रथीराज हरराजोत रायसल रौ चाकर, राव देवीदास सूजावत रौ पोतरौ कांम आयौ ।—नैणसी
उ०—२. चित में साह विचारियौ, राजा थयौ जवांन, परवस मेरी पोतरी, पं सिरजोर निदांन ।—रा. रू.
उ०—३. पुकारां करै ऊभी घरै पोतरी, पांण पूजै न क्यूं रहै पाली । —अज्ञात
(स्त्री० पोतरी)
पोतवाळ, पोतवाल—सं० पु० [फा० फोत:+रा०प्र० वाल] अण्ड-कोश ।
रू० भे०—पोताळ, पोतौ ।
अल्पा०—पोतवाळियौ, पोताळियौ ।
पोतवाळियौ—देखो पोतवाळ (अल्पा., रू.भे.)
पोता—देखो 'पोतै' (रू. भे.)
उ०—१. किण ही स्त्री कह्यौ—लोटी म्हारै हाटे दीजौ । समजू मन में जांणै पोता रा धणी नें दीराई छै ।—भि. द्र.
उ०—२. मिच्छांमि दुक्कड़ दइ मन सुद्ध, मूकी निज अभिमांन । पोता नउ दूसण परकास्यउ, पांम्यउ केवल ग्यान ।—स. कु.
उ०—३. राजुल नारी रौ विरहागर क्यारी, पोता नी कर तारी हो ।—वि. कु.
पोताई—सं० स्त्री० [सं० पौत्र+रा०प्र०आई] १. पौत्र के वशज ।
२. देखो 'पुताई' (रू. भे.)
पोताचेलौ—सं० पु० [सं०पौत्र+राज०चेलौ] चेले का चेला, प्रशिष्य ।
उ०—जद स्वांमी जी बोल्या—म्हारै तौ इसा पोताचेला कोई चाहिजै नहीं ।—भि. द्र.
पोतादार—देखो 'पोतदार' (रू. भे.)

उ०—घर त्याग करण पर घर विघन, आठूं पहर ऊंघारिया । जीव नै देत गोता जिकै, पोतादार पधारिया ।—ऊ. का.
पोतार—देखो 'पुंतार' (रू. भे.)
पोतारणौ, पोतारवौ—देखो 'पूंतारणौ, पूंतारवौ' (रू. भे.)
उ०—उण वेला 'ऊदा'हरै, तोले चन्द्रप्रहास । रजपूतां पोतारियां, भुज धारियां अकास ।—रा. रू.
पोतारणहार, हारौ (हारी) पोतारणियौ—वि० ।
पोतारिग्रोड़ौ, पोतारियोड़ौ, पोतारयोड़ौ—भू० का० कृ० ।
पोतारीजणौ, पोतारीजवौ—कर्म वा० ।
पोतारौ—सं०पु० [राज० पोतणौ] १. पुताई करने वाला, पोतने का कार्य करने वाला ।
पोताळ—देखो 'पोतवाळ' (रू. भे.)
पोताळियौ—देखो 'पोतवाळ' (अल्पा., रू.भे.)
पोति—१. देखो 'पोत' (१, ३)(रू. भे.)
उ०—१. पातिसाहजी सेख जमाल रै डेरै पधारिया । ताहरां सेख जमाल कहियौ थे पोति पहरियां हीज रहो । द.वि.
उ०—२. भूठा मांणिक मोतिया री, भूठी जगमग जोति । भूठा सब आभूसणां री, सांची पिया जी री पोति ।—मीरां
पोतियाबदळभाई—देखो 'पगड़ीबदळभाई' ।
पोतियोड़ौ—भू० का० कृ० —१. पोता हुआ, पुता हुआ । २. चुपड़ा हुआ ।
(स्त्री० पोतियोड़ी)
पोतियौ—सं० पु० [सं० पोत = वस्त्र+रा० प्र० इयो] साफा, पगड़ी ।
उ०—आदमी धोतियौ पकड़ै तो पोतियौ बिखर जावै अर पोतियौ संभाळै तौ धोतियौ खुल जावै । —रातवासौ
रू० भे०—पउतियौ, पोत्यौ ।
पोतै—सर्व०—स्वयं, खुद ।
उ०—व्यास सदा पोतै वरदाई । सोहै वाळकिसन सुखदाई ।
—रा. रू.
रू० भे०—पोतइ, पोता ।
क्रि० वि०—हिसाब में, खाते में ।
उ०—पोन्य पोतै हुवै तेह जीपइं सदा, धरम न करै तिकै धम-धमीजै ।—वि. कु.
पोतैदार—१. देखो 'पोतदार' (रू. भे.)
पोतौ—सं०पु० [सं० पौत्र] (स्त्री० पोती) १. पुत्र का पुत्र, प्रपुत्र, बेटे का बेटा ।
उ०—पोतां रै बेटा थिया, घर में वधियौ जाळ । अब तो छोडौ भागणौ, कंत लुमांणौ काळ ।—बी. मं.
पर्या०—अभनवौ, फळोधर, बीजौ, संमोभ्रम, हर ।
रू० भे०—पोतड़ौ, पोतरउ, पोतरौ, पोत्रौ, पौत्रौ ।

अल्पा०—पोतड़ियौ।
२. अफीम का बटुआ, अफीम का डिब्बा।
उ०—१. सू आगराही अमल री चकी वंध्यां, छुरयां सूं मिरीवढ़ कीजै छै। केसरिया पोतां रूमालां में घातजै छै।—रा.सा.सं.
उ०—२. आप आघौ गांम मांहै चालियौ। माथै अफीम रो पोतौ हुतौ सु खिर पड़ियौ।—नैणसी
३. देखो 'पोतवाळ' (रू.भे.)

पोत्यौ—देखो 'पोतियौ' (रू.भे.)

पोत्रांण—देखो 'पौत्रांण' (रू.भे.)

पोत्रौ—देखो 'पोतौ' (रू.भे.)
उ०—तिण समै राव रांणंगदे भाटी, रावळ लखणसेन रो बेटो पुनपाळ जैसलमेर सूं काढियौ, तिणरौ पोत्रौ हुतौ।—नैणसी
(स्त्री० पोत्री)

पोथकी—सं० स्त्री०—नैत्र की पलकों का एक रोग। (अमरत)

पोथड़—देखो 'पोथी' (मह., रू. भे.)

पोथड़की, पोथड़ी—देखो 'पोथी' (अल्पा., रू. भे.)

पोथी—सं० स्त्री० [सं० पुस्तिका, प्रा० पोत्थिआ] १. पुस्तक, ग्रंथ, किताब।
उ०—१. व्है यूं कुकवी हाथ में, पोथी तणौ प्रकास। केल पत्र जाणै कियौ, वांनर रै कर वास।—बां. दा.
उ०—२. केवांण पांण कणकण करूं, आछट घड़ असुरांण री। कविराज जेम कर ग्रहि करू, पोथी वेद पुरांण री।—सू. प्र.
२. बालक की पुष्टता।
अल्पा०—पोथड़की, पोथड़ी।
मह०—पोथड़, पोथौ।

पोथीखांनौ—सं० पु० यौ० [सं० पुस्तकं+फा० खानः] पुस्तकालय।

पोथौ—देखो 'पोथी' (मह., रू. भे.)
उ०—पांना पोथां परिहरी, परिपरि देता फाल।—मा. कां. प्र.

पोद—सं० स्त्री० [देशज] १. कुछ विशेष प्रकार के पौधों या वृक्षो का कोमल नया कल्ला जो एक जगह से मूल सहित उखाड़ कर दूसरे स्थान पर लगाया जाता है।
२. उक्त प्रकार से उखाड़े हुए पौधों का समूह।
३. उक्त प्रकार से मूल सहित उखाड़े हुए पौधों या वृक्षों को दूसरे स्थान पर लगाने की क्रिया।
रू०भे०—पोध, पौध।

पोदीनौ—स० पु० [फा० पोदीन:] एक छोटा पौधा।
वि० वि०—यह पौधा पीपरमैण्ट की जाति का होता है। इसकी पत्तियां दो ढाई अंगुल लम्बी और डेढ़ पौने दो अंगुल तक चौड़ी होती हैं तथा देखने में कटावदार और स्पर्श में खुरदरी होती हैं। पत्तियों में बहुत अच्छी गंध होने के कारण लोग इनको पीसकर चटनी आदि में डालते हैं। इसका पौधा या तो जमीन पर ही फैलता है या अधिक से अधिक एक डेढ बालिस्त ऊपर आता है। इसके फूल सफेद होते हैं। बीज न होने के कारण इसके डण्ठलों को ही लगाया जाता है। यह रुचिकारक, अजीर्णनाशक और वमन को रोकने वाला होता है। यह पौधा भारत में बाहर से आया है। प्राचीन ग्रंथों में इसका उल्लेख नहीं है।
रू० भे०—पुदीनौ।

पोदौ—स०पु० [?] १. नया निकला हुआ वृक्ष का वह कल्ला या रूप जो एक स्थान से उखाड़ कर दूसरे स्थान पर लगाया जा सकता है।
ज्यूं०—आंबा रो पोदौ।
२. वह वनस्पति जो दो तीन हाथ तक ही ऊपर उठती है और जिसका तना व टहनियां बहुत कोमल होती हैं।
ज्यूं०—गुलाब रो पोदौ।
रू०भे०—पोधो, पौधो।

पोध—देखो 'पोद' (रू.भे.)

पोधौ—देखो 'पोदौ' (रू.भे.)

पोन—देखो 'पवन' (रू. भे.)
उ०—सूरज-वैरी ग्रहण है, दीपक वैरी पोन। जी को वैरी काळ है, आतां रोकै कौन?—अज्ञात

पोनखीलौ—सं० पु० [देशज] आभूषणों पर पान-छाप खुदाई करने का एक औजार विशेष। (स्वर्णकार)

पोन्य—देखो 'पुण्य' (रू. भे.)
उ०—पोन्य पोतै हुवै तेह जीपइं सदा, धरम न करै तिकै धमधमीजै।
—वि. कु.

पोप—सं० पु० [अं०] कैथोलिक (ईसाई) सम्प्रदाय का प्रधान गुरु।

पोपट—स० पु० [देशज] १. योनि, भग।
२. तोता, शुक।
उ०—१. घाल्यौ पंजर मां गुण जोइ जो, हूवौ रे पोपट तूं पिण तिण ढवै रे लो।—वि. कु.
उ०—२. सरवरि जळ पीधवं पोपटइ। जोउ मांन केतलउं घटइ।
—कां. दे. प्र.

पोपळ, पोपल—वि० [देशज] १. बनावट में कमजोर, अशक्त। २. सारहीन। ३. खोखला।

पोपलीन—स० स्त्री० [फा० पापलिन] एक प्रकार का सूती कपड़ा।

पोपलौ—वि० पु० [देशज] (स्त्री० पोपली) १. हल्के स्पर्श मात्र से गूदा या रस बाहर निकल सकने वाला। २. पिचका और सुकड़ा हुआ। ३. बिना दांत का।

पोपां, पोपांबाई—वि० [सं० पुष्पा+राज० बाई] मूर्खा, मूर्ख (स्त्री.)
स०स्त्री०—एक अयोग्य व मूर्ख रानी।

उ०—१. गांगो गिणां क बूझबुझाकड, ऊंधी अकल उपाईनै । सेखसली नैं कुंण समझावै, बम इण पोपांबाई नै ।—ऊ. का.

उ०—२ सेखसली सरखा हुवै, मावड़ियां रै मीत। पोपांबाई प्रगट व्है, नवी चलावै नीत ।—वां. दा.

वि०वि०—एक मत के अनुसार यह जालौर के चौहान राजा वीसल-देव वालेचा की रानी थी । इसके पति के राठौड़ों द्वारा धोखे से मारे जाने पर यह स्वयं राज्य-कार्य करने लगी । किन्तु यह राज्य कार्य सम्हालने में असफल रही । अपने राज्य-काल में इसने कई मूर्खत. पूर्ण कार्य किये जिसके किस्से लोगों में प्रचलित है । फलत: राज्य में अव्यवस्था फैल गई। इसका लाभ उठाकर इसी के सेनापति बिहारी-पठान युसूफखां ने राज्य-सत्ता अपने हाथ में वि० सं० १४५० में ले ली । रानी अपने दो नाबालिग पुत्रों सहित ईडर राज्य (महीकाठा-गुजरात) में चली गई। कहते हैं बाद में इसके पुत्रों ने भीलनी से विवाह कर लिया ।

मतान्तर से यह कुम्हारी थी जो जयपुर राज्य के अन्तर्गत 'खण्डेले' पर शासन करती थी। कहते हैं कि पोल अधिक होने के कारण इसका शासन पोल का शासन कहलाता था। इसके राज्य में सब धान २० पंसैरी बिकता था । स्वयं की मूर्खता के कारण ही अन्त में इसको सूली पर चढ़ना पडा ।

पो'बारा—सं० पु० [राज० पो' + सं० द्वादश] चौपड़ के खेल में पासों में पडने वाला एक दाव । इसकी संख्या पो' (एक) और बारह अर्थात् तेरह होती है ।

उ०—तरै बाई पासौ वावती कयौ—पासा तो नै रांमदास वेरावत री आंण छै । पो'बारा पड़ीया तरै लाडुबाई री जीत हुई ।
—रा.सा.सं.

पोमचियौ—देखो 'पोमचौ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—१. ओजी ओ, मनैं पाणीड़ो पोमचियो रंगा दे, मोरी माय, लूवर रमवा मैं जास्यूं ।—लो.गी.

पोमचौ—सं० पु० [देशज] स्त्रियो के ओढ़ने का एक प्रकार वा वस्त्र विशेष जो बढ़िया समझा जाता है ।

उ०—ए मा, भाभीजी नै कहकै मनै पोमचौ दिरादै, मे खेलण जास्यू लूरड़ी । —लो.गी.

रू० भे०—पेमचौ ।

अल्पा०—पोमचियौ ।

पोमणौ, पोमवौ—'पोमाणौ, पोमावौ' (रू. भे.)

उ०—१. मासी कह्यो—बेटी, क्यूं कीड़ियां माथै पंसेरियां धमकावै। पोमीजण रा दिन तो म्हारा बरसां पैंलो ढळग्या ।—फुलवाड़ी

उ०—२. मारवाड़ मेवाड़, सको बूझसी सु दावो । कहिया गुण राजरा, किसुं पोमीया वतावो ।—साहबौ सुरतांणियौ

पोमणहार, हारो (हारी), पोमणियौ—वि० ।

पोमिओड़ो, पोमियोड़ो, पोम्योड़ो—भू० का० कृ० ।

पोमीजणौ, पोमीजबौ—भाव वा० ।

पोमाणौ, पोमावौ—क्रि० अ० स० [सं० पद्मपमानं, प्रा० पद्मपमाण] १. आत्मश्लाघा करना, स्वयं की प्रशंसा करना । उ०—आछा कांम अनेक, प्रकट करि करि पोमावौ । मांनव जनम अमोल, ग्यांन विन मती गुमावौ ।—ऊ. का.

२. प्रशंसा करना, फुलाना । उ०—म्हैं तो थनैं भिडतां ई आ बात दरसाय दी ही । थूं म्हनै पोमा मत, म्हे सब समझूं हूं ।—फुलवाड़ी

३. गर्व करना ।

पोमाणहार, हारो (हारी), पोमाणियौ—वि० ।

पोमायोड़ो—भू० का० कृ० ।

पोमाईजणौ, पोमाईजबौ—भाव वा० । कर्म वा० ।

पमाणौ, पमाबौ, पमावणौ, पमाववौ, पुमाणौ, पुमावौ, पुमावणौ, पुमाववौ, पूमावणौ, पूमाववौ, पोमणौ, पोमवौ, पोमावणौ, पोमाववौ
—रू० भे० ।

पोमायोड़ो—भू०का०कृ०—१. आत्मश्लाघा किया हुआ, स्वय की प्रशसा किया हुआ. २. गर्व किया हुआ. ३. प्रशंसा से फूला हुआ, बना हुआ. (स्त्री० पोमायोडी)

पोमावणौ, पोमाववौ—देखो 'पोमाणौ, पोमाबौ' (रू. भे.)

उ०—गरवे फोडे कुंभराज घणावळ घावड़ि्दांह । पापड़ फोड़ पोमावही. मन में मावडियांह । —वां. दा.

पोमावणहार, हारो (हारी), पोमावणियौ —वि०

पोमाविओड़ो, पोमावियोड़ो, पोमाव्योड़ो —भू० का० कृ०

पोमावीजणौ, पोमावीजबौ —भाव वा० । कर्म वा०

पोमावती—सं०स्त्री० —१. बत्तीस मात्रा का मात्रिक छन्द जिसमें १६, १६ मात्रा पर यति होती है और अत में दो गुरु होते हैं ।

२. एक प्राचीन नगरी का नाम ।

पोमावियोड़ो—देखो 'पोमायोड़ो' (रू.भे.)
(स्त्री० पोमावियोड़ी)

पोमियोड़ो—देखो 'पोमायोड़ो' (रू. भे.)
(स्त्री० पोमियोड़ी)

पोमी—सं०स्त्री० [देशज] १. मल द्वार, गुदा ।

२. योनि ।

३. देखो 'प्रथ्वी' (रू.भे) (डिं. को.)

पो'मूळ—देखो 'पुस्करमूळ' (रू भे.)

पोयण—स०पु० [स० पद्म] १. कमल ।

उ०—अकबर समद अथाह, तिह डूबा हिंदू-तुरक । मेवाड़ो तिण माह, पोयण फूल 'प्रतापसी' ।—दुरसो आढ़ो

२. टगण के सातवें भेद का नाम जिसका रूप गुरु-लघु, गुरु-लघु

होता है। (डिं. को.)

रू०भे०—पोइण, पोईण।

पोयणनाभ—सं०पु० [सं० पद्म-नाभः] १. ब्रह्मा।

उ०—घव धोकै कुण धुंसणौ, पोखै पोयणनाभ। रोकै लाखां नह रुकै, ग्रस झोकै अड़भाग। —रेवतसिंह भाटी

२. विष्णु।

पोयणि, पोयणी—स०स्त्री० [सं० पद्मिनी] कमलनी।

उ०—उत्तर आज स उत्तरइ, ऊपड़िया सीकोट। काय दहेसइ पोयणी, काय कुवारा घोट। —ढो. मा.

रू०भे०—पाइणि, पोइणि, पोइणी, पौइणी।

पोयणीनाळ—सं०स्त्री०यो० [सं० पद्मनाल] कमल की नाल।

उ०—अही नाथियौ, पोयणीनाळ आणै। अस्सवार आपै हुवै, अप्पलांणै। —ना. द.

पोयणौ, पोयबौ—देखो 'पोवणौ, पोवबौ' (रू.भे.)

उ०—पोय-पोय फलका जेट बणाई, पोय-पोय फळका जेट बणाई तो जीमौ क्यूं नां जी गोरी रा भरतार।—लो.गी.

पोयणहार, हारौ (हारी), पोयणियौ —वि०।

पोयोड़ौ —भू०का०कृ०।

पोयीजणौ, पोयीजबौ —कर्म वा०।

पोयोड़ौ—देखो 'पोवियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री०पोयोड़ी)

पोर, पो'र—१. देखो 'पो'र' (रू.भे.)

उ०—करजदारी मांनखां रै माथै ईज व्है, कोई जिनावरां रै माथै व्है कोयनी। पो'र परार किसौ थांरौ सरीर हो, मुक्की देयनै पांणी काढ़ै जिसौ।—रातवासौ

२. देखो 'प्रहर' (रू. भे.)

उ०—१. चोटड़ियाळ डहकनै रही छै। वनसपति सूं वेलां लपटनै रही छै। परभात रौ पो'र छै। गाज आवाज हुय नै रही छै। —रा. सा. सं.

उ०—२. दोय घड़ी दिन चढियां धनासरी में 'बाघौ' कोटड़ियौ, तीसरै पो'र सांमेरी में रिड़मल, रात रौ सोढ़ौ महंदरौ गीत गायीजै। —बा.दा.ख्यात

३. देखो 'पेरवौ' (रू.भे.)

पोरख—देखो 'पौरस' (रू. भे.)

उ०—अठै लुहार री निंदा सूं पती री स्तुति है सो कांई कि जुद्ध रौ सुणतां इतरौ पोरख चढ़नै फूलियौ सो टोप री कड़ा माथै में गड गई। —वी. स. टी.

पोरखवांन—देखो 'पौरसवांन' (रू.भे.)

पोरचौ—सं०पु० [देशज] पत्थर की वह कुण्डी जिसमें रहट की माळ से पानी गिरता है।

पोरवाळ—सं०पु० [स्त्री० पोरवाळण, पोरवाळणी) जैन मतावलम्बियों की एक जाति या शाखा। (मा. म.)

रू०भे०—पोरुयाड, पोरूयाड।

पोरस—देखो 'पौरस' (रू.भे.)

उ०—१. पद पदारथ संबंध पुनि, प्रत्यय आगम लोप। आरस पोरस सुभ असुभ, ग्रथ हृदय धर गोप। —ऊ. का.

उ०—२. कांकळ छोडे कूदियौ, भागल पोरस भंग। कीधा जाणै काढमां, कुद नीसरै कुरंग। —बां. दा.

पोरसभंग—देखो 'पौरसभंग' (रू. भे.)

पोरसातन—देखो 'पुरसातन' (रू. भे.)

पोरसि, पोरसी—सं०स्त्री० [सं० पौरुषी] एक प्रहर तक धर्म-ध्यान करने की क्रिया। (जैन)

उ०—पहली पोरसी सूत्र चितारै। बीजी पोरसी अरथ विचारै। —जयवांणी

रू०भे०—पोरिसी, पौरसी।

पोरसौ—देखो 'पौरसौ' (रू.भे.)

उ०—१. बिक्रमारक नूं अगनी वेताळ दोय सोना रा पोरसा दिया था। —बां. दा. ख्यात

उ०—२. तरै जोगी कही—होळी दोळी परदखणा दे। सु जोगी कड़ाह माहे नांखतौ थौ सु इण दीठौ। तरै जोगी नूं नाखियौ। जोगी रौ पोरसौ हुऔ पण जोगीरी हत्या सूं गळत कोढ़ हुवौ। —नैणसी

पोरस्स—देखो 'पौरस' (रू. भे.)

पो'रायत—देखो 'पौ'रायत' (रू.भे.)

उ०—हा हा ढोळै पसु कागां कुळ हाथै। मिनकी पो'रायत चूहां दळ माथै।—ऊ.का.

पोरियौ—सं० पु० [देशज] गरीबों का उदर-पोषण का साधन, छोटी मजदूरी।

यौ०—पेटपोरियौ।

पोरिस—देखो 'पौरस' (रू.भे.)

उ०—कुळ छत्री बाराह कुळ, पोरिस बांकम पूर। मिळया चाहै तिण महीं, गोला नै गहसूर।—बां.दा.

पोरिसी—देखो 'पोरसी' (रू.भे.) (जैन)

पोरी—सं० स्त्री० [?] मूलद्वार, गुदा।

उ०—महा संख री मित्र, सेज नहिं सोवा जाऊं। पोरी सौ मुख पेख, घणी दोरी घबराऊं।— ऊ. का.

पोरुयाड, पोरूयाड—देखो 'पोरवाळ' (रू.भे.)

उ०—१. पोरुयाड़ वंसइ प्रगट, जिण सासण सिणगार। करणी मोटी जिण करी, सहु जांणइ संसार।—स.कु.

उ०—२. वंस पोरूयाडइ परगडउ ए, सोमजी साह मल्हार। —स. कु.

पोंरौ—देखो 'पहरौ' (रू.भे.)

उ०—ध्यांन गुरांसूं लीजिये, तन मन तजिये चाल। आठ पोर पोंरै रहो, सतगुरु टाळै काळ।—श्री हरिरामजी महाराज

पोळ—सं० स्त्री० [देशज] १. ५२ गज़ की जमीन की एक नाप।

२. देखो 'पोळ' (रू.भे.)

उ०—दे, ए नगारौ श्रो बीजा, कोइ बिजराय चढ़गा जी राज। डेरा तो डाल्या सोरठड़ी री पोळ में जी।—लो.गी.

पोल—सं० स्त्री० [देशज] १. आसमान, आकाश। (अ.मा.)

२. खोखलापन, शून्य स्थान।

उ०—१. बोलकै कुबोल भगौ टोळ तू भयौ। माल तोल व्याज साल, पोल में सह्यौ।—ऊ. का.

उ०—२. मांन कियोड़ी महल ज्यूं, बुगलां ज्यूं कम बोल। मावड़ियौ घर मीडको, पुरुसपणा री पोल।—बां. दा.

मुहा०—१. पोल खुलणी—भण्डा फोड़ होना, रहस्य खुलजाना।

२. पोल खोलणी—भण्डाफोड़ करना, रहस्य बताना।

रू० भे०—पोल।

अल्पा०—पोलडी।

पोलक—सं० पु० [देशज] बिगड़े हुए हाथी को डराने हेतु लम्बे बांस के छोर पर बंधा हुआ पयाल जिसे जलाकर हाथी को डराया जाता है।

पोलग्वाळौ—वि० [देशज] वह बिना चुनाई किया हुआ कुआ जिससे सिंचाई की जाती है।

पोळच, पोळछ—सं० स्त्री० [देशज] १. भूमि की वह उर्वरता जो पिछली फसल (रबी या तिलहन की खेती) के कारण बढ गई हो।

२. उक्त प्रकार की उर्वरा शक्तिवाला खेत।

उ०—मुल्कै वेली चख पोळछ लख मोजी। चेली दीठां ज्यूं साधू चित चौजी।—ऊ.का.

रू० भे०—पुळच, पुळछ, पौळच, पौळछ।

पोळड़ी—देखो, 'पोळ' (अल्पा., रू.भे.)

पोलड़ी—सं० स्त्री० [देशज] १. अंगूठी के मध्य में ऊपर लगाया जाने वाला घेरा जिसमें नगीने जड़े जाते हैं।

२. देखो 'पोल' (अल्पा; रू.भे.)

३. देखो 'पोलरी' (रू.भे.)

पोलरी—सं० स्त्री० [देशज] १. सुई चुभने से बचाव के लिए दर्जियों द्वारा सीते समय उगुली में पहिनने का लोहे या पीतल का बना छल्लानुमा एक उपकरण।

२. स्त्रियों के पैरों में धारण करने का एक आभूषण विशेष।

उ०—कट-मेखळा जड़ावरी सोहै छै। मोनेरी पायल पगपांन पोलरी अणावट पगां विराजै छै।—रा.मा.सं.

रू० भे०—पोलड़ी।

पोल-रो-खत—सं० पु० यौ० [रा० पोल+फा० खत] कर्ज की लिखावट का वह ऋण पत्र जिस पर कर्ज देने वाले का नाम न लिखा हो, गुमनाम का खत।

पोलसेड़ी—सं० स्त्री० [?] वह गाय अथवा भैंस जिसका दूध आसानी से निकलता हो।

पोलाद—देखो 'फौलाद' (रू. भे.)

पोलाव—देखो 'पुलाव' (रू. भे.)

पोळि—देखो 'पोळ' (रू.भे.)

उ०—कटै केई पोळि के पोळि बाहर कटै, घाटकै घटै गढ बीच घटियौ। ये कटै 'भांण' केवांण आवाहटां, कांगुरै कांगुरै घणौ कटियौ।—उदैभांण हरभांण गौड़ रौ गीत

पोळिपात—देखो 'पोळपात' (रू.भे.)

उ०—जिकण रै साथै रांणा त्याग रा जस रो प्रकास प्रसारण रै काज आपरा पोळिपात बारहठ बारू सहित बडा बडा सुभटां नै सज्ज करि हाथां, री प्रासंग में न आवै इसड़ौ बरात रौ बांणक बणाय दीधौ।—वं.भा.

पोळियौ—देखो 'पोळियौ' (रू.भे.)

उ०—अेक हाजरिया नै भेज पोळिया नै तेडायौ—फुलवाड़ी

पोळिव्रति—सं० स्त्री० [सं० प्रतोली+वृत्ति] राजा के मुख्यद्वार पर मिलने वाली वृत्ति।

उ०—करि उपचार अगद वपु कीधौ, दुलभ वित्त संपय न्रप दीधौ। पोळिव्रति 'दुरसै' जिण पाई, बढ़ी सतत 'सुरतांण' बडाई।—वं भा.

पोलिसरंदौ—देखो 'पालिसरंदौ' (रू.भे.)

पोळी—सं० पु० [देशज] १. रोटी, फुलका के एक तरफ की पतली भिल्ली। उ०—१. अतिथि अभ्यागत टोळा टुळ आवै। भोळी भण्डा ले पोळी पधरावै।—ऊ. का.

उ०—२. रातूं दे रोटा लूता खोटा, दुखियारा दीसंदा है। भोळी भड़कावै पोळी पावै, टोळी सूं टाळंदा है।—ऊ. का.

२. देखो 'पोळी' (रू. भे.)

पोलीसी— देखो 'पालिसी' (रू.भे.)

पोलीसीदाज—वि० [अं० पॉलिसी+फा० बाज] नीतिज्ञ, चतुर, घातबाज।

पोलौ—वि० [देशज] (स्त्री० पोली) खोखला, खाली।

सं०पु०—१. धातु का छल्ला जो छड़ी, लकड़ी, औजार के दस्ते आदि पर उसकी रक्षा तथा मजबूती के लिए लगाया जाता है, साम।

[अं०] २. घोड़ों पर चढ़कर खेला जाने वाला एक अंग्रेजी खेल।

३. पैर का एक आभूषण विशेष।

४. गोबर, गोमल, गोमय।

पोवट, पोवटौ, पोवट, पोवटो—सं० पु० [सं० पौष-प्रावृट्] पौष मास की वर्षा।

उ०—मावट पोवट मध्य, गुलम गण कूंपळ काढ़ै। नेसावरिया डगा, घणांरा घुरड़ै वाढ़ै।—दसदेव

पोवणूं, पोवणौ—सं० पु० [देशज] १. रोटी बनाने की क्रिया।
उ०—ग्रौर सहेली मा, खिलण-मिलण नें ऐ जाय। मनै दीनौ मा, पोवणूं जे।—लो.गी.
२. माला आदि पिरोने की क्रिया।

पोवणौ, पोवबौ—क्रि० स० [देशज] १. रोटी बेलना, रोटी पकाना।
उ०—दबणा ठीग्रा दीप, तांवणी वठळ विलोवण। धावण जमावणिया, परातां पोळी पोवण।—दसदेव
[सं० प्रोत प्रा० पोइग्र] २. किसी छेद वाली वस्तु में धागा डालना, पिरोना।
उ०—सघलो रावलह (लह) लह लै।
साधन पोवती मोती का माल।—वी.दे.
पोवणहार, हारौ (हारी), पोवणियौ—वि०।
पोविग्रोड़ौ, पोवियोड़ौ, पोंव्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पोवीजणौ, पोवीजबौ—कर्म वा०।
पिरोणौ, पिरोबौ, पिरोवणौ, पिरोववौ, पो'णौ, पो'बौ, पोग्रणौ, पोग्रबौ, पोयणौ, पोयबौ, प्रो'णौ, प्रो'बौ, प्रोयणौ, प्रोयबौ, प्रोवणौ, प्रोवबौ।—रू०भे०।

पोवा—देखो 'प्याऊ' (रू.भे.)

पोवाड़णौ, पोवाड़बौ—देखो 'पोवाणौ, पोवाबौ' (रू.भे.)
पोवाड़णहार, हारौ (हारी) पोवाड़णियौ—वि०।
पोवाड़िग्रोड़ौ, पोवाड़ियोड़ौ, पोवाड़चोड़ौ—भू० का० कृ०।
पोवाड़ीजणौ, पोवाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पोवाड़ियोड़ौ—देखो 'पोवायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पोवाड़ियोड़ी)

पोवाणौ, पोवाबौ—क्रि० स०—१. रोटी पकवाने का कार्य कराना, रोटी बेलाना। २. पिरोने का कार्य कराना।
पोवाणहार, हारौ (हारी), पोवाणियौ—वि०।
पोवायोड़ौ—भू०का०कृ०।
पोवाईजणौ, पोवाईजबौ—कर्म वा०।
पोग्राणौ, पोग्राबौ, पोवाड़णौ, पोवाड़बौ—रू० भे०।

पोवायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. रोटी पकवाया हुग्रा, रोटी बेलाया हुग्रा. २. पिरोवाया हुग्रा.
(स्त्री० पोवायोड़ी)

पोवियोड़ौ—भू० का० कृ०—१. रोटी बेला हुआ, रोटी पकाया हुग्रा. २. पिरोया हुग्रा।
(स्त्री० पोवियोड़ी)

पोस—सं० पु० [फा० पोश] १. वह जिससे कोई वस्तु या पदार्थ ढका जाय।
उ०—इण भांत दाव पांच सात लेय पाळ में हाथ ऊजळा कर दोनूं थाळ री पोस उठाय जीमण बैठा।—कुंवरसी सांखला री वारता
[सं० पोषणम्] २. पक्ष, रक्षा।
उ०—जिण अधिकारइ ऊपनउ, जे ग्रनवस्थित दोस रे, साजन सुणि मोरा। हिव तेहिज विवरण तणउ, निस्चय करिस्यु पोस रे।
—वि. कु.
३. पालन-पोषण।
उ०—वैण सगाई वाळियां, पेखीजै रस पोस। वीर हुतासण बोलमें, दीसै हेक न दोस।—वी. स.
४. कवच-धारी योद्धा।
५. कृपा। (अ. मा.)
६. देखो 'पूस' (रू. भे.) (डिं. को.)
उ०—पोस महिनौं बीज दिन, देखे घूम मचाय। फेरै ग्रांणि 'ग्रजीत' री, ग्राया रीत दिखाय।—रा.रू.
७. देखो 'पौरस' (रू.भे.)
८. देखो 'पोइस' (रू.भे.)
रू०भे०—पौस।

पोसउ—देखो 'पोसध' (रू.भे.)
उ०—पोसउ पोसउ सहु कहइ, पोसउ करइ सहु कोइ। पण पोसा विधि सांभलइ, जिन निस्तारउ होइ।—स.कु.

पोसक—वि० [सं० पोषक] १. पालने वाला पालक। २. सहायक। ३. बढ़ाने वाला, वर्द्धक।

पोसण—सं०पु० [सं० पोषण] १. पालन। उ०—चिरत तुम्हारा चत्रभुज, सहकोई जांण। तुंइ'ज उपावणहार तूं, पोसण सोखांण।
—गजउद्धार
२. वर्द्धन, बढ़ती।
रू०भे०—पोख, पोखण।

पोसणौ, पोसबौ—क्रि० स० [सं० पोषणं] पालना, रक्षा करना।
उ०—ग्रेक तपसी नैं काठ रा मजूस रै मांय नंदी में बेवतौ मिळियौ हो। उण दिन सूं वौ तपसी ई उणनैं पाळ पोसनै मोटौ करियौ।
—फुलवाड़ी
पोसणहार, हारौ (हारी), पोसणियौ—वि०।
पोसाड़णौ, पोसाड़बौ, पोसाणौ, पोसाबौ, पोसावणौ, पोसावबौ,
—प्रे० रू०।
पोसिग्रोड़ौ, पोसियोड़ौ, पोस्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पोसीजणौ, पोसीजबौ—कर्म वा०।
पोखणौ, पोखबौ—रू० भे०।

पोसत—देखो 'पोस्त' (रू. भे.)
उ०—मूटघा सूं मसळतां, पिसळतां डाढ़ां पीसै। पोसत छांण'र पिये दसत रा दोसत दीसै।—ऊ. का.

पोसता—देखो 'पोखता' (रू. भे.)
उ०—फळोधी किरड़ा री जोहड़ जठै नांना प्रकार री सुगंध भ्रावै। लोक कहै इण में पोसता रहै है।—बां. दा. ख्यात

पोसती—देखो 'पोस्ती' (रू भे.)
उ०—भूल गई वर बार भ्रापकी दोसती। भ्रासक वोलो भ्राप मती हुवो पोसती।—स्री हरिरांमजी महाराज

पोसध—देखो 'पौसध' (रू. भे.)
उ०—तासु चरण प्रणमी करी, पोसध विधि विस्तार—स.कु.

पोसप्प—देखो 'पुस्प' (रू. भे.)
उ०—पोसप्प पांन कपूर प्रिथवी, वणत जण धनवांन ए। इकधार तीरथ जात उद्यम, आदि सुरनदि भ्रांन ए।—रा. रू.

पोसवा—सं० स्त्री०—पंवार वश की एक शाखा।

पोसवाळ—देखो 'पोसाळ' (रू. भे.)

पोसह, पोसहउ—देखो 'पौसध' (रू. भे.)
उ०—१. 'भ्रट्ठम भक्त' चउविह भ्राहार तजी, एतो तीन पोसह दिया ठायो रे।—जयवांणी
उ०—२. पोसहउ भ्रथिति संविभाग बेऊ परव दिन करि वास ही।
—स. कु.

पोसहसाला—देखो 'पौसधसाला (रू. भे.)
उ०—पोसहसाला मंइ एकला, पोसह लियउ मन भाय, रूड़ा राजा।
—स. कु.

पोसाक, पोसाख—सं० स्त्री० [फा० पोशाक] पहनने के वस्त्र, पहनावा, वेश। उ०—१. विहद कोर गोटां बणी, पातर रै पोसाक। परणी फाटा पूंगरण, वैठी फाडै वाक।—ऊ. का.
उ०—२. मावडिया दीठां फुरै, मत हिय मांहि पयट्ठ। पुरंस तणीं पोसाख कर, बाई आंण बयट्ठ।—बां. दा.
रू० भे०—पवसाक, पवसाख, पौसाक, पौसाख।

पोसाड़णौ, पोसाड़बौ—देखो 'पोसाणौ, पोसावौ' (रू. भे.)
पोसाड़णहार, हारौ (हारी), पोसाड़णियौ—वि०।
पोसाड़िग्रोड़ौ, पोसाड़ियोड़ौ, पोसाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पोसाड़ीजणौ, पोसाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पोसाड़ियोड़ौ—देखो 'पोसायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोसाड़ियोड़ी)

पोसाणौ, पोसावौ—क्रि० अ० स० ['पोसणौ' क्रि० का प्रे० रू०] १. पूरा पड़ना, गुजर चलना।
२. पालन कराना, रक्षा कराना।
पोसाणहार, हारौ (हारी), पोसाणियौ—वि०।
पोसायोड़ौ—भू० का० कृ०।
पोसाईजणौ, पोसाईजबौ—कर्म वा०। भाव वा०।
पोसाड़णौ, पोसाड़बौ, पोसावणौ, पोसावबौ, पौसावणौ, पौसावबौ
—रू० भे०।

पोसायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. पूरा पड़ा हुआ, गुजर चला हुआ।
२. पालन कराया हुआ, रक्षा कराया हुआ।
(स्त्री० पोसायोड़ी)

पोसारौ—देखो 'पौसध' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—मारयो ठग जिणे पोसारे मांय ए, आवती चोवीसी में तीजो जिन राय ए।—जयवांणी

पोसाळ—सं० स्त्री० [सं० पाठशाला] छोटी पाठशाला, विद्यालय, चटसाला।
उ०—मोहणी सी वांणी बोल मन हरै छै। चकवा, कपोत, कीर, खग वुंन सुणै छै। मांनुं कांमदेव की पोसाळ बाळक भणै छै।
—वंगसीरांम प्रोहित री वात
रू० भे०—पोसवाळ, पौसवाळ, पौसाळ।

पोसाळियौ—सं०पु०[सं० पाठशाला + रा०प्र०इयौ] १. छोटी पाठशाला या चटशाला का ग्रध्यापक। २. छोटी पाठशाला या चटशाला का छात्र।

पोसावणौ, पोसावबौ—देखो 'पोसाणौ, पोसावौ' (रू. भे.)
उ०—डोकरी—अरे! ग्रो कांई वाला ?'—'चिलम तो पीवां क'नी, माजी !' 'जणै मनै को पोसावै नी, बीजी जागा जोय लो।'
—वरसगांठ
पोसावणहार, हारौ (हारी), पोसावणियौ—वि०।
पोसाविग्रोड़ौ, पोसावियोड़ौ, पोसाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पोसावीजणौ, पोसावीजबौ—कर्म वा०/भाव वा०।

पोसावियोड़ौ—देखो 'पोसायोडौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पोसावियोड़ी)

पोसियोड़ौ—भू० का० कृ०—पालन किया हुआ, रक्षा किया हुआ।
(स्त्री० पोसियोडी)

पोसीदगी—सं० स्त्री० [फा० पोशीदगी] छिपाव, दुराव।

पोसीदा—क्रि० वि० [फा० पोशीद:] गुप्त रूप से।

पोसीदौ—वि० [फा० पोशीद:] छिपा हुआ, गुप्त।

पोसौ—१. 'पौसध' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—सांमायिक पोसा करो, पडिक्कमणो दोय काल। इम भ्रातम नै ऊधरो, भूंठी मत करो भिकाल।—जयवांणी
२. देखो 'पूस' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—सखी री आयो महिनो अब पोसो, रंगे रमे सहु तजि रोसो।
—ध. व. ग्रं.

पोस्ट—सं०स्त्री० [ग्रं०] १. स्थान, जगह। २. पद, ग्रोहदा। ३. डाक।
सं०पु०—४. थम्भा।
उ०—रात दिवस के रेस कोस में, वाजी लाव वणावे। जांकी पार कोई हुय जावै, वेनिंग पोस्ट वतावै।—ऊ. का.
यौ०—पोस्टग्राफिस, पोस्टकारड, पोस्टमास्टर, पोस्टमैन, पोस्टलगाइड।

पोस्टग्राफिस—सं० पु० [ग्रं०] डाकघर, डाकखाना।

पोस्टकारड—सं० पु० [ग्रं० पोस्ट-कार्ड] एक मोटे कागज का पत्र जिस

पर समाचार लिख कर भेजे जाते हैं।

पोस्टमारटम–सं० पु० [ग्रं० पोस्टमार्टम] मृत्यु का कारण निश्चित करने के लिए शव को चीर-फाड़कर की जाने वाली परीक्षा, शल्य-परीक्षा।

पोस्टमास्टर सं० पु० [ग्रं०] डाक घर का सबसे बड़ा कर्मचारी।

पोस्टमैन–सं०पु० [ग्रं०] पत्र बांटने वाला, चिट्ठीरसा, डाकिया।

पोस्टलगाइड–सं० स्त्री० [ग्रं०] डाक घर के नियमों का ज्ञान कराने वाली पुस्तक।

पोस्टेज–सं० पु० [ग्रं०] डाक का महसूल, डाक व्यय।

पोस्त, पोस्ता–सं० पु० [फा० पोस्त] अफीम का पोधा या इसका डोडा या दानें।

रू० भे०—पोसत, पौसत।

पोस्ती–सं० पु० [फा०] १. पोस्त के डोडे पीसकर पीने वाला व्यक्ति, अफीमची। २. आलसी आदमी।

रू० भे०—पोसती।

पोस्तीन–सं० पु० [फा०] १. गरम और मुलायम रोएं वाले समूर आदि। २. खाल का बना कोट जिसमें नीचे की ओर बाल होते हैं।

पोह—१. देखो 'पह' (रू. भे.)

उ०—१. पोह जिण साख नांम प्रगटाए। कमध अहर हूं अहर कहाए।—सू. प्र.

उ०—२. जोधार चढ़े बहु वळे जाय। पोह तेज देख सो लगय पाय।—वि. सं.

२. देखो 'पूस' (रू भे]

उ०—१. सफाई नै जाहरां पोह माह रा दिन आया तरै एक दिन आधी रात अमावस रै दिन ले परमेसर रौ नांम नै गोह चढ़ाई।
—चौबोली

उ०—२. मिगसरिये में मूंग न खायो, पोह अलूणो खायो हो रांम।—लो. गी.

३. देखो 'पौ' (रू. भे.)

उ०—राते निद्रा न आई। पोह पीळी हूवां सेतखांनै जाय हाथ पग उजळा करि दांतण कीधौ नै स्नांन सेवा करि माजी रै दरसण आया।—जखड़ा-मुखड़ा भाटी री वात

पोहकर—देखो 'पुस्कर' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

उ०—१. देस देस रा जाति जाति रा मीरजादा भेळा हुआ छै, माहीमुरातबा समेत पोहकर अजमेर रा थांणा ऊपरै विदा हुआ छै, आवाज फूट नै रही छै।—रा.सा.सं.

उ०—२. पवित्र प्रयाग 'रतनसी' पोहकर, मन निरमळ गंगाजळ चेम। नर नादैत नरिंद नरेहण, निकळंक निखूट निपाप निगेम।
—दूदो

पोहकरनाभ—देखो 'पुस्करनाभ' (रू. भे.)

पोहकरमूळ—देखो 'पुस्करमूळ' (रू. भे.)

पोहकरी—देखो 'पुस्करी' (रू. भे.) (डिं. को.)

पोहड़–सं० पु० [?] भाटी वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

पोहच—देखो 'पहुंच' (रू. भे)

पोहचणौ, पोहचबौ—देखो पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू. भे.)

उ०—पोहचै काळा पांणिकां, हेम भरेवा हाट। खाती लालच छाकियां, करड़ी बजर कपाट।—बां. दा.

पोहचणहार, हारौ (हारी), पोहचणियौ—वि०।

पोहचाड़णौ, पोहचाड़बौ, पोहचाणौ, पोहचाबौ, पोहचावणौ, पोहचावबौ—प्रे० रू०।

पोहचिओड़ौ, पोहचियोड़ौ पोहच्योड़ौ—भू० का० कृ०।

पोहचीजणौ, पोहचीजबौ—भाव वा०।

पोहचाड़णौ, पोहचाड़बौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे)

पोहचाड़णहार, हारौ (हारी), पोहचाड़णियौ—वि०।

पोहचाड़िओड़ौ, पोहचाड़ियोड़ौ पोहचाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।

पोहचाड़ीजणौ, पोहचाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पोहचाड़ियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहचाड़ियोड़ी)

पोहचाणौ, पोहचाबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे.)

उ०—सु सत्र चहुवांण मारिया। बाहड़मेर कोटड़ौ लिया। मर जगमालजी नूं खबर पोहचाई।—नैणसी

पोहचाणहार, हारौ (हारी), पोहचाणियौ—वि०।

पोहचायोड़ौ—भू० का० कृ०।

पोहचाईजणौ, पोहचाईजबौ—कर्म वा०।

पोहचायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहचायोडी)

पोहचावणौ, पोहचावबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे.)

उ०—ऊपगार ऊपरां बाई दीनी, पिण रावळ मांहे गवेड़ा रा लक्षण दीसै छै। बाई रौ जमारौ डबोयो, पिण एक बार तो बाई नै गढ़ पोहचावणी।—वीरमदे सोनगरा री वात

पोहचावणहार, हारौ (हारी), पोहचावणियौ—वि०।

पोहचाविओड़ौ, पोहचावियोड़ौ, पोहचाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

पोहचावीजणौ, पोहचावीजबौ—कर्म वा०।

पोहचावियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहचावियोड़ी)

पोहचियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहचियोड़ी)

पोहढ़णौ, पोहढ़बौ—देखो 'पौढ़णौ, पौढ़बौ' (रू. भे.)

उ०—तितरां मांहै रात पोहोर गई। तारै कह्यौ, ढोलाजी थे थांरै म्हेल जाय पोहढौ।—ढो. मा.

पोहढ़णहार, हारौ (हारी), पोहढ़णियौ—वि०।

पोहढ़िश्रोड़ौ, पोहढ़ियोड़ौ, पोहढ़्योड़ौ—भू० का० कृ०।

पोहढीजणौ, पोहढीजबौ—भाव वा०।

पोहढ़ियोड़ौ—देखो 'पौढ़ियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहढ़ियोड़ी)

पोहत—देखो 'पहुंच' (रू. भे.)

पोहतणौ, पोहतबौ—क्रि० स०—१. पूर्ण होना, पूरा होना। उ०—तरै पातसाह कह्यौ—मैं छोडिया, थारो कौल पोहतौ।—नैणसी

२. देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू. भे.)

उ०—१. नरसिंघ नुं खबर पोहती।सुपीयारी पाछी आई।
—नैणसी

उ०—२. सगळा पाछा आया तेह। पोहता छै सहू अपणे गेह।
—जयवांणी

पोहतणहार, हारौ (हारी), पोहतणियौ—वि०।

पोहतिश्रोड़ौ, पोहतियोड़ौ, पोहत्योड़ौ—भू० का० कृ०।

पोहतीजणौ, पोहतीजबौ—कर्म वा०/भाव वा०।

पोहतियोड़ौ—भू० का० कृ०—१. पूर्ण, पूरा।

२. देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहतियोड़ी)

पोहप—१. देखो 'पुस्पक' (रू. भे.)

२. देखो 'पुस्प' (रू. भे.)

उ०—च्यार चउपद च्यारथं (पं)ख, पोहप च्यार फळ च्यार। पुरवंदत जो पाइयै, श्रेहवी मारू नार।—ढो. मा.

पोहपचाप—देखो 'पुस्पचाप' (रू. भे.)

पोहपति—देखो 'पुस्पपति' (रू. भे.)

पोहपदंत—देखो 'पुस्पदंत' (रू. भे.)

पोहपधनु—देखो 'पुस्पधनु' (रू. भे.)

पोहपध्रुज—देखो 'पुस्पध्वज' (रू. भे.)

पोहपपुर—देखो 'पुस्पपुर' (रू. भे.)

पोहपमाळ, पोहपमाळा—देखो 'पुस्पमाळा' (रू. भे.)

उ०—देव दुदवी वजाविया, पोहपमाळ पहराय। सरग तणी सहनायका, लीधा श्राय वधाय।—गजउद्धार

पोहपविमांण—देखो 'पुस्पकविमांण (रू. भे.)

उ०—पोहपविमांण सपेखिश्रा, रचि विरंच विनांणी।—रांमरासो

पोहम, पोहमी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

उ०—१. पड़े चक राह पतिसाह खीजै पोहम, खुरम हुकम हुवो खळक खार। मूंछ मोड़ श्रन चोहर पूर मछर, सूरउत राखिया···सार।—राव भोज हाडा री गीत

पोहमीईस—सं०पु० [सं०पृथिवी+ईश] राजा, नृप। (डि.को.)

पोहर—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)

उ०—१ कारण विण जग सूं करै, श्राठ पोहर उपगार। जांणीजै सुरतर जिकै, मांनव लोक मझार।—वां.दा.

उ०—२. रात पोहर १ गई छै तरै सहर खीदा नूं खवर मेल दीवी।
—नैणसी

पोहराइत, पोहरावत—देखो 'पौ'रायत' (रू.भे.)

उ०—श्रइयो कळ परतक श्रवै, पोहरावत पापां तणा। मौहकमा कमंध मोटा मिनख, तो सिरखा जीवै घणा।—श्ररजुणजी बारहठ

पोहरू—१. देखो 'पौ'रायत' (रू.भे.)

उ०—१. सरपां हंदी वाड़ कर, सिहां री परवंध। जो जमरांणी पोहरू, सैणां मिळवो संध।—जलाल बूबना री वात

२. देखो 'पहरौ' (रू.भे.)

पोहरे'क—देखो 'पौ'रेक' (रू. भे.)

उ०—राव कटारी लागां पछै पोहरे'क जीविया। —नैणसी

पोहरौ—देखो 'पहरौ' (रू.भे.)

उ०—१. चाकर पोहरै ऊभो थो, तिण पांतरै मारियौ।—नैणसी

उ०—२. भड़ां लिरीजै हाजरी, नित दीजै मोरांह। जोध फिरै गढ़ जावतै, पैं दर पैं पोहरांह।—वां. दा.

पोहल—सं०पु०—गुरु नानक की वाणी पढ़ कर सुनाने के बाद पिलाया जाने वाला शरवत। (मा.म.)

पोहव—१. देखो 'पह' (श्रल्पा., रू.भे.)

उ०—पोहव गज धजां तूं खेत पाड़ै।—मांनसिंह श्रासियो

२. देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

पोहवी—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)

उ०—सूरां मरण स्यांमध्रम सारै। पोहवी दीनी भ्रकुट पड़ै।
—द.दा.

पोही—सं०स्त्री० [सं० पौष+रा०प्र०ई] पोष मास की पूर्णिमा।

उ०—आखा रोहण वायरी, राखी स्रवणन होय। पोही मूळ न होय तौ, मही डोलंती जोय।—वर्षाविज्ञान

पोहोकर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे.)

उ०—नाहड़राव वांसै हुवो, पोहोकर जी री ठोड़ वाराह मूंढ़ा सूं नै पगां सूं खरळ खावड़ौ एक पांणी रो कर अलोप हुवो।—नैणसी

पोहोकरनभ, पोहोकरनाभ—देखो 'पुस्करनाभ' (रू.भे.)

उ०—पवित्र कंध इम करिस वड़ा प्रभ। नमे तूझ चरणां पोहोकरनभ।—ह.र.

पोहोचाणौ, पोहचावौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू.भे.)

उ०—प्रथीराज रा सांवतां प्रथीराज नै पोहोचायौ, जिण भांत श्रापनै तौ इडर पोचावस्यां।—पनां वीरमदे री वात

पोहोचाणहार, हारौ (हारी), पोहचाणियौ—वि० ।
पोहोचायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
पोहोचाईजणौ, पोहोचाईजबौ—कर्म वा० ।

पोहोचायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पोहोचायोड़ी)

पोहोत—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पोहोतणौ, पोहोतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
पोहोतणहार, हारौ (हारी), पोहोतणियौ—वि० ।
पोहोतिओड़ौ, पोहोतियोड़ौ, पोहोत्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पोहोतीजणौ, पोहोतीजबौ—भाव वा० ।

पोहोतियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पोहोतियोड़ी)

पोहोप—देखो 'पुस्प' (रू.भे.)
उ०—पोसाकां पोहोपां तणी वणि अगछि विवेस । हीरां नग जगमग हुवै, कांकण जडत करेस ।—पनां वीरमदे री वात

पोहपकछ--मधुदैत्य—सं०पु०—एक प्रकार का घोड़ा जिसका वर्ण एक रंग का होता है और शरीर पर शहद के रंग के समान धब्बे या टिकारे होते हैं । (शा.हो.)

पोहोम—देखो 'प्रथवी' (रू.भे.)
उ०—बयळ न सूझै बोम, पोहोम धूजै हय पोड़ां । अटक कटक ऊतरै, रटक लेबा राठोड़ां । —मे.म.

पोहोर—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)
उ०—सरै लाखं कयो—'उठै आठ पोहोर चढ़णौ-उतरणौ, थांहरौ कांम नहीं । —नैणसी

पोहोलौ—वि० [?] (स्त्री० पोहोली) चौड़ा ।

पोहोव—१. देखो 'पह' (रू. भे.)
उ०—पोहो धर मूंछां पांण, पूंतारै परगह पोहोव । जारण खळां जुवांण, सक 'गोगौ' मांगै सवण ।—गो. रू.
२. देखो 'पौ' (रू. भे.)

पोहोसौ—देखो 'पोसध' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—नहीं पोहोसौ नहीं आदरी दीख । —स.कु.

पोहौ—१. देखो 'पौ' (रू. भे.)
उ०—थिर बिलोचिसथांन, थांन धवळगिर थावै । पोहौ साता दीप हूं, उठै माता नित आवै ।—मे. म.
२. देखो 'पह' (अल्पा., रू.भे.)
उ०--१. पोहौ कीरत बीज खेत रजपूती, दाह सत्रां उर खाद दियौ । दृळ भालौ करतब बडहाळी, करसण आरंभ गजब कियौ ।
—बड़ली ठाकुर लालसिंघ राठौड़ रौ गीत
उ०—२. बाजिद गज बाकर मांनव बळ, पोहौ अनि होम हुवा बो हौ पूर । हाडा रिण तीरथ करि हौंसल, सारियौ राज मेध जगि सूर ।
—सूरजमल हाडा रौ गीत
उ०-३. माही पोहौ धाड़ औनाड़ कजि आंमखां, जाड़ नद फाड़ खग नखां जाडौ । पंखा विहुं साह गाजी तणौ बिड़ेदपति, हेक बढ लखां आबीह हाडो ।—महाराज सरदारसिंघ हाडा रौ गीत

पोहौर—देखो 'प्रहर' (रू.भे.)
उ०--दिन पोहौर २ चढ़ीयां भीनमाळ थी स्रीराजाजी सैणं आया । आप माहे मिळीयां । तिण दिन जोधपुर थी औठी २ आया ।
—नैणसी

पोहौव—देखो 'पौ' (रू.भे.)
उ०—ऊलाळिया चढ़ाये आंणिये, रोद जतैं मेवाड़ा रांण । कलम कुरांण बांग तज कहवा, पोहौव तणा बांचै पुरांण ।
—महारांणा संग्रामसिंघवडां रौ गीत

पौंच—देखो 'पौच' (रू.भे.)

पौंचाळ—देखो 'पौचाळौ' (मह., रू.भे.)

पौंचाळौ—देखो 'पौचाळौ' (रू.भे.)
उ०—१. सिंघ अवसांण बिरद धरि सांचो, पौंचाळा कीधो परमांण । पंड राठोड़ तणै रोपांणौ, अतळ-बळ हाडौ चहवांण ।
—छत्रसिंघ मेहाउत हाडा रौ गीत

पौंची—स०स्त्री० [देशज] मस्त हाथी को वश में करने के लिए उसके पैरों में डाला जाने वाला काष्ठ का बना उपकरण विशेष जिसमें कांटे लगे हुए होते हैं ।

पौंड्र—सं०पु० [सं०] १. पुंड्र देश का बना रेशमी कपड़ा ।
२. भीम के शंख का नाम । ३. मनु के अनुसार एक भ्रष्ट क्षत्रिय वंश, वृषन ।

पौंड्रक--सं०पु० [स०] पुंड्र देश का राजा जो जरासंघ का मित्र था ।

पौंथ—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पौंथणौ, पौंथबौ—१. देखो पौथणौ, पौथबौ (रू. भे.)
२. देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
पौंथणहार, हारौ (हारी), पौंथणियौ —वि० ।
पौंथिओड़ौ, पौंथियोड़ौ, पौंथ्योड़ौ —भू०का०कृ० ।
पौंथीजणौ, पौंथीजबौ—भाव वा० ।

पौंथियोड़ौ—१. देखो पौथियोड़ौ (रू.भे.)
२. देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)

पौंहचणौ, पौंहचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
उ०—१. समुद्र मांहै छै, ऐके पासै छः मास रो मारिग छै, ऐके पासै डोढ़ महीना रो मारिग छै, पिण भय छै, जिनावर घणा छै, मगर छै, वाहण भांजै छै, कोई ऐक निरवहै छै, सखरौ वायरौ हुवै छै तौ सवा महीने ही, पौंहचै छै । —सयणी चारणी री वात
उ०—२. उण नूं तौ पांहू ले गयो पण आपां गोदारां सूं पौंहच नहीं सकां ।—द. दा.

पौंहचणहार, हारौ (हारी), पौंहचणियौ —वि०।
पौंहचिश्रोड़ौ, पौंहचियोड़ौ, पौंहच्योड़ौ —भू०का० कृ०।
पौंहचीजणौ, पौंहचीजबौ —भाव वा०।

पौंहचि—देखो 'पौच' (रू.भे.)
उ०—पाड़गति गीत संगीत समझणा, पौंहचि बहुत्तरी कळा खट-भाख बूझै। —ल.पि.

पौंहचौ—देखो 'पूंचौ' (रू.भे.) (अमरत)

पौं—सं०स्त्री० [सं० प्रपा] १. राह चलने वालों को जल पिलाने का स्थान।
२. प्रातःकाल। उ०—आज सखी हौं ही सुणां, पौं फाटत पिय गौन। पौं में हिय में होड है, पहिले फाटै कौन? —अज्ञात
मुहा०—पौं फटणी, पौं फाटणी—उषाकाल होना।
रू०भे०—पोह, पोहोव, पोहौ, पोहीव।
३. देखो 'परौ' (रू.भे.) (गोढ़वाड़) (स्त्री० पी)

पौइणी—देखो 'पोयणी' (रू.भे.)
उ०—सरोवरां रा जळ निरमळ हुआ छै। कमळ पौइणी फूलि रह्या छै। —रा.सा.सं.

पौक—सं०पु०—पशुओं के बैठने का खुला हवादार स्थान।

पौंकर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे.)

पौकार—देखो 'पुकार' (रू.भे.)
उ०—पड़ये जिण जोध पौकार सगलै पड़ी, घरै नही अरज पातिसाह धीठौ। —ध.व.ग्रं.

पौगंड—सं०पु० [सं०पौगंडम्] पाँच से सोलह वर्ष तक की अवस्था।
उ०—१. जरै आ जांणि पौगंड अवस्था में ही कुमार प्रथ्वीराज पिता सूं अरज करी।—वं. भा.
उ०—२. सिसु वै मित्ती वित्ती उदभौ, पौगंड मंड सिगारौ। ज्यौं अं दारकतरयं, प्रांमै डाळ संगि पत्तेणम्।—रा. रू.

पौड़—स०पु० [देशज] घोड़े का सुम। उ०—१. सो घोड़ां रा पौड़ां सूं नै गऊवां रा खुरां सूं रजी उडी है। आसमांन धूंद-धुंदाळौ होय गयौ है।—वी. स. टी.
उ०—२. जडलग फरी खडखडइं जौड़। पटहोड़ा वाजिय पूरि पौड़।—रा. ज. सी.
रू०भे०—पोड़, पोड़ि।

पौड़ी—सं०स्त्री० [देशज] ऊंट या घोड़े के अगले पैरों के बांधने का एक प्रकार का बंधन, जिसके कारण वह खुला छोड़ा जाने पर भी भाग नहीं सकता।

पौच—सं०स्त्री० [सं० प्रभूत] १. पहुंचने की क्रिया या भाव।
२. किसी के कही पहुंचने पर भेजी जाने वाली सूचना।
३. ऐसी जगह जहां तक किसी की गति हो सकती हो या कोई पहुंच गया हो।
४. किसी स्थान पर पहुंचने अथवा किसी कार्य के करने की क्षमता, योग्यता, पहुंच, शक्ति, बल, सामर्थ्य।
उ०—कमावण खावण री उणरी पौच कोनीं ही।—फुलवाड़ी
५. किसी विषय का होने वाला ज्ञान।
उ०—इण अकल अर पौच रा धणी आखा देस मार्थ राज करै। —फुलवाड़ी
६. अभिज्ञता की सीमा, ज्ञान की सीमा।
७. देखो 'पूंची' (रू.भे.)
उ०—प्रवीण ककणी स पौच गज्जरा ज नौग्रही।—सू.प्र.
रू०भे०—पहोंच, पोंहच, पोंच, पौंच, पौंहचि, पौंछ।

पौचणौ, पौचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
पौचणहार, हारौ (हारी), पौचणियौ—वि०।
पौचिश्रोड़ौ, पौचियोड़ौ, पौच्योड़ौ—भू०का०कृ०।
पौचीजणौ, पौचीजबौ—भाव वा०।

पौचवांन—वि० [राज० पौच+सं० वत्=वांन] १. सिद्धिप्राप्त, सिद्ध, महात्मा।
२. वह जिसकी पहुंच हो, योग्य, समर्थ, शक्तिशाली।
रू०भे०—पहचवांन, पहुंचवांन, पौंछवांन।

पौचाड़णौ, पौचाड़बौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू. भे.)
पौचाड़णहार, हारौ (हारी), पौचाड़णियौ—वि०।
पौचाड़िश्रोड़ौ, पौचाड़ियोड़ौ, पौचाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पौचाड़ीजणौ, पौचाड़ीजबौ—कर्म वा०।

पौचाड़ियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पौचाड़ियोड़ी)

पौचाणौ, पौचावौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू.भे.)
पौचाणहार, हारौ (हारी), पौचाणियौ—वि०।
पौचायोड़ौ—भू० का० कृ०।
पौचाईजणौ, पौचाईजबौ—कर्म वा०।

पौचायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पौचायोड़ी)

पौचारौ—सं० पु० [देशज] १. द्रव पदार्थ में भीगा हुआ कपड़ा जो पोंछने के काम में लिया जाता है।
२. उक्त प्रकार के कपड़े से आंगनादि पोंछने का कार्य।
३. उक्त कार्य की मजदूरी।
४. छोड़ी या दागी हुई तोप या बंदूक की नाल को ठंडी करने के लिये उस पर भीगा हुआ कपड़ा फेरने की क्रिया।
रू०भे०—पोचारौ।

पौचाळ—देखो 'पौचाळौ (मह., रू. भे.)

पौचाळौ—वि० [राज० पौच+सं० आलुच्] १. शक्तिशाली, बलवान, समर्थ।

उ०—पनरै सहस जोध पौचाळा ।—अ. वचनिका

२. सिद्धि प्राप्त, सिद्ध, महात्मा ।

रू०भे०—पौछाळौ, पौहचाळौ, प्रांचाळौ, प्राचाळौ, प्रुचाळौ, प्रौचळौ ।

मह०—पौचाळ, पौहचाळ, प्रांचाळ ।

पौचावणौ, पौचावबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू.भे.)

पौचावणहार, हारौ (हारी), पौचावणियौ—वि० ।

पौचाविप्रोड़ौ, पौचावियोड़ौ, पौचाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पौचावीजणौ, पौचावीजबौ—कर्म वा० ।

पौचावियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पौचावियोड़ी)

पौचियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पौचियोड़ी)

पौछ—देखो 'पौच' (रू. भे.)

उ०—बळ ईठ साथ लीधां बळोच । पूरौ नर जादव बडौ पौछ ।

—पा. प्र.

पौछवांन—देखो 'पौचवांन' (रू. भे.)

उ०—जे आंटौ छै तौ घणौ ही छै, पण इव क्यूं करां आ तौ बात कम पौछवांना री छै ।—कुंवरसी सांखला री वारता

पौछाड़णौ, पौछाड़बौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे.)

उ०—बाजै हूंत विणास, ह्रिव भ्रप रा घट में हुवौ । 'वाघै' आंगदवास, पाछौ ढोल पौछाड़ियौ ।—पा. प्र.

पौछाड़ियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पौछाड़ियोड़ी)

पौछाणौ, पौछाबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ—(रू. भे.)

पौछाणहार, हारौ (हारी), पौछाणियौ—वि० ।

पौछायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

पौछाईजणौ, पौछाईजबौ—कर्म वा० ।

पौछायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे)

(स्त्री० पौछायोड़ी)

पौछावणौ, पौछावबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे)

पौछावणहार, हारौ (हारी), पौछावणियौ—वि० ।

पौछाविप्रोड़ौ, पौछावियोड़ौ, पौछाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पौछावीजणौ, पौछावीजबौ—कर्म वा० ।

पौछावियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पौछावियोड़ी)

पौढ़णौ, पौढ़बौ—क्रि० अ० [सं० प्रलोठनम्] १. आराम करने या नींद लेने के लिए शयन करना, लेटना ।

उ०—१. ताहरां उखेलि बारणौ माहे लिया । ढोलियौ विछाइ दियौ, जाइ पौढ़िया ।—ऊदे ऊगमणावत री वात

उ०—२. पांन प्रयाग तणौ पौढ़ियौ, सुजि हरि समरि ऊपर करि सोध । (ह. नां. मा.)

२. धराशायी होना ।

उ०—१. भड़ भिड़ज्ज गज भार, धार विहरे पाड़े धड़ । ढहियौ सिर पौढ़ियौ, बोळ भकबोळ बहादर ।—सू. प्र.

उ०—२. विण माथै बाढ़े दळां, पौढ़ै करज उतार । तिण सूरां रौ नांम ले, भड़ बांधै तरवार ।—वी. स.

३. घोड़े या घोड़ी का भूमि पर बैठना ।

पौढ़णहार, हारौ (हारी), पौढ़णियौ—वि० ।

पौढ़वाड़णौ, पौढ़वाड़बौ, पौढ़वाणौ, पौढ़वबौ, पौढ़वावणौ, पौढ़वावबौ—प्रे० रू० ।

पौढ़ाड़णौ, पौढ़ाड़बौ, पौढ़ाणौ, पौढ़ाबौ, पौढ़ावणौ, पौढ़ावबौ

—सक० रू० ।

पौढ़िप्रोड़ौ, पौढ़ियोड़ौ, पौढ़योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पौढ़ीजणौ, पौढ़ीजबौ —भाव वा० ।

पउढ़णौ, पउढ़बौ, पोढ़णौ, पोढ़बौ, पोहढ़णौ, पोहढ़बौ—रू०भे० ।

पौढ़म—सं०पु० [सं० प्रौढ़] १. शौर्य, पराक्रम, बहादुरी ।

२. प्रौढ़ता, प्रौढ़त्व ।

३. देखो 'पौढ़िम' (रू.भे.)

रू०भे०—पउढ़िम, पोढ़िम ।

पौढ़ाकू—वि० [राज० पौढ़+प्र० आकू] शयन करने वाला ।

उ०—सांझ तौ पड़ै रे, दिनड़ौ आथमै रे । वादीला तेलण लावै हो तेल । काय न करू हो तेलण जी तेल नैं, दिवला रा पौढ़ाकू वसे परदेस ।

—लो.गी.

पौढ़ाड़णौ, पौढ़ाड़बौ—देखो 'पौढ़ाणौ, पौढाबौ' (रू.भे.)

उ०—पौढ़ाड़ै नाद वेद परबोधै, निसि दिन वाग विहार नितु । मांणण मयण एण विध मांणै, रुखमिणि कंत वसंतरितु ।

—वेलि

पौढ़ाड़णहार, हारौ (हारी), पौढ़ाड़णियौ—वि० ।

पौढ़ाड़िप्रोड़ौ, पौढ़ाड़ियोड़ौ, पौढ़ाड़योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पौढ़ाड़ीजणौ, पौढाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पौढ़ाड़ियोड़ौ—देखो 'पौढ़ायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पौढ़ाड़ियोड़ी)

पौढ़ाणौ, पौढ़ाबौ—क्रि०स० [राज० पौढ़णौ] १. लेटाना, सुलाना ।

२. धराशायी करना ।

उ०—तीजो कुमार भगवतसिंह ओरंग आगै केही पैंला पठैतां नूं पौढ़ाइ प्रेत गीधादिक पळचरां नू धपाइ चंडीरा चसक में आप रौ ही अस्र आसव पूरि च्यारि तलवारि लागां जीवतौ ही खेत रहियौ ।

—वं. भा. ।

३. घोड़े या घोड़ी को बैठने में प्रवृत करना, बैठाना ।

पौढ़ाणहार, हारौ (हारी), पौढ़ाणियौ—वि० ।

पौढ़ायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
पौढ़ाईजणौ, पौढ़ाईजबौ—कर्म वा० ।
पउढ़ाड़णौ, पउढ़ाड़बौ, पउढ़ाडणौ, पउढ़ाडबौ, पौढ़ाड़णौ, पौढ़ाड़बौ, पौढ़ावणौ, पौढ़ावबौ—रू० भे० ।
पौढ़णौ, पौढ़बौ—अक० रू० ।

पौढ़ापौ—सं०पु० [सं० प्रौढ़त्व] १. प्रौढ़ावस्था । २. वृद्धावस्था, वृद्धत्व ।
उ०—सफदळ सबळ सीस पतसाहां, दिली विरोळण 'करण' दुवौ । पौढ़ापै समसेर पाकड़ी, हीमत सेर जवांन हुवौ ।
—दुरगादास राठौड़ री गीत

पौढ़ायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. लेटाया हुआ, शयन कराया हुआ. २. धराशायी किया हुआ. ३. (घोड़ा या घोड़ी) बैठाया हुआ. (स्त्री० पोढ़ायोड़ी)

पौढ़िम—सं०पु० [सं० प्रौढ़] १. सुमेरू पर्वत ।
उ०—सुजळ कळा पौढ़िम सबण दांन धारियां सको, ऊजळ पय सुरां छट भुजा उरमांन । मच्छांचर दमंग वह चात्रगां मांगणां, समंद घद गिरंद इंद कुंवर 'सुनमांन' । —कुंवर सनमांनसिंघ हाडा री गीत
२. दृढ़ता, अटलता ।
उ०—किरणधारियां लहर पौढ़िम कळा रित कुळ, तेज तोय दिढ़ ध्रमी लहर सिरताज । चकव मीनां अमर चकोरां चाहवां, रिव उदधि मेर ससि रांण 'जगराज' ।
—महारांणा जगतसिंघ सिसोदिया री गीत
३. देखो 'पौढ़म' (रू.भे.)

पौढ़ी—सं०स्त्री० [देशज] मारवाड़ राज्यांतर्गत 'पोकरण' नगर का प्राचीन नाम । उ०—पौढ़ी सूं जोधांपती, प्रात हुवौ असवार । दरसेवा सुभ देहरौ, रांमौ पीर उदार । —रा. रू.
रू०भे०—पोढी, पोढ़ी ।

पौढ़ीमणौ—वि० [सं०प्रौढ] प्रौढ़त्वशाली ।
उ०—मागौ तौ वाराह, राह ग्रहियौ तौइ दुणियर । खोडौ तौइ हणमंत, जोर मथियौ तौइ सायर । जौ नथियौ तौइ नाग, लियौ दरसण तौइ संकर । सांकळियौ तौइ सीह, वाघ थी जरै भयंकर । पाखळै राव पोढ़ीमणौ, घणौ पांण परिपण घणां । मालदे राव मंडोवरौ, वोह चित्यौ ई बीहामणौ । —द.दा.
रू०भे०—पोढ़िमणउ ।

पौढ़ौ—वि० [सं०प्रौढ] (स्त्री० पौढ़ी) १. अनुभवी, बुद्धिमान, विकसित । २. युवावस्था व वृद्धावस्था के बीच की अवस्था (मध्यावस्था) वाला । ३. निपुण, चतुर ।

पौतणौ, पौतबौ—१. देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
२. देखो 'पोतणौ, पोतबौ' (रू. भे.)
पौतणहार, हारौ (हारी), पौतणियौ —वि० ।
पौतिप्रोड़ौ, पौतियोड़ौ, पौत्योड़ौ —भू०का०कृ० ।
पौतीजणौ, पौतीजबौ—भाव वा० । कर्म वा० ।

पौताणौ, पौताबौ—१. देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू. भे.)
२. देखो 'पोताणौ, पोताबौ' (रू. भे.)
पौताणहार, हारौ (हारी), पौताणियौ—वि० ।
पौतायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
पौताईजणौ, पौताईजबौ—कर्म वा० ।

पौतायोड़ौ—१. देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)
२. देखो 'पोतायोडौ' (रू.भे)
(स्त्री० पौतायोड़ी)

पौतावणौ, पौतावबौ—१, देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू.भे.)
२. देखो 'पोताणौ, पोतावौ' (रू.भे.)
पौतावणहार, हारौ (हारी), पौतावणियौ—वि० ।
पौताविप्रोड़ौ, पौतावियोड़ौ, पौताव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
पौतावीजणौ, पौतावीजबौ—कर्म वा० ।

पौतावियोड़ौ—१. देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)
२. देखो 'पोतायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पौतावियोड़ी)

पौतारणौ, पौतारबौ—देखो 'पूंतारणौ, पूंतारबौ' (रू.भे.)
उ०—तद भील री वात चाली, जद रजपूत नूं पौतार कहियौ । और तौ कोई दीसै नहीं जिकौ उण भील नूं मारै । जे मारै तौ औ हीज रजपूत मारै । —प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात
पौतारणहार, हारौ (हारी), पौतारणियौ—वि० ।
पौतारिप्रोड़ौ, पौतारियोड़ौ, पौतारयोड़ौ —भू० का० कृ० ।
पौतारीजणौ, पौतारीजबौ —कर्म वा० ।

पौतारियोड़ौ—देखो 'पूंतारियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पौतारियोड़ी)

पौतियोड़ौ—१. देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू. भे.)
२. देखो 'पोतियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पौतियोड़ी)

पौत्र—देखो 'पोतौ' (रू. भे.)
(स्त्री० पौत्री)

पौत्रांण—स०पु० [सं० पौत्र+रा०प्र० आंण] दोहित्र की संतान, दौहित्र का वंश ।
रू०भे०—पोतरांण, पोत्रांण ।

पौय—देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

पौयणौ, पौयबौ—क्रि०अ० [सं० प्रस्थानम्] १. प्रस्थान करना, प्रयाण करना ।
२. देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)
उ०—दासी दौड़ी वेग द्रुत, पौयी रांणी पास । कंवरी सुपियारी करै, आंसू न्हांक उदास । —पा. प्र.
पौयणहार, हारौ (हारी), पौयणियौ—वि० ।

पोथिओड़ो, पोथियोड़ो, पोथ्योड़ो —भू० का० कृ० ।
पोथीजणौ, पोथीजबौ—भाव वा० ।
पोंथणौ, पोंथबो, पोहतणौ, पोहतवो—रू० भे० ।

पोथाळो–वि० [देशज]-हृष्ट-पुष्ट ।
उ०—वर दायक वाळौ-ह, अपछर रे उर ऊपनौ । पाबू पोथाळौ-ह, वरस जितौ दिन में वधै ।—पा.प्र.

पोथियोड़ो—भू०का०कृ०—१. प्रस्थान किया हुआ, प्रयाण किया हुआ ।
२. देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० पोथियोड़ी)

पोद, पोध—देखो 'पोद' (रू.भे.)

पोधौ—देखो 'पोदौ' (रू.भे.)

पोन—देखो 'पवन' (रू.भे.)
उ०—१. देवी पौन रै रूप तूं गरुड पाडै । देवी गरुड रै रूप षत्रभुज चाडै ।—देवि
उ०—२. दसदुवार को पीजरौ, तांमें पंछी पौन । रहण अचूंभौ है 'जसा', जांण अचूंभौ कौण ।—महाराजा जसवतसिंह जोधपुर

पो'र—१. देखो 'पोर' (रू.भे.)
२. देखो 'प्रहर' (रू.भे.)
उ०—१. रात पौ'र डोढ़ पौ'र वीतगी व्हेला । चंदरमा खासौ ऊंचौ चढ़ग्यौ हौ ।—रातवासौ
उ०—२. ढळती रात रा ठाडै पौ'र अपां छांनै सी कुलबै-कुलबै घरनै आय जावांला ।—फुलवाड़ी

पोर—अव्य० [सं० परुत] गत वर्ष, पिछला वर्ष, बीता वर्ष ।
उ०—यूं हिज करतां जासी ऊमर, परम न काल परार न पोर । आपां वात करां अवरां री, आपां री करसी कोई ओर ।
—ओपो आढ़ौ
रू०भे०—पौ'र ।

पोरख—देखो 'पोरस' (रू.भे.)
उ०—जोधार है तिकां नै तौ सुणतां ई पोरख चढ़ै तिण सूं जुद्ध में झूंझ नै प्रांण देवै है ।—वी. स. टी.

पोरणमासी—देखो 'पूरणमासी' (रू.भे.)

पोरव–वि० [सं०] (स्त्री० पोरवी) १. पुरु संबंधी पुरु का । २. पुरु से आया हुआ ।
सं०पु० [सं० पौरवः] १. पुरु के वंशज, पुरु की संतान, पुरु वंशी ।
२. उत्तरी भारत के एक प्रान्त विशेष का नाम ।
३. उक्त प्रान्त के शासक अथवा अधिवासी ।

पोरवी–सं० स्त्री० [सं०] १. संगीत में एक प्रकार की मूर्च्छना ।
२. युधिष्ठिर की धर्मपत्नी का नाम ।
३. वासुदेव की अर्द्धांगिनी का नाम ।

पोरस–वि० [सं० पौरुषेय] मनुष्य का, पुरुष का ।
सं०पु० [सं० पौरुषम्] १. मानवी कर्म, मनुष्य का कर्म ।
२. वीरता, बहादुरी, विक्रम, शौर्य । उ०—१. हे हेली, पती रा प्राक्रम री इचरज जेड़ी वात है । थनें कांही कहूं, हूं तौ औ पोरस देख बळिहारी जाऊं हूं । घर में तौ कांम करता देखूं दोय हाथ है, पण रिण में सत्रुआं ऊपरे वहता तरवार सहत तो दीसै है, पूरा एक हजार है ।—वी स. टी.
उ०—२. इम कहे पोरस ऊफणे, विमरीर झळहळ दळ वणे ।
—सू प्र.
३. शक्ति, बल । उ०—सिघ दाखियौ झळाहळ सूरत । पोरस अपत तूझ भर-पूरत ।—सू. प्र.
४. जोश । उ०—आ अखिआत कीध 'आसावत' रोदां सूं तेवड़े रिण । वडपण बखत मेर वध वधियौ । पोरस मच्छर जवांन पण ।
—दुरगादास राठोड री गीत
५. अहंकार, अभिमान । (अ. मा.)
६. उद्योग, परिश्रम ।
रू० भे०—पउरिस, पउरिस्सि, पोरख, पोरस, पोरसि, पोरस्स, पोरिस, पौरस्स, पौरिस, पौरिसि, पौरुख ।

पोरसवांन–वि० [सं० पौरुष+वत्] शक्तिशाली, बलवांन, समर्थ ।
रू० भे०—पौरखवांन ।

पोरसी–वि० [?] १. पुरुषार्थी, सामर्थ्यशाली । उ०—मीरखांन चढो रण मंडौ, खळ पकडौ मारौ बळ खंडौ । बोल पठायौ खांन तहव्वर, उठे पौरसी पूत अकब्बर ।—रा. रू.
२. देखो 'पोरसौ' (रू. भे.)

पोरसौ–सं०पु० [सं० पुरुष] पुतला । उ०—उर उच्छव 'अजमाल', पेख प्रांमे छत्रपत्ती । देस वंस ऊधरौ, नेस हूंता सुरपत्ती । कळपव्रक्ष संतांन, पारिजाति हरि चंदण । तर मंदार दुवार, आंगण ऊगा सुख अप्पण । चिंतामणि पारस पोरसौ, सुधा सरोवर कांमगा । संपजे तांम सुत संपनै, ग्रह सुर धांम विरांमगा ।—रा. रू.
रू० भे०—पुरिसौ पोरसौ ।

पोरस्स—देखो 'पोरस' (रू. भे.)
उ०—जुटे हिक वथां जोध जुआंण । पोरस्स हुवै हिक आहे पांण ।
—गु. रू. वं.

पोरांण–वि० [सं० पौराणिक] १. पुराण सम्बंधी, पुराण का ।
२. प्राचीन, पुराना ।
३. देखो 'पुरांण' (रू. भे.)
उ०—वेदां भेदां वेखौ पेखौ दह आठ हेर पौरांणं । राघौ नांम सरीखं, नह कौ नर देव नागिंद्रं ।—र. ज. प्र.

पोरांणिक–वि० [सं० पौराणिक] १. पुराण पाठी । २. पुराण सम्बंधी, पुराण का । ३. पुराण वेत्ता । ४. पूर्व कालीन ।

पौराणौ, पौराबौ–क्रि० स० [सं० प्रहर+रा० प्र० णौ] प्रतीक्षा करना, इंतजार करना।

पौराणहार, हारौ (हारी), पौराणियौ—वि०।

पौरायोड़ौ—भू० का० कृ०।

पौराईजणौ, पौराईजबौ— भाव वा०।

पौरावणौ, पौराववौ–रू० भे०।

पौ'रायत, पौ'रायती–सं०पु० [सं० प्रहर+रा० प्र० आयत, आयती] पहरा देने वाला, चौकीदार।

उ०—१. कांमण, खोड़ौ, कील सुत, पौ'रायत, परवार। जन तुरछी ग्रह भाखसी, मोह कै जड़ै किंवाड़।—तुरछी

उ०—२. पौळ पौळ माथै पौ'रायती अडीजंत ऊभा।—फुलवाड़ी

रू०भे०—पहराइत, पहरायत, पहिराइत, पहिरायत, पहिरायति, पुहुरायत, पोरायत, पोहराइत, पोहराग्रत, पोहरू, पोहरायत, पौहरावत।

पौरायोड़ौ–भू० का० कृ०—प्रतीक्षा किया हुआ, इन्तजार किया हुआ। (स्त्री० पौरायोड़ी)

पौरावणौ, पौराववौ—देखो 'पौराणौ, पौराबौ' (रू. भे.)

पौरावणहार, हारौ (हारी), पौरावणियौ—वि०।

पौराविओड़ौ, पौरावियोड़ौ, पौराव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

पौरावीजणौ, पौरावीजबौ—भाव वा०।

पौरिस—देखो 'पोरस' (रू.भे.)

उ०—पौहतौ सुरग ऐम करि पौरिस। जगत विख्यात अहृदवळ रौ जस।—सू.प्र.

पौरिसि—देखो 'पौरस' (रू.भे.) (ह.नां.मा.)

पौरी—देखो 'पौळ' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—कनक कोट पौरी कनक, कनक हाट बाजार। जो जन अढ़ी हजार में, सब कंचन विसतार। —गजउद्धार

पौरख—देखो 'पौरस' (रू.भे.)

उ०—पौसाक सिलै ऐसाक पूर-गिरकंध छाक, पौरख गरूर।
—वि.सं.

पौ'रेक–क्रि०वि० [सं०प्रहर+एक] एक प्रहर के लगभग।

रू०भे०—पोहरै'क।

पौ'रौ—देखो 'पहरौ' (रू.भे.)

उ०—लीली खेती लहरावै है, दै पांणतियौ पौ'रौ साख समेत रे।
—चेतमांनखा

पौळ–सं०स्त्री० [सं० प्रतोली, प्रा० पओली] १. बड़ा दरवाजा, गेट, तोरण-द्वार।

उ०—पहियां राव न पावही, पड़ी बीज उण पौळ। ऊ फळसौ रहजो अडग, दूधां दहियां छौळ।—वां. दा.

२. सामने का वह मकान जिसमें से होकर अंदर प्रवेश किया जाता है, ड्योढ़ी।

यौ० —पौळपात, पौळप्रवाह, पौळप्रत्ति।

३. निशान लगाने निमित्त बन्दूक की नाळ पर लगाया हुआ वह उपकरण जिसके अन्दर से देखकर निशाना लगाया जाता है।

४. सारंगी के उपर के हिस्से में वह स्थान जो (Arch) सा मालूम पड़ता है।

रू० भे०—पउळ, पउळि, पिरोळ, पिरौळ पोळ, पोळि, प्रोळ, प्रोळि प्रोळी, प्रौळ, प्रौळी।

अल्पा०—पोळड़ी, पोळी, पौरी, पौळि, पौळी, प्रोळि, प्रोळी, प्रो'ळी।

पौल—सं०पु०—१. देखो 'पोल' (रू.भे.) (अ. मा.)

पौळच—देखो 'पोळच' (रू.भे.)

पौळपात, पौलपात्र—सं०पु० [सं० प्रतोली पात्र] राजपूत युग में चारण जाति का वह व्यक्ति जो युद्ध-काल में शत्रु द्वारा घिर जाने पर, मरने का निश्चय कर युद्ध में कूदने वालों में सबसे आगे रहकर किले का मुख्य द्वार खोलता था।

वि० वि०—राजाओ के राज्य-काल में जब किसी राजा का किला शत्रु द्वारा घेर लिया जाता था तो किले के अन्दर सभी राजपूत मरने का निश्चय कर सामूहिक रूप से अफीम लेकर शत्रु से लोहा लेने के लिए उतारू हो जाते थे। ऐसे समय में सब से पहला व्यक्ति पौळपात वह वंशानुगत चारण होता जो सब से आगे जाकर किले का मुख्य द्वार खोलकर शत्रु से मुकाबला करके वीर-गति को प्राप्त होता था। चारणों की इस निर्धारित अतुल्य सेवा का मूल्यांकन उस समय होता जब कि राज-घराने में विवाह के समय दूल्हा बिना पौळपात की अनुमति के तोरण बांदने नही जा सकता था और इस स्वीकृति के साथ 'पौळपात' को निश्चित राशि भेंट-स्वरूप देनी पडती थी।

रू०भे०—पोळिपात।

पौळबारहठ–सं० पु० [सं० प्रतोली+द्वार+हठ] पौळ (तोरणद्वार) पर नेग लेने वाला कवि।

वि० वि०—देखो 'पौळपात'।

रू०भे०—प्रोळबारहठ।

पौळसत, पौलसित, पौलस्त, पौलस्त्य—सं०पु० [सं० पौलस्त्यः](स्त्री०पौलस्त्यी) १. पुलस्त्य का पुत्र या वंशज' कुबेर (नां.मा.,ह.नां.मा.)
२. रावण। (नां. मा.)

पौलस्त्यी–सं०स्त्री० [स०] रावण की बहन, शूर्पणखा।

रू०भे०—पोलहस्ती।

पौळहत्यौ–सं०पु० [सं० प्रतोली+हस्त] १ वह बड़ा भोज जिसमें आने वाले को भोजन करने की कोई मनाही नही की जाती है। २. पति के साथ सती होने वाली स्त्री के हाथ का नगर के बड़े द्वार पर बना हस्तचिन्ह।

पौळहस्ती—देखो 'पौलस्त्यौ' (रू.भे.)

पौळाणौ, पौळाबौ–क्रि०स० [देशज] प्रारंभ करना, शुरू करना।
पौळाणहार, हारौ (हारी), पौळाणियौ—वि०।
पौळायोड़ौ—भू० का० कृ०।
पौळाईजणौ, पौळाईजबौ—कर्म वा०।
पौळावणौ, पौळावबौ—रू० भे०।

पौलाद—देखो 'फौलाद' (रू.भे.)

पौळायोड़ौ–भू०का०कृ०—प्रारंभ किया हुआ, शुरू किया हुआ। (स्त्री० पौळायोड़ी)

पौळावणौ, पौळावबौ—देखो 'पौळाणौ, पौळाबौ' (रू.भे.)
पौळावणहार, हारौ (हारी), पौळावणियौ—वि०।
पौळाविप्रोड़ौ, पौळावियोड़ौ, पौळाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पौळावीजणौ, पौळावीजबौ—कर्म वा०।

पौळावियोड़ौ—देखो 'पौळायोड़ौ' (रू.भे.) (स्त्री० पौळावियोड़ी)

पौळि—देखो 'पौळ' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—पिड़ चूर दिली घर साहजहांपुर, चीत लगे हर प्रात चड़े। इळ मूळ जड़ां नारनौळ उखेड़े, पौळि दिली दुख रौळ पड़े। —रा रू.

पौळिड़ौ, पौळियौ–सं० पु० [सं० प्रतोली+रा० प्र० ड़ौ, इयौ] द्वारपाल, ड्योढ़ीदार।
उ०—पोळिड़ा पोळ उघाड़, आज नै अबेळा आया पांवणा। —लो. गी.
रू० भे०—पोळियौ, पौल्यौ, प्रोळियौ प्रौळियौ।
अल्पा०—पौलिड़ौ, पौळीड़ौ।

पौलिस–सं० पु० [अं० पॉलिश] १. चिकनाई, चमक, ओप। २. चिकनाई और चमक लाने का रोगन।

पौळी—देखो 'पौळ' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—पौळ खुलण रो दीखै नांही जोग ए जी वो भंवरजी, वो कोई पोल्यां में सूत्यौ पूत कलाळ ए जी म्हारा राज। —लो. गी.

पौळीड़ौ—देखो 'पौळियौ' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—पौळीड़ा भाई पौळ उघाड़, ए जी कोई बाहर तो ऊभौ समरथ पांवणां जी म्हारा राज। —लो. गी.

पौलोमी–सं०स्त्री० [सं०] १. इन्द्राणी। २. भृगु ऋषि की पत्नी।

पौल्यौ—देखो 'पौळियौ' (रू. भे.)
उ०—रावळी पौळै आवीया। पौल्या वेगी वधावउं जाइ।—बी.दे.

पौस—देखो 'पोस' (रू. भे.)

पौसत—देखो 'पोस्त' (रू.भे.)
उ०—अमल खलीती घरि रही। मीना पौसत छाड्या छांणि। —बी. दे.

पौसध–सं० पु० [सं० पौसध] धर्म वृद्धि के दिन के व्रत। (जैन)
वि० वि०–ये व्रत अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या और पूर्णिमा को किये जाते हैं क्यों कि ये पर्व–दिन धर्म वृद्धि के कारण माने जाते हैं। इन पर्वों में उपवास करना पौषधोपवास व्रत कहलाता है। यह व्रत चार प्रकार का है। (१) आहार पौषध (२) शरीर पौषध (३) ब्रह्मचर्य पौषध (४) अव्यापार पौषध।
रू० भे०—पोसद, पोसध, पोसह, पोसहउ, पोहोसौ पौसह।
अल्पा०—पोसारौ, पोसौ।

पौसधसाला–सं० स्त्री० [सं० पौषधशाला] पौसध व्रत करने का स्थान।
उ०—मन रौ जोस करी ने वेग सूं रे, आयो **पौसधसाला** रै मांय रे।—जयवांणी
रू० भे०—पौसहसाला।
अल्पा०—पौसधसालौ।

पौसधसालौ—देखो 'पौसधसाला' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—माता रै पगं लागनै हो, आया पौसधसालौ, हरिणगमेसी देवता हो, मन चिंतवे तत कालौ।—जयवांणी

पौसह—देखो 'पौसध' (रू. भे.)

पौसाक, पौसाख—देखो 'पोसाक' (रू. भे.)
उ०—१. सभ्र पौसाक सुरंग दळ साजा। राज पटण आये चंदराजा।—सू. प्र.
उ०—२. हे कंथा औ तौ थांरौ घड़ायोड़ौ गहणौ आ थांरी करायोड़ी पौसाख अबै थें धारण करौ, म्हारौ तो सुहाग गयौ। —वी. स. टी.

पौसाळ—देखो 'पोसाळ' (रू. भे.)

पौसावणौ, पौसावबौ—देखो 'पोसाणौ, पोसाबौ' (रू. भे.)
उ०—ओ गोरियावार दीखतो सांप्रत काळ है, इण सूं लड़ियां नीं पौसावै। इण रा विस नै तौ अकल सूं दाटणौ पड़सी। ढील में करार नी व्है तो वगत माथै अकल सूं कांम सारणौ। —फुलवाड़ी
पौसावणहार, हारौ (हारी), पौसावणियौ—वि०।
पौसाविप्रोड़ौ, पौसावियोड़ौ, पौसाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
पौसावीजणौ, पौसावीजबौ—कर्म वा०।

पौसावियोड़ौ—देखो 'पोसायोड़ौ' (रू. भे.) (स्त्री० पौसावियोड़ी)

पौस्टिक–वि० [सं० पोष्टिक] बल व वीर्य वर्द्धक, पुष्टि कारक।

पौह—देखो 'पह' (रू.भे.)
उ०—१. सीता चो सांम सिघाळौ, पौह सेवग रां प्रतपाळौ। जी बिरदाळौ। —र.ज.प्र.
उ०—२. पौह घणा भागलां गई मुहराइ पड़ि। चावगुर 'जसौ' जिणवार वर सोह चड़ि। —हा.झा.
२. देखो 'पूस' (रू.भे.)

उ०—पोह री ठोड़ चैत रो महीनो आयग्यो । —फुलवाड़ी

पोहकर—देखो 'पुस्कर' (रू.भे.) (अ.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—आया पोहकर नेम ले, 'मघकर' हर कुळ मोड़ । देवळ स्रोवाराह रै, मुगत सरोवर ठोड़ । —रा.रू.

पोहकरमूळ—देखो 'पुस्करमूळ' (रू.भे.)

पोहकरण—देखो 'पुस्कर' (रू.भे.) (अ.मा.)

पोहकरी—देखो 'पुस्करी' (रू.भे.) (अ.मा.,ह.नां.मा.)

पोहच—१. देखो 'पहुंच' (रू.भे.)

२. देखो 'पोच' (रू.भे.)

पोहचणौ, पोहचबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू.भे.)

उ०—पोहचि तठै सिवका पोढ़ांणी । इम पण-पूर भरथ अग्र आंणी । —सू.प्र.

पोहचणहार, हारौ (हारी), पोहचणियौ—वि० ।

पोहचाड़णौ, पोहचाड़बौ, पोहचाणौ, पोहचाबौ, पोहचावणौ, पोहचावबौ—प्रे०रू० ।

पोहचिओड़ौ, पोहचियोड़ौ, पोहच्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पोहचीजणौ, पोहचीजबौ—भाव वा० ।

पोहचाड़णौ, पोहचाड़बौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचाबौ' (रू.भे.)

पोहचाड़णहार, हारौ (हारी), पोहचाड़णियौ—वि० ।

पोहचाड़िओड़ौ, पोहचाड़ियोड़ौ, पोहचाड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पोहचाड़ीजणौ, पोहचाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पोहचाड़ियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पोहचाड़ियोड़ी)

पोहचाणौ, पोहचाबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू.भे.)

उ०—पंथी हेक संदेसड़उ, ढोलउ लग पोहचाइ । विरह महा दव जागियउ, आगि न बुझावउ आइ । —ढो.मा.

पोहचाणहार, हारौ (हारी), पोहचाणियौ—वि० ।

पोहचायोड़ौ—भू०का०कृ० ।

पोहचाईजणौ, पोहचाईजबौ—कर्म वा० ।

पोहचायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० पोहचायोड़ी)

पोहचाळ—देखो 'पोचाळौ' (मह., रू. भे.)

उ०—वेहळा-वेहळा मुख वांण वळै । पोहचाळ उडावत ढेल पुळै । —पा.प्र.

पोहचावणौ, पोहचावबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ (रू.भे.)

पोहचावणहार हारौ (हारी), पोहचावणियौ—वि० ।

पोहचाविओड़ौ, पोहचावियोड़ौ, पोहचाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

पोहचावीजणौ, पोहचावीजबौ—कर्म वा० ।

पोहचावियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहचावियोड़ी)

पोहचियोड़ौ—देखो 'पहुंचियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहचियोड़ी)

पोहत—देखो 'पहुंच' (रू. भे.)

पोहतणौ, पोहतबौ—देखो 'पहुंचणौ, पहुंचबौ' (रू. भे.)

उ०—१. पांडू-नकोदर कंवर 'वीकैजी' रै जाय पावां लागा अरु कंवरजी नूं कयौ, 'थारा जाट मार नरसिंघ जादू सावत जाय है' तद कंवर 'वीकोजी' वा कांधलजी साथ सारै सूं चढ़िया, सूं सीध-मुख सूं कोस दो पर ढीका है तठै जाय पोहता ।—द. दा.

उ०—२. ऊलटिया सिर आगरै, 'अवदुला' 'अजमाल' । आगै पोहतै आगलो, वारण खांन दुकाल ।—रा. रू.

२. देखो 'पोयणौ, पोयबौ' (रू. भे.)

पोहतणहार, हारौ (हारी), पोहतणियौ—वि० ।

पोहताड़णौ, पोहताड़बौ, पोहताणौ, पोहताबौ, पोहतावणौ, पोहतावबौ—प्रे० रू० ।

पोहतिओड़ौ, पोहतियोड़ौ, पोहत्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पोहतीजणौ पोहतीजबौ—भाव वा० ।

पोहताड़णौ, पोहताड़बौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू. भे.)

पोहताड़णहार, हारौ (हारी), पोहताड़णियौ—वि० ।

पोहताड़िओड़ौ, पोहताड़ियोड़ौ, पोहताड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पोहताड़ीजणौ, पोहताड़ीजबौ—कर्म वा० ।

पोहताड़ियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहताड़ियोड़ी)

पोहताणौ, पोहतावौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू. भे.)

पोहताणहार, हारौ (हारी), पोहताणियौ—वि० ।

पोहतायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

पोहताईजणौ, पोहताईजबौ—कर्म वा० ।

पोहतायोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहतायोड़ी)

पोहतावणौ, पोहतावबौ—देखो 'पहुंचाणौ, पहुंचावौ' (रू. भे.)

पोहतावणहार, हारौ, (हारी) पोहतावणियौ—वि० ।

पोहताविओड़ौ, पोहतावियोड़ौ, पोहताव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

पोहतावीजणौ, पोहतावीजबौ—कर्म वा० ।

पोहतावियोड़ौ—देखो 'पहुंचायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० पोहतावियोड़ी)

पोहप—देखो 'पुस्प' (रू. भे.)

उ०—सुकर सेलां घजर पाड़तो घणां सत्र, अभंग चाचर अंबर जाय अडियौ । 'अभा' रो मधुप जिम वीर सारां अगर, पोहप धारां वगर तूट पड़ियौ ।—चांदसिंघ री गीत

पोहपधनु—देखो 'पुस्पधनु' (रू. भे.)

पोहमि, पोहमी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

उ०—१. हुतां राग होकबा, ग्रहूं आए छत्रपत्ती। तांम गजां ऊतरै, पोहमि हित चढ़े प्रभत्ती।—सू. प्र.

उ०—२. वेंडा ऊजड़वाट वहे, गिर भंगर गाहधा। पोहमी हलचल होम पुड़, सेस भार नी सहघा। —वी. मां.

पोहमीवंदण—सं०पु० [सं० पृथिवी+वंदन] बांस। (श्र. मा.)

पोहर—सं०पु० [देशज] १. जल, पानी। (श्र. मा.)

सं०स्त्री०—[स० प्रहर] २. समय। (श्र.मा.)

३. देखो 'प्रहर' (रू.भे.)

उ०—रिघ-सिघ सुख आपै सकळ, आठूं पोहर उचारियै। पल मांय श्रास पूरै परम, सच्चे दिल संभारियै। —ज.खि.

पोहरायत—देखो 'पौ'रायत' (रू.भे.)

उ०—पोहरै पोहरायत खड़ा, फिरै गिसत चहुं फेर। 'सारंग' सुत पोढै सदा, श्रत मोटे आसेर। —पा. प्र.

पोहरेकरण—सं०पु०यौ० [सं० कर्ण-प्रहर] राजाकर्ण का दान देने का समय, प्रात: काल, उषाकाल।

उ०—कवियण पोहरैकरण रै, नित ले ज्यां रो नांम। जिके जसोधन पुरस घन 'बांका' करण विरांम।—बां.दा.

पोहरौ—देखो 'पहरौ' (रू. भे.)

उ०—पोहरै पोहरायत खड़ा, फिरै गिसत चहुं फेर। 'सारंग' सुत पोढ़ै सदा, श्रत मोटे आसेर। —पा प्र.

पोहव—देखो 'पह' (रू.भे.)

उ०—हेरू दाखे हेत सूं, मन सुध वात मिळाय। पिता वेर सांभै पोहव, करौ जेज मत काय। —पा. प्र.

पोहुंमी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

पोहचाळौ—देखो 'पौचाळौ' (रू.भे.)

उ०—करण धाबळी वा'र 'पाल' धांधल पोहचाळौ। सूरवीर सापुरस, भांणवंसी भालाळौ। —पा. प्र.

पोहौ—देखो 'पह' (रू. भे.)

उ०—दसै दिस मांही, पोहौ जोड़ न हुवै दुवै। हाक जिण श्रांण सुणी, हिरण खोड़ा हुवै। —सू. प्र.

प्यंड—देखो 'पिंड' (रू.भे.)

उ०—जो मन वसी मोह फंद जूटां। छूटसि तिकां प्रांण प्यंड छूटां। —सू. प्र.

प्यलोणौ, प्यलोबौ—क्रि० स० [?] समेटना।

उ०—सत्र साम्फत प्यलाणौ सारै तळ छळि घण लाल श्रतांग। पांव प्यलोय घसि स्रृगि वासियौ, नागणि नै डरि कहै हंस नाग।

—चतुरा रांमावत राठौड़ रौ गीत

प्याज—सं०पु० [फा० प्याज] १. भारत वर्ष में प्राय: सर्वत्र पाया जाने वाला, एक प्रकार का गुच्छों के रूप में श्वेत पुष्पों तथा लंबे पत्तों वाला पौधा विशेष (शाक)। २. उक्त पौधे का कंद जो आकार में गोल तथा रंग में गुलाबी या सफेद होता है। इसका स्वाद बहुत चरपरा तथा तीक्ष्ण होता है और गंध बहुत उग्र होती है। यह पाचक, सारक, बल व वीर्य वर्द्धक तथा वातघ्न होता है।

पर्या०—कांदौ, ग्रंजन, दीरघपत्र, पलांडु।

मुहा०—प्याज रौ छिलकौ उतार नै राख देणौ—बुरी दशा कर देना।

रू०भे०—पियाज।

प्याड—सं०पु०—राजपूत सरदारों के कंठ में धारण करने का एक स्वर्ण-आभूषण।

प्याद—देखो 'पैदल' (अल्पा., रू.भे.)

उ०—बुरद भई न भई चोमोरै, प्याद मात भई प्रांणी। जुगत बिन सतरज जीत न जांणी। —ऊ.का.

यौ०—प्याद-मात।

प्यावल—देखो 'पैदल' (रू.भे.)

उ०—घोड़ा १०० सूं, प्यादल माणस ५०० सूं, स्री 'वीकौ' जी गांव देसणोक श्राया।—द. दा.

प्यादौ—देखो 'पैदल' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—सू दखणधांरी फौज री दोय इणी है। प्यादां री इणी रै विचै तो सावंतराय घोड़ै असवार हुवौ होकर करै है।—द. दा.

प्यारंभ—देखो 'प्रारंभ' (रू. भे.)

उ०—जांणपणाउ कळा तियइ तन जोवण, विध विन्हे ही लागा वाद। मथ काढ़ी जांणी महामह प्यारंभ, मांडी तिण रूप री मजाद।—महादेव पारवती री वेलि

प्यार—सं० पु० [सं० प्रीति ?] १. पुरुष की स्त्री के प्रति व स्त्री की पुरुष के प्रति होने वाली ऐसी आसक्ति पूर्ण भावना जो पारस्परिक आकर्षण के कारण होती है, प्रेम, मुहब्बत।

२. प्रेम-पूरक किया जाने वाला चुम्बन।

३. किसी के प्रति होने वाली आसक्तिपूर्ण या श्रद्धापूर्ण भावना।

उ०—चिर सार यही सब प्यार चहौ। उपकार बिनां नहिं पार ग्रहौ।—ऊ का.

रू० भे०—पिश्रार, पियार, पीयार।

प्यारी—वि०—अच्छी लगने वाली।

सं० स्त्री०—१. प्रिया, प्रिय।

उ०—१. सहज ललाई सांपरत, प्रीतम प्यारी पाय। निरखै भरमै नायणी, जावक दे मिळि जाय।—वां. दा.

उ०—२. रितुगांमी ह्वै सील राखियौ, पुत्रोत्पति फळ पाई। पति पतनी दम्पति पियै प्यारी, नवला नेह निभाई।—ऊ. का.

२. पत्नी।

उ०—चंदवदन गुणखांण चतुरचित, परहर अपणी प्यारी। वेस्या संग मोल विन वालम, विकगो बडो विकारी।—ऊ. का.

प्यारौ–वि० पु० [सं० प्रिय ?] (स्त्री० प्यारी) अच्छा लगने वाला।

ज्यूं०—प्यारौ बच्चौ।

सं० पु०—१. प्रिय, प्यारा।

उ०—१. प्यारा थांसूं पलक ही, वांछूं नहीं विजोग। उर वसिया मो आवजौ, रसिया थारौ रोग। —वां दा.

उ०—२. आंख्या उणियारौह, निपट नहीं न्यारौ हुवौ। प्रीतम मो प्यारौह, जोती फिरूं रे जेठवा ! —जेठवा

२. पति, स्वामी।

रू० भे०—पिआरौ, पिग्रारौ, पीयारौ।

अल्पा०—पियारडौ, पीयारड़, पीयारडौ, पीयारडु, पीयारडौ।

प्याली—स० स्त्री०—देखो 'प्यालौ' (अल्पा., रू भे)

प्यालौ–सं० पु० [फा० पियाल] १. चीनी, धातु, काच आदि का वना छोटा कटोरा जो ऊपर से चौड़ा व पेंदे (नीचे) से संकड़ा होता है।

उ०—सू प्यालो सयणी 'मालदे' नुं दियौ।

—सयणी चारणी री वात

मुहा०—१. प्यालौ देणौ—मद्य पिलाना। २. प्यालौ पीणौ—मद्य पान करना, रस पान करना। ३. प्यालौ भरणौ—हद होजाना, सीमा तक आना, मृत्यु के निकट आना।

२. तोप या बन्दूक का कान जिस पर बारूद रख कर पलीता लगाया जाता है।

उ०—१. कारतूस घन युद्ध कर सुम्मा लग थग्गै। एक पलीती काळिका, दहूं ओरनि दग्गै। रिंजक प्याला सोरही भाळा जगमग्गै। यारौ परळै काळरी ज्वाळानळ जग्गै। —ला.रा.

उ०—२. कांबी चोळ भाळ रंगी तोपां दीपमाळका-सी। प्याला लै कराळ कळका सी स्रोण पीध। —हुकमीचंद खिड़ियौ

रू०भे०—पिग्रालौ, पियालौ, पीयालौ।

अल्पा०—पियाली, पीयाली, प्याली।

मह०—पियाल, पीयाल।

प्यावड़ी–स० स्त्री० [?] पीली मिट्टी जो शरीर रंगने के काम में ली जाती है। (शेखावाटी)

प्यास, प्यासा–सं० स्त्री० [स० पिपासा] १. जल पीने की इच्छा, तृषा, पिपासा।

उ०—क्षुधा प्यासा माग दुसहकर आसा दुख खगें। अघरमी धार हैं, सरव सुखकारी मुख अगें। —ऊ का.

किसी वस्तु की प्राप्ति की प्रवल इच्छा, कामना।

पर्या०—त्रसा, त्रटपांन, पिपासा।

क्रि०प्र०—वुझणी, वुझाणी, मरणी, मारणी, मिटणी, मिटाणी, लगणी, लागणी।

रू०भे०—पिआस, पियास।

प्यासौ–वि० पु० [सं० पिपासु] (स्त्री० प्यासी) १. जल पीने की इच्छा रखने वाला।

२. किसी काम की कामना रखने वाला।

पर्या०—त्रसित, पिपासित।

रू०भे०—पिग्रासौ, पियासौ।

प्यूतारणौ, प्यूतारबौ—देखो 'पूंतारणौ, पूंतारबौ' (रू भे)

उ०—प्यूतारै मारै गडां पांण। इणविध वैसारै नीठ आंण।

—सू.प्र.

प्यूतारणहार, हारौ (हारी), प्यूतारणियौ—वि०।

प्यूतरिओड़ौ, प्यूतारियोड़ौ, प्यूतारचोड़ौ—भू०का०कृ०।

प्यूतारीजणौ, प्यूतारीजबौ—कर्म वा०।

प्यूतारियोड़ौ—देखो 'पूंतरियोड़ौ' (रू.भे)

(स्त्री० प्यूतारियोड़ी)

प्रइज—देखो 'प्रजा' (रू भे)

उ०—पाखरिए पइठउ प्रइज पाळि। 'वीरम्म' तणउ थाटां विचाळि।—रा.ज.सी.

प्रईक, प्रईख–सं०पु० [सं०प्रेष्य] नौकर चाकर। (अ. मा., ह. नां. मा.)

प्रउढ़ा, प्रऊढ़ा—देखो 'प्रौढ़ा' (रू.भे)

उ०—१. किसी एक वाळी भोळी अवळा प्रउढ़ा, सोडस वरस की। रांणी, रवतांणी। आपणा-आपणा देवर जेठ, भरतार का पुरखारथ देखती फिरइ छइ।—अ. वचनिका

उ०—२. पोस कै विखै रात्रि छै सु आकास कौ निठि छोडे छै। जैसे प्रउढ़ा नाइका नाइक कौ। —वेलि टी.

प्रकप–सं०पु० [सं०] थरथराहट, कंपकंपी।

प्रकंपण–स०पु० [सं० प्रकंपन] १. वायु, हवा। (अ.मा.)

२. थर थराहट, कपकंपी।

रू०भे०—प्रकंबण, प्रकपन।

प्रकंपमांन–वि० [सं० प्रकंपमान] जिस में कंपन हो रहा हो, हिलता हुआ।

प्रकंवण—देखो 'प्रकंपण' (रू.भे.) (अ. मा.)

प्रक–सं०पु० [सं० प्र+क=प्रकष्ट कायति इति=प्रक] मयूर, मोर।

(अ. मा., नां.मा.)

प्रकट–वि० [सं०] १. प्रत्यक्ष, स्पष्ट। २. प्रसिद्ध, मशहूर।

उ०—दूजौ जिण आह्वय दांमीदर प्रकट थियौ दिस दिस वसुधा पर।

—वं. भा.

३. खुला बेपर्दा। ४. दातार। (अ. मा.)

५. उत्पन्न।

उ० प्रकट हुका चीता प्रचुर चित्रक रा चहूवांण। जिण कुळ में गजमल जिसा, थिया अचळ आयांण। —व. भा.

अव्य०—१.साफतौर से ।

रू०भे०—परकट, परगट, परगट्ट, परगडउ, परघट, प्रगट, प्रगट्ट, प्रघट, प्रघट्ट ।

प्रकटणौ, प्रकटबौ—क्रि०अ० [सं० प्रकटनम्] १. प्रकट या जाहिर होना । २. उत्पन्न होना, जन्मना । उ०—सब भक्तन भाग्य ही प्रकटे, नाम धरियो रणछोड़ । —मीरां

प्रकटणहार, हारौ (हारी), प्रकटणियौ—वि० ।

प्रकटाड़णौ, प्रकटाड़बौ, प्रकटाणौ, प्रकटाबौ, प्रकटावणौ, प्रकटावबौ —प्रे० रू०

प्रकटिग्रोड़ौ, प्रकटियोड़ौ, प्रकट्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रकटीजणौ, प्रकटीजबौ—भाव वा० ।

परकटणौ, परकटबौ, परगड़णौ, परगड़बौ, परगटणौ, परगटबौ, परगडणौ, परगडबौ, परघटणौ, परघटबौ, प्रगटणौ, प्रगटबौ, प्रगट्टणौ, प्रगट्टबौ, प्रग्गडणौ, प्रग्गडबौ, प्रघटणौ, प्रघटबौ, प्रघट्टणौ, प्रघट्टबौ—रू० भे० ।

प्रकटाड़णौ, प्रकटाड़बौ—देखो 'प्रकटाणौ, प्रकटाबौ' (रू. भे.)

प्रकटाड़णहार, हारौ (हारी), प्रकटाड़णियौ—वि० ।

प्रकटाड़िग्रोड़ौ, प्रकटाड़ियोड़ौ, प्रकटाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रकटाड़ीजणौ, प्रकटाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

प्रकटाड़ियोड़ौ—देखो 'प्रकटायोडौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रकटाड़ियोडी)

प्रकटाणौ, प्रकटाबौ—क्रि०स० [सं० प्रकटनम्] १. प्रकट या जाहिर करना या करवाना । २. उत्पन्न करना या करवाना ।

प्रकटाणहार, हारौ (हारी), प्रकटाणियौ—वि० ।

प्रकटायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रकटाईजणौ, प्रकटाईजबौ—कर्म वा० ।

परकटाड़णौ, परकटाड़बौ, परकटाणौ, परकटाबौ, परकटावणौ, परकटावबौ, परगटाड़णौ, परगटाड़बौ, परगटाणौ, परगटाबौ, परगटावणौ, परगटावबौ, परघटाड़णौ, परघटाड़बौ, परघटाणौ, परघटाबौ, परघटावणौ, परघटावबौ, प्रकटाड़णौ, प्रकटाड़बौ, प्रकटावणौ, प्रकटावबौ, प्रगटाड़णौ, प्रगटाड़बौ, प्रगटाणौ, प्रगटाबौ, प्रगटावणौ, प्रगटावबौ, प्रघटाड़णौ, प्रघटाड़बौ, प्रघटाणौ प्रघटाबौ, प्रघटावणौ, प्रघटावबौ, प्रघट्टाड़णौ, प्रघट्टाड़बौ, प्रघट्टाणौ, प्रघट्टाबौ, प्रघट्टावणौ, प्रघट्टावबौ—रू० भे० ।

प्रकटायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. प्रकट किया या कराया हुआ. २. उत्पन्न किया या कराया हुआ.

(स्त्री० प्रकटायोड़ी)

प्रकटावणौ, प्रकटावबौ—देखो 'प्रकटाणौ, प्रकटाबौ' (रू. भे.)

प्रकटावणहार, हारौ (हारी), प्रकटावणियौ—वि० ।

प्रकटाविग्रोड़ौ, प्रकटावियोड़ौ, प्रकटाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रकटावीजणौ, प्रकटावीजबौ—कर्म वा० ।

प्रकटावियोड़ौ—देखो 'प्रकटायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रकटावियोड़ी)

प्रकटियोड़ौ—भू० का० कृ०—१. प्रकट हुआ हुवा या जाहिर हुआ हुवा. २. उत्पन्न हुवा हुआ, जन्मा हुआ.

(स्त्री० प्रकटियोडी)

प्रकत, प्रकति, प्रकत्त, प्रकत्ति, प्रकत्ती—देखो 'प्रकृति' (रू भे.)

उ०—१. बिसन्न बिमोह बिसव्व बिग्यांन । रतीपतितात प्रकत्त राजांन ।—ह र.

उ०—२. उपत्ति खपत्ति प्रकत्ति ग्रसंग, राजीवलोचन्न जांणै धुवरग ।—ह. र.

उ०—३. पुरुस पुरांण प्रकत्ती, पार न पावंत ऐस गणपत्ती । करनी जयति सकत्ती, गिरा गौ ग्रतीत तो गत्ती ।—मे. म.

प्रकंपन—देखो 'प्रकपण' (रू.भे.) (ह नां.मा.)

प्रकर—सं० पु० [सं० प्रकर:] १. समूह, ढेर । (ह.नां.मा.)

उ०—ग्ररु कुमार प्रथ्वीराज री तरह देखि प्रसंसा रौ प्रकर गहियौ । —वं.भा.

प्रकरण—सं० पु० [सं० प्रकरणम्] १. विषय, प्रसंग ।

२. किसी ग्रंथ के ग्रन्तर्गत छोटे-छोटे भागो में से कोई एक भाग, ग्रध्याय ।

३. ग्रारभिक वक्तव्य, मुखबंध ।

४. विषय विशेष को समझने या समझाने के लिये उस पर वाद विवाद करने की क्रिया, जिक्र करना ।

क्रि० प्र०—चलणौ, छेड़णौ ।

प्रकरस—सं० पु० [सं० प्रकर्ष] १. उत्कर्ष, उत्कर्षता ।

२. अधिकता, आधिक्य ।

उ०—जिको सुणतां ही अकबर रै जांणै बारूद रा गंज में दमंग झड़ै जिण रीति क्रोधानळ रौ प्रकरस छायौ । —वं.भा.

प्रकरसक—सं० पु० [सं० प्रकर्षक] उत्कर्ष करने वाला ।

प्रकरसण—सं० पु० [सं० प्रकर्षणम्] उत्कृष्टता, उत्कर्षता, श्रेष्ठता ।

उ०—सौ भी आतताई नूं उबारि बाप रौ बचावणहार बाढ़ियौ तो भी ग्रद्वितीय वार हुवा सुणि किता'क कविलोकां तिकण रा ही प्रहार रौ प्रकरसण भणियौ ।—वं. भा.

प्रकवाहण—सं० पु० [सं० प्रकवाहन] कार्त्तिकेय, षडानन । (ग्र.मा.)

प्रकांड—वि० [सं०] १. बहुत बड़ा, विशाल ।

२. बहुत ग्रधिक, विस्तृत । ३. उत्तम, सर्वश्रेष्ठ ।

प्रकांम—स० स्त्री० [सं० प्राकाम्या] ग्रष्ट सिद्धियों में से एक । (डिं. को.)

प्रकार—सं० पु० [सं० प्रकार:] १. ढग, तौर, तरीका, प्रणाली ।

उ०—साहिब रहउ न राखिया, कोड़ि प्रकार किया-ह। का थां कांमिण मन वसी, का म्हां दूहविया-ह।—ढो. मा.

२. तरह, भांति। उ०—ग्रदतां केरी अत्थ ज्यूं, कायर री किरमाळ। कोड प्रकारां कोस सूं, नह पावै निकाळ।—बां. दा.

३. भेद, किस्म।

४. देखो 'प्राकार' (रू. भे)

रू० भे०—परकार, प्रकारू।

ग्रल्पा०—प्रकारी प्रकारौ।

प्रकारी—देखो 'प्रकार' (ग्रल्पा., रू. भे.)

उ०—सुण-सुण नैं हारी सारी सुण, पागल लाख प्रकारी। ऊमरदान विचार विनां ग्रब, कछु ह न लागै कारी।—ऊ. का.

प्रकारू—स० पु० [सं० प्रकारः] १. प्रताप, प्रभाव। उ०—दस द्रस्टांते दोहिलौ, स्रावक नौ कुल सारू रे। संगति वलि सदगुरू तणी, पांमी पुण्य प्रकारू रै।—ध. व. ग्रं.

२. देखो 'प्रकार' (रू. भे.)

प्रकारौ—देखो 'प्रकार' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—धरम हीयइं धरउ, धरम ना च्यार प्रकारौ रे। भवियण सांभलउ, धरम मुगति सुख कारौ रे।—स. कु.

प्रकास—सं० पु० [स० प्रकाश] १. वह जिसके द्वारा पदार्थों का रूप नेत्रों द्वारा दृष्टिगोचर होता है, ग्रंधकार का विलोम, रोशनी चांदना।

२. ज्योतिष्यमान पदार्थों की गति या शक्ति जो तरंगों के रूप में निकलती है।

३. उक्त का वह रूप जो हमें ग्रांखों से दिखाई देता है।

४. ज्योतिर्मय तरंगो के निकलने का वह उद्गम या स्रोत जो हमारी दृष्टि-शक्ति का सहायक होता है।

५. ज्ञान। उ०—डिंगळियां मिळियां करे, पिंगळ तणौ प्रकास। संस्क्रती ह्वै कपट सज, पिंगळ पढ़ियां पास।—बां. दा.

६. स्थिति या ग्रवस्था।

उ०—ह्वै यूं कुकवी हाथ मे, पोथी तणौ प्रकास। केळ पत्र जांणै कियौ, वानर रै कर वास।—बां. दा.

७. नैत्रों की वह शक्ति जिससे पदार्थ दिखाई देते हैं, ज्योति।

८. ख्याति, प्रसिद्धि।

उ०—१. कवि पंडित जाहिर करै, मोटा रौ जसवास। छोटां रा जस रो हुवै, पहिलां हूंत प्रकास।—बां. दा.

उ०—२. जउ पण बिना ही प्रांण चहूंदाण रौ मस्तक पाछौ मुरड़ियौ इसड़ो किंवदंती नैं प्रकास लियौ।—व. भा.

९. सूर्य का आतप, धूप।

१०. सूर्य, भानु। (ग्र. मा.)

११. चमक। उ०—जुत भमरावळि जाण, जिल्है तन जागणी। बादळ माफळ बीज, प्रकास विलागणी।—बां. दा.

१२. तेज, कांति, दीप्ति। (ह. नां. मा.)

१३. आकाश। (ग्र. मा.)

१४. घोड़े की पीठ की चमक। १५. खुला मैदान। १६. किसी ग्रंथ या पुस्तक का ग्रध्याय।

रू० भे०—पगास, परकास, परगास, परिकास, प्रक्कास, प्रगास।

प्रकासक—वि० [सं० प्रकासक] १. प्रकट करने वाला, दिखलाने वाला। २. चमकीला, उज्ज्वल। ३. व्यक्त करने वाला। ४. व्याख्या करने वाला। ५. प्रसिद्ध करने वाला, विख्यात करने वाला।

सं० पु०—१. सूर्य। २. प्रसिद्धकर्त्ता, विख्यातकर्त्ता।

ज्यूं०—रामायण रौ प्रकासक, गीता रौ प्रकासक।

रू० भे०—परकासक, परगासक, प्रक्कासक, प्रगासक।

प्रकासण—वि० [सं० प्रकाशन] प्रकट करने वाला, प्रसिद्ध करने वाला।

उ०—जे दोही पख ऊजळा, झूझण पूरा जोध। सुणतां वे भड़ सौ-गुणा, बीर प्रकासण बोध।—वी.स.

सं० पु० [सं० प्रकाशनः या प्रकाशनम्] १. प्रकाशित करने का कार्य, प्रकाश में लाने का काम। २. ग्रंथ या पुस्तक ग्रादि छपवाकर प्रचारित करने का कार्य। ३. मुद्रित कर प्रसिद्ध की जाने वाली कोई भी पुस्तक। ४. विष्णु का नामान्तर। ५. सूर्य। (ह.ना.मा.)

रू० भे०—पयासणु, परकासण, प्रक्कासन, प्रक्कासण, प्रगासण।

प्रकासणौ, प्रकासबौ—क्रि० स० [सं० प्रकाशनम्] १. दिखाना, दर्शन देना। उ०—दीह घणा मांझल दुनी, रळियौ देखे रूप। माधव हमे प्रकास मौ, सिव ताहरौ सरूप।—ह.र.

२. कहना, कथना।

उ०—मीठा वेंण प्रकास मुख, जग में लालच जीत। ऊंघम हल्यां अत्थड़ी, काना सुण निज क्रीत।—बां.दा.

३. वर्णन करना, बखानना।

उ०—बांणी पवित्र कन्सि सीतावर, नितप्रत क्रीत प्रकासे नर हर। नासा विसन करिम इम निरमळ, प्रभु घूंटै तो चरणां परमळ।—ह र.

४. जाहिर करना, प्रकट करना, व्यक्त करना।

उ०—१. ताहरां ढोलैजी मन री वात प्रकासी, माळवणी म्हारै तो एक महल ग्रोर सामळां छां, तद माळवणी वोली ग्रा वात भूठी छै।—ढो. मा.

उ०—२. बिस मुख जास बसंत, मीठा बोलां हस मरै। उरग तणौ कर मंत, मोर प्रकासै एह मत।—बा.दा.

५. चलाना, प्रचलित करना।

उ०—हूं बलिहारी जाऊं तेहनी, जेह नउ ग्ररिहंत नाम। जिण ए धरम प्रकासियउ, कीधउ उत्तम काम।—स.कु.

प्रकासणहार, हारौ (हारी), प्रकासणियौ—वि०।

प्रकासिग्रोड़ौ, प्रकासियोड़ौ, प्रकासयोड़ौ—भू०का०कृ०।

प्रकासीजणौ, प्रकासीजबौ—कर्म वा०।

पयासणौ, पयासबौ, परकासणौ, परकासवौ, परगासणौ, परगासबौ, प्रक्कासणौ, प्रक्कासबौ, प्रगासणौ, प्रगासवौ—रू० भे० ।

प्रकासत—देखो 'प्रकासित' (रू.भे.)

प्रकासतभूप–सं० पु० यौ० [सं० प्रकाश+भूप] सूर्य, भानु । (डिं. को.)

प्रकासदांन–सं० पु० [सं० प्रकाश+फा० दान] स्वच्छ हवा आने के लिए कमरे में छत्त के नीचे दीवार में बनाया गया छोटा झरोखा, रोशनदान ।

प्रकासन—देखो 'प्रकासण' (रू. भे.)

प्रकासमांन, प्रकासवांन–वि० [सं० प्रकाशमान] चमकता हुआ, चमकीला । रू० भे०—परकासमांन, परकासवांन ।

प्रकासित–वि० [सं० प्रकाशित] १. जिससे प्रकाश निकल रहा हो, चमकता हुआ ।

उ०—रसम हीलोळ अंग छोळ कर दांन रुख, प्रकासित गजित झड़ गुणां पुंजौ । कमळ हस नीळकंठ जेम पाळण कव्यां, दुडिद सागर मघण मेघ दूजौ ।—महाराज भगतरांम हाडा री गीत

२. प्रकट किया हुआ, प्रसिद्ध किया हुआ । ३. जो दीख पड़े, स्पष्ट । ४. प्रत्यक्ष ।

रू० भे०—प्रकासत ।

प्रकासियोड़ौ–भू०का०कृ०—१. दिखलाया हुआ. २. कहा हुआ, कथा हुआ. ३. वर्णन किया हुआ, बखान किया हुआ. ४. जाहिर किया हुआ, प्रकट किया हुआ, व्यक्त किया हुआ. ५. चलाया हुआ, प्रचलित किया हुआ.

(स्त्री० प्रकासियोड़ी)

प्रकासी–वि० [सं० प्रकाशिन्] १. जिसमें प्रकाश हो, चमकता हुआ, चमकीला ।

२. साफ, उज्ज्वल ।

३. प्रकाश करने वाला ।

उ०—निरालंब निरवांण निरंतर, सब प्रकासी वो ई । सो ई सुखरांम सुधातमा चेतन, मत बुध लखे न मोई ।

—स्री सुखरांमजी महाराज

प्रकीरण–सं०पु० [सं०प्रकीर्ण] १. फुटकर कविताओं का संग्रह ।

२. पुस्तक का अध्याय या प्रकरण । ३. तरह तरह का, अनेक प्रकार का ।

रू०भे०—परकीरण ।

प्रकीरणक–सं०पु० [सं०प्रकीर्णक] १. ग्रंथ का अध्याय या प्रकरण ।

२. चंवर । ३. फुटकर ।

प्रकीरतन–सं०पु० [सं०प्रकीर्तन] १. घोषणा । २. जोर-जोर से कीर्तन करना । ३. जोर-जोर से किया जाने वाला कीर्तन ।

प्रकुपित–वि० [स०] प्रकोप बढ़ा हुआ, क्रुद्ध ।

प्रकुस्मांडी–सं०स्त्री० [सं०प्रकुष्माण्डी] दुर्गा ।

प्रकोप–सं०पु० [स०] १. अत्यधिक क्रोध । उ०—अर सनीचर री उण आकरी झळ री अंडौ प्रकोप व्हियौ कै अेन लक्खी बिणजारा री वाळद नदी रै मज्झ आई अर अेन उणी वगत नदी गैंगाट करती आटां-पाटां बांसां छेक मलापती माथा कर पर व्हेगी ।—फुलवाड़ी

२. किसी रोग की प्रवलता अथवा उसका उग्र रूप धारण करना । उ०—जिण समय दिल्लीस साहजिहांन रै मूत्रकृच्छ्र नांमक महातंक रौ प्रकोप थियौ । तिकण री पीड़ा रै परतंत्र होइ आपरा अधिकार रै ऊपर वडा पुत्र दारा नूं रहण दियौ ।—वं. भा.

३. किसी रोग विशेष की प्रवलता का समाज में विस्तृत रूप से फैलना ।

ज्यूं०—आज कल माता (शीतला) रौ नगर में प्रकोप है ।

४. शरीरस्थ वात पित्त आदि का किसी कारण विशेष से विकृत होना जिससे रोगोत्पत्ति होती है ।

५. क्षोभ ।

रू०भे०—परकोप ।

प्रकोरठ–सं०पु० [सं०प्रकोष्ठ:] १. कोहनी के नीचे का भाग ।

२. बीच का वह खुला आंगन जो चारों ओर से इमारत से घिरा हो । उ०—स्रद्धा रै समांन सात्रवां रौ संहार करती सारी ही मध्यपुर रा प्रकोरठ रै माथै आवती क्रपांणां रै बाढ़ लागा ।—वं. भा.

३. मुख्य द्वार के पास का कमरा ।

४. ससद, विधान सभा आदि के बाहर का वह कमरा या बरामदा जहां बैठ कर सदस्य व्यक्तिगत रूप से या पत्रकारों आदि से बातचीत करते हैं, गैलेरी ।

प्रक्कास—देखो 'प्रकास' (रू. भे.)

प्रक्कासक—देखो 'प्रकासक' (रू. भे.)

प्रक्कासण—देखो 'प्रकासण' (रू. भे.)

प्रक्कासणौ, प्रक्कासबौ—देखो 'प्रकासणौ, प्रकासबौ' (रू. भे.)

प्रक्कासणहार, हारौ (हारी), प्रक्कासणियौ—वि० ।

प्रक्कासिओड़ौ, प्रक्कासियोड़ौ, प्रक्कास्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रक्कासीजणौ, प्रक्कासीजबौ—कर्म वा० ।

प्रक्रत–वि० [स० प्रकृत] १. असली, यथार्थ ।

२. स्वाभाविक ।

३. देखो 'प्रक्रति' (रू. भे.)

उ०—१. चरचा करतां चुगल सूं, प्रक्रत हुवै परतत । चुगली काना सुणण सूं, मैलौ ह्वै गुरमत ।—बां. दा.

उ०—२. हसा की प्रक्रत हसा जाणै, कहा जांणै नर कागा रे ।

—मीरां

उ०—३. रावत खगार मानसिह री रीत-भांत दीठी । प्रक्रत एकण भात री छै, सु रांणा जी नूं कहाड़ियौ ।—नैणसी

उ०—४. काज अहोणौ ही करै, एह प्रकत खळ अंग । रांमण पठियौ रांम दिस, कर सोव्रनौ कुरंग ।—बां. दा.

प्रकृति—सं० स्त्री० [सं० प्रकृति] १. वह अनादि शक्ति जो समस्त विश्व के सृजन, विनाश, कार्य एवं कारण का उद्‌गम-स्रोत है।
उ०—ओम्‌ऽकार अपार, पार जिण रौ कुण पावै। आदि मध्य, अवसांण, थकां पिंडां नंह थावै। निरालंब निरलेप, जगत गुरु अंतर जांमी। रूप रेख बिण रांम, नांम जिण रौ घणनांमी। सच्चिदानद व्यापक सरब, इच्छा तिण में ऊपजै। जगदंब सकति त्रिसकति, जिका ब्रह्म प्रकृति माया वजै।—मे. म.
२. प्राणी या पदार्थ की अन्तर्निहित वह जन्म-जात प्रवृत्ति या गुण जो अपरिनर्तनशील एवं अपृथकनीय होता है।
उ०—ऋपण ऋपण दरपण निरख, प्रकृति न तजै प्रबंध। भाळौ नवमां भेद में, जिको कहावै ग्रंध।—बां. दा.
३. किसी स्थान विशेष का दृश्य जहां वनस्पति, पशु-पक्षी आदि अपने मूल स्वरूप में दृष्टिगोचर हों।
४. मनुष्य की वह जन्मजान प्रवृत्ति, गुण या विशेषता जिसके कारण वह शुभ या अशुभ पहलू की ओर प्रवृत्त होता है।
५. आवास, निर्वाह आदि की वह व्यवस्था जिसके अन्तर्गत मनुष्य मूलभूत पदार्थों का मौलिक स्थिति में उपभोग करता है।
६. वैद्यक में, शारीरिक रचना और प्रवृत्ति के आधार पर मनुष्य की मूल स्थितियो के ये सात विभाग वातज, पित्तज, कफज, वात-पित्तज, वात-कफज, कफ-पित्तज और सम धातु।
७. व्याकरण में वह मूल धातु रूप जिसके उपसर्ग एवं प्रत्यय लगाने से अनेक रूप बनते हैं।
८. भारतीय प्राचीन राजनीति में राजा, आमात्य या मन्त्री, सुहृद, कोश, राष्ट्र, दुर्ग, बल, (सेना) प्रजा एवं शिल्पी इन नौ का समूह। (अमर कोश)
९. परवर्ती दार्शनिक क्षेत्र में पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहकार इन आठों का समूह।
१०. आकाश के पांच तत्त्व—काम, क्रोध, शोक, मोह और भय; वायु के पांच तत्त्व—चलन, वलन, धावन, प्रसारण और आकुंचन; तेज के पांच तत्त्व—क्षुधा, तृषा, आलस्य, निद्रा और कांति; जल के पांच तत्त्व—शुक्र, शोणित, लाळ, मूत्र और स्वेद; पृथ्वी के पांच तत्त्व—अस्थि, मांस, नाड़ी, त्वचा और रोम; इन पंच महाभूतो के पच्चीस तत्त्व के समूह का नाम।
११. आकृति। १२. प्रजा। १३. सतान। १४. स्त्री, नारी। १५. माता। १६. योनि, लिंग।
१७. स्वभाव। उ०—धनां जी री प्रकृति करड़ी जांण नें स्वांमी जी विचारघो आ भारमल जी सूं निभाणी कठिन है।—भि. द्र.
१८. २५ की संख्या*। १९. ८ की संख्या*।
रू० भे०—परकत, परक्त्त, परकरती, परगत, परगती, प्रकत, प्रकति, प्रकत्त, प्रकत्ति, प्रकत्ती, प्रक्रत, प्रक्रती, प्रक्रत्ति, प्रक्रत्ती, प्रक्रित, प्रगत, प्रगति, प्रगती।

प्रकृतिबंध—सं० पु० यौ० [सं० प्रकृतिबंध] जीव के द्वारा ग्रहण किए हुए कर्म पुद्‌गलों में जुदे-जुदे स्वभावों का अर्थात् शक्तियों का पैदा होना प्रकृतिबंध कहलाता है। (जैन)

प्रक्रती, प्रक्रत्ति, प्रक्रत्ती—देखो 'प्रकृति' (रू.भे.)
उ०—१. आप म्हारै पती आप रा जेठूत नैं दिनोदिन सीधी प्रक्रती रा कारण सूं आप भोळा जांणता हा अर आ जांणता हा अै गरीब पणा रा सूत लक्षण है पण हाथियां री फौज नें काटनैं आप रौ जोग्यपणौ जांणायो छै।—वी.स.टी.
उ०—२. प्रक्रत्ति पचीस तेतीस प्रचंडय, मंड-स मंडय पिंड इता। हुय थंड विहंडय जीव-स डंडय, सूर प्रचडय मत्र इता। तत्काळ विकराळ विहाळ-स झंपण, व्याधि गिराह सनाह वुरौ।
—करुणासागर

प्रक्रम—सं० पु० [सं०] १. आरंभ, शुरुआत। २. कार्रवाई, पद्धति। ३. ढंग, तौर। ४. पैर, कदम।

प्रक्रमभंग—सं० पु० [सं०] किसी विषय के वर्णन मे आरंभ के क्रम का यथावत् पालन न करने पर होने वाला एक साहित्यिक दोष।

प्रक्रस्ट—वि० [सं० प्रकृष्ट] १. उत्कृष्टतर, उत्कृष्टतम, श्रेष्ठ। २. प्रधान, मुख्य।

प्रक्रस्टता—सं० स्त्री० [सं० प्रकृष्ट+रा० प्र० ता] उत्तमता, श्रेष्ठता।

प्रक्रित—देखो 'प्रकृति' (रू.भे.)
उ०—जाकी प्रीत लगी लालन से, कंचन मिळ सुहागा रे। हंसा की प्रक्रित हंसा जांणै, कहा जांणै नर कागा रे।—मीरां

प्रक्रिया—सं० स्त्री० [सं०] १. ढंग, तौर, तरीका।
२. ग्रंथ का अध्याय, परिच्छेद। ३. व्याकरण में वाक्य रचना प्रणाली। ४. अधिकार, हक।
रू० भे०—परकिरिया।

प्रक्षिप्त—वि० [सं०] १. बाद में मिलाया हुआ, ऊपर से मिलाया हुआ।
२. घुसेड़ा हुआ। ३. आगे की ओर बढ़ा या निकला हुआ।
४. फेंका हुआ।

प्रक्षेप—सं० पु० [सं०] १. मिलाना, बढाना।
२. ऊपर से मिलाना, प्रक्षिप्त करना। ३. छितराना, बिखेरना।

प्रखंड—देखो 'परखंड' (रू. भे.)

प्रखत—सं० पु० [सं० पृषत:] १. चित्तीदार हरिण।
२. हरिण। (अ. मा., ह. ना. मा.)
[सं० प्रकत्थ्य अथवा पृषत्] ३. मोर, मयूर। (अ. मा.)
४. मोती। (नां. मा.)
५. धन, द्रव्य। (अ. मा.)

प्रखतक—सं० पु० [सं० पृषत्क] तीर, बांण। (अ. मा., ह. नां. मा.)

प्रखतवाह—सं० पु० यौ० [सं० पृषत्‌वाह] स्वामी कार्त्तिकेय। (अ. मा.)

प्रखर–वि० [सं०] १. बड़ा तेज या तीव्र। २. अत्यन्त ऊष्ण। ३. तीक्ष्ण।

प्रखाळित–वि० [सं० प्रक्षालित] १. धोया हुआ, साफ किया हुआ। २. छिड़का हुआ। ३. पवित्र किया हुआ।
रू० भे०—प्रखोळित।

प्रखोळित—देखो 'प्रखाळित' (रू. भे.)
उ०—धरिया तनि वसत्र कुमकुमै धोया, सौंधा प्रखोळित महल सुख। भर स्रावणि भाद्रवि भोगविजै, रुखमिणि वर एहवी रुख।—वेलि

प्रख्यात–वि० [सं०] प्रसिद्ध, विख्यात, मसहूर।
रू० भे०—परिख्यात।

प्रख्याति–सं० स्त्री० [सं०] १. कीर्ति, सुयश। २. प्रसिद्धि, विख्याति।

प्रगट–सं० पु० [सं० प्रकट] १. प्रत्येक चरण में तीन रगण का छंद विशेष। (ल. पिं.)
२. देखो 'प्रकट' (रू. भे.) (ग्र. मा.)
उ०—१. एक न चाहै ओर नूं, उभै दुखी ह्वै अंग। आदम नैं इळवीस रौ, प्रगट विचार प्रसंग।—बां. दा.
उ०—२. जग में दीठो जोय,हेक प्रगट बिवहार म्हैं। कांम न मोटौ कोय, रोटी मोटी राजिया।—किरपारांम

प्रगटणौ, प्रगटबौ—देखो 'प्रकटणौ, प्रकटबौ' (रू. भे.)
उ०—१. बुहराडे भसम जिगन री बांधी, नांखाडइ हेमगिर निजीक। पारब्रती अवतार प्रगटसी, कहियउ तरइ ब्रह्मो मरमीक।
—महादेव पारवती री वेलि
उ०—२. कहिए माळवणी तणइ, रहियउ साल्ह विमास। उन्हाळउ ऊतारियउ, प्रगटयउ पावस मास।—ढो. मा.
प्रगटणहार, हारौ (हारी), प्रगटणियौ—वि०।
प्रगटिग्रोड़ौ, प्रगटियोड़ौ, प्रगट्योड़ौ—भू०का०कृ०।
प्रगटीजणौ, प्रगटीजबौ—भाव वा०।

प्रगटदसा–सं०स्त्री० [स०प्रकट+दशा] १. प्रकाश, रोशनी, ज्योति। (अ. मा.)
२. दीपक। (अ. मा.)

प्रगटाड़णौ, प्रगटाड़बौ—देखो 'प्रकटाणौ, प्रकटाबौ' (रू. भे.)
प्रगटाड़णहार, हारौ (हारी), प्रगटाड़णियौ—वि०।
प्रगटाड़िग्रोड़ौ, प्रगटाड़ियोड़ौ, प्रगटाड़्योड़ौ—भू०का०कृ०।
प्रगटाड़ीजणौ, प्रगटाड़ीजबौ—कर्म वा०।

प्रगटाड़ियोड़ौ—देखो 'प्रकटायोडौ' (रू. भे.)
(स्त्री० प्रगटाडियोड़ी)

प्रगटाणौ, प्रगटाबौ—देखो 'प्रकटाणौ, प्रकटाबौ' (रू. भे.)
प्रगटाणहार, हारौ (हारी), प्रगटाणियौ—वि०।
प्रगटायोड़ौ—भू०का०कृ०।
प्रगटाईजणौ, प्रगटाईजबौ—कर्म वा०।

प्रगटायोड़ौ—देखो 'प्रकटायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० प्रगटायोड़ी)

प्रगटावणौ, प्रगटावबौ—देखो 'प्रकटाणौ, प्रकटाबौ' (रू. भे.)
प्रगटावणहार, हारौ (हारी), प्रगटावणियौ—वि०।
प्रगटाविग्रोड़ौ, प्रगटावियोड़ौ, प्रगटाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।
प्रगटावीजणौ, प्रगटावीजबौ—कर्म वा०।

प्रगटावियोड़ौ—देखो 'प्रकटायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० प्रगटावियोड़ी)

प्रगटियोड़ौ—देखो 'प्रकटियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० प्रगटियोड़ी)

प्रगट्ट—देखो 'प्रकट' (रू. भे.)
उ०—प्रछन्न प्रगट्ट पुरवख-पुरांण।—ह. र.

प्रगट्टणौ, प्रगट्टबौ—देखो 'प्रकटणौ, प्रकटबौ' (रू. भे.)
उ०—नौबति रोडि हुई नीसांणां। अंबर गाजि वाजि असमांणां। जांण प्रभाकर जोत प्रगट्टी। गढ़ हूं चढ़ि आयौ तळहटी।
—गु. रू. बं.
प्रगट्टणहार, हारौ (हारी), प्रगट्टणियौ—वि०।
प्रगट्टिग्रोड़ौ, प्रगट्टियोड़ौ, प्रगट्टयोड़ौ—भू०का०कृ०।
प्रगट्टीजणौ, प्रगट्टीजबौ—भाव वा०।

प्रगड–सं०पु० [सं० प्रगाढ] गरूड़। (अ. मा., ह. नां. मा.)

प्रगडउ—देखो 'पगडौ' (रू. भे.)
उ०—उर मेहां पवनांह ज्यउं, करह उडंदउ जाइ। पूगळ जाइ प्रगडउ करइ, करइ मारवणि दाइ।—ढो.मा.

प्रगत, प्रगति, प्रगती–स० स्त्री० [स० प्रगति] १. आगे की ओर बढ़ना, उन्नति करना। २. विशेषतः किसी कार्य को पूर्णता की ओर बढाते चलना।
३. देखो 'प्रकति' (रू. भे.) (अ.मा., ह.नां.मा.)
उ०—प्रगत तणौ प्रताप, नहीं पास्यो नर देही। जग में बीजे जनम हुस्यो, भूंगर कन से ही।—अरजुणजी बारहठ

प्रगळ—देखो 'परगळ' (रू. भे.)
उ०—गुल प्रगळ सोहै वागरा, यां नै देख अनूप। त्रिया रूप तारै जदी, चिमनां लागी चूप।—पनां वीरमदे री वात
(स्त्री० प्रगळी)

प्रगळणौ, प्रगळबौ—देखो 'पिघळणौ, पिघळबौ' (रू. भे.)
उ०—पिता जमराज खटतीस करणाधपत, ओपियो जगत कीधां ऊजाळौ। घोम तो खाग वरियांम जोधां धणी, प्रसण प्रगळै चलै ज्यूंही ज पाळौ।—रघुनाथ सांदू

प्रगळभ—देखो 'प्रगल्भ' (रू. भे.)

उ०—१. प्रगळभ कहतां विस्तीरण लाग दाट पारेवा ल्यै छै।
—वेलि टी.

उ०—२. विधि पाठक मुक सारस रस वंछक, कोविद खंजरीट गतिकार। प्रगळभ लाग दाट पारेवा, विदुर वेस चक्रवाक विहार।
—वेलि

प्रगळांरा—देखो 'परगळांरा' (रू. भे.)

प्रगल्भ–वि० [सं०] १. निर्भय, निडर। उ०—प्रस्थान रै प्रथम बारहठ लोहठ नरेस नूं कहियौ, मंडोवर रै अधीस हमीर पड़िहार आपरा चरण चंपै जितरी जमी द्विजां नूं देरा कही जिरा कारण इसड़ै तौर चालियौ तौ पड़िहार केही पीढ़िया थी धन्वधरा रौ प्रांत पाइ प्रगल्भ बरिए बैठा जिरा थी आहव रौ प्रारंभ उरैं ही पावसी।—वं. भा.

२. साहसी, उत्साही, हिम्मती।

उ०—प्रगल्भ कंठ पेल देत, कंठ कंठिराव कौ। दुहत्थ हत्थ ठेल देत, हत्थ ले प्रदाव कौ।—ऊ. का.

३. वीर, बहादुर। ४. प्रत्युत्पन्न-मति, हाजिर-जबाब, वाग्मी। ५. पूर्ण बुद्धि को प्राप्त, निपुण। ६. अभिमानी, अहंकारी, घमंडी।

रू० भे०—प्रगळभ।

प्रगल्भता–सं० स्त्री० [सं० प्रगल्भ+रा० प्र० ता] १. निर्भयता, निडरता। २. वीरत्त्व शौर्य, बहादुरी। ३. चतुराई, दक्षता, निपुणता ४. ढीटता, धृष्टता।

प्रगाढ़–वि० [सं०] १. दृढ़, मजबूत। २. कड़ा कठोर। ३. वीर, बहादुर। ४. शक्ति शाली, समर्थ। ५. अधिक, बहुत।

रू० भे०—पगाढ, परगाढ।

प्रगाळ–अव्य० [सं० प्रगे+काल] प्रातः काल, उषाकाल।

रू० भे०—परगाळ, प्रहगाळ।

प्रगाळियौ–वि० [सं० प्रगे+काल+रा० प्र० इयौ] प्रातः काल का, उषा-काल सम्बन्धी।

सं० पु०—उषाकाल में उदय होने वाला तारा।

वि० वि०—देखो 'प्रभातियौ'।

रू० भे०—परगाळियौ, प्रहगाळियौ।

प्रगास—देखो 'प्रकास' (रू. भे.)

उ०—१. लेखे एम निसीत लग, पेखे प्रेम प्रगास। जगि रति मदन विलास ज्यों, हित चित परख हुलास।—रा. रू.

उ०—२. प्रथम परमेसुर बीनवां जी, जिन थरप्या धरनी अकास। चद सूरजि दोउ थरपिया जी, पांणी पवन प्रगास।
—रुकमणी-मंगळ

प्रगासक—देखो 'प्रकासक' (रू. भे.)

प्रगासरा—देखो 'प्रकासरा' (रू. भे.)

प्रगासणौ, प्रगासबौ—देखो 'प्रकासणौ, प्रकासबौ' (रू. भे.)

उ०—मन प्रवीण कुंदरा मुहर, प्रेम प्रगासै जोत। विरह अगन ज्यूं ज्यूं तपै, त्यूं त्यूं कीमत होत।—अज्ञात

प्रगासणहार, हारौ (हारी), प्रगासणियौ—वि०।

प्रगासिग्रोड़ौ, प्रगासियोड़ौ, प्रगास्योड़ौ—भू०का०कृ०।

प्रगासीजणौ, प्रगासीजबौ—भाव वा०।

प्रगासियोड़ौ—देखो 'प्रकासियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रगासियोड़ी)

प्रगिना—देखो 'प्रग्या' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

प्रग्गडणौ, प्रग्गडबौ—देखो 'प्रकटणौ, प्रकटबौ' (रू. भे.)

उ०—धरि सहस्र फरासां धारणा, खिति अनोप कीधौ खड़ौ। असपती सुणे अच्चज्जियौ, परम-धांम किर प्रग्गड़ौ।—रा. रू.

उ०—२. पवन पराक्रम स्यां कहूं, सहि थांनकि संचार। पंच-तत्त्व महि प्रग्गडूं, पहिलूं तुझ अवतार।—मा. कां. प्र.

प्रग्गडियोड़ौ—देखो 'प्रकटियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रग्गडियोड़ी)

प्रग्घळ, प्रग्घळौ—देखो 'परगळ' (रू. भे.)

उ०—१. रत-खाळ रळ-तळ पालर प्रग्घळ। होहूं हूकळ थट्ट हुवै।
—गु. रू वं.

उ०—२. बरस सितर चौ वीर, अजे जुध आफळै। अंजसै मुरधर आज, 'पता' जस प्रग्घळ।—किसोरदांन बारहठ

प्रग्य–वि० [सं० प्रज्ञ] १. बुद्धिमान। २. प्रतिभावान। ३. विद्वान।

प्रग्या—सं० स्त्री० [सं० प्रज्ञा] बुद्धि, मति, ज्ञान। उ०—घट-घट घरा नांमी स्वांमी सुरराई। अंतरनांमी हुय ओळज नह आई। इतरी आवग्या ईस्वर क्यूं आंणी। बूढ़ौ हुयग्यौ कै प्रग्या विसरांणी।
—ऊ. का.

रू०भे०—परग्या, प्रगिना, प्रागना, प्रागिना, प्राग्यन।

प्रग्याचक्षु, प्रग्याचख–सं०पु० [सं० प्रज्ञाचक्षुस्] १. नैत्रहीन, अंधा। २. धृतराष्ट्र का नामान्तर। ३. हृदय की आंख वाला, मन।

प्रग्रह–सं०पु० [सं०] १. चंद्र या सूर्य के ग्रहण का आरंभ। २. लगाम, वल्गा। ३. रोकथाम। ४. बंधन, कैद।

वि०— बंदी, कैदी।

प्रघट—देखो 'प्रकट' (रू. भे.)

उ०—सत्रसाल पढ़ीजै वीरभद्र, प्रघट जांम है मह-प्रथी। जाडेची ज 'जसवंत' जाम, धु जिसी गंगा भागीरथी।—गु.रू.वं.

प्रघटणौ, प्रघटबौ—देखो 'प्रकटणौ, प्रकटबौ' (रू. भे.)

उ०—प्रघटै जटत जवहर पंत अति आछापणै। तौरां 'मांन' राजै तखत परस रवि तणै।—बा. दा.

प्रघटियोड़ौ—देखो 'प्रकटियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रघटियोड़ी)

प्रघट्ट—देखो 'प्रकट' (रू. भे.)

उ०—पैमाल पेहट्ट घाट दुघट्ट हींसा फट्ट घरा थट्ट। राठोड़ सुभट्ट आखि निहट्ट, बंध प्रघट्ट रिणवट्ट।—गु. रू. बं.

प्रघट्टणौ, प्रघट्टबौ—देखो 'प्रकटणौ, प्रकटबौ' (रू. भे.)

प्रघट्टणहार, हारौ (हारी), प्रघट्टणियौ—वि०।

प्रघट्टिओड़ौ, प्रघट्टियोड़ौ, प्रघट्टयोड़ौ—भू०का०कृ०।

प्रघट्टीजणौ, प्रघट्टीजबौ—भाव वा०।

प्रघट्टियोड़ौ—देखो 'प्रकटियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रघट्टियोड़ी)

प्रघण, प्रघळ—देखो 'परगळ' (रू. भे.)

उ०—१. मह जाय पेखै छांह निरमळ, प्रघण हिम पांणी। तिन समय परभा त्रिया तिण नूं, वदै मुख वांणी।—र. रू.

उ०—२. गय-राजां गुड ग्रहण, रहण पाखर हयराजां। पाजां छिलि दळ प्रघळ, सघण वरसाल समाजां।—वं. भा.

उ०—३. बीज झळाहळ जळ प्रघळ, नदिया खळकै नीर। रीता सरवर कुण भरै, राज बिना रघुवीर। —अज्ञात

(स्त्री० प्रघणी, प्रघळी)

प्रघळौ—वि० [सं० पुष्कल] १. महान, जबरदस्त।

उ०—पहु गोघलिया पास, आलुधा अकबर अणी। रांणौ खिमै न रास, प्रघळौ सांड 'प्रतापसी'। —दुरसौ आढौ

२. देखो 'परगळ' (रू. भे.)

उ०—पंगी तणा वाजिया प्रघळा, वडै दुरंग सिर राय विहार।

—महाराजा रायसिंह बीकानेर रौ गीत

प्रघस—सं०पु० [सं० प्रघसः, प्रघस] १. राक्षस। २. भुक्कड़पन, पेटूपन, अहदी।

प्रघात—सं०पु० [स० प्रघात.] १. युद्ध, लडाई। (अ. मा.)

उ०—तिकण रै साथ कछवाह जयसिंह, गौड़ अनिरुद्धसिंह, नबाब दलेलखां तीन ही मुख्य सामंत देर आपरौ उद्धत अनीक दियौ। तीन ही सांमंत सलेम रै साथ साम्हे जाइ बांणारसी रै समीप कुमार रा काका नूं कोरड़ौ लोह चखायो। जिण थी पहला ही प्रघात में परम्मुख होइ दूजौ कुमार दूजा रौ प्रहार भी न खायौ।

—वं. भा.

२. वध, हत्या।

प्रघेळ—देखो 'परगळ' (रू. भे.)

उ०—पहल उबांबर प्रकट, पीछै अछत प्रघेळ। ?ठ हियौ 'नगमल' अपत, वधै विघव बाघेल।—कल्यांणसिंह नगराजोत बाढ़ेल री वात

(स्त्री० प्रघेळी)

प्रचंड—वि० [स०] १. अत्यत तेज, तीव्र, उग्र, असह्य।

ज्यूं०—आज तावड़ौ घणौ प्रचंड है, दिन रा बा'रै जाणौ कठिण है।

२. जबरदस्त। उ०—साड त्रिसिंघ अखाड-सिंघ, पौरिस जोध प्रचंड। तोडर बांधै आडियौ, 'गजबंधी' बळिवंड।—गु. रू. बं.

३. मजबूत, बलवान। उ०—के मुळतांणी कावली, पेसावरी प्रचंड। नेसापुर रा नीपना, बगदादी बळवंड। —बां. दा.

४. साहसी, वीर। उ०—वडो जोध सांमंत, पडे 'जबदळ' प्रचंड-ह। खेत पडे ताजखां, पडे 'केहरि' बळिबड-ह।—गु. रू. बं.

५. महान, बड़ा। (अ. मा.)

उ०—१. स्वभाविक सास्वत स्वच्छ स्वरूप। अनिच्छ अभिच्छ प्रतच्छ अनूप। अघोक्षज अक्षज आद न अंत, अखंड प्रचंड अनादि अनत।—ऊ. का.

उ०—२ मुख-बंघ खैग छोडै मरद्द। सांहणी सांहणी हुऐ सद्द। पाकडै जोध बाथां प्रचंड। हुइ लेह देह छूवै हुसंड।—गु. रू. बं.

६. भयंकर, भयानक।

उ०—एको ही नांम अनंत रौ, पेलै पाप प्रचंड। जव तिल जेतौ ज्वाळनळ, खोण दहै नव-खंड।—ह.र.

७. क्रोधमूर्च्छित, गुस्सैल।

उ०—गढां भूखियौ कांम री हांम गाढ़ी। दिनौ मूंछ वळ पांण स-त्तांण दाढ़ी। पौरस्सै तरस्सै उसस्सै प्रचंडं। विकस्सै हसै ऊघसै वैण डंडं।—गु. रू. बं.

८. बड़े शरीर का, महाकाय।

उ०—परबत पंख प्रचड ए, मल्हपति मांणक डंड ए। मदमोख जूह महाबळी, सदरूप मेघ-क सिघळी।—गु. रू. बं.

९. मजबूत, दृढ़।

उ०—परबत पंख पक्खर प्रचंड। एराकी पिठ खुरसांण खंड।

—गु. रू. बं.

१०. कठिन, कठोर। ११. प्रतापी।

१२. बलवान, शक्तिशाळी।

स० पु०—१. गजानन, गणेश। (अ. मा.)

२. हाथी, गज। (अ. मा., ह. ना. मा.)

३. ऊंट। (ना. डि. को.)

४. ४९ क्षेत्रपालों में ३७ वां क्षेत्रपाल।

रू० भे०—परचड, प्रचंडक, प्रचडी।

अल्पा०—परचडौ, प्रचडौ।

प्रचंडक—देखो 'प्रचड' (रू. भे.)

प्रचडता—स० स्त्री० [स० प्रचड+रा० प्र० ता] प्रचंड होने का भाव, उग्रता, भयकरता।

प्रचंडा—स० स्त्री० [सं०] दुर्गा, रणचडी।

प्रचंडौ—देखो 'प्रचड' (अल्पा., रू. भे)

उ०—सूंडाडड प्रचडौ, मूसा आरूढ मेक मय दतौ। ईस्वर उमया पुत्रौ, तस्मै गुणेसाय नमौ।—गु. रू. बं.

प्रचक्र—सं० पु० [सं०] शत्रु दल, शत्रु-सेना।

उ०—विघांन वक्र चक्र ते, प्रचक्र चूरती वहैं।—ऊ. का.

प्रचर–सं० पु० [सं० प्रचरः] मार्ग, रास्ता। (ह. नां. मा.)

प्रचलण–सं० पु० [सं०] १. प्रचलन या व्यवहार में होना।
२. नियम, रीति-रिवाज, प्रथा सिद्धान्त आदि का प्रचलित रहने का भाव। ३. रिवाज, प्रथा। ४. चलन, प्रचार।
रू० भे०—परचलण।

प्रचलित–वि० [सं०] १. जिसका चलन हो, जारी। (सिक्का आदि)
२. जो अधिक लोगों की जानकारी में हो। (शब्द आदि)
३. वह जिसका प्रयोग एक अवधि तक अधिकतर लोग करते हैं। (फेशन, रीति-रिवाज)

प्रचार–सं० पु० [सं०] १. रिवाज, चलन।
२. किसी वस्तु का निरंतर प्रयोग, उपभोग या व्यवहार।
उ०—पितामह नांम हि नांम प्रचार, अहरनिस रांम हि रांम उचार।—ऊ. का.
३. चालचलन, आचरण। ४. परंपरा, रीति, रस्म। ५. मार्ग, रास्ता।
रू० भे०—परचार।

प्रचारक–वि० [सं०] प्रचार करने वाला, चलन बढाने वाला।
उ०—तेडि प्रचारक पूछीया, कह कांई कारण अेह। प्रथम जिके जावा तणउं, झाली ल्यावु तेह।—मा. कां. प्र.
रू० भे०—परचारक।

प्रचारणौ, प्रचारबौ–क्रि० स० [सं० प्रचारणम्] १. प्रचार करना, फैलाना। उ०—वेमेसिक में कणभुक सो वळ बिस्तारचौ। पातंजळि पाठ पतंजळि जेम प्रचारचौ।—ऊ. का.
२. कहना, कथना।
३. भेजना। उ०—अर झालां प्रमारां नूं प्रचारि सीसोदियां भी केथोली, सींघोली, जावद, अठांणां, बीझोली आदिक देस दुरग दाबि बेघम माथै तोपां रो ताव घमायो।—वं. भा.
प्रचारणहार, हारौ (हारी), प्रचारणियौ—वि०।
पचारिग्रोड़ौ, प्रचारियोड़ौ, प्रचारयोड़ौ—भू० का० कृ०।
प्रचारीजणौ, प्रचारीजबौ—कर्म वा०।
परचारणौ, परचारबौ—रू० भे०।

प्रचारित–वि० [सं०] १. जिसका प्रचार किया गया हो। २. फैलाया हुआ।
रू०भे०—परचारत।

प्रचारियोड़ौ–भू० का० कृ०– १. प्रचार किया हुआ, फैलाया हुआ. २. कहा हुआ, कथा हुआ. ३. भेजा हुआ.
(स्त्री० प्रचारियोड़ी)

प्रचुर–वि० [स०] १. बहुत, अधिक, विपुल, पर्याप्त। २. जड़ा, दीर्घ, विस्तृत।
रू०भे०—पउर, पऊर, परचुर, परचूर।

प्रचुरता–सं०स्त्री० [सं० प्रचुर+रा० प्र० ता] प्रचुर होने की अवस्था या भाव। अधिकता।
रू०भे०—परचूरता।

प्रचेता–सं०पु० [सं०प्रचेतस्] १. वरुण। (अ. मा., नां. मा., ह. नां. मा.)
२. एक प्राचीन ऋषि। ३. बाहरवां प्रजापति।

प्रचेलक–सं०पु० [सं० प्रचेलकः] अश्व, घोड़ा।

प्रचोळ–वि० [सं०प्र+राज० चोळ] अधिक लाल, रक्त वर्णका।
उ०—अमोल तोल मोल के प्रचोळ चोळ अंख के।—ऊ. का.

प्रचौ—देखो 'परचौ' (रू. भे.)
उ०—'जेमल' हरा जांणाता जिसडो, साच प्रचौ पूरियौ सही। वळ पड़ियौ कागदां वचांणौ, नीसरियौ वांचियौ नही।—बां. दा.

प्रच्छक–वि० [सं०] पूछने वाला, प्रश्न कर्त्ता।

प्रच्छन्न–वि० [सं०] गोप्य, गुप्त। उ०—१. पत्र मंडि प्रच्छन्न, दूत मंहू पठवायौ। सुणि 'चौंडा' सजि सेन, अद्ध रजनी गढ आयौ।
—वं. भा.
उ०—२. देऊ नांम दला री पुत्री रा पति रौ प्रांण लीधौ जरै तो जोइयां जमाई रो वैर वाळण रै काज आप रा प्रभु रै प्रच्छन्न प्रहर रै प्रभात वीरमदेव नूं जाइ घेरियौ।—वं. भा.
अव्य० [सं० प्रच्छन्न] चुपके से, गुप्त रूप से। उ०—एक राति निसीथ रै समय एकला वडाह नूं पुर वारै जावतौ देखि विक्रम भी प्रच्छन्न पीठि लागो थकौ एक नदी रै तीर स्मसांण देस गयो।
—वं. भा.
रू० भे०—प्रछन, प्रछन्न।

प्रच्छा–सं०पु० [सं०प्रच्छ] प्रश्न। (डिं. को.)

प्रच्छदन–सं०पु० [सं०प्रच्छादनम्] १. ढकना, छिपाना। २. कपड़ों के ऊपर धारण करने का वस्त्र विशेष।

प्रच्छित—देखो 'परीक्षित' (रू. भे.)

प्रछन, प्रछन्न—देखो 'प्रच्छन्न' (रू. भे.)
उ०—बारह मासां बीह, पांडव ही रहिया प्रछन। 'दुरगो' हेको दीह, अछत रहियौ न 'आसवत'।—दुरगादास राठौड़ रौ दूहो
उ०—२. जगत्त ही जातिय पांतिय जांण, प्रछन्न हुवौ तउ दीठो प्रांण।—ह. र.
उ०—२. प्रछन्न प्रगट्ट पुरक्ख-पुरांण।—ह.र.
उ०—३. करि प्रछन्न मुकांम, सुदृड़ एकत्र हीय सब।—वं.भा.

प्रजंक—देखो 'परयक' (रू.भे.)
उ०—पड़ियौ तकियौ सूं परा, आडो दियौ प्रजंक। मसलत आया मीरज्यां, ऐ ऊठिया असंक।—रा. रू.

प्रजंघ–सं० पु० [स०] अंगद द्वारा भगा दिया जाने वाला रावण की सेना का एक योद्धा।

प्रजंत—देखो 'पर्यंत' (रू. भे.)

प्रज—देखो 'प्रजा' (रू. भे.)

उ०—खांनाजादा खबर ले, प्रज दुज गौ प्रतिपाळ। कर व्रत नित सुक्रत करै, माजी केरै माल ।—बां. दा.

प्रजपाळ–सं० पु० [स० प्रजापालक] राज, नृप । (डिं को.)

प्रजपाळण–सं० पु० [सं० प्रजापालण] प्रजा का पालन करने वाला, राजा।

उ०—दूइण प्रसिद्ध प्रघट प्रजपाळण, दळपति दियण दोखियां दाव । भवि कोइ घड़िस त मलौ भाखिस्यां, रावळ जांम सरीखौ राव ।
—ईसरदास बाहरठ

प्रजरणौ, प्रजरबौ—देखो 'प्रजळणौ, प्रजळबौ' (रू. भे.)

उ०—मन आंन महीपन के प्रजरे, किन पे वसुधा-पति कोप करे ।
—ला. रा.

प्रजरणहार, हारौ (हारी), प्रजरणियौ—वि० ।

प्रजरिओड़ौ, प्रजरियोड़ौ, प्रजरयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रजरीजणौ, प्रजरीजबो—भाव वा० ।

प्रजरियोड़ौ—देखो 'प्रजळियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रजरियोड़ी)

प्रजळणौ, प्रजळबौ–क्रि० अ० [सं० प्रज्वलनम्] १. जलना, भस्म होना ।

उ०—खट छपर चंदण खाट, प्रजळंत चदण कपाट । लगि झाळ प्रजळत लाख खभ पाट चंदण खाख ।—सू. प्र.

२. कोप करना, कुपित होना ।

उ०—कमधां पति कूरमा, उभै मुरडिया अश्वपति । सुणै बहादर साह, उवर प्रजळै असपति ।—सू. प्र.

प्रजळणहार, हारौ (हारी), प्रजळणियौ— वि० ।

प्रजळाड़णौ, प्रजळाड़बौ, प्रजळाणौ, प्रजळाबौ, प्रजळावणौ, प्रजळाववौ
—प्रे० रू० ।

प्रजळिओड़ौ, प्रजळियोड़ौ, प्रजल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रजळीजणौ, प्रजळीजबौ—भाव वा० ।

परजळणौ, परजळबौ, पाझळणौ, पाझळबौ, प्रजरणौ, प्रजरबौ प्रज्जळणौ, प्रज्जळवौ, प्रज्वळणौ, प्रज्वळबौ, प्राजळणौ, प्राजळबौ
—रू० भे० ।

प्रजळत–सं० स्त्री० [सं० प्रज्वलन:] १. अग्नि, आग । (अ. मा.)

२. देखो 'प्रज्वलित' (रू. भे.)

प्रजळप—देखो 'प्रजल्प' (रू.भे)

प्रजळियोड़ौ–भू०का०कृ०—१. जलता हुआ, प्रज्वलित.

२. क्रोध किया हुआ.

(स्त्री० प्रजळियोडी)

प्रजल्प–सं०पु० [सं० प्रजल्प:] गप्प-शप्प, बकवाद ।

रू०भे०—प्रजळप ।

प्रजल्पन–सं०पु० [सं० प्रजल्पनम्] १. वार्तालाप, बोलचाल ।

२. गप्प-शप्प, बकवाद ।

प्रजा–स०स्त्री० [सं०] सतान, औलाद ।

उ०—पहली एक धाड़वी रजपूत धारा-तीरथ में पड़ियौ तो भी कोइक कारण रै प्रभाव आप रा साथ समेत प्रेत हुवौ जिकण रै पाछै प्रजा में एक पुत्री रही । —वं.भा.

२. किसी भी राजा के राज्य या शासन में रहने वाले लोगों का समूह, रिआया ।

उ०—झग-झग ऊठै हिया में झाळां, दग-दग द्रग जळ डारै । मग-मग लखै आवतौ मारू, पग-पग प्रजा पुकारै । —ऊ.का.

रू०भे०—परजा, पिरजा, प्रइज, प्रज, प्रज्जा ।

प्रजागर–मं०पु० [सं० प्रजागर:] १. विष्णु । २. कृष्ण का नामान्तर ।

३. अभिभावक, रक्षक ।

रू०भे०—परजागर ।

प्रजानाथ–सं०पु० [सं०] १. ब्रह्मा । २. मनु । ३. दक्षप्रजापति । ४. राजा । ५. बादशाह, सम्राट ।

प्रजाप–स०पु० [सं० प्रजाप:] राजा, नृप, नृपति । (अ.मा.,ह.नां.मा.)

प्रजापत, प्रजापति, प्रजापती–सं०पु० [सं० प्रजापति] १. सृष्टि उत्पन्न करने वाला, सृष्टि कर्त्ता ।

उ०—सोळै ई थांन अचळ इंद्री सुर, अति सुख उदै कियौ अंतरि उर। विसन ब्रह्म सिव अरक वखांणौ, जळपति ससि दिस मारुत जांणौ। असनिकुमार अगनि वन आखौ, देवनाथ महि वांमण दाखौ। समद प्रजापति आदि सुरेसर, कमंधां घणी तणी रक्षा कर ।
—रा.रू.

२. ब्रह्मा के दश पुत्र जिन्हे ब्रह्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में प्रजावृद्धि हेतु उत्पन्न किये थे । ३. ब्रह्मा, विरंची ।

४. कश्यप । उ०—एक दिवस 'अजमाल', छभा मडे छत्रपत्ती । पुत्र रूप गुण पेख, गोद लीधौ गढपत्ती । मनु संजुति लोकेस, कना रवि हूंत प्रजापति । कै रघुवीर कुवार, लियां अवधेस प्रभा जुति । उमराव चाव लग्गौ दरस, रूप निहारै निजर भर । अनमेख द्रस्ट पेखंत छवि, मीन चद्र प्रतिबिंब पर ।—रा.रू.

५. मनु । ६. सूर्य, भानु । ७. विश्वकर्मा । ८. पिता, जनक । ९. राजा, नृप ।

१०. कुम्भकार, कुम्हार । उ०—कुलड कटोरदांन कचोळा, लोटां ऊखल माटडी । साह खंघेडदास प्रजापत, न्याही नगरां हाटड़ी ।
—दसदेव

११. सात सवत्सरो में पांचवां संवत्सर । १२. वार व नक्षत्र संबधी बनने वाले २८ योगों मे से चौथा योग ।

रू०भे०—परजापत, परजापति, परजापती, पिरजापत, पिरजापति, पिरजापती ।

प्रजापाळ, प्रजापाळगर–सं०पु० [सं० प्रजापाल, प्रजापालक] राजा,

नृप । (डिं. ना. मा.)

रू०भे०—परजापाळ ।

प्रजाळणौ, प्रजाळबौ—क्रि० स० [सं० प्रज्वलनम्] १. जलाना, भस्म करना ।

उ०—१. मिनिया मंजारीह, अगन, प्रजाळी ऊबरघा । वरती मो वारी-ह, सुणौ क वहरौ सांवरा ।—रामनाथ कवियौ

उ०—२. देवी सकारी रूप हनमंत ढाळी, देवी रूप हनमंत लंका प्रजाळी ।—देवि.

२. क्रुद्ध करना, कुपित करना ।

प्रजाळणहार, हारौ (हारी), प्रजाळणियौ—वि० ।

प्रजाळिश्रोड़ौ, प्रजाळियोड़ौ, प्रजाल्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

प्रजाळीजणौ, प्रजाळीजबौ—कर्म वा० ।

परजाळणौ, परजाळबौ, परिजाळणौ, परिजाळबौ—रू०भे० ।

प्रजाळियोड़ौ—भू०का०कृ०—१. जलाया हुआ, भस्म किया हुआ.

२. क्रुद्ध किया हुआ.

(स्त्री० प्रजाळियोडी)

प्रजु, प्रजुण, प्रजुन्न—वि० [सं० प्रज्वलनम्] १. प्रज्वलित ।

उ०—जाय जोगण वंद जाजा, प्रजुण वन्ही करे प्राजा ।—र.रू.

२. देखो 'प्रद्युम्न' (रू.भे.)

उ०—संव प्रजुन्न कुमरवरा, विद्याधरा रे । क्रीड़ा गिरि अभिरांम, जय-जय गिरनार गिरे ।—स.कु.

प्रजुळ—सं०पु० [सं०प्रज्वलनम्] १. क्रोध । (अ.मा.)

२. आग, अग्नि ।

प्रजू, प्रजूण—देखो 'प्रद्युम्न' (रू. भे)

उ०—१. दीपायन रिखि दूहव्यउ, संब प्रजू नैं साहि ।—स. कु.

उ०—२. पांचे पांडव इण गिरि सीधा, नव नारद रिखीराय रे । संव प्रजूण गया इहां मुगति, आठे करम खपाय रे ।—स. कु.

प्रजेस—सं०पु० [सं०प्रजेश] प्रजापति, राजा ।

प्रजोग—देखो 'प्रयोग' (रू. भे.)

प्रजोध—वि० [सं०प्र+योधः] योद्धा, वीर । उ०—प्रजोध जोध कुप्पि के प्रधाव धप्पि दे परें ।—ऊ. का.

प्रज्ज—देखो 'प्रजा' (रू. भे.)

उ०—जडिजै गढ़ां किमाड, प्रज्ज भाजै पर-राठां । खळां खंड खळमळै, इळा दहलै दिस आठां ।—गु. रू. वं.

प्रज्जळणौ, प्रज्जळबौ—देखो 'प्रजळणौ, प्रजळबौ' (रू. भे.)

उ०—कूंरमि पमारि कमधज्ज सूं, भटियांणी कुळ छळ भळै । जोधपुर हुई जादवि सती, पावक च्यारै प्रज्जळै ।—गु. रू. वं.

प्रज्जळणहार, हारौ (हारी), प्रज्जळणियौ—वि० ।

प्रज्जळिश्रोड़ौ, प्रज्जळियोड़ौ, प्रज्जळयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रज्जळीजणौ, प्रज्जळीजबौ—भाव वा० ।

प्रज्जुन—देखो 'प्रद्युम्न' (रू भे)

उ०—सांव प्रज्जुन कुमर क्रीड़ा गिरि, अंबिका टुंक प्रमुख विरतारी । —म. कु.

प्रज्झटिका—सं०स्त्री० [सं०पद्धटिका] प्रत्येक चरण में सोलह सोलह मात्रा का मात्रिक छंद विशेष ।

प्रज्वळणौ, प्रज्वळबौ—देखो 'प्रजळणौ, प्रजळबौ' (रू.भे)

उ०—बेताळ किलकिलइं । दावानळ प्रज्वळइं । भील गोत गाइ । —सभा.

प्रज्वळणहार, हारौ (हारी), प्रज्वळणियौ—वि० ।

प्रज्वळिश्रोड़ौ, प्रज्वळियोड़ौ, प्रज्वळयोड़ौ—भू०का०कृ० ।

प्रज्वळीजणौ, प्रज्वळीजबौ—भाव वा० ।

प्रज्वळित—वि० [स० प्रज्वलित] १. धधकता हुआ, जलता हुआ ।

२. चमचमाता हुआ, चमकीला ।

३. क्रुद्ध ।

रू०भे०—प्रजळत ।

प्रज्वाळणौ, प्रज्वाळबौ—क्रि०स० [सं० प्रज्वालनम्] जलाना ।

उ०—कहियौ रण रौ मरण तौ दैव रै अनुकूळ हुवां होइ जिकौ नवणसी, तौ संसार नूं मुख दिखावण जिसड़ौ रहसी नहीं । अर वेद हूं बहिरगत वात वणाइ पतिव्रता पत्नी सूं पहली प्रज्वाळण री प्रसंसा कोई भी कहसी नहीं ।—वं.भा.

प्रज्वाळणहार, हारौ (हारी), प्रज्वाळणियौ—वि० ।

प्रज्वाळिश्रोड़ौ, प्रज्वाळियोड़ौ, प्रज्वाळयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रज्वाळीजणौ, प्रज्वाळीजबौ—कर्म वा० ।

प्रझाळ—सं०स्त्री० [सं० प्रज्वाला] आग की लपट, ज्वाला ।

उ०—रूस फ्रांस मझ रच्चिया, जरमन हूंता जुद्ध । पड़ियौ जांण पराळ मै, कण मंगळ कर क्रुद्ध । कण मंगळ कर क्रुद्ध, प्रझाळां पस्सरी । घूहड़ियां खग धार, विनांण व्रहस्सरी ।

—किसोरदांन बाहरठ

प्रडीन—सं०पु० [स०प्रडीनम्] उड़ना क्रिया का भाव ।

उ०—लगा पाखरां साज लूंमा लड़ी सूं । प्रडीनां चलै नटी पट्टड़ी सूं । —वं भा.

प्रण—सं०पु० [सं० प्रतिज्ञा, प्रा० पइण्णा] किसी कार्य को करने का अटल निश्चय या संकल्प, प्रतिज्ञा ।

क्रि०प्र०—करणौ, छूटणौ, झेलणौ, लैणौ, हटणौ, होणौ ।

रू०भे०—पण, पन, परण ।

प्रणछ—देखो 'पणछ' (रू.भे.)

प्रणत—वि० [सं०] १. बहुत झुका हुआ ।

२. प्रणाम करता हुआ ।

३. दीन । उ०—प्रणत पुकार सुणत 'पीथल' री 'राजड़' लाज रखाई । —मे.म.

४. चतुर, निपुण ।

सं॰पु॰—नमस्कार। (अ. मा.)

प्रणतारत–वि॰ [सं॰ प्रणत+आरत] शरणागत, दुखिया।
उ॰—प्रभू प्रणतारत पेखत प्रेम, नही निगमागम देखत नेम।—ऊ.का.

प्रणति, प्रणती–सं॰स्त्री॰ [सं॰प्रणति] नम्रता, सुशीलता, दीनता।
उ॰—सो आज रा बैरियां रौ व्रात आसगियौ न जाइ जिण थां प्रपितामह समरसिंह रौ विरुद बिचारि सहाय रौ अवलंब दीजै, इण रीति अरजी मे प्रणती रौ प्रसाद कीधौ।—वं.भा.

प्रणपति–स॰स्त्री॰ [सं॰ प्रणिपात:] नमस्कार, प्रणाम।
उ॰—१. रांणी कह्यौ राजा रिखीस्वरां पासै पधारौ, रिखीस्वर कोई अधार करै। ताहरां राजा उठि नै रिखीस्वरां पासै गयौ, जाई नै प्रणपति की।—चौबोली
उ॰—२. तितरै हेक दीठ पवित्र गळिआगो, करि प्रणपति लागी कहण। देहि संदेस लगी दुवारिका, वीर वटाऊ व्राह्मण।—वेली

प्रणमंग, प्रणम—देखो 'प्रणांम' (रू.भे.) (डिं. को)
उ॰—मात चरणग करंग प्रणमंग। सुजस गंग रंग कथंग सरबंग।
—सू.प्र.

प्रणमणौ, प्रणमबौ–क्रि॰अ॰ [सं॰प्रणाम] नमस्कार हेतु झुकना, प्रणाम करना, झुकना।
उ॰—सिद्ध दंड उद्यम कियौ, राजा विक्रमराय। सासू से प्रणमी करी, दमनी करियै सहाय।—पंच दडी री वारता
प्रणमणहार, हारौ (हारी), प्रणमणियौ—वि॰।
प्रणमिओड़ौ, प्रणमियोड़ौ, प्रणम्योड़ौ—भू॰ का॰ कृ॰।
प्रणमीजणौ, प्रणमीजबौ—भाव वा॰।
प्रणम्मणौ, प्रणम्मबौ, प्रणवणौ, प्रणवबौ—रू॰भे॰।

प्रणमियोड़ौ–भू॰का॰कृ॰—प्रणाम किया हुआ.
(स्त्री॰ प्रणमियोडी)

प्रणम्मणौ, प्रणम्मबौ—देखो 'प्रणमणौ, प्रणमबौ' (रू भे.)
उ॰—प्रणम्मै पग परम्म प्रवीत, गायत्री गोरि सावित्री सीत।
—ह.र.

प्रणय–स॰पु॰ [सं॰] १. प्रेम, प्रीति, आसक्ति, स्नेह। (अ.मा.,ह.नां.मा.)
२. मैत्री, दोस्ती। ३. मेल-जोल। ४. विश्वास, भरोसा।
५. विवाह, पाणि-ग्रहण।
[सं॰ प्रणयी] ६. पति। (अ.मा.)

प्रणव–सं॰ पु॰ [स॰ प्रणव:] १. ओंकारमत्र। २. त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश)। ३. परमेश्वर।

प्रणवणौ, प्रणवबौ—देखो 'प्रणमणौ, प्रणमबौ' (रू भे.)
उ॰—परमेसर प्रणवि प्रणवि सरसति पुणि, सदगुरु प्रणवि त्रिण्हे ततसार।—वेलि

प्रणांम–सं॰ पु॰ [स॰ प्रणाम] वयोवृद्ध व पूज्य व्यक्ति के आगे नत मस्तक होकर नमस्कार करने का ढंग, नमस्कार करने की क्रिया।
उ॰—१. परम गुरु के सरणै जाऊं, करूं प्रणांम सिर लटकी।
—मीरां
उ॰—२. बूंदी आपरो थांणौ राखि वंबावदै जाइ हड्डाधिराज बंगदेव नूं प्रणांम कीधौ।—वं. भा.
रू॰ भे॰—परणमण, परणांम, प्रणमंग, प्रणम।

प्रणा–स॰ स्त्री॰ [सं॰ प्रणी+भावे क्विप्] गली। (अ. मा.)

प्रणाळ–सं॰ स्त्री॰ [सं॰ प्रणाल:] १. बडा जल मार्ग, नहर।
२. पनाला। ३. कमल की नाल।
४. देखो परनाळ' (रू. भे)

प्रणाळका–सं॰ स्त्री॰ [स॰ प्रणालिका] १. बड़ा जल मार्ग, वंबा, नहर।
२. परम्परा। ३. कोई कथारूप में कहा जाने वाला लंबा वृतांत।
रू॰ भे॰—परणाळका, परनाळका, प्रनाळका।

प्रणाळी–सं॰ स्त्री॰ [सं॰ प्रणाली] कार्य करने की वह व्यवस्था जिसमें किसी प्रकार का निश्चित या विशेष कार्य होता हो, ढंग, तरीका।
उ॰—प्रिथु वेलि के पंचविध प्रसिध प्रणाळी, आगम नीगम कजि अखिळ। मुगति तणी नीसरणी मंडी, सरग लोक सोपान इळ।
—वेलि
रू॰ भे॰—परनाळी, प्रनाळी।

प्रणिधांन–सं॰ पु॰ [सं॰ प्रणिधानं] १. प्रयोग, व्यवहार, उपयोग।
२. महान प्रयत्न।
३. समाधि। (वं. भा.)

प्रणिपात–सं॰ पु॰ [सं॰ प्रणिपात:] नमस्कार, प्रणाम। (वं. भा.)

प्रणीत–सं॰पु॰ [सं॰ प्रणीत] १. मंत्रों द्वारा संस्कृत की हुई यज्ञाग्नि।
२. यज्ञ कार्य के लिये वेद मंत्र पढते हुए कुए से निकाला हुआ जल।
३. उक्त जल रखने का पात्र।
वि॰ [सं॰ प्रणीत] १. उपस्थित किया हुआ, पेश किया हुआ।
२ लाया हुआ। ३. भेंट किया हुआ। (वं. भा.)

प्रणेता–वि॰ [सं॰ प्रणेतृ] निर्माण करने या बनाने वाला।

प्रतंग्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू भे.)
उ॰—१. बारहट 'भीम' 'राजांन' का सूरां की सनाह, स्रीमहाराज के कांम चाहै प्रतग्या के निवाह।—रा. रू.
उ॰—२. पण म्हारा पती री टेक प्रतंग्या और निधड़क अभिमांन देख रात में सोवै जद नीद वस अमावधांन होवै तद सत्रुआं रौ वार लागै, पण आही वात तनक समझ गेह घर रा किमाड़ ही न जड़ै।
—वी.स.टी.
उ॰—३. जन प्रह्लाद बहौत दुखपाया, छूटि नांही ताळी। तब हरि नरहरि रूप बणाया, जन प्रतंग्या पाळी।—ह. पु. वां.

प्रतंचा, प्रतज्या—देखो 'प्रत्यचा' (रू. भे.)

प्रत–स॰ स्त्री॰ [?] १. प्रतिज्ञा, प्रण।

उ०—नौरोजा मेटया 'मेहाई', पीयल' री प्रत पाळी।— देवळ

२. नित्य, सदैव। (डिं. को.)

उ०—गुणियण द्वार वधाई गावै, प्रत दिन अन सोव्रन धन पावै। —रा. रू.

३. देखो 'प्रति' (रू. भे.)

उ०—१. सात मत्त पद प्रत पड़ै, सुगति छंद सो थाय।—र.ज.प्र.

उ०—२. कथा केम ईसर कहै, खांण सकळ प्रत खेत। वयण स्रवण ना मन बसै, निगम अगोचर नेत।—ह. र.

प्रतउत्तर—देखो 'प्रत्युत्तर' (रू. भे.)

उ०—घणी वचन प्रोहित सिर धारिज। कहियौ प्रतउत्तर अप कारिज।—सू. प्र.

प्रतक—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू. भे.)

उ०—प्रतक हुवौ दरसाव निज भाव सूं अचळ तप। सबळ खळ 'गुमन' सुत हूंत सांकै।—महाराजा मांनसिंह जोधपुर रौ गीत

प्रतका—देखो 'पताका' (रू. भे.)

प्रतकूळ—देखो प्रतिकूळ' (रू. भे.)

उ०—प्रतकूळ थिया विध अक प्रमं। सावट्ठ मग आया'इ प्रात समं। —पा. प्र

प्रतक्क, प्रतक्ख, प्रतक्ष, प्रतख—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू भे.)

उ०—१. गुडै गज-रूपं, क मेघ सरूपं। गयद गडाडं, प्रतक्क पहाड।—गु. रू. ब.

उ०—२. प्रमेस पुरांण-पुरुक्ख प्रतक्ख, अगोचर एक अनेक अलक्ख।—ह. र.

उ०—३. करग घाव पर काळजै, जीभ प्रतख जम डाढ़। जाभी ह्वै ता जीभ सूं, कड़वौ बैण न काढ़।—बां. दा.

प्रतखवादी—देखो 'प्रत्यक्षवादी' (रू भे)

प्रतखि, प्रतखी—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू. भे.)

उ०—कमध मतौ सिर ढाळण कीधौ। दरसण सकति प्रतखि तद दीधौ।—सू. प्र.

प्रतगिया, प्रतग्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू भे.)

उ०—देवीदास पण दांतण संपाड़ौ करि ठाकुरद्वारै गयौ। दरसण करि भेंट कीवी अर अरज करण लागौ खांनेजाद री प्रतिग्या आप राखी रहसी।—पलक दरियाव री बात

प्रतग्यापत्र—देखो 'प्रतिग्यापत्र' (रू. भे.)

प्रतच्छ—देखो 'प्रत्यक्ष' (रू. भे.)

उ०—स्वभाविक सास्वत स्वच्छ स्वरूप। अनिच्छ अभिच्छ प्रतच्छ अनूप।—ऊ. का.

प्रतत्थ—सं० पु० [सं० प्रतथ्य] शास्त्र। उ०—रिसी प्रतत्थ तत्थ के प्रतत्थ तत्थ ते रहें।—ऊ. का.

प्रतदंद—देखो 'प्रतिद्वंद' (रू. भे.)

प्रतदंदी—देखो 'प्रतिद्वंदी' (रू. भे.)

प्रतदुंद—देखो 'प्रतिद्वंद' (रू. भे.)

प्रतदुंदी—देखो 'प्रतिद्वंदी' (रू. भे.)

प्रतना, प्रतनी—सं० स्त्री० [सं० पृतना] १. सेना, फौज। (अ. मा., ह. नां. मा.)

उ०—दूरकूंचा जाय दुरग रै प्रतना रौ पळेटौ दियौ।—वं. भा.

२. सैन्य-दल जिसमें २४३ हाथी, २४३ रथ, ७२९ घोड़े और १२१५ पैदल सिपाही होते हैं। ३. युद्ध, लड़ाई।

प्रतन्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू. भे.)

उ०—करी प्रतन्या राउळ कांन्हडि-तउ जिमी सइ घांन। मारी मळेछ देव सोमईउ, अनइ छोडाविस वांन।—कां. दे. प्र.

प्रतपक्ष, प्रतपख—देखो 'प्रतिपक्ष' (रू. भे.) (अ. मा., ह. नां. मा.)

प्रतपक्षी, प्रतपखी—देखो 'प्रतिपक्षी' (रू. भे.)

प्रतपण—सं०पु० [सं०प्रतपनम्] तप, तेज।

प्रतपणौ, प्रतपबौ—क्रि०अ० [सं०प्र+तप=ऐश्वर्य दीसौ=प्रतपति]

१. प्रताप फैलना, शौर्य बढ़ना। उ०—१. उज्जइणीपुर उण समय प्रतपै 'रेणु' प्रमार। तिण री दूजौ नाम जग, आखै करण उदार। —वं. भा.

उ०—जठै प्रतपियौ प्रगट जो, हर अवतार 'हमीर'। नीसरतौ चूड़ा मही, नित निरझर नद नीर।—बां. दा.

२. कीर्ति प्रताप आदि से युक्त होना। उ०—१. मांणिक रयण वधावती, मनि रंगिइ ए दिइ आसीस। दिणयर जिम महीयलि घणउ, प्रभ प्रतपु ए कोडि वरीस।—हीराणंद सूरि

उ०—२. जिन चंद्र अनै जिन सिंह सूरि, चंद्र सूरिज ज्युं प्रतपीजिये जी।—स. कु.

क्रि०स०—३. ऐश्वर्य भोगना, सुख भोगना। उ०—१. अहि नर किंनर सुर असुर, सहिय सेव समथ। पाट प्रतपै छत्रपति, तै राजा दसरथ।—रांमरासौ

उ०—२. जोधाण पाट प्रतपै ज दन, सुजस जितै सिस भांण रै। सत पंच उदक दीना सुपह, कारण जस 'कलीयांण' रै।

—महाराजा रायसिंह (बीकानेर)

प्रतपणहार, हारौ (हारी), प्रतपणियौ—वि०।

प्रतपिओड़ौ, प्रतपियोड़ौ, प्रतप्योड़ौ—भू०का०कृ०।

प्रतपीजणौ, प्रतपीजबौ—भाव वा०/कर्म वा०।

प्रतप्पणौ, प्रतप्पबौ—रू० भे०।

प्रतपायण—सं०पु० [सं०प्रतिपायन] दातार। (अ. मा.)

प्रतपाळ—देखो 'प्रतिपाल' (रू. भे.)

उ०—१. अब छोगाळा ऊठ, काळा तूं प्रतपाळ कर। पांचाळी री

पूठ चढ़ रखवाळी चतुरभुज। —रांमनाथ कवियो

उ०—२. पदमण रिख ग्रसमांण पहूंती, पंखां विना जिहांन पढीजै।
केवट कुळ प्रतपाळ दयाकर, चरण पखाळ जिहाज चढीजै।
—र. ज. प्र.

उ०—३. नमो प्रहळाद तणा प्रतपाळ, नमो ससि सूरज जोत सिघाळ।
—ह. र.

उ०—४ नमो कन्ह रूप निकंदण कंस, नमो ब्रजराज नमो जदुवंस।
नमो प्रम संत गऊ प्रतपाळ, नमो दुस्टां दळ दीन दयाळ। —ह. र.

प्रतपाळक, प्रतपाळग—देखो 'प्रतिपाळक' (रू. भे.)

उ०—१, पाळक चढ़ ग्रा चारणी, जाळक रिमां जरूर। प्रतपाळक पातां तणी, काळक टाळ करूर।—बाला बक्स बारहठ (गजूकी)

उ०—२. 'सैणी' सेवगां रै प्रतपाळग। याद कियां नित आवै।
—जसकरण पीरदांनोत लाळस

उ०—३. तरे जसोधर बांमण बोलियो—माहाराज मा'रा सांसण राजा महेसदास, गोहल खोसलीया छै तिण सुं मे बोहत परेसांन छा नै राज मोटा खत्री छो, गऊ ब्रांमण रा प्रतपाळक छो, सो राज कने पुकारु ग्राया छां।—रा. वं. वि.

प्रतपाळण—देखो 'प्रतिपाळण' (रू. भे.)

उ०—ज्यां प्रतपाळण हात निज, वहा रुखवाळण ग्राप। कवण विधूंसण कर सकै, तो जे सरण 'प्रताप'।—जैतदांन बारहठ

प्रतपाळणो, प्रतपाळबो—देखो 'प्रतिपाळणो, प्रतिपाळवो' (रू भे)

उ०—पर प्रहळाद तणी प्रतपाळी। बळ घू अखी कियो वनमाळी।
—र.ज.प्र.

प्रतपाळणहार, हारो (हारी), प्रतपाळणियो—वि०।
प्रतपाळिग्रोड़ो, प्रतपाळियोड़ो, प्रतपाळ्योड़ो—भू० का० कृ०।
प्रतपाळीजणो, प्रतपाळीजबो—कर्म वा०।

प्रतपाळियोड़ो—देखो 'प्रतिपाळियोड़ो' (रू. भे.)
(स्त्री० प्रतपाळियोड़ी)

प्रतपाळो—देखो 'प्रतिपाळ' (ग्रल्पा., रू. भे.)

उ०—१. बिरदाळो जी बिरदाळो, दुज गाय पखो बिरदाळो।
सीता पो सांम सिघाळो, पोह सेवगरां प्रतपाळो।—र.ज.प्र.

उ०—२. नख नहि निरखाती नाजक नखराळी। पिय जिय प्रतपाळी जाती पथ पाळी।—ऊ. का.
(स्त्री० प्रतपाळी)

प्रतपियोड़ो—भू० का० कृ०—१. प्रताप फैला हुग्रा, शौर्य बढा हुग्रा. २. कीर्ति, प्रताप ग्रादि से युक्त हुवा हुग्रा. ३. ऐश्वर्य भोगा हुग्रा, सुख भोगा हुआ.
(स्त्री० प्रतपियोड़ी)

प्रतप्पणो. प्रतप्पबो—देखो 'प्रतपणो, प्रतपबो' (रू.भे.)

उ०—साहां उर ग्रसुहावतो, राजावां रखवाळ। जां 'जसराज' प्रतप्पियो, ता सुर-पूज ग्रकाळ।—रा.रू.

प्रतप्पणहार, हारो (हारी), प्रतप्पणियो—वि०।
प्रतप्पिग्रोड़ो, प्रतप्पियोड़ो, प्रतप्प्योड़ो—भू० का० कृ०।
प्रतप्पीजणो, प्रतप्पीजबो—भाव वा०।

प्रतप्पियोड़ो—देखो 'प्रतपियोड़ो' (रू. भे.)
(स्त्री० प्रतप्पियोड़ी)

प्रतबंब—देखो 'प्रतिबिंब' (रू. भे.)

उ०—१. प्रतबंब गिरां सिखरां पडियां। कळळै नभ मारग कूंजड़ियां।—पा.प्र.

उ०—२. तरणातप टोप वगत्तरयं, प्रतबंब चमंकत पक्खरियं।
—रा.रू.

प्रतबंध—देखो 'प्रतिबंध' (रू. भे.)

प्रतबिब—देखो 'प्रतिबिंब' (रू. भे.)

उ०—१. तिण समै 'रतनां' रा रैवास में मकरांणा रो एक महल है, जिण में इण री घणी सहल है। सो इण री पगथल्यां रा प्रतबिंब सूं फरस तो मूंगियां री छिब पावै है।—र. हमीर

उ०—२. पांणी चंद प्रतबिंब जिम दरपण छाया।
—केसोदास गाडण

प्रतबिंबी—सं० पु० [सं० प्रतिबिंब] दर्पण, शीशा। (ग्र.मा.)

प्रतभा—देखो 'प्रतिभा' (रू. भे.)

प्रतमक—सं० पु० [सं०] एक प्रकार का दमा रोग।

प्रतमा—देखो 'प्रतिमा' (रू. भे.)

उ०—गांव मेड़ता सुं ग्रथूणो कोस ४ जठै देवरो बडो छै। पोळ रा कीवाड़ां रो हुवम नही। आगै कुवो छै। पाखांण चोकडी रो, प्रतमा।—नैणसी

प्रतमाळ, प्रतमाळा प्रतमाळी—देखो 'प्रतिमाळी' (रू. भे.)

उ०—१. ब्रोम छब कमळ प्रतमाळ कर वाहतो, गज घड़ां गाहतो, खळां गूंडो। रण कटे गयो वैकुंठ ग्रमराह तो, चाहतो मुकतसांमीप 'भूंडो'।—रावत गुलाबसिंह चूंडावत रो गीत

उ०—२. 'सांमळ' सूर जही 'सांगा' हर, सांची पैज सम्हाळी।
रूंघे दुसमण रै उर रोपी, पूंचाळै प्रतमाळी।
—केसवदास सक्तावत रो गीत

उ०—३. पौहर हेक रिणमळां पहली, पायक रुहिर पखाळी।
लाग ग्रमासां 'कूंभै' लागी, माड घणी प्रतमाळी।
—राव रिणमल री वात

प्रतयोगता—देखो 'प्रतियोगिता' (रू. भे.)

प्रतर—सं० पु० [सं० प्रतरः] १. पार होना, उतर जाना, पार जाना। २. लोक के मध्य में गोलाकार ग्राकृति के ग्रंदर दिखाई दी जाने वाली पड़ी लकीर। (जैन)

वि० वि०—कहते है इन्ही प्रतरों में देवताग्रों के विमान है।

प्रतरतप–सं०पु० यौ० [सं० प्रतर:=पार होना+तप:] एक विशेष क्रम से किये जाने वाले उपवास। (जैन)

वि० वि०—प्रारंभ में एक उपवास के बाद 'पारण' (भोजन) करे, फिर दो उपवास के बाद, फिर तीन उपवास के बाद एवं फिर चार उपवास के बाद 'पारणा' करे। तत्पश्चात् दो उपवास से प्रारंभ करने पर पहले दो के बाद, फिर तीन के बाद फिर चार के बाद 'पारणा' करे एवं चार के बाद फिर क्रम उल्टा प्रारंभ हो जाता है यानी फिर एक के बाद 'पारणा' करते हैं। इसी क्रम से उपवास करने को **प्रतरतप** कहते हैं। इसे निम्न तालिका द्वारा समझाया जा सकता है :—

१	२	३	४
२	३	४	१
३	४	१	२
४	१	२	३

प्रतरोधक—देखो 'प्रतिरोधक' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रतळ–सं० पु० [सं० प्रतल] १. पाताल के सातवें भाग का नाम।

२. हाथ की हथेली।

प्रतवाय–सं० पु० [सं० प्रत्यवाय] १. वह पाप या दोष जो शास्त्रों में बताए हुए कर्त्तव्यों या नित्यकर्मों को न करने से लगता है।

उ०—मनि हव वचन लोपसी मो नूं, तन प्रतवाय लागसी तो नूं।
—सू. प्र.

२. शास्त्र-विरुद्ध-मार्ग।

३. न्यूनता, ह्रास।

प्रतवासत–सं० पु० [सं० वास्तोष्पति] इंद्र। (नां. मा.)

प्रतव्योम–सं० पु० [?] एक सूर्य वंशी राजा का नाम।

प्रतसटा, प्रतसठा—देखो 'प्रतिस्ठा' (रू. भे.)

उ०—तळाव किलांणसागर रांणी हाडी जी नांम जसरंगदे जी हाडी माहाराज स्रीजसवतसिंघ जी री रांणी बूंदी रा राव छतरसाल जी री बेटी सं० १७२० रा वैसाख सुद १५ रांग मांडी नै सं० १७३० रा जेठ सुद १५ **प्रतसटा** हुई।—नैणसी

प्रतहार—देखो 'प्रतिहार' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रताकनी—देखो 'पताकणी, पताकनी' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रताप–सं० पु० [सं०] १. ऐसा ताप जिसमें बहुत तेज हो, चमक, आभा, कांति।

उ०—स्रीमहाराजा 'अजमाल' पातिसाहूं के नाटसाळ, रावळे प्रताप की जोत जागी। अजमेर पीरां को अजाद भागी।—रा.रू.

२. उष्णता, गर्मी, ताप।

३. ऐश्वर्य, वैभव।

उ०—सांम-धरम रा कोल पाळणे मै नांमी होय तौ दिन-दिन प्रताप वधै।—नी. प्र.

४. पराक्रम, जीवटपन।

उ०—जातां वरस सतावनौ, अप वाधतां प्रताप। 'अजन' मनोरथ पुत्र रौ, करै सदा हरि जाप।—रा.रू.

५. साहस, वीरता, शौर्य।

उ०—स्रीराजकंवर अवतार धरि आयौ, आपणौ प्रताप जिण जगत कूं दिखायौ।—रा. रू.

६. प्रभाव।

उ०—१. पून्य प्रताप होय अंग पूरण, पाप प्रताप अपंगी।
—ऊ. का.

उ०—२. नांम प्रताप तारिया जळनिधि। विधि-विधि भणि जिण रा बाखांण।—ह. नां. मा.

७. गौरव।

८. बळ, शक्ति।

उ०—चूक क्रष्ण नै रथी चक्र को, सील प्रताप संभाई। सील प्रताप सकळ ही संपत, अंतरेजां घर आई।—ऊ. का.

उ०—२. बीधा राघव एक सर, सात ताळ इम सींग। सात देस कोकन लिया, इक प्रताप सूं धींग।—बां. दा.

९. यश, कीर्ति। (अ. मा., ह. नां. मा.)

१० प्रकाश, रोशनी।

उ०—प्रतिहार प्रताप करे सी पाले, दंपति ऊपरि दसैंदिसि। अरक अगनि मिसि धूप आरती, निय तणु वारै अहोनिसि।—वेलि

११ कारण। उ०—भारी अगै अगै रे! भारत, हेकण जीभ प्रताप हुवा। मन मिळियोड़ा जिकां माढवा, जीभ करै खिण मांह जुवा।
—बां.दा.

रू० भे०—परताप।

प्रतापवळी, प्रतापवळी–वि० [सं० प्रतापवली] १. प्रतापी, वीर, शक्तिशाली। उ०—१. रांणौ उदयसिंघ सांगा रौ वडो प्रतापवळी ठाकुर हुवौ।—नैणसी

उ०—२. रावळ देवीदास चाचावत सारीखौ कोई रावळ जैसलमेर प्रतापवळी हुवौ नहीं।—नैणसी

२. भाग्य शाली, प्रारब्धवान। उ०—सीसोदिया परवतसिंघ नुं मारण नुं घणौ ही कीयौ, पिण दिन ऊभा, घात लागी नही, सोर हुवौ, राव अखैराज वरस २ रौ हुतौ, सु धाय कोटड़ी मांहे ले पैठी, ऊपर गूदड़ा दीया, प्रथीराज रै साथ घणौ ही सोझियौ, अखैराज प्रतापवळी सु उण रै हाथ लागौ नहीं।—नैणसी

प्रतापवांन–वि० [सं० प्रतापवत्] १. बलवान, पराक्रमी, विक्रमी।

उ०—१. बेटा दिन-दिन मोटा हुवै छै। प्रतापवांन, तेजवंत, महा

वळिस्ट कुंवर जवांन हुवा ।—नैणसी

उ०—२. मालो दिन-दिन वधै । महा प्रतापवांन हुवौ । बीजो बेटो वीरम, तीजो जैतमाल, चोथो सोमत ।—नैणसी

२. महिमावान्, गौरवान्वित ।

रू० भे०—परतापवांन ।

प्रतापी–वि० [सं०] १. जिसके प्रताप या प्रभाव से सब कार्य होते हो ।

२. जिसका प्रताप संसार में चारों ओर फैला हुआ हो ।

उ०—महाराज गजसिंह जी बडो प्रतापी राजा हुवौ ।

—राजसिंह री वारता

रू० भे०—परतापी ।

प्रतापीक–वि० [स० प्रताप+रा०प्र० ईक] १. भाग्यशाली, प्रारब्धवान ।

उ०—ग्ररु राव जी वडा दातार प्रतापीक हुवा । सं० १६०१ पोस सुद १५ बीकानेर कायम कियो ।—द. दा.

२. ऐश्वर्यवान, प्रभुत्व शाली । उ०—स्रीराजकंवर अवतार धरि आयो, आपणौ प्रताप जिण जगत कूं दिखायो । प्रवाड़ै अगजी राजकवर, पातिसाहां, अभैसाह जैत जूग्रार । जनम सूं विचारो प्रतापीक वारो, तखत पधारो चिंता निवारो ।—रा. रू.

३. पराक्रमी, बहादुर, वीर । उ०—१. माता जी कही—'बीरा सगाई तो मो नूं पूछी, म्हैं कराइ छै । 'बीको' बडो प्रतापीक होसी ।—नापै सांखले री वारता

उ०—२. स्रीईस्वरावतार आगै ही विखम समै आयां ओर तो लागा जुआ । तठै प्रतापीक पुत्रां सूं सिद्धि काज हुआ । दोलतखान जवन सेखै की सहाय राव 'गांगै' सीस आयो, तद राव समै देख कवर मालदे बुलायौ । कंवर को प्रताप देखि सेनापति कियो सो सेखै कूं संघारि जूट जवन लूट लियो ।—रा. रू.

४. प्रभावशाली, प्रतापी ।

रू० भे०—परतापीक ।

प्रतायिता–सं०पु० [सं० प्र+तायृ=संतान पालनयो.] पिता । (अ मा.)

प्रति—देखो 'प्रति' (रू. भे.)

उ०—'मा इम बोलसि मुझ प्रति, जा सूकां सर सेवि । अळीआं अळीआं उच्चरइ, कइ डाकिणी ? कइ देवी ?'—मा कां.प्र.

प्रतिचा—देखो 'प्रत्यंचा' (रू. भे.)

प्रति–अव्य०—एक उपसर्ग जो निम्नांकित अर्थों में प्रयुक्त होता है, बहुत में से हर एक, अलग-अलग ।

ज्यूं०—प्रति व्यक्ति, प्रतिदिन ।

२. उलटा, विपरीत, विरोध ।

ज्यूं०—प्रतिकूळ, प्रतिद्वंदी, प्रतिवाद, प्रतिरोध ।

उ०—जेळै कई जब्बर बब्बर जोर, दिखावत वायु बरब्बर दोर । रथां पलटाय पाछा प्रतिराह, अछा झपटाय कहावत वाह ।

—मे. म.

३. समान, सदृश ।

ज्यूं०—प्रतिमूर्ति ।

४. बदला ।

ज्यूं०—प्रतिकार ।

५. स्पष्ट, सामने ।

ज्यूं०—प्रत्यक्ष ।

६. किसी बात या घटना के फलस्वरूप होने वाला परिणाम ।

ज्यूं०—प्रतिध्वनि, प्रतिक्रिया, प्रतिफळ ।

७. चारों ओर से ।

ज्यूं०—प्रतिरक्षामंत्री ।

८. भली प्रकार ।

ज्यूं०—प्रतिपादन ।

प्रतिअवसांन–सं० पु० यौ० [?] भोजन । (ह. नां. मा.)

प्रतिकार–सं० पु० [सं० प्रतिकार: या प्रतीकार:] १. वह कार्य जो किसी बुरे कार्य या व्यवहार के प्रति बदला लेने की प्रवृत्ति से किया जाय, प्रतिशोध, बदला ।

२. चिकित्सा या इलाज । ३. पुरस्कार ।

रू० भे०—पडिकार, पडियार, प्रतीकार ।

प्रतिकूळ–वि० [सं० प्रतिकूल] जो अनुकूल न हो, जो विरुद्ध हो ।

स० पु०—स्वभाव, रुचि, या वृत्ति के विरुद्ध पड़ने वाला व्यक्ति ।

रू० भे०—पडिकूळ, परतिकूळ, प्रतकूळ ।

प्रतिकूळता–सं०स्त्री० [सं०प्रतिकूल+रा०प्र०ता] १. विरोध, विपरीतता ।

२. वह आचरण जो अनुकूल न हो ।

रू० भे०—परतकूळता ।

प्रतिक्रम–सं० पु० [सं० प्रतिक्रम:] १. प्रदक्षिणा, परिक्रमा ।

उ०—कर कमळ माळ सुद्वार प्रतिक्रम, बांध रति भुजबंध है । क्रत जुगळ सुंदर चमर करि है, सोभ रुचिर प्रसंध है ।—रा. रु

२. उलटा-पुल्टा (क्रम या सिलसिला) ।

प्रतिक्रमण, प्रतिक्रमणा–सं०पु० [स०] प्रमाद के वश होने पर शुभ योग को छोड़ कर अशुभ योग में प्रवेश होने पर पुनः शुभयोग पर आने के लिए की जाने वाली क्रिया ।

उ०—एक दिवस विजयचंद जी आथण रा स्वांमीजी कनै सांमायक प्रतिक्रमण करवा आया ।—भि. द्र.

प्रतिक्रिया–सं० स्त्री० [सं०] १. एक तरफ होने वाली किसी क्रिया के प्रतिकार-स्वरूप दूसरी तरफ होने वाली क्रिया ।

ज्यूं०—कालै री घटना री आज कांई प्रतिक्रिया हो रई है ।

२. किसी घटना, कार्य या व्यवहार के होने पर उसके विपक्ष में या विरोध में होने वाली क्रिया, विरोध, सामना ।

ज्यूं०—अगरेजां री दमन नीति री प्रतिक्रिया आ हुई के कांगरेस रो आंदोळण उग्र रूप धारण कर लियो ।

३. किसी कार्य के होने पर ठीक उसके विरुद्ध या विपरीत दशा में

अपने आप स्वाभाविक रूप से होने वाली क्रिया ।

ज्यूं०—जोर सूं फंकियोड़ो गेंद जठै पड़ै उठासूं इणी कारण जोर सूं उछळै क्यूं कै उण पर गिरणै से आघात री प्रतिक्रिया हुवा करै।

४. भौतिक शास्त्रानुसार—एक अवस्था के अंत होने पर प्राकृतिक या स्वाभाविक रूप से दूसरी विपरीत दशा का आविर्भाव ।

५. रक्षण, रक्षा ।

६. सहायता ।

प्रतिक्रियावाद–सं०पु० [सं०] वह वाद जिसमें परम्परागत सिद्धान्तों एव मान्यताओं का विरोध करने वालों का विरोध किया जाता है ।

प्रतिक्रियावादी–वि० [सं०] उक्त सिद्धान्त को मानने वाला व्यक्ति ।

प्रतिग्या–सं०स्त्री० [सं०प्रतिज्ञा] १. कुछ करने या न करने के सम्बन्ध में किया जाने वाला दृढ निश्चय, प्रण, सकल्प, नियम ।

उ०—१. प्रारब्ध प्रतिग्या द्रढ़ प्रतीत । पुरुसारथ प्रग्या परम प्रीत ।
—ऊ. का.

उ०—२. सरब कांम नांमे-लेखे रौ मुदार बेटे ऊपर और देवीदास रै ठाकुरां रै दरसण री प्रतिग्या सो सहर सूं बाहिर अध कोस देहरौ तठै स्रीलिखमीनाथ जी बिराजै सो देवीदास नित दरसण करवानै जावै । —पलक दरियाव री बात

२. शपथ, सौगंध ।

रू०भे०—पतंग्या, पतन्या, परतग्या, परतग्या, परतिग्या, प्रतंग्या, प्रतंन्या, प्रतग्गिया, प्रत्यगा, प्रत्यग्या ।

प्रतिग्यापत्र–सं०पु० [सं० प्रतिज्ञापत्र] ऐसा पत्र जिसमें किसी प्रकार की कीगई प्रतिज्ञा का उल्लेख हो ।

रू०भे०—प्रतग्यापत्र ।

प्रतिग्रह–सं० पु० [सं०] १. स्वीकार, ग्रहण । २. विधि पूर्वक दिए जाने वाले दान को लेने की क्रिया । ३. पकड़ना या अधिकृत करने की क्रिया । ४. पाणिग्रहण, विवाह । ५ अनुग्रह, कृपा ।

प्रतिघात–स०पु० [सं०प्रतिघातः या प्रतीघातः] १. सामना, मुकाबला । २. चोट के बदले में चोट । ३. रुकावट, बाधा ।

रू०भे०—प्रतीघात, प्रत्याघात ।

प्रतिघातक–वि० [सं०] १. प्रतिघात करने वाला।

२ आघात के बदले आघात करने वाला ।

प्रतिघाती–वि० [सं०] १. शत्रु, दुश्मन ।

२. प्रतिघात करने वाला, बदला लेने वाला ।

प्रतिछांह–सं० स्त्री० [सं० प्रतिच्छाया] १. प्रकाश के सामने आने पर पीछे की ओर या पीछे की ओर प्रकाश होने पर आगे की ओर पड़ने वाली किसी वस्तु की छायामय आकृति, छाया ।

उ०—प्रतिछांह वर्ध मधि दिन पछं, क्रति सनीत ग्रह, कमळा । गुण रूप एम 'अगजीत' ग्रह, कुंवर 'अमो' बाधै कळा ।—रा. रू.

प्रतिताळ–सं० पु० [सं० प्रतिताल] कांतार, समराज्य, वैकुंठ और वांछित नामक चार तालों के समूह का नाम ।

प्रतितूनी–स० स्त्री० [सं० ?] चौरासी प्रकार के वात रोगों में से एक प्रकार का वात रोग जिससे मूत्राशय में रह रह कर पीड़ा होती है । (अमरत)

प्रतिदंद– देखो 'प्रतिद्वंद' (रू. भे.)

प्रतिदंदी—देखो 'प्रतिद्वंदी' (रू. भे.)

प्रतिदुंद—देखो 'प्रतिद्वंद' (रू. भे.)

प्रतिदुंदी—देखो 'प्रतिद्वंदी' (रू. भे.)

प्रतिद्वंद–स० पु० [सं०] दो समान शक्तियों या व्यक्तियों का विरोध, झगड़ा-टटा ।

रू० भे०—प्रतदंद, प्रतदुंद, प्रतिदंद, प्रतिदुंद ।

प्रतिद्वंदी–वि० [सं० प्रतिद्वंदिन्] १. वाद करने वाला, प्रतिस्पर्द्धी । २. प्रतिकूल । ३. शत्रु ।

रू० भे०—प्रतदंदी, प्रतदुंदी, प्रतिदंदी, प्रतिदुंदी ।

प्रतिधुन, प्रतिध्वनि–सं० स्त्री० [सं० प्रतिध्वनि] १. ध्वनि के ठोस माध्यम से टकराकर परावर्तन से उत्पन्न होने वाला प्रतिरूप ।

२. लाक्षणिक अर्थ में दूसरों के विचारों आदि को इस प्रकार दोहराया जाना कि उनमें मूलभूत विचारों की छाया झलकती हो ।

प्रतिनायक–सं०पु० [सं० प्रतिनायकः] नाटकों अथवा काव्यों में मुख्य नायक का प्रतिद्वंदी नायक ।

प्रतिनिध, प्रतिनिधि, प्रतिनिधी–सं० पु० [सं० प्रतिनिधि] १. मूर्ति, प्रतिमा ।

२. वह वस्तु जिसकी प्रतिक्रिया से होने वाली किसी अन्य पदार्थ के समानता की कल्पना ।

उ०—सूर जड़ावै मुगट मझ, रोहणगिर उतपत्त । निस दीपग प्रतिनिध रतन, प्रभा अपूरव भत्त ।—वां. दा.

३. वह व्यक्ति जो किसी दूसरे की ओर से किसी कार्य को करने के लिये नियुक्त किया गया हो, अभिकर्त्ता ।

४. वह जो अपने वर्ग के औरों की जगह काम आ सके, स्थानापन्न ।

उ०—जिण कारण महा जोगी उपाध्याय माळव रै महीप व्याकरण रा अध्यापन मैं एक अब्द रौ अनध्याय मांनि पांणिनीय रौ प्रतिनिधि भट्टि नामक काव्य वणाय पढ़ायौ जिकण नूं पढ़ियां पढितां रै पाणिनीय ही रहै पढियौ । —वं. भा.

५. विधान सभा, लोक सभा आदि का वह सदस्य जो किसी क्षेत्र विशेष से नागरिकों के द्वारा चुना गया हो तथा उसे उस क्षेत्र के नागरिकों की ओर से कार्य करने, बोलने का अधिकार होता है ।

६. किसी दल या समूह की ओर से कार्य करने वाला व्यक्ति ।

रू०भे०—परतिनिधि ।

प्रतिपक्ख, प्रतिपक्ष—स०पु० [सं० प्रतिपक्ष] १. विरोधी दल, विरुद्ध पक्ष, विपक्ष । २. शत्रु सेना ।

रू०भे०—प्रतपक्ष, प्रतपख, प्रतिपख ।

प्रतिपक्षी—वि० [सं०] १. विरोधी, विपक्षी । २. शत्रु, दुश्मन ।

रू०भे०—प्रतपखी, प्रतपक्षी, प्रतिपच्छी ।

प्रतिपख—देखो 'प्रतिपक्ष' (रू. भे.)

प्रतिपच्छी—देखो 'प्रतिपक्षी' (रू. भे.)

प्रतिपति—सं०पु० [सं०पितपति] यमराज । (नां. मा.)

प्रतिपतिकरम—स०पु० [स० पितपतिकर्म] श्राद्धादि में सब से अंत में किया जाने वाला कर्म ।

प्रतिपद, प्रतिपदा—सं०स्त्री० [सं० प्रतिपदा] पक्ष की प्रथम तिथि ।

प्रतिपादक—वि० [सं०] १. भली भांति समझाने वाला, प्रतिपादन करने वाला ।

२. साबित करने वाला, प्रतिपन्न करने वाला, समर्थन करने वाला ।

प्रतिपादन—सं० पु० [सं०] १. प्रतिपत्ति, स्थापन । २. व्याख्या, निष्पादन ।

प्रतिपाप—सं० पु० [सं०] किसी पापी के साथ किया जाने वाला कठोर और पाप सम व्यवहार ।

प्रतिपायरा—सं० पु० [सं० प्रतिपादनम्] दान । (ह. नां. मा.)

प्रतिपाळ, प्रतिपाल—स० स्त्री० [सं० प्रतिपालनम्] १. रक्षण, रक्षा, रखवाली ।

उ०—खांनाजादां खबर लै, प्रज दुज-गौ-प्रतिपाळ । कर व्रत नित सुक्रत करै, माजी केरै माल ।—बां. दा.

२. निगरानी, देख रेख । उ०—जगत दिखायो जनम दे, पोस करी प्रतिपाळ । ईस्वर तूं उपमा दिए, मात तणी मुनमाळ ।

—बां. दा.

३ पालन-पोषण । उ०—तिण में रसायण आवै तौ तीरथंकर गोत्र वंधै । कोई अनेक भव छेदकर देवै । अनै छकाय रा प्रतिपाल करै ।—भि. द्र.

४ सहायता, मदद ।

वि०—१. रक्षा करने वाला, रक्षक । उ०—प्रभु प्रहलाद भगत प्रतिपाळ ।—ह. र.

२. सहायता करने वाला, सहायक । ३. पालन-पोषण करने वाला, पालक, प्रतिपालक ।

रू० भे०—प्रतपाळ ।

अल्पा०—प्रतपाळो, प्रतिपाळो ।

प्रतिपाळक, प्रतिपाळग—वि० [स० प्रतिपालकः] १. रक्षक, रखवाला । २. पालन-पोषण करने वाला । ३. प्रतिज्ञा पालन करने वाला ।

रू० भे०—प्रतपाळक, प्रतपाळग ।

प्रतिपाळण—सं० पु० [सं० प्रतिपालनम्] पालन करने की क्रिया, रक्षा ।

रू० भे०—प्रतपाळण ।

प्रतिपाळणौ, प्रतिपाळबौ—क्रि० स० [सं० प्रतिपालनम्] १. पालन-पोषण करना ।

२. रक्षा करना । उ०—सांतिनाथ सुणहु तूं साहिब, सरणागत प्रतिपाळौ जी ।—स कु.

३. प्रतिज्ञा का पालन करना, संकल्प निभाना । उ०—१. चिर प्रतिपाल्यउ चारित छोडी, लीधौ बांधव राज जी ।—स. कु.

उ०—२. स्रीमुनि सुव्रत सामिना रै । जीव दया प्रतिपाळ रै ।

—स. कु.

प्रतिपाळणहार, हारौ (हारी), प्रतिपाळणियौ—वि० ।

प्रतिपाळिग्रोड़ौ, प्रतिपाळियोड़ौ, प्रतिपाल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रतिपाळीजणौ, प्रतिपाळीजबौ—कर्म वा० ।

प्रतपाळणौ, प्रतपाळबौ—रू० भे० ।

प्रतिपाळौ—देखो 'प्रतिपाळ' (अल्पा, रू. भे.)

उ०—१. पावक मांय करे प्रतिपाळौ, वांको एक न होवै बाळ । सुत चौ नांम कियां निसतारै, कर पर गिर धारै किरपाळ ।

—भक्तमाळ

उ०—२. मोरमुकट पीतांबर सोहै, ओढ़ै लाल दुमाला रे । मीरां के प्रभु गिरधर नागर, भगतन के प्रतिपाळा रे ।—मीरां

प्रतिफळ—सं० पु० [सं० प्रतिफल] १. वह कार्य जो किसी कार्य का बदला लेने या देने के रूप में किया जाय ।

२. किसी कार्य या व्यवहार के परिणाम स्वरूप मिलने वाला फल । ३. नतीजा, परिणाम । ४. प्रतिशोध, बदला ।

प्रतिबंध—सं० पु० [सं० प्रतिबंधः] १. सौगंध, शपथ ।

उ०—ढोलै जी एवाळ सूं पूछियौ, पुंगळ नगर रो मारग किसौ, तद एवाळ पूछियौ कासूं कांम छै । ढोला जी नै नाकारा रो भूठ कहण रो प्रतिबंध हुंतो तद ढोलोजी बोलिया म्हारो सासरो छै ।

—ढो. मा.

२ विघ्न, बाधा, अवरोध । उ०—जिम सुख होवै तिम करो जी, म करो बहु प्रतिबंध । चाल्यौ मुनिवर जिन नमी जी, मेटण भव नो द्वंद ।—जयवांणी

३. वह रोक या बंधन जो किसी कार्य या व्यक्ति पर लगाया गया हो, रोक । ४. बंधन ।

रू० भे०—प्रतबंध ।

प्रतिबंधक—वि० [सं०] १. रोकने वाला, अटकाने वाला । २. मुकाबला करने वाला, सामना करने वाला । ३. बाधा या विघ्न डालने वाला । ४. बांधने वाला, कसने वाला ।

प्रतिबंब—देखो 'प्रतिबिंब' (रू. भे.)

उ०—जोधा जि बडा-बडा घोडा चढ़ी आया । सु सिलह मांहि इसा गरकाब हुया छै। जैसे आरसी मांहि प्रतिबंब लोह बीचि समाइ जाइ छै ।—वेलि टी.

प्रतिबंबा-सं० स्त्री० [?] दुर्गा, देवी ।

उ०—पीचासणी साकिणी प्रतिबंबा । अथ आराधिजे प्रतिबंबा ।
—देवि.

प्रतिबिंब-सं० पु० [सं० प्रतिबिंबनम्] १. किसी पदार्थ या वस्तु की पारदर्शक तल से दिखाई पड़ने वाली आकृति, परछाई, प्रतिछाया ।

उ०—१. आइस्यै जाइ साथि सु चढ़ि चढ़ि आया, तुरी लाग ले ताकि तिम । सिलह मांहि गरकाव संपेखी, जोध मुकुर प्रतिबिंब जिम ।—वेलि

उ०—२. समस्त मनुस्य छै. त्यां सिघळां हगी आंखि स्रीक्रस्ण जी रा मुख सौं द्रस्टि लागि रही छै । ताको द्रस्टांत । जैसें समुद्र कै विखैं चंद्रमा का प्रतिबिंब नैं मछली सब लागि रहैं छै ।—वेलि टी.

२. चमक झलक । उ०—या बात करण गोचर पड़तां ही गढ़ग सिपाह प्रामार बी अलीरा अंग री सपरस करतां अल रा चालवा मैं बिलंब न होय तिण रीति सुणतां ही समीप आया अर चक्री रा चक्र रैं समांन मही रैं माथैं प्रतिबिंब पाडता चतुरंग चक्र मेघ माळा मैं चंचळा रा चपळ भाव मैं चूक पाड़तां चंद्रहास चलाया ।—वं भा.

रू० भे०—पडिबिंब, प्रतबंब, प्रतबिंब, प्रतिबंब, प्रतिब्यंब, प्रतिव्यंब ।

प्रतिबूधणौ, प्रतिबूधबौ-क्रि० अ० [सं० प्रतिबोधनम्] १. प्रतिबोधित होना, आत्मज्ञानी होना । उ०—ढढ़ण कुमर हलूकमउ, प्रतिबूधउ ततकालो जी । नेमि समीपि संजम लीयउ, जिन आज्ञा प्रतिपालो जी ।—स. कु.

२. देखो 'प्रतिबोधणौ, प्रतिबोधबौ' (रू. भे)

उ०—वंस उपरि चढ्यउ खेलतउ रे, इलापुत्र अपार । केवलज्ञानी मह कीयउ रे, प्रतिबोध्यउ परिवार ।—स कु.

प्रतिबूधणहार, हारौ (हारी), प्रतिबूधणियौ—वि० ।

प्रतिबूधिओड़ौ, प्रतिबूधियोड़ौ, प्रतिबूध्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रतिबूधीजणौ, प्रतिबूधीजबौ—भाव वा०/कर्म वा० ।

प्रतिबूधियोड़ौ-भू० का० कृ०—१. प्रतिबोधित हुवा हुआ, आत्मज्ञानी हुवा हुआ २. देखो 'प्रतिबोधियोड़ौ' (रू. भे)

(स्त्री० प्रतिबूधियोड़ी)

प्रतिबोध-सं० पु० [सं० प्रतिबोधः] १ ज्ञान ।

२. शिक्षण, शिक्षा । उ०—कुण चवदे पूरवधारी साधु जी केवली । जिम हो देता प्रतिबोध के । इण निद्रा परताप सूं मरने, गया हो नरक निगोद के ।—जयवाणी

३ जागरण । ४. युक्ति, तर्क ।

रू० भे०—पडिबोध, पडिबोह ।

प्रतिबोधण-सं० पु० [सं० प्रतिबोधनम्] १. ज्ञान उत्पन्न करना ।

उ०—इन्द्र हिवै आवै इहां, सबळ आडंबर साज । भिप प्रतिबोधण जिन नमण, एक पंथ दोइ काज ।—ध. व. ग्रं.

२. जगाना ।

प्रतिबोधणौ, प्रतिबोधबौ-क्रि० स० [सं० प्रतिबोधनम्] १. समझाना, ज्ञान देना । उ०—प्रस्नोत्तर करि परगडउ रे, प्रतिबोधी निज नार । प्रभवो चोर प्रतिबूझव्यउ रे, पांच सयां परिवार ।—स. कु.

२. धर्मध्यान का रहस्य ज्ञात कराना, यर्थात् आत्मज्ञान का भान कराना । उ०—'भगू' घर 'जस्सा' घरणी, 'कमलावती' आतम उद्धरणी, प्रतिबोध्यो 'इखुकार' पती, समरू मन हरखे मोटि सती ।
—जयवांणी

उ०—नेम तणी वांणी सुणी जी, मीठी दूधाधार । प्रतिबोध्या छऊं जणा जी, जाण्यो अथिर संसार ।—जयवांणी

उ०—वलि तिण गुरु प्रतिबोधियौ, थयउ स्रावक सुविचार । मुनिवर रूप करावियउ अनारय देस विहार ।—स.कु.

प्रतिबोधणहार, हारौ (हारी), प्रतिबोधणियौ—वि० ।

प्रतिबोधिओड़ौ, प्रतिबोधियोड़ौ, प्रतिबोध्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

प्रतिबोधीजणौ, प्रतिबोधीजबौ—कर्म० ।

पडिबोहणौ, पडिबोहबौ, प्रतिबूधणौ, प्रतिबूधबौ—रू० भे० ।

प्रतिबोधियोड़ौ-भू०का०कृ०—१. समझाया हुआ, ज्ञान दिया हुआ. २. धर्मध्यान का रहस्य ज्ञात किया हुआ, यर्थात् आत्मज्ञान का भान किया हुआ.

(स्त्री० प्रतिबोधियोड़ी)

प्रतिब्यंब—देखो 'प्रतिबिंब' (रू. भे.)

प्रतिभट-सं०पु० [सं०प्रतिभटः] १. बराबर का योद्धा, योद्धा ।

उ०—'सुरजन' अप रणमस्त सह, भोज कुमारक भीड । भांमी अकबर भेजिया, नांमी प्रतिभट नीड ।—व. भा.

[सं० प्रतिभट] २. मुकाबला करने वाला ।

प्रतिभा-स०स्त्री० [सं०] १. असाधारण मानसिक शक्ति या प्राकृतिक वुद्धि जिसमें तीव्रता एव प्रखरता हो, असाधारण बुद्धिबल ।

२. साहस, वीरता । ३. उज्वलता, चमक । ४. प्रकास ।

रू०भे०—प्रतभा ।

प्रतिभांनु-सं०पु० [स० प्रतिभानु] श्रीकृष्ण का सत्यभामा के गर्भ से उत्पन्न एक पुत्र ।

प्रतिभावांन-वि० [सं० प्रतिभावान्] १. प्रतिभाशाली । २. दीप्तिमान ।

प्रतिभासंपन-वि० [सं०] जिसमें प्रतिभा हो, प्रतिभाशाली ।

प्रतिभासाळी —देखो 'प्रतिभासंपन' ।

प्रतिभू-सं० पु० [सं० प्रतिभूः] जमानत देने वाला, जामिन ।

उ०—गोइंदराज कहाई म्हैं गोळवाळा नूं मारि टोडो लीधो अर आप गोळवाळ री पुत्रियां नूं विवाहण रै काज म्हारा कवरा नूं

तेड़ो जठै सत्रुतारी संका हुवै इण कारण आपरा बारहठ हरसूर नूं प्रतिभू करि अठै भेजि उण रा धरम रो बचन दिवाइ आपरी पुत्रिया करि बिबाहो जरै बरात आवै।—वं. भा.

प्रतिमल, प्रतिमल्ल—सं०पु० [सं० प्रतिमल्ल] १. मुकाबिला। उ०—वीरां रै वरजता वाजी री वल्गा उठाय प्रतिहार नाहरराज सूं प्रतिमल्ल जाय सिरू कीधो।—वं. भा.

२. मुकाबिला करने वाला योद्धा। उ०—घणा घोड़ां भड़ां रो घांण काढ़ि बूंदी, कोटा, दोही ऊजळा दिखाई हाडां रा वंस नूं बीजां में वधतो बताई लाज रूप लगर रा घीसया पैलां रा प्रतिमल्ल मंदा लागा मयद।—वं.भा.

प्रतिमान—सं० पु० [सं० प्रतिमान] १. हाथी के ललाट के नीचे व वाहित्थ प्रदेश के नीचे का भाग। मतान्तर से हाथी के दोनो, दांतो के मध्य का भाग। (डिं. को.)

२. मूर्ति, प्रतिमा। ३. सादृश्य।

प्रतिमा—सं० स्त्री० [सं०] १. किसी की वास्तविक अथवा कल्पित आकृति के अनुसार बनाई हुई मूर्ति या चित्र, अनुकृति।

उ०—अर पराजय रै प्रसंग मांणहीण हुवो महमूद साह पाछो आयो तिकण नूं प्रामार रै साथ प्रतिमा मात्र पातसाह रहण नूं अवसर दीधो।—वं. भा.

२. मिट्टी, पत्थर, धातु आदि की बनी देव मूर्ति जिसकी स्थापना करके पूजा की जाती है।

उ०—राजकुमार देवीसिंह भी ऊमर थूणा री उगमणी सीमा पर पिता रा नांम थी बगेस्वरीदेवी को मंदिर बणाइ प्रतिस्टा पूरवक प्रतिमा पधराइ तेथ ही वापी बगाबाई बिरचाइ बूंदी आपरो थांणो राखि बंबावदै जाइ हड्डाधिराज बंगदेव नूं प्रणांम कीधो।
—वं. भा.

३. हाथी के दांत पर मढा जाने वाला पीतल, तांबे आदि का बंधन, छल्ला। ४. हाथी का शिरोभाग विशेष। ५. साहित्य में एक अलंकार।

रू० भे०—पड़िमा, परतमा, प्रतमा।

प्रतिमाळ, प्रतिमाळा—सं०स्त्री० [देशज] १. कटार। (डिं. को.)

उ०—१. 'खेता' हरा वांका जे खळा, कळहण अडग केवियां काळ। धुर मेवाड़ अनै धूहड घर, प्रगटी तूझ तणी प्रतिमाळ।
—रावत चूंडा री गीत

उ०—२. जडा घड़ा जवनां जंजर, पंजर प्रतिमाळा। हुवै अमां खावद हुकम, दीसै दावाळा।—सू प्र.

रू० भे०—पड़तमाळ, पडतमाळी, पतमाळ, परतमाल, परतमाळा, परतमाळी, प्रतमाळ, प्रतमाळा, प्रतमाळी, प्रतिमाळी।

२. ६४ कलाओं में से एक कला, अत्याक्षरी।

प्रतिमाळी—देखो 'प्रतिमाळ' (रू. भे.)

उ०—तरवारधां तन तोलि, चढ़ै अणीयां मुंह लायक। प्रतिमाळी करघर विवर, बकै मुखि विकत बायक।—ह. पु. वां.

प्रतियोगता, प्रतियोगिता—सं० स्त्री० [सं० प्रतियोगिन्+तल्—टाप्] १. किसी वस्तु, पद उद्देश्य या स्थिति विशेष को प्राप्त करने के लिये दो या दो से अधिक व्यक्तियों में परस्पर होने वाला प्रयत्न, मुकाबला, होड़। २. शत्रुता, दुश्मनी।

रू० भे०—प्रतयोगता।

प्रतिराह—सं० पु० [सं० प्रति+फा० राह] उसी मार्ग। उ०—जेळै कई जब्बर बब्बर जोर, दिखावत वायु बरब्बर दौर। रयां पलटाय पछा प्रतिराह, अछा झपटाय कहावत वाह।—मे.म.

प्रतिरोध—सं० पु० [सं० प्रतिरोधः] १. रोक, रुकावट। २. घेरा, अवरोध। ३. विरोध। ४. छिपाव, दुराव। ५. चोरी, डकेती।

रू० भे०—प्रतरोध।

प्रतिरोधक—सं० पु० [सं० प्रतिरोधकः] १. वैरी, शत्रु।

२. चोर। (ह. नां. मा.)

रू० भे०—प्रतरोधक।

प्रतिरोधन—सं० पु० [सं० प्रतिरोधनम्] १. अटकाव, रोक टोक।

२. चोर। ३. डाकू।

प्रतिलिपि, प्रतिलिपी—सं० स्त्री० [सं० प्रतिलिपि] किसी लिखे हुए लखादि की अक्षरशः और ज्यों की त्यों तैयार की हुई नकल।

प्रतिवचन—सं० पु० [सं० प्रतिवचनम्] उत्तर, जबाब।

प्रतिवत—देखो 'पतिव्रत' (रू. भे.)

प्रतिवस्तु—सं० स्त्री० [सं०] दूसरी वस्तु सदृश्य वस्तु।

प्रतिवस्तूपमा—सं० स्त्री० [सं०] वह अर्थालंकार जिसमें उपमेय-उपमान वाक्यों में एक ही धर्म का एकार्थ-वाची भिन्न-भिन्न शब्दों द्वारा वर्णन किया जाता है।

प्रतिवाद—सं०पु० [सं०प्रतिवादः] १. किसी बात के विरुद्ध कही जाने वाली बात। २. उत्तर का उत्तर, जब्वाब। ३. विवाद, बहस।

प्रतिवादी—वि० [सं० प्रतिवादिन्] विपक्षी, मुद्दालह। उ०—बिनादी वादी तें विक्रत प्रतिवादी नहं बदें।—ऊ का.

प्रतिवास—सं० पु० [सं०] १. सुगंध, महक। (अमरत)

२. प्रतिवेश, पड़ोस। ३. पास रहना, समीप रहना।

प्रतिव्यंब—देखो 'प्रतिबिंब' (रू. भे.)

उ०—सांम ही लखै प्रतिव्यंब सार, कांमला तद यै रिछपा कंवार।
—पा. प्र.

प्रतिसंलीणता, प्रतिसंलीनता—सं० स्त्री० [सं० ?] इन्द्रिय, कषाय योगों को रोकना, स्त्री, पशु, नपुंसक रहित स्थान में रहना। (जैन)

प्रतिसत—अव्य० सं० [सं० प्रतिशत] हर सैंकड़े के हिसाब से। हर सौ पर। फी सदी।

प्रतिसीरा–सं० स्त्री० [सं०] परदा, कनात, चिक । (डिं. को.)

प्रतिस्टा, प्रतिस्ठा–सं०स्त्री० [सं० प्रतिष्ठा] १. पदार्थ या वस्तु विशेष का अच्छी तरह स्थापित किया जाना, स्थापना । (देवमूर्ति, मकान आदि) उ०—तळाव सूरसागर १६६४ रा वैसाख सुद २ प्रतिस्टा हुई । —नैणसी

उ०—२. खतिविजय पिण पींपार नां घणां स्रावकां सूं देवल नी प्रतिस्ठा हवै त्यां आयो ।—भि. द्र.

२. मान, मर्यादा, इज्जत । उ०—वडा-वडा राजवियां री यां ही प्रतिस्ठा घटसी ।—पंचदंडी री वारता

३. आदर, सत्कार,सम्मान । उ०—राजकुमार देवीसिंह भी ऊमरथूणा री ऊगमणी सीमा पर पिता रा नांम थी बंगेस्वरी देवी रौ मंदिर बणाइ प्रतिस्ठा पूरवक प्रतिमा पधराइ तेथ ही बापी बंगाबाई बिरचाइ, बूंदी ग्राप रौ थांणौं राखि बंबावदै जाइ हड्डाधिराज वंगदेव नूं प्रणांम कीधो ।—वं. भा.

४. यश, कीर्ति, ख्याति । उ०—साह कहियौ म्हारा ग्रनामय रौ उद्देस करि ग्रावै जिका नूं सांम्है जाइ हूं ही समझाइ पाछा मोडि ग्राऊं । तिको भी तात रो निदेस सनमांनि दारा कहियौ पिता रा पधारण मैं हूं भी पाट रो पुत्र प्रतिस्ठा नूं पाऊं । —वं. भा.

५. पृथ्वी । ६. ग्राधार, ठहराव । ७. शान्ति, विश्राम । ८. स्थिरता, स्थाईत्व ।

९. चार वर्णं का वृत्त विशेष । (र. ज. प्र.)

रू० भे०—पइट्ठा, प्रतमटा, प्रतसठा, प्रतीठ, प्रतेस्ट, प्रतेस्ठ, प्रत्तेस्ट, प्रत्तेस्ठ ।

प्रतिस्ठापण(न)–सं०पु० [सं० प्रतिष्ठापन] देवमूर्ति आदि को स्थापित करने की क्रिया ।

रू०भे०—प्रतिस्थापण ।

प्रतिस्ठावांन–वि० [सं० प्रतिष्ठावान] प्रतिष्ठा वाला ।

प्रतिस्ठित–वि० [सं० प्रतिष्ठित] १. स्थापित किया हुआ । २. पूर्ण किया हुग्रा । ३. आदर प्राप्त, सन्मानित ।

रू०भे०—प्रतीठिउ ।

प्रतिस्थापण–सं० स्त्री० [सं० प्रतिस्थापनं] १. किसी वस्तु के न होने की दशा में उसकी एवज में दूसरी वस्तु रखने की क्रिया ।

२. किसी स्थान पर पूर्व तैनात व्यक्ति के न रहने की दशा में उसके स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति की तैनात करने की क्रिया ।

३. देखो 'प्रतिस्ठापण' (रू. भे)

प्रतिस्परद्धा–सं० स्त्री० [सं० प्रतिस्पर्द्धा] १. किसी कार्य में किसी दूसरे से ग्रागे बढने के लिए किया जाने वाला प्रयत्न ।

२. मुकाबले में अपने सामने वाले को या विपक्षी को पीछे रखने या नीचा दिखाने की प्रवृत्ति, ग्राकांक्षा ।

प्रतिस्रुत–सं० स्त्री० [सं० प्रतिश्रुत या प्रतिश्रुतिः] वादा, प्रतिज्ञा ।

उ०—म्हांरी ग्ररज हूं हाडा नरेस रै ग्राप रा उचित भडां रो उपयम कराइ पाघरो वैर धोवण री प्रतिस्रुत हुई ।—वं. भा.

प्रतिहत–वि० [सं०] १. हटाया हुग्रा । २. भगाया हुग्रा । ३. रुका हुग्रा, ग्रवरुद्ध ।

प्रतिहार–सं० पु० [सं० प्रतिहारः] १. द्वारपाल, दरबान ।

उ०—१. पइसण देवै नहि प्रतिहारा, ग्रापन्हवण करै ग्रंग उघारा। —ध.व.ग्रं.

उ०—२. सो सुणतां ही खंधावार रौ भार सचिवां रै सीस करनै द्वारपाळ वेस सों विक्रम वडाह री नगरी जाय उण रा प्रतिहारां रौ अध्यक्ष होय सेवा करण लागो ।—वं. भा.

२. छड़ीदार, चोवदार। (ह. नां. मा.)

३. पहरेदार। उ०—प्रतिहार प्रताप करै सी पालै, दंपति ऊपरि दसैदिसि । ग्ररक ग्रगनि मिसि धूप ग्रारती, निय तणु वारै' ग्रहोनिसि।—वेलि

४. प्राचीन काल का एक राज्य कर्मचारी जो सदैव राजा के पास या द्वार पर रह कर राजा या राजकुल की रक्षा करता था ।

५. उक्त कर्मचारी वर्ग से उत्पन्न एक राजवंश या इस वंश का व्यक्ति । उ०—जवनां रा जोर सूं हिंदुस्थांन में ग्रोद्राव पड़तां प्रतिहार नाहरराज मंडोवर मूं चलाय प्रत्यंतराज रै ग्रधीन वणियो। —वं. भा.

वि० वि०—इस पद के लिए किसी खास जाति या वर्ण का विचार नहीं किया जाता था अपितु राजा के पूर्ण विश्वास पात्र ही इस पद पर नियुक्त किये जाते थे । कालान्तर में इसी कर्मचारी वर्ग से एक पृथक राजवश बन गया ।

रू० भे०—पडहार, पडियार, पड़िहार, पडिग्रार, पडियार, पडियारया, पडिहार, पडिहारू, परिहार, पाडिहार, पाडिहारु, पिडीयार, पिढीयार, प्रतहार, प्रतीहार ।

प्रतीक–वि० [सं०] १. प्रतिकूल, विरुद्ध । २. जो नीचे से ऊपर की ग्रोर गया हुग्रा हो, उलटा, विलोम ।

सं० पु० [सं० प्रतीकम् या प्रतीक] १. वह वस्तु जिसमें किसी दूसरी वस्तु का ग्रारोप किया गया हो, स्थानापन्न वस्तु ।

२. प्रतिमा, मूर्ति । ३. आकृति, रूप । ४. मुख, मुंह ।

५. किसी पद्य या गद्य के ग्रादि या अन्त के कुछ शब्द लिखकर ग्रथवा पढकर उसे पूरे वाक्य का पता बतलाना ।

रू० भे०—परतीक, प्रतीख ।

प्रतीकार—देखो 'प्रतिकार' (रू. भे.)

उ०—जिसड़ा पातसाह थी तोड़िं तिण री प्रतीकार दिखावण रै काज केवळ वीरभाव रो जस चहियो ।—वं. भा.

प्रतीकास–सं० पु० [सं० प्रतीकाश्व] सूर्यवंशी राजा भानुमान का पुत्र ।

उ०—प्रतीकास जिण सुत वौह पौरस, जेण सुतण सुप्रतीक उजळ

जस । सुत जे अप मरूदेव वयण सति, पुत्र जास सुनक्षत्र प्रथमि पति ।—सू. प्र.

प्रतीक्षा–सं० स्त्री० [सं०] १. इंतजार । १. खयाल, विचार ।

प्रतीख–देखो 'प्रतीक' (रू. भे.)

उ०—सांचवट सू अंगो-अंग बाकारनै मारणौ अरू प्रथी प्रतीख चोख रौ बचन उबारणौ ।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

प्रतीघात—देखो 'प्रतिघात' (रू. भे.)

प्रतीचि, प्रतीची–सं० स्त्री० [सं० प्रतीची] पश्चिम दिशा ।

उ०—१. कह्यौ स्वकूच प्राचि को प्रतीचि पंथ तू परचौ ।

—ऊ का.

उ०—२. जिकण कसमीर मुलतांन दो ही देस लूटिया जाणि पंजाब रा ओला देस ऊजड हुवा सुणि दिल्ली सहित प्रतीची दिसा रौ आधौ आरयवरत चळ-बिचळ थियौ ।—वं. भा.

प्रतीचीप–सं० पु० [सं०] वरुण । (नां. मा.)

प्रतीठ—देखो 'प्रतिस्ठा' (रू. भे.)

उ०—बिंब प्रतीठ संघ करि बहुला ।—स. कु.

प्रतीठिउ—देखो 'प्रतिस्ठित' (रू. भे.)

उ०—एतलं ए पहु नरिंदौ जूठिलौ पाटि प्रतीठिउ ।—पं. पं. च.

प्रतीत–वि० [सं०] गुजरा हुआ, गया हुआ, व्यतीत । २. विश्वास किया हुआ, विश्वस्त । ३. सिद्ध, साबित । ४ भली भांति ज्ञात, प्रसिद्ध ।

५. देखो 'प्रतीति' (रू. भे.)

उ०—१. झूठे फल लीन्हे रांम प्रेम की प्रतीत जांण ।—मीरां

उ०—२. सखी अमीणा कथ री, पूरी एह प्रतीत । कै जासी सुर ध्रंगडै, कै आसी रणजीत ।—बां. दा.

रू० भे०—परतीत ।

प्रतीतणौ, प्रतीतबौ–क्रि० स० [स० प्रतीतिः] विश्वास करना ।

उ०—थें म्हारा वचन सरधिया प्रतीतिया रुचिया जिण सूं त्याग करौ हौ का म्हानै भाडवानै त्याग करौ हौ ।—भि. द्र.

प्रतीतणहार, हारौ (हारी), प्रतीतणियौ—वि० ।

प्रतीतिओड़ौ, प्रतीतियोड़ौ, प्रतीत्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रतीतीजणौ, प्रतीतीजबौ—कर्म वा० ।

प्रतीति–सं० स्त्री० [सं० प्रतीतिः] १. विश्वास, भरोसा ।

उ०—गुरु जीव दया नित चाहत है, चित अंतर प्रीति प्रतीति धरी ।

—स कु.

रू० भे०—परतीत, परतीति, प्रतीत ।

प्रतीतियोड़ौ–भू० का० कृ०—विश्वास किया हुआ. (स्त्री० प्रतीतियोड़ी)

प्रतीप–वि० [सं०] १. प्रतिकूल, विरुद्ध ।

उ०—पहली अकबर अवसांण समय रै समीप रीछवा रा राठोड़ पूप भोज रै पगां पड़िया जिकै अब मऊ वारां छूटां केड़ै पाछा प्रतीप थिया ।—वं. भा.

२. हट्ठी, दुराग्रही ।

३. वाधा कारक । उ०—अर एकादस अब्द रा गया मऊपुर मैं परगणां सहित पाछौ अमल जमाइ प्रतीप दीठौ तिकौ ही गहियौ बाढियौ ।—वं. भा.

४. शत्रु । उ०—एकण समय दिल्ली रा प्रतीप गुजरात रा जवनेस मुहम्मद बेगड़ साह रै आस्रित पंजाब रा सिंधु देस में भाडिगनैर रा जोइया मुसलमांन हुंता जिके हरांमखोर होइ ।—वं. भा.

सं० पु० [सं० प्रतीपः] १. एक चन्द्रवंशी राजा शंतनु जो भीष्म के पिता थे ।

[सं० प्रतीपं] २. एक अर्थालंकार विशेष जिसमें उपमेय को उपमान के समान न कहकर उलटा उपमान को उपमेय के समान कहकर उपमान का तिरस्कार करते हैं ।

प्रतीर–सं० पु० [सं०] किनारा, तट । (डिं. को.)

प्रतीव्रता—देखो 'पतिव्रता' (रू. भे.)

उ०—जोगी कहै 'प्रतीव्रता' ! सुणेस हुई नच्यंत । प्रीव थारौ आव्यौ छइ मास वसंत ।—बी. दे.

प्रतीहार—देखो 'प्रतिहार' (रू. भे.)

उ०—स्तुति देई सुप्रसन थई, गोप्य वचन गति गूढ़ । प्रतीहार प्रभु वीनव, सकळ सभा अे मूढ़ ।—मा. कां. प्र.

प्रतुद–सं० पु० [सं० प्रतुदः] पक्षी ।

प्रते—देखो 'प्रति' (रू. भे.)

उ०—अरियां जिकै आपरा भूंपड़ा रा तिणखळा मूढ़ा-मूढा प्रते पकड़िया पण धव धणी वे ही तिणा लेने जावण दीधा नहीं ।

—वी. स. टी.

प्रते'क—देखो 'प्रत्येक' (रू. भे.)

प्रतेस्ट, प्रतेस्ठ—देखो 'प्रतिस्ठा' (रू. भे.)

प्रतै—देखो 'प्रति' (रू. भे.)

उ०—वीर स्त्री रा वचन नायण प्रतै । हे ! नायण आज पग मत मांड इलजो (महदी) मत दे ।—वी.स टी.

प्रतोखणौ, प्रतोखबौ–क्रि०स० [सं० प्रतोषणम्] संतुष्ट करना ।

उ०—म्होकमसिंघ नूं बुलाय खाधापणा में घणा प्रतोखीज्या अर मन में घणा रीज्या ।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

प्रतोखणहार, हारौ (हारी), प्रतोखणियौ—वि० ।

प्रतोखिओड़ौ, प्रतोखियोड़ौ, प्रतोख्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रतोखीजणौ, प्रतखीजबौ—कर्म वा० ।

प्रतोखियोड़ौ–भू०का०कृ०—संतुष्ट किया हुआ. (स्त्री० प्रतोखियोड़ी)

प्रतोद–सं०पु० [सं०प्रतोद:] १. बैलों को हांकने का डंडा। (हि.को.) २. चाबुक।

प्रतोळका, प्रतोळिका–सं०स्त्री० [सं०प्रतोलिका] गली। (अ. मा.)

प्रतोळी–सं०स्त्री० [सं० प्रतोली] १. किसी नगर का मुख्य मार्ग। २. नगर के मध्य से हो कर गया हुआ चौड़ा रास्ता। ३. गली। ४. मुख्य द्वार, बड़ा दरवाजा। ५. नगर के प्रकार में बना हुआ बड़ा दरवाजा। ६. दुर्ग का मुख्य द्वार। ७. वह दुर्ग जिसका द्वार नगर की ओर हो।

रू० भे०—परतोळी।

यौ०—प्रतोळीद्वार।

प्रतोळीद्वार–सं० पु० यौ० [सं० प्रतोली+द्वार] मुख्यद्वार, दरवाजा।

उ०—चउहिं दिसि द्वारि, प्रतोळीद्वार। अनिवार सत्राकरि।
—सभा.

प्रत्तेस्ट, प्रत्तेस्ठ—देखो 'प्रतिस्ठा' (रू. भे.)

उ०—जिग हुवै संपूरण एम जाप, प्रत्तेस्ट वधै अति अप प्रताप।
—स. कु.

प्रत्थ—देखो 'प्रथु' (रू. भे.)

उ०—नमौ पुनि भूपति प्रत्थ प्रवीत। नमौ अवनी-अघ मेट अनीत।
—ह. र.

प्रत्थमिय—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

उ०—'सलौ' रण भूभि परधौ जुध जुट्टि। लयौ जसवास प्रत्थमिय छुट्टि।—ला. रा.

प्रत्थळ—देखो 'प्रथुळ' (रू. भे.)

उ०—खळ प्रत्थळ खळ सयळ, वत्थ दे वळह तणी परि।
—ग्र. रू. बं.

प्रत्थीप—देखो 'प्रथ्वीप' (रू. भे.)

उ०—तिकै भादवी माह ऊपांत तित्थी। पड़ै माय रै पाय प्रत्थीप प्रथी।—मे. म.

प्रत्यंचा–सं० स्त्री० [सं०] धनुष की डोरी जिसकी सहायता से तीर छोड़ा जाता है, चिल्ला, ज्या। उ०—धनपत सैणां सिंधु तपै वठ मनमथ जाणै। भंवर प्रत्यंचा बांण डरपतौ हाथ न आंणै।—मेघ.

रू० भे०—परतंचा, प्रतंचा, प्रतंज्या, प्रतिचा।

प्रत्यंत–सं० पु० [सं०] यवन, म्लेच्छ।

यौ०—प्रत्यंतदेस, प्रत्यंतधरा, प्रत्यंतराज।

प्रत्यंतदेस–सं०पु०यौ० [सं०] म्लेच्छ-देश। उ०—जठै मंकुवांणै कही जवनां रौ जातिस्वभाव आप रौ उत्करस जणावै परंतु आज रौ चाळुक्य सारां ही प्रत्यंतदेसां रौ सरणौ।—व. भा.

प्रत्यंतधरा–सं० स्त्री० [सं०] यवन-देश, म्लेच्छ-देश।

उ०—तत्तार खुरासांण न्याज निसुरत, रुस्तम, फीरोज इत्यादि प्रत्यंतधरा रा प्रवीर······।—वं. भा.

प्रत्यंतराज–सं० पु० [सं०] यवन राजा। उ०—जवनां रा जोर सूं हिंदुस्थांन में धोद्राव पड़तां प्रतिहार नाहरराज मंडोवर सूं चलाय प्रत्यंतराज रै अधीन वणियौ।—वं.भा.

प्रत्यक्ष–वि० [सं०] १. जो नेत्रों के सम्मुख स्पष्ट दिखाई दे रहा हो, नयनगोचर, उपस्थित, विद्यमान।

२. जिसका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा स्पष्ट हो रहा हो, इन्द्रियगोचर।। उ०—आ बात वांचण वाळा में तो सम्यक्त्व प्रत्यक्ष न दीसै। पिण थां सुणवा वाळां री पिण संका पडै है।—भि. द्र.

३. जिसमें किसी प्रकार का घुमाव या फिराव न हो, नियम, परिपाटी आदि से सीधा।

४. जिसमें किसी प्रकार का बाह्य आधार या साधन का प्रयोग न हुआ हो।

५. स्पष्ट, साफ, साक्षात्। उ०—१. 'सोमल' ब्राह्मण नी धिया, 'सोमा' नांमै एक। प्रत्यक्ष जांणै अपछरा, चतुराई रूप विसेस।
—जयवांणी

उ०—२. सुभ असुभ क्रियाफळ सुख दुख स्वरग नरक थर पांणी। स्वप्ना में स्वप्ना ज्यूं प्रत्यक्ष, भुगत रह्या जग प्रांणी।
—स्रीसुखरांम जी महाराज

सं० पु०—चार प्रकार के प्रमाणों में से एक, जिसमें किसी प्रकार का संदेह न किया जासके।

रू० भे०—परतक, परतक्ख, परतक्खि, परतक्ष, परतख, परतखि, परतखी, परतख्य, परतछ, परतिख, परत्तख, परत्यक्ष, पिरतक, पिरतक्ख, पिरतख, प्रतक, प्रतक्क, प्रतक्ख, प्रतक्ष, प्रतख, प्रतखि, प्रतखी, प्रतच्छ।

प्रत्यक्षवादी–सं० पु० [सं०] वह व्यक्ति जो केवल प्रत्यक्ष प्रमाण ही माने।

रू० भे०—प्रतखवादी।

प्रत्यग्या—देखो 'प्रतिग्या' (रू. भे.)

उ०—१. सत्य प्रत्यग्या जो छै ताह री।—वि. कु.

उ०—हूं थांहरौ भाई छूं। म्हारी प्रत्यग्या पूरी न होसी, सीसोदिया हंससी।—राव मालदे री वात

प्रत्यनीक–सं० पु० [सं०] एक अर्थालंकार जिसमें स्वयं शत्रु के अजय होने के कारण उसके किसी सम्बन्धी को बाधा पहुंचाने का वर्णन हो।

प्रत्यय–सं० पु० [सं०] १. व्याकरण के अनुसार वह अक्षर या शब्द-समूह जो किसी धातु अथवा विकारी या मूल शब्द के अंत में जोड़ा जाने पर उस के अर्थ में विकाश करता हो।

उ०—पद पदारथ संबंध पुनि, प्रत्यय आगम लोप। आरस पोरस सुभ असुभ, ग्रंथ हृदय घर गोप।—ऊ. का.

ज्यूं०—पंच में आयन=पंचायत, पटौ=पटा+आयत=पटायत, धाड़+आयत=धाड़ायत, कड़वौ=कड़व+वास=कड़वास

इत्यादि।

२. पिंगल (छंद शास्त्र) का वह प्रकरण जिसके द्वारा छंदों के भेद या विस्तार तथा उन की संख्याएँ जानी जाती हैं। ये कुल नौ होते हैं। प्रस्तार, सूची, उद्दिष्ट, नष्ट, पाताल, मेरु, खंड-मेरु, पताका और मर्कटी।

प्रत्याख्यान—स० पु० [सं० प्रत्याख्यानं] खडन।

प्रत्यागम—सं० पु० [सं० प्रति+आगम] १. पुनर्जन्म।

ऊ०—समापत भोग न रोग न सोग, जपंत निकेवळ केवळ जोग। प्रत्यागम भो लिव भक्ति प्रदीप, समागम सो सिव सक्ति समीप। —ऊ. का.

२. पुनः लौटना, वापस आना।

प्रत्याघात—देखो 'प्रतिघात' (रू. भे.)

प्रत्याहार—सं० पु० [सं०] योग के आठ अंगों में से एक अंग इंद्रीयनिग्रह। (वं. भा.)

प्रत्युक्ति—सं० स्त्री० [सं०] जबाब, उत्तर।

प्रत्युत्तर—सं० पु० [सं०] उत्तर मिलने पर दिया जाने वाला उत्तर, उत्तर का उत्तर, जबाब दर जबाब।

रू० भे०—प्रत्तउत्तर।

प्रत्युत्तरकळा—सं०स्त्री० [सं० प्रत्युत्तरकला] पुरुषों की ७२ कलाओ मे से एक कला।

प्रत्यूह—सं० पु० [सं०] १. रोक, अटकाव। उ०—नहिं बहुत बोलबौ सुभट नीत। प्रत्यूह भविस्यत ह्वै प्रतीत।—ऊ. का.

२. विघ्न, बाधा,। उ०—अद्वेस और ऐस्वरीय जीवना जरघो करै, मांन्या करै मंतव्य की करत्तव्य को करघो करै। अमैं प्रत्यूह व्यूह पें समस्तु भ्रूह लौं भिरी, क्रमं प्रत्यूह ओपमा दुम्ह दंत ली किरी।—ऊ. का.

प्रत्येक—वि० [सं० प्रति+एक] १. बहुतों में से एक, हरेक।

उ०—निस्चित पतिव्रत लोक नेम, प्रत्येक करहिं परलोक प्रेम। —ऊ का.

२. एक बार में एक। ३. अलग-अलग, एकाकी।

रू० भे०—परते'क प्रते'क।

प्रथ—देखो 'प्रथु' (रू. भे.)

उ०—विहद लीध जिण वार, रैण प्रथ भूप जही रस।—सू. प्र.

प्रथक—अव्य० [सं० पृथक्] १. अलग-अलग, एकाकी, अकेला।

उ०—'जसवंत' जुवति जे जहहिं जीव। दहनोदय दहं ही प्रथक पीव।—ऊ. का.

२. भिन्न, जुदा।

प्रथम—वि० [सं०] १. गणना में जिसका स्थान सब से पहले हो, पहला, आदिका, अव्वल। उ०—भुज भिड़ज रूप सपतास भाति, कवि तेण लखण गुण वरण क्रांति। सत उकति जेण पढित प्रमांण, जुधि जैत मरम क्रम प्रथम जांण।—रा. रू.

२. गुण, महत्त्व,योग्यता आदि में जो सब से बढ़ कर हो,सर्वश्रेष्ठ।

३. वह जिसने प्रतियोगिता, परीक्षा आदि में सब से अधिक अंक प्राप्त किये हों।

सं० पु०—पिता। (ह. नां. मा)

क्रि० वि०—पहिले। उ०—१. प्रथम देस 'जैसांण', 'बीकांण' प्रगटी पछै।—मे. म.

उ०— २. पातर वाळी प्रीत, मीठी लागै 'प्रथम' मन।—बां.दा.

रू० भे०—पड़थम, पढ़म, परथम, पहव, प्रथम्म, प्रथिमि, प्रथिमी, प्रिथम।

यौ०—प्रथमपुरुस।

प्रथमज—वि० [सं०] जिसका जन्म प्रथम हुआ हो।

स० पु०—बड़ा भाई, अग्रज।

प्रथमता—सं० स्त्री० [सं० प्रथम+रा० प्र० ता] प्रथम होने की अवस्था या भाव।

प्रथमपुरुस—सं० पु० यौ० [सं० प्रथमपुरुष] १. पहला व्यक्ति, पथम व्यक्ति।

२. अंग्रेजी व्याकरण के अनुसार उत्तमपुरुष। ३. संस्कृत व्याकरण के अनुसार अन्यपुरुप।

प्रथमांण—देखो 'प्रथवी' (मह., रू. भे.)

उ०—न भजै रघुनंद दया-समदं जे मत मंद जांण जडा। गुण राघव गाणौ 'किसन' कहांणौ, विच प्रथमांणै भाग बडा।—र.ज.प्र.

प्रथमा—सं० स्त्री० [सं०] १. व्याकरण में कर्त्ता कारक (विभक्ति)।

२. एक प्रकार की शराव।

प्रथमाद, प्रथमादा, प्रथमी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

उ०—१. प्रथमाद सिर व्रद पावियौ। कुळ-भांण 'चौंड' कहावियौ। —सू. प्र.

उ०—प्रथमी छट्टा पाळगर, नर मट्टा करनार। तखत बयट्टा 'सूघ' कवि, थट्टा सहर मझार।—बां. दा.

उ०—३. सुभ मझि असुभ लेख विध साखै। असुभ सगुन प्रथमी सह आखै।—सू. प्र.

प्रथमीतळ—देखो 'प्रथवीतळ' (रू. भे.)

प्रथमीपोख—देखो 'प्रथवीपोख' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रथमेण—देखो 'प्रथवी' (मह., रू. भे.)

उ०—राय हर पण जनक राखै, सूर ससि रिख देव साखै, मुणै जस प्रथमेण।—र. ज. प्र.

प्रथम्म—देखो 'प्रथम' (रू. भे.)

उ०—प्रथम्मा तुही पब्बई सैल-पुत्ती।—मे. म.

(स्त्री० प्रथम्मा, प्रथमी)

प्रथम्मी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

उ०—महा-गिड़ पेस महजळ मज्झ। किया तें जुद्ध प्रथम्मी कज्ज।
—ह. र.

प्रथरोमा—देखो 'प्रथुरोमा' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रथळ—देखो 'प्रथुळ' (रू. भे.)

उ०—१. प्रथळ करै रे प्रांणिया नारायण सूं नेह।—पी.ग्रं.

प्रथवी—सं० स्त्री० [सं० पृथिवी] पृथ्वी, भूमि।

उ०—वीस चार धुर वरणवां, सुख-वरीस संसार। प्रथवी सीस पच्चीसमों, ईस 'पतो' अवतार।—जैतदान बारहठ

रू० भे०—पहम, पहमी, पहवि, पहवी, पहुमि, पहुमी, पहुवी, पहोमि, पहोमी, पहोवी, पिरथमी, पिरथवी, पुहम, पुहमि, पुहमी, पुहवि, पुहवी, पुहवीइ, पुहुवि, पुहोवी, पोहम, पोहमी, पोहव, पोहवी, पोहोम, पौहमि, पौहमी, पौहुमी, प्रत्यमिय, प्रथमाद, प्रथमादा, प्रथमी, प्रथम्मी, प्रथिमि, प्रथिमी, प्रथिवी, प्रिथमाद, प्रिथमी, प्रिथवी, प्रिथ्विय, प्रिथिमि, प्रिथिमी।

मह०—प्रथमांण, प्रथमेण।

प्रथवीतळ—सं०पु०यौ० [सं०पृथिवी+तल] १. पाताल। २. पृथ्वी की ऊपरी सतह, धरातल।

रू०भे०—पिरथमीतळ, प्रथमीतळ, प्रिथमीतळ।

प्रथवीधणी—सं०पु०यौ० [सं० पृथिवी+धनिक] १. राजा, नृप। २. शेषनाग।

रू०भे०—पुहोवीधणी।

प्रथवीधर—सं०पु० [सं० पृथिवीधर] १. राजा, नृप। २. शेषनाग। ३. पर्वत।

रू०भे०—पिरथवीधर, पुहवीधर, प्रथिवीधर।

प्रथवीनाथ—सं०पु०यौ० [सं० पृथिवीनाथ] राजा, नृप।

रू० भे०—पहुवीनाथ, पिरथमीनाथ, पिरथवीनाथ, प्रथिवीनाथ,

प्रथवीपत, प्रथवीपति—सं० पु० यौ० [सं० पृथिवीपति] १. राजा, नृप। २. यमराज।

रू०भे०—पुहविपति, पुहविपत्ति, प्रथिवीपति, प्रथिवीपती।

प्रथवीपाळ—सं०पु०यौ० [सं०पृथिवी+पालक] १. मेघ, इन्द्र। (ना.डि.को.) २. राजा, नृप।

रू०भे०—प्रथिवीपाळ, प्रिथवीपाळ।

प्रथवीपोख—सं०पु०यौ० [सं०पृथिवीपोष] १. इन्द्र। २. राजा, नृप।

रू०भे०—पिरथमीपोख, पिरथवीपोख, पुहमीपोख, प्रथमीपोख।

प्रथवीराज—सं०पु० [सं०पृथिवीराज] राजा, नृप।

रू०भे०—पिरथवीराज।

प्रथवीस—सं०पु० [सं०पृथिवीश] १. राजा, नृप। २. इन्द्र।

रू० भे०—पुहवीस, प्रिथवीस, प्रिथुवीस।

प्रथा—सं० स्त्री० [सं० पृथा] १, राजा कुंती-भोज की पुत्री, जिसका विवाह पांडु के साथ सम्पन्न हुआ था। यह युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन की माता थी।

[सं०] २. किसी उत्सव विशेष को मनाने के लिये पुराने समय से चली आ रही परिपाटी, परंपरा।

३. विशेष अवसरों पर कार्य सम्पादन करने की परिपाटी, परम्परा।

४. किसी देश समाज या जाति में सर्वमान्य पुरानी रीति, जिसका उल्लंघन करना अनुचित माना जाता है।

५. रीति-रिवाज, रस्म।

रू० भे०—परथा, प्रिथा।

प्रथित—वि० [सं०] प्रसिद्ध, विख्यात। उ०—प्रथित इण कुळ त्रप मोहण, जाडेचा हणिया जिण जोहण।—वं. भा.

प्रथिमि, प्रथिमी—१. देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

२. देखो 'प्रथम' (रू. भे.)

उ०—समरां प्रथिमि प्रथिमि सारद नां, निमिस्कार ब्रह्मा नारद नां।
—पि. प्रं.

प्रथिवी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

प्रथिवीधर—देखो 'प्रथवीधर' (रू. भे.)

प्रथिवीनाथ—देखो 'प्रथवीनाथ' (रू. भे.)

प्रथिवीपति, प्रथिवीपती—देखो प्रथवीपत, प्रथवीपति' (रू. भे.)

उ०—राज करै रिम-राह प्रगट, पिंगळ प्रथिवीपति। प्रतपे जस परताप, दांनि जळहर जिम दीपति।—ढो. मा.

प्रथिवीपाळ—देखो 'प्रथवीपाळ' (रू. भे.)

प्रथी—देखो 'प्रथ्वी' (रू. भे.) (डि.को.,ह.नां.मा.)

उ०—१. सांचवट मूं अंगो-अंग बाकारनै मारणो, अरू प्रथी प्रतीख चोख को वचन उवारणो।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

उ०—२. प्रथी अप तेज अनीळ अकास। नही तुझ सुन्न असुन्न निवास।—ह. र.

उ०—३. कहै जम दियै ज्यूं हिज असुर कोपियो, सहै दुख मांनव अमर सूक। वही जाती थकी प्रथी इण वार विच, रही गड-डसण कमधज तणी रूक।—दुरगादास राठौड़ रो गीत

प्रथीछात—देखो 'प्रथ्वीछात' (रू. भे.)

उ०—उर्भ वात थारी प्रथीछात भारी 'अभा', 'अजावत' घरांणो चाढण ओप। महरवाळी नजर लहर महराण री, कहरवाळी नजर बीज री कोप।—वखतो खिड़ियो

प्रथीनाथ—देखो 'प्रथ्वीनाथ' (रू. भे.)

उ०—मुरधर-पति सूं मेडतो, 'अभो' हुवो असवार। प्रथीनाथ जोधांणपुर, आयो हरि अवतार।—रा.रू.

प्रथीप—देखो 'प्रथ्वीप' (रू. भे.)

उ०—परम जोत दसरथ प्रथीप, ते ग्रह अवतार।—र. ज. प्र.

प्रथीपत, प्रथीपति, प्रथीपती—देखो 'प्रथ्वीपति' (रू. भे.)

उ०—१. करणो डहरियो मारै पेट थो, दिन पूरा हुवा, तरै करण री मा कस्टी, तरै जोतखियां कह्यौ—'हमार वेळा बुरी वहै छै, ग्रै दोय घड़ी टळै, पछै छोरू हुवै तौ महाराज प्रथीपत हुवै।' —नैणसी

उ०—२. मतंग पछटण खगां निहंग छिवतै मछरि, प्रथीपति ग्रभंग भुज तैण पूजो। सुरंग मालां लियां जोध नव-साहसी, दुरंग वांका लियै 'कमौ' दूजो।—ग्रनोपसिंह सांदू

उ०—३. बिथा भुव भार फणफण व्याळ। कणक्कण फौज जणज्जण काळ। प्रथीपति बाहर एण प्रकार। डकावत नाहर लेत डकार।—मे. म.

प्रथीपाळ—देखो 'प्रथ्वीपाळ' (रू. भे.)

प्रथीपुरदर—देखो 'प्रथ्वीपुरंदर' (रू. भे.) (डिं. को.)

प्रथीराजोत-सं० पु० [स० पृथ्वी+राज+पुत्र] चौहान वंश के अन्तर्गत देवडा वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

प्रथीस—देखो 'प्रथ्वीस' (रू. भे)

उ०—बहु वड िग वखाणवै, गढ़पति वंस छतीस। महावीर द्रढ़ सामध्रम, प तल' पढ़त प्रथीस।—जैतदांन बारहठ

प्रथु-वि० [स० पृथु] १. चौड़ा, विस्तृत। २. बड़ा, महान।
३. दीर्घ। (ग्र. मा.)
४. अधिक, विपुल। ५. असंख्य, ग्रगणित, बहुत।
सं० पु० [सं० पृथुः] १. सूर्यवशी राजा अनेन के पुत्र का नाम, राजा पृथु।
उ०—सुत 'विकुख' 'सक्कुनिज' सुत 'स्वसाद', पुत्र ज ककुस्थ ग्रति हित प्रमाद। जे सुत 'ग्रनन' प्रथु पुत्र जास, राजै 'प्रथु' नंदन 'त्रिस्टरास'।—सू. प्र.
२. मतान्तर से राजा वेणु के पुत्र का नाम। ३. अग्नि, ग्राग।
४. विष्णु। ५. शिव।
रू० भे०—परथु, पिथ, पिरथु, प्रत्थ, प्रथ, प्रथू, प्रित्थु, प्रित्थू, प्रिथ, प्रिथु।

प्रथुक-सं० पु० [सं० पृथुकः] (स्त्री० प्रथुका) १. बालक, बच्चा, शिशु। (ग्र. मा.)
उ०—प्रथुक तुरी वळवळ चपळ, दळ हळवळ दीवांण, सरद निसा किर खीर सर, वेळा सरस वखांण।—रा. रू.
रू० भे०—प्रिथुक।
[सं० पृथुकं] २. चिड़वा। ३. हिंगुपत्री।

प्रथुरोमा-सं० स्त्री० [सं० पृथुरोमा] मछली। (डि. को., ह. नां. मा.)
रू० भे०—प्रथरोमा।

प्रथुळ-वि० [सं० पृथु+लच्] १. बहुत दूर तक पहुंचने या व्याप्त होने वाला, लंबा, विस्तृत, दीर्घ। (अ. मा.)
उ०—महि दाघण मेवाड, राड चाड ग्रकबर रचै, विखै बिखायत बाड, प्रथुळ पहाड 'प्रतापसी'।—दुरसो आढ़ो
२. विस्तीर्ण। ३. बहुत, ग्रधिक।
उ०—चहू कूंटां चरचा प्रथुळ, तव परचा भव पढ़ै।—मे. म.
४. ढेर, राशि, समूह।
रू० भे०—प्रत्थळ, प्रथळ, प्रथूळ, प्रिथुळ।

प्रथू—देखो 'प्रथु' (रू. भे) (अ. मा., डिं. नां. मा.)
उ०—किती कहूं कीरत कथा, प्रभता तूझ अपार। जग सुधार करवो 'जथा' 'पता' प्रथू ग्रवतार।—जैतदांन बारहठ

प्रथूळ—देखो 'प्रथुळ' (रू. भे.)

प्रथ्वी-सं० स्त्री० [सं० पृथ्वी] १. सौर जगत का वह ग्रह जिस पर मनुष्यादि प्राणी रहते हैं। (डिं को.)
२. उक्त का ग्राकाश तथा जल से भिन्न वह भाग जिस पर मनुष्य तथा पशु विचरण या भ्रमण करते हैं जमीन।
उ०—इणां सारां तूं प्रथ्वी पर दातार संग्या है, इतरा दातार कहाया।—द दा.
पर्या०—ग्रकळकुमारी, ग्रचळा, ग्रवनी, इळा, उरवी, कुंभनी, कु, खंडी, खमा, खाख, खित, खोणी, गहवरी, गोत्रा, घास, जगतमोहणी, जगती, जमी, जळसीर, ज्या, तरविसतार, तूंगा, थित, थिरा, दग्दरी, दीपदध, धर, धरणी, धरती, धराः, धूतारी, प्रथवी, बारही, भंडारी, भरतरी, भू, भूमि, मनहरणी, महि, मुक्तवेणी, मूळा, मेदनी, रणमंडप, रणमंडा, रतनगरभा, रसवती, रसा, रैणा, वसुंधरा, वसुमती, विसंभरा, सथर, समंदमेखळा, सुग्वाळी, सोलाळी।
यौ०—प्रथ्वीकाय, प्रथ्वीचक्र, प्रथ्वीछात, प्रथ्वीतळ, प्रथ्वीधर, प्रथ्वीपत, प्रथ्वीपति, प्रथ्वीपती, प्रथ्वीपुत्र, प्रथ्वीपुरदर, प्रथ्वीपोख, प्रथ्वीराज।
३. स्वर्ग ग्रौर नर्क के ग्रतिरिक्त हमारा यह मृत्युलोक, इहलोक, ससार।
४. पंच तत्त्वों या पच-भूतों में से एक जिसका प्रधान गुण गंध होते हुए भी जिसमें गौण रूप से शब्द, स्पर्श, रूप ग्रौर रस चारों गुण भी पाए जाते हैं।
वि० वि०—देखो 'भूत'।
५. सत्रह ग्रक्षरों का एक वर्णवृत, जिसमें ८, ९ पर यति ग्रौर ग्रंत में लघु-गुरु होते हे।
६. एक#।
रू० भे०—परथमी, परथवी, परथी, पह, पहि, पिथि, पिथी, पिरथि, पिरथी, पुह, पोमी, प्रथी, प्रित्थी, प्रिथि, प्रिथी, प्रीथी।

प्रथ्वीग्राचारच-सं० पु० [स० पृथ्व्याचार्य] भक्तमाल के ग्रनुसार शंकर-स्वामी के प्रमुख चार शिष्यों में से एक शिष्य, जिसने शृंगेरी मठ की स्थापना की थी। इनके चेले भारती, सरस्वती एवं पुरी के नाम से प्रख्यात हैं।

प्रथ्वीकाय-सं० पु० यौ० [सं० पृथ्वी+काया] मिट्टी, हींगळु, हरताल, पत्थर, हीरा आदि।

प्रथ्वीचक्र– सं० पु० यौ० [सं० पृथ्वीचक्र] १. भू-मंडल ।
उ०—ता पीछै पातसाह जी री तपस्या प्रथ्वीचक्र पर सूरय की न्यांई फैलती भई ।—द. दा.

प्रथ्वीछात–सं०पु०यौ० [सं० पृथ्वी+छत्र] राजा, नृप ।
रू० भे०—प्रथीछात ।

प्रथ्वीतळ–सं०पु०यौ० [सं० पृथ्वीतल] १. भूमि का वह ऊपरी तह (धरातल) जिस पर मनुष्य, पशु-पक्षी आदि प्राणी रहते हैं तथा जिस पर पेड़, पौधे, वनस्पतियां, फलती-फूलती हैं ।
२. दुनिया, ससार । ३. पाताल ।

प्रथ्वीधर–वि० [सं० पृथ्वीधर] पृथ्वी को धारण करने वाला ।
सं० पु०—१. शेषनाग । २. पहाड़ । ३. राजा, नृप ।
रू० भे०—परथीधर, पिरथीधर ।

प्रथ्वीनाथ–सं० पु० यौ० [सं० पृथ्वीनाथ] १. राजा, नृप ।
रू०भे०—परथीनाथ, पिरथीनाथ, प्रथीनाथ, प्रिथीनाथ।

प्रथ्वीप–स०पु० [सं० पृथ्वीप] राजा, नृप ।
रू० भे०—प्रत्थीप, प्रथीप, प्रिथीप ।

प्रथ्वीपत, प्रथ्वीपति, प्रथ्वीपती–सं०पु०यौ० [सं० पृथ्वीपति] १. राजा, नृप । २. यमराज ।
रू० भे०—प्रथीपत, प्रथीपति, प्रथीपत्ती, प्रिथीपति ।

प्रथ्वीपाळ–सं० पु० यौ० [स० पृथ्वी+पालक] १. मेघ, इन्द्र ।
२. राजा, नृप ।
रू० भे०—पिरथीपाळ, प्रथीपाळ ।

प्रथ्वीपुत्र–वि० [सं० पृथ्वीपुत्र] पृथ्वी से उत्पन्न ।
सं०पु०यौ०—१. मगल । २. वृक्ष ।

प्रथ्वीपुरंदर–सं०पु०यौ० [सं० पृथ्वीपुरंदर] राजा, नृप ।
रू० भे०—प्रथीपुरंदर ।

प्रथ्वीपोख–सं०पु०यौ० [सं० पृथ्वीपोष] १. इन्द्र । २. राजा, नृप ।

प्रथ्वीराज–सं०पु०यौ० [सं० पृथ्वीराज] राजा, नृप ।
रू० भे०—पिरथीराज ।

प्रथ्वीस–सं० पु० [सं० पृथ्वीश] १. राजा, नृप । २. इन्द्र ।
रू० भे०—प्रथीस ।

प्रद–वि० [सं०] देने वाला, दायक । उ०–नांणी नारायण प्रद पारायण, रांमायण रोसंदा है ।—ऊ. का.
यौ०—आरांमप्रद, दुखप्रद, सुखप्रद ।

प्रदकण, प्रदकणा, प्रदक्खण, प्रदक्खणा, प्रदक्षण, प्रदक्षणा, प्रदक्षिण, प्रदक्षिणा, प्रदखण, प्रदखणा–सं० स्त्री० [सं० प्रदक्षिणं, प्रदक्षिणा] भक्ति पूर्वक किसी पूज्य को दाहिनी ओर करके उसके चारों ओर घूमने की क्रिया, परिक्रमा । उ०—१. त्रिण्ह प्रदक्षिण ममती देऊं, त्रिण्ह करूं परणांम री माई ।—स. कु.
उ०—२. ताहरां रायमल जाय वीरमदे रै ढोलियै प्रदिक्षणा दे, पगे लाग बाहिर आयौ ।—नैणसी
रू० भे०—परदकण, परदकणा, परदक्खण, परदक्खणा, परदक्षण, परदक्षणा, परदक्षिण, परदक्षिणा, परदखण, परदखणा, परदच्छिण, परदच्छिणा, परदछ, परदछण, परदछणा, परदछिणा, परदिखणा, परिदक्षिण, परिदक्षिणा, परिदखणा, परिदखिणा, प्रदच्छ, प्रदच्छण, प्रदच्छणा, प्रदच्छिणा, प्रदछण, प्रदछणा, प्रदछिणा, प्रदिक्षण, प्रदिक्षणा, प्रदीखण, प्रदीखणा ।

प्रदच्छ–वि० [सं० प्रदक्ष] १. चतुर, दक्ष । उ०—घनं प्रतच्छ तच्छ के प्रदच्छ स्कच्छ के घरे ।—ऊ. का.
२. देखो 'प्रदक्षिणा' (रू. भे.)

प्रदच्छण, प्रदच्छणा, प्रदच्छिणा, प्रवछण, प्रवछणा, प्रदछिणा—देखो 'प्रदक्षिणा' (रू. भे.)
उ०—दीध प्रवछण हाथ जोड़ न हरि, चरणाम्रत दरस निहार ।
—र.ज.प्र.

प्रदत, प्रदत्त–वि० [सं० प्रदत्त] जो दिया जा चुका हो, दिया हुआ ।
रू० भे०—परदत ।

प्रदमन—देखो 'प्रद्युम्न' (रू. भे)
उ०—वसदेव पिता हुआ तें के घर वेटौ हुऔ तौ वासदेव स्रीक्रस्ण जी हुऔ । देवकी सासू हुई । त्यें के घरि वहु हुई तौ रांमा कहतां लखमी तें को अवतार रुखमणी जी कै घरि वहु हुइ तौ रति हुई प्रदमन जी की स्त्री ।—वेलि टी.

प्रदर–सं० पु० [सं०] १. तीर, बांण । (अ. मा., हि. को.)
२. दरार, तड़कन । उ०—प्रदर निहार पेट में पैसे, दे दारांन दवाई । आ कुण जांणै गाथ अनोखी, खळ गुळ साथ खवाई ।
—ऊ. का.
३. स्त्री-रोग विशेष जिसमें स्त्रियों के गर्भाशय से सफेद या लाल रग का लसीदार पानी सा वहा करता है । इस रोग से स्त्री दिन प्रति-दिन क्षीण और कृश होती जाती है ।
रू० भे०—परदर ।

प्रदरसक–वि० [सं० प्रदर्शक] दिखलाने वाला, बतलाने वाला, प्रदर्शन करने वाला ।
रू० भे०—परदरसक ।

प्रदरसण–सं० पु० [सं० प्रदर्शनम्] १. दिखलाने का काम ।
२. शिक्षण, उपदेश, व्याख्या । ३. सूरत, शक्ल, चितवन ।

प्रदरसणी–सं० स्त्री० [सं० प्रदर्शनम्+रा० प्र० ई] प्रदर्शनी, नुमाइश ।

प्रदांन–सं० पु० [सं० प्रदानम्] १. देने का कार्य, दान । २. भेंट, चढ़ावा ।
रू० भे०—परदांन ।

प्रदाक, प्रदाकु–सं०पु० [सं०पृदाकुः] १. सर्प, साँप। (अ.मा.,ह.नां.मा.) २. बिच्छु।

प्रदायक–वि० [सं०] देने वाला।

प्रदाव–सं० पु० [सं०] अग्नि, आग। उ०—दुहत्थ हत्थ ठेल देत हत्थ ले प्रदाव को।—ऊ. का.

प्रदाह–सं० स्त्री० [सं०] ज्वर आदि के कारण शरीर में होने वाली दाह या जलन।

प्रदिक्षण, प्रदिक्षणा—देखो 'प्रदक्षिणा' (रू. भे.)

उ०—१. हरि वांद्यउ हाथी थी ऊतरी, त्रिण्ह प्रदिक्षण दीधो जी। —स. कु.

उ०—२. ऊठ कोढ़ी रोम ऊलस्या, हुई सफल ते यात्र। त्रिण प्रदिक्षणा देइ करी, भावे वंदू हो पात्र।—स.कु.

प्रदिमन—देखो 'प्रद्युम्न' (रू. भे.)

उ०—अर जगती रै विखै वसीया सु कोण पितामह तौ जगदीस स्रीक्रस्ण। पिता तौ प्रदिमन पोत्रौ अनिरुध।—वेलि टी.

प्रदिसा–सं० स्त्री० [सं० प्रदिशा] दो मुख्य दिशाओं के बीच की दिशा, कोण, विदिशा।

प्रदीखण, प्रदीखणा—देखो 'प्रदक्षिणा' (रू. भे.)

उ०—धन्य दीहाड़उ आज कौ, देई प्रदीखणा लागइ छइ पाई। —बी. दे.

प्रदीप–सं० पु० [सं० प्रदीपः] १. दीपक, चिराग। (नां.मा.,ह.नां.मा.) २. प्रकाश, ज्योति। (अ. मा.) ३. किरण, रश्मि। (ह. नां. मा.)

प्रदीपक–वि० [सं०] १. प्रकाश या रोशनी करने वाला। २. प्रदीपन करने वाला।

सं० पु०—एक प्रकार का भयंकर विष जिसके सूंघने मात्र से ही मनुष्य मर जाता है।

प्रदीपण, प्रदीपन–वि० [सं० प्रदीपन] १. प्रकाश करने वाला। २. उत्तेजक।

सं० पु० [सं० प्रदीपनं] १. प्रकाश करने का काम। [सं० प्रदीपनः] २. एक प्रकार का खनिज विष।

प्रदीप्त–वि० [सं०] १. प्रज्वलित, प्रकाशित। २. जगमगाता हुआ, प्रकाशमान।

रू० भे०—परदीपत, परदीप्त।

प्रदुमन, प्रदूमन—देखो 'प्रद्युम्न' (रू. भे.)

उ०—१. वसुदेव पिता सुत थिया वासुदे, प्रद्रुमन सुत पित जगत-पति। सासू देवकी रांमा सुवहू, रांमा सासू वहू रति।—वेलि

उ०—२. करि चक्र पूज हेत अधिकारै, घरपति कनक थाळ मझि धारै। उर नंदनंद प्रदुमन आराधै। साधन एह नखिअ पुख साधै। —सू. प्र.

उ०—३. सहंस समपि कपिला इक साथै। हळद दोब चंदण दधि हाथै। आवै चक्र निकट ऊमहतौ। किसन प्रद्रूमन नांम कहंतौ। —सू. प्र.

प्रदेस–सं० पु० [सं० प्रदेशः] १. भू-भाग का कोई बड़ा खंड। २. किसी संघ राज्य की कोई इकाई, प्रांत।

ज्यूं०—राजस्थान प्रदेस, उत्तर-प्रदेस।

३. अंगूठे के अगले सिरे से लेकर तर्जनी के अगले सिरे तक की लंबाई या दूरी। ४. अग, अवयव।

रू० भे०—पएस, परदेस।

यौ०—प्रदेसबंध।

प्रदेसबंध–सं०पु०यौ० [सं० प्रदेश + बधः] जीव के साथ न्यूनाधिक परमाणु वाले कर्म स्कन्धों का सम्बन्ध। (जैन)

रू० भे०—पएसबंध।

प्रदेसी–वि० [सं० प्रदेशी] प्रदेश सबंधी, प्रदेश का।

रू० भे०—पएसी।

प्रदोख—देखो 'प्रदोस' (रू. भे.)

उ०—अविलोकी उत्तम इसिउं, माधव मनि संतोख। हवु हरिख हेळा-मांहि, पामिउ समय-प्रदोख।—मा.कां प्र.

प्रदोनन–सं० पु० [सं० प्रद्युम्न] १. सूर्य। (नां. मा) २. देखो 'प्रद्युम्न' (रू. भे.)

प्रदोस–सं० पु० [सं० प्रदोष] १. सूर्यास्त और रात्रि के आगमन का समय, सायंकाल। (डिं. को.)

उ०—प्रात प्रदोस दुपैरां जगमगै जोतां। मा जगमगै जोतां। —मे. म.

२. प्रत्येक पक्ष की त्रयोदशी को किया जाने वाला उपवास या व्रत जिसमें संध्या के समय शिव पूजन करके भोजन किया जाता है। ३. वह अंधेरा जो ठीक सायंकाल के समय होता है। ४. बहुत बड़ा दोष।

रू० भे०—परदोस, प्रदोख।

प्रद्युमन, प्रद्युन्न–सं०पु० [सं०प्रद्युम्न] १. कांमदेव, मदन। (ह. नां. मा.) २. रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण के पुत्र का नाम।

उ०—सांब प्रद्युम्न कुमार संताप्यउ, क्रस्ण द्विपायन साह जी। —स. कु.

३. मनु के पुत्र का नाम।

रू० भे०—प्रजु, प्रजुण, प्रजुन्न, प्रजू, प्रजूण, प्रज्जुन, प्रदमन, प्रदिमन, प्रदुमन, प्रदून्न, प्रदोमन।

प्रद्योत–सं०पु० [सं० प्रद्योतः] १. किरण, रश्मि। २. दीप्ति, आभा, चमक।

प्रद्योतन–सं०पु० [सं० प्रद्योतनः] १. सूर्य, भानु। (अ. मा., डिं. नां. मा., नां. मा.)

[सं० प्रद्योतनम्] २. चमक, प्रकाश । ३. दहकन ।

प्रद्रव, प्रद्राव-सं०पु० [सं० प्रद्रवः, प्रद्रावः] १. पलायन करना, भाग जाना । २. तेज गति से चलना ।

प्रधन-सं० पु० [सं० प्रधनम्] १. युद्ध ।
उ०—जिण रीति बवावद रै अधीस हड्डाधिराज हालू सूरसज्जा सोवण रौ साधन संपादन करतै वांणवै वरस रौ वय वांसै वाळियौ 'र अनेक आंटां रा अवमरद आसगिया तौ भी प्रधन में पुद्गळ रै पैलां रौ प्रहार भी न पायौ ।—वं. भा.
२ युद्ध में लूट का माल । ३. नाश, विनाश ।
४. नमस्कार । (अ. मा.)
रू० भे०—प्रधुन ।

प्रधांन-वि० [सं० प्रधान] १ खास, मुख्य । उ०—युग प्रधांन जिनसिंघ यतीसर, नगर निजीक पधारे ।—स कु.
२. प्रसिद्ध । ३. उत्तम ।
सं०पु० [सं० प्रधानम् या प्रधानः] १. मुख्य पदार्थ, अत्यावश्यक पदार्थ ।
२. इस भौतिक संसार का उपदान कारण । ३. परब्रह्म ।
४. ईश्वर, शिव । उ०—प्रकत्ति अतीत पुरुक्ख प्रधांन ।—ह. र.
५. सरदार, दरबारी । उ०—नव खंड रा भूपाळ निरखतां, वडा प्रधांन जिके वडवार । गिर कैलास करंता गाहड, आया खडे कियइ इळगार ।—महादेव परवती री वेलि
६. सचिव । उ०—१. पाछै आय प्रधांन, कमधज नै कहिया कथन । जिदै कह्यौ जवांन, पख हेक में जासां परा ।—पा. प्र.
उ०—२. एक राजा रौ प्रधांन राजा रौ माल खावै नहीं, जिण दूजा प्रधांन द्वेसी । सो राजा कने चुगली खाधी ए प्रधांन आप रौ माल उडावै छै । जब राजा दोयां नें भेलाकर पूछ्यौ । तब ते चुगलखोर कहै-डावडा नै दरवार रा पांना स्याही लेखण दीधी। जद प्रधांन कह्यौ-पांना स्याही लेखण तौ भणवानै दीधी छै ।—भि द्र.
७. सेनापति । उ०—जरै स्रोतानुराग रै ही प्रभाव आकरसण, मोहण, द्रावण, उनमादण, बसीकरण, पांचूं ही मनोज रा सायकां रौ वेझौ होय तत्काळ ही आप रा प्रधांन टीला नूं बुलाय प्रामारी रा पांणिग्रहण रै काज अरबुदाचळ जाय सलख रा चित्त में या वात स्वीकार करावण री पुणी ।—वं भा.
८. राजपूत युग में राजा द्वारा किसी सामंत या जागीरदार को दिया जाने वाला पद विशेष । (मारवाड़)
वि०वि०—उक्त पदाधिकारी जागीरदार के अधिकार मे अपनी निजी जागीर के अतिरिक्त १० या १२ हजार रु० की आमदनी की जागीरी विशेष होती थी ।
रू० भे०—पड़धांन, परदांन, परधांन, पहांण ।

प्रधांनगी-सं० स्त्री० [सं० प्रधान + रा० प्र० गी] १. प्रधान का पद या उक्त पदाधिकारी को मिलने वाली विशेष जागीर । २. प्रधानता ।
रू० भे०—पड़दांनगी, पड़धांनगी, परदांनगी, परधांनगी ।

प्रधांनता-सं० स्त्री० [सं० प्रधान + रा० प्र० ता] १. प्रधान होने का भाव या कर्म । २. प्राथमिकता ।

प्रधांनौ-सं० पु० [सं० प्रधान + रा०प्र० औ] प्रधान का पद या कार्य ।
उ०—रांम प्रधांनौ राजि रौ, रांमण नह धारै । समहर मांडो सूरिमां, इम वयण उचारै ।—सू. प्र.

प्रधारक-स०पु० [?] १. बाण, तीर ।
उ०—नभ धरां घूमरां भड़ निराट । घूमरां उडे भिड़ भिड़ज घाट । छूटिया प्रधारक अति छछोह । वाधनां चन्नणां लियण बोह ।—वि.सं.
[स० पृदाकु] २. सर्प, सांप ।

प्रधाव-सं०पु० [?] आक्रमण, हमला । उ०—प्रचड लोट पिंड के धकै प्रचड के परे, वितुंड तुंड तुंड लौं, भगं त्रभंड ह्वं फिरै । प्रजोध जोध कुप्पि के प्रधाव धप्पि दे परे । महा गुरुर-पूर सूर दूर दूर तै मरे ।—ऊ. का.

प्रधुन—देखो 'प्रधन' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रध्वंस सं० पु० [सं०] १. पूर्ण विनाश ।
२. संहार । ३. नितान्त अभाव ।

प्रध्वंसक-वि० [सं०] विध्वंस करने वाला, नाश करने वाला ।

प्रध्वंसी-वि० [स०] नाश करने वाला, विध्वंसक ।

प्रनाळ—देखो 'परनाळ' (रू. भे.)
उ०—एक घाव दोय टूक बटक्का अंग रा । खळकै लोही खाळ प्रनाळ पतंग रा ।—किसोरदांन बारहठ

प्रनाळका—देखो 'प्रणाळका' (रू. भे)

प्रनाळी—देखो 'प्रणाळी' (रू भे.)

प्रपंच-सं० पु० [सं०] १. संसार, दुनिया । उ०—राजा मल्लिनाथ तौ पहली ही पुत्र नूं जुवराज भाव देर प्रपंच हूं उदासीन एकांत मे रहियौ ।—वं. भा.
२. उद्योग, परिश्रम । उ०—किल कंचन कामनि त्याग करै, धन संच प्रपंच न रंच धरै । तज स्वाद फिरै महितारण कौ, निरखै नहि नैनन नारन कौ ।—ऊ. का.
३. सांसारिक, झंझट ।
४. तजवीज, उपाय । उ०—अर अठी नागोर पहली रा जुद्ध में आप रौ आबूगढ़ भीम रै गयौ सुणता ही कुमार समेत प्रमार सळख अणिहलपुर जाय जुद्ध में मरण रौ प्रपंच घडियौ ।—वं.भा.
५. षड्यंत्र, जाल । उ०—१. इण रीति अमरसिंह नागौर जाय कैमास रा मिळाप मे कपट रै निदांन केही कैद करण रा प्रपंच किया ।—वं. भा.
उ०—२. रांणी जी छळ सूं एक डावडी नै मरदांनौ भेख करवाय नै वां नै मारण रौ ई प्रपंच रचियौ पण खुद भगवांन जिण रै विळ

ह्वै उण रौ कुण कांई विगाड़ सकै ।—फुलवाड़ी

६. विस्तार, फैलाव । उ०—जरै भीम नरेस कपट रै प्रपंच नागोर मैं अल्प परिकर जांणि कैमास नूं गहण रै काज जती अमरसिंह नूं भेजियौ ।—वं. भा.

७. कपट, छल । उ०—१. म्हो नूं तौ प्रपंच करनै परणी छै ।
—पंच दंडी री वारता

उ०—२. कांमी कूड़ प्रपंच घणा कर, झूड़ करै तन भेर । ऊ साध्वी दिस घूड़ उडायर, फूड़ बतावै फेर ।—ऊ. का.

८. वाग्विस्तार, वचन चातुर्य । उ०—जठै गजारूढ चालुक्यराज सांमुहौ धकाय अलाव धक्ता लोयण मिळाय आप रा पखरैतां नूं प्रेरण रै काज अनेक प्रसंसा रा प्रपंच भणियौ ।—वं भा.

९. रचना, लीला । उ०—महा पापां रा करणहार तौ स्रीपरमेस्वर रा प्रपच में जीती हू न जावै ।—वं भा.

१०. लड़ाई, झगडा (टटा) । उ०—तिण सूं दोही राजावां रै ऊची आवै इसा प्रपंच सूं तौ घणा प्रामारा रा घर घूंनारा घुरसाळां रौ ही सहवास गहै ।—वं. भा.

११. प्रदर्शन, विकास । उ०—इण रीति चालुक्यराज कपट रै प्रपंच अरबुद रौ गढ़ लेर आप री आणा चलाई ।—वं भा

१२ ठगी । उ०—के प्रपंच कुपिया करै, रुपिया जोड़ण रोक । पर पीडा पेखै नही, ऐ लोभीडा लोक ।—बां दा.

१३. अतिविस्तार । १४. बहुलता, अनेकत्व । १५. भ्रम, धोखा । १६. फैला हुआ यह दृश्य जगत जो मायावी और मिथ्या कहा जाता है ।

रू० भे०—पड़पंच, पडपच, परपंच ।

प्रपंचक—वि० [सं०] प्रपच करने वाला । उ०— [सार सु] प्रवचन नउ ग्रही रे, विदित प्रपंचक भाव रे । अनुभव कहि [सुर] गसुं रे लाल कुगुरु तणइ प्रस्ताव रे ।—वि. कु.

प्रपंची—वि० [सं०] १. प्रपंच करने वाला ।

२. छली, कपटी, धोखेबाज । उ०—दौलत आंणै दूर सू, अग वणै अदनाह । बडा प्रपंची बांणिया, बाघ गऊ बदनाह ।—बा. दा.

रू० भे०—परपंची ।

प्रपत—देखो 'प्राप्त' (रू. भे.)

प्रपथ, प्रपथ्या—स० स्त्री० [स० प्रपथ्या] हरीतकी, हर्रे ।
(अ मा., ह ना.मा.)

प्रपा—सं० स्त्री० [सं०] प्यासों को जल पिलाने का सार्वजनिक स्थान, पौसाला, प्याऊ । उ०—१. प्रपा कूप नेंडो न बैडो पयांणौ । जलाल्या तणौ फेटबो थेट जाणौ ।—मे. म.

२. पर पीर विदीरण पीर प्रपा । तुलसी तसबीर कबीर क्रपा ।
—ऊ. का.

प्रपात—सं० पु० [सं० प्रपातः] १. पतन, गिरावट । २. किसी पहाड़ आदि ऊचे स्थान से गिरवाने ली जलधारा, झरना, जल प्रपात ।

३. झड़ना, गिरना ।

रू० भे०—परपात ।

प्रपितामह—स० पु० [सं०] (स्त्री० प्रपितामही) पितामह का पिता, प्रदादा, बाप का दादा । उ०—जिण समय अठी म्हांरा बस रा बिरोचन रै मिस्रण चंडकोटि रा कुळ में प्रपितामह बिजैसूर मंडोवर थी आथमणी दिसा बाढ़मेर कोटडा कनै बोघन्यायी ।—वं. भा.

प्रपीडण, प्रपीडन—सं० पु० [सं० प्रपीडनम्] १. बहुत अधिक सताना या कष्ट देना । २. बहुत अधिक दबाकर रस निकालना ।

प्रपुन्नाट, प्रपुन्नाड—सं०पु० [सं० प्रपुन्नाटः, प्रपुन्नाडः] एक प्रकार का क्षुप जिसके बीज आदि रक्त शोधक दवा मानी जाती है, चक्रमर्द, चकवड । (डिं को.)

प्रपोटौ—सं० पु० [?] पानी का बुदबुदा । उ०—तिणौ ही न आडो देखूं तुज्झ । मुखा-मुख सेव करावो मुज्झ । तूं एक ज प्रब्भ थया तुम्ह अह्म । प्रपोटा अब्रु तणा पर-प्रम्म ।—ह.र.

प्रपोतरौ, प्रपोतौ, प्रपोत्र, प्रपोत्रौ—स०पु० [सं० प्रपोत्र] (स्त्री० प्रपोतरी, प्रपोती प्रपोत्री) पुत्र का पौत्र,पौत्र का पुत्र ।

रू० भे०—पड़पोतरौ, पडपोतौ, पड़पोत्र, पड़पोत्रौ, परपोतरौ, परपोतौ, परपोत्र, परपोत्रौ ।

प्रफुल—देखो 'प्रफुल्ल' (रू. भे)

प्रफुलणौ, प्रफुलबौ—देखो 'प्रफुल्लणौ' प्रफुल्लबौ' (रू. भे.)

उ०—१. मेली नदि साध सुरमण कोक मनि, रमण कोक मनि साध्र रही । फूले छडी वास प्रफूले,ग्रहणे सीतळता इ ग्रही ।—वेलि

उ०—२. प्रफुलत, अथघ, दतवार, तप, ओज, सरण, स्रावण, अभ्रत । तन एक रांम दसरथ सुतण, विहद सात गुण निरवहत ।
—र.ज.प्र.

प्रफुलणहार, हारौ (हारी), प्रफुलणियौ—वि० ।

प्रफुलिओड़ौ, प्रफुलियोड़ौ, प्रफुल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रफुलीजणौ, प्रफुलीजबौ—भाव वा० ।

प्रफुलत—देखो 'प्रफुल्लित' (रू. भे.)

प्रफुलता—देखो 'प्रफुल्लता' (रू. भे.)

प्रफुलित—देखो 'प्रफुल्लित' (रू. भे.)

उ०—सो धी (राजकुंवरी) रा द्रग आंखियां प्रफुलित होय जचा रै तापणै (सिगड़ी) माथै पड़ै प्रयोजन कंवर जुद्ध रा सस्त्र लेने कंवरी सत करण री प्रिय वस्तू (चीज) नै देखै ।—वी. स. टी.

प्रफुलियोड़ौ—देखो 'प्रफुल्लियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रफुलियोड़ी)

प्रफुल्ल—वि० [स०] १. पूर्ण खिला हुआ, फूला हुआ । २. आनन्दित ।

३. मुस्कराता हुआ ।

रू० भे०—परफुल्ल, प्रफुल ।

प्रफुल्लणौ, प्रफुल्लबौ—क्रि० अ० [सं० प्रफुल्ल + रा० प्र० णौ] १. फलना-फूलना। २. फूल आदि का खिलना। ३. आनन्दित होना, हर्षित होना। ४. मुस्कराना।

प्रफुल्लणहार, हारौ (हारी), **प्रफुल्लणियौ**—वि०।

प्रफुल्लिओड़ौ, प्रफुल्लियोड़ौ, प्रफुल्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रफुल्लीजणौ, प्रफुल्लीजबौ—भाव वा०।

प्रफुलणौ, प्रफुलबौ—रू० भे०।

प्रफुल्लता—सं०स्त्री० [सं०प्रफुल्ल + रा०प्र०ता] प्रसन्नता, हर्ष, खुशी। उ०—रेढौ कहै छै—तूं माता निस्चित रह, मन मह मत कर सोच। राव निचितौ ना करू, कदे न खाऊं मोच। जो थण थारा चूंघिया रावां भंजूं मांण। तो नै भली कहाड़स्यूं, डाढ़ाळा री आण। इसा वचन सुण, तन री प्रफुल्लता देख भूंडण कही।

—डाढाळा सूर री बात

रू०भे०—प्रफुलता।

प्रफुल्लित—वि० [सं०] १. पूर्ण खिला हुआ, फूला हुआ। २ लहलहाता हुआ, हरा भरा। उ०—नीब रा रूंख में आबो रूख ऊगौ। नीब री जड़ियां में पांणी कूडयां नीब नै आंबो दोनूं इ प्रफुल्लित हुवै।—नी. प्र.

३. आनंदित, हर्षित। उ०—अनाग्रह मुल्लित आंन उपाय, प्रफुल्लित ज्यूं पतनी पति पाय।—ऊ. का.

४. मुस्कराया हुआ।

रू०भे०—परफूल्लत, प्रफुलत, प्रफुलित, प्रफूलत।

प्रफुल्लियोड़ौ—भू०का०कृ०—१. पूर्ण खिला हुआ, फुला हुआ. २. लहलहाता हुआ, हरा भरा. ३. आनदित, हर्षित. ४. मुस्कराया हुआ. (स्त्री० प्रफुल्लियोड़ी)

प्रफूलत—देखो 'प्रफुल्लित' (रू. भे.)

उ०—देखी जे सूमां द्रुमां, एकी प्रकृत अभंग। जइ माया घर में जिते, इते प्रफूलत अंग —बां. दा.

प्रबंद्ध—देखो 'प्रबंध' (रू भे.)

उ०—सिली सुरता घम सिद्धि संमंद्ध, पिली प्रभुता वस बुद्धि प्रबंद्ध। हिली खुगती जस वार हजार, मिळी मुगती दस-द्वार मभार।

-- ऊ का.

प्रबंध—सं०पु० [सं०] १ साहित्य मे श्रव्य काव्य का वह भेद जो उद्देश्य-प्रधान हो तथा जिसमें राष्ट्र-प्रेम, जातीय-भावना, धर्म-प्रेम या आदर्श जीवन की प्रेरणा देने का लक्ष्य हो।

२. पद्यमय कोई भी रचना। उ०—१. ऐसी विध पंडतराज चातुरच-कळा प्रवीण सिलोकूं का प्रबंध अनेक विध विमळ वाणी से उच्चरै···।—सू. प्र.

उ०—२. अभ्र चा पसारा गिणै न को गुणी गैण न्हाळा, सिंधां पेण न्हाळा न को लांघै हेम सिंध। मही को कवि नंद पूंथ गावे वैण न्हाळा माळा, प्रथीनाथ 'रैण' न्हाळा गुणां चा प्रबंध।

—हुकमीचंद खिड़ियौ

३ एक दूसरे से संबंद्ध वाक्य रचना का विस्तार मय लेख या अनेक संबद्ध पद्यों में पूर्ण होने वाला काव्य। उ०—जिण रा सिद्धान्त प्रमाणिक पंडितां रा रचिया प्रबंधां में इण रीति पुणीजै।—वं.भा.

४. वह काव्य या ग्रंथ जिसमें विविध प्रकार के चरित्रो या घटनाओं को लेकर वर्णनात्मक कथाएं या कथा कही गई हो।

५. ऐसा निबंध या लेख जिसका क्रम या सिल-सिला जारी रहे। उ०—किए खडन सब वडन को, यह अपराध विहाय। निरपक्ष ह्वै निहारिये, यह प्रबंध कविराय।

—महामहोपाध्याय कविराजा मुरारीदांन

६. अध्याय या सर्ग। उ०—खीची राजा केहरीसिंघ भारत ग्रंथ सीताराम चरित्र नाम अठारै प्रबंध करि वणायो।—बां.दा.ख्यात

७. सजावट।

८. प्रण, प्रतिज्ञा। उ०—मुह न दियै पर-मारियै, केहर कठण प्रबध। भूखो थाहर में सुवे, कै गाहै गज-गंध।—बां. दा.

९. इन्तजाम, बंदोबस्त। १०. व्यवस्था। ११. योजना।

रू० भे०—परबंध, प्रबंद्ध।

अल्पा० प्रबधो।

प्रबधौ—देखो 'प्रबध' (अल्पा., रू. भे)

उ०—रायपसेणी सूत्र थी, केसी प्रदेसी प्रबंधो रे। समयसुंदर कहइ मैं कियउ, सज्झाय भणी सबधो रे।—स. कु.

प्रब—देखो 'परब' (रू. भे)

उ०—१. भै 'धांधल' रजवट उजवाळा। प्रब 'अजमाल' भिड़ण प्रोचाळा।—रा. रू.

उ०—२. तदि कहि 'किसन्न' 'जसवन' तण, अम्हा वडौ प्रब आज रौ। महाराज सुछळ जुध राज मिळ, राज लहू सुरराज रौ।

—सू. प्र.

उ०—३. उडियण पाळ आवधं आखें, धत प्रब हूळ हाथळा अनीद। भळकं खगे ऊनगे भालै, वधाविजै 'रतनसी' वीद।—दूदौ

उ०—४. पकवांनै पांनै फळै सुपुहपे, सुरगे वस्त्रे दरब स्त्रब। पूजियै कमठि भगि वनसपती, प्रगूनिका होळिका प्रब।—वेलि

उ०—५. आवइजै विसन विसभर आवइ, ब्रह्मादिक तउ भाखइ वेद। तेड़िया नही ईसवर प्रब तिण, भोळौ-राव न जाणइ भेद।

—महादेव पारबती री वेलि

उ०—६. तठा उपरांति करि नै राजांन सिलामति होळिका प्रब पूजीजै छै।—रा. सा. सं.

प्रबय—वि० [सं०प्र+वय] वृद्ध, बूढा। उ०—मुणि इम वरात विहमै सकळ, जपि अतुळ चीतोड जय। बारहठ तेण 'बारू' बळै, पूठौ दव दीधौ प्रबय।—व भा.

प्रबळ—वि० [सं०प्रबल] १. ताकतवर, शक्तिशाली, बलवान।

उ०—१. जिकरण कुळ मांहि जनमियौ, प्रबळ भूप 'प्रताप'। पर घर कीधौ अप्पणौ, थिर बावन गढ़ थाप।—सिवबक्स पाल्हावत

उ०—२. दळबळ सूं वेरौ दियौ, प्रबळ हुमाऊं पूत। गैलोतां चीतोड़-गढ़, मिळ कीधौ मजबूत।—बां. दा.

२. खतरनाक, नाशकारी। उ०—जुप्रळ हिंदुसथांन, घात सपत दीप सपत में। प्रबळ उपद्रह पेखे, खिति डोलियं सीस खुरसांण।
—गु रू. बं.

३. विपुल, अधिक। उ०—दखणाध दमंगळ दाखिवा, आंगमिया उतराधि दळ। सूत्रियौ जुध्ध सुरतांण सूं, प्रारंभ प्रारंभकी (घो दळ) प्रबळ।—गु रू. बं.

४. भयंकर। उ०—रुख-रुख तीरां रूंकडां, मुख-मुख वीरां मोळ। पूंचाळा हेकरण पखै, दळ में प्रबळ दरोळ —वी. स.

५. अद्भुत, विचित्र। उ०—तिण सकार इण तौर, सतत गणिका-समझाई। बेस-बधु गुण बदळि, प्रीति लेस न पलटाई। तदि सकार असि तोलि, घाव उण रै लगाय घण। मरि जांणि खळ मूढ़, पिहित मायौ घर अप्पण। न मरी सु प्रबळ सब सौं नियति, दिन किताक अंतर दिया। सह बिप्र बळै बिलसै सफळ, कांम वयस, चुम्बन किया।—वं. भा.

६. अत्यन्त मजबूत, सुदृढ़। ७. प्रचंड, उग्र।

रू०भे०—पबळ, परबळ।

प्रबहण—देखो 'प्रवहण' (रू. भे.)

उ०—इसड़ौ अमोघ उपाइ विचारि कपट रै प्रपंच बांणियां री बरात बणाइ बाजियां रै बदळै रथ छकडा जुताई किताक प्रबहणां में प्रहरण छिपाइ।—व. भा.

प्रबाळ—सं०पु० [सं० प्रबाल. या प्रवालः] मूंगा। उ०—फबै ललाई बिंबफळ, परतख अधर प्रबाळ। जपा कुसम जोड़ै जियां, माखै सहियां माळ।—बा. दा.

रू०भे०— परब्राळ, परवाळ, प्रबाळी, प्रवाळ, प्रवाळी।

अल्पा०—परवाळि, परवाळी, प्रवाळड़ौ, प्रवाळियौ।

प्रबाळी—वि० [सं०प्रबालः+रा०प्र० ई] १. प्रबाल का, प्रबाल संबधी।
२. प्रबाल के रंग जैसे रंग का।
३. लाल।
४. देखो 'प्रबाळ' (रू. भे.)

रू०भे०—परबाळी, परवाळि, परवाळी, प्रवाळी।

प्रबीण—देखो 'प्रवीण' (रू. भे.)

उ०—जांण प्रबीण अंतर ताइ जांमी, दियंत दिन पहिलउ दीदार। तीयइ दिखाळी रांम अंतरी, करइ ज दिखवाळ अहंकार।
—महादेव पारवती री वेलि

प्रबीत—देखो 'पवित्र' (रू. भे.)

उ०—जाया माजी रात जस, पीहर हुऔ प्रबीत। आयां सुसरा आंगणै, निरमळ फैली नीत।—बां. दा.

प्रबीर—देखो 'प्रवीर' (रू. भे.)

उ०—अर और भी दोही तरफा रा प्रबीर जुदा जुदा, जुद्ध करता यां दोही महाबीरां रै पीछै रहिया।—वं. भा.

प्रबुद्ध—वि० [सं०] १. बुद्धिमान, चतुर, विद्वान। उ०—विरुद्ध वेद वारता प्रबुद्ध पांतरै नही।—ऊ. का.

२. जानकार, विज्ञ। उ०—सारी बातां समझणौ, सारी बातां सुद्ध। जाहर अरियां जाळणौ, 'पाताल' धिनौ प्रबुद्ध।—ऊ. का.

३. जाग्रत, जागा हुआ। ४. पूर्ण खिला हुआ, विकसित।

प्रबोध—सं०पु० [सं०प्रबोधः] १. किसी विषय या बात का पूर्ण ज्ञान, यथार्थ-ज्ञान। उ०—खून करै खट-बरन पिण, कुंवर करै नंह क्रोध। 'भागांणी' 'क्रन' 'भोज' ज्यूं, पायौ अचळ प्रबोध।—बां. दा.

२. बुद्धि, प्रज्ञा। (अ. मा.)

३. जागृति, अनिद्रता। ४. सतर्कता। ५. सत्यासत्य-ज्ञान।

६. धैर्य, सांत्वना, आश्वासन।

रू०भे०—परबोद, परबोध, परमोद, परमोध।

प्रबोधक—वि० [सं०] १. यथार्थ-ज्ञान कराने वाला, बताने वाला।
२. ज्ञान या बुद्धि देने वाला। ३. समझाने-बुझाने वाला।
४. सचेत करने वाला, चेताने वाला। ५. धीरज बंधाने वाला।
६. सांत्वना देने वाला।

रू० भे०—परबोधक।

प्रबोधणी—देखो 'प्रबोधनी' (रू. भे.)

प्रबोधणौ, प्रबोधबौ—क्रि० स० [सं० प्रबोधनम्] १. जागृत करना, जगाना। २. सचेत करना।

३. उपदेश देना। उ०—सरणागत सोधै, प्रेम प्रबोधै, गोधै जिम गाजंदा है।—ऊ. का.

४. यथार्थ ज्ञान देना।

५. शिक्षा देना। उ०—मड़ै नीठ बैसै वळै बैसि ऊठै, प्रबोधै किता बाजूवां अग्र पूठै।—रा. रू.

प्रबोधणहार, हारौ (हारी), प्रबोधणियौ—वि०।

प्रबोधिओड़ो, प्रबोधियोड़ो, प्रबोध्योड़ो—भू० का० कृ०।

प्रबोधीजणौ, प्रबोधीजबौ—कर्म वा०।

परबोधणौ, परबोधबौ—रू० भे०।

प्रबोधनी—सं० स्त्री० [सं० प्रबोधनी या प्रबोधिनी] कार्तिक शुक्ला एकादशी जिस दिन भगवान् चार मास शयन करके जागते हैं।

रू० भे०—परबोधणी, प्रबोधणी।

प्रबोधियोड़ो—भू० का० कृ०—१. जागृत किया हुआ, जगाया हुआ.
२. सचेत किया हुआ. ३. उपदेश दिया हुआ. दीक्षित किया हुआ.
४. यथार्थ ज्ञान दिया हुआ. ५. शिक्षा दिया हुआ, शिक्षित किया हुआ.

(स्त्री० प्रबोधियोड़ी)

प्रब्ब—देखो 'परव' (रू. भे.)

उ०—करिमरि कंकरण सुकरि, नैत्र बाधौ सिखराळह। वीररस वरसोह, कंठ लज्जी वरमाळह। विकट रूप वीदणी, खुरम घड कीध आडवर। लगन प्रब्ब रणताळ, घमळ-मगळ रण सिधू-सुर। अवपती बहूतरि ऊमरा, सतरि खांन सुरतांण रा, दळ-थंभ 'गजण' दुल्लह हुम्रो, जांन सेन जोगणपुरा।—गु. रू. बं.

प्रब्बतमाळा—देखो 'परवतमाळा' (रू. भे.)

उ०—दोळा दळ दिल्ली वाळा। पंचरूप करि प्रब्बतमाळा।

—गु. रू. बं.

प्रब्भ, प्रब्भु, प्रब्भू—देखो 'प्रभु' (रू. भे.)

उ०—१. तिणौ ही न आडो देखूं तुज्झ। मुखामुख सेव करावो मुज्झ। तूं एक ज प्रब्भ थया तुम्ह अह्म। प्रपोटा अब्रु तणा पर-प्रम्म।—ह. र.

उ०—२. पुरांणी प्रब्भु बचांणी पत्ति। जगत्पति तूं ही सव्व जगत्ति।—ह. र.

प्रब्रत्ति—देखो 'प्रव्रत्ति' (रू. भे.) (डिं. को.)

प्रभंज, प्रभंजण, प्रभंजन—सं० पु० [सं० प्रभञ्जनः] पवन, हवा।

(अ.मा., डिं.को.)

उ०—व्रज दुरग खिसा रा तबल सारां गोरा बजै, दहल पुड़ रसा रा हल हमल दुंद। लंक दिस प्रभंजण सारा वेग लागा। विलायत दिसा रा उडै घणा ग्रंद।—चैनकरण सांदू

प्रभ—देखो 'प्रभा' (रू. भे)

उ०—उरज उतगां ऊपरै, तंग कचुकि तांण। कंचन रस भरिया कळस, जरकस ढकिया जांण। जरकस ढकिया जांण, कोक जुग वस किया। दरियाई मभ-दोइ, लपेटा ज्यां लिया। पसवाड़ां हिम प्रभ क त्रिवळी छबि तिसी। मनु सुलाख विच महोर, उदर नाभी इसी।

—सिवबक्स पाल्हावत

२. देखो 'प्रभु' (रू. भे)

उ०—प्रधांना वात सुहाणी प्रभ। सुवेस्या राई बुलाई सभ।

—रामरासौ

प्रभणौ, प्रभबो—क्रि० स० [सं० प्र+भण] १. कहना, कथना।

उ०—सुण मरियौ सुत एकलौ, सासू प्रभणै धार। मो जणियौ कायर थियौ, बेटी बळण विचार।—वी.स.

२. वर्णन करना, बखानना। उ०—सांझै पय वंदगी सुरेसर, जस प्रभणै अड़ सिभ दुजेसर। 'किसन' कहै कर जोड़ कवेसर, नमो रांम रघुवंस नरेसर।—र.ज.प्र.

३. रटना, जपना। उ०—जेण उधारे अवधपुर, जग सारै जाहर। नांम ब्रह्म सिव आद लै, प्रभणै अह सुर-नर।—र.ज.प्र.

प्रभणहार, हारौ (हारी), प्रभणियौ—वि०।

प्रभणिओड़ौ, प्रभणियोड़ौ, प्रभण्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रभणीजणौ, प्रभणीजबौ—कर्म वा०।

प्रभणियोड़ौ—भू० का० कृ०—१. कहा हुआ, कथा हुआ. २. वर्णन किया हुआ, बखाना हुआ. ३. जपा हुआ, रटा हुआ.

(स्त्री० प्रभणियोड़ी)

प्रभत, प्रभता, प्रभति, प्रभती, प्रभत्त, प्रभत्ता, प्रभत्ती—देखो 'प्रभुता'

(रू. भे.) (डिं. को.)

उ०—१. हर घर ध्यांन कमध हेमाळै, परिहां चाढ़ेवा प्रभत। 'किसन' विजोग चारणां कारण, गळियौ जुजठळ राव गत।

—बां. दा.

उ०—२. महमा वधि मयंक-कुळ मंडण, पोह अनवारां प्रभत पडी (ढ़ी)। कटका तणी दुयण चै कोटे, चोखी रज कांगरै चडी (ढ़ी)।

महारांणा उदयसिंह रौ गीत

उ०—३. सुकव्यां अरट संदेडियौ, देतां दत दातार। गढ़पत हुई 'गुमांनसी', प्रभता समदां पार।—मेघराज आढ़ौ

उ०—४. परीछत साहिजिहांन सुत कोपियौ, तक्षक होमण गहण साह सुत तांणि। तपोधनि जही हिंदवांण चाढ़ण प्रभति, जरू रखपाळ जैसिंघ सुत जांणि।—राजा रांमसिंघ रौ गीत

उ०—५. अच्छरां वधावै राग रंगां गावै मोद अगां, अढ़ंगा ऊचारै हक्कां प्रभती असेस। पांचसौ सुभट्टां संगां करे इंद-लोक पूगौ, ऊमटा चढ़ावै आब वियौ 'अचळेस'।—बुधसिंह सिढ़ायच

उ०—६. ठेलै सिर अरियांण थट, कहे न हीणी कत्थ। वहे भरोसै वाहुबळ, 'पातल' लहै प्रभत्त।—जैतदांन बारहठ

उ०—७. एम देखि 'अभमाल' पांण तप तेज प्रभत्ती। कमध हूंत तद कीध, प्रीत भय हूंत असपत्ती।—सू. प्र.

प्रभव—सं०पु० [सं० प्रभवः] १. उद्गम-स्थल, निकास, उत्पत्ति स्थान।

उ०—सूर प्रभव तौ तेज, तेज नह इम्रत स्रायक। यिम्रत स्रायक चद, चंद नह स्यांम सुमायक।—र. ज. प्र.

२. जन्म, उत्पत्ति। ३. शक्ति, बळ, पराक्रम। ४. विष्णु का नामान्तर।

प्रभवस्यांमळ—स०पु० [सं०स्यामल प्रभ] श्रीकृष्ण। (अ. मा., नां. मा.)

प्रभा—सं०स्त्री० [सं०] १. चमक-दमक, जगमगाहट। २. कांति, दीप्ति, आभा। उ०—सिर धूणै बोलै सदा, हास चूक विण होय। कुकवि सभा जिण संचरे, सभा प्रभा हत होय।—बां. दा.

३. ज्योति, प्रकाश। उ०—प्रभा कहतां जोति सो चंद्रमा की गई। जब राति वितीत होण लागी।—वेलि टी.

४. किरण, रश्मि। (अ. मा., डिं. को., नां. मा., ह. नां. मा.)

५. शोभा। (अ. मा., ह. नां. मा.)

उ०—दिपै उच्छाह डंमरं, घमंक घोर घुग्घरं। वरं-वरं प्रभा वणी, घरं-घरं प्रभा घणी।—सू. प्र.

६. कीर्ति, सुयश। (अ. मा., डिं. को.)

उ०—ज्यांनै जाय सकव कोई जाचरा, छीलर जेम देखावै छेह।
नेह प्रभा लेवरा नह धारै, नारां हूंत वधारै नेह।—अज्ञात

७. लक्ष्मी। (ह. नां. मा.)

८. आभूषरा। (अ. मा.)

रू०भे०—पभा, परभा, प्रभ।

प्रभाकर—सं०पु० [सं० प्रभाकरः] १. सूर्य। (अ. मा., डिं. को.)

उ०—जिरा कुळ में अरजुन सा अजेय राजा प्रकटिया जिकां रा अभिधांन प्रभात रै समय प्रभाकर हूं प्रथम ऊगरा में आवै।
—वं. भा.

२. चंद्रमा, चांद। ३. समुद्र, सागर। ४. शिव। (क. कु. बो)

रू०भे०—पभंकर, परभाकर।

प्रभाकरभट्ट—सं०पु०यौ० [सं०] एक प्रसिद्ध मीमांसक पंडित जो स्वामी शंकराचार्य के समकालीन थे।

प्रभाकरवरद्धन—सं०पु० [सं० प्रभाकरवर्द्धन] राजा हर्षवर्द्धन के पिता का नाम।

प्रभात—सं०पु० [सं० प्रभातं] प्रातः काल, सवेरा। उ०—ताहरां मूळ नूं माळी घर मांहै भीतर लियौ। घोड़ौ भीतर लियौ, वाघौ। मूळ नूं जीमायौ। रात माळी मूळ नूं घर माहै राखियौ। प्रभात हुवौ तरां माळरा भीतर राजा नी सेवा नां फूल ले हाली।
—नैरासी

रू०भे०—परबात, परभात।

अल्पा०—परभातडली, परभातड़ी, परभाति, प्रभाति, प्रभाती।

प्रभातफेरी—सं०स्त्री०यौ० [सं० प्रभातं+राज०फेरी] १. प्रायः नाथों, स्वामियो या साधुओं द्वारा आटा या रोटी के लिये नगर में लगाया जाने वाला चक्कर। २. प्रभात के समय भगवन्नाम का कीर्तन करते हुए लगाया जाने वाला चक्कर।

३. दल बाध कर प्रचार के लिये गाते बजाते और नारे लगाते हुए नगर या ग्राम में सूर्योदय के पूर्व चक्कर लगाना।

उ०—प्रभातफेरी देता देता घर घर हेलो देवै, नही पढ़रिया टाबरियां मे पसु गघेड़ा केवै।—लो. गी.

प्रभाति—१. देखो 'प्रभात' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—हेकै घोड़ै कुंवर, चढी-चढ़ी खड़ीया। जावतां, जावता, प्रभाति हुवौ।—चौबोली

२. देखो 'प्रभाती' (रू. भे)

प्रभातियौ—वि० [सं० प्रभातं+रा० प्र० इयौ] १. प्रभात सम्बन्धी, प्रभात का।

२. देखो 'प्रभातियौ-तारौ'।

रू०भे०—परवातियौ, परभातियौ।

प्रभातियौ-तारौ—सं०पु०यौ० [रा०प्रभातियौ+सं० तारं] ब्रह्म मुहूर्त तारिका, अरुणोदयतारिका (शुक्र)।

रू०भे०—परभातियौ-तारौ, परभाती-तारौ।

प्रभाती—सं०स्त्री० [सं०प्रभातं+रा०प्र०ई] १. प्रत्यूष और प्रभास वसुओं की माता। २. सूर्योदय से पूर्व (ब्रह्ममुहूर्त) समय में गाया जाने वाला भजन, गायन विशेष। ३. प्रभात के समय गाई जाने वाली राग। ४. देखो 'प्रभात' (अल्पा., रू. भे.)

रू०भे०—परवाती, परभाति, परभाती, प्रभाति।

अल्पा०—परबातड़ी, परभातड़ली, परभातड़ी।

प्रभापत, प्रभापति—सं०पु० [स०प्रभापति] सूर्य, भानु। (क. कु. बो.)

प्रभावंक—सं०स्त्री० [सं० वक्र+प्रभा] तलवार। (अ. मा.)

प्रभाव—सं०पु० [सं०प्रभावः] १. वह अच्छा या बुरा असर जो किसी पदार्थ या व्यक्ति के गुणों के फलस्वरूप लक्षित होता है।

२. परिणामस्वरूप, फलस्वरूप। उ०—१. जिरा री संगति रै प्रभाव स्वरग लोक रौ मारग मुद्रित कराय कुंभीपाक रौ निवास भाळियौ।
—व. भा.

उ०—२. पहली एक धाड़वी रजपूत धारातीरथ में पड़ियौ तो भी कोईक कारण रै प्रभाव आप रा साथ समेत प्रेत हुवौ जिकरा रै पाछै प्रजा में एक पुत्री रही।—वं. भा.

४. बल, शक्ति। ५. वह रौब, दबाव या अधिकार जो किसी के चरित्रबल या उच्चपद आदि के कारण दूसरों पर असर डालता है।

६. अतः करण को किसी ओर प्रवृत करने का गुण।

७. ज्योतिष में ग्रह या ग्रहों की विशिष्ट स्थिति के कारण किसी में सामान्य से भिन्न दिखलाई पड़ने वाला विकार।

रू०भे०—परभाव।

प्रभावती—सं०स्त्री० [स०] १. एक राग विशेष। (मीरां)

२. महाभारत के अनुसार सूर्य की पत्नी का नाम। ३. शिव के एक गरा की वीरणा का नाम। ४. महाभारत के अनुसार अंगदेश के राजा की रानी का नाम। ५. तेरह वर्णों का एक छंद विशेष जिसका दूसरा नाम रूचिरा भी है।

प्रभावसाळी—वि० [सं० प्रभावशाली] वह जो बहुत अच्छा प्रभाव डाल सकता हो, जिसमें प्रभाव उत्पन्न करने की यथेष्ट क्षमता हो।

रू० भे०—परभावसाळी।

प्रभावित—वि० [सं०] वह जो किसी के प्रभाव में आया हुआ हो, किसी के प्रभाव से दबा हुआ।

प्रभास—वि० [सं०] १. जिसमें यथेष्ट प्रभा या चमक हो, प्रभापूर्ण।

२. चमकीला।

सं० पु०—१. ज्योति, प्रकास, चमक।

२. आठ वसुओं में से एक वसु का नाम।

३. एक प्राचीन तीर्थ का नाम। उ०—पुस्कर पेखि प्रभास पण, कालिंजर कासमीर। विमळेस्वर वरजावळी, गंगासागर तीर।
—मा. कां. प्र.

रू० भे०—पहास।

यौ०—प्रभासखेत्र।

प्रभासखेत्र–स० पु० [स० प्रभासक्षेत्र] देखो 'प्रभास' (३)।
रू० भे०—परमासखेत्र।

प्रभासणौ, प्रभासबौ–क्रि० अ० [सं० प्रभासनम्] १. प्रकाशित होना, चमकना। २. दिखाई पड़ना।
प्रभासणहार, हारौ (हारी), प्रभासणियौ—वि०।
प्रभासिओड़ौ, प्रभासियोड़ौ, प्रभस्योड़ौ—भू० का० कृ०।
प्रभासीजणौ, प्रभासीजबौ—भाव वा०।
पहासणौ, पहासबौ—रू० भे०।

प्रभासियोड़ौ–भू० का० कृ०—१. प्रकाशित हुवा हुआ, चमका हुआ. २. दिखाई दिया हुआ.

प्रभित—देखो 'प्रभ्रति' (रू. भे.)
उ०—सामत सहस सहंस-किरण, तेज पुंज्ज पौरस प्रभित। गजसिंघ तेथ तत्तौ थियौ, जेथ थाय सीतळ सवित।—गु. रू. बं.

प्रभिन्न–स० पु० [सं० प्रभिन्न] मस्त हाथी, उन्मत्त हाथी। (डिं. को.)

प्रभु–सं० पु० [सं०] १. शक्तिशाली, बलवान। २. योग्य। ३. अधिकार प्राप्त।
[स० प्रभुः] १. ईश्वर, परमेश्वर। (नां. मा., ह. नां. मा.)
उ०—१. मन मान मोर, छळ छद्द छोर। प्रभु परस पाय, अंतिम उपाय।—ऊ. का.
उ०—२. कहि अब हूं कैसे करूं, दीनानाथ दयाळ। लाज हमारी राखि प्रभु, बहुत दुखी है बाळ।—पलक दरियाव री वात
२. श्रीकृष्ण। (अ. मा.)
३. शिव, महादेव। उ०—पूछिया गवर तिवार प्रभु नूं, सांमि किसउ कउतिग संसार। दिख रहइ जग न पधारउ देखण, देव अनेक करइ दीदार।—महादेव पारवती री वेलि
४. स्वामी, मालिक।
५. राजा। (अ. मा., ह. नां मा.)
उ०—पन्नगलोक म्रतलोक तणा प्रभु, वडा रिखीसर जोवै वाट। दहनांमी दीदार देखवा, घडे हुवा हूवा गजथाट।
—महादेव पारवती री वेलि
६. सर्वोच्च अधिकारी।
७. श्याम (रंग)। (अ. मा.)
८. सूर्य। (डिं. को.)
७. इंद्र।
रू० भे०—परबु, परभु, परभू, पिरभु, पिरभू, प्रब्भ, प्रब्भु, प्रब्भू, प्रभ, प्रभू, प्रम्भु।

प्रभुता, प्रभुताई, प्रभुति–सं० स्त्री० [सं० प्रभु+रा०प्र०ता, ई]
१. प्रभु होने की अवस्था या भाव, प्रभुत्व।
२. अधिकार शक्ति आदि से युक्त बड़प्पन, महानता।
उ०—१. प्रभुता मेरु प्रमांण, आप रहै रजकण इसा। जिकै पुरस घन जांण, रवि मंडळ विच राजिया।—किरपारांम
उ०—२. अठै सुजस प्रभुता उठै, अवसर मरियां आय। मरणौ घररै मांझियां, जम नरकां ले जाय।—वी.स.
२. ऐश्वर्य, वैभव। उ०—१. देखे गुणां गांम गज दीधौ, प्रभुता लाख पसाव प्रवीत। कमधज राजां तणी कहां तैं, ऐ रीजां दूजा 'अगजीत'।—बा. दा.
उ०—२. तीन लोक रो राजा रांवण, सो है म्हारौ भाई रे। म्हां सू नेह निभाय पाय, पूरण प्रभुताई रे।—गी. रां.
३. शासन आदि का अधिकार, हुकूमत।
४. आतंक, रौब, प्रभाव। उ०—महा अजमति परम मूरति, पैज रघुपति तेज पूरति, प्रभुति सुण अति धूज धरपति, सुणै छत्रपति साह।—रा. रू.
५. शक्ति, बल, सामर्थ्य। उ०—तूं सब जांण राज प्रभुताई, अजै अतीत परख नह आई।—सू. प्र.
६. यश, कीर्ति।
रू० भे०—परभुता, परभुताई, प्रभत, प्रभता, प्रभति, प्रभती, प्रभत्त, प्रभत्ता, प्रभत्ती।

प्रभू—देखो 'प्रभु' (रू. भे.) (अ. मा., डिं. को.)
उ०—हर जैरै कच-कूप मह, वसै कोड़ ब्रहमंड। केम प्रभू मावै तिके, परगट कीड़ी पिंड।—र. ज. प्र.

प्रभूत–वि० [सं०] १. निकला हुआ, उद्गत, उत्पन्न। २. बहुत, विपुल।
रू० भे०—पभूय।

प्रभेद–सं० पु० [सं० प्रभेदः] १. हाथी की कनफटियों से मद चूने की क्रिया। २. भेद, भिन्नता।
रू० भे०—परभेद।

प्रम्भु—देखो 'प्रभु' (रू. भे.)
उ०—लाधौ हिव प्रम्भु पड़दौ लाय। मुरारि परत्तख बाहिर मांय।
—ह.र.

प्रभ्रंस–सं० पु० [सं० प्रभ्रंश] पात, गिरना।

प्रभ्रत—देखो 'परभ्रत' (रू. भे.)

प्रभ्रति, प्रभ्रती, प्रभ्रत्ती–अव्य० [सं० प्रभृति] इत्यादि।
उ०—सरस्वत्या दिक्ष्योती सुर-गुरु प्रभ्रत्ती यस सभै।—ऊ. का.
रू० भे०—प्रभित, प्रभ्रिति।

प्रभ्रस्ट–वि० [सं० प्रभ्रष्ट] नीचे गिरा हुआ, पतित।

प्रश्रिति—देखो 'प्रभ्रति' (रू. भे.)

उ०—प्रश्रिति इंद्र प्रताप, पाक पिंड तेज प्रभाकर।—गु.रू.बं.

प्रम—देखो 'परम' (रू. भे.) (अ.मा., नां.मा., ह.नां.मा.)

उ०—१. कियौ हरख कमधज्ज, निरख नायक अहमंडां। भेट ग्रांम गज भिड़ज, पूज प्रम धांम घमंडां।—रा.रू.

उ०—२. प्रम सीस न प्रांमै, पळ नह पंखण, रोहर नर घर ऊपर रड़ियौ। ईसरदास तणौ वप आहव, आंमख खग धारां अड़ियौ।

—ईसरदास वीरमदेश्रोत मेड़तिया रौ गीत

३. यौं पतसाह जोस अधिकांणै, पूज सुरां विण वेद प्रमांणै। मथुर अजोध्या ओखामंडळ, एतां आद धांम प्रम उज्जळ।—रा.रू.

प्रमगुर, प्रमगुरु—देखो 'परमगुरु' (रू. भे.) (नां.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—प्रमगुर कहै पधारौ 'पातल' प्राभा करण प्रवाड़ा। हेवै सरस अमिळिया हिन्दू, मोसूं मिळ मेवाड़ा।—दुरसौ आढ़ौ

प्रमजोत—सं० पु० [सं० परम ज्योति] परम ज्योति। उ०—१. तुरंग रथ थांभ जोग्रै अरक तमासा, रीभ वाखांणियौ दहूं राहे। घड़च खळ दळां नरवाह कर धांन रौ, 'मांन' रौ मिळै प्रमजोत माहे।

—रघुनाथसिंह रांणावत रौ गीत

उ०—२. धूंफ रौ भार बिहूंवां भलौ भलियौ, निज बचन तोल साचौ निभायौ। 'हरा' रौ सती संग सतीपुर हालियौ, मालियौ 'सेर' प्रमजोत मांहे।—पहाड़ खां आढ़ौ

प्रमत—वि० [स०] १. विचारा हुआ, मनन किया हुआ।

२. देखो 'प्रमत्त' (रू. भे.)

उ०—पर दार प्यार हुयगो प्रमत, बिन सीगां रा बैलिया। भोग रै मांय भंवता भंवर, गयौ जनम सब गेलिया।—ऊ. का.

प्रमत्त—वि० [सं०] १. नशा किया हुआ, नशे में चूर, मस्त।

२. उन्मत्त, पागल।

३. असावधान, लापरवाह। ४. वह जिसे अधिकार पद आदि का अभिमान हो।

रू० भे०—पमत, परमत, परमत्थ, प्रमत।

प्रमथ—सं० पु० [सं० प्रमथनम्] १. मथना। २. पीड़ित करना, सताना।

३. हत्या, वध।

[सं० प्रमथः] ४. शिव के गण जिनकी संख्या पुराणों के अनुसार ३६ करोड़ बतलाई गई है।

५. घोड़ा। (डि. को.)

रू० भे०—परमथ।

प्रमथनाथ—सं० पु० यौ० [सं०] शिव, महादेव।

रू० भे०—परमथनाथ।

प्रमथपति, प्रमथांपति—सं० पु० यौ० [सं० प्रमथपति] शिव, महादेव।

(डि.नां.मा., नां.मा.)

प्रमथा—सं० स्त्री० [सं०] हरीतकी, हरे। (नां. मा.)

प्रमथाधिप, प्रमथाध्रप—सं० पु० [सं० प्रमथाधिप] शिव, महादेव।

(अ.मा., ह.नां.मा.)

प्रमथालय—सं० पु० [सं०] १. शिव के गणों का निवास स्थान, श्मशान भूमि। उ०—ओढ़ण महदालय ओढ़ण धण ओढ़े। प्रमुदा आलय बिण प्रमथालय पोढ़ै।—ऊ. का.

२. वह स्थान जहां दुख या यंत्रणा मिलती हो।

प्रमदति—वि० [सं० प्रमुदित] हर्षित, आनंदित।

उ०—रति रयण सुदि नर-नारि रांमति, गाळि प्रमदति गावही।

—रा. रू.

प्रमदरस—सं० पु० [सं० प्रमदः+रस] आनद। (अ. मा.)

प्रमदा—सं० स्त्री० [सं०] १. धर्मपत्नी, पत्नी। उ०—झालौ सिंहदेव तौ प्रथम अणी में ही लोह छक होय प्रांणा रा पोखण में लुभायो थकौ प्रमदा रौ पांहुणौ अपूठौ ही खड़ियौ।—वं. भा.

२. युवती, सुंदरी। (अ. मा.)

उ०—सदव्रत करतोड़ी बरणास्रम सेवा काढ़ै मरतोड़ी रेवा तट केवा। इत्यादिक अज्जा कथितादिक ऊणी। पहुंची प्रमदा पथ परमारथ पूणी।—ऊ. का.

३. स्त्री। (ह.नां.मा.)

४. रात्रि, निशा। (नां.मा.)

रू० भे०—प्रमुदा, प्रम्मदा।

प्रमदावन—स० पु० [सं०] अंतः पुर के समीप का बगीचा।

प्रमपुर—देखो 'परमपुर' (रू. भे.)

उ०—परमांण बांधि राखण प्रथी, पाल्हणसी तीधारियउ। चहुवांण रांण सांभर-धणी, प्रमपुर अचळ पधारियउ।

—अ. बचनिका

प्रममंडप—सं० पु० [सं० परममंडप] देवालय, मंदिर। (शिव, विष्णु)

अरू वैर तीजो गाय, प्रममंडप चोथौ पाय। ऐ च्यार वयर अजेब, जग कीध 'अवरंगजेब'।—सू. प्र.

प्रमरथ—देखो 'परमारथ' (रू. भे)

उ० पद्द पकवांन प्रवाड़ा प्रमरथ, साहां सेन करे वोह-संग। मैदा कटक महारस मसळे, जीम्हण रांण कियौ रण-जग।

—महारांणा खेता रौ गीत

प्रमरदन—सं०पु० [सं०प्रमर्दनम्] १. अच्छी तरह कुचलना या नष्ट करना, २. अच्छी तरह मर्दन।

प्रमळ—देखो 'परिमळ' (रू. भे.)

उ०—म्रगनाभ अतर सौंधा प्रमळ, वंटि अरगजा वळोवळां। जदि चढ़े अनुज अग्रज गजां, हूंता हाल किलोहळां।—सू. प्र.

प्रमहंस—देखो 'परमहंस' (रू. भे.)

उ०—नमो प्रमहंस सरोवर प्रेम । निरम्मळ गोकुळनाथ नगेम ।
—ह. र.

प्रमांण—वि० [सं० प्रमाणम्] १. जो सबके लिये मान्य हो । उ०—हूं आखूं नय वयण हिक, सांभळ भरथ सुजांण । करणो तो मो अवस कर, पित चौ हुकम प्रमांण ।—र. ज. प्र.

२. मुताबिक, अनुसार । उ०—सांभळि अरथ पराक्रत सासिन्नि । अकळि प्रमांणं कियौ उचार ।—ह. नां. मा.

३. समान, अनुरूप, तुल्य, बराबर, सदृश । उ०—१. पड़्या पग देवळ थभ प्रमांण । नकेवळ पिंड अद्रा अहनाण । गुडघा गज ग्राव गुडावत गोड । घणां सहि घाव पड्या कई घोड़ ।— मे. म.

उ०—१. प्रभुता मेरु प्रमांण, आप रहै रजकण इसा । जिके पुरस घन जांण, रवि-मंडळ बिच राजिया ।—किरपारांम

उ०—२. बोलै साचा बोल, काचा नह आरै करै । तिण मांणस रा तोल, मेरू प्रमांणै मोतिया ।—रायसिंह सादू

उ०—३. तिण समय चद्रमा रै चारौं तरफ परिवेस रै प्रमांण भ्फाले सिंहदेव साठि हजार सेना सूं स्वकीय स्वामी रा सिबिर रै छत्रीना रो चक्र चलायो ।—वं. भा.

४ अटल, दृढ़ । उ०—१. अह आगम वचन 'जसा' हर आखै, पहु जांणै घु मेरु प्रमांण । मौनै अस रीभ्फ मोकळियौ, देस्यूं तस बदळौ दीवांण ।—बलू चांपावत रौ गीत

उ०—२. ताहरे माहरै प्रीतड़ी जी, आज थी थई रे प्रमांण, विण दस दिवस मुझ कंत नी जी, कांइक राखीयें कांण ।—वि. कु.

५. कामयाब, कृत कार्य, सफल, सार्थक । उ०—१. प्रांण छतै जीवै पुरख, कासूं ज्यां री कांण । प्रांण गयां जीवै पुरख, ज्यौं जीवणौ प्रमांण ।—बां. दा.

उ०—२. बड़ै भार जूपै वहै, करै न खांचाताण । जद तूं तांडै धवळ जिम, तो तांडणो प्रमांण ।—बां. दा.

६. निर्धारित, निश्चित, सही । उ०—करण सगण पय अंति करि, मात्रा बत्रीस महांण । लीलावती ए लखण, पिंगळ कीध प्रमांण ।
—पिं.प्र.

७. सत्य ।

स०पु०—१. वह बात या कथन जिस से किसी दूसरी बात या कथन का यथार्थ ज्ञान होता हो, सबूत ।

२. वह कथन या बात जो किसी अन्य कथन या बात को सत्य या ठीक सिद्ध करने के लिए औरों के सम्मुख कही या रखी जाती है, गवाही, साक्षी ।

३. सत्यता, सचाई । उ०—सोहै नीलांबर सहत, प्रमुदा प्रीत प्रमांण । चपकमाळा हरत चित, जुत भमरावळि जांण ।
—बां. दा.

४. प्रतीति, यकीन, दृढ़ विश्वास ।

५. ऐसी चीज या बात जो बिल्कुल ठीक होने के कारण सबके लिए मान्य हो । उ०—स्रीमाहाराज ! ओ बाळक करड़ा नक्षत्र में जनम्यो छै नै कुंडळी मांहे ग्रह खोटा आया छै, वेळा पिण खोटी छै सो माता-पीता नै विघनकारी छै, मोत-घात ज्यूं छै । इण बाळक रो मूंहडो बारै बरस तांई देखणो जूगत नहीं छै । इण। बीध रा ज्योतिस में समाचार छै। स्रीमाहाराज रा मन में आवै सो कराईजै, तठै राजा जी सूतनो प्रोहित जी नै कहीयो—थे कहो सोई ज प्रमांण छै ।—रीसालू री बात

६. लबाई, चौडाई नापने या भार आदि तोलने का मान ।

७. लंबाई-चौड़ाई, विस्तार, आकार, आयतन । उ०—जिण समय दो ही फौजां रा हिलाळा समुद्र रै समाण प्रमांण में आया अर तोपां री गाज हूं सेस रा सीसां समेत मकराकर मेखळा मही रै मचोळा लगाया ।—वं. भा.

८. ऐसी बात, कथन या तथ्य जिसे सब लोग प्रामाणिक या सत्य मानते हो । उ०—गुरु बिग्जानंद समीप गयो ब्रह्मग्यांनी । प्रभु पांणिनीय व्याकरण प्रमांण प्रमांनी ।—ऊ. का.

९. प्रकार, तरह, भाँति । उ०—१. नथी रजोगुण ज्यां नरां, वां पूरो न उफांण । वे भी सुणता ऊफणै, पूरा वीर प्रमांण ।—वी.स.

उ०—२. देवीदास सहस्रनांम रौ पाठ कियौ। वहोत करुणा कीधी। गरीब प्रमांण दंडवत करि, घर नै बहिर हुवा ।
—पलक दरियाव री बात

१०. वह तर्क या स्पष्टीकरण जिसमे किसी बात या विवादास्पद स्थिति के किसी एक पक्ष के औचित्य की पुष्टि होती हो ।

११. धर्म-शास्त्र, आगम । उ०—आप रै आलय हो काठां चढ़ाई बंबावदै आइ अग्रज रो साथ कीधो सो जांणि हालू नरेंद्र थी पावक में पत्नी रो प्रवेस प्रमांण थी विरुद्ध बिचारि आप रा अग्रज नु उपालभ दीधो ।—वं. भा.

१२. तालाब । (ह. नां. मा.)

१३. साहित्य में एक अर्थालंकार जिसमें किसी अर्थ का प्रमाण अर्थात् यथार्थ का अनुभव होता हो (अमुक पदार्थ ऐसा या इतना है) वर्णित हो ।

१४. आकार । उ०—१. मृग-मद बेंदी भाळ मझ, जाय कही छवि जौन । निस अस्टम सनि रो नखित, भयो उदै ससि भौन । भयो उदै ससि भौन, तो ब्रहुवां तणी । नयणां अंजन नोक, अडी स्रवणां अणी । नासा (कीर) मुक-मुख नास समांण अधर त्रिव ओपिया । पकती हीर प्रमांण रदन जनु रोपिया ।—सिवबक्स पाल्हावत

उ०—२. सो पनां वीरणीक भांती री छै. सीस री सोभा नाळेर प्रमांण, लीलाट तो पूनम रो चंद जांण ।—पनां वीरमदे री बात

१६. लक्षण, नियम । उ०—१. बिध इण मत्ता वरण री, परगट जांण प्रमांण । भांण-गीत जिण नांम भल, भण जस रघुकुळ भांण ।—र. ज. प्र.

उ०—२. यगण संखनारी उभय, दोय तगण मथांण। दुजगण प्रियगण मिळ दहूं, मदनक छंद प्रमांण।—र ज.प्र.

१७. आधार, बूता, जोर। उ०—'गोम्ररधन' गाढ़िम लोह गहळ, संग्रांमचद समोभ्रम सनद्ध। वाळापुर विढियौ बळ प्रमांण, वड रावत लोडौ खुरासांण।—गु.रू.वं.

१८. अपना व दूसरों का निश्चय करने वाला सच्चा ज्ञान।

वि०वि०—प्रमांण ज्ञान वस्तु की सब दृष्टि बिन्दुओ से जाना जाता है अर्थात् वस्तु के सब अंशो को जानने वाले ज्ञान को प्रमाण-ज्ञान कहते हैं। (जैन)

१६. न्याय-शास्त्र के अनुसार प्रमांण के चार प्रकार– (१) प्रत्यक्ष प्रमाण। (२) अनुमान प्रमाण। (३) उपमान प्रमाण। (४) शब्द प्रमाण।

२०. यथार्थ ज्ञान, शुद्धबुद्धि। २१. सीमा, मात्रा।

२२. देखो 'परिमाण' (रू. भे.)

उ०—१. प्रथम तो सतयुग री थापना। सतरै लाख अठावीस हजार वरस प्रमांण।—रा.वं.वि.

उ०—२. तिण जुग मांहे २१ ताड प्रमांण देह हुई। दस हजार वरस रौ आउखौ।—रा. वं. वि.

उ०—३. तिकण अवंतीपुरी रै परै पंचकोस रै प्रमांण पूगि बीरां री बासठि हजार ६२००० सेना रै साथ मेळ पायौ।—वं.भा.

रू०भे०—परमांण, परवांण, परिवांण, प्रमांणि, प्रमांणी, प्रमांणु, प्रमांणु, प्रवांण, प्रवांन।

अल्पा०—परमाणौ, परवांणौ।

प्रमांणणौ, प्रमांणबौ–क्रि०स० [सं० प्रमाणम्] मानना।

उ०—१. अर एक सौ चालीस सिपाह बिबाहण रै उचित दीठा तिकां रै स्वीकार करण रौ भी मालिक रा बिबाह बिनां असभव ही प्रमांणीजै इसडी सुणि हम्मीर री माता आप रा पुत्र नूं बारहठ लोहठ रै पगां लगाइ अतेउर री डोढी बुलाइ अंजळीउपेत अपराध मांगि कहियौ।—वं. भा.

उ०—२. अर मडोउर हूं हालू आवियां केडै नरेस हम्मीर कासीबास कीधौ, जिण पछै बुंदी रौ नरेस बरसिंह हुवौ जिण रौ भी अद्वितीय आतंक प्रमांणीजै।—वं. भा.

उ०—३. उठै थंभि दो दीह लाखां उडाऊ, हठां लै भटां भेजियो द्रग भाऊ। जिकी बात भाऊ घणी नीच जांणी, पिता रै मतै नीठि सो ही प्रमांणी।—व. भा.

प्रमांणपत्र–सं०पु०यौ० [स०प्रमाण+पत्र] किसी बात या विषय के प्रमाण स्वरूप लिखा हुआ लेख या पत्र।

प्रमांणि—देखो 'प्रमांण' (रू. भे.)

उ०—आदि गुरु मात्रा इकत्रीस, सुकवि सभळै घूणै सीस। पायै-पायै एण प्रमांणि, जपिया छद पवंगम जांणि।—वि. प्र.

प्रमांणिक–वि० [सं० प्रमाणिक] १. शास्त्रज्ञ। उ०—जिण रा सिद्धांत प्रमाणिक पंडितां रा रचिया प्रबंधा मैं इण रीति पुणीजै।
—वं. भा.

२. मानने योग्य, माननीय। ३. ठीक, सत्य।

४. शास्त्र-सिद्ध। ५. जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा सिद्ध हो।

रू०भे०—परमांणिक, परवांणि, परवांणी।

प्रमांणिका–सं०स्त्री० [सं० प्रमाणिका] प्रत्येक चरण में एक जगण, एक रगण, एक लघु, एक गुरु वाला छंद विशेष। इसका दूसरा नाम प्रमांणी तथा नगर-स्वरूपिणी भी है।

रू० भे०—प्रमांणी।

प्रमांणी—१. देखो 'प्रमांण' (रू. भे.)

२. देखो 'प्रमाणिका' (रू. भे.)

उ०—लघु गुरु क्रम वरण अठ, छंद प्रमांणी कथ्य।—र.ज.प्र.

प्रमांणु, प्रमांणु—१. देखो 'प्रमांण' (रू. भे)

उ०—इम अपणपुं घणुं वखांण बोलि न नीय कुल तणुं प्रमांणुं।
—पं. पं. च.

२. देखो 'परमांणु' (रू. भे.)

प्रमांन—देखो 'प्रमांण' (रू. भे.)

उ०—१. सुसील सभ्य साच्छरं, स्तुति प्रमांन सोहनै।—ऊ. का.

उ०—२. नये नये पदारथांन खांन खोजते नहीं, गुमांन मेटनै गुनी प्रमांन सोझते नहीं।—ऊ.का.

प्रमा–सं०स्त्री० [सं०] १. लक्ष्मी, रमा।

२. श्रीरुक्मिणी का एक नाम। उ०—लोकमाता सिंधु-सुता स्रीलिखमी, पदमा पदमाळया प्रमा। अवर ग्रहे अस्थिरा इंदिरा, रांमा हरिवल्लभा रमा।—वेलि

२. यथार्थ ज्ञान, शुद्धबोधन।

रू०भे०—परमा।

प्रमातम—देखो 'परमात्मा' (रू. भे.)

प्रमाद–सं०पु० [सं०] १. किसी प्रकार के मादक पदार्थ के सेवन करने से होने वाली शरीर की अवस्था या भाव, नशा, मस्ती।

२. मनुष्य के मस्तिष्क की वह अवस्था, जिसमें वह अभिमान, अनवधानता, उपेक्षा आदि के कारण बिना आगा-पीछा सोचे कोई अनुचित कार्य या भूल कर बैठता है, मदान्ध की स्थिति।

३. उपर्युक्त स्थिति या अवस्था में की जाने वाली कोई भूल।

४. उन्माद, पागलपन।

५. अंतः करण की दुर्बलता।

६. बेहोशी, मुर्च्छा।

७. आलस्य, गफलत। उ०—ग्रांम बड़धा कुमार ती रै बीच मुकांम हुवौ। अर रात्रि रै आगम तिका रै प्रमाद राखण

रौ कुकांम हुवौ । निसीथ रै समय कुमार दूदै तिकां मायै जाइ नत्रीठा वाजी पटकिया । —वं. भा.

८. योग-शास्त्र के अनुसार समाधि के साधनों की भावना न करना या उन्हें ठीक प्रकार से न समझना । ये नौ प्रकार के अंतरायाम है ।

९. मनुष्य की वह अवस्था या स्थिति जिसमें जीव सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्चरित्र रूप मोक्ष के प्रति उद्यम करने में शैथिल्य करता है । (जैन)

रू० भे०—पमाग्र, पमाय, परमाद, परमाय ।

अल्पा०—परमादौ ।

प्रमादी—वि० [स० प्रमादिन्] (स्त्री० प्रमादरण) १. वह जो प्रमाद करता हो ।

२. पागल ।

३. उन्मत्त, मस्त । उ०—पढ़ दुरस प्रमादी मुरसद मादी, महंत पुरुस माचदा है ।—ऊ का.

४. गफलत करने वाला, लापरवाह, असावधान । उ०—लग्यो स्वादो स्वादी उपक्ति प्रमादी नहिं लख्यो ।—ऊ. का.

रू० भे०—परमादी ।

प्रमार—देखो 'परमार' (रू. भे.)

प्रमीस सं०पु० [स० परम+ईशः] १. परमात्मा, ईश्वर । उ०—रमीस प्रमीस हरां अघरीस ।—र. ज. प्र.

२. विष्णु ।

प्रमुकरणौ, प्रमुकवौ—देखो 'मूकरणौ, मूकवौ' (रू. भे.)

प्रमुकरणहार, हारौ (हारी), प्रमुकरणियौ—वि० ।

प्रमुकिग्रोड़ौ, प्रमुकियोड़ौ, प्रमुक्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रमुकीजरणौ, प्रमुकीजबौ—कर्म वा० ।

प्रमुकियोड़ौ—देखो 'मूकियोड़ौ' (रू. भे.)

प्रमुक्करणौ, प्रमुक्कबौ—देखो 'मूकरणौ, मूकबौ' (रू.भे.)

उ०—उर निस्वास प्रमुक्कै, भग्गौ ज्यास चीत साभ्रंमं । यौं चिंता उद्वेगौ, लग्गी अग्ग वस घासांरण ।—रा. रू.

प्रमुक्करणहार, हारौ (हारी), प्रमुक्करणियौ—वि० ।

प्रमुक्किग्रोड़ौ, प्रमुक्कियोड़ौ, प्रमुक्क्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रमुक्कीजरणौ, प्रमुक्कीजवौ—कर्म वा० ।

प्रमुक्कियोड़ौ—देखो 'मूक्कियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रमुक्कियोड़ी)

प्रमुख-वि० [सं०] (भाव० प्रमुखता) १. सब से अग्र या पहले वाला, प्रथम ।

२. जो औरों से सब बातों में बढकर हो, श्रेष्ठ, प्रधान, मुख्य ।

३. जो दूसरो के प्रतिमुख होकर खड़ा हो ।

४. समस्त पदों के अंत में, जो प्रधान के पद पर हो ।

ज्यूं०—राज-प्रमुख ।

सं० पु०—१. प्रधान ।

२. प्रधान शासक ।

३. विधान सभा या संसद का अध्यक्ष ।

अव्य०—१. आदि, प्रभृति । उ०—सिंध तांम्रपरणी प्रमुख, नदियां ते नर नाह । हैवर ढोया 'भीम' हर, गिरां उलगां गाह ।—वां. दा.

२. आगे, सामने ।

रू० भे०—पमुंह, पमुह, परमुख ।

प्रमुखता—सं०स्त्री० [सं० प्रमुख+रा०प्र०ता] १. प्रमुख होने का गुण या भाव, प्रमुख होने की अवस्था ।

२. प्राथमिकता दी जाने वाली स्थिति ।

प्रमुद—सं०पु० [सं०] १. आनंद । (ह.नां.मा.)

२. देखो 'प्रमुदित' (रू भे)

प्रमुदा—देखो 'प्रमदा' (रू. भे)

उ०—१. सोहै नीलांबर सहत, प्रमुदा प्रीत प्रमांण । चंपकमाळा हरत चित, जुत भमरावळि जांण ।—वां. दा

उ०—२. ओदरण महदालय ओढरण थरण ओढै । प्रमुदा आलय विरण प्रमथालय पोढै ।—ऊ. का.

प्रमुदित—वि० [स०] आल्हादित, प्रसन्न, हर्षित ।

उ०—फुट वांनरेरण कच नाळिकेर फळ, मज्जा तिकरि दधि मंगळिक । कुंकुम अखित पराग किंजळक, प्रमुदित अति गायंति पिक ।—वेलि

रू० भे०—प्रमुद ।

प्रमूकरणौ, प्रमूकवौ—देखो 'मूकरणौ, 'मूकवौ' (रू. भे.)

उ०—१. गात सवाररण में गमै, ऊमर काय अजांरण । पाखर प्रारण प्रमूक औ, खाख हुसी मळ खांरण ।—वां. दा.

उ०—२. द्रढ़ मंत्री दिल्लेस पास, 'अमरेस' भंडारी । रीत नीत ऊजळौ, प्रीतधारी हितकारी । सुपनै ही सामाय न्याय-व्रत चाय न चूकै । राज काज चित राग,माग अनि समळ प्रमूकै । महाराज 'अभै' मंडोवरै, सकळ लाज परखै सरू । द्रढ वात नेम लखि रविखयो, खुंद थान 'खेमंगरू' ।—रा. रू.

प्रमूकरणहार, हारौ (हारी), प्रमूकरणियौ—वि० ।

प्रमूकिग्रोड़ौ, प्रमूकियोड़ौ, प्रमूक्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रमूकीजरणौ, प्रमूकीजबौ—कर्म वा० ।

प्रमूकियोड़ौ—देखो 'मूकियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० प्रमूकियोड़ी)

प्रमेय—वि० [सं०] १. जिसका अवधारण हो सके,जो समझ में आ सके ।

२. जो प्रमाण का विषय हो ।

२. जो प्रमाणों से सिद्ध किया जा सके ।

सं०पु०—१. वह विषय जिसका बोध प्रमाणों द्वारा करा सके, वह पदार्थ या बात जिसका यथार्थ ज्ञान हो सके ।

प्रमेस—देखो 'परमेस' (रू. भे.)

उ०—१. प्रमांण खोडस प्रकार, देत उग्र दांनयं। **प्रमेस** चंड रुद्र पूज, सेवतं समांनयं।—सू.प्र.

प्रमेरार, प्रमेसुर—देखो 'परमेस्वर' (रू. भे.)

उ०—२. ब्रह्मा रुद्र बिचार ब्रह्म, न जांणें तोरा पार निगम्म। **प्रमेसर** तोरा पाय प्रळोय, कुरांण पुरांण न जाणें कोय।—ह. र.

उ०—३. हिंदू धरम के रखपाळ, हिंदुस्थांन के **प्रमेसुर**।—रा.रू.

प्रमेह–स०पु० [स०] मूत्र-मार्ग से शुक्र या अन्य धातु निकलने का एक रोग, धातु सबंधी रोग विशेष।

रू० भे०—परमेह।

प्रमोद–सं०पु० [स० प्रमोदः] १. खुशी, हर्ष, आनन्द।
(अ. मा., ह. नां. मा.)

रू० भे०—परमोद।

उ०—जी हो बरस सरस आठां लगे लाला, लीला बाल, विनोद। जी हो सब ही परमा देवकी, लाला, पावे अधिक **प्रमोद**।—जयवांणी

प्रमोदक–वि० [स०] आनन्द देने वाला, हर्षित करने वाला।

सं०पु०—एक प्रकार का जड़हन।

प्रमोदन–सं०पु० [स० प्रमोदनः] विष्णु का एक नाम।

प्रमोदा–स० पु० [स०] आठ प्रकार की सिद्धियों में से एक जिसकी प्राप्ति से आध्यात्मिक दुःखों का नाश होता है। (सांख्य)

प्रमोहन–स०पु० [सं०] मोहित करने की क्रिया।

प्रम्म—देखो 'परम' (रू. भे.)

उ०—नमो प्रहळाद उबारण प्रम्म, नमो अग कासव मारण भ्रम्म।
—ह.र.

प्रम्मदा—देखो 'प्रमदा' (रू. भे.)

उ०—विधि-विधि वल्ली विस्तरइ, फूले रंग विचित्र। पेखी पेखी **प्रम्मदा**, मन चोरंती मित्र।—मा. कां. प्र.

प्रम्मल, प्रम्मळ–वि० [सं० परिमल ?] सुन्दर।

उ०—सजत के चिकन्न साज, सुदरां स-सोभरा। करंत के मुकेस कांम, भार कार चौमरा। तणंत के वणंत तास, **प्रम्मळ** पटम्बरं। सिवंत के जरी सकाज, अग-अग अबरं।—सू. प्र.

२. देखो 'परिमळ' (रू. भे.)

प्रयंक—देखो 'परयक' (रू. भे.)

प्रयंत—देखो 'परयत' (रू. भे.)

प्रयत्न–स०पु० [स०] १. मानसिक या शारीरिक चेष्टाएं जो कोई कार्य या उद्देश्य पूर्ण करने के लिए की जाती है।

२. किसी पदार्थ की प्राप्ति या किसी कठिन कार्य की सफलता हेतु आदि से अत तक परिश्रमपूर्वक किये जानेवाले कृत्य, उद्योग, चेष्टाएं। उ०—जिण थी दिसा दिसा रा नरेसां मुगळ रै सांम्हे अनेक उपहार भेजि आप री इळा आप रै हेठै लैंण रो **प्रयत्न** बधारिया।
—व. भा.

३. क्रियाशीलता, सक्रियता।

४. भाषा-विज्ञान और व्याकरण के मतानुसार वर्ण के उच्चारण मे होने वाली क्रिया।

५. न्यायशास्त्र के अनुसार जीव या प्राणी के छः गुणों में से एक जो उसकी सक्रिय चेष्टा का सूचक होता है।

रू० भे०—परयतन।

प्रयसा–सं०स्त्री० [सं०] एक राक्षसी जिस को रावण ने सीता को समझाने हेतु नियुक्त किया था।

प्रयांण–सं०पु० [सं०प्रयाणम्] १. कही जाने के लिये यात्रा आरंभ करना, कूच, प्रस्थान। उ०—स्रवण संदेसा सांभळै, ढाढी किया **प्रयांण**। मागरवाळ जु आविया, देसे साल्ह सुजाण।—ढो. मा.

२. यात्रा, सफर। उ०—चलनां-चलतां अखड **प्रयांण**, आया चित्रोड समीपै जांण।—वि. कु.

३. अभियान, चढाई। उ०—जिकण महापातक माथै लेर आधी पातसाही रो लोभ दे प्रतीची रा पति आप रा अनुज मुरादसाह नूं मिळाइ पाउस री कादंबिनी रै अनुकार आप रो अनीक तणियो। अठी दूजा साहजादै सूजासाह भी पहली री सूचना रै समांन दिल्ली रै अभिमुख **प्रयांण** कीधो।—वं. भा.

४. मरकर किसी दूसरे लोक में जाना। उ०—प्रांण जितै जग आपणो, प्राण जितै तन पाक। प्रांण **प्रयांण** कियां पछै, हूं नर नाम हलाक।—बां. दा.

५. कार्य का अनुष्ठान या आरंभ।

रू०भे०—पयांण, पयांणउ, परांण, परियांण, पायांण पियाण, पियाणउ, पीआंण, पीयांण, प्रयांन।

अल्पा०—पयांणो, पियांणो, पीआणउ, पीआंणू, पीआंणो, पीयांणउ, पीयाणो।

प्रयांणकाळ–स०पु० [सं०प्रयाण+काल] १. यात्रा का समय, यात्रा-काल। २ मृत्युकाल।

प्रयांन—देखो 'प्रयांण' (रू. भे)

प्रयाग–स० पु० [सं० प्रयागः] १. गंगा और यमुना के सगम-स्थान पर स्थित एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान, जहां पर प्राचीन काल में बहुत यज्ञ होते थे।

२. वह स्थान जहां पर अधिक यज्ञ होते हों।

३. प्रथम गुरु की चार मात्रा का नाम। (पिंगल)

रू०भे०—परयाग, पराग, पिराग, प्राग, प्रियाग।

प्रयागराज–सं०पु०यौ० [सं०प्रयागः+राज] गगा जमुना के संगम पर स्थित तीर्थ।

प्रयागराजेस्वर–सं०पु०यौ० [सं०प्रयागः+राजेश्वर] प्रयागवट के पास

स्थित शिवालय। (वां. दा. ख्यात)

प्रयागवड़–सं० पु० [सं० प्रयाग:+वट:] प्रयाग का प्रसिद्ध वटवृक्ष जहां बुद्ध भगवान को ज्ञान प्राप्त हुआ था।
रू०भे०—परयागवड़, परागवड़, पिरागवड़, प्रागवड़, प्रियागवड़, प्रियागवड़।

प्रयागिनी–सं०पु० [सं०प्राज्ञ] पंडित। (ह.नां.मा.)

प्रयास–स०पु० [स०प्रयास:] १. किसी कठिन कार्य को करने के लिए किया जाने वाला उद्योग या प्रयत्न, परिश्रम, मेहनत। उ०—एवडो सिंहलद्वीप नो, फोकट कीध प्रयास। गढ़ चीतोड किसो गजो, साहि कहै सुणि व्यास।—प. च. चौ.
२. वह पदार्थ या कार्य जो इस प्रकार किया या बनाया गया हो।
रू०भे०—परयास, परियास, प्रियास।

प्रयुंजणौ, प्रयुंजबौ–क्रि०स० [?] प्ररूपित करना। उ०—दोइ स्रुत खध नइ बीस अध्ययन वलि, वीस उद्देस इहां जिन प्रयुंजइ।
—वि कु.
प्रयुंजणहार, हारौ (हारी), प्रयुंजणियौ—वि०।
प्रयुंजिओड़ौ, प्रयुंजियोड़ौ, प्रयुंज्योड़ौ—भू०का०कृ०।
प्रयुजीजणौ, प्रयुंजीजबौ—कर्म वा०।

प्रयुंजियोड़ौ–भू०का०कृ०—प्ररूपित किया हुआ.
(स्त्री० प्रयुंजियोड़ी)

प्रयुक्त–वि० [सं०] १. व्यवहार में लाया हुआ, इस्तेमाल किया हुआ।
२. सलग्न। ३. नियुक्त किया हुआ, नामजद किया हुआ।
४. प्रेरित किया हुआ, उकसाया हुआ।

प्रयुत–वि० [स० प्रयुत] दस लाख। उ०—खांन इनायत जोधपुर, बैठो रावणखड। प्रयुत पमगें पाखरां, जगे सेन प्रचंड।—रा. रू.

प्रयोग–स०पु० [स०प्रयोग:] १. किसी कार्य में योग, किसी कार्य में लगना, किसी कार्य में अभ्यास करना। उ०—वय बाळ विहाय युवा वरणी, कटिबद्ध भयो करणी-करणी। विमनां अनुराग बिराग वह्यौ, चितअस्तिय जोग प्रयोग चह्यौ।—ऊ. का.
२. किसी काम में लाया जाना, व्यवहार या इस्तेमाल करना।
ज्यूं०—सरदी रै दिनां में ऊनी कपड़ां रौ प्रयोग राखणौ, गरमी में ठंडाई रौ प्रयोग राखणौ।
३. आधुनिक समय में विज्ञानिक क्षेत्रों में किसी प्रकार का आविष्कार करने या अनुसंधान करने के लिए की जाने वाली कोई परीक्षणात्मक क्रिया या उसका साधन।
४. उक्त प्रकार के आविष्कार या अनुसंधान से जो सिद्ध हो चुका हो उसे दूसरो को समझाने के निमित्त की जाने वाली वह क्रिया जिससे उक्त तथ्य ठीक और मान्य सिद्ध हो सके।
यौ०—प्रयोगसाळा।
५. वह क्रिया जो केवल यह जानने के लिये की जाय कि कोई काम, चीज या बात ठीक तरह से सफल हो सकेगी या नही।
६. प्राचीन भारतीय राजनीति में साम, दाम, दंड, भेद आदि का लिया जाने वाला अवलंब।
७. उचित रूप से कार्य करने का ढंग या विधि।
८. तांत्रिक उपचार।
वि०वि०—ये निम्न लिखित हैं—
१. मारण, २. मोहन, ३. उच्चाटण, ४. कीलन, ५. विद्वेषण, ६. कामनाशन, ७. स्तंभन, ८. वशीकरण, ९. आकर्षण, १०. वदिमोचन, ११. कामपूरण, और १२. वाक्प्रसारण।
९. व्याकरण में कर्त्ता, कर्म अथवा संज्ञार्थक क्रिया के लिंग वचन आदि के अनुसार प्रयुक्त होने वाला क्रिया-पद का नाम जो कर्त्ता के अनुसार होने पर कर्तृ-प्रयोग, कर्म के अनुसार होने पर कर्मणि प्रयोग तथा भाव के अनुसार होने पर भावे प्रयोग कहलाता है।
१०. अभिनय, नाटक।
११. रोगी के दोषो तथा देश, काल और अग्नि का विचार कर की जाने वाली औषध योजना, उपचार।
१२. वह उपकरण या औजार जिससे कोई काम होता हो।
१३. कार्य का अनुष्ठान या आरंभ।
१४. तरकीब, युक्ति, उपाय।
रू०भे०—परयोग, प्रजोग, प्रियोग।

प्रयोगसाळा–सं०स्त्री०यौ० [सं० प्रयोगशाला] पदार्थ-विज्ञान, रसाय शास्त्र, आदि विषयक तथ्यों को समझने, जानने या नई बातो का पता लगाने की दृष्टि से विविध प्रयोग किये जाने का स्थान या भवन।

प्रयोगी–वि० [सं०प्रयोगिन्] १. व्यवहार में लाने वाला।
२. प्रयोग करने वाला, प्रयोगकर्त्ता।

प्रयोजक–वि० [सं० प्रयोजक:] १. प्रयोगकर्त्ता, अनुष्ठानकर्त्ता।
२. काम में लगाने वाला, प्रेरक।

प्रयोजन–सं० पु० [सं० प्रयोजनम्] उद्देश्य, अभिप्राय, मतलब।
उ०—कहण वाळी स्त्री सती है सो घोड़ै ही सरीर नही राखियौ तौ हूं तौ पती रौ आधौ सरीर हूं सो मत कर सुरग में जाय मिळसूं इण आदि अनेक प्रयोजन है सो विसतार भय सूं किंचित लिखिया है।—वी.स.टी.
रू० भे०—परयोजन, पिरियोजन, पिरोजन, प्रियोजन।

प्रयोजनवतीलक्षणा–सं०स्त्री० [सं०] वह लक्षणा जो प्रयोजन द्वारा वाच्यार्थ से भिन्न अर्थ प्रगट करे।
वि० वि०—देखो 'लक्षणा'।

प्रयय–सं० पु० [सं० प्र+रय] वेग, गति। उ०—तिम लव चउत्य

गुजरात दळ, सहस साठि जे तिण समय । सेनेसिंह झाला सहित, रहिया फिरि चौकी प्ररय ।—वं. भा.

प्ररहा–सं०पु० [सं० प्रहार] युद्ध । (अ. मा.)

प्ररूढ़–वि० [सं० प्ररूढ] १. आगे या ऊपर उठा हुआ । २. उगा हुआ ।

प्ररूप–सं० पु० [सं०] किसी वर्ग की वस्तुओं, व्यक्तियों आदि में से कोई एक ऐसी वस्तु या व्यक्ति जिससे उस वर्ग के सामान्य गुणों, विशेषताओं का बोध हो जाता है ।

प्ररूपक–वि० [सं०] व्याख्याकार, समझाने वाला, प्रतिपादक ।
उ०—तिण साधु के जाऊं बलिहारे, अमम अकिंचन कुखो सबल, पंच महाव्रत जे धारे । सुद्ध प्ररूपक नइ संवेगी, पालइ सदा पंचाचारे ।—स. कु.
रू० भे०—पररूपक ।

प्ररूपणा–सं० स्त्री० [सं०] कथन, वक्तव्य । उ०—स्रीदेवचंद्र जी ना गुण कहूं रे, सांभल चतुर सुजांण । घटत गुण नी प्ररूपणा रे, कहेवा ने सावधांन रे ।—कवियण
रू० भे०—पररूपणा, परूपणाया, परूपणा, परूवणाया, परूवणा, प्ररूवणा ।

प्ररूपणौ, प्ररूपबौ–क्रि० स० [सं० प्ररूपणम्] १. प्रतिपादन करना, व्याख्या करना, समझाना । (जैन)
उ०—स्रीमहावीर प्ररूपियउ, धरम नउ मरम एह । समयसुंदर कहइ सहु, कह्यउ तीरथंकर तेह ।—स. कु.
२. रचना, बनाना । उ०—१. ढाल प्ररूपी हो एह इग्यारमी, बीजे हिज अधिकार ।—वि. कु.
उ०—२. द्यै सहु नें सुख ए जगदीस, वांणी तेह नी विस्वावीस । प्ररूप्या आगम पेंतालीस, सख्या नांम कहुं सुजगीस ।—ध.व. ग्रं.
३. स्थापित करना, स्थापना । उ०—जिन प्रतिमा जिन हीज सरूपी, पोतें जिनज प्ररूपी । सेवै ते सुद्ध समकित रूपी, अग्यांनी ए उथूपी ।—ध.व.ग्रं.
प्ररूपणहार, हारौ (हारी), प्ररूपणियौ—वि० ।
प्ररूपिओड़ौ, प्ररूपियोड़ौ, प्ररूप्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
प्ररूपीजणौ, प्ररूपीजबौ—कर्म वा० ।
पररूपणौ, पररूपबौ, पररूवणौ, पररूवबौ, परूपणौ, परूपबौ, परूवणौ, परूवबौ—रू० भे० ।

प्ररूपियोड़ौ–भू० का० कृ०—१. व्याख्या किया हुआ, समझाया हुआ, प्रतिपादित. २. रचा हुआ, बनाया हुआ. ३. स्थापित किया हुआ. (स्त्री० प्ररूपियोड़ी)

प्ररोप–सं० पु० [सं० प्र+रोपः] तीर, बाण ।

प्ररोह–स० पु० [सं० प्ररोहः] अंकुर । उ०—अजूं प्ररोह मोह द्रोह कोह के उठा करैं ।—ऊ. का.

प्ररोहणौ, प्ररोहबौ–क्रि० अ० [सं० प्ररोहणम्] १. उदय होना, उठना ।
उ०—तबेरम कुंभ दुहाथळ तत्थ, आडागिरि मत्थ क हत्थ अगत्थ । प्ररोहत होफर खोफ अपार, अधोफर आभ डरै असवार ।—मे.म.
२. अंकुरित होना, उगना ।
प्ररोहणहार, हारौ (हारी), प्ररोहणियौ—वि० ।
प्ररोहिओड़ौ, प्ररोहियोड़ौ, प्ररोहचोड़ौ—भू० का० कृ० ।
प्ररोहीजणौ, प्ररोहीजबौ—भाव वा० ।

प्ररोहियोड़ौ–भू० का० कृ०—१. उदय हुवा हुआ, उठा हुआ. २. अंकुरित हुवा हुआ, उगा हुआ. (स्त्री० प्ररोहियोड़ी)

प्रलंद—देखो 'पुरंदर' (रू. भे.)

प्रळंब, प्रलंब–वि० [सं० प्रलंब] १. नीचे की ओर दूर तक लटकता हुआ, बड़ा ।
उ०—भुज प्रळंब आजांन, कमळ आकृति पद कोमळ ।—रा. रू.
२. लम्बा । उ०—मयाळ मडपाळ मेघमाळ मोहनी नहीं, हिलंब से प्रळंब थंभ बिंब सोहनी नहीं ।—ऊ. का.
सं० पु० [सं० प्रलंबः] एक दैत्य का नाम जिसे बलराम ने मारा था ।
रू० भे०—परलंब, पलंब, प्रलंबौ ।
अल्पा०—परळंबौ, परलंबौ ।

प्रलंबन–सं०पु० [सं० प्रलबनम्] सहारा, अवलंबन ।

प्रलंबौ–सं० पु० [सं० प्लवंग ?] १. वानर, मर्कट । उ०—हद हाण अगां अभिमांण हरै, प्रळंबी कुरबांण उडाण परै ।—मे. म.
२. देखो 'प्रलंब' (रू. भे.)

प्रलभन–सं०पु० [सं०प्रलंभः] १. कपट, छल । २. धोखा ।

प्रळ—देखो 'पळ' (रू. भे.)
उ०—रगत ध्रपी रतनाळियां, प्रळ ध्रपिया पंखाळ ।—पा. प्र.

प्रळइ, प्रळउ, प्रलइ, प्रलउ—देखो 'प्रळय' (रू. भे.)
उ०—१. किसुं पहुतउ द्वापरि प्रलउ, ईंह लगइ कइ अम्ह घरि विलउ ।—पं. पं. च.
उ०—२. कलकलइ जिम वारिनिधि प्रलइ, किसिउं भूधर कोंपि टलटलइ ।—सालिसूरि

प्रलपन–स०पु० [सं०प्रलपनम्] १. वार्तालाप, सभाषण । २. गप्प-शप्प, ऊट-पटाग बातचीत । ३. विलाप ।

प्रळयंकर–वि० [सं० प्रलयः+कर] नाशकारी, प्रलयकारी ।

प्रळय–सं०पु० [सं० प्रलयः] १. लय को प्राप्त होना, न रह जाना, विलीन होना ।
२. पृथ्वी आदि लोकों का न रह जाना, संसार का तिरोभाव ।
३. जगत के नाना रूपों का प्रकृति में लीन होकर मिट जाना, नाश हो जाना ।

४. बहुत ही उत्कट या तीव्र रूप में होने वाला भयंकर नाश या बरबादी। उ०—सूरातन जांही घणइ सूरातन, ईसर तणा वाधिया ग्रंग। प्रळय काळ हुसी ताइ प्रिथमी, द्रोही तणा थरकिया द्रग।
—महादेव पारवती री वेलि

५. सहार, विनाश, ध्वंस।

६. साहित्य में एक सात्विक अनुभाव जिसमें किसी वस्तु में तन्मय होने के पूर्व स्मृति का लोप हो जाता है।

७. मूर्च्छा, बेहोशी।

रू०भे०—परड़े, परळउ, परळय, परळै, पळइ, प्रळउ, प्रलइ, प्रलउ, प्रळै, प्रल्लय।

अल्पा०—परडौ, परळौ, प्रळौ।

प्रळयकार—सं०पु० [सं० प्रलयः+कारं] १. नाश, विध्वस। २. सहार।
रू०भे०—प्रळैकार।

प्रळयकाळ—सं०पु० [सं० प्रलयकालः] १. संसार के नाश का समय।
२. नाश का समय, विनाश का समय। उ०—जुड़ै सेन थंडां जाडा-वाळी धोम जाळा री साबात जागी, खडा आडावाळा री लागी हाला. री खुलास। जोम गाडावाळी प्रळयकाळ री उनागी जठै, वागी हाडावाळी नराताळी री बांणास।—दुरगादत्त बारहठ
रू०भे०—प्रळैकाळ।

प्रळयकाळी—वि० [सं०प्रलयकारी] नाश करने वाली, नाशकारी।
उ०—चमंक्कै झाळियां बीच भूप रा हाथियां चली, नाळियां ऊपरां प्रळयकाळियां नाराज।—दुरगादत्त बारहठ

प्रळयांतक—सं०पु० [सं०प्रलयातक] चौसठ भैरवो में से एक भैरव।

प्रळयानळ—सं०पु०यौ० [सं०प्रलय+अनिल] प्रलयकाल की वायु।
उ०—१. ग्रेक सरमइ ग्रेक सांकल्या, ग्रेक सुंडिया ग्रेक सूर। पार विहूणा परवरिया, जिम प्रळयानळ पूर।—मा. कां. प्र.
उ०—२. संपारि सरजी नथी, ग्रे काया कहि दूजि। कइ माधव रस मांणसिइ, कइ प्रळयानळ पूजि।—मा. कां. प्र.

प्रळाद—देखो 'प्रहळाद' (रू. भे.)

प्रळाप—सं०पु० [सं०प्रलापः] १. वार्तालाप, संवाद। २. व्यर्थ की बकवाद।
३. विलाप, रुदन। उ०—हा! हा! दियै घरोघर हेला, पुरजण हिए प्रळापा। जियै जिकै नहि जियै जांण जग, किये ग्रनेक कळापा।
—ऊ. का.

प्रळापक—वि० [सं० प्रलापक] प्रलाप करने वाला, विलाप करने वाला।
सं०पु०—एक प्रकार का सन्निपात जिसमें रोगी अनाप-शनाप बकता है तथा उसके शरीर में पीडा और कंप होती है।

प्रलेप—सं०पु० [सं० प्रलेपः] १. लेपन, उबटन। २. मलहम (मरहम)।

प्रळै—देखो 'प्रळय' (रू. भे.) (डिं. को.)
उ०—१. फिरंग प्रळै जळ फैलियौ, तज दुहूं राहां टेक। पांन ग्रखैवड़ 'पदम' रौ, ऊंचौ रहियौ ग्रेक।—राघोदास सांदू
उ०—२. करम मिटै भव कोड़ रा, पाप प्रळै हुय जाय। मन वंछत सब ही मिळै, प्रभु गुण ग्रंथ प्रभाय।—गजउद्धार
उ०—३. हरणाकुस कूं मार प्रहळाद कूं उबार लिया। प्रळै का दिन जांण सत देस उबारण कूं मच्छ देह धारी।—र.ज.प्र.
उ०—४. दिस मारू खुरसांण तणा दळ, वाधै जाण प्रळै चा वद्दळ।—रा. रू.
उ०—५. प्रळै दैण दुसहां पयण पैण तीरां पड़ै, स्यांम रख वैण बीरा सरूभौ। निसा कोतक लगो 'रैण' जुध निरखवा, ग्रेण रथ रोक चंद्र गैण ऊभौ।—रणसी सीसोदिया रो गीत

प्रळैकार—देखो 'प्रळयकार' (रू. भे.)
उ०—फरे गढा दोळा के हवोळा लाख फोजां, लूट प्रळैकार दुनी करै भू लैणाग। जमी ऐकाकार ऐहो मेटता 'ग्रजा' रा जेठी, गाढेराव धारै भुजां टूटतौ गैणाग।—रावत ग्रजीतसिंह चूंडावत रो गीत

प्रळैकाळ—देखो 'प्रळयकाळ' (रू. भे.)
उ०—१. प्रळैकाळ का पावस ग्रातसूं का उक भुरजाळ।—सू. प्र.
उ०—२. वूठिया झाळ का चक्खा डूंग में पड़तां वेध। भाराथ जूटिया वीर चाळका सा भूप। माझी निराताळ का ऊठिया फिरं-गाण माथै। रांघड़ा रूठिया प्रळैकाळ रा सरूप।
—डूंगजी जवार जी रो गीत

प्रळैझळ—सं०स्त्री० [सं० प्रलयज्वाला] प्रलयकाल की आग, प्रलयाग्नि।
उ०—प्रळैझळ एक दमंग प्रचड, खपावत जांणि घणा वन खड।
—सू.प्र.

प्रळैदातर—सं० पु० [सं० प्रलयदातार] बड़ादान करने वाला, महादानी।
उ०—जोगायत वैरसल रौ। तिण नूं भाईवंटै केहरोर ग्रायो, नै वरसलपुर मांहे हैंसो हुंतो। जोगायत वडो प्रळैदातार हुवो। वडा-वडा दांन दिया। पछै साथरै री मौत मुंवो।—नैणसी

प्रळैमेघ—स० पु० यौ० [सं० प्रलयमेघ] प्रलयकालीन मेघ, प्रलय जलधर।

प्रलोक—देखो 'परलोक' (रू. भे.)
उ०—१. विलोक लोक-लोक को, प्रलोक लोक की वदें।—ऊ. का.
उ०—२. पूगियौ सांढियौ आंण सोढांण प्रमांण पायौ, सोढ़ी नै सुणायौ वैण मोहियौ सनेस। सतावी सिनांन झळां मंगळा प्रलोक सागौ, मनां में उछाह लागौ पती रौ हमेस।—वादरदांन दधवाड़ियौ

प्रळोणौ, प्रळोवौ—क्रि० ग्र० [स० प्रलोठनम्] १. लोटना-पोटना।
उ०—प्रमेसर तोरा पांय प्रळोय, कुरांण पुरांण न जांणै कोय।
—ह. र.

[?] २. धारण करना (छत्र)।
उ०—रांम न भूलो वप्पड़ां, जे सिर छत्र प्रळोय, कर जीहा लोयण स्रवण, त्रियौ न ग्रापै कोय।—ह.र.

प्रलोप—सं० पु० [सं०] लोप।

प्रलोभ-सं० पु० [सं० प्रलोभ:] अत्यन्त लोभ, अधिक लालच।
रू० भे०—परलोभ, पलोभ।

प्रलोभक-वि० [सं०] लालच देने वाला, प्रलोभन देने वाला।

प्रलोभन-सं० पु० [सं० प्रलोभनम्] किसी को किसी ओर प्रवृत्त करने के लिये उसे लोभ की आशा देने का कार्य, लालसा।
रू० भे०—परलोभन।

प्रलोभी-वि० [सं० प्रलोभिन्] लोभ में फंसने वाला, लालच करने वाला।

प्रळौ—देखो 'प्रळय' (अल्पा., रू. भे.)

प्रल्लय—देखो 'प्रळय' (रू. भे.)
उ०—किनकेस सुतन प्रल्लय सुकाळ, करग आछटै गज्जां कपाळ।
—शि.सु.रू.

प्रल्लाद, प्रल्हाद—देखो 'प्रह्ळाद' (रू. भे.)
उ०—हिरणाकुस प्रल्हाद सतायो, जार अगन बिच डाल दियौ री।
राज छांड दियौ नांव न छांड्यौ, खभ फाड़ प्रभु दरस दियौ री।
—मीरां

प्रवंग-सं० पु० [सं० प्रवंग:] घोड़ा, अश्व। उ०—अंत्रां खग झाट निराट अळग्ग, पड़ै बि बि जंघ पड़ै झड़ि पग्ग। पड़ै रिणि उच्छळि अेम प्रवंग। कुंडां चढ़ि जांणि विनांणि कुरंग।—वचनिका

प्रवंचक-वि० [सं०] ठग, धूर्त।

प्रवंचना-सं०स्त्री० [सं०] छल, कपट, ठगी, धूर्तता।

प्रव—देखो 'परव' (रू. भे.)
उ०—अ्रत प्रव माह बिन्है तो मिळिया, कहिजै ज्यां वाखांण किसा। दुरजोधन जिसड़ा दूसासण, जुधिठिल अरिजण भीम जिसा।—गोरधन बोगसौ

प्रवचन-सं० पु० [सं० प्रवचनम्] १. अच्छी तरह समझकर कहना। २. अर्थ खोल कर बताना, समझाना। ३. उपदेश पूर्ण भाषण। (मि०—बखाण।)

प्रवत-सं० पु० [?] पानी, जल। (अ. मा.)

प्रवदारूण—देखो 'प्रविदारण' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

प्रवयण-सं०पु० [सं० प्रवयणम्] १. बैल हांकने का डंडा। (डिं. को.)
२. चाबुक। ३. अंकुश।

प्रवर-वि० [सं०] १. महिमान्वित। उ०—सखियां सुं खेले रमै, करै गीत नै गान, प्रवर पंच परमेस्टि नो, धरै निरंतर ध्यांन।
—वि. कु.
२. श्रेष्ठ, सर्वोत्तम। ३. मुख्य, प्रधान। ४. आयु में सब से बड़ा।
सं०पु० [सं० प्रवर:] १. गोत्रप्रवंतक ऋषि। २. पूर्व पुरुष। ३. सतति, वंशज। ४. वश, कुल। ५. अग्नि संस्कार का मंत्र विशेष।
रू०भे०—परवर, पवर, पवरु।

प्रवरत-सं०पु० [सं० प्रवंत.] कार्यारंभ, आरंभ। (वं. भा.)

प्रवरतक-वि० [सं०प्रवंत्तक] १. किसी कार्य या बात का आरंभ करने वाला।
२. किसी कार्य में प्रवृत करने वाला, प्रेरणा देने वाला।
३. किसी बात, मत या कार्य को चलाने वाला, प्रचलन करने वाला।
४. उत्साह देने वाला।
५. गति देने वाला, चलाने वाला।
६. नया आविष्कार करने वाला।
सं०पु० [सं०प्रवर्तक:] नवीन आविष्कार करने वाला व्यक्ति।
रू०भे०—परवरतक।

प्रवरतणौ, प्रवरतबौ-क्रि० अ० [सं० प्रवर्तनम्] १. फैलना, प्रवर्त होना। उ०—त्यों इह प्रसंन वाउ वाजै छै। अक्षां नै सुख देई। सुजांणै प्रजा माहै न्याव प्रवरत्यौ छै।—वेलि टी.
२. लेन-देन में आना, व्यवहार में आना, चलना। उ०—ते आगळ पहलो नांणौ कुतबस्याही करायो। इसो नांणो (कोई न) नीपजायो। तिवारै पछै गुजरात बीजो नांणौ प्रवरतायो। पछै जलाला आद दे-नै नांणा प्रवरतिया।—नैणसी
प्रवरतणहार, हारौ (हारी), प्रवरतणियौ—वि०।
प्रवरतिओड़ौ, प्रवरतियोड़ौ, प्रवरत्योड़ौ—भू० का० कृ०।
प्रवरतीजणौ, प्रवरतीजबौ—भाव वा०।

प्रवरताणौ, प्रवरताबौ-क्रि० स० [सं० प्रवर्तनम्] १. फैलाना, प्रवर्तन कराना।
२. व्यवहार में लाना, लेन देन में लाना, चलाना। उ०—तिवारै पछै गुजरात बीजो नांणौ प्रवरतायौ।—नैणसी
प्रवरताणहार, हारौ (हारी), प्रवरताणियौ—वि०।
प्रवरतायोड़ौ—भू० का० कृ०।
प्रवरताईजणौ, प्रवरताईजबौ—कर्म वा०।

प्रवरतायोड़ौ-भू० का० कृ०—१. फैलाया हुआ, प्रवर्तन कराया हुआ.
२. व्यवहार में लाया हुआ, लेन देन में लाया हुआ, चलाया हुआ.
(स्त्री० प्रवरतायोड़ी)

प्रवरतियोड़ौ-भू० का० कृ०—१. फैला हुआ, प्रवर्त हुवा हुआ.
२. लेन देन में आया हुआ, व्यवहार में आया हुआ, चला हुआ.

प्रवह-सं० पु० [सं० प्रवह:] १. धारा।
२. पवन, हवा।
३. सात प्रकार के पवनों में से एक का नाम जिसके सहारे आकाश में ज्योतिष पिण्ड स्थित है।

प्रवहण-सं० पु० [सं० प्रवहणम्] १. पर्दादार गाड़ी या पालकी, डोली।
उ०—कुमर तणा गुण खिण खिण समरै, जास कुमति कमलांणी।

प्रवहण देखि इसै इक नेहो, नयण तिहां विकसांणी ।—वि.कु.

२. जहाज, नौका, पोत । उ०—हरख धरि हियडइ मांहि अति घणउ, तुह पसाय लही तुह गुण भणु । जलधि पारइ प्रवहण ऊतरइ, तिहां समीरण सहि सानिध करइ ।—स.कु.

रू० भे०—प्रबहण ।

प्रवांण—देखो 'प्रमांण' (रू. भे.)

उ०—सुणि सुंदरि केता कहां, मारू देस वखांण। मारवणी मिळिया पछइ, जांण्यउ जनम प्रवांण ।—ढो.मा.

प्रवांणो—देखो 'परवांणो' (रू. भे)

प्रवाड़—देखो 'प्रवाड़ो' (मह., रू. भे.)

उ०—सीधुरा दहाड़ सूंवां दहाड़ बिभाड सत्रां, धाव सिध्र बिरदाई प्रवाड़ वरेस । तूरंगां कव्यदां बांवराड भडां रांम ताखा, निखगां रीझणा धाड जांनकी नरेस ।—र. ज. प्र.

प्रवाड़मल, प्रवाड़मल्ल—सं०पु० [राज० प्रवाड़ + सं० मल्ल] योद्धा, वीर ।

उ०—१. माझी मोह मराट, 'पातल' राण प्रवाड़मल । दुजडा किय दहवाट, दळ मैंगळ दांणव तणा ।—सूरायच टापरियो

उ०—२. 'पूरो' 'हरी' प्रवाड़मल, 'सूरो' 'दुज्जणसल्ल' । रूक-हथा हरदास रा, अजरा खरा अचल्ल ।—रा. रू.

रू०भे०—परवाडमल, परवाडमल्ल ।

वाड़ि—स०स्त्री० [?] भक्ति पूर्वक किसी पूज्य को दाहिनी ओर कर उस के चारों ओर घूमना, प्रदक्षिणा । उ०—गुरु सांथइ रे, चैत्य प्रवाड़ि करइ खरी । देव वादइ रे, सक्रस्तव पाचे करी ।—स. कु.

वाड़ो—सं०पु० [सं०प्रवाद:] १, युद्ध, लडाई, संग्राम ।

उ०—१. असमर गहै कळम किय आवट, वढतै घडा कंवारी वद । मेद्धातणो प्रवाड़ो मोटो, नवखंड हुवो राण नरियंद ।

—महारांणा सांगा रो गीत

उ०—२. वातां करतां लागी वेळा, पायो कुंजस प्रवाड़ै । ढीला तणां खुसाड़ै डेरो, ओ आयो ढील ऊघाड़ै ।—कायर रो गीत

२. वीरता पूर्ण कृत्य, बहादुरी का काम, वीर कार्य ।

उ०—१. 'ऊदै' भड मेलिया अकारा, नीसरियो खळ छोड नकारा । मिरजो नूरमली जुध मुडियो, 'जोधां' जैत प्रवाड़ो जुड़ियो ।

—रा. रू.

उ०—२. स्रीजैतसिंह जी स्रीमाता जी करणी जी रै प्रताप सूं अनेक प्रवाड़ां किया ।—ठा० जैतसिंह री वारता

उ०—३. राम राज जोधपुर, सहू हरचंद वारो । मास पंच खट मास, साह आपै वाधारो । दखणांधी सरहद्द, वडा जीता आखाड़ा । वडा प्रिसण परभवे, वडा खाटिया प्रवाड़ा । खेंगरे खग्ग खळ घासियां, अभंग नाथ उदमादमें । दिन-दिन प्रताप जस आगळै, सूरसिंघ नृप आथमें ।—गु.रू.व.

उ०—४. छरा भयंकर छोह चख, डाढ़ भयकर डाच । दीसै नाहर देखियां, सहू प्रवाड़ा साच ।—बां. दा.

३. शौर्य, पराक्रम, बहादुरी । उ०—१. क्रीत खाटण नमो 'फता' सुत कळोधर । सवाया प्रवाड़ा दीह साजा । 'माल' सुत ताक आयो ज्युं ई मोटमन । रैण मुरधर तणो कीध राजा ।—देवराज रतनू

उ०—२. 'अमर' प्रवाड़ा एण विध, कहिया सुकवि सकाज । इण आगळि, वरणन अथग, राजतेज 'जसराज' ।—सू.प्र.

४. कीर्ति, यश । उ०—तो पद अविधांन प्रवाड़ा सूरत, अरविंद इडग तंत इधकार । नांमें रटै संभळै निरखै, मसतक जिहैं रूत नयण मुरार ।—र.रू.

५. यश का कार्य, महान कार्य । उ०—१. सो ईणा रावत प्रतापसिंघ री सरकार सुं भी लेखणीं दान दीधो । अर आप रा घर माहे छो सो नौ मग्ग ही दीधो । सो ईणां रौ तौ सार नैं आचार घणौं-घणो तिरो दठा-ताई कह्यौ जावै । जिणां रा प्रवाड़ा रो कुण पार पावै । निपट अमामी अद्भुत अछूनी रजपूती रो सरदार ।

—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

उ०—२. दामोदर तुझ निमो द्विज देस, प्रवाड़ां तुझ निमो परमेस ।

—पी. ग्र.

उ०—३. (नैं) कीया कांम वहिया कटग, करता कितरा अेक कहा । ताहरा विसव रूपी त्रिगुण, नाथ प्रवाड़ा ना लहां ।—पी. ग्र.

६. विजय, जीत । उ०—रावत मेघ वेघम थी चढ़ियो । मजळै एक आयो । सकतावत असवार पिण भिणा मरणीक भेळा हुवा । पछै रावत मेघ हीज विचार कर दीठो । घर १ छै । गोत कदम हुसी । तरै आप सूं हीज पाछो वळियो । भाई-बंध सिगळा मांनसिंघ करणोत वीजै घणो ही कह्यो । सकतावत प्रवाड़ा वधसी । इण आगा कठै ही फिर संका नहीं ।—नैणसी

उ०—२. म्हा आज पहला इसो कजियो कियो न सुणियो । सारा अेक तरह मनगरा था सो जितरो साथ हुतो तितरो जे हुवै और उणसूं कजियो करां जणां तो खबर पड जाय । इसी वलाय था । पण भाग सावळ था ती सूं पचास सवार रहिया । बाकी रा अगल-बगल आगे गया । खीवो पाघ वाधणे रुकियो थो ती सूं खान री फतह हुई छै । प्रवाड़ो हाथ आयो । खांन सुण राजी हुवो ।

—सूरे खीवे कांधळोत री वात

७. चमत्कार पूर्ण कृत्य, दैविक कृत, दैविक चमत्कार । उ०—१. अहं जग मिटावण विघन तन ताप रा, खपावण पाप रा मूळ खोटा । अनका प्रवाड़ा गिणै कुण आप रा, मात परणियाप रा विडद मोटा ।

—खेतसी बारहठ

उ०—२. वगतर कर कंथा वडग डड वांधै, रिम सुभ गत देवण रेस । दिन-दिन नया प्रवाड़ा दीपै, दसमा नाथ नमो 'डुरगेस' ।

—दुरगादास राठौड़ री गीत

रू० भे०—पंवाड़ो, परवाड़ो, पवाड़ट, पवाड़ो, पुमाड़ो, पुरवाडो, पुवाड़ो, पुवाडो ।

महृ०—परवाड़, परवाडं, प्रवाड़, प्रवाड।

प्रवाड—देखो 'प्रवाहौ' (मह., रू. भे.)

प्रवाद—सं० पु० [सं० प्रवादः] १. वार्तालाप, संवाद। २. बातचीत, किंवदती, अफवाह, जनश्रुति, जनरव। ३. व्यक्त करना, वर्णन करना प्रकट करना। ४. शब्दोच्चारण। ५. झूठी बदनामी, निंदा।

रू० भे०—परवाद।

प्रवाळ—देखो 'प्रबाळ' (रू. भे.)

उ०—अघर प्रवाळ सा जांण जं, दांत दाड़िमी बीज। रसना नागर पान सी, चूंपा चमकं बीज।—कुंवरसी सांखला री वारता

उ०—२. कठळी कनक प्रवाळ माणिक, विविध रूप विस्तार। दाणउ दूअासर मांदल्या, उर मोतिया भरिहार।—रुकमणी मगळ

प्रवाळक—वि० [सं० प्रवाल+क] १. लाल, रक्ताभ। उ०—जगी हुवदा खळ सेल जडत, प्रवाळक रूप अनाळ पडंत।—सू. प्र.

प्रवाळड़ौ, प्रवाळियौ—देखो 'प्रबाळ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—१. सिद्ध-पदे इकत्रीस प्रवाळड़ा, राता माणिक अस्ट। रक्त-चदन लेपित गोलक धरं, टलै उपद्रव कस्ट।—स्रीपाळ रास

उ०—२. पन्ना लाल प्रवाळिया, हीरा रतन बणाय। चौक रचै अदभुत अधिक, वळि मुक्ताफळ माय।—गजउद्धार

प्रवाळी—सं०पु० [सं० प्रवालम्] १. नवीन पते, कोंपल।

उ०—घटि-घटि घण घाउ घाइ रत घण, ऊंच छिछ ऊछळै अति। पिड़ि नीपनौ कि खेत्र प्रवाळी, सिरा हुस नीसरे सति।—वेलि

२. देखो 'प्रबाळी' (रू. भे.)

उ०—धनख ज्यूं ही भुंहरा री खंच, नासिका जिसी सूवा री चंच, अधर प्रवाळी, जिसा वणिया दांत जांणै हीरां री कणिया।
—र. हमीर

३. देखो 'प्रवाळ' (रू. भे.)

उ०—साई दे दे सज्जना, रातइ इंणि परि रूंन। उरि ऊपरि आंर ढळइ, जाणि प्रवाळी चूंन।—ढो. मा.

प्रवाव—देखो 'प्रवाह' (रू. भे)

उ०—घुमे हिक जोध सहै घण घाव। पड़ै पिड हेकां स्रोण प्रवाव। कटारां वाहै हेक कराळ। घड़ा सिर हेक ध्रवै घाराळ।
—गु रू बं

प्रवास—सं०पु० [सं० प्रवासः] १. अपनी जन्म भूमि छोड़ कर विदेश में जाकर किया जाने वाला वास, परदेस का निवास।

उ०—जीव अम्हारु जोखिता, ते थापणि तुम्ह-पासि। राखे तुं रुडी परि, पंजर भमइ प्रवासि।—मा. कां. प्र.

२. देश निरवासन, देश निकाला। उ०—आ सुणतां ही कोप रै परतञ्र राजा भीम काका सारगदेव रा सातूं ही पुत्रां नूं आप रा देस सूं प्रवास दीधौ।—बं भा.

प्रवासी—सं०पु० [सं० प्रवसिन्] १. यात्री, पथिक, बटोही।

२. विदेश में निवास करने वाला, परदेस में रहने वाला।

प्रवाह—सं०पु० [सं० प्रवाहः] १. जल की वह धारा जो किसी दिशा में पूर्ण वेग के साथ बढ रही हो। उ०—१. भागीरथ भजि रे। भोळी चक्रवरत्त, आगा लगइ जोवतां अथाह। संकर देव पखउ कुण साहइ, पडती गगा तणा प्रवाह।—महादेव पारवती री वेलि

उ०—२. सो प्रेम सूं हियौ भर आयो अर आंख्यां सूं प्रवाह छूटिया सो रोकियां रूके नहीं।—कुंवरसी सांखला री वारता

२. किसी द्रव पदार्थ का किसी ओर वेग पूर्वक लगातार बहते रहने की क्रिया या भाव, बहाव। उ०—१. वनचर गण लीधा बहै, भागीरथ रै राह। स्रीसीता भरतार सम, भागीरथी प्रवाह।
—बां. दा.

उ०—२ पगो गग प्रवाह, निरमळ तन कीधौ नही। चित क्यूं राखै चाह, तिके सरग पावण तणी।—बां. दा.

३. नदी। (ह. नां. मा.)

४. गति, गमन, चाल। उ०—इळ सीत अबर पसरि उत्तर बसन प्रीत विसेख ए। आंमिक्ख पानक पूर आसव. पुहवि न्रप सुख पेख ए। तनि अगनि सुख निसि रहत तापस सरणि बसन ससार ए। हिम सरति राह प्रवाह सुख हुय पथ थाह पगार ए।—रा. रू.

५. किसी काम या बात का निरतर चलने वाला क्रम जो बीच में कभी नही टूटता हो।

६. दान। उ०—'ऊदा' हर थारा तण मागै, भरत खंड सह डंड भरै। प्रोळ प्रवाह वडा गज पातां, कुंजर नयरां रीझ करै।
—सुखजी आढौ

उ०—२. खड़खट थट लाखावट खळखट, गजगति वर कीधौ गजगाह। रातल सावज ध्रबिया 'रतनै' पूजवियौ पळ प्रघळ प्रवाह।—दूदौ

७. स्नान।

रू०भे०—परवाह, प्रवाव, प्ररवाह।

प्रवाहणौ, प्रवाहबौ—क्रि०स० [सं० प्रवाहनम्] जलधारा में बहाना।

उ०—गंग प्रवाहिउ रयण माहि घालिउ मजूस।—प. पं. च.

प्रवाहणहार, हारौ (हारी), प्रवाहणियौ—वि०।

प्रवाहिओड़ौ, प्रवाहियोड़ौ, प्रवाह्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रवाहीजणौ, प्रवाहीजबौ—कर्म वा०।

परवाहणौ, परवाहबौ—रू० भे०।

प्रवाहिका—सं०स्त्री० [सं०] पेट का एक रोग जिससे पेट में दर्द होता है और पतले दस्त होते हैं।

प्रवाहियोड़ौ—भू० का० कृ०—जळ प्रवाह में बहाया हुआ.
(स्त्री० प्रवाहियोड़ी)

प्रवाही—वि० [सं० प्रवाहीन्] जो प्रवाह के रूप में बह रहा हो।

उ०—दूसम काले दोहिलउ जी, सूधउ गुरु सयोग। परमारथ प्रीछइ नही जी, गडर प्रवाही लोग।—स. कु.

प्रवित, प्रविति, प्रवित्त—देखो 'पवित्र' (रू. भे.)

उ०—१. जम त्रास दुक्ख मिटसी 'जगा' घणूं सुक्ख प्रांमिस घणा। कर प्रवित अंग संनांन कर, तर तरग गंगा तणा।—ज.खि.

उ०—२. अलख करिवा प्रविति नंद री आंगणी। प्रभू री जसोदा बंधायौ पाळणौ।—पी. ग्रं.

उ०—३. पुत्रां कजि खाटै घन पित्त। पुत्रां हूं घर हुवै प्रवित्तं।—गु. रू. व.

प्रविदारण–सं० पु० [सं० प्रविदारणम्] युद्ध। (ह. नां. मा.)

रू०भे०—प्रवदारूण।

प्रविसणौ, प्रविसवौ–क्रि० अ० [सं० प्रविश्] प्रवेश करना, घुसना।

प्रविसणहार, हारौ (हारी), प्रविसणियौ—वि०।

प्रविसिग्रोड़ौ, प्रविसियोड़ौ, प्रविस्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रवीसीजणौ, प्रवीसीजवौ—भाव वा०।

प्रविसियोड़ौ–भू० का० कृ०—प्रवेश किया हुआ, घुसा हुआ. (स्त्री० प्रविसियोड़ी)

प्रविस्ट, प्रविस्ठ–सं० पु० [सं० प्रविष्ट] प्रवेश। उ०—जठै भीम रा सिपाहां तोरण रै बाहिर आया, जिकै राजा सहित प्राकार में प्रविस्ट कीधौ।—वं. भा.

रू० भे०—पविट्ठ।

प्रवीण–वि० [सं०] १. अच्छा गाने या बजाने वाला। उ०—गिर गज कुंभ गिरीस, प्रवीणां गाविया। सुबरण बरण सुढ़ंग कठोर सुहाविया।—बां. दा.

२. किसी कार्य को करने में पूर्ण जानकार, चतुर।

३. दक्ष, कुशल। उ०—जिण तेज अरक जिम छक जहूर। सुंदर प्रवीण दातार सूर।—वि. सं.

सं० पु०—१. पंडित। (ह.नां.मा.)

२. कवि। (अ. मा.)

३. वह जो वीणा बजाने में पूर्ण दक्ष हो।

रू० भे०—परवीण, परबीन,परवीण, परवीन, प्रवीण, प्रवीन।

प्रवीणता–सं० स्त्री० [स० प्रवीण+रा०प्र०ता] निपुणता, चतुराई, दक्षता।

रू० भे०—परवीणता।

प्रवीत—देखो 'पवित्र' (रू. भे.)

उ०—१. पाटंबर घोयति जिग प्रवीत। उद्दार तिलक क्रांती अद्वीत।—सू. प्र.

उ०—२. पत-सीत प्रवीत सनीत पढ़ं। दळ-जीत लखां रिण-जीत दढ़ं।—र.ज.प्र.

प्रवीन—देखो 'प्रवीण' (रू. भे.)

उ०—कटी सु छीन केहरी प्रवीन पायका नहीं। बिनीत वांनि वीन सी नवीन नायका नही।—ऊ. का.

प्रवीर–सं० पु० [सं० प्रवीर:] वीर पुरुष, बहादुर व्यक्ति, योद्धा।

उ०—बाटियां रा बीस मीसण रा पद्रह प्रवीर पड़ियां पछै बहनोई रा प्रहार थी साळा री सीस उडियौ।—वं. भा.

रू० भे०—प्रवीर।

प्रवेस—सं० पु० [सं० प्रवेश:] १. भीतर जाना, अन्तर्निवेस, घुसना, पैठारी। उ०—१. तिण समय तिण वेर उभै नाजर अत आदर, पावक करण प्रवेस तरण पति चरण निरंतर।—रा. रू.

उ०—२. रोग सोक दुख पाप रिण, अै मत करौ प्रवेस। रहौ अनीत-अनीत विण, दाता हूंदै देस।—बां. दा.

२. गति, रसाई, जानकारी।

३. दूसरे के काम में दखल देना।

४. किसी कार्य में संलग्न होने की स्थिति।

५. किसी पात्र की रंगमच पर उपस्थिति।

६. द्वार।

७. सूर्य का किसी राशी में संक्रमण।

रू० भे०—परवेस, परवेस।

प्रवेसक–वि० [सं० प्रवेशक:] १. प्रवेश करने वाला, घुसने वाला।

२. प्रवेश कराने वाला, घुमाने वाला।

प्रवेसद्वार–सं०पु०यौ० [सं०प्रवेश:+द्वारं] वह दरवाजा जिसमें से होकर अन्दर जाते हैं।

प्रव्रज्या–सं० स्त्री० [सं०] गृहस्थाश्रम छोड कर संन्यास लेना।

उ०—अल्प प्रव्रज्या, अतुल परीसह, अस्ट करम करी हांण।—जयवांणी

प्रव्रत्त–वि० [सं० प्रवृत्त] १. किसी की ओर झुका या मुड़ा हुआ।

२. किसी ओर लगा हुआ।

प्रव्रत्ति–सं० स्त्री० [सं० प्रवृत्तिः] १. मन का किसी विषय की ओर लगाव, लगन। २. प्रवाह, बहाव। ३. झुकाव।

४. दार्शनिक और धार्मिक क्षेत्रों में जीवन-यापन का वह ढंग जिसमे मनुष्य सांसारिक कार्यों, सुख भोगों आदि में प्रवृत्त रहता है।

५. राम स्नेही साधुओं का एक भेद विशेष जिसके साधु सिले हुए कपड़े पहिनते हैं, सिर पर टोपी या पगड़ी रखते हैं साधु सेवा के नाम से रुपये भी ग्रहण करते हैं, उधार भी देते हैं।

६. मन, वचन, काया को शुभाशुभ कार्य (व्यापार) में लगाने की क्रिया या भाव।

७. मन की विचारधारा। ८. उत्पत्ति, जन्म। ९. हाथी का मद।

१०. यज्ञ, पूजा-पाठ आदि धार्मिक कार्य।

११. कार्य का अनुष्ठान या आरंभ।

१२. मनुष्यों का साधारण आचरण व्यवहार या रहन-सहन।

प्रवृद्ध–वि० [सं० प्रवृद्ध] १. पूर्ण बढ़ा हुआ। २. वृद्धियुक्त। ३. फैला हुआ, विस्तारित। ४. अहंकारी. अभिमानी।
सं० पु०—तलवार के ३२ हाथों में से एक।

प्रसंग–सं० पु० [सं० प्रसङ्गः] १. अनुराग, आसक्ति।
२. संसर्ग, सबंध, संपर्क, मेल। उ०—घटै आव जस घन घटै, अकळ हटै बळ अग। नीदवियौ दांना नरा, पातर तणौ प्रसग।
—बा.दा.
३. अनुचित संबंध, लगाव।
४. वार्ता, विषय। उ०—चुगलां जीभ न चाल ही, पर उपगार प्रसंग। नह नीपज ही नील सूं, राजहंस रौ रग।—बां. दा.
५. वह विषय जो विवाद-ग्रस्त हो और जिस पर चर्चा चल रही हो।
६. सभोग, मैथुन। उ०—परीणत स्वास उसास प्रभाव, प्रिया प्रिय पास पलोटत पाव। रमै रस रास विलास सुरंग, परस्पर प्रीतम प्रीत प्रसग।—ऊ. का.
७. संबंध, रिश्ता।
८. मौका, अवसर।
९. प्रकरण। उ०—एक न चाहै और नूं, उभै दुखी ह्वै अग। आदम नै इळवीस रौ, प्रगट विचार प्रसग।—बां. दा.
१०. हेतु, कारण।
रू० भे०—परसंग, परसंघ, प्रसंघ।

प्रसंगी–वि० [सं० प्रसगिन्] १. जिसका प्रसंग चल रहा हो।
उ०—उमग प्रसंगी सूं वयण, चव सुकवि चित चाह। कहै 'मंछ' कवि जिकण नूं, सनमुख उक्त सराह।—र.रू.
२. प्रसंगयुक्त। ३. प्रसग या संभोग करने वाला। ४. अनुरक्त।
सं० पु०—सम्बन्धी, रिश्तेदार, नाती। उ०—ताहरां ओठी दोय साम्हां चाढ़िया सो द्रोणपुर कनै भांभरकै आइया। अेकण प्रसंगी थौ उण रै घर गया, उठै उतर पांणी पीयौ।
—सूरे खींबे काधळोत री बात
रू० भे०—परसगी, परसंघी, प्रसघी।

प्रसंघ—देखो 'प्रसंग' (रू. भे.)

प्रसंघी—देखो 'प्रसंगी' (रू. भे.)

प्रसध–सं०पु० [?] शरीर की रचना, शरीर का गठन।
उ०—कर कमळ माळ सु द्वार प्रतिक्रम, बांध रति भुज-बंध है। कत जुगळ सुंदर चमर करि है, सोभ रुचिर प्रसंध है। इक ओर अपछर गांन अदभुत, बांण सुरंग वधावणौ।—रा. रू.

प्रसंसक–वि० [सं० प्रशंसक] प्रशसा करने वाला, तारीफ करने वाला।

प्रसंसणौ, प्रसंसबौ–क्रि०स० [सं० प्रशंसनम्] किसी की प्रशंसा या तारीफ करना गुण गान करना, श्लाघा करना। उ०—वेणीरांम जी स्वांमी सुणनै घणां राजी हुवा। स्वांमी जी नै घणां प्रसंस्या।
—भि. द्र.
प्रसंसणहार, हारौ (हारी), प्रसंसणियौ—वि०।
प्रसंसिओड़ौ, प्रससियोड़ौ, प्रसंस्योड़ौ—भू०का०कृ०।
प्रसंसीजणौ, प्रसंसीजबौ—कर्म वा०।
परससणौ, परसंसबौ—रू० भे०।

प्रसंस—देखो 'प्रससा' (रू. भे.)
उ०—अरी न अप्रसन्न ह्वै प्रसन्न में बडौ बिभौ। प्रससता प्रसंसनीय की प्रससता प्रभौ।—ऊ. का.

प्रसंसनीय–वि० [सं० प्रशंस्+अनीयर्] जिसकी प्रशंसा की जा सकती है, प्रशसा करने के योग्य।
उ०—प्रससता प्रसंसनीय की प्रसंसता प्रभौ।—ऊ.का.

प्रसंसा–सं० स्त्री० [सं० प्रशसा] किसी के अच्छे गुणो या कार्यो का किया जाने वाला वर्णन या बखान, बड़ाई, तारीफ, श्लाघा।
उ०—चपकमाळा हरत चित, जुत भमरावळि जांण, जुत भमरावळि जांण जिल्है तन जागणौ। बादळ मांझळ बीज, प्रकास बिलागणौ। काय अमावस रैण, प्रसंसा कीजही। दीवाळी सुखदाय, प्रभा दरसीजही।—बां. दा.
रू०भे०—परससा, पसंसा प्रसंसता।

प्रसंसियोड़ौ–भू०का०कृ०—किसी की प्रशसा या तारीफ किया हुआ, गुण गान गाया हुआ, श्लाघा किया हुआ.
(स्त्री० प्रसंसियोड़ी)

प्रसण—१. देखो 'प्रसन्न' (रू. भे.)
उ०—१. प्रसण हुय प्रहळाद ऊपर, हर दिखाये हत्थ।—भक्तमाळ
२. देखो 'पिसण' (रू. भे.) (अ. मा.)
उ०—करां खग झाल दुहूं राह मातौ कळह, दूठ लागौ पलां येण दावै। जीव री आस तौ प्रसण नह गहै जळ, जळ गहै प्रसण तौ जीव जावै।—महारांणा प्रताप रौ गीत
३. देखो 'प्रस्न' (रू भे)

प्रसणपनग—देखो 'पिसणपनग' (रू. भे.)

प्रसणांण, प्रसणायण—देखो 'पिसण' (मह., रू. भे.)
उ०—१. बीर माहाराज तैं मन बसिया, मुणें समाग्रह मारित माण। पत बडा अळगा दांन पावै, परभव जे अळगा प्रसणांण।
—राव रिड़मल रौ गीत
उ०—२. कर मुक्ता चूंडावत कीधा, कमधज करवै वांण किये। पांण पता परहस प्रसणायण, दूर थकां ही रयण दियै।
—राव रिड़मल रौ गीत

प्रसणी–सं० स्त्री० [सं० पृश्निः] श्रीकृष्ण की माता देवकी का एक नाम।

प्रसणीप्रभ—देखो 'प्रस्निगरभ' (रू. भे.)

उ०—राव-बैकुंठ घनतर रिखभ, गरुड़ारूढ़ विसन प्रसणीग्रभ।
—ह. र.

प्रसत—वि० [?] प्रकट, जाहिर, प्रत्यक्ष। उ०—१. चंद वळ जीत वासव प्रसत चोज मे, जोध मकराक्ष श्रो हरोळी फौज में। —र. रू.

उ०—२. नर केता नारद निपट, दोल्यां रै वट देह। पण पिव रो प्राक्रम प्रसत, बंधियौ नाहि वधेह।—रेवतसिंह भाटी

सं० पु० [सं० पृषत्] १. जल या किसी अन्य तरल पदार्थ की बूंद। (डिं. को.)

[सं० पृषतः] १. चित्तीदार हिरण। २. धब्बा।

प्रसतर—देखो 'प्रस्तर' (रू. भे.)

प्रसतांनौ—देखो 'प्रस्थांनौ' (रू. भे.)

उ०—करि प्रसतांनौ ले चले, दस सिरि जम-द्वारे। कूदि चढे दह-कंध रै, चित हित चौवारे।—सू. प्र.

प्रसतार—देखो 'प्रस्तार' (रू. भे.)

प्रसताव—देखो 'प्रस्ताव' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

उ०—१. जोर दिखायौ साह रौ, फौर धरे प्रसताव। घर-घर हंदा माभियां, कर कर वात द्रढ़ाव।—रा. रू.

उ०—२. श्रौ मे प्रसताव दिखायौ, ज तूं भूप उणहिज कुळ जायौ।
—सू प्र.

प्रसथांण—देखो 'प्रस्थांन' (रू. भे.)

उ०—करघौ द्रग देसांण, प्रसथांण 'इंदर' सकति। प्रेम अप्रमांण रा अम्रत पीधा।—मे. म.

प्रसथाव—देखो 'प्रस्ताव' (रू. भे.)

प्रसद—सं० स्त्री० [सं० पृषत् ?] १. नदी। (अ. मा.)

२. देखो 'प्रसिद्ध' (रू. भे)

३. देखो 'प्रसिद्धि' (रू.भे.)

उ०—'धीर' नह मनांणी नीर चाडण धरा। प्रसद जिण पुगाई समंद पाजा।—धीरतसिंह मेडतिया रौ गीत

प्रसध—१. देखो 'प्रसिद्ध' (रू. भे.)

उ०—प्रसध नांम इधकार जग जारै मांटीपणौ, अतुळ दातार कीरत उजाळा। मलम वाता चिहुं वेस आंणिया-भमर, वाह रै! कवर अवधेस वाळा।—र. रू.

२. देखो 'प्रसिद्धि' (रू. भे.)

प्रसन—देखो 'प्रसन्न' (रू. भे.)

उ०—१. पातसाह राखै प्रसन, 'जेहा' तो घण जांण। मकै मदीनें मारगां, ताठ सकै कुण तांण।—वां. दा.

उ०—२. सुसमित सुनमित निज वदन सुव्रीड़ित, पुंडरीकाख थिया प्रसन। प्रथम अग्रज आदेस पाळिवा, मिरिगाखी राखिवा मन।
—वेलि

उ०—३. प्रज उदभिज सिसिर दुरीस पीड़तो, ऊतर ऊयापिया असंत। प्रसन कोकु मिसि न्याय प्रवरत्यौ, वनि वनि नयरे राज वसत।—वेलि

२. देखो 'प्रस्न' (रू. भे.) (डिं. को.)

उ०—पूछै यूं 'अन' कवि प्रसन, थाप मेर जिण ठांम। प्रथम मेर मत कवि परठ, रट कीरत रघुरांम।—र. ज: प्र.

३. देखो 'पसंद' (रू. भे.)

प्रसनता—देखो 'प्रसन्नता' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रसना—सं०स्त्री० [सं० प्रसन्ना] मदिरा। (अ.मा.)

प्रसनाई—देखो 'प्रसन्नता' (रू. भे.)

उ०—एक रूप अनमेख, पेख धारै प्रसनाई।—रा. रू.

प्रसनोतर, प्रसनोत्तर—देखो 'प्रस्नोत्तर' (रू. भे.)

उ०—एक सुघड़ रस कायब उच्चर, पूरण सुख लूटै प्रसनोतर।
—रा. रू.

प्रसन्न—वि० [सं०] १. खुश, संतुष्ट। उ०—१. सु देवराज सूं सामी प्रसन्न हुय नै कह्यौ—वात हुइ सो म्है जांणी।—नैणसी

ऊ०—२. मरी न अप्रसन्न ह्वै प्रसन्न में बडो विभौ।—ऊ. का.

२. जो किसी के कार्य या बात तथा गुणों को देखकर संतुष्ट और हर्षित हुआ हो। उ०—स्रम थोड़ै वोह नफौ सांपजै, वीसर मती अनोखी वात। रहै प्रसन्न ऐ आयस रीधै, छात सिधां नरपतियां छात।
—वां. दा.

रू० भे०—परसण, परसन, परसन्न, पसंद, पसन्न, प्रसण, प्रसन, प्रासन्न।

प्रसन्नता—सं० स्त्री० [सं०] १. प्रसन्न होने या रहने की अवस्था या भाव, खुशी, हर्ष। २. निर्मलता, स्वच्छता। ३. अनुग्रह, कृपा।

रू० भे०— पसन्नता, प्रसनता, प्रसनाई।

प्रसन्नमुख—वि० [सं०] जिसका मुख प्रसन्न हो, जिसके मुंह पर प्रसन्नता के चिन्ह हो, हंसमुख, खुश।

प्रसन्नांध—स० पु० [सं०] घोड़े का एक रोग जिसमें उस की आंख देखने में तो ज्यों की त्यों दिखाई देती है परन्तु घोड़े को दिखाई नहीं देता।
(शा. हो.)

प्रसन्नियग्रभ—देखो 'प्रस्निगरभ' (रू. भे.)

उ०—नमो गुरु आदि प्रसन्नियग्रभ, नमो रघुराज कपिल्ल रिखम्भ।
—ह. र.

प्रसन्नी—वि० स्त्री० [सं० प्रसन्न+रा०प्र०ई] प्रसन्न होने वाली, खुश।

उ०—देवी सारदा रूप पीगळ प्रसन्नी।—देवि.

सं० स्त्री० [सं० पृश्निः] श्रीकृष्ण की माता देवकी।

प्रसपघन्वा—देखो 'पुस्पघन्वा' (रू. भे.) (ह.नां.मा.)

प्रसभ—सं० पु० [सं० प्रसभम्] १. हठ। उ०—१. बुध जांणियौ जठ ही जाइ नाइ कांम आवण प्रसभ गहियौ।—वं. भा.

उ०—२. इणी समय राणा लक्खण रौ पट्टपकुमार अरिसिंह आखेट में रमतां कोई ग्रांम रा परीसर में एक चंनांणा जाति रा हळखड़ रजपूत री पुत्री नूं बळ में अतुळ जांणि प्रसभ पूरवक परणियो।—वं. भा.

अव्य०—जबरदस्ती से, बरजोरी से।

प्रसम-सं० पु० [सं० प्रशमः] १. शान्ति। २. शमन, उपशम।

प्रसमन-सं० पु० [सं० प्रशमनम्] शान्ति, शमन।

प्रसर-सं०पु० [सं० प्रसरः] १. शीघ्र, जल्दी। (अ. मा., ह. नां. मा.)

२. ऐसी गति जिसमें रुकावट न हो।

३. वेग, तेजी।

४. आगे बढ़ना।

५. विस्तार, फैलाव।

६. वात, पित्त आदि दोषों का संचार घटाव, बढ़ाव। (वैद्यक)

७. न्यास।

८. राशि, समूह।

९. प्रधानता।

प्रसरणौ, प्रसरबौ—देखो 'पसरणौ, पसरबौ' (रू. भे.)

प्रसरणहार, हारौ (हारी), प्रसरणियौ—वि०।

प्रसरिग्रोड़ौ, प्रसरियोड़ौ, प्रसरयोड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रसरीजणौ, प्रसरीजबौ—भाव वा०।

प्रसरियोड़ौ—देखो 'पसरियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० प्रसरियोड़ी)

प्रसव- सं०पु० [सं० प्रसवः] १. बच्चे को जन्म देने की क्रिया, जनना।

उ०—प्रति एक प्रसव एतां प्रसार, एकादस प्रकटे कुळ उदार। बाळेस नाम पत्तम बणाय, तिण ठांम दुरग प्रति रण तणाय।—वं.भा.

२. उत्पत्ति, जन्म। उ०—सूतौ देवर सेज रण, प्रसव अठी मो पूत। थे घर बाभी बांट थण, पाळौ उभय प्रसूत।—वी. स.

३. बच्चा।

४. पुष्प, फूल। (नां. मा.)

प्रसवणौ, प्रसवबौ-क्रि० स० [सं० प्रसवनम्] बच्चा उत्पन्न करना, जन्म देना। उ०—दस मास समापित गरभ दीध रित, मन व्याकुळ मधुकर मुणंति। कठिण वेयणि कोकिल मिसि कूजति, वनसपती प्रसवती वसंति।—वेलि

प्रसवणहार, हारौ (हारी), प्रसवणियौ—वि०।

प्रसविग्रोड़ौ, प्रसवियोड़ौ, प्रसव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रसवीजणौ, प्रसवीजबौ—कर्म वा०।

प्रसवियोड़ौ-भू० का० कृ०—उत्पन्न किया हुआ, जन्म दिया हुआ.
(स्त्री० प्रसवियोड़ी)

प्रसस्त-वि० [सं० प्रशस्त] १. प्रशसनीय।

उ०—सुख दुख राजी सदा, वसंत वनड़ौ वण जावै। हरियै वागै हरख, महक मीठी फैलावै। उपकारी प्रसस्त, गिणै ना सीत सियाळै। लुवां ताती रेत, उनाळै भांण उकाळै।—दसदेव

२. प्रशंसा किया हुआ। ३. सर्वोत्तम, श्रेष्ठ।

रू० भे०—पसत्थ।

प्रसस्ति-सं० स्त्री० [सं० प्रशस्तिः] १. प्रशंसा। २. विरुदावली।

२. प्रशसा में रची हुई कविता।

प्रसांण—देखो 'पिसण' (रू. भे.)

प्रसांत-वि० [सं० प्रशान्त] १. चंचलता रहित, अचंचल, स्थिर।

२. निश्चल वृत्ति वाला, शान्त।

३. वश में किया हुआ, दमन किया हुआ।

४. एशिया व अमेरिका के बीच का एक महासागर।

प्रसांति-सं० स्त्री० [सं० प्रशान्तिः] शान्ति, स्थिरता।

प्रसाख, प्रसाखा-सं० स्त्री० [सं० प्रशाखा] किसी बड़ी शाखा या डाली से निकली हुई छोटी शाखा।

उ०—द्रुम समूह सम सोभा सुंदर, मुरधर पत दीठौ मंडोवर। मवसर तिकां कुमम फळ मंजर, साख प्रसाख सरूप सुरंतर।—रा.रू.

प्रसाच—देखो 'पिसाच' (रू. भे.) (अ. मा.)

प्रसाद-सं०पु० [सं० प्रसादः] १. देवी देवताओं को भोग लगाया जाने वाला पदार्थ, जो समीपस्थ जन समाज, दर्शनार्थी व भक्तों में बांटा जाता है, नैवेद्य।

उ०—१. विनोद गीत नाद भेद, सद् घंट झालरी। प्रसाद देव पुंजिइत, अंबिका हरोहरी।—मु. रू. बं.

उ०—२. मुख इम पवित्र करिस कंस-मंजण, भखे प्रसाद तूझ दुख-भजण।—ह. र.

क्रि० प्र०—चढ़ाणौ, देणौ बंटणौ, बांटणौ, बोलणौ।

२. साधु महात्माओ को भेंट किया जाने वाला वह खाद्यपदार्थ जो उन्ही के द्वारा भक्तजनों में बांटा जाता है। उ०—वह अपराध गांठियो चित में, धारे सिखां छांटियो ध्यांन। चारु प्रसाद बांटियो चेळां, गुरां इसौ ई छांटियो ग्यांन।—बांकीदास बीठू

३. ऐसा पदार्थ जो किसी महात्मा या गुरु से उसके अनुग्रह स्वरूप प्राप्त हुआ हो।

४. किसी पर की जाने वाली ऐसी कृपा या महरबानी जिससे उसका बडा उपकार होता है। उ०—पछै मातामह सूं सीख पाय कुमार प्रथ्वीराज अजमेर आयौ अर तोमराधीस रौ प्रसाद पाय नाहरराज आप रै सदन मंडोवर सिधायौ।—वं. भा.

५. अनुग्रह, कृपा। उ०—गुरु प्रसाद संतोस गज, जे नर बैठा जाय। जग लालच कूकर जियां, लाळ सकै न लगाय।—बां. दा.

६. वरदान। उ०—जरै बडाह भी जिण तरह प्रतिदिन अरज करतौ तिण रीति अरथी-जना नूं देंण काज आप रै द्वार सुवरण रौ रासि संपादन होण रौ ही प्रसाद मांगि स्वकीय सदन आय प्रभात ही सो पुरट पुंज जाचकां नूं लुटाय अपूरब जस लीधौ।—वं.भा.

७. कारण। उ०—फाटक रखवाळी करै, फाटक हरै फसाद। सूम कहै सुख सूं सुवां, फाटक तणै प्रसाद।—वां. दा.

८. भोजन। (साधु संतों व महात्माओं को कराया जाने वाला) क्रि० प्र०—करणौ, कराणौ, पाणौ।

९. साहित्य में काव्य का एक गुण जिसमें स्वच्छता, सरलता और सहज ग्राह्यता होती है और कविता को सुनते ही उसका अर्थ समझ में आ जाता है।

१०. एक मात्रिक छन्द विशेष जिसके प्रत्येक चरण में १९ मात्राएँ होती हैं।

११. देखो 'प्रासाद' (रू. भे.)

उ०—लख समपे जु तें मांडिया 'लाखा', घाट सुकवि सलवाट घड़ै। प्रसिध तणा प्रासाद न पड़ ही, पाखांणिवा प्रसाद पड़ै।

—लाखा फूलांणी रौ गीत

रू० भे०—परसाद, पसाइ, पसाउ, पसाद, पसाय, पसाव, प्रासाद।

प्रसादक-वि० [सं०] १. अनुग्रह करने वाला।

२. आनंद बढ़ाने व प्रसन्न करने वाला।

प्रसादी-सं० स्त्री० [सं० प्रसाद+रा० प्र० ई] १. देवता को चढ़ाया हुआ पदार्थ, नैवेद्य।

क्रि० प्र०—चढ़ाणी, देणी, बांटणी, बोलणी।

२. उक्त का व भाग जो प्रसाद के रूप में जन समाज में बांटा जाता है।

३. वह पदार्थ जो पूज्य और बड़े लोगों द्वारा छोटों को कृपा स्वरूप दिया जाय, बड़ों की देन।

४. तीर्थयात्रा से लौटने पर किया जाने वाला एक बड़ा भोज जिसमें इष्ट-मित्रों व सगे सम्बन्धियों को आमन्त्रित किया जाता है।

क्रि० प्र०—करणी, होणी।

रू० भे०—परसादी।

प्रसाधन-सं०पु० [सं० प्रसाधनम्] १. सजावट।

२. श्रृंगार। ३. वेप। ४. कघी।

प्रसार-स० पु० [सं० प्रसारः] फैलाव, विस्तार।

उ०—प्रति एक प्रसव एतां प्रसार, एकादस प्रकटे कुळ उदार, बाळेस नांम पत्तम वणाय, तिण ठांम दुरग अति रण तणाय।—वं. भा.

रू० भे०—परसार, पसार।

प्रसारणौ, प्रसारबौ-क्रि०स०—१. स्पर्श कराना, छुआना।

२. देखो 'पसारणौ, पसारबौ' (रू. भे.)

उ०—जिकण रै साथ रांणा त्याग रा जस रौ प्रकास प्रसारण रै काज आप रा पोळिपात बारहठ बारू सहित बडा बडा सुभटां नूं सज्ज करि हाडां री आसंग में न आवै इसड़ौ बरात रौ बांणिक वणाय दीधौ।—वं. भा.

प्रसारणहार, हारौ (हारी), प्रसारणियौ--वि०।

प्रसारिओड़ौ, प्रसारियोड़ौ, प्रसारयोड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रसारीजणौ, प्रसारीजबौ—कर्म वा०।

प्रसारियोड़ौ—देखो 'पसारियोड़ौ' (रू. भे.)

प्रसिटी-सं०पु० [सं० प्रेष्ठः] पति। (ह. नां. मा.)

प्रसिद्ध-वि० [सं०] १. विख्यात, मशहूर।

उ०—१. व्रति चलति सुगति दुति अमित विद्ध, पदमणिय हंस किरि गुरु प्रसिद्ध।—रा. रू.

उ०—२. ऊरध अकास, पताळ पास। सब ठोर सिद्ध, परिकर प्रसिद्ध।—ऊ. का.

२. देखो 'प्रसिद्धि' (रू. भे.)

रू०भे०—परसद, परसध, परसद्ध, परसिद, परसिद्ध, परसिद्धउ, परसिध, पसिद्ध, पसिध, प्रसद, प्रसध, प्रसिध, प्रिसध।

प्रसिद्धता-सं० स्त्री० [सं० प्रसिद्ध+रा० प्र० ता] ख्याति, कीर्त्ति।

रू० भे०—परसिदता, परसिद्धता, परसिधता।

प्रसिद्धि-सं० स्त्री० [सं० प्रसिद्धिः] १. प्रसिद्ध होने की अवस्था, गुण या भाव ख्याति, मशहूरी

२. कीर्ति, यश। ३. सजावट, शृंगार। ४. सफलता।

रू०भे०—परसिधि, परसिधी, प्रसद, प्रसध, प्रसधी, प्रसिध, प्रसिधि, प्रसिधी, प्रिसिधि।

प्रसिध—१. देखो 'प्रसिद्ध' (रू. भे.)

२. देखो 'प्रसिद्धि' (रू. भे.)

उ०—१. जाळ देह पावक्क, पाळ पतिवरत महापण। कुळ लज्या उजयाळ, रीत रखवाळ नरेहण। नांम राख नव खंड, प्रसिध चाडे दहुं पक्खे। साथि सांमि समरत्थ, रथे बैठी कथ रक्खे। सुर करै हरख वरखै सुमन, अमर तरणि धिन उच्चरै। नर भुवण हूंत सतिया भ्रिपति, सुरपुर मारग संचरै।—रा. रू.

उ०—२. निरवळां नेकां कीध केकां, साहि हाय सुनाय। गुण 'किसन' गावै प्रसिध पावै, अमर ईजत आय।—र.ज प्र.

प्रसिधि, प्रसिधी—देखो 'प्रसिद्धि' (रू. भे.)

उ०—दाखै कांन तणौ यम दूजां, आमेरौ अे वड आरीख। प्रसिधि तणां भूखण नौहो पहरै, सोवन ज्या दूखण सारीख।

—गोरधन कल्याणोत रौ गीत

प्रसुन—देखो 'प्रसून' (रू. भे)

प्रसू-सं० स्त्री० [सं०] माता, जननी।

प्रसूत-वि० [सं०] १. उत्पन्न, संतान, पैदा।

रू० भे०—परसूत।

२. देखो 'प्रसूति' (रू. भे)

उ०—१. सूतौ देवर सेज रण, प्रसव मठी मो पूत। ये घर वाभी

वांट थरा, पाळौ उभय प्रसूत ।—वी. स.

उ०—२. बीजां ही सवणियां नूं पूछियौ । तियां कह्यौ 'जिकै रांणी रै प्रसूत हुसी तियै रौ बेटौ धरती रौ धणी हुसी ।'—नैणसी

३. देखो 'प्रसूता' (रू. भे.)

उ०—बांझ के पास प्रसूत की वेदन, भेद न जाणत मूंड भमायौ ।
—ऊ. का.

प्रसूता-सं० स्त्री० [सं०] जच्चा स्त्री ।

उ०—सो महाराज आ भूखी आत्मा छै, फेर प्रसूता । ई उद्यांन रै मांही इण रौ कुण वेली ।—रांमदत्त साह री वारता

रू० भे०—प्रसूत ।

प्रसूति-सं० स्त्री० [सं० प्रसूतिः] १. प्रस्व जनन ।

२. उद्भव । ३. सतान ।

उ०—कहां व्रटेन भूति हा जरो प्रसुति केसरी ।—ऊ. का.

४. उत्पत्ति, पैदायश । ५. माता, जननी ।

रू० भे०—प्रसूत ।

प्रसूतिका-सं० स्त्री० [सं०] जच्चा ।

उ०—पकवांने पाने फळे सुपुहपे, सुरंगे वसत्रे दरब स्रब । पूजियै कसटि भंगि वनसपती, प्रसूतिका होळिका प्रब ।—वेलि

प्रसून-सं० पु० [स०] १. पुष्प, फूल । (अ. मा., नां. मा.)

उ०—खमां भरिण जोगरिण खांचत खून, सुरां कर मांन्नत मेह प्रसून ।
—मे. म.

२. कमल । (अ. मा , ह. नां. मा.)

रू० भे०—परसून, प्रसुन ।

प्रसेरिणय, प्रसेणी-सं०स्त्री० [?] घोडी । उ०—हदवै भड ठांभिय छूट हियै । काळवी अस वावळ रूप कियौ । तसलीमिय सांकड़ नास तड़ै । पड़साज प्रसेरिणये फीरा पड़ै ।—पा. प्र.

प्रसेद—देखो 'प्रस्वेद' (रू. भे.)

उ०—ओस कां करा इहे मानों प्रसेद का करा छै ।—वेलि टी.

प्रसेनजीत-सं० पु० [सं०] सूर्यवंशी एक राजा ।

प्रसेव—देखो 'प्रस्वेद' (रू. भे)

प्रसोतम—देखो 'पुरसोत्तम' (रू. भे.)

प्रस्कन्न-सं०पु० [सं०] घोड़े का एक रोग जिसमे घोड़े के सब अंग स्तब्ध हो जाते हैं और छाती भारी हो जाती है और वह कुबड़े के समान चलता है । (शा. हो.)

प्रस्ट—देखो 'प्रिस्ट' (रू. भे.)

प्रस्टपरणी-देखो 'प्रिस्टपरणी' (रू. भे.)

प्रस्टवंस-सं० स्त्री० [सं० पृष्टवंश] रीढ़ की हड्डी ।

प्रस्टा-वि० [सं० पृष्टा] प्रश्न पूछने वाला ।

प्रस्टि-सं० पु० [सं०प्रष्टिः] वह घोड़ा जो तीन घोड़ों के रथ मे हो ।

प्रस्ठ—देखो 'प्रिस्ठ' (रू. भे.)

उ०—वधियौ दरद सु देह विघन्नी, प्रस्ठ दुस्ट चांदी ऊपन्नी ।
—रा. रू.

प्रस्ठोदय-सं० पु० [सं० पृष्ठोदय] पीठ की ओर उदय होने वाली छै राशियां—मेष, वृष, कर्क, धन, मकर और मीन ।

रू० भे०—प्रिस्टोदय ।

प्रस्तर-सं० पु० [सं० प्रस्तरः] १. पत्थर, चट्टान ।

२. चौरस जगह, मैदान ।

३. सेज, शय्या ।

रू० भे०—प्रसतर ।

४. देखो 'प्रस्तार' (रू. भे.)

उ०—सख्या प्रस्तर सूचिका, नस्ट उदिस्ट सुमेर । ध्वजा मरकटी जाण सुध, आठूं करम अफेर ।—र. ज. प्र.

प्रस्तांनौ—देखो 'प्रस्थांनौ' (रू. भे.)

प्रस्ताऊ—देखो 'प्रस्तावू' (रू. भे.)

प्रस्तार-सं० पु० [सं० प्रस्तारः] १. फैलाव, विस्तार ।

२. चौरस जमीन, मैदान ।

३. पिंगल (छंद शास्त्र) के नव प्रत्ययों में से प्रथम जिसके अनुसार छंदों के भेद की संख्या और उनके रूपों का वर्णन होता हैं ।

रू० भे०—परसतार, प्रसतार, प्रस्तर ।

प्रस्ताव-सं० पु० [सं० प्रस्तावः] १. अवसर, मौका ।

उ०—१. इण प्रस्ताव पूनौ तो राव जी कनै गयौ । उठै राव जी नागोर रौ कोट छोडनै बाहिर आया । भाटियां री फोज आई । ताहरां राव जी साम्हां जाय नै लडिया । राव जी कांम आया ।
—नैणसी

उ०—२. जद स्वांमी जी एक टोपसी मे सपेतौ हुंतौ इतलै वायरौ वाज्यौ । एहवौ प्रस्ताव देखनै आप गाथा जोड़ता थका ईज बोल्या ।
—भि. द्र.

२. समय । उ०—१. अेकदा प्रस्ताव राव जोधौ जी दरबार किया विराजै ।—द. दा.

उ०—२. एकरिण प्रस्ताव पातिसाह स्रीसेरसाह, सलेमसाह बाप बेटौ दोम्रू विखै पडियै राव लूणकरण कन्है चाकरी वीकानेर आय रहिया हुता ।—द. वि.

३. चर्चा, जिक्र, वर्णन ।

४. प्रकरण, अध्याय ।

उ०—इति स्री खट-रिति रै वात वणाव रौ दूसरौ प्रस्ताव पूरौ हुऔ ।
—रा. सा. सं.

५. भूमिका, उपक्रम ।

६. आरभ, शुरूआत । उ०—केतली प्रतिमा केह नी वलि, किरण भराव्यउ भाव सुं । ए कउण नगरी किरण प्रतिस्ठी, ते कहुं प्रस्ताव सुं ।—स. कु.

७. वह उद्देश्य, नई बात या योजना जो विचारार्थ सामने रखी जाय, सलाह ।

८. विषय, प्रसंग ।

रू० भे०—परसताव, पस्ताव, प्रसताव, प्रसथाव, प्रस्तावि, प्रस्तावौ, प्रस्थाव ।

प्रस्तावक–वि० [सं०] प्रस्ताव करने वाला ।

प्रस्तावना–स० स्त्री० [सं०] किसी विषय या कथा को आरम्भ करने के पूर्व का वक्तव्य, प्राक्कथन, उपोद्घात ।

प्रस्तावि—देखो 'प्रस्ताव' (रू. भे.)

उ०—अत्र प्रस्तावि महाराजाधिराज महाराजा स्रीकल्यांणमल विक्रमनगरी राज करै छै ।—द. वि.

प्रस्ताविक–वि० [सं०] प्रस्ताव संबंधी, प्रस्ताव का ।

सं०पु०—१. काव्य का एक भेद जिसमें वर्णित विषय या बातो का किसी पूर्व की बात या विषय से कोई संबंध न हो, फुटकर काव्य ।

उ०—सूमां उर सर जिसा, विरस कांनां लग जातां । केइ सापरत कवित्त, आदघर की अखियातां । केइक वांरा कवित्त, केइक विदरा पदजी का । केइ प्रस्ताविक कवित, केइक 'जसजी' 'फलजी' का ।
—अरजुण जी बारहठ

२. पूर्वापर संबंध रहित वार्त्तालाप ।

रू० भे०—परसताविक, परसतावीक, प्रस्तावू ।

प्रस्तावित–वि० [सं०] जिसके प्रति प्रस्ताव किया गया गया हो, जिसके लिये प्रस्ताव हुआ हो ।

प्रस्तावू–वि० [सं० प्रस्ताव+रा०प्र०ऊ] १. प्रस्ताव का (की), प्रस्ताव संबंधी ।

२. प्रस्ताव के समान, प्रस्ताव के ढंग का, प्रस्तावोचित ।

उ०—म्हैं तौ थारो मन जांणण सारू प्रस्तावू बात करी है ।—फुलवाड़ी

३. देखो 'प्रस्ताविक' (रू. भे.)

रू० भे०—प्रस्ताऊ ।

प्रस्तावौ—देखो 'प्रस्ताव' (रू. भे)

उ०—तिण प्रस्तावै एक दिन गढ में गोहरी रीसांणौ । तिकौ हेठौ ऊतरीयौ ।—राव रिणमल री वात

प्रस्तुत–वि० [स०] १. जो समीप या सामने हो ।

२. मौजूद, तैयार, वर्तमान ।

सं० पु० [स० प्रस्तुतम्] उपस्थित विषय ।

प्रस्तुतांकुर, प्रस्तुतालंकार–स० पु० [सं०] एक अर्थालंकार विशेष जिसमें एक प्रस्तुत पदार्थ के सम्बध में कुछ कहकर उसका अभिप्राय दूसरे प्रस्तुत पदार्थ पर घटाया जाता है ।

प्रस्थांन–सं०पु० [सं०प्रस्थानम्] १. कूच । उ०—प्रस्थांन रै प्रथम वारहठ लोहठ नरेस नूं कहियौ ।—व. भा.

२. गमन, यात्रारभ, रवानगी ।

३. सेना या चढ़ाई करने वाले सैन्यदल का कूच ।

उ०—जिण समय गुजरात देस रा सत्तरि हजार ७०००० ग्रांमां रौ अधीस अणिहलपुर पाटण में चाळुक्यराज, भोळाराय, भीमराज करै अर वडा वडा देसपती सीमाड़ जिण रा प्रस्थान सूं आतंक धरै ।—वं. भा.

रू० भे०—प्रसथांण ।

प्रस्थांनौ–सं० पु० [?] किसी मुहूर्त्त वाले दिन यात्रा स्थगित करने पर पूरा सामान या अंश किसी अन्य स्थान पर रखने की क्रिया या प्रथा ।

उ०—प्रस्थांनौ समहूरति कियउ, पिंगळ पहुंचावा आवियौ ।
—ढो. मा.

क्रि० प्र०—करणौ, धरणौ ।

रू० भे०—प्रसतांनौ, प्रस्तांनौ ।

प्रस्थापन–सं० पु० [सं० प्रस्थापनम्] १. रवानगी, विदाई ।

२. स्थापना, सिद्ध करना ।

प्रस्थाव—देखो प्रस्ताव' (रू. भे.)

उ०—एतौ प्रस्थाव का सिलोक आगिले पिंडत का कह्या साखि के वास्ते कहि दिखाया ।—सू. प्र.

प्रस्न–सं० पु० [सं० प्रश्नः] १. वह वाक्य जिससे कोई वात जानने की इच्छा प्रकट होती हो, उत्सुकता दिखाई गई हो, सवाल ।

उ०—एक गांम में स्वांमी जी ऊतर्‌या । अमरसिंह जी रा दो साध, इसरदास जी कोजीरांम जी आया । उवै ऊतर्‌या तिहां स्वांमी जी जाय ऊभा प्रस्न पूछ्यौ ।—भि. द्र.

२. वह सवाल जिसका उत्तर अभीष्ट हो ।

ज्यूं०—गणित रौ प्रस्न ।

३. वह बात जिसका उत्तर किसी से मांगा गया हो ।

४. न्यायालय में होने वाले वाद संबंधी विचारणीय वात ।

५. समस्या ।

रू० भे०—परसण, परसन, परसन्न, पसन्न, प्रसन ।

प्रस्नि–सं० स्त्री० [सं० पृश्निः] श्रीकृष्ण की माता देवकी का एक नाम ।

प्रस्निगरभ सं० पु० [सं० पृश्निगर्भ] श्रीकृष्ण का एक नाम ।

रू० भे०—प्रसणीग्रभ, प्रसन्नियग्रब्भ ।

प्रस्निभद्र–सं० पु० [स० पृश्निभद्र] श्रीकृष्ण का एक नाम ।

प्रस्नोतर, प्रस्नोत्तर–सं० पु० यौ० [सं० प्रश्नोत्तर] १. प्रश्न और उत्तर, सवाल और जबाब । उ०—प्रस्नोत्तर चरचा मत पीगळ, भूखण सब्द ग्ररथ रस भाय । 'बांकीदास' जांणिया विध-विध, राज अनूग्रह जंगळराय ।—बां. दा.

रू० भे०—प्रसनोत्तर ।

प्रस्नोतरी, प्रस्नोत्तरी–स०स्त्री० [सं०प्रश्न+उत्तर+रा०प्र०ई] १. प्रश्न और उत्तर की सूची की पुस्तिका या सूची ।

२. वह जिसमें प्रश्न और उत्तर दोनों हो।

प्रस्रवणी(नी)-सं०स्त्री० [सं० प्रस्र'सनी] बीस प्रकार की योनियों में से एक, जिसमें से सदा पानी सा निकलता रहता है। इस प्रकार की योनी वाली स्त्री के सन्तान होने में बड़ा कष्ट होता है। (वैद्यक)

प्रस्रगद्वार-सं० पु० [सं० प्रसर्गद्वार] सूर्य। (अ. मा.)

प्रस्राव-सं० पु० [सं० प्रश्राव:] १. झरना।

२. पेशाब, मूत्र।

प्रस्वास-स० पु० [सं० प्रश्वास:] १. नथने से बाहिर आयी हुई श्वास।

२. सांस का नथने से निकलने की क्रिया।

प्रस्वेद-सं० पु० [सं० प्रस्वेद:] पसीना। उ०—ओस जु पड्यो छै सु मांनु नायका नै प्रस्वेद का कण हुआ छै।—वेलि टी.

रू० भे०- परसीणौ, परसेद, परसेव, परसेवौ, परेवौ, पसीनौ, पसेउ, पसेव, पसेवौ, प्रसेद, प्रसेव।

अल्पा०—पराइयो, परायौ, पिराइयौ, पिरायौ।

प्रस्सरणौ, प्रस्सरबौ—देखो 'पसरणौ, पसरबौ' (रू. भे.)

उ०—कण मंगळ कर क्रुद्ध प्रभाळा प्रस्सरी। घूहड़ियां खग धार बिनाण बहस्सरी।—किसोरदांन बारहठ

प्रस्सरणहार, हारौ (हारी), प्रस्सरणियौ—वि०।

प्रस्सरिग्रोड़ौ, प्रस्सरियोड़ौ, प्रस्सरचोड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रस्सरीजणौ, प्रस्सरीजबौ—भाव वा०।

प्रस्सरियोड़ौ—देखो 'पसरियोड़ौ' (रू. भे.)

प्रह—१. देखो 'पह' (रू. भे.)

उ०—१. प्रह फूटी दिसि पुंडरी, हणहणिया हय थट्ट। ढोलइ घण ढढोळियउ, सीतळ सुंदर घट्ट।—ढो. मा.

उ०—२. प्रह उगमते प्रणमिये, विहरमांन जिन वीसो जी।
—स. कु.

२. देखो 'प्रहर' (रू. भे.)

प्रहगळ—देखो 'प्रगाळ' (रू. भे.)

प्रहगाळियौ—देखो 'प्रगाळियौ' (रू. भे.)

उ०—आप तळाव आय उतरिया छै। आप फुरमायौ प्रहगाळिया अमल करौ ठाकुरां।—प्रतापमल देवड़ा री वात

प्रहत-वि० [सं०] (स्त्री० प्रहतण) १. मारा हुआ, प्रताडित।

२. घायल किया हुआ।

प्रहर-सं० पु० [सं० प्रहर:] १. दिन-रात का आठवां भाग। (डिं. को.)

उ०—प्रहरै प्रहर ऊतरचौ, दिवला साख भरेह। घण जीती पिय हारियौ, वेल्हा मिळण करेह।—अज्ञात

२. समय का मान विशेष।

३. समय।

रू०भे०—पहर, पहुर, पहोर, पहौर, पुर, पुहर, पुहरि, पुहरी, पूहर, पोर, पो'र, पोहर, पोहोर, पोहौर, पौ'र, पौहर, प्रह।

प्रहरण-स० पु० [सं० प्रहरणम्] १. अस्त्र-शस्त्र, आयुध, हथियार।

उ०—इसड़ौ अमोघउपाइ विचारि कपट रै प्रपंच बांणियां री बरात वणाइ बाजियां रै बदळै रथ छकड़ा जुताइ किताक प्रवहणा में प्रहरण छिपाइ कुंकुम रा रंग में गरक दुकूळ कीधां दूजी दिसा रै मारग मडोउर पूगिया।—वं. भा.

२. आक्रमण, हमला।

३. प्रहार, चोट।

४. युद्ध। (अ. मा., ह. नां., मा.)

प्रहरी-सं० पु० [स० प्रहरिन्] १. पहरा देने वाला, चौकीदार।

२. घंटा बजाने वाला।

रू०भे०—पहरी, पहरु, पहरू, पहिरी, पाहरी, पाहरु, पाहरू।

अल्पा०—पहरवौ।

प्रहळाद-सं० पु० [स० प्रह्लाद:] १. भक्त शिरोमणि प्रह्लाद जो असुर-राज हिरण्यकशिपु के पुत्र थे।

उ०—१. साहरी ज्हाज उळझी अथग सिंधु में, कठै अवलंब नह रह्यौ क्यूं ही। थंभ नै फाड़ प्रहळाद हरि थभियौ, उबारचौ अबु में अब यूं ही।—बाला बक्स पाल्हावत

उ०—२. अहो-निस कागभुसुंड आराध, पढ़ै तो नांम सदा प्रहळाद।
—ह. र.

२. अत्यन्त आनंद, प्रसन्नता, हर्ष।

रू० भे०—पहळाज, पहळाद, पहिळाद, पहिळादि, पहिळादौ, पिहळाज, पिहळाद पेहळाद, पैळाद, पैहळाद, प्रळाद, प्रह्माद, प्रल्हाद, पैंळाद।

प्रळादगुर-स० पु० [स० प्रह्लादगुरु] विष्णु। (डिं. नां. मा.)

प्रहसत, प्रहस्त-सं० पु० [स० प्रहस्त:] रावण के अमात्य एव सेना पति का नाम।

प्रहा-स० पु० [?] धनुष। (अ मा.)

प्रहार-सं० पु० [स० प्रहार:] आघात, वार, चोट। उ०—खाग प्रहार छाग हुइ खडत।—मे. म.

रू० भे०—पहार, पाहार, प्रहारि, प्रहारी, प्राहार।

प्रहारक-वि० [सं० प्रहारक:] १. प्रहार करने वाला, चोट मारने वाला।

२. मारने वाला।

प्रहारण-स० पु० [स० प्रहारणं] प्रहार, वार, चोट।

उ०—घीरण रा पांणी रा प्रहारण हूं वीरमदेव रौ मुंड अछंट उडि पड़ियौ।—व. भा.

प्रहारणौ-वि० [स०प्रहारणम्+रा०प्र०ओ] (स्त्री०प्रहारणी) १. प्रहार करने वाला वार करने वाला।

२. मारने वाला।

रू० भे०—पाहारणौ ।

प्रहारणौ, प्रहारबौ—क्रि०स० [सं०प्रहारणम्] १. मारना, संहार करना ।
उ०—१. लोक लाजि तजि हल्लतौ, प्रभु जेणि **प्रहारे**। उण सूं तौ मांहे अधिक, करसी करतारे ।—सू. प्र.
उ०—भुजां धारियौ न खाग तैं बाकारियौ न बाघ भूरौ, करग्गां **प्रहारियौ** दगा सूं आंण कूंत । ऐकाएक लाखां बातां हारियौ धरम्म 'अजा', हींदूनाथ मारियौ विसास घात हूंत ।—जीवौ भादौ

प्रहारणहार, हारौ (हारी), प्रहारणियौ—वि० ।
प्रहारिश्रोड़ौ, प्रहारियोड़ौ, प्रहारयोड़ौ—भू० का० कृ० ।
प्रहारीजणौ, प्रहारीजबौ—कर्म वा० ।
पहारणौ, पहारबौ पाहारणौ, पाहारबौ—रू० भे० ।

प्रहारि, प्रहारी—वि० [सं० प्रहार:+रा०प्र०ई] १. प्रहार करने वाला, मारने वाला ।
२. दूर करने वाला, मिटाने वाला । उ०—पर-उपकारी पर दुख **प्रहारी** ।—रा. रू.
३. देखो 'प्रहार' (रू भे.)
उ०—प्रिसणां दियंत धारां **प्रहारि** ।—गु. रू. व.

प्रहास—सं० पु० [सं० प्रहास:] १. अट्टहास ।
२. प्रहसन, हमी, मखौल ।
३. शिव ।
४. स्वामी-कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम ।
५. तलवार । (डिं. को.)
६. प्रथम व तृतीय चरण में बीस बीस मात्राएँ तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में अंत गुरु सहित सत्रह सत्रह मात्रा का मात्रिक छंद (गीत) विशेष । (र. रू.)
वि० वि०—प्रथम द्वाले के प्रथम चरण में अनिवार्य रूप से तेईस मात्राएँ होती हैं तथा रघुवर जस प्रकास के अनुसार तुकांत में अंत एक गुरु के स्थान पर दो गुरु लाने का भी उल्लेख है ।
७. प्रत्येक चरण में जगण-सगण नगण और रगण सहित १२ वर्णन और १६ मात्राओ का छंद विशेष । (ल. पि.)

प्रहुंची—देखो 'पुणची' (रू. भे.)

प्रहेति—सं० पु० [सं०] एक राक्षस का नाम जो हेति नामक राक्षक का भाई था ।

प्रहेलि, प्रहेलिका—देखो 'पहेली' (रू. भे.)

प्रह्लाद—देखो प्रहळाद' (रू. भे.)
उ०—जन **प्रह्लाद** बहोत दुख पाया, छूटि नांही ताळी । तब हरि नरहरि रूप बणाया, जन प्रतग्या पाळी ।—ह. पु. वा.

प्रांखणौ, प्रांखबौ—क्रि ०स० [सं० पोषणम् या पर+अंकन=उत्कृष्टता से जानकारी करना] दुल्हे या दुलहिन को स्त्रियो द्वारा तोरण द्वार पर बधाना, स्वागत करना । उ०—तठा उपरांत करिनै राजांन कुमार री जांन घणै आडंबर सूं हाथी घोड़ा वहिल सुखासण रथ पायक रा वणाव कियां थकां बघेल जानिया रै साथ लियां घणै मोती जड़ाव जरकसी सूं लड़ालंब हुआ छै। घणै सोघे घणी केसरि अगरचै सूं गरकाब कियां थका घोड़ा रजपूतां रै घूमरै सूं आइ तोरण बादिश्रो छै। तठै आगै वखांणी तिण भांति री राय-जादी गोरगीआं सोळ' सिणगार ठविया वाळ वाळ मोती सारियां तोरण कळस बंदावै छै। मोतियै वधावै छै। **प्रांखै** छै।
—रा. सा. सं.

प्रांखणहार, हारौ (हारी), प्रांखणियौ—वि० ।
प्रांखिश्रोड़ौ, प्रांखियोड़ौ, प्रांख्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
प्रांखीजणौ, प्रांखीजबौ—कर्म वा० ।
परांखणौ, परांखबौ, पांखणौ, पांखबौ, पूंकणौ, पूंकबौ, पूंखणौ, पूंखबौ, पोखणौ, पोखबौ—रू० भे० ।

प्रांगण—स०पु० [सं० प्राङ्गणम्] मकान के मध्य का या सामने का खुला हुआ भाग, आंगन, सहन । उ०—कही सूं खड़ो कपड़ो तीर काही महम्मा घणी **प्रांगणै** घेन मांही ।—ना. द.

प्रांचणा—देखो 'पांचणा' (रू. भे.)
उ०—पछै ठाकुरां दातण सिनांन कर नांम ले सीस-खुरा मंगाया । आपनै छोकरी नूं कह्यौ—"**प्रांचणां** री चरू दै।" ताहरां छोकरी कह्यौ—"चरू सौं कासूं करसौ?" कह्यौ—"चरू मांहे **प्रांचणां** छै।" ताहरा छोकरी कह्यौ—"**प्रांचणा** सिगळांही रौ सिरावण कियौ।" ताहरां सारा ही ठाकुर अत्रोला रह्या ।—नैणसी

प्रांचाळौ—देखो 'पौचाळौ' (रू. भे.)
उ०—'अजबौ' 'ऊदौ' 'हठी' उताळा । 'पातल' रा आया **प्रांचाळा** ।
—रा. रू.

प्रांची—देखो 'पुणची' (रू. भे.)
उ०—हसत-कमळ जावक मेंहदी रै रंग लागां थकां । चोळा फळी-सी आंगुळी । गोरै प्रांचै **प्रांचीआं** वणि रही छै । छाप मूंदड़ी नवग्रही जड़ाव वणियौ छै ।—रा. सा. सं.

प्रांचौ—देखो 'पुणचौ' (रू. भे.)
उ०—हसत-कमळ जावक मेंहदी रै रंग लागां थकां । चोळा फळी-सी आंगुळी गोरै **प्रांचै** प्रांचीआं वणि रही छै ।—रा. सा. सं.

प्रांछ—देखो 'परांत' (रू. भे)
उ०—घर रौ घणी खेत बाढ़े ते तौ **प्रांछ** री प्राछ उतारै। अनै चोर आय पड़ै तौ बाटावरड़ौ करै। एक कठा सूं तोड़ै एक कठा सूं तोड़ै। ज्यूं थे घर रा घणी होय न्याय री एक चरचा पार पूगाय 'दूजी करो' ।—भि. द्र.

प्रांण—सं०पु० [सं० प्राण:] १. श्वास, श्वास-प्रश्वास, सांस ।
२. हृदय में रहने वाला वायु, प्राण वायु । (अमरत)

उ०—हर हर करतो हरख कर, आळस म कर अयांण।
जिण पांणी सूं पिंड रच, पवन बिलग्गो प्रांण।
—ह. र.

३. शरीर की वह हवा जिसके बल पर वह जीवित कहलाता है, जीवनीय शक्ति। उ०—१. गात संवारण में गमे, ऊमर काय अजांण। आखर प्रांण प्रमूक औ, खाख हुसी मळ खांण।
—बां. दा.

उ०—२. जाया रजपूतांणियां, बीरत दीधी वेह। प्रांण दियै पांणी पुरण, जावा न दियै जेह।—बां. दा.

मुहा०—१. प्रांण आणी—घबराहट या भय कम होना, चित कुछ ठिकाने होना, होस हवास ठीक होना, चैन पडना। २. प्रांण उडणा—बहुत घबराहट होना, हक्का बक्का होना, होस हवास जाता रहना, मरना, अवसान होना। ३. प्राण कंठ में आणी, प्रांण कंठ में होणी—मरणासन्न होना। ४. प्रांण खाणी—बहुत तंग करना, बहुत सताना, बहुत कष्ट देना। ५. प्रांण गमणा—मरना, अवसान होना। ६. प्रांण गमाणी—देखो 'प्रांण दैणी'। ७. प्रांण गळै आणी, प्राण गळै में आणी—देखो 'प्रांण मुंडै आणी'। ८. प्रांण घालणी—जीवन दान देना, जीवित सा बनाना, जीवन संचार करना। ९. प्रांण छूटणी—मरना, अवसान होना। १०. प्रांण छोडणी—मरजाना, मरना। ११. प्रांण छोडाणी—जानछुड़ाना, पीछा छुडाना। १२. प्रांण जाणी—मरजाना, मोहित होना। १३. प्रांण डाळणी—देखो 'प्राणघालणी'। १४. प्रांण तजणी—देखो 'प्रांण छोडणी'। १५. प्रांण त्यागणी—देखो 'प्रांण छोडणी'। १६. प्राण दैणी—बहुत प्यार करना, अधिक चाहना, मरजाना। १७. प्रांण निकळणी—मरजाना, मरना। १८. प्राण निकाळणी—मार देना, मारना। १९. प्रांण पंखेरू उडणी—मरजाना, अवसान होना। २०. प्रांण पयांण करणी—देखो 'प्रांण पखेरू उडणी'। २१. प्रांण बचणी—जीवित रहना, बच जाना। २२. प्राण बचाणी—पीछा छोडाना, जीवित रह जाना। २३. प्रांण मुंडै आणी—देखो 'प्राण कंठ में आंणी'। २४. प्रांण मूठी में राखणी—देखो 'प्रांण हथाळी में राखणी'। २५. प्रांण में प्रांण आणी—भय दूर होना, होस हवास आना। २६. प्राण राखणी—मौत से बचना। २७. प्रांण लैणी—मार डालना। २८. प्रांण लेनै भागणी—जान बचाकर भाग जाना, जैसे तैसे पीछा छुडाकर भाग जाना, बच निकलना। २९. प्रांण हथाळी में राखणी—मृत्यु के लिये तैयार रहना। ३०. प्राण हरणी—देखो 'प्रांण लैणी'। ३१. प्रांण हारणी—पंचत्व में मिलना। ३२. प्रांणां पर आ पड़णी—जान जोखम में होना, खतरे में पड़ना। ३३. प्रांणां पर बाजी खेलणी—जीवन को खतरे में डालना। ३४. प्रांणां पर बीतणी—जीवन संकट में पड़ना, जान जोखिम में होना। ३५. प्रांणां री बाजी लगाणी—सर्वस्व न्योछावर कर देना, बलिदान होना। ३६. प्रांणां री सचार होणी—मरणासन्न प्रांणी का जीवित होना, जान में जान आना। ३७. प्रांणा सूं खेलणी—मृत्यु की परवाह न करना। ३८. प्रांणा सूं हाथ धोवणा—मरजाना।

४. बल, शक्ति, पौरुष। उ०—उदियाभांण प्रांण अणमायो, ओ फिर हद न जवन सिर आयो।—रा. रू.

उ०—२. बाजराज व्रत बेब, करै नटराज तणी कळ। गजांराज घण गरज, गाज सुरराज्ज मदग्गळ। रूप भूप रतिराज, प्रांण म्रगराज प्रकासण। कौरवराज घन करण,विमळ सुरराज विलासण।
—सू. प्र.

उ०—३. पछै यां विचारियौ—म्हांसूं धरती छूटी। सबळी ठोड आंणी। नै म्हांरै प्रांण तौ धरती वळण री नहीं है।
—नैणसी

मुहा०—प्रांण पण सूं जूटणी—पूर्ण बल सहित कार्य में जुट जाना।

५. पवन, वायु।

६. जीव या आत्मा। उ०—एक दिन राजा रै अरथ कोई तपस्वीन महारसायण रौ निदान एक अपूरव स्वादु फळ दीधौ। सो राजा नै आप रा प्रांण रो औसध अनंगसेना जांणि अवरोध जाइ रांणी रै अरथ निवेदन कीधौ।
—वं. भा.

७. प्राण के समान प्रिय कोई व्यक्ति या पदार्थ।

८. मित्र। (अ. मा.)

९. प्रेम पात्र, माशूक।

१०. पाचन शक्ति।

११. ब्रह्मा।

१२. विष्णु।

१३. ब्रह्मं।

१४. इन्द्रिय।

१५. समय का मान विशेष।

१६. गंधरस, बोल। (डिं. को.)

१७. प्रयाण। उ०—दिल भरि दिल फेर कहि, स्युं तेह नौ अहिनाण। सांयात्रिक जन मारिवा, तुं गयो करि नै प्रांण।
—वि. कु.

१८. पांच की संख्या । ❊ (डिं. को.)
१९. दस की संख्या । ❊ (डिं. को.)
२०. देखो 'प्रांणी' (रू. भे.)

उ०—करे कूच इतकाद, साह दरगाह सपत्तौ । गुदरायौ घर गुंझ, महासुख सुंझ सुमत्तौ । पिण भावी अति प्रबळ, सकळ वस प्रांण असेखा । हुग्रणहार सिध करै, वार न घरै विध रेखा ।—रा. रू.

रू० भे०—परांण, प्रांन ।

यौ०—प्राणग्रधार, प्राणाधार, प्रांणनाथ, प्रांणपति, प्रांणप्रिय ।

अल्पा०—प्रांणिय, प्राणियउ, प्राणियौ ।

प्रांणग्रधार, प्रांणग्राधार—देखो 'प्राणाधार' (रू. भे.)

उ०—जळथळ थळजळ हुइ रह्यउ, बोलइ मोर किंगार । स्रावण दूभर है सखी, किहा मुझ प्रांणग्रधार ।—ढो. मा.

प्रांणइस्ट—स० पु० यौ० [स० प्राणेष्ट] १. दोस्त, मित्र । (ह.नां.मा.)
२. पति ।

प्रांणकस्ट—स० पु० यौ० [स० प्राणकष्ट] मरते या प्राण निकलते समय होने वाला कष्ट ।

प्रांणगुर—स० पु० यौ० [स० प्राण+गुरु] बड़ा बलवान । उ०—ग्रांनन राम रांम सुण ग्राणै, ग्रतर ग्रांणै रांम उर । भोयग मडळ लोह भणावण, गोरिवै 'कुंभा' प्रांणगुर ।—महारांणा 'कुंभा' रौ गीत

प्रांणघात—सं० पु० यौ० [सं० प्राणघातः] १. वध, हत्या ।
२. ग्रात्मघात ।

प्रांणघातक—वि० यौ० [सं० प्राणघातक] मार डालने वाला, प्रांण ले लेने वाला ।

प्रांणघाती—वि० यौ० [स० प्राणघातिन्] १. ग्रात्महत्या करने वाला ।
२. देखो 'प्राणघातक' ।

प्रांणचड—वि० [सं० प्राणचड] वीर बहादुर ?

उ०—चंद्रभांण 'मुकन' सुत प्रांणचंड, 'पीथलौ' वेस चडतां प्रचंड ।
—रा.रू.

प्रांणजिहांन—सं०पु०यौ० [सं० प्राण+फा० जहान] वायु, पवन ।
(ग्र. मा.)

प्रांणत्याग—स० पु० यौ० [सं० प्राणत्यागः] शरीर से प्राण का निकल जाना, मर जाना ।

प्रांणदड—स०पु०यौ० [स० प्राणदडः] कोई गम्भीर ग्रपराध के लिये दी जाने वाली मौत की सजा ।

प्रांणदांन—स० पु० यौ० [सं० प्राणदान] १. किसी के प्राणों की रक्षा करना ।
२. ग्रपने प्राणो का किसी शुभ कार्य के लिये त्याग करना ।
३. युद्ध । (ग्र. मा.)

प्रांणदा—सं० स्त्री० [सं० प्राणदा] हरीतकी, हर्रे । (ग्र.मा.,नां.मा.)

प्रांणदाता—वि०यौ० [सं०प्राणदाता] प्राणों का संचार करने वाला,जीवित रखने वाला ।

प्रांणधन—सं० पु० यौ० [सं० प्राणधनं] १. वह जो किसी के प्राणों के समान प्रिय हो ।
२. पति ।

प्रांणधार—वि० यौ० [सं० प्राणधारः] जो प्राण धारण किए हुए हो, जीवित ।

प्रांणधारण—सं० पु० यौ० [सं० प्राणधारणं] १. शिव । (ग्र. मा.)
२. प्राणों को पोषित या उनकी रक्षा करने का भाव ।

प्रांणधारी—वि० यौ० [सं० प्राणधारिन्] प्राणी, जीव । उ०—हजारां ही खेत सोधण रै समय सचेत ग्रचेत प्रांणधारी पाया तिके सरव ही 'ग्रौरंग' रा आदेस रूप ग्रनळ में दहिया ।—वं. भा.

प्रांणनांम—सं० पु० यौ० [सं० प्राणनाम] हंस । (ग्र. मा.)

प्रांणनाथ—सं० पु० यौ० [सं० प्राणनाथः] १. वह जो प्राणो का स्वामी हो ग्रर्थात् शरीर का स्वामी हो, स्वामी, मालिक । उ०—ग्रटे सौध ग्रवरोध ग्रचांणक, बोध मोद विसराए । प्रांणनाथ हा ! नाथ जोधपुर, गौख सौध गणणाए ।—ऊ. का.
२. पति, खाविंद ।

प्रांणनाथी—सं० पु० यौ० [सं० प्राणनाथः+रा० प्रा० ई] १. स्वामी 'प्रांणनाथ' का सम्प्रदाय । २. इस सम्प्रदाय का व्यक्ति ।

प्रांणनास—सं० पु० यौ० [सं० प्राणनाशः] प्राणों का नष्ट होना, मृत्यु, मौत ।

प्रांणनासक—वि० यौ० [सं० प्राणनाशक] प्राणों का नाश करने वाला, मार डालने वाला ।

प्रांणपत, प्रांणपति, प्रांणपती—सं०पु०यौ० [सं० प्राणपतिः] १. स्वामी, मालिक । २. पति, खाविंद । ३. ग्रात्मा । ४. वैद्य ।

प्रांणपूर—वि० यौ० [सं० प्राणपूर्ण] पूर्ण शक्तिशाली, बलवान ।

उ०—दइवाण रुद्र एकादसां, प्राणपूर पति धरम पण । कविराय धीर कवि 'मंछ' कह, जय जय स्रीरघुवीर जण ।—र. रू.

प्रांणप्यारौ—वि० यौ० [सं० प्राणप्रियः] परम प्रिय, प्रिय ।

उ०—ढूंढया वन वागं सारा री, मिल्या नही प्रांणप्यारा री ।
—मीरां

सं० पु० यौ०—१. परम प्रिय व्यक्ति । २. पति, खाविंद ।

प्रांणप्रतिस्टा, प्रांणप्रतिस्ठा—स०स्त्री०यौ० [सं० प्राणप्रतिष्ठा] १. प्राण धारण कराना ।
२. हिंदू धर्मशास्त्रों के अनुसार किसी नई बनी हुई देव मूर्ति को देव मन्दिर में स्थापित करते समय मंत्रो द्वारा उसमे प्राण का ग्रारोप करना ।

प्रांणप्रद–वि० यौ० [सं० प्राणप्रदः] १. प्राणदाता।
२. स्वास्थ्य-वर्द्धक।

प्रांणप्रिय–वि० यौ० [सं० प्राणप्रियः] परम प्रिय, प्रियतम।

प्रांणब्रस्टीक–स०पु०यौ० [सं० वृष्टि प्राणक अथवा वृष्टिक प्राण] मयूर, मोर। (ह.नां.मा.)

प्रांणमयकोस–स० पु० यौ० [सं० प्राणमयकोश] पांच कर्मेन्द्रिय और पांच प्राणों के समूह का नाम। (वेदांत)

प्रांणयात्रा–सं०स्त्री०यौ० [सं० प्राणयात्रा] १. श्वास प्रश्वास के आने जाने की क्रिया।
२. वे व्यापार या क्रियाएँ जिनसे मनुष्य जीवित रहे।
३. आजीविका।

प्रांणयोनि–स० पु० यौ० [सं० प्राणयोनिः] १. परमेश्वर।
२. वायु, हवा।

प्रांणवल्लभ–वि० यौ० [सं० प्राणवल्लभ] (स्त्री० प्राणवल्लभा) वह जो बहुत प्यारा हो, अत्यन्त प्यारा।
स० पु० यौ०—पति, खाविंद, प्रियतम।

प्रांणवांन–वि०यौ० [सं० प्राणवान] वह जिसमें प्राण हो, प्राणों से युक्त।
सं० पु० यौ०—जीव, प्राणी।

प्रांणवायु–सं०पु०यौ० [सं० प्राणवायुः] १. प्राण। २. जीव।
३. वातावरण में रहने वाला (पाया जाने वाला) एक प्रसिद्ध गैस जिसमें किसी प्रकार की गंध वर्ण या स्वाद नहीं होता है और जो प्राणियों, वनस्पतियों आदि को जीवित रखने का आवश्यक तत्त्व है।

प्रांणसंकट–सं० पु० यौ० [सं० प्राणसंकट] जान की जोखिम, प्राणों पर आने वाला संकट।

प्रांणसंतोख–स०पु०यौ० [सं० प्राणसंतोषः] हरीत की, हर्रे। (अ. मा.)

प्रांणसंदेह–सं०पु०यौ० [स० प्राणसंदेहः] जीवन की आशंका, प्राण जाने का भय।

प्रांणसरीर–सं०पु०यौ० [सं० प्राणशरीर] १. वह सूक्ष्म शरीर जो मनोमय विज्ञान और क्रिया का कारण माना गया है। (उपनिषद)
२. ईश्वर, परमेश्वर।

प्रांणहर–वि०यौ० [सं० प्राणहर] जान से मार डालने वाला, प्राण लेने वाला।
सं०पु०यौ०—यमराज। (अ. मा.)

प्रांणहरण–सं०पु०यौ० [सं० प्राणहरण] यमराज। (ना. मा.)

प्रांणहरणी (नी)–सं० स्त्री० यौ० [सं०प्राणहरण+रा०प्र०ई] १. वह अवस्था जिसमें प्राण जाने का डर हो।
२. मृत्यु, मौत।

प्रांणांत–सं० पु० यौ० [सं० प्राणान्तः] प्राणों का होने वाला अंत या नाश, मृत्यु।

प्रांणांतक–वि०यौ० [सं० प्राणान्तक] १. प्राणों का अन्त करने वाला, प्राण लेने वाला, घातक।
२. मरने जैसा कष्ट देने वाला।

प्रांणांघात–सं० पु० यौ० [सं० प्राणः+आघात] वध, हत्या।

प्रांणातिपात–सं० पु० यौ० [सं०] जान से मार डालना, जीव हिंसा। (जैन)

प्रांणातमा–सं०पु०यौ० [सं० प्राणात्मा] जीवात्मा, प्राण।

प्रांणाधार–वि०यौ० [सं० प्राणाधार] जिसके कारण प्राण रह सके, अत्यंत प्रिय, प्यारा।
सं० पु० यौ०—१. प्रेम-पात्र। २. स्त्री का पति।
उ०—अंग में नहीं मावै ढोला कांचळी हो जी। हिवड़े नहीं हो ढोला, हिवडे नही मावै हार, अब घर पधारो नी हो म्हारा प्रांणाधार, ओ जी।—लो. गी.
रू० भे०—प्रांणअधार प्राणआधार।

प्रांणायांम–सं०पु०यौ० [सं० प्राणायामः] योग शास्त्रानुसार योग के आठ अंगो में से चौथा अंग जिस के अनुसार मन को शान्त और स्थिर रखने के लिए श्वास और प्रश्वास की वायु को नियंत्रित और नियमित रूप से अंदर खींचा और बाहर निकाला जाता है।
उ०—जैसें जोगेस्वरां कै माया का पटळ दूरि वै छै। तैसें ही तौ रात्रि दूरि हुई छै। अर प्रांणायांम योगेस्वरां का इहै जोति प्रकास हुओ।—वेलि टी.

प्रांणायांमी–वि० यौ० [सं० प्राणायामिन्] १. प्राणायाम संबंधी।
२. प्राणायाम करने वाला।

प्रांणासण(न)–सं० पु० यौ० [सं० प्राणासन] १. योग के चौरासी आसनों के अन्तर्गत एक आसन विशेष जिसमें दाहिने पैर को बायें पैर की जघा के मूल में रख कर बायें पैर की जघा और घुटने का मध्य भाग नीचे नमाये हुए बायें कधे पर रखकर उसी पांव का पजा भूमि पर रखा जाता है। तत्पश्चात् बायें हाथ को ठेउनी से मोड़ कर उसका पजा भी भूमि पर रखा जाता है तथा दाहिने हाथ को ठेहनी मोड़कर इस का पंजा घुटने पर रखा जाता है। इससे प्राण वायु का अधो-भाग में आकर्षण होता है।
२. तांत्रिक साधना में एक प्रकार का आसन विशेष।

प्रांणाहुति–सं० स्त्री० यौ० [सं० प्राणाहुति] पांच ग्रासों के रूप में पांच प्राणों को दी जाने वाली आहुति।

प्रांणि—देखो 'प्राणी' (रू. भे.)

प्रांणिमंडळ—देखो 'प्रांणीमडळ' (रू. भे.)

प्राणिय, प्रांणियउ—१. देखो 'प्रांणी' (अल्पा., रू भे.)

उ०—प्रभाकर प्रांणिय मातर प्रांण, विभाकर वांणिय ते निरवांण।
—ऊ. का.

२. देखो 'प्रांण' (अल्पा., रू. भे)

उ०—ढाढ़ी जे प्रीतम मिळइ, यूं कहि दाखवियाह। पंजर नहिं छइ प्रांणियउ, थां दिस झळ रहियाह।—ढो. मा.

प्रांणियौ—१. देखो 'प्रांणी' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—१. समयसुंदर कहइ, पुण्य कर प्रांणिया, पुण्य थी द्रव्य कोटां न कोटी।—स. कु.

२. देखो 'प्रांण' (अल्पा., रू. भे.)

प्रांणी—वि० [सं० प्राणिन्] पांचों प्राणों को धारण करने वाला, जिसमें पांचों प्राणों का निवास हो, जीव-धारी, प्राण-धारी।

उ०—१. जग में बांछै जीवणौ, सब प्रांणी समुदाय। हटकर नर उण नूं हरे, जुलम कह्यौ नहि जाय।—बां. दा.

उ०—२. भैस्यां रिड़कै रिड़ गायां रंभावै। प्रांणी तिरसातुर पांणी कुण पावै।—ऊ. का.

सं० पु०—१. मनुष्य।

२. व्यक्ति।

३. पुरुष की दृष्टि से उसकी स्त्री और स्त्री की दृष्टि से उसका पति।

रू० भे०–परांणी, पिरांणी, प्रांणि, प्रांनी।

अल्पा०—प्रांणिय, प्रांणियउ, प्रांणियौ, प्रांणीड़ौ।

प्रांणीड़ौ—देखो 'प्रांणी' (अल्पा., रू. भे)

प्रांणीमंडळ—स० पु० [सं० प्राणिमण्डल] जल, स्थल और आकाश का उतना भाग जिसमें कीड़े, मकोड़े, जीव-जन्तु, वनस्पतियां आदि पायी जाती हैं।

रू० भे०—प्राणिमंडळ।

प्रांणेय—स० पु० [सं० प्रणयी] पति। (ह. नां. मा.)

प्रांणेस—स० पु० [सं० प्राणेश] १. प्राणों का स्वामी।

२. पति, खाविंद। (अ. मा., ह. नां. मा.)

उ०—कमळनायण कमळाकर, कमळा प्रांणेस कमळकर फेसौ।
—र. ज. प्र.

प्रांणेसुर, प्रांणेस्वर—सं० पु० [सं० प्राणेश्वर] १. प्राणों का स्वामी, मालिक। उ०—प्रांणेस्वर जो पंचमुख, भणै पंचमुख वाह।
—बां. दा.

२. परम प्रिय व्यक्ति।

३. पति, खाविंद।

प्रांत—सं० पु० [सं० प्रांतः] १. किसी देश का एक भाग विशेष।

उ०—जरै पातसाह दारा रै साथ जोधपुर रो अधीस राठोड़ जसवंत, च्यारि अनुजां सहित कोटा रो अधीस हाडो 'मुकुंद' माळव देस रा पच्छिम प्रांत रो पुहवीस रतळांम नगर रो बसावणहार राठोड़ रतनसिंह।—वं. भा.

२. सीमा।

३. किनारा, छोर।

प्रांन—देखो 'प्रांण' (रू. भे.)

उ०—जावै न मदीनै प्रांन जाय।—ऊ. का.

प्रांनी—देखो 'प्रांणी' (रू. भे.)

उ०—प्रीति करै तीरथ रै ऊपर, मौज दियै मनमांनी। तक्यौ न मनहर पग जिह तांई, पार न उतरै प्रांनी।—र. रू.

प्रांमणड़ौ—देखो 'पांमणौ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—करतब नहं राजी क्रपण, राजी रूपैयांह। कडवौ दास कुटंवियां, प्रांमणड़ां पइयांह।—बां. दा.

प्रांमणौ—देखो 'पांमणौ' (रू. भे)

प्रांमणौ, प्रांमबौ—देखो 'पाणौ, पाबौ' (रू. भे.)

उ०—इण अवसर मत आळसै, ईसर आखै एम। प्रांणी हररस प्रांमियां, जनम सफळ थयै जेम।—ह. र.

प्रांमणहार, हारौ (हारी), प्रांमणियौ – वि०।

प्रांमिग्रोड़ौ, प्रांमियोड़ौ, प्रांम्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रांमीजणौ, प्रांमीजबौ—कर्म वा०।

प्रांमती—वि० [सं० प्र+आप्] प्राप्त करने वाला। उ०—कांम जती सूर सोम भूपतीस सुती काहा, विप्र रुद्र तती अन हथी जीप वार। मांणीगार छरती प्रांमती जो सुपंगी काहा, सोहियौ क्रामंती रायजादां रौ सींगार।—कुंवर सनमानसिंघ हाडा रौ गीत

प्रांमियोड़ौ—देखो 'पायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रांमियोड़ी)

प्रांसु—वि० [सं० प्रांशु] ऊंचा, लंबा, बड़ा। (अ. मा.)

सं० पु०—लंबे डील-डौल का आदमी।

प्रांहुणौ, प्रांहुणौ—देखो 'पांमणौ' (रू. भे.)

उ०—राव जोधै सरीखो प्रांहुणौ अठै कद-कद आवसी।—नैणसी

प्राईवेट—सं० पु० [अं०] १. निजी, तनु।

२. गुप्त।

प्राईवेटसेक्रेट्री—सं० पु० यौ० [अं०] निजी सचिव।

प्राक्रम—देखो 'पराक्रम' (रू. भे.)

उ०—प्राक्रम मुदगर नर प्रबळ, बळ दाखै बळवंत। लघु बाळक करळावतां, हंसै न कौतस संत।—मा. वचनिका

प्राक्रमी—१. देखो 'पराक्रम' (रू. भे.)

उ०—परभुंइ पस्सरी प्रघट प्राक्रमी जी खत्रवट वधि खरी वासी खग वासै जी।—ल. पि.

२. देखो 'पराक्रमी' (रू. भे)

प्राकरत—देखो 'प्राक्रत' (रू. भे.)

प्राकांम, प्राकांमिया—सं० स्त्री० [सं० प्राकाम्यं] आठ प्रकार की सिद्धियों में से एक। (अ.मा.,नां.मा.,ह.नां.मा.)

प्राकार—सं० पु० [सं०] १. किसी स्थान या इमारत के चारों ओर की दीवार, चहार दीवारी।

उ०—१. जिकण छतरी रौ प्रारंभ लगाई उण ही रौ घाटौ (घांटौ) लांघि करउर नगर रौ घेरौ लगाइ प्राकार रै प्रमांण बरूथ रौ जाळ जड़ियौ।—वं. भा.

उ०—२. जिकै-जिकै ही अहकार रै ऊफांण प्राकार रै कंगुरै-कंगुरै होय गढ़ रा सिपाहां पाछा ठेलिया।—वं. भा.

२. गढ़, किला। (अ.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—जठै भीम रा सिपाहां तोरण रै बाहिर आया जिकै राजा सहित प्राकार में प्रविस्ट कीधौ।—वं. भा.

३. देखो 'प्रकार' (रू. भे.)

प्राकिरत—देखो 'प्राक्रत' (रू. भे.)

प्राक्कथन—सं० पु० [सं०] १. पहिले कही हुई बात।

२. प्रस्तावना (पुस्तक)।

प्राक्रत—वि० [सं०प्राकृत] १. प्रकृति संबंधी, प्रकृति का।

२. असली, स्वाभाविक, अपरिवर्तित, असंशोध्य।

३. मामूली, साधारण।

४. अशिक्षित, अनपढ़, गंवार।

५. तुच्छ, क्षुद्र, या नीच।

सं० स्त्री० [सं० प्राकृतम्] १. बोल चाल की भाषा जिसका प्रचार किसी विशिष्ट क्षेत्र या प्रदेश में रहा हो।

उ०—गोरी नदन वीनवूं, ब्रह्म सुता सरसत्ति। सरस बंध प्राक्रत कवूं, द्यउ मुझ निरमल मत्ति।—का.दे.प्र.

२. एक प्राचीन भाषा जिसका प्रयोग प्राचीन भारत में संस्कृत नाटकों में स्त्रियों, सेवकों, साधारण व्यक्तियो के मुख से कराया जाता था।

उ०—भासा ब्रज मारू सुर भासा, भासा प्राक्रत जांन भर। पायो रचण रूपगां पेंडो, 'मेहाही' थारी महर।—बां.दा.

३. बोल-चाल की प्रांतीय भाषा जिसका निकास संस्कृत से हुआ हो या जो संस्कृत शब्दों के अपभ्रंश रूपो में बनी हो।

मतान्तर से वह विशिष्ट भाषा जिसे भारत में प्राचीन आर्य बोलते थे एव जिसका संस्कार करके शिक्षित लोगो ने साहित्यिक रचना के लिए बाद मे संस्कृत नामकरण कर दिया।

(अ.मा.,नां.मा.)

४. पुरुषों की ७२ कलाओं में से एक कला।

रू० भे०—पराकरत, पराक्रत, प्राकरत, प्राकिरत।

प्राक्रतप्रळय—सं० पु० [सं० प्राकृतप्रलय] एक प्रकार का प्रलय जिसमें प्रकृति भी ब्रह्म या परमात्मा में लीन हो जाती है। (पुराण)

प्राक्रतबंध—सं० पु० [सं० प्राकृतबंध] जन साधारण में बोली जाने वाली भाषा का प्रबंध या काव्य। उ०—हठ कीधउ सुरतांणस्यूं, तास कथा संबंध। चाहूआंण गुण वरणवूं, पुहवीइ प्राक्रतबंध।

—कां. दे. प्र.

प्राक्रतिक—वि० [सं० प्राकृतिक] १. प्रकृति संबंधी, प्रकृति का।

२. प्रकृति से उत्पन्न, स्वाभाविक।

३. साधारण, मामूली।

रू० भे०—पराक्रति, पराक्रती।

प्राक्रम—देखो 'पराक्रम' (रू. भे)

उ०—१. हाथी रा माथा में हाथी रा दांत री दे. असुंड (हाथी रौ माथौ) फाड न्हांकियौ। उण वेळा हूं तौ पति रा प्राक्रम माथै बळीहारी जाऊं छू।—वी. स. टी.

उ०—२. महावीर री महिमा अपार, इण रौ किण हि न पायो है पार। जामवंत हनुमत रिझायौ, भूलो प्राक्रम याद दिरायौ।

—गी.रां.

प्राक्रमी—देखो 'पराक्रमी' (रू. भे.)

उ०—सो एकण कांनी हजार पांच फोज, एकण कांनी एक इकौ, इसौ प्राक्रमी पोरस छै।—रा. सा. स.

प्राक्रमीस—वि० [सं० पराक्रम+ईश] महान पराक्रमी, साहसी, वीर।

उ०—अेम गधवाह रै प्राक्रमीस वज्रअंगी, जेठी बीसबांह रै अनम्मी इंद्रजीत। बाका एकरगी बेहूं राहां रै वारै बदै, दूवौ छाताळ रै राजकूंवार उदीत।—कुंवर सनमांनसिंघ हाडा रौ गीत

प्राग—१. देखो 'प्रयाग' (रू. भे.)

२. देखो 'पराग (रू. भे.)

प्रागना—देखो 'प्रग्या' (रू. भे.)

प्रागभाव—सं० पु० [सं०] १. वैशेषिक-शास्त्र के अनुसार पांच प्रकार के अभावों में पहिला अभाव।

२. वह पदार्थ जिसका आदि न होकर अंत हो, अनादि, सांत पदार्थ।

प्रागवड़—देखो 'प्रयागवड़' (रू. भे.)

उ०—ऊगी झाखौ अरक, दिसा झाखी दरसाणी। भाखा पंथ भयाण, जाण कळपत कहांणी। गिरय परबत वन व्रख, अचळ चळ चाल अखंडै। उलकापात अछंट, पडै कोरण टह मडै। तिण समै कैळास सहर तणी, झळदकार पट झळीया प्रागवड़ सिवराज पड़े, मद भाग कव पंखीया।—साहिबौ सुरताणियौ

प्राग्ज्योतिस—सं० पु० [सं० प्राग्ज्योतिष] आसाम प्रदेशान्तर्गत काम रूप देश का प्राचीन नाम।

वि० वि०—महाभारत काल में यहां का राजा भगदत्त था। वह

चीन और किरात की सेना लेकर महाभारत संग्राम में सम्मिलित हुआ था।

प्रागज्योतिसपुर–सं० पु० [सं० प्राग्ज्योतिषपुर] प्राग्ज्योतिष देश की राजधानी का नाम जो आज-कल गोहाटी में है।

प्रागे–अव्य० [सं०] प्रातःकाल। उ०—महि सुद्द खट मास प्रात जळ मंजै, आप अपरम अरु जितइंद्री। प्रागे वेलि पढतां नित प्रति, श्री वंछित वर वंछित श्री।—वेलि

प्राग्य–सं० स्त्री० [सं० प्राज्ञ] १. बुद्धिमान, चतुर।
२. पंडित।
३. मूर्ख। (व्यंग)

प्राग्यन–सं० पु० [सं० प्राज्ञ] १. कवि। (अ. मा.)
२. देखो 'प्रग्या' (रू. भे) (अ. मा.)

प्राघळौ–वि० [सं० पुष्कल] १. उदारचित।
२. देखो 'परगळ' (अल्पा, रू. भे.)
(स्त्री० प्राघळी)

प्राघुणक–सं० पु० [सं० प्राघुणक:] मेहमान, अतिथि। उ०—अर वरात रा प्राघुणकां नूं महानस में बुलाय खटरस मय नांना व्यजनां रो आत पूरण त्रिप्ति चखावियौ।—वं. भा.

प्राचत—१. देखो 'प्राछत' (रू. भे.) (अ. मा.)
उ०—१. घर में मरियां सूं तौ अवस ही जमराज हीज नरकां में लेजासी, कारण कै सरीर सूं अनेक प्राचत वण आवै तिकै ओर कोई तरै सूं उतरै नहीं।—वी. स. टी.
उ०—२. जिण मुख जोवतां दुख प्राचत जावै। थरू आथ घर नवनिध थावै।—र. ज. प्र.

प्राचाळौ—देखो 'पौचाळौ' (रू. भे.)
उ०—अै धांवल रजवट उजवाळा, प्रब 'अजमाल' भिड़ण प्राचाळा।
—रा. रू.

प्राचि—देखो 'प्राची' (रू. भे)
उ०—कह्यौ स्व-कूच प्राचि को प्रतीचि पंथ तू परयौ।—ऊ. का.

प्राचिति—देखो 'प्राछत' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

प्राचिनविरह–स० पु० [सं० प्राचीनर्वाहस्] इंद्र। (ह. नां. मा.)
रू० भे०—प्राचीनब्रह, प्राचीनवरह, प्राचीनवरही, प्राचीनविरही, प्राचीनव्रह।

प्राची–सं० स्त्री० [सं०] पूर्व दिशा। उ०—पहली रो प्रस्थांन प्राची में ही करि खटपुर रा धणी गौड़ गजमल्ल नूं गंजि पाटण रा अधीस मोहिल मनोहरदास नूं मारि दो ही नैर आप रै वसीभूत किया।
—वं. भा.
रू० भे०—प्राचि।

प्राचीन–वि० [सं०] १. पूर्व दिशा का, पूर्व दिशा संबंधी।
२. पूर्व दिशा की ओर मुड़ा हुआ।
३. अगला, पूर्व कथित। उ०—प्राचीन करम सुभए, पुरखा पाइत उत्तमा महिला। कुळ-दीप पुत्र जिणयै, कुळ-घू विनै रूप सजुगता।
—गु. रू. वं.
४. पुरातन, पुराना।
रू० भे०—पराचीन, पुराचीन।

प्राचीनता–स० स्त्री० [सं०] प्राचीन होने का भाव, पुरानापन।
रू० भे०—पराचीनता।

प्राचीनव्रह, प्राचीनवरह, प्राचीनवरही, प्राचीनविरही, प्राचीनव्रह—देखो 'प्राचिनविरह' (रू. भे.) (अ.मा.,नां.मा.,ह.नां मा.)

प्राचीनावीत–स०पु० [स०प्राचीन+आवीतं] यज्ञोपवीत धारण करने का एक ढग विशेष जिसमें बाया हाथ यज्ञोपवीत से बाहर रहता है और यज्ञोपवीत दाहिने कंधे पर रहता है। यह उपवीत का विलोम है। इस प्रकार का यज्ञोपवीत पितृकार्य में धारण किया जाता है।
रू० भे०—पराचीनावीत।

प्राचीनावीती–सं०पु० [स०प्राचीनावीतिन्] प्राचीनवीत यज्ञोपवीत धारण करने वाला।

प्राचीप–स० पु० [स०] इंद्र।

प्राचीपति–सं० पु० [स० प्राचीपति:] इन्द्र।
रू० भे०—पराचीपति।

प्राचीर–स० पु० [स० प्राचीर] नगर या किले आदि की रक्षार्थ उसके चारों ओर बनाई हुई दीवार, चहारदीवारी, शहरपनाह।
रू० भे०—पराचीर।

प्राच्य–वि० [सं०] १. पूर्व दिशा संबंधी, पूर्व दिशा का, पूर्व का।
२. पुराना, प्राचीन।

प्राछत, प्राछत, प्राछित–स०पु० [सं०प्रायश्चित्यं, प्रायश्चित्यमर्हतीतितत]
१. कलंक, काला दाग, धब्बा। उ०—चढतां कळजुग जोर चढंनो, घण अमत जाचतो घणो। मिळतां समै रांण मेवाडा, टळियो प्राछत देह तणो।—महारांणा प्रताप रो गीत
२. पाप।
[सं० प्रायश्चित्त] ३. किये हुए दुष्कर्म या पाप के फल-भोग से बचने के लिए किया जानेवाला शास्त्र विहित कर्म जो प्राय: दण्ड के रूप में होता है। उ०—१. यां को धन तो परो दिरावो, अरु ब्रह्महित्या को प्राछत करावो।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात
उ०—२. पहिलइ दिन रे, सांझ समइ उपग्रहण महु। पडिलेही रे, रुड़ी परि राखइ बहु। पहिली रातइ रे, साधु समीपि आवी करी। राइ प्राछित रे, प्रथम करइ मन सवरी।—स. कु.
रू० भे०—पराचत, पराचित, पराचिति, पराचेत, पराछत, पराछित, पराछीत, पायचिछत, पायछत, पायछित, पिराचित, पिराछत, पिराछित, पिरास्चित, प्राचत, प्राचिति, प्रायचित, प्रायस्चित।

प्राजळ—सं० पु० [सं० प्र+जल] जल, पानी ।

उ०—प्राजळ चख वेगम असुपात, जमना जळ काजळ वहत जात ।
उण धार त्रिवेणी तीर आय, झूंझार हुवै सो मुगत पाय ।—वि.सं.

प्राजळणौ, प्राजळबौ— देखो 'प्रजळणौ, प्रजळबौ' (रू. भे.)

उ०—हठ नाळ पेठ बाजार हाठ, प्राजळै महल चदण कपाट ।
—वि. सं.

प्राजळणहार, हारौ (हारी), प्राजळणियौ— वि० ।
प्राजळिओड़ौ, प्राजळियोड़ौ, प्राजल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
प्राजळीजणौ, प्राजळीजबौ—भाव वा० ।

प्राजळियोड़ौ—देखो 'प्रजळियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० प्राजळियोडी)

प्राजापत्य—वि० [सं०] प्रजापति संबंधी ।
सं० पु० [सं० प्राजापत्य] १. यज्ञ विशेष ।
२. उत्पादक शक्ति ।
[सं० प्राजापत्यः] ३. हिन्दू धर्मानुसार आठ प्रकार के विवाहों मे से चौथा विवाह ।

प्राजाळ—वि० [सं० प्रज्वलनम्] जलाने वाला । उ०— वदै 'अग देस' हुवा जोध वका । लंगा झोक रे झोक प्राजाळ लका ।— सू प्र.

प्राजौ— सं० पु० [स० पराजय] (स्त्री० प्राजी) १. हार, पराजय ।
उ०—जाय जोगण बद जाजा, प्रजुण वन्ही करे प्राजा । वहण आवध होम बाजा, रुपि दराजा रोस ।—र. रू.
२. देखो 'प्राझौ' (रू. भे.)
उ०— १. 'प्राग' हण जादव खग प्राजा, 'अमरो' 'खांन' पूरवण आझा ।—रा. रू.
उ०—२. परवाड़ौ करनी कियौ पूर, सिर प्रथमी प्राजौ चद सूर ।
—रांमदान लाळस

प्राझौ—वि० [सं० प्राज्ञ अथवा प्रबुद्ध] (स्त्री० प्राझी) १. बुद्धिमान, चतुर, दक्ष ।
२. प्रसिद्ध, विख्यात, मशहूर । उ०—लाखीक वरीसण लाखौ जी । भूपाळ निरेहण भाखौ जी । जाडेज वडा गुण जाणै जी । प्राझौ प्रिथमाद प्रमांणै जी ।—ल पिं.
३. महान । उ०—मांडै जे मंडाण, प्राझौ तै प्रयाणं । दीवांणं दातार, ऊभा रै उदारं ।—पिं. प्र.
४. बहुत, अपार । उ०—१. राघौ जी जो गावौ, प्राझी लच्छी पावौ ।—र. ज. प्र.
उ० —२. प्रमगुर कहे पधारो ' प्राझा करण प्रवाडा । हेवै सरस अमिळिया हीदू, मोसूं मिळ मेवाड़ा ।—दुरसौ आढौ
उ० —३. पुहविपत्ति माहि परताप प्राझौ ।—ध. वं. ग्रं.
५. शक्तिशाली, समर्थ । उ०—म्रिग्धान बखण म्रिबुलउ समीर, गळि जत जंत घातण गहीर । 'डूंगरउ' चड़िय 'राहड़' दुभल्ल, प्राझउ अयार पर-थट्ट-पल्ल ।—रा. ज. सी.
६. वीर, बहादुर । उ०—चंदखांन चतखांन, पडे प्राझौ पतिसाहे । पडै खांन सेनार, करणैद्रुग हि पडिगाहे ।—गु. रू. बं.
७. वयोवृद्ध, पूज्य ।
८. अटल, दृढ । उ०—प्राझौ राव जनक तणौ पण, मोड खळां दळ मांनकी । धीग भुजां सत खंड करी धनु, जेण बरी प्रिय जांनकी ।
—र. ज. प्र.
रू० भे०—पाझौ, प्राजौ ।

प्रात—अव्य० [सं० प्रातर्] सवेरे, तडके, भोर ही । उ०—१. महि सुइ खटमास प्रात जळ मंजे, आप अगम्स अरु जितइंद्री । प्राणै वेलि पढंनां नित प्रति, श्री वछित वर वछित श्री ।—वेलि
उ०—२. अर आवस्यक कृत्य बणि सकियौ जिकौ करि दसोर थी फोज चाली जांणि दोही बरातां प्रात ही बिदा कीधी ।—वं भा.

प्रातकरम—सं० पु० [सं० प्रातः+कर्मन्] प्रातःकालीन कर्म (शौच, स्नान, पूजा-पाठ आदि) ।

प्रातकाळ—स० पु० [सं० प्रातः+कालः] सूर्योदय से पूर्व का समय, उषाकाल ।

प्रातनाथ—सं० पु० [सं० प्रातनाथ] सूर्य, भानु ।

प्रातसंध्या—सं० स्त्री० [सं० प्रातः+संध्या] प्रातःकाल में की जाने वाली सध्या ।

प्रादुरभाव—सं० पु० [सं० प्रादुर्भावः] १. प्रकट होना, प्रत्यक्ष होना ।
२. किसी देव विशेष का भूमि पर अवतार लेना ।

प्रादेस—सं० पु० [सं० प्रादेशः] प्रदेश, स्थान ।

प्राधांन—वि० [सं० प्राधानिक] १. प्रधान सबंधी ।
२ सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्कृष्ट । उ०—हिमगिरि सिखरानुकारिए प्रसाद करि सुंदरु । प्राधांन प्राकार करि परिकलतु ।—सभा.

प्रापक—सं० पु० [सं०] १. हवा, पवन । (ह नां.मा)
२. प्राप्त करने वाला, वह जिसके नाम कोई वस्तु या पत्र भेजा जा रहा हो ।

प्रापणौ, प्रापबौ—क्रि० स० [सं० प्र+आप्] १. प्राप्त करना ।
२ मिलना ।
प्रापणहार, हारौ (हारी), प्रापणियौ—वि० ।
प्रापिओड़ौ, प्रापियोड़ौ, प्राप्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
प्रापीजणौ, प्रापीजबौ—कर्म वा० ।

प्रापत—१. देखो 'प्राप्त' (रू भे)
उ०—पख एकण विचइ हुई वर प्रापत, राजकुमार अनोपम राज ।
सायर विचइ पनंग वइस वळि, जोवण चा छोडिया जिहाज ।
—महादेव पारवती री वेलि

२. देखो 'प्राप्ति' (रू. भे.)

उ०—१. सुण केसी ! राजा कहे, ग्यांन प्रापत, काज। सतगुरु मोटा भेटिया, तारण तिरण जहाज।—जयवांणी

उ०—२. ग्यांन तणी प्रापत भणी ए, मैं वांकी चरचा कीधी घणी ए।—जयवांणी

प्रापतरूप—सं० पु० [सं० प्राप्तरूप] १. पंडित। (ग्र. मा.)

२. कवि।

प्रापति, प्रापती—देखो 'प्राप्ति' (रू. भे.) (नां.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—१. तेह नइ सन्मुख चपल चकोरा, प्रसरत नयणे जोवइ। प्रभु दरसण देखण जग तरसै, प्रापति विण नवि होवइ।—वि कु.

उ०—२. फिरत फिरत प्रापति मइं पायउ, अरिहंत नु आधार।—स. कु.

उ०—३. क्रस्ण जी को ग्रांखि जु रुखमणी जी कै रूपि करि प्रेरी छै। सु ग्रांख्यां नै देखिवा की त्रिपति होय नही। जदपि मन नै त्रिपति हुई छै। वारवार मुख की ग्रोड देख्यै छै। जैसें निरधन को धन प्रापति होय। अर वार-वार देखिबौ करै।—वेलि टी.

प्रापतीक—वि० [सं० प्राप्ति+रा०प्र०ईक] प्राप्त करने योग्य।

उ०—जदी रांमबगस सूवौ कीर पकड़नै सिवलाल नै दीधौ। सो चार ही वेद बकै (भखै ?) जद सो मोहरां देनै सिवलाल रांमबगस नै लीधौ। सो जसां कनै रहै, जसां नै पढावै। जद जसां वर प्रापतीक हुई। सिवलाल जसां कौ रूप देखनै मन मै उदास हुग्रो।—मयारांम दरजी री वात

प्राप्त—वि० [सं०] १. पाया हुग्रा, लब्ध।

२. जीता हुआ, लिया हुग्रा।

३. मिला हुग्रा। उ०—परमात्म प्राप्त, वह पुरुस ग्रात।—ऊ.का.

४. सहा हुग्रा।

५. ग्राया हुग्रा।

६. पूर्ण किया हुग्रा।

रू० भे०—परापत, प्रपत, प्रापत।

प्राप्ति—सं० स्त्री० [सं०] १. उपलब्धि, प्रापण, मिलना।

२. पहुंच। ३. ग्रागमन। ४. ग्रर्थागम, अर्जन। ५. हिस्सा, ग्रंश।

६. प्रारब्ध, भाग्य।

७. अणिमादि अष्ट सिद्धियों में से एक जिससे वांछित पदार्थ मिलते हैं।

रू० भे०—परापत, परापति, परापती, प्रापत, प्रापति, प्रापती।

प्रायचित, प्रायस्चित—देखो 'प्राछत' (रू. भे.)

उ०—१. पण ग्रेक बडो इचरज छै—ये तो ग्रेक कीड़ी रा हव दांन लेवौ छो। ग्रै तै पांच सो आदमी थां निमित्त तय्यार हुआ छै। संकळप भरता यूं कहै छै—ग्रा देही स्रीठाकुर जी निमित्त छै। ग्रोर इणां लारै आदमी सो च्यार वीजा ही मरसी। ग्राह्मण गऊवां री संकळप भरियौ सो पण कोई देवै नहीं। तै रो पण प्रायचित थानै ही लागसी।—पलक दरियाव री वात

उ०—२. थारो ग्रन्न खाधो तिण सूं तीरथ जाय सुद्ध थास्यां पिण मूलगा ग्रसुद्ध सुद्ध किम हुवै। भीखन जी स्वामी कह्यो—कोइ साध नै दोस लागां प्रायस्चित लेइ सुद्ध हुवै।—भि. द्र.

प्रारंभ—१. किसी कार्य की प्रथमावस्था का संपादन, शुरू, श्रीगणेश, ग्रारंभ। उ०—पइसारइ तणउ मांडियउ प्रारभ, मोटइ दिख जोवतां मंडांण। घणघट घमंड जांगीए घुरते, आयौ ले परिग्रह आपांण।—महादेव पारवती री वेलि

२. उपद्रव, युद्ध।

३. बड़ा कार्य।

४. वैभव।

५ जलसा।

६. तैयारी। उ०—हिंदुग्रांण तुरकांण, करण घमसांण कड़क्खै। सझि कवांण गुणबांण, दळां प्रारंभ वळ दक्खै।—वचनिका

रू० भे०—परारंभ, पारंभ।

प्रारंभणौ, प्रारभवौ—क्रि० स० [सं० प्रारंभणम्] प्रारंभ करना, शुरू करना।

प्रारंभणहार, हारौ (हारी), प्रारंभणियौ—वि०।

प्ररभिग्रोड़ौ, प्रारभियोड़ौ, प्रारंभ्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्ररंभीजणौ, प्रारभीजवौ—कर्म वा०।

प्रारंभिक—वि० [सं०] १. प्रारभ में होने वाला ग्रथवा उससे संबंधित।

२. शुरुआत का।

३. प्राथमिक।

रू० भे०—परारंभिक।

प्रारथण—सं० स्त्री० [स० प्रार्थनं] १. प्रार्थना, विनय। (डि. को.)

२. विनती।

प्रारथणा—देखो 'प्रारथना' (रू. भे.)

प्रारथणौ, प्रारथवौ—क्रि० स० [सं० प्रार्थनम्] याचना करना।

उ०—१. च्यारि रयण लिउ चहुटइ, मिळसइ मांगण कोइ। प्रभु जांणी नइं प्रारथइ, नाथ नकारु न होइ।—मा. कां. प्र.

उ०—२. क्रपण नै जव प्रारथ्यै मांगजै छै। तव उहि का मुह माहैं ये वचन कुण नीकळै।—वेलि टी.

२. विनय करना, प्रार्थना करना।

ारथणहार, हारौ (हारी), प्रारथणियौ—वि०।

प्रारथिग्रोड़ौ, प्रारथियोड़ौ, प्रारथ्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रारथीजणौ, प्रारथीजवौ—कर्म वा०।

पारत्थणौ, पारत्थवौ, पारथणौ, पारथवौ, परायणौ, परायवौ—रू० भे०।

प्रारथना—सं० स्त्री० [सं० प्रार्थना] प्रार्थना, विनय, आवेदन। (डि.को)

उ०—१. सुपने मनसा नहिं स्वारथ की,प्रभु प्रारथना परमारथ की।
—ऊ. का.

उ०—२. प्रारथना भूप री, करी कानां किनियांणी। दिया इसा बरदांन, धरा जंगळ धिनियांणी।—मे. म.

रू० भे०—परारथना, पारथी, पाराथ, प्रारथणा।

प्रारथनापत्र–सं० पु० [सं० प्रार्थना+पत्र] १. वह पत्र जिसमें किसी प्रकार की प्रार्थना लिखी हो, निवेदन पत्र।

२. किसी विषय में प्रार्थना प्रस्तुत करने के लिये निर्धारित प्रपत्र, आवेदन पत्रक।

प्रारथनासण(न)–सं० पु० [सं० प्रार्थनासन] योग के चौरासी आसनो के अन्तर्गत एक आसन विशेष जिसमें वीरासन की तरह घुटनो पर बैठ कर दोनों हाथों के पजों को जोडकर स्थिर होना होता है।

प्रारथी–वि० [सं० प्रार्थी] १. प्रार्थना करने वाला, निवेदन करने वाला विनय करने वाला।

२. याचक, निवेदक, विनीत। उ०—जे प्रारथियां निरवासी, जग मां एतली ही जरसी।—वि. कु.

रू० भे०—परारथी।

प्रारब्ध–सं० पु० [सं० प्रारब्धम्] १. पूर्व जन्म या पूर्वकाल में किये हुए शुभ या अशुभ कर्म जिनका फल वर्तमानकाल में भोगना पडता है।

२. उक्त कर्मों का फल भोग।

३. भाग्य।

रू० भे०—पराबद, परारबद, परारबध, परालवद, परालवध, पुरालब्ध, प्रारारब्ध, प्रालब्ध।

प्रारब्धी–वि० [सं०] १. प्रारब्ध कर्म भोगने वाला।

२. भाग्यशाली।

रू० भे०—परारब्धी, परालबदी, परालबधी, पुरालब्धी।

प्रालब्ध—देखो 'प्रारब्ध' (रू. भे.)

उ०—पढ़ै फारसी प्रथम, म्लेच्छ कुळ में मिळ जावै, 'अंगरेजी' पढ़ अवल, होटलां में हिळ जावै। पच्छ ग्रहे प्रालब्ध, नहीं पुरसारथ नेडो, चोखै मत नहिं चाय, भाय आवै मत भेडो।—ऊ. का.

प्राळेय–सं० पु० [सं० प्रालेय] बर्फ, हिम। (डि.को.)

प्राळौ—देखो 'पाळौ' (रू. भे.)

उ०—तठा उपरांति करिनै राजान सिलांमति तिण ससिर रित री माह मास री राति रौ प्राळौ पड़ै छै। उतराध रौ पवन ऊतांमलौ टीयां खाइनै रहीयौ छै।—रा. सा. सं.

प्रावट—देखो 'प्राव्रट' (रू. भे.)

प्रावरण–सं० पु० [सं०] आच्छादन, आवरण, ढक्कन।

प्राव्रट–सं० पु० [सं० प्रावृट] १. वर्षा। उ०—फेदड़ फेदड़ सी नभ में निजराई। माखण चाखण री मनसा मुरझाई। प्राव्रट प्राव्रट री प्रावट मन मारै। थर नै पाणां रा थर लेग्या लारै।—ऊ. का.

२. वर्षा ऋतु।

रू० भे०—परावट, परावठ, पराव्रट, पावट, प्रावट।

प्राव्रति–सं० स्त्री० [सं० प्रावृति] हाथी का मद। (डि. को.)

प्रासग–सं० पु० [सं०] १. जुआं का निम्न भाग। (डि. को.)

२ जुआं का वह भाग जो पशु के कंधे पर रहता है।

प्रास–सं० पु० [सं० प्रासः] १. एक प्रकार का भाला विशेष।

२. देखो 'पास' (रू. भे)

उ०—तठै कालबूत हसतणी रै फरस करि नै छिबित री खाड माहै पड़ै छै। पछै लोह सांकळ रा प्रास नाखिनै तिकै हाथी पकडीजै छै।
—रा सा सं.

प्रासणौ, प्रासबौ–क्रि०अ० [सं० प्राशनम्] खाना खाना, भोजन करना।

उ०—बळिबंधण मूझ स्याळ सिंघ बळि, प्रासं जो बीजौ परणं। कपिळ घेनु विन पात्र कसाई, तुळसी करि चाडाळ तणं।—वेलि

प्रासणहार, हारौ (हारी), प्रासणियौ—वि०।

प्रासिग्रोड़ौ, प्रासियोड़ौ, प्रास्योड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रासीजणौ, प्रासीजबौ—भाव वा०।

प्रासन्न—देखो 'प्रसन्न' (रू. भे)

उ०—आया पासि 'अजीत' रै, साह तणा फरमांण। पह जोधां प्रासन्न मन, दीयौ वीच कुरांण।—रा. रू.

प्रासरणौ–सं० पु० [सं० प्रसरणम्] आगे बढ़ने की क्रिया, निकल जाना, प्रयाण करने की क्रिया। उ०—हुवौ खळां थांणौ खळहांणौ, लेखा पखं सु धन लूटांणौ। देस थळी प्रासरणौ दीधौ, लोहे डंड फळोधी लीधौ।—रा. रू.

प्रासाद–सं० पु० [सं०] १. विशालभवन, राजभवन। उ०—अर आगें देवराज रौ रचियौ आठ हात उच्छ्रित (ऊंचा) आठ आठ लंबायत बत्तीस पूतळी सहित चंद्रकांति मणिमय एक सिंघासण कोई प्रासाद री पीठ-भू खोदतां कढियौ तिको ही आपरै भद्रासण बणायौ।—वं. भा.

२. भवन। (अ.मा.,ह.नां मा.)

उ०—लख समपै जु तै मांडिया 'लाखा', घाट सुकवि सलवाट घड़ै। प्रसिध तणा प्रासाद न पड़ ही, पाखाणिवा प्रसाद पड़ै।
—लाखा फूलांणी रौ गीत

३. देव मन्दिर, देवालय। उ०—१. असुरांण सीस उपाड़ि, परसाद न सकै पाड़ि। प्रासाद नव-नवा प्रमेस, हिंदवांण सर्फ हमेस।
—सू. प्र.

उ०—२. मनंछा परब्रह्म हिंगोळ माता, समें सात पोरां रमैं दीप साता। जबू दीप में जांम एको जिकांरो, दिसा पच्छमी दूर प्रासाद द्वारो।—मे. म.

४. महल।

५. देखो 'प्रसाद' (रू. भे.)

रू० भे०—परसाद, पासाद, प्रसाद।

प्रासियोड़ौ—भू० का० कृ०—खाना खाया हुआ, भोजन किया हुआ. (स्त्री० प्रासियोड़ी)

प्रासी-स० पु० [सं० पाशिन्] वरुण। (अ. मा.)

प्रासुक—वि० [?] चेतना शक्ति-हीन। (जैन)

प्राहणौ—देखो 'पांमणौ' (रू. भे.)

प्राहार—देखो 'प्रहार' (रू. भे.)

उ०—दसँ-कंध कै कायरा ध्रग्ग दीधौ। कणेठी उरां पाव प्राहार कीधौ।—सू. प्र.

प्राहुण—देखो 'पांमणौ' (मह, रू. भे.)

प्राहुणउ, प्राहुणौ—देखो 'पांमणौ' (रू. भे.)

उ०—१. ढोला रहिसि निवारियउ, मिळिसि वई कइ लेखि। पूगळ हुइस ज प्राहुणउ, दसराहा लग देखि।—ढो. मा.

उ०—२. नाट चिरत फिरता रिख नारिंद, गिरिंद तणइ प्राहुणा गया। चलणे ऊठि लागा हेमाचळ, मन सूधै जांणी घणी मया।

—महादेव पारवती री वेलि

प्रिग्रमघु—देखो 'प्रियमघु' (रू. भे) (नां. मा)

प्रिउ—देखो 'प्रिय' (रू. भे)

उ०—१. ऊनमियउ उत्तर दिसइं, गाज्यउ गुहिर गंभीर। मारवणी प्रिउ संभरघउ, नयणे वूठउ नीर।—ढो. मा.

उ०—२. बाबहिया निल-पंखिया बाढ़त वइ दइ लूण। प्रिउ मेरा मइं प्रीऊ की, तूं प्रिउ कहइ स कूण।—ढो. मा.

उ०—३. बाबहिया डूंगर-दहण, छांडि हमारउ गांम। सारी रात पुकारियउ, लइ लइ प्रिउ कउ नांम।—ढो मा.

उ०—४. माणस हवां त मुख चवां, म्हे छां कूंभड़ियाह। प्रिउ संदेसउ पाठविसु, लिखि दे पंखड़ियांह।—ढो. मा.

उ०—५. मत जाणे प्रिउ नेह, गयउ दूरविदेस गयांह। बिवणउ वाघइ सज्जणां, ग्रोछउ ओहि खळाह।—ढो. मा.

प्रितमाळ—देखो 'प्रतिमाळ' (रू. भे.)

उ०—चढ़ियौ जस कळस आदि लग 'चूंडा', पै गज घाट गिळण 'गोपाळ'। दांणव देव मांनव कोय दाखौ, पग सूं गज हिणतौ प्रितमाळ।—गोपाळदास चूंडावत रौ गीत

प्रिति—देखो 'प्रीति' (रू. भे)

उ०—म्रदु वायक बोध दिये महिला, प्रिति लागण काळ किये पहिला।—ऊ. का.

प्रित्थी—देखो 'प्रथ्वी' (रू. भे)

उ०—तर्क भादवी माह-ऊपांत तित्थी, पड़ै माय रै पाय प्रित्थीप प्रित्थी।—मे. म.

प्रित्थु, प्रित्थू—देखो 'प्रथु' (रू. भे)

प्रिथ—देखो 'प्रथु' (रू. भे.)

प्रिथम—देखो 'प्रथम' (रू. भे.)

उ०—प्रिथम मेक संग्रांम, कियौ महिकर आथाणह। बियौ कीध रिण-जंग, दिखण कटकै मेल्हांणह।—गु. रू. बं.

प्रिथमाद—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

उ०—प्रिथमाद पवनं भुजै भुजंनं, घण बारह घर प्रति घणी। समरे राजेसर आदि अपपर, धरणी धर त्रिभुवण धणी।—पि.प्र.

प्रिथमी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.) (ह.नां.मा.)

उ०—१. प्रिथमी आदि-जुगादि वीर व्रसुधा वर खत्ती।—गु रू.बं.

उ०—२. सुजड़ी मोकळसीह-समोभ्रम, ग्रहै दुरंग गिर वडा ग्रह। जिण वीनड़िया किम वीसारै, प्रिथमी नव-खड तणा पह।

—महाराणा कूंभा रो गीत

प्रिथमीतळ—देखो 'प्रथवीतळ' (रू. भे.) (अ.मा.,ह.ना.मा)

प्रिथवी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे)

उ०—पोसप्प पांन कपूर प्रिथवी, वणत जण घनवांन ए।—रा.रू.

प्रिथवीपाळ—देखो 'प्रथवीपाळ' (रू. भे) (डिं. को.)

प्रिथवीस—देखो 'प्रथवीस' (रू. भे.)

प्रिथव्विय—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.)

उ०—प्रिथव्विय जातिय रेस पयाळ, दाढ़ां ग्रहि राखिय दीनदयाळ।

—ह.र.

प्रिथा—देखो 'प्रथा' (रू. भे.)

प्रिथि—देखो 'प्रथ्वी' (रू. भे.) (नां.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—अर बिळकुळनै घणौ तातौ मिळै। प्रिथि में घडी पिल्ल रौ मिजमांन हवौ थकौ भिळै।—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

प्रिथिमि, प्रिथिमी—देखो 'प्रथवी' (रू. भे.) (ना.मा ,ह.ना.मा.)

उ०—कळि कलप वेलि वळि कांमधेनुका, चिंतामणि सोम वह्नि चत्र। प्रकटित प्रिथिमी 'प्रिथु' मुख पंकज, अखरावळि मिसि थाइ एकत्र।—वेलि

प्रिथी—देखो 'प्रथ्वी' (रू. भे.) (नां.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—१. प्रिथी विलागी पाय, आरंभ तज अचळेसवर, विच ढ़ीली अर देवगिर, मीलीया मांडवराय।—अ.वचनिका

उ०—२. किताइक वार विसै कळपंत, वांधी तै सीग प्रिथी बळवंत।

—ह. र.

प्रिथीनाथ—देखो 'प्रथ्वीनाथ' (रू भे.)

प्रिथीप—देखो 'प्रथ्वीप' (रू. भे.)

प्रिथीपति—देखो 'प्रथ्वीपति' (रू. भे.)

उ०—खड़ै सुरलोक भणीजत खांत, भणीं हिंगळाज सुणी जिण

भांत। प्रिथीपति राजसथांन पुगाय, अत्रा निज थांन थई थित श्राय।
—मे. म.

प्रिथु—देखो 'प्रथु' (रू. भे.)

प्रिथुक—देखो 'प्रथुक' (रू. भे.) (ह.ना.मा.)

प्रिथुळ—देखो 'प्रथुळ' (रू. भे.)

प्रियूवीस—देखो 'प्रथवीस' (रू. भे.)

प्रियंगु, प्रियंगू—सं०पु० [सं० प्रियगुः] वृक्ष विशेष व उसका फल (मूंदी)।
—सभा.

प्रिय—वि० [सं०] (स्त्री० प्रिया) १. प्यारा, वल्लभ।
२. मनोहर, सुंदर।
सं० पु० [सं० प्रियः] १. पति, खाविंद। (अ मा, ह नां.मा.)
२. स्वामी, मालिक।
३. प्रेमी।
४. जाति विशेष का हरिण।
५. दामाद, जमाता।
६. दो लघु मात्रा का नाम। (पिंगल)
रू० भे०—पिय, पिग्रउ, पिउ, पिऊ, पिय, पिया, पिव, पी, पीउ, पीऊ, पाय, पीव, प्रिउ, प्रियु, प्रिव, प्री, प्रीउ, प्रीऊ, प्रीय, प्रीयु, प्रीव।
अल्पा०—पिउडो, पियडउ, पीऊडइ, पीयो, पीवड़लो, पीवल, प्रियुड़उ, प्रीउडो, प्रीउडो, प्रीऊडो, प्रीऊडो, प्रीयुडो।

प्रियकांक्षी—वि० [सं०] हित-चिंतक, शुभाभिलाषी, शुभेच्छु।

प्रियगण—सं०पु० [सं०] दो लघु मात्रा का नाम। (डिं.को., र.ज.प्र.)

प्रियतम—वि० [सं०] (स्त्री० प्रियतमा) सर्वाधिक प्रिय, सब से अधिक प्यारा।
सं० पु० [सं० प्रियतमः] १. आशिक, प्रेमी।
२. पति। उ०—१. करूं कडाई चाव से तेरी दुरगा मांय, आसोजां मे आय के जो प्रियतम मिळ जाय।—लो. गी.
उ०—२. अबके जे प्रियतम मिळै, पलक न छोडूं पास। रोम रोम में छिप रहूं, ज्यूं कळियन में बास।—अज्ञात
३. स्वामी, मालिक। ४. ईश्वर।
५. मित्र, दोस्त, सखा।
रू० भे०—पीतम, प्रीतम।
अल्पा०—पीतमो, प्रीतमो।

प्रियपात्र—वि० [सं०] वह जिसके साथ प्रेम किया जाय, प्रेमपात्र, प्यारा।

प्रियव्रत—सं०पु० [सं० प्रियव्रत] एक राजा, जो स्वायभुव मनु के पुत्रों में से एक था।
उ०—मुहुक्करमा नै आप रा छुट्ठा सहोदर नूं जाळोर रौ दुरग दीधौ, जठै खधावार जमाय मौत्तिकराज नै पुरुरवा प्रियव्रत रै समांन राज कीधौ।—वं. भा.

प्रियभद्र—सं० पु० [स०] श्रीकृष्ण के बड़े भाई का नाम, बलभद्र।
(अ. मा.)

प्रियभासण—सं० पु० [सं० प्रियभाषण] सब को प्रिय लगने वाली बात, वाणी, मभाषण।

प्रियभासी—वि० [सं०प्रियभाषिन्] मधुर वचन बोलने वाला, मधुर भाषी।

प्रियमधु—सं० पु० [सं०] श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलराम का एक नाम।
(नां. मा.)
रू० भे०—पिग्रमधु, प्रीयमधु, प्रीयमधू।

प्रियमरू—स० पु० [सं० प्रियमरुस्थल] मरुस्थल का प्रेमी, ऊंट।

प्रियवचन—सं० पु० [स०] मधुर वचन, मीठे बोल।

प्रियवलका—स० स्त्री० [सं० प्रियवल्लिका] रामवेलि। (अ. मा.)

प्रियवादनी—वि० स्त्री० [सं० प्रियवादिनी] मीठी बोलने वाली, मधुरभाषिणी।
स० स्त्री०—मालती। (अ. मा.)

प्रियवादी—वि० [सं० प्रियवादिन्] मधुरभाषी।

प्रियवादिका—सं० स्त्री० [सं०] बाजा विशेष।

प्रियसदेस—सं० पु० [सं० प्रियसंदेशः] खुश खबरी, शुभ संदेश।

प्रिया—स० स्त्री० [सं०] १. प्रेयसी, प्रेमिका। उ०—सदा प्रिया सु प्रीति रीति गीत सारणी नहीं। निसास-रोज आननी उरोज धारणी नहीं।—ऊ. का.
२. स्त्री, पत्नी। (अ.मा., ह नां.मा.)
उ०—सुधन्य माता कौसल्या, तात दसरथ धनि भूपति। अवधि पूरि धनि अवनि, प्रिया धनि सीत तास-पति।—सू. प्र.
३. माया।
४. दो रगण का वर्ण वृत्त विशेष।
रू० भे०—पिय, पिया, प्रियु, प्रीया।
अल्पा०—पीग्रारड़ी।

प्रियाग्रधर—वि० [सं० प्रिया+अधर] मधुर। * (डिं.को.)
सं० पु०—प्रियतमा के अधर (होठ)।

प्रियाग—देखो 'प्रयाग' (रू. भे.)

प्रियागवड़, प्रियागवड़—देखो 'प्रयागवड' (रू. भे.)
उ०—धानंतर मयक हणू सुक्र धावो, नर पाळग रुद्र रिख निवड़। अेक वारड़ी 'करण' उठाड़ो, अन-खट तणो प्रियागवड़।
—ईसरदास बारहठ

प्रियात्मा—सं० स्त्री० [सं०] प्रिया, भार्या।

प्रियाळ—देखो 'पियाळ' (रू. भे.) (सभा.)

प्रियास—देखो 'प्रयास' (रू. भे.)

प्रियु— १. देखो 'प्रिय' (रू. भे.)

उ०—मनह सकांणी माळवणि, प्रियु कांई चळचित्त । कइ मारुवणी सुंधि सुणी, कइ का नवली वत्त ।—ढो. मा.

२. देखो 'प्रिया' (रू. भे.)

प्रियुड़उ—देखो 'प्रिय' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—प्रियुड़उ आव्यउ रे आसा फली, बोलइ कोसा नारी । प्रीति पनउता पालियइ, हुं छुं दासि तुम्हारी ।—स. कु.

प्रियोग—देखो 'प्रयोग' (रू. भे.)

प्रियोजन—देखो 'प्रयोजन' (रू. भे.)

प्रिव—देखो 'प्रिय' (रू. भे.)

उ०—प्रिव माळवणी परहरे, हाल्यउ पुंगळ देस । ढोला म्हां विच मोकळा, वासा घणा वसेस ।—ढो. मा.

प्रिवित—देखो 'पवित्र' (रू. भे.) (ह.नां.मा.)

प्रिसटपरणी–स० स्त्री० [स० पृष्टिपर्णी] एक प्रकार की लता विशेष । (अमरत)

रू० भे०—प्रस्टपरणी, प्रिस्टपरणी ।

प्रिसण—देखो 'पिसण' (रू. भे.)

उ०—१. हुवै विग्रह ढहै कहे 'चूंडा' हरो, इंद्र पावक पवण प्रिसण अेता । महि-मंडळ भीतड़ा अीत सूं मीढ़तां, कळी पालट हुवै जाहि केता ।—राव गांगो

उ०—२. प्रिसणां साथ कासळी पड़ियो । आगम लखां दुओ आखड़ियो । निस गळती भूंबियो नओठो, रूक तणो मच आवारीठो ।—रा. रू.

प्रिसणांण—देखो 'पिसण' (मह., रू. भे.)

प्रिसध—देखो 'प्रसिद्ध' (रू. भे.)

प्रिसिधि—देखो 'प्रसिद्धि' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

उ०—पहि प्रमांणं, जुगति जाणं, अति बखांणं, जगत्र आखो । धरमधारी, प्रिसिधि प्यारी, लखण भारी, कुंअर 'लाखो' ।—ल.पिं.

प्रिस्ट–वि० [सं० पृष्ट] पूछा हुआ, जो पूछा गया हो ।

सं० पु०— १. पन्ना, पत्र ।

[स० पृष्ठ] २. किसी छपे हुए या लिखे हुए पत्र या कागज का एक ओर का भाग, पृष्ठ ।

सं० स्त्री०—३. पीठ । उ०—वणि जोड़ इंद सनमुख वदन, दीप धरम भुज दाहिणै । जळ भूप प्रिस्ट धारे जुगळ, वांमै घू अविचळ वणै ।—रा. रू.

रू० भे०—प्रस्ट, प्रस्ठ, प्रिस्ठ ।

प्रिस्टपरणी—देखो 'प्रिसटपरणी' (रू. भे.)

प्रिस्टोदय—देखो 'प्रस्ठोदय' (रू. भे.)

प्रिस्ठ—देखो 'प्रिस्ट' (रू. भे)

प्री, प्रीउ—देखो 'प्रिय' (रू. भे.)

उ०—१. घरा कहतां प्रथी अनेक भांति का रस दे छै । (पोइणी विखै भली सोभा हुई छै) । अन्नादिक सुं पितर छै तिणि को मरत-लोक भी लागै छै ।—वेलि टी.

उ०—२. रांणी तदि दूवो दीध रुखमणी, पति सुत पूछि पूछि परिवार । पूजा व्याज काज प्री परसण, स्यांमा आरंभिया सिणगार ।—वेलि

उ०—३. हे सखि ए परदेस प्री, तनह न जावइ ताप । बाबहियउ अंसाढ जिम, विग्हणि करइ विलाप ।—ढो. मा.

उ०—४. वीज न देख चहड़ियां, प्री परदेस गयांह । आपण लोय झबुक्कड़ा, गळि लागी सहरांह ।—ढो. मा.

उ०—५. बाबहिया निलपंखिया, वाढ़त दइ दइ लूण । प्रिउ मेरा मइं प्रीउ की, तूं प्रिउ कहइ स कूण ।—ढो. मा.

प्रीउड़ौ, प्रीउडौ—देखो 'प्रिय' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—मांननि मन माधव कन्हइं, पजर प्रीउडा पासि । समणां माहि सक कहइ, जोगी जोवा जासि ।—मा. कां. प्र.

प्रीऊ—देखो 'प्रिय' (रू. भे)

उ०—१. प्रीऊ बोलंनु पंखीउ, अहनिसि रहि अगासि । वयरणि तास न नीसरइ, पछठी माहृग्इ पासि ।—मा. कां. प्र.

उ०—२. पोस ! पनुता प्रीऊ पखइ, अंह सिउं आणि म राग । काळ मुखा ! काढइ नही, दीठा डोळा काग ।—मा. कां. प्र.

प्रीऊड़ौ, प्रीऊडौ—देखो 'प्रिय' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—१. पुप्फि परिमळ ईक्षु रस, दूध मांहि घ्रत जेम । सुणि प्रीऊडा ! तिम माहरइ, पंजरि पसरिउ प्रेम ।—मा. का. प्र.

उ०—२. टाढ़उ वाउ निसंचरइ, तिम-तिम वाधइ झाळ । प्रीऊडा पाखइ पोस ते, काळ तणु जिम काळ ।—मा. कां. प्र.

प्रीच्छत—देखो 'परीक्षित' (रू. भे)

उ०—जग अवलव खंभ सतजुग रा, दित्रपुर वसतां 'सिवा' दुवा । पांच हजार वरस प्रीच्छत रा, हमै संपूरण आज हुवा ।

—रांमलाल बारहठ

प्रीछणौ, प्रीछबौ–क्रि० स० [सं० परि+ईक्षणम्] १. समझना ।

उ०—चतुर लोक राचइ गुणे रे, अवगुण कोइ न राचइ रे । परमा-रथ तुम्हे प्रीछज्यो रे, सहु को पतीजइ साचइ रे ।—स. कु.

[स० पृच्छ] पूछना । उ० सभळि माधव हुं कहुं, अे दुख-तणउं निदांन । परमाधांमी प्रीछजे, जु सिरि हइ सांन ।—मा. कां. प्र.

प्रीछणहार, हारौ (हारी), प्रीछणियौ—वि० ।

प्रीछिओड़ौ, प्रीछियोड़ौ, प्रीछयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रीछीजणौ, प्रीछीजबौ—कर्म वा० ।

प्रीछियोड़ौ–भू० का० कृ०—१. समझा हुआ. २. पूछा हुआ.

(स्त्री० प्रीछियोड़ी)

प्रीछत—देखो 'परीक्षित' (रू. भे.)

उ०—राजा प्रीछत, जगदेव जी पंवार, धारसी पवार...इणां सारां नूं प्रथ्वी पर दातार सग्या है।—द. दा.

प्रीत—देखो 'प्रीति' (रू. भे.)

उ०—१. सज्जन बाधे पाळ सिर, सीसा छकियां गाळ। दुरजण फोड़ै गाळ दे, प्रीत सरोवर पाळ।—बा. दा.

उ०—२. नारायण रै नाम सूं, प्राणी करलै प्रीत। ग्रोघट बणियां आतमा, चत्रभुभ भ्रासी चीत।—ह. र.

उ०—३. पिंड कुलछ पहचांण, प्रीत हेत कीजै पछै। जगत कहै सो जांण, रेखा पाहण राजिया।—किरपाराम

प्रीतड़ली, प्रीतड़ी—देखो 'प्रीति' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—१. रास तौ कियौ म्हांसै प्रीतड़ली जोड़ी, अब तुम काहे कूं तोड़ी।—मीरां

उ०—२. नेमि जी सुं जउ रे साची प्रीतड़ी, तउ सुं अवरां प्रीतौ रे। गुणवत मांणस सेती गोड़ी, तउ सुं निरगुण रीतौ रे।

—स. कु.

उ०—३. नैण पदारथ वैण रस, नैणा वैण मिळंत। अण-जांण्यां सूं प्रीतड़ी, पै'ला नैण करंत।—अज्ञात

प्रीतधारी-वि० [स० प्रीति+धारिन्] प्रीति करने वाला। उ०—द्रढ मंत्री दिल्लेस, पास 'अमरेस' भंडारी, रीत नीत ऊजळौ, प्रीतधारी हितकारी। सुपनै ही साभाय, न्याय-व्रत चाय न चूकै। राज काज चितराग, माग अनि समळ प्रमूकै।—रा. रू.

प्रीतम—देखो 'प्रियतम' (रू. भे.) (अ.मा.,ह.नां.मा.)

उ०—१. भूरै मुखडै पर स्वेदण कण भारी, पहुंची पोळछ में प्रीतम री प्यारी।—ऊ. का

उ०—२. नख नहिं निरखाती नाजक नखराळी, पिय जिय प्रतपाळी जाती पथ पाळी। घूरण नयणां चळ काजळ जळ घूमै। लड़थड़ आथड़ती प्रीतम गळ लूमै।—ऊ. का.

प्रीतमौ - देखो 'प्रियतम' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—परदा अंतर कर रहे, हम जीवैं किहिं आधार। सदा संगाती प्रीतमा अबके लेहु उवार।—दादूबाणी

प्रीति-सं० स्त्री० [सं०] १. किसी इष्ट पदार्थ को प्राप्त करने या देखने से होने वाला सुख, तृप्ति, सतोष।

२. हर्ष, आनंद, खुशी।

३. स्नेह, प्रेम, प्यार, मुहब्बत। उ०—साहिब तुझ्झ सनेहडइ, प्रीति तणी पति जाइ। जळ खिण ही जाणइ नही, मच्छ मरइ खिण मांइ।—ढो. मा.

४. अनुराग। उ०—अवती रै अधीस प्रांमारराज भरथरीहरि रै रांणी पिंगळा जिकण रौ दूजौ नाम अनंगसेना कहीजै सो अद्वितीय प्रीति रौ आस्पद वणी।—वं. भा.

४. मैत्री, दोस्ती, मेल। उ०—एक समय आखेट, बळै साळा बहणोई। आवै हुणि सस एक, प्रीति मनुहार पजोई।—वं. भा.

५. कामदेव की स्त्री और रति की सौत का नाम।

६. फलित ज्योतिष के २७ योगों में से चौथा योग।

रू० भे०—परीत, पिरीत, पीइ, पीई, पीत, प्रिति, प्रोत, प्रीती।

अल्पा०—पीतड़ली, पीतड़ी, प्रीतड़ली, प्रीतड़ी, प्रीतौ।

प्रीतिभोज-सं० पु० [सं०] वह भोज या खान-पान जिसमें सबंधी, इष्ट मित्र आदि सप्रेम आमंत्रित किए जाते हैं तथा सम्मिलित होते हैं।

प्रीती—देखो 'प्रीति' (रू. भे.)

प्रीतौ—१. देखो 'प्रीति' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—नेमि जी सुं जउ रे साची प्रीतड़ी, तउ सुं अवरा प्रीतौ रे।

—स. कु.

२. देखो 'प्रिय' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—तुं तौ हिव माहरौ प्रीतौ थयो रे, तुझ नै दीठां उलसै गात रे।—वि. कु.

प्रीथी—देखो 'प्रथ्वी' (रू. भे.)

प्रीद्रुम-सं० पु० [सं० प्रियद्रुम] वानर, कपि। (नां. मा.)

प्रीय—देखो 'प्रिय' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

उ०—आज ज सूती निसह भरि, प्रीय जगाई आइ। विरह -भुयगम की डसी, लबयबती गळ लाइ।—ढो. मा.

प्रीयमधु, प्रीयमधू—देखो 'प्रियमधु' (रू. भे.)

प्रीया—देखो 'प्रिया' (रू. भे.)

उ०—कोइलि! तूं काळी सही, स्वर परिण साहरु काळ। प्रिउ पाखइ पेखी प्रीया, प्रांण हरइ तत्काळ।—मा. कां. प्र.

प्रीयारौ—देखो 'प्यारौ' (रू. भे.)

उ०—प्रेम प्रीयारी वाल हो, जे कइ पीहर छै बाई! मांडव धार।

—बी. दे.

(स्त्री० प्रीयारी)

प्रीयु—देखो 'प्रिय' (रू. भे)

उ०—सखी यादव कोड़ि सुं परवरे, प्रीयु आए तोरण बारि रे।

—स. कु.

प्रीयुड़ौ—देखो 'प्रिय' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—कमल विलासी ज्युं विकस्यो नहीं रे, इण तौ कर संकोचि। हीयड़ा आगलि दे प्रीयुड़ा तणौ रे, मांड्यो सबलौ सोच।—वि. कु.

प्रीव—देखो 'प्रिय' (रू. भे.)

उ०—सा धण खळती कसोर ज्युं। जांणिक बैठी प्रीव को खोळि।

—बी. दे.

प्रूंचाळौ, प्रूचाळौ—देखो 'पोंचाळौ' (रू. भे.)

उ०—सूरां 'उरजरा' हगं सिघाळौ, पिड़ 'सूजौ' जादम प्रूचाळौ ।
—रा. रू.

(स्त्री० प्रूचाळी, प्रूचाळी)

प्रूफ–सं० पु० [ग्रं०] १ प्रमाण, सबूत ।
२. किसी छपने वाली चीज का वह नमूना जो उसके छपने से पहिले अशुद्धियों आदि को दूर करने के लिए तैयार किया जाता है ।

प्रेक्षक–वि० [सं०] १. दर्शक । २. जांच करने वाला ।
रू० भे०—पेखक ।

प्रेख–सं० स्त्री० [स०प्रेक्षा] आज्ञा । (ह. ना. मा.)

प्रेत–सं०पु० [स० प्रेतः] (स्त्री० प्रेतण, प्रेतणी) १. मरा हुआ मनुष्य ।
२. वह कल्पित शरीर जो मनुष्य को मृत्यु के बाद प्राप्त होता है । (पुराण)
३. नरक में रहने वाला प्राणी ।
४. एक प्रकार की कल्पित देव-योनि जिसमें प्राणी का रंग काला शरीर के बाल खड़े और विकराल स्वरूप होता है, भूत ।
उ०—१. हुय घड़घड़ा'ट घर व्योम हाक । दस ही दिस वागी प्रेत हाक ।—पा. प्र.
उ०—२. पहली एक घाडवी रजपूत घारातीरथ में पड़ियौ तो भी कोइक कारण रै प्रभाव आप रा साथ समेत प्रेत हुवौ जिकण रै पाछै प्रजा में एक पुत्री रही ।—वं. भा.
उ०—३. जठै बैताळा रा आस्फाळ, डाकिणी गणां रा डमरू रा डात्कार फेरवियां रा फेत्कार, प्रेतां रा आलाप राक्षसां रा रास कुणपां रा कपाळां रा कटकटाहट, चिता रा अंगारां करि चित्र बिचित्र बडौ अद्भुत चरित देखियौ ।—वं. भा.
यौ०—भूत-प्रेत ।
५. महाकृपण, कंजूस । (व्यंग)
रू० भे०—परेत, प्रेंत ।

प्रेतअधिपति–सं० पु० [सं० प्रेतअधिपतिः] १. यमराज ।
२. शिव, महादेव ।

प्रेतअन्न–सं० पु० [सं० प्रेतअन्न] वह अन्न जो पितरों को अर्पित किया गया हो ।

प्रेतअस्थि–सं० स्त्री० [सं०] मुर्दे की हड्डियां ।

प्रेतईस, प्रेतईसर, प्रेतईस्वर–सं०पु० [सं० प्रेतईशः, प्रेतईस्वरः] १. यमराज, धर्मराज ।
२. महादेव, शिव ।

प्रेतकरम, प्रेतकृत्य–सं०पु० [सं० प्रेतकर्मन्, प्रेतकृत्यं] मृतक जीव के उद्देश्य से दाह से लेकर सपिंडी तक के किये जाने वाले कर्म या कृत्य ।
रू० भे०—परेतकरम, प्रेंतकरम ।

प्रेतग्रह–सं० पु० [सं० प्रेतगृहं] श्मशान भूमि, कब्रिस्तान ।

प्रेतचारी–सं० पु० [सं०] शिव, महादेव ।

प्रेततरपण–स० पु० [स० प्रेततर्पण] किसी मनुष्य के मरने के दिन से सपिंडी दिन तक उसके निमित्त किए जाने वाले कर्म ।

प्रेतदाह–सं० स्त्री० [स० प्रेतदाहः] मृतक के दाह कर्म की क्रिया ।

प्रेतदेह–स० स्त्री० [स०] मरने के समय से सपिंडी तक उसकी आत्मा को प्राप्त होने वाला किसी मृतक का कल्पित शरीर ।

प्रेतनदी–सं० स्त्री० [सं०] वैतरणी नदी ।

प्रेतनाथ, प्रेतनाह–सं० पु० [सं० प्रेतनाथः] १. यमराज, धर्मराज ।
२. शिव, महादेव ।

प्रेतपक्ष, प्रेतपख–स० पु० [सं० प्रेतपक्षः] आश्विन मास के कृष्ण पक्ष के पन्द्रह दिन का समय, श्राद्धपक्ष ।

प्रेतपत, प्रेतपति–स० पु० [सं० प्रेतपतिः] यमराज का एक नाम ।
उ०—इसड़ौ सम्मत करि काळ रा खेचया प्रेतपति रा पाहुणा होइ हुकम रै प्रमांण तत्काळ ही लेख करि भिजाइ दीधौ ।—व भा.
रू० भे०—परेतपत, परेतपति, परेतपती ।

प्रेतपिंड–सं० पु० [सं० प्रेतपिण्डम्] किसी मृतक के मरने के दिन से लेकर सपिंडी के दिन तक नित्य दिया जाने वाला अन्नादि का बना हुआ पिंड ।

प्रेतपुर–सं० पु० [सं० प्रेतपुर] १. यमपुरी ।
२. श्मशान भूमि ।

प्रेतभाव–सं० पु० [सं० प्रेतभावः] मृत्यु, मौत ।

प्रेतभूम, प्रेतभूमि, प्रेतभोम–सं० स्त्री० [स० प्रेतभूमिः] श्मशान भूमि, मरघट ।

प्रेतमेघ–सं० पु० [सं० प्रेतमेघः] मृतक कर्म विशेष ।

प्रेतराज, प्रेतराट–स० पु० [सं० प्रेतराजः] यमराज । (अ. मा.)

प्रेतलोक–स० पु० [सं० प्रेतलोकः] यमपुर, यमलोक ।

प्रेतवन–स० पु० [स०] श्मशान भूमि ।

प्रेतसरीर–सं० पु० [सं० प्रेतशरीर] पुराणानुसार किसी मृतक का वह कल्पित शरीर जो उसके मरने के दिन से सपिंडी तक उसकी आत्मा को प्राप्त रहता है जो सपिंडी नामक श्राद्ध करने पर नहीं रहता है, भोगशरीर ।

प्रेतस्राद्ध–स० पु० [सं० प्रेतश्राद्ध] मरने की तिथि से एक वर्ष के अन्दर अन्दर होने वाले सोलह श्राद्ध जिसमें मासिक, सपिंडी आदि सभी सम्मिलित हैं ।

प्रेताधिप–सं० पु० [सं०] यमराज ।

प्रेतासिनी–वि० स्त्री० [सं०] मृतकों को खाने वाली ।
सं० स्त्री०—भगवती का एक नाम ।

प्रेम–सं०पु०[सं०प्रेमन्] १. वह मनोवृति जिसके अनुसार किसी पदार्थ या

व्यक्ति आदि के संबंध में यह भावना हो कि वह सदा हमारे पास या साथ रहे, उसकी वृद्धि, उन्नति या हित हो, अनुराग, स्नेह ।
(अ. मा., ह. नां. मा.)

उ०—आपणपा सयण तेडिया आह (व)इ, लांजउ घणी निरवाहण लाज । वर ईसर जगंनाथ अरणंबर, प्रेम तणी ताइ बाधी पाज ।
—महादेव पारवती री वेलि

२. पुरुष-समाज और स्त्री-समाज के ऐसे जीवों का आपस का स्नेह या मुहब्बत जो प्राय: रूप, गुण, स्वभाव और कामवासना के कारण होता है, प्यार, मुहब्बत । उ०—१. अलक डोरि तिल चढ़-सवौ, निरमळ चिबुक निवांण सींचै नित माळी समर, प्रेम बाग पहचांण । प्रेम बाग पहचांण, निरंतर पाळ ही । ग्रीवा कंबु कपोत, गरब्बां गाळ ही । कंठसरी बहु क्रांति, मिळी मुकनाहळां । हिंडुळ नौसरहार, जळूस जळाहळां ।—बां. दा.

उ०—२. वयणे माळवणी तणइ, रहियउ साल्हकुमार । प्रेमइ बंध्यउ प्री रहइ, जउ प्री चालणहार ।—ढो. मा.

३. अनुकंपा, अनुग्रह ।

४. हर्ष, प्रसन्नता । उ०—सुरता बिकसी सरसायन में, परि प्रेम पयोनिधि पायन में ।—ऊ. का.

५. लखपत पिंगल के अनुसार एक मात्रिक छंद विशेष जिसके प्रत्येक चरण में बीस मात्राएँ होती हैं ।

६. कोमल मुलायम । # (डिं. को.)

रू० भे०—परेम, पेम ।

अल्पा०—पेमौ, प्रेमौ ।

प्रेमकरता—वि० [सं० प्रेमकर्त्ता] प्रीति करने वाला, प्रेमी ।

प्रेमगरविता—सं० स्त्री० [सं० प्रेमगर्विता] पति के अनुराग का अहंकार रखने वाली नायिका ।

प्रेमजळ—सं० पु० [सं० प्रेमजल] प्रेम के कारण नेत्रों से निकलने वाला जल, प्रेमाश्रु ।

प्रेमनांनौ—सं० पु० [सं० प्रेम + राज० नांनौ] माता का नाना ।

प्रेमनांनाणौ—सं०पु० [सं० प्रेम + राज० नांनाणौ] माता का ननिहाल ।

प्रेमपात्र—वि० [स०प्रेमपात्र] १. जिससे प्रेम किया जाय ।

२. प्रेम करने योग्य ।

प्रेमपास—सं० पु० [सं० प्रेमपाश] प्रेम का बंधन ।

प्रेमभक्ति—सं० पु० [सं०] बहुत प्रेम के साथ की जाने वाली श्रीकृष्ण की भक्ति ।

प्रेमभांणजौ, प्रेमभांणेज—सं०पु० [सं०प्रेमन् + राज०भांणेज] १. भानजे का सौतेला भाई ।

२. भानजी का पुत्र ।

प्रेमरस—सं० पु० [सं०] प्रेम का आनन्द, प्रेम का आस्वादन ।

रू० भे०—पेमरस ।

प्रेमल—सं०स्त्री०—१. मीरां बाई का जन्म का नाम ।

२. प्रत्येक चरण में ३२ मात्रा का मात्रिक छद विशेष । (ल. पिं.)

प्रेमलक्षणाभक्ति—सं० स्त्री० यौ० [सं०] देखो 'प्रेमभक्ति' ।

प्रेमलेसा, प्रेमलेस्या—स० स्त्री० [स० प्रेमलेश्या] वह वृत्ति जिसके फल-स्वरूप मनुष्य विद्वान, दयालु, विवेकी होता है तथा निस्वार्थ भाव से सबसे प्रेम करता है । (जैन)

प्रेमवारि, प्रेमवारी—सं० पु० [सं०] देखो 'प्रेमजळ' ।

प्रेमातुर—वि० [सं०] प्रेम विह्वल, प्रेम से व्याकुल ।

प्रेमालाप—सं० पु० [स०] १. प्रेम पूर्वक होने वाला वार्त्तालाप ।

२. प्रेम संबंधी बातचीत ।

प्रेमास्रु—सं०पु० [सं०प्रेमाश्रु] अधिक प्रेम के कारण नेत्रों से बहने वाला जल ।

वि० वि०—प्रेमास्रु दो अवस्थाओं में प्रकट होते है । प्रथम—चिरकाल के वियोग के बाद नायक नायिका का मिलन हो, द्वितीय—नायक नायिका के बीच किसी गलत फहमी के कारण चल रहे झगड़े के अन्त में समझौते के समय । यह सयोग शृंगार की अवस्था होती है ।

प्रेमास्वारथ—सं० स्त्री० [स० स्वार्थ + प्रेमा] वेश्या, गणिका । (अ मा.)

प्रेमी—वि० [सं० प्रेमिन्] प्रेम करने वाला, अनुरागी, आसक्त ।

सं० पु०—मित्र, दोस्त । (अ.मा)

रू० भे०—परेमी ।

प्रेमौ—देखो 'प्रेम' (अल्पा , रू. भे)

उ०—अधिक द्रव्य खरचइ तिहां, पात्र पोसइ बहु प्रेमौ जी ।
—स. कु.

प्रेयसी—वि० [सं०] १. वह स्त्री जिसके साथ उसका प्रेमी (पुरुष) अत्यधिक प्रेम करता हो, प्रेमिका ।

२. स्त्री, भार्या ।

३. हरीतकी, हर्रे । (नां. मा.)

रू० भे०—प्रहसी ।

प्रेरक, प्रेरक्क—वि० [सं० प्रेरक] प्रेरणा देने वाला, प्रवृत्त करने वाला, प्रेरित करने वाला । उ०—१. अचल अखड अनत अजनमा एकातीत अनूप । प्रेरक साक्षी द्रस्टा कोई, वोई सुखराम स्वरूप ।
—स्रीसुखराम जी महाराज

उ०—२. परमापति सागति प्रेरक की, हहराय थके मति हेरक की ।—ऊ. का.

उ०—३. महराज किरणि जिम बांणि ग्रथ, प्रेरक्क सकति कवि रसण पंथ ।—सू. प्र.

प्रेरणा—सं० स्त्री० [सं०] १. किसी को किसी कार्य में प्रवृत करने या लगाने की क्रिया ।

२. सहसा मन में जागृत कोई विचार या भावना जिसके द्वारा कोई निश्चित निर्णय लिया जा सके।

३. किसी व्यक्ति या क्षेत्र द्वारा कोई कार्य करने अथवा किसी विषय पर विचार करने के लिए प्राप्त होने वाला संकेत, भाव अथवा विचार।

४. दबाव।

रू० भे०—परेरणा।

प्रेरणारथकक्रिया—सं० स्त्री० [सं० प्रेरणार्थक क्रिया] व्याकरण में क्रिया के व्यापार के सम्बन्ध में सूचित होने वाला क्रिया का वह रूप जो किसी की प्रेरणा से कर्त्ता के द्वारा हुआ हो।

ज्यूं०—पढ़वाड़णौ, पढवावणौ।

प्रेरणौ, प्रेरबौ—क्रि० स० [सं० प्रेरणं] १. ढकेलना, गति देना।

उ०—आंगण माहे जळ छै। सु पवन को प्रेरियौ चालै छै।

—वेलि टी.

२. भेजना। उ०—१. दिस अस्ट खबर कज खबरदार, प्रेरया सिद्ध गुटका प्रकार।—सू प्र.

३. चलाना, फेंकना। उ०—१. परंतु प्रथ्वीराज रौ मत्री उण रौ उक्त रूप इंद्रजाळ रा उद्वंधन में न आयौ र स्रावक रा प्रेरिया समस्त ही फंद जाण लिया।—व. भा.

४. प्रेरित करना। उ०—जठै गजारूढ चालुक्यराज सांमुहौ घकाय अळाव घकता लोयण मिळाय आप रा पखरैतां नूं प्रेरण रै काज अनेक प्रसंसा रा प्रपच भणियौ।—वं. भा.

प्रेरणहार, हारौ (हारी), प्रेरणियौ—वि०।

प्रेरिओड़ौ, प्रेरियोड़ौ, प्रेरयोड़ौ—भू० का० कृ०।

प्रेरीजणौ, प्रेरीजबौ—कर्म वा०।

पेरणौ, पेरबौ—रू० भे०।

प्रेरणिका—सं० स्त्री० [सं०] बैल हांकने की लकड़ी। उ०—पाणां प्रेरणिका पापल पुचकारैं। बापू बापू कर थापल बुचकारैं।—ऊ. का.

प्रेरित, प्रेरियोड़ौ—भू० का० कृ० [सं० प्रेरित] १. प्रेरित किया हुआ. २. ढकेला हुआ, गति दिया हुआ. ३. भेजा हुआ. ४. चलाया हुआ, फिराया हुआ।

(स्त्री० प्रेरियोड़ी)

प्रेस—सं० पु० [अं०] १. समाचारपत्र, पुस्तकें आदि छापने की कल या यंत्र।

२. छापाखाना, मुद्रणालय।

प्रेसक—वि० [सं० प्रेषक] १. भेजने वाला।

२. प्रस्तुत करने वाला।

प्रेसमेन—सं० पु० [अं०] छापे की कल चलाने वाला व्यक्ति।

प्रेसिडेंट—सं० पु० [अं०] १. राष्ट्रपति। २. अध्यक्ष। ३. सभापति।

प्रेसित—वि० [सं० प्रेषित] १. भेजा हुआ, चलाया हुआ।

२. प्रस्तुत किया हुआ।

प्रेहसी—देखो 'प्रेयसी' (रू. भे) (अ. मा.)

प्रेहा—सं० स्त्री० [सं० प्र+इहा] आकांक्षा, अभिलाषा, कामना, इच्छा।

उ०—'ऊदौ' 'खेतल' 'मधकर' एहा। 'पीथावत' पत कांम स-प्रेहा।

—रा रू.

प्रैंतीस—देखो 'पैंतीस' (रू. भे.)

प्रैत—देखो 'प्रेत' (रू. भे)

प्रैतकरम—देखो 'प्रेतकर्म' (रू. भे.)

उ०—प्रैतकरम कीन्हां सूं पैला, और वैत नहिं आयौ। देवकुंड उण रैत भूंड द्रग, दैतकुंड दरसायौ।—ऊ का.

प्रैळाद—देखो 'प्रह्ळाद' (रू. भे.)

प्रोंच—देखो 'पुणचौ' (मह., रू. भे.)

उ०—बांधिया चिहूं करै बाजूबंध, घर आगळि बहुरखा घर। कांमण हाथ विराजइ कांकण, प्रोंचां ऊपर अवज पर।

—महादेव पारवती री वेलि

प्रोंची—देखो 'पुणची' (रू. भे)

प्रोग्रांम—सं० पु० [अ० प्रोग्रेम] १. होने वाले कार्यों का सुनिश्चित क्रम।

२. कार्यक्रम सूचक पत्र।

प्रोढ़—देखो 'प्रौढ़' (रू. भे.)

प्रोढ़ा—देखो 'प्रौढ़ा' (रू. भे)

उ०—१. मुगधा मध्या नै मोढा मिळ जावै। पढ़ पढ़ प्रारथना प्रोढ़ा पिळजावै।—ऊ. का.

उ०—२. इसी-इसी खोडस वरसां री मुगधा, मध्या, प्रोढ़ा रूप रो निध्यांन।—रा. सा. सं.

प्रोढ़ौ—देखो 'प्रौढ़' (अल्पा, रू. भे)

प्रो'णौ, प्रो'बौ—देखो 'पोणौ, पोबौ' (रू. भे.)

उ०—ताहरां भाटिये रावजी रो माथौ वाढ़ि वांस में प्रो'यौ।

—नैणसी

प्रोत—१. देखो 'पोत' (रू भे)

उ०—पती जुद्ध में दुममणां री फौजां रा हाथी मारनै तो मोतिया रा ढिगला दिया है, जिण रा प्रोत वा पोत चौडां नै हाथिया रै दांतां रा चूड़ा मोल भांगण रौ कांम नही।—वी. स. टी.

२. देखो 'पुरोहित' (रू. भे.)

उ०—पुमकरणौ त्रिरांमण रिणछोड़दास वेरौ १ रांमेस्वर जी रा मिंदर कनै करायौ संमत १७ में, तिको प्रोत जी रौ कुवौ वाजै है।

—नैणसी

प्रोत्साहन—सं० पु० [सं०] १. अतिशय-उत्साह, उमंग।

२. हिम्मत।

प्रोथ—सं० पु० [सं० प्रोथम्, प्रोथथः] १. घोड़े या सूअर का नथुना। (डि.को.)

२. चूतड़, नितंब । (डि. को.)

३. कटि प्रदेश । (डि. को.)

प्रोथी—स० पु० [सं० प्रोथिन्] घोड़ा । (डि. को.)

प्रोयणौ, प्रोयबौ—देखो 'पोणौ, पोबौ' (रू. भे.)

उ०—वधियौ महवेचौ 'विजौ' सारा सूं अवसाण । खेंग लसक्कर खांन रा प्रोया सेल प्रमाण ।—रा. रू.

प्रोयत—देखो 'पुरोहित' (रू. भे.)

उ०—मीठीनाडी तळाव नै वाग कमठौ प्रोयत जसकरण हस्ते हुवौ ।—नैणसी

(स्त्री० प्रोयतण, प्रोयतांणी)

प्रोयोड़ौ—देखो 'पोयोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रोयोड़ी)

प्रोळ—देखो 'पौळ' (रू. भे.)

उ०—हिवै हाथी मेडतियां रै गयौ । ताहरां मेडतियां हाथी रा घाव बाधा । हाथी नूं माहे आंणं सु प्रोळ मे हाथी मावै नही ।
—नैणसी

प्रोळबारट, प्रोळबारहठ—देखो 'पौळबारहठ' (रू. भे.)

उ०—तिण रै प्रोळबारट रवौ सुरतांणियौ हुतौ । तिण रै वैर चारण नागही देवी हुती ।—नैणसी

प्रोळि—देखो 'पौळ' (रू. भे.)

उ०—जीयैं घडी उदैराव रो जनम हूवौ तीयैं घड़ी प्रोळि रा कांगरा गिड़ पड़्या । ढोलीयै रा साल चार भागा ।
—देवजी बगड़ावत री वात

प्रोळियौ—देखो 'पौळियौ' (रू. भे.)

उ०—सारी प्रोळि रा प्रोळियां नूं हुकम कर राखो, म्हे जिण प्रोळि आवां म्हांनूं उण प्रोळि मांहे असवार १०० एक वीद आवण देज्यो ।
—नैणसी

प्रोळी—देखो 'पौळ' (रू. भे.)

प्रोवणौ, प्रोवबौ—देखो 'पोणौ, पोबौ' (रू. भे.)

उ०—ढोला थे मोती म्हे लाल, ढोला हेकी नै नयड़ी म्हें दोनूं प्रोविया ।—लो. गी.

प्रोवणहार, हारौ (हारी), प्रोवणियौ—वि० ।

प्रोविओड़ौ, प्रोवियोड़ौ, प्रोव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

प्रोवीजणौ, प्रोवीजबौ—कर्म वा० ।

प्रोवियोड़ौ—देखो 'पोयोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रोवियोड़ी)

प्रोसितपतिका—सं० स्त्री० [सं० प्रोषितपतिका] वह स्त्री जो अपने पति के विदेश गमन के कारण उसके वियोग में विह्वल, विकल या दुखी हो, प्रोषित-नायिका ।

प्रोह—स० पु० [स०] १. हाथी का पैर । (डि. को.)

२. देखो 'पौ' (रू. भे.)

उ०—असी कोस हूंता खड़ आयौ, 'गजण' कळोधर कुंवर-मुर । लसकर मेलै सहर लूटियौ, प्रोह फाटां साहजापुर ।
— महाराजा अभयसिंह रौ गीत

प्रोहत, प्रोहित, प्रोहित्त—देखो 'पुरोहित' (रू. भे)

उ०—१. वैसाख सुदि १ डेरौ घेवड़े प्रोहतां रै, बाहळी वहतां माहे कूच कर गया ।—नैणसी

उ०—२. स्रीमुनायक जी रो मिंदर रावजी गांगा जी री वार में प्रोहत मूळै करायौ ।—नैणसी

उ०—३. राव मालदे जी सूर पातसाह कनै एक प्रोहित नै एक वरजांग दोनूं ही नूं परधांनै मेलिया था ।—नैणसी

(स्त्री० प्रोहितण, प्रोहितांणी)

प्रोंचाळ—देखो 'पोंचाळौ' (मह., रू. भे.)

उ०—'करजाजळ' रिण काळ, 'जैत' कळोधर 'जेत' जिम । सारा पहिलौ 'सूज' उत, पड़िओ लड़ि प्रोंचाळ ।—वचनिका

प्रोंचाळौ—देखो 'पोंचाळौ' (रू. भे.)

उ०—'कमा' हरौ 'गिरवर' रिण काळौ, 'पीथलिआ' जांवळि प्रोंचाळौ 'ऊदौ' 'जगौ' किआ बे आगै, जोड़ि 'करण' जैता' छळ जागै ।
—वचनिका

(स्त्री० प्रोंचाळी)

प्रौ—देखो 'परौ' (रू भे)

प्रौचाळौ—देखो 'पोचालौ' (रू. भे.)

(स्त्री० प्रौचाळी)

प्रौढ़—वि० [सं०] (स्त्री० प्रौढा) १. जो पूर्णतया बढ़कर या विकसित होकर अपनी पराकाष्ठा तक पहुंच चुका हो, पूर्ण बढ़ा हुआ ।

२. वह (व्यक्ति) जिसने अपनी प्रारंभिक आयु पार करके मध्यावस्था प्राप्त कर ली हो ।

३. बलवान, शक्तिशाली । ४. दृढ़, पक्का, मजबूत ।

५. चतुर, चालाक ।

रू० भे०—प्रौढ ।

अल्पा०—प्रौढ़ौ, प्रौढौ ।

६. देखो 'प्रौढ़ा' (रू. भे.)

उ०—संकोच होवइ प्रौढ़ रमणी, संग थी लघु कंत ज्युं । तिम कंत तुम चउ वेस देखी, मइं बीभत्स पशु भजुं । ए प्रौढ़ रयणी सयण सेजइं, एकलां किम जावए । हेमंत रितु मइं प्रिउ उछगइ, खेलवुं मन भाव ए ।—वि. कु.

प्रौढ़ता—स०स्त्री० [स० प्रौढ़+रा०प्र०ता] प्रौढ़ होने का भाव, प्रौढ़त्व ।

प्रौढ़ा—सं० स्त्री० [स०] १. वह स्त्री जिसको युवावस्था प्राप्त हुए बहुत समय व्यतीत हो चुका हो, अधिक वयस वाली स्त्री ।

२. साहित्य में वह नायिका जो काम कला आदि में पूर्ण दक्ष हो । साधारणतः ३० से ५० वर्ष तक की आयु वाली स्त्री प्रौढ़ा मानी जाती है । उ०—दिन जेही रिणी रिणाई दरसणि, क्रमि क्रमि लागा

संकुडिणि । नीठि छुडै आकास पोस निसि, प्रौढ़ा करखणि पंगुरिणि ।—वेलि

वि० वि०—भाव प्रकाश के अनुसार इस अवस्था की स्त्री वर्षा और वसंत ऋतु में संभोग करने योग्य होती है । साहित्य मे इसे रति-प्रीता और आनन्द-संभोगिता ये दो भेद माने गये हैं । मान-भेदानुसार धीरा, अधीरा और धीराधीरा ये तीन भेद तथा स्वभावानुसार अन्य सुरत-दुखिता, वक्रोक्ति-गर्विता और मानवती ये तीन भेद माने गये है । इसके अतिरिक्त स्वकीया, परकीया और सामान्या ये तीन भेद भी और हैं ।

३. वह गाथा छन्द जिसमें भगण का प्रयोग बहुत हुआ हो ।

उ०—भगण बहुत सो प्रौढ़ा भंणजै, गण बोह विप्र वरधका गिणजे ।—र. ज. प्र.

रू० भे०—प्रउढ़ा, प्रऊढ़ा, प्रोढा, प्रौढ ।

प्रौढ़ा-अधीरा—सं० स्त्री० [सं०] नायक में विलास सूचक चिह्न देखकर प्रत्यक्ष कोप करने वाली नायिका ।

प्रौढ़ाधीरा—सं० स्त्री० [सं०] नायक में विलास सुचक चिह्न देखकर प्रत्यक्ष कोप न करके व्यंग में कोप करने वाली नायिका ।

प्रौढ़ाधीराधीरा—सं० स्त्री० [सं०] नायक में पर-स्त्री गमन के चिह्न देखकर कुछ व्यंग में और कुछ प्रत्यक्ष में कोप करने वाली नायिका ।

प्रौढ़ोक्ति—सं० स्त्री० [सं०] एक प्रकार का अलंकार जिसमें किसी कार्य के उत्कर्ष का ऐसा कारण कल्पित किया जाय जो वास्तव में न हो। (साहित्य)

प्रौढ़ो—देखो 'प्रौढ़' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—आसालूध अजंपुर आवी, जुग सहू जोवति जुआजुई । लसियौ 'हाजन' प्रौढ़ौ लाडौ, अकबर फौज सचींत हुई ।—दूदौ

प्रौळ, प्रौळि—देखो 'पौळ' (रू. भे.)

उ०—१. एम गढ़ निज प्रौळ आवै, गांन सहचर फूल गावै । कुंभ सनमुख निजर कीधौ, लखै छत्रपति वांद लीधौ । —सू.प्र.

उ०—२. सु तळाई जांगळू री प्रौळ रै मुंहडै आगै करावण मतै छै। —नैणसी

उ०—३. भटनेर प्रौळि हूंता, भटक्कि, कांवलां राउ पइठउ कटक्कि । 'खेतल' रिणि खेसइ खुरासांण, धुध धसइ मत्त गइ जूह जांण ।—रा. ज. सी.

प्रौळियौ, प्रौलियौ—देखो 'पौळियौ' (रू.भे.)

उ०—लंपट तजि प्रौलियौ, निगुण प्रभु नीलज नारी ।—ध.व.ग्रं.

प्रौस्ठपदी—सं० स्त्री० [सं० प्रौष्ठपदी] भादों मास की पूर्णिमा ।

प्लक्ष—सं० पु० [सं०] १. पुराणानुसार सात महाद्वीपों में से एक ।

२. एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

प्लवंग—सं० पु० [सं० प्लवंग:] १. बंदर, वानर ।

२. घोड़ा, अश्व । उ०—जूजूइ जाति-तणा घणा, प्लवंग न लब्भइ पार । वेगि वहंता वाचनइ, हणहण घण हींसार ।—मा. कां. प्र.

३. हिरण ।

रू० भे०—पलंव, पलंवंग, पलवंग, पलवग, पलवंगम, पलवग, प्लवग ।

प्लवंगम—स० पु० [सं०] १. एक छंद विशेष जिसके प्रत्येक चरण में ८ व १३ के विराम से २१ मात्राएं होती है ।

२. वानर ।

३. मेंढ़क ।

रू० भे०—पवंग, पवंगम, फलवंगम ।

प्लवंगेस—सं० पु० [सं० प्लवंग+ईश] हनुमान ।

प्लव—सं० पु० [सं० प्लव:] चाण्डाल । (हिं. को.)

प्लवग—देखो 'प्लवंग' (रू.भे.)

प्ला वत—वि० [सं०] भरा हुआ ।

रू० भे०—पलावित ।

प्लीहा—सं० स्त्री० [स०] तिल्ली नामक रोग । (अमरत)

प्लुत—सं० पु० [सं०] १. घोड़े की चाल ।

२. स्वर का एक भेद जिसके उच्चारण में साधारण से तिगुना समय लगता है । (व्याकरण)

३. तीन मात्राओं का ताल । (संगीत)

प्लेग—सं० पु० [अं०] एक भयंकर संक्रामक रोग जो प्राय: सर्दी की मौसम में उत्पन्न होकर फैलता है ।

रू० भे०—पलेग ।

प्लेट—सं० पु० [अं०] तश्तरी, रिकाबी ।

रू० भे०—पलेट ।

प्लेटफारम—सं० पु० [अं० प्लेटफार्म] रेल्वे स्टेशन पर रेल की पटरी के समीप बना हुआ जमीन से ऊंचा समतल लम्बायमान चबूतरा ।

रू० भे०—पलेटफारम ।

प्लेटिनम—सं० पु० [अं०] सोने से भी अधिक मूल्यवान सफेद रंग की एक बहुत कठोर धातु ।

रू०भे०—पलेटिनम ।

प्लोट—सं०पु० [अं०] एक निश्चित भू भाग ।

रू० भे०—पलोट ।

फ

फ—देवनागरी वर्णमाला का २२ वां व्यंजन एवं 'प' वर्ग का दूसरा वर्ण जो भाषा विज्ञान एवं व्याकरण की दृष्टि से महाप्राण, अघोष, दघोष्ठ्य स्पर्श व्यंजन का संकेतक है।

फंक—देखो 'फांक' (रू. भे.)

उ०—धारा निसंक बंक धंस, अरांण मचा अतंक। फंक-फंक व्है कट पड़ै, रंवड़ कद व्है रंक।—रेवतसिंह भाटी

फंकणौ, फंकबौ—देखो 'फाकणौ, फाकबौ' (रू.भे.)

उ०—सांफळा मिळै सार्फे तुरत, फुरत करै दळ **फंकिया**। मेछांग वंस तपस्या घटी, ढहसीजे वळि ढूकिया।—मा. वचनिका

फंकणहार, हारौ (हारी), **फंकणियौ**—वि०।

फंकिओड़ौ, फंकियोड़ौ, फंकचोड़ौ—भू० का० कृ०।

फंकीजणौ, फंकीजबौ—कर्म वा०।

फंकियोडौ—देखो 'फाकियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० फकियोडी)

फंकी—सं० पु० [देशज] १. मोठ, मूंग, ग्वार आदि का महीनतम चूर्ण जिसके शरीर में लगने से खुजली चलने लगती है। (शेखावाटी)

२. देखो 'फाकी' (रू. भे.)

फंग—सं० पु०[?] एक प्रकार का पौधा विशेष। उ०—जाई नई जंबीर दाड़िम, गूगळणि गोग्रंख। कंटाळि आसंधि बाबची, तुळसी मिर्फ़न्यौ फग।—रुक्मणी मंगळ

फंगड़ियो—सं० पु० [देशज] रहँट के उस आड़े लम्बे लट्ठे के दो भागों में से एक जिस पर बैठकर बैल हांका जाता है।

फंट—सं० पु० [सं० फांट] १. विरोध।

२. पृथकता।

फंटणौ, फंटबौ—क्रि० अ० [राज०] १. विरुद्ध होना।

२. पृथक होना। उ०—थें आज सूं ई न्यारा-न्यारा फंट जावौ।
—फुलवाड़ी

फंटणहार, हारौ (हारी), **फंटणियौ**—वि०।

फंटाड़णौ, फंटाड़बौ, फंटाणौ, फंटाबौ, फंटावणौ, फंटावबौ
—सक० रू०।

फंटिओड़ौ, फंटियोड़ौ, फंटचोड़ौ—भू० का० कृ०।

फंटीजणौ, फंटीजबौ—भाव वा०।

फटणौ, फटबौ—रू० भे०।

फंटाई—सं० स्त्री० [राज० फाड़णौ] १. बढ़ई का लकड़ी छीलने का ओजार।

२. पृथकता।

फंटाड़णौ, फंटाड़बौ—देखो 'फंटाणौ' फंटाबौ, (रू.भे.)

फंटाड़णहार, हारौ (हारी), **फंटाड़णियौ**—वि०।

फंटाड़िओड़ौ, फंटाड़ियोड़ौ, फंटाड़चोड़ौ—भू० का० कृ०।

फंटाड़ीजणौ, फंटाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फंटाड़ियोड़ौ—देखो 'फटायोडौ' (रू.भे.)

(स्त्री० फंटाडियोडी)

फंटाणौ, फंटाबौ—क्रि० स० [राज० फंटणौ] १. पृथक करना, अलग करना।

उ०—चूरू कांनीं पधारचा जद आगै चंद्रभांण जी तीलोकचंद जी पहिलां सिवरांमदास जी नैं, संतोखचंद जी नैं **फंटायनै** आहार पांणी भेलो कर लियौ।—भि. द्र.

२. विरुद्ध करना।

फंटाणहार, हारौ (हारी), **फंटाणियौ**—वि०।

फंटायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फंटाईजणौ, फंटाईजबौ—कर्म वा०।

फंटाड़णौ, फंटाड़बौ, फंटावणौ, फंटावबौ—रू०भे०।

फंटायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. पृथक किया हुआ. २. विरुद्ध किया हुआ.

(स्त्री० फंटायोड़ी)

फंटावणौ, फंटावबौ—देखो 'फंटाणौ, फंटाबौ' (रू भे.)

फंटावणहार, हारौ (हारी), **फटावणियौ**—वि०।

फंटाविओड़ौ, फंटावियोड़ौ, फंटाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फंटावीजणौ, फंटावीजबौ—कर्म वा०।

फंटावियोड़ौ—देखो 'फंटायोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० फंटावियोडी)

फंटियोड़ौ—भू० का० कृ०—१. पृथक हुवा हुआ. २. विरुद्ध हुवा हुआ.

(स्त्री० फटियोडी)

फंड—सं० पु० [अ०] १. किसी निश्चित कार्य को करने के लिए एकत्रित की जाने वाली सम्पत्ति या धन, कोश।

ज्यूं०— सुरक्षाफंड।

[देशज] २. आडंबर, ढोंग।

फंडर—देखो 'फांडर' (रू भे.)

फणाकार—देखो 'फणाकार' (रू.भे.)

उ०—जिसी सिधवी राग काळी जगायौ, उपाड़ै फणाकार द्रब्बार आयौ। फणाकार भाटकतै पूंछ फेरी, घणौ घातियौ सांकड़ै सांम घेरी।—ना. द.

फंद—देखो 'फदौ' (मह., रू. भे.)

उ०—१. तनै कहूं समभाय, मत-मंद जग फद तज। अरप तन-मन सुध न वेग सुणसी 'अरज।—र. ज. प्र.

उ०—२. देखै फिरती दूतियां, सूतो घूंणै सीस। फंसियौ कांमण फंद में, रसियौ करै न रीस।—बा. दा.

उ०—३. यी वरखा रित बौळवी, वीती सरद अदुंद। हिम-रुत

आधी बीच त्यों, फेर प्रगट्यौ फंद ।—रा. रू.

उ०—४. थांनै कीं तह्लो-मह्लो है तो म्हनै उण री काळजो लायनै दो; जिण सूं म्हारै जुरा-मरण री फंद कटै अर म्हें आप रै साथै ताजिंदगी अमर सुख री मौज मांणूं ।—फुलवाड़ी

उ०—५. रांणी मूंडौ उतारनै कह्यौ—म्हारी बदनांमी री तो अबै नी कोई छेह है नी कोई पार ! नित नवी नवी बातां उडैला । थांरो बोभौ म्हारा सूं तो भेलणौ दोरो है । मर जावूं तो अै बदनांमी रा फंद कटै ।—फुलवाड़ी

मुहा०—फंद कटणौ—समाप्ति होना, छुटकारा पाना ।

फंदणौ, फंदबौ—क्रि०अ० [देशज] १. बंधन में पड़ना, आफत में पड़ना । उ०—पण नी हजारूं वरसां सुं मिनख इण जाळ में फंदियोड़ौ है अर भगवांन हाल तक उण नै सुमत नीं दी ।—फुलवाड़ी

२. धोखे में आना, जाल में पड़ना । उ०—नाई नै तो आप री अेक ई दांव भरै पड़तो नी दीख्यो । अबै करै तो कांई करै । माथै में खाज खिणतो कैवण लागो—अठै थारै कुत्तां सूं तो घरमेलो व्हैगो पण राजा जी रै पाखती गियां माथा में जूता त्यार है । म्हैं तो इण कांम में भूंडो फंदियो ।—फुलवाड़ी

३. झगड़े या टंटे में पड़ना ।

४. कुत्ते की जाति के प्राणियों की जननेन्द्रियों का संभोग के बाद कुछ समय तक आपस में फंसा रहना ।

फंदणहार, हारौ (हारी), फंदणियौ—वि० ।

फंदाड़णौ, फंदाड़बौ, फंदाणौ, फंदाबौ, फंदावणौ, फंदावबौ—सक० रू० ।

फंदिग्रोड़ौ, फंदियोड़ौ, फंदयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फंदीजणौ, फंदीजबौ—भाव वा० ।

फंदाड़णौ, फंदाड़बौ—देखो 'फंदाणौ, फंदाबौ' (रू.भे.)

फंदाड़णहार, हारौ (हारी), फंदाड़णियौ—वि० ।

फंदाड़िग्रोड़ौ, फंदाड़ियोड़ौ, फंदाड़योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फंदाड़ीजणौ, फंदाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फंदाड़ियोड़ौ—देखो 'फंदायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फंदाड़ियोड़ी)

फंदाणौ, फंदाबौ—क्रि०स० [देशज] १. बन्धन में डालना, आफत में डालना । उ०—मन में दोनूं जणा राजी व्हैता व्हैला के दीवांण जी नै नांमी फंदाया ।—फुलवाड़ी

२. धोखे में डालना, जाल में डालना ।

३. झगड़े या टण्टे में डालना ।

४. कुत्ते की जाति के प्राणियों में आपस में संभोग कराना ।

फंदाणहार, हारौ (हारी), फंदाणियौ—वि० ।

फंदायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फंदाईजणौ, फंदाईजबौ—कर्म वा० ।

फंदाड़णौ, फंदाड़बौ, फंदावणौ, फंदावबौ—रू० भे० ।

फंदायोड़ौ—भू०का०कृ०—१. बन्धन में डाला हुआ, आफत में डाला हुआ. २. धोखे में डाला हुआ, जाल में फंसाया हुआ. ३. झगड़े या टण्टे में फसाया हुआ. ४. कुत्ते-कुत्ती या इस जाति के प्राणियों को संभोग कराया हुआ.

(स्त्री० फंदायोड़ी)

फंदावणौ, फंदावबौ—देखो 'फंदाणौ, फंदाबौ' (रू. भे.)

फंदावणहार, हारौ (हारी,) फंदावणियौ—वि० ।

फंदाविग्रोड़ौ, फंदावियोड़ौ, फंदाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

फंदावीजणौ, फंदावीजबौ—कर्म वा० ।

फंदावियोड़ौ—देखो 'फंदायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फंदावियोड़ी)

फंदियोड़ौ—भू०का०कृ०—१. बन्धन में पड़ा हुआ, आफत में पड़ा हुआ. २. जाल में पड़ा हुआ, धोखे में पड़ा हुआ. ३. झगड़े या टण्टे में पड़ा हुआ, उलझन में पड़ा हुआ. ४. कुत्ते-कुत्ती या इस जाति के प्राणियों का संभोगा-वस्था में फंसा हुआ.

(स्त्री० फंदियोड़ी)

फंदौ—सं० पु० [देशज] १. वन्धन । उ०—छोड़ दिया सब घर फंदा । स्रीवीर तणी माता 'देवानंदा' ।—जयवांणी

क्रि० प्र०—आणौ, छूटणौ, पड़णौ, लागणौ ।

२. जाल, उलझन । उ०—नही ज्यां लघु दीरघ कोई, सदा सुद्ध स्वरूप निरमोई । सोई सुखराम रहित धंदा, नही ज्यां बंध मुक्त फंदा ।—स्रीसुखराम जी महाराज

क्रि० प्र०—फंसणौ ।

३. दु.ख, कष्ट ।

क्रि० प्र०—टूटणौ, पड़णौ ।

४. झगड़ा, युद्ध ।

क्रि० प्र०—पड़णौ ।

५. उपद्रव, उत्पात ।

६. टटा ।

७. पर-पुरुष या पर-स्त्री के प्रेम में पड़ना ।

८. रस्सी आदि में एक विशेष प्रकार की गांठ लगाकर बनाया जाने वाला घेरा । उ०—चौधरी फंदौ कीं ढीलो करियो । कह्यौ—अठै कांई खावण नै बळियौ ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—खुलणौ, खोलणौ, देणौ, बणाणौ, लगाणौ, लागणौ ।

मह०—फंद ।

फंफणौ, फंफबौ—क्रि० अ० [देशज] प्रयत्न करना, परिश्रम करना । उ०—मा-बाप घणा-ई फंफिया, थारै-म्हारै हिड़त्र्यां रै हाथ लगाया, गैणै-गांठै अर नगदी रो ई लोभ देखायौ पण आंधी छोरी रै कोई हाथ भालण नै त्यार को हुयौ नी ।—बरसगांठ

फंफणहार, हारौ (हारी), फंफणियौ—वि० ।
फफाड़णौ, फफाड़बौ, फफाणौ, फंफाबौ, फंफावणौ, फंफावबौ —सक० रू० ।
फंफिग्रोड़ौ, फंफियोड़ौ, फंफ्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
फंफीजणौ, फफीजबौ—भाव वा० ।

फंफाड़णौ, फफाड़बौ—देखो 'फंफाणौ, फंफाबौ' (रू. भे.)
फंफाड़णहार, हारौ (हारी), फंफाड़णियौ—वि० ।
फफाड़िग्रोड़ौ, फंफाड़ियोड़ौ, फंफाड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
फंफाड़ीजणौ, फंफाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फंफाड़ियोड़ौ—देखो 'फंफायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फफाड़ियोड़ी)

फंफाणौ, फंफाबौ—क्रि०स० [देशज] १. प्रयत्न कराना । २. कष्ट देना ।
फंफाणहार, हारौ (हारी), फंफाणियौ—वि० ।
फंफायोड़ौ—भू०का०कृ० ।
फंफाईजणौ, फंफाईजबौ—कर्म वा० ।
फंफाड़णौ, फंफाड़बौ, फंफावणौ, फंफावबौ—रू०भे० ।

फंफायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. प्रयत्न कराया हुआ. २. कष्ट दिया हुआ.
(स्त्री० फंफायोड़ी)

फंफावणौ, फंफावबौ—देखो 'फंफाणौ, फंफाबौ' (रू. भे.)
फंफावणहार, हारौ (हारी), फंफावणियौ—वि० ।
फंफाविग्रोड़ौ, फंफावियोड़ौ, फंफाव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
फंफावीजणौ, फंफावीजबौ—कर्म वा० ।

फफावियोड़ौ—भू०का०कृ०—देखो 'फंफायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फंफावियोड़ी)

फफियोड़ौ—भू०का०कृ०—१. प्रयत्न किया हुआ. २. कष्ट पाया हुआ.
(स्त्री० फफियोड़ी)

फंफेड़णौ, फंफेड़बौ—क्रि०स० [देशज] १. तीर मारना, तीर घुसाना ।
उ०—ओदी कुढि उलंघि, आयौ जिण दिसि आहेड़ीं । तेण चलाया तीर, फाल मांहि टाल फंफेड़ी ।—ध. व. ग्रं.
२. किसी प्राणी अथवा पदार्थ को पकड़ कर खूब हिलाना या झटका देते हुए इधर-उधर करना, झकझोरना ।
उ०—१. कोयल क्यूं थूं उणमणी क्यूं ढीलौ थारौ गात, के गिडक फंफेड़ियौ के बाई—सा घाल्यो हाथ ।—फुलवाड़ी
उ०—२. अठै म्हारी धरम-बैन अेक मिन्नी रै'वै । म्हारै हूंच मारतै तौ देख, पछै थारी कांई बात बिगड़ै । थनै फंफेड़ फफेड़नै मार न्हाकैला ।—फुलवाड़ी
फंफेड़णहार, हारौ (हारी), फंफेड़णियौ—वि० ।
फंफेड़िग्रोड़ौ, फंफेड़ियोड़ौ, फंफेड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
फंफेड़ीजणौ, फंफेड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फंफेड़ियोड़ौ—भू०का०कृ०—१. तीर मारा हुआ, तीर घुसाया हुआ.
२. किसी प्राणी या पदार्थ को पकड़ कर खूब हिलाया हुआ या झटका देकर इधर-उधर किया हुआ, झकझोरा हुआ.
(स्त्री० फंफेड़ियोड़ी)

फंबड़ी—१. देखो 'पांमड़ी' (रू.भे.)
२. देखो 'पूंगड़ौ' (स्त्री०)

फंबड़ौ—देखो 'पूंगड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० फंबड़ी)

फंबी—देखो 'फुंबी' (रू.भे.)

फंवार—सं० स्त्री०—१. फंवारे से निकलने वाली धारा ।
उ०—उन मुन ध्यांन अखंड धुन, वरसत सब्द फंवार । बिना चोंच एक हंसलौ, पीवै त्रिवेणी-द्वार ।—स्रीहरिरांम जी महाराज
२. देखो 'फंवारौ' (मह, रू. भे.)

फंवारौ—सं०पु० [अ० फव्वार:] १. वह यंत्र जिसमें से दबाव के कारण पानी बहुत बारीक बूंदों के रूप में गिराया जाता है ।
२. पानी आदि का बहुत बारीक छींटा ।
३. बरसात की महीन बूंदों की झड़ी ।
रू०भे०—फवारौ, फव्वारौ, फुंग्रारौ, फुंवारौ, फुंहारौ, फुग्रारौ, फुवारौ, फुहारौ, फूंहारौ, फूहारौ, फोहारौ, फौआरौ, फौव्वारौ, फौहारौ ।
मह०—फंवार, फुंवार, फुंहार, फुहार, फौहार ।

फंसणौ, फंसबौ—क्रि०अ० [सं०पाशनं] १. नैतिक, सामाजिक, व्यवहारिक या सांसारिक बन्धन के वशीभूत होना ।
उ०—सूरदास जी भटकतौ-भटकतौ जवाब देवतौ वां दिनां, म्हैं ई थोड़ौ घणौ माया-जाळ में फंसियोड़ौ हौ ।—फुलवाड़ी
२. किसी वस्तु का इस प्रकार किसी वस्तु में प्रवेश कर जाना कि उसका पुनः बाहर निकलना कठिन या असंभव हो ।
३. किसी तीक्ष्ण पदार्थ में किसी वस्तु का उलझ जाना या अटक जाना ।
ज्यूं०—तार में कपड़ौ फंसणौ, कांटां में धोतियौ फंसणौ ।
४. किसी कार्य में इस प्रकार व्यस्त रहना कि उससे छुटकारा मिलना मुश्किल हो ।
ज्यूं०—म्हैं कांम में बुरी तरां फंस्योड़ौ हूं ।
५. मीठी-मीठी या छलपूर्ण बातों में छला जाना या धोखे में आना ।
उ०—फंस गये हम मोहन फंदन में, बहुकाळ रहे तिण बंधन में ।
—ऊ. का.
६. पर-पुरुष या पर-स्त्री के प्रेम में पड़ना । उ०—देखे फिरती दूतियां, सूतौ धूणै सीस । फंसियौ कांमण फंद में, रसियौ करै न रीस ।—बां. दा.

७. किसी पाश या फंदे में पड़ना।
८. पशु-पक्षियों का किसी जाल में पड़ना
९. किसी रहस्यमयी स्थिति में हत-बुद्धि होना। उ०—राजकंवर आपरी पीढी सांमी जोयौ तौ उठै अेक ई बोटी कटियोड़ी नीं दीसी। नीं लोई रिसतौ निगै आयौ अर नीं किणी घाव रौ दरद लखायौ। वौ किण माया नगरी में फंसग्यौ।—फुलवाड़ी

फंसणहार, हारौ (हारी), फंसणियौ—वि०।

फंसाड़णौ, फंसाड़बौ, फंसाणौ, फंसाबौ, फंसावणौ, फंसावबौ—प्रे० रू०।

फंसिओड़ौ, फंसियोड़ौ, फंस्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फंसीजणौ, फंसीजबौ—भाव वा०।

पसणौ, पसबौ, फसणौ, फसबौ—रू० भे०।

फंसाड़णौ, फसाड़बौ—देखो 'फंसाणौ, फंसाबौ' (रू. भे.)

फंसाड़णहार, हारौ (हारी), फंसाड़णियौ—भू० का० कृ०।

फंसाड़ीजणौ, फंसाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फंसाड़ियोड़ौ—देखो 'फंसायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फंसाड़ियोड़ी)

फंसाणौ, फंसाबौ—क्रि०स० [राज० फंसणौ क्रि० का प्रे० रू०] १. किसी नैतिक, सामाजिक, व्यवहारिक या सांसारिक बंधन में डालना।
२. किसी वस्तु को इस प्रकार किसी वस्तु में प्रवेश कराना कि उसको पुन: वाहर निकालना कठिन या असंभव सा हो।
३. किसी तीक्ष्ण पदार्थ में किसी वस्तु को उलझा देना या अटका देना।
४. किसी कार्य में इस प्रकार व्यस्त करना कि उससे छुटकारा मिलना मुश्किल हो।
५. मीठी-मीठी या छलपूर्ण वातों में लेना, धोखे में डालना।
६. पर-पुरुष या पर-स्त्री के प्रेम में डालना।
७. किसी पाश या फंदे में डालना।
८. पशु-पक्षियों को किसी जाल में बांधना या फंसाना।
९. किसी रहस्यमयी स्थिति में हृत-बुद्धि करना।

फंसाणहार, हारौ (हारी), फंसाणियौ—वि०।

फंसायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फंसाईजणौ, फंसाईजबौ—कर्म वा०।

फंसाड़णौ, फसाड़बौ, फंसावणौ, फसावबौ, फसाड़णौ, फसाड़णौ, फसाणौ, फसाबौ, फसावणौ, फसावबौ, फावणौ, फावबौ—रू० भे०।

फंसायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. किसी नैतिक, सामाजिक, व्यवहारिक या सांसारिक बंधन में डाला हुआ.
२. किसी वस्तु का इस प्रकार किसी वस्तु में प्रविष्ट किया हुवा होना जिससे उसका वाहर निकलना दुष्कर या असंभव हो.
३. किसी तीक्ष्ण पदार्थ में किसी वस्तु को उलझाया हुआ या अटकाया हुआ.
४. किसी कार्य में व्यस्त किया हुआ.
५. मीठी-मीठी या छलपूर्ण वातों में लिया हुआ या धोखे में डाला हुआ.
६. पर-पुरुष या पर-स्त्री के प्रेम में वशीभूत किया हुआ.
७. किसी पाश या फंदे में डाला हुआ.
८. पशु-पक्षियों को जाल में डाला हुआ.
९. किसी रहस्मयी स्थिति में हत-बुद्धि किया हुआ.
(स्त्री० फंसायोड़ी)

फंसावणौ, फसावबौ—देखो 'फंसाणौ, फंसाबौ' (रू. भे.)

फंसावणहार, हारौ (हारी), फसावणियौ—वि०।

फंसाविओड़ौ, फंसावियोड़ौ, फंसाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फंसावीजणौ, फसावीजबौ—कर्म वा०।

फंसावियोड़ौ—देखो 'फंसायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फंसावियोड़ी)

फंसियोड़ौ—भू० का० कृ०—१. किसी नैतिक, सामाजिक, व्यवहारिक या सांसारिक बंधन में पड़ा हुआ. २. कोई वस्तु या पदार्थ किसी वस्तु में प्रविष्ट होने से इस स्थिति में हुवा हुआ कि उसका पुन: वाहर निकलना कठिन या असंभव हो. ३. किसी तीक्ष्ण पदार्थ में अटका हुआ या उलझा हुआ. (कोई पदार्थ) ४. किसी कार्य में इस प्रकार व्यस्त हुवा हुआ कि उससे छुटकारा मिलना मुश्किल हो. ५.मीठी-मीठी या छलपूर्ण बातों में आया हुआ, धोखे में पड़ा हुआ. ६. पर-पुरुष या पर-स्त्री के प्रेम में पड़ा हुआ. ७. किसी पाश या फंदे मे पड़ा हुआ. ८. जाल में या बंधन में पड़ा हुआ. (पशु-पक्षी) ९. किसी रहस्यमयी स्थिति में हत-बुद्धि हुवा हुआ.
(स्त्री० फंसियोड़ी)

फ—सं० पु०—१. पाप। २. फेन, झाग। ३. पुण्य। ४. माघ का महीना। ५. ध्वनि। ६. आंधी, अंधकार। ७. वर्षा। ८. भय। ९. रक्षा। १०. निष्टा। ११. बुद्धि। १२. वाणी। १३. प्रसन्न। (एका०)

फईड़—देखो 'फटीड़ौ' (मह., रू. भे.)

फईड़ौ—देखो 'फटीड़ौ' (रू.भे.)

फउज—देखो 'फौज' (रू. भे)
उ०—पतिसाह फउज फूटंति पाळि, ब्रहमंड 'जइत' गाजइ विचाळि।
—रा. ज. सी.

फउरणौ, फउरबौ—देखो 'फेरणौ, फेरबौ' (रू. भे.)
उ०—फूले भरि छाव चढ़ी रथ फउरइ, आंणंद हूऔ घन दिन औ आज।—महादेव पारवती री वेलि

फउरणहार, हारौ (हारी), फउरणियौ—वि० ।
फउरिग्रोड़ौ, फउरियोड़ौ, फउरचोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फउरीजणौ, फउरीजबौ—कर्म वा० ।

फउरि—देखो 'फररी' (रू. भे.)
उ०—फरहरइ फउरि फरि ग्रफरि फूल, ऊंचास असिम आरिखि ग्रमूल ।—रा. ज. सी.

फउरियोड़ौ—देखो 'फेरियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फउरियोड़ी)

फउरी—देखो 'फररी' (रू. भे.)

फक–वि० [सं० स्फटिक] १. स्वच्छ, साफ ।
[अ० फ़क़] २. भय, लज्जा ग्रादि के कारण होने वाली चेहरे की ग्रवस्था ।
क्रि० प्र०—पड़णौ, होणौ ।
सं० स्त्री० [ग्रनु०] ध्वनि विशेष ।
रू० भे०—फक्क ।

फकत–अव्य० [अ०] १. केवल, सिर्फ । उ०—तो भुज पर दिल्ली तखत, ग्ररि क्यूं तक्कत ग्राय । फीटा पड़ घर ग्या फकत, चित जरमन ललचाय ।—जैतदांन बारहठ
२. बस, इतना ही ।
रू० भे०—फगत ।

फकर–वि० [ग्र० फ़क्र] १. दीन, दरिद्र । उ०—फकर देतां हमकर परहरणा, दे दिलाय सो खुदाय पिंड पोखण भरणा ।
—केसोदास गाडण
२. निर्लोभी, मस्त, संतोषी ।
३. ग्रभिमान, घमण्ड । उ०—बंदन छोड़ मिळै निरबंदन, ऐसी मेहर मईया । हरिरांम वे अखै देस, कोई फकर लोक लईया ।
स्रीहरिरांम जी महाराज
४. देखो 'फिकर' (रू. भे.)
रू० भे०—फक्कड़, फक्कर, फक्खड़, फखर ।

फकारी–सं० पु० [?] सर्प, सांप । (ग्र.मा.)

फकीर–वि० [ग्र०] (स्त्री० फकीरण) १. निर्धन, कंगाल । उ०—बा'रै हजारी कूं खीज फकीर करै, फकीर कूं रीझै तो नांमदार की किताब घरै ।—रा. रू.
क्रि० प्र०—होणौ ।
२. भिखमंगा, भिक्षुक ।
उ०—जिसौ लाय जाळियो, फजर मिळ जाय फकीरां । साह दहण सेकियौ, इसो पेखियौ ग्रमीरां ।—रा. रू.
३. संसार-त्यागी, विरक्त ।
उ०—नबाब साहिब महाराज नूं कही—भाई, मैं तो कुछ बद खबर सुणूंगा तब फकीर बण चलना रहूंगा ।—पदमसिंह री बात
४. मुसलमान साधु ।
५. जैसलमेर राज्यान्तर्गत एक मुसलमान जाति ।
मह०—फक्कड़, फक्कर, फक्खड़ ।

फकीरी–सं० स्त्री० [अ० फकीर + रा० प्र० ई] १. साधुता ।
उ०—भेस फकीरी सब कोई लेता, ग्यांन फकीरी पंथ झीना । जिनके सब्द लग्या सतगुरु का, सीस काट घर दीना ।
स्रीसुखरांम जी महाराज
२. निर्धनता, कंगाली ।
उ०—उमीरी फकीरी बड़े एक ग्रांटै, खुदा नैं दई है किसी के न बांटै । किनूं कायरी सूरताई दई है, जिनौ ग्रप्पनी अप्पनी ही लई है ।
—ला. रा.
३. संन्यास ।
उ०—फेर बादसाह नूं खबर हुई जद ग्रेक मांणस मेल कहायो—बे फकीरी लेणी ग्राछी नहीं ।—पदमसिंह री बात

फक्क—देखो 'फक' (रू. भे.)

फक्कड़—१. देखो 'फकर' (रू. भे.)
२. देखो 'फकीर' (मह., रू. भे.)

फक्कर—१. देखो 'फकर' (रू. भे.)
उ०—१. तज मक्कर फक्कर तसूं, उर सुध करखे रात ग्रपंदे । बस करदे इंद्री ग्रवस, तन मझी तप सील तप्पंदे ।—र. ज. प्र.
उ०—२. बक्कर का हलाली खांणा, सूकर कोन खाणां । नीलाही निसांणां राखि फक्कर कौं जिमाणा ।—शि. वं.
२. देखो 'फकीर' (मह., रू. भे.)
उ०—जांणै याकू चेतन आप गुसाई,कै कोई जांणै फक्कर ग्रवलिया ।
—स्रीसुखराम जी महाराज
३. देखो 'फिकर' (रू. भे.)

फक्खड़—१. देखो 'फकर' (रू. भे.)
२. देखो 'फकीर' (मह., रू. भे.)

फखर—देखो 'फकर' (रू. भे.)

फगडंड–सं० पु० [सं० पाषण्ड] ढोंग, पाखण्ड ।

फगडंडी-वि० [सं० पाषण्डी] ढोंगी, पाखण्डी ।

फगडो-सं० पु० [सं० पाषण्ड] १. ढोंग, पाखण्ड ।
२. टंटा, झगड़ा ।

फगत—देखो 'फकत' (रू. भे.)
उ०—कोथळी खोलनै बनमाळी पूछ्यौ—सिरावण वास्तै आज फगत तिलिया लाडू इज लाई, फेर की नीं ?—फुलवाड़ी

फगफगणौ, फगफगबौ–क्रि० अ० [देशज] किसी चीज के सब ग्रंगों का फूल की पत्तियों की तरह ग्रलग ग्रलग हो जाना, फूलना, खिलना ।
उ०—१.तदनंतर सुसमुसती मरकी सिसिविसद सुंहाली, चंद्र-

किरणोज्वलगुणा, फगफगां फीणां, दुग्धवरण्ण दहीथरां ।—व.स.
उ०—२. पछइ प्रीसी मुरकी, खाइवा जीभ फुरकी, सेव भीणी, फगफगती फीणी, अतिनी घारी, स्वादस्यु आहारी ।—व. स.
फगफगणहार, हारौ (हारी), फगफगणियौ—वि० ।
फगफगिग्रोड़ौ, फगफगियोड़ौ, फगफग्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फगफगीजणौ, फगफगीजबौ—भाव वा० ।

फगफगियोड़ौ—भू० का० कृ०—किसी पदार्थ के सब अंगों का फूल की पत्तियों की तरह अलग-अलग हुवा हुआ, फुला हुआ, खिला हुआ. (स्त्री० फगफगियोड़ी)

फगवा, फगुवा—सं० पु० [सं० फाल्गुनः] १. होलिकोत्सव का दिन, होली । उ०—ग्रैसे फगवा में काहे कुं जइये री, घर हांन ग्रेक दूजी लोक चवाई ।—रसीलैराज
२. उक्त अवसर पर होने वाला आमोद-प्रमोद ।
३. उक्त अवसर पर दिया जाने वाला उपहार या भेंट । उ०—मैं तो हूं बरसाने की ग्वालिन, तुम हलधर के बीर । मीरां के प्रभू फगुवा लीन्हो, मोहन स्याम सरीर ।—मीरां

फग—देखो 'फाग' (रू भे)
उ०—सूरां हूरां सत्थ व्है, गळ-बत्थ मिळाया । खडे राय खिल्हारहू, रण फग रचाया ।—व. भा.

फगुण—देखो 'फागण' (रू. भे.)
उ०—दळण खळां सिवदत्त प्रबळ बधियौ संभरपति । मुलक लूंटि मेवाड़ कियौ, फगुण तरु की मति ।—वं. भा.

फड़—सं० पु० [देशज] १. समूह, ढेर । उ०—हिसार रा लोग महा रिजाला सो कुही बातां रा फड़ लगाय पग छुडाय दिया ।
—मारवाड रा अमरावां री वारता
२. बैलगाड़ी की छत के आधार-स्वरूप लकड़ी के दो डण्डों में से एक ।
३. बैल की मूत्रेन्द्रिय ।
सं० स्त्री०—४. चीरी हुई लकडी ।
५. अनाज की दूकान ।
रू० भे०—फड ।

फड़क—देखो 'फड़कौ' (अल्पा., रू. भे.)

फड़कड़,फड़कड़—स०पु०[अनु०] घोडे के तेज चलने या भागने का ढग,इस प्रकार तेज चलने से उत्पन्न ध्वनि । उ०—भाखरां रा खुंडां वेहडा मांहां सूवर नीचा उतरिया छै । राजा ना देसोतां सूवरां सांमी वाग लीवी छै । फड़कड़ां फडवडाया जावे छै ।—रा. सा. सं.

फड़कण—सं०स्त्री० [अनु०] १. फड़कने की क्रिया या भाव ।
२. हृदय की धडकन ।
रू० भे०—फुरकण ।
अल्पा०—फड़कौ ।

फड़कणौ, फड़कबौ—क्रि०अ० [स्फुरणं] १. शरीर के किसी अंग का वायु के कारण बार-बार उभरना और दबना । उ०—फड़की फड़की डावी घण री आंख, हरख्यौ हरख्यौ मारुणी रौ जिवड़ौ ओ राज ।
—लो. गी.
२. किसी वस्तु विशेष (वस्त्र, कागज, झंडा आदि) के वायु के वेग से हिलने पर ध्वनि होना ।
३. वायु के आघात या झोके से कपड़े, कागज आदि का उड़ना ।
फड़कणहार, हारौ (हारी), फड़कणियौ—वि० ।
फड़कवाड़णौ, फड़कवाड़बौ, फड़कवाणौ, फड़कवावौ, फड़कवावणौ, फड़कवावबौ—प्रे० रू० ।
फड़काड़णौ, फड़काड़बौ, फड़काणौ, फड़कावौ, फड़कावणौ, फड़कावबौ—सक० रू० ।
फड़किग्रोड़ौ, फड़कियोड़ौ, फड़क्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फड़कीजणौ, फड़कीजबौ—भाव वा० ।
फड़क्कणौ, फड़क्कबौ, फरकणौ, फरकबौ, फरक्कणौ, फरक्कबौ, फरूकणौ, फरूकबौ, फरूखणौ, फरूखबौ, फुरकणौ, फुरकबौ, फुरक्कणौ, फुरक्कबौ—रू० भे० ।

फड़काड़णौ, फड़काड़बौ—देखो 'फड़काणौ, फड़कावौ' (रू. भे.)
फड़काड़णहार, हारौ (हारी), फड़काड़णियौ—वि० ।
फड़काड़िग्रोड़ौ, फड़काड़ियोड़ौ, फड़काड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फड़काड़ीजणौ, फड़काड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फड़काड़ियोड़ौ—देखो 'फड़कायोड़ौ (रू. भे.)
(स्त्री० फड़काड़ियोड़ी)

फड़काणौ, फड़कावौ—क्रि०स० ['फड़कणौ' क्रि०का प्रे०रू०] १. हिलाना डुलाना ।
२. हवा में उड़ाना ।
३. पक्षियो द्वारा अपने परों व गाय, कुत्ता आदि पशुओ द्वारा अपने कानो को झटका देना या हिलाना ।
फड़काणहार, हारौ (हारी), फड़काणियौ—वि० ।
फड़कायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फड़काईजणौ,फड़काईजबौ—कर्म वा० ।
फड़काड़णौ, फड़काड़बौ, फड़कावणौ, फड़कावबौ, फरकाड़णौ, फरकाड़बौ, फरकाणौ, फरकावौ, फरकावणौ, फरकावबौ, फरूकाड़णौ, फरूकाड़बौ, फरूकाणौ, फरूकावौ, फरूकावणौ, फरूकावबौ, फुरकाड़णौ, फुरकाड़बौ, फुरकाणौ, फुरकावौ, फुरकावणौ, फुरकावबौ—रू० भे० ।

फड़कायोड़ौ—भू०का०कृ०—१. हिलाया डुलाया हुआ. २. हवा में उड़ाया हुआ. ३. पर या कान झटकाया हुआ या हिलाया हुआ. (पशु, पक्षी) (स्त्री० फड़कायोडी)

फड़कावणौ, फड़कावबौ—देखो 'फड़काणौ, फड़कावौ' (रू. भे.)
फड़कावणहार, हारौ (हारी), फड़कावणियौ—वि० ।

फड़काविग्रोड़ो, फड़कावियोड़ो, फड़काव्योड़ो—भू० का० कृ० ।
फड़कावीजणो, फड़कावीजबो—कर्म वा० ।

फड़कावियोड़ो—देखो 'फड़कायोड़ो' (रू. भे.)
(स्त्री० फड़कावियोड़ी)

फड़कियोड़ो—भू०का०कृ०—१. हिला हुम्रा, डुला हुआ. २. हवा में उड़ा हुम्रा. ३. वात-विकार के कारण स्फूरित हुवा हुम्रा, फुरका हुआ. (म्रग)
(स्त्री० फड़कियोड़ी)

फड़को—सं० पु० [देशज] १. कपाट का एक भाग, एक पाटिया ।
२. एक प्रकार का कर विशेष जो पहले किसानों से लिया जाता था । उ०—ठिकांणा रा गांवां में रैयत नै वेठ वेगार, लाग-बाग, हासल, खरड़ा झूंपी ग्रर फड़का इत्याद केई भार ढोवणा पडता तौ कैवण वास्तै नांवमातर सारू ठिकाणा में दिखावा रूपी रकीनां रा साग रचिया जावता हा ।—फुलवाड़ी
३. फल-प्राप्ति की ग्रभिलाषा से सेवा-वृत्ति करने वाले यथा कुम्हार, सुयार ग्रादि को खलिहान में दिया जाने वाला अनाज ।
४. पतगा ।
५. कचुकी के पार्श्व भाग में रहने वाला वस्त्र ।
६. हृदय की अस्वाभाविक धड़कन । उ०—बेटा रै मूंडा सूं आ बात सुणतांई मां रै काळजा में तौ फड़कौ चढ़ग्यो ।—फुलवाड़ी
क्रि० प्र०—उठणो, चढ़णो ।
७. देखो 'फड़कण' (अल्पा., रू. भे.)
ग्रल्पा०—फड़क ।

फड़क्कणो, फड़क्कबो—देखो 'फडकणो, फड़कबो' (रू. भे.)
उ०—मुक्कै सैल, घुक्कै धरा, दक्कै धडां सूं माथा, मुडक्कै कायरां सूर, बकै मार मार । फड़क्कै फींफरां रैणां, धड़क्कै केवियां फौज, धकै चाढ़ भाजै, उरां घणा सारधार ।—बुधसिंह सिंढ़ायच
फड़क्कणहार, हारो (हारी), फड़क्कणियो—वि० ।
फड़क्किग्रोड़ो, फड़क्कियोड़ो, फड़क्योड़ो—भू० का० कृ० ।
फडक्कीजणो, फड़क्कीजबो—भाव वा० ।

फड़क्कियोड़ो—देखो 'फड़कियोड़ो' (रू. भे.)
(स्त्री० फड़क्कियोड़ी)

फड़ड़, फड़ड़ाट—स० स्त्री० [ग्रनु०] १. वस्त्र के फटने से उत्पन्न ध्वनि ।
२. पक्षियो के उड़ते समय पंखों से उत्पन्न ध्वनि ।
३. अपान वायु की ध्वनि ।
४. पशुग्रों के नाक से सांस लेने से उत्पन्न ध्वनि । उ०—घुबि नास फड़ड़ रज घूसरड, रथ अछरां मग रोकिया । नाळां निहाव गोळां निहसि, झाळा दिसि ग्रसि झोकिया ।—सू. प्र.
५. ध्वनि विशेष ।
रू० भे०—फड़ड़ाहट, फडड, फडडाट, फरड़, फरड़ाट, फरड़ाटो, फरड़ाहक, फरडाहट ।
ग्रल्पा०—फडडाटो, फड़डाहटो ।

फड़ड़ाटो—सं० पु०—देखो 'फडड़' (ग्रल्पा., रू. भे.)

फड़ड़ाहट—देखो 'फड़ड' (रू. भे.)

फड़ड़ाहटो—सं० पु०—देखो 'फडड' (ग्रल्पा., रू भे.)

फड़द—सं० स्त्री० [फ़ा० फर्द] १. सूची, तालिका ।
२. निमत्रण का सूचीपत्र ।
३. बही जिसमें हिसाब किताब लिखा हुग्रा होता है ।
[ग्र० फ़र्द] ४. रजाई का ऊपरी खोल ।
५. रजाई, दुलाई का वह ऊपरी पल्ला जिसके नीचे ग्रस्तर लगाया जाता है ।
६. ग्रामीण स्त्रियों के घाघरे का मोटा ग्रौर गाढा टिपकियादार वस्त्र जिसका पृष्ठ भाग प्रायः श्यामवर्ण होता है ग्रौर छपाई केवल एक ग्रोर होती है ।
रू० भे०—फडद, फरद ।

फड़दी—देखो 'फरदी' (रू. भे.)

फड़नवीस—सं० पु० [फा० फर्दनवीस] मराठों के राजत्वकाल में प्रधान लेखकों एवं माल विभाग के कर्मचारियों को दिया जाने वाला पद । ये पदाधिकारी जागीरें देने एवं लगान वसूली के हिसाब की जांच की व्यवस्था करते थे ।

फड़फड़—सं० स्त्री० [अनु०] ध्वनि विशेष ।
रू० भे०—फडपफड़, फडफड ।

फड़फड़णो, फड़फड़बो—क्रि० अ० [ग्रनु०] १. बैचेन होना, घबराना ।
उ०—पाग्रे हसम्मि हालइ पयाळ, फडफडइ नाग फाटइ फुणाळ । रायां राउ ऊपरि असुरि राइ, जळराइ जांणि मेल्ही ग्रजाइ ।
—रा. ज. सी.
२. ध्वनि होना ।
३. उद्वेलन होना ।
फडफडणहार, हारो (हारी), फडफडणियो—वि० ।
फडफडिग्रोड़ो, फडफडियोड़ो, फड़फड़्योड़ो—भू० का० कृ० ।
फड़फड़ीजणो, फड़फड़ीजबो—भाव वा० ।
फडहड़णो, फडहड़बो, फडहडणो, फडहडबो—रू० भे० ।

फड़फड़ाणो, फड़फड़ाबो—क्रि०स० [अनु०] १. पक्षी के परों तथा पशु के कान ग्रादि को विशेष रूप से फडफड़ की ध्वनि के साथ हिलाना ।
उ०—१. तठै लखो एकलो आय वागर में घास में छिपीयो । सु राव छोडकरण पधारण लागा । तरै कुतरै कांन फड़फड़ाया ।
—राव लाखै री बात
उ०—२. ग्रो खिलको रचिया पछै वो नेठाव सू नाडी में पांणी पीवण सारू उडियो । धापन पांणी पीयो । पांखा फड़फड़ायनै च्यार-पाचं झिकोळा खाया ई ।—फुलवाड़ी

क्रि० अ०—२. घबराना, बेचैन होना।

फड़फड़ाणहार, हारौ (हारी), फड़फड़ाणियौ—वि०।

फड़फड़ायोड़ो—भू० का० कृ०।

फड़फड़ाईजणौ, फड़फड़ाईजबौ—कर्म वा०/भाव वा०।

फड़फड़ावणौ, फड़फड़ावबौ—रू० भे०।

फड़फड़ायोड़ौ—भू० का० कृ०—१. ध्वनि विशेष करते हुए पर या कान हिलाया हुआ. २. घबराया हुआ, बेचैन, विह्वल।
(स्त्री० फड़फड़ायोड़ी)

फड़फड़ावणौ, फड़फड़ावबौ—देखो 'फड़फड़ाणौ, फड़फड़ावौ' (रू. भे.)
उ०—बुगलौ नै बुगली आकास नै नैड़ो लियौ। धोळी पांखां फड़फड़ावता आप रै बिचियां कांनी उडता जावै। दोनां री आंख्यां सूं हरख रा मोती बरसण लागा।—फुलवाड़ी

फड़फड़ावणहार, हारौ (हारी), फड़फड़ावणियौ—वि०।

फड़फड़ाविओड़ौ, फड़फड़ावियोड़ौ, फड़फड़ाव्योड़ौ—भू०का०कृ०।

फड़फड़ावीजणौ, फड़फड़ावीजबौ—कर्म वा०/भाव वा०।

फड़फड़ावियोड़ौ—देखो 'फड़फड़ायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फड़फड़ावियोड़ी)

फड़फड़ियोड़ौ—भू० का० कृ०—१. बेचैन हुवा हुआ, घबराया हुआ. २. शब्द हुवा हुआ. ३. उद्वेलित हुवा हुआ.
(स्त्री० फड़फड़ियोड़ी)

फड़फड़ियौ—सं० पु० [अनु०] मोटर साइकिल।

फड़फड़ी—सं० स्त्री० [अनु०] १. झुंझलाहट।
२. हिम्मत, साहस, जोश। उ०—डावी आंख री डोळी बारै काढ़्यौ जद वा जोर सूं चिराळी करी। जीमणा डोळा में टूंच मारण लागौ तद वा फड़फड़ी खाय नै बैठी व्ही।—फुलवाड़ी
क्रि० प्र०—खाणी।
३. उद्वेलन। उ०—राजा जी रौ जोस मांय रौ मांय फड़फड़ी खावण लागौ।—फुलवाड़ी

फड़पफड़—देखो 'फड़फड़' (रू. भे.)

फड़मल—सं० पु० [देशज] फोग नामक झाड़ी के फूल। उ०—फोगल पछै घिटाळ, जंगळां, झीट झिंटाळी। सूरज ऊगण वेळ, फड़मलां छवि निराळी।—दसदेव

फड़वड़ा—स० स्त्री० [अनु०] घोड़ों के तेज दौड़ने से उत्पन्न ध्वनि।

फड़वड़ाणौ, फड़वड़ाबौ—क्रि० अ० [अनु०] घोड़ो को तेज दौड़ाना।
उ०—इसै समइयै में भालुवां आण अरज कीवी छै। भाखरां रा खुहां वेहड़ां मांहां सूवर नीचा उतरिया छै। राजा नां देसोतां सूवरां सांमी वाग लीवी छै। फड़कड़ां फड़वड़ायां जावै छै।
—रा. सा. सं.

फड़वड़ाणहार, हारौ (हारी), फड़वड़ाणियौ—वि०।

फड़वड़ायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फड़वड़ाईजणौ, फड़वड़ाईजबौ—भाव वा०।

फड़वड़ायोड़ौ—भू० का० कृ०—घोड़ों को तेज दौड़ाया हुआ.
(स्त्री० फड़वड़ायोड़ी)

फड़हड़—देखो 'फड़हड़ाट' (रू. भे.)
उ०—बाघ रास उपाड़ि चहूंवळ, कुरंभ अरिदळ मार करै। वरहासां कासां चढ़ि वहलां, फड़हड़ नासां तका फरै।
—मांनसिंघ कल्यांणोत कछवाहा रौ गीत

फड़हड़णौ, फड़हड़बौ—क्रि० स० [अनु०] १. बैल, घोड़ा आदि पशुओं के तेजी से चलने या दौड़ने से नाक से ध्वनि उत्पन्न होना।
२. देखो 'फड़फड़णौ, फड़फड़बौ' (रू. भे.)

फड़हड़णहार, हारौ (हारी), फड़हड़णियौ—वि०।

फड़हड़िओड़ौ, फड़हड़ियोड़ौ, फड़हड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फड़हड़ीजणौ, फड़हड़ीजबौ—कर्म वा०।

फड़हड़णौ, फड़हड़बौ—रू० भे०।

फड़हड़ाट—सं० स्त्री० [अनु०] घोडे के तेज दौड़ने अथवा चलने से नाक से ध्वनि उत्पन्न होना।
रू० भे०—फड़हड़, फड़हड़, फड़हड़ा।

फड़ाफड़—देखो 'फटाफट' (रू. भे.)

फड़ियाळ—देखो 'पड़ियालग' (रू. भे)

फड़ियौ—सं० पु० [देशज] अनाज का छोटा व्यापारी।
रू० भे०—फड़ीयौ, फडियौ, फडीयौ।

फड़ी—सं० स्त्री० [अनु०] १. शीघ्रता या लगातार मारने से उत्पन्न ध्वनि। उ०—घड़ी घड़ी घमोड़ घोड़ बोकड़ा बडी बड़ी। झड़ी लगै छड़ाळ झीक फेफरा फड़ी फड़ी।—मा. वचनिका
२. ऊंट के पैर का नीचे का भाग।
३. ऊंट द्वारा पैर से किए जाने वाला प्रहार।
४. उक्त प्रहार से उत्पन्न ध्वनि।

फड़ीयौ—देखो 'फड़ियौ' (रू. भे.)

फड़ूस—सं० पु० [देशज] भुरट नामक घास के दाने।

फड़ो—सं० पु० [देशज] ऊंट के चारों पैरों से कूदने की क्रिया।

फचर, फचराक, फच्चर—देखो 'फाचर' (रू. भे.)
क्रि० प्र०—लगाणौ, करणौ, फंसाणौ
मुहा०—१. फच्चर करणौ—किसी कार्य को करवाने हेतु शीघ्रता करना, दबाव डालना, भय दिखाना। (मि०—आंगळी करणी)
२. फच्चर लगाणौ, फंसाणौ—अड़चन डालना, रुकावट पैदा करना।
(मि०—फाडो फंसाणौ)

फजर, फजराट—सं० स्त्री० [अ० फज्र या फ़ज्र + रा० प्र० आट]

१. प्रातःकाल, सवेरा, तडका । उ०—१. फजर के पहर गजर ठकोरा बगे, ठोड ठोड़ धवल मंगळ होरण को लगे ।—र. रू.

उ०—२. फजर होत ही लेऊंगा, रुपया लाख पच्चीस । नां देवौ तौ देखरणां, काट गिराऊं सीस ।—गोपाळदास गौड़ री वारता

२. प्रातःकाल के समय पढी जाने वाली नमाज ।

रू० भे०—फज्जर ।

फजल—सं० स्त्री० [अ० फ़ज़्ल] १. कृपा, दया, मेहरबानी ।

स० पु०—२. बुजुर्ग । उ०—इरण वास्तै देसोतां नूं संगत व मिळाप पिडतां, फमलां, हकीमां, जांरण, प्रवीरणां री चाहना कररणी । —नी. प्र.

फजीत—देखो 'फजीहत' (रू. भे.)

उ०—सु मूळराज फजीत होय पाछौ आवै ।—नैरणसी

फजीतवाड़ौ—देखो 'फजीहत' (मह., रू. भे.)

उ०—तौ वाप रै घरवाळां रा फजीतवाड़ा तौ मत करौ । —वरसगाठ

फजीती—देखो 'फजीहत' (रू. भे.)

उ०—विसवावीस आंरग सिर बीती, जांरणी बात न जावै जीती । सजयौ नहीं काज गह सीती, परण ही हारे कीध फजीती ।—र. रू.

फजीतौ—देखो 'फजीहत' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—मरणौ जीवणौ तौ ईश्वर रै हाथ छै। नागेळ फेरियां म्हारी परतग्या जावै छै। मुल्क रै मांही फजीतौ हुवै । लोग मोनूं कापुरस मर कपूत कहै ।—कुंवरसी साखळा री वारता

२. लड़ाई-झगड़ा, राड़-तकरार ।

फजीरयौ—सं० पु० [देशज] नागौर जिले के कुछ ग्रामों में बनाए जाने वाला गेहूं के आटे का हलवा जिसमें घी अल्पतम मात्रा में होता है ।

फजीलत, फजीलस—स० पु० [अ० फ़ज़ीलत] १. श्रेष्ठता, उत्तमता ।

उ०—फजीलत अदालत री में औ ही नुकतौ दाव सै छै। अदल प्यारौ सारा मिनखा रो छै ।—नी. प्र.

२. इज्जत, प्रतिष्ठा । उ०—पारस देस में बादसाहां रौ कायदौ थौ— जिकौ इरण री सगत में होय तिकौ हिकमत फजीलत सूं खाली न होतौ थौ ।—नी. प्र.

फजीहत, फजीहती—स० स्त्री० [अ० फ़ज़ीहत] १. दुर्गति, दुर्दशा ।

२. बदनामी ।

रू० भे०—फजीत, फजीती ।

अल्पा०—फजीतौ ।

मह०—फज़ीतवाड़ौ ।

फजुली—देखो 'फजूल' (रू. भे.)

उ०—फजुली प्रसाद फेरघौ हिकमत हिसाब हेरघौ, पूग्न प्रताप पेरघौ पाजी पेल पेल्यौ तें ।—ऊ. का.

फजूल—वि० [अ० फ़ुज़ूल] १. आवश्यकता से अधिक, अतिरिक्त ।

२. निकम्मा ।

रू० भे०—फजुली, फजूली, फिजूल ।

यौ०—फजूलखर्च, फजूलखर्ची ।

फजूलखरच—सं० पु० यौ० [अ० फ़ुज़ूल+फा० ख़र्च] अपव्यय, व्यर्थ का खर्च ।

रू० भे०—फजूलखरची, फिजूलखरच ।

फजूलखरची—वि०यौ० [अ० फुजूल+फा० खर्च+रा० प्र० ई] १. बहुत खर्च करने वाला, अपव्ययी ।

२. देखो 'फजूलखरच' (रू. भे.)

रू० भे०—फिजूलखरची ।

फजूली—देखो 'फजूल' (रू. भे.)

उ०—खरच फजूली खोवता, मुल-मुल वधकी माप । काठा पहरे कापड़ा, 'पातल' रो परताप ।—जैतदांन बारहठ

फज्जर—देखो 'फजर' (रू. भे.)

उ०—१. अम्हसम्हा हजारां आहुडै, धोम पड़ै खागा धजर । घड़ियाळ जांरिग वज्जै घरणी, गढ़ लंका फज्जर गजर ।—सू. प्र.

उ०—२. फाजल मेख खुलनी फज्जर, असुर घसै लागौ अति आतुर । अस न खड़ै रिरणछोड़ उताळौ, चूरण खळां विचारै चाळौ । —रा. रू.

फट—सं० स्त्री० [सं०] १. एक तान्त्रिक मंत्र, अस्त्र मंत्र ।

[अनु०] २ हल्की या पतली वस्तु के गिरने या गिरकर फूटने की ध्वनि ।

वि०—सफेद, स्वच्छ ।

क्रि० वि०—१. तुरन्त, झट-पट । उ०—परण सेठ तौ इरणी ताक में हा । मूंछ छूटतां ई फट मूंडौ आगौ कर लियौ ।—फुलवाड़ी

२. देखो 'फिट' (रू. भे.)

फटक—सं० पु० [देशज] १. पंवार वंश की एक शाखा या इस शाखा का व्यक्ति ।

२. देखो 'स्फटिक' (रू. भे.) (अ. मा.)

उ०—१. लांवा तिलक लगाय, फटक धजा उठती फिरै । खोटौ दांरणौ खाय, कींया तिरसी केळिया ।—केळियौ

उ०—२. प्रगट अकबर लियौ झपट जुध पाधरै, 'दुरंग' थट बिकट सुरण साह डरियौ । खग हटक मन बिच कटक खुरसांरण रै, फटक मुर खट हुय पाल फिरियौ ।—दुरगादास कररणोत रो गीत

फटकड़ी—देखो 'फिटकड़ी' (रू. भे.)

फटकड़ौ—स०पु० [देशज] वस्त्र विशेष । उ०—फाडि पटुली फटकडै, वेरिण विरणासी हत्थि । रा अतेउरि तेडिउ, हूहवइ दासी हत्थि । —मा. कां प्र.

फटकरण—सं० स्त्री० [अनु०] सूप से अनाज साफ करने पर निकलने वाला अनुपयुक्त अनाज या कचरा ।

फटकणौ, फटकबौ–क्रि० स० [अनु०] १. फट-फट शब्द करना।
२. अस्त्र-शस्त्र आदि चलाना, फेंकना।
३. पटकना, गिराना।
४. रूई को धुनकी से धुनना।
५. लाचारी की दशा में हाथ पैर पटकना।
६. किसी को भला-बुरा कहना।
७. सूप में अनाज आदि रखकर इस प्रकार उछालना कि उसका कूड़ा-करकट निकल जावै।
८. कपड़े को इस प्रकार झटके से झाड़ना कि सलवट या मिट्टी निकल जावै।
९. उपस्थित होना, आना। उ०—इतरै पती भागल आय फटकियौ।—वी.स.टी.
फटकणहार, हारौ (हारी), फटकणियौ—वि०।
फटकवाड़णौ, फटकवाड़बौ, फटकवाणौ, फटकवाबौ, फटकवावणौ, फटकवावबौ, फटकाड़णौ, फटकाड़बौ, फटकाणौ, फटकाबौ, फटकावणौ, फटकावबौ—प्रे० रू०।
फटकिओड़ौ, फटकियोड़ौ, फटक्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फटकीजणौ, फटकीजबौ—कर्म वा०।

फटकमण, फटकमणी, फटकमिणि—देखो 'स्फटिकमणि' (रू. भे.) (डिं. को.)
उ०—फटकमणी रचै रंग सारा, लिपै नही सब में सब पारा। चिदानद आतम यूं न्यारा, केवळ आप निरधारा।
—स्रीसुखरांम जी महाराज

फटकाड़णौ, फटकाड़बौ—देखो 'फटकाणौ, फटकाबौ' (रू. भे.)
फटकाड़णहार, हारौ (हारी), फटकाड़णियौ—वि०।
फटकाड़िओड़ौ, फटकाड़ियोड़ौ, फटकाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फटकाड़ीजणौ, फटकाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फटकाड़ियोड़ौ—देखो 'फटकायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फटकाड़ियोड़ी)

फटकाणौ, फटकाबौ–क्रि० स० [राज० 'फटकणौ' क्रि० का प्रे० रू०]
१. फट-फट शब्द कराना।
२. अस्त्र-शस्त्र आदि चलवाना, फेंकाना।
३. पटकाना, गिरवाना।
४. रूई को धुनकी से धुनवाना।
५. सूप में अनाज आदि रख कर इस प्रकार उछलवाना कि उसका कूड़ा-करकट निकल जावै।
६. कपड़े को इस प्रकार झटके से झड़वाना की उसकी सलवटें या मिट्टी निकल जावे।
७. किसी को भला-बुरा कहलवाना।
फटकाणहार, हारौ (हारी), फटकाणियौ—वि०।
फटकायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फटकाईजणौ, फटकाईजबौ—कर्म वा०।
फटकाड़णौ, फटकाड़बौ, फटकावणौ, फटकावबौ—रू० भे०।

फटकामिण—देखो 'स्फटिकमणि' (रू. भे.)
उ०—मिणी लाल मांणक माळ, मोती चिंतामण, नवनिधी नीलवी केक कोस्तव फटकामिण। पीरोजा पुखराज पनां चूनी परवाळा, हीरा पारस हेम सात धातां सिखराळा।—क. कु. बो.

फटकायोड़ौ–भू० का० कृ०—१. सूप के द्वारा अनाज आदि साफ कराया हुआ. २. सलवट या मिट्टी निकालने के प्रयोजन से कपड़े को झड़वाया हुआ. ३. फट-फट शब्द कराया हुआ. ४. अस्त्र-शस्त्रादि चलवाया हुआ, फेंकाया हुआ. ५. पटकाया हुआ, गिरवाया हुआ. ६. धुनकी से रूई धुनवाया हुआ. ७. किसी को भला-बुरा कहलवाया हुआ.
(स्त्री० फटकायोड़ी)

फटकार–सं०पु० [सं०फट्+कार:] १. ४९ क्षेत्रपालों में से ३८ वां क्षेत्र-पाल।
सं० स्त्री० [राज० फटकारणौ] २. झिड़की, डांट, दुत्कार।
क्रि० प्र०—खाणी, देणी, बताणी, लगाणी, लागणी, सुणणी, सुणाणी।
३. मार्मिक आघात। उ०—फटकार हळाहळ तें फिरगौ। घन आनंद अम्रत घां घिरगौ।—ऊ. का.
४. शाप, बददुआ।
क्रि० प्र०—देणी, पाणी।
५. प्रहार, आघात। उ०—पौड़ां री फटकारां सूं कागला, मोरयां के दूजा ई पंछी अवस कुरळावता।—फुलवाड़ी
६. कोप-दृष्टि। उ०—उण बिणजारा माथै सनीचर री अैड़ी फटकार पड़ी के धन-संपत रा नांव मांथै उण रा हाथां में खुद आपरी दोनूं हथाळियां अर वित्त-मवेसी रा नांव माथै केसरी नै छोड दूजौ कीं बाकी नीं बचियौ।—फुलवाड़ी
७. प्रभाव, असर। उ०—१. मोटा-मोटा तिरसिंघ जी इण री मार नै झेल नीं सकै, पछै माटी गूंदणिया बापड़ा उण कुमार रौ कांई आपौ के वौ धन री फटकार आगै टिक सकै।—फुलवाड़ी
उ०—२. आप रा सुख अर आपरी जरूरतां वास्तै ई कमाई करण रा अफाळा करै पण इण कमाई री अैड़ी फटकार पडै के वौ कमाई करणा में ई सरब सुख मांनलै अर धन कमावण री हूंस नै सब सूं लांठी जरूरत समझलै।—फुलवाड़ी
८. पक्षियों के परों की ध्वनि, फड़फड़ाहट। उ०—पांखां री फट-कारां सूं गिगन में वा गड़गड़ाहट माची के हवा रा रेसा चीरीजण लागा। कांनां रा पड़दा फूटण लागा।—फुलवाड़ी
९. झटका, धक्का। उ०—१. नाच रै फटकारां सूं चूंदड़ी रा अेक दो तारा ई टूट नै खिरधा।—फुलवाड़ी
उ०—२. दूध फाट्यां दही वणै अर दही विलोयां माखण री लूंदी वंधै, उणी भांत विरखा रै विछोव सूं फाटयोड़ौ वादळ री

मन बातां रै फेरणा री फटकारां सूं मासण बणती गियौ।
—फुलवाड़ी

रू० भे०—फिटकार।

फटकारणौ, फटकारबौ–क्रि०स० [अनु०] १. शाप देना, बददुआ देना।

२. आघात या प्रहार करना, मारना। उ०—लात मारती वगत वा कनौती मेळी करै अर कनौती मेळी व्हैतां ईं वा लात फटकार देवै।—फुलवाड़ी

३. झाड़ना, झटकना।

ज्यूं०—बिस्तरौ फटकार'र बिछावणौ चोटी फटकारणी।

४. पटकना, पछाड़ना।

५. उपार्जन करना, कमाना।

ज्यूं०—आज-कल तौ वौ पांच रुपिया रोजीना फटकार लेवै है।

६. डांट-डपट देना, धमकाना। उ—१. जद महंत जी डोकरी नै फटकारतां कह्यौ—रांम मारी तौ पछै क्यूं रोवै? वौ मिनख थोड़ौ ई हौ, घांन रो कोठलियौ हो जकौ मर खूटौ।—फुलवाड़ी

उ०—२. उण नै भोळप अर टाबरपणा वास्तै खासी-भली आडै हाथां ली। फटकारती कह्यौ—सोनल, अबै थूं टाबर तौ है कोनीं, पण थारौ हाल टाबरपणौ को मिटियौ नीं।—फुलवाड़ी

७. सीख देना, शिक्षा देना।

८. झटका देना। उ०—नेड़ौ घमसांण चढ़चौ अप नत्र। गुणां चढ़ि बांण मढ्यौ घमगत्र। किया चठठारव ज्यां फटकारि। दिया घट गोळमदाज बिदारि।—मे. म.

९. झटका देकर दूर फेंक देना।

१०. रोष प्रकट करना। उ०—फोरै खाथा नें गाळी फटकारै, तोरै जातां नै हाळी ततकारै।—ऊ. का.

फटकारणहार, हारौ (हारी), फटकारणियौ—वि०।

फटकारिओड़ौ, फटकारियोड़ौ, फटकारयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फटकारीजणौ, फटकारीजबौ—कर्म वा०।

फिटकारणौ, फिटकारबौ—रू० भे०।

फटकारियोड़ौ–भू०का०कृ०—१. शाप दिया हुआ, बददुआ दिया हुआ. २. मारा हुआ, आघात या प्रहार किया हुआ. ३. झाड़ा हुआ, झटका हुआ. ४. प्राप्त किया हुआ, कमाया हुआ. ५. डांटा हुआ, डराया हुआ. ६. शिक्षा दिया हुआ. ७. झटका दिया हुआ. ८. झटका देकर दूर फेंका हुआ. ९. पटका हुआ, पछाड़ा हुआ. १०. रोष प्रकट किया हुआ.

(स्त्री० फटकारियोड़ी)

फटकारियौ–सं० पु० [देशज] १. एक नाली से सींचित होने वाले क्यारों में से अंतिम क्यारा।

२. देखो 'फटकारियोड़ौ' (रू. भे.)

फटकारै–क्रि०वि०[अनु०] शीघ्रता से,सत्वरता से। उ०—उण रा मन री रीत तौ जांणै फटकारै उडगी।—फुलवाड़ी

फटकारौ–सं० पु० [अनु०] १. झटका। उ०— १. उण वगत वौ किरियौ तौ बीकांनेर सूं घांटी रौ फटकारौ देतौ अर अेकण ठौड़ बैठौ ई नित मंडोवर री सुरंगी बाड़ी चर जातौ।—फुलवाड़ी

उ०—२. हाळी मूंछ रा लेता हटकारा। फिरता पूंछा रा देता फटकारा।—ऊ. का.

२. झोंका, झपटा। उ०—१. बुगला री पांखां रै उनमांन धवळ चंवरां रा फटकारा लागता हा।—फुलवाड़ी

उ०—२. पण पापड़ जीमती वेळा पंखी रौ फटकारौ कीं जोर सूं लागौ तौ पापड़ उडग्यौ।—फुलवाड़ी

उ०—३. ढगळी सेवट पांन नै समझायौ—थूं बावळा म्हनै कीकर बचा सकै। हवा रै पै'ल फटकारै थूं तौ कठै ई उड जासी।
—फुलवाड़ी

३. शाप, बद-दुआ।

४. धिक्कार, लानत। उ०—सारि रमाड़ि बिफुट सरि, हद फटकारौ दियौ हर। अजमेरा जोगी अवकळिया, घूळि चाटता फिरै घर।
—अमरसिंघ हाडा रौ गीत

५. झड़ी। उ०—अमल री मनवारां रै सागै आखै दिन बातां रा फटकारा लागता रैवता पण ठकरांणी—सा आप रै मन री आगळ फगत उण भांबण रै सांमी ई खोलता हा।—फुलवाड़ी

६. आघात, टक्कर, प्रहार।

७. फट-फट की ध्वनि,फड़फड़ाहट। उ०—थोड़ी ताळ पछै फाटोड़ा लिगतरां रा फटकारा बजावतौ अेक डोकरौ म्हारै पाखती आयनै ऊभग्यौ।—फुलवाड़ी

८. सत्वरता, शीघ्रता। उ०—म्हारी आ ऊमर तौ ताळी रै फटका—रै खूटै।—फुलवाड़ी

९. देखो 'फटकार' (अल्पा रू. भे.)

क्रि० प्र०—दैणौ, मारणौ।

रू० भे०—फिटकारौ।

फटकावणौ, फटकावबौ—देखो 'फटकाणौ, फटकाबौ' (रू. भे.)

फटकावणहार, हारौ (हारी), फटकावणियौ—वि०।

फटकाविओड़ौ, फटकावियोड़ौ, फटकाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फटकावीजणौ, फटकावीजबौ—कर्म वा०।

फटकावियोड़ौ—देखो 'फटकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फटकावियोड़ी)

फटकिमणी—देखो 'स्फटिकमणि' (रू. भे.)

उ०—पतिवरता विभचारिणी, दोऊ अनत न बैसै एके साथी। फटकिमणि तब लग भली, जब लग हीरा न आवै हाथी।
—ह. पु. वा.

फटकियोड़ौ–भू० का० कृ०—१. सूप में उछाल कर साफ किया हुआ.

(अनाज आदि) २. सलवट निकालने या मिट्टी झाड़ने के प्रयोजन से कपड़े को झटके से झाड़ा हुआ. ३. आया हुआ, उपस्थित हुवा हुआ.

(स्त्री० फटकियोड़ी)

फटकौ–सं०पु० [अनु०] १. सूप अथवा थाली से अनाज को साफ करने हेतु फटकने की क्रिया।

२. फटकने की क्रिया से उत्पन्न होने वाली ध्वनि।

फटणौ, फटबौ—१. देखो 'फाटणौ, फाटबौ' (रू. भे.)

२. देखो 'फंटणौ, फटबौ' (रू. भे.)

उ०—आडै फट वट पड़ै अपारां, आगै पाछै पार न आरां।
—रा. रू.

फटणहार, हारौ (हारी), फटणियौ—वि०।

फटिओड़ौ, फटियोड़ौ, फटयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फटीजणौ, फटीजबौ—भाव वा०।

फटफट—देखो 'फटाफट' (रू. भे.)

फटफटाणौ, फटफटाबौ–क्रि० स० [अनु०] १. फड़फड़ाना।

२. गाय, कुत्ते, हाथी आदि पशुओं का कान हिलाते हुए फट-फट की ध्वनि उत्पन्न करना।

३. फट-फट की ध्वनि करना।

फटफटाणहार, हारौ (हारी), फटफटाणियौ—वि०।

फटफटायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फटफटाईजणौ, फटफटाईजबौ—कर्म वा०।

फटफटायोड़ौ–भू०का०कृ०—१. फड़फड़ाया हुआ. २. गाय, कुत्ते, हाथी आदि पशुओं का कान हिलाते हुए फट-फट की ध्वनि उत्पन्न किया हुआ. ३. फट-फट की ध्वनि किया हुआ.

फटफटियौ–वि० [अनु०] व्यर्थ की बकवास करने वाला।

स० पु०—मोटर साइकिल।

फटा–सं० पु० [सं० स्फटा] सांप का फन।

फटाक–क्रि० वि०—तुरन्त, शीघ्र। उ०—अेक भूंडी लत घोड़ी में फेर। कनौती भेळी करनै फटाक लात मार देवै।—फुलवाड़ी

फटाकौ—देखो 'पटाकौ' (रू. भे.)

उ०—नागा मिनखां री भारणी उतारयां बिना वे नी मानै। मन करै जणा ई फटाकौ छोड दै।—फुलवाड़ी

फटाफट–क्रि० वि०—१. तुरन्त, शीघ्र। उ०—किणी लांठा अफसर रो टेलीफून आयो। म्हारै देखतां-देखतां फटाफट कांम व्हैगो।
—फुलवाड़ी

२. लगातार व शीघ्रता से मारने से उत्पन्न ध्वनि।

सं० स्त्री०—ध्वनि विशेष।

रू० भे०—फड़ाफड़, फटफट।

फटि—देखो 'फिट' (रू. भे.)

उ०—काळि ज वहु क्रीडा करी, आज तिजावी आस। माधव मुंझ मूंकी गयु, फटि रे फागुण मास।—मा. कां. प्र.

फटिक—देखो 'स्फटिक' (रू. भे.)

उ०—सूरज फटिक पाखांण का, ता सौ तिमर न जाइ। साचा सूरज परकटे, दादू तिमर नसाइ।—दादूवांणी

फटिकमणि—देखो 'स्फटिकमणि' (रू. भे.)

फटित—देखो 'स्फटित' (रू. भे.)

उ०—मोरू मन अस्टापद सुं मोह्यं,फटित रतन अभिरांम मेरे लाल। भरतेसर जिहां भवन कराव्यउ, कीधुं उत्तम कांम मेरे लाल।
—स. कु.

फटियोड़ौ—देखो 'फाटियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फटियोड़ी)

फटीड़—देखो 'फटीड़ौ' (मह., रू. भे.)

फटीड़ौ—सं० पु० [अनु०] १. थप्पड़, चोट।

२. तेजी से प्रहार करने का ढंग या क्रिया।

३. प्रहार से उत्पन्न ध्वनि।

रू० भे०—फईड़ौ।

मह०—फईड़, फटीड़।

फट्टणौ, फट्टबौ—देखो 'फाटणौ, फाटबौ' (रू. भे.)

उ०—१. ढाढ़ी एक संदेसड़उ ढोलइ लगि लइ जाइ। जोवण फट्टि तळावड़ी, पाळि न बंधउ कांइ।—ढो. मा.

उ०—२. मेछ उलट्टा मेदनी, फट्टा जांण समंद। वळ छुट्टा भड़ कायरां देख प्रगट्टा दुंद।—रा. रू.

फट्टणहार, हारौ (हारी), फट्टणियौ—वि०।

फट्टिओड़ौ, फटियोड़ौ, फट्टयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फट्टीजणौ, फट्टीजबौ—भाव वा०।

फट्टियोड़ौ—देखो 'फाटियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फट्टियोड़ी)

फड—देखो 'फड़' (रू. भे.)

उ०—धजवडां धार रुळ रुंड मुंडं, विहंड फड वाढ़ खडह विहंडं।
—गु. रू. वं.

फडड, फडड़ाट—देखो 'फड़ड़ाट' (रू. भे.)

उ०—फडड़ाटा खेग करै फुरणै, नड नीर हुवै किरि नीझरणै।
—गु. रू. वं.

फडद—१. देखो 'फड़द' (रू. भे.)

२. देखो 'फरहद' (रू. भे.)

उ०—किसिमिसि द्राख, फडद खजूर हरमुजी, मधुरउ मांकडउं दीप सिखा समांन सरस फणस।—वं. स.

फडफड— देखो 'फड़फड़' (रू. भे.)

उ०—फडकड भ्रिज्जह आवट कूट, फडफड प्रांण श्रणी सिर फूट ।
—गु. रू. बं.

फडहटीया—सं० स्त्री० [देशज] एक व्यवसायिक जाति ।
उ०—डवगर बाबर फोफलीया **फडहटीया** फडिया वेगडिया सिंगडिया भोई ।—व.स.

फडहड—देखो 'फडहड़ाट' (रू.भे.)
उ०—घू नाचै भड घड फीफड **फडहड**, लोडै लडथट लोहि लडै ।
बीयै दळ वड चढ़ हुई हडवड, जोवै घडतड अनड अडै ।—गु.रू.बं.

फडहडणौ, फडहडबौ—१. देखो 'फड़हड़णौ,फड़हड़बौ' (रू.भे.)
उ०—विडंगां दौड दडवडतेह, फुरणै नास **फडहडतेह** ।—गु.रू.बं.
२. देखो 'फड़फड़णौ, फड़फड़बौ' (रू. भे.)

फडहडणहार, हारौ (हारी), फडहडणियौ—वि० ।
फडहडिग्रोड़ौ, फडहडियोड़ौ, फडहडयोड़ौ—भू०का०कृ० ।
फडहडीजणौ, फडहडीजबौ—भाव वा० ।

फडहडा—देखो 'फड़हडाट' (रू भे.)
उ०—फूरणियां **फडहडा**, घज्ज घू श्रध्धडा । है खडै वांकडा, ताजवै ताकडा ।—गु. रू. बं.

फडियाळ—देखो 'पडियालग' (रू.भे.)
उ०—गळ कटै **फडियाळ**, वाड जडियाळ विजै बळै । श्रंग फुटां छडियाळ,हुै किरमाळ बळोवळ । घरणि लुटै घडियाळ कमळ दडियाळ तणी कळ । **फडियाळ** घांट चाचर फटै, घाव न घटै घुघडै ।
—पनां वीरमदे री बात

फडियौ, फडीयौ—देखो 'फड़ियौ' (रू. भे.)
उ०—फोफलीया फडहटीया **फडिया** वेगडिया सिंगडिया भोई कंदोई देसाली कलाली ।—व. स.

फणग—स० पु० [सं० फणिन्+श्रंग] शेषनाग ?
उ०—गणक नाळि गोळियं, **फणंग** धूजि फंगटां । सणंक सार ऊछजे, भणंक खेल सोगटां ।— मा. वचनिका

फण—सं० पु० [स० फणः] सांप के सिर की उस अवस्था या स्थिति का नाम जब कि वह अपनी गर्दन के दोनों ओर की नलियों में वायु भर कर उसे फैलाकर छत्राकार कर लेता है, फन ।
उ०—भुरजमाळ **फण** मंडळी, सोर झाळ विस झाळ । जांण सेस बैठो जमी, मिस चीतोड़ कराळ ।—बां. दा.
रू० भे०—फन, फुण ।
मह०—फुणाट ।

फणकर—सं० पु० [सं० फणः+करः] सांप, सर्प ।

फणकार, फणकारौ—सं० स्त्री० [देशज] १. बैलों की रास या घोड़े की लगाम का उन्हें अभीष्ट दिशा या मार्ग की ओर चलाने या मोड़ने के लिए दिया जाने वाला झटका विशेष । उ०—उणनै कीं सुध-बुध के कीं चेतौ नीं रह्यौ । घोड़ा री रास **फणकारी** के घोड़ौ तौ पाधरौ झूलरा रै मांय वड़ग्यौ । पिणियारघां कूकी, हाय-श्राय मचाई ।
—फुलवाड़ी
२. सांप के फूंकने व बैल आदि पशुओं के सांस लेने की क्रिया ।
३. सांप के फूंकने व बैल के सांस लेने से फन-फन होने वाला शब्द ।
रू० भे०—फुणकार ।
अल्पा०—फणकारौ, फुणकारौ ।

फणकारणौ, फणकारबौ—क्रि० स० [देशज] बैलों की रास या घोड़ की लगाम का उन्हें श्रभीष्ट दिशा या मार्ग की ओर चलाने या मोड़ने के लिए झटका देना । उ०—१. सूतल नाथा सर नासां सणकारी, फुरणीं घूंघातां रासां **फणकारी** ।—ऊ. का.
उ०—२. नागोरी बळदां री रासां **फणकारता** आप रा खेत कमावता ।—फुलवाड़ी
उ०—३. रासां **फणकारता** ई रथ रा घोड़ा आगै बधिया ।
—फुलवाड़ी

फणकारणहार, हारौ (हारी), फणकारणियौ—वि० ।
फणकारिग्रोड़ौ, फणकारियोड़ौ, फणकारयोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फणकारीजणौ, फणकारीजबौ—कर्म वा० ।

फणकारियोड़ौ—भू० का० कृ०—अभीष्ट दिशा या मार्ग की ओर चलाने या मोड़ने के लिये रास या लगाम का झटका दिया हुआ.
(बैल या घोड़ा)
(स्त्री० फणकारियोड़ी)

फणकारौ—सं० पु०—देखो 'फणकार' (अल्पा., रू.भे.)
उ०—खीणखाव री चांदणी तांणनै फूठरी बैल सजाई । **फणकारा** मारता बळदां नै देखनै टीलोड़ी डरपी ।—फुलवाड़ी

फणगट—देखो 'फरगट' (रू. भे.)
उ०—मूळि मही-मूळे गइ, ऊंचपणि आकासि । **फणगट** देइ फिरी रहिया, जांणइ मयण-ह पासि ।—मा. कां. प्र.

फणगटौ—देखो 'फागोटौ' (रू. भे.)
उ०—फागुण केरां **फणगटां**, फिरि फिरि गाइ फाग । चंग वजावइ चग परि, श्रालवइ पंचम राग ।—मा. कां. प्र.

फणगर—सं० स्त्री० [?] पर, पंख ?
उ०—फरकट फोकट नु फिरइ, फागुण फूफूकार । फूनी मझ **फणगर** जिसिउ, जउ जमली नहीं दार ।—मा. कां. प्र.
२. सांप, नाग । उ०—वाटिइ वनगज **फणगर**, सीह तणा बोंकार । रौद्र अटवी बीहांमणी, घूक तणा घुतकार ।—नळ दवदंती रास

फणगरी—सं० स्त्री०—शाक विशेष ?
उ०—फूवेडो नइं **फणगरी**, फूंगारी नइं फांगि । फूणा फूली फूमती,

फोफल फूली सांगि ।—मा.कां.प्र.

फणगो–सं०पु० [देशज] पंतगा ।

फणधर–वि० [सं० फणधारिन्] फणवाला, फणधारी । उ०—कोतर माहि थी बीहावि काला फणधर व्याल रे । दरभ सलाका घणी खूंचि, विहि रुधिर नी धार रे ।—नळाख्यान

सं०पु०—१. सांप ।

२. शेषनाग । उ०—पर हूंता जिम पसर, धरा फणधर उर धारै । पवन जोर पेरियौ, वहै वद्दळ विसतारै । नाग राग पेरियौ, प्रांण पैलां वसि थप्पै । दास हुकम पेरियौ, जास पति धरै सजप्पै । परतक्ष ठगोरी पेरियौ, मनुज ग्रहै ठग-मंडळी । पेरियां मंत्र सिंधुर सगह, ग्रावै दरगह अग्गळी ।—रा. रू.

रू०भे०—फनधर, फुणधर ।

फणपंति, फणपंती–स०स्त्री०यौ० [सं०फणः+पंक्ति] फणों की पंक्ति । उ०—के फुक्कैं गाफिल कटैं, लगि नैंन पलक्कै । सेस करक्कै संकुली, फणपंति फरक्कैं । धायन सत्थै स्वास के, भरि फेन भभक्कैं । छोह गरूरी छोरि के, सिर फोरि ससक्कै ।—वं. भा.

रू०भे०—फनपंति, फुणांपति, फुणांपत्ति ।

फणपत, फणपति, फणपती, फणपत्त, फणपत्ति, फणपत्ती–सं०पु०[सं० फणपति] १. सर्प, सांप ।

२. देखो 'फणिपति' (रू. भे.)

उ०—वदन एक सहस दुय सहस रसना घणी, तिकौ फणपती गुण थकैं तवरी । तनै संखेप रघुनाथ चिरतां तणी, गहर कीरत कहूं सुणौ गवरी ।—र. रू.

फणफण–सं०स्त्री० [अनु०] तीर, पत्थर आदि को तेज गति से चलाने पर उत्पन्न होने वाली ध्वनि । उ०—भूंबीया लूंब्रीया मीरगढ़ ऊपरा, गोफणा फणफणा वहैं गोळां ।—प च.चौ.

फणमंडप–सं०पु०यौ० [सं० फण+मंडप] फैला हुआ सर्प का फन । उ०—तां फुणिदु फणमंडप मांडइ, जां पडइ गुरुड नई नहुं फांडइ । —सालिसूरि

फणमाळ–सं०पु० [सं०फणमाल] शेषनाग ।

रू०भे०—फनमाळ ।

फणस–सं० स्त्री० [सं० पनस] कटहल का वृक्ष या फल ।

उ०—१. फेकारी नइ फालसां, फोफल फणस फणिंद ।
फूघेढ़ी नइ फूढ़ीया, फालक फिरांमण फिंद ।—मा. कां. प्र.

उ०—२. फणस किसेरू फालसां, सोभी सकर गुलाल । कोहलापाक कपूर परि, गविल गलिइ गाल ।—मा. कां. प्र.

उ०—३. पांन अडागर ऊपरि, मोती केरा चूंन । फोफल फणस कपूरनी, वीडां वरती घूंन ।—मा. कां. प्र.

फणसहस–सं०पु० [सं० सहस्रफण] देखो 'सहसफण' (रू.भे.)

फणसहसधार–सं०पु० [सं० सहस्रफणधारिन्] देखो 'सहसफणधार' (रू.भे.)

उ०—वसमसै धरण, फणसहसधार, कसमसै कमठ रज अंधकार । —वि.सं.

फणाकार—सं० पु० यौ० [सं०फण+आकार] १. सर्प का फन । २. सर्प, सांप । ३. शेषनाग ।

रू०भे०—फंणाकार, फुणाकार ।

फणाळी, फणालो–वि० [सं० फण+आलुच] फणधारी ।

सं०पु०—१. शेषनाग ।

उ०—जबर बजै जद धमजगर, नम सेस फणाळा ।—पा प्र.

२. सर्प, सांप ।

रू० भे०—फनाळी ।

मह०—फुणाळ ।

फणिंद–सं० पु० [सं० फण+इन्द्र] १. देखो 'फणींद्र' (रू.भे.)

उ०—१. फौजां में मौजां फिरै, गाहण गढ़ा गइंद । फुंकै काल फणिंद री, उडि गया नर-इंद ।—ध. व. ग्रं.

उ०—२. फेकारी नइ फालसां, फोफल फणस फणिंद । फूघेढी नइ फुढ़ीया, फालक फिरांमण फिंद ।—मा. कां. प्र.

फणि–सं०पु०—१. सगण के प्रथम भेद गुरु का नाम । (र.ज.प्र.)

२. देखो 'फणी' (रू.भे.)

फणिजकुमारि–सं० स्त्री० [सं० फणिजकुमारिका] नाग कन्या ।

उ०—अरिघड़ दूण सवालख प्रावध, सोळै दूण सभे सिणगारि । कूंत कवांण छुरी क्राछोली, मलफि गुरज गहि फणिजकुमारि । —दूदौ

फणिपति–सं० पु० यौ० [सं० फणिन्+पतिः] १. नागराज, शेषनाग ।

२. वासुकि नाग ।

रू०भे०—फणपत, फणपति, फणपती, फणपत्त, फणपत्ति, फणपत्ती, फुणांपति, फुणांपत्ति ।

फणियास–सं० पु०—शृंगार में एक आसन का नाम ।

फणिफेन–सं० पु० [सं० फणिन्+फेनः] अफीम ।

फणिराज–सं० पु० [सं० फणिन्+राजः] १. शेषनाग ।

२. वासुकि नाग ।

फणींद, फणींद्र–सं०पु० [सं० फणिन्+इन्द्रः] १. शेषनाग । २. वासुकि नाग । ३. सर्प । ४. एक प्रकार का वृक्ष विशेष ।

रू० भे०—फणिंद, फुणंद, फुणंद्र, फुणद, फुणिंद ।

फणी–सं० पु० [सं० फणिन्] १. सांप, सर्प । (अ. मा., ह. नां. मा.)

उ०—फणी थांभ धर सेसफण, सदा करै सिसकार । खाविंद धर खग पर थंभी, हूं रण मह हूंकार ।—रेवतसिंह भाटी

२. शेषनाग ।

उ०—करणी गढ़ ग्रास घणी कड़कै, धरणी-पुड धूजि फणी धड़कै । —मे.म.

३. एक प्रकार का बिना पत्तों का भू-फोड़ ।

४. टगण के पांचवें भेद का नाम । (र. ज. प्र.)

रू०भे०—फणि, फनी, फुणी ।

फणीस–सं० पु० [सं० फणीश] १. शेषनाग । २. सर्प, सांप ।

फणेंजां–सर्व०—आपका, अपना । (कविराज बांकीदास)

फणो—देखो 'फुणो' (रू.भे.)

फत—देखो 'फतह' (रू.भे.)

उ०—पछारें पापों को त्रिपत भव तापों त्रुटि तळै । लावें मेवा को विधि विधि निसेधा फत मळै ।—ऊ. का.

फतन—देखो 'फितन' (रू. भे.)

उ०—तठा उपरायत खसबोय मंगायजै छै, सू अतर किण भांत रो छै? गुलाब रो चनण रो फतन रो वुर रो खस रो करणं रो, सू सीसी खुली छै ।—रा. सा. सं.

फतवा–सं०पु० [अ० फ़तव:] वह लिखित आदेश या व्यवस्था जो मुसलमान धर्माचार्य (मौलवी) द्वारा किसी विवादास्पद विषय पर अनुकूल या प्रतिकूल दी जाती है ।

उ०—मुल्ला काजी मंगहु मयाद, फतवा लीजै मेटन फसाद ।

—ऊ.का.

फतवी—देखो 'फतूही' (रू.भे.)

फतह–सं० स्त्री० [अ० फ़तह] १. विजय ।

उ०—१. 'जसराज' हरा कर फतह जूंझ, तखत री लाज मरजाद तूझ । कही पातसाह इम विदा कीन, दुहू राह बांह साबास दीन ।—वि.सं.

उ०—२. इतरै उण बखत रा ढोल नगारा बाजिया जिका सुण'र पूछी—आज भाई के पुरे में ढोल नगारै जो बाजै हैं सो किसी की सादी है या कोई कुंवर पैदा हुवा है या किही ऊपर फतह हासिल की है?

—पदमसिंह री बात

२. सफलता, कृतकार्य ।

रू० भे०—फत, फते, फतेह, फतै ।

यौ०—फतहचांद, फतहपेच ।

फतहचांद–सं० पु० [अ० फ़तह+सं० चंद्र] १. पुरुषों की पगड़ी पर धारण करने का आभूषण विशेष ।

रू० भे०—फतैचांद ।

फतहपेच–सं० पु० [अ० फ़तह+राज० पेच] १. पगड़ी बांधने का एक विशेष ढंग ।

२. पुरुषों की पगड़ी पर धारण करने का आभूषण विशेष ।

३. स्त्रियों के सिर गूंथने का एक ढंग विशेष ।

४. इस प्रकार के गूंथे हुए सिर पर धारण करने का स्त्रियों का एक शिरोभूषण विशेष ।

रू० भे०—फतैपेच ।

फतूर–सं० पु० [अ० फ़ुतूर] १. उपद्रव, खुराफात ।

२. ढोंग, आडंबर ।

उ०—विपत के मारे बूढ़े बंदर सै दो कलावत गावै, चूड़ेल की चेली सी चार भगतणियें नाच के भाव बतावै कोई खास तौ खवासी करे, विचारै दरबांन इधर-उधर मारै-मारै फिरै, असा फतूर कर हमारै बुलाणं का हुकम दिया । देखणा ई था जिससै हमनै ई हठ न किया ।—दुरगादत्त बारहठ

३. विघ्न, बाधा । ४. हानि, नुकसान ।

रू० भे०—फितूर ।

फतूरियौ–वि० [अ० फ़तूर+रा० प्र० इयौ] १. खुराफात करने वाला ।

२. उपद्रवी ।

३. ढोंग या आडम्बर करने वाला ।

४. विघ्न या बाधा डालने वाला ।

फतूह–सं० पु० [अ० फ़ुतूह] १. समूह, ढेर । (अ. मा.)

२. विजय या जीत में प्राप्त धन । उ०—मेरगिर के से तोलरिण फतूह के फरसते, सांम कांम में सधीर, सूरू के सहायक, दीनवूं के दावागीर, दिलपाकूं के दोसत ।—र. रू.

फतूहा–सं० स्त्री० [?] ध्वजा, झंडा । उ०—चीण उदंगळ चेतियौ, दळ मझ गयौ दुबाह । फरक फतूहा फावियौ, आरण कियौ उछाह । आरण कियौ उछाह, वीरातन वढ़िढ़यौ । मारू लोह, मराट, चमू सझ चढ़िढ़यौ ।—किसोरदांन बारहठ

फतूही–सं० स्त्री० [अ० फ़ुतूही] १. बिना आस्तीन का एक प्रकार का पहनने का बंडा ।

२. सदरी, जाकेट ।

३. युद्ध में लूट में मिला हुआ माल ।

रू०भे०—फतवी ।

फते, फतेह, फतै—देखो 'फतह' (रू.भे.)

उ०—१. संमत १६८१ रा काती सुदि १५ दूस नदी ऊपर साहजादे परवेज नूं खुरम लड़ाई हुई । राजा जी नूं हरौळ किया था, फते पाई ।—नैणसी

उ०—२. लंका फतेह कर अवध कूं आये, तमांम जीव अत उमंग सूं छाये ।—र. रू.

उ०—३. पछै आंण सिधमुख मांहे डेरो कियौ । पाछा फतै कर वळिया ।—नैणसी

फतैचांद—देखो 'फतहचांद' (रू.भे.)

फतैपेच—देखो 'फतहपेच' (रू.भे.)

उ०—सिव सा दत सीसफूल रा सहजां, देख मठोड़ां सला दवै । 'वाघ' सुतन रघुवर जस वातां, फतैपेच रै फैल फवै ।

—स्वांमी गणेसपुरी

फदकण–सं०पु०—१. चारों ओर से आहते से घिरे हुए खेत के प्रवेश द्वार

पर खड्डा खोदकर उस खड्डे के ऊपर रखा जाने वाला सीधा लम्बा पत्थर या काष्ट का डंडा।

२. देखो 'फुदकरण' (रू. भे.)

फदकणी, फदकबौ—देखो 'फुदकणी, फुदकबौ' (रू. भे.)

उ०—दयतां का प्रवास सब जद आग जळाया। महलां ऊपर फदक फदक सब सहर धुवाया।—केसोदास गाडण

फदकणहार, हारौ (हारी), फदकणियौ—वि०।

फदकिओड़ौ, फदकियोड़ौ, फदक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फदकीजणौ, फदकीजबौ—भाव वा०।

फदकूड़ौ—सं० पु० [देशज] (स्त्री० फदकूड़ी) फुदकने या उछल-कूद करने वाला।

फदके—क्रि० वि०—शीघ्रता से, जल्दी।

उ०—आंधी खूंखाटा करती उठ आवै। फदके मूंफाटा चेता चुल जावै।—ऊ. का.

फदकौ, फदड़कउ, फदड़कौ—सं०पु० [देशज] १. कूदते-फादते चलने वाला एक प्रकार का छोटा कीड़ा विशेष।

उ०—१. हरि निज रथ विहगा, मन सित गुणै वेगि वाधता, ताकी कीट पतंगा, फदड़का नेव उडंति।—रामरासौ

२. दूध का वह सार भाग जो दूध में अम्ल पदार्थ के सयोग से द्रव पदार्थ से पृथक होकर लच्छे के रूप में हो जाता है।

३. रूई कातने वाले की असावधानी या अदक्षता के कारण धागे के बीच में रहने वाला रूई का गुच्छा।

४. आकाश में बिखरे हुए बादल।

५. देखो 'फरड़कौ' (रू भे.)

उ०—सेठांणी फदड़कौ मारनै तिबारी में जावती जावती ई बोली—थांरौ ग्यांन थांरै पाखती ई राखौ, म्हारै को चाहीजै नीं।

—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—मारणौ।

मुहा०—फदड़कौ मारणौ—गुस्सा करना, नाराज होना।

रू० भे०—फिदड़कौ।

फदफद—सं० स्त्री० [अनु०] १. खिचड़ी, हलवा आदि के पकते समय उत्पन्न होने वाली ध्वनि विशेष।

२. देखो 'फदाफद' (रू. भे.)

फदफदाटौ—सं० पु० [देशज] १. उछल-कूद।

२. जोश, आवेश। उ०—दो वेळा सागेड़ी मारणी उतारीजी। ताचकनै आगै होय बीड़ौ उठायौ। सै फदफदाटौ मिटग्यौ।

—फुलवाड़ी

फदाक—सं० स्त्री० [अनु०] छलांग, कूदान।

उ०—१. म्हैं धरती माथै पड़्यौ जीव, रूंख माथै फदाकां मारण-वाळा बांदरा री काळजी कीकर काढूं।—फुलवाड़ी

उ०—२. जद हिरण पसवाड़ै वांटकां रै ओळै फदाक भरी तो जोर सूं कवाड़ी उण रै लारै वगाई।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—भरणी, मारणी, लगाणी।

अल्पा०—फदाकौ।

फदाकौ—सं० पु०—देखो 'फदाक' (अल्पा., रू. भे.)

फदाफद—क्रि० वि० [अनु०] हाथ पैर उछालते हुए कूदने की क्रिया।

उ०—राजा जी आप री खुसी में ई बावळा व्हियोड़ा हा। फदाफद कूदता कह्यौ—रात री भोजगी है, थारी आंख्यां घुळ दीसै।

—फुलवाड़ी

रू० भे०—फदफद।

फदाळ—सं० पु० [देशज] 'फदाळी' लोगों द्वारा बजाया जाने वाला वाद्य विशेष।

फदाळी—सं० स्त्री० [देशज] सुन्नी मुसलमानों के अन्तर्गत एक जाति विशेष जो कूंजड़ों, कसाइयों, घोसियों आदि के विवाह में 'फदाळ' या ढोल बजाने का कार्य करते हैं।

फदियौ—सं० पु० [अ० फिदिय:] १. एक प्रकार का छोटा सिक्का जो मध्यकाल में प्रायः समस्त राजस्थान में प्रचलित था।

उ०—१. तितरै सीवांणा ऊपर फौज आई। सीवांणै विग्रहीयौ। तरै राव मालदे कह्यौ—'दरबार बैठां कोई सीवांणौ चढ़ै तो आज म्हांरी गरज छै। तरै 'तेजसी' कह्यौ—'लाख फदिया म्हांनुं दो म्हे चढ़स्यां।—राव मालदे री वात

उ०—२. तद कलाखांन मिणहारियौ धरती माथै दंड कीयौ—लाख दस। लाख फदिया भरीया। बाकी रा माहे सारण 'धनोजी' ओळ दीया।—राव चंद्रसेन री वात

उ०—३. ताहरां एवाळां कह्यौ—'दीजै राज!' ताहरां मेळै सेपटै नव फदिया पड़दी मांहे सूं काढ़ि नै दिया।—नैणसी

२. विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर फल-प्राप्ति की अभिलाषा से सेवा करने वाली जातियों (कुम्हार, बढ़ई आदि) को नेग के रूप में दिया जाने वाला सिक्का। (यह धेला, दुअन्नी, चौअन्नी, रुपया से मोहर तक भी हो सकता है।)

वि० वि०—प्राचीन काल मे विवाहादि अवसरों पर फल-प्राप्ति की अभिलाषा से सेवा करने वाली जातियों (बढ़ई, नाई, दर्जी आदि) को पुरस्कार के रूप में एक-एक फदिया दिया जाता था। कालान्तर में फदिया के स्थान पर एक-एक पैसा दिया जाने लगा, परन्तु सम्पन्न व्यक्ति एक रुपया तक देने लगे और राजा-महाराजा एक मोहर तक देते थे। यह फदिया देने की प्रथा अभी तक प्रचलित है एवं शनैः शनैः लोप होती जा रही है।

३. दृष्टि-दोष निवारणार्थ छोटे वच्चे के हाथ, ललाट या शरीर के किसी अंग पर दी जाने वाली काजल की बिंदी।

उ०—ओढणियौ पहराव्यौ नही कन्हैया, टोपी न दीधी माथ रै। काजल पिण सारयौ नहीं कन्हैया, फदिया न दीधा हाथ रै।

—जयवांणी

४. सधवा या कुमारिका के हाथ में लगाई जाने वाली मेंहदी की बिंदी।

५. वह धन जिसके बदले में किसी अपराधी को कारागार से छुड़ाया जाता था।

६. एक प्रकार का अर्थ-दण्ड।

फन—सं० पु० [अ० फ़न] १. गुण, खूबी। २. विद्या।
३. कला, दस्तकारी।
४. देखो 'फण' (रू. भे.)

फनधर—देखो 'फणधर' (रू. भे.)

फनपति—देखो 'फणपति' (रू. भे.)

फनफनाट—सं० पु० [अनु०] शरारत, उदंडता।
उ०—उण रै हाथां पगां दीवा जगता हा। पाखती आय अठी-उठी फनफनाटा करघा के ठोकर सूं बाटकी ऊंधी व्हैगी।—फुलवाड़ी

फनमाळ—देखो 'फणमाळ' (रू. भे.)
उ०—देखि निरंकुस देव इहिं, सज्जित समुहाया। घर पोढन धम-चक्क दै, फनमाळ फिराया।—वं. भा.

फनाळी—देखो 'फणाळी' (रू. भे.)

फनी—देखो 'फणी' (रू. भे.)
उ०—चढघौ हय पक्खर बिट्टि रठौर, परघौ सिर सेस समस्तनि जोर। डुली मनि मत्थ फनी फन चंपि, उरब्बिय तांम थरत्थर कंपि।
—ला. रा.

फफरी—सं० स्त्री० [देशज] १. धमकी, घुड़की, डांट-फटकार।
वि०—१. नमकीन। २. चिकनी चुपड़ी (बातें)।

फफवा, फफुबौ—स० पु० [देशज] एक प्रकार का विषैला जन्तु।
उ०—विसधर कोट गोयरो बीछू, फफवा धांमण वेहड़ाफोड़। अमल कराळो जहर उतरै, आप नांम रौ मंत्र अरोड़।
—बखतरांम आसियौ

फफूंवी—सं० स्त्री० [देशज] १. स्त्रियों के लहंगे, साड़ी आदि में लगाई जाने वाली गांठ।
२. वह सफेद तह जो बरसात के दिनों में गीली लकड़ी एवं फलों आदि पर जम जाती है।
३. एक प्रकार का उड़ने वाला बरसाती जन्तु जो अधिकतर रात को रोशनी के पास उड़ता रहता है।
४. भुकड़ी।

फफोळो—सं० पु० [सं० प्रस्फोट] त्वचा के जलने अथवा रक्त विकार से उत्पन्न एक प्रकार का फोड़ा जिसमें पानी भरा होता है।
उ०—धनस्यांम नही अरमांण नया, चिर परिचित म्हारे हिवड़ै रा। आंज फफोळा वण फूटया, गीतड़ला नटवर दुखड़ै रा।
—मीरां

फब, फबण—वि० [सं० प्रभवन] १. सुन्दरता, छबि।
उ०—जळहर गयौ दुनी जीवाडण, फब नहीं दापग फरक। साहां ग्रहण मोखणौ सांगो, आंथमियौ मोटौ अरक।
—महारांणा सांगा रौ गीत
२. फबने की अवस्था या भाव।

फबणौ, फबबौ—देखो 'फाबणौ, फावबौ' (रू. भे.)
उ०—१. गायण एक सपत सुर गावै, लेख अछर उरवसी लजावै। झांकै एक हास द्रग झूलै, फबि रवि उदै कमळ सी फूलै।
—रा. रू.
उ०—२. झूमरदे रंग री लट्ठा री घाघरौ अर खादी री मांखी भांत ओरणी उणनै जबरी फबती।
उ०—३. चिड़ियां नै रांणियां रा मै'ल में हींडा देवणा फबै कोनीं।
—फुलवाड़ी
उ०—४. तद राजकंवर कह्यौ—थां लोगां री बातां सुणियां पछै म्हनै थांरै जोग फबतौ ई न्याव करणौ पड़सी।—फुलवाड़ी
फबणहार, हारौ (हारी), फबणियौ—वि०।
फबिओड़ौ, फबियोड़ौ, फब्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फबीजणौ, फबीजबौ—भाव वा०।

फबती—सं० स्त्री० [राज० फबणौ] १. समय के अनुकूल कही गई बात।
२. व्यंग, चुटकी।

फबियोड़ौ—देखो 'फाबियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फबियोड़ी)

फबीलौ—वि० [सं० प्रभा+रा०प्र०ईलौ] (स्त्री० फबीली) सुन्दर, छेला।
उ०—सजीली फबीली लंजीली छबीली रमकीली लंकीली डमकीली छकीली लटकीली चकीली चटकीली बत्तीस लछणी चौसट कळा विचछणी, केलरस क्यारी, प्रांणप्यारी जिण सुं माहरौ निज़ नेह दुरस भांत राखजे देह।—र. हमीर

फबौ—देखो 'फुंबौ' (रू. भे.)

फब्बणौ, फब्बबौ—देखो 'फाबणौ, फावबौ' (रू भे.)
उ०—तुकमां रूप खतम फतै रा फब्बिया, देखंतां उर दंभ अरंदा दब्बिया।—किसोरदांन बारहठ
फब्बणहार, हारौ (हारी), फब्बणियौ—वि०।
फब्बिओड़ौ, फब्बियोड़ौ, फब्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फब्बीजणौ, फब्बीजबौ—भाव वा०।

फब्बियोड़ौ—देखो 'फाबियोड़ौ' (रू. भे)
(स्त्री० फब्बियोड़ी)

फभड़ी, फमड़ी—देखो 'पांभड़ी' (रू. भे)
उ०—अंगुरी कूं मूंदड़ी-ओढ़ण कूं फभड़ी, पेरण कूं रेसमी धोतिया।
—जयवांणी

फरग—१. देखो 'फिरंग' (रू. भे.)
२. देखो 'फिरंगी' (रू. भे.)
उ०—निज घणी कहै आखर जिकै नीमटै, किलकिला जिसा अमराव जुड़सी कटै। जुध फरग जाचसी फेर फौजां जटै, 'ऊद' हर 'मांन' मैं याद आसी उटै।—किसन जी आढ़ौ

फरंगट—देखो 'फरगट' (रू. भे.)
उ०—धप मप धौं मादल बाजइ, भुंगल भेरि ए। ततथै-ततथै नटुया नाचइ, फरंगट फेरि ए।—स. कु.

फरगांण—देखो 'फिरंगी' (मह., रू. भे)
उ०—ताखड़ा फिरै फरंगांण तारख तरह, दुरंग बांका लियण रोड ददमां। व्याळ विष तठै अवनीप आवै वहै, धरमंध जटधार रै ओट कदमां।—मोड जी आढ़ौ

फरंगी—देखो 'फिरंगी' (रू. भे.)
उ०—१. फिरै फरंगी के हकां काज सुधारै हकारै फौजां।
—महाराजा मांनसिंह रौ गीत
उ०—२. महाराज 'मांन' मुरधरा माथै, चमू फरंगी नांह चढ़ै, रे! जाणै सूरज वाळौ रथ, कासी सूं आंतरै कढ़ै।—नाथूरांम जी लाळस

फरंट—वि० [अं० फ्रंट] विरुद्ध, खिलाफ, प्रतिकूल।

फर—सं० स्त्री०—१. पीठ।
२. पर्वत या तालाब की मेंढ़ का वह भाग जो भूमि को स्पर्श करता है, तलहटी। उ०—डहलाए दद्दर हीसै हैमर फूटि सरोवर पाळ फरं।—गु. रू. बं.
३. पशु के अगले पैर और धड़ से जुड़ने के संधिस्थान के अंदर का भाग। उ०—महारांणौ जी एक इका नै पातसा रा हाथी आगै वहतां मार नीसारिया तठै इका री तरवार घोडा रै फर में पड़ी आगलौ डावौ पग उठै हीज पडियौ।—वी. स. टी.
[स० फलक] ४. ढाल। उ०—१. आंणी असह जडाळी आहव, फूटती घोह में फर। हुय तौ कळह 'कुंभक्रन' होयै, न तौ असुर सुर नर भवर।—महारांणा कुंभा रौ गीत
उ०—२. यें मो पासे धन देख वाहर कर आया सो फर ढाल नै तीरां तीर लीधां आपरै भुजाआं रै भरोसे हां, जकण रै हीज पांण घरती रा धन खावां हां।—वी. स. टी.
[स० फलम्] ५. बाण में तीर का अग्र नुकीला भाग।
उ०—पे'लै पार वरे बीद भराये वेवांणां परी, सोक सरां वायकुंडां पुराये सादीह। फरां फाड़ै सत्रां तोड़ै चुराये भालड़ां फूटै, अके-राड़ै फतै जांगी घुराये अबीह।—गंभीरसिंघ सोळंकी रौ गीत
६. ढलवां भू-भाग, ढलाव।
७. झूंठी प्रशंसा करना, बढ़ा-चढ़ा कर कहना।
क्रि० प्र०—मारणी।
८. चिड़िया के उड़ने से परों से उत्पन्न ध्वनि।
उ०—चिड़ी तौ फर करती उठा सूं उडगी।—फुलवाड़ी
९. देखो 'फल' (रू. भे.)
उ०—आंपण पांन फर मेल्हिया ईसर, मोटै सुपह दियंता मांन।
—महादेव पारवती री वेलि

फरक—सं० पु० [अ० फर्क] १. पार्थक्य, पृथकता, अलगाव।
२. दो स्थानों के बीच की दूरी, अन्तर, फासला।
३. भेद-भाव, परायापन, दुराव।
उ०—म्हे तौ सगळा आपनै भगवांन अर बाप री ठौड़ मांनां, इण में आपनै कांई फरक निगै आयौ?—फुलवाड़ी
४. दो विभिन्न वस्तुओं या व्यक्तियों में होने वाली विशेषता।
उ०—ओर जै'र तौ मूंढा में आवतां ही झट परलोक नै भेज दै है पण म्हारा पय दूध में औ आंतरौ फरक है के कांम पड़ियां मारै, अरथात सत्रुआं सूं जूंझनै मरै।—वी. स. टी.
५. कमी, न्यूनता।
उ०—गुरु खोटा व्है तौ ढेव में फरक पाड़ देवै अनें धरम में ई फरक पाड देवै।—भि. द्र.
६. भेद, अन्तर।
उ०—१. जी फरक न जांणै, अरक न आणै, भव-भव नरक भुगंदा है।—ऊ. का
उ०—२. उणमें अर आं दैतां में म्हांनै तौ की फरक नीं लखावै।
—फुलवाड़ी
७. हेर फेर, परिवर्तन।
उ०—वौ आप रै कह्योड़ी वात में फरक नी आवण देवैला, औ सगळां नै भरोसौ हौ।—फुलवाड़ी
८. असर, प्रभाव।
उ०—रिपिया दोय रिपिया रा खरचा सूं वांरै माथै की फरक नी पड़तौ।—फुलवाड़ी
९. हिसाब-किताब में भूल के कारण होने वाला अन्तर।
१०. एक सख्या या रकम को दूसरी सख्या या रकम में से घटाने पर निकलने वाला शेषांश।
११. दो विभिन्न पदार्थों में होने वाली विषमता।
१२. वह मूल गुण या तत्व जो किसी के सुधरने या सुधरे हुए होने पर लक्षित होता हो।
ज्यूं०—बीमारी सूं उठियां पछै हमै सरीर में घणौ फरक है।
उ०—विणजारा रै ओखद सूं बांमण रै खासौ भलौ फरक पड़ियौ।
—फुलवाड़ी
१३. किसी की स्थिति आदि में होने वाला फेर-फार, सुधार, ह्रास आदि परिवर्तन।
ज्यूं०—हमै ताव हळकौ है, पै'ला सूं घणौ फरक है।
ज्यूं०—पै'ली री दुनियां अर आज री दुनियां में घणौ फरक है।
१४. ध्वजा, झंडी।

रू० भे०—फरक्क ।

फरकणौ, फरकबौ—देखो 'फडकणौ, फडकवौ (रू. भे.)

उ०—१. धोळी धजा धणी-ह, फावै देवळ फरकती । घट मो चाह धणी-ह, कोळू जाय दरसण करूं ।—पा. प्र.

उ०—२. फाटा धावळिया घाघरिया फाटा, फरकै चोटळिया देता फरराटा ।—ऊ. का.

फरकणहार, हारौ (हारी), फरकणियौ—वि० ।

फरकिग्रोड़ौ, फरकियोड़ौ, फरक्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरकीजणौ, फरकीजबौ—भाव वा० ।

फरकाड़ौ—देखो 'फरकेड़ौ' (रू. भे.)

फरकाड़णौ, फरकाड़बौ—देखो 'फडकाणौ, फड़काबौ' (रू. भे.)

फरकाड़णहार, हारौ (हारी), फरकाड़णियो—वि० ।

फरकाड़िग्रोड़ौ, फरकाड़ियोड़ौ, फरकाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरकाड़ीजणौ, फरकाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फरकाड़ियोड़ौ—देखो 'फडकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरकाड़ियोड़ी)

फरकाणौ, फरकाबौ—देखो 'फडकाणौ, फडकाबौ' (रू. भे.)

फरकाणहार, हारौ (हारी), फरकाणियौ—वि० ।

फरकायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरकाईजणौ, फरकाईजबौ—कर्म वा० ।

फरकायोड़ौ—देखो 'फड़कायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरकायोडी)

फरकावणौ, फरकावबौ—देखो 'फडकाणौ, फडकाबौ' (रू. भे.)

उ०—भूंडण आंमण दूमणी, की फरकावै कांन । की करड़ा की कब्बरा, देख मजीठा जांण ।—डाढाळा सूर री बात

फरकावणहार, हारौ (हारी), फरकावणियौ—वि० ।

फरकाविग्रोड़ौ, फरकावियोड़ौ, फरकाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरकावीजणौ, फरकावीजबौ—कर्म वा० ।

फरकावियोड़ौ—देखो 'फडकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरकावियोडी)

फरकियोड़ौ—देखो 'फडकियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरकियोडी)

फरकी—देखो 'फिरकी' (रू. भे.)

फरकीवाड़ौ, फरकेड़ौ—सं०पु०[देशज]१. वर्षा के उपरान्त भूमि के गिलेपन में कुछ न्यूनता ग्राने की स्थिति ।

२. वर्षा के ठीक बाद बादलों के बिखरने तथा धूप निकलने की स्थिति ।

रू० भे०—फरकाड़ौ ।

फरकौ—वि० [देशज] १. वह जिसमें जल की मात्रा न्यूनतम हो ।

२. स्वच्छ, निर्मल (ग्राकाश) ।

सं० पु०—नमकीन खाद्य पदार्थ ।

फरक्क—देखो 'फरक' (रू. भे.)

फरक्कणौ, फरक्कबौ—देखो 'फडकणौ, फडकबौ' (रू. भे.)

उ०—१. फौजक्क रोसक्क फारक्क फरक्क, हूरक्क वरक्क हुवै खळ हक्क । सीसक्क सभक्क हारक्क हरक्क, ग्रिधक्क गहक्क गूंदक्क गटक्क ।—सू. प्र.

उ०—२. झंडा फरक्कै बयंडा पीठ कोमंडां चा चळा झलै, धूवांगेळ ग्रातसां नगारां पड़ै ध्रीह । छडाळा घमोडि मोड़ि कुरम्मां री फौड़ि छाति, दोटै चाढ़ि लेगयौ ढूंढ़ाड़ा धोळै द्रीह ।

—बखतसिंघ रौ गीत

फरक्कणहार, हारौ (हारी), फरक्कणियौ—वि० ।

फरक्किग्रोड़ौ, फरक्कियोड़ौ, फरक्क्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरक्कीजणौ, फरक्कीजबौ—भाव वा० ।

फरक्कियोड़ौ—देखो 'फड़कियोड़ौ' (रू. भे)

(स्त्री० फरक्कियोड़ी)

फरगट—सं०पु० [देशज] १. तिरछी चितवन, नजारा । उ०—१. फरगट मारै फूटरा, कर सूं सरगट काढ़ । सठ दाखै भाळौ सरस, गिनका वाळौ गाढ ।—बां. दा.

उ०—२. चेली चोलां में मन मोळां में रोळां में रूठंदा है, पकवांन परूसै रळपट रूसै, फरगट सुख फेंकंदा है ।—क का.

२. घोड़े की चाल विशेष । उ०—घोड़ां रै फरगटै चालतां थकां ईं वां ईंडां नै ग्रैल ई नीं आवती ही ।—फुलवाड़ी

३. एक प्रकार का नृत्य जिसे राजस्थानी में 'फरकाफूंदी' भी कहते हैं ।

उ०—बाजै नित घूघर बधै, फरगट वाळौ फैल । तन-मन मिळियौ तायफै, छाकां हिळियौ छैल ।—बां. दा.

४. तमक ।

५. गोल चक्र में घूमने की क्रिया, घूम, चक्र ।

रू० भे०—फणगट, फरंगट, फरगट्ट ।

ग्रल्पा०—फरगटौ ।

फरगटौ—देखो 'फरगट' (ग्रल्पा., रू भे.)

फरगट्ट—देखो 'फरगट' (रू. भे.)

उ०—खुरै खांना पड़ै खुरी, तांनामांना करै तुरी । फौरा दीयै फरगट्ट, नाच छंद जिही नट्ट ।—गु. रू. बं.

फरगांण—देखो 'फिरंगी' (मह , रू. भे.)

फरड़—देखो 'फडड़' (रू. भे.)

उ०—१. बढ़ि कवड़ मुख करत बड़बड, फरड़ फिफरड कळिज फड़फड़ । फील घड़ पड़ ग्रभड़ भड़फड़, हुय दड़ड़ रत मुनंद हड़हड़ ।

—सू. प्र.

फरड़कणौ, फरड़कबौ—क्रि० अ० [अनु०] घोड़े, गधे, सूअर आदि पशुओं के नाक से तेज श्वांस लेने पर ध्वनि उत्पन्न होना।

फरड़कणहार, हारौ (हारी), फरड़कणियौ—वि०।

फरड़किओड़ौ, फरड़कियोड़ौ, फरड़क्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फरड़कीजणौ, फरड़कीजबौ—भाव वा०।

फरड़कौ—सं० पु० [अनु०] १. सरोष विरोध सूचक या आपत्तिजनक भाव प्रकट करने वाली मनोदशा या मुद्रा। उ०—सेठां री इण बात माथै सेठांणी रीसां बळती फरड़कौ मारनै उठा सूं वहीर व्हैगी।
—फुलवाड़ी

२. घोड़े, गधे, सूअर आदि पशुओं के नाक की आवाज।
उ०—१. ताहरां कोढीधज रो मुंहडौ कुहटतां कोढीधज फरड़कौ कियौ, सो गांम उगरास माहे केरडू मगरै ताई सुणियौ।
—नैणसी

उ०—२. मांणस रा कमळ ज्यों नासा फूल रही छै। नासा रा फरड़का वाजि नै रहीआ छै।—रा. सा. सं.
रू० भे०—फरड़ाटौ, फरणाटौ।

मह०—फरड़ाट।

फरड़ाट—देखो 'फरड़कौ' (मह., रू. भे)

फरड़ाटौ—देखो 'फरड़कौ' (रू. भे.)
उ०—रांणी तौ फरड़ाटौ मारनै उठा सूं वहीर व्हैगी। राजा रै सांमी ई नीं जोयौ।—फुलवाड़ी
क्रि० प्र०—मारणौ।
२. देखो 'फड़ड' (रू. भे)

फरड़ाहक, फरड़ाहट—देखो 'फड़ड' (रू. भे.)
उ०—फरड़ाहक वोलत फीफरियूं, करवा हत 'पाल' करै मरियूं।
—पा. प्र.

फरड़ी—सं० स्त्री० [देशज] बाजरे के पौधों को बाले (सिट्टे) सहित काटने का ढंग या क्रिया।
रू० भे०—फिरड़ी।

फरड़ौ—सं० पु० [देशज] १. ऊंट का पदाघात।
२. डंठल। (ढूंढाड)

फरजंद—सं० पु० [फा० फर्जन्द] १. पुत्र, लड़का, बेटा। उ०—तथा सीचंद फरजंद परतू तणौ, पाय सकट घणौ खुडद पूगौ। कसट सहियौ जिकौ हाल मालुम कियौ, हाल कहियौ अतै व्हाल हूगौ।
—मे. म.

२. संतान। उ०—जे जलाल नै बड़ा खून किया। हमारे डयोढ़ीदार पहाड्यै कूं मारिया। तद बूबना कही—हजरत, जलाल साहिब आपकी हजूर आता था सो मेरी डयोढी नजदीक आय निकळिया। इतरै पहाड्या नै गाळ अचानक दीन्ही, बेजबांनां बोली। सुणी जद वौ भी हजूर का फरजद था, फेर सिपाही था, उसकूं भी रीस आई।
—जलाल बूबना री बात

रू० भे०—फरजन, फरजन्न, फरजिंद।

फरज—सं०पु०[फा०फ़र्ज] १. कर्त्तव्य, कर्म। उ०—१. अरे तीतर रखवाळां री भांत बोल बोल नै सावचेती दरसावता जांणै आप री फरज निभावता हा।—फुलवाड़ी
उ०—२. अब के घांन चोखौ हुयौ हौ। क्यूं नहीं वौ न्यात नै जिमाय नै आप री फरज पूरी करलै।—रातवासौ
२. मुसलमानी धर्मानुसार वे अति आवश्यक धार्मिक कार्य जिनके न करने से मनुष्य दोषी और पतित माना जाता है।
ज्यूं०—नमाज पढणी।
३. ऋणभार। उ०—सेवक ईस सनेह सज, एवज भर दिय आप। है न आज किणरोइ हमैं, तो सिर फरज 'प्रताप'।
—जैतदांन बारहठ
४. केवल अनुमान के आधार पर तर्क वितर्क के प्रसंग में किसी बात का स्वरूप बनाना या स्थिर करना, कल्पना, अनुमानित बात।
ज्यूं०—फरज करौ म्हैं नहीं हुतौ।
५. एहसान। उ०—अेक दिन कीड़ी सांयड नै कह्यौ—बाई, म्हैं थारौ फरज, कद्र-उतारस्यूं, इत्ता दिन म्हैं थारै माथै चढ नै घणी सैंलां करी।—फुलवाड़ी
[अ० फ़र्द] ६. हुक्मनामा, आदेश-पत्र। उ०—नौख न जोख कर नवरोजै, जोख न भूखण घरै जवाहर। दसकत करै न मिळै दिवांणां, अरजी फरज मतालब ऊपर।—सू. प्र.
रू० भे०—फरजन, फरजन्न, फरजिंद।

फरजन, फरजन्न, फरजिंद—१. देखो 'फरजंद' (रू. भे.)
उ०—१. दोनूं फरजन्न खांडा ले राखिया छै।
—दूलची जोइयै री वारता

उ०—२. ऐसे सबूं का सिरपोस सईद आवदअली खांन सो आवधअलीखांन कैसा। दिलावरखांन का फरजन दिलावरखान जैसा।
—सू. प्र.

उ०—३. हम खिजमत कबूल, हम्म फरजन्न तुमारै। हम सिरि ऊपरि रजा, हुकम हम कियौ आरै।—गु. रू. बं.
२. देखो 'फरज' (रू. भे.)
उ०—अपांरी जात किणी री माथै फरजन नी राख्या करै।
—फुलवाड़ी

फरजि, फरजी—वि० [फा० फ़र्जी] १. माना हुआ, कल्पित।
२. झूठा, असत्य, जाली। ३. असली का उल्टा, नकली।
४. सत्ताहीन, नाम मात्र का।
५. शतरंज का एक मोहरा। उ०—पब रण चढ कट पड़े, या ले घर-पथ जै लेर। सहरै सतरंज सिपहयां, फिरै फरजि ह्वै फेर।
—रेवतसिंह भाटी

फरण–सं० स्त्री० [देशज] १. घूमने या चक्र देने की क्रिया।
२. ध्वनि विशेष।
क्रि० वि०—शीघ्र, झट।

फरणफट–क्रि० वि० [अनु०] शीघ्रता से त्वरा से, तेजी से।

फरणाट–सं० स्त्री० [अनु०] तेजगति, शीघ्रता।
क्रि० वि०—शीघ्रता से, तेजी से।

फरणाटौ—१. देखो 'फरड़कौ' (रू. भे.)
२. देखो 'फड़ड़' (रू. भे.)

फरणाहट–सं० स्त्री० [अनु०] १. ध्वनि विशेष।

फरणी—देखो 'फुरणी' (रू. भे.)
उ०—कांधी पूठ अेक सारखौ छै। गुळवाड गोहूं जव चिणां री छुवार री चरणहार छै। मयमत छै। सू चर चर फरणियां आया छै। माछुरां रा संताया छै।—रा. सा. सं.

फरणौ, फरबौ—देखो 'फिरणौ, फिरबौ' (रू. भे.)
उ०—सोहण याई फर गया, मइं सर भरिया रोइ। आव सोहागण नीदडी, वळि प्रिय देखूं सोइ।—ढो. मा.
फरणहार, हारौ (हारी), फरणियौ—वि०।
फरिओड़ौ, फरियोड़ौ, फरयोड़ौ—भू० का० कृ०।
फरीजणौ, फरीजबौ—भाव वा०।

फरती–सं० स्त्री० [देशज] १. वैश्या, रंडी।
२. व्यभिचारिणी, कुलटा स्त्री। उ०—केथ पधारौ ठाकुरां, मरदां नैण मिळाय। फरती रा लीधा फिरै, घरती रा घन खाय।
—वी. स.

फरद, फरवी—देखो 'फड़द' (रू. भे.)
उ०—१. तर महाराज रौ मुंसी फरवी उतार लीव्ही।
—महाराजा जयसिंह आंमेर रा धणी री वारता
उ०—२. महाराज जयसिंह जी कही, कांम री फरवी उतार लेवौ।
महाराजा जयसिंह आमेर रा धणी री वारता

फरफर–सं० पु० [अनु०] १. किसी हल्की वस्तु के उड़ने या फड़कने से उत्पन्न ध्वनि।
२. एक प्रकार का खाद्य पदार्थ विशेष जो गेहूं के फाड़े भिगोकर उन्हें मथकर उसके सार पदार्थ में सब्जी मिलाकर बनाया जाता है। (मेवाड़)

फरफराणौ, फरफराबौ–क्रि० अ०, स० [अनु०] १. वस्त्र, कागज आदि हल्की वस्तु का फरफर शब्द करते हुए उड़ना।
२. किसी नम या गीले खाद्य पदार्थ को कड़क बनाने या सुखाने हेतु सेंकना।
फरफराणहार, हारौ (हारी), फरफराणियौ—वि०।
फरफरायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फरफराईजणौ, फरफराईजबौ—भाव वा०/कर्म वा०।

फरफरियौ—देखो 'फरफरौ' (अल्पा., रू. भे.)

फरफरौ–सं०पु० [अनु०] (स्त्री० फरफरी) १. कोई नम या गीला खाद्य पदार्थ अग्नि पर सेक कर सूखा या कड़क बनाया हुआ।
२. नमकीन।
३. पतला, क्षीण।
उ०—अेक अेक सूं इदका रूपाळा ओठारू ज्यांनै देख्यां निजर लागै जैड़ा—कोकणिया कांनां रा, फरफरियां होठां रा, लांबी गाबड़ रा, हिरणगट्टी आंख्यां रा।—फुलवाड़ी
४. बनावटी।
ब्यु०—फरफरी बातां।
अल्पा०—फरफरियौ।

फरम–सं० स्त्री० [अं० फर्म] व्यापारिक संस्था।

फरमांण, फरमांन–सं० पु० [फा० फ़र्मान] १. आदेश हुक्म, आज्ञा।
उ०—जद स्रीमुख सूं यूं जती, फुरमावै फरमांण। सगपण री मा साब नै, जाय पूछौ जांण।—पा. प्र.
२. राजकीय आज्ञा-पत्र।
उ०—अब बुंदीस रौ बुलावौ बिचारि मऊ रौ फरमांण, लिखाइ पहली ही बुंदी भेजि हाडां रा हस (सूर्य) सता नूं बखसीस कियौ।
—वं. भा.
३. विनती, अरज।
रू० भे०—फरवांण, फुरमांण, फुरमांणि, फुरमांन, फुरम्मांण।
अल्पा०—फुरमांणौ।

फरमांबरदार, फरमांवरदार, फरमांवरदारू–वि० [फ़ा० फ़र्मांबरदार] आदेश मानने वाला, हुक्म मानने वाला।
उ०—जस वखत में सनान दांन अंग का पूजन करि सिरै दरबार का हुक्म किया। फरमांवरदारू नै आदाब, वजाय लिया।—सू.प्र.
रू० भे०—फरमावरदार

फरमाइस–स० स्त्री० [फ़ा० फ़र्माइश] १. आज्ञा, आदेश।
२. इच्छा, मांग।
रू० भे०—फरमास, फुरमायस, फुरमास।

फरमाड़णौ, फरमाड़बौ—देखो 'फरमाणौ, फरमाबौ' (रू. भे.)
फरमाड़णहार, हारौ (हारी), फरमाड़णियौ—वि०।
फरमाड़िओड़ौ, फरमाड़ियोड़ौ, फरमाड़योड़ौ—भू० का० कृ०।
फरमाड़ीजणौ, फरमाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फरमाड़ियोड़ौ—देखो 'फरमायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फरमाड़ियोड़ी)

फरमाणौ, फरमाबौ–क्रि० स० [फ़ा० फ़र्मान] १. कहना।
उ०—१. जद महाराज फरनाई नवाब जो था म्हारी पाठ राखस्यौ,

मोनूं खिदमत में राखस्यो ।

—महाराजा जयसिंह ग्रांमेर रा धणी री वारता

उ०—२. पण डावडियां तो ग्रापरी ठौड सूं चुळी ई कोनीं मूंडो उतारनें बोली—अबै आप हुकम फरमावो ज्यूं करां ।—फुलवाड़ी

२. आदेश देना, हुक्म देना ।

उ०—१. ताहरां कहियो—कुंवर दळपत जी ज्यूं राजि फरमाइसै त्यूं करिसि ।—द. वि.

उ०—२. सेठ बोल्या—साख व्हैणी आप रा हक में ठीक है । ग्रार फरमावो तो चांद-सूरज री साख मांड दूं ।—फुलवाड़ी

३. विनती करना, अरज करना ।

४. करना । उ०—हाजरियै कह्यो—हुकम, पांणी नीठगो । थोड़ी ताळ ग्रारांम फरमावो ।—फुलवाड़ी

फरमाणहार, हारो (हारी), फरमाणियो—वि० ।

फरमायोड़ो—भू० का० कृ० ।

फरमाईजणो, फरमाईजबो—कर्म वा० ।

फरमाड़णो, फरमाड़बो, फरमावणो, फरमाववो, फुरमाड़णो, फुरमाड़बो, फुरमाणो, फुरमाबो, फुरमावणो, फुरमावबो

—रू०भे० ।

फरमाबरवार—देखो 'फरमांबरदार' (रू. भे.)

फरमायोड़ो–भू०का०कृ०—१. कहा हुआ. २. आदेश दिया हुआ, हुक्म दिया हुआ. ३. विनती किया हुआ, अर्ज किया हुआ. ४. किया हुआ. (आराम)

(स्त्री० फरमायोड़ी)

फरमावणो, फरमावबो—देखो 'फरमाणो, फरमावो' (रू. भे.)

उ०—चौधरी—ग्राप रो फरमावणो तो वाजब है पण अबार म्हनै रकम री जरूरत तो है कोयनी, पछै हुसी जद देखी जासी ।

—रातवासो

फरमावणहार, हारो (हारी), फरमावणियो—वि० ।

फरमाविग्रोड़ो, फरमावियोड़ो, फरमाव्योड़ो—भू० का० कृ० ।

फरमावीजणो, फरमावीजबो—कर्म वा० ।

फरमावियोड़ो—देखो 'फरमायोड़ो' (रू. भे)

(स्त्री० फरमावियोड़ी)

फरमास—देखो 'फरमाइस' (रू. भे)

उ०—म्हारो तो देवाळो पीटीज रयो है अर थांरो फरमास ग्रागै-ई खड़ी है ।—वरसगांठ

फरमो–स०पु० [अं०फ्रेम] १. किसी वस्तु को ढालने का यंत्र या उपकरण, सांचा ।

[अं० फार्म] २. छापाखाने की मशीन पर एक ही समय एक साथ छपने वाले पृष्ठों का समूह ।

फरयाद—देखो 'फरियाद' (रू. भे.)

उ०—१. सुणौ माहरी अरज बीकांण वाळी सगत, वार मत लाव रे ! वेद वरणी । ग्राव रे ! आव थळवाट सूं ईसरी, करूं फरयाद फरयाद करणी ।—बखतावर मोतीसर

उ०—२. ग्रोर फरयाद बरस-दिन में दोय तीन वादसाह रै कांनां जाय पडै ।—नी. प्र.

फरयादी—देखो 'फरियादी' (रू. भे.)

फरर–सं० स्त्री० [ग्रनु०] १. फहरने की अवस्था, क्रिया या भाव ।

२. देखो 'फररी' (रू. भे)

उ०—भळहळत चित्रत भाल, ढळकंत रंग रंग ढाल । धज फरर नेजा धार, सझि तोग घर असवार ।—सू प्र.

फररणो, फररबो—देखो 'फरहरणो, फरहरबो' (रू. भे.)

उ०—सुज पूठि नेजा फररत सही, गिर सीस तरोवर ऊगि गही ।

—मा. वचनिका

फरराट–सं० स्त्री० [ग्रनु०] किसी वस्तु के उड़ने या फड़फड़ाने से उत्पन्न ध्वनि ।

ग्रल्पा०—फरराटो ।

फरराटो–सं० पु०—देखो 'फरराट' (ग्रल्पा., रू. भे.)

फररी–सं० स्त्री० [देशज] १. छोटी पताका, झण्डी । २. छोटी झंडी जो भाला के साथ लगी रहती है ।

रू० भे०—फउरि, फउरी, फरर, फरि, फरी ।

ग्रल्पा०—फररो ।

फररो–स० पु० [देशज] १. संकेत, इशारा ।

उ०—तरां साढीयै उपरणी रो फररो कीयां ग्रावतो विरमदे जी री नीजर आयो ।—वीरमदे सोनगरा री वात

२. देखो 'फररी' (ग्रल्पा., रू. भे.)

उ०—सवजे जरदाई लाल सिहाई वांनै छायो व्रहमंडं । फररा वैरक्कां फावी कटकां जांणक फूले वनखडं ।—गु. रू. व.

३. देखो 'फरहरो' (रू. भे.)

फरळणो, फरळबो—देखो 'फुरळणो, फुरळबो' (रू. भे.)

फरळणहार, हारो (हारी), फरळणियो—वि० ।

फरळिग्रोड़ो, फरळियोड़ो, फरल्योड़ो—भू० का० कृ० ।

फरळीजणो, फरळीजबो—कर्म वा० ।

फरलांग–सं० स्त्री० [अं०] लंबाई व दूरी का नाप विशेष, मील का ग्राठवां भाग ।

रू० भे०—फलांग ।

फरळियोड़ो—देखो 'फुरळियोड़ो' (रू. भे.)

(स्त्री० फरळियोड़ी)

फरवट–सं० पु० [देशज] १. चालाक, चतुर ।

२. वर्तमान युग से प्रभावित ।

फरवरी—सं० पु० [अं०] अंग्रेजी वर्ष का दूसरा महीना ।

फरवांण—देखो 'फरमांण' (रू. भे.)

उ०—यूं सिरोपाव, तरवार, कटारी, घोड़ा देयकर भटनेर री **फरवांण** कर दीन्हौ ।—ठाकुर जैतसी राठौड़ री वारता

फरवास—सं० पु० [देशज] एक प्रकार का वृक्ष विशेष ।

उ०—१. तिण ऊपर घरणा वडा पीपळा, बोर, बकायण, नींव, नाळेर, आंबा, आंबली, सीसूं, सरेस, खेजड, जाळ, आसापाळौ, खिजूर, गूंदी, लेसूड़ौ, केसूला, खिरणी, मौळसिरी, **फरवास**, रायसेण, महुवा, ढाक, कुभरा, कीकर, ढूळा झुकनै रह्या छै ।
—रा. स. सं.

उ०—२. ताहरां **फरवास** वढायौ, ढोल रै वास्तै ।—नैणसी

रू० भे०—फरहास, फरांस, फरास, फिरास ।

अल्पा०—फरांसौ ।

फरवौ—वि० [देशज] (स्त्री० फरवी) तेज चलने वाला ऊंट, बैल एवं घोडा । उ०—हिवै जखडै रैबारी नैं तेड़ पूछियौ, घणी फरवी, चलाक सांढ़ हुवै तिका बताय ।—जखड़ा मुखड़ा भाटी री बात

फरस—सं० पु० [अ० फ़र्श] १. कमरे, भवन आदि की पक्की तथा समतल भूमि, फर्श, गृहतल, गृहभूमि । उ०—तिण समैं रतनां रा रैवास में मकरांणा री एक महल है, जिण में इण री घणी सहल है, सौ इण री पगथाल्यां रा प्रतबिब सूं **फरस** तौ मूंगियां री छिब पावै है ।—र. हमीर

२. उक्त गृहभूमि पर बिछाया जाने वाला वस्त्र । (मेवात)

[सं० स्पर्श] ३. स्पर्श । उ०—अणगल पांणी लूगडा, धोया नदी तलाव । जीव संहार कियौ घणउ, साबू **फरस** प्रभाव ।—स. कु.

४. पत्थर या समचौरस शिला ।

५. देखो 'परसु' (रू. भे.)

उ०—१. मुदगर गुरज साबळ खड़ग, **फरस** कटारां चक्र सहि । चौकमार कुहाड़ां गोफणां, इम आयुध ग्रहियां सबहि ।
—मा. वचनिका

उ०—२. सीलंबोदर परम संत, बुद्धवंत परम सिद्धिबर । आच **फरस** ओपंत, विघन-बन हृत ऊब्बरं ।—र. ज. प्र.

६. देखो 'परसुरांम' ।

उ०—वरणै सूर कासप तणौ संकर रै गजवदन, सूर रै करण हाटक स्रवेवौ । यंद रै 'अंजन' जमदगन रै **फरस** यम, दुमल 'माहव' तणौ असौ 'देवौ' ।—पहाड़खां आढ़ौ

फरसण—देखो 'स्परसण' (रू. भे.)

उ०—विधि **फरसण** मन माहरौ रै, मोहि रह्यौ दिन रात रै । पुन्य प्रबल थी पांमियौ रै, उन्भल गिरी केरी जात रै ।
—जिनेहर्रसे सूरि

फरसणा—सं० स्त्री० [सं० स्पर्शनम्] १. पालन करना, आचरण में लाना, क्रियान्वित करना । उ०—केइ कहै साध रौ धरम और नै ग्रहस्थ रौ धरम ओर । जद स्वांमी जी बोल्या—चौथा गुण ठांणा री अनै तेरमां गुण ठांणा री, स्रद्धा तौ एक छै । अनै **फरसणा** जुदी छै । काचा पांणी में अपकाय रा असंख्याता जीव अनै नीलण रा अनता जीव, चौथा, छठा, तेरमां गुण ठांणा वाला सरब सरधै परूपै । पिण **फरसणा** में फेर ।—भि. द्र.

२. ग्राह्य पदार्थ के रूप, रंग, गंध तथा स्पर्श में परिवर्तन होने का भाव जिसके अभाव में वह पदार्थ ग्रहण नहीं किया जा सकता है ।
(जैन)

फरसणौ, फरसबौ—देखो 'परसणौ, परसबौ' (रू. भे.)

उ०—उतंग गिरिवर प्रवर फरसत, मेघ वरसत जोर । दमकती दांमिनि, बहुर भांमिनी, चमकती तिहि ठोर ।—वि. कु.

फरसणहार, हारौ (हारी), फरसणियौ—वि० ।

फरसिओड़ौ, फरसियोड़ौ, फरस्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरसीजणौ, फरसीजबौ—कर्म वा० ।

फरसतौ—देखो 'फरिस्तौ' (रू भे.)

उ०—मेरगिर के से तोलरिण फतूह के **फरसते**, सांम कांम मैं सधीर, सूरूं के सहायक, दीनवूं के दावागीर ।—र. रू.

फरसधर, फरसधरण—देखो 'परसुधर' (रू. भे.)

उ०—१. धकै **फरसधर** चक्रधर, पाळी जिण निज पैंज । सो सूरां सिर सेहरौ, नर पुंगव सुर नैंज ।—बां. दा.

उ०—२. धुर तैं सील **फरसधर** धारयौ, विसय विकार विहाई । क्षत्रिय मार अवनि निक्षत्री, वार इकोस बनाई ।—ऊ. का.

फरसपासांण—सं० पु० [सं० स्पर्श+पाषांण] पारस पत्थर । उ०—जसु तणइ प्रदक्षिणावरत्त संख, चिंतामणि रत्न, **फरसपासांण** सोना तणउ, उपरि सो कोटि वेध रस ।—व. स.

फरसबध—सं० पु० यौ० [फ़ा० फर्श+सं० बंध] वह ऊंचा और समतल स्थान जिस पर फर्श बना हुआ हो ।

फरसरांम—देखो 'परसुरांम' (रू. भे.)

फरसांधर, फरसांधरण, फरसाधर, फरसाधरण—देखो 'परसुधर'
(रू. भे.)

उ०—१. जिमि जाळंधर तकि, जुद्ध जुट्टन हर आयौ । हेहय नैं हकार, मनहु **फरसाधर** धायौ ।—लॉ. रा.

उ०—२. आरंभ रांम आरंभ गुरु, पारध ही **फरसांधरण** । गजसिंघ महण गंभीरपण, कळा तेज सेहंसकिरण ।—गु. रू. बं.

फरसि—१. देखो 'परसु' (रू. भे.)

२. देखो 'परसुरांम' ।

उ०—आयौ ग्रह 'असमाह' अटकि फौजां उजबंकी, अवधि जेम आवियौ, रांम परणै जांनकी । गांजि '**फरसि**' असपती, भांजि धांन-

ख मुदफ्फर, मखवाळा मंडळी, करै सगळा राजिदर। राजा 'अजीत' दसरत्थ ज्यौं, सुत सजीत परखे सही, वारणा लिए 'अभसाह' रा जणणी कौसल्या जिही।—रा. रू.

३. देखो 'फरसी' (रू. भे.)

४. देखो 'परसु' (रू. भे.)

उ०—फरसीसाह फरसि, खरौ खत्रिग्रां सिर खेधौ।—पी. ग्रं.

फरसियोड़ौ—देखो 'परसियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फरसियोड़ी)

फरसिरांम—देखो 'परसुरांम' (रू. भे.)
उ०—फरसिरांम आउध ग्रहियो फरसु, अधिक रेसीया खत्री लागौ ग्ररसु।—पी. ग्रं.

फरसी-स०स्त्री० [सं०परशु] १. परसु के आकार से भिन्न लोहे का बना एक ग्रोजार जो 'पाला' काटने के काम आता है। उ०—लगर बंध 'दुल्हावत' 'लाला' सुपह दात फरसी भल सार। सर हूंचरा दुसहां नवसहंसा, बड करसण भोका वड वार।
—लालसिंह राठौड़ (वड़ली) रौ गीत

२. देखो परसु' (रू. भे.)
रू० भे०—फरसि, फरि, फरी।

फरसीचुग्गौ-सं०पु० [सं०परशु+तु० चोगा, चुग्गा] एक प्रकार का शस्त्र विशेष।

फरसीभालण-सं०पु० यौ० [सं० परशु+राज० भालण] महर्षि जमदग्नि के पुत्र परसुराम का एक नाम।

फरसीधर, फरसीधरण, फरसीधारण—देखो 'परसुधर' (रू. भे.)
उ०—१. हसरा येक गजमुख लबोदर,धरणी कनक मुकट फरसीधर। पीतांबर सोभा तन वुपर, बिनायक दायेक विद्याबर।
—बगसीरांम प्रोहित री वात

उ०—२. बीर जुध ऊससै षड़ा ग्रवरी वरण, ईस ग्ररधग सहत खड़ा जोवा अरण। किना खतवंस निरवंस प्रथमीकरण, धारियौ जळाहळ क्रोध फरसीधरण।—जवांन जी ग्राढौ

उ०—३. लंबोदर फरसीधरण, मुख में कर दांणा। मुकताहार विराजमांन, सिंदूर झलाणा।—लूणकरण कवियौ

फरसीसाह-स०पु० [स०परशु+फा०शाह] परशुराम का एक नामांतर।
उ०—हुग्रौ रांम दुजराम, ब्रह्म रै मन मां वेधौ। फरसीसाह फरसि खरौ खत्रिग्रां सिर खेधौ।—पी. ग्रं.

फरसूधर—देखो 'परसुधर' (रू. भे.)
उ०—श्रीकम पुरुसोतम्म, रूप है महा मनोहर, हरि वांमन हयग्रीव, धनुसधारण फरसूधर।—ह. र.

फरसौ—१. देखो 'परसु' (मह., रू. भे.)
२. देखो 'परसुराम'।

उ०—वाह हो वाह फरसा ब्रह्म, सहसबाह नां साभियौ।—पी. ग्रं.

फरस्स—१. देखो 'परसु' (मह., रू. भे.)
उ०—आयौ केई वार फरस्स उभार। सहस्राबाहू सैन संहार।
—ह. र.

२. देखो 'परसुरांम'।

फरस्सी—देखो 'परसु' (रू. भे.)
उ०—चखां झाळ तूटै, मुखां झाळ चंडा। परस्सौ फरस्सी भ्रमावै प्रचडा।—सू. प्र.

फरस्सौ—देखो 'परसुरांम'।

फरहड़णौ, फरहड़बौ-क्रि० अ० [देशज] 'फडहड' की ध्वनि करना।
उ०—फीफरड फूट गोळा गजां फरहड़ै, जगी हौदा गजां खड़हड़ै जोम। धड़हड़ै धोम वे मुसाहब लड़ै धर, विहुं साहब हंसै हड़वड़ै बोम।—हरसहाय खत्री रौ गीत
फरहड़णहार, हारौ (हारी), फरहड़णियौ—वि०।
फरहड़िग्रोड़ौ, फरहड़ियोड़ौ, फरहड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फरहड़ीजणौ, फरहड़ीजबौ—भाव वा०।

फरहड़ियोड़ौ-भू० का० कृ०—'फड़हड़' की ध्वनि किया हुआ.
(स्त्री० फरहड़ियोड़ी)

फरहद-सं० पु० [देशज] पारिभद्र वृक्ष का नामान्तर।
रू० भे०—फहद।

फरहर—देखो 'फहर' (रू. भे.)
उ०—जळबोळ दळ जहगीर रा, फबि फौज गज धज फरहरा। घरा थाट कैजम घरहरा, खुरसांण पांण खरा।
—मांनसिंघ सगतावत रौ गीत

फरहरणौ, फरहरबौ-क्रि० अ० [देशज] १. किसी हल्की वस्तु (कागज, वस्त्रादि) का हवा में फर-फर शब्द करते हुए उडना।
उ०—घटा घोर त्रंवक घरहरिया, फीलां पर झंडा फरहरिया। फौजां तणा हबोळा फिरिया, ओळा जिम गोळा ग्रोसरिया।
—लालसिंह राठौड़ (वड़ली) रौ गीत

२. पवन का चलना, हवा का चलना। उ०—फागुन फरहरै वात, प्रभात नौ सीत ग्रपार। नाह सुं फाग रमै वहु, राग सुहागणि नारि।—ध. व. ग्रं.

३. छलांग भरना, कूदना। उ०—फरहरता कपि फाळ, ग्रस दै तै ग्रसवारियां। 'भारांणी' भुरजाळ, भुज रौ भलौ भवाड़ियौ।
—वां. दा.

फरहरणहार, हारौ (हारी), फरहरणियौ—वि०।
फरहराड़णौ, फरहराड़बौ, फरहराणौ, फरहराबौ, फरहरावणौ, फरहराववौ—प्रे० रू०।
फरहरिग्रोड़ौ, फरहरियोड़ौ, फरहर्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फरहरीजणौ, फरहरीजबौ—भाव वा०।

फररणो, फररबो, फहरणो, फहरबो—रू० भे० ।

फरहराड़णो, फरहराड़बो—देखो 'फरहराणो, फरहराबो' (रू. भे.)

फरहराड़णहार, हारो (हारी), फरहराड़णियो—वि० ।

फरहराड़िग्रोड़ो, फरहराड़ियोड़ो, फरहराड़्योड़ो—भू० का० कृ० ।

फरहराड़ीजणो, फरहराड़ीजबो—कर्म वा० ।

फरहराड़ियोड़ो—देखो 'फरहरायोड़ो' (रू. भे.)

(स्त्री० फरहाडियोडी)

फरहराणो, फरहराबो–क्रि० स० [देशज] ['फरहरणो' क्रि० का प्रे० रू०]

१. किसी हल्की वस्तु (कागज, वस्त्रादि) को हवा में फर-फर शब्द करते हुए उड़ाना ।

२. किसी को छलांग भरने या कूदने में प्रवत्त करना ।

फरहराणहार, हारो (हारी), फरहराणियो—वि० ।

फरहरायोड़ो—भू० का० कृ० ।

फरहराईजणो, फरहराईजबो—कर्म वा० ।

फरहराड़णो, फरहराड़बो, फरहरावणो, फरहरावबो, फहराड़णो, फहराड़बो, फहराणो, फहराबो, फहरावणो, फहरावबो—रू०भे० ।

फरहरायोड़ो–भू०का०कृ०—१. किसी को छलाग भरने में या कूदने में प्रवत्त किया हुआ. २. किसी हल्की वस्तु (कागज, वस्त्रादि) को हवा में उड़ाया हुआ.

(स्त्री० फरहरायोड़ी)

फरहरावणो, फरहरावबो– देखो 'फरहराणो, फरहराबो' (रू. भे.)

फरहरावणहार, हारो (हारी), फरहरावणियो—वि० ।

फरहराविग्रोड़ो, फरहरावियोड़ो, फरहराव्योड़ो—भू० का० कृ० ।

फरहरावीजणो, फरहरावीजबो—कर्म वा० ।

फरहरावियोड़ो—देखो 'फरहरायोड़ो' (रू.भे.)

(स्त्री० फरहरावियोडी)

फरहरियोड़ो–भू० का० कृ०—१. कोई हल्का पदार्थ (कागज वस्त्रादि) हवा में फरफर शब्द करते हुए उड़ा हुग्रा. २. छलांग भरा हुग्रा, कूदा हुआ.

(स्त्री० फरहरियोड़ी)

फरहरो–वि० [देशज] (स्त्री० फरहरी) १. जो मोटा या घना न हो, सुडोल, सुगठित । उ०—रूड़ा, रंगीला, मीठा, मधुरा, फूटरा, फरहरा, पाका पड़वाड़ा, सुंहाला, सुगंध, सुकोमल, सदाकर ।—सभा.

२. सुबुक, छरहरा ।

रू० भे०—फररो, फरह्रो ।

फरहास—देखो 'फरवास' (रू. भे.)

उ०—है फरहास खुदाय हमारै, थांन रांम जिम 'धूहड़' थारै । सुणै वचन धिक वीर सिंघाळा, जांणै जेठ सालुळी ज्वाळा ।—गो. रू.

फरह्रो—देखो 'फरहरो' (रू. भे.)

उ०—जद लोक बोल्या—मनुस्य तौ फरहा फूटरा है । पिण थारी आंख में पीलियो है ।—भि. द्र.

(स्त्री० फरही)

फरांस—देखो 'फरवास' (रू. भे.)

उ०—विणजारा रै लोभी लाज्यै पींपळ केरो फूल, फळ तौ लाज्यै फरांस रो विणजारा रै । विणजारी ग्रे लोभण,जुग में होय सो मांग, ग्रणहोयो तौ मत माग विणजारी ग्रे ।—लो. गी.

फरांसीसी–वि० [ग्रं० फ्रेंच] फ्रांस देश सम्बन्धी, फ्रांस देश का ।

स० पु०—१. फ्रास देश का निवासी ।

सं० स्त्री०—२. फ्रांस देश की भाषा ।

रू० भे०—फरासीस, फरासीसी, फ्रांसीसी ।

फरांसो—देखो 'फरवास' (अल्पा , रू. भे.)

फरा–स० स्त्री० [देशज] गुफा, कदरा ।

फराक–सं० स्त्री० [ग्रं० फ्राक] लड़कियों के पहनने का वस्त्र-विशेष जो कमर से नीचे घघरी के समान घेरदार होता है, फ्रॉक ।

रू० भे०—फिराक ।

फराकत– देखो 'फरागत' (रू. भे.)

उ०—१. परभात हुवौ तरै साहिब ग्रमल करनै फराकत तळाव पधारिया, सु साहिब ग्राप घोड़ै असवार हुवौ छै ।—नैणसी

उ०—२. सु राव रा दिन ऊभा सु राव मोहणदास फराकतां जाय नै दांतण कर नै सेवा कर नै गांव रै फळसा माहै पैठा नै बलोच ग्राया ।
—नैणसी

फराकी–सं० स्त्री० [फा० फराखी] १. विशालता, विस्तृतता ।

उ०—सहल करदा सांड्या तंगियार फराकी ।—केसोदास गाडण

२. घोड़े की जीन के ऊपर बांधा जाने वाला बंधन विशेष ।

उ०—१. जुद्ध में वीर समाथ ज्यूं, रेंवत घतरोळो । तंग फराकी घूमची, सज वीरवर चोळो । फब कमधज 'कांधलफरे', दहुं तरफां दोळो । भाई-भाई माखतौ, ग्रसलो कंध ग्रोळो ।
—करनळ सुयस प्रकास

उ०—२. तंग फराकी घ्रूमची, तुटता जिम तूटा । कर ग्रावूं सावळ कीयो, संजवायक छूटा । भडां भायां बंधवां भलां, हालो अग तूटा । जगदंबा करनी जचे, रवदां पर रूठा ।
—करनळ सुयस प्रकास

३. छलांग । उ०—खांच ग्रर धूळकोट री बुरज थौ, हाथ दसेक ऊंचो, उण ऊपर चाढ़ी । फराकी मार ऊपर चढ़ियो । चढ़नै हांकळ कीवी—जे सरदारां हूं राजूखां खोखर छूं, घोड़ी म्हारी लियां जाऊं छूं ।—सूरे खींवै कांधळोत री बात

फरागत–सं० स्त्री० [ग्र० फरागत] १. मल-त्याग, पाखाना फिरना ।

२. किसी कार्य की समाप्ति पर मिलने वाला आराम या निश्चितता ।

३. मुक्ति, छुटकारा ।

रू० भे०—फराकत ।

फराड़ो–सं० पु० [देशज] १. वर्षा के बाद होने वाली ग्राकाश की निर्मल अवस्था ।

२. वर्षा ऋतु में एक वर्षा से दूसरी वर्षा के बीच का समय।

फराणौ, फराबौ—देखो 'फिराणौ, फिराबौ' (रू. भे.)

फराणहार, हारौ (हारी), **फराणियौ**—वि०।

फरायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फराईजणौ, फराईजबौ—कर्म वा०।

फरामोस-वि० [फा० फ़रामोश] भूला हुआ, विस्मृत।

फरायोड़ौ—देखो 'फिरायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरायोड़ी)

फरार-वि० [फा० फ़रार] जो भग गया हो, भागा हुआ।

रू० भे०—फिरार।

फरारी-वि० [फा० फ़रार+रा० प्र० ई] भागने वाला।

सं० स्त्री०—भागने की क्रिया या भाव।

रू० भे०—फिरारी।

फराळ—देखो 'फळाहार' (रू. भे.)

फरास-सं० पु० [अ० फ़र्राश] १. वह नौकर जिसका कार्य तबू गाड़ना, फरस बिछाना, पखा करना और सफाई करना होता है।

उ०—१. रूपै री डांडी जरी सूं मढ़ी, टुकडी री झालरी। सू वणी थकी खवास पासेवांणां रै हाथ छै, फरास वडां फरासीपंखां सूं वायेरो घात रह्या छै।—रा. सा. सं.

उ०—२. पेसखानां वाळी वात परीछइ, आगा लगइ करण आरास। दळ वादळ तांखिया दुवाहे, फारक ईसर तणा फरास।

—महादेव पारवती री वेलि

२. देखो 'फरवास' (रू. भे.)

उ०—सुज पीरां दरगाह सवायौ, येक फरास निजर तद आयौ।... काट फरास ढोल करीजै, सोळे कोसां सबद सुणीजै।—गो. रू.

फरासखांनौ-सं० पु० यौ० [अ० फर्राश+फा० खान:] १. तम्बू, कनात, फर्नीचर, बिछाने एव सफाई आदि के उपकरण तथा सामान रखने का स्थान।

२. देशी राज्यों में एक राज्य-विभाग जिसके अन्तर्गत उपर्युक्त सामान की देख-रेख होती थी।

३. उक्त विभाग का कार्य। उ०—तेजो वाघोड़, लखमण आगै थकौ बुगचौ राखतौ, नारायण पड़िहार, रूपो गुजराती, सीहलौ गुजराती फरासखांनौ करता।—द. दा.

फ़रासत-सं० स्त्री० [अ० फिरासत] १. बुद्धि की तीव्रता, बुद्धिमता, अक्लमदी। उ०—राव चद्रसेन विखै मांहे सीवाणा रै भाखर रहतौ तद भींवला देवत कायलाणै रहता। जोधपुर तुरक रहता, इतरौ घणौ विगाड़ करता। स० १६६३ पुरवा सूधो स० १७०२ सूधो दससालो मीया फरासत कराय नै खोजी मेलीयौ।

—राव चंद्रसेन री वात

फरासी-वि० [अ० फ़र्राशी] फर्श या फर्राश के कार्यो से सम्बन्ध रखने वाला।

यौ०—फरासीपंखौ।

सं० स्त्री०—फर्राश का काम या पद।

फरासीपंखौ-सं०पु०यौ० [अ० फर्राश+रा०प्र० ई+पंखौ] काष्ट निर्मित एवं कपड़े की खोली पहनाया हुआ पंखा जिससे हवा की जाती है।

वि० वि०—विद्युत-चालित पंखों के आविष्कार से पूर्व धनाढ्य व्यक्ति लकड़ी का एक पंखा बनवाया करते थे जिस पर कपड़े की खोली चढ़ी हुई तथा काफी बड़ी झलरी लगी होती थी। इस पखे को कमरे या प्रशाल की छत में लटका कर इसके एक लम्बी रस्सी लगा दी जाती थी जिसको नौकर या फर्राश खीचकर हवा करता था। अब भी ऐसे पंखे विद्युत-चालित पंखों के अभाव में प्रयुक्त किए जाते हैं।

उ०—रूपै री डांडी जरी सूं मंढ़ी टुकड़ी री झालरी। सू वणी थकी खवास पासेवांणां रै हाथ छै, फरास वडां फरासीपंखा सूं वायेरो घात रह्या छै।—रा. सा. सं.

फरासीस, फरासीसी—देखो 'फरांसीसी' (रू. भे.)

फरि—१. देखो 'फररी' (रू. भे.)

२. देखो 'फरसी' (रू. भे.)

उ०—करी सीख घरको किलम, दई नवाव विचारि। हय पाटंबर तार हिम, फरि तुप्पक तरवारि।—ला. रा.

३. देखो 'परसु' (रू. भे.)

फरियाद-स० स्त्री० [फा० फर्याद] १. पीडित या दुखी प्राणी द्वारा परित्राण अथवा न्याय के लिए की जाने वाली पुकार।

उ०—थें म्हारै भाईजी री हित्या करी हौ म्हे तो पै'ला राजा जी नै फरियाद करांला।—फुलवाड़ी

२. दूसरों के द्वारा सताया जाने या कष्ट पाने पर प्रमुख शासक या राज्याधिकारी के समक्ष की जाने वाली प्रार्थना। उ०—अभंग भड़ां 'अजमाल' रां, 'अमरै' 'नाहर' आद। 'मुहकम' दिल्ली मारियौ, साह सुणी फरियाद।—रा. रू.

रू० भे०—फरयाद, फिराद, फिरिद, फिरियाद, फिरीयादि, फ्रियाद।

फरियादी, फरियादू-वि० [फा० फर्यादी] १. फरियाद सम्बन्धी।

२. फरियाद के रूप में होने वाला।

३. फरियाद करने वाला। उ०—१. कोई फरियादी व मागण वाळौ आयौ नहीं।—नी. प्र.

उ०—२. करता कूक कराळ, आया फरियादू असुर। सुणजे 'दला' सिघाळ, वीर फरास वढ़ावियौ।—गो. रू.

रू० भे०—फरयादी, फिरियादी।

फरियोड़ौ—देखो 'फिरयोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरियोड़ी)

फरिस्तौ-सं० पु० [फ़ा० फिरिश्त:] १. ईश्वर की आज्ञानुसार कार्य करने वाला, ईश्वर का कोई दूत। (मुसलमान)

उ०—मुसलमांन पङूतर देवता—जनाजौ दफणायां पछै मुनकिर अर नकीर नांव रा दो फरिस्ता आवै।—फुलवाड़ी

२. देव-दूत ।

रू० भे०—परेसतौ, फ़रसतौ, फरेसतौ, फरेस्तौ, फ़रेस्तौ, फ़िरसतौ, फिरिस्तौ ।

फरी—१. देखो 'फ़र्री' (रू. भे.)

उ०—दिल्ली नगरी रै साज रौ आज कांई कैणौ । घर-घर फ़रियां अर वन्नरमाळावां बांधीजै है ।—वरसगांठ

२. देखो 'परसु' (रू. भे.)

उ०—जड़लग फरी खडखड़इ जोड़ । पटहोड़ां वाजिय पूरि पौड़ ।
—रा. ज. सी.

३. देखो 'फरसी' (रू. भे.)

फरीक-सं० पु० [अ० फ़रीक़] १. वादी और प्रतिवादी ।

२. किसी प्रकार का झगड़ा या विवाद करने वाले पक्षों या व्यक्तियों में से हर एक पक्ष का व्यक्ति ।

फरीकैन-सं० पु० [अ० फ़रीक़ का ब० व०] १. मुद्दई और मुद्दायलेह, वादी और प्रतिवादी ।

२. परस्पर झगड़ने वाले दोनों पक्ष ।

फरीद-वि० [अ० फरीद] अनुपम, अनोखा, अद्भुत, बेजोड़ ।

उ०—आउचउद्वाजे फरीद जंगा लीला हरि, ढीली जि सेस ते नांम पीर जंपइ हमीर हरि ।—व स.

फरुसरांम—देखो 'परसुरांम' (रू. भे.)

उ०—हेला तउ महेस्वर तणी, स्रिस्टि व्रह्मा तणी, प्रग्या व्रिहस्पति तणी, प्रतिग्या फरुसरांम तणी, मरयादा समुद्र तणी ।—व. स.

फरूकड़ौ-सं० पु० [अनु०] १. फड़कन । उ०—'लाखौ' 'अंधौ' घी अंधी अंधी 'लखा' नी लोय । आंख तणै फरूकड़ै,क्या जांणूं क्या होय ।
—अज्ञात

२. इशारा, संकेत । उ०—एकण रै आंख फरूकड़ै जी, हाज़र हुवै दस-बीस ।—जयवांणी

फरूकणौ, फरूकबौ–क्रि० अ० [अनु०] १. उपस्थित होना, आना ।

उ०—गांव में स्यापो छायोड़ो, पांनड़ो ई नहीं हिलै, चिड़ी रो जायो ई नही फरूकै, कुत्ता ई जांणै पताळ में पैठग्या ।—रातवासो

२. देखो 'फड़कणौ, फड़कबौ' (रू. भे.)

उ०—१. आज फरूकइ अंखियां,नाभि,भुजा,अहरांह । सही ज घोड़ा सज्जणां, साम्हा किया घरांह ।—ढो. मा.

उ०—२. क़िरको राखो ठाकरां, हिरण किसो घी खाय । पवन फरूकै उड़ चलै, तुरियां आगळ जाय ।—अज्ञात

उ०—३. नयणां हसइ उर ऊधसइ, वांम फरूकइ अंग । स्वांमी करसिइ तु हुसइ, माधव केर संग ।—मा. कां. प्र.

उ०—४. ऐ जला जी मारू,रात्यां घण री आंखड़ली ज फरूकी हो, मिरगा नैणी रा जलाल ।—लो. गी.

उ०—५. कोडीधज सवलाल रै, धजा फरूकै धांम । जिणरै घर जादू 'जसा', नव खंड राखण नांम ।—मयारांम दरजी री वात

फरूकणहार हारौ (हारी), फरूकणियौ—वि० ।

फरूकिओड़ौ, फरूकियोड़ौ, फरूक्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरूकीजणौ, फरूकीजबौ—भाव वा० ।

फरूखणौ, फरूखबौ, फुरकणौ, फुरकबौ—रू० भे० ।

फरूकाड़णौ फरूकाड़बौ—देखो 'फड़काणौ, फड़कावौ' (रू. भे.)

फरूकाड़णहार, हारौ (हारी), फरूकाड़णियौ—वि० ।

फरूकाड़िओड़ौ, फरूकाड़ियोड़ौ, फरूकाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरूकाड़ीजणौ, फरूकाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फरूकाड़ियोड़ौ—देखो 'फड़कायोड़ौ (रू. भे.)

(स्त्री० फरूकाड़ियोड़ी)

फरूकाणौ, फरूकाबौ—देखो 'फड़काणौ, फड़कावौ (रू. भे.)

फरूकाणहार, हारौ (हारी), फरूकाणियौ—वि० ।

फरूकायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरूकाईजणौ, फरूकाईजबौ—कर्म वा० ।

फरूकायोड़ौ—देखो 'फड़कायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरूकायोड़ी)

फरूकावणौ, फरूकावबौ—देखो 'फड़काणौ, फड़काबौ' (रू. भे.)

फरूकावणहार, हारौ (हारी), फरूकावणियौ—वि० ।

फरूकाविओड़ौ, फरूकावियोड़ौ, फरूकाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरूकावीजणौ, फरूकावीजबौ—कर्म वा० ।

फरूकावियोड़ौ—देखो 'फड़कायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरूकावियोड़ी)

फरूकियोड़ौ–भू० का० कृ०—१. उपस्थित हुवा हुआ, आया हुआ.

२. देखो 'फड़कियोड़ौ (रू. भे.)

(स्त्री० फरूकियोड़ी)

फरूखणौ, फरूखबौ—१. देखो 'फड़कणौ, फड़कबौ' (रू. भे.)

२. देखो 'फरूकणौ, फरूकबौ' (रू. भे.)

फरूखणहार, हारौ (हारी), फरूखणियौ—वि० ।

फरूखिओड़ौ, फरूखियोड़ौ, फरूख्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरूखीजणौ, फरूखीजबौ—भाव वा० ।

फरूखियोड़ौ—१. देखो 'फड़कियोड़ौ' (रू. भे.)

२. देखो 'फरूकियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरूखियोड़ी)

फरेब–सं०पु०[फा०फ़रेब] १. छल, कपट । उ०—म्हनै तौ औ खुदा अर भगवांन फगत जाळ अर फ़रेब लागै ।—फुलवाड़ी

२. चालाकी, धूर्तता । उ०—लोग तौ कमाई वास्तै नीं नीं ह्वै जैड़ा कळाप करै—झूठ, फरेब, चोरी, धाड़ो लूटाखोसी ।—फुलवाड़ी

फरेबियौ—देखो 'फरेबी' (अल्पा., रू. भे.)

फरेबी–वि० [फा० फ़रेबी] कपटी, धूर्त ।

अल्पा०—फ़रेबियौ ।

फरेसतौ, फरेस्तौ, फरैस्तौ—देखो 'फरिस्तौ' (रू. भे.)

उ०—अहमद, महमूद औ दोय नांम पैकंबर रा फ़रेस्ता पढ़ै । महमद

ओ नांम पैगंबर रौ जमी ऊपर रा लोक पढ़ै ।—बां. दा. ख्या.

फरोई—देखो 'फरोही' (रू. भे.)

फरोकड़ो—देखो 'फिरोकड़ो' (रू. भे.)

फरोकत, फरोख, फरोखत—सं० स्त्री० [फा० फ़रोख़्त] बेचने की क्रिया, विक्री, विक्रय ।

फरोदस्त, फरोदस्ती—सं० पु० [फा०] १ एक वस्त्र विशेष । उ०—गोमेद लूगड़, अदांरा, करमदाण कुंतरांइणी गजकरणी पइठांणी सलहिती बारबती **फरोदस्ती** चूडाभाति सकलात पोतु ।—व. स.

२ कान्हड़ा, पूरवी व गौरी के मेल से वना एक संकर राग । (संगीत)

३ चौदह मात्राओं का एक ताल जिसमें ५ आघात के बाद २ खाली लगते हैं । (संगीत)

फरोळ—सं० पु० [देशज] उत्पात, उपद्रव । उ०—हमैं करणोतां रा गांव भांगिया, देस में **फरोळ** पड़ियौ ।

—सुंदरदास वींकुपुरी भाटी री वारता

फरोळणौ, फरोळबौ—देखो 'फुरळणौ, फुरळबौ' (रू.भे.)

उ०—१ इतरै सुग्रर वळै फौज सूं भिळियौ सो सारी फौज **फरोळतौ** रूंदळतौ फिरै छै । —डाढाळा सूर री बात

उ०—२ गुलाबां मीरजां निबाबां गाहटै, गळौबळ घातियां हेत गाढ़ै । **फरोळै** पांखड़ी आंत उर फीफरा, काळजा कंज-लत भमर काढ़ै ।

—तेजसिंघ सेखावत रौ गीत

फरोळणहार, हारौ (हारी), **फरोळणियौ**—वि० ।

फरोळिओड़ौ, फरोळियोड़ौ, फरोल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फरोळीजणौ, फरोळीजबौ—कर्म वा० ।

फरोळियोड़ौ—देखो 'फुरळियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फरोळियोड़ी)

फरोही—सं० स्त्री० [देशज] मारवाड़ राज्य में पशु-पालकों से लिया जाने वाला एक प्रकार का कर विशेष । (नैणसी)

रू०भे०—फरोई ।

फरौ—सं० पु० [देशज] नगर या ग्राम के बाहर का समीपस्थ स्थान ?

उ०—**फरा** रौ लोग मुजरौ कीधौ । निजर पलकां रै इसारै कुरब दीधौ ।—पनां वीरमदे री वात

फलंग—देखो 'फलांग' (रू. भे.)

उ०—सटा न मावै बाथ मैं **फलंग** भटा गरकाज । पेख छटा सूकै पटा, सिंधुर घटा सताब ।—बां. दा.

फलंगणौ, फलंगबौ—देखो 'फलांगणौ, फलांगबौ' (रू. भे.)

फलंगणहार, हारौ (हारी), **फलंगणियौ**—वि० ।

फलंगिओड़ौ, फलंगियोड़ौ, फलंग्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फलंगीजणौ, फलंगीजबौ—भाव वा० ।

फलंगियोड़ौ—देखो 'फलांगियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फलंगियोड़ी)

फळ—सं० पु० [सं० फलम्] १ वृक्षों, पौधों आदि में किसी विशिष्ट ऋतु में फूल लगने के बाद आने वाला बीज या पोषक तत्त्व ।

उ०—अदभूत रोसनी हमरानी सुरखांनी सहतूत । ऐसे दरखतूं के ऊपर रिसीले **फळू** का रसपांन कर ।—सू. प्र.

यौ०—फळफूल, फळकेसर, फळकोस, फळदांन, फळदार, फळभूमि, फळमौम ।

२ प्रयत्न या क्रिया का परिणाम, नतीजा ।

ज्यूं०—परीक्षाफळ ।

उ०—सोळै वरसा री पूजा रौ भगवांन श्री कांईं **फळ** दियौ आपरौ ई रूप देखनै उण रा प्रांण नीसरण लागा ।—फुलवाड़ी

३ धर्म या परलोक की दृष्टि से कर्मों का परिणाम जो सुख और दुख के रूप में मिलता है ।

उ०—भगवत करता नै करतव भुगतावै, पिछला पापां रा पांमर **फळ** पावै । भावी भूलोड़ा भूंको क्यूं भाया, पोचा करमां रा पोचा **फळ** पाया । —ऊ. का.

४ शुभ कर्मों के परिणाम जो संख्या में चार माने जाते हैं ।

ज्यूं०—धरम, अरथ, कांम, मोक्ष ।

उ०—खड़िया ऊपर खेत, ना कछु तामें नीपजै । हरि सूं जोड़ै हेत, चारूं **फळ** दे चकरिया । —मोहतराज साह

५ किसी प्रकार का लाभ या प्राप्ति ।

उ०—वरसि अचळ गुण अंग ससी संवति, तवियौ जस करि स्त्री भरतार । करि स्रवणै दिन-रात कंठ करि, पांमै स्त्री **फळ** भगति अपार । —वेलि

६ किए हुए कर्मों का प्रतिफल, वदला, प्रतिकार ।

७ न्याय-शास्त्र के अनुसार वह अर्थ जो प्रवृत्ति और दोष से उत्पन्न होता है ।

८ गणित की किसी क्रिया का परिणाम ।

ज्यूं०—क्षेत्रफळ, योगफळ, गुणनफळ, भागफळ ।

९ फलित ज्योतिष में ग्रह नक्षत्र की स्थिति एवं योगायोग के परिणाम रूप मे होने वाला सुख या दुख ।

ज्यूं०—गिरै दसा रौ **फळ** ।

१० गुण, प्रभाव ।

ज्यूं०—इण दवा रै लैण रौ कांइ **फळ** ।

११ प्रयोजन ।

१२ भाले, छुरी आदि का वह पैना या नुकीला भाग जिसके वल प्रहार किया जाता है ।

उ०—१ सेलां रा **फळ** सूरां रै मोरै भांजि भांजि रहिआ छै ।

—रा. सा. सं.

उ०—२ सूरजमाल दुभाल, नेज गज ढाल निहारै, **फळ** सावळ फोरियौ, विड़ंग ओरियौ वधारै । —रा. रू.

उ०—३ करण निवेधी वे घड़ा, सेघी सांम छळांह । अस तौरे सांम्हा

क्रिया, फोरे सेल फळांह। —रा. रू.

१३ स्त्रियों द्वारा गौर पूजन हेतु सुपारी के आकार के बनाए गए आटे के फूल।

१४ जायफल। (डि. को.)

१५ नारियल। (अ. मा.)

१६ ढूल।

१७ हल की फाल।

१८ चार की संख्या।* (डि. को.)

फळक-सं० पु० [सं० फलकं] १ ढाल।
[अ० फ़लक] २. आकाश, आसमान।

फलकी-सं० स्त्री०—देखो 'फुलकी' (अल्पा., रू. भे.) (मेवात, ढूंढ़ार)

फलकू-सं० स्त्री० [देशज] बालूरेत। (जैसलमेर)

फळकेसर-सं० पु० यौ० [सं० फलकेशरः] नारियल का वृक्ष।

फळकोस-सं० पु० यौ० [सं० फलं+कोषः] १ पुरुष की इन्द्रिय, लिंग। २ अंडकोश।

फलको-सं० पु०—१ फफोला।
२ देखो 'फुलको' (रू. भे.)
उ०—पोय पोय फलका जेट वणाई, पोय पोय फलका जेट बणाई तो, जीमो क्यूं ना जी गोरी रा भरतार। —लो. गीं.

फलगर देखो 'फूलपगर' (रू. भे.)

फळगट, फळगटी-सं० स्त्री० [सं० फलं+घट्ट] गवार नामक पौधे की फलियों का भूसा।

फळगु—देखो 'फल्गु' (रू.भे.)

फळग्राही-सं० पु० यौ० [सं० फलग्राहिन्] वृक्ष। (अ. मा., नां. मा., ह. नां. मा.)

फळचर-सं० पु० यौ० [सं० फलचर] वानर, बन्दर। (ह. नां. मा.)

फळणो, फळबो-क्रि० अ० [सं० फलम्] १ वृक्षों, पौधों, लताओं आदि का फलयुक्त होना।
उ०—१ वनसपति फूली फळी, नांना रंग धरंति। तिम तूं यौवन जांणीजे, खिण अेक मांहि खिरंति। —मा. कां. प्र.
उ०—२ लूआं थे क्यूं उणमणी, दीठां वादळियां-ह। थांरा बाळ्या पांघरे, फळसी पांघरियां-ह। —लू
२ गृहस्थ का संतान आदि से युक्त होना।
३ स्त्री का संतान उत्पन्न करना, प्रसव करना।
४ इच्छा या कामना पूर्ण होना, मनोरथ सफल होना।
उ०—ढोला, जाइ वळि आविज्यउ, आसा सहि फळियां-ह। सांवण केरी बीज ज्यूं, झबूकइ मिळियां-ह। —ढो. मा.
५ किसी कार्य, पदार्थ या बात का शुभ परिणाम होना, लाभप्रद या उपयोगी सिद्ध होना।
ज्यूं०—औ मकांन आप रै चोखौ फळियौ।
६ विस्तार होना, वृद्धि होना।
उ०—कैवण लागा-सेठां, आप लखपति हो जको घणा आछा; नित ऊगते सूरज आपरै घरै लिछमी जी दिन दूणा अर रात चौगणा फळै; म्हे तो आ इज चावां। —फुलवाड़ी
७ एक संख्या का दूसरी संख्या से गुणा होना।
मुहा०—जवांन या बोली फळणी—कही बात सत्य घटित होना।
फळणहार, हारो (हारी), फळणियो—वि०।
फळिओड़ो, फळियोड़ो, फल्योड़ो—भू० का० कृ०।
फळीजणो, फळीजबो—भाव वा०।

फळतरीढाल-सं० स्त्री० यौ० [सं० फलकं] एक प्रकार की ढाल।

फळद-वि० [सं० फलद] फल देने वाला, फलदायक।
सं० पु०—वृक्ष। (नां. मा., ह. नां. मा.)

फळदांन-सं० पु० यौ० [सं० फलदान] १ फलों का दान। २ सगाई (मगनी) के अवसर पर वर को वधु-पक्ष की ओर से श्रीफल (नारियल) देने की क्रिया या प्रथा।

फळदाइक, फलदाइक—देखो 'फळदायक' (रू. भे.)
उ०—प्रथम रंग मरे गणनायक, प्रसभलांछण, फलदायक, सकलमोदिक, मोदिकवलभ जयति विजयति गणनायक। —व. स.

फळदात-सं० पु० [सं० फलदातृ] वृक्ष। (अ. मा.)

फळदायक-वि० [सं० फलदायक] फल देने वाला।
उ०—इतरी सुणि राजा त्यां नूं दीन जांण सो मनवांछित फळदायक मणि प्रसन्न-चित्त होय दीन्हीं। —सिंघासण बत्तीसी
रू० भे०—फळदाइक।

फळदार-सं० पु० यौ० [सं० फलं+फा० दार] १ वह वृक्ष जिसके फल लगते हों। २ फलयुक्त वृक्ष।

फळद्र-सं० पु० [सं० फलद] वृक्ष। (डि. को.)

फळपित, फळपिता-सं० पु० यौ० [सं० फलपितृ] पुष्प, फूल। (अ. मा., नां. मा., ह. नां. मा.)

फळपुहप, फळपुहप्प, फळपुहुप-सं० पु० [सं० फल+पुष्प] वह वृक्ष जिसके पुष्प और फल दोनों लगते हैं।

फळप्रद-सं०पु०यौ० [सं० फल+प्रद] १ फल प्रदान करने वाला, फल देने वाला। २ लाभदायक।

फळफूल-सं० पु० यौ० [सं० फलम्+पुष्पम्] १ फल और फूल।
२ भेंट के रूप में दिया जाने वाला पदार्थ।

फळभूम, फळभूमि, फळभोम-सं० स्त्री० यौ० [सं०फल+भूमि] वह स्थान जहां कर्मों के फल भोगने पड़ते हैं, पृथ्वी, स्वर्ग, नर्क।

फळराज-वि०यौ० [सं० फलं+राजन्] फलों में श्रेष्ठ।
सं० पु०—१ तरबूज। २ खरबूजा। ३ आम।

फळसंसकार, फळसंस्कार-सं०पु०यौ० [सं० फल+संस्कारः] आकाश के किसी ग्रह के केन्द्र का समीकरण या मंद-फल निरूपण। (ज्योतिष)

फळसाउगाड़, फळसाउघाड़—सं०पु०यौ० [राज० फळसौ + सं० उद्घाटनं] एक विशाल भोज जिसमे निकटवर्ती समूचे गावो को भोजन के लिए आमन्त्रित किए जाते हैं तथा प्रत्येक व्यक्ति बिना रोक-टोक के भोजन मे सम्मिलित हो सकता है।

रू० भे०—फिळाउगाड़, फिळाउघाड़, फीळाउगाड़, फीळाउघाड़।

फळसूंडिया—सं० स्त्री० [देशज] राठौड़ वंश की एक उपशाखा।

फळसौ—सं० पु० [देशज] भवन, ग्राम तथा देश या प्रान्त में प्रवेश करने का मुख्य द्वार।

उ०—१ आथूण री वरियां बीजौ साथ तौ घरां नूं खड़ियौ। ऊदौ भाद्राजण नूं खड़ियौ। आधी राति आगै, आधी राति पाछै जाह पहुतौ। ताहरां उघाड़ि **फळसौ** मांहि लियौ।

—ऊदै उगमणावत री वात

उ०—२ कोहर चार कोट मांहे सीगीबंद। पांणी मीठौ। वडौ कोट हुवौ। सारी सिध रै **फळसै**। सारां रै ऊपर माड रौ गढ़ हुवौ। —नैणसी

२ खेत, वाड़ी या वाड़े के अंहाते के द्वार पर कांटे व घास-फूस का बनाया हुआ फाटक।

वि० वि०—कांटों का बना एक प्रकार का चौकोर फाटक जिसके बीच मे दोनों ओर मजबूत लकड़ियां लगाकर उसे मूंज, रस्सी या 'सणिये' के बंध से मजबूत कर दिया जाता है। बाहर की ओर लगी लकड़ी जो कुछ लम्बी होती है, को फाटक बन्द करते समय द्वार पर लगे एक त्रिशुलाकार लट्ठे में फंसा दी जाती है जिससे आसानी से धक्का देकर कोई जानवर आदि न खोल सके।

उ०—बांमणी **फळसौ** खोलनै मांय आई। —फुलवाड़ी

रू० भे०—फळौ, फिळसौ, फिळौ।

अल्पा०—फळियौ, फिळियौ।

फळस्थापन—सं० पु० [सं० फलस्थापन] सीमन्तोन्नयन-संस्कार, फलीकरण।

फलहकार—सं० पु० [सं० फलकं + कार:] १ मुद्गर, ढाल आदि बनाने वाला व्यक्ति।

उ०—तिहां नगर मध्ये किसा लोक वसइं। मणइराय रांणा, मंडलीक, महाधर, मउड़धर, सांमंत, सेलुत, वर वीर, राउत, पायक, डिंडिमायन, भयामत, पटायत, **फलहकार**, छुरीकार, नलिकार······प्रभ्रिति राजवरग। —सभा.

२ फलों को तैयार करके रखने वाला व्यक्ति, फल पेश करने वाला व्यक्ति।

रू० भे०—फलहिकार, फलिहकार।

फलहलि—देखो 'फलहुलि' (रू. भे.)

उ०—बावन पलनां थाल कचोलां अणावु, साते जिगते **फलहलि** प्रीसावु। —व. स.

फलहिकार—देखो 'फलहकार' (रू. भे.)

उ०—नागुड मुखमांगलिय अंगमरद कूटिकार चाटुकार श्रंकार **फलहिकार** मल्लयोद्ध सज्जापाल वालवंध। —व. स.

फलहुलि—सं० पु० [सं० फलं + राज० हुलि] अनेक प्रकार के फल।

उ०—१ नार्थसिघेलां केलानी पातली कातलीं, बीजुरांनी चडुंडी, आबानी कातली, प्रीसि नारि पातली, खडबूजा गोटा, नीकोल्यां राईण, इसी **फलहुलि** प्रीसाइ। —व. स.

उ०—२ तदनतरु ऊपेलइ मालि, प्रसन्नइ कालि, सुवरण्णमइ स्थालि, मोटइ भमालि, आवी ऊजमालि, परीसइं **फलहुलि**।

—व. स.

रू० भे०—फलहलि।

फलां—वि० [अ०] कोई अनिश्चित स्थान, वस्तु या व्यक्ति, अमुक।

उ०—इण अरज कीवी जे **फलां** जायगां सूं उंठा रा मिनखां नूं काळ भूख सूं दबाइया छै। —नी. प्र.

फलांग—सं० स्त्री० [देशज] १ स्थान विशेष से कूद कर या उछल कर दूसरे स्थान तक पहुंचने की क्रिया।

२ देखो 'फरलांग' (रू.भे.)

रू० भे०—फलंग।

फलांगणौ, फलांगबौ—क्रि० अ०/स० [देशज] १ किसी स्थान पर खड़े खड़े कूदना या उछलना।

२ किसी रुकावट को छलांग मारकर लांघना।

फलांगणहार, हारौ (हारी), फलांगणियौ—वि०।

फलांगिओड़ौ, फलांगियोड़ौ, फलांग्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फलांगीजणौ, फलांगीजबौ—भाव/कर्म वा०।

फलांगियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ किसी स्थान पर खड़े खड़े कूदा हुआ या उछला हुआ। २ किसी रुकावट को छलांग मार कर लांघा हुआ. (स्त्री० फलांगियोड़ी)

फलांणसिह—देखो 'फलांणौ'।

उ०—तरै उमराव बोलिया—हां म्हाराज, फुरमायौ छौ; तरै ही **फलांणसिह** जी, ढीकणसिह जी गया था।

—जगदेव पंवार री वात

फलांणियौ—देखो 'फलांणौ' (अल्पा., रू. भे.)

फलांणौ—वि० [अ० फलां + रा० प्र० णौ] (स्त्री० फलांणी) किसी ऐसे अज्ञात अथवा कल्पित व्यक्ति, पदार्थ या वात आदि के लिए प्रयोग किया जाने वाला शब्द जिसका नाम न लिया गया हो अथवा न लिया जाने को हो।

उ०—१ तद आप कही तौ **फलांणै** दिन सगळा आय भेळा हुइ जावौ। —ठाकुर जैतसी री वारता

उ०—२ दूसरै-नै पूछियौ—उवै कह्यौ—मनै तौ खवर न छै, **फलांणै** बोलायौ हुसी। —राजा भोज अर खापरै चोर री वात

उ०—३ **फलांणै** दिन **फलांणौ** हम्माल आपरै हुकम सूं **फलांणी** जायगां पत्थर मारग में न्हांखियौ थौ। —नी. प्र.

उ०—४ **फलांणी** भैंस दूहौ । —कुंवरसी सांखला री वारता

उ०—५ हुकम करै—जे **फलांणी** ठोड़ भुंजाई तयारी करावज्यो, म्हें उठै आवां छां । —राव रिणमल री वात

रू० भे०—**फुलांणौ** ।

अल्पा०—**फलांणियौ** ।

फला—सं० स्त्री०—प्रतिहार वंश की एक शाखा ।

फळाणौ, फळाबौ—क्रि० स० [सं० फलम्] संख्या विशेष को संख्या विशेष से गुणा करना, गुणनफल निकालना ।

फळाणहार, हारौ (हारी), फळाणियौ—वि० ।

फळायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फळाईजणौ, फळाईजबौ—कर्म वा० ।

फळावणौ, फळावबौ—रू० भे० ।

फळादेस—सं० पु० [सं० फलादेश] वे बातें जो ग्रहों के फल या प्रभाव के रूप में बताई जाती है। (ज्योतिष)

फळाध्यक्ष—सं०पु० [सं० फलाध्यक्ष] सब प्रकार के फलों को देने वाला, ईश्वर ।

फळापेक्षा—सं० स्त्री० [सं० फलं+अपेक्षा] फल प्राप्ति की कामना ।

फळाफळ—सं० पु० [सं० फलाफल] शुभाशुभ या इष्ट-अनिष्ट किसी कार्य या कर्म के फल ।

फळायफळाय—सं० स्त्री० [देशज] बच्चे की जोर से रोने की ध्वनि ।

फळायोड़ौ—भू० का० कृ०—गुणा किया हुआ.

(स्त्री० फळायोड़ी)

फळार—देखो 'फळाहार' (रू. भे.)

फळारी—देखो 'फळाहारी' (रू. भे.)

फळारथी—वि० [सं० फलार्थिन्] फल की कामना करने वाला ।

फलालेम,फलालैन—सं० स्त्री० [अं० फलानेल] एक प्रकार का ऊनी वस्त्र विशेष ।

फळावट—सं० स्त्री० [देशज] गुणा करने की क्रिया, गुणनफल निकालने की विधि ।

फळावणौ, फळावबौ—देखो 'फळाणौ, फळाबौ' (रू. भे.)

फळावणहार, हारौ (हारी), फळावणियौ—वि० ।

फळाविओड़ौ, फळावियोड़ौ, फळाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फळावीजणौ, फळावीजबौ—कर्म वा० ।

फळावियोड़ौ—देखो 'फळायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फळावियोड़ी)

फळासव—सं० पु० [सं० फलासव] दाख, खजूर आदि फलों से बनाया हुआ आसव विशेष ।

फळाहार—सं० पु० [सं० फलाहार] १ फलों का आहार ।

२ व्रत या उपवास के दिन खाए जाने वाले पदार्थ ।

वि० वि०—कुछ विशिष्ट व्यंजन जैसे—सिंगोड़ा, आलू, शक्करकंद, 'मलीचा', 'भुरंट' आदि का हलवा, सागूदाना की खीर, जिसे हिन्दू लोगउपवास के दिन खाते हैं ।

रू० भे०—फराळ, फळार ।

फळाहारी—वि० [सं० फलं+अहारी] १ फलाहार सम्बन्धी ।

२ केवल फल का आहार करके जीवन व्यतीत करने वाला, फलाहार करने वाला ।

रू० भे०—फळारी ।

फलिकार—देखो 'फलहकार' (रू. भे.)

उ०—देसालिक, मसूरिक अंककार **फलिहकार** मल्लयोद्ध सस्यापाल वालवंध अंगरक्ष । —व. स.

फळित—वि० [सं० फलित] फला हुआ । उ०—भर फूल **फळित** अढ़ार भार । जुथ करत भ्रमर मणहण गुंजार ।— सू. प्र.

सं० पु०—वृक्ष, पेड़ ।

फळितज्योतिस—सं० पु० [सं० फलित+ज्योतिष] ज्योतिष की दो शाखाओं में से एक जिसके अन्तर्गत ग्रहों व नक्षत्रों का प्राणियों पर होने वाले शुभाशुभ प्रभाव का अध्ययन एवं विवेचन किया जाता है

फळियळ—वि० [सं० फलं+रा० प्र० इयल] फलयुक्त, फल सहित ।

उ०—कळियळ कूंपळ सारसी, नाजक अळियळ नार । ऊभी **फळियळ** अंवि तळ सळियळ अंग सवार ।—पनां वीरमदे री वात

फळियोड़ौ—भू०का०कृ०—१ वृक्ष, पौधा, लता आदि फल-युक्त हुवा हुआ. २ संतानयुक्त गृहस्थ. ३ परिपूरित कामना या इच्छा, सफल हुवा हुआ. (मनोरथ) ४ किसी कार्य, पदार्थ या बात का लाभप्रद या उपयोगी हुवा हुआ. (परिणाम) ५ विस्तार हुवा हुआ, वृद्धि को प्राप्त हुवा हुआ. ६ एक संख्या दूसरी संख्या से गुणित या गुणा हुवा हुआ.

(स्त्री० फळियोड़ी)

फळियौ—देखो 'फळसौ' (अल्पा., रू. भे.)

फळी—वि० [सं० फलित्] १ फलों से युक्त, फलों वाला ।

२ वह पेड़ जिसके फल लगते हों ।

सं० पु०—१ वृक्ष, पेड़ । (अ. मा., नां. मा., ह. नां. मा.)

सं० स्त्री० [फल+रा० प्र० ई] २ पेड़ पौधों पर लगने वाला वह लंबोतरे आकार का फल जिसके अन्दर केवल बीज मात्र होते हैं ।

३ उक्त प्रकार के पौधों में लगने वाला छोटा फल जिसका शाक बनाया जाता है ।

ज्यूं०—गवारफळी ।

उ०—फोग केर, काचर **फळी**, पापड़ गेघर पात । वड़ियां मेलै वांणियां, सांगरियां सोगात । —वां. दा.

[सं० फलित्] ४ ओढ़ने के मोटे सूती कपड़े, गमच्छे. 'खेसले' आदि या ऊनी कंबल के छोर के खुले वाहर निकले हुए भाग के धागों को वटकर बनाया जाने वाला मोटा धागा जिससे वस्त्र के छोर पर झल्लरी गूंथी जाती है ।

उ०—तीडा रै माथै मोडळ लाग्योड़ौ कसूंवल गोळ पोत्यों

बांधियौ। पोत्या रै माथै फळियां गूंथ्योड़ा बुगला री पांख रै उनमांन धोळा गमछा रौ आंटौ दियौ।—फुलवाड़ी
५ वंश, शाखा।
मह०—फळीस, फळू।

फळीजणौ, फळीजबौ—क्रि० अ० [सं० फलम्] १ बकरी या मादा ऊंट का गर्भ धारण करना।
२ फलयुक्त होना। उ०—जगत इण आणंद आच्छादित, वधै फळीजै नीम ज्यूं। स्रमजीवी मतवाळा वर्णां, माण मरदमी भीम ज्यूं। —दसदेव
फळीजणहार, हारौ (हारी), फळीजणियौ—वि०।
फळीजिम्रोड़ौ, फळीजियोड़ौ, फळीज्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फळीजीजणौ, फळीजीजबौ—भाव वा०।

फळीजियोड़ी—स्त्री०—भू० का० कृ०—गर्भ धारण की हुई बकरी या मादा ऊंट.

फळीजियोड़ौ—भू० का० कृ०—फलों से युक्त हुवा हुआ.
(स्त्री० फळीजियोड़ी)

फळीभूत—वि० [सं० फलीभूत] सफल।

फळीस—सं० पु० [सं० फल+रा० प्र० ईस] १ मोठ या मूंग की फली का भूसा। (शेखावाटी)
२ भुरट नामक घास के दाने जो खाये जाते हैं। (जैसलमेर)
३ देखो 'फळी' (मह., रू. भे.)

फळूंसी—सं० स्त्री० [सं० फल+राज० ऊंसी] मोठ और गवार की फलियों का छिलका। (शेखावाटी)

फळू—देखो 'फळी' (मह., रू. भे.)

फलूरियौ—वि० [देशज] व्यर्थ का प्रलाप करने वाला।

फलोड़ौ—सं० पु० [व० व० फलोड़ा] जलने से होने वाला फफोला। (शेखावाटी)

फळोदय—सं०पु० [सं० फलोदय] १ फलित ज्योतिष में ग्रह नक्षत्र के योगायोग से शुभाशुभ प्राप्ति का समय।
२ स्वर्ग। ३ फल का प्रत्यक्ष होना।

फळौ—देखो 'फळसौ' (रू. भे.)

फल्गु—वि० [सं०] १ निरर्थक, बेकार।
२ निस्सार। ३ क्षुद्र। ४ साधारण।
सं० स्त्री०—वसन्तकाल।
रू० भे०—फलगु।

फल्गुन—सं० पु० [सं० फल्गुनः] १ इन्द्र का नाम।
२ देखो 'फागण' (रू. भे.)

फल्गुनी—देखो 'फाल्गुनी' (रू. भे.)

फवज, फवज्ज—देखो 'फौज' (रू. भे.)
उ०—१ चतुरंग फवजां चींघ धज्जां पुठि गज्जां बंध ए।—गु. रू. बं.
उ०—२ सावज सीह मरण संमांही, मूंकै भ्रिग फवज्जां मांही।
—गु. रू. बं.

फवारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)
उ०—नीर फवारां निरखलौ, लाभै 'जसवंत' लाभ। जितरौ नीचौ ह्वै जमी, उतरौ ऊंचौ आभ। —ऊ. का.

फवौ—देखो 'फुंवौ' (रू.भे.)
उ०—सगळां नै घर री भट्ठी रौ काढ़ियोड़ौ गुलाव रौ अंतर मिळतौ। सेठ जी आपरै हाथ सूं फवा वणाय-वणाय कर सगळां नै देता। —मुरळीधर व्यास

फव्वज—देखो 'फौज' (रू. भे.)

फव्वारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फसड्डी—देखो 'फिसड्डी' (रू. भे.)

फसणौ, फसबौ—देखो 'फंसणौ, फंसबौ' (रू.भे.)
उ०—१ हंसियौ जग आसक हुए, वसियौ खोवण वीत। रसियौ नागी रांड सूं फसियौ होण फजीत। —बां. दा.
उ०—२ पछै तीतर कह्यौ—आप रौ हुकम व्है तौ म्है अबै जावूं म्हनै घरै उडीकता व्हैला। रमण नै वारै निकळियौ हौ के इण जाळ में फसग्यौ।—फुलवाड़ी
उ०—३ पीतांवर कटि काछनी काछै, रतन जटित सिर मुकुट कस्यौ। मीरां के प्रभु गिरधर नागर, निरख वदन म्हारौ मनड़ौ फस्यौ। —मीरां
फसणहार, हारौ (हारी), फसणियौ—वि०।
फसाड़णौ, फसाड़बौ, फसाणौ, फसाबौ,
फसावणौ, फसावबौ—प्रे० रू०।
फसिओड़ौ, फसियोड़ौ, फस्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फसीजणौ, फसीजबौ—भाव वा०।

फसत, फसद—देखो 'फस्त' (रू.भे.)

फसल—सं०स्त्री० [अ० फस्ल] १ ऋतु, मौसम। २ काल, समय।
३ कृषि-उपज, कृषि पैदावार।
४ देखो 'फिसल' (रू.भे.)

फसळणौ, फसळबौ—देखो 'फिसळणौ, फिसळबौ' (रू.भे.)
उ०—नगारौ रोड़ चढ़ जाय ऊभा नसल, फतै गी वार सरदार पड़िया फसळ। आद हू न आया पूठ देतां असल, माजनौ गमायौ भलौ आठौ मसल।—महादांन महडू
फसळणहार, हारौ (हारी), फसळणियौ—वि०।
फसळिओड़ौ, फसळियोड़ौ, फसल्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फसळीजणौ, फसळीजबौ—भाव वा०।

फसळियोड़ौ—देखो 'फिसळियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फसळियोड़ी)

फसली—वि० [अ० फ़स्ली] १ फसल का, फसल सम्बन्धी।
२ किसी विशिष्ट फसल या ऋतु में होने वाला।
ज्यूं०—फसलीबुखार।

फसळीबुखार—सं० पु० [अ० फ़स्ली+फ़ा० बुखार] वर्षा ऋतु में होने वाला ज्वर, विषम ज्वर। (मलेरिया बुखार)

फसाड़णौ, फसाड़बौ—देखो 'फंसाणौ, फंसाबौ' (रू.भे.)
फसाड़णहार, हारौ (हारी), **फसाड़णियौ**—वि०।
फसाड़िग्रोड़ौ, फसाड़ियोड़ौ, फसाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फसाड़ीजणौ, फसाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फसाड़ियोड़ौ—देखो 'फंसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० फसाड़ियोड़ी)

फसाणौ, फसाबौ—देखो 'फंसाणौ, फंसाबौ' (रू.भे.)
फसाणहार, हारौ (हारी), **फसाणियौ**—वि०।
फसायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फसाईजणौ, फसाईजबौ—कर्म वा०।

फसाद—देखो 'फिसाद' (रू.भे.)
उ०—१ फाटक रखवाळी करै, फाटक हरै **फसाद**। सूंम कहै सुख सूं सुवां, फाटक तणौ प्रसाद। —बां. दा.
उ०—२ मुल्ला काजी मंगहु मयाद, फतवा लीजै मेटन **फसाद**। —ऊ. का.
उ०—३ जिण बंगला मैं साठ हजार पठाणां री **फसाद** उठियौ तिकण नूं मार लीधौ। —प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

फसादी—देखो 'फिसादी' (रू. भे.)

फसायोड़ौ—देखो 'फंसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० फसायोड़ी)

फसावणौ, फसावबौ—देखो 'फंसाणौ, फंसाबौ' (रू.भे.)
फसावणहार, हारौ (हारी), **फसावणियौ**—वि०।
फसाविग्रोड़ौ, फसावियोड़ौ, फसाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फसावीजणौ, फसावीजबौ—कर्म वा०।

फसावियोड़ौ—देखो 'फंसायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० फसावियोड़ी)

फसियोड़ौ—देखो 'फंसियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फसियोड़ी)

फस्त, फस्द—सं० स्त्री० [अ० फस्द] नस को छेदकर दूषित रक्त निकालने की क्रिया।
रू०भे०—फसत, फसद।

फहम—सं० स्त्री० [अ० फ़हम] १ ज्ञान, समझ। २ बुद्धि, अक्ल। ३ ध्यान, ख्याल।
रू० भे०—फैं'म।

फहर—सं० स्त्री० [देशज] फहरने की अवस्था क्रिया या भाव।
रू०भे०—फरहर।

फहरणौ, फहरबौ—देखो 'फरहरणौ, फरहरबौ' (रू.भे.)
उ०—अरध धरन मत्थै उरध, **फहर** फतै फरमांन। तै दिल्ली थप्पै 'पतै', निज हत्थै नीसांन। —जैतदांन बारहठ
फहरणहार, हारौ (हारी), **फहरणियौ**—वि०।
फहराड़णौ, फहराड़बौ, फहराणौ, फहराबौ, फहरावणौ, फहरावबौ—प्रे० रू०।
फहरिग्रोड़ौ, फहरियोड़ौ, फहर्योड़ौ—भू०का०कृ०।
फहरीजणौ, फहरीजबौ—भाव वा०।

फहराड़णौ, फहराड़बौ—देखो 'फरहराणौ, फरहराबौ' (रू.भे.)
फहराड़णहार, हारौ (हारी), **फहराड़णियौ**—वि०।
फहराड़िग्रोड़ौ, फहराड़ियोड़ौ, फहराड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फहराड़ीजणौ, फहराड़ीजबौ—कर्म वा०।

फहराड़ियोड़ौ—देखो 'फरहरायोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० फहराड़ियोड़ी)

फहराणौ, फहराबौ—देखो 'फरहराणौ, फरहराबौ' (रू. भे.)
उ०—पुहपां मिसि एक एक मिसि पातां, खाडिया द्रब मांडिया ऊखेळि, दीपक चंपक लाखै दीधा, कोड़ि धजा **फहरांणी** केळि। —वेलि
फहराणहार, हारौ (हारी), **फहराणियौ**—वि०।
फहरायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फहराईजणौ, फहराईजबौ—कर्म वा०।

फहरायोड़ौ—देखो 'फरहरायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फहरायोड़ी)

फहरावणौ, फहरावबौ—देखो 'फरहराणौ, फरहराबौ' (रू. भे.)
उ०—पुलिण रविसुता **फहरावजै** पीतपट, आवजै रासथळ ब्रजनाथ आय।—बां. दा.
फहरावणहार, हारौ (हारी), **फहरावणियौ**—वि०।
फहराविग्रोड़ौ, फहरावियोड़ौ, फहराव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फहरावीजणौ, फहरावीजबौ—कर्म वा०।

फहरावियोड़ौ—देखो 'फरहरायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फहरावियोड़ी)

फहरियोड़ौ—देखो 'फरहरियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फहरियोड़ी)

फहरिस्त—देखो 'फैरिस्त' (रू. भे.)

फांक—सं० स्त्री० [सं० फलकं] १ लंबाई के बल फल आदि का कटा हुआ टुकड़ा या खंड।

ज्यूं०—काकड़ी री **फांक**, खरबूजा री **फांक**।

उ०—खेह गरद्दी मेह लौं अब्बीर उड़ाया, फूल कळेजै फिफ्फरे फबि **फांक** फुलाया।—वं. भा.

२ प्राय: मुसम्मी के अन्दर एवं खरबूजा, ककड़ी, मतीरा आदि के ऊपर बने हुए प्राकृतिक रेखा-चिन्ह जहां पर से काट कर खंड बनाए जाते हैं।

३ रेखा, लाइन।

रू० भे०—फंक, फांकी।

अल्पा०—फांकड़ी, फाकड़ी।

मह०—फांकड़।

फांकड़—देखो 'फांक' (मह., रू. भे.)

फांकड़ी—देखो 'फांक' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—जड़ीयउ कुविसन जीवज्यु तणीए ताकड़ी, फैलै लोकां माहि कुजसनी **फांकड़ी**।—ध. व. ग्रं.

फांकणौ, फांकबौ—क्रि० स० [देशज] १ झूठ बोलना, मिथ्या बोलना।

उ०— सूरां हुंत की सुर सवळ, फोगट ऊभा'न **फांक**, पिव मौ आगळ पीवतौ, झोळी मंडै झांक।—रेवतसिंह भाटी

२ देखो 'फाकणौ, फाकबौ' (रू. भे.)

फांकणहार, हारौ (हारी), फांकणियौ—वि०।

फांकिग्रोड़ौ, फांकियोड़ौ, फांक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फांकीजणौ, फांकीजबौ—कर्म वा०।

फांकियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ झूठ बोला हुआ, मिथ्या बोला हुआ.

२ देखो 'फाकियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फांकियोड़ी)

फांकी—१ देखो 'फांक' (रू. भे.)

२ देखो 'फाकी' (रू. भे.)

फांगि—सं० स्त्री० [देशज] व्यंजन विशेष।

उ०—फूवेडी नइं फणगरी, फूंगारी नइं **फांगि**। फूणा फूली फूमती फोफल फूली सांगि।—मा. कां. प्र.

फांट—सं० स्त्री० [देशज] १ कई भागों में बांटने या पृथक करने की क्रिया।

२ क्रम से बांटा हुआ या पृथक किया हुआ भाग, अंश।

३ वह बकरी जिसके बच्चा पैदा नहीं हुआ हो, युवा बकरी।

४ उबलते हुए १६ गुना जल में औषधियों का महीन चूर्ण डालकर तैयार किया जाने वाला रस या पेय पदार्थ।

वि० वि०—औषधियों के महीन चूर्ण को किसी पात्र में गरम उबलते हुए १६ गुना जल में डाल कर ढक्कन लगा देवे। आधा या एक घंटे के बाद छांन लेने से **फांट** तैयार हो जाता है।

५ गठरी ?

उ०—तठा उपरांति करि नै राजांन सिलांमति आटा मैदा री **फांटां** आंणीजै छै।—रा. सा. सं.

रू० भे०—फंट।

फांटणौ, फांटबौ—क्रि० स० [देशज] किसी पदार्थ को कई भागों में बांटना, हिस्सा करना, विभाग करना।

उ०—आपां तीन सारीखा ठिकांणां **फांट** लेस्यां। तीनूं घालि डोरी तीनि पांत्यां वांट लेस्यां।—शि. वं.

२ औषधियों का रस या सार तत्व निकालने के लिए उन्हें उबलते हुए १६ गुना पानी में डालना।

३ पृथक करना, अलग करना।

फांटणहार, हारौ (हारी), फांटणियौ—वि०।

फांटिग्रोड़ौ, फांटियोड़ौ, फांट्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फांटीजणौ, फांटीजबौ—कर्म वा०

फंटणौ, फंटबौ—रू०भे०।

फांटियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ किसी पदार्थ का कई भागों में हिस्सा किया हुआ. २ औषधियो के चूर्ण को १६ गुने उबलते हुए जल में डालकर रस बनाया हुआ. ३ पृथक किया हुआ, अलग किया हुआ.

(स्त्री० फांटियोड़ी)

फांटियौ—सं० पु० [देशज] प्राचीन काल में रेखांकन हेतु निर्मित समानान्तर धागे से चिपकी हुई काष्ट या कागज की दस्तरी जिस पर कागज रख कर नाखून से रेखांकन किया जाता था।

वि० वि०—प्राचीन काल में ग्रन्थादि लिखते समय सीधी रेखाएं खींचने के लिए स्केल आदि के बजाय एक कागज या काष्ट की बनी दस्तरी प्रयोग में ली जाती थी जिस पर समानान्तर दूरी पर किसी औषधि विशेष से धागे चिपके रहते थे। लेखक लिखते समय लिखे जाने वाले कागज को इस दस्तरी पर दवाव के साथ रखते और नाखून की सहायता से रेखांकन करते जिससे धागों का चिन्ह समानान्तर रेखाओं के रूप में अंकित हो जाता था।

फांटौ—सं० पु० [देशज] १ भूत-प्रेत आदि द्वारा प्रभावित होने की अवस्था। २ भिन्नता, भेद। ३ विरोध, शत्रुता।

क्रि० प्र०—पड़णौ, पाड़णौ।

४ कचरा, फूस, भूसी।

उ०—छात माथै ठकरांणी सा ऊंचौ मूंडौ करियां नायण कना सूं माथौ गूंथावता हा के अचांणचक वांरी डावी आंख में की चीज पड़गी। ठकरांणी सा आंख मसळता कह्यौ आंख में कीं फूस-**फांटौ** पड़ग्यौ।—फुलवाड़ी

५ शाखा।

फांडर—सं० स्त्री० [देशज] १ वह गाय या मादा ऊंट जिसके गर्भ नहीं रहता हो।

२ केवल एक ही वार वच्चा देने वाली गाय।

रू० भे०—फंडर।

फांडौ–सं० पु० [देशज] (ब० व० फांडा) १ बड़ा सुराख या छेद ।
२ चोरी करने हेतु लगाई गई सेंध ।
३ हाथी की पीठ पर रखे जाने वाले 'तैहरू' की कसावट या कसने की क्रिया ।

फांणस–सं० पु० [सं० पनस] कटहल ।

फांद–सं० स्त्री० [देशज] १ आगे की ओर निकला हुआ पेट या तोंद ।
२ फांदने की क्रिया, ढंग या भाव ।

फांदणौ, फांदबौ–क्रि० स० [देशज] १ कूदकर या उछलकर पार करना, लांघना ।
उ०—फलंग जांण **फांवता**, मलंग में काळा मोडी ।
—महादांन महडू
२ बंधन में डालना, जाल में फंसाना ।
उ०—मकड़ी जिण भांत अेक माखी नै आपरा जाळ में **फांदै**, उणी भांत वा राजा नै आपरा कपट-जाळ में **फांद** लियौ हौ ।
—फुलवाड़ी
३ नर पशु का मादा पशु से संभोग करना ।
फांदणहार, हारौ (हारी), **फांदणियौ**—वि० ।
फांदिओड़ौ, फांदियोड़ौ, फांदयोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फांदीजणौ, फांदीजबौ—कर्म वा० ।

फांदळ, फांवाळ, फांदाळौ–वि० [देशज] (स्त्री० फांदळी, फांदाळी) बड़े पेट अथवा तोंद वाला ।
उ०—कनलै चढ़ चांदेय हाक करी । फिर **फांवळ** 'पाबुअ' पीट फरी ।—पा. प्र.

फांदियोड़ौ–भू० का० कृ०—१ उछल कर पार किया हुआ, लांघा हुआ. २ बंधन में डाला हुआ. ३ नर पशु का मादा पशु के साथ संभोग किया हुआ.
(स्त्री० फांदियोड़ी)

फांदौ–सं० पु०—१ कोल्हू में 'मांणकथंब' और 'पाट' के जोड़ के स्थान को दृढ़ एवं मजबूत बनाने हेतु लगाया जाने वाला फंदा ।
२ देखो 'फंदौ' (रू. भे.)

फांनूस–सं० पु० [फा० फानूस] १ एक प्रकार की बड़ी कंदील ।
उ०—आंखियां तरहसी, तिण समै कंवर पिण दरसण नूं आयौ, जिण रै मुख नूर वरसै है । आगै आ तिकापिण **फांनूस** रा दीपक ज्यूं दरसै है ।—र. हमीर
२ छतों में लटकाए जाने वाला शीशे का वह झाड़ जिसमें लगी गिलासों में मोम बत्तियां जलाई जाती है ।
रू० भे०—फौंनस ।

फांफ–सं० स्त्री० [देशज] १ छोटे पक्षियों का शिकार करने का छोटा डंडा । उ०—**फांफ** रा फटकारा सूं पांन हिलै ज्यूं वौ थर थर धूजण लागौ ।—फुलवाड़ी
२ प्रयत्न, कोशिश ।
मुहा०—फांफां मारणी—अपना स्वार्थ हल करने निमित्त इधर-उधर पूरा जोर लगाना ।
३ ठंडी तीक्ष्ण वायु ।
उ०—मोटी-मोटी छांटा रौ मेह ओसरियौ । आंधी री **फांफां** चालण लागी ।—फुलवाड़ी
क्रि० प्र०—बाजणी, चालणी ।

फांबड़ी—देखो 'पांमड़ी' (रू. भे.)
उ०—खवां नै रळती झीणी **फांबड़ी**, जमड़ि रै मन में उम्मेद चालता करहा रै कांमड़ी ।—लो. गी.

फांस–सं० स्त्री० [सं० पाश] १ पशु-पक्षी को फंसाने का रस्सी का बना फंदा विशेष ।
२ जाल, बन्धन ।
३ सूखी लकड़ी, घास–फूस तथा बांस आदि का अति सुक्ष्म किन्तु कड़ा और नुकीला अंश जो चमड़ी में धस या चुभ जाता है ।
क्रि० प्र०—गडणी, चुभणी, धसणी, निकळणी, निकाळणी, भागणी ।
मुहा०—१ फांस चुभणी—जी में अखरने वाली घटना या बात का होना, ऐसी बात का होना जिससे जी में दुख हो ।
२ फांस निकळणी—संकट दूर होना, अखरने वाले विपक्षी का दूर होना, ऐसे व्यक्ति या पदार्थ का न रहना जिससे दुख या खटका हो ।
३ फांस निकाळणी—किसी बाधा या बाधक को दूर करना ।
रू० भे०—फास ।

फांसड़ी—देखो 'फांसी' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—तलफ तलफ के बहु दिन बीते, पड़ी विरह की **फांसड़ियां** । अब तौ बेगि दया कर साहिब, मैं हूं तेरी दासड़ियां ।—मीरां

फांसणौ, फांसबौ–क्रि० स० [सं० पाश, प्रा० फास] १ फंदे में या जाल में किसी पशु–पक्षी को फंसाना ।
२ छल या कपट से किसी को अपने अधिकार में करना, धोखे में डालना ।
उ०—म्हनैभाईड़ा थूं कांईं **फांसै**, म्हैं तौ थारौ ऊपरलौ उस्ताद हूं ।
—फुलवाड़ी
३ चिकनी–चुपड़ी बातें कर किसी को फुसलाकर अपन वश में करना, अपने अनुकूल करना ।
मुहा०—१ मुरगी फांसणी—अपने स्वार्थ–सिद्धी हेतु किसी को चिकनी–चुपड़ी बातों से वश में करना ।
२ चिड़ी फांसणी—देखो 'मुरगी फांसणी' ।
फांसणहार, हारौ (हारी), **फांसणियौ**—वि० ।
फांसियोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फांसीजणौ, फांसीजबौ—कर्म वा० ।

फांसियोड़ौ–भू० का० कृ०—१ फंदे या जाल में किसी पशु-पक्षी को फंसाया हुआ. २ धोखे में डाला हुआ. ३ चिकनी-चुपड़ी बातें कर किसी को फुसला कर अपने वश में किया हुआ, अपने अनुकूल किया हुआ.
(स्त्री० फांसियोड़ी)

फांसियौ—वि० [सं० पाश + रा० प्र० इयौ] फांसने वाला, बंधन में डालने वाला।

उ०—चोर चरड नइ चाडिया, गांठीछोडा गाहाट। वाटपाडा नइ **फांसिया**, नाडीत्रोडा नाट।—मा. कां. प्र.

फांसी—सं० स्त्री० [सं० पाश, प्रा० फासी] १ फंसाने का फंदा, पाश। २ रस्सी का बना एक प्रकार का फंदा जिसमें गला फंस जाने से प्राणी के प्राण छूटकर मर जाता है।

३ बन्धन। उ०—अरज करौं अबला कर जोरैं, स्यांम तुम्हारी दासी। मीरां के प्रभु गिरधरनागर, काटौ जम की **फांसी**।—मीरां

४ अपराधियों को प्राण दंड देने का वह रस्सी का फंदा जो दो ऊंचे खंभों पर लटकाया जाता है और जिसे गले में डालकर अपराधियों को प्राण दंड दिया जाता है।

उ०—जद वौ **फांसी** माथै चढ़ण सारू जावण लागौ तौ रांणी वेटी वेटी करती उणरै लारै दौड़ी।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—दैणी, मिळणी, लगणी, लागणी, लैणी, होणी।

मुहा०—१ फांसी दैणी—फांसी द्वारा प्राण दण्ड देना, गले में फंदा डाल कर मार डालना।

२ फासी मिळणी—पाश द्वारा प्राण दण्ड पाना।

५ अपराधी को पाश द्वारा मार देने का दण्ड विशेष, मौत की सजा जो गले में फंदा डालकर दी जाती है।

रू० भे०—पासी।

अल्पा०—फांसड़ी।

फा—सं० पु०—१ विष। २ तीर्थ। ३ बैठक, गुदा। (एका०)

फाइन—सं० पु० [अं०] जुर्माना, अर्थदण्ड।

फाइल—सं० स्त्री० [अं०] १ पत्रादि नत्थी किए जाने वाला तार। २ मिसिल।

३ सामयिक पत्रों आदि के पूरे अंकों का समूह।

फाऊ, फाऊ— वि० [देशज] मुफ्त।

सं० स्त्री०—पोरवाल जाति की एक प्रथा जिसके अनुसार वर से केवल ८४ रुपये लेकर ही कन्यादान कर देते हैं। (मा. म.)

फाकउ—देखो 'फाकौ' (रू. भे.)

उ०—मारू थाकइ देसड़इ, एक न भाजइ रिड्ड। ऊचाळउ क अवरसणउ, कइ **फाकउ** कइ तिड्ड।—ढो. मा.

फाकड़ौ—देखो 'फांक' (अल्पा., रू. भे.)

फाकणौ, फाकबौ—क्रि० स० [देशज] १ चूर्ण, दाना, बुकनी के रूप की कोई वस्तु को मुंह में डालना।

२ कण या चूर्ण को दूर से मुंह में फेंक कर खाना।

उ०—पाली में खंतिविजय संवेगी रुघनाथ जी सूं चरचा कीधी। किण ही साधां नैं मिस्री रै भेळौ लूण वहिरायौ। खंतिविजय तौ कहै **फाक** जाणौ।—भि. द्र.

फाकणहार, हारौ (हारी), फाकणियौ—वि०।

फाकिओड़ौ, फाकियोड़ौ, फाक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फाकीजणौ, फाकीजबौ—कर्म वा०।

फंकणौ, फंकबौ, फांकणौ, फांकबौ—रू० भे०।

फाकता—देखो 'फाखता' (रू. भे.)

फाकर—सं० स्त्री० [देशज] लोमड़ी से मिलता-जुलता एक मांसाहारी जानवर।

फाका—सं० पु० [अ० फ़ाक:] १ उपवास रहने की अवस्था।

२ भूखा रहने की अवस्था।

मुहा०—फाका पड़णा—अभाव, कमी, निर्धनता का प्रकट होना।

यौ०—फाकाकस, फाकाकसी।

फाकाकस—वि० [अ० फ़ाक: + फा० कश] १ निर्धन, कंगाल।

२ भूखा रहने वाला, भूखा।

फाकाकसी—सं० स्त्री० [अ० फाक: + फ़ा० कशी] १ भूखा रहना।

२ निर्धनता, कंगाली।

फाकी—सं० स्त्री० [फ़ा० फाकी] १ फांकने की क्रिया या भाव।

२ किसी पदार्थ की उतनी मात्रा जो एक साथ हथेली में लेकर फांकी जाय।

उ०—थिरता मन री नहिं, तन री गति थाकी, फुरणां पर धन री, अन री नहिं **फाकी**।—ऊ. का.

क्रि० प्र०—दैणी, मारणी, लैणी, होणी।

मुहा०—१ फाकी में आणौ—धोखे में आना, जाल या कपट में फंसना।

२ फाकी में पड़णौ—देखो 'फाकी में आणौ'।

३ फाकी में लैणौ—चंगुल में लेना, फुसला देना, धोखे या जाल में लेना।

३ किसी फल आदि का गोल या लंबोतरा टुकड़ा या खण्ड।

रू० भे०—फंकी, फांकी।

मह०—फाकौ, फूकौ।

फाकौ—सं० पु० [देशज] १ तापमान के अनुसार ११ से १४ दिन में टिड्डी के अंडों में से निकलने वाला बिन पंख के फुदकने वाला बच्चा।

२ देखो 'फाकी' (मह., रू. भे.)

उ०—दीनी वीरा भांणजड़ां नै वांट, ऊवरती को **फाकौ** म्है लियौ जी म्हांरा राज। वीरा रै! तूं आपणड़ै घर चाल, थारी उलटी ल्यावा घूघरी जी म्हांरा राज।—लो. गी.

क्रि० प्र०—दैणौ, मारणौ, लैणौ, होणौ।

रू० भे०—फाकउ।

फाखता—सं० स्त्री० [फ़ा फ़ाख्त:] पडुंकी नामक पक्षी।

रू० भे०—फाकता, फागता।

फाग—सं० पु० [सं० फाल्गुन:] १ फाल्गुन मास में समवयस्कों द्वारा खेला जाने वाला खेल जिसमें एक दूसरे पर रंग या गुलाल

डालते हैं।

उ०—१ माघ मास ठंढ़े जळ न्हायी, फागण **फाग** न खेली हो रांम। —लो. गी.

उ०—२ अस्त्र गुलाव अबीर उडायौ, सस्त्र पिचरका छिब सरसायौ वीर नाद सोई चंग बजायौ, रंग **फाग** सम जंग रचायौ।—ऊ. का.

२ फाल्गुन मास में गाए जाने वाले गीत जो प्रायः अश्लील होते हैं।

उ०—तठा उपराति करि नैं राजांन सिलांमति सारीखा साथ री टोळियां कियां–थकां फूल–गैंदूळ पड़ि नै रहिआ छै। केसरिआ वणाव कीआं थकां आगै वखांणी तिण भांति री नाइका पात्रां रा टूल चलीआ जायै छै। डफ, चंग, मुहचंग बाजि नै रहिआ छै। वीणा, ताळ, अ्रदंग बाज रहिआ छै। वांसली वाजि रही छै। ढोलकां बाजि रही छै, **फाग** गाइजै छै, **फाग** खेलीजै छै। नाचीजै छै।—रा. सा. सं.

क्रि० प्र०—गाणौ।

३ फाल्गुन मास में होने वाला उत्सव।

४ देखो 'फागण' (रू. भे.)

रू० भे०—फग्ग।

फागण–सं० पु० [सं० फाल्गुन] १ शिशिर ऋतु का दूसरा मास जो माघ के बाद पड़ता है, फाल्गुन। (डिं. को.)

उ०—१ **फागण** मास सुहांमणउ, फाग रमइ नव वेस। मो मन खरउ उमाहियउ, देखण पूगळ देस।—ढो. मा.

उ०—२ लगतां **फागण** लूरां लागी, अड़ै द्रोण अरु द्रुपद अभागी। वीरां खाग परस्पर वागी, जिण सूं ज्वाळ लड़ण री लागी। —ऊ. का.

रू० भे०—फग्गुण, फाग, फागुण, फालगुण, फालगुणी, फाल्गुण, फाल्गुणी, फाल्गुन, फाल्गुनी।

फागणियामूंग—देखो 'फागुणियामूंग' (रू. भे.)

फागणियौ–वि० [सं० फाल्गुन+रा० प्र० इयौ] १ फाल्गुन मास संबंधी, फाल्गुन मास का।

सं० पु०—फाल्गुन मास में स्त्रियों द्वारा ओढ़ा जाने वाला रंग विशेष का ओढ़ना।

उ०—फागण आयौ रसिया, **फागणियौ** रंगाई दो। पीळिया में मच रहियै होळी, रम रहियै होळी। **फागणियौ** रंगाई दो। —लो. गी.

रू० भे०—फागण्यौ, फागुणियौ, फागुण्यौ।

फागणी—देखो 'फाल्गुनी' (रू. भे.)

फागण्यौ—देखो 'फागणियौ' (रू. भे.)

उ०—ऊनाळा रा पोमचा, चौमासा रा लेरिया, फागण रा **फागण्या** रंगावौ म्हारी जोड़ी रा।—लो. गी.

फागता—देखो 'फाखता' (रू. भे.)

फागुआ–सं० स्त्री०—पंवार वंश की एक शाखा।

फागुण—देखो 'फागण' (रू. भे.)

उ०—१ **फागुण** मासि वसंत रुत, आयउ जइ न सुणेसि। चाचरि कइ मिस खेलती, होळी झंपावेसि।—ढो. मा.

उ०—२ वीणा डफ महुयरि वंस वजाए, रोरी करि मुख पंचम राग। तरुणी तरुण विरहि–जण दुतरणि, **फागुण** घरि घरि खेलै फाग।—वेलि

फागुणियामूंग–सं० पु० [राज० फागण+मूंग] रबी की फसल में होने वाला मूंग नामक द्विदल अनाज।

उ०—ऊपर छोंतरा, गोंहू, तरकारी हुवै। पांणी मीठो। विणां, **फागुणियामूंग**, जवार, सेलड़ी, सोह हुवै। —नैणसी

रू० भे०—फागणियामूंग।

फागुणियौ, फागुण्यौ—देखो 'फागणियौ' (रू. भे.)

फागोटौ–सं० पु० [सं० फाल्गुन+रा० प्र० ओटौ] फाल्गुन मास में इष्ट मित्रों व सगे–सम्बन्धियों को व्यंग में वोले जाने वाले अश्लील शब्द।

उ०—फाग खेलीजै छै। नाचीजै छै। हास–विणोद कीजै छै। हास रस हुइ नै रहीयो छै। **फागोटां** रा मुख सवाद लीजै छै। घरि–घरि वसंत राग हुलरावीजै छै।—रा. सा. सं.

रू० भे०—फगणटौ।

फाड़—देखो 'फाड' (रू. भे.)

फाड़कती, फाड़खती, फाड़गती—देखो 'फारखती' (रू. भे.)

फाड़णौ, फाड़बौ–क्रि० स० [सं० स्फाटनम्] १ किसी पैने या नुकीले उपकरण या शस्त्र को किसी, पदार्थ या प्राणी पर इस प्रकार मारना या खींचना कि पदार्थ या प्राणी का कुछ भाग हट जाय या उसमें दरार पड़ जाय, विदीर्ण करना।

उ०—ताहरां हालतां–हालतां नाहरी नजीक आई, ताहरां मैंणौ ऊभौ रह्यौ—'जी, आगै नाहरी छै।' ताहरां रिणमल जी वेटै अड़माल नूं कह्यौ—'हां!' ताहरां अड़माल नाहरी वतळाई। ताहरां तूट अर आई। ताहरां नांहरी नूं कटारी सूं **फाड़** नांखी। —नैणसी

२ कागज, वस्त्र आदि किसी परत वाले पदार्थ का कोई भाग जोर से इस प्रकार खींचना, तानना, झटका देना या कैंची से चीरना की उसका कुछ भाग मूल में से पृथक हो जाय; टुकड़े करना, खंड करना, धज्जियां बनाना।

उ०—पछै रुघनाथ जी आचारंग काढ्यौ। जद खंतिविजय रुघनाथ जी कनै सूं पांनौ खोसनैं **फाड़** न्हांख्यौ।—भि. द्र.

३ किसी समूह या दल को बीच में से पृथक करना, दूर हटाना, दूर करना, चीर देना।

उ०—**फाड़तौ** फौजां अफिर घूमाड़तौ धाम्रे घड़, भवाड़तौ 'वीक' भलौ खिलंतौ निघात। वीजळा झाड़ंतौ वैरी, बाबाड़ंतौ 'जैत'

वीजौ, पैलाड़ै पाड़तौ सोहै, राठौड़ां रौ छात ।
—दूदौ सुरतांणोत वीठू

४ आपस में विरोध डालना, भेद डालना, पृथक कर देना ।
उ०—तिकै उमराव फिर गया था । तिकै कहवाट रै छोटौ भाई छै। तिण सूं मिळिया नै कह्यौ, म्है तोनै गिरनार बैसांणां । इसौ कहि भाई सूं **फाड़िनै** उमराव दिल्ली रा पातिसाह कनै ले गया ।

५ परस्पर मिले या जुड़े हुए पदार्थों के मिले हुए प्रदेशों को पृथक-पृथक कर देना, संधि या जोड़ फैलाकर खोलना ।
उ०—१ मावड़िया मुख ढंकियां, बैसे **फाड़ै** बाक, स्रवण सुणै नहं बीर रस, दुरबळ घणौ दिमाक । —बां. दा.
उ०—२ फीटौ मूंढ़ौ **फाड़** नाड़ कर लेवै नीची —ऊ. का.
उ०—३ गवैयौ घांटी हिलाय-हिलाय अर बाकौ **फाड़-फाड़नै** ऊंचा सुर में गावतौ हौ ।—फुलवाड़ी

६ लंबोतरे पदार्थ के खड़े दो बरावर खंड करना, चीरना ।
उ०—१ चंदेरी बूंदी बिची, सरवर केरइ तीर । ढोलइ दांतण **फाड़तां**, आइ पुहत्तउ कीर ।—ढो. मा.
उ०—२ ले भड़ां रटाकां पूर अरिंदा ताड़ब्बा लागा, महाबीर खीज में पाड़ब्बा लागा मूंठ । बीर वेसतावा जहां दूधारा भाड़ब्बा लागा, रोजगारा खाती ज्यूं **फाड़ब्बा** लगा रूंठ ।
—मुकंदसिंघ सेखावत रौ गीत

७ तालाब, नदी या कुण्ड के पानी में तैरकर आर-पार जाना ।
ज्यूं०—तळाव फाड़णौ ।
उ०—बीजळियां रा भबका में सांमला माखर रौ उणनै भबकौ पड़ जातौ अर वौ पांणी **फाड़तौ** उठीनै चालतौ ई रह्यौ ।
—फुलवाड़ी

८ भीड़ को हटाते हुए रास्ता तय करना ।
उ०—पाड़ै घजां चम्मरां सु पक्खरा थंडमां पाड़ै, नरां गिरां पाड़ै करां ऊघड़ां निराट । पाड़ै थूळ बंगाळां अड़ाळां दळां भूळ पाड़ै, साहां वेहूं सीस पाड़ै भीड़ **फाड़ै** बाट ।—राव सत्रसाळ रौ गीत

९ किसी गाढ़े द्रव पदार्थ के सम्बन्ध में इस प्रकार की क्रिया करना कि उसका जलीय अंश और सार पृथक-पृथक हो जाय ।

१० धारदार औजार के प्रहारों से किसी पदार्थ को कई खण्डों या टुकड़ों में करना ।
ज्यूं०—कवाड़ी सूं लकड़ी **फाड़णी** ।

११ चोरी करने हेतु मकान की दीवार आदि में सुराख करना, सेंध लगाना ।
ज्यूं०—आज चोरां मोवन जी रौ घर **फाड़ियौ**, घणौ माल ले गया।

फाड़णहार, हारौ (हारी), फाड़णियौ—वि० ।
फाड़िओड़ौ, फाड़ियोड़ौ, फाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फाड़ीजणौ, फाड़ीजबौ—कर्म वा० ।
फाडणौ, फाडबौ—रू० भे० ।

फाड़ियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ कोई पदार्थ अथवा प्राणी किसी पैंने या नुकीले उपकरण या शस्त्र से मारकर या खीचकर फड़ा हुआ. २ कागज, वस्त्रादि किसी परत वाले पदार्थ का कोई भाग जोर से खीचने, तानने, झटका देने या कैंची से चीरने से पृथक किया हुआ, टुकड़े किया हुआ, खड किया हुआ, धज्जियां बनाई हुई. ३ किसी दल या समूह को बीच मे से पृथक किया हुआ, दूर हटाया हुआ, चीरा हुआ. ४ आपस में विरोध डाला हुआ, भेद डाला हुआ, पृथक किया हुआ. ५ परस्पर मिले या जुड़े हुए पदार्थों के मिले हुए प्रदेशों को पृथक-पृथक किया हुआ सधि या जोड़ फैलाकर खोला हुआ. ६ लंबोतरे पदार्थ के खड़े बराबर दो टुकड़े किया हुआ, चीरा हुआ. ७ तालाब, कुण्ड या नदी के पानी में तैरकर आर-पार गया हुआ. ८ भीड़ को हटाते हुए रास्ता तय किया हुआ. ९ किसी गाढ़े द्रव्य पदार्थ के सम्बन्ध मे इस प्रकार की क्रिया करने के कारण उसका जलीय अंश एवं सार पृथक-पृथक किया हुआ. १० धारदार औजार के प्रहारों से किसी पदार्थ को कई खण्डों या टुकड़ो में किया हुआ. ११ चोरी करने हेतु मकान की दीवार आदि में सुराख किया हुआ, सेंध लगाई हुई.
(स्त्री० फाड़ियोडी)

फाड़ौ—सं० पु० [देशज] (ब० व० फाड़ा) १ वह भूमि जो जमीन जोतते समय दो सीताओं या कुंड के बीच मे बच जाती है ।
२ किसी पदार्थ को तोड़-फोड़ या चीर कर किया हुआ टुकड़ा ।
उ०—तच करती रौ भोडक अळगौ व्हैगौ अर दूजोडा झटका में वौ भोडक रा दोय **फाड़ा** कर न्हाकिया ।—फुलवाड़ी
३ भाग, हिस्सा ।
उ०—पांणी दो **फाड़ा** में फाटतौ ई गियौ अर राजकंवर आगै बधतौ गियौ ।—फुलवाड़ी
४ देखो 'फाडौ' (रू. भे.)

फाचर—सं० पु० [देशज] १ पत्थर, काष्ट एवं शरीर का छोटा पैना टुकड़ा, खण्ड ।
उ०—१ आछटै अज्जरा, करिमाळक्करा । फूटरा फूटरा, चाचरा **फाचरा** ।—सू. प्र.
उ०—२ अठी पांचमौं भाई किसोरसिंघ के ही हाथियां नूं हठाइ बरवीर वैरियां नूं अग्रजां रा तथा आपरा साथी वणाइ वरा रौ कंवाड़ होण करवाळ रूप क्रकंचा मैं अंग रा **फाचरा** उडाय सेलां रा साळां करि पाछौ जुडाइ खेत पड़ियौ ।—वं. भा.
वि० वि०—पत्थर एवं लकड़ी के छोटे, पतले एवं पैने टुकड़े जो खाली छूटे हुए स्थान में संधि मजबूत करने के लिए फंसाये जाते हैं । पत्थर के **फाचरे** दीवार में एवं लकड़ी के **फाचरे** कोई फर्नीचर, औजारादि में लगाए जाते हैं । शरीर के **फाचरे** तलवार से छिन्न-भिन्न किए हुए शरीर के टुकड़े होते हैं ।
२ देखो 'पाचरौ' (रू. भे.)

उ०—गोळमटोळ पहियां घड़ दे, **फाचर** लाल गुलाल। गड़मच-गड़मच करतौ चालै, गीगै कै मन भाय। सुण-सुण रे खाती रा बेटा, गाडूलौ घड़ ल्याय, गाडूलौ घड़ ल्याय म्हारै गीगै कै मन भाय।—लो. गी.

रू० भे०—पाचर, फंचर, फचराक, फन्चर।

अल्पा०—पाचरौ, फाचरियौ, फांचरौ।

फाचरियौ, फांचरौ—देखो 'फाचर' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—जेण वेळां उड़ै वे नाचरां वाळा स्याल जोवै, राचरा आचांणी यो जांचरां वाळा रूक। उचक्कै उठांवै **फाचरां** वाळा घाट योंही, टूटै पड़ै गयंदां चाचरां वाळा टूक।

—मुकंदसिंघ सेखावत रौ गीत

फाचै—क्रि० वि० [सं० पश्चात्] पीछे, बाद में, पश्चात्।

फाट—सं० पु० [देशज] १ फटने की क्रिया या भाव।

२ खंड, टूक। उ०—सर छूटइ करता सणणाट, बकतर फोड़ि करै बे **फाट**।—प. च. चौ.

फाटक—सं० स्त्री० [सं० कपाटः] १ बड़े भवनों, महलों, बाड़ों, कारखानों, बगीचों आदि का बड़ा मुख्यद्वार।

उ०—१ अठीनै बाग री **फाटकै** में राजा जी रौ पग धरणौ व्हियौ अर अठीनै बनमाळी तौ तड़ाच खायनै जमीं मार्थे हेटै पड़ग्यौ।

—फुलवाड़ी

उ०—२ अेक पिंजारौ कपड़ा री अेक छोटी सी मील में कांम करतौ हौ। मील री **फाटक** मार्थे पैरण रा गाभां रौ संभाळी लेवता तौ ई वौ पिंजारौ खूंजिया में घालनै रूई रा अेक दो फूंबदा तौ ले ई आवतौ।—फुलवाड़ी

२ कपाट।

उ०—१ **फाटक** रखवाळी करै, **फाटक** हरै फसाद। सूंम कहै सुख सूं सुवां, **फाटक** तणै प्रसाद।—बां. दा.

उ०—२ कह पंथी जिण गांम धण, **फाटक** घरे न जुड़ाय। अब तौ चूड़ौ ऊबरै, सूर धणी समुझाय।—वी. स.

३ वह मकान जिसमें व्यक्तिगत या सामाजिक हानि पहुंचाने वाले मवेशी सरकार की ओर से या पंचायत द्वारा बन्द किए जाते हैं।

४ उक्त प्रकार से बन्द किए हुए मवेशी आदि को छुड़वाने पर दिया जाने वाला दण्डस्वरूप धन, रुपया, पैसा।

५ उक्त प्रकार के भवनों या अहाते के मुख्य द्वार पर लगाए जाने वाले विशेष बनावट के कपाट।

६ राज्य-पथ एवं रेल्वे लाइन के अंगाटन पर बना हुआ वह कपाट जो रेलगाड़ी के गुजरते समय सुरक्षा की दृष्टि से लगाया जाता है।

अल्पा०—फाटकी।

फाटकी—सं० स्त्री० [देशज] १ लकड़ी या धातु की बनी वह चपटी एवं लम्बी पट्टी जो झूलों के बीच में रख कर झूला झूलने के काम आती है।

उ०—अमवा री डाळी हीडौ बी घाल्यौ, रेसम-डोर बंधायौ। कहौ तौ सहेल्यां, आपां वागां में चालां, वागां में हींडौ अे घलायौ। रूपा री म्हारी वणी अे **फाटकी**, सोना के रौ झोळ चढायौ, कहौ तौ सहेल्यां, आपां वागां में चालां, वागां में हींडौ अे घलायौ।

—लो. गी.

२ देखो 'फाटक' (अल्पा., रू. भे.)

फाटकौ—सं० पु० [देशज] १ सामान्य व्यापार से भिन्न क्रय-विक्रय का कल्पित प्रकार या ढंग जिसमें लाभ-हानि का निश्चय बाजार की तेजी मंदी के अनुसार होता है, इसलिए इसकी गिनती एक प्रकार के जूए में होती है, सट्टा।

२ उक्त प्रकार से धन लगाकर खेल खेलने की क्रिया या भाव।

३ कोई भी ऐसा कार्य जिसमें हानि या लाभ प्रायः अनिश्चित सा ही होता है।

४ शस्त्र-प्रहार।

उ०—जद स्वांमी जी बोल्या—किण ही नै मेरां पकड़ ले गया। डेरौ खोस लीधौ। **फाटका** पिण दीधा। पछै घर रा मेहनत कर छुड़ा ल्याया। केतलायेक काले मैला में भेला थया। ओलख नै मेरां सूं मिल्यौ। लोकां पूछ्यौ—थारै कांइ सैहद? जद बोल्यौ—म्हारै भाइजी रा हाथ था **फाटका** लागा है, सहलांणी है।

—भि. द्र.

५. लकड़ी का एक फुट चौड़ा व ६-७ फीट लम्बा पाटिया जिस पर बैठकर चेजारे कार्य करते हैं।

फाटणौ, फाटबौ—क्रि० अ० [सं० स्फाटनम्] १ किसी भी चीज का बीच में से फटकर पृथक या अलग हो जाना, दो खंड हो जाना।

उ०—१ जद ते बोल्यौ—आ तौ मोनै कोइ आवै नहीं पांनां में मंडी है। स्वांमी जी कह्यौ—पानौ **फाट** गयौ अथवा गम गयौ ह्वै तौ कांई करस्यौ? —भि. द्र.

उ०—२ फाटा डोळां फिरै, फेर कपड़ां **फाटोड़ा**। बोतं निकांमां बोर, खाय बैता खातोड़ा।—ऊ. का.

२ किसी द्रव पदार्थ में ऐसा विकार होना जिससे उसका जल और सार अंश पृथक-पृथक हो जाय।

ज्यूं०—छाछ फाटणी, दही फाटणौ, दूध फाटणौ।

३ आघात लगने या ऊपर अधिक बोझ आ जाने से किसी पदार्थ का बीच में से इस प्रकार अलग हो जाना या उसमें दरार पड़ना कि अन्दर की चीजें बाहर दिखाई देने लगें या बिखर पड़े। तरेर आना, चिर जाना।

ज्यूं०—गांठ फाटणी, गाबा फाटणा, जमीं फाटणी, भींतं फाटणी।

४ अपने पक्ष के समूह से पृथक होना, किसी विपक्षी के साथ मिल जाना, विरुद्ध होना, विमुख होना।

उ०—अजमखां वांसै लागौ आय गढ़ गिरनार घेरियौ। वरस तीन विग्रह हुवौ। अमीखांन गढ़रोहा मांहै मौत मुवौ। अमीखांन रा बेटा नूं टीकौ हुवौ। बेटा रौ दिन फिरियौ। आप रौ परधांन थौ तिणसूं बेदवी की। पछै परधांन, रजपूत माहोमांहि फाटा। तरै गढ़ उतार नै अजमखांन नूं दियौ। —नैणसी

५ आंख या मुंह का स्वाभाविक स्थिति से अधिक खुलना, फैलना।

उ०—१ फळ अंगूर देखि द्रग फाटा, ताटा ऊंचा ताय। पलटी लूंकी देय पळाटा, खाटा अै कुण खाय।—ऊ. का.

उ०—२ वाक घणा फाटा रहै, नाहर डाच निहाळ। किर काळी रा करग रौ, कोयक खड़ग कराळ।—बां. दा.

६ तितर-बितर हो जाना।

ज्यूं०—बादळ फाटणौ।

७ रक्त विकार, क्षार पदार्थ के स्पर्श या बाह्य मैल के कारण शरीर के अंग विशेष की त्वचा में बारीक दरार पड़ना, फटना।

ज्यूं०—पग फाटणा, हाथ फाटणा, होठ फाटणा।

८ रोग, विकार आदि के कारण शरीर के किसी अंग पर असह्य वेदना या कष्ट होना।

उ०—१ दंत अणछक जोर सूं डाढ़ियौ—म्हारौ माथौ फाटै! म्हारौ माथौ फाटै। — फुलवाड़ी

उ०—२ अरजण रै हाथां छूट्यौ तीर रै वेग सणण-सणण करतौ वौ हवा नै चीरतौ ऊंचौ उडतौ ई गियौ। राजकंवर रै कांनां रा पड़दा जांणै फाटण लागा। — फुलवाड़ी

९ मर्यादा उल्लंघन होना, सीमा छोड़ना।

उ०—दखणाधि दळ फाटौ उदधि, रहै न दूजै रोकियौ, कमधज्ज ऊठि कर तेग लै, तौ भुज भार खडक्कियौ। —गु. रू. बं.

फाटणहार, हारौ (हारी), फाटणियौ—वि०।

फाटिओड़ौ, फाटियोड़ौ, फाटयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फाटीजणौ, फाटीजबौ—भाव वा०।

फटणौ, फटबौ, फट्टणौ, फट्टबौ—रू० भे०।

फाटियोड़ौ, फाटोड़ौ—भू० का० कृ०—१ किसी भी पदार्थ का बीच में से फटकर पृथक या अलग हुवा हुआ, दो खंड हुवा हुआ. २ विकार विशेष के कारण द्रव पदार्थ का सार अंश और जल पृथक हुवा हुआ. ३ आघात या अधिक बोझ के कारण पदार्थ विशेष बीच में से अलग हुवा हुआ, दरार पड़ा हुआ. (पदार्थ, वस्त्रादि) ४ अपने पक्ष के समूह से पृथक हुवा हुआ, शत्रुदल से मिला हुआ. ५ स्वाभाविक स्थिति से अधिक खुला हुआ. (मुख, आंखादि) ६ तितर-बितर हुवा हुआ. ७ रक्त विकार, क्षार पदार्थ के स्पर्श या बाह्य मैल आदि के कारण फटा हुआ. (शरीर का अंग) ८ रोग, विकार आदि के कारण असह्य वेदना हुवा हुआ. (शरीर का अंग) ९ मर्यादा उल्लंघन किया हुआ, सीमा छोड़ा हुआ.

(स्त्री० फाटियोड़ी, फाटोड़ी)

फाटौ—वि० [देशज] (स्त्री० फाटी) १ फटा हुआ, विदीर्ण।

२ अश्लील, अशिष्ट। उ०—फलांणौ वैरी थारौ गिलौ करतौ थौ थारी फाटी बातां करतौ थौ। —नी. प्र.

फाड—सं० स्त्री० [देशज] १ एक प्रकार का वस्त्र।

उ०—१ नंदरवारी पाघड़ी, पांमडी लोवडी, वाहणवही लोवडी, पछेडी चूनडी गजवडि बोरीआवडि हंसवडि सुवरणवडि कालावडि फाडां ठेपाडां कुमरपछेडु, गोमेद लूगडूं।—व. स.

उ०—२ बेटा रहि इकु मांनइ जाग माथइ फाड देई इकि मागइं भाग, बेटा पाखइ इक दोहिलउं घरइं बेटे छते इकि वढ़ी दढ़ी मरइं।—वस्तिग

२ फल अथवा काष्ठ का चिरा हुआ एक लम्बोतरा खण्ड, फांक।

रू० भे०—फाड़।

अल्पा०—फाडि, फाडी।

फाडणउ—वि०—१ फटने वाला।

२ पृथक होने वाला।

उ०—समुद्र खारउ, बाउल कंटालउ, सरप कालउ, वाउ वायणउ, जन बोलणउ, सुणह भसणउ, ससउ नासणउ, रांणउ लेणउ, स्त्री स्वभाव लाडणउ, सांड आडणउ, कुमित्र फाडणउ दुरजन दुस्ट, स्वजन सिस्ट, आगि ताती, घाहु राती।—व. स.

फाडणौ, फाडबौ—देखो 'फाड़णौ, फाड़बौ' (रू. भे.)

उ०—१ राजहंस गति जिम चालती, मयगल जिम माह्लती, कांमिनीगरव्व भांजती, चंद्रकला जिम गुणिहिं वाधती, कंचुक ताडती, नयनबांणि जणमण वीधती, वांकउं जोइती, जनह्रदय आह्लादती, सीमंतउ फाडती, कंठकंदलि नवसरहारि रुलंतइ, जोइ ननु न इसी बाल।—व. स.

उ०—२ तरै सांमरा देवी राजा री देही कनै आइ। राठौ फाडिनै टाबर काढिनै उरौ लीनौ।—राठौडां री वंसावली

फाडणहार, हारौ (हारी), फाडणियौ—वि०।

फाडिओड़ौ, फाडियोड़ौ, फाडयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फाडीजणौ, फाडीजबौ—कर्म वा०।

फाडसींगौ, फाडासींगौ—सं० पु० यौ० [देशज] (स्त्री० फाडसींगी) वह नर पशु जिसके सींग लम्बे फैले हुए हों।

उ०—भैंस नै देखतां ई उण रा मगज में जांणै कीड़ौ कळवळियौ। बोल्यौ—हे औ माजी! औ फाडसींगौ खोरी जे इण गडाळ में मरग्यौ तौ इणनै वारै कीकर काढ़ोला। —फुलवाड़ी

फाडासुपारी—सं० स्त्री०—एक प्रकार का फल विशेष (सुपारी) जो

प्राय: पान के साथ या वैसे भी खाया जाता है तथा जिसका औषधि मे भी प्रयोग होता है, छालिया ।

फाडि—१ देखो 'फाड' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—बीजपूरकनी घणी चडउडी, सरंग नारिंगनी **फाडि**, अति गुल्यइ आगि, पूरी रंगि, मधुकलस आबां नी चउतली। —व. स.

२ देखो 'फाडौ' (अल्पा., रू. भे.)

फाडियोड़ौ—देखो 'फाड़ियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फाडियोड़ी)

फाडी—सं० स्त्री०—१ देखो 'फाड' (अल्पा., रू. भे.)

२ देखो 'फाडौ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—आप मेहरबांनी करनै अेक चंन्नण री लांठी **फाडी** म्हारी कुपाळी में अर अेक तीखी **फाडी** म्हारा कागलिया में जोर सूं ठोर दौ नीतर म्हारी गति नी व्हैला। —फुलवाड़ी

मुहा०—१ फाडी करणी—कोई कार्य करवाने के लिए शीघ्रता करना। २ फाडी फसाणी—विघ्न पैदा करना, बाधा डालना।

फाडौ—सं० पु० [देशज] (स्त्री० फाडी) १ फैले हुए लम्बे सींगों वाला नर पशु।

२ लम्बे-लम्बे डग भरकर चलने वाला व्यक्ति।

३ पशु का वह सींग जो फैला हुआ हो।

उ०—भैंस रा सीगड़ा अणूंता **फाडा** अर लांबा हा। चौधरी नीठ इत्ती ताळ स्यांणौ स्यांणौ बैठौ रह्यौ।—फुलवाड़ी

४ काष्ट का चीरा हुआ लंबोतरा खंड।

उ०—महंत जी नैं पूछ्यौ तौ वै खुद आपरै मूंडा सूं मंजूर करियौ के सेठां रै कैंणा मुजब ई म्हैं वांरी मुगति रौ उपा करियौ हौ। चंन्नण रा दोनूं **फाडा** म्हैं म्हारै हाथां सूं ठोरिया। —फुलवाड़ी

रू० भे०—फाड़ौ।

अल्पा०—फाडि, फाडी।

फातड़ौ—सं० पु० [देशज] हिंजड़ों के साथ रहकर नाचने गाने तथा उनकी लाग वसूल करने वाला व्यक्ति।

रू० भे०—फातलौ।

फातमा—सं० स्त्री० [अ० फ़ातिम:] १ मुहम्मद साहब की कन्या जो हजरत अली की पत्नी तथा हसन और हुसैन की माता थी।

उ०—'विलंद' तांम वीफरै, धूत दाढ़ी कर धारै। ईसफहां आसफां, इलम **फातमां** उचारै।—सू. प्र.

२ वह स्त्री जो बच्चे को स्तनपान कराना जल्दी बन्द कर दे। (मा. म.)

फातलौ—वि० [देशज] (स्त्री० फातली) १ कायर, डरपोक।

उ०—घीचीवियूं घोड़ै-ह, अमईणौ वत आतलै। 'बूढ़ा' लज बोडेह, फिरस्यूं बैठौ **फातला**। —पा. प्र.

२ देखो 'फातड़ौ' (रू. भे.)

फातिया, फतिहा—सं० स्त्री० [अ० फ़ातिह:] १ प्रार्थना।

उ०—टोप सबज चिलत है, धरै समसेर जमधर। फजर पढ़ै **फातिया**, असुर चढ़िया गज ऊपर।—सू. प्र.

२ मरे हुए लोगों के नाम पर दिया जाने वाला चढ़ावा। (मा. म.)

फाथीजणौ, फाथीजबौ—क्रि० अ० [सं० पथ=मार्ग+रा० प्र० ईजणौ] आर्थिक संकट आदि में घबरा जाना, भ्रम में पड़ जाना।

फाथीजणहार, हारौ (हारी), फाथीजणियौ—वि०।

फाथीजिओड़ौ, फाथीजियोड़ौ, फाथीज्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फाथीजीजणौ, फाथीजीजबौ—भाव वा०।

फाथीजियोड़ौ—भू० का० कृ०—आर्थिक संकट आदि में घबराया हुआ, भ्रम में पड़ा हुआ.

(स्त्री० फाथीजियोड़ी)

फाथौ—वि० [देशज] (स्त्री०फाथी) १ शीघ्रता करने वाला, उतावला।

२ भूला हुआ, भ्रमित।

फाफड़ौ, फाफरौ—सं० पु० [देशज] गेहूं की पतली रोटी।

उ०—घ्रतवरणी घारडी, पतास फीणी, दहीथरां तिलसांकली **फाफडा** पूरी गुंझा।—व. स.

फाफानंदफड़ंद—देखो 'फोफानंदफड़ंद' (रू. भे.)

उ०—रण माथौ दे राज लै, अवर सुरग आनंद। घर माथौ दे बरघणौ, **फाफानंदफड़ंद**। —रेवतसिंह भाटी

फावणौ, फावबौ—क्रि० अ० [सं० प्रभवनम्] १ किसी पदार्थ का उपयुक्त स्थान पर उचित प्रतीत होना, शोभायमान होना, सुन्दर लगना।

उ०—१ फरहरै नेजा घजा **फावइ** रे, वहु नेड़ा प्रवहण आवै रे।
—प. च. चौ.

उ०—२ फैंटा छोगाळा खांधा सिर **फावै**, टेढ़ा डोढ़ावै डिगतौ नभ ढावै।—ऊ. का.

उ०—३ आछा हुवै उमराव, हिया फूट-ठाकुर हुवै। जड़िया लोह जड़ाव, रतन न **फावै** राजिया।—किरपारांम

उ०—४ फळ बहु सेल मछां दुति **फावी**। मझि जळ ग्रीभ तिरै मुरगाबी। चंच चंच जिण अगनि चमंकै। दांमणि जांणि अनेक दमंकै।—सू. प्र.

२ सुन्दर वेशभूषा धारण करने पर व्यक्ति का सुन्दर लगना, शोभित होना।

उ०—उडियांणी कसी मेखळी ऊपरि, काख अंधारी डंड कर, भल दीसइ **फाबियउ** विसंभर, सिहरां छायउ मांनसर।

—महादेव पारवती री वेलि

३ अवसरानुकूल किसी कथन या उक्ति आदि का ठीक लगना, भला लगना।

ज्यूं०—ब्याव में सगां नै गाळी गावणी सुंदर **फावै**।

४ किसी व्यक्ति की विशिष्ट विषय में की गई आंगिक चेष्टाओं तथा अंगो पर धारण किये गए वस्त्रों का उसके अंगों के अनुरूप उचित या सुन्दर लगना ।

ज्यू०—विण लुगाई नै नाच फाबै, उणनै साफौ घणौ ही आछौ फाबै ।

फावणहार, हारौ (हारी), फावणियौ—वि० ।

फाबिग्रोड़ौ, फाबियोड़ौ, फाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फावीजणौ, फावीजबौ—भाव वा० ।

फबणौ, फबबौ, फब्बणौ, फब्बबौ, फावणौ, फावबौ—रू० भे० ।

फावा—सं० स्त्री०—पंवार वंश की एक शाखा ।

फाबियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ उपयुक्त स्थान पर उचित रूप से शोभायमान हुवा हुआ. २ सुन्दर वेशभूषा धारण करने से शोभित हुवा हुआ. (व्यक्ति, प्राणी आदि) ३ अवसरानुकूल प्रसग के अनुरूप उचित लगा हुआ, भला प्रतीत हुवा हुआ. (कथन, वचन, बात, उक्ति) ४ अंगों के अनुरूप वस्त्रादि एवं आंगिक चेष्टायें शोभित हुवा हुआ.
(स्त्री० फाबियोड़ी)

फाबौ—सं० पु० [देशज] १ पैर का पंजा ।

उ०—पीपळी री उगती कूंपळ री गळाई पतळी अर छोटी लोळां । ओछी गाबड़ । सूंठ रा गांठियां जैड़ौ छोटौ अर गोळ नांक । टौलोड़ी री गळाई दांत । पतळा अर चितकबरा होठ । सीना री ऊपरली हाडकियां उफसियोड़ी । ओछा हाथ । मूंगफळियां जैड़ी छोटी आंगळियां । डोयली रै उनमांन छोटी टांगां । ओछौ फाबौ । आंगळियां छोटी, हळदी रा गांठियां जैड़ी ।—फुलवाड़ी

२ कोल्हू में 'लाठ' के शीर्ष भाग में जोड़ा हुआ वक्राकार एक सात वैत लम्बा डण्डा जिसका दूसरा छोर 'माकड़ी' से जुड़ा रहता है ।

फाय—सं० स्त्री० [देशज] लोभ, लालच ।

उ०—राजा नैं धन री लागी फाय ।—जयवांणी

फायदेबंद, फायदेमंद—वि० [अ० फाइदः+फा० मंद] १ लाभदायक, लाभप्रद । २ हितकर ।

फायदौ—सं० पु० [अ० फाइदः] १ किसी प्रकार के शुभ कार्य से होने वाला किसी भी प्रकार का लाभ ।

उ०—तौ मालम हुई—जे मोटा छोटां नूं सरम में फायदौ घणौ छ । सरम रै बिगर सारा ही गुण काचा छै ।—नी. प्र.

२ व्यापार में हुआ आर्थिक लाभ, आर्थिक रूप से होने वाली प्राप्ति ।

ज्यू०—इण साल मिरचां री बिक्री में घणौ फायदौ रह्यौ है ।

उ०—वांरा विराव में हजारूं रिपियां रौ फायदौ व्हियौ, कदै ई घाटौ नी गियौ ।—फुलवाड़ी

३ निष्कर्ष, नतीजा ।

४ बिमारी में अपेक्षाकृत सुधार ।

ज्यू०—म्हारै अबै पैलां सूं फायदौ है ।

५ प्रतिशोधात्मक गुण ।

ज्यू०—आ दवा खांसी में बोत फायदौ करै है ।

६ हित, भलाई । उ०—चोर हळफळिया होयनै माल-मत्ता संवटण ढूका जित्तै वै कह्यौ—थांरै ई फायदा वास्तै आयौ हूं म्हारा सूं किणी बात रौ डर मन में मत आंणज्यौ ।—फुलवाड़ी

फायर—सं० स्त्री० [अं०] अग्नि, आग ।

फायरब्रिगेड—सं० स्त्री० यौ० [अं०] आग बुझाने वाली गाड़ी ।

फायौफीटौ—सं० पु० [देशज] (स्त्री० फाइफीटी) हक्का-वक्का, भौचक्का । उ०—छोरा कणांई सांड पासी दौड़ै कणांई लकड़ियां सांमै 'बापू-बापू' हेला मारै । बापड़ौ फायौफीटौ हुग्यौ ।
—वरसगांठ

फार—वि० [सं० स्फार] बहुत, अधिक। उ०—तहं नहिं तमांम, घन सीत घांम । फळ-फूल फार, अब्वग उदार ।—ऊ. का.

सं० स्त्री० [सं० स्फारम्] आधिक्य, अधिकता, विपुलता ।

उ०—मुडै ज्यार कच्चै किनां बार मच्छी । अटे फार जे पंच ही धार अच्छी ।—वं. भा.

फारक—वि० [?] १ हलका, घटिया, खराब, बुरा ।

उ०—कर तन समर करण सुर किरिया, घण दळ सझ नर वांदर घिरिया । तिण डूबत दधि पाहण तिरिया, फारक दिवस हमैं तो फिरिया ।—र. रू.

२ स्फूर्तिवाला, फुर्तीला । उ०—पेग्म्बांना वाळी वात परीछइ, आगा लगइ करण आरास । दळवादळ तांणियां दुवाहे, फारक ईसर तणा फरास । —महादेव पारवती री वेलि

सं० पु०—१ शत्रु, दुश्मन ।

उ०—१ मचै वेढ़ विकराळ जरमंन इंगळ मारकां । पड़ै खग धारकां रीठ प्राभी । पजावण फारकां पीठि नंदण 'पतौ' । सारकां गढ़ा लज धींठ साभी ।—किसोरदांन बारहठ

उ०—२ फुराइ फूं फूं फार फारक फोज फरि फुरमांणिया, हुंकार कर कडि करइ सर भड़ि करवि करि क कंमांणिया ।
—रणमल्ल छंद

२ योद्धा, वीर ।

उ०—१ सरीखी सांनिध मेरु समांण, सरीखा राउ अनै सुरतांण । सरीखा सूक वहै संग्रांमि, सरीखा फारक सोहैं सांमि ।
—रा. ज. रासौ

उ०—२ मारू ए दखणि ए जुद्ध मातौ । त्रिविध घड ऊछळै लोह तातौ । छूटि कोवंड गुण बांण गाजै । फारकां मरिकां हाक वाजै ।
—गु. रू. वं.

उ०—३ घुकै भड हेक धजव्वड धाइ, भिरणै हिक जोध वडै गज ग्राहि। मिळै हिक रोस घणौं रिण मांहि, फिरै हिक **फारक** फेरी खाहि।—गु. रू. बं.

[सं० स्फारकं] ३ शस्त्रधारी पैदल सिपाही।

उ०—१ बार पहर तउ चडीउ रोसि गुरनंदणु भूझइ। रणि पाडिउ भगदत्तु राउ कउरव दल मंझइ। करि करवालु जु करीउ करणु समहरि रणु माडइ **फारक** पायक तुरग नाग नवि कोई छंडइ।
—पं. पं. च.

उ०—२ वीर पुरुस महासुभट प्रगुण नीपना, चक्रव्यूह गुरुडव्यूह तणी रचना नीपनी, ग्रागेवाणि सीगडियां तणी स्रेणि, पछेवाणि **फारक** तणी पद्धति, ततौ हस्तीघंट सीत्कार करती।—व. स.

सं०स्त्री०—४ लड़कों के खेलने का चकई नाम का खिलौना, चकरी।

५ देखो 'फारिग' (रू. भे.)

रू० भे०—फारक्क।

फारकती—देखो 'फारखती' (रू. भे.)

फारकी—सं० स्त्री० [देशज] पालकी से मिलती जुलती हाथी की पीठ पर रखी जाने वाली एक प्रकार की ग्रमारी विशेष जिस पर ग्रादमी बैठता है।

फारक्क—सं० स्त्री०—१ देखो 'फिरकी' (रू. भे.)

उ०—वरहास नास चाचर विखेरि, **फारक्क** जेम ग्रसि फिरइ फेरि। ग्रासिरा तणउ ऊजळइ ग्रासि, वेताळि केल्ह चडियउ व्रहासि।
—रा. ज. सी.

२ देखो 'फारक' (रू. भे.)

उ०—झट्टकै झाट ग्रोझडो झौर, फेरी फुरंत **फारक्क** फौर। तांडळां दळां डूंगळां टूक, रुंडळां रुळां सीकळां रूक।
—गु. रू. बं.

फारखती—सं० स्त्री० [ग्र० फ़ारिग+फा० खती] १ कर्ज (ऋण) या उधार के रुपये ग्रदा करने या होने की रसीद।

२ पूर्व लेन-देन का हिसाब चुकाना।

३ छुटकारा, मुक्ति।

४ वह लेख जो पूर्व लेन-देन के हिसाब के चुकता होने का प्रमाण हो।

रू० भे०—फाड़कती, फाड़खती, फाड़गती, फारकती, फारगती।

फारग—देखो 'फारिग' (रू. भे.)

फारगती—देखो 'फारखती' (रू. भे.)

उ०—१ इससे सब का हिसाब ग्राज करना। पछै सव रौ लेखौ करातौ गयौ, टका देतौ गयौ, **फारगती** लिखायतौ गयौ। सिपाहियां रौ हिसाब कर, सागिरद पेसा रौ हिसाब करा, टका देय, **फारगती** लिखाई।—पदमसिंह री बात

उ०—२ बोल्यौ—ना रे भाया! माथै लै'णौ कुण राखै। म्हनै ग्राज थारै लै'णा री **फारगती** करणी पड़सी।—फुलवाड़ी

उ०—३ गुरुदेव बिनां नंहि पार गती, भव भेव विना फळ **फारगती**।
—ऊ. का.

फारम—सं० पु० [अं०] १ विभिन्न कोष्टों वाला छपा हुग्रा या टाइप किया हुग्रा वह प्रपत्र जो किसी विषय के लिए प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत करने या विवरण भेजने में प्रयुक्त होता हो।

२ वह बड़ा खेत जहां कूए से सिंचाई कर खेती की जाती है तथा जहां पर रहने ग्रादि की भी पूर्ण व्यवस्था हो।

फारस—वि० [सं० पारस्य] फारस देश सम्बन्धी, फारस देश का।

सं० पु०—१ ग्रफगानिस्तान के पश्चिम में पड़ने वाला एक प्रसिद्ध देश जिसे ग्राजकल ईरान भी कहते हैं।

२ फारस देश का निवासी।

३ देखो 'फारसी' (रू. भे.)

फारसी—सं० पु० [फा०] १ फारस देश का निवासी।

सं० स्त्री०—२ फारस देश की भाषा।

रू० भे०—पारसी, फारस।

फारसीपोस—वि० [फ़ा० फ़ारसी+पोश] फारसी भाषा जानने वाला।

उ०—वही मीरखां के बजीरं कहावै, बड़ै मीरजादे ग्रदाबं बजावै। बड़ै **फारसीपोस** जुब्बांन चल्ली, ग्ररब्बी पढ़े बुल्लके कल्लबल्ली।
—ला. रा.

फारिग—वि० [ग्र० फ़ारिग] १ वह जो किसी काम को करके निश्चित हो गया हो, जिसने किसी काम से छुट्टी पा ली हो, बेफिक्र।

उ०—उठा रा सगळा कांम सूं **फारिग** होय नै भांणू ग्राप रै पिता जी नै साथै लेयनै नांनेरै ग्रायौ।—फुलवाड़ी

२ पूर्ण, सम्पूर्ण, समाप्त।

उ०—२ घणी तरवारियां रा वाढ़ ऊछळै छै। घणी बरछी ग्राघोसलै नीसरी छै। सिलै ग्रंग साथै कटै छै। बड़ाका, फींफरा बोल रहिया छै। मार-मार जे होय रही छै। वीर नाचै छै। सो इण तरह पोहर दिन चढ़तां कजियौ **फारिग** कियौ।
—सूरे खींवे कांधळोत री बात

रू० भे०—फारक, फारग।

फाळ—सं० स्त्री० [सं० प्लव] १ एक स्थान से खड़े-खड़े कूदकर वेगपूर्वक उछल कर दूसरे स्थान तक पहुंचने की क्रिया या भाव, कूदान, छलांग।

उ०—१ 'समंद **फाळ** कूदै हणू, जहर जारै संकर, सेस ही भुजां घर-भार साहै। 'करण' रै 'पदम' जिम साह रै कटैड़ै, वदूं जो कोई तरवार वाहै।—पदमसिंघ रौ गीत

उ०—२फरहरता कपि **फाळ**, ग्रस दै तैं ग्रसवारियां। भारांणी भुरजाळ, भुज रौ भलौ भवाड़ियौ।—बां. दां.

क्रि० प्र०—बांधणी, भरणी।

मुहा०—फाळ चूकरणौ—छलांग भरते समय चूक जाना, इच्छित स्थान तक न पहुंच सकना, अवसर या मौका हाथ से गंवा देना, अवसर खो देना।

२ हल का अगला नुकीला भाग जो हल चलाते समय भूमि को चीर कर सीता बनाता है।

३ एक प्रकार की अपराधी को सजा देने की प्राचीनकाल की प्रथा जिसमें हल की 'फाळ' को गर्म करके अपराधी को चटाते थे।

वि० वि०—इसे चाटने पर यदि अपराधी की जीभ न जलती तो वह निर्दोष माना जाता था।

[अ० फ़ाल] ४ पांसा फेंक कर रमल में शुभाशुभ बताने की क्रिया।

रू० भे०—पाल।

अल्पा०—फाळियौ।

फाल—सं० पु० [सं० फलं] १ मूंग, मोठ, ग्वार, तिलहन आदि पौधों के लगने वाली फली।

[सं० फालः] २ वस्त्र खंड। उ०—धवल तणी सरघोरणि तोरणि तरुवर पांन, गेलि गहिल्ली गोरडी ओरडी भरइं पकवांनु। संचियइ घ्रत दधि गोरस ओरस चंदन हेतु, कीजइं **फाल** फलावली आफली पडइं अचेत।—जयसेखर सूरि

३ सूती कपड़ा।

[सं० फालं] ४ फरसा, तलवार आदि औजार का पैना भाग, धार।

अल्पा०—फालडी।

फालक—सं० पु०—एक प्रकार का वृक्ष विशेष।

उ०—फेकारी नइ फालसां, फोफल फणस फणिंद। फूघेढ़ी नइ फूढ़ीया, **फालक** फिरांमण फिंद।—मा. कां. प्र.

फाळका—सं० स्त्री० [सं० प्लव] १ छलांग, कूदान।

उ०—काळा अगां तराजै **फाळका** बे बे तड़ां कुदै, तवेलां टाळका भुरौ बरीसै तोखार।—जवांन जी आढ़ौ

फाळकौ—सं० पु० [देशज] १ आग में तेज गर्म किया हुआ लोह-छड़।

२ अंगारा।

फालकौ—देखो 'फालौ' (रू. भे.)

फालगुण—१ देखो 'फाल्गुन' (रू. भे.) (ह. नां. मा.)

२ देखो 'फागण' (रू. भे.)

फालगुणी—१ देखो 'फाल्गुनी' (रू. भे.)

२ देखो 'फागण' (रू. भे.)

फालज—देखो 'फालिज' (रू. भे.)

फालडी—सं० स्त्री [?] १ एक प्रकार का आभूषण।

उ०—पहिरणि गजवड **फालडी** ए, ओढ़णि नवरंग घाटडी ए।
—हीराणंद सूरि

२ देखो 'फाल' (अल्पा., रू. भे.)

फालणौ, फालबौ—क्रि० अ० [सं० फलं] फल युक्त होना।

उ०—एहेवूं कही रथ आघु खेड्यु, पलतां पंथ मुभारि। विढ़ांनु व्रिक्ष एक आव्यु फूल्यु **फाल्यु** अपार।—नळाख्यांन

फालणहार, हारौ (हारी), फालणियौ—वि०।

फालिओड़ो, फालियोड़ो, फाल्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फालीजणौ, फालीजबौ—भाव वा०।

फालतू—वि० [देशज] १ व्यर्थ, निरर्थक।

उ०—मालण कह्यौ—हाल तौ रात घणी आंतरै है, अबारूं इं **फालतू** क्यूं आंख्यां बाळौ।—फुलवाड़ी

२ अनुपयोगी।

ज्यूं०—म्हनै आ दवा **फालतू** दी जावै है।

३ जो आवश्यकता से अधिक हो, अतिरिक्त।

ज्यूं०—म्हारै कनै औ पैन **फालतू** है।

४ जो किसी कार्य में नहीं लगा हो, बेकार, निकम्मा।

ज्यूं०—औ आजकल **फालतू** बैठो है।

उ०— **फालतू** बैठा बैठा टुकड़ा तोड़णा ठीक कोनी। कीं न कीं उद्यम व्हैतौ रैणौ चाहीजै।—फुलवाड़ी

मि०—फजूल।

फालर—देखो 'फालौ' (मह., रू. भे.)

फालरियौ—देखो 'फालौ' (अल्पा., रू. भे.)

फालरौ—सं० पु० [देशज] १ बकरा।

२ देखो 'फालौ' (रू. भे.)

फाळसौ, फालसौ—सं० पु० [अ० फालसा = सं० परूषक] एक प्रकार का वृक्ष।

उ०—फेकारी नइ **फालसां**, फोफल फणस फणिंद। फूघेढ़ी नइ फूढ़ीया, फालक फिरांमण फिंद।—मा. कां. प्र.

२ उक्त वृक्ष के लगने वाला फल।

रू० भे०—पालसौ।

फालि—सं० स्त्री० [देशज] फांक।

उ०—तेहनां किसां फल, वांनि वल्यां वावि थकां गल्यां, इसी मधुकलस आंवा नी **फालि**।—व. स.

फालिज—सं० पु० [अ० फ़ालिज] एक प्रसिद्ध वात रोग जिसमें शरीर का बायां या दाहिना पार्श्व पूर्णतः बेकाम और शिथिल हो जाता है, पक्षाघात।

रू० भे०—फालज।

फालियोड़ौ—भू० का० कृ०—फलयुक्त हुवा हुआ.

(स्त्री० फालियोड़ी)

फाळियौ—देखो 'फाळ' (अल्पा., रू. भे.)

फाली—सं० पु० [सं० फालः + रा० प्र० ई] वस्त्र का टुकड़ा।

उ०—किहां नाटईउं नइ किहां **फाली**? किहां रूपवंत नइ हाली रे? किहां राजकुमर किहां माली? किहां कीडीआ मोती जाली रे।—नळदवदंती रास

फालीय—सं० पु० [देशज] एक प्रकार का आभूषण।

उ०—करयले कंकण मणि भमकारु, जादर **फालीय** पहिरण ए। अहर तंबोलीय द्रूपदीवाल पाए नेउर रुणभुणइं ए।—पं. पं. च.

फालौ–सं० पु० [देशज] जलने या चोट लगने से शरीर के किसी अंग पर होने वाला एक प्रकार का फोड़ा जिसमें पानी भरा होता है।
रू० भे०—फालकौ, फालरौ।
अल्पा०—फालरियौ।
मह०—फालर।

फाल्गुन–सं० स्त्री० [सं० फाल्गुनः] १ अर्जुन का एक नाम।
२ अर्जुन वृक्ष।
३ देखो 'फागण' (रू. भे.)
रू० भे०—फालगुण।

फाल्गुनी–सं० पु० [सं०] १ फाल्गुन मास की पूर्णिमा।
२ पूर्वा और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र।
३ देखो 'फागण' (रू. भे.)
रू० भे०—फल्गुनी, फालगुणी।

फावड़ियौ—देखो 'फावड़ौ' (अल्पा., रू. भे.)

फावड़ी–सं० स्त्री०—देखो 'फावड़ौ' (अल्पा., रू. भे.)

फावड़ौ–सं०पु० [देशज] चौड़े फल का लोहे का एक उपकरण जिसमें डंडे की तरह का लंबा बेंट लगा रहता है जो मिट्टी खोदने तथा खोदी हुई मिट्टी को दूर फेंकने इत्यादि कामों में आता है।
रू० भे०—पावड़ौ।
अल्पा०—पावड़ियौ, पावड़ी, पावड़ीयौ, फावड़ियौ, फावड़ी।

फावणौ,फावबौ–क्रि० अ०/स० [देशज] १ सफल होना। उ०—अंगित चेस्टा जोउं स्वांमी, ते नल जउ अहां आवइ। हूं उलखीसि भत्तरि माहरांनइ, मनोरथ सघला **फावइ** रे। —नळदवदंती रास
२ देखो 'फाबणौ, फाबबौ' (रू. भे.)
उ०—सबजे जर दाई लाल सिहाई वांनै छायौ ब्रह्मंड। फररा बैरक्कां **फावी** कटकां जांणक फूलै वन-खंड।—गु. रू. बं.
३ देखो 'फंसाणौ, फंसाबौ' (रू. भे.)
उ०—पढ़ियां बिनां मूढ़ पग **फावै**, पढ़ियां बिचै पुमाई नैं।
—ऊ. का.
फावणहार, हारौ (हारी), **फावणियौ**—वि०।
फाविओड़ौ, फावियोड़ौ, फाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फावीजणौ, फावीजबौ—भाव वा०/कर्म वा०।

फावियोड़ौ–भू० का० कृ०—१ सफल हुवा हुआ.
२ देखो 'फावियोड़ौ' (रू. भे.)
३ देखो 'फंसायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फावियोड़ी)

फास–सं० पु० [सं० पाशः] १ प्राण दंड देने निमित्त अपराधियों के गले में डाला जाने वाला फंदा।
२ देखो 'फांस' (रू. भे.)
३ देखो 'स्परस' (रू. भे.)

फासलौ–सं० पु० [अ० फासिलः] दूरी, अन्तर।

फासीगर—देखो 'पासीगर' (रू. भे.)
उ०—ठग **फासीगर** चोरटा जीवा, वीवर कसाई न्यात।—जयवांणी

फासुअ, फासू, फासूय–वि० [सं० प्रासुक] १ साधु के ग्रहण करने योग्य, जीव-रहित, निर्दोष।
उ०—१ नित **फासू** जल पीवतां, कोडा कोडी वरस नौ पाप रे। दूर करै खिण एक में, निस्चै होय निस्पाप रे। —रांमचंद्र गणि
उ०—२ ता? उन्हउं सीयलु जयह जलु, **फासूय** थप्पिय विवहप्परि। निज्जिणिउ विजयांणंद ति (लि) हि, अभयतिलकि चउपट्टि धरि।
—अभयतिक यती
२ व्यर्थ, फिजूल। उ०—आज लगै हूं जांणती कन्हैया, पूरब करम विसेस रे गिर। **फासू** जाया मैं छ जणा कन्हैया, इहां नहीं मीन नै मेख रे गिर।—जयवांणी

फिंगरणौ, फिंगरबौ–क्रि० अ० [देशज] १ लाड में इतराना।
२ फूलना, घमंड-करना।
३ एकाएक क्रोधित होना।
फिंगरणहार, हारौ (हारी), **फिंगरणियौ**—वि०।
फिंगरिओड़ौ, फिंगरियोड़ौ, फिंगरयोड़ौ—भू० का० कृ०।
फिंगरीजणौ,फिंगरीजबौ—भाव वा०।

फिंद–सं० पु०—वृक्ष विशेष ?
उ०—फेकारी नइ फालसां, फोफल. फणस फणिंद। फूबैढ़ी नइ फूढ़ीया, फालक फिरांमण **फिंद**।—मा. कां. प्र.

फिंफर, फिंफरड़—देखो 'फेंफड़ौ' (मह., रू. भे.)
उ०—१ छुटै लंब छड़ ताड़ तड़-तड़, बांण छुट बड़ सौक सड़-सड़। फूट **फिंफरड़** कळिज झड़-फड़, अंतड़ उघरड़ लोथ लड़-थड़।
—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात
उ०—२ बढ़ि कंधड़ मुख करत बड़बड़, फरड़ **फिंफरड़** कळिज फड़फड़। —सू. प्र.

फिकन–वि० [?] दुष्ट, नीच, पतित।
उ०—पड़तां तोल कई **फिकन** नाठै परा, उड़ गया कइक असमांण आथै। मात रा हुकम हूं नाक काटै महिप, सात बीसां तणा हेक साथै।—बालाबक्स बारहठ (गजूकी)

फिकर–सं० पु० [अ० फिक्र] १ वह मानसिक स्थिति या अवस्था जिसमें मनुष्य अपने किये हुए विगत कर्मों के दुष्परिणामों, भविष्य के संभाव्य संकट एवं होने वाली हानि या बिगाड़ पर क्षुब्ध होकर बार-बार स्मरण या चिंतन करता हुआ दुखी एवं भयभीत होता है।

उ०—१ जे यूं करतां ई मरग्गौ तौ थनै नवी जमारौ मिळसी। **फिकर** क्यूं करै।—फुलवाड़ी

उ०—२ सगळा जांनियां नै थावस दे दियौ के वांनै कीं सोच **फिकर** करण री जरूरत कोनीं।—फुलवाड़ी

उ०—३ पछै स्रीराव जी री फोजां ठोड़-ठोड़ मेवाड़ में आय लूंबी देस रौ जळळ जादा दीवांण जी नूं पहुंतौ। दीवांण जी नै **फिकर** सवळौ हुवौ।—नैणसी

२ वह मानसिक स्थिति जिसमें मनुष्य भविष्य के लिए योजना बनाने पर चिंतन करता है।

उ०—स्याळणी ग्याबण व्ही तौ वा स्याळ नै कह्यौ—बिचिया देवण सारू कोई उम्दा घुसाळी तौ बणावौ। स्याळियौ कह्यौ—इणरी **फिकर** थूं क्यूं करै, जद मन करूंला तद घुसाळी बणाय दूंला।—फुलवाड़ी

रू० भे०—फकर, फक्कर।

फिड़—सं० पु० [देशज] १ समूह, ढेर।

२ देखो 'फिरड़' (रू. भे.)

फिड़कली—सं०स्त्री० [देशज] १ मादा पतंगा।

२ देखो 'फिरकी' (रू. भे.)

उ०—१ थें ई तौ सिरैपोत ग्रौ धारौ काढ़ियौ। थें म्हारौ कैणौ मांन्यौ व्हौ तौ अबै दूजा राजा-पातसाह ई मांनै। म्हैं तौ अबै थां लोगां रै हाथां री **फिड़कली** वणग्यौ।—फुलवाड़ी

उ०—२ **फिड़कली** फिरै ज्यूं ग्रै सगळी वातां ठग रा मगज में फिरगी।—फुलवाड़ी

मुहा०—फिड़कली वणणौ—वशीभूत या अधीन होना, हाथ का खिलौना होना।

फिड़कलौ—सं० पु० [देशज] (स्त्री० फिड़कली) १ फसल को हानि पहुंचाने वाला टिड्डी की जाति का ही एक प्रकार का कीड़ा जो दल-दल में पाया जाता है।

उ०—फाकौ टांगां टिरै, कातरौ तारै कांचळ। चरचरियां रौ चांद, **फिड़कलां** फबतौ हांचळ।—दसदेव

२ वर्षा-ऋतु में होने वाला कीट, पतंगा। (शेखावाटी)

रू० भे०—फिड़ड़कलौ।

फिड़कियौ—सं० पु० [देशज] १ वह रस्सी जो 'झाल' के पीछे बांधी जाती है जिससे 'झाल' में से घास आदि बिखरने न पावे।

२ देखो 'फिड़कौ' (अल्पा., रू. भे.)

फिड़कौ—सं० पु० [देशज] (स्त्री० फिड़की) १ छोटी टिड्डी या टिड्डी का बच्चा।

अल्पा०—फिड़कियौ।

फिड़ड़कलौ—देखो 'फिड़कलौ' (रू. भे.)

फिचळणौ, फिचळवौ—क्रि० अ० [देशज] १ चलचित्त होना। २ घृणा करना। ३ कायर होना। ४ इन्कार होना।

फिचळणहार, हारौ (हारी), **फिचळणियौ**—वि०।

फिचळिग्रोड़ौ, फिचळियोड़ौ, फिचल्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फिचळीजणौ, फिचळीजवौ—भाव वा०।

फिचळियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ चलचित्त हुवा हुग्रा. २ घृणा किया हुग्रा. ३. कायर हुवा हुग्रा. ४ इन्कार हुवा हुग्रा.

(स्त्री० फिचळियोड़ी)

फिजूल—देखो 'फजूल' (रू. भे.)

उ०—आपरै भरतार रा अैड़ा वचन सुणनै वा ग्रांख्यां सूं ठळाक ठळाक ग्रांसू ढुळकायनै गळगळा कंठ सूं कैवण लागी—म्हनै थूं **फिजूल** क्यूं भरमावै?—फुलवाड़ी

फिजूलखरच—देखो 'फजूलखरच' (रू. भे.)

फिजूलखरची—देखो 'फजूलखरची' (रू. भे.)

फिट—अव्य० [देशज] १ अपमान या तिरस्कार सूचक शब्द, धिक्, धिक्कार। उ०—**फिट** बीकां **फिट** कांधळां, जंगळधर लेडांह। 'दळपत' हुड ज्यूं बांधियौ, भाज गई भेडांह।—अज्ञात

[अं०] २ उचित, ठीक, मुनासिब।

ज्यूं०—ग्रौ **फिट** बात कीवी है।

मुहा०—फिट करणौ—संतुष्ट करना, समझाना।

३ किसी व्यक्ति, वस्तु या पदार्थ को यथा स्थान लगाना, निश्चित करना।

ज्यूं०—लट्टू **फिट** करणौ, पंखौ **फिट** करणौ।

क्रि० प्र०—करणौ।

४ कोई मशीन अथवा ग्रौजार जो सब कल पुर्जों से युक्त हो तथा पूर्णरूपेण काम में लेने की स्थिति में हो।

५ नाप के अनुसार।

ज्यूं०—ग्रौ पैंट म्हारै **फिट** है।

यौ०—फिटोफिट।

रू० भे०—फट, फटि, फीट।

फिटक—सं०पु० [देशज] १ राठोड़ वंश की एक उप-शाखा या इस शाखा का व्यक्ति।

सं० स्त्री०— २ लज्जा।

३ जाल, कपट, अनुचित प्रभाव।

उ०—१ दूजी वार **फिटक** में आवण वाळौ वांदरौ नीं हौ। तुरत जबाव दियौ—अरे खूटल, निलज्ज, क्यूं वातां वणावै?—फुलवाड़ी

उ०—२ राजा जी घणी घणी भुळावण दी के किणी ग्रसैंधा मिनख री **फिटक** में मत ग्राजौ।—फुलवाड़ी

मुहा०—१ फिटक में ग्राणौ, फंसणौ, झिलणौ—जाल में फंसना, छला जाना। २ फिटक में लेणौ, फंसाणौ—जालमें फंसाना, कपट करना।

४ देखो 'स्फटिक' (रू. भे.)

उ०—आंणै मोती अवर सूं, चीण फिटक चित चाय । रोहिण गिर खोजै रतन, सिंघळदीप सिवाय ।— बां. दा.

फिटकड़ी–सं० स्त्री० [सं० स्फटिका] स्फटिक की भांति श्वेत एवं चमकीला खनिज पदार्थ जो औषध के काम आता है।

रू० भे०—फटकड़ी, फिटकरी।

फिटकड़ौ–सं० पु० [देशज] सिर में तालू के ऊपर का वह स्थान जो बचपन में कोमल रहने के कारण श्वास-क्रिया के साथ फुदकता हुआ दृष्टिगोचर होता है।

फिटकरयणमणि–सं० स्त्री० यौ० [सं० स्फटिक+रत्नमणि] स्फटिक रत्नमणि। उ०—**फिटकरयणमणि** विद्रुम हिंगुल वलि हरियाल। मणसिल पारौ सुवरण आदि धातु नीहाल। —ग्यांनसागर

फिटकरी—देखो 'फिटकड़ी' (रू. भे.)

फिटकार—देखो 'फटकार' (रू. भे.)

उ०—डाढ़ौ तरफ बुकांनदे, किलम दिये **फिटकार**। अली टकोरौ ऊछरै, मो पर मेली कार।—पा. प्र.

क्रि० प्र०—आणौ, लागणी।

फिटकारणौ, फिटकारबौ—देखो 'फटकारणौ, फटकारबौ' (रू. भे.)

उ०—नीसासइ नींठइ नही, सास तणउ ऊसास। फाटइ नहीं **फिटकारीउं**, हैड़ुं धरतूं आस।—मा. कां. प्र.

फिटकारणहार, हारौ (हारी), फिटकारणियौ—वि०।

फिटकारिओड़ौ, फिटकारियोड़ौ, फिटकारयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फिटकारीजणौ, फिटकारीजबौ—कर्म वा०।

फिटकारियोड़ौ—देखो 'फटकारियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फिटकारियोड़ी)

फिटकारियौ–वि० [देशज] बद्दुआ लगा हुआ, शापित।

फिटकारौ—देखो 'फटकारौ' (रू. भे.)

उ०—तिकौ **फिटकारौ** सुणत समौं धूजणी खाय हीयौ फूट हेठौ पड़ियौ। —वीरमदे सोनगरा री वात

फिटकी–सं० स्त्री० [अनु०] बद्दुआ, शाप।

फिटळौ—देखो 'फिटोळ' (रू. भे.)

उ०—पछै जे रैयत बात-बात में पलट जावै तौ भंडौ **फिटळौ** राजा कीकर उण रै माथै धूंस जमा सकै।—फुलवाड़ी

(स्त्री० फिटळी)

फिटिम–सं०पु० [सं० स्फटी=फणी] १ सर्प, नाग। २ खटमल।

फिटोफिट–वि० [अं० फिट] देखो 'बठोबठ'।

फिटोळ–वि० [देशज] १ आवारा। २ जो विश्वास करने योग्य न हो। ३ बदचलन। उ०—अगाड़ी थूं जा आगड़ो, फीटा पड़ै **फिटोळ** वा। एक ने एक देखो अबै, आपस देवै ओळबा।—ऊ. का.

रू० भे०—फिटळौ।

फिटौ–सं० पु० [देशज] (स्त्री० फिटी) त्याग, परित्याग।

उ०—१ ताहरां सुरतांण जी री बहू कहियौ। रांमसिंघ जी तौ वैरागी हुआ। सन्यासी हुआ छै सु घरती नहीं उजाड़ै। म्हें तौ आसीपणौ **फिटौ** नहीं करां, जु आसिया छां सु आसीपणौ करि जोवाड़िस्यां।—द. वि.

उ०—२ अेक मां जायौ भाई व्है, दूजौ वांणी जायौ भाई व्है। वाणी सूं आदरियोड़ौ भाई, सगा भाई सूं ई घणौ सवायौ व्है। म्हैं अैड़ा गाढा मित रै साथै दगौ करूं, लांणत है म्हनै। थारी इण निकांमी जिद नै **फिटी** कर।—फुलवाड़ी

वि०—१ खुला, ढीला, स्वतन्त्र। उ०—१ सिखरोजी देखता ही रह्या। 'ऊ जाहि! ऊ जाहि! ताहरां मेळै रै वांसै सिखरै खड़िया। लारै घोड़ौ लगाय **फिटौ** कियौ।—नैणसी

उ०—२ कुतरां रै कनारै घवळौ-सौ देखै तौ क्यूं पड़ियौ छै जोयौ। देखै तौ अमल-रौ पोतौ छै। उठाइ लियौ। घाति घोड़ै-रै पगै पूठै लगाइ **फिटौ** कियौ।—ऊदै उगमणावत री वात

२ उपेक्षित, नगण्य, अवहेलना के योग्य।

ज्यूं०—**फिटौ** करै नी, क्यूं बहस करै।

क्रि० प्र०—करणौ।

३ लज्जित, शर्मिन्दा।

क्रि० प्र०—पड़णौ, होणौ।

४ अपमानित।

क्रि० प्र०—पड़णौ, होणौ।

फितन–सं० पु० [अ० फ़ित्न:] १ एक प्रकार का पुष्प विशेष।

२ उक्त पुष्प से निकला हुआ पुष्प-सार।

रू० भे०—फतन।

फितूर—देखो 'फतूर' (रू. भे.)

उ०—१ सेठ दो तीन हेला पाड़नै सेठांणी नै जगाई। पग रौ अंगूठौ दबावता कह्यौ—आज तौ म्हारा दिमाग में अेक गजब रौ ई **फितूर** माच्यौ है। —फुलवाड़ी

उ०—२ लाखेरी गोपाळदास कन्है आदमी मेल्हियौ और कहाईजे इसौ **फितूर** छै सो थे सताब आवज्यौ।—गोपाळदास गौड़ री वारता

उ०—३ क्या तौ यह तूफान है, कै **फितूर** यह होय। या तौ कोई भांड है या सांग वणाया कोय।—दूलची जोइये री वारता

फितूराळौ–वि० [अ० फ़ुतूर+रा०प्र० आळौ] १ उपद्रवी, झगड़ालू। २ खुराफात करने वाला, खुराफाती।

३ धूर्त, कपटी, पाखंडी। ४ विघ्न डालने वाला, बाधक।

५ हानि या नुकसान पहुंचाने वाला।

फितूरी–वि० [देशज] फितूर करने वाला, उपद्रव करने वाला, उपद्रवी।

उ०—अर चाहुवांण प्रांमार **फितूरी** फेरंड मइंदा रौ मत्तभाव आंणै

जिकौ उडावण रौ श्रापणौं उपाय छै ।—वं. भा.

फिदकड़ी, फिदड़की–सं० स्त्री०—देखो 'फदड़की' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—जी का मूत में **फिदड़की** वीरय की पड़ै तीने पीडिका प्रमेह कहै छै ।—श्रमरत

फिदड़कौ—देखो 'फदड़कौ' (रू. भे.)

फिदवी–वि० [श्र० फ़िद्वी] १ स्वामीभक्त, आज्ञाकारी ।

२ सेवक, दास ।

उ०—खाग कढ़ी कूं देख के घड़ घडी खावै, श्रौरत के हैज के लोही से तमाल आवै । किसी दफै '**फिववी**' पर खीजता इस तरह दीसै, श्रपणैं दसतां से सिर पीटकर दांतुं कुं पीसै ।—दुरगादत्त बारहठ

फ़िदा–वि० [अ० फिदा] १ किसी पर श्रासक्त होने वाला, मोहित ।

२ वशीभूत ।

३ स्वयं को किसी पर न्यौछावर या बलिदान करने वाला ।

क्रि० प्र०—होणौ ।

फिद्दौ—देखो 'पिद्दौ' (रू. भे.)

फिप्फर—देखो 'फैंफड़ौ' (मह., रू. भे.)

उ०—खेह गरदी मेहलौं श्रब्बीर उड़ाया, फूल कळेजे **फिप्फरै** फबि फांक फुलाया ।—वं. भा.

फिफरक—देखो 'फैंफड़ौ' (मह., रू. भे.)

फियौ–सं० पु० [सं० प्लीहा] पेट के श्रन्दर ऊपरी बांए भाग में पाचन-संस्थान का वह श्रवयव जो रक्त बनाने में सहायक होता है, तिल्ली, प्लीहा ।

रू० भे०—फिहौ, फीयौ, फीहौ ।

फिरंग–सं० पु० [श्रं० फ्रांक] १ पश्चिम यूरोप का एक देश ।

उ०—हजामति कराड़ि श्रर सहु कहीं ठाकुरां नै कहियौ जूं डाढ़ी रखावौ । श्रर **फिरंग** कूं हम कटकी करेंगे । सहु को ठाकुर **फिरंग** कूं तइयार हुवौ । —द. वि.

२ श्रातशक रोग, गरमी । (श्रमरत)

३ एक प्रकार का फूल । (श्र. मा.)

सं० स्त्री०—४ चीनी या धातु निर्मित एक पात्र जिसमें शराव संग्रह की जाती है ।

५ देखो 'फिरंगी' (रू. भे.)

उ०—**फिरंग** प्रळै जळ फैलियौ, तज दुहूं राहां टेक । पांन श्रखै-वड़ 'पदम' रौ, ऊंचौ रहियौ श्रेक ।—राघोदास सांदू

रू० भे०—फरंग ।

फिरंगण–सं० स्त्री० [राज० फिरंग+ण] अंग्रेज स्त्री, गोरी स्त्री ।

उ०—**फिरंगण** बीबी मुतसद्दी श्रंगरेज नूं श्रंगीकार न करै, जंगी श्रंगरेज नूं श्रंगीकार करै ।—वां. दा. ख्या.

फिरगथांन–सं० पु० [राज० फिरंग+सं० स्थानं] अंग्रेजों का देश ।

उ०—श्रण खरव कळह तर कहै दुज श्रेकठा, गरव वां कितावां तणा गळिया । थया वळहीण लसकर **फिरंगथांन** रा, चीण इनांन रा इलम चलिया ।—कविराजा वांकीदास

फिरंगवाय–सं० पु० [राज० फिरंग + सं० वात] १ एक रोग विशेष, श्रातशक । (अमरत)

२ घोड़े की इन्द्रिय का एक रोग विशेष । (शा. हो.)

फिरंगांण—देखो 'फिरंगी' (मह., रू. भे.)

उ०—१ फिरिया दळ **फिरंगांण** रा, थरहरिया लख थाट । करिया जुध 'खुसियाळ' सूं, मरिया श्राळेमाट ।—श्रज्ञात

उ०—२ सेखावत जळहर समर, फिर चळवळ **फिरंगांण** । प्रथी सैंग कळहळ पड़ै, भळहळ ऊगां भांण ।—गिरवरदांन कवियौ

फिरंगी–वि० [राज० फिरंग+ई] १ फिरंग देश से सम्वन्धी ।

२ फिरंग रोग से पीड़ित ।

सं० पु०—१ यूरोप देश का निवासी, श्रंग्रेज, गोरा ।

उ०—१ चडै कुदरती हुकमती श्रसलि-जद्दा, चडै दौलती नेखवा हुकम बंदा । चडै उजबकी रौद्र रूमी **फिरंगी**, चडै मुगळ पट्ठांण सैईद संगी ।—गु. रू. बं.

उ०—२ जंगी रिसाला हलंतां प्रळै, सांमंद हिलोळां जेहा, छात रंगी हसम्मां मळंतां काळ चोट । जोर दीधौ **फिरंगी** लिखायौ कौल-नांमौ जठै, श्रापरंगी 'बूंडा' तें मेवाड़ राखी श्रोट ।—राघोदास सांदू

सं० स्त्री०—२ फिरंग देश की वनी तलवार ।

३. एक प्रकार का श्रोढ़ने का वस्त्र जिसे राजस्थानी में इरंडी भी कहते हैं । उ०—कतनीभूंना प्रताप सचोप, पटणी कयीवु, **फिरंगी** कथीवु, सानुवाफ जरवाफ ।—व. स.

रू० भे०—फरंग, फरंगी, फिरंग ।

मह०—फरंगांण, फरगांण, फिरंगांण ।

फिरंड–वि० [देशज] (स्त्री० फिरंडी) विरोधी, विपक्षी ।

उ०—इसौ श्राग वरजाग 'श्रौरंग' नुगरौ श्रसुर, **फिरंड** श्ररि दिलीसुर फवाळौ । असमरां भाड़ श्रौनाड़ 'दुरगौ' श्रडर, करंड ले घातियौ नाग काळौ ।—दुरगादास रौ गीत

फिर–अव्य० [देशज] १ बाद में, श्रनन्तर, पीछे ।

२ श्रतिरिक्त, श्रलावा ।

उ०—घुड़दोड़ां सूं ढूंगा घसगा, नांमरदी **फिर** न्यारी रे । लाखां रुपया लेखे लागा, कोई न लागी कारी रे ।—ऊ. का.

३ श्रौर, पुनः ।

४ उपरान्त, वावजूद ।

उ०—कांमी **फिर** वांमी क्रिपण, जादूगर नर चार । रात दिवस पड़दे रहै, पड़दा सूं हिज प्यार ।—वां. दा.

रू० भे०—फिरी ।

फिरकी–सं०स्त्री० [देशज] काष्ट या धातु निर्मित एवं बीच में धुरी या

कील लगा हुआ गोल एवं चपटाकार बच्चों का एक खिलौना जो घुमाने पर धुरी पर चक्राकार घूमता है, चकरी।

रू० भे०—फरकी, फारक्क, फिड़कली, फुडकली।

फिरकौ–सं० पु० [अ० फिर्कः] १ जाति, वर्ग।

२ पंथ, संप्रदाय।

फिरड़–सं० स्त्री० [देशज] टिड्डी की वह अवस्था जब वह गुलाबी रंग की होती है और उड़ना आरम्भ करती है।

रू० भे०—फिड़।

फिरड़ी–सं० स्त्री० [देशज] १ वह ऊंटनी या सांड जो गर्भवती नही होती है, बांझ सांड।

उ०—भांत-भांत री साडियां–सुब्बर, सुवाड़ी, बाखड़ी अर **फिरड़ी**। —फुलवाड़ी

२ देखो 'फरड़ी' (रू. भे.)

फिरणवार–वि० [देशज] फिरने वाला, घुमक्कड़।

उ०—ताहरां कुंवर रै मन में हाथी री बात थी सो कुंवर जी फुरमायौ—अ मेवा, कपड़ा-वसत, म्हांरै पण घणा ही है। थे तौ परदे रा परखंड **फिरणवार** छौ। —पलक दरियाव री बात

फिरणी–सं० स्त्री० [राज० फिरणौ] १ फिरने या घूमने की क्रिया या ढंग। उ०—कविलउ कलूळ कंदळ करेय, फारकां पूठि **फिरणी** फिरेय। नीछंटिया गोळा तत्र नाळि, पावक्क जांणि पइठउ पलाळि।—रा. ज. सी.

२ प्रदक्षिणा करने का मार्ग, परिक्रमा।

३ ऊंट या घोड़े आदि की चाल या गति।

४ भ्रमण, परिभ्रमण। (साधु-सन्यासी)

५ चकरी, फिरकी।

उ०—फेरी अफरि **फिरणी** सि फेरी, वींद 'रतनसी' वांध वड। धकधूणी फुरळी धौ फुरळी, वेर मिळी सुरतांण घड़।—दूदौ.

६ देखो 'फुरणी' (रू. भे.)

उ०—बिडरी हिरणीं सी **फिरणी** बिजकाती, मुखड़ै मुसकाती जोरो जतळाती। ओळ भक आटा कोळै जिम कुयिगी, हाबर भांमणियां सांमणियां हुयगी।—ऊ. का.

रू० भे०—फरणी।

फिरणौ, फिरबौ–क्रि० अ० [सं० स्फिर] १ इधर-उधर चलना, टहलना। उ०—१ भड़ां लिरीजै हाजरी, नित दीजै मोरांह। जोध **फिरै** गढ़ जाबतै, पै दर पै पोहरांह।—बां. दा.

उ०—२ ढोलउ-मारू पउढ़िया रस-मइं चतुर-सुजांण। च्यारे दिसि चउकी **फिरइ**, सोहड़ भूप जुवांण।—ढो. मा.

२ प्रातःकाल घूमने जाना, भ्रमण करना, घूमना।

३ एक ही स्थान पर गोलाकार स्थिति में घूमना।

उ०—वरहास नास चाचर विखेरि, फारक्क जेम असि **फिरइ** फेरि। आसिरां तणउ ऊजळइ आसि, वेताळि केल्ह चड़ियउ व्रहासि।—रा. ज. सी.

४ दिशा परिवर्तन होना, मुडना।

ज्यूं०—आ गळी आगै यूं **फिरै** है।

५ बार-बार किसी स्थान पर जाना, चक्कर लगाना।

उ०—देखै **फिरती** दूतियां, सूतौ धूंणै सीस। फंसियौ कांमण फंद में, रसियौ करै न रीस। —बां. दा.

६ आवेष्टन होना। उ०—दीन लोक ठहरया कछु देरी, घर हित घणी आनंद री घेरी। **फिरगौ** रतनागर चहुंफेरी, विचरी वासा मीठी वेरी।—ऊ. का.

७ किसी वस्तु की प्राप्ति या लाभ हेतु चेष्टा करना।

उ०—१ ऊंट रै दूजा डील रौ तौ कीं पत्तौ नीं, पण भींड़ी रै माथाकर बधती वा गाबड़ तौ बाड़ी रै चारूं खुणा ठेट मथारा लग सगळै **फिरगी**।—फुलवाड़ी

उ०—२ मोकळ नैं जंगळ मंही, **फिरतौ** मिल्यौ फकीर। स्यांम ताज कफनी असित, सुवरण जिसौ सरीर।—शि. वं.

८ युद्ध-स्थल से हार कर लौटना, भाग आना।

उ०—भड़ सतरै आसुर भाराथै, सिंघी पड़ियौ महमद साथै। जवनां हार थई रण जूटै, **फिरियौ** सेख नगारै फूटै। —रा. रू.

९ पलटना, मुकरजाना।

१० किसी ली हुई वस्तु का वापस होना या लौटना।

११ ग्रहों के अनुसार किसी के दिनमान में परिवर्तन होना।

१२ अस्वस्थतावश असाधारण अवस्था मे होना।

१३ देशाटन करना। उ०—ताहरां वीजाणंद ईडर, वागड़, चांपानेर, कछ सिगळै ही **फिरियौ**।—सयण री बात

१४ व्यर्थ फिरना, भटकना।

उ०—१ कह्यौ—'थांहरौ गढ़ जाजौ। थांरी मत भ्रस्ट हुई, गढ़ तुरकां नूं देईस। तूं तुरकां री (बहू) नूं सेवीस, अखत पढ़ीम, धूड़ खातौ **फिरीस**।—नैणसी

उ०—२ गुण भमतां गुणवंत नैं, बैठां अवगुण जोय। वनिता नैं **फिरिवौ** बुरौ, जो सुकलीणी होय।—वि. कु.

१५ परिभ्रमण करना, चक्कर लगाना।

उ०—सेठ थोड़ा नीचा लुळनै थांभा रै ओळूं-दोळूं **फिरण** लागा। दोनूं धणी-लुगाई नीची धूण करनै थांभा रै चारूं कांनीं फेरा खावण लागा।—फुलवाड़ी

१६ छान-बीन करना, खोज करना।

उ०—१ काबिल कोट तणी विसकांमणि, घाए घूम सिगारि घुरै। फिर फिर अफरि 'रतनसी' फुरळै, फौज अपूठै फेरि **फिरै**।—दूदौ

उ०—२ जद स्वांमी जी पूछ्यौ—थें तीजा पहर नीं गोचरी कहौ। अनैं पहले पहर किम करौ। तब तड़कनैं बोल्या—म्हें तौ धोवण पांणी रै वासतै **फिरां** छां।—भि. द्र.

१७ फैलना, व्याप्त होना। उ०—फटकार हलाहल तें **फिरगौ**, घन आंनंद अम्रित घां घिरगौ। मुसला पर डार सिला महती, गुरु कारज आरज बंस गती। —ऊ. का.

१८ बाधा-स्वरूप होना। उ०—हा मा बाप हमीर हीड़ाऊ, सुपहां दाप सवाया। अगलौ पाप **फिरै** कोइ आडौ, आप निजर नहिं आया।—ऊ. का.

१९ खिलाफ या विपरीत हो जाना।

उ०—संमत १६७९ माहे साहजादौ खुरम पातसाह सुं **फिरीयौ**, चढ़ ऊपर आयौ। —नैणसी

२० चारों ओर प्रचारित होना।

२१ वचनों पर दृढ़ न रहना, मुकरना।

२२ ऐंठना।

२३ शौच करने के लिए बाहर जंगल में जाना।

२४ मृतक के घर सहानुभूति प्रकट करने हेतु जाना।

२५ किसी वस्तु का चारों ओर ऊंचा-नीचा मंडलाकार गति में घूमना, धुरी पर घूमना।

ज्यूं०—माळा फिरणी, चक्की फिरणी।

२६ प्रत्युत्पन्नमति होना, शीघ्र उपजना।

उ०—१ म्हें तौ जांणतौ के किणी रा वखांण करणां में थारी अकल घणी **फिरिया** करै। —फुलवाड़ी

उ०—२ नाईड़ा, मौका माथै थूं आखी जात नै बचायली, नींतर कालै तौ देस निकाळौ मिळण वाळौ इज हौ। म्हारै साथै रह्यां थारी अकल ई खासी **फिरण** लागगी दीसै। —फुलवाड़ी

फिरणहार, हारौ (हारी), फिरणियौ—वि०।

फिराड़णौ, फिराड़बौ, फिराणौ, फिराबौ, फिरावणौ, फिराववौ—प्रे० रू०।

फिरिओड़ौ, फिरियोड़ौ, फिरयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फिरीजणौ, फिरीजबौ—भाव वा०।

फरणौ, फरबौ, फुरणौ, फुरबौ—रू० भे०।

फिरत—सं० स्त्री० [देशज] १ ऊंट, घोड़ा आदि को चाल सिखलाने हेतु दी जाने वाली शिक्षा या प्रशिक्षण।

२ प्रशिक्षित घोड़ा या ऊंट की चाल।

फिरवाज—देखो 'फेरवाज' (रू. भे.)

उ०—अर **फिरवाज** चौपखेर पणि आंगुळां विहुं विहुं रै पहनै री। अर जु विचि छेती तिण मांहि पणि राखा विचारिया।—द. वि.

फिरसत—देखो 'फैरिरत' (रू. भे.)

उ०—परगनै जैतारण रा गांवां री **फिरसत** री गोसवारी।—नैणसी

फिरसतौ—देखो 'फरिस्तौ' (रू. भे.)

उ०—जम के से **फिरसते** लगे असमाण जिनूं के देखै से सूकै मदमसत फीलूं के डांण। फुरकांन इजील तौरत जंबून के निडाह मांन।—सू.प्र.

फिरसांगणि—सं० पु०—एक वृक्ष विशेष।

उ०—गलो गौबल तणस अंवठ, करंजनइ कैळास। विदांम वंणकड सेलपी, **फिरसांगणि** पळास। —रुकमणी-मंगळ

फिरांस—देखो 'फरास' (रू. भे.) (शेखावाटी)

फिराऊ—वि०—१ विरोधी, विपक्षी। उ०—सो हरकारा एक समय बादसाह नूं खबर दीवी जे औ उमराव थां सूं **फिराऊ** होयसे सो इण फिरता पहला इलाज करौ। —नी. प्र.

२ वापस लौटाया जाने वाला।

फिराक—वि०—१ तेज गति से चलने-फिरने वाला।

२ इधर-उधर फिरने वाला।

३ उत्तम चाल से चलने वाला घोड़ा या ऊंट।

सं० स्त्री०—१ टोह, खोज। उ०—अटकतौ-अटकतौ चकवौ बोल्यौ कव्योड़ौ डोचरौ हौद माथै टेरनै वौ दूजी वैन री **फिराक** में निकळे।—फुलवाड़ी

२ चिंता, फिक्र।

३ स्वार्थ-साधन के विचार से आघात, लाभ आदि के उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करते हुए पूरा ध्यान रखने की क्रिया या ढंग, घात।

४ देखो 'फराक' (रू. भे.)

फिराड़णौ, फिराड़बौ—देखो 'फिराणौ, फिराबौ' (रू. भे.)

फिराड़णहार, हारौ (हारी), फिराड़णियौ—वि०।

फिराड़िओड़ौ, फिराड़ियोड़ौ, फिराड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फिराड़ीजणौ, फिराड़ीजबौ—कर्म वा०।

फिराड़ियोड़ौ—देखो 'फिरायोड़ौ' (रू भे.)

(स्त्री० फिराड़ियोड़ी)

फिराणौ, फिराबौ—क्रि० स० ['फिरणौ' क्रि० का प्रे० रू०]

१ इधर-उधर चलाना, टहलाना।

२ प्रातःकाल के समय भ्रमण कराना, घुमाना।

३ एक ही स्थान पर गोलाकार स्थिति में घुमाना।

४ मोड़ना। उ०—रूठर कहै अतर नह रूड़ौ, वूठ न देऊं तार। पूठ **फिराय** पीनसी जंपै, गांधी ऊठ गंवार। —ऊ. का.

५ चक्कर लगवाना, वार वार फेरे लगवाना।

६ आवेष्टन कराना।

७ युद्ध-स्थल से हराकर लौटा देना या भगा देना।

८ पलटावना।

उ०—पग पटकता बोल्या—म्हैं ई नांनांणै जावूंला हळदी-फळदी सू घणौ माल-मत्तौ नीं लावूं तौ म्हारौ नांव **फिराय** दूं।
—फुलवाड़ी

६ किसी ली हुई वस्तु को वापस कराना या लौटाना।

१० देशाटन कराना।

११ व्यर्थ फिराना, भटकाना।

१२ परिभ्रमण कराना।

१३ छान-बीन कराना, खोज कराना।

१४ फैलाना, व्याप्त कराना।

१५ खिलाफ या विपरीत कराना।

१६ वचन-विमुख कराना, मुकराना।

१७ चारों ओर प्रचार कराना।

१८ ऐंठाना।

१९ शौच करने के लिए बाहर जंगल में ले जाना।

२० घोड़े, ऊंट आदि को चाल या गति सीखाना या प्रशिक्षण देना। उ०—पछै ऊंट दोय महिना पाछै घणा आछा **फिराय**, साज-बाज बणाय, सजाय दुरगादास जी नूं मेल्हिया।
—सुंदरदास भाटी बीकूंपुरी री वारता

२१ देखो 'फेराणौ, फेराबौ' (रू. भे.)

फिराणहार, हारौ (हारी), फिराणियौ—वि०।

फिरायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फिराईजणौ, फिराईजबौ—कर्म वा०।

फराणौ, फराबौ, फिराड़णौ, फिराड़बौ, फिरावणौ, फिरावबौ, फेराणौ, फेराबौ—रू० भे०।

फिराद—देखो 'फरियाद' (रू. भे.)

उ०—करणौ प्रतपाळ 'खराडी' कमधज, जांणै जग जाडी मरजाद। छत्रपत घणा प्रवाड़ा छाजै, फिरंगां लग नह करां **फिराद**।
—चांदावत बाघसिंह रौ गीत

फिरायोड़ौ—भू० का० कृ०—१ इधर-उधर चलाया हुआ. २ भ्रमण कराया हुवा, घुमाया हुआ. ३ मोड़ा हुआ. ४ बार-बार फेरे या चक्कर लगवाया हुआ. ५ घेरा हुआ, आवेष्टित. ६ युद्ध-स्थल से हराकर भगाया हुआ. ७ पलटवाया हुआ. ८ किसी ली हुई वस्तु को वापस कराया हुआ, लौटाया हुआ. ९ देशाटन कराया हुआ. १० व्यर्थ फिराया हुआ, भटकाया हुआ. ११ परिभ्रमण कराया हुआ. १२ छान-बीन कराया हुआ, खोज कराया हुआ. १३ फैलाया हुआ, व्याप्त कराया हुआ. १४ खिलाफ या विपरीत कराया हुआ. १५ वचन-विमुख कराया हुआ, मुकराया हुआ. १६ चारों ओर प्रचार कराया हुआ. १७ ऐंठाया हुआ. १८ शौच करने निमित्त बाहर जंगल में ले जाया हुआ. १९ घोड़े, ऊंट आदि को चाल या गति का प्रशिक्षण दिया हुआ.

२० देखो 'फेरायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फिरायोड़ी)

फिरार—देखो 'फरार' (रू. भे.)

फिरारी—देखो 'फरारी' (रू. भे.)

फिराव—सं० पु०—१ चाल गति। उ०—हद चांटी हालतां, हुवा हालत रद होवै। तवि जूनौं सपतास, जिकां कांनी रवि जोवै। चक्र धावां चोगांन, फिरै फूटरा **फिरावां**। कसि ऐड़ा केकांण, आंण दीधा उमरावां। —मे. म.

२ किसी वस्तु के चारों ओर खींची हुई वृत्ताकार रेखा, परिधि, घेरा। उ०—प्रथम ही अयोध्या नगर जिसका बणाव, वारै जोजन तो चौड़े सोलै जोजन की धाव, चोतरफूं के फैलाव चौसठ जोजन के **फिराव**।—र. रू.

फिरावणौ, फिरावबौ—देखो 'फिराणौ, फिराबौ' (रू. भे.)

फिरावणहार, हारौ (हारी), फिरावणियौ—वि०।

फिराविओड़ौ, फिरावियोड़ौ, फिराव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फिरावीजणौ, फिरावीजबौ—कर्म वा०।

फिरावियोड़ौ—देखो 'फिरायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फिरावियोड़ी)

फिरास—देखो 'फरवास' (रू. भे.)

फिरासत—सं० स्त्री० [अ० फ़िरासत] १ दक्षता, प्रवीणता।

२ किसी बात को शीघ्र समझने की क्रिया।

फिरिद—देखो 'फरियाद' (रू. भे.)

उ०—फजर वखत **फिरिद**, कीन्ह जाय मिग्जा कनै। सुण इकतरफा साद, रोकै गढ़वा राखिया। —पा. प्र.

फिरियाद—देखो 'फरियाद' (रू. भे.)

फिरियादी—देखो 'फरियादी' (रू. भे.)

उ०—समंत १६०० रा बीरमदे उदावत रावळ किल्यांणमल बीकानेरीयौ राव मालदे ऊपर पठांण सेरसा पातसाह कन्हा पुरब माहे सेहसरांम तठै जाय **फिरियादी** हुवा। —नैणसी

फिरियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ इधर-उधर चला हुआ, टहला हुआ. २ भ्रमण किया हुआ, घुमा हुआ. ३ एक ही स्थान पर गोलाकार स्थिति में घुमा हुआ. ४ दिशा परिवर्तन हुवा हुआ, मुड़ा हुआ. ५ बार-बार किसी स्थान पर गया हुआ, चक्कर लगाया हुआ. ६ आवेष्टित हुवा हुआ. ७ किसी वस्तु की प्राप्ति या लाभ हेतु चेष्टा किया हुआ. ८ युद्ध स्थल से हार कर लौटा हुआ, भाग कर आया हुआ. ९ पलटा हुआ, मुकरा हुआ. १० किसी ली हुई वस्तु का वापस हुवा हुआ, लौटा हुआ. ११ ग्रहों के अनुसार किसी के दिनमान में परिवर्त्तन हुवा हुआ. १२ अस्वस्थतावश असाधारण अवस्था में हुवा हुआ. १३ देशाटन किया हुआ. १४ व्यर्थ फिरा हुआ, भटका हुआ. १५ परिभ्रमण किया हुआ, चक्कर लगाया हुआ. १६ छान-बीन हुवा हुआ, खोज किया हुआ. १७ फैला हुआ, व्याप्त हुवा हुआ. १८ बाधा स्वरूप हुवा हुआ. १९ खिलाफ़ या विपरीत हुवा हुआ. २० चारों ओर प्रचारित हुवा हुआ. २१ वचन विमुख हुवा

हुआ, मुकरा हुआ. २२ ऐंठा हुआ. २३ शौच हेतु जंगल में गया हुआ. २४ मृतक के घर सहानुभूति प्रकट करने हेतु गया हुआ. २५ किसी वस्तु का चारों ओर ऊंचा-नीचा मंडलाकार गति में घुमा हुआ, धुरी पर घुमा हुआ. २६ शीघ्र उपजा हुआ.
(स्त्री० फिरियोड़ी)

फिरिस्तौ—देखो 'फरिस्तौ' (रू. भे.)

फिरी—देखो 'फिर' (रू. भे.)

उ०—नेम जी हो अरज सुणौ रे वाल्हा माहरी हो राज, राजुल कहइ घरि नेह, घरि रहउ नैं राज। साहिबा एकरस्यउ थे **फिरी** आवउ, घरि रहउ नैं राज। —वि. कु.

फिरीयादि, फिरीयादी—१ देखो 'फरियाद' (रू. भे.)

उ०—अलूखांन एवडु भडवाउ, किम चहूआंणे दीधउ दाउ। बोलइ तुरक द्यांमणइ सादि, आगलि रह्या करइ **फिरीयादि**। —कां.दे.प्र.

२ देखो 'फरियादी' (रू. भे.)

फिरोकड़ौ—वि० [राज० फिरणौ+रा० प्र० श्रोकड़ौ](स्त्री० फिरोकड़ी) अधिक घूमने वाला, भ्रमणशील।

रू० भे०—फरोकड़ौ।

फिरोज—देखो 'फिरोजौ' (रू. भे.)

फिरोजियौ, फिरोजी—वि० [फा०] १ फिरोजे के रंग का।

२ देखो 'फिरोजौ' (अल्पा; रू. भे.)

रू० भे०—पिरोजी, पीरोजियौ, पीरोजी, फीरोजी।

फिरोजौ—सं० पु० [फा० फ़िरोज:] १ नीले रंग का एक नग या बहुमूल्य पत्थर।

पर्याय०—हरितास्म, भस्मांग।

२ उक्त प्रकार के नग या बहुमूल्य पत्थर से मिलता-जुलता रंग।

३ वि० सं० १३५१ के लगभग फीरोजशाह (द्वितीय) द्वारा चलाया गया सिक्का विशेष।

रू० भे०—पइरोज, पइरोजउ, पइरोजौ, पिरोजौ, पीरोजौ, फिरोज, फीरोजौ।

अल्पा०—पीरोजियौ, पीरोजी, फिरोजियौ, फिरोजी, फीरोजी।

फिरोळणौ, फिरोळबौ—देखो 'फुरळणौ, फुरळबौ' (रू. भे.)

उ०—दोनूं ईं काला होय हुरड़ियां देवतां फौज नैं **फिरोळण** लागा।—फुलवाड़ी

फिरोळणहार, हारौ (हारी), फिरोळणियौ—वि०।

फिरोळिओड़ौ, फिरोळियोड़ौ, फिरोल्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फिरोळीजणौ, फिरोळीजबौ—कर्म वा०।

फिरोळियोड़ौ—देखो 'फुरळियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फिरोळियोड़ी)

फिरोळी—सं० स्त्री० [?] उलट-पलट करने की क्रिया या भाव, उलट-पलट।

उ०—**फिरोळी** देवण सारू कूंजड़ौ भखारियां रा आडा खोलिया तौ उण री छाती रा किंवाड़िया खुलग्या।—फुलवाड़ी

फिलम—सं० स्त्री० [अं० फिल्म] १ रासायनिक पदार्थों से बनी एक प्रकार की पट्टी जिस पर फोटू आदि उतारा जाता है।

२ उक्त प्रकार की पट्टी जिसमें सिनेमा के चल-चित्र अंकित होते हैं।

३ उक्त प्रकार की पट्टी से दिखाया जाने वाला चलचित्र या सिनेमा।

फिलमी—वि० [अं० फिल्म+रा० प्र० ई] फिल्म से सम्बन्वित, सिनेमा का।

फिलवांण—देखो 'फीलवांन' (रू. भे.)

उ०—धांम सलांम पिता सूं धारै, आयौ बाहर गयण अधारै। वस घर फील कियौ **फिलवांणै**, आरोह्यौ सीढ़ी पग आंणै।—रा. रू.

फिळसौ—देखो 'फळसौ' (रू. भे.)

उ०—अेक दिन हळदी बाई नांनांणै चाल्या। सगळी साथणिया उण नैं **फिळसा** बारै छोडण आई।—फुलवाड़ी

फिलहाल—क्रि० वि० [अ० फ़िलहाल] इस समय, अभी।

फिळाउगाड़, फिळाउघाड़—देखो 'फळसाउघाड़' (रू. भे.)

फिळियौ—देखो 'फळसौ' (अल्पा., रू. भे.)

फिळौ—देखो 'फळसौ' (रू. भे.)

उ०—१ ग्वाड़ी री **फिळौ** खोलनै वौ मांय वड़ियौ तौ उण नैं अेक डोकरी नीबड़ा री छींयां में वैठी अरटियौ कातती निगै आई।—फुलवाड़ी

उ०—२ नांनेरा वाळा घणै लाड-कोड सू उण नै सीख दी। संभाळां री केई बींदड़ियां घाली। कपड़ा-लत्ता दिया। गैणो-गांठो दियौ। सगळा गांव वाळा उण नैं **फिळा** बारै छोडण नैं आया।
—फुलवाड़ी

फिस—अव्य० [अनु०] १ किसी कार्य में प्राप्त होने वाली असफलता की अवस्था या भाव, कुछ नहीं।

मुहा०—टांय टांय फिस होणी—असफलता मिलना।

२ धिक्। (घृणा-सूचक)

रू० भे०—फुस, फुसकी।

फिसकणौ, फिसकबौ—क्रि० अ० [देशज] १ धोखा खाना। २ वदलना, मुकरना। ३ कायर होना, कमजोर होना।

फिसकणहार, हारौ (हारी), फिसकणियौ—वि०।

फिसकिओड़ौ, फिसकियोड़ौ, फिसक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फिसकीजणौ, फिसकीजबौ—भाव वा०।

फिसकियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ धोखा खाया हुआ. २ वदला हुआ, मुकरा हुआ. ३ कायर हुवा हुआ, कमजोर हुवा हुआ.
(स्त्री० फिसकियोड़ी)

फिसड्डी–वि० [देशज] १ हर काम में पीछे रहने वाला, सुस्त, कमजोर। २ अकर्मण्य, निकम्मा।
रू० भे०—फसड्डी ।

फिसणौ, फिसबौ–क्रि० अ० [देशज] १ हड्डी का स्थान छोड़ना या संधि-स्थान से हटना। (अमरत)
२ द्रवित होना। उ०—इतरौ कहतां तुरत दोनूं भाई गदगद कंठ होय सिलांम करण लागा, **फिस** पड़िया।
—पलक दरियाव री बात
३ जीर्ण वस्त्रादि का स्वतः फटना।
४ बदलना, मुकरना।
५ देखो 'पिसणौ, पिसबौ' (रू. भे.)
फिसणहार, हारौ (हारी), फिसणियौ—वि०।
फिसिओड़ौ, फिसियोड़ौ, फिस्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फिसीजणौ, फिसीजबौ—भाव वा०।

फिसळ, फिसळण–सं० स्त्री० [सं० प्रसरणं] १ फिसलने की क्रिया या भाव, रपटन।
२ ऐसा स्थान जहां चिकनाई के कारण कोई वस्तु नहीं ठहरती हो।
रू० भे०—फसल ।

फिसळणौ, फिसळबौ–क्रि०अ०[राज०फिसळ+णौ] १ चिकनाई एवं गीलेपन के कारण किसी वस्तु का टिकाव न होना, रपटना। उ०—घणी देहसत रै मारै पग उण रौ बिछावणै ऊपर **फिसळियौ**।—नी. प्र.
२ प्रवृत्त होना, लालायित होना, झुकना।
ज्यूं०—उण नै एक रुपयौ दिखावतां ही वो **फिसळगौ**।
३ कहकर बदल जाना, मुकर जाना।
४ पथ-भ्रष्ट होना। उ०—पाका काचा ह्वै गया, जीत्या हारै दांव, अंतकाळ गाफिल भया, दादू **फिसळै** पांव।—दादूवांणी
५ देखो 'फिसणौ, फिसबौ' (१) (रू. भे.)
फिसळणहार, हारौ (हारी), फिसळणियौ—वि०।
फिसळिओड़ौ, फिसळियोड़ौ, फिसल्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फिसळीजणौ, फिसळीजबौ—भाव वा०।
पिसळणौ, पिसळबौ, फसळणौ, फसळबौ—रू० भे०।

फिसळियोड़ौ–भू० का० कृ०—१ चिकनाई एवं गीलापन के कारण रपटा हुआ. २ प्रवृत्त हुवा हुआ, लालायित हुवा हुआ, झुका हुआ. ३ वचन-विमुख या कहकर बदला हुआ, मुकरा हुआ. ४ पथ-भ्रष्ट हुवा हुआ. ५ देखो 'फिसियोड़ौ' (१) (रू. भे.)
(स्त्री० फिसळियोड़ी)

फिसाद–सं० पु० [अ० फ़साद] १ लड़ाई, झगड़ा।
उ०—उदियापुर 'जैंसिघ' रै, सुत सूं थई **फिसाद**। सो धांणोरा आवियौ, 'रांण' विचारै वाद।—रा. रू.
२ टंटा, कलह। उ०—जलाल रौ सूरज सो मुंहडौ मूमनां नूं नजर आइयौ सो मूमना रै हिया में झाळ ऊठी। तरै पासौ न्हाखती हाथ रौ झालो परै जांणां नूं कियौ। जे खोजो नाजर देख लेसी तौ बादसाह नूं कह देसी तौ **फिसाद** होयसी।
—जलाल बूबना री बात
३ उपद्रव, बलवा, विद्रोह। उ०—१ सेरसाह तमांम पठांणां सूं अेकौ कर बिहार देस में **फिसाद** किवी। दिल्ली रौ राह बंद कियौ।—बां. दा. ख्या.
उ०—२ मुलक मे **फिसाद** दीसै तीसूं अमरसिंह जी नूं बुलाय बादसाह सलामत फेर फरमाई।—ठा. राजसी री वारता
४ बिगाड़, खराबी।
रू० भे०—फसाद।
अल्पा०—फिसादिक, फिसादिय, फिसादी।

फिसादिक, फिसादिय, फिसादी–वि० [अ० फ़सादी] १ लड़ाई-झगड़ा करने वाला, झगड़ालू। उ०—तद करणसिंघ जी पातसा जी सूं सारौ हवाल मालम करायौ, उजीर सादलैखां खना सूं जो हजरत अमरसिंघ **फिसादी** है सीख देवौगै तौ करणसिंघ बिना सीख जावैगा अरु फिसाद होवैगा।—द. दा.
२ बिगाड या खराबी करने वाला।
३ उत्पाती, उपद्रवी।
४ दंगा या बलवा करने वाला।
५ देखो 'फिसाद' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—दिन दिन जोर वधै बळ दाखै, आंण' अजीत' तणी मुख आखै। वादै सो हारै समवादी, सोबै सोबै वधै **फिसादी**।—रा. रू.
रू० भे०—पिसादिय, फसादी।

फिसियोड़ौ–भू० का० कृ०—१ सन्धि स्थान से अलग हुवी हुई हड्डी. २ द्रवीभूत हुवा हुआ. ३ जीर्ण वस्त्रादि स्वतः फटा हुआ. ४ बदला हुआ, मुकरा हुआ. ५. देखो 'पिसियोड़ौ' (रू.भे.)
(स्त्री० फिसियोड़ी)

फिहौ—देखो 'फियौ' (रू. भे.)

फींकर—देखो 'फीकर' (रू. भे.)

फींच–सं० पु० [सं० स्फिच] (ब० व० फींचां) १ पशुओं व मनुष्यों के चूतड़ के नीचे का भाग।
उ०—१ जद जांण्यौ कपड़ौ इ लेजासी अनै ऊंट इ लेजासी। इम बिचार तरवार सूं ऊंट नी **फींचा** काटी मार न्हांख्यौ।—मि. द्र.
उ०—२ आसोजां रौ कुजरबौ तावड़ौ। चारूंमेर जांणै झाळां दाझै। लांबी मांय। भांवी परसेवा में धांण व्हैगौ। उण री **फींचा** तूटण लागी।—फुलवाड़ी
रू० भे०—फीच।

फींचणौ, फींचबौ—देखो 'फीचणौ, फीचबौ' (रू. भे.)
फींचणहार, हारौ (हारी), फींचणियौ—वि०।

फींचिग्रोड़ौ, फींचियोड़ौ, फींच्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फींचीजणौ, फींचीजबौ—कर्म वा० ।

फींचियोड़ौ—देखो 'फीचियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फीचियोड़ी)

फींचियौ-सं० पु० [देशज] दौड़ते या चलते हुए के पीछे पैरों में इस प्रकार अड़ाई जाने वाली लात कि जिससे वह लड़खड़ा कर गिर जाय, लत्ती ।
क्रि० प्र०—दैणौ, मारणौ ।

फींडौ-वि० [देशज] (स्त्री० फीडी) चपटी नाक वाला ।
उ०—तोरूं री धारियां रै उनमांन ई मूंडा माथै अणगिण सळ । मींडका री गळाई **फींडौ** नाक ।—फुलवाड़ी

फींण—देखो 'फैण' (रू. भे.)
उ०—१ झड़ै **फींण** घोड़ां मुखे सेत झारा, तिकै जांणि ऊगा धरा वीज तारा ।—सू. प्र.
उ०—२ सो किण भांति तळाव जांणै दूसरौ मांनसरोवर रातासी एके रडि रै माथै पांडरौ नीर पवन रौ मारिग्रौ कराहै **फींण** आछटतौ ठेपां खाइनै रहिग्रा छै । —रा. सा. सं.

फींणौबाटियौ-सं० पु०—देखो 'फीणाबाटी' (अल्पा., रू. भे.)

फींदी-सं० स्त्री० [देशज] (ब० व० फीदियां) बिखरा हुआ छोटा टुकड़ा, विभक्त भाग ।
उ०—सिंघ रै दौड़तां ईं पूंछां तणीजी, गांठ घणी घुळगी । बांदरौ लारै ठिरड़ीजतौ गियौ । सिंघ किणरी परवा करै । उणनै तौ आपरा जीव री पड़ी ही । वौ तौ दौड़तौ ई गियौ अर गांठ घुळती ई गी । बांदरा री **फींदी फींदी** बिखरगी ।—फुलवाड़ी

फींफड़ौ—देखो 'फैफड़ौ' (रू. भे.)
उ०—राजकंवर रै कांनां रा पड़दा जांणै फाटण लागा । उण रा **फींफड़ा** जांणै चीरीजण लागा ।—फुलवाड़ी

फींफर, फींफरड़—देखो 'फैफड़ौ' (मह., रू. भे.)
उ०—१ छैलां छोगाळां छक्का छूटोड़ा, फिरतां फिरतां रा **फींफर** फूटोड़ा ।—ऊ. का.
उ०—२ **फींफरड़** फूट गोळा गजां फरहड़ै, जंगी हौदा गजां खड़हड़ै जौम । धड़हड़ै धौम वे मुसाहब लड़ै धर, विहुं साहब हंसै हड़हड़ै वौम ।—हुकमीचंद खिड़ियौ

फींफरौ—देखो 'फैफड़ौ' (रू. भे.)
उ०—१ घणी तरवारियां रा वाढ़ ऊछळै छै । घणी वरछी आघोसलै नीसरी छै । सिलै अंग सायै कटै छै । वड़ाका, **फींफरा** बोल रहिया छै ।—सूरे खीवे कांधळोत री बात
उ०—२ गुलावां मीरजां निवाबां गाहटै, गळोवळ घातियां हेत गाढ़ै । फरोळै पांखड़ी आंत उर **फींफरा**, काळजा कंज-लत भमर काढ़ै । —तेजसिंघ सेखावत रौ गीत

फी-सं० स्त्री०—१ तिरस्कार सूचक शब्द जो किसी व्यक्ति के पूर्ण तैयारी या मुस्तैदी से कार्य करने पर भी वह असफल रहता है तब प्रयुक्त किया जाता है ।
२ देवता । (एका०)
३ वायु । (एका०)
४ हाथी । (एका०)
[फा०] ५ नुक्स, दोष, विकार । (एका०)
६ कसर, न्यूनता । (एका०)
मुहा०—फी निकळणी—निम्न स्तर या न्यूनता प्रकट होना ।
[अं० फी] ७ फीस ।
अव्य० [अ० फी] प्रत्येक, हर एक ।

फीक-सं० स्त्री० [देशज] १ विशेष दशा में मुख के स्नायुयों की वह स्थिति जिससे किसी भी खाद्य पदार्थ के खाने पर उसका स्वाद न आता हो, मुख का फीकापन । (रोग)
२ आवश्यक, उपयुक्त अथवा यथेष्ट मात्रा में मिठास या नमकीन पदार्थ के अभाव में होने वाली मुख की स्थिति ।
३ किसी खाद्य पदार्थ की स्वादरहित अवस्था ।

फीकर-सं० पु० [देशज] हिरण या वकरे के पीठ या पिछले पैर के ऊपर के हिस्से (पींडि) का मांसपिंड जो धोने से साफ एवं श्वेत हो जाता है ।
उ०—घणा मसाला दीजै छै । लवांरौ मांस होसनाक सुधारै छै । वकरां रा **फीकर** गरम पांणी सू धोयजै छै । ललाई मिटायजै छै ।
—रा. सा. सं.
रू० भे०—फींकर ।

फीकरियौ-वि० [देशज] नीरस, रूखा, फीका ।
उ०—बाळूं बावा देसड़उ, जहां **फीकरिया** लोग । एक न दीसइ गोरियां, घरि-घरि दीसइ सोग ।—ढो. मा.

फीकास-सं० पु०—देखो 'फीक ।

फीकौ-वि० [देशज] (स्त्री० फीकी) १ स्वादहीन, स्वादरहित ।
उ०—नांनग सरवर भरियौ नीकौ, झुकै लोग पीवण दे झीकौ । ठग-बाजी गादी रौ ठीकौ, फेर सिकां कर दीनौ **फीकौ** ।—ऊ. का.
क्रि० प्र०—होणौ ।
२ उदासीन, खिन्नचित्त । उ०—१ तद चार वारे'क तौ नटियौ पण वादसाह फेर गाढ़ कर पूछी जद चारण वांण चाढ़ दूहौ कहियौ सो वादसाह सुंण घणां मांणसां रै सुणतां फरमाई—जे उस रोज तौ 'केसरिया' असा हीज हुवा । तौ सगळा देखता ही जे रहि गया । चुगलखोरां रौ मुंह **फीकौ** पड़ गयौ ।—पदमसिंह री बात
३ अपमानित, लज्जित ।
उ०—सिहदेव हाडापणां नूं **फीकौ** दिखाइ नीचा नेत्र करि पाछौ दिल्ली पूगौ ।—वं. भा.

क्रि० प्र०—दिखाणौ, पड़णौ, पटकरणौ, लगाणौ ।

४ निष्प्रभ, कान्तिहीन, मलिन । उ०—१ खूटौ बीजरण कणलांचै खड़ खूटौ, छपनैं प्रळयागम पावन पड़ छूटौ । **फीका** चैं'रा पड़ **फीका** द्रग फेरैं, हाहा ! ऊंडा दिन भूं डा भय हेरैं ।—ऊ. का.

उ०—२ अमलां थें उदमादिया, सैंणा हंदा सैंण । तौ बिन घड़ी न आवड़ै, **फीका** लागै नैरण ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—पड़णौ ।

५ तुच्छ, हीन । उ०—पाक्योड़ा आंबा री गळाई उरण री पीळौ-जरद रंग हौ, कंचन री जात । फेर पूछौ तौ सोना री दमक ई उण रै आगै **फीकी** लागै । कागला रै अेक आंख देखनैं इचरज व्हियौ । —फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—लागणौ ।

६ प्रभावहीन ।

क्रि० प्र०—होणौ ।

७ नीरस, रूखा, शुष्क । उ०—१ रांम बिना सब **फीकै** लागैं, करणी कथा गियांन । सकळ अविरथा कोटि कर, 'दादू' योग धियांन ।—दादूवांणी

उ०—२ पण दूजोड़ी री जीभ जांणौं मिसरी बणियोड़ी ही, वा मिठाय-मिठायनैं गडकाई सूं **फीकी** बात नै ई मीठी बणाय देती । —फुलवाड़ी

८ आनन्दविहीन, उल्लासरहित, उमंगहीन ।

उ०—राजा अबै करै तौ कांई करै । टीलोड़ी विना राजा री सैंग उच्छब **फीकौ** ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—लागणौ ।

९ सारहीन, निस्सार । उ०—तन सौं सुमिरण कीजियैं, जब लग तन नीका । आतम सुमिरण ऊपजै, तब लागै **फीका** ।—दादूबांणी

१० अलोना । उ०—वांणियौ अेक कवौ लियौ तौ उण नै खीचड़ी **फीकी** अर बिना घी री लागी ।—फुलवाड़ी

११ ओजहीन । उ०—मंत्री मुळकनै कह्यौ—हाल अंदाता री ऊमर ई कांई व्ही है । पच्चीस बरसां रा भर मोट्यार तौ आप रै सांमी **फीका** लागै ।—फुलवाड़ी

१२ तुच्छ, हल्का । उ०—लक्खी सोळै सिरणगार करियां पातसाह रै जोड़ै बैठी ही । उरण रै रूप रा बखांण वास्तै सगळी ओपमावां **फीकी** लखावती ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—लागणौ ।

१३ किसी कार्य का अभीष्ट परिणाम न निकला हो ।

ज्यूं ०—अबकै मांमलौ **फीकौ** रियौ ।

क्रि० प्र०—रहणौ ।

१४ अप्रिय, असुहावना । उ०—फुरियौ भादरवौ धुरियौ नह **फीकौ**, नीरदरज आगै लागै नह नीकौ । तिसिया संगारा भू पर नर तिरसै, बिसिया अंगारा ऊपर सूं बरसै ।—ऊ. का.

क्रि० प्र०—लागणौ ।

१५ न्यूनता, कमी ।

ज्यूं ०—इण री रंग **फीकौ** है ।

क्रि० प्र०—होणौ, पड़णौ ।

१६ निष्फल ।

१७ नगण्य । उ०—बाकी सगळा फळ इरण अेक नींबू आगै **फीका** है ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—होणौ ।

फीच—देखो 'फींच' (रू.भे.)

उ०—कनोती लोय दीवै, मगर लादक अछी, छोटी पड़छी, पूठ बाथां न मावै, पूछी चबर दावै, **फीचां** घनख जैसी, काछ नारंगी तैसी, अैसा घोड़े राव चाकरां रै हाथां में काढ़णा ।—रा. सा. सं.

फीचणौ, फीचबौ—क्रि० स० [राज० फींच + रा० प्र० णौ] लत्ती लगाना ।

फीचणहार, हारौ (हारी), **फीचणियौ**—वि० ।

फीचिओड़ौ, फीचियोड़ौ, फीच्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फीचीजणौ, फीचीजबौ—कर्म वा० ।

फींचणौ, फींचबौ—रू० भे० ।

फीचियोड़ौ—भू० का० कृ०—लत्ती लगाया हुआ.

(स्त्री० फीचियोड़ी)

फीट—अव्य० [देशज] १ फोकट । २ तुरन्त ।

सं० पु०—१ फीकापन ।

२ देखो 'फिट' (रू. भे.)

३ देखो 'फिटौ' (मह., रू. भे.)

उ०—आंघौ टूंटौ पांगलौ, कोढ़ियौ जार चोर । मरि **फीट** जाइ बोल तुं, कह्या वचन कठोर ।—स. कु.

४ देखो 'फुट' (रू. भे.)

फीटणौ, फीटबौ—क्रि० अ० [देशज] नाश होना ।

उ०—जैहनै नांम स्मरण थी, **फीटै** सगला फंद । मंदमती पंडित हुवै, दूरि टलै दुख दंद ।—वि. कु.

फीटणहार, हारौ (हारी), **फीटणियौ**—वि० ।

फीटिओड़ौ, फीटियोड़ौ, फीट्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फीटीजणौ, फीटीजबौ—भाव वा० ।

फीटियोड़ौ—भू० का० कृ०—नाश हुवा हुआ.

(स्त्री० फीटियोडी)

फीटोकड़,फीटोकड़ौ—देखो 'फीटौ' (अल्पा., रू. भे.)

(स्त्री० फीटोकड़ी)

फीटौ—सं० पु० [देशज] (स्त्री० फीटी) १ बेशर्म, निर्लज्ज ।

उ०—१ मूंछां डाढी मूंह फूंकदै बाळै **फीटा** । धुक धुक दै नित धुवां, काळजा करदै कीटा ।—ऊ. का.

उ०—२ रमणीं बरहीनां निरख नबीनां, रांम रांम रणकंदा है, कंद्रप रा कीटा फबतन **फीटा**, भंवर गुफा भणकंदा है ।—ऊ. का.

२ ढीट, धृष्ट । उ०—मळ साध सदा सुख भेंटन कौ, फिर **फीटन**

देवन फेटन कौ। भ्रम भंजन कौ मल छक्क भरयौ, कवि ऊमर त्रौटक छंद करयौ।—ऊ. का.

३ झूठा। उ०—१ पछै ए पात्रा खोलवारी घणी खांच कीधी, जद घणां लोक देखतां पात्रा उघाड़्या। लाडू न दीठा जद ए घणां फीटा पड़्या।—मि. द्र.

उ०—२ काछवौ खिरगोसिया सूं जवारड़ा करिया। खिरगोसियौ लचकांणौ होयनै फीटी हंसी हंसियौ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—पड़णौ।

४ अश्लील, अपशब्द।

उ०—जद साहुकार वरज्यौ। इण ठांम तमासौ मत करौ। लुगायां बहू बेटी सुणें थें मूंहढ़ा सूं फीटा बोलौ।—मि. द्र.

क्रि० प्र०—बोलणौ।

वि०—१ लज्जित, शर्मिन्दा।

उ०—मगरमच्छ फीटौ पड़नै होळै सूं सिरकतौ सिरकतौ झील में वड़ग्यौ।—फुलवाड़ी

२ अपमानित।

अल्पा०—फीटोकड़, फीटोकड़ौ।

फीण—देखो 'फैण' (रू. भे.)

उ०—तिकौ तळाव किण भांत रौ छै, राती वरडी रौ पांडरौ नीर, पवन रौ मारियौ फीण आछंटतौ थकौ झोळा खाय रह्यौ छै।
—रा. सा. सं.

फीणनांखतौ—सं० पु०—ऊंट। (डिं. को.)

फीणनाग—सं० पु० [सं० फेणः+नाग] अफीम। उ०—रैणां डंड अडंडा गवावै भींच वाघरा का, खागरा का भूरडंडां अरंद्रां खांणास। पड़ै घाका खंडखंडां फीणनाग रा का पीघां, वाही आगरा का झंडां ऊपरै वांणास।—गिरवरदांन कवियौ

फीणाबाटी, फीणारोटी—सं० स्त्री०—एक विशेष प्रकार की रोटी जिसे एक बार बेलकर घी डालकर पुनः बेलते हैं, एक प्रकार का पराठा।

अल्पा०—फींणौबाटियौ।

फीणी—सं० स्त्री० [सं० फेनिका] १ स्त्रियों के नाक में पहनने का आभूषण विशेष। उ०—बनी ए थांनै लाद्यां सांचा मोती थैं क्यां में बैठ पुवाती, बना जी मैं फीणी में रे पुवाती, नकवेसर बैठ जड़ाती।—लो. गी.

२ मैदे की बनी गोल एवं चपटाकार मिठाई जिसमे सूत के धागों की भांति रेशों का जाल होता है।

रू० भे०—फेणी, फेनी।

फीणौ—सं० पु० [देशज] लकड़ी के उन दो गुटकों में से एक जो रहट के ऊपरी दोनों लट्ठों को अपने स्तम्भ के साथ मजबूती से जोड़ने के लिए 'डांड' और 'पूळ' के बीच लगाया जाता है।

फीत—सं० स्त्री० [फ़ा० फीतः] १ सैनिक विभाग में पदोन्नति के समय दिया जाने वाला चिन्ह विशेष।

२ देखो 'फीतौ' (मह., रू. भे.)

फीतौ—सं०पु० [पुर्त्त० फीता] १ सूत आदि की बनी वह पतली धज्जी जो किसी का नाप लेने के काम आती है।

२ कपड़े या सूत की वह पतली धज्जी जो किसी वस्तु को बांधने या लपेटने के काम आती है। ३ चौड़ी पट्टी वाला गोटा।

मह०—फीत।

फीदौ—वि० [देशज] खोखला।

उ०—कठा री तेलण कठा रौ पळौ, पाड़ोसण मांगै खळ रौ डळौ। अेक गवूं वौ ई फीवौ, नित उठ कंथ करावै सीदौ।—फुलवाड़ी

फीनसताई—सं० स्त्री० [देशज] तारीफ, प्रशंसा।

उ०—पांच-पांच दस-दस इकलाळिया दांइदा भेळा बैठा छै। मुनहारां हुय रही छै। घणी फीनसताई चोज लियां आरोगजै छै।
—रा. सा. स.

फीफर—देखो 'फैंफड़ौ' (मह., रू. भे.)

उ०—ताहरां राखायत दीठी। आपरौ फीफर वाढ़ि अर ग्रीझ मारी छै। नहीं तौ ग्रीझ म्हारी आंख काढ़त।—नैणसी

फीफरड़—देखो 'फैंफड़ौ' (रू. भे.)

उ०—छिल बहत धक-धक अछक छक, अंतराळ गरळक ढुल इधक। फीफरड फरडक नद फरक, हुय विढ़क हक-हक वीरहक।—र. रू.

फीफरड़ू—देखो 'फैंफड़ौ' (मह., रू. भे.)

फीफरियू—देखो 'फैंफड़ौ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—मिल थट्ट वगट्ट सुभट्ट मिलं, दुजडाहत 'पाल' भिड़ै दुझलं। फरड़ाहक बोलत फीफरियूं, करवा हत 'पाल' करै मरियूं।—पा. प्र.

फीफरौ—देखो 'फैंफड़ौ' (रू. भे.)

फीयौ—देखो 'फियौ' (रू. भे.)

फीरोजी—१ देखो 'फिरोजी' (रू. भे.)

२ देखो 'फिरोजौ' (अल्पा., रू. भे.)

फीरोजौ—देखो 'फिरोजौ' (रू. भे.)

फील—सं० पु० [फा० फ़ील=सं० पीलुः] १ हाथी।

उ०—बंध ग्राह दरीयाव वीच, पड़ संघट फील पुकारियां। ईस-ऊबाहण-पाय आय, घर हत्थूं सूंड उधारियां।—र. ज. प्र.

२ एक प्रकार का वाण।

फीलखांनौ—सं० पु० यौ० [फा०फ़ीलखानः] वह स्थान जहां हाथी बांधा जाता है, हस्तिशाला।

फीलचराई,फीलचरावणी—सं० स्त्री० यौ० [फा० फीलः+राज० चराई, चरावणी] हाथी को चराने पर लिया जाने वाला कर।

उ०—सलावतखांन अरज करी—जे राव फीलचरावणी न देवै और पण लाजमे रा जवाव-सवाल न करै। तौ वादसाह फरमाई—फीलचराई लेवौ।—अमरसिंह गजसिंहोत राठौड़ री वात

फीलवांन—सं० पु० यौ० [फा० फीलः+सं० वान्] हाथीवान, महावत।

फीळाउगाड़, फीळाउघाड़—देखो 'फळसाउघाड़' (रू. भे.)

फील्ड–सं० पु० [अं०] १ मैदान। २ खेत। ३ खेल का मैदान।

फीस–सं०स्त्री० [अं० फी] १ कर, शुल्क।

२ मेहनताना, पारिश्रमिक।

क्रि० प्र०—दैणी, भरणी, लैणी।

फीहौ—देखो 'फियौ' (रू. भे.)

उ०—ताप सन्निपात जांणी अतीसार संग्रहांणि, **फीहौ** विघराल पांडु गोला सूल खैंण है।—ध. व. ग्रं.

फुंआरौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फुंकणौ, फुंकबौ—देखो 'फूंकणौ, फूंकबौ' (रू. भे.)

फुंकणहार, हारौ (हारी), फुंकणियौ—वि०।

फुंकाड़णौ, फुंकाड़बौ, फुंकाणौ, फुंकाबौ, फुंकावणौ, फुंकावबौ—प्रे० रू०।

फुंकिओड़ौ, फुंकियोड़ौ, फुंक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फुंकीजणौ, फुंकीजबौ—कर्म वा०।

फुंकाड़णौ, फुकाड़बौ—देखो 'फुंकाणौ, फुंकाबौ' (रू. भे.)

फुंकाड़णहार, हारौ (हारी), फुंकाड़णियौ—वि०।

फुंकाड़िओड़ौ, फुंकाड़ियोड़ौ, फुंकाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फुंकाड़ीजणौ, फुंकाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फुंकाड़ियोड़ौ—देखो 'फुकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुंकाड़ियोड़ी)

फुंकाणौ, फुंकाबौ–क्रि० स० [राज० 'फूंकणौ' क्रि० का प्रे० रू०]

१ मुह को संकुचित करवा कर फूंक निकलवाना।

२ फूंकने का कार्य करवाना। ३ मंत्रादि पढ़ा कर किसी पर फूंक मारने के लिये प्रवृत्त करवाना। ४ जलवाना, भस्म करवाना। ५ नष्ट करवाना, नाश करवाना। ६ किसी धातु का रासायनिक रीति से भस्म बनवाना। ७ सताने के लिये प्रेरित करवाना।

८ मुह से बजाए जाने वाले वाद्यों को फूंक लगवा कर बजवाना।

फुंकाणहार, हारौ (हारी), फुंकाणियौ—वि०।

फुंकायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फुंकाईजणौ, फुंकाईजबौ—कर्म वा०।

फुंकाड़णौ, फुंकाड़बौ, फुंकावणौ, फुंकावबौ, फूंकाड़णौ, फूंकाड़बौ, फूंकाणौ, फूंकाबौ, फूंकावणौ, फूंकावबौ—रू० भे०।

फुंकायोड़ौ–भू० का० कृ०—१ मुंह को संकुचित करवा कर फूंक निकलवाया हुआ. २ फूंकने की क्रिया करवाया हुआ. ३ मंत्रादि पढा कर किसी पर फूंक मारने के लिये प्रवृत्त कराया हुआ. ४ जलवाया हुआ, भस्म करवाया हुआ. ५ नष्ट करवाया हुआ, नाश करवाया हुआ. ६ किसी धातु का रासायनिक रीति से भस्म बनवाया हुआ. ७ सताने के लिये प्रेरित कराया हुआ. ८ मुंह से बजाए जाने वाले वाद्यों को फूंक लगवाकर बजवाया हुआ.

(स्त्री० फुंकायोड़ी)

फुंकार—देखो 'फूंकार' (रू. भे.)

फुंकारी–वि० [अनु०] फूत्कार करने वाला।

सं० पु०—१ सर्प, सांप। (अ. मा.)

२ देखो 'फूंकार' (अल्पा., रू. भे.)

फुंकारौ–सं० पु०—१ विश्राम, आराम।

२ देखो 'फूंकार' (अल्पा., रू. भे.)

रू० भे०—फुणकारौ।

फुंकावणौ, फुंकावबौ—देखो 'फुंकाणौ, फुंकाबौ' (रू. भे.)

फुंकावणहार, हारौ (हारी), फुंकावणियौ—वि०।

फुंकाविओड़ौ, फुंकावियोड़ौ, फुंकाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फुंकावीजणौ, फुंकावीजबौ—कर्म वा०।

फुंकावियोड़ौ—देखो 'फुंकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुंकावियोड़ी)

फुंकियोड़ौ—देखो 'फूंकियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुंकियोड़ी)

फुंणाळ—देखो 'फणाळी' (मह., रू. भे.)

उ०—जहर छक **फुंणाळां** ऊक ऊटै जिकां, असी किरवांण संभरी तणी आज। घणं दईवांण वीराण बाहण घण, निजुड़ै सिंधुरां कंध नाराज।—भगतरांम हाडा री तरवार रौ गीत

फुंणौ—देखो 'फुणौ' (रू. भे.)

फुतरकौ—देखो 'फूंतरौ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—कूंजड़ौ तौ आखती-पाखती रा गांवां में कांदां रौ **फुंतरकौ** ई नी छोड्यौ।—फुलवाड़ी

फुंद—देखो 'फौंद' (रू. भे.)

फुंदळ, फुंदल, फुंदाळ, फुंदाल—देखो 'फौंदाळौ' (मह., रू. भे.)

उ०—तिहां वेठा बत्रीसलक्षणा पुरुस दुंदला-**फुंदला** जाकजमाला, मुंछाला।—व. स.

फुंदाळौ, फुंदालौ—देखो 'फौंदाळौ' (रू. भे.)

उ०—तिहां वइठा बत्रीसलक्षणा पुरुस, फांदाला-**फुंदाल** दुंदाला भाक-झमाला, सुंहाला, आंखि अणीआला।—व. स.

(स्त्री० फुंदाळी, फुंदाली)

फुंदी—देखो 'फूंदी' (रू. भे.)

फुंदौ—देखो 'फूंदौ' (रू. भे.)

फुंफकार—देखो 'फूंकार' (रू. भे.)

फुंफकारौ—देखो 'फूंकार' (अल्पा., रू. भे.)

फुंफाड़ौ—देखो 'फूंफाड़ौ' (रू. भे.)

फुंबी–सं० स्त्री० [सं० पृथ्वी, प्रा० प्रहवी] १ वर्षा ऋतु में उत्पन्न होने वाला एक प्रकार का भू-फोड़ जो सफेद रंग का होता है।

२ देखो 'फूंभी' (रू भे.)

रू० भे०—फंबी, फूंबी, फूंभी, फूबी।

फुंबौ-सं० पु० [देशज] रुई का लच्छा या वस्त्र खंड ।
रू० भे०—फबौ, फवौ, फूंबौ, फूंभौ, फूहौ, फोग्रौ, फोयौ, फोहौ, फौहौ ।

फुंवार—देखो 'फंवारौ' (मह., रू. भे)

फुंवारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फुसहलि-
उ०—मंकड नागवल्लीदलि किसिउं करइ, छाली **फुंसहलि** किसिउं करइ, खल्वाट, सिर कंकणबंधि किसिउं करइ ।—व. स.

फुंसी-स० स्त्री० [सं० पनसिका, प्रा० फनस] छोटा फोड़ा ।
रू० भे०—फुणसी ।

फुंहार—देखो 'फंवारौ' (मह., रू. भे.)
उ०—चादर हौज **फुंहार** नीर चलि, अम्रत नदी आय किर ऊमळि । रंजत सुजळ केइक अंतरामैं, केइक होद भरया कुमकुम्मै ।—सू. प्र.

फुंहारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)
उ०—एकल गिड वाराहूं की दंतळूं झड़ ओझड़ असैं दरसावै । स्रोण के **फुंहारैं** आसमांन को छूटैं ।—सू. प्र.

फु-सं०पु०—१ कातिक मास । २ कृतज्ञता । ३ गुण । ४ विलम्ब । (एका०)

फुआरौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फुकनीवाज-वि०—बकवाद करने वाला, व्यर्थ की बातें करने वाला ।

फुकार-सं० स्त्री० [?] १ आवाज, शब्द ।
उ०—यु करतां मेर पच्चीस टका घांमीया । तरैं रजपूत लीया । पिण **फुकार** जसवंत जी तांईं जांण दीधी नहीं, डर रा घालीया ।
—राव मालदे री बात
२ देखो 'फूंकार' (रू. भे.)

फुगतरौ-सं० पु० [देशज] १ छिलका, छाल । २ चमड़ा ।

फुड़कली—देखो 'फिरकी' (रू. भे.)
उ०—उणरा डील में झाळ-झाळ ऊठगी । माथौ **फुड़कली** रै उनमांन घरणाटी चढ़ग्यौ । —फुलवाड़ी

फुट-सं० पु० [अं०] १ एक नाप विशेष जिसमें बारह इंच होते हैं ।
२ एक उपकरण जो किसी वस्तु का नाप लेने के काम आता है तथा जिसमें १२ इंच के निशान होते हैं ।
रू० भे०—फीट ।

फुटकर-वि०—१ अलग, पृथक ।
२ वह जो किसी विशेष वर्ग या मद से न हो, जो अपना पृथक स्थान बनाता हो, भिन्न भिन्न या अनेक प्रकार का, कई मेल का ।
उ०—सोझत था कोस ५ दिखण नुं । बांमण, लुहार, **फुटकर** कूंपावतां रौ उतन । खेत कंवळा ।—नैणसी
३ माल या सौदा जो इकट्ठा या एक साथ न हो बल्कि पृथक पृथक या खण्डों मे आता हो, थोक का विपर्याय ।
ज्यूं०—**फुटकर** माल री दुकान ।
यौ०—फुटकरखरच ।

फुटनोट-सं० पु० [अं०] किसी लेख या पृष्ठ के नीचे के भाग में अलग से दी जाने वाली टिप्पणी जो किसी अर्थ-विशेष को स्पष्ट करती है ।

फुटबोल-सं० स्त्री० [अं०] एक प्रकार की बड़ी गेंद जिसके अन्दर रबड़ का ब्लैडर तथा ऊपर चमड़े का आवरण होता है और जिसमें हवा भर कर पैर से खेलते हैं ।

फुटरौ—देखो 'फूटरौ' (रू. भे.)
उ०—प्रीतम मारा ममरलां जी, कांइक कीजै संक । फुल्या दीसै **फुटरां** जी, आफु आडै अंक ।—वि. कु.

फुटस्सणि—
उ०—कांसा भांणा माहि, त्रिसक तीनह सति कडयडि मोडि वीणिउ, **फुटस्सणि** धोइउ, हितूईइं ऊर गढ़ी वेडं पग देउनइ ।
—व. स.

फुट्टणौ, फुट्टबौ—देखो 'फूटणौ, फूटबौ' (रू. भे.)
उ०—ब्रहमंड किनां **फुट्टौ** वळै, घसक तळातळ आतळै । मुखै हसै सकति महाबळ, वेताळा कुळ व्याकुळै ।—मा. वचनिका
फुट्टणहार, हारौ (**हारी**), **फुट्टणियौ**—वि०।
फुट्टिओड़ौ, फुट्टियोड़ौ, फुट्ट्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुट्टीजणौ, फुट्टीजबौ—भाव वा० ।

फुट्टियोड़ौ—देखो 'फूटियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुट्टियोड़ी)

फुड, फुडवि-वि० [सं० स्फुट] १ प्रकट, साफ, स्पष्ट ।
उ०—१ एतइं राखसु रोसि जलतु, आवइ **फुड** फेकार करंतु । वेटी बूसट मारइ जांम भीमु भिडेवा ऊठिउ ताम ।—सालिभद्रसूरि
उ०—२ जिणि दिणि दुल्लभ सभा सखर खरतर जे तिण दिणि, पडिवोहिय चांमुंड **फुडवि** खरतर जे तिणि दिणि । जिणीय वाद छद्मइ मासि **फुड** खरतर तिणि दिणि ।—अभयतिक यती
२ हृष्ट-पुष्ट ।
सं० पु०—१ मुसलमान ।
२ उपस्थ ।
अल्पा०—फुडियौ, फुडौ ।

फुडियौ, फुडौ—देखो 'फुड' (अल्पा., रू. भे.)

फुणंद, फुणंद्र-सं० पु०—देखो 'फणींद' (रू. भे.)
उ०—चढ़ता थट वळै मेलिया चढ़तइ, जांनी आप जिसा घण जांण । इंद्र **फुणंद्र** नागिंद्र निरखतां, वरणवजइ केहा वाखांण ।
—महादेव पारवती री वेलि

फुण—सं० पु०—१ पवन। (ना. डि. को.)

२ देखो 'फरण' (रू. भे.)

उ०—हिरनमै पन्न हीरै जडित्त, सांकळा करग्गै सुसोभित। मुद्रका सुकर-साखा सुभग्ग, मिरण जांण दिपै **फुण** सेस नग्ग।
—गु. रू. बं.

३ देखो 'फुणौ' (मह., रू. भे.)

फुणकलौ—सं० पु०—छोटा फोड़ा, फुन्सी।

उ०—नारी मिली पुण्य जोग, पिरण देही ने ग्रांण घेरचौ रोग, फोड़ा **फुणकला** छलबल ग्रारौ।—जयवांणी

मह०—फुणगल।

फुणकार—देखो 'फरणकार' (रू. भे.)

उ०—सांप री **फुणकार** सुरणनै बिचिया तौ बापड़ा दावड़ नै भेळा व्हैगा।—फुलवाड़ी

फुणकारौ—१ देखो 'फरणकार' (ग्रल्पा., रू. भे.)

उ०—कमेड़ी चारूंमेर उडती, चकारा देवती घरणा ई कुड़मुड़ करिया परण सांप **फुणकारां** भरतौ उरणनै कीं दाद दीवी नीं।
—फुलवाड़ी

२ देखो 'फुंकारौ' (रू. भे.)

फुणगल—देखो 'फुरणकलौ' (मह., रू. भे.)

उ०—देही में निकलै **फुणगल** फोड़ा, मार जायै नांन्हा छोरा रे। दिन निकलै घरणा ज्यांका दोरा, लांछण काढ़ै कोरा रे।—जयवांणी

फुणडसण—सं० पु०[सं०फणः+दंशः] सर्प, सांप। उ०—झाटां **फुणडसण** खाग झाटकतौ, राग वीररस तरणौ रत्तौ। ऊ लागौ 'जैसिंघ' हिय उड, पांखां ग्रायौ नाग 'पत्तौ'।—प्रतापसिंह हाडा रौ गीत

फुणद—देखो 'फरणीद' (रू. भे.)

फुणधर—देखो 'फरणधर' (रू. भे.)

फुणली—सं० स्त्री० [सं० फण+रा० प्र० ली] मादा सर्प, सर्पिरणी।

फुणसहस—देखो 'सहसफुरण' (रू. भे.)

उ०—जीवै गोरख जुगां, नाथ नित जोग कमावै। भल जीवै भरथरी, सदा हरि नांम सुहावै। भल जीवै **फुणसहस**, जेण धर भार उठायौ। भल जीवै बळराव, जेरण हरि हाथ मंडायौ। ग्राचार कररण जीवै इंदर, जगत कहै धिन धिन जियौ। म्होकमा कमंध मोटा मिनख, तै जीवर कासूं कियौ।—ग्ररजुण जी बारहठ

फुणसी—देखो 'फुंसी' (रू. भे.) (ग्रमरत)

फुणांपति, फुणांपत्ति—१ देखो 'फरणपंति' (रू. भे.)

उ०—वरणै फौज राजा तरणै काजवाळी, कवी ऋत्त जैसी **फुणांपत्ति** काळी। कजाकां भड़ां दौडियौ रूप कैसौ, 'ग्रभौ' नक्र वीछोड़वा चक्र ग्रैसौ।—रा. रू.

२ देखो 'फरिणपति' (रू. भे.)

फुणांफेर—सं०पु० [सं०फणः+राज०फेर] शेषनाग। उ०—हचै खळां थोका भंजै **फुणांफेर** रा ग्रापांरण हूंत, दाखै जेरण बेर रा बाखांरण झोका देर। सही जीत होय राख्यौ कुवेर रा भीमसिंह, सेर रा कांठला जेम 'रांरण' रौ ग्रासेर।—रावत भीमसिंह चुंडावत रौ गीत

रू० भे०—फुणाफेर।

फुणाकार—देखो 'फणाकार' (रू. भे.)

उ०—जिसै सिंधवै राग काळी जिगायौ, उपाड़ै **फुणाकार** दरबार आयौ। **फुणाकार** को झाटकै पूंछ फेरी, घणौ घातियौ सांकड़ै सांम घेरी।—ना. द.

फुणाट—देखो 'फरण' (मह., रू. भे.)

उ०—महा भुजंगेसनाथ समाथ खंडियौ मांण, खंम ठौर भराथ तंडियौ जैत-खंभ। दंडियौ ग्रदंड नीर उचाटां मिटाय डहे, रंजे मित्र **फुणाटां** मंडियौ नाटारंभ। —र. ज. प्र.

फुणाफेर—देखो 'फुणांफेर' (रू. भे.)

फुणाळ—देखो 'फणाळी' (मह., रू. भे.)

उ०—पढ़ वसंतरमणी प्रथम, मुण जयवंत मुणाळ। ग्राद गीत त्रय ग्रक्खिया, खगपत ग्रगै **फुणाळ**।—र. ज. प्र.

फुणाळी—देखो 'फरणाळी' (रू. भे.)

फुणावण—वि० [सं० फण+रा० प्र० वण] फनधारी।

उ०—लड़वा भुज ग्रंबर जाय लगा, जिरणवार **फुणावण** सेस जगा। सुरखी मुख मूंछ ब्रुहार चली, किरदंत वराह खडी कंवळी।
—पा. प्र.

सं० पु०—१ सर्प। २ शेषनाग।

फुणिंद—देखो 'फणींद' (रू. भे.)

उ०—छंद भुजंगी पर लघू, अेक वधै सौ कंद। पंकावळि यक गुरु छ लघु, बि भगरण कहत **फुणिंद**।—र. ज. प्र.

फुणी—देखो 'फणी' (रू. भे.)

उ०—कोडी-डड्ढा **फुणी** झाट मोड़तौ कमट्ठां कंध, पव्बैराट सिंघ बीछोड़तौ मोम-पाट। थंभ-जंगां बोमवाट जोड़तौ रातंगां थाट तोड़तौ मातंगां घाट रोड़तौ ग्रांबाट।—हुकमीचंद खिड़ियौ

फुणीचील—सं० पु० [सं० फरण+रा० प्र० ई+राज० चील=सर्प] शेष नाग। उ०—चंगी फौजां बिलूंबै बड़क्कै डाड **फुणीचील**, उमंगै जोगरणी काचां धड़क्कै उरेब। हैजमां कड़क्कै बीज जंगी हौदां रंगी हाडै, जड़क्कै फरंगी सीस वरगी जनेब।
—दुरगादत्त बारहठ

फुणौ—सं० पु० [सं० फणः] पैर की ग्रंगुलियों का नीचे का भाग।

उ०—मल्ल ग्रापरै डावा पग रौ **फुणौ** लारली गाडी माथै टेकियौ।
—फुलवाड़ी

मुहा०—फुणौ फिरणौ—फुरसत मिलना।

रू० भे०—फणौ, फुंणौ, फूंणौ, फूणौ ।

फुतरकौ—देखो 'फूतरौ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—माया रौ अैड़ौ तिरस्कार करणियौ, संपत नै **फुतरका** रै बिरोबर गिणणियौ तौ औ पै'लौ ई मांनखौ मिळियौ ।
—फुलवाड़ी

फुत्कार—देखो 'फूतकार' (रू. भे.)

उ०—एक अटवी तिहां सीह तणउ गुंजारव, व्याघ्र तणा घुरघुरारव घूअड़ तणा घूत्कार, सिवा तणा **फुत्कार** । —सभा.

फुदकड़ी—सं० स्त्री० [देशज] विशिष्ट जाति की एक चिड़िया ।

वि० वि०—यह एक छोटी सी एवं अत्यन्त सुन्दर चिड़िया होती है जो राजस्थान के उत्तर-पश्चिम भाग को छोड़कर सब जगह पाई जाती है । इसके पीठ का रंग पीतवर्ण मिश्रित कुछ हरा सा होता है । इसके सिर पर भूरे रंग की सी झलक पड़ती रहती है तथा पैरों का रंग पीला तथा भूरा मिश्रित होता है ।

यह स्वभाव से बहुत चंचल होती है । दिन भर इधर-उधर फुदकती ही रहती है । अपनी पूंछ को यह निरन्तर हिलाती रहती है । **'फुदकड़ी'** मधुर-वाणी वाली चिड़िया है जो सदैव कुछ न कुछ गाती ही रहती है । एक विशेष बात यह भी है कि यह अपना नीड़ अत्यन्त कलात्मक ढंग से बनाती है ।

फुदकण—वि० [देशज] कूदने-फादने वाला ।

सं० पु०—१ एक प्रकार का बरसाती कीड़ा या पतंगा ।

२ देखो 'फदकण' (रू. भे.)

फुदकणौ, फुदकबौ—क्रि० स० [देशज] १ उछल-कूद करना ।

२ छोटी छोटी-छलांग भरते हुए उड़ना, फुदकना ।

उ०—राजा अंत लोभी हौ । अमोलक हीरां री बात सुणनै उण रौ जीव डिगियौ तौ अंडौ डिगियौ के अजेज उण चिड़ी नै छोड दी । चिड़ी **फुदकनै** आंब री ऊंची डाळी माथै बैठगी ।
—फुलवाड़ी

३ हर्ष से उछलना-कूदना ।

फुदकणहार, हारौ (हारी), फुदकणियौ—वि०।

फुदकिओड़ौ, फुदकियोड़ौ, फुदक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फुदकीजणौ, फुदकीजबौ—भाव वा०।

पदकणौ, पदकबौ, फदकणौ, फदकबौ—रू० भे०।

फुदकियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ उछल-कूद किया हुआ. २ छोटी-छोटी छलांग भरते हुए उड़ा हुआ, फुदका हुआ. ३ हर्ष से उछला-कूदा हुआ. (स्त्री० फुदकियोड़ी)

फुदकी—सं० स्त्री०—फुदकने का कार्य, कुदान, छलांग ।

फुदगळ—देखो 'पुदगळ' (रू. भे.)

फुद्दी—देखो 'फूंदी' (रू. भे.)

फुनिंग, फुनिग—सं० पु० [सं० पन्नगः] १ सर्प, सांप ।

उ०—जैसैं **फुनिग** मेल्हि मणि चैं जैं, जोति उजाळै (सु) करै जाय । यूं हरि अकळ सकळ की सोभा, तूं तिणी विधी हरि मूं ल्यौ लाय ।—ह. पु. वा.

२ शरीर, देह । ३ परमाणु । ४ आत्मा ।

फुप्फुस—सं० पु० [सं० फुप्फुस, फुप्फुसः] फेफड़ा ।

रू०भे०—फुपफुस ।

फुफकार—देखो 'फूंकार' (रू. भे.)

उ०—अेक सिपाई खोखाळ में झांकियौ तौ सांमी हार पड़ियौ पळाटा करै । खोखाळ कनै हाका दड़बड़ व्ही तौ गोरियावर **फुफकारा** करण लागौ ।—फुलवाड़ी

फुफकारणौ, फुफकारबौ—देखो 'फूंकारणौ, फूंकारबौ' (रू. भे.)

उ०—तडकै दिनूंगा पैली' ई वौ दुस्टी सरप दांतण-कुरळा करनै कमेडी रा आळा माथै पूगौ ई । जोर सूं **फुफकारतौ** फुण करनै अेकण सागै ई सगळा बिचियां नै खावण रौ मनसोबौ करियौ ।
—फुलवाड़ी

फुफकारणहार, हारौ (हारी), फुफकारणियौ—वि० ।

फुफकारिओड़ौ, फुफकारियोड़ौ, फुफकार्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फुफकारीजणौ, फुफकारीजबौ—कर्म वा० ।

फुफकारियोड़ौ—देखो 'फूंकारियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुफकारियोड़ी)

फुफकारौ—देखो 'फूंकार' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—हाथ मांय घालता ई सांप **फुफकारौ** करनै उण रा अंगूठा नै तोड़ लियौ ।—फुलवाड़ी

फुफ्फुस—देखो 'फुप्फुस' (रू. भे.)

फुर—वि० [अनु०] १ पक्षियों के उड़ते समय पंखों से उत्पन्न ध्वनि ।

उ०—रांणी उचकनै चिड़ा नै मारण सारू झपटी । पण चिड़ौ तौ **फुर** करती रौ उडग्यौ ।—फुलवाड़ी

२ फड़कने की क्रिया या भाव ।

उ०—राघव ऊपरि कोपीयौ मन०, मूंह चढ़ाई राय लाल मन रंगै रे । होठ बेहुं **फुर फुर** करइ मन०, किम आयौ भण प्रस्ताव लाल० ।—प. च. चौ.

क्रि० प्र०—करणौ, होणौ ।

३ अस्थिर । उ०—**फुर** अफुर दोनां को द्रस्टा, अज अखड अचलना । सब संतन के सिद्धांत पद में, मम मनवा थित करना ।
—स्रीसुखरांम जी महाराज

फुरकण—सं० पु० [देशज़] १ सफेद आंखों वाला बैल जिसकी आंखों पर भंवरी होती है ।

वि० वि०—उक्त भंवरी आंखों की पलकों के साथ-साथ फरकती है । ऐसा बैल अशुभ माना जाता है ।

२ देखो 'फड़कण' (रू. भे.)

फुरकणौ, फुरकबौ—क्रि० अ० [सं० प्रस्पंदनम्] १ प्रस्पंदन ।
उ०—पहिलउं नीली सूकिय मूंकिय फलहलि तीह, देखीय मोदक मुरकीय **फुरकीय** जीमतां जीह ।—नेमिनाथ फागु
[सं० स्फुरणम्] २ हवा का बहना, हवा का चलना ।
उ०—जिहां सीतल **फुरकै** पवन, तिसौ पाछलि वनि । इम अनेक प्रकार सोमै छै ।—सभा.
३ देखो 'फड़कणौ, फड़कबौ' (रू. भे.)
४ देखो 'फरूकणौ, फरूकबौ' (रू. भे.)
फुरकणहार, हारौ, (हारी), फुरकणियौ—वि० ।
फुरकाड़णौ, फुरकाड़बौ, फुरकाणौ, फुरकाबौ, फुरकावणौ, फुरकावबौ—प्रे० रू० ।
फुरकिओड़ौ, फुरकियोड़ौ, फुरक्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरकीजणौ, फुरकीजबौ—भाव वा० ।

फुरकांन—सं० पु० [अ० फ़ुर्कान] मुसलमानों का धार्मिक ग्रन्थ, कुरान । उ०—जम के से फिरसते लगे असमांण जिनूं के देखें से सूकें मदमसत फीलूं के डांण । **फुरकांन** इजील तौर तैं जंबून के निडाह मान । —सू. प्र.

फुरकाड़णौ, फुरकाड़बौ—१ देखो 'फड़काणौ, फड़कावौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फरूकाणौ, फरूकाबौ' (रू. भे.)
फुरकाड़णहार, हारौ (हारी), फुरकाड़णियौ—वि० ।
फुरकाड़िओड़ौ, फुरकाड़ियोड़ौ, फुरकाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरकाड़ीजणौ, फुरकाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फुरकाड़ियोड़ौ—१ देखो 'फड़कायोड़ौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फरूकायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरकाड़ियोड़ी)

फुरकाणौ, फुरकाबौ—१ देखो 'फडकाणौ, फड़काबौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फरूकाणौ, फरूकाबौ' (रू. भे.)
फुरकाणहार, हारौ (हारी), फुरकाणियौ—वि० ।
फुरकायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरकाईजणौ, फुरकाईजबौ—कर्म वा० ।

फुरकायोड़ौ—१ देखो 'फड़कायोडौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फरूकायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरकायोड़ी)

फुरकारौ—सं० पु०—इशारा, संकेत । उ०—रुंख तणी परि पग आरोपै, लड़ता रिण नवि लोपै । चक्षु तणै **फुरकारै** चोपै, कहर करतां न कोपै हो ।—वि. कु.

फुरकावणौ, फुरकावबौ—१ देखो 'फड़काणौ, फड़कावौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फरूकाणौ, फरूकाबौ' (रू. भे.)
फुरकावणहार, हारौ (हारी), फुरकावणियौ—वि० ।
फुरकाविओड़ौ, फुरकावियोड़ौ, फुरकाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरकावीजणौ, फुरकावीजबौ—कर्म वा० ।

फुरकावियोड़ौ—१ देखो 'फड़कायोड़ौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फरूकायोडौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरकावियोड़ी)

फुरकियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ प्रस्पंदन हुवा हुआ.
२ देखो 'फड़कियोड़ौ' (रू. भे.)
३ देखो 'फरूकियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरकियोड़ी)

फुरक्कणौ, फुरक्कबौ—देखो 'फड़कणौ, फड़कबौ' (रू. भे.)
उ०—अहर **फुरक्कइ** तन फुरइ, तन फुर नयंण फुरंत । नाभी मडळ सहु फुरइ, सांभइ नाह मिळंत ।—ढो. मा.
फुरक्कणहार, हारौ (हारी), फुरक्कणियौ—वि० ।
फुरक्काड़णौ, फुरक्काड़बौ, फुरक्काणौ, फुरक्काबौ, फुरक्कावणौ, फुरक्कावबौ—प्रे० रू० ।
फुरक्किओड़ौ, फुरक्कियोड़ौ, फुरक्क्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरक्कीजणौ, फुरक्कीजबौ—भाव वा० ।

फुरक्काड़णौ, फुरकाड़बौ—देखो 'फड़काणौ, फड़कावौ' (रू. भे.)
फुरक्काड़णहार, हारौ (हारी), फुरक्काड़णियौ—वि० ।
फुरक्काड़िओड़ौ, फुरक्काड़ियोड़ौ, फुरक्काड़्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
फुरक्काड़ीजणौ, फुरक्काड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फुरक्काड़ियोड़ौ—देखो 'फड़कायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरक्काड़ियोड़ी)

फुरक्काणौ, फुरक्काबौ—देखो 'फड़काणौ, फड़काबौ' (रू. भे.)
फुरक्काणहार, हारौ (हारौ), फुरक्काणियौ—वि० ।
फुरक्कायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरक्काईजणौ, फुरक्काईजबौ—कर्म वा० ।

फुरक्कायोड़ौ—देखो 'फडकायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरक्कायोड़ी)

फुरक्कावणौ, फुरक्कावबौ—देखो 'फड़काणौ, फड़काबौ' (रू. भे.)
फुरक्कावणहार, हारौ (हारी), फुरक्कावणियौ—वि०।
फुरक्काविओड़ौ, फुरक्कावियोड़ौ, फुरक्काव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरक्कावीजणौ, फुरक्कावीजबौ—कर्म वा० ।

फुरक्कावियोड़ौ—देखो 'फड़कायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरक्कावियोड़ी)

फुरक्कियोड़ौ—देखो 'फड़कियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरक्कियोड़ी)

फुरण—देखो 'फुरणी' (मह., रू. भे.)

फुरणा—सं० स्त्री० [सं० स्फुरणं] १ इच्छा । उ०—बाका फाटोड़ा थाका दम बाकी, डेल्ही चुळियोड़ा डुळियोड़ा डाकी । थिरता मन री नहिं तन री गति थाकी, **फुरणा** परघन री अन री नहिं फाकी ।
—ऊ. का.

२ कांपना, फड़कना ।

३ सहसा मन में किसी बात के उत्पन्न होने की क्रिया । उ०—जोई फुरै अरु होवै मनण,आगै वस्तु ठहरांणी । **फुरणा** अरु अफुरणा ये तो सब, माया कृत ही जांणी ।—स्रीसुखरांम जी महाराज

रू० भे०—फुरना, फोरणा ।

फुरणि, फुरणी—सं० स्त्री०—१ स्फूर्ति, तेजी । उ०—घण **फुरणि** जोध वाहंत घाव, पायाळ डरै पडतै निहाव । लडथडै लोह वाहै लडाक, वडडंत हाड भाजै वडाक ।—गु. रू. बं.

२ तेजी से इधर-उधर मुड़ने की क्रिया । उ०—फरहरै वांनरा जेम फाळां **फुरणि**, घमता नास वरहास हूम्रा घमणि । पंथि पाखांण पीठौ करै पैंनुहै, मग्न सूघा भरै डांण वांकै मुहै ।—गु. रू. बं.

३ नाक से श्वास लेने का छिद्र, नासापुट, नथूना । उ०—१ रीस रै पांण उण री **फुरणियां** सूं बाफां निकळण लागी, होठ फड़कण लागा अर आंख्या रा कोया भणण-भणण फिरण लागा ।
—फुलवाड़ी

२ वेहलियां री **फुरणी** वाज रही छै, जंग घूघरा बाज रह्या छै ।
—रा. सा. सं.

रू० भे०—फरणी, फिरणी ।

मह०—फुरण, फुरणूं, फुरणौ ।

फुरणूं, फुरणौ—सं० पु०—देखो 'फुरणि' (रू. भे.)

उ०—१ घिखते आरण से लोयण जमराज से असवार काळी नाग ज्यूं करते **फुरणूं** का फूंकार ऐसे सारवांनूं के हाकले सैं बिमरीर वाघूं परि धाए ।—सू. प्र.

उ०—२ चहुंग्रांण कमंधज भूठ-छटै, कर बांण वहै तन आंण कटै । **फुरणां** वजसी कर ऊभ फरै, कयकांण किता सुर घ्रोण करै ।
—पा. प्र.

फुरणौ, फुरबौ—१ देखो 'फड़कणौ, फड़कबौ' (रू. भे.)

उ०—अहर फुरक्कइ, तन **फुरइ**, तन फुर नयंण फुरंत । नाभी मंडळ सहु **फुरइ**, सांभइ नाह मिळंत ।—ढो. मा.

२ देखो 'फिरणौ, फिरबौ' (रू. भे.)

उ०—१ **फुरियौ** भादरवौ धुरियौ नह फीकौ, नीरदरज आगै लागै नह नीकौ । तिसिया संगारा भू पर नर तिरसै, बिसिया अंगारा ऊपर सूं वरसै ।—ऊ. का.

उ०—२ मगरमच्छ तौ तुरत उठा सूं **फुरियौ** । वोरड़ी नै भैंड़ी जोर सूं धंदूणी दी के तड़ाक तड़ाक अणगिण वोरां रौ थर लागगौ ।—फुलवाड़ी

उ०—३ चीतौ तौ भली सोची नीं कोई भूंडी, पाछौ **फुरनै** उठा सूं सोकड़ मनाई ।—फुलवाड़ी

उ०—४ वेटौ घमाका री आवाज सुणी तौ हळफळायौ लारै **फुरनै** जोयौ—मां तौ कठै ई निगै नी आई ।—फुलवाड़ी

उ०—५ मावड़िया दीठां **फुरै**, मत हिय मांहि पयट्ठ । पुरुस तणी पोसाख कर, वाई आंण वयट्ठ ।—वां. दा.

उ०—६ सत सत्ता सूं संकल्प **फुरिया**, मनवा नांम धराजी । मूल अम्यांन कहीजे यो ही, कारण होय रेयाजी ।
—स्रीसुखरांम जी महाराज

उ०—७ फजरां हथणीं सी दधि मथणीं **फुरती**, माटां घर-घर में घणहरसी घुरती । खूली आथणियां साथणियां खाती, फूली-फूली फिर फूंदाळी गाती ।—ऊ. का.

फुरत, फुरती—सं० स्त्री० [सं० स्फूर्ति] १ शीघ्रता, जल्दी ।

उ०—१ पांचूं जणा आ सला विचारनै **फुरती** सूं पूगा जकौ हाथी री सोय करली ।—फुलवाड़ी

उ०—२ सांफळा मिळै साभै तुरत, **फुरत** करै दळ फंकिया । मेछांण बंस तपस्या घटी, ढहसीजै वळि ढूकिया ।—मा. वचनिका

क्रि० प्र०—करणी, होणी ।

२ चंचलता, स्फूर्ति । उ०—चिड़ी ही कमगरी, घणी **फुरती** वाळी, घणी पोच वाळी ।—फुलवाड़ी

फुरतीलौ—वि० [सं० स्फूर्ति+रा० प्र० लौ] (स्त्री० फुरतीली)

१ जिसके शरीर में चंचलता हो, स्फूर्ति वाला ।

२ बहुत तेज चलने वाला ।

फुरना—देखो 'फुरणा' (रू. भे.)

उ०—वरिस्ठ-वरिस्ठ जीतै मनवांणी, नहिं कहणा नहिं सुणणा । सप्त भूमिका ऊपर आसण, हीन असत सत **फुरना** ।
—स्रीसुखरांम जी महाराज

फुरफुरणौ, फुरफुरबौ—क्रि० अ० [अनु०] १ किसी हलके या छोटे पदार्थ का फुर-फुर शब्द करते हुए हवा में उड़ना ।

२ शरीरांग का फड़कना । उ०—ओस्ट युगल **फुरफुरतउ**, वोलतउ खलातउ, रौद्रमुख करतउ ।—व. स.

फुरफुरणहार, हारौ (हारी), फुरफुरणियौ—वि० ।

फुरफुरिओड़ौ, फुरफुरियोड़ौ, फुरफुरयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फुरफुरीजणौ, फुरफुरीजबौ—भाव वा० ।

फुरफुराहट—सं० स्त्री० [अनु०] १ शरीर के अंगों में होने वाला हलका स्पन्दन । २ पवन के साथ किसी हलकी वस्तु, पत्ते, कागज आदि के उड़ने पर उत्पन्न होने वाली ध्वनि । ३ पक्षियों के परों की फड़फड़ाहट ।

फुरफुरियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ फुर-फुर शब्द करते हुए हवा में उड़ा हुआ कोई छोटा या हलका पदार्थ. २ शरीरांग फड़का हुआ. (स्त्री० फुरफुरियोड़ी)

फुरमाड़णौ, फुरमाड़बौ—देखो 'फरमाणौ, फरमावौ' (रू. भे.)

फुरमाड़णहार, हारौ (हारी), फुरमाड़णियौ—वि० ।

फुरमाड़िग्रोड़ौ, फुरमाड़ियोड़ौ, फुरमाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरमाड़ीजणौ, फुरमाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फुरमाड़ियोड़ौ—देखो 'फरमायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरमाड़ियोड़ी)

फुरमांण, फुरमांणि—देखो 'फरमांण' (रू. भे.)
उ०—१ सुणि धिकै साह वाका सहर, जवन रीस पावक जिसी । **फुरमांण** लिखै भेजै फजर, दिलीनाथ सयदां दिसी ।—सू. प्र.
उ०—२ बादसाह रौ **फुरमांण** छै । गढ़ मोनूं दियौ छै । **फुरमांण** थांनूं मेला नहीं । थे **फुरमांण** ले किलौ छोडौ ही नही तौ बादसाह नूं पाछौ कासूं कहावां ।—गोपाळदास गौड़ री वारता
उ०—३ एक तणी नवि जांणउं भाख, चाल्यां कटक चडी नव लाख । असपति राय तणइ **फुरमांणि**, खांन ज्यांह राखिउ दीवाणि ।—कां. दे. प्र.

फुरमांणौ—देखो 'फरमांण' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—साहां सोच दिली सरसाणौ, मुगलां सैदां वाद मंडांणौ । वाचत वीचै ऊग विहांणौ, फुरमांणां ऊपर **फुरमांणौ** ।—रा. रू.

फुरमांन—देखो 'फरमांण' (रू. भे.)
उ०—जिमनरादर । तसरूफ गुमास्तगांन । ग्रो गुजारन । औव **फुरमांन** । सबतीव निज दुरस्त ।—द. दा.

फुरमाणौ, फुरमाबौ—देखो 'फरमाणौ, फरमाबौ' (रू. भे.)
उ०—१ फबतौ ग्रायुस स्त्रीमाधव **फुरमायौ**, कांतीचंदर नै काळींदर खायौ । छपनै जयपुर रौ जग में जस छायौ, ग्रो तौ ग्ररबां रा बळ सूं फळ ग्रायौ ।—ऊ. का.
उ०—२ टीकम दोसी बोल्यौ—बंकचूलीया में कह्यौ संवत ग्रठारे तेपनें पछै धरम रौ उद्योत होसी । इण वचन रै लेखै तौ तेपनां पहिली साध नही इम संभवै । जद स्वांमी जी **फुरमायौ** इहां साध नहीं इसौ तौ कह्यौ नहीं ।—भि. द्र.
फुरमाणहार, हारौ (हारी), फुरमाणियौ—वि० ।
फुरमायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरमाईजणौ, फुरमाईजबौ—कर्म वा० ।

फुरमायस—देखो 'फरमाइस' (रू. भे.)

फुरमायोड़ौ—देखो 'फरमायोड़ौ' (रू. भे.)
उ०—तिण सूं तेजै नूं **फुरमायोड़ौ** तौ छोईज सू दस ग्रादमियां हाथ पकडनै खूब कूटियौ ।—द. दा.
(स्त्री० फुरमायोड़ी)

फुरमावणौ, फुरमावबौ—देखो 'फरमाणौ, फरमाबौ' (रू. भे.)
उ०—१ ज्यूं राखै ज्यूं रहै, जहां निरमै तहीं जावै । हुकम सो ही सिर हुवै, जिको मीरां **फुरमावै** ।—ह. र.
उ०—२ तद कंवर 'वीकैजी' कयौ—ग्रापरै **फुरमावणै** सूं मायां सूं दावौ नही करसूं ।—द. दा.
फुरमावणहार, हारौ (हारी), फुरमावणियौ—वि० ।
फुरमाविग्रोड़ौ, फुरमावियोड़ौ, फुरमाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरमावीजणौ, फुरमावीजबौ—कर्म वा० ।

फुरमावियोड़ौ—देखो 'फरमायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरमावियोड़ी)

फुरमास—सं० स्त्री०—१ एक प्रकार का लगान विशेष ।
२ देखो 'फरमाइस' (रू. भे.)
उ०—जद भेजी जगमाळ नै, महमद सा **फुरमास** । दीधां साईजादी दीऊं, जूनागढ़ रौ वास ।—वी. मा.

फुरम्मांण—देखो 'फरमांण' (रू. भे.)
उ०—पंडवेस सांच मगां **फुरम्मांण** सोहे प्रथी, धीठ जंगां सुरम्मांण द्रोणगां धूजांण । उरम्मांण पै सिंधां दुजोण पूर भांणग्रंसी, सोहे कुरम्माण वंसी दूसरौ 'सूजांण' ।—हुकमीचंद खिड़ियौ

फुरळणौ, फुरळबौ—क्रि० स० [देशज] १ इधर-उधर करना, अस्त-व्यस्त करना, बिखेरना, तितर-बितर करना ।
उ०—१ फेरी ग्रफरि फिरणी सि फेरी, बींद 'रतनसी' बांध वड । धकधूणी **फुरळी** धौ **फुरळी**, घेर मिळी सुरतांण घड ।—दूदौ
उ०—२ फेरा लेतै फिर ग्रफिर फेरी घड़ ग्रणफेर । सीह तणी हरधवळ सुत गहमाती गहड़ेर । गहड़ घड़-कांमणी करै पांण ग्रहण । करगि खग वाहतौ जुवा जूसण कसण । कोपियै छाकियै चहर भड़ ग्रहर करि । **फुरळतै** पिसण घड़ फेरवी ग्रफिर फिरि ।—हा. भा.
२ किसी वस्तु का नीचे वाला भाग ऊपर अथवा ऊपर वाला भाग नीचे करना । नीचे-ऊपर या ऊपर-नीचे करना, उलटना-पलटना ।
३ चीरना, फाड़ना । उ०—संत पैहळाद तणी सुणी साहुळि, कर **फुरळै** हिरणाखस काहुळि, ग्राहि कन्हि ली वारूण गिरधारी, मोखं दोहूं तै हींज मुरारी ।—मा. वचनिका
४ कुछ जानने, देखने या समझने के लिए चीजें या उनके अंग कभी ऊपर ग्रौर कभी नीचे करना ।
ज्यूं०—फायलां **फुरळणी**, कागदिया **फुरळणा** ।
फुरळणहार, हारौ (हारी), फुरळणियौ—वि० ।
फुरळिओड़ौ, फुरळियोड़ौ, फुरल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरळीजणौ, फुरळीजबौ—कर्म वा० ।
फरळणौ, फरळबौ, फरोळणौ, फरोळबौ, फिरोळणौ, फिरोळबौ, फुरोळणौ, फुरोळबौ—रू० भे० ।

फुरळियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ इधर-उधर किया हुआ, अस्त-व्यस्त किया हुआ, बिखेरा हुआ, तितर-बितर किया हुआ. २ किसी वस्तु का नीचे वाला भाग ऊपर अथवा ऊपर वाला भाग नीचे किया हुआ, नीचे-ऊपर किया हुआ, उलट-पलट किया हुआ.

३ चीरा हुआ, फाड़ा हुआ. ४ जानकारी प्राप्त करने या समझने हेतु किसी वस्तु के अंगों को ऊपर नीचे किया हुआ.
(स्त्री० फुरळियोड़ी)

फुरसत—सं० स्त्री० [अ० फ़ुर्सत] १ अवसर, मौका ।
उ०—घर में रोवणौ सुण्यौ तौ तुरत आड़ौस-पाड़ौस री लुगायां ई रोवती रोवती सेठां रै घरै आई । पूछ-ताछ करी । अचांणक आ कांई अजोगती बात व्ही ? कुण चलियौ ? किणी री साज-मांद तौ सुणी ई नीं ही । घरवाळी लुगायां जबाब दियौ—म्हनै तौ आ जांणण री **फुरसत** ई नीं मिळी । कंवरसा नै रोवता देख्या तौ म्हां ईं रोवरा लागगी ।—फुलवाड़ी
२ समय, अवकाश । उ०—इण खातर सोनार भांवी सूं मीठी-मीठी बातां करी । उणनै तबांकू पायी । मारग में दोपारी कराई । थावस दियौ के कदेई **फुरसत** मिळी तौ उण रै रांम-सा पीर री मूरत बणाय देवैला ।—फुलवाड़ी
३ निवृत्ति, छुट्टी ।
ज्यूं०—म्हनै अबै पढ़ाई सूं **फुरसत** व्हैगी ।

फुरसरांम, फुरुसरांम, फुरुसरांमि—देखो 'परसुरांम' (रू. भे.)
उ०—१ रथगजास्ट सहस्र जउ निरजणइ, दस सहस्र महाभट जो हणइ । **फुरसरांम** महाहवि निरजणिउ, इसिउं भीस्म पितामह मइं थुणिउ ।—सालिसूरि
उ०—२ हरिस्चंद्र चांडाल तणइ घरि पांणी वह्यउं, **फुरुसरांमि** जननीवधु कीधउ ।—व. स.

फुरोळणौ, फुरोळबौ—देखो 'फुरळणौ, फुरळबौ' (रू. भे.)
उ०—**फुरोळि** फाडि डाडरा नहाळ मखंती गळां । करंति देव मेछ कोटि डाकरै खळां डळां ।—मा. वचनिका
फुरोळणहार, हारौ (हारी), **फुरोळणियौ**—वि० ।
फुरोळिओड़ौ, फुरोळियोड़ौ, फुरोल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुरोळीजणौ, फुरोळीजबौ—कर्म वा० ।

फुरोळियोड़ौ—देखो 'फुरळियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुरोळियोड़ी)

फुल—सं० स्त्री०— अग्नि । (ह. नां. मा.)
वि० [अं०] १ पूर्ण, पूरा ।
२ तीव्रगति, तेज ।
ज्यूं०—गाडी **फुल** छोडणी ।
३ देखो 'फूल' (रू. भे.)
उ०—सीतल सील छायां वीसमउ भावना, नीरिहिं सींचिउ धरउ । **फुल** पत्र बार देवलोक जांणि, एह व्रिक्ष, नउं फल मुकति निरवांणि ।
—वस्तिग

फुलकौ—सं० पु० [सं० फुल्लक] हल्की और पतली रोटी ।
रू० भे०—फलकौ ।
अल्पा०—फलकी ।

फुलगार—सं० पु० [सं० फुल्ल+कारः] १ शाक, रायता आदि में खुशबू देने के निमित्त व स्वाद बढाने के लिए आग पर घी डालकर वर्तन उल्टा रखकर दिया हुआ धुंगार । २ इस प्रकार से उत्पन्न सुगंध ।

फुलगारणौ, फुलगारबौ—क्रि० स० [राज० फुलगार+णौ] शाक, रायता आदि में खुशबू देने के निमित्त व स्वाद बढ़ाने हेतु आग पर घी डालकर बर्तन उल्टा रखकर धुंगार देना ।
फुलगारणहार, हारौ (हारी), **फुलगारणियौ**—वि० ।
फुलगारिओड़ौ, फुलगारियोड़ौ, फुलगारचोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुलगारीजणौ, फुलगारीजबौ—कर्म वा० ।

फुलगारियोड़ौ—भू० का० कृ०—फुलगार दिया हुआ.
(स्त्री० फुलगारियोड़ी)

फुलड़ी—१ देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)
२ देखो 'फूलड़ी' (रू. भे.)
३ देखो 'फूली' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—लाहोर कसूर री वणी ठावी, घणी वनात में लपेटी थकी, घणै कलाबूत सूं गूंथी थकी, रूपै री कुहरी **फुलड़ी** जीभी लागी थकी, तिके ठावी साठ-साठ तीरा सूं भरी थकी, तिके किण भांत रा तीर छै ?—रा. सा. सं.

फुलड़ौ—देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—जाळी वी निरखी, ओ वीजां झरोखा वी निरख्या जी राज, **फुलड़ां** री सेजां भांणजड़ा रौ मन रल्यौ जी ।—लो. गी.

फुलछड़ी, फुलझड़ी—देखो 'फूलझड़ी' (रू. भे.)

फुलण—देखो 'फूलण' (रू. भे.)

फुलणौ, फुलबौ—देखो 'फूलणौ, फूलबौ' (रू. भे.)
उ०—१ घड़ रत वहै घाव कर घूमैं, घायल पड़ै हौफरै घूमैं । हद ओपमा तेण रिख हासां, पवन झुलै किर **फुलै** पळासां ।—सू. प्र.
उ०—२ प्रीतम मारा भमरलां जी, कांइक कीजै संक । **फुल्या** दीसै फुटरां जी, आफु माडै अंक ।—वि. कु.
फुलणहार, हारौ (हारी), **फुलणियौ**—वि० ।
फुलाड़णौ, फुलाड़बौ, फुलाणौ, फुलाबौ, फुलावणौ, फुलाववौ
—प्रे० रू० ।
फुलिओड़ौ, फुलियोड़ौ, फुल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फुलीजणौ, फुलीजबौ—भाव वा० ।

फुलपगर—देखो 'फूलपगर' (रू. भे.)
उ०—वायु देवता आंगणइ बुहारइ, चउरासी मेघ छडा छावडा दिइ, वनस्पति **फुलपगर** भरइं, जमराउ भइंसा रूपि पांणी वहइ ।
—व. स.

फुलमद—देखो 'फूलमद' (रू. भे.)
उ०—अबुलो प्रोहित माजम कसुमा लै छै, परगहैनै **फुलमद** का प्याला दै छै ।—बगसीरांम प्रोहित री वात

फुलमाळ—देखो 'फूलमाळ' (रू. भे.)

फुलरड़ी—देखो 'फूलरी' (अल्पा., रू. भे.)

फुलरी—देखो 'फूलरी' (रू. भे.)

फुलवांद—देखो 'फुलवाद' (रू. भे.)

उ०—बागां-बागां बावड़्यां, **फुलवांदां** चहुंफेर । कोयल करै टहूकड़ां, अइ हो घर आंबेर ।—अज्ञात

फुलवाई, फुलवाड़ी—सं०स्त्री० [सं० फुल्ल+वाटिका] पुष्पवाटिका, उद्यान ।

उ०—जहां अंब नहीं बाग नहीं, फुलै न **फुलवाई** । रागरंग जहां नहीं, नहीं जहां सुघड़ लुगाई । नदी ताळ जहां नहीं, नहीं जहां वापी सर कुवा । सब ही ऊजड़ देस, देख मन बिरकत हुवा ।

—दूलची जोइयै री वारता

रू० भे०—फुलवारी, फूलवाड़ी ।

फुलवाद, फुलवादि—सं० स्त्री० [सं० फुल्ल+वाटिका] १ वह पौधा जिसके फूल लगते हैं, फूलयुक्त पौधा ।

उ०—१ फुली हद **फुलवाद** चली अलबेलियां । वेहद क्यारघां वीच क राज गहेलियां ।—पनां वीरमदे री बात

उ०—२ फूलि आई लेवा फुलां, फूल देख **फुलवादि** ।

—पनां वीरमदे री बात

मुहा०—कच्ची फुलवाद—कायर, बुझदिल ।

२ पुष्प, फूल । उ०—सोनजुह, रियाबेल, चंबेल, चंबेली के फुलवाद, मोगरै की महक, गुलाब फूलूं की सुगंध जवाद ।—सू. प्र.

रू० भे०—फुलवांद, फुलाद, फूलाद ।

फुलवारी—सं० पु०—१ एक रंग विशेष का घोड़ा ।

उ०—घोड़ा सात सौ अबलख, समंदा-मंवर, गंगाजळ, संजव, कुम्मेद और गुलदारी **फुलवारी** तयार कराया त्यांरै सुनहरी, रूपहरी सागे साखत साज सजाया ।—जलाल बूबना री बात

२ देखो 'फूलवाड़ी' (रू. भे.)

फुलांणौ—देखो 'फलांणौ' (रू. भे.)

उ०—ताहरां कुंवर कही—म्हारा तीन्ह चाकर छै । हूं वीच राख आयौ छुं । तेना ए पातलां परासूं छुं । **फुलांणौ** राजा री बेटौ छुं ।—चौबोली

फुलाड़णौ, फुलाड़बौ—देखो 'फुलाणौ, फुलाबौ' (रू. भे.)

फुलाड़णहार, हारौ (हारी), फुलाड़णियौ—वि० ।

फुलाड़िओड़ौ, फुलाड़ियोड़ौ, फुलाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फुलाड़ीजणौ, फुलाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फुलाड़ियोड़ौ—देखो 'फुलायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुलाड़ियोड़ी)

फुलाणौ, फुलाबौ—क्रि० स० [राज० 'फूलणौ' क्रि० का प्रे० रू०]

१ किसी वस्तु में वायु भरकर विस्तार बढ़ाना ।

२ पुलकित या आनन्दित करना या कराना ।

३ किसी के मन में अभिमान पैदा करना, गर्वित करना ।

मुहा०—गाल फुलाणौ—अभिमान से रुष्ट होना, सारहीन बातें करना ।

४ फूलों से युक्त करना ।

फुलाणहार, हारौ (हारी), फुलाणियौ—वि० ।

फुलायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फुलाईजणौ, फुलाईजबौ—कर्म वा० ।

फुलाड़णौ, फुलाड़बौ, फुलावणौ, फुलावबौ, फूलाड़णौ, फूलाड़बौ, फूलाणौ, फूलाबौ, फूलावणौ, फूलावबौ—रू० भे० ।

फुलाद—देखो 'फुलवाद' (रू. भे.)

उ०—जळ नळां रा फुहारा छूटि नै रहीया छै । क्यारे गुलकारी, रंग रंग री बूंटी, फुलाद री सबजी लागि नै रही छै ।—रा. सा. सं.

फुलायोड़ौ—भू० का० कृ०—१ किसी वस्तु का हवा भरकर विस्तार बढ़ाया हुआ, फुलाया हुआ. २ पुलकित या आनन्दित किया हुआ. ३ किसी के मन में गर्व पैदा किया हुआ, गर्वित किया हुआ. ४ फूलों से युक्त किया हुआ.

(स्त्री० फुलायोड़ी)

फुलाळौ—देखो 'फूलाळौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुलाळी)

फुलावणौ, फुलावबौ—देखो 'फुलाणौ, फुलाबौ' (रू. भे.)

फुलावणहार, हारौ (हारी), फुलावणियौ—वि० ।

फुलाविओड़ौ, फुलावियोड़ौ, फुलाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फुलावीजणौ, फुलावीजबौ—कर्म वा० ।

फुलावियोड़ौ—देखो 'फुलायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुलावियोड़ी)

फुलिंग—सं० पुं० [सं० स्फुलिंग] अग्निकण ।

फुलियोड़ौ—देखो 'फूलियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फुलियोड़ी)

फुलिसकेप—सं० स्त्री० [अं०] लगभग १२"×१५" माप का कागज ।

फुली—१ देखो 'फूली' (रू. भे.)

२ देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)

फुलेल—सं० पु० [सं० फुल्ल+तैल] फूलों की महक से युक्त तेल ।

उ०—१ अमित गुलालां अरगजां, केसर अतर **फुलेल** । हुवै सबोळी मंडळी, होळी हंदा खेल ।—रा. रू.

उ०—२ तारै ढोलोजी मांहि पधारीया, सहेलीयां हथियार खोलाया । **फुलेल** कुमकुमां रा पांणी सूं मंजण सिनांन कराया ।—ढो. मा.

रू० भे०—फूलेल ।

फुलेली—सं० स्त्री०—काच आदि का वह बड़ा बरतन जिसमें फुलेल रखा जाता है ।

फुलोत्तर—देखो 'फूलआंत' (रू. भे.)

फुल्ल—वि० [सं० फुल्ल्] १ फूला हुआ, विकसित ।

२ देखो 'फूल' (रू. भे.)

उ०—सव्वे मला मासड़ा, पण वइसाह न तुल्ल । जे दवि दाधा रूंखड़ां, तीहं मायइ **फुल्ल** ।—रा. सा. सं.

फुल्ली—१ देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)
२ देखो 'फूलड़ी' (रू. भे.) (शेखावाटी)
३ देखो 'फूलरी' (रू. भे.)
४ देखो 'फूली' (रू. भे.)

फुल्लौ—देखो 'फूलौ' (रू. भे.)

फुवारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फुस, फुसकी–सं० स्त्री० [अनु०] १ बहुत धीमी एव अस्पष्ट ध्वनि।
उ०—साथणियां **फुस-फुस** करती बोली—लाख मोत्यां थाळी इण लाखीणी रात रौ यूं वारै ऊमां पापौ काटधा कीकर सरसी।
—फुलवाड़ी
२ अपान वायु एवं अपान वायु के पुरसरण की ध्वनि।
क्रि० प्र०—काढ़णी.।
मुहा०—फुसकी काढ़णी—किसी कार्य को अधूरा छोड़ देना।
[सं० स्पृशः] ३ स्पर्श।
४ देखो 'फिस' (रू. भे.)

फुसफुसाणौ, फुसफुसाबौ–क्रि० स० [अनु०] धीरे-धीरे अस्पष्ट आवाज निकालना, फुस-फुस शब्द करना।
फुसफुसाणहार, हारौ (हारी), फुसफुसाणियौ—वि०।
फुसफुसायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फुसफुसाईजणौ, फुसफुसाईजबौ—कर्म वा०।

फुसफुसायोड़ौ–भू० का० कृ०—धीरे-धीरे अस्पष्ट आवाज निकाला हुआ, फुस-फुस शब्द किया हुआ.
(स्त्री० फुसफुसायोड़ी)

फुसलाणौ, फुसलाबौ–क्रि० स० [राज०] १ मीठी-मीठी वातें बनाकर किसी को अपने अनुकूल करना, राजी करना।
२ वहकाना।
फुसलाणहार, हारौ (हारी), फुसलाणियौ—वि०।
फुसलायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फुसलाईजणौ, फुसलाईजबौ—कर्म वा०।
फुसलावणौ, फुसलावबौ—रू० भे०।

फुसलायोड़ौ–भू० का० कृ०—१ मीठी मीठी वातें वना कर किसी को अपने अनुकूल किया हुआ, राजी किया हुआ.
२ वहकाया हुआ.
(स्त्री० फुसलायोड़ी)

फुसलावणौ, फुसलावबौ—देखो 'फुसलाणौ, फुसलाबौ' (रू. भे.)
फुसलावणहार, हारौ (हारी), फुसलावणियौ—वि०।
फुसलाविओड़ौ, फुसलावियोड़ौ, फुसलाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फुसलावीजणौ, फुसलावीजबौ—कर्म वा०।

फुसलावियोड़ौ—देखो 'फुसलायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फुसलावियोड़ी)

फुहड़, फुहड, फुहडौ— देखो 'फूड़' (रू. भे.)
उ०—१ मांकुण मांचा भिरिया, जु भरियां गोदडां कांन मिलि भरियां, रालडां **फुहडा**, पग भरिउ साडलउ।—व. स.
उ०—२ मलमलिन सरीर, दीठइ ओकारां आवइ, इसी **फुहडी** सूगांमणी घरनारि कलिकालि घणी।—व. स.

फुहली—देखो 'फूहली' (रू. भे.)

फुहार—देखो 'फवारौ' (मह., रू. भे.)

फुहारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फुही–सं० स्त्री०—एक प्रकार का जंगली मांसाहारी छोटा जानवर विशेष जो रात्रि को वोलता है तो ऐसा प्रतीत होता है मानों मुंह से आग निकल रही हो, 'फेतकार'।
रू० भे०—फही, फूही, फोई, फौही।

फूं–सं० स्त्री० [अनु०] किसी प्राणी के मुंह से वेग से निकली हुई वायु से उत्पन्न ध्वनि।

फूंक–सं० स्त्री० [अनु०] १ मुंह को संकुचित करके वेग से छोड़ी जाने वाली या निकलने वाली हवा, सांस, मुंह की हवा।
उ०—१ ढेमकी में बैठ्यां पछै वौ कह्यौ—थें चारूं मांमियां ढेमकी रै **फूंक** दौ।—फुलवाड़ी
उ०—२ वा आपरां हाथां सूं इण राज री सींव रै वारै वांनै मै लाड़ खवाड़ देवैला। खातां ई कंवरां री **फूंकां** सांस निकळ जावैला।
—फुलवाडी
उ०—३ पावक सिव चख प्रवळं, सेस **फूंका** धिखि सव्वळं। मझि धरियौ ध्रत समंद, नीर काढ़ै वड़वानळं।—सू. प्र.
क्रि० प्र०—दैणी, निकळणी, मारणी, लगाणी।
मुहा०—१ फूक निकळणी—मर जाना, कहकर वदल जाना, कार्य में असफल होना। २ फूक खींचणी—धूम्रपान करना। ३ फूक लगाणा—अपव्यय करना।
२ मंत्र पढ़ते हुए मुंह से छोड़ी जाने वाली वायु, फूत्कार।
अल्पा०—फूंकौ, फूकौ।

फूंकण–वि० [अनु०] फूक मारने वाला।
सं० पु०—एक प्रकार का जहरीला जन्तु जिसकी फूंक से प्राणी मर जाता है।

फूंकणी–सं० स्त्री०—१ काष्ठ, धातु आदि की वनी वह पतली नली जिससे हवा फूंककर आग सुलगाई जाती है।
२ भाथी।

फूंकणौ–सं० पु०—रवड़ का वना एक वच्चों का खिलौना जिसमें हवा भरने पर वह गेंद सा हो जाता है, गुव्वारा।
रू० भे०—फूकौ, फूकौ।

फूंकणौ, फूंकबौ–क्रि० स० [अनु०] १ मुंह को संकुचित कर वेग से वायु छोड़ना।
२ मन्त्र आदि पढ़ते हुए मुंह से वायु छोड़ना, फूंक मारना।

उ०—नेड़ा वेसां जाय नित, सीगो मित्र समांन। क्यूं मोनैं गुर ना कहौ, किल **फूंकां** जग कांन।—बां. दा.

३. मुंह से बजाए जाने वाले बाजों को फूंक कर बजाना।

४ जलाना, भस्म करना।

५ नष्ट करना, नाश करना। उ०—**फूंकण** नवकोटी भंडा फरहरिया, घर घर जाती रा टांमक घरहरिया।—ऊ. का.

६ किसी धातु की रासायनिक रीति से भस्म बनाना।

७ सताना।

फूंकणहार, हारौ (हारी), फूंकणियौ—वि०।

फूंकाड़णौ, फूंकाड़बौ, फूंकाणौ, फूंकाबौ, फूंकावणौ, फूंकावबौ—प्रे० रू०।

फूंकिओड़ौ, फूंकियोड़ौ, फूंक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फूंकीजणौ, फूंकीजबौ—कर्म वा०।

फुंकणौ, फुंकबौ—रू० भे०।

फूंकरड़—देखो 'फूंकार' (मह., रू. भे.)

उ०—प्रिसण तट न आवै तजै गारड़ि पणौ, चुरस पण न रोपै बाघि-चाळौ। करि त्रिजड़ **फूंकरड़** हूंत बटका करै, कीलणी न मांनै भुयग काळौ।—महाराव सेखा कछवाहा रौ गीत

फूंकाड़णौ, फूंकाड़बौ—देखो 'फुंकाणौ, फुंकाबौ' (रू. भे.)

फूंकाड़णहार, हारौ (हारी), **फूंकाड़णियौ**—वि०।

फूंकाड़िओड़ौ, फूंकाड़ियोड़ौ, फूंकाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फूंकाड़ीजणौ, फूंकाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फूंकाड़ियोड़ौ—देखो 'फुंकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूंकाड़ियोड़ी)

फूंकाणौ, फूंकाबौ—देखो 'फुंकाणौ, फुंकाबौ' (रू. भे.)

फूंकाणहार, हारौ (हारी), फूंकाणियौ—वि०।

फूंकायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फूंकाईजणौ, फूंकाईजबौ—कर्म वा०।

फूंकायोड़ौ—देखो 'फुंकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूंकायोड़ी)

फूंकार—सं० स्त्री० [सं० फूत्कारः] १ संवेगात्मक उत्तेजना के समय श्वास की तीव्रता के कारण कुछ विशेष प्राणियों द्वारा फूं-फूं के रूप में की जाने वाली ध्वनि, फुफकार, फूत्कार।

उ०—धिखते आरण से लोयण जमराज से असवार काळीनाग ज्यूं करते फूरणूं का **फूंकार** ऐसे सारवांनूं के हाकलेसै बिमरीर वाघूं परि धाए।—सू. प्र.

२ श्वास।

मुहा०—१ फूंकार करणी—क्रोध प्रकट करना, कुपित होना।

२ फूंकार मारणी, फूंकार लेणी—विश्राम करना, आराम करना।

रू० भे०—फुंकार, फुंफकार, फुकार, फुफकार।

अल्पा०—फुंकारी, फूंकारौ, फुंफकारौ, फूकारौ।

मह०—फूंकरड़।

फूंकारणौ, फूंकारबौ—क्रि० स०—१ संवेगात्मक अवस्था में किसी पर आघात करने के भाव से सर्प, मगरमच्छ, भैंस, बैल आदि का फूं-फूं की ध्वनि करते हुए श्वास छोड़ना, फुफकारना, फूत्कारना।

२ श्वास छोडना।

फूंकारणहार, हारौ (हारी), फूंकारणियौ—वि०।

फूंकारिओड़ौ, फूंकारियोड़ौ, फूंकार्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फूंकारीजणौ, फूंकारीजबौ—कर्म वा०।

फुफकारणौ, फुफकारबौ, फूतकारणौ, फूतकारबौ—रू० भे०।

फूंकारियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ क्रोधावस्था मे आघात करने के भाव से फूं-फूं की ध्वनि करते हुए श्वास छोड़ा हुआ. (सर्प, मगरमच्छ, भैंस, बैल आदि)

२ श्वास छोड़ा हुआ.

(स्त्री० फूंकारियोड़ी)

फूंकारौ—देखो 'फूंकार' (अल्पा., रू. भे.)

फूंकावणौ, फूंकावबौ—देखो 'फुंकाणौ फुंकाबौ' (रू. भे.)

फूंकावणहार, हारौ (हारी), फूंकावणियौ—वि०।

फूंकाविओड़ौ, फूंकावियोड़ौ, फूंकाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फूंकावीजणौ, फूंकावीजबौ—कर्म वा०।

फूंकावियोड़ौ—देखो 'फुंकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूंकावियोड़ी)

फूंकियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ मुंह को संकुचित करके वेग से वायु छोड़ा हुआ. २ मंत्रादि पढ़ते हुए मुंह से वायु छोड़ा हुआ, फूंक मारा हुआ. ३ मुंह से बजाये जाने वाले वाद्यों को फूंक मार कर बजाया हुआ. ४ जलाया हुआ, भस्म किया हुआ. ५ नष्ट किया हुआ, नाश किया हुआ. ६ किसी धातु की रासायनिक रीति से भस्म बनाया हुआ. ७ सताया हुआ.

(स्त्री० फूंकियोड़ी)

फूंकौ—१ देखो 'फूंक' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—रसोई मे धूवा **फूंकौ** पछै ई कर लेजौ, पै'ला बेटा रौ औ ओळवौ भेलौ।—फुलवाड़ी

२ देखो 'फूंकणौ' (रू. भे.)

फूंगारी—सं० स्त्री०—एक प्रकार का भूफोड़।

उ०—फूधेडी नइं फणगरी, **फूंगारी** नइं फांगि। फूणा फूली फूमती; फोफल फूली सांगि।—मा. कां. प्र.

फूंणौ—देखो 'फुणौ' (रू. भे.)

फूंतकार—देखो 'फूतकार' (रू. भे.)

उ०—सारां देबा जिसौ फुणांटा करां कुसाळीसिंग, करै **फूंतकारां**

कोप आखरां सकाज । पात के गारडु थाका गोरावां ठाकरां पढ़ै, राखै कांण आखरां तो जिहा नागराज ।—कविराजा करणीदांन

फूंतरौ–सं० पु० [देशज] किसी पदार्थ का छिलका ।
अल्पा०—फुंतरकौ, फुतरकौ ।

फूंतारियौ–सं० पु०—उदयपुर का एक सिक्का विशेष जो एक आने का बारहवां हिस्सा होता था ।

फूंद—देखो 'फूंदौ' (मह., रू. भे.)
उ०—पाई कंकण सिर बंधीयौ मोड़, प्रथम पयांणउ दूरग चीतोड़ । राता **फूंदा** पाटका, ब्राह्मण उचरइ वेद पुरांण ।—वी. दे.

फूंदाळ—देखो 'फूंदाळौ' (मह., रू. भे.)

फूंदाळौ–वि० (स्त्री० फूंदाळी) बहुत से गुच्छों वाला, फूंदों वाला ।
उ०—१ लोई ओढ़णनै साड़ौ लूमाळौ, फूटर लटकंतौ नाड़ौ **फूंदाळौ** । पावां पचडोरी पगरखियां पैं'रै, सूरत सिघण सी बन जंगळ बैरै । —ऊ. का.
उ०—२ वांमण नांमी **फूंदाळी** राखड़ी सिंघ रा पंजा रै बांध दी । —फुलवाड़ी

फूंदी–सं० स्त्री० [देशज] १ तितली । उ०—भांत-भांत रा रळियावणा रूड़ा पंखेरू रळियां करता हा—हंस, कळहंस, राजहंस, सारस, बुगला, सूवटा, मोर, कोयलां, कबूड़ा, कमेड़ी, टींटोड़ी, तीतर, तिलोर, बाटबर, मैना, कूकड़ा, **फूंदियां**, भंवरा, खातीचिड़ा, सुगनचिड़ी, कावर, कोचर, गोगू, कुरज, जळकाग, वटेर अर सोवनचिड़ी सरब इत्याद पंछी मीठा बोल सुणावता हा ।—फुलवाड़ी
२ बालिकाओं द्वारा किया जाने वाला एक प्रकार का नृत्य ।
क्रि० प्र०—खाणी, लैणी ।
३ उक्त नृत्य के साथ गाया जाने वाला लोक-गीत ।
४ देखो 'फूंदौ' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—पिचरंगा सूत री नाथां अर पिचरंगा भळेवड़ा, रेसमी, **फूंदियां**, सूत री राहड़ियां ।—फुलवाड़ी
रू० भे०—फुंदी, फुंदी, फूंदाळी, फूंभी ।

फूंदौ–सं० पु० [देशज] १ रंग बिरंगे धागों या सूत से बनाया हुआ वह छोटा त्रिभुजाकार अथवा गोल गुच्छा जो सजावट या सुन्दरता के लिए किसी वस्त्र, बन्दरमाल अथवा आभूषण आदि में प्रयुक्त किए जाने वाले धागों के किनारे पर बांधे जाते हैं या लगाये जाते हैं ।
२ देखो 'राखड़ी' ।
रू० भे०—फुंदौ ।
मह०—फूंद ।

फूंधाळी—देखो 'फूंदी' (रू. भे.)
उ०—फजरां हथणीं सी दधि मथणीं फुरती, माटां घरघर में घणहरसी घुरती । खूली आथणियां साथणिया खाती, फूली-फूली फिर **फूंधाळी** गाती ।—ऊ. का.

फूंधाळीडोरी–सं० स्त्री० यौ० [देशज] लड़कियों द्वारा गाए जाने वाला लोक-गीत ।

फूंफां–सं० स्त्री० [अनु०] जोर-जोर से श्वास लेने से उत्पन्न ध्वनि । (रोश)
उ०—इत्ता में हाथ भर लांबी जीभ लटकायां अेक डाकण **फूंफां फूंफां** करती दरबार में आई ।—फुलवाड़ी

फूंफाड़ियौ–वि०—१ मुंह या नाक से फूं-फूं शब्द करने वाला, फुफकार करने वाला ।
२ किसी कार्य को शीघ्रता से कराने वाला, जल्दबाज ।
३ देखो 'फूंफाड़ौ' (अल्पा., रू. भे.)
रू० भे०—फूंफाड्यौ ।

फूंफाड़ौ–सं० पु० [अनु०] १ नाक या मुंह से श्वास की तेज गति के साथ निकलने वाली ध्वनि, फुफकार, फूत्कार ।
उ०—भीरू आरातुर मूंफाड़ा भाजै, बैं'तां फुरणां रा **फूंफाड़ा** बाजै । हाळी मूंछ रा लेता हटकारा, फिरता पूंछा रा देता फटकारा ।—ऊ. का.
२ क्रोधावस्था में नाक से तेज श्वास लेने के साथ उत्पन्न ध्वनि ।
उ०—थनै कित्ती वार बरजियौ के किणी सूं बोछरड़ायां मत कर । पण थारै तौ हाथां पगां दीया बळै । थूं म्याळमिन्ना री मूंछियां क्यूं कुरटी । वौ रीस में **फूंफाड़ा** करतौ आयौ ।—फुलवाड़ी
मुहा०—१ फूंफाड़ौ करणौ—क्रोध व्यक्त करना, कुपित होना ।
२ फूंफाड़ौ खाणौ—हलका विश्राम लेना ।
रू० भे०—फुंफाड़ौ, फूफाड़ौ ।
अल्पा०—फूंफाड़ियौ, फूंफाड्यौ ।

फूंफाड्यौ—१ देखो 'फूंफाड़ियौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फूफाड़ौ' (अल्पा., रू. भे.)

फूंफी–सं० स्त्री० [सं० पुष्पी, प्रा० पुप्फी] पिता की बहिन, बुआ ।
रू० भे०—फूफी ।

फूंफौ–सं० पु० [सं० पुष्पा, प्रा० पुप्फा] (स्त्री० फूंफी) बुआ का पति ।
उ०—जिण अरभक (बालक) लाड में मत्त,. एकण दिन कंदुक री क्रीड़ा करतां आघात रौ अपराध मांनि कोई ग्रांम्य स्त्री रा कहण हूं **फूंफा** समुद्रसिंह नूं आपरा बाप रौ मारणहार जांणियौ ।—वं. भा.
रू० भे०—फूफौ ।

फूंवड़ौ—देखो 'पूंगड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फूंवड़ी)

फूंवदौ–सं० पु० [देशज] रुई या अन्य रेशेदार पदार्थ का छोटा भाग, गुच्छा, अंश या टुकड़ा ।
उ०—मील री फाटक मार्थं पैं'रण रा गाभां रौ संभाळौ लेवता तौ ई वौ पिंजारौ खूंजिया में घालनै रूई रा अेक दो **फूंवदा** तौ ले ई आवतौ ।—फुलवाड़ी

रू० भे०—फूंमदौ, फूवदौ, फूभदौ, फूमदौ ।

फूंबी—देखो 'फुंबी' (रू. भे.)

फूंबौ—देखो 'फुंबौ' (रू. भे.)

उ०—नाक में अंतर रा **फूंबा** राखै, आडौ कपड़ौ राखै ।
—फुलवाड़ी

फूंभड़ौ—देखो 'पूंगड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फूंभड़ी)

फूमी—सं० स्त्री० [सं० पुष्पुम्भी] १ बाजरी के बाल पर आने वाला वह फूसनुमा पदार्थ जो बाजरी के बाल में दाना पड़ने का द्योतक होता है ।

२ देखो 'फुंबी' (रू. भे.)

३ देखो 'फूंदी' (३) (रू. भे.)

रू०भे०—फूमी ।

फूंभौ—देखो 'फुंबौ' (रू. भे.)

उ०—राहु निसत्त करै ग्रसि तेहनइ, जांणौ रू नै **फूंमौ** । तेहज राहु जिनेसर सेवा, करइ सदाइ ऊभौ ।—वि. कु.

फूंमवौ—देखो 'फूबदौ' (रू. भे.)

उ०—विणियां मे रूई री ठौड़ सोना राई **फूंमदा** निपजता व्है तौ कैड़ौ नांमी कांम रैवै ।—फुलवाड़ी

फूमी—देखो 'फूंभी' (रू.भे.)

फूंहारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

उ०—रूधिर की धार साथै ही ऊछळै छै । जकै **फूंहारां** की सी रोस अंग ऊपर मिळै छै ।—पनां वीरमदे री बात

फूंही—देखो 'फुही' (रू. भे.)

उ०—उलकापात उडड, पवन छूटौ रज वूठी । सादै **फूंही** विकट, दिवस राजा सुर ऊठी ।—मा. वचनिका

फू—सं० पु०—१ फूक । २ ऋण । ३ भू, भूमि । ४ शरण । ५ वचन । ६ घास । ७ तिनका, तृण । ८ कुश । (एका०)
९ कूड़ा-करकट, कचरा ।
मुहा०—फू री ओडी माथै ऊंचाणी—बदनाम होना ।
सर्व०—सर्व, सब । (एका०)
वि०—अफल, निष्फल । (एका०)

फूकणूं—सं० पु०—१ फेफड़ा । (डिं. को.)
२ देखो 'फूकणौ' (रू. भे.)

फूकौ—सं० पु०—१ देखो 'फूंक' (अल्पा, रू. भे.)
२ देखो 'फूंकणौ' (रू. भे.)
३ देखो 'फाकौ' (रू. भे.) (बीकानेर)

फूड़—वि०—१ वह व्यक्ति जिसके कार्य में कुशलता न हो, अदक्ष ।

उ०—कामी कूड प्रपंच घणाकर, भूड़ करै तन भेर । ऊ साध्वी दिस घूड़ उडायर, **फूड़** बतावै फेर ।—ऊ. का.

२ अभद्र, भद्दा, वेशउर, अशिष्ट । उ०—अेक चौधरी जवांन रौ बेड़ौ अर **फूड़** अंत इज घणौ हौ ।—फुलवाड़ी

३ मैला-कुचैला ।

४ भद्दी व बेढ़ंगी चाल वाला ।

सं० पु०—ध्वनि ।

उ०—बस होत बधावा चोहट चावा, झट छावा झूमंदा है । संखां ढिग संखा अधम असंका, **फूड़ फूड़** फूकंदा है ।—ऊ. का.

रू० भे०—फुहड़, फुहड, फूह, फूहड़, फूहड, फूहड़ि ।

फूड़ियौ—सं० पु०—कुत्ते या बिल्ली का विष्ठा ।

फूट—सं० स्त्री० [सं० स्फुट्] १ फूटने की क्रिया या भाव ।

२ पृथक होने का भाव ।

३ पारस्परिक विरोध या वैमनस्य, आपसी अनबन या बिगाड़ ।

उ०—१ किणी अेक रै साथै न्याव व्हियां तीन जणा साथै अन्याव व्हैला । किणनै वेराजी करै । घर में **फूट** पड़ जावैला ।—फुलवाड़ी

उ०—२ मन अकबर मजबूत **फूट** हींदवां बेफिकर । काफर कोम कपूत, पकड़ू रांण प्रतापसी ।—दुरसौ आढौ

उ०—३ देस में अंग्रेज आयौ कांई कांई लायौ रे, **फूट** नांखी माया में बेगार लायौ रे, काळी टोपी रौ, हां हां काळी टोपी रौ, देस में छावणियां नांखै रे काळी टोपी रौ ।—लो. गी.

४ बाजरी के पौधे की पेरी में से निकलने वाला अंकुर ।

फूटण, फूटणी—सं० स्त्री० [सं० स्फुटनम्] १ फूट कर अलग होने वाला टुकड़ा या भाग ।

२ शरीर के संधि स्थलों में होने वाली पीड़ा । (अमरत)

फूटणौ, फूटबौ—क्रि० अ० [सं० स्फुटनम्] १ किसी कठोर वस्तु का दबाव अथवा आघात पाकर टूटना, टुकड़े होना ।

उ०—चार पांचेक साथणियां घोड़ा री फेट में आयगी । धड़ाधड़ पारियां **फूटण** लागी ।—फुलवाड़ी

२ आनद्ध (चमड़े से मंढे हुए) वाद्यों में दरार पड़ना, छिद्र होना, फूटना ।

उ०—**फूटै** पुड़ नौबत पड़ी, टूटै डंड निसांण । पेख सहेली पीव रै, पूचै बधियौ पांण ।—वी. स.

३ पृथक होना, मतभेद होना, फूट पड़ना ।

उ०—भीतरलां **फूटां** मडां, कै खूंटा सामांन । इण गढ़ में होसी अमल, खम तूं आसिफ खांन ।—बां. दा.

४ किसी रोक, बाधा या परदे आदि का दबाव के कारण हट जाना ।

ज्यूं०—तळाव फूटणौ, फूंकौ फूटणौ, बांध फूटणौ ।

५ तालाब, बांध आदि में क्षमता से अधिक पानी भर जाने के कारण पानी का बाहर निकलना ।

उ०—नइवाली अगोरिजालि, प्रवाह छूटइं, बंध **फूटइं** । देहरि दंड कलस आंमलसारा, सोना तणा झलकइं ।—सभा.

६ मर्यादोल्लंघन होना, सीमा छोड़ना ।

उ०—रज भूधर व्योम आछाद रहै, वहते किर **फूट** समुद्र वहै । चर आतर प्रांण पगेस चलै, दिख आया हिंदुसथांन दळै ।—रा.रू.

७ शरीर के किसी अंग में चोट लगने पर घाव पड़ना और रक्त बहना।
ज्यूं०—आंख फूटणी, कांन फूटणौ, पग फूटणौ, पेट फूटणौ।
मुहा०—१ कांन फूटणौ—बहरा होना। २ फूटी आंख नी सुहावणौ—अत्यन्त अप्रिय लगना।
८ आरपार होना, वेध कर निकलना।
उ०—१ जग-ज्जेठ जूटै, फरी कूंत फूटै। कटक्कै कराळं, जुआ जीण-साळ।—गु. रू. वं.
उ०—२ आ कहता ही पातसाह री सैन सूं वजीर रौ तीर मकवाण री छाती रै पार फूटौ।—वं. भा.
६ फोड़े-फुन्सी आदि का पकाव लेने पर मवाद निकलना।
उ०—जद स्वांमी जी कह्यौ—किणहि रै गूबड़ो दुखतौ घणौ नै पछै फूट गयौ तौ ऊ राजी हुवै के वेराजी हुवै।—मि. द्र.
१० प्रसारित होना, व्याप्त होना।
उ०—१ रांणी जांणती के राजकंवरां नै मारण रौ हुकम सुणतां ईं सगळी नगरी में हाकौ फूट जावैला।—फुलवाड़ी
उ०—२ सोरंभ फूट जब्बाघ एम, घण वूठै जळहर लहर जेम। पेखियै तास सोभा परंम, किसनागर अंबर जख कदंम।
—गु. रू. बं.
उ०—३ राजांन राजावत मारू घरै पधारिआ छै। चौकि कळळ फूटि नै रही छै।—रा. सा. सं.
११ सुरक्षा की दृष्टि से बनाये गये आहते का टूटना या फूटना, आवागमन अबाध गति से खुल जाना।
उ०—उमै एक कर राखणां, क्रिपण कहै सिर फूट। जाचक जन भीतर धसै, फाटक पड़ियां फूट।—बां. दा.
१२ रासायनिक पदार्थों, आतिशबाजी के पटाकों एवं बम आदि का विस्फोट होना।
१३ किसी वस्तु का अनावरित होकर स्पष्ट रूप से लक्षित होना, बाहर निकलना, बहना।
उ०—वा आपरा हांचळ उघाड़नै कह्यौ—जे म्हैं थारी मां हूं तौ म्हारै हांचळां सूं दूध री बत्तीस धारावां फूटै।—फुलवाड़ी
१४ ऊपरी दवाव हटाकर बाहर निकलना, प्रस्फुटित होना, अंकुरित होना।
उ०—काची कूंपळ फूल फळ, फूटी सा बणराय। वाड़ी भरी वसंत री, लूटी लूआं आय।—लू
१५ शाखा रूप मे विभक्त होना, पृथक होना।
१६ शरीर के संधि-स्थलों में पीड़ा या दर्द होना।
१७ किसी गुप्त बात का भेद खुल जाना, रहस्योद्‌घाटन होना।
१८ किसी स्थान से चुपचाप रवाना हो जाना, खिसक जाना, भाग जाना।
ज्यूं०—अठा सूं अबै फूटणौ छोको हैं।
१९ किसी तरल पदार्थ का रिसकर एक ओर से दूसरी ओर निकल जाना।

फूटणहार, हारौ (हारी), फूटणियौ—वि०।
फूटिओड़ौ, फूटियोड़ौ, फूट्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फूटीजणौ, फूटीजबौ—भाव वा०।
फुट्टणौ, फुट्टबौ—रू० भे०।

फुटर—सं० पु० [देशज] १ निर्मल, स्वच्छ।
उ०—ओथ बावड़ी, पागोड़ा थिर नीलम जड़िया, रतन-नळ जुत हेम-कंवळ जळ फूटर भरिया।—मेघ.
२ देखो 'फूटरौ' (मह., रू. भे.)
उ०—लोई ओढ़णनै साड़ौ लूमाळौ, फूटर लटकंतौ नाडौ फूंदाळौ। पावां पचडोरी पगरखियां पै'रै, सूरत सिवण सी वन जंगळ वैरै।
—ऊ. का.
(स्त्री० फूटरी)

फूटरमल—सं० पु० [राज० फूटर+सं० मल्ल] पति।
उ०—आयौ सगैजी रौ सूवटौ, हे आयौ सगैजी रौ सूवटौ, ओ लेग्यौ टोळी मां सूं टाळ, फूटरमल ले चाल्यौ।—लो. गी.
वि०—सुन्दर, मनमोहक।
उ०—बन्ना मैं थांनै फूटरमल यूं कयौ, जटकै नै सरवरियै मत जाय वन्ना, पिणियारियां री नीजर लागणी।—लो. गी.

फूटरियौ—देखो 'फूटरौ' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—फूटरिया हिरणी जसौ, बोह कूदणौ घट्ट। ज्यारौ माहो बांकड़ौ, थांभै राखै थट्ट।—डाढ़ाळा सूर री वात

फूटरौ—वि० [देशज] (स्त्री० फूटरी) १ सुन्दर, मनमोहक।
उ०—एक तणा बांधव भरतार, एक तणा फूटरा कुमार। जे जे हता रिण वाउला, एक तणा मारया माउला।—कां. दे. प्र.
२ गुणवान।
उ०—भूंडी म्हैं, वा फूटरी, ज्यां चंपौ नै ववूल। पड़ी घरांणा मांयनै, घोवां-घोवां धूळ। घोवां-घोवां धूळ, मूळ सूं काया मांडा। कालेजां री मेजां में, संग सेजां रांडां। अंगरेजी पढियां री बाई, अकल ऊंडी। अणपरणी है घणी फूटरी, परणी भूंडी।
—आशुकवि पं० नित्यानंद शास्त्री
३ साफ सफाई वाला, सुव्यवस्थित।
रू० भे०—पूठरौ, फुटरौ, फूठरौ।
यौ०—फूटरमल।
अल्पा०—फूटरियौ।
मह०—फूटर।

फूटियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ कोई कठोर पदार्थ आघात या दवाव पाकर टूटा हुआ. २ कोई नरम पदार्थ (वस्तु) आघात या दवाव से विदीर्ण हुवा हुआ, फटा हुआ, नष्ट हुवा हुआ. ३ पृथक हुवा हुआ, मत-भेद हुवा हुआ. ४ कोई रोक, वाधा या परदा आदि दवाव के कारण हटा हुआ. ५ दरार पड़ा हुआ, छिद्रित. (आनद्धवाच)

६ क्षमता से अधिक पानी आजाने के कारण पानी बाहर निकला हुआ. (तालाव, बांध आदि) ७ शरीर के किसी अंग में चोट लगने पर घाव पड़ा हुआ, रक्त बहा हुआ. ८ मवाद निकला हुआ. (फोड़ा-फुन्सी) ९ शरीर का कोई अंग चोट आदि लगने से विकृत या बेकार हुवा हुआ. १० प्रसारित हुवा हुआ, व्याप्त हुवा हुआ. ११ सुरक्षा की दृष्टि से बनाया गया अहाता आदि टूटा हुआ, आवागमन अबाध गति से खुला हुआ. १२ कोई रासायनिक पदार्थ, आतिशबाजी का पटाका या बम विस्फोट हुवा हुआ. १३ कोई पदार्थ अनावरित होकर स्पष्ट रूप से लक्षित हुवा हुआ, बाहर निकला हुआ, बहा हुआ. १४ ऊपरी दबाव हटाकर बाहर निकला हुआ, प्रस्फुटित हुवा हुआ. १५ शाखा रूप में विभक्त हुवा हुआ, पृथक हुवा हुआ. १६ किसी गुप्त बात का भेद खुला हुवा, रहस्योद्घाटन हुवा हुआ. १७ किसी स्थान से चुपचाप रवाना हुवा हुआ, खिसका हुआ, भागा हुआ. १८ मर्यादोल्लंघन हुवा हुआ, सीमा छोड़ा हुआ. १९ किसी तरल पदार्थ का रिसकर एक ओर से दूसरी ओर निकला हुआ.

(स्त्री० फूटियोड़ी)

फूटोड़ौ, फूटौ–वि० [सं० स्फुट्] (स्त्री० फूटी, फूटोड़ी) १ फूटा हुआ, छिद्रित।

उ०—चोखा गुरु खोटा गुरु ऊपरै नावा रौ द्रिस्टांत स्वांमी जी दियौ—तीन नावा। एक तौ काठ की साजी नावा, एक **फूटी** नावा, एक पत्थर नीं नावा।—मि. द्र.

२ टूटा हुआ, भग्न, खण्डित।

उ०— पण वा तौ मलीच सुभाव री इण **फूटोड़ा** लोटा सूं ई धकावणी चावै। इण कोजा लोटा सू म्हारौ कित्तौ भूंडौ लागै।

—फुलवाड़ी

३ दरारयुक्त।

उ०—ज्यां में बसिया तीन कुमार—दो ठोटी नै अेक घड़ जांणै ई नी। ज्यां घड़ी तीन हांडियां—दो **फूटोड़ी** नै अेक चढ़ै ई नीं।

—फुलवाड़ी

४ वाह्य आघात से क्षत विक्षित। (शरीर का अंग)

उ०—सेवट तिसां मरती उणीज नाडी माथै पांणी पीवण सारू आई तौ कांई देखै के चिड़ौ तौ पाळ माथै मरियोड़ौ पड़ियौ। पेट **फूटोड़ौ**। कीड़ियां दोळी व्हियोड़ी।—फुलवाड़ी

४ हत् भाग्य।

५ देखो 'फूटियोड़ौ' (रू. भे.)

फूठरौ—देखो 'फूटरौ' (रू. भे.)

उ०—१ ठाकरसा रौ कांईं रोबीलौ चेहरौ अर कांईं रूपाळी ओप है। अैड़ौ **फूठरौ** उणियारौ म्हारी निजरां में तौ नीं आयौ।

—फुलवाड़ी

उ०—२ चिड़ी उठा सूं उडी जकौ खेत नै इण छेड़ा सूं उण छेडा तांईं **फूठरौ** हळ न्हाकियौ।—फुलवाड़ी

फूड़ीयौ–सं० पु०—१ वृक्ष विशेष ? उ०—फेकारी नइ फालसां, फोफल फणस फणिद। फूवेढ़ी नइ **फूड़ीया**, फालक फिरांमण फिंद।

—मा कां. प्र.

२ देखो 'फूड़ियौ' (रू. भे.)

फूणौ–सं० पु०—१ एक प्रकार का शाक विशेष। उ०—फूवेडी नइं फणगरी ,फूंगारी नइं फांगि। **फूणा** फूली फूमती, फोफल फूली सांगि।

—मा. कां. प्र.

२ देखो 'फुणौ' (रू. भे.)

फूतकार–सं० स्त्री०—१ लोमड़ी, गीदड़, बन्दर आदि जन्तुओं के मुख से निकलने वाली 'फें-फें' की ध्वनि।

२ देखो 'फूकार'।

रू० भे०—फुत्कार, फूतकार, फूत्रकार, फूत्कार, फेतकार फेत्कार, फैंतकार, फैंतकारी, फैंत्कार, फैत्कार, फोतकार, फौतकार।

अल्पा०—फूतकारौ।

फूतकारणौ, फूतकारबौ–क्रि० स०—१ लोमड़ी, गीदड़, बन्दर आदि जन्तुओं के द्वारा मुख से 'फें-फें' की ध्वनि करना।

२ देखो 'फूंकारणौ, फूकारबौ' (रू. भे.)

फूतकारणहार, हारौ (हारी), फूतकारणियौ—वि०।

फूतकारिओड़ौ, फूतकारियोड़ौ, फूतकारयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फूतकारीजणौ, फूतकारीजबौ—कर्म वा०।

फूतकारियोड़ौ–भू० का० कृ०—१ मुख से 'फें-फें' की ध्वनि किया हुआ. (लोमड़ी, गीदड़, बन्दर आदि)

२ देखो 'फूंकारियोडौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूतकारियोड़ी)

फूतकारौ—१ देखो 'फूतकार' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—कदंमा करगां घाव दाव व्है अभूतकारा, उडै **फूतकारा** विखां फुणां रा अभाव।—र. ज. प्र.

फूत्रकार—१ देखो 'फूतकार' (रू. भे.)

उ०—पैसारा उसारा खरा पाइकांरा, सहै नाग सारा नरां नाइकांरा। मचै मूठ मारा भरै स्रोण भारा, फणांरा घंणारा करै **फूत्रकारा**।—ना. द.

फूत्कार—देखो 'फूतकार' (रू. भे.)

उ०—१ किहां इक सिवा **फूत्कार** घूहड़ तणा घू-घु सब्द कार। सिंह तणा सिंहनाद। वाघ तणा गुंजारव। सूअर तणा घर-घरा रव। वांनर **फूत्कार** करइ।—सभा.

उ०—२ कवहि ठाइ अलिजर तणा **फूत्कार**, कवहि ठाइ वांनर तणा बोंकार ।—सभा.

फूदड़ौ—देखो 'पूगड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूदड़ी)

फूदडी-सं० स्त्री० [?] पंखुरी ?

उ०—तीह पाखइ नोही पाटण ना कंदोई,आगर ना जीण, परिकर नां प्रमांण, चीत्रांमनी जाति, माहि बत्रीस **फूदडी** नी भाति ।—व. स.

फूदडौ—देखो 'पूगड़ौ' (रू. भे.)

उ०—कोठा नइ कोसीसा घणां, गुख वार मढ़ मतवारणां । वली धवलहर जोयां चडी, रतनजडित वइठी **फूदडी** ।—कां. दे. प्र.

(स्त्री० फूदडी)

फूवेडी-सं० स्त्री०—शाक विशेष ?

उ०—**फूवेडी** नइं फणगरी, फूंगारी नइं फांगि । फूणा फूली फूमती, फोफल फूली सागि ।—मा. का. प्र.

फूवेड़ी-सं० स्त्री०—वृक्ष विशेष ?

उ०—फेकारी नइ फालसां, फोफल फणस फरिणद । **फूवेड़ी** नइ फूढ़ीया, फालक फिरांमण फिंद ।—मा. कां. प्र.

फूनी-सं० स्त्री०—तितली ।

उ०—फरकट फोकटनु फिरइ, फागुण फूफूकार । **फूनी** मझ फणगर जिसिउ, जउ जगली नहीं दार ।—मा. कां. प्र.

२ बच्चों की लिंगेन्द्रिय ।

फूफस-सं० स्त्री०—पति या पत्नी की बुआ । (शेखावाटी)

फूफसरौ-सं० पु०—पति या पत्नी की बुआ का पति । (शेखावाटी)

फूफाड़ौ—देखो 'फूंफाड़ौ' (रू. भे.)

उ०—अर जे गूजरी सूं ब्याव री वात रौ भणकारौ ई पड़ जावै तौ लोग कांनी-कांनी सूं **फूफाड़ा** करता दरबार में हाजर व्है जावैला ।—फुलवाड़ी

फूफी—देखो 'फूंफी' (रू. भे.)

फूफूकार—

उ०—फरकट फोकटनु फिरइ, फागुण **फूफूकार** । फूनी मझ फणगर जिसिउ, जउ जमली नहीं दार ।—मा. कां. प्र.

फूफौ—देखो 'फूफौ' (रू. भे.)

उ०—सांवळियौ वहनोई मांगां, सोदरा वहन मांगां । हांडा धोवण **फूफौ** मांगा, झाड़ू देवण भूवा ।—लो. गी.

(स्त्री० फूफी)

फूबड़ौ—देखो 'पूगड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूबड़ी)

फूबदौ—देखो 'फूंबदौ' (रू. भे.)

फूबी—देखो 'फुंबी' (रू. भे.)

फूमदौ, फूमदौ—देखो 'फूंबदौ' (रू. भे.)

उ०—कोई अेक जणौ ई म्हारै मंतस रा आखरां नै वांचणियौ व्हैतौ । तौ म्हैं दुख रै झाडावळा भाखर नै **फूमदा** ज्यूं उडाय देती ।—फुलवाड़ी

फूरकणी—चम-चम का सा दर्द विशेष । (अमरत)

फूल—वि० [सं० फुल्ल] १ तुलनात्मक दृष्टि से हलका ।

२ खुश ।

सं० पु०—१ वनस्पति में फलोत्पत्ति का वह मूलभूत तत्त्व जो नियत ऋतु में विभिन्न रंग की पंखुड़ियों, गुच्छों या गांठ के रूप में प्रस्फुटित होता है, कुसुम, पुष्प, पुहुप ।

उ०—आठम प्रहर संझा समै, धण ठव्वै सिणगार । पांन कजळ पाखर करै, फूलां कौ गळिहार ।—ढो. मा.

क्रि० प्र०—आणौ, उतरणौ, खिरणौ, खिलणौ, लागणौ ।

मुहा०—१ फूल सूंघणौ—बहुत कम खाना । २ फूल बरसणौ, झड़णौ—मधुर वाणी निकलना ।

यौ०—फूलगोभी, फूलपत्ता, फूलपांखड़ी, फूलपांन, फूलमंडळी, फूलमाळा ।

२ फूल के आकार का आभूषण ।

ज्यूं०—सीस-फूल ।

उ०—मांग फूल सिर फूल जड़ाऊ मंडिया, खिण खिण निरखै नाह, हिए दुख खंडिया ।—बां. दा.

३ भट्टी से प्रथम बार निकाला हुआ शराव जिसका नशा हलका होता है ।

उ०—सोनै रूपै जड़ाऊ के तूंग ऐराक फूल सूं भरवाए । रस के पूर सूं लूं की नुकल बांटि प्याला फिरवाए ।—सू. प्र.

४ हलका नशा ।

५ बलि चढ़ाए हुए पशु का रक्त जिसे बलिदानी भक्त देवी को चढ़ा कर पीते हैं ।

उ०—बाकरां री सिल्हाड़नै ठरका हुवै छै । तरवारां रा छणकार हुयनै रह्या छै । चौरंगां री खाटखड़ हुयनै रही छै । कटोरां मांहे फूल लीजै छै । वाकरा होसनाकां वसू कीजै छै ।—रा. सा. सं.

[सं० स्फुलिंग] ६ अग्नि-कण, चिनगारी ।

उ०—१ कांम रौ कोट, नेठाह घरधीर, वहतौ काळ वहीओ काहर, तोरण रा आखा, अगनि फूल, सती रौ नाळेर, काली रौ वेहड़ो, रुळीआरौ रौ जोड़, रांकां रौ माळवौ, कुंआरी घड़ा रौ वींद, पांच सै भड़ां भाइयां मांभीजां लिआं, हजार असवारां री ढाल किआ, भूखीअै लोह लिआं, काळै बरछिआं रै घुंग किआं, चढ़तै सूर रौ सिकार चढ़िओ छै ।—रा. सा. सं.

७ आतिशबाजी से निकलने वाली चिनगारी ।

८ किन्हीं दो वस्तुओं के संघर्षण से निकलने वाली चिनगारी ।

उ०—१ झंडे वाहिर गहिके, भुजदंड भुकाया । फूल झराया सान पै, असि वाढ़ चिराया ।—वं. भा.

उ०—२ असि धावक आविया, सस्त्र मांजिया सताबी। सांणां चढ़िया-सुक्र, फूल झड़िया हद फाबी।—मे. म.

क्रि० प्र०—झड़णौ।

९ चिराग की जलती हुई बत्ती पर पड़े हुए गोल दाने जो उभरे हुए से मालूम होते हैं।

१० चिराग का वह उपकरण जिसमें बत्ती रहती है।

११ पशुओं की स्थूलान्त्र जिसे आग में भूनकर मांसाहारी खाते हैं।

उ०—खेह गरद्दी मेहलौ, अब्बीर उडाया। फूल कळेजे फिप्फरै, फबि फांक फुलाया।—वं. भा.

यौ०—फूलआंत।

१२ तलवार। उ०—फूल धावां फरड़कां, अंग लरड़का उडेवा, झिलम टोप झरड़का, खाग जरड़का खुलेवा। सोक तीर सरड़का, वहै खरड़का वगतर, ठेलै प्रेत ठरड़का, रुळै दरड़का रगतर।

—केवाट सरवहियौ

१३ मरे हुए व्यक्ति के नाम पर गले में पहने जाने वाला आभूषण विशेष, पितरों व देवता के नाम का आभूषण।

उ०—मरियां पछै पितर होवै तरै पितरां रा फूल घड़ीजै। सो पितरां रा फूलां में मंढाई होजौ तथा मरनै भूत होवै तरै प्रेत रौ जंत्र मादळिया में तथा चौकी में मंढाईजजौ।—वी. स. टी.

क्रि० प्र०—पैरणौ।

१४ फूल-पत्ती के आकार की चित्रकारी, नक्काशी या बेल-बूंटे।

उ०—मजबोल चित्रह गात, सिर इंद्रधनुख सुमात। जरकसी के जरतार, पिंड फूल-फूल अपार।—सू. प्र.

१५ शव को जलाने के पश्चात् बची हुई हड्डियां जिनको किसी नदी या तालाब आदि तीर्थ स्थान पर पानी में बहाते हैं।

उ०—ताहरां उवांनुं अगनि लगाय दीवी। तहरां वींद उतरि नै चाल्यौ अर फकीर हुवा। जांनां आपरै घरै गयां। ताहरां एक तौ स्त्रीगंगा जी फूल ले गयौ। बीजौ देसव चलतौ रह्यौ।—चौबोली

क्रि० प्र०—लाणौ, घालणौ, पधारणौ।

१६ हड्डी।

उ०—१ पीव-फूल घर कट पड़ै, मही जमै जस-मूळ। पादप नभ हुंत झड़पड़ै, फौजां ऊपर फूल।—रेवतसिंह भाटी

उ०—२ सकज्जां आसुर संभ निसंम, रवद्दां नाथ वरै त्रिय रंभ। फूटै उर फेफर खीखर फूल, अंत्रावळि वाखर भाखर ऊळ।

—मा. वचनिका

१७ गर्भाशय। उ०—घोड़ी पकड़ी चाकरां, बीय जमी सूं ठाय। घोड़ी केरा फूल में, तत्क्षण दियौ दवाय।

—ढूलची जोइये री वारता

१८ कुष्ट रोग के कारण शरीर पर पड़ने वाला लाल धब्बा।

१९ चेचक होने पर शरीर पर उभरे हुए दाने, व्रण।

२० स्त्रियों के मासिक धर्म के समय निकलने वाला रक्त।

२१ तांबे और रांगे के मिश्रण से बनी एक मिली-जुली धातु।

२२ मथानी के आगे का फूल के आकार का हिस्सा।

२३ कागज के कृत्रिम तरीके से बनाएं गये फूल-पत्ती।

२४ फूलने की क्रिया या भाव।

२५ किसी पदार्थ का रस निकाल कर जमाया हुआ ठोस पदार्थ।

ज्यूं०—पोदीना रा फूल।

२६ धातु निर्मित गोल या चोकोर छोटा फूल जो कपाट, बैलगाड़ी, आभूषण, ढाल आदि वस्तुओं की शोभा-वृद्धि एवं मजबूती के लिए लगाया जाता है। उ०—१ झूलाळूं की झळहळ, पैदलूं की हळवळ। ढालूं की ढळक, चपड़ास फूलूं की भळक।—सू. प्र.

उ०—२ सिंह आय हाथळ री ढाल ऊपर दीवी। ढाल रा फूल च्यारूं सोने रा था सो उड़ गया।—पदमसिंह री बात

२७ तलवार की मूठ में 'कंगन' के ठीक नीचे सूर्यमुखी फूल की भांति बीच में से उभरा एवं चारों ओर गोलाकार में पंखुड़ियों की भांति निर्मित वह भाग जो 'कटार' के ऊपर आधारित होता है।

२८ पानी का बुलबुला। उ०—निसवासर भज रे! धणनांमी, अंतर जांमी अेक अलेख। दुनियां सोख विसेस मती दिल, आंबु वाळा फूलां आरेख।—ओपौ आढ़ौ

रू० भे०—फुल, फुल्ल।

अल्पा०—फुलड़ी, फुलड़ौ, फुली, फुल्ली, फूलड़ी, फूलड़ौ, फूली, फूलौ।

फूलअरडूबौ—सं० पु० [?] एक प्रकार का छोटा पौधा जो औषध के काम आता है, अडूसा।

फूलआंत—सं० स्त्री० यौ० [राज० फूल+सं० अंत्र] पशुओं की स्थूलान्त्र जिसमें मल रहता है। उ०—ओझरा धोय-धोय मांहे मसालां मारियां। मांस घात दबगर कीजै छै। फूलआंतां अवल धोयजै छै। ऊपरा दूसरी आंतां री साढ़ां गूंथजै छै।—रा. सा. सं.

रू० भे०—फुलोत्तर।

फूलकारी—सं० स्त्री०—बेल-बूंटे बनाने व चित्रकारी या नक्काशी का काम।

फूलगार—सं० पु०—१ एक प्रकार का वस्त्र विशेष।

उ०—सिरीसाप भैरव चैतार कसबी महमूदी फलगार अब-रस सेला बाफता डोरिया मोमनी तन जेब सासाहिबी तरै-तरै रै कपड़ै रा वागा छै।—रा. सा. सं.

२ देखो 'फुलगार' (रू. भे.)

फूलगूघर—सं० पु०—शीश पर गूंथा जाने वाला एक प्रकार का रजत आभूषण। (पुष्करणा ब्राह्मण)

फूलगोमी—सं० स्त्री०—गोमी की एक जाति जिसमें मंजरियों का बंधा

हुआ ठोस पिंड होता है जो तरकारी के काम आता है।

फूलड़ी–सं० स्त्री०—१ बिवाई। उ०—देखत रांम हंसे सुदांमां कूं, देखत रांम हंसे। फाटी तौ **फूलड़ियां** पांव उभांणौ, चलतै चरण घसै।—मीरां

२ देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)

३ देखो 'फूली' (अल्पा., रू. भे.)

रू० भे०—फुलड़ी, फुल्ली।

फूलड़ो–देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—मन बाड़ी गुण **फूलड़ा**, पिय नित लेता वास। अब उण थांनक रैण दिन, पिय बिन रहूं उदास।—अज्ञात

फूलझड़ी–सं० स्त्री०—१ आतशबाजी का एक खिलौना जिसमें एक तार पर बारूद या बारूद मिश्रित मसाला लगा रहता है। जिसे सुलगाने पर उसमें से फूल की भांति चिनगारियां निकलती है।

२ उक्त प्रकार की आतशबाजी की भांति बारूद का एक बड़ा उपकरण जो मस्त हाथियों को वश में करने के लिये प्रयोग में लया जाता है। उ०—लोक भणै माहुति व्रित लेखै, सूर महा त्यां हूंत विसेखै। के सरकै सहजै अणकंपै, चरखी **फूलझड़ी** भुय कंपै।—रा. रू.

वि० वि०—जब मस्त हाथी काबू से बाहर हो जाता है तो उसे वश में करने हेतु बारूद के इस उपकरण को प्रयोग में लिया जाता है। इसे जला कर हाथी की सूंड के सामने घुमाया जाता है। इसको जलाने से इसमें से फूल के आकार की बड़ी-बड़ी चिनगारियां निकलती है जिससे हाथी चकाचौंध और स्तब्ध हो जाता है।

३ फूलों की वर्षा, पुष्पवर्षा। ४ फूलों की कतार।

५ झगड़ा या विवाद उत्पन्न करने वाली बात।

मुहा०—फूलझड़ी छोडणी—कलह पैदा करना, परस्पर लड़ा देना।

रू० भे०—फुलछड़ी, फुलझड़ी।

फूलझूमको–सं० पु०—१ स्त्रियों के पहनने का एक आभूषण विशेष। उ०—म्हारै नवषा नथ सुहावणी, सांवळड़ो हे मोत्यां बिचली लाल। म्हारै **फूलझूमका** फब रह्या, सांवळड़ो हे झूमर री लूम।—मीरां

२ फूलों का गुच्छा।

फूलडोळ–सं० पु०—१ चैत्र शुक्ला एकादशी के दिन मनाया जाने वाला एक उत्सव–इस दिन श्रीकृष्ण भगवान के फूलो का झूला सजाया जाता है।

२ खेड़ापा ग्राम में होली के दूसरे दिन रामस्नेही सम्प्रदाय का लगने वाला एक मेला।

फूलण–सं० स्त्री०—१ काई की तरह की हरी व सफेद तह जो ठंडे या वासी भोज्य-पदार्थ तथा वर्षा ऋतु में फलों पर जम जाती है।

२ शरीर की सफाई न होने पर पसीना सूखने पर उत्पन्न सफेद तह या रेखाएं। उ०—इस्ट्रखां रौ डील परसेवा मे घांण व्हियोडौ, धूड़ सू भरियोड़ौ हौ, तावड़ा रै कारण होठां कटाई आयोड़ी ही, धोती रै फाटोड़ा घड़चा रा खोजा टांकियोड़ा हा, कुड़तौ ई भीर भीर व्हियोड़ौ अर पोतियौ ई तार-तार व्हियोड़ौ हौ। फींचा रै **फूलण** आवण ढूकी ही।—फुलवाड़ी

३ 'पिंगल प्रकाश' के अनुसार एक-मात्रिक छंद विशेष।

रू० भे०—फुलण।

फूलणौ, फूलबौ–क्रि० अ० [राज० फूल] १ फूलों से युक्त होना। उ०—१ गजां ऊपरै धजां, नेजा, चीधां फरकि नै रही छै, जांणै हेमाचळ रै टूकां माथै केसू **फूलनै** रहीआ छै।—रा. सा. सं.

उ०—२ तिण पग-पग चंदण तणा तरोवर, विविध-विविध **फूली** वणराइ। पंखी मुखि हरिनांम पुणंतां, सुर ताय मांनव तण सुहाय।—महादेव पारवती री वेलि

२ फूल का खिलना, विकसित होना। उ०—वनस्पति **फूलणि** वरसात में, उत्पति जीव अपार। पांणी तंबाकू नौ जिहां, पडंरे सहुनो होइ संहार।—व. व. ग्रं.

३ प्रफुल्लित या खुश होना, आनंदित होना। उ०—जिम-जिम कायर थरहरै, तिम-तिम फैलै नूर। जिम-जिम बगतर ऊवड़ै, तिम-तिम **फूलै** सूर।—वी. स.

मुहा०—१ फूल्यौ अंग नी समांणौ—बहुत खुशी होना। २ फूल्यौ फूल्यौ फिरणौ—निश्चिंत भाव से प्रसन्नचित्त घूमना।

४ सम्पन्न होना। उ०—वीरा **फूलज्यौ** रै फळज्यौ आंम की डाळी ज्यूं वधज्यौ मांयली दूब ज्यूं।—लो. गी.

मुहा०—फूलणौ-फळणौ—सम्पन्न होना।

५ किसी वस्तु के भीतरी अवकाश में हवा, पानी या अन्य पदार्थ के समावेश से आस-पास की सतह से कुछ ऊंचा उठ जाना या उभर जाना।

ज्यूं०—गेंद या फुटबाल **फूलणौ**, पेट **फूलणौ**।

६ आघात या पीड़ा के कारण किसी अंग पर सूजन आ जाना।

७ स्थूल होना, मोटा होना।

८ गर्व करना, अभिमान करना। उ०—गैल कौ असूल सूल धूल में गह्यौ, मूलकौ गमाय, मूल फूल क्यों रह्यौ।—ऊ. का.

९ सूर्यास्त के वाद आकाश में रक्तिम आभा का छाना।

उ०—१ क्रित सोभति रेसम लूंब करै, धुरवा किर फूलिय नंभ धरै। अति उग्र तुरंगम अंग वियै, क्रम सोभत आवत डोर किये।—रा. रू.

उ०—२ माता गज रण मांझ, यों रत राता ईखजै। वांणया जांणक वादळां, सांवण फूळी सांझ।—रा. रू.

फूलणहार, हारौ (हारी), फूलणियौ—वि०।

फूलाड़णौ, फूलाड़बौ, फूलाणौ, फूलाबौ, फूलावणौ, फूलावबौ —प्रे० रू०।

फूलिग्रोड़ौ, फूलियोड़ौ, फूल्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फूलीजणौ, फूलीजबौ—भाव वा०।

फुलणौ, फुलबौ—रू० भे०।

फूलता—सं० पु०—एक प्रकार का शस्त्र विशेष। (अ. मा.)

फूलद—सं० पु० [सं० फुल्ल+द] वृक्ष, पेड़। (डिं. को.)

फूलदान—सं० पु० यौ० [राज० फूल+फा० दान] १ धातु, काच या चीनी मिट्टी का बना वह बर्त्तन जिसमें फूल सजाए जाते हैं। २ देवताओं के समक्ष फूल रखने का बर्त्तन विशेष।

फूलधार, फूलधारा, फूलध्धरा—सं० पु० [सं०फुल्लधार] १ तलवार। उ०—१ **फूलधार** पींजरै, काढ़ि कीजरा कमाळी। चंड मंड चापड़ै, लिया मारै रुद्राळी।—मा. वचनिका

उ०—२ **फूलधारां** रा वाड चाचरां ऊपरै झेलै छै। जठै सीरोइया रा सार झड़ै छै।—पनां वीरमदे री बात

उ०—३ उड्डि सीसं उरा, पिड़ं चक्काफरा। घरि **फूलध्धरा**, जारिए पंकज्जरा।—सू. प्र.

२ तलवार की धार। उ०—मुखं वास आवै अजै दूध मारां, घुबै खेल दीठा नहीं **फूलधारां**।—सू. प्र.

३ तलवार से देव विशेष के बलिदान किये जाने वाले पशु के रक्त की धारा।

४ फूल जाति के शराब की धारा।

फूलनसौ—सं० पु०—१ हलका नशा। २ फूल नामक शराब का नशा।

फूलपगर—सं० पु०—१ एक प्रकार का वस्त्र।

उ०—१ नारी करइ लूणलूछणां, नगर मांहि मांड्यां पेखणां। मारगि नवां पाथरयां चीर, **फूलपगर** परिमल अबीर।—कां. दे. प्र.

उ०—२ सोवनवडि जादर पोती पट साउली अगहल नेत्र रावेटउं सांभारावउं मटवी **फूलपगर** कणवीरउं पोतिउं।—व. स.

२ पुष्प समूह।

उ०—१ सनीस्चर रसोइ चाखइ, मंगल स्रीखंड घसइ, बुध सोनउं कसइ, अढ़ार भार वनस्पति **फूलपगर** भरइं।—व. स.

उ०—२ अति प्रधांन, स्वरग समांन। ठांमि ठांमि **फूलपगर**, इस्यउ उज्जयनी नाम नगर।—सभा.

रू० भे०—फलगर, फुलपगर, फूलफगर।

फूलप्रियंगू—सं० पु०—एक औषध विशेष। (अमरत)

फूलफगर—देखो 'फूलपगर' (रू. भे.)

उ०—मांहि बसइ भोगी, बाहिर बसइ योगी। मांहि चउरासी हट्ट स्रेरिए, बाहिर अरहट्ट स्रेरिए। ठांम ठांम **फूलफगर**, इसउ धीर कहइ उज्जेणी नगर।—सभा.

फूलबाई—सं० स्त्री०—मेहा की पुत्री व करणीदेवी की बड़ी बहिन।

फूलबाज—सं० पु०—नट जाति की एक शाखा या दल। (मा. म.)

फूलमखांणा—सं० पु०—सफेद ताल मखाना।

फूलमती—सं० स्त्री०—एक देवी का नाम जो राजा वेणु की कन्या और शीतला रोग की अधिष्ठात्री मानी जाती है।

फूलमद—सं० स्त्री०—हलका नशा। उ०—अमल अरोड़ी **फूलमद**, बाकर मांस बटक्क। मिळियां लीजै माढ़वा, गळियां तणा गटक्क। —अज्ञात

रू० भे०—फुलमद।

फूलमहल—सं० पु० यौ० [राज० फूल+फा० महल] १ राजा महाराजाओं का वह महल जिसमें बेल-बूटों की चित्रकारी विशेष रूप से की हुई हो।

२ भोग-विलास करने का महल, रंगमहल।

उ०—१ आज सियाळै सी पड़ै, ओळग जाय बलाय। **फूलमहल** में पोढ़स्यां, प्रीतम् कंठ लगाय।—अज्ञात

उ०—२ राव जी जोधा जी नै अमलां दारू में घणा सदोरा कीया। गोठ अरोग जोधो जी तळहटी रै डेरै गया नै राव जी **फूलमहल** में पोढ़ीया।—राव रिणमल री बात

रू० भे०—फूल मोहल।

फूलमाळ—सं० पु०—१ एक विशेष जाति का घोड़ा।

२ देखो 'फूलमाळा' (रू. भे.)

उ०—सह परताप वीण टुकड़ा सिर, सुकरां गूंथी अजब सबी। रूंडमाळ उर ऊपर रुद्रचे, **फूलमाळ** अद्‌भूत फबी।—महादांन मेहडू

रू० भे०—फुलमाळ, फूलांमाळ।

फूलमाळा, फूलमाला—सं० स्त्री०—फूलों की माला, पुष्पहार।

उ०—**फूलमाला** लांबावी, सिखरि आरीसा झलकइ, गगनि चिंच पताका, झलहलइ, अच्छारायणुं, इसउ जसउ देव निमियउ तिस्तु मंडपु।—सभा.

रू० भे०—फुलमाळा, फूलांमाळ।

२ हड्डियों की माला।

फूलमाळी—सं० पु०—१ माली जाति में पुष्प बेचने का व्यवसाय करने वाला व्यक्ति। २ फूलों का बगीचा लगाने वाला व्यक्ति।

फूलरज—सं० स्त्री०—पुष्परज, पराग।

फूलरी—स० स्त्री०—१ सफेद रंग की या सफेद कान वाली बकरी।

२ देखो 'फूलड़ी' (रू. भे.)

रू० भे०—फुलरी, फुल्ली।

अल्पा०—फुलरड़ी।

फूलवाड़ी—देखो 'फुलवाड़ी' (रू. भे.)

उ०—ऊपर सोहै अंबाड़ी, फूली जांणै **फूलवाड़ी**। ऊंचा परवत अरणुहारा, आंण्या गज सहस अठारा।—ध. व. ग्रं.

फूलहटी—सं० स्त्री० [राज० फूल+सं० हट्टः+ई] फूलों का विक्रय स्थल, पुष्प बाजार। (सभा.)

फूलहत्थ, फूलहथ—सं० स्त्री०—तलवार।

उ०—१ पायकां के हमल्लै बांक पट्टै **फूलहत्थूं** का दाव, नजरवछेक का हुन्नर अंगूंगा वचाव।—सू. प्र.

उ०—२ वंकि पटां **फूलहथां**, सोरि खिलकार कुसत्री। तस कसीस तेजमां, जजर गत्ती जाजत्री।—सू. प्र.

रू० भे०—फूलहाथ।

फूलहरौ—सं० पु०—शुभ रंग का घोड़ा। (शा. हो.)

फूलहाथ—देखो 'फूलहत्थ' (रू. भे.)

उ०—कटकां रा खूर पड़िनै रहीआ छै। हाथी लड़ावीजै छै, पाइक सिरंम सार्भे छै। **फूलहाथां** फेरीजै छै।—रा. सा. सं.

फूलां—सं० स्त्री०—देखो 'फूलवाई'।

उ०—पळासण अंग भखै भर पेट, भेळा उतमग सदासिव भेट। लालां कर थापलि कंव लंकाळ, **फूलां** सिंघसग भरावत फाळ।
—मे. म.

फूलांमाळ—१ देखो 'फूलमाळा' (रू. भे.)

उ०—ताळ बाळ दीजै नेहर, मनखां **फूलांमाळ**। वळदां दीजै नाळ घी, पण नेह दीजै गाळ।—बां. दा.

२ देखो 'फूलमाळ' (रू. भे.)

फूलांरौमारौ—सं० पु०—१ अमीर, भाग्यशाली।

उ०—पीहर पतळो रा सैणां रा प्यारा, तारक तूटां रा नैणां रा तारा। सीरी सिटियां रा सूल्हां रा सारा, भीड़ी भूखां रा **फूलांरा मारा**।—ऊ. का.

२ कोमल व्यक्ति, नाजुक।

फूलांसेज—सं० स्त्री० यौ०—पुष्पशैया।

उ०—अब के ओळंगाणै, पनामारू, नणदोई जी ने भेज, अबको चोमासो **फूलांसेज** पै, जी म्हां का राज।—लो. गी.

फूलाड़णौ, फूलाड़बौ—देखो 'फुलाणौ, फुलावौ' (रू. भे.)

फूलाड़णहार, हारौ (हारी), फूलाड़णियौ—वि०।

फूलाड़िओड़ौ, फूलाड़ियोड़ौ, फूलाड़्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फूलाड़ीजणौ, फूलाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फूलाड़ियोड़ौ—देखो 'फुलायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूलाड़ियोड़ी)

फूलाणौ फूलाबौ—देखो 'फुलाणौ, फुलावौ' (रू. भे.)

फूलाणहार, हारौ (हारी), फूलाणियौ—वि०।

फूलायोड़ौ—भू० का० कृ०।

फूलाईजणौ, फूलाईजबौ—कर्म वा०।

फूलाद—देखो 'फुलवाद' (रू. भे.)

उ०—वारवरड़ां रा मगरा, भील वसै। चावळ, गोहूं ऊपजै। आंवा **फूलाद** घणौ।—नैणसी

फूलायोड़ौ—देखो 'फुलायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूलायोड़ी)

फूलाळ—देखो 'फूलाळौ' (मह., रू. भे.)

उ०—जांणू अजको मेघ जावतां कारज म्हारै, परवतिया **फूलाळ** अलेखां आडा थारै। मीठा बोलै मोर आंखड़ी नेह भरीजै, करतां इतरौ कोड वांसूं सीख लिरीजै।—मेघ.

फूलाळौ—वि० (स्त्री० फूलाळी) फूलों वाला, फूलों से आच्छादित।

उ०—१ रांणी रै विना उणनै मुखमल री **फूलाळी** सेज कांटां रै उनमांन अळखावणी लागण लागी।—फुलवाड़ी

उ०—२ उणरै अंतस री महकती **फूलाळी** संसार अेक ई धपळका में भसम व्हैगी।—फुलवाड़ी

रू० भे०—फुलाळौ।

मह०—फूलाळ।

फूलावणौ, फूलावबौ—देखो 'फुलाणौ, फुलावौ' (रू. भे.)

फूलावणहार, हारौ (हारी), फूलावणियौ—वि०।

फूलाविओड़ौ, फूलावियोड़ौ, फूलाव्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फूलावीजणौ, फूलावीजबौ—कर्म वा०।

फूलावियोड़ौ—देखो 'फुलायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फूलावियोड़ी)

फूलि—१ देखो 'फूली' (रू. भे.)

२ देखो 'फूल' १ (अल्पा., रू. भे.)

उ०—आज चिणोठी ऊजली, मांणिक केरइ मूलि। सोघी आंणइ सुंदरी, वइठी पूजइ **फूलि**।—मा. कां. प्र.

फूलियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ वायु, पानी या अन्य वस्तु के भरने से फूला हुआ. २ पुलकित या आनन्दित. ३ अभिमान से भरा हुआ, अभिमान युक्त. ४. फूलों से युक्त।

(स्त्री० फूलियोड़ी)

फूलियौ—देखो 'फूलौ' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—फिटकड़ी सो हुयौ **फूलियौ**, चूनो धोळौ फट है।—लूण लियै कांकरा फेंकै, एक ना काळी-कूट है।—दसदेव

फूली—सं० स्त्री० [राज० फूल+ई] १ आक या मदार के फूल का मध्य भाग। (अमरत)

२ आंख की पुतली पर पड़ने वाला सफेद दाग।

३ सिर का आभूषण। (व. स.)

४ भुनी हुई ज्वार, मक्का या चावल, खीरा, लावा।

उ०—कदै ई खारकां, कदै ई वोर, कदै ई लूंग, खोपरा, नारेळ, पतासा, भूंगड़ा, सोपारी, इळायची, सेक्योड़ा कूंगा, पचायोड़ी पीपरां, मक्की जवार री **फूलियां**, मतीरा रा चरपरा वीज, काचरा अर वड़वोर इत्यादि भांत-भांत री चीजां।—फुलवाड़ी

५ एक प्रकार का शाक विशेष।

उ०—फुवेडी नइं फणगरी, फूंगारी नइं फांगि । फूंणां फूली फूमती, फोफल फूली सांगि ।—मा. कां. प्र.

६ देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)

उ०—मुर में फोग महेस, रेत भंसमी पर राच । चांद आगियां माथ, जटा लासूड़ा जांचे । गांठ गंठीली माळ, मह्क फूली री गंगा । आक धतूरे पास, कैर भूतां हुड़दंगा ।—दसदेव

७ देखो 'फूहली' (रू. भे.)

रू० भे०—फुली, फुल्ली, फूलि, फूहली ।

अल्पा०—फुलड़ी, फूलड़ी ।

फूलेरो–सं० पु० [सं० पुष्पम्+वेला] विवाहित कन्या के प्रथम बार रजोदर्शन की शुद्धि पर उसकी माता द्वारा पुजनादि द्वारा उत्सव मनाने की रीति विशेष ।

फूलेल—देखो 'फुलेल' (रू. भे.)

उ०—तठा उपरांति करि नै राजांन सिलांमति जिके छोगाळा छयल छबीला जुआंन हूसनाइक फूलां रा छोगा नाखीआं थकां फूलां रा चोसर पेहरीआं थकां अंगरचै मरगचै केसरिआ कचमैले, वागै कीआं घणै चोअ अंतर फूलेल गळा मांहि भीनां थकां घणै अबीर नै गुलाल मांहे गरकाब हुआ थकां झोळी भरिआं थकां दिसि-दिसि छूटि रही छै ।—रा. सा. सं.

फूलो–सं० पु०—आंख की पुतली पर किसी रोग या चोट लगने से होने वाला सफेद चिन्ह । उ०—कंवर री आंख में केई बरसां सूं फूलो पड़ियोड़ो हो ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—पड़णो, होणो ।

२ खीला, लावा ।

३ फिटकरी, गोंद आदि जो आग पर भूनने से फूल गया हो ।

४ देखो 'फूल' (अल्पा., रू. भे.)

रू० भे०—फुल्लो ।

अल्पा०—फूलियो ।

फूस–सं० पु०—१ सूखा तृण या तिनका ।

२ कचरा, कूड़ाकरकट । उ०—उखरड़ी कह्यो—हळदी बाई, थोड़ो म्हारो फूस बुवार दे ।—फुलवाड़ी

रू० ०—फूह ।

फूसगज–सं० पु० [राज० फूस+सं० गज] पौष शुक्ला पूर्णिमा के दिन फूस का हाथी बनाकर हाथी से युद्ध कराने का उत्सव । (मेवाड़)

फूह—देखो 'फूस' (रू. भे.)

फूहड़, फूहड़—देखो 'फूड़' (रू. भे.)

फूहडि–वि० स्त्री०—देखो 'फूड़' (पु०)

उ० —जेवडउ अंतर गुरुड़ अनइ घुअड, जेवडउ अंतर फूटरसी जेवडउ नइं फूहडि, अंतर गाम्र अनइ छाली ।—व. स.

फूहली–सं० स्त्री०—बहिन से राखी प्राप्त होने पर भाई द्वारा बहिन को भेजी जाने वाली पौशाक । (मेवाड़)

रू० भे०—फुहली, फूली ।

फूहारो—देखो 'फंवारो' (रू. भे.)

फूही—देखो 'फुही' (रू. भे.)

उ०—सो साह तो थाको हूतो, सो पोढ़ रह्यो अर आ जावै छै । इतरै हेक फूही बोली, कही, "जु आ नदी मांहे एक मर्दो वूही जावै छै ।—झूमखो

फूहो—देखो 'फुंवो' (रू. भे.)

उ०—सो महीने एक डेढ़ में विट्ठलदास रा घाव आछा हुवा । फूहा देणे लागिया ।—गोपाळदास गौड़ री वारता

फें—देखो 'फैं' (रू. भे.)

फेंक—देखो 'फैंक' (रू. भे.)

उ०—कांव-कांव करतो कागलो बोल्यो—अबै थूं रोयां रींकयां तो हींग री ई गरज सरै नीं । पुटियो वद-वदनै फेंकां मारतो हो । ओ वगत है उणरै घकै जाय कूको ।—फुलवाड़ी

फेंकणो, फेंकबो—देखो 'फैंकणो, फैंकबो' (रू. भे.)

उ०—१ पण बत्तीस घड़ी रै पछै लोई टपकियां जद वो मूंडकी री चुट्टी झालनै मंवारा में फेंकै तद उणरै अरांसो दरद व्है ।—फुलवाड़ी

उ०—२ वांरी भेक विधवा भूवा मरण री धनवंती ही । वै उण माथै ठगाई री पासी फेंकणी चायो ।—फुलवाड़ी

फेंकणहार, हारो (हारी), फेंकणियो—वि० ।

फेंकाड़णो, फेंकाड़बो, फेंकाणो, फेंकाबो,

फेंकावणो, फेंकावबो—प्रे० रू० ।

फेंकिओड़ो, फेंकियोड़ो, फेंक्योड़ो—भू० का० कृ० ।

फेंकीजणो, फेंकीजबो—कर्म वा० ।

फेंकल—देखो 'फेकल' (रू. भे.)

फेंकाड़णो, फेंकाड़बो—देखो 'फेंकाणो, फेंकाबो' (रू. भे.)

फेंकाड़णहार, हारो (हारी), फेंकाड़णियो—वि० ।

फेंकाड़िओड़ो, फेंकाड़ियोड़ो, फेंकाड़योड़ो—भू० का० कृ० ।

फेंकाड़ीजणो, फेंकाड़ीजबो—कर्म वा० ।

फेंकाड़ियोड़ो—देखो 'फेंकायोड़ो' (रू. भे.)

(स्त्री० फेंकाड़ियोड़ी)

फेंकाणो, फेंकाबो—देखो 'फैंकाणो, फैंकाबो' (रू. भे.)

फेंकाणहार, हारो (हारी), फेंकाणियो—वि० ।

फेंकायोड़ो—भू० का० कृ० ।

फेंकाईजणो, फेंकाईजबो—कर्म वा० ।

फेंकायोड़ो—देखो 'फेंकायोड़ो' (रू. भे.)

(स्त्री० फेंकायोड़ी)

फेंकावणो, फेंकावबो—देखो 'फेंकाणो, फेंकाबो' (रू. भे.)

फेंकावणहार, हारो (हारी), फेंकावणियो—वि० ।

फंकाविग्रोड़ौ, फंकावियोड़ौ, फंकाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फंकावीजणौ, फंकावीजबौ—कर्म वा० ।

फंकावियोड़ौ—देखो 'फंकायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फंकावियोड़ी)

फंकियोड़ौ—देखो 'फंकियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फंकियोड़ी)

फंगळ-सं० पु०—फेन, झाग ।

उ०—उडांडे गळ फंगळां रा अंगारा, अंघारा झगारा उभै कौध-आरा । कानां रा करारा खमै हथ्थ थारा, उछोरा उधारा वहै वारवारा ।—ना. द.

फंट-सं० स्त्री० [देशज] १ मल्लयुद्ध का एक दांव जिसमें एक दूसरे की गर्दन को बांहों में दबाकर पीठ के बल से उछाल कर नीचे गिरा देता है ।

क्रि० प्र०—मारणी, लगाणी ।

२ कटिमंडल, कमर का घेरा ।

३ देखो 'फांट' (रू. भे.)

४ देखो 'फेंटौ' (मह., रू. भे.)

५ देखो 'फेंटौ' (मह., रू. भे.)

फंटणौ, फंटबौ-क्रि० स० [देशज] १ लपेटना, बांधना ।

२ देखो 'फांटणौ, फांटबौ' (रू. भे.)

३ देखो 'फेटणौ, फेटबौ' (रू. भे.)

फंटणहार, हारौ (हारी), फंटणियौ—वि० ।

फंटिग्रोड़ौ, फंटियोड़ौ, फंटचोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फंटीजणौ, फंटीजबौ—कर्म वा० ।

फंटौ-सं० पु० [देशज] १ कमर पर लपेट कर बांधे जाने वाले वस्त्र का छोर । उ०—पीतांबर के फंटा बांधे, अरगजा सुवासी । गिरिधर सै सु नवल ठाकुर, मीरां सी दासी ।—मीरां

२ देखो 'फेंटौ' (रू. भे.)

मह०—फंट ।

फंफड़ौ—देखो 'फंफड़ौ' (रू. भे.)

फे—१ भ्रमण । २ रटन । (एका०)

फेकरी-सं० स्त्री०—स्यालिनी ।

रू० भे०—फेकोरी, फेंकरी ।

फेकल-सं० पु०—कच्चा पीलू ।

रू० भे०—फेंकल ।

फेकारी—१ एक वृक्ष विशेष ?

उ०—फेकारी नइ फालसां, फोफल फरास फजिंद । फूघेढ़ी नइ फूढ़ीया, फालक फिरांमण फिंद ।—मा. कां. प्र.

२ देखो 'फेकरी' (रू. भे.)

रू० भे०—फेंकारी ।

फेज—देखो 'फंज' (रू. भे.)

फेट-सं० स्त्री० [देशज] १ टक्कर, धक्का ।

उ०—१ तुंडां गज फेटां तुरी, डाढ़ां भड़ ओभाड़ । हेकण कौलै घूं दिया, फौजां पाथर पाड़ ।—वी. स.

उ०—२ लोहरां लंगरां झाटां लाग, अर्धफरां गिरां तर झंडै आग । मेवास तूटगा मगज मेट, फूटगा गिरंद हैताळ फेट ।—वि. सं.

क्रि० प्र०—लागणी ।

२ झपट, चपेट ।

उ०—१ लागी फेट किस्त की लखियै, हुई इतै बंद हांनी । तीखै पग को एक तोरड़ौ, कियौ प्रथम कुरवांनी ।—ऊ. का.

उ०—२ भूलरा में भगदड़ माची पण माची । चार पांचे'क साथणियां घोड़ा री फेट में आयगी ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—आणौ ।

३ चोट, आघात । उ०—चित्तोड़ ऊपर अकबर रै झिलम रै गोळा री फेट लागी ।—वां. दा. ख्या.

४ दृष्टि पथ में होने का भाव या क्रिया ।

उ०—पड़िया रांणी री फेट, खंदक महलां हेट, सुकोमल साथ । एसी हुं तौ मुज बंधवौ ए ।—जयवांणी

५ किसी आसुरी माया का प्रभाव ।

क्रि० प्र०—आणौ ।

६ अन्तराय, विघ्न । उ०—फिरी फरी जउ आविउ फेट, तउ देवह गुरु लाधी भेट । सुह गुरि धरम कहिउ मूं सार, सेत्रुजगिरि छंह मुगति दातार ।—वस्तिग

रू० भे०—फंट ।

फेटणौ, फेटबौ-क्रि०अ०/स०[देशज] १ टक्कर या धक्का लगना। उ०—नग्री सोनमेनी पछै गांम नांही, महा कासटां घोर उजाड़ मांहीं । प्रपा कूप नैड़ौ न वैड़ौ पयांणौ, जलाल्या तणौ फेटवौ थेट जांणौ ।—मे. म.

२ दृष्टिगोचर होना ।

३ किसी आसुरी माया के प्रभाव में आना ।

४ साक्षात्कार होना, मिलना । उ०—मल साध सदा सुख भेटन कौ, फिर फीटन देवन फेटन कौ ।—ऊ. का.

फेटणहार, हारौ (हारी), फेटणियौ—वि० ।

फेटिग्रोड़ौ, फेटियोड़ौ, फेटचोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फेटीजणौ, फेटीजबौ—भाव/कर्म वा० ।

फंटणौ, फंटबौ—रू० भे० ।

फेटियोड़ौ-भू० का० कृ०—१ टक्कर या धक्का लगा हुआ. २ दृष्टि-गोचर हुवा हुआ. ३ किसी आसुरी माया के प्रभाव में आया हुआ. ४ साक्षात्कार हुवा हुआ, मिला हुआ.

(स्त्री० फेटियोडी)

फेटियो-सं० पु० [देशज] १ घाघरे के नीचे पहना जाने वाला लंबोतरा वस्त्र । २ विधवा स्त्रियों का खास रंग का रगा हुआ अधोवस्त्र । ३ कटिमंडल अथवा कमर पर लपेटा जाने वाला वस्त्र ।

फेटूड़ो—देखो 'फेटियोड़ो' (रू. भे.) (शेखावाटी)

(स्त्री० फेटूड़ी)

फेटो-सं० पु० [देशज] १ किसी स्थान विशेष पर आने-जाने का अभ्यास या अवसर ।

२ मिलने का भाव, मिलाप । उ०—जेठ री बळती लाय में बीस पच्चीस कोस गांव-गांव रबड़णा रै उपरांत ई उण सिरावा सूं **फेटो** नीं पड़ियो ।—फुलवाड़ी

३ देखो 'फंटो' (रू. भे.)

रू० भे०—फंटो ।

फेडणौ, फेडबौ-क्रि० स० [सं० स्फेटयति] १ विनाश करना । उ०—देव तणी घन भक्ति युक्ति, गुरु गुरुणो तेडया, साहमी साहमिणी संविभाग, करि पातक **फेडया** ।
—गुणविजय

२ दूर हटाना ।

३ परित्याग करना, छोड़ना । उ०—युद्ध थी विरम्यां राजिंद रै, हरिया थया सुगुण गिरिंद रै । विस्तरति मति सरति अमंद रै, पल्लवित वेलि सुख कंद रै । **फेडया** सगलाई फंद रै ।—वि. कु.

४ जानना ?

उ०—घरण ग्यौ 'माल' गह छाड पै'लै धकै, फेर संसार प्रथमाद **फेडी** । तांणियां सूर जिम वैर राव 'जैत' रै, गंजवा जोधपुर चाढ़ गेडी ।—कल्यांणसिंह जी रौ गीत

५ तोड़ना । उ०—मंत्रि मउडउथा सहूइ तेडइ, बेडीखाहा भ्रंति सु **फेडइ** । "वयरगु अम्हारउं म पडउ पाखइ, देवादेवी सहूयइ साखिइं ।—पं. पं. च.

६ उद्‌घाटन करना ।

फेण-सं० पु०—१ श्वेत, सफेद* । (डिं. को.)

२ देखो 'फेण' (रू. भे.)

उ०—१ जडाऊ नगां मिंदर हेम जाळी, समै सैंज सहेलियां चित्रसाळी । वणी ऊजळी सेज एही विराजै, लखै खीर सांमंद रा **फेण** लाजै ।—सू. प्र.

उ०—२ अर दिल्ली रा बीरां नूं कोरड़ो लोह चखायौ जिण आगै बड़ा-बड़ा दुबाह बांनैत न टकिया । नागराज रा भोग **फेण** भरिया लटकिया ।—वं. भा.

फेणी—देखो 'फीणी' (रू. भे.)

फेतकार, फेत्कार-सं० स्त्री०—१ लोमड़ी के आकार का एक मांसाहारी पशु ।

२ स्यालिनी ।

३ स्यालिनी के बोलने की ध्वनि जो अशुभ मानी जाती है । उ०—१ जहां सिवा तणा **फेत्कार**, घूक तणा घूत्कार । व्याघ्र तणा घूरहराट, न लाभइ बाट नइ घाट ।—सभा.

उ०—२ जठै वेताळां रा आस्फाल, डाकिणी गणां रा डमरू रा डात्कार फेरवियां रा **फेत्कार**, प्रेतां रा आलाप ।—वं. भा.

४ लोमड़ी ।

५ देखो 'फूतकार' (रू. भे.)

रू० भे०—फैंतकार, फैंतकारी, फ़ैत्कार, फैतकार, फैत्कार ।

फेदड़-सं० स्त्री०—१ दूध आदि तरल पदार्थ में खटाई गिरने से गुच्छों के रूप मे पृथक हुवा हुआ सार भाग ।

२ आकाश में बिखरे हुए बादलों के टुकड़े । उ०—**फेदड़-फेदड़** सी नभ में निजराई, माखण चाखण री मनसा मुरझाई । प्राव्रट-प्राव्रट री आवट मन मारै, थर नैं पापां रा थर लेग्या लारै ।—ऊ. का.

फेन, फेनक—देखो 'फेण' (रू. भे.)

फेनी—देखो 'फीणी' (रू. भे.)

फेफड़ी-सं० स्त्री०—१ गरमी या खुश्की के कारण ओठों की सूखी हुई चमड़ी की तह । उ०—तौ दारिया ढांढा ! कहै नही ज्यूं है त्यूं पग चालवै है, राज ! वळै कां है, रे रोड़ा ! तौ राज ! मुंहढै **फेफड़ियां** आयां है ।—प्रतापमल देवड़ा री वात

२ पपड़ी ।

रू० भे०—फेफरी ।

फेफड़ो—देखो 'फैंफड़ो' (रू. भे.)

फेफर—देखो फैंफड़ो' (मह., रू. भे.)

उ०—फूटै उर **फेफर** वीखर फूल, अंत्रावळि वाखर माखर कूल । त्रिपत्तां, ग्रिध भयै तन तेख, पळचर साकणि ध्रोंकरि पेख ।
—मा. वचनिका

फेफरी-सं० स्त्री०—१ फेफड़ा । उ०—तिसै दोनूं खेलतां-खेलतां वीरमदे इसो डाव खेल्यौ तिको उछळतो साहमै काळजै पंजूरै काळजै दी । तिको पेट फाड़ि आंत, ऊफ, **फेफरी** नीकळ ढेर हुवा ।
—वीरमदे सोनगरा री वात

२ देखो 'फेफड़ी' (रू. भे.)

फेफरो—देखो 'फैंफड़ो' (रू. भे.)

उ०—घड़ी घड़ी घमोड़ घोड़, बोकड़ा बड़ी बड़ी । झड़ी लगै छड़ाळ, झीक **फेफरा** फड़ी फड़ी ।—मा. वचनिका

फे'म—देखो 'फहम' (रू. भे.)

फेरंड-सं० पु० [सं०फेरंडः] १ शृगाल, गीदड़, स्यार । उ०—१ नीच नास्तिकां रौ बंस प्रांमार राज बिक्रम भोज रा वंस रौ संतांन किणि रीति पावै अर चांडाळ रै मुख सावित्री रै समांन केहरी रौ बिभाग **फेरंड** रै मुहुंडै कदापि न खटावै ।—वं. भा.

उ०—२ बब्बर चाहुवांण प्रांमार फितुरी **फेरंड** मंइंदां रौ मत्तभाव आंणैं जिको उडावण रौ आपणैं उपाय छै ।—वं. भा.

२ लोमड़ी ।

रू० भे०—फेरड ।

फेर-सं० पु० [राज० फेरणौ] १ फिरने की क्रिया या भाव ।

२ किसी के चारों ओर घूमने की क्रिया, चक्कर, घुमाव, मोड़ ।

उ०—बातां हंदा मांमला दरियां हंदा फेर । नदियां वहै उतावळी, दे दे घूमर घेर ।—फुलवाड़ी

३ परिवर्तनशील क्रम या सिलसिला जिसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता रहता है ।

४ अन्तर, फर्क, भेद, भिन्नता ।

उ०—१ मैं जांण्यौ अधसेर है, पिव तौ पूरा सेर । हेम-सुता-पत वाहणा, तांमैं रती न फेर ।—अज्ञात

उ०—२ एक अक्षर रौ फरक । एक अकार नौ फेर । साध रै अनै असाध रै एक आखर रौ फेर है ।—भि. द्र.

५ भाग्य का चक्कर, परिस्थितियों का उलझाव, किसी का बुरा वक्त । उ०—१ करम ना जोइ एवडा फेर, धरम आडा छड काठिआ तेर ।—वस्तिग

उ०—२ आपरौ धूजतौ हाथ बेटा माथै फेरनै डुस्कियां भरती कैवण लागी—दिनमांनां रौ फेर है ।—फुलवाड़ी

६ असमंजस या झमेले में डालने वाली स्थिति, दुविधा, उलझन ।

७ झंझट, बखेड़ा, जंजाळ, प्रपंच ।

उ०—गुदळक व्हियां पैं'ली पैं'ली ब्याव व्है जांणौ चाहीजै । म्हैं सावा अर मौरत रा फेर में नीं पड़ूंला ।—फुलवाड़ी

८ परिवर्तन, उलट-फेर, अदला-बदली ।

९ संशय, भ्रम, संदेह, गलतफहमी ।

१० धोखा, प्रवंचना, चालबाजी ।

११ देवी अथवा आसुरी माया का प्रभाव ।

१२ हानि, नुकसान, टोटा, घाटा ।

१३ फासला, दूरी । उ०—दीवांण रा मोहल पीछोला री पाळ ऊपर छै, मोहलां थी आथवण नुं तळाव लग तौ सहर छै, कोस २ रै फेर छै, सहर री एक कांनी माछळा रौ मगरौ छै । —नैणसी

१४ विस्तार, फैलाव ।

उ०—१ जोड़ नाचणौ जैसळमेर था कोस २ ऊगवण नूं कोस १, घास करड़, अैहख रौ । जैसळमेर था दिखण नूं कोस २ घास सेवण, कोस २ रै फेर ।—नैणसी

उ०—२ साकुर खडै पाखर सेर, फौजां वहै जोजण फेर ।—गु.रू.बं.

१५ ऊंट या घोड़े को चाल सिखाने का ढंग ।

१६ घोड़े या ऊंट की चाल ।

१७ किसानों से लिया जाने वाला एक कर या लाग जो 'बोरा' भरने के रूप में दी जाती है ।

१८ झुकाव ।

[सं० फेरः] १९ शृगाल, गीदड़ ।

वि०—अन्य, दूसरा, अलावा, अतिरिक्त ।

उ०—१ थूं आज सूं ई निसंक व्हैजा । बावळा, म्हैं वगत माथै थारै कांम नीं आवूं तौ फेर किण रै आवूं ।—फुलवाड़ी

उ०—२ जीवण सू वत्तौ सुख अर आणंद इण संसार में फेर की नी है ।—फुलवाड़ी

उ०—३ कोथळी खोलनै वनमाळी पूछ्यौ—सिरावण वास्तै आज फगत तिलिया लाडू इज लाई, फेर कीं नीं ।—फुलवाड़ी

क्रि० वि०—१ पुनः, दुबारा, वापस ।

उ०—१ स्यांन छोड वहै साध, रसा माता पितु रोवै ।
सुत तिरिया दुख सहै, जिकणां दिस फेर न जोवै ।—ऊ. का.

उ०—२ फेर कदेई ठाकरां रै सांमी यूं मूंछ्यां में वट देवैला । मूंछ्यां नीची नी कराय दूं तौ म्हारी जात माथै जूती ।—फुलवाड़ी

२ और, फिर ।

उ०—१ कै पड़ जावौ कूप, गिरवरां, चढ़ि गिर जावौ । अंजन वाळौ आय, फेर पैड़ौ फिर जावौ ।—ऊ. का.

उ०—२ वार दई सौ बार'क फेर वखांणजै । जाहर हाटक खांन जिसौ मुख जांणजै । —बां. दा.

उ०—३ जिनावरां नै अरदास भरै पड़ती लागी तौ वै हीमत करनै फेर कवण लागा ।—फुलवाड़ी

३ तदनन्तर, उपरांत, बाद में, पीछे ।

उ०—दीखता पांणी नै छोडनै फेर कठैई उडण रौ मन नीं करै । तिरस आगै कागला रौ जीव जावै ।—फुलवाड़ी

४ इस पर भी ।

उ०—१ कली वसंत कदंब रै, सांवन वरणै सेस । कहै फेर कविता करूं, वर सर सतरै वेस ।—बां. दा.

उ०—२ फेर देस रौ कांम तिण सूं नीसरणी नीं आवै ।
—कुंवरसी सांखला री वारता

५ लेकिन, परन्तु ।

उ०—नांनग सरवर भरियौ नीकौ, झुकै लोग पीवण दे भीकौ । ठगबाजी गादी रौ ठीकौ, फेर सिकां कर दीनों फीकौ ।—ऊ. का.

रू० भे०—फैर, फैरू ।

फेरड—देखो 'फेरंड' (रू. भे.)

फेरणौ, फेरबौ-क्रि० स० [सं० प्रेरणं] १ ऊंट, घोड़ा, बैल आदि पशुओं को चाल सिखाना, शिक्षित करना ।

उ०—१ अरु आप घोड़ा फेरणै रै वहांनै कोस १ अठै सूं जाळ है तठै पधारज्यौ, अरु हूंई उठै आय हाजर हुसूं ।—द. दा.

उ०—२ वळदां रा फेरणा में ई कोई नैड़ौ आगौ चौवरी जैड़ौ सागड़ी नीं हौ । उणरै फेरियोड़ा वळद हळां में हंस हालै ज्यूं हालता हा ।—फुलवाड़ी

२ किसी शस्त्रादि को हाथ से पकड़ कर इधर-उधर, ऊंचा-नीचा घूमाना।

उ०—हाथी लड़ावीजै छै। पाइक सिरंम साझै छै। फूलहाथां फेरीजै छै।—रा. सा. सं.

३ किसी के द्वारा भेजी हुई वस्तु न लेना, फलतः उसे लौटा देना; लौटाना।

उ०—पछै सोढ़ी नूं पूछण लागौ—रावळ कांनड़दे रौ वडौ ठौड़ रौ नाळेर आयौ छै सु पाछौ फेरस्यां तौ राईतनां मांहे बुरा दीसस्यां।—नैणसी

४ शादी के समय दूल्हा-दुल्हिन को अग्नि के चारों ओर चक्कर लगवाना।

उ०—लोह विमूह 'रतनसी' लाडै, खत्रि-मारग रिण जंग खरै। कावल फेरै वड़ा कावली, हठिमल परणी सूर हरै।—दूदौ

५ किसी वस्तु को मण्डलाकार गति देना अथवा धुरी पर चारों ओर घुमाना।

ज्यूं०—चक्की फेरणी, घट्टी फेरणी।

उ०—१ ताळा तोड़ करै मूं काळा, गाळा घालै मूढ़। भाळा नैणां बाळा भोळा, माळा फेरै मूढ़।—ऊ. का.

उ०—२ मैं परणंती परखियौ, मूंछां तणौ मरट्ट। सायधण फेरै अरटियौ, फेरै पीव घरट्ट।—अज्ञात

६ एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर ले जाना, मोड़ना।

७ परास्त करना, खदेड़ना।

उ०—१ फेरा लेतै फिर अफिर, फेरी घड़ अणफेर। सीह तणी 'हरधवळ' सुत, गहमाती गहड़ेर।—हा. झा.

उ०—२ काबिल कोट तणी विसकांमरिण, घाए धूम सिंगारि-घुरै। फिर-फिर अफरि 'रतनसी' फुरळै, फौज अपूठै फेरि फिरै।—दूदौ

८ किसी वस्तु के इर्द-गिर्द चक्कर लगवाना।

९ किसी व्यक्ति को किसी स्थान पर भेजकर आना-जाना करना, सम्पर्क स्थापित करना।

उ०—सु राव जी नूं कह्यौ—"मिलकखांन जी जाळोर रौ धणी छै। इण नूं आपणी भीर करौ।" तरै मिलकखांन विचै आदमी फेरियौ। कह्यौ—"म्हे रुपिया लाख १ थांनूं दां छां। थे मांहरी मदत आवौ।"—नैणसी

१० सहलाना।

उ०—मोडी गोडी दै पसवाड़ा मोड़ै, तड़छां बातोड़ी घड़छां तन तोड़ै। पीळी पाडल परै फिर-फिर कर फेरै, धोळी धूमर नै घिर-घिर घर घेरै।—ऊ. का.

११ तेल, वारनिश, कलई आदि तरल पदार्थ से किसी वस्तु की पुताई या पालिश करना।

१२ किसी वस्तु या व्यक्ति को जन-समुदाय के दर्शनार्थ या सूचनार्थ घुमाना।

ज्यूं०—बंदोळी फेरणी।

उ०—ताहरां राजा पडवौ फेरियौ—जो चोर म्हारै मुजरै आवै तौ चोरी री तकसीर माफ करूं, सिरकार रौ रोजगार कर देऊं।—राजा भोज अर खाफरै चोर री वात

१३ किसी वस्तु को उपभोगार्थ प्रस्तुत करना।

ज्यूं०—पांन-सुपारी फेरणी, जळ फेरणौ।

१४ परिवर्त्तन करना, बदलना।

उ०—पछै घोड़ा १३००० ढळनै नाइल आया, वांसै घोड़ां रा धणी आया, तेरै देवी घोड़ां रा रंग फेरिया, पछै वे देखनै पाछा फिर गया।—नैणसी

१५ जो पदार्थ जिस दिशा में हो उसका पार्श्व या मुंह विपरीत दिशा में करना।

उ०—रांणी कीं पड़ूतर नीं दियौ। वा मूंडौ फेरनै दूजै कांनी सूयगी।—फुलवाड़ी

१६ किसी पीड़ा अथवा दर्द निवारण के लिए शरीर के किसी अंग पर हाथ फेरना।

१७ प्यार एवं दुलार के निमित्त किसी पर हाथ फेरना।

उ०—१ जेठूते के सिर पर हाथ फेरीजौ, छोटी सी नणदूली। म्हारी याद कहीज्यौ ए कूंजरियां, सनेसौ म्हारौ लेती जाइज्यौ ए उड़ती कुंजरियां।—लो. गी.

उ०—२ राजा रांणी रै मोरां माथै हाथ फेरतौ कह्यौ—मरै दुख दाई भूत-पलीत।—फुलवाड़ी

१८ वचन पर दृढ़ न रहना, मुकरना।

ज्यूं०—जबांन फेरणी।

१९ कायरता दिखाना।

ज्यूं०—पूठ फेरणी।

२० पढ़े हुए को दोहराना, पुनः पढ़ना।

फेरणहार, हारौ (हारी), फेरणियौ—वि०।

फेराड़णौ, फेराड़बौ, फेराणौ, फेराबौ,

फेरावणौ, फेराववौ—प्रे० रू०।

फेरिओड़ौ, फेरियोड़ौ, फेरयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फेरीजणौ, फेरीजबौ—कर्म वा०।

फउरणौ, फउरबौ, फेरवणौ, फेरववौ, फोरणौ, फोरबौ,—

फौरणौ, फौरबौ—रू० भे०।

फेरफार—सं० पु० [राज० फेर+फार] १ धूर्तता, चालाकी, छल कपट की बात। २ घुमाव, फिराव, चक्कर। ३ बहुत बड़ा परिवर्त्तन, उलटफेर। ४ लेनदेन या व्यवहार के चलते रहने की क्रिया या भाव। ५ निश्चय।

६ फरक, अन्तर। उ०—जो आंणी वात मांहे तौ कांई फेरफार कांई नहीं।—राजा रा गुर रा बेटा री वात

फेरबाज—सं० स्त्री०—देखो 'फेरवाज' (रू. भे.)

फेरव—सं० पु० [सं० फेरवः] (स्त्री० फेरवी) १ सियार, शृगाल, गीदड़ । उ०—१ वजै रव डैरव वीस वतीस, उचैरव **फेरव** देत असीस । चंडी द्रहवाट करै चतुरंग, उडै खग झाट चुखन्चुख अंग ।—मे. म.

उ०—२ जठै वेताळां रा आस्फाल, डाकिणी गणां रा डमरू रा डात्कार **फेरवियां** रा फेत्कार प्रेतां रा आलाप राक्षसां रा रास कुणपां रा कपाळां रा कटकटाहट चिता रा अंगारां करि चित्र विचित्र बडौ अद्‌भुत चरित देखियौ ।—वं. भा.

२ कपटी, चालाक । ३ हिंसक । ४ राक्षस ।

फेरवणौ, फेरववौ—देखो 'फेरणौ, फेरबौ' (रू. भे.)

उ०—कोपियै छाकियै चहर भड़ अहर करि । फुरळतै पिसण घड **फेरवी** अफिर फिरि ।—हा. झा.

फेरवणहार, हारौ (हारी), फेरवणियौ—वि० ।

फेरविओड़ौ, फेरवियोड़ौ, फेरव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फेरवीजणौ, फेरवीजबौ—कर्म वा० ।

फेरवाज—सं० स्त्री० [देशज] लहंगे आदि के नीचे अन्दर की ओर लगने वाली वस्त्र की पट्टी या झलरी ।

रू० भे०—फिरवाज, फेरबाज, फेराबाज ।

फेरवियोड़ौ—देखो 'फेरियोड़ौ' (रू.भे.)

(स्त्री० फेरवियोड़ी)

फेराड़णौ, फेराड़बौ—देखो 'फेराणौ, फेराबौ' (रू. भे.)

फेराड़णहार, हारौ (हारी), फेराड़णियौ—वि० ।

फेराड़िओड़ौ, फेराड़ियोड़ौ, फेराड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फेराड़ीजणौ, फेराड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फेराड़ियोड़ौ—देखो 'फेरायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फेराड़ियोड़ी)

फेराणौ, फेराबौ—क्रि० सं० [राज० 'फेरणौ' क्रि० का प्रे० रू०] १ ऊंट, घोड़ा, बैल आदि पशुओं को किसी के द्वारा चाल सिखवाना । २ किसी शस्त्रादि को हाथ में पकड़ कर ऊंचा-नीचा या इधर-उधर घुमवाना । ३ दिशा-परिवर्तन हेतु मुड़वाना । ४ परास्त करवाना, खदेड़वाना । ५ किसी के द्वारा भेजी हुई वस्तु को लौटवाना । ६ शादी के समय वर-वधू को अग्नि के चारो ओर चक्कर लगवाने में प्रवृत्त करना । ७ किसी वस्तु के इर्द-गिर्द चक्कर लगवाने के लिये प्रवृत्त करना । ८ किसी वस्तु को मंडलाकार गति में या चारो ओर घुमवाना । ९ किसी व्यक्ति को किसी स्थान पर भिजवाकर आना-जाना, करवाना, सम्पर्क स्थापित करवाना । १० सहलाने के लिए प्रवृत्त करना । ११ तेल, वारनिस, कलई आदि किसी तरल पदार्थ से किसी वस्तु को पुतवाना या पालिश करवाना । १२ किसी वस्तु या व्यक्ति को जन-समुदाय के दर्शनार्थ या सूचनार्थ घुमवाना । १३ किसी वस्तु को उपभोगार्थ प्रस्तुत करवाना । १४ किसी वस्तु के स्थान, क्रम या पूर्व-स्थिति में परिवर्तन करवाना । १५ किसी वस्तु या व्यक्ति को सामान्य स्थिति से विपरीत दिशा की ओर घुमवाना या मुड़वाना । १६ वचन से विचलित करवाना, मुकराना । १७ किसी पीड़ा या दर्द के निवारणार्थ शरीर के किसी अंग पर हाथ फिरवाना । १८ प्यार एवं दुलार के निमित्त किसी का हाथ फिरवाना । १९ पढ़े हुए को दोहराने के लिए प्रवृत्त करना ।

२० देखो 'फिराणौ, फिराबौ' (रू. भे.)

फेराणहार, हारौ (हारी), फेराणियौ—वि० ।

फेरायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फेराईजणौ, फेराईजबौ—कर्म वा० ।

फेराड़णौ, फेराड़बौ, फेरावणौ, फेराववौ, फिराणौ, फिराबौ—रू० भे० ।

फेरादी—देखो 'फरियादी' (रू. भे.)

उ०—उडंडां ऊपड़ी बागां टोळां नू घेरिया इसा, किसा देस साहिजादा धाड़ा में करूर । बोलै जो **फेरादी** कूक सांभळै जवन्नां बांगां, जाडा थंडां लागा पीठ सांकड़ै जरूर ।—बादरदांन दववाड़ियौ

फेराफेरी—सं० पु०—किसी वस्तु या पदार्थ को इधर-उधर करने की क्रिया, उलट-पुलट करने की क्रिया ।

२ क्रम परिवर्तन करने की क्रिया ।

३ आवागमन । उ०—जन मीरां कूं गिरधर मिलिया, दुख मेटन सुख दे री । रूम रूम साता भई उर मे, मिटि गई **फेराफेरी** ।
—मीरां

फेरावाज—देखो 'फेरवाज' (रू. भे.)

फेरायोड़ौ—भू० का० कृ०—१ घोड़ा, बैल आदि को चाल सिखाया हुआ. २ किसी शस्त्रादि को हाथ में पकड़ाकर इधर-उधर ऊंचा नीचा घुमाने में प्रवृत्त किया हुआ. ३ एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर मुड़वाया हुआ. ४ परास्त करवाया हुआ, खदेड़वाया हुआ. ५ किसी के द्वारा भेजी हुई वस्तु को वापस लौटवाया हुआ. ६ शादी के समय वर-वधू को अग्नि के सम्मुख चक्कर लगवाने में प्रवृत्त किया हुआ. ७ किसी वस्तु के इर्द-गिर्द चक्कर लगाने में प्रवृत्त किया हुआ. ८ किसी वस्तु को धुरी पर मंडलाकार गति से या चारों ओर घुमाने मे प्रवृत्त किया हुआ. ९ किसी व्यक्ति को किसी स्थान पर भिजवाकर आना-जाना करवाया हुआ, सम्पर्क स्थापित करवाया हुआ. १० सहलवाने में प्रवृत्त किया हुआ. ११ तेल, वारनिस, कलई आदि किसी तरल पदार्थ से कोई तल या सतह पोताया हुआ, पालिश करवाया हुआ. १२ कोई वस्तु या व्यक्ति जन-समुदाय के दर्शनार्थ या सूचनार्थ घुमवाया हुआ. १३ किसी वस्तु को उपभोगार्थ प्रस्तुत करवाया हुआ. १४ किसी वस्तु के स्थान, क्रम या पूर्व-स्थिति में परिवर्तन करवाया हुआ.

१५ प्यार एवं दुलार के निमित्त किसी से शरीरांग पर हाथ फिरवाया हुआ. १६ किसी वस्तु या व्यक्ति को सामान्य स्थिति से विपरीत दिशा की ओर मुड़वाया हुआ. १७ वचन विमुख करवाया हुआ, मुकरवाया हुआ. १८ किसी पीड़ा या दर्द के निवारणार्थ शरीर के किसी अंग पर हाथ फिरवाया हुआ. १९ पढ़ हुए को दोहरवाया हुआ, पुनः पढ़वाया हुआ.
२० देखो 'फिरायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फेरायोड़ी)

फेरावणौ, फेरावबौ—देखो 'फ़ेराणौ, फेराबौ' (रू. भे.)
उ०—घोड़ा नैं किण उमर में **फेरावणौ** नैं किण तरह **फेरावणौ** जिण रौ वरणन ।—शा. हो.
फेरावणहार, हारौ (हारी), फेरावणियौ—वि० ।
फेराविप्रोड़ौ, फेरांवियोड़ौ, फेराव्योड़ौ—भू०का०कृ० ।
फेरावीजणौ, फेरावीजबौ—कर्म वा० ।

फेरावियोड़ौ—देखो 'फेरायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फेरावियोड़ी)

फेरासारी-सं० स्त्री०—उलट-फेर ।
उ०—इतरी वात बादसाह भंवर सुण काजी कांमदार सूं नाराज हुवौ और कही—हम सारीखी जोड़ी देख भेज्या था । तुम लालच पड़ कर **फेरासारी** कीन्ही है ।—जलाल बूबना री बात

फेरि-क्रि०वि०—फिर, पुनः ।
उ०—पड़ै रिण पाखती छीणवै हार परि । ग्रावरत **फेरि** संघारि झुंझारि अरि ।—हा. झा.

फेरिय-सं० पु०—धतूरा ।

फेरियोड़ौ-भू० का० कृ०—१ ऊंट, घोड़ा, बैल आदि पशुओं को चाल सिखाया हुआ, शिक्षित किया हुआ. २ किसी शस्त्रादि को हाथ में पकड़कर इधर-उधर, ऊंचा-नीचा घुमाया हुआ. ३ एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर लेजाया हुआ, मोड़ा हुआ. ४ परास्त किया हुआ, खदेड़ा हुआ. ५ किसी के द्वारा भेजी हुई वस्तु को न लेकर पुनः लौटाया हुआ. ६ शादी के समय अग्नि के सम्मुख वर-वधू को चक्कर लगवाया हुआ. ७ किसी वस्तु के इर्द-गिर्द चक्कर लगवाया हुआ. ८ किसी वस्तु को धुरी पर मंडलाकार गति में या चारों ओर घुमाया हुआ. ९ किसी व्यक्ति को किसी स्थान पर भेजकर आना-जाना किया हुआ, सम्पर्क स्थापित किया हुआ. १० सहलाया हुआ. ११ तेल, वारनिस, कलई आदि तरल पदार्थ से कोई पदार्थ पोता हुआ, पालिश किया हुआ. १२ किसी वस्तु या व्यक्ति को जन-समुदाय के दर्शनार्थ या सूचनार्थ घुमाया हुआ. १३ किसी वस्तु को उपभोगार्थ प्रस्तुत किया हुआ. १४ किसी वस्तु के स्थान, क्रम या पूर्व-स्थिति में परिवर्तन किया हुआ. १५ किसी पीड़ा अथवा दर्द के निवारण के लिये शरीर के किसी अंग पर हाथ फेरा हुआ. १६ प्यार एवं दुलार के निमित्त किसी पर हाथ फेरा हुआ. १७ कोई पदार्थ सामान्य स्थिति से विपरीत दिशा की ओर मुड़ा हुआ. १८ वचन से विमुख हुवा हुआ, मुकरा हुआ. १९ कायरता दिखाया हुआ. २० पढ़े हुए को दोहराया हुआ, पुनः पढ़ा हुआ.
(स्त्री० फेरियोड़ी)

फेरिस्त—देखो 'फेरिस्त' (रू. भे.)

फेरी-सं० स्त्री० [राज० 'फिरणौ'] १ परिक्रमा, प्रदक्षिणा ।
उ०—ग्यांन ध्यांन को ढोल वणावौ, **फेरी** समझ फिरोरी । सुरत निरत सूं देखो साधौ, अनुभव फाग उडोरी ।
—स्रीहरिरांम जी महाराज
२ योगी, फकीर या साधु का भिक्षा निमित्त नियमित चक्कर ।
उ०—दरसण कारण भई बावरी, बिरह बिथा तन घेरी । तेरे कारण जोगण हूंगी, देऊं नगर बिच **फेरी** ।—मीरां
३ व्यापारी द्वारा विक्रय के लिए लगाया गया नियमित गांव, कस्बा, शहर आदि का चक्कर ।
४ चक्कर ।
उ०—रांक सां कर रिव परी केरी, झूझवातइं मेल्ही **फेरी** । तीणि वात मनि हुउं लाजउं, सैन्य कौरव तणौ नवि भाजउं ।—शालिसूरि

फेरीवाळौ-वि० [राज० फेरी+वाळौ] गांव, शहर, कस्बा आदि की गली २ में वस्तु-विक्रय हेतु चक्कर लगाने वाला ।

फेरू-क्रि०वि०—फिर, पुनः ।
उ०—१ सेखं दादरी कैं बीचि थांणा नैं बठाया, **फेरू** या पठांणां नैं विहांणी को खिनाया ।— शि.वं.
उ०—२ फिरिया नांहि **फेरू** मारग मेरू, तेरू पार तिरंदा है । बकवाद बिखेरू हिये में हेरू, गेरू रंग गहरंदा है ।—ऊ. का.
वि०—१ फिराने वाला, घूमाने वाला ।
२ ऊंट, बैल, घोड़ा आदि पशुओं को ठीक चाल सिखाने वाला ।
रू०भे०—फैरू ।

फेरौ-सं० पु०—१ इधर से उधर घूमना, बार-बार आना-जाना ।
उ०—बिलळी वातां री वांणी बधरावै, पतळी झिण जिण में पांणी पधरावै । घालै बिसमत मत मगमग ठग घेरौ, फोरी किसमत सूं पगपग पग **फेरौ** ।—ऊ. का.
२ विवाह के समय अग्नि के चारों ओर वर-वधू द्वारा लगायी जाने वाली परिक्रमा या भांवर ।
उ०—१ ऊंधा चूंधा कर **फेरा** उळझावै, बनड़ो बनड़ी वर मनड़ौ मुरझावै । रस में वेरस बस रागांरळ रीसै, दुलहणि दुलहै नैं दावानळ दीसै ।—ऊ. का.
क्रि० प्र०—खाणौ, लगाणौ ।
३ फिरना, घूमना ।

उ०—दुरजन जे बांका हता, नार कीया ते जेरौ रे । जिम म्रगपति नै आगलै, न सकै गयवर फेरौ रे ।—वि. कु.

४ किसी वस्तु या स्थान के चारों ओर किया जाने वाला परिक्रमण।

उ०—वौ बकरी रै खोजां उणरी सोय करतौ बाड़ा पासै जाय पुगौ बाड़ा रै चारूंमेर फेरौ दियौ पण डीगी बाड़ रै कारण कीं कारी लागी नीं ।—फुलवाड़ी

क्रि० प्र०—दैणौ ।

५ किसी व्यक्ति द्वारा किसी स्थान पर नित्य-प्रति कुछ प्राप्ति के लालच से लगाया जाने वाला चक्कर ।

ज्यूं०—मंगता रौ फेरौ ।

६ किसी वस्तु या स्थान का निरीक्षण करने या किसी से हालचाल पूछने हेतु लगाया जाने वाला चक्कर ।

ज्यूं०—खेत रौ फेरौ, अस्पताळ रौ फेरौ ।

क्रि० प्र०—दैणौ, लगाणौ ।

७ जन्म-मरण का आवागमन ।

उ०—१ रयणि भुजाबळ आफळ 'रतनौ', सारां चढ़ि नीवड़ असमांण । जांमण मरण तणौ लगि चिहुं जुग, भागौ फेरौ कविलै भांण । —दूदौ

उ०—२ आठूं पहर खवासी चाकर, सनमुख राखूं डेरा । बंदीवांन राज रौ चाकर,मेटौ चौरासी रा फेरा ।—स्रीहरिरांम जी महाराज

मुहा०—१ चौरासी रौ फेरौ—जन्म और मरण का चक्र ।

२ निन्याणवे रौ फेरौ—द्रव्य एकत्रित करने का चस्का

८ फरक, अंतर । उ०—फूलांणी फेरौ घणौ, पांचां सातां दूर । रातां दीठा मलफता नहीं उगते सूर ।—अज्ञात

९ वार, दफा ।

उ०—१ प्रथम संवत १७९२ दिली पधारिया राजाधिराज । दूसरै फेरै संवत १८०४ दिली पधारिया ।—वां. दा. ख्या.

उ०—२ गुरू एक बीजौ नगण, इम त्रिणि फरा आंणि । छेह रगण दीसै छतौ, विधि निसिपाळ वखांणि ।—पिं. प्र.

१० समय ।

११ शौच-निवृत्ति । उ०—तठा उपरायंत देसौत फेरां सारा फिर आया छै । हाथ पग मिटी सूं उजळा कीजै छै ।—रा. सा. सं.

फेलौ—वि० [अं०] १ सभासद । २ सहयोगी ।

फेस—सं० पु० [अं०] चेहरा । २ सामना ।

फेसणौ, फेसबौ—क्रि०स० [सं० पिष्ट] १ रगड़ के साथ महीन चूर्ण बना डालना, पीसना ।

उ०—सहरयार मीनोचहर, कैकाऊस जुहांक । सुलेमांन जमसेद नूं, फेस गयौ जम फाक ।—वां. दा.

२ तोड़ना, फोड़ना ।

फेसणहार, हारौ (हारी), फेसणियौ—वि० ।

फेसाड़णौ, फेसाड़बौ, फेसाणौ, फेसाबौ, फेसावणौ, फेसावबौ—प्रे०रू० ।

फेसिओड़ौ, फेसियोड़ौ, फेस्योड़ौ—भू०का०कृ० ।

फेसीजणौ, फेसीजबौ—कर्म वा० ।

पेसणौ, पेसबौ—रू० भे० ।

फेसन—देखो 'फैसन' (रू. भे.)

फेसाड़णौ, फेसाड़बौ—देखो 'फेसाणौ, फेसाबौ' (रू. भे.)

फेसाड़णहार, हारौ (हारी), फेसाड़णियौ—वि० ।

फेसाड़िओड़ौ, फेसाड़ियोड़ौ, फेसाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फेसाड़ीजणौ, फेसाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फेसाड़ियोड़ौ—देखो 'फेसायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फेसाड़ियोड़ी)

फेसाणौ, फेसाबौ—क्रि० स० [राज० 'फेसणौ' क्रि० का प्रे० रू०] १ रगड़ के साथ महीन चूर्ण बनवाना, पिसवाना ।

२ तुड़वाना, फुड़वाना ।

फेसाणहार, हारौ (हारी), फेसाणियौ—वि० ।

फेसायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फेसाईजणौ, फसाईजबौ—कर्म वा० ।

फेसाड़णौ, फेसाड़बौ, फेसावणौ, फेसावबौ—रू० भे० ।

फेसायोड़ौ—भू० का० कृ०—१ रगड़ के साथ महीन चूर्ण बनवाया हुआ, पिसवाया हुआ. २ तुड़वाया हुआ, फुड़वाया हुआ.

(स्त्री० फेसायोड़ी)

फेसावणौ, फेसावबौ—देखो 'फेसाणौ, फेसाबौ' (रू. भे.)

फेसावणहार, हारौ (हारी), फेसावणियौ—वि० ।

फेसाविओड़ौ, फेसावियोड़ौ, फेसाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फेसावीजणौ, फेसावीजबौ—कर्म वा० ।

फेसावियोड़ौ—देखो 'फेसायोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फेसावियोड़ी)

फेसियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ रगड़ से महीन चूर्ण बनाया हुआ, पिसा हुआ. २ तोड़ा हुआ, फोड़ा हुआ.

(स्त्री० फेसियोड़ी)

फेहरिस्त—देखो 'फैरिस्त' (रू. भे.)

फं—वि०[अनु०] १ उन्मत्त, मस्त । उ०—हाजरिया पर भूत सवार हौ, वो नसा में फं हुयोड़ौ हौ ।—रातवासौ

२ तेज वायु चलने से उत्पन्न ध्वनि ।

रू० भे०—फे ।

फंक—सं० स्त्री०—१ फेंकने की क्रिया या भाव । २ फेंकने की क्षमता । ३ असत्य बात । ४ सार या तथ्यहीन बात ।

मुहा०—फैंकां मारणी—बढ़ाचढ़ा कर बातें बनाना ।

रू० भे०—फैंक ।

फंकणौ, फेंकबौ—क्रि० स० [सं० प्रक्षेपणम्] १ किसी वस्तु को वेगपूर्वक गति देकर दूर गिराना।

उ०—१ राजकवर अबकी भळै लोथौ **फंकियौ**। कालिंदर तौ अेक ई गपळका मे दूजोड़ौ लोथौ ई खायग्यौ।—फुलवाड़ी

उ०—२ भड़ सो ही पहलां पड़ै, चील्ह बिलग्गा चेंक। नैण बचावै नाह रा, आप कळेजौ **फेंक**।—वी. स.

२ असावधानी, आलस्य या भूल से किसी वस्तु को इधर-उधर रखना या छोड़ना।

ज्यूं०—थारी पोथी री म्हनै कांई ठा, अठै ई कठै **फंक** दी व्हैला।

३ लापरवाही एव अनजाने किसी वस्तु को कहीं गिराना।

४ किसी को आघात पहुचाने हेतु किसी वस्तु को वेगपूर्वक उस तक पहुचाना। उ०—कुत्ता रै सांमी भाटौ **फंकौ** तौ वौ भुसै अर तू-तू करनै रोटी देवौ तौ वौ पूंछ हिलावै।—फुलवाड़ी

५ अनाव एवं बेकार पदार्थ को जान-बूझकर बाहर डालना, गिराना या त्यागना।

उ०—अर जे भगवांन नै मांन्यां बिना मिनख रौ कांम नीं चालै तौ पुरांणा भगवांन नै मांग-मूंगनै उखरड़ी माथै **फंकौ**, अर नवौ भगवान घडौ, जकौ मिनख-मिनख री छेती भांगै, वांनै आपस में गळै लगावै।—फुलवाड़ी

६ दृष्टि पहुंचाना, नजर फैलाना। उ०—सेठां री निजर कमजोर ही, इणसू वांनै ताक सूं अड़तौ चोर रौ मूंडौ नीं दीखियौ। पण चोर तौ मांय निजर **फंकतां** ई सेठां रौ मूंडौ देख लियौ।

—फुलवाड़ी

७ उपेक्षापूर्वक एवं घृणापूर्वक किसी वस्तु को गिराना।

उ०—राजा उणरी पूठ सहळावतौ बोल्यौ—भली मांणस, जूवां रै डर सू कठै ई घाबळियौ **फंकीजै**।—फुलवाड़ी

८ जुए आदि खेल में कौड़ी, पासा, गोटी या तास इस प्रकार डालना कि हार-जीत का निर्णय हो।

९ बिना सोचे समझे खर्च करना, अपव्यय करना।

१० किसी तनाव में बंधी हुई वस्तु को तनाव मुक्त करना कि जिससे वह वेग से दूर जाकर गिरे।

ज्यूं०—तीर **फंकणौ**।

११ किसी पीड़ा, दुख या खुशी के कारण हाथ-पांव हिलाना या पटकना।

ज्यूं०—उणनै बुखार इण तरै रौ आयौ कै वौ हाथ-पग **फंकण** लागगौ।

१२ कुश्ती या मल्ल-युद्ध में प्रतिद्वन्दी को उछाल कर गिरा देना।

ज्यूं०—अठा वाळौ पैंलवांन उणनै उठायनै **फंक** दियौ।

१३ आलस्य या अकर्मण्यतावश स्वयं द्वारा किया जाने वाला काम दूसरे पर डाल देना या सौंप देना।

फंकणहार, हारौ (हारी), फंकणियौ—वि०।

फंकाड़णौ, फंकाड़बौ, फंकाणौ, फंकाबौ,

फंकावणौ, फंकावबौ—प्रे० रू०।

फंकिग्रोड़ौ, फंकियोड़ौ, फंक्योड़ौ—भू० का० कृ०।

फंकीजणौ, फंकीजबौ—कर्म वा०।

फंफणौ, फंकबौ—रू० भे०।

फंकरी—देखो 'फेकरी' (रू. भे.)

फंट—देखो 'फेंट' (रू. भे.)

फंटौ—सं० पु०—सिर पर लपेट के साथ बांधने का एक लम्बोतरा वस्त्र विशेष, साफा।

उ०—ओछी अगरखियां दुपटी छीब देती, गोढ़ै बरड़ीजै पूरा गामेती। **फंटा** छोगाळा खांधा सिर फाबै, टेढ़ा डोढ़ावै डिगतौ नभ ढाबै।—ऊ. का.

रू० भे०—फेंटौ, फेटौ, फैंटौ।

मह०—फेंट।

फंण—सं०पु० [सं० फेण:] किसी तरल पदार्थ में हल-चल होने अथवा अन्य किसी कारण से उठे हुए बुदबुदों का समूह, झाग।

रू० भे०—फींण, फीण, फेण, फेन, फेनक, फैण, फैन।

फंतकार, फंतकारी, फंत्कार—१ देखो 'फेतकार' (रू. भे.)

उ०—कनां वह मायांमी रांति वाही, तठा उपरांति करि नैं राजांन सिलांमति **फंतकारी** गहकि नैं रही छै।—रा. सा. सं.

२ देखो 'फूतकार' (रू. भे.)

फंफड़ौ—सं० पु० [सं० फुप्फुस] छाती में प्रायः बांई ओर स्थित धौंकनी के आकार का शरीर का वह भीतरी अवयव जिसके द्वारा प्राणी वायु लेता और छोड़ता है।

रू० भे०—फींफड़ौ, फींफरौ, फीफरड़, फीफरौ, फेंफड़ौ, फेफड़ौ, फेफरौ, फैफड़ौ।

अल्पा०—फीफरियू, फीफरियौ।

मह०—फिंफर, फिंफरड़, फिप्फर, फींफर, फींफरड़, फीफर, फीफरड़, फेंफर, फेफर।

फंसी—वि० [अं०] दिखने में सुन्दर व आकर्षक।

फै—सं० पु० [अनु०] १ साख। २ लाल। ३ फूल।

४ वसंत ऋतु। (एका०)

फैकरणौ, फैकरबौ—क्रि० अ०—१ करुणा करके रोना। उ०—लांघी चांवल पीळौ हो खाळ, डांवी देवी जीमणी [सिय] माळ। डांवी महासत्ति **फैकरइ**, डांवा सारस, स्यंघ सियाळ। उठइ तुरीय सूंदावई वीसळराव।—बी. दे.

२ इतराना।

फैकरणहार, हारौ (हारी), फैकरणियौ—वि०।

फैकरिग्रोड़ौ, फैकरियोड़ौ, फैकरयोड़ौ—भू० का० कृ०।

फैकरीजणौ, फैकरीजबौ—भाव वा०।

फैकरियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ करुणा करके रोया हुआ, इतरा हुआ. (स्त्री० फैकरियोड़ी)

फैकरी—देखो 'फेकरी' (रू. भे.)

फैकारी—देखो 'फेकारी' (रू. भे.)

फैक्टरी—सं० स्त्री० [अं०] कारखाना।

फैज—सं० पु० [अ० फ़ैज] १ फायदा, लाभ। २ परोपकार, हित। ३ दानशीलता। ४ यश, कीर्ति।
रू० भे०—फेज।

फैटौ—१ देखो 'फेटौ' (रू. भे.)
२ देखो 'फैंटौ' (रू. भे.)

फैण—देखो 'फैण' (रू. भे.)
उ०—ऊछळैय फैण मुख भाट लाग, भळकत जेम दरियाव भाग। पग सघर पूठ पींडा प्रचंड, देवळ तन थांमा भुजयडंड।—पे.रू.

फैतकार, फैत्कार—१ देखो 'फूतकार' (रू. भे.)
२ देखो 'फेतकार' (रू. भे.)

फैन—वि०—पाखंडी, ढोंगी।
उ०—नाचै कूदै मोक्ष मांग के, आरंभ करै अनेक। जैन नही ओ फैन है, आंणौ हियै विवेक।—जयवांणी
सं० पु० [अं०] १ विद्युत-चालित पंखा।
२ देखो 'फैंण' (रू. भे.)

फैफड़ौ—देखो 'फैंफड़ौ' (रू. भे.)

फैं'म—देखो 'फहम' (रू.भे.)

फैं'मवार—वि० [फ़ा० फहम+दार] बुद्धिमान, चतुर।
उ०—पछै अवु समझायौ, कह्यौ—अं इण तरफ वडा आदमी फैं'मवार छै। इणां सु आंपणौ कांम आखर कर देसी।—नैणसी

फैयाज—वि० [अ० फ़ैयाज] उदार, दातार।

फैयाजी—सं० स्त्री० [अ० फैयाजी] उदारता, दातारगी।

फैर—सं० पु० [अं०फायर] १ बंदूक, तोप आदि आग उगलने वाले हथियार का दगना, या उक्त हथियार से किया जाने वाला विस्फोटक प्रहार। क्रि० प्र०—होणौ, करणौ।
२ देखो 'फेर' (रू० भे.)

फैरिस्त—सं० स्त्री० [अ० फ़ैहरिस्त] १ सूची-पत्र। २ बीजक। ३ सूची।
रू० भे०—फहरिस्त, फिरसत, फेरिस्त, फेहरिस्त।

फैरू—देखो 'फेरू' (रू. भे.)
उ०—थंड देखै रंका तणा उछाळवा वीत थेलां, सुरीठ माळवा रोर गळवा सहीप। फीलां सीस चढ़ौ मार प्रजा नै पळावा फेरू माळवा देस पाछा पधारौ महीप।—रतळांम वलूंतसिंघ रौ गीत

फैल—सं०पु० [अ० फे'ल] १ उत्पात, उपद्रव।
उ०—१ मन फैल न मावै सेल सुहावै, ढेल वक्र डोलंदा है। खट चक्र न खोलै तक्र वितोलै, एक चक्र ओलंदा है।—ऊ. का.
उ०—२ हुवै फैल धरण हेकंप हुवै, चढ़ तुरां रखै कुण खाग चाळौ। गढ़पति आज दूसरा नमिया घणा, अेक रहचौ अनम 'गुमांन' वाळौ।—जवांन जी आढ़ौ
२ ढोंग, पाखंड। उ०—आगरै के बंधवां आगै, धूणी घाली सात, अेवड़-छेवड़ बळै बळीतौ, वीच लोटियौ जाट। मार पलाथी मींट लगावै, करै गजब का फैल।—डूंगजी जवार जी री पड़
३ अव्यवस्था, गड़बड़ी।
उ०—हट करै फिरंग जिण वार दीधौ हुकम, करौ मत फैल अण-फैल काजा। अब लिखूं हुकम 'लंदन' तणौ आवसी, रीत तद थावसी तिकौ राजा।—रावत जोधसिंह चुंडावत रौ गीत
४ शरारत। उ०—बाजै नित घूघर बधै, फरगट वाळौ फैल। तन-मन मिलियौ तायफै, छाकां हिळियौ छैल।—वा. दा.
५ हलका नशा। उ०—सिकार री स्हैल, दारू रौ फैल घणौ सुहायौ। रोसनी आतसबाजी रौ नूर, जहूर निजर आयौ।
—पनां वीरमदे री वात
६ बच्चों का रुष्ट होकर किया जाने वाला दुराग्रह, हठ
७ फैलने या फैले हुए होने की अवस्था या भाव, विस्तार।
[अं० फैल] ८ असफलता।

फैलणौ, फैलबौ—क्रि०अ० [सं० प्रसरणं, प्रा० पयल्ल] १ विस्तृत होना।
ज्यूं०—अरावली रौ पहाड़ लांबी दूर तांई फैलियोड़ौ है।
२ स्थूल होना, मोटा होना।
३ पनपना, पसरना।
४ आवृत्त होना, छा जाना।
ज्यूं०—बंगळा माथै बेल खूब फैलियोड़ी है।
५ संख्या में वृद्धि होना।
६ बिखरना, छितरा जाना।
७ आकार, रूप आदि में बढ़ जाना, अभिवृद्धि होना।
८ प्रचलित होना।
९ प्रसिद्ध होना। उ०—मारग चालता वटावू निसंक रातवासौ लेवता। गांव-गांव सेठां विचै ई कुमार रौ जस घणौ फैलियौ।
—फुलवाड़ी
१० प्रसारित होना। उ०—बांमणी लट्ठा सूं उतरनै आंगणै आई उण वगत सूरज रौ उजास दुनियां में फैलण लागौ हो।—फुलवाड़ी
११ प्रकाशित होना। उ०—अधुरां डसणा सूं उदै, विमळ हास दुतिवंत। सो संध्या सू चंद्रिका, फैली जांण फबंत। —वां. दा.
१२ व्यापक होना।
१३ कार्य-क्षेत्र की सीमा में वृद्धि होना।
१४ प्रकट होना। उ०—जिम-जिम कायर थरहरै, तिम-तिम फैलै नूर। जिम-जिम वगतर ऊवड़ै, तिम-तिम फूलै सूर।—वी. स.

फँलणहार, हारौ (हारी), फँलणियौ—वि० ।
फँलाड़णौ, फँलाड़बौ, फँलाणौ, फँलाबौ, फँलावणौ, फँलावबौ —प्रे० रू० ।
फँलिश्रोड़ौ, फँलियोड़ौ, फँल्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फँलीजणौ, फँलीजबौ—भाव वा० ।
फेलणौ, फेलबौ—रू० भे० ।

फँलाड़णौ, फँलाड़बौ—देखो 'फँलाणौ, फँलाबौ' (रू. भे.)
फँलाड़णहार, हारौ (हारी), फँलाड़णियौ—वि० ।
फँलाड़िओड़ौ, फँलाड़ियोड़ौ, फँलाड़्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फँलाड़ीजणौ, फँलाड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फँलाड़ियोड़ौ—देखो 'फँलायोड़ौ'(रू. भे.)
(स्त्री० फँलाड़ियोड़ी)

फँलाणौ, फँलाबौ—क्रि० स० [राज० 'फँलणौ' क्रि० का प्रे० रू०] १ विस्तृत करना, फैलाना । २ पनपाना, पसारना । ३ आवृत्त करना, आच्छादित करना । ४ संख्या में वृद्धि करना । ५ बिखेरना, छितराना । ६ आकार, रूप आदि में वृद्धि करना, अभिवृद्धि करना। ७ प्रचलित करना, प्रचार करना । उ०—म्हे दोनूं लोकां में रात-दिन मिनख अर अतलोक रा नारा में भूंडायां फँलाता रैवां, जिणसूं म्हांरै अठा रौ वासी मिनखां सूं किणी भांत री परीत नीं राखै ।—फुलवाड़ी
८ प्रसिद्ध करना । ९ प्रसारित करना । १० प्रकाशित करना । ११ व्यापक करना । १२ कार्यक्षेत्र की सीमाएं बढ़ाना । १३ प्रकट करना ।
फँलाणहार, हारौ (हारी), फँलाणियौ—वि० ।
फँलायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फँलाईजणौ, फँलाईजबौ—कर्म वा० ।
फँलाड़णौ, फँलाड़बौ, फँलावणौ, फँलावबौ—रू० भे० ।

फँलायोड़ौ—भू० का० कृ०—१ विस्तृत किया हुआ, फैलाया हुआ. २ पनपाया या पसारा हुआ. ३ आवृत्त किया हुआ, आच्छादित किया हुआ. ४ संख्या बढ़ाया हुआ. ५ बिखेरा हुआ, छितराया हुआ. ६ आकार, रूप आदि में वृद्धि किया हुआ, अभिवृद्धि किया हुआ. ७ प्रचलित किया हुआ, प्रचार किया हुआ. ८ प्रसिद्ध किया हुआ. ९ प्रसारित किया हुआ. १० प्रकाशित किया हुआ. ११ व्यापक किया हुआ. १२ कार्य-क्षेत्र की सीमाएं बढ़ाया हुआ. १३ प्रकट किया हुआ.
(स्त्री० फँलायोड़ी)

फँलाव—सं० पु०—१ विस्तार, बढ़ाव ।
उ०—हे ओ काळी टोपी रो, फँलाव फिरंगी कीधौ ओ, काळी टोपी रो ।—लो.गी.
२ प्रचार । ३ लम्बाई-चौड़ाई ।

फँलावणौ, फँलावबौ—देखो 'फँलाणौ, फँलाबौ' (रू. भे.)
उ०—वौ दया नीं करै दया रौ ढोंग करै, वौ धरम नीं करै फगत धरम रो जाळ फँलावै ।—फुलवाड़ी
फँलावणहार, हारौ (हारी), फँलावणियौ—वि० ।
फँलाविओड़ौ, फँलावियोड़ौ, फँलाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फँलावीजणौ, फँलावीजबौ—कर्म वा० ।

फँलावियोड़ौ—देखो 'फँलायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फँलावियोड़ी)

फँलियोड़ौ—भू० का० कृ०—१ विस्तृत हुवा हुआ, फैला हुआ. २ स्थूल या मोटा हुवा हुआ. ३ पनपा हुआ,पसरा हुआ. ४ आवृत्त हुवा हुआ. आच्छादित. ५ संख्या में बढ़ा हुआ. ६ बिखरा हुआ, छितरा हुआ. ७ आकार, रूप आदि में वृद्धि हुवा हुआ, अभिवृद्धित. ८ प्रचलित हुवा हुआ. ९ प्रसिद्ध हुवा हुआ. १० प्रसारित हुवा हुआ. ११ प्रकाशित हुवा हुआ. १२ व्यापक हुवा हुआ. १३ कार्य-क्षेत्र की सीमा वृद्धि हुआ हुआ. १४ प्रकट हुवा हुआ.
(स्त्री० फँलियोड़ी)

फँलो—वि० १—उत्पाती, उपद्रवी । २ ढोंगी, पाखंडी ।
३ वह बच्चा जो दुराग्रही या हठी हो ।

फँसन—सं० स्त्री० [अं० फँशन] १ आकर्षक शृंगार, दिखावा ।
२ प्रथा, प्रचलन । ३ रीति, चाल, ढंग ।

फँसलौ—सं० पु० [अ० फँसल:] १ निर्णय, निपटारा । उ०—इण में सगळी न्यात रौ पोचौ लागै । म्हैं आबारं हाथौ-हाथ फँसलौ निवेड़नै आवूं ।—फुलवाड़ी
२ किसी अभियोग या व्यवहार के संबंध में न्यायालय की व्यवस्था ।

फँसवौ—सं० पु०—एक विशेष आकार का पतंग जो एक आने से लगा कर आठ आने तक की कीमत का होता है ।

फो—सं० पु०—१ फल । २ वैश्रत । ३काल । ४ बंध्या । श्याम । (एका०)

फोई—देखो 'फुही' (रू. भे.)

फोओ—देखो 'फुवौ' (रू. भे.)

फोक—वि०—१ व्यर्थ, फिजूल । उ०—व्रत न लीधो रे, आस्रव नाले नै रोक । विकथा कीधी रे पारकी, जनम गमायौ फोक ।—जयवांणी
२ खोखला । उ०—अवधि वली ! अम्रतलता, फोक थयां फळ फूल । सेढ़उ आविउ स्रस्टि नुं, कइ भूयण-पति भूल ।
—मा. कां. प्र.
३ देखो 'फोकी' (मह., रू. भे.)

फोकट—१ देखो 'फोगट' (रू. भे.)
उ०—१ कूडी वात तुम्हारी घणी, फोकट ऊडाची मुझ-भणी । मात-पिता मुझनें पूछियौ, वळतउ मइं ऊतर आपियौ ।—ढो. मा.
उ०—२ दीलइं माहरइ दव बलइ, पवन पही लिइ वाट । सीत मंद सौरभ थई, फूंकि न फोकट माटि ।—मा. कां. प्र.

फोकी—सं० स्त्री० [देशज] १ योनि, भग।
२ गुदा।
मह०—फोक, फोकौ।

फोकौ—देखो 'फोकी' (मह., रू. भे.)

फोग—सं० पु०—१ मरुस्थल की एक छोटी झाड़ी।
उ०—करहा, नीरू जउ चरइ, कंटाळउ नइ **फोग**। नागरवेलि किहां लहइ, थारा थोबड़ जोग।—ढो. मा.
अल्पा०—फोगड़ौ, फोगडौ, फोगलियौ, फोगलौ, फोगियौ।
मह०—फोगड़, फोगल।
२ ऊंट, बकरी आदि की चोरी।

फोगड़—देखो 'फोग' (मह., रू. भे.)
उ०—सीस छबीली छांट, झूमखौ मोत्यां झब्बौ। घड़ीक घमकै मेघ, घड़ी दो **फोगड़** फतबौ।—दसदेव

फोगड़ौ—देखो 'फोग' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—जटा जूट जोगी जबर है, जूनौ जिण रौ जोगडौ। इळा पिंगळा जड़ांपियांळां, मल मरु फरजन **फोगड़ौ**।—दसदेव

फोगट—वि० [मरा० फुकट] १ व्यर्थ, वृथा, फिजूल।
उ०—लुच्चा राड़ लगाय, **फोगट** सीस फोड़ाय दे। सिरसर पच सवाय, चट बरण जावै 'चकरिया'।—मोहनलाल साह
२ बिना मूल्य।
रू० भे०—फोकट।

फोगडौ—देखो 'फोग' (अल्पा., रू. भे.)

फोगणौ, फोगबौ—देखो 'फोगरणौ, फोगरबौ' (रू. भे.)
उ०—मोडां दुग्गह माळिया, गावर **फोगै** गाल। भोगै सुंदर भांमणी, मुफत अरोगै माल।—ऊ. का.
फोगणहार, हारौ (हारी), **फोगणियौ**—वि०।
फोगिओड़ौ, फोगियोड़ौ, फोग्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फोगीजणौ, फोगीजबौ—भाव वा०।

फोगरणौ, फोगरबौ—क्रि० अ०—फूलना, प्रफुल्लित होना।
फोगरणहार, हारौ (हारी), **फोगरणियौ**—वि०।
फोगराड़णौ, फोगराड़बौ, फोगराणौ, फोगरावौ, फोगरावणौ, फोगरावबौ—प्रे० रू०।
फोगरिओड़ौ, फोगरियोड़ौ, फोगरयोड़ौ—भू० का० कृ०।
फोगरीजणौ, फोगरीजबौ—भाव वा०।
फोगणौ, फोगबौ—रू० भे०।

फोगराड़णौ, फोगराड़बौ—देखो 'फोगराणौ, फोगरावौ' (रू. भे.)
फोगराड़णहार, हारौ (हारी), **फोगराड़णियौ**—वि०।
फोगराड़िओड़ौ, फोगराड़ियोड़ौ, फोगराड़योड़ौ—भू० का० कृ०।
फोगराड़ीजणौ, फोगराड़ीजबौ—कर्म वा०।

फोगराड़ियोड़ौ—देखो 'फोगरायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फोगराड़ियोड़ी)

फोगराणौ, फोगरावौ—क्रि० स० [राज० 'फोगरणौ' क्रि० का प्रे० रू०] फूलाना, प्रफुल्लित करना।
फोगराणहार, हारौ (हारी), **फोगराणियौ**—वि०।
फोगरायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फोगराईजणौ, फोगराईजबौ—कर्म वा०।
फोगराड़णौ, फोगराड़बौ, फोगरावणौ, फोगरावबौ, फोगाणौ, फोगाबौ—रू० भे०।

फोगरायोड़ौ—भू० का० कृ०—फूलाया हुआ, प्रफुल्लित किया हुआ.
(स्त्री० फोगरायोड़ी)

फोगरावणौ, फोगरावबौ—देखो 'फोगराणौ, फोगरावौ' (रू. भे.)
फोगरावणहार, हारौ (हारी), **फोगरावणियौ**—वि०।
फोगराविओड़ौ, फोगरावियोड़ौ, फोगराव्योड़ौ—भू० का० कृ०।
फोगरावीजणौ, फोगरावीजबौ—कर्म वा०।

फोगरावियोड़ौ—देखो 'फोगरायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फोगरावियोड़ी)

फोगरियोड़ौ—भू० का० कृ०—फूला हुआ, प्रफुल्लित हुवा हुआ.
(स्त्री० फोगरियोड़ी)

फोगल—देखो 'फोगलौ' (मह., रू. भे.)
उ०—**फोगल** पछे घिंटाळ, जंगळां झीट झिंटाळी। सूरज ऊगण वेळ, फड़मलां छबि निराळी।—दसदेव

फोगलियौ—१ देखो 'फोगलौ' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—चेत में फोगां **फोगलियौ**, मीठी वात वणावतौ। मिनखां रौ जंगळ गयां, हियौ हिलोळा खावतौ।—दसदेव
२ देखो 'फोग' (अल्पा., रू. भे.)

फोगलौ—सं० पु० [देशज] १ फोग के फूल आने से पूर्व की दशा जो छोटे-छोटे दानों के रूप में होता है।
उ०—बाळक भर बागळी ल्यावै, हरी वाड़ियां लूंट कर। छाछेता, रायता, ढोकळ, किसत **फोगलै** चूंट कर।—दसदेव
वि० वि०—इनको फोग से पृथक कर सुखा दिये जाते हैं। वाद में इनका रायता बनाते हैं।
२ देखो 'फोग' (अल्पा., रू. भे.)
अल्पा०—फोगलियौ।
मह०—फोगल।

फोगसींगियौ—वि०—वह घोड़ा जिसके पिछले पैर के संधि-स्थल पर भवरी हो। (अशुभ) (शा. हो.)

फोगाणौ, फोगावौ—देखो 'फोगराणौ, फोगरावौ' (रू. भे.)
फोगाणहार, हारौ (हारी), **फोगाणियौ**—वि०।
फोगायोड़ौ—भू० का० कृ०।
फोगाईजणौ, फोगाईजबौ—कर्म वा०।

फोगायोड़ौ—देखो 'फोगरायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फोगायोड़ी)

फोगियोड़ौ—देखो 'फोगरियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फोगियोड़ी)

फोगियौ—देखो 'फोग' (अल्पा., रू. भे.)
उ०—आथण गांण आरतौ गुणं, भगवा भेखां जोगियां। वंसी अलगूंजा वजावै, हरख हस्योड़ **फोगियां**।—दसदेव

फोड़उ—देखो 'फोड़ौ' (रू. भे.)
उ०—कंठमाला गड़ गुंबड़ सवला, व्रण कुरम रोग टलइं सगला। पीड़ा न करइ कुण गलि **फोड़उ**, नित नांम जपउ स्रीनाकउड़उ।
—स. कु.

फोड़णौ, फोड़बौ—क्रि० स० [सं० स्फोटनम्] १ दबाव डालकर, आघात देकर या ऊपर से गिरा कर किसी वस्तु को तोड़ना, खण्ड-खण्ड करना।
उ०—१ आछ 'रांमदे' पीवण अटकी दूमां 'नाभै' घाली भटकी। मीरां **फोड़** गई जळ मटकी, पापी भेड़ बोबदे पटकी।—ऊ. का.
उ०—२ गुमांन जी रौ साध पेम जी, हेम जी स्वांमी नै बोल्यौ—हेम जी तीन तूंबड़ा वधता हुंता ते आज **फोड़** न्हाख्या।—भि. द्र.
उ०—३ गरबै **फोड़ै** कुंभगज, घण बळ घावड़ियाह। पापड़ **फोड़** पोमावही, मन में मावड़ियांह।—बां. दा.
२ आनद्ध-वाद्य-यन्त्र को विदीर्ण करना, छिद्रित करना।
३ दबाव डालकर या धक्का देकर किसी रोक, बांध, बाधा आदि का तोड़-देना, अवरोध हटाकर दूर कर देना, परिधि का खण्डन करना।
उ०—१ सज्जन बांधै पाळ सिर, सीसा छकियां गाळ। दुरजण **फोड़ै** गाळ दै, प्रीत सरोवर पाळ।—बां. दा.
उ०—२ गढ़ां रा तोड़णहार, दरवाजां रा **फोड़णहार**, दळां रा मोड़णहार, दळां रा पगार, फोजां रा सिणगार, इण भांति गजराज सिणगार पाखरीआ छै।—रा. सा. सं.
४ किसी दल विशेष के सदस्य को या किसी व्यक्ति को प्रलोभन देकर अपनी ओर मिला लेना।
उ०—१ सो रावळ जी राघौ नूं **फोड़ियौ**। आप बातां करै बरस दोय पाछै सवाई नूं काढ़ बीकूपुर नूं आप उरौ लियौ।
—सुंदरदास माटी बींकूपुरी री वारता
उ०—२ तो म्हैं जोधपुर तोनूं दियौ पण जोधपुर अमरावां सारै छै सो तू उवा नूं **फोड़** राजी कर।
—मारवाड़ रा अमरावां री वारता
५ विरोध डालना।
६ पृथक करना, अलग करना।
७ चोट या प्रहार द्वारा शरीर के किसी अंग में घाव करना, अंग को विकृत करना।
८ किसी स्त्री के साथ संभोग करना, मैथुन करना, रति क्रिया करना।
९ मर्यादा का उल्लंघन करना, सीमा छोड़ना।
१० मारना, पीटना।
११ किसी रहस्य को प्रगट करना, बात खोलना।
१२ किसी घटना या बात को प्रसारित करना, बात फलाना विज्ञापन करना।
१३ विध्वंस करना, नष्ट करना, तहस-नहस करना।
१४ फोड़े या फुंसी को चीर-फाड़ कर मवाद निकालना।
१५ बंब या आतिशबाजी का विस्फोट करना।
१६ ऊपरी आवरण या तल में स्थान-स्थान पर छिद्र करना, अवकाश करना।
फोड़णहार, हारौ (हारी), फोड़णियौ—वि०।
फोड़ाड़णौ, फोड़ाड़बौ, फोड़ाणौ, फोड़ाबौ, फोड़ावणौ, फोड़ावबौ—प्रे० रू०
फोड़िओड़ौ, फोड़ियोड़ौ, फोड़योड़ौ—भू० का० कृ०।
फोड़ीजणौ, फोड़ीजबौ—कर्म वा०।
फोडणौ, फोडबौ, फोरणौ, फोरबौ, फौड़णौ, फौड़बौ—रू० भे०।

फोड़ाड़णौ, फोड़ाड़बौ—देखो 'फोड़ाणौ, फोड़ाबौ' (रू. भे.)
फोड़ाड़णहार, हारौ (हारी), फोड़ाड़णियौ—वि०।
फोड़ाड़िओड़ौ, फोड़ाड़ियोड़ौ, फोड़ाड़योड़ौ—भू० का० कृ०।
फोड़ाड़ीजणौ, फोड़ाड़ीजबौ—कर्म वा०।

फोड़ाड़ियोड़ौ—देखो 'फोड़ायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फोड़ाड़ियोड़ी)

फोड़ाणौ, फोड़ाबौ—क्रि० स० [राज० 'फोड़णौ' क्रि० का प्रे० रू०]
१ किसी वस्तु को आघात देकर, दबवाकर अथवा ऊपर से गिरवा कर खंड-खंड करवाना, तुड़वाना।
२ आनद्ध-वाद्य-यन्त्र को विदीर्ण करवाना, छिद्रित करवाना।
३ दबाव डलवाकर अथवा धक्के दिलवाकर किसी रोक, बांध, बाधा आदि को तुड़वाना, अवरोध हटवाकर दूर करवाना, परिधि का खण्डन करवाना।
४ किसी दल विशेष के सदस्य को या किसी व्यक्ति को प्रलोभन दिलवाकर अपनी ओर मिलवाना।
५ विरोध डलवाना।
६ पृथक करवाना, अलग करवाना।
७ चोट या प्रहार द्वारा शरीर के किसी अंग में घाव करवाना, अंग को विकृत कराना।
८ किसी स्त्री के साथ संभोग करवाना, मैथुन कराना, रति क्रिया करवाना।
९ मर्यादा का उल्लंघन कराना, सीमा छुड़वाना।
१० किसी के द्वारा मरवाना, पिटवाना।

११ रहस्योद्घाटन करवाना, बात खुलवाना ।
१२ किसी घटना या वात को प्रसारित करवाना ।
१३ विध्वंस कराना, नष्ट करवाना, तहस-नहस करवाना ।
१४ फोड़े या फुंसी को चीर-फाड़ कर उसमे से मवाद निकलवाना ।
१५ वंब या ग्रातिशबाजी का विस्फोट करवाना ।
१६ ऊपरी ग्रावरण या तल में स्थान-स्थान पर छिद्र करवाना, ग्रवकाश करवाना ।

फोड़ाणहार, हारौ (हारी), फोड़ाणियौ—वि० ।
फोड़ायोड़ौ—भू० का० कृ० ।
फोड़ाईजणौ, फोड़ाईजवौ—कर्म वा० ।
फोड़ाड़णौ, फोड़ाड़बौ, फोड़ावणौ, फोड़ाववौ, फौड़ाणौ, फौड़ाबौ—रू० भे० ।

फोड़ायोड़ौ—भू० का० कृ०—१ किसी वस्तु को आघात देकर, दबवा कर अथवा ऊपर से गिरवाकर खड-खंड करवाया हुआ, तुड़वाया हुआ. २ आनद्ध-वाद्य को विदीर्ण करवाया हुआ, छिद्रित करवाया हुआ. ३ दबाव डलवाकर अथवा धक्के दिलवाकर किसी रोक, बांध, बाधा आदि को तुड़वाया हुआ, ग्रवरोध हटवाकर दूर करवाया हुग्रा, परिधि का खण्डन करवाया हुआ. ४ किसी दल विशेष के सदस्य को या किसी व्यक्ति को प्रलोभन दिलवाकर अपनी ग्रोर मिलवाया हुग्रा. ५ विरोध डलवाया हुग्रा. ६ पृथक करवाया हुग्रा, ग्रलग करवाया हुग्रा. ७ चोट या प्रहार द्वारा शरीर के किसा अंग मे घाव करवाया हुआ, अंग को विकृत करवाया हुग्रा. ८ किसी स्त्री के साथ संभोग करवाया हुग्रा. मैथुन करवाया हुग्रा, रति क्रिया करवाया हुग्रा. ९ मर्यादोल्लघन करवाया हुआ, सीमा छुडवाया हुआ. १० किसी के द्वारा पिटवाया हुआ, मरवाया हुआ ११ रहस्योद्घाटन करवाया हुग्रा, बात खुलवाया हुग्रा. १२ किसी घटना या बात को प्रसारित करवाया हुग्रा. १३ विध्वंस करवाया हुआ. नष्ट करवाया हुआ, तहस-नहस करवाया हुग्रा. १४ फोड़े या फुंसी को चीर-फाड़ कर उसमें से मवाद निकलवाया हुआ. १५ वंब या ग्रातिशबाजी का विस्फोट करवाया हुआ. १६ ऊपरी आवरण या तल मे स्थान-स्थान पर छिद्र करवाया हुग्रा, अवकाश करवाया हुआ.
(स्त्री० फोड़ायोड़ी)

फोड़ावणौ, फोड़ाववौ—देखो 'फोड़ाणौ, फोड़ावौ' (रू.भे.)
फोड़ावणहार, हारौ (हारी), फोड़ावणियौ—वि० ।
फोड़ाविग्रोडो, फोड़ावियोडो, फोड़ाव्योड़ौ—भू० का० कृ० ।
फोड़ावीजणौ, फोड़ावीजवौ—कर्म वा० ।

फोड़ावियोड़ौ—देखो 'फोड़ायोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फोड़ावियोड़ी)

फोड़ियोड़ौ—भू०का०कृ०—१ दवाव डालकर,ग्राघात देकर ग्रथवा ऊपर से गिरा कर किसी वस्तु को तोड़ा हुग्रा, खण्ड-खण्ड किया हुग्रा. २ आनद्ध-वाद्य-यन्त्र को विदीर्ण किया हुग्रा, छिद्रित किया हुग्रा. ३ दबाव डालकर अथवा धक्का देकर किसी रोक,बांध, बाधा आदि को तोड़ा हुग्रा, ग्रवरोध हटाकर दूर किया हुग्रा, परिधि का खण्डन किया हुआ. ४ किसी दल विशेष के सदस्य को या किसी व्यक्ति को प्रलोभन देकर ग्रपनी ग्रोर मिलाया हुग्रा. ५ विरोध डाला हुआ. ६ पृथक किया हुग्रा, ग्रलग किया हुग्रा. ७ चोट या प्रहार से शरीर के किसी ग्रंग में घाव किया हुग्रा, ग्रग को विकृत किया हुआ. ८ किसी स्त्री के साथ सभोग किया हुग्रा, मैथुन किया हुआ, रति क्रिया किया हुग्रा. ९ मर्यादा का उल्लंघन किया हुग्रा, सीमा छोड़ा हुग्रा. १० मारा हुग्रा, पीटा हुग्रा. ११ रहस्योद्घाटन किया हुग्रा, बात खोला हुग्रा. १२ किसी वात अथवा घटना को प्रसारित किया हुग्रा, विज्ञापन किया हुग्रा. १३ विध्वस किया हुग्रा, नष्ट किया हुग्रा, तहस-नहस किया हुग्रा. १४ फोड़े या फुसी को चीर-फाड़ कर मवाद निकाला हुग्रा. १५ वंब या ग्रातिशबाजी का विस्फोट किया हुग्रा. १६ ऊपरी ग्रावरण या तल में स्थान-स्थान पर छिद्र किया हुआ, ग्रवकाश किया हुग्रा.
(स्त्री० फोड़ियोड़ी)

फोड़ौ—सं० पु० [सं० स्फोटक, प्रा० फोड] १ शारीरिक विकार के कारण होने वाला वह उभार जिसमें मवाद, खून आदि गंदगी भर गई हो, फोड़ा ।
२ तकलीफ, कष्ट, संकट ।
उ०—१ कमावण खावण री उणरी पौच कोनी ही । नित **फोड़ा** पड़ता ।—फुलवाड़ी
उ०—२ सीर री खेती में सेवट तौ हालणौ ई पड़सी, ग्रेकली वन नै कठा लग **फोड़ा** घालूं ।—फुलवाड़ी
क्रि० प्र०—घालणौ, दैणौ, पड़णौ, पटकणौ ।
रू० भे०—फोड़उ, फोडउ ।

फोज—देखो 'फौज' (रू. भे.)
उ०—जगमाळ **फोज** ले सीरोही ग्रायौ । राव सुरतांण सिरोही छोड़ दी ।—नैणसी

फोजआभरण—देखो 'फौजग्राभरण' (रू. भे.) (डिं. नां. मा.)

फोजगाहण—देखो 'फौजगाहण' (रू. भे.) (डिं. नां. मा.)

फोजदार—देखो 'फौजदार' (रू. भे.) (डिं. को.)
उ०—पाछै वाळक २ पालणा मांहै रहि गया—एक चहुवांण रौ नै एक जाट रौ । पछै वाळक २ फोजदार रै नजर गुदराया ।—नैणसी

फोजदारी—देखो 'फौजदारी' (रू.भे.)

फोजवंध्री—देखो 'फौजवंधी' (रू. भे.)

फोजमुसाहब—देखो 'फौजमुसाहब' (रू. भे.) (डिं. को.)

फोट, फोटकार—सं० स्त्री०—१ धिक्कार, अपमान, तिरस्कार।
२ किसी वस्तु के फूटने या टूटने से उत्पन्न ध्वनि ।

फोटू—सं० पु० [अं०] चित्र, तस्वीर।
रू० भे०—**फोटौ**

फोटोग्राफ—सं० पु० [अं०] यांत्रिक उपकरण (केमरा) से लिया जाने वाला चित्र।

फोटोग्राफर—सं० पु० [अं०] यांत्रिक उपकरण (केमरा) से चित्र उतारने या लेने वाला व्यक्ति।

फोटोग्राफी—सं० स्त्री० [अं०] प्रकाश की किरणों के माध्यम से किसी यांत्रिक उपकरण (कैमरा) की सहायता से रासायनिक परिवर्तन के परिणाम स्वरूप आकृति या चित्र अंकित करने की कला या विद्या।

फोटौ—देखो 'फोटू' (रू. भे.)

फोडउ—देखो 'फोड़ौ' (रू. भे.)
उ०—जिम हेडाऊ सुरंगम पालइ, जिम वणिक हथेली नउ **फोडउ** पालइं, जिम तंबोली पांन संभालइ तीणइं परि पुत्र पलाइ।
—व. स.

फोडणौ, फोडबौ—देखो 'फोड़णौ, फोड़बौ' (रू. भे.)
उ०—देवी धूमलोचन्न हूंकार धोस्यौ, देवी जाडबा में रंगतबीज सोस्यौ। देवी मोडियौ माथ नीसुंभ मोडै, देवी **फोडियौ** सुंभ जीं कुंभ **फोडै**।—देवि.
फोडणहार, हारौ (हारी), फोडणियौ—वि०।
फोडिग्रोड़ौ, फोडियोड़ौ, फोडयोड़ौ—भू० का० कृ०।
फोडीजणौ, फोडीजबौ—कर्म वा०।

फोडियोड़ौ—देखो 'फोड़ियोड़ौ' (रू. भे.)
(स्त्री० फोडियोड़ी)

फोत—देखो 'फौत' (रू.भे.)
उ०—बादसाह मुहम्मदसाह पाछौ दिल्ली नूं कूंच कियौ सो मजल दूजी बे धाक **फोत हुवौ**।—मारवाड़ रा अमरावां री बात

फोतकार—देखो 'फूतकार' (रू. भे.)
उ०—**फोतकार** फण जोर फबाए, अहि पर घर छत्रधर कर आए।
—सू. प्र.

फोता—सं० पु० [फा० फ़ोतः] अंडकोश।

फोवौ—सं० पु० [देशज] एक पक्षी विशेष जो अपने पैर अधिकतर आकाश की ओर रखता है।

फोनोग्राफ—सं० पु० [अं०] एक प्रकार का यंत्र विशेष जिसमें ध्वनि अभिलेखन एवं पुनरुत्पन्न किया जाता है।

फोफळ, फोफल—सं० पु०—१ नारियल का वृक्ष।
उ०—फेकारी नइ फालसां, **फोफल** फणस फणिंद। फूघेढ़ी नइ फूढ़ीया, फालक फिरांमण फिंद।—मा. कां. प्र.
२ नारियल।
उ०—१ नांना फल **फोफल** सकल, सीतल वारि विसेस। इम कांई आपिउं वली, निद्रा हुवी निमेस।—मा. कां. प्र.
उ०—२ पंच सब्दउ झल्लरि बाजइ ढोल नीसांण, भवियण जण गावइ, गुरु गुण मधुरि वाण। तिहा मिलीयौ महाजन, दीजइ **फोफल** दांन, सुंदरी सुकलीणी, सूहव करइ गुण गांन।
—जिनचंद्र सूरि
३ देखो 'फोफळ' (रू. भे.)
उ०—सोवन मइ भ्रंगार मरावु, रंग पांन, **फोफल** वांकडी, चेल चीगराई, मांगलुहरां पांन, इस्या मुख वासित देवरावु।—व. स.
४ देखो 'फोफळियौ' (मह., रू. भे.)

फोफळणी—सं० पु०—एक वृक्ष का नाम। (सभा.)

फोफळिया, फोफलिया—सं० पु०—एक व्यवसायिक जाति।
रू० भे०—फोफळीया, फोफलीया।

फोफळियौ, फोफलियौ—सं० पु०—१ 'तिसंडी' नामक सब्जी को काटकर सुखाया हुआ टुकड़ा।
२ फफोला।
३ विस्फोट।
४ बढ़ई का एक औजार विशेष जो लोहे में छेद करने के काम आता है।
५ बैलो के सींगों पर लगाया जाने वाला धातु का आभूषण विशेष।
६ धातु-निर्मित टोपीदार कीला जो कपाट, बैलगाड़ी आदि पर शोभावृद्धि एवं मजबूती के लिए लगाया जाता है।
उ०—ताड़ रा, बड़ पीतळ रा भर तावूड़ा गजबेल दांणै रा फळ रांमपुरै रा घड़ियोड़ा, रूपै रा सोने रा नकस छै। **फोफलिया** रूपै रा लागा छै।—रा. सा. सं.
७ फोफलिया जाति का व्यक्ति।
रू० भे०—फोफळीयौ, फोफलीयौ।

फोफळीया, फोफलीया—देखो 'फोफळिया' (रू. भे.)
उ०—तेली मोची सतूआरा बंधारा चीतारा तूतारा कोली पंचोली डवगर बाबर **फोफलीया** फडहटीया फडिया वेगडिया सिंगडिया।
—व. स.

फोफळीयौ, फोफलीयौ—देखो 'फोफळियौ' (रू. भे.)

फोफानंदफड़ंद—सं० पु०—बाह्य ठाठ-बाट तथा आडम्बर दिखाने वाला व्यक्ति।
रू० भे०—फाफानंदफड़ंद।

फोयौ—देखो 'फुंबौ' (रू. भे.)

फोर—स० पु०—परिवर्तन। उ०—अपना आप निजानंद चेतन, निकलंक ब्रह्म रहोरी। सुद्ध स्वरूप अलाग अनादी, नही जहां **फोर** अफोरी।
—स्रीसुखरांम जी महाराज

फोरणा—देखो 'फुरणा' (रू. भे.)
उ०—स्रिस्टि के आदि अरु अंत परला के, सुद्ध सता निरवासी।

सुतेई **फोरणा** फुरी सता सूं, नांम अकास घरासी ।

—स्रीसुखरांम जी महाराज

फोरणी–सं०स्त्री०—हाथ से कपड़ा बुनने में प्रयुक्त वह डंडा जो तुर (जिस पर कपड़ा बुनकर लपेटा जाता है) को घुमाने के काम आता है ।

फोरणौ, फोरबौ—१ देखो 'फेरणौ, फेरबौ' (रू. भे.)

उ०—१ सूरजमाळ दुफाळ, नेज गज ढाळ निहारै । फळ साबळ **फोरियौ**, विड़ंग ओरियौ वघारै ।—रा. रू.

उ०—२ ओर की निहार ऐब आजलूं जियौ । आपनैं कियै कि ओर **फोर** तूं हियौ ।—ऊ. का.

उ०—३ पीछै फौज अेक मजल सूं पाछी बुलायी । पातसाह जी री मनोहरी स्रीकरनी जी **फोर** दीवी ।—द. दा.

उ०—४ तद जावदीन खां सूरंसिघ जी री परघै सूं सला करी । जो झगड़ौ कियां तौ पूरवां नहीं । पण बीकानेर रा सिरदारां नूं लालच देय **फोरौ** ।—द. दा.

२ देखो 'फोड़णौ, फोड़बौ' (रू. भे.)

उ०—१ अतुल बल **फोरि** कर जोर हिव आपणौ, कुमर तिण ठौर भरडाक आयौ ।—वि. कु.

उ०—२ जाकै मथुरा कहांना नै गागरियां **फोरी** । गागरियां **फोरी** दुलरि मोरी तोरीं ।—मीरां

फोरणहार, हारौ (हारी), फोरणियौ—वि० ।

फोरिओड़ौ, फोरियोड़ौ, फोरयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फोरीजणौ, फोरीजबौ—कर्म वा० ।

फोरन—देखो 'फौरन' (रू. भे.)

फोरमैंन–सं० पु० [अं०] एक अफसर का पद जिसके अधीन कारीगर एवं कर्मचारी कार्य करते हैं ।

फोरियोड़ौ—१ देखो 'फेरियोड़ौ' (रू. भे)

२ देखो 'फोड़ियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फोरियोड़ी)

फोरौ—देखो 'फौरौ' (रू. भे.)

उ०—सेठांणी कह्यौ—इण में जोखा री किसी बात । थारै अठा सूं बरतन कठै जावै । अर पांवणा नै **फोरा** बरतनां में परोसैला तौ थारौ भूंडौ लागैला ।—फुलवाड़ी

फोलादीतोड़ौ—देखो 'फौलादीतोड़ौ' (रू. भे.)

फोलौ–सं० पु०—चने का फल ।

फोहारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फोहौ—देखो 'फुंवौ' (रू. भे.)

फौंणस—देखो 'फांनूस' (रू. भे.)

फौंद–सं० पु० [देशज] आगे की ओर निकला हुआ पेट, तोंद ।

रू० भे०—फुंद, फूंद ।

फौंदाळ—देखो 'फौंदाळौ' (मह०, रू. भे.)

फौंदाळौ–वि० [राज०फौंद+सं० आलुच्] तोंद वड़ा हुआ, तोंद वाला ।

रू० भे०—फुंदाळौ ।

मह०—फुंदळ, फुंदाळ, फौंदाळ ।

फौ–सं० पु०—१ शेषनाग । २ द्रोण । ३ स्वर्ण । ४ गंगा । ५ सात की संख्या । (एका०)

फौआरौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फौड़णौ, फौड़बौ—देखो 'फोड़णौ, फोड़बौ' (रू. भे.)

उ०—गढ़ **फौड़ेवा** चणौ गरब्बै, कुंजर कूं कीड़ी दब्ब । ए विण खून हमारै आगै, जंगम तैं सुर के भ्रम जागै ।—रा. रू.

फौड़णहार, हारौ (हारी), फौड़णियौ—वि० ।

फौड़िओड़ौ, फौड़ियोड़ौ, फौड़योड़ौ—भू० का० कृ० ।

फौड़ीजणौ, फौड़ीजबौ—कर्म वा० ।

फौड़ाणौ, फौड़ावौ—देखो 'फोड़ाणौ, फोड़ाबौ' (रू. भे.)

फौड़ाणहार, हारौ (हारी), फौड़ाणियौ—वि० ।

फौड़ायोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फौड़ाईजणौ, फौड़ाईजबौ—कर्म वा० ।

फौज–सं० स्त्री० [अ० फ़ौज] १ सेना ।

उ०—१ काबिल कोट तणी विसकांमणि, घाए घूम सिंगारि घुरै । फिर-फिर अफिर, 'रतनसी' फुरलै, **फौज** अपूठैं फेरि फिरै ।—दूदौ

उ०—२ मेलै **फौज** कांमरां मिरजौ, ऊ जंगळ घर आयौ । केवी तैं भांजै कनियांणी, 'जैतराव' जितायौ ।—बां. दा.

२ झुंड, जत्था, समूह । (अ. मा.)

यौ०—फौजदार, फौजदेसरी, फौजपति, फौजबंधी, फौजबक्सी, फौजबळ, फौजबाब, फौजबीडार, फौजमुसाहिब ।

रू० भे०—फउज, फवज, फवज्ज, फव्वज, फोज ।

फौजआभरण–सं० पु०—मंत्री ।

रू० भे०—फोजआभरण ।

फौजगाहण–सं० पु०—योद्धा ।

रू० भे०—फोजगाहण ।

फौजथंब, फौजथंभ–वि०—फौज को रोकने वाला, योद्धा, वीर ।

फौजदार–सं० पु० यौ० [अ० फौज+फा० दार] १ सेनापति ।

२ हाथ में छड़ी या डंडा लेकर फौज के आगे-आगे चलने वाला फौज का प्रतीक ।

उ०—सझियौ जैतारण जुध सधीर, 'अवरंग' तणौ मारै अमीर । दळ सझि 'अवरंग' रौ **फौजदार** विढ़ियौ गढ़ आए जेण वार ।

—सू. प्र.

३ सैन्य विन्यास करने वाला ।

४ फौजदारी के मामलों पर निर्णय देने वाला जज या निर्णायक ।

५ हस्तीशाला या फीलखाने का अध्यक्ष ।

उ०—आसाइच मनहर अडर, **फौजदार** तिण वार । अरज करी

न्रिप आगळी, सब गज थया तयार ।—रा. रू.

६ महावत ।

उ०—पीत कारू का पांन **फौजदारू** का हलकार जगजेठ ज्यू जूटे जांण आंबू गिरनार झाटकतै हैं ।—सू. प्र.

७ पुलिस, सिपाही । (सिरोही)

८ नगर आरक्षण अधिक्षक ।

रू० भे०—फोजदार ।

फौजदारी—सं० स्त्री० यौ० [अ० फौज+फा० दारी] १ लड़ाई-झगड़ा, मारपीट ।

२ लड़ाई-झगड़ा, मारपीट आदि के मुकदमों को सुनने व अपराधी को दण्ड देने का न्यायालय ।

३ उक्त न्यायालय सम्बन्धी ।

४ लड़ाई-झगड़ा मारपीट-सम्बन्धी ।

रू० भे०—फोजदारी ।

फौजदेसरी—सं० स्त्री०—एक प्रकार का सरकारी लगान या कर ।

फौजपति, फौजपती—सं० पु० यौ० [अ० फौज+सं० पतिः] सेनापति ।

फौजबंधी—सं० स्त्री० यौ०—सेना की तैयारी ।

उ०—१ सो ओ भी एक जायगां न रहै जिण आंटै न मारै । जे **फौजबंधी** कर चढ़ै तदि तौ ओ भाखरा में पैठै ।

—प्रतापसिंघ म्होकमसिंघ री वात

उ०—२ मिरजा पातसाह तैमुरबेग रै आगम आरधावरत में दिसा दिसा दरोळ पड़तौ देखि नरेस बैरीसाल भी दुलही नूं बडै वेग लेर बूंदी पधारियौ । अर धीरदेव नूं सहाय देंण वेघम रै मथै **फौजबंधी** करण में बिलंब न धारियौ । —वं. भा.

रू० भे०—फोजबंधी ।

फौजबक्सी—सं० पु० यौ०—सामन्तों की ओर से राजा के यहां रखे जाने वाले सैन्यदल की नियुक्तियां करने वाला अधिकारी, सैन्य नीति निर्धारक ।

वि० वि०—देखो 'बक्षी' ।

फौजबळ—सं० पु० यौ० [अ० फ़ौज+राज० बळ] १ सैन्य शक्ति ।

२ सामन्तों से लिया जाने वाला एक कर, टेक्स ।

वि० वि०—जो सामन्त राजा को सेना या आदमी देने में असमर्थ होता था उससे यह कर लिया जाता था ।

३ पराजित राजा या सरदार से फौज सम्बन्धी खर्च के लिए लिया जाने वाला धन ।

फौजबाब—सं० पु० यौ० [अ०] फौज के खर्च के लिए लिया जाने वाला एक प्रकार का लगान या कर ।

फौजबीडार—सं० पु० यौ० [अ० फौज+राज० बीडार] १ वह घोड़ा जिसके टीके में सफेद व लाल बाल हो । (शा.हो.)

फौजमुसायब, फौजमुसाहिब—सं०पु० [अ०] १ फौजबक्षी का सहायक जो सैन्य सम्बन्धी नीति को 'फौजबक्षी' के सामने रखता था ।

२ सेनापति ।

रू० भे०—फोजमुसाहब ।

फौजांअग्रेसर—सं०पु०यौ० [अ०फ़ौज+सं० अग्रेसर] हाथी । (डि.को.)

फौजी—वि० [अ० फौजी] १ सैनिक । २ सेना सम्बन्धी ।

फौत—सं०पु० [अ० फ़ौत] १ मृत्यु, मौत ।

उ०—अरु दिली मैं मालक पररेज हुवौ । मुसायब लोदीखां । अरु अठै यां सारांई मिळ वुहांनो कियौ कै खुरमसा **फौत** हुवौ ।—द. दा.

क्रि० प्र०—होणौ, खेलणौ ।

२ नष्ट, अवसान ।

फौतकार—देखो 'फूतकार' (रू. भे.)

उ०—करि **फौतकार** मुक्कै कहर, चाढ़ि सूंड फण चाचरै ।

सिखराळ गिरंद चढ़ि जांणि स्रप, काळदार झाटक करै ।—सू. प्र.

फौपलौ—सं०पु० [देशज] १ सूखा गोबर ।

२ देखो 'फौफलौ' (रू. भे.)

फौफळ, फौफल—वि०—वादी या वायु से फूला हुआ ।

स० स्त्री० [अ० फौफल] १ सुपारी ।

२ देखो 'फोफळ' (रू. भे.)

फौफलौ—वि०—खोखला ।

रू० भे०—फौपलौ ।

फौरन—क्रि० वि० [अ०फ़ौरन] तुरन्त, झटपट, तत्काल ।

फौरणौ, फौरबौ—१ देखो 'फेरणौ, फेरबौ' (रू. भे.)

उ०—करण निवेघी वेघड़ा, सेघी सांम छळांह । अस तौरै सांम्हा किया, **फौरै** सैंळ फळांह ।—रा. रू.

२ देखो 'फोड़णौ, फोड़बौ' (रू.भे.)

फौरणहार, हारौ (हारी), **फौरणियौ**—वि० ।

फौरिओड़ो, फौरियोड़ौ, फौरयोड़ौ—भू० का० कृ० ।

फौरीजणौ, फौरीजबौ—कर्म वा० ।

फौरियोड़ौ—१ देखो 'फेरियोड़ौ' (रू. भे.)

२ देखो 'फोड़ियोड़ौ' (रू. भे.)

(स्त्री० फौरियोड़ी)

फौरौ—वि० [देशज] (स्त्री० फौरी) १ अशुभ ।

उ०—१ मांनै नह मोरीह, 'चांदा' थारी व्है सला । 'पाल' तणी **फौरीह**, दीसै हव आई दसा ।—पा. प्र.

उ०—२ बिलळी बातां री बांणी बघरावै, पतळी झिंण जिण में पांणी पघरावै । घालै बिसमत भत मगमंग ठग घेरौ, **फौरौ** किसमत सूं पगपग पग फेरौ ।

२ कमजोर, दुबला-पतला ।

उ०—सूतोड़ा री पागड़ियां जागतड़ा लै भागै, **फौरां** पतळां रौ डाव नी लागै ।—फुलवाड़ी

३ निम्न श्रेणी का, हलका ।

ज्यूं०—औ कपड़ौ **फौरौ** है ।

४ नीच ।

फौलाद—सं०पु० [अ० फ़ौलाद] उत्तम श्रेणी का मजबूत व सुथरा हुआ लोहा जो शस्त्रादि बनाने के काम आता है, इस्पात।
रू० भे०—पोलाद, पौलाद।

फौलादी—वि० [अ० फौलादी] १ फौलाद का बना हुआ।
२ दृढ़, मजबूत, कठोर।
रू० भे०—पौलादी।

फौलादीतोड़ौ—सं० पु० [अ० फ़ौलादी+राज० तोड़ौ] एक प्रकार का शस्त्र विशेष।
रू० भे०—फोलादीतोड़ौ।

फौव्वारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फौहार—देखो 'फंवारौ' (मह., रू. भे.)

फौहारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)

फौही—देखो 'फुही' (रू. भे.)

फौहौ—देखो 'फुंबौ' (रू. भे.)

फ्यावड़ी, फ्यावरी—सं० स्त्री० [देशज] एक प्रकार का जंगली जानवर। (शेखावाटी)
उ०—इसड़ी वेळा वन मांही **फ्यावरी** बोलै।—सिंघासण बत्तीसी

फ्रांगणी—सं०स्त्री०—एक प्रकार का छोटा पौधा जिसकी टहनियों की डलियां व टोकरियां बनाई जाती है।

फ्रांसीसी—देखो 'फरांसीसी' (रू. भे.)

फ्राक—देखो 'फराक' (रू. भे.)

फ्रियाद—देखो 'फरियाद' (रू. भे.)

फ्री—वि० [अं०] १ स्वतन्त्र, स्वच्छन्द।
२ प्रतिबन्धहीन, मुक्त।
ज्यूं०—टैक्स फ्री।
३ मुफ्त, फोकट।
ज्यूं०—गाडी में फ्री जाणौ गलत है।

फ्रेंच—सं० पु० [अं०] १ फ्रांस देश का निवासी।
सं० स्त्री०—२ फ्रांस देश की भाषा।

फ्रेम—सं० पु० [अं०] लकड़ी या धातु का बना प्रायः चौकोर आवृत्त, चौखटा।

फ्रोहारौ—देखो 'फंवारौ' (रू. भे.)
उ०—फ्रोहारूं की पंकति जळ चादरूं का उफांण। जळ चादरूं की धरहर मांनू छिल्लै महिरांण।—सू. प्र.

फ्लवंगम—देखो 'प्लवंगम' (रू. भे.)

फ्लवग—देखो 'प्लवग' (रू. भे.) (डिं. को.)

फ्लूट—सं० स्त्री० [अं०] फूंक से बजाया जाने वाला एक वाद्य-यंत्र, बांसुरी।